गांधी-साहित्य-प्रकाशन

६

उत्तर प्रदेश में गांधीजी

•

प्रधान सम्पादक एव संकलनकर्त्ता

श्रीरामनाथ 'सुमन'

•

उत्तर प्रदेश गांधी-स्मारक-निधि

सेवापुरी : वाराणसी

•

प्राप्ति-स्थान

गांधी-साहित्य प्रकाशन

भवानी कुटीर, ५९ शिवचरणलाल रोड

इलाहाबाद

३० जनवरी, १९७०

●

मूल्य
पैंतीस रुपये

●

प्रधान सम्पादक
श्रीरामनाथ 'सुमन'

प्रारम्भकाल में सहायक
अविनाशचन्द्र श्रीवास्तव

●

मुद्रक
सम्मेलन मुद्रणालय
प्रयाग

[१३२८+९६+१६]
१४४० पृष्ठ

नवजीवन ट्रस्ट अहमदाबाद,
नेहरू संग्रहालय, गांधी स्मारक
संग्रहालय, श्रीमती इन्दिरा गांधी
इत्यादि के सौजन्य से

१०११ लेख

अनुक्रमणिका

पुस्तक के आरम्भ में :

ग्रन्थ--पाठ भाग :

अन्त में :

सादर भेंट—
त्रिलोक चन्द .... जैन
गोकुल ... दुर्गापुरा, जयपुर

उत्तर प्रदेश में गांधीजी

संकेतार्थ



यं० इं०	यंग इण्डिया : गांवीजी का अंग्रेजी साप्ताहिक विचारपत्र
हि० न० जी०	हिन्दी नवजीवन : गांधीजी का हिन्दी साप्ताहिक विचारपत्र
न० जी	नवजीवन : गांधीजी का गुजराती साप्ताहिक विचारपत्र
ह० ज०	हरिजन : गांधीजी का अंग्रेजी साप्ताहिक विचारपत्र
ह० ब०	हरिजनबन्धु : गांधीजी का गुजराती साप्ताहिक विचारपत्र
ह० से०	हरिजन-सेवक : गांधीजी का अंग्रेजी साप्ताहिक विचारपत्र
सं० गां० वा०	संयुक्त गांधी वाङमय : भारत-सरकार की ग्रन्थमाला
म० भा० डा०	महादेव भाई की डायरी : नवजीवन एवं सर्व-सेवा-संघ प्रकाशित
हि० स्व०	हिन्द स्वराज्य : गांधीजी के समाज-रचना सम्बन्धी विचारों की उन्ही द्वारा लिखित गुजराती पुस्तक।
इ० हो० रू०	इण्डियन होमरूल : हिन्दस्वराज्य का अंग्रेजी अनुवाद।
आत्मकथा	गांधीजी की आत्मकथा।
प्रा० प्र०	प्रार्थना-प्रवचन। सस्ता साहित्य मण्डल, नई दिल्ली
जी० एन०	गांधी स्मारक संग्रहालय, नई दिल्ली
एस० एन०	साबरमती संग्रहालय, अहमदाबाद
महात्मा गांधी	संकलन। गांधी-पुस्तक-भण्डार, वम्बई अब अप्राप्य।
महात्मा गांधी	स्पीचेज़ ऐण्ड राइटिंग्स आफ़ महात्मा गांधी, मद्रास प्रकाशन
स० से० सं०	सर्व-सेवा-संघ, प्रकाशन राजघाट, वाराणसी
न० जी०	नवजीवन प्रकाशक, अहमदाबाद
रा० अ०	राष्ट्रीय अभिलेखागार (नेशनल आर्काइव्स) नई दिल्ली

सादर भेंट:—
त्रिलोक चन्द . जैन
गोकुल ~ ~ दुर्गापुरा, जयपुर

उत्तर प्रदेश में गांधीजी

भूमिका

उन्नीसवीं शताव्दी के अन्त और वीसवीं शताव्दी के आरम्भ के साथ भारतीय-लोक-जीवन मे जागरण की एक अंगड़ाई दिखाई पडी। शिक्षित भारतीय मे कभी-कभी पराजय और पतन की अनुभूति होने लगी परन्तु सामूहिक रूप से वह समझ नहीं पाता था कि उसे क्या करना चाहिए। इस वेदना ने कई प्रान्तो मे प्रतिहिंसा की भावना गहरी की जिससे कुछ युवक विद्रोही, क्रान्तिकारी हिंसक कृत्यो की ओर आकर्षित और अग्रसर हुए। वाद मे उनका सघटन भी हुआ। परन्तु सव मिलाकर उसका सामूहिक भारतीय लोक-जीवन पर कोई प्रभाव नही था।

दूसरी ओर निष्क्रिय वुद्धिवादियो का एक दल था जो वर्ष मे एक वार, प्रायः वडे दिन की छुट्टियो मे, कहीं एकत्र होते थे और व्रिटिश सरकार से तरह-तरह की याचनाएं, इस देश मे स्वायत्तशासन-सस्थाओ की स्थापना के लिए, करते थे। स्पष्टत इसका रूप एक वाद-विवाद सभा से अधिक कुछ न था।

भारतीय जनता, गुलामी की वेडियो मे वंधी, गरीवी, परावलम्वन और अगणित कठिनाइयो के वीच, शिथिल, भाग्य के चरणो पर असहाय पड़ी किसी तरह दिन विता रही थी।

कुछ ऐसी ही स्थिति मे भारतीय लोकमच पर गाधीजी का उदय हुआ। इस देश के राष्ट्रीय जीवन मे गाधीजी का प्रवेश इस युग की एक आश्चर्यजनक घटना है। उनके आते ही मुर्दे मे हरकत हुई, फिर उसने आँखें खोलीं, कुतूहल से अपने चतुर्दिक निहारा और चन्द दिनो वाद, एक झटके के साथ उठ वैठा। फिर उसने हाँक सुनी और चल पडा।

पहिली वार जन-समूह एक साथ उठा, और चला। पहिली वार उसको अपनी शक्ति की अनुमति हुई। गाधीजी हमारे जीवन पर छा गये। वह हमारे जीवन मे शतधा ज्योतिधारा के रूप मे आये और उन्होंने हमे अपने 'स्वरूप' का वह दर्शन दिया जिसे हम सदियो से भूले हुए थे। उन्होंने हमारे भीतर के सव रहस्यमय और उदात्त तत्वो को झकझोर दिया। हमने समझा कि मानव केवल शरीर-मात्र नहीं है। उन्होंने हमारी आत्मा को स्पर्श किया। जादू हुआ और मिट्टी के लोदो से

निर्जीव मानव अकस्मात् शेर बन गये। व्यक्ति और समाज पर चतुर्दिक छाई भय की तमिस्रा छँट गई और आत्मविश्वास तथा निर्भय सत्कर्म का अरुणोदय हुआ। विश्व के इतिहास में ऐसी दूसरी घटना नही है जिसमें कोटि-कोटि मनुष्यों का असहाय समाज, इस प्रकार इतने थोड़े समय में, देखते-देखते अपने पैरों पर उठ खड़ा हुआ हो।

निश्चय ही भारत के किसी भी अधिवासी के लिए गांधीजी को विस्मृत करना सम्भव नही है। आप उनका विरोध कर सकते है। उनका तिरस्कार कर सकते हैं, उनके सिद्धान्तों का उपहास कर सकते है परन्तु किसी की शक्ति नही कि उनको अपने मानस की परिधि से निकाल सके या उनके प्रभाव से सर्वथा अछूता रह सके।

उत्तर प्रदेश भारत का हृदय है। भारतीय संस्कारों की छाप इस प्रदेश पर वहुत गहरी पड़ी है। इसलिए भारतीय नवजागरण तथा सामूहिक लोकजीवन और राष्ट्रीयता के इतिहास में इस प्रदेश का एक प्रमुख अध्याय है। राष्ट्रीय स्वातन्त्र्य की लम्बी लड़ाई में हिन्दी भाषा-भाषी जन-समूह की सबसे प्रधान भूमिका रही है। इसमें भी उत्तर प्रदेश की एक विशेष स्थिति है। इस अध्याय के लिखने और इस विशेष स्थिति की रचना में गांधीजी की वहुत वड़ी देन है। गुजरात के अतिरिक्त कदाचित् ही दूसरे किसी प्रान्त के जन-जीवन को उन्होंने इतने दीर्घ-काल तक, और इतने घनिष्ठ रूप से प्रभावित किया हो। १८९६ से जो सम्पर्क आरम्भ हुआ, वह मृत्यु के कुछ समय पूर्व तक, १९४७ तक, वना रहा। इस लम्बी अवधि में वह अनेकानेक वार इस प्रदेश में आये। १९१५ से तो उनका सम्वन्ध इस प्रान्त से वहुत प्रगाढ़ रहा। यह भी एक संयोग ही कहना चाहिए कि अपनी सत्याग्रह की प्रयोगशाला उन्होने उत्तराखण्ड में न खोलकर गुजरात में खोली। असहयोग के जमादे में उन्होंने अपने पुत्र देवदास तथा पुत्र-तुल्य महादेव भाई को इस प्रदेश की सेवा के लिए भेजा।

इस प्रदेश का कोना-कोना उनकी पदध्वनि और उनकी ओजस्वी वाणी से ध्वनित और मुखरित हुआ है। उस वाणी में व्यथा है, ऊष्मा है, तेज है, ओज है, स्फूर्ति है। इस प्रदेश की जनता की व्यथा समझने और उसके निराकरण की चेष्टा उनके द्वारा लिखे लेखों एवं टिप्पणियों में दिखाई पड़ती है। हमारे हिमालय, तीर्थों, जनता तथा नेताओं, कार्यकर्त्ताओं, रैयत, कृषि, पशु-धन, जन-जीवन, दैन्य सभी पर उनकी दृष्टि पड़ी है। इस ग्रन्थ में उत्तरप्रदेश से गांधीजी के सम्बन्व के प्रत्येक क्षेत्र की झाँकी देने की चेष्टा की गई है और उनके भाषणों, लेखों, टिप्प-णियों, पत्रों के साथ ही यहां की भूमि पर लिखी उनकी रचनाओं और इस प्रदेश

के निवासियो-द्वारा उनको लिखे पत्रो का संकलन किया गया है। ग्रन्थ बहुत बडा हो गया है फिर भी वह अपूर्ण ही है और यदि समय मिलता एव सुविधा होती तो लगभग इतनी ही और सामग्री सकलित की जा सकती थी। इसमे उत्तरप्रदेश मे उनके सतत जन-सम्पर्क के विविध रूपो का एक क्रमबद्ध विवरण मिलेगा तथा इससे यह भी मालूम होगा कि विविध रूपो मे उन्होंने हमारे लोक-जीवन को किस प्रकार प्रभावित किया है। इसमे पाठक को पीडित एव त्रस्त वर्गो के प्रति उनकी गहन वेदना के भी दर्शन होगे तथा भारतीय महत् संस्कार, पवित्रता, आत्म-वलिदान, निःस्वार्थ सेवा, निष्काम कर्म, अभय और अहिंसा इत्यादि जिन गुणो की वह हमसे अपेक्षा रखते थे तथा जिनका वह स्वय मूर्त्तरूप थे, उनकी भी सहज अभिव्यक्ति दिखाई देगी।

गाधीजी उत्तरप्रदेश मे आकर वसते-वसते रह गये। फिर भी उनके जीवन की अनेक घटनाए इस प्रदेश के साथ जुड़ी हुई हैं। यही उन्होंने सूर्यास्त के पूर्व आहार करने और उसमे केवल पाच ही तक वस्तुए लेने का व्रत लिया था। यही उन्होंने पहली वार हिन्दू विश्वविद्यालय के उद्घाटन के अवसर पर अपना पहिला क्रान्तिकारी भावनाओ एव विचारो से पूर्ण वह भाषण किया था, जिससे तहलका मच गया था। यही उन्होंने (लखनऊ मे) पहली वार भारत के लिए एक-भाषा और एक-लिपि पर जोर देते हुए तत्सम्वन्धी सम्मेलन मे अध्यक्षीय भाषण किया था। यही उन्होंने हिमालय के विराट सौन्दर्य एव महत्ता के दर्शन किये थे और यही उन्होंने अपनी गीता की टीका अनासक्तियोग को पूर्ण किया था तथा उसकी प्रसिद्ध भूमिका लिखी थी। यही वह मालवीयजी महाराज, मोतीलाल जी तथा जवाहरलाल जी के गहरे सम्पर्क मे आये जिससे उनके जीवन की रचना और विचारधारा एक सीमा तक प्रभावित हुई और उनके, विशेषत जवाहरलाल जी के घनिष्ठ सम्पर्क ने भारत की राजनीति को एक ऐसी दिशा की ओर जाने का मार्ग प्रशस्त किया जो वाद मे उनके स्वप्नो से दूर चली गई। इस पुस्तक मे सकलित सामग्री से इस वात पर वहुत प्रकाश पडता है कि कैसे वह नेहरू-परिवार से दिन-दिन अधिक सम्वद्ध होते गये और जवाहरलाल के प्रति क्यो उनका स्नेह लगभग हलकी आसक्ति मे वदल गया था।

आज हम गाधीजी के मार्ग और आदर्श से भटक गये हैं और जीवन के प्रत्येक क्षेत्र मे विशृखल, विजडित और विघटित होते जा रहे हैं और जिन मूल्यो ने हमे एक दिन विश्व के सवसे वडे साम्राज्य से आखें मिलाकर उसे निर्भय चुनौती देने की शक्ति प्रदान की थी, उसे भूलते जा रहे हैं। हमारे उनके पास पहुँचने और उनको समझकर उनसे प्रकाश लेने की शायद कभी इतनी आवश्यकता नही थी,

जितनी आज है। इस ग्रन्थ में हमारी चेतना के जागरण-काल की झांकी मिलेगी और यदि हम अपने अतीत के उन शक्तिमान क्षणों की याद करलें, जब गांधीजी हमारे बीच में थे, तो शायद उससे हमें कुछ शक्ति और दिशा ही मिलेगी।

इस प्रदेश से गांधी जी के हर तरह के सम्पर्क की सामग्री ग्रन्थ में दी गई है। इस सामग्री के संकलन में हमें नेहरू संग्रहालय तथा गांधी स्मारक संग्रहालय नई दिल्ली के अधिकारियो से सब प्रकार की सहायता प्राप्त हुई जिसके लिए मैं उनका आभारी हूं। इस ग्रन्थ में गांधीजी के लिखे जो पत्र दिये गये है उनके अध्ययन से अनेक तत्वों पर नूतन प्रकाश पड़ता है। जवाहरलाल जी के प्रति गांधी जी कैसे अधिकाधिक आर्कषित होते गये और अन्त में एक प्रकार से उनके पारिवारिक वुजुर्ग हो गये, दोनों की विचार-धाराओं और कार्यप्रणालियों तथा दृष्टि में क्या अन्तर था, इस पर भी इन पत्रों से काफी रोशनी पड़ती है। इसी प्रकार अनेक पत्रों में गांधीजी की करुणा, ममता, प्रेरणा और पथ-दर्शन विखरा पड़ा है। इनसे यह भी पता चलता है कि वह कितने विराट थे और कितने विविध जनों को अपनी छाती से चिपटा लेने की शक्ति उनमें थी।

सामग्री के संकलन में, प्रारम्भिक अवस्था में श्री अविनाशचन्द्र श्रीवास्तव ने पर्याप्त सहायता की जिसके लिए हम उनके आभारी है। हम इन्दिराजी के बहुत आभारी है जिनकी कृपा से हम नेहरू संग्रहालय में उपलब्ध |उस सारी सामग्री का उपयोग कर सके, जो जवाहरलाल जी और गांधी जी के पत्र-व्यवाहर के सम्वन्ध में वहां प्राप्त थी। इसी प्रकार उत्तरप्रदेश शासन (सूचना विभाग), कुंवर सुरेश सिंह, श्री राजीवलोचन शाह, श्री शान्तिलाल त्रिवेदी, कल्याण—सम्पादक श्री हनुमानप्रसाद पोद्दार तथा अन्य सब संस्थाओं एवं बन्धुओं का भी मै आभार मानता हूं जिन्होंने गांधीजी के पत्रों, सम्बन्धित चित्रों तथा अन्य सामग्री के रूप में हमारी सहायता की है।

अन्त में हम सम्मेलन मुद्रणालय के अधिकारियों एवं कर्मचारियों के प्रति आभारी हैं जिन्होंने वड़े उत्साह एवं शीघ्रता से पुस्तक का मुद्रण-कार्य सम्पन्न किया है।

वापू निर्वाण-दिवस
३०-१-१९७०

श्रीरामनाथ 'सुमन'

उत्तर प्रदेश (तब संयुक्त प्रान्त) में गांधीजी के आगमन की मुख्य तिथियां

१८९६

जुलाई ५ : अकस्मात् प्रयाग आगमन। 'पायोनियर'-सम्पादक से भेंट। संगम-स्नान-दर्शन।

१९०२

फरवरी २२ या २३। काशी-आगमन। पण्डे के घर टिके। विधिवत गंगा-स्नान, श्री विश्वनाथ-दर्शन, श्रीमती एनी बेसेण्ट से भेंट।

१९१५

अप्रैल ५ : कुम्भ मेले मे हरद्वार पहुचे।
अप्रैल ६ : गुरुकुल कागडी मे महात्मा मुशीराम से भेंट।
अप्रैल ७ : ऋषिकेश, लक्ष्मण-झूला और स्वर्गाश्रम की यात्रा।
अप्रैल ८ : गुरुकुल कागडी के ब्रह्मचारियो-द्वारा स्वागत।
अप्रैल ९ : सूर्यास्त के पूर्व आहार और उसमे केवल ५ वस्तुए लेने लेने का व्रत।
अप्रैल १४ : मथुरा-वृन्दावन की यात्रा।

१९१६

फरवरी ३ : काशी-आगमन। श्री विश्वनाथ-दर्शन।
फरवरी ४ : हिन्दू विश्वविद्यालय मे भाषण।
फरवरी ५ : काशी नागरी-प्रचारिणी सभा मे भाषण।
फरवरी ६-७ : काशी मे विविध कार्य।
मार्च १८ : हरद्वार गुरुकुल के अछूतोद्धार सम्मेलन मे भाषण।
मार्च १९ · हरद्वार मे स्फुट कार्य।
मार्च २० · गुरुकुल के वार्षिकोत्सव मे भाषण।

मार्च २१-२२ : हरद्वार में स्फुटकार्य।
मार्च २३ : आर्य-समाज भवन हरद्वार में भापग।
दिसम्बर २३ : म्योर कालेज इलाहाबाद में भापण।
दिसम्बर २३ : इलाहाबाद की सार्वजनिक सभा में भापण।
दिसम्बर २६-३० : लखनऊ कांग्रेस में शामिल हुए।
दिसम्बर २८ : लखनऊ कांग्रेस में गिरमिटिया समस्या पर प्रस्ताव रक्खा।
दिसम्बर २९ : लखनऊ। अखिल भारतीय एक-भापा और एक-लिपि सम्मेलन की अध्यक्षता।
दिसम्बर ३० : लखनऊ। विविव कार्य।
दिसम्बर ३१ : लखनऊ। मुस्लिम-लीग अविवेशन में हिन्दू-मुस्लिम ऐक्य पर भाषण।

१९१७

अक्तूवर ६ : इलाहावाद। भारतीय कांग्रेस कमेटी और भारतीय मुस्लिम लीग की परिषद् की संयुक्त बैठक में शामिल हुए।
नवम्बर २८ : अलीगढ़। लायल पुस्तकालय के मैदान और अलीगढ़ कालेज में छात्रों के समक्ष भाषण।

१९१९

मार्च ११ : लखनऊ में सत्याग्रह पर भाषण।
मार्च ११ : इलाहावाद में सत्याग्रह पर भाषण।

१९२०

जनवरी २० : इलाहावाद। मोतीलाल नेहरू से भेंट।
जनवरी २१ : कानपुर। स्वदेशी भण्डार का उद्घाटन।
जनवरी २२ : मेरठ। जुलूस, आम जनता, नगर-पालिका तथा खिलाफत कमेटी की ओर से मानपत्र। सार्वजनिक सभा तथा स्त्रियों की सभा में भाषण।
जनवरी २२ : मुजफ्फरनगर। रात को ११ वजे सभा।
फरवरी २० : काशी: पंजाव के उपद्रवों पर कांग्रेस की रिपोर्ट का मस्विदा अध्यक्ष मोतीलाल को प्रेषित।

फरवरी २१ : काशी। हिन्दू विश्व-विद्यालय के विद्यार्थियो की सभा में भापण।

मई ३० : काशी। अखिल भारतीय काग्रेस कमेटी की बैठक मे भाग लिया।

मई ३१ : काशी-इलाहाबाद।

जून १ : इलाहाबाद। सयुक्त हिन्दू-मुस्लिम सम्मेलन मे भाग।

जून २ . इलाहाबाद।

जून ३ . इलाहाबाद। केन्द्रीय खिलाफत कमेटी की बैठक मे असहयोग पर भापण।

अक्तूबर ११ ' मुरादाबाद। संयुक्तप्रान्तीय सम्मेलन मे भापण।

अक्तूबर १२ : अलीगढ। विद्यार्थियो से भेंट।

अक्तूबर १४ : कानपुर। भापण।

अक्तूबर १५ : लखनऊ। भापण।

अक्तूबर १७ : बरेली। नगर-पालिका मे अभिनन्दन।

नवम्बर २०-२१ : झासी। भापण।

नवम्बर २३ ' अलीगढ। वहा होकर आगरा। सार्वजनिक सभा और विद्यार्थियो की सभा मे भापण।

नवम्बर २५, २६, २७ ' काशी।

नवम्बर २६ ' काशी। विश्वविद्यालय के विद्यार्थियो की सभा तथा सार्वजनिक सभा मे भापण।

नवम्बर २८ ' इलाहाबाद सार्वजनिक सभा मे भापण।

नवम्बर २६ ' इलाहाबाद। महिलाओ की सभा मे भाषण।

नवम्बर ३० : इलाहाबाद। विद्यार्थियो की सभा मे भाषण।

दिसम्बर १ : इलाहाबाद। तिलक विद्यालय का उद्घाटन और भाषण।

१९२१

फरवरी ६ : काशी। टाउन हाल के मैदान मे सार्वजनिक सभा।

फरवरी १० ' काशी। काशी विद्यापीठ के शिलान्यास पर भाषण। फैजाबाद मे भाषण।

फरवरी २६ . लखनऊ। खिलाफत-सभा में भापण।

मई ८ . इलाहाबाद। सरूपकुमारी नेहरू के विवाहोत्सव मे शामिल हुए।

मई ९ : इलाहाबाद।

मई १० : इलाहाबाद। इलाहाबाद–जिला-सम्मेलन में भाषण।

अगस्त ५ : अलीगढ़।

अगस्त ६ : मुरादाबाद। सार्वजनिक सभा, महिला-मण्डल की तथा महाराजा थियेटर की सभाओं में भाषण।

अगस्त ७ : लखनऊ। अमीनुद्दौला पार्क की महती सार्वजनिक सभा में भाषण।

अगस्त ८ : लखनऊ। काठियावाड़ के राजा-महाराजाओं के नाम अपील।

अगस्त ९ : कानपुर। महिलाओं की तथा वस्त्र-व्यापारियों की सभा में भाषण। नागरिकों-द्वारा दिये गये अभिनन्दन पत्र के उत्तर में भाषण।

अगस्त १० : इलाहाबाद। महिलाओं की सभा में भाषण। शाम को स्वराज्य-सभा के मैदान में आयोजित सार्वजनिक सभा में भाषण।

१९२५

अक्तूबर १६ : बलिया। जिला परिषद् में भाषण।

अक्तूबर १७ : काशी। काशी विद्यापीठ की सभा में भाषण।

अक्तूबर १७ : लखनऊ। दो सभाओं में भाषण।

अक्तूबर १७ : सीतापुर। हिन्दू सभा और वैद्य-सभा-द्वारा अभिनन्दन। नगरपालिका द्वारा मानपत्र।

अक्तूबर १८ : सीतापुर। हिन्दी-साहित्य सम्मेलन में भाषण।

अक्तूबर १८ : सीतापुर। संयुक्तप्रान्तीय राजनीतिक सम्मेलन में चर्खा और खादी पर भाषण।

अक्तूबर १८ : सीतापुर। अस्पृश्यता-विरोधी सम्मेलन में भाषण।

दिसम्बर २३ : कानपुर पहुंचे।

दिसम्बर २४ : कानपुर। स्वदेशी प्रदर्शिनी का उद्घाटन।

दिसम्बर २५ : कानपुर। कांग्रेस-अधिवेशन में दक्षिण अफ़्रीका के भारतीयों से सम्बन्ध रखनेवाला प्रस्ताव।

दिसम्बर २६ : कांग्रेस-अधिवेशन में भाषण। 'ज़माना' को सन्देश।

दिसम्बर २७ : कानपुर।

दिसम्बर २८ : कानपुर। मौन-दिवस।

दिसम्बर २९ : कानपुर। एसोसियेटेड प्रेस आफ इण्डिया के प्रतिनिधि से भेंट।

१९२७

जनवरी ७, ८ · काशी। गाधी आश्रम के वार्षिकोत्सव मे शामिल हुए।

जनवरी ९ : काशी। दशाश्वमेध घाट पर गगास्नान तथा स्व० स्वामी श्रद्धानन्द को जलाञ्जलि।

जनवरी १० : काशी।

मार्च मध्य : गुरुकुल कागडी के रजत-जयन्ती महोत्सव मे शामिल हुए।

१९२९

जून १३ : बरेली। नगर-पालिका द्वारा मानपत्र। सभा में भाषण।

जून १४ : हल्द्वानी, काठगोदाम और ताकुला। भाषण। नैनीताल।

जून १५ : नैनीताल। महिलाओ की सभा मे भाषण।

जून १५ : भवाली। स्त्रियो की सभा। शिल्पकारो-द्वारा मानपत्र। सार्वजनिक सभा।

जून १६-१८ . गरमपानी। ताडीखेत। प्रेम विद्यालय के वार्षिकोत्सव में शामिल हुए।

जून १८ : रानीखेत। रानीखेत मे स्त्रियों और पुरुषो की एक-एक सभा। अलमोडा। नगरपालिका का मानपत्र-ग्रहण।

जून १९ : अलमोडा। स्त्रियो की सभा।

जून २० : अलमोडा। सार्वजनिक सभा।

जून १८ से जुलाई २ . अलमोड़ा और कौसानी मे विश्राम तथा लक्ष्मणेश्वर, वागेश्वर आदि।

जुलाई ३ . रामनगर।

जुलाई ४ . काशीपुर।

सितम्बर ११ से २० तक : आगरा, मथुरा, अलीगढ इत्यादि।

सितम्बर २० : मैनपुरी

सितम्बर २१ . फर्रुखाबाद

सितम्बर २२ कन्नौज

सितम्बर २२-२४ कानपुर

सितम्बर २५-२६ : बनारस
सितम्बर २७-२६ : लखनऊ
सितम्बर ३० से अक्तूबर १ : फैजाबाद
अक्तूबर २ : बनारस
अक्तूबर २-३ : गाजीपुर
अक्तूबर ३ : आजमगढ़
अक्तूबर ४-७ : गोरखपुर
अक्तूबर ८-६ : बस्ती
अक्तूबर ६-१० : गोंडा
अक्तूबर १० : बाराबंकी
अक्तूबर १०-११ : हरदोई
अक्तूबर ११ : शाहजहांपुर
अक्तूबर ११-१२ : मुरादाबाद
अक्तूबर १३ : धामपुर
अक्तूबर १३-१४ : नगीना
अक्तूबर १५ : हरद्वार
अक्तूबर १६-१७ : देहरादून
अक्तूबर १८ : मसूरी। १५ दिन विश्राम।
नवम्बर ४ : अलीगढ़
नवम्बर ८ : वृन्दावन
नवम्बर ११ : शाहजहांपुर
नवम्बर १३ : रायबरेली
नवम्बर १३-१४ : कालाकांकर
नवम्बर १५-१८ : इलाहाबाद
नवम्बर २४ : संयुक्तप्रान्त से प्रस्थान।

१९३१

फरवरी २-१६ : इलाहाबाद
मई १६-२१ : नैनीताल (ताकुला के गांधी मन्दिर में निवास)। सर मालकम हेली से भेंट।

१९३४

जुलाई २२-२६ : कानपुर

जुलाई २२ : कानपुर। नगर-पालिका और जिला-परिषद् के मानपत्र, सार्वजनिक सभा।

जुलाई २३ · कानपुर। मौन-दिवस।

जुलाई २४ : कानपुर। तिलक हाल का उद्घाटन, हरिजन-सेवक सघो के कार्यकर्त्ताओ से भेंट, विद्यार्थियो की सभा, सनातन धर्म कालेज के विद्यार्थियो का मानपत्र।

जुलाई २५ · कानपुर। लखनऊ जाना-आना। लखनऊ मे महिला-सभा, बाल-सभा तथा सार्वजनिक सभा। कानपुर : विविध ज़िलो की थैलिया, ज़िला हरिजन-सेवक सघो के प्रतिनिधियो से मुलाकात; प्रान्तीय आर्य-प्रतिनिधि सभा का मानपत्र, हरिजन-बस्तियो का निरीक्षण; गुजरातियो का मानपत्र।

जुलाई २६ : कानपुर। काग्रेस वालो जिले के हरिजन कार्यकर्त्ताओ तथा सयुक्तप्रान्तीय खादी-विक्रेताओ से भेंट; महिला-सभा; हरिजन-बस्तियो का निरीक्षण।

जुलाई २७ : काशी। सार्वजनिक कार्य।

जुलाई २८ : काशी। सार्वजनिक कार्य, काशी विद्यापीठ-द्वारा स्वागत।

जुलाई २९ काशी। जिलो के प्रतिनिधि-मण्डलो से मुलाकात, हरिजन-सेवक-सघ के केन्द्रीय बोर्ड की बैठक।

जुलाई ३० . काशी। मौन-दिवस।

जुलाई ३१ : काशी। हरिजन विद्यार्थियो का मानपत्र, सार्वजनिक सभा।

अगस्त १ : काशी। हिन्दू विश्वविद्यालय के विद्यार्थियो का मानपत्र, हरिजन कार्यकर्त्ताओ की बैठक, हरिजनो की सभा, काग्रेसवालो की बैठक।

अगस्त २ : काशी। हरिजन-बस्तियो तथा कबीर-मठ का निरीक्षण, काशी की पण्डित-मण्डली का मानपत्र, महिलाओ की सभा।

१९३६

मार्च २८ . लखनऊ। ग्रामोद्योग प्रदर्शनी का उद्घाटन।

अप्रैल ५ : इलाहाबाद। हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन के संग्रहालय का उद्घाटन।

१२ अप्रैल तक : लखनऊ में विविध कार्य।

अक्तूबर मध्य भाग : काशी। भारतमाता के मन्दिर का उद्घाटन, कला-भवन का निरीक्षण।

१९३९

नवम्बर १७ से नवम्बर २३ तक : इलाहाबाद। भारतीय कांग्रेस कमेटी की बैठक।

नवम्बर १९ : इलाहाबाद। कमला नेहरू अस्पताल का शिलान्यास।

१९४१

फरवरी २८ : इलाहाबाद। कमला नेहरू अस्पताल का उद्घाटन।

१९४२

जनवरी २१ : काशी। हिन्दू विश्वविद्यालय के जयन्ती समारोह में।

जनवरी २२ : काशी। कांग्रेस कार्य-कर्त्ताओं से भेंट।

१९४६

मई २५-२६ : मसूरी-आगमन। ९ जून तक मसूरी में रहे। विविध-भाषण।

१९४७

जून २१ : हरद्वार। सरहदी सूबे और पंजाब से आये निराश्रितों की छावनियों का निरीक्षण।

उत्तर प्रदेश में गांधीजी

विषयानुसारिणी अनुक्रमणिका

४. सम्बोध (गांधीजी के पत्र उत्तर प्रदेश-वासियों को) [२५३-६९८]

---

१. छपाई में गलती से इस पर १७ की जगह १८ क्रमांक छप गया है। २. छपाई में गलती से १८ की जगह १९ छप गया है। ३. छपाई की गलती से १९ की जगह १७ छप गया है।

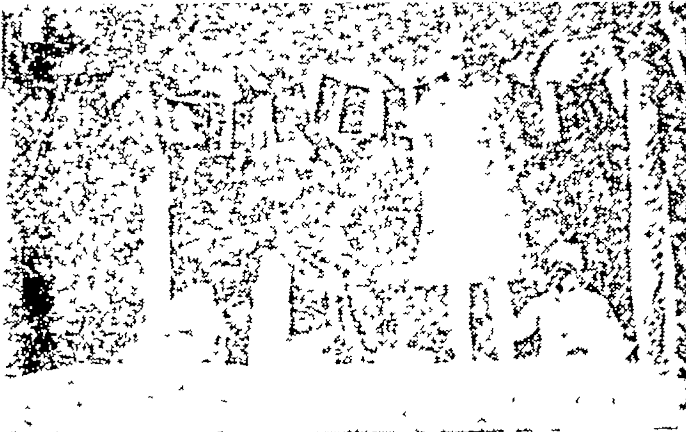
६. संवेदन (गांधी जी की उत्तर प्रदेश-सम्बन्धी टिप्पणियां) [८३१–९९६]

उत्तरप्रदेश में गांधीजी

कालक्रमानुसारिणी अनुक्रमणिका

१९२४

तिथि-विहीन रचनाएं



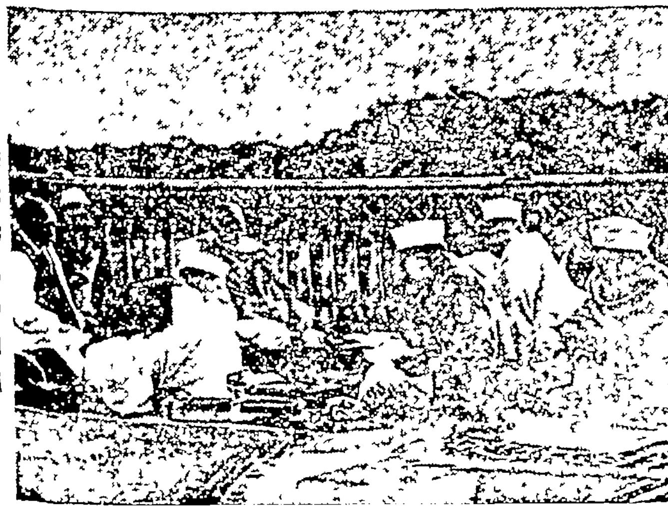
प्रयाग की एक सभा मे प० मोतीलाल नेहरू और महामना मालवीय के साथ

सौजन्य कुवर सुरेश सिंह



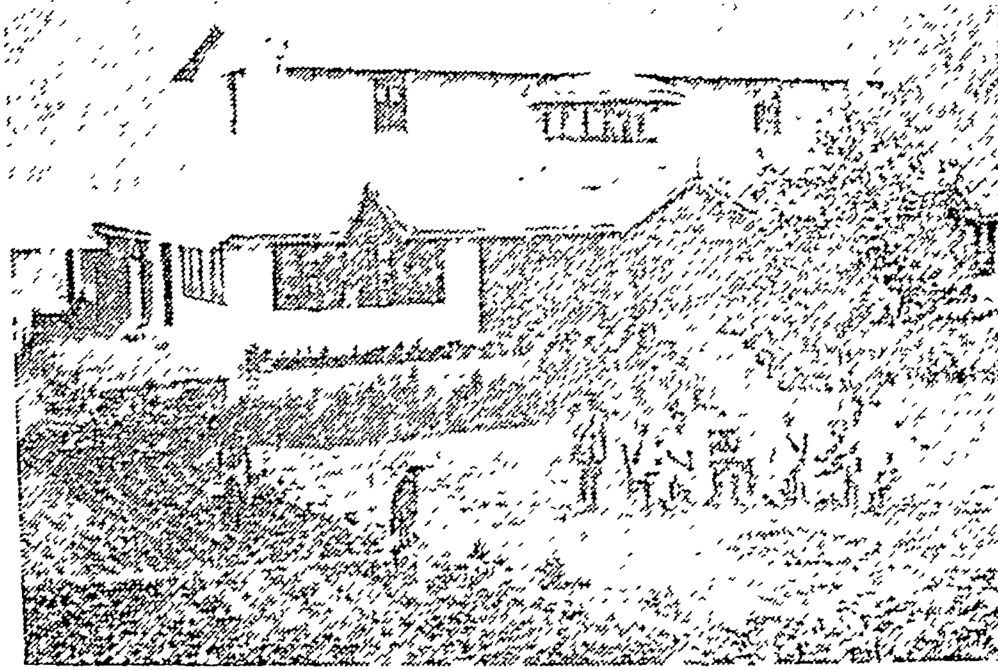
इलाहाबाद की सार्वजनिक सभा मे मच पर आचार्य कृपालानी, टण्डनजी, मोतीलालजी तथा मालवीयजी के साथ

सौजन्य . सूचना विभाग उ० प्र०



इलाहाबाद कांग्रेस कार्य समिति मे

सौजन्य सूचना विभाग उ० प्र०



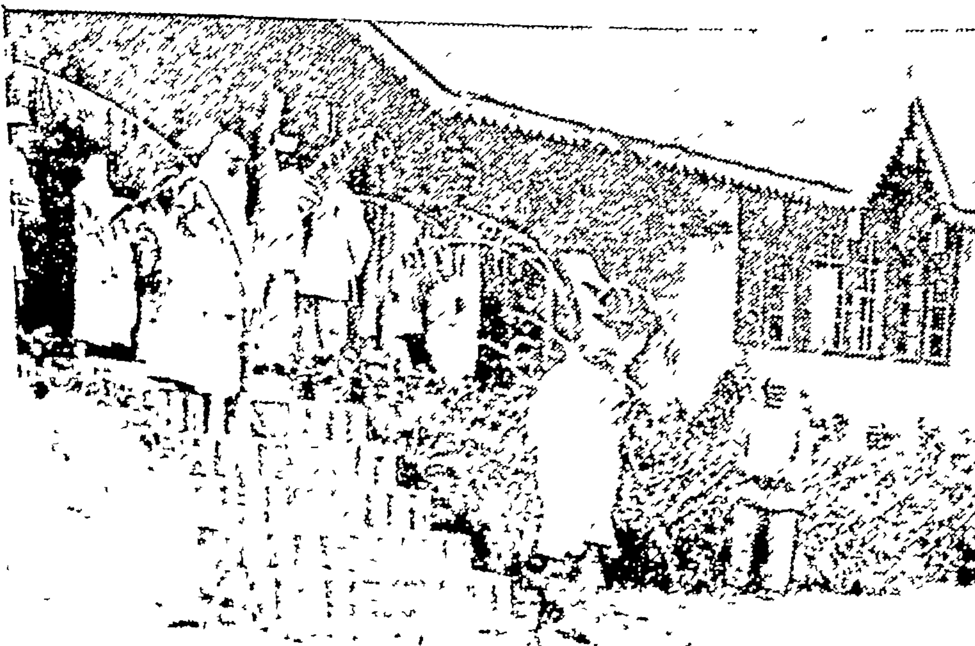
मोतीभवन : ताकुला (१९[illegible]
जहां गांधी जी ठहरे थे

सौजन्य :
श्री राजीवलोचन शाह



अलमोड़ा में (१९२९)

सौजन्य :
सूचना विभाग उ० प्र०



१९२९ : मोतीभवन
ताकुला में

सौजन्य :
राजीवलोचन शाह

अलमोड़ा मे



सौजन्य · सूचना
विभाग उ० प्रदेश



लक्ष्मणेश्वर की
सार्वजनिक सभा मे

सौजन्य : सूचना
विभाग उ० प्र०

१६२६ कालाकांकर मे



सौजन्य . सूचना
विभाग उ० प्र०



ताकुला (१६२६) पहुंचते हुए　　सौजन्य : श्री राजीवलोचन शाह



१६२६ : कालाकाँकर मे　　सौजन्य : कुंवर सुरेश सिंह



ताकुला (नैनीताल) में : १९३१   सौजन्य : सूचना-विभाग उ० प्र०



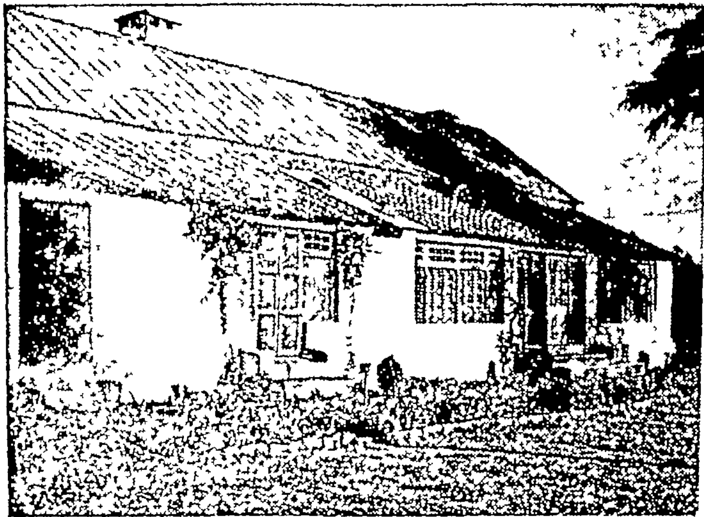
भारतमाता मन्दिर काशी के उद्घाटन मे डा० भगवानदास के साथ
सौजन्य : सूचना विभाग उत्तर प्रदेश



इलाहाबाद की सार्वजनिक सभा मे

सौजन्य सूचना विभाग उ० प्र०

अनासक्ति-आश्रम : एक कक्ष



सौजन्य सूचना विभाग उ० प्र०



ताकुला मे गोविन्दलाल साह से बात करते हुए (१९३१)

सौजन्य सूचना विभाग उ० प्र०



१६२६ काशी विद्यापीठ वाराणसी में आम का पौधा लगाते हुए
सौजन्य : सूचना-विभाग, उत्तर प्रदेश

[illegible]



काशी मे मालवीय जी के साथ जनवरी १६४२ नीचे राधाकृष्णन प्रणाम कर रहे हैं

हि० वि० वि० के रजत जयन्ती समारोह में



वौद्ध विहार सारनाथ में : जनवरी १६४२

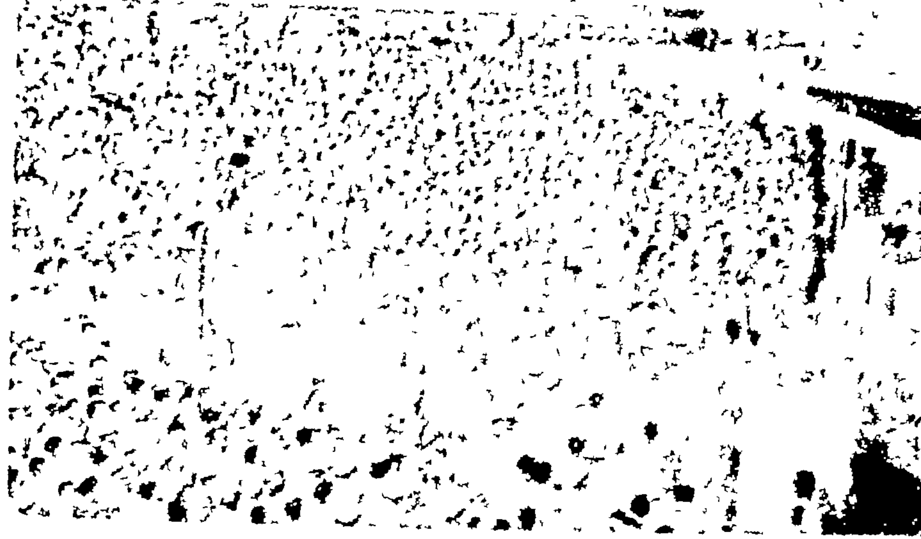
वाराणसी मे मालवीयजी के साथ (१६४२)

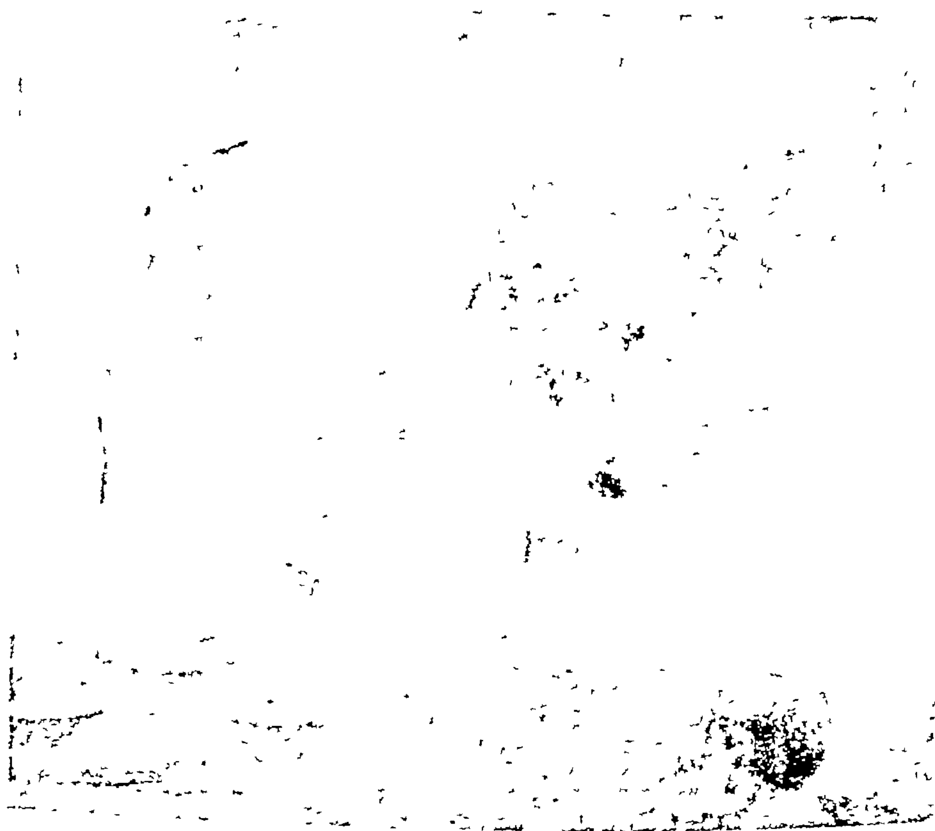




मालवीय जी के निवास-स्थान पर काशी मे जनवरी १६४२

कमला नेहरु अस्पताल के उद्घाटन के पूर्व अनुष्ठान करते हुए







कमला नेहरु अस्पताल का शिलान्यास करते हुए



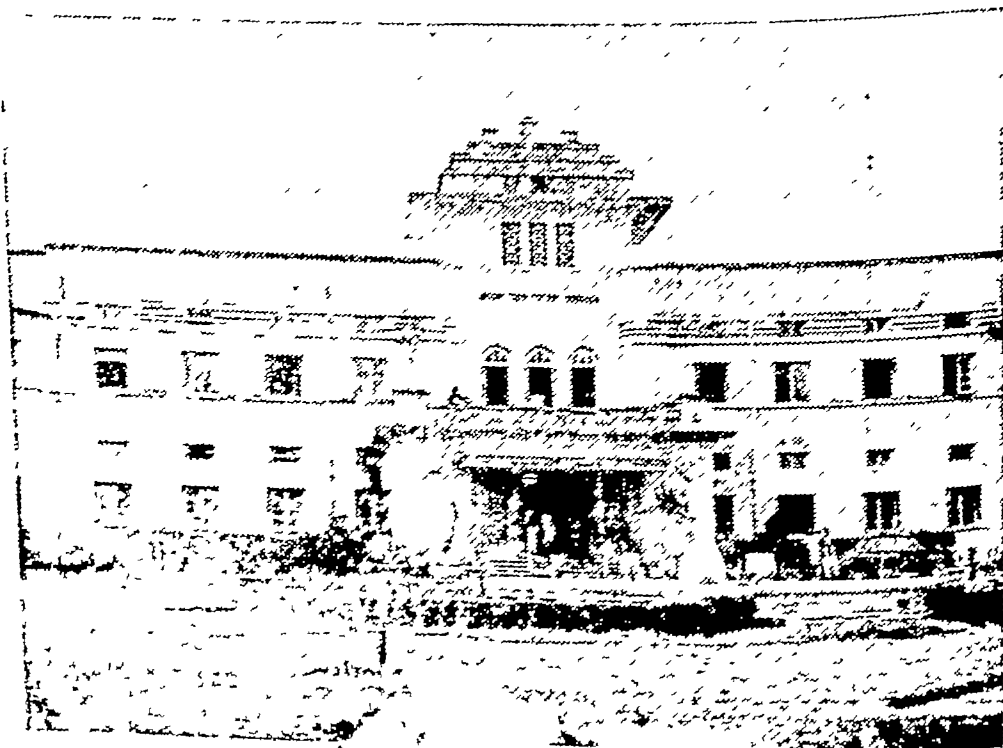


कमला नेहरू अस्पताल का उद्घाटन करते हुए · २८।२।१९४१

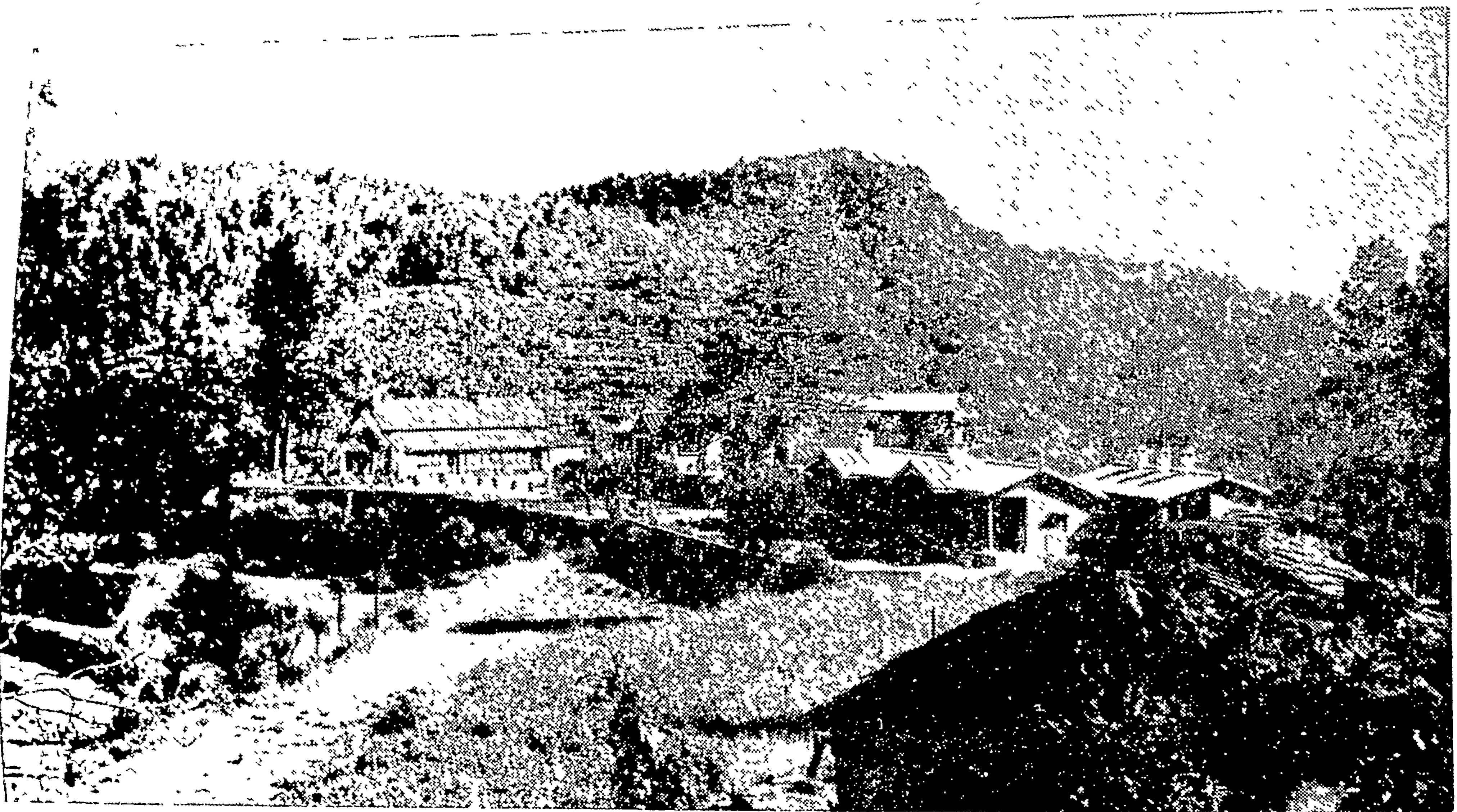


हरद्वार मे निराश्रितो के बीच (१९४७)

कमला नेहरू अस्पताल का उद्घाटन करते हुए : २८।२।१९४१



कम



अनासक्ति-आश्रम, कौसानी का दृश्य

: एक :

उत्तर प्रदेश में गांधीजी : एक सिंहावलोकन

उत्तरप्रदेश में गांधीजी : एक सिंहावलोकन

गाधीजी उत्तर प्रदेश मे पहिली वार १८९६ मे ५ जुलाई को कलकत्ता से गुजरात जाते हुए पधारे थे। उस समय उन्होने गोरो के दैनिक पत्र 'पायोनियर' के सम्पादक मि० चेजनी से भेंट की; उन्हे दक्षिण अफ्रीका-प्रवासी भारतीयो की कठिनाइयो एव अन्य समस्याओ मे दिलचस्पी लेने के लिए प्रेरित किया। फिर त्रिवेणी-सगम मे जाकर स्नान-दर्शनादि किये और दूसरे दिन ६ जुलाई को चले गये। यहा वह केलनर के होटल मे ठहरे थे।

प्रयाग में : १८९६

दूसरी वार कलकत्ता काग्रेस से राजकोट जाते हुए १९०२ की सम्भवतः २२ या २३ फरवरी को, वह काशी आये। काशी की गन्दगी और मन्दिरो के पास के अस्वच्छ वातावरण का प्रभाव उन पर अच्छा नही पडा। सुवह काशी स्टेशन पर उतरकर वह एक पण्डे के घर ठहरे। निराहार रहकर गगा-स्नान किया। वारह वजे दिन तक पूजा-स्नान से निवृत्त होकर काशी विश्वनाथ के दर्शन किये परन्तु सँकरी, फिसलनी, गन्दी गलियो, अशान्त वातावरण से उनको वडी निराशा हुई। फिर ज्ञानवापी आदि होते हुए डेरे पर लौट आये। इस अवसर पर उन्होंने प्रसिद्ध श्रीमती वेसेण्ट के स्थान पर जाकर उनके दर्शन किये।

काशी में : १९०२

काशी से वह आगरा, जयपुर होते हुए राजकोट को रवाना हुए। राजकोट वह २६ फरवरी को पहुंचे। वहा से उन्होंने ४ मार्च को जो पत्र गोखले को लिखा उसमें भी काशी-यात्रा और स्टेशन पर यात्रियो के साथ होनेवाले दुर्व्यवहार की टीका की।

१९०२ के अन्तिम भाग मे गाधीजी दक्षिण अफ्रीका चले गये और वहा की राजनीति मे ऐसे उलझे कि १९१५ तक भारत की ओर विशेष ध्यान देना सम्भव नही हुआ। ९ फरवरी १९१५ को वह वम्वई लौटे। और गोखले की सलाह से देश-भ्रमण कर वास्तविक स्थिति का ज्ञान प्राप्त करने का निश्चय किया। कलकत्ता और वर्मा की यात्रा करने के वाद कस्तूरवा के साथ ५ अप्रैल १९१५

हरद्वार मे : १९१५

सोमवार की शाम को हरद्वार पहुंचे। वहां श्रवणनाथ के बगीचे में ठहरे और प्रसिद्ध काली कमलीवाले सन्त बाबा रामनाथ से भेंट की।

६ अप्रैल मंगलवार की सुबह गुरुकुल कांगड़ी देखने गये और महात्मा मुंशीराम (बाद के स्वा० श्रद्धानन्द) से भेंट की। ७ को ऋषिकेश, लक्ष्मण झूला गये। स्वर्गाश्रम देखा। स्वामी नारायण एवं स्वामी मंगलनाथ से भेंट की। ८ को ज्वालापुर महाविद्यालय, हिन्दू सभा और ऋषिकुल देखा। उसी दिन गुरुकुल के ब्रह्मचारियों की ओर से उनका स्वागत किया गया। उस अवसर पर महात्मा मुंशीराम ने कहा था "मुझे आशा है कि श्री गांधी भारत के लिए ज्योति-स्तम्भ बन जायंगे।" उनकी वह भविष्यवाणी आगे चलकर पूर्णतः सफल और सार्थक हुई।

नवीन व्रत

इसी हरद्वार-यात्रा में ९ अप्रैल गुरुवार को उन्होंने एक नवीन व्रत लेने का निश्चय किया कि हिन्दुस्तान में २४ घण्टों में पाँच ही वस्तुओं का, और वह भी सूर्यास्त से पहिले, आहार करेंगे। इनमें पानी शामिल नहीं था किन्तु इलायची इत्यादि भी उनमें गिन ली गई थी। यह व्रत दूसरे दिन १० अप्रैल को शुरू हो गया। ११ को मोहनी आश्रम, रामकृष्ण मिशन इत्यादि देखकर दिल्ली रवाना हो गये। दिल्ली से वह १४ अप्रैल बुधवार को दोपहर वृन्दावन पहुंचे। वहां प्रेम महाविद्यालय, ऋषिकुल, गुरुकुल तथा रामकृष्ण मिशन देखा। फिर मथुरा होते हुए मद्रास चले गये।

१९१६

विश्व-विद्यालय में भाषण

१९१६ तक उत्तरप्रदेश (तब संयुक्त प्रान्त) से गांधीजी का सम्पर्क बढ़ने लगा था। ४ फरवरी १९१६ को भारत के वाइसराय लार्ड हार्डिंज ने काशी में हिन्दू-विश्वविद्यालय का उद्घाटन किया। इस अवसर पर कितने ही गण्य-मान्य लोग और राजा-महाराजा एकत्र हुए थे। विश्वविद्यालय के कर्त्ता-धर्त्ता-विधाता मालवीयजी यद्यपि राजनीति में गांधीजी से कुछ भिन्न विचार रखते थे किन्तु उनकी सरलता, सेवा-वृत्ति, आडम्बरहीन जीवन तथा भारतीय संस्कृति में उनकी गहरी निष्ठा से इतने प्रभावित थे कि उनके प्रति आकर्षित होते गये। मालवीयजी ने भारतीय आदर्शों की रक्षा और उत्कर्ष के लिए ही विश्वविद्यालय की स्थापना, काशी-जैसे पुरातन तीर्थ में गंगा-तट के समीप की थी। इसलिए उन्होने उक्त अवसर पर छात्रों को सम्बोधन करने के लिए गांधीजी से स्वभावतः आग्रह किया। गांधी-

जी सकोची स्वभाव के होने के कारण स्वय ऐसे अवसर से वचना चाहते थे किन्तु अग्रज-स्वरूप मालवीयजी महाराज के विशेष आग्रह की अवहेलना न कर सके और इस अवसर पर उन्होंने जो भाषण किया उससे तहलका मच गया। यह भाषण गाधीजी के भापणो मे, भारतीय राष्ट्रीय चिन्ता-धारा की दृष्टि से, एक प्रधान स्थान रखता है। यह भापण ऐसे अवसरो पर किये जानेवाले परम्परावादी भाषणो से विल्कुल भिन्न था। एक ओर उसमे भारत के पतन एवं विवश स्थिति की चर्चा थी, दूसरी ओर एक गहरी नैतिक प्रेरणा तथा भारतीय भाषा, वेश-भूषा, सस्कार और देश की दीनता को देखते हुए तदनुकूल आचरण वनाने का प्रवल आग्रह था। सार्वजनिक मच से, जहा ब्रिटिश-सत्ता की छत्रछाया मे पले राजा-महाराजाओ का जमघट हो, यह भापण एक चुनौती लिये आया था। यह एक विल्कुल ही नवीन प्रकार का भापण था।

विश्वनाथ-दर्शन

काशी-आगमन के इस अवसर पर गाधीजी ने ३ फरवरी को श्री विश्वनाथ-दर्शन किया और ५ को काशी नागरी-प्रचारिणी सभा के वाईसवें वार्षिकोत्सव मे, जिसकी अध्यक्षता कश्मीर के महाराजाधिराज कर रहे थे, भाषण करते हुए कहा, "जिस भाषा मे तुलसी-दास—जैसे कवि ने कविता की हो वह अवश्य पवित्र है और उसके सामने कोई भाषा ठहर नही सकती।" ७ फरवरी तक काशी मे रहकर वह वम्वई चले गये।

हरद्वार मे

प्राय डेढ मास के पश्चात् वह पुन सयुक्त प्रान्त मे आये। इस वार १८ मार्च से २३ मार्च तक वह प्राय हरद्वार, मुख्यत गुरुकुल, मे रहे। १८ मार्च को वह गुरुकुल अछूतोद्धार सम्मेलन मे शामिल हुए और अस्पृश्यता-निवारण की आवश्यकता पर जोर देते हुए कहा कि हिन्दुओं को प्रायश्चित्त-भावना से यह कार्य करना चाहिए। २० मार्च को गुरुकुल के पुरस्कार-वितरण समारोह मे भापण देते हुए उन्होंने कहा—"पाठशाला को ग्रामीण जीवन, ग्रामीण शिल्प, खुली हवा, आजादी तथा अपने लोगो की सेवा के प्रति आकर्पण उत्पन्न करना चाहिए।" इसी दिन (२० मार्च) गुरुकुल कागडी के वार्षिकोत्सव मे उन्होंने मार्मिक भापण किया जिसमे कहा कि "उचित धार्मिक भावना हमारी सवसे वडी तात्कालिक आवश्यकता है। निर्भयता का गुण विना धार्मिक चेतना के प्राप्त नही किया जा सकता।" इस भापण मे उन्होंने ग्रामीण उद्योगो के शिक्षण पर भी जोर दिया। २२ मार्च को उनकी तवीयत खराव हो गई। २३ को आर्यसमाज-भवन मे उन्होंने

दयानन्द स्कूल के विद्यार्थियों के समक्ष भाषण करते हुए कहा कि उन्हें अपनी आत्मा के प्रति सच्चा वनना चाहिए तभी वे देश के प्रति भी सच्चे वन सकेंगे।

प्रयाग में

इसी वर्ष दिसम्वर में गांधीजी पुनः संयुक्तप्रान्त में आये और कई दिनों (२२ से ३१ दिसम्वर) तक इलाहावाद और लखनऊ में रहे। २२ दिसम्वर को म्योर सेण्ट्रल कालेज, इलाहावाद की अर्थशास्त्र-समिति के तत्वावधान में आयोजित सभा में वह वोले। पं० मदनमोहन मालवीय इस सभा के अध्यक्ष थे और डा० तेजवहादुर सप्रू, डा० सुन्दरलाल (विश्वविद्यालय के तत्कालीन उप-कुलपति), एच० एस० एल० पोलक, सर्वश्री चिन्तामणि, शिवप्रसाद गुप्त, पुरुषोत्तमदास टण्डन तथा डा० ई० जी० हिल इत्यादि अनेक प्रतिष्ठित व्यक्ति सभा में आये थे। व्याख्यान का विषय था—'क्या आर्थिक उन्नति वास्तविक उन्नति के विपरीत जाती है?' इस भाषण में आर्थिक समृद्धि से नैतिक समृद्धि के ह्रास होने की वात पर जोर देते हुए उन्होंने अन्त में कहा—"ब्रिटिश छत्र-छाया में हमने वहुत कुछ सीखा है, किन्तु मेरा यह निश्चित मत है कि ब्रिटेन यथार्थ नैतिकता की दिशा में कुछ भी देने में असमर्थ है।...हम इस सम्वन्ध से उसी दशा में लाभ उठा सकते हैं जव हम अपनी सभ्यता और अपनी नैतिकता से विचलित न हों।... हमें सर्वप्रथम दैवी सम्पद् की, परमपिता के राज्य और उसकी पवित्रता की कामना करनी चाहिए। जो ऐसा करेगा उसे यह अमोघ वचन मिला हुआ है कि उसके पास सव वस्तुएं आ जायँगी। सच्चा अर्थशास्त्र यही है।"...

२३ दिसम्वर को गांधीजी ने इलाहावाद की एक वहुत वड़ी सार्वजनिक सभा में, जो मुंशी रामप्रसाद के वाग़ कटघर रोड में मालवीयजी महाराज की अध्यक्षता में हुई थी, प्राचीन एवं अर्वाचीन शिक्षा-नीति पर भाषण करते हुए अंग्रेजी भाषा के माध्यम से शिक्षा देने की आधुनिक प्रणाली पर गहरा प्रहार किया और प्राचीन शिक्षा-प्रणाली की प्रशंसा करते हुए कहा—"उसका आधार संयम और ब्रह्मचर्य था। यह इसी शिक्षा-प्रणाली का प्रताप है कि हजारों वर्षों से अनेक प्रकार के आघात सहने पर भी भारतीय सभ्यता आज तक जीवित है।... भारतीय सभ्यता का प्रधान आधार आध्यात्मिक वल है। वह भौतिक वल से कहीं वढ़कर है। भारतवर्ष प्रधानतः धर्मभूमि है और उसे धर्मभूमि वनाये रखना भारतवासियों का सवसे वड़ा कर्त्तव्य है।"

२६ से ३० दिसम्वर तक वह लखनऊ रहे। यहां वह भारतीय राष्ट्रीय

महासभा के इकतीसवें अधिवेशन मे शरीक हुए तथा २८ दिसम्बर के अधिवेशन मे गिरमिटिया मजदूरो के सम्बन्ध मे एक प्रस्ताव रक्खा जो पास हो गया। २९ दिसम्बर को 'भारतीय एक भाषा और एक-लिपि सम्मेलन' लखनऊ मे ही उनकी अध्यक्षता मे हुआ। वह टूटी-फूटी हिन्दी मे बोले और कहा—"आप अपनी भाषा मे बोलें, अपनी भाषा मे लिखें। लाट साहब या सरकार को गरज होगी तो वे सुनेंगे।" ३१ दिसम्बर को वह मुस्लिम लीग की बैठक मे शामिल हुए और वहा हिन्दू-मुस्लिम ऐक्य तथा मिल-जुलकर काम करने की अपील की।

लखनऊ में

१९१७ में

१९१७ मे वह चम्पारन के निलहे गोरो के अत्याचार से वहा के किसानो को राहत दिलाने तथा तत्सम्बन्धी सत्याग्रह की तैयारी मे लगे रहने के कारण केवल दो बार सयुक्तप्रान्त आ सके। ६ अक्तूबर १९१७ को अखिल भारतीय काग्रेस कमेटी और भारतीय मुस्लिम लीग की परिषद की सयुक्त बैठक इलाहाबाद मे हुई थी, उसमे वह शामिल हुए। २८ नवम्बर को अलीगढ पहुचे। छात्रो की भारी भीड ने उनका स्वागत किया और स्टेशन से लायल पुस्तकालय के मैदान तक उनका जुलूस निकाला। वहा गाधीजी ने हिन्दू-मुस्लिम एकता पर भाषण करते हुए कहा—"दोनो को अपने झगडे पारिवारिक झगडो की तरह तय कर लेने चाहिए।"

१९१९ में

१९१८ मे अनेक कार्यों मे व्यस्त हो जाने के कारण वह एक बार भी सयुक्त-प्रान्त मे न आ सके। उत्तरार्द्ध भाग मे वह प्राय अस्वस्थ रहे। जरा अच्छा होते कि फिर बीमार पड जाते। कई बार तो हालत गम्भीर हो गई। १९१९ के प्रथम चरण मे भी स्वास्थ्य ठीक नही रहा। २० जनवरी १९१९ को बम्बई मे डा० दलाल ने उनका बवासीर का आपरेशन किया।

इसी समय महायुद्ध के बाद स्वतन्त्रता देने के वादे की पूर्ति की बात भूलकर सरकार उलटे दमन पर उतारू हो गई। शासन को दमन-सम्बन्धी अधिक अधिकार देने के लिए रौलट विधेयक पेश किया गया, जिसका देश के सभी वर्गो ने तीव्र विरोध किया। किन्तु सरकार तो कुछ सुनने की मनःस्थिति मे ही नही थी। इसलिए गाधीजी ने सत्याग्रह की तैयारी का आन्दोलन चलाया। सत्याग्रह की प्रतिज्ञा लेनेवाले चुने हुए सत्याग्रही सेवको की भरती होने लगी।

अपनी अस्वस्थता के बावजूद, इसी सिलसिले में १० मार्च १९१९ को वह लखनऊ पहुंचे। ११ की सुबह आठ बजे रिफाहे आम हाल की एक सभा में उन्होंने लोगों को सत्याग्रह का मर्म समझाया। उसके बाद उसी दिन इलाहाबाद आ गये और पं० मोतीलाल नेहरू के साथ ठहरे। इलाहाबाद से उन्होंने वाइसराय के निजी सचिव श्री मैफ़ी को रौलट बिलों के स्थगन और उनपर जनता की तीव्र प्रतिक्रिया के प्रकाश में पुनर्विचार करने के लिए तार दिया और पत्र भी लिखा। उन्होंने वी० एस० श्री निवास शास्त्री को भी पत्र लिखकर इन विधेयकों का विरोध और जनता की भावना व्यक्त करने का अनुरोध किया।

लखनऊ-इलाहाबाद में

उसी दिन इलाहावाद में एक सार्वजनिक सभा हुई। गांधीजी के वीमार हो जाने के कारण उनका लिखित भाषण महादेव भाई ने हिन्दी में पढ़ सुनाया। इस भापण मे उन्होंने सत्याग्रहियों के लिए पवित्रता, संयम, आत्म-बलिदान और हर स्थिति में अहिंसा से न हटने पर जोर दिया था।

१९२० में

पंजाव के हत्याकाण्ड और खिलाफत के अपहरण के फलस्वरूप देश में सब ओर असन्तोष फैल गया था। एक सामूहिक जन-आन्दोलन उभरता आ रहा था। मुसलमानों में खिलाफत के सवाल को लेकर बड़ी बेचैनी थी। गांधी जी ने उनका साथ देकर उन्हें अपने ढंग के आन्दोलन की ओर मोड़ लिया था। १९२० आते ही गांधीजी सारे देश में घूम कर भावी आन्दोलन के लिए लोगों को तैयार करने लगे।

२० जनवरी १९२० को वह पं० मोतीलाल नेहरू से मिलने इलाहावाद आये। इलाहावाद से लाहौर जाते हुए २१ को कानपुर रुके। वहां स्वदेशी भण्डार का उद्घाटन किया। २२ को सुवह मेरठ पहुंचे। वहां भारी जुलूस निकला; सभा हुई; नगर-पालिका, खिलाफत कमेटी, सावारण जन-समाज, हिन्दू स्त्रियों और मुसलमान स्त्रियों की ओर से मानपत्र दिये गये। स्त्रियों की एक अलग सभा हुई। उसी दिन रात मुजफ्फरनगर पहुंचे। लोगों में बहुत उत्साह था। रात ११ बजे सभा हुई। गांधीजी के भापण का बड़ा प्रभाव पड़ा। उसी रात वह लाहौर चले गये।

इलाहावाद, कानपुर, मेरठ

अगले मास फरवरी २० को गांधीजी पुनः काशी आये। इसी दिन तीसरे

पहर साढे तीन बजे टाउन हाल के मैदान मे खिलाफत की एक आम सभा हुई।

काशी मे

इस सभा मे मौलाना शौकत अली, मौ० अबुलकलाम आजाद, प० मदनमोहन मालवीय, प० मोतीलाल नेहरू, लाला हरकिशनलाल तथा पजाव के कई अन्य नेता उपस्थित थे। गाधीजी ने इस सभा मे वडा ही बोधप्रद भाषण किया।

छात्रों की सभा में

दूसरे दिन २१ फरवरी को हिन्दू विश्वविद्यालय काशी मे छात्रो की एक सभा उपकुलपति की अध्यक्षता मे हुई। इस सभा मे गाधीजी ने हिन्दी मे भाषण करते हुए कहा कि विद्यार्थियो को राजनीति का अध्ययन करना चाहिए परन्तु उसमे सक्रिय भाग नही लेना चाहिए। उनका आदर्श सयम, न कि स्वेच्छाचारिता, होना चाहिए। उन्होंने भरत के जीवन से सयम के दृष्टान्त प्रस्तुत किये और कहा कि विद्यार्थियो के लिए उचित है कि अपने गुरुओ के प्रति श्रद्धाभाव रखना सीखें। उन्होंने मालवीय जी की सेवाओ की प्रशसा करते हुए कहा कि उनका जीवन अध्यापको और विद्यार्थियो के लिए दृष्टान्त-रूप है।

पुनः काशी और प्रयाग मे

३० मई १९२० को असहयोग-आन्दोलन पर विचार करने के लिए भारतीय कांग्रेस कमेटी की बैठक काशी मे हुई। गाधी जी ने उसमे भाग लिया। वहा से वह इलाहाबाद गये जहा १ और २ जून को हिन्दू-मुसलमानो का एक सयुक्त सम्मेलन हुआ। उसमे शामिल हुए। ३ जून को इलाहाबाद मे ही भारतीय केन्द्रीय खिलाफत कमेटी की बैठक मे वडा ही सारगर्भ भाषण किया।

संयुक्त प्रान्तीय सम्मेलन मुरादाबाद में

अक्तूबर में गाधी जी ने फिर सयुक्तप्रान्त का दौरा किया। ११ अक्तूबर को सयुक्तप्रान्तीय सम्मेलन के मुरादाबाद अधिवेशन मे शामिल हुए और असहयोग का समर्थन करते हुए कहा- "देश की स्वतन्त्रता का एक मात्र मार्ग असहयोग ही है। भारत की आजादी के लिए दो शर्तें हैं'—१ हिन्दू-मुस्लिम ऐक्य और २ असहयोग-आन्दोलन की सफलता। सरकार से सम्बन्ध बनाये रखना अपराध है। ऐसी सरकार के साथ सहयोग करना, इसकी विधान-परिषदो मे बैठना या अपने बच्चो को इसके स्कूलो मे भेजना हराम है।"।

अलीगढ़ में

१२ अक्तूबर को वह अलीगढ़ पहुंचे और यूनियन हाल में छात्रों से भेंट की। इस अवसर पर उन्होंने कहा था—"यह काम डिस्ट्रक्शन (संहार) का अवश्य है, किन्तु फिलहाल जो खराब घास उग आई है उसे जड़मूल से उखाड़ने की ही जरूरत है जिससे कि अच्छे अनाज की बुवाई हो सके।"

कानपुर में

१४ अक्तूबर को वह कानपुर पहुंचे। वहां परेड मैदान में एक विशाल सभा हुई। इसमें उन्होंने असहयोग पर भाषण करते हुए संगठन की क्षमता और हिन्दू-मुस्लिम ऐक्य पर जोर दिया। इस अवसर पर उन्होंने कहा था—"ज्योंही लोगों की समझ में यह बात आ जायगी कि उनके सहयोग के बिना ब्रिटिश शासन असम्भव है, तथा वे अपना सहयोग देना बन्द कर देंगे, त्योंही विजय हमारे हाथ होगी।" यहां उन्होंने यह भी कहा कि बलिदान ही सचाई की सच्ची कसौटी है। उन्होंने स्कूल, अदालत तथा कौंसिल के बहिष्कार की मार्मिक अपील की।

लखनऊ में

१५ अक्तूबर को लखनऊ गये। वहाँ उसी दिन विराट सार्वजनिक सभा हुई जिसमें उन्होंने एक ओजस्वी भाषण करते हुए कहा—"ब्रिटिश शासन इस समय शैतानियत की तस्वीर है। जो खुदा के बन्दे हैं वे इस शैतानियत से वास्ता नही रख सकते।... इसे मिटाना हर भारतीय का कर्त्तव्य है।...गुलामी में रहने से तो समुद्र में डूब मरना बेहतर है।..."

बरेली में

१७ अक्तूबर को वह बरेली पहुँचे। वहाँ की नगरपालिका ने उनको मानपत्र दिया जिसका उत्तर देते हुए उन्होंने कहा—"आप निडर रहें।...आप पर कितने ही अत्याचार क्यों न किये जायँ, आप अपनी स्वतन्त्रता बनाये रखने का प्रयत्न करें।"

झांसी

नवम्बर में उन्होने पुनः संयुक्तप्रान्त के कई नगरो का दौरा किया। २० नवम्बर को झाँसी पहुँचे। इस अवसर पर झाँसी नगर तथा हार्डीगंज को, जहाँ उनका भाषण हुआ था, गांधी जी के स्वागत के लिए बहुत अच्छी तरह सजाया गया था। यहाँ उन्होंने हिन्दू-मुस्लिम ऐक्य तथा अहिंसक असहयोग पर भाषण करते हुए सरस्वती पाठशाला के लिए चन्दे की अपील की।

२३ नवम्वर को अलीगढ होते हुए वह आगरा पहुँचे। गाधी जी एक जुलूस मे सभास्थल तक ले जाये गये। जुलूस के साथ वैण्ड वज रहा था और रास्ता खूव सजाया गया था। भीड इतनी ज्यादा थी कि सभास्थान तक पहुँचने मे दो घण्टे लग गये। सभा मे भाषण करते हुए उन्होने हाल मे ही आगरा मे हुए हिन्दू-मुस्लिम दगे का उल्लेख किया और फिर आपस मे ही विवाद सुलझा लेने के लिए जनता को वधाई दी। इसके वाद उन्होंने जुलूस तथा भीड की अनुशासनहीनता का जिक्र करते हुए कहा—"भारत जलियाँवाला वाग हत्याकाड के लिए शोक मना रहा है। शोक के समय सगीत और जुलूस का विचार मुझसे सहन नही होता।" उन्होंने त्रिविध वहिष्कार के लिए अपील की।

आगरा में

उसी दिन आगरा के छात्रो की एक दूसरी सभा हुई जिसमे भाषण करते हुए गाधी जी ने कहा—"गुलामी की ज़जीर की चमक से हमारी आँखें चौंधिया रही है और हम हैं कि उसे अपनी स्वतन्त्रता का चिह्न माने वैठे हैं। जिस शिक्षा मे सचाई से चलने का अवकाश नही वह कैसी शिक्षा है? . विना शर्त्त स्कूलो का त्याग करना स्वतन्त्रता का पहिला पाठ है। यह शिक्षा तो नास्तिकता की शिक्षा है।"

२४ नवम्वर को गाधीजी दिल्ली से काशी के लिए रवाना हुए। २५, २६ और २७ नवम्वर को वह काशी मे मालवीयजी महाराज के पास रहे। इस अवसर पर उन्होंने काशी मे कई व्याख्यान दिये। २६ नवम्वर १६२० को उन्होंने विश्वविद्यालय के अहाते के वाहर विद्यार्थियो की एक सभा मे वड़ा ही मार्मिक भाषण किया। इसमे उन्होंने कहा—"आज तो आप ऐसी शिक्षा पा रहे हैं जिससे वेडियाँ और अधिक मजवूत हो जायँ।. देश मे जहाँ कितनो को पूरा खाना नही मिलता, जहाँ की स्त्रियाँ वदलने को दूसरे कपडे न होने के कारण कई कई दिनो तक स्नान नही कर पाती, वहाँ आप लोगो को पढने-लिखने के लिए वडे-वडे महल चाहिए? देश के लिए दर्द, मेरे अन्दर जो आग जल रही है, वही आपके भीतर जल रही हो तो मकान-वकान की वात भूल जाइए और मेरी वात मान कर असहयोग कीजिए। स्वराज्य तभी मिलेगा जव आप अपना धर्म पहिचानेंगे। जयनाद करने से वह नही मिल सकता।"

काशी में

उसी दिन (२६ नवम्वर को) टाउन हाल के मैदान मे एक सभा वा० भग-

वानदास जी की अध्यक्षता में हुई। इस सभा में पं० मोतीलाल नेहरू, पं० जवाहरलाल नेहरू, मौ० अवुलकलाम आज़ाद और देशवन्धु चित्तरंजन दास इत्यादि अनेक वड़े-वड़े नेता उपस्थित थे। वड़ी भीड़ थी। लोगों में वड़ा उत्साह था।

सार्वजनिक सभा में

लगता था कि राष्ट्रीय भावनाओ का एक सैलाव चारों तरफ़ वढ़ता जा रहा है। गांधी जी ने देश के युवकों को सम्वोवित करते हुए कहा—"यह सल्तनत राक्षसी सल्तनत है। हमारा कर्त्तव्य है कि या तो उसे ठीक करें या मिटा दें।...न सरकार से मदद लें, न सरकार को मदद दे, खितावों, अदालतों, वकालत, स्कूलों का त्याग करना चाहिए। ३० तारीख को कौंसिलों का चुनाव है। यह हमारी परीक्षा का दिन होगा।...फिर सैनिक सेवा हराम है। आप भरती के सिपाही न हों; आपको हिन्दुस्तान की आजादी का सिपाही बनना चाहिए।...स्वदेशी अपनाओ, खादी पहिनो, हिन्दू-मुस्लिम एकता रक्खो तो स्वराज्य मिला रक्खा है।"

२७ नवम्वर को उन्होंने फिर यूनिवर्सिटी हाल में छात्रों की सभा में भाषण करते हुए कहा—"मेरा वर्म सिखाता है कि जिस वात को मैं धर्म समझता हूँ उसके लिए प्यारी-से-प्यारी वस्तु को भी त्याग दूं। मैं तो अवर्मी के हाथ से स्वर्ण-दान भी नही ले सकता। इसी तरह जहां उसकी ध्वजा फहराती है, वहां विद्या लेना दोष समझता हूँ। मैं तो इस सल्तनत में रहना ही नही चाहता। मैं २४ घण्टे एक ही जप करता हूँ कि इसे कैसे हटाऊँ। विद्यार्थियों से मैं कहता हूँ कि इस सल्तनत से सहकार हटा लेना ही हमारा परम धर्म है।...असहयोग ही एक उपाय है।...हमें वड़े आत्म-वलिदान की आवश्यकता है। ईश्वर आपको स्वच्छ भाव दें, वल दें।..."

छात्रों के वीच

२७ नवम्वर को ही हिन्दू विश्वविद्यालय के सह-उपकुलपति श्री ध्रुव जी की अध्यक्षता में राजघाट के समीप एक सार्वजनिक सभा हुई जिसमें गांधी जी ने हिन्दू धर्म की दृष्टि से गोरक्षा का महत्व समझाया और कहा कि केवल असहयोग ही स्वराज्य-प्राप्ति में आपकी सहायता कर सकता है।

गोरक्षा की सभा में

२८ नवम्वर को वह इलाहावाद पहुँचे। वहाँ पं० मोतीलाल नेहरू की अध्यक्षता में एक सार्वजनिक सभा हुई। इसमें गांधीजी ने हिन्दी में भाषण करते हुए कहा—"...यह समय काम करने का है, भाषणों और सभाओं का नहीं। यह सरकार आसुरी है।...आपको चाहिए कि इसे सुधार दें या समाप्त

इलाहावाद

कर दें। इसके लिए एकता बहुत जरूरी है। यदि हिन्दू-मुसलमान एक हो जाय तो ससार की कोई भी शक्ति हमे दबा नही सकती। जैसे उजाला अँधेरे को दूर करता है वैसे ही हम झूठ को सत्य से और बुरी शक्तियो को आत्म-बल से नष्ट कर सकते हैं।"

स्त्रियों की सभा

२६ नवम्बर को महिलाओ की सभा मे बोलते हुए उन्होंने कहा—"आप अपने पतियो और पुत्रो से कर्त्तव्य के पथ पर चलने को कहे तथा स्वय स्वदेशी को अपनाकर स्वतन्त्र भारत के निर्माण मे प्रभावकारी सहायता दें।.. स्वदेशी स्वराज्य प्राप्त करने का एक अमोघ उपाय है और उसके प्रचार का मुख्य भार भारतीय स्त्रियो पर है।"

दूसरी जन-सभा में

२६ नवम्बर को गाधीजी ने इलाहाबाद की एक दूसरी सभा मे बोलते हुए कहा.. "सयुक्तप्रान्त हिन्दुस्तान का केन्द्र है, इसलिए उससे देश के अन्य भागो से आगे रहने की आशा की जाती है। झाँसी मे हिन्दू और मुसलमान छात्रो ने गीता और कुरान हाथ मे लेकर शपथ ली है कि वे सरकार-द्वारा नियन्त्रित संस्थाओ को छोड देंगे। ..सयुक्त प्रान्तीय सरकार की चाल सफल हो गई और उसने फूट डालकर दोनो जातियो को पौरुषहीन बना दिया है। . मेरा अनुरोध है कि आप पराक्रमी बनें और कायरो के दिलो मे पैदा होनेवाली शकाओ को निकाल बाहर करें।" ३० नवम्बर को आनन्द भवन मे विद्यार्थियो की सभा मे बोलते हुए उन्होंने कहा—"प्रतिज्ञा लो तो उसके लिए मरना सीखो। कसम लो तो फिर धरती रसातल मे चली जाय तो भी उसे न तोडो। मैं आप मे शान्त साहस फूंकना चाहता हूँ। मैं चाहता हूँ कि आपका हृदय कुर्बानी और तपश्चर्या के योग्य बने।"

तिलक विद्यालय का उद्घाटन

१ दिसम्बर को गाधीजी ने इलाहाबाद मे राष्ट्रीय शिक्षा देने के निमित्त तिलक विद्यालय का उद्घाटन किया। इस अवसर पर उन्होंने कहा "स्वराज्य के लिए जितना आत्मत्याग तिलक ने किया है उतना किसी दूसरे व्यक्ति ने नही किया। इसलिए उस महान देशभक्त के नाम पर इसका नाम रखा जाना उचित ही है। मैं आपसे अनुरोध करता हूँ कि आप अपने आचरण से अहिंसात्मक असहयोग को सफल बनायें।"

१९२१

धीरे-धीरे १६२१ आया। देश मे राष्ट्रीय भावना का प्रवाह कोने-कोने तक

पहुँच गया। फरवरी १९२१ में देश का दौरा करते हुए गांधीजी पुनः काशी आये।

टाउनहाल की विराट सभा

९ फरवरी (२१) को टाउन हाल के मैदान में एक विराट सार्वजनिक सभा हुई। इस सभा में एक लाख के ऊपर श्रोता उपस्थित थे। बा० भगवानदास जी अध्यक्षता कर रहे थे। गांधी जी ने अपने ओजस्वी भाषण में कहा—"यह ठण्डी हिम्मत और अमन की लड़ाई है। यदि हमने तलवार उठाकर अँग्रेज का या अपने भाई का गला काटा तो हमारा पतन हो जायगा।...मैं सब बातें छोड़ देने के लिए तैयार हूँ—वकीलों का प्रश्न न उठाऊँ, छात्रों को न छेड़ूँ, परन्तु मैं शान्ति कभी नहीं छोड़ सकता। जब हम परदेसी राज्य नहीं चाहते तो हमें परदेसी लिबास और विदेशी वस्त्र भी छोड़ देना चाहिए। यदि हम यह नहीं कर सकते तो एक क्या, दस वर्षो में भी स्वराज्य नहीं मिल सकता।..."

काशी विद्यापीठ का शिलान्यास

दूसरे दिन, १० फरवरी (१९२१) को काशी विद्यापीठ का शिलान्यास करते हुए अपने भाषण में कहा—"हमारी लड़ाई ऐसी है कि पिता को पुत्र के, पति को पत्नी के, पत्नी को पति के वियोग का दुःख सहना पड़ेगा।...जब हमें निश्चय हो गया कि सरकार-नियन्त्रित विद्यालयों में शिक्षा लेना पाप है तो उन्हें त्यागना ही उचित होगा।...हमारे बिस्तरे के नीचे पचासों वर्षों से साँप छिपा था। हमें उसका पता नहीं था। आज हमें एकाएक पता लगता है। हम अब उस बिस्तरे पर नहीं रह सकते। जिस विद्यालय पर सरकार की ध्वजा फहराती है वहाँ विद्यादान लेना पाप-कर्म है। यदि आप उसे पाप समझते है तो यहाँ चले आइए।...असहयोग ही हमारे लिए एकमात्र शस्त्र है। हम सबको प्रतिज्ञा करनी चाहिए कि विदेशी वस्त्र धारण करना महापाप है।...हमारा दूसरा कर्त्तव्य अपनी मातृ-भाषा को विकसित करना है।.. प्रभु से मेरी प्रार्थना है कि दिन-प्रतिदिन इस विद्यापीठ की वृद्धि हो।..."

फैजाबाद में

इसीदिन १० फरवरी को गांधी जी फैजाबाद चले गये और वहाँ की सभा में किसानों-द्वारा की हुई हिंसा की चर्चा की और उसके लिए खेद प्रकट किया। उन्होंने हिंसा की अत्यन्त तीव्र और स्पष्ट निन्दा की और कहा कि ऐसा करना ईश्वर और मानव के प्रति पाप है। उन्होंने जमीदारों और किसानों के बीच झगड़ा कराने से समस्त प्रयत्नों की भर्त्सना की। इसी सम्बन्ध में उन्होंने कहा—"हिंसा कायरता का लक्षण है।...तलवार तो कमजोर का हथियार है।" इस

सभा मे उन्होंने लोगो से सगठित होने, विदेशी वस्त्र का त्याग करने और चर्खा चलाने की अपील की।

२६ फरवरी को गाधी जी लखनऊ पहुँचे और खिलाफत की सभा में भाषण करते हुए कहा कि आप लोग तलवार तो नही खीच सकते किन्तु स्वराज्य प्राप्त

लखनऊ मे

हो जाने पर तलवार खीचने की शक्ति उत्पन्न कर सकते है। उन्होंने लोगो को ब्रिटिश माल का बहिष्कार करने और विदेशी वस्त्र का त्याग करने की सलाह दी।

मई मे वह ८, ६ और १० को इलाहाबाद रहे। ८ मई को सरूप कुमारी नेहरू (बाद की विजयलक्ष्मी पडित) के विवाहोत्सव मे शामिल हुए। १० मई

इलाहाबाद मे

को इलाहाबाद जिला सम्मेलन हुआ। सम्मेलन मे प्रतिनिधियो और किसानो के अलावा कस्तूरबा, लाला लाजपत राय, मौलाना शौकत अली, पण्डित रामभजदत्त चौधरी, मौ० हसरत मोहानी, डा० किचलू, स्वामी श्रद्धानन्द, सर्वश्री पुरुषोत्तम दास टण्डन, सरोजिनी नायडू और जवाहरलाल उपस्थित थे। इस सम्मेलन मे नागरिको की ओर से गाधीजी को एक मानपत्र दिया गया। इसका उत्तर देते हुए उन्होंने कहा—"अपने अभिनन्दन पत्र मे आप लोगो ने कहा है कि इलाहाबाद का एक नाम और है—फकीराबाद। मेरी हार्दिक इच्छा है यह नगर पूरी तरह से उस नाम के योग्य हो। इस आन्दोलन को सफल बनाने के लिए हमे फकीरो की ही जरूरत है, और मैं आशा करता हूँ कि इसमे आपका नगर अगुआई करेगा।" इसके बाद उन्होंने हर हालत मे अहिंसा तथा हिन्दू-मुस्लिम ऐक्य बनाये रखने पर जोर दिया।

अगस्त में पुन दौरा

५ से १० अगस्त (२१) तक गाधी जी ने फिर सयुक्तप्रान्त के कई भागो का दौरा किया। ५ अगस्त को अलीगढ जाकर वहाँ के प्रमुख व्यक्तियो से भेंट तथा विचार-विमर्श किया। वहाँ से ६ अगस्त को मुरादाबाद पहुँचे और उसी दिन वहाँ की तीन सभाओ मे भाषण किया—सार्वजनिक सभा मे, महिला-मण्डल मे तथा महाराजा थियेटर मे आयोजित एक सभा मे। इन सभी सभाओ मे उन्होंने लोगो को अहिंसात्मक असहयोग का रहस्य समझाया और स्वदेशी अपनाने तथा विदेशी वस्त्र त्यागने पर जोर दिया।

मुरादाबाद से ७ अगस्त को गाधीजी लखनऊ पहुँचे और अमीनुद्दौला पार्क

की एक महती सार्वजनिक सभा में भाषण किया। इस सभा में लगभग एक लाख आदमी उपस्थित थे। अपने भाषण में गांधीजी ने अहिंसात्मक असहयोग तथा हिन्दू-मुस्लिम ऐक्य पर बहुत बल दिया। कहा—"यह सूबा दमन नीति में और सूबों से आगे है। फिर भी मैं आप से शान्त रहने के लिए कहूँगा। यदि आप लोग पचास हजार ऐसे कार्यकर्त्ताओं की एक फौज तैयार कर लें जो स्वतन्त्रता की रक्षा का फाटक बनने को तैयार हो तो मैं आशा करता हूँ कि संसार की कोई फौज उसे हरा न सकेगी।" लखनऊ से ही ८ अगस्त को उन्होंने काठियावाड़ के राजा-महाराजाओं के नाम एक अपील निकाली जिसमें उन्हें सादा जीवन बिताने, चर्खे का प्रचार करने, शराब की दुकानें बन्द करने और जनता की गरीबी पर ध्यान देने को कहा।

लखनऊ में

९ अगस्त को वह कानपुर पहुँचे। पहिले महिलाओं की सभा में उनसे स्वदेशी अपनाने तथा विदेशी वस्त्र त्यागने की अपील की। वहाँ से वह मारवाड़ी विद्यालय में आयोजित वस्त्र-व्यापारियों की सभा में गये और उन्हें विदेशी वस्त्र-बहिष्कार की आवश्यकता समझाई। सार्वजनिक सभा में कानपुर के नागरिकों-द्वारा दिये गये अभिनन्दन-पत्र के उत्तर में उन्होंने हिन्दू-मुस्लिम ऐक्य की परम आवश्यकता पर बल दिया और कहा—"शान्ति और अहिंसा की बड़ी आवश्यकता है। हमें अपना क्रोध जीतना चाहिए।...स्वदेशी के बिना स्वराज्य नही मिल सकता। महिलाओं का धर्म है कि वे खादी ही पहिनें। हमें मरना सीखना है। यदि गोली चले तो उसे अपनी छाती पर रोकना चाहिए, न कि पीठ देनी चाहिए।"

कानपुर में

१० अगस्त को वह इलाहाबाद पहुँचे। पहिले उन्होंने महिलाओं की सभा मे स्वदेशी पर भाषण दिया और उनसे विदेशी वस्त्र छोड़ने, चर्खा चलाने और खादी पहिनने के लिए कहा। शाम को पं० मोतीलाल नेहरू की अध्यक्षता में स्वराज्य-सभा के मैदान में सभा हुई। दस हजार से ज्यादा लोग उपस्थित थे। गांधी जी ने अपने भाषण में कहा—"आपको जेल और मौत का डर छोड देना चाहिए, वल्कि अनुभव करना चाहिए कि निर्दोष व्यक्ति की प्रत्येक जेल-यात्रा और मृत्यु स्वराज्य को अधिकाधिक निकट ले आती है।" यहाँ उन्होने विदेशी वस्त्रों की ढेर में आग लगाते हुए सबसे स्वदेशी और खादी अपनाने तथा विदेशी वस्त्र त्यागने की अपील की।

इलाहाबाद में

घोर दमन के युग में

१६२१ के अन्त तक सरकार वेपर्द हो गई। वह घोर दमन पर आ गई। नेता गिरफ्तार कर लिये गये। सभाओ पर रोक लगा दी गई। हर तरह के सार्वजनिक विरोध पर प्रतिवन्ध लगा दिया गया। इस तीव्र दमन के कारण उत्पन्न आवेश मे जनता का एक भाग यह भूल गया कि इस आन्दोलन मे अहिंसा एक केन्द्रीय सिद्धान्त है और घोर उत्तेजना के वीच भी उसे छोडना नही है। सयुक्त-प्रान्त मे सरकार का दमन पाशविक सीमा तक पहुँच गया था। गोरखपुर ज़िले के चौरीचौरा स्थान पर पुलिस की ज्यादतियो से उत्तेजित होकर एक क्रुद्ध भीड ने ४ फरवरी १६२२ को थाना घेर लिया, फिर उसमे आग लगा दी। इस काण्ड मे २१ सिपाही तथा चौकीदार मारे गये। इस घटना से गाधीजी को मार्मिक क्लेश हुआ और उन्होने इसे ईश्वर की ओर से चेतावनी समझा। १२ फरवरी को उन्होने प्रायश्चित्तस्वरूप पाँच दिनो के उपवास का आरम्भ किया और उनके आग्रह पर काग्रेस कार्य-समिति ने सविनय अवज्ञा आन्दोलन को स्थगित कर दिया। २५ फरवरी को भारतीय काग्रेस कमेटी ने भी इसे स्वीकार कर लिया।

१० मार्च को सरकार ने गाधीजी को गिरफ्तार कर लिया। १८ मार्च को उन्हें ६ साल की कैद की सजा दी गई। दमन जारी रहा और अन्त मे उसकी प्रतिक्रिया-स्वरूप भारतीय काग्रेस कमेटी ने अपनी कलकत्ता की वैठक मे ११ नवम्बर को सविनय अवज्ञा का प्रस्ताव पास कर दिया।

गाधीजी यरवदा जेल मे रक्खे गये थे। २१ अप्रैल १९२३ को उन्हें पेट में ज़ोरो का दर्द हुआ। ५ और १५ मई को कर्नल मैडक ने उनकी परीक्षा की। २ जुलाई की रात वडे कष्ट से वीती, इलाज से दर्द कम हो गया किन्तु सिलसिला वना रहा। ८ जनवरी १६२४ को उन्हें फिर जोरो का पेटदर्द हुआ। १२ जनवरी को सैसून अस्पताल (पूना) मे कर्नल मैडक ने उनके अपेण्डिक्स (उपान्त्र-शोथ) का आपरेशन किया। ४ फरवरी को उन्हे रिहा कर दिया गया किन्तु वह अस्पताल में ही रहे। उनके सक्रिय नेतृत्व के अभाव मे आन्दोलन शिथिल पड गया। हिन्दू-मुसलमानो के परस्पर सम्वन्ध मे भी गिरावट आ गई तथा काग्रेस मे भी मत-भेद के चिह्न दिखाई पडे जिसके फलस्वरूप आगे जाकर परिवर्त्तनवादी तथा अपरिवर्त्तनवादी दो दल हो गये। गाधी जी ने मोतीलाल जी के स्वराज्यदल के हाथ काग्रेस की वागडोर सौंप दी और अपने अनुयायियो से रचनात्मक सेवा-कार्य मे लग जाने को कहा। परन्तु देश की स्थिति विगड़ती ही गई, हिन्दू-मुस्लिम तनाव वढता गया। जगह-जगह दगे होने लगे। १७

सितम्बर १९२४ को दिल्ली में प्रायश्चित्त और प्रार्थना के लिए गांधी जी ने २१ दिनों का उपवास शुरू किया।

जेल, बीमारी तथा व्यस्तता के कारण यद्यपि इन २-३ वर्षों में उन्हें इस प्रान्त में आने का अवसर नहीं मिला किन्तु यहाँ की घटनाओं और कार्यों में उनकी दिलचस्पी बराबर बनी रही और उन पर अपने साप्ताहिक पत्रों—यंग इण्डिया, नवजीवन, हिन्दी नवजीवन—में वह बराबर टिप्पणी करते रहे। उनको इस बात से बड़ी वेदना हुई कि जो संयुक्तप्रान्त भारतीय राष्ट्रीय आन्दोलन में इतना आगे था, वही चौरीचौरा हत्याकाण्ड के कारण समस्त भारत की प्रगति और आन्दोलन में मुख्य अवरोध बन गया।

१९२५ में

स्वस्थ होने पर उन्होंने देश में भ्रमण का कार्य फिर शुरू किया। बंगाल और बिहार का दौरा करते हुए १६ अक्तूबर को वह संयुक्तप्रान्त आये। उसी दिन बलिया की जिला परिषद में उनका भाषण हुआ। बड़ी भीड़ थी। कई संस्थाओं की ओर से उन्हें मानपत्र दिये गये। गांधीजी ने इन मानपत्रों के लिए लोगों को धन्यवाद दिया और कहा—"मैं १९२१ में ही बलिया आना चाहता था पर न आ सका। अब ४ साल बाद आप लोगों के बीच आकर बहुत खुश हूँ। समयाभाव न होता तो मैं आप लोगों के साथ अधिक समय तक रहता। एक बात का दुःख मुझे जरूर है। बलिया के निवासियों की शक्ति में तो मुझे पूरा विश्वास है किन्तु कार्यकर्त्ताओं की संगठन-क्षमता से ही शक्ति को नियन्त्रण में रक्खा जा सकता है। यहाँ जो रचनात्मक काम हुआ है उसके लिए मैं बधाई देता हूँ। मुझे यह जानकर खुशी हुई कि यहाँ हिन्दू मुसलमान मिल-जुल कर रह रहे हैं।" भारत की गरीबी का उल्लेख करते हुए उन्होंने लोगों से खादी पहिनने और चर्खा अपनाने की अपील की।

बलिया में

१७ अक्तूबर को बलिया से लखनऊ जाना था। बनारस में गाड़ी बदलनी थी। इसमें ५ घण्टे मिलते थे। इस अवधि का लाभ उठाकर बा० भगवानदास जी ने काशी विद्यापीठ के विद्यार्थियों की एक सभा कर ली। छात्रों को सम्बोधित करते हुए गांधीजी ने कहा—"मेरे निकट देश को दरिद्रता से मुक्ति दिलानेवाली चर्खे को छोड़कर दूसरी चीज़ नहीं है।...मैं देहात का अर्थशास्त्र जानता हूँ, इसलिए चर्खे का दीवाना हूँ। चौबीस घण्टों में भले ही आधा घण्टा आप चर्खा कातें परन्तु अनिवार्य रूप से कातें।" इसके बाद गांधीजी म्युनिस्पल

काशी विद्यापीठ में

मिडिल स्कूल कवीरचौरा मे कताई-वुनाई का जो काम हो रहा था, उसे देखने गये और वडी पियरी मुहल्ले मे स्व० रामदास जी गौड के घर जाकर श्रीराम की मूर्ति का दर्शन भी किया।

उसी दिन (१७ अक्तूवर) को लखनऊ पहुँचे। वहाँ केवल तीन ही घण्टे ठहरे किन्तु इस अल्प समय मे ही उन्होंने नगरपालिका का अभिनन्दनपत्र स्वीकार किया और सार्वजनिक सभा मे भाषण भी किया। नगरपालिका की सभा शाम को ५ वजे हुई थी और उसमे मोतीलाल जी तथा जवाहरलाल जी उपस्थित थे। यह मान-पत्र अरवी-फारसी-वहुल उर्दू मे लिखा गया था और उसमे से जान-वूझ कर एक-एक सस्कृत शब्द निकाल दिया गया था। इस पर गाधीजी ने राष्ट्र-भाषा के रूप पर बोलते हुए कहा—"वह लखनवी उर्दू या सस्कृतनिष्ठ हिन्दी नही हो सकती, हिन्दुस्तानी ही हो सकती है।" फिर कहा—"आप यहाँ की सडक भी वैसी ही अच्छी वना दें जैसी आपकी जवान है। .यह शर्म की वात है कि यहाँ के हिन्दू-मुसलमानों मे अनवन है। इस समय सारे मुल्क की हवा खराव है। हिन्दू मुसलमानो को आपस मे लडना हो तो लड लें किन्तु अजाम क्या होगा? दोनो को यही रहना है।...आखिर दोनो को मिलना होगा।.. "

लखनऊ मे

सार्वजनिक सभा लखनऊ के प्रसिद्ध वकील श्री हरकरणनाथ मिश्र की अध्यक्षता मे अमीनुद्दौला पार्क मे हुई जिसमे गाधीजी ने कहा—"मुझे वहुत अफसोस है कि लखनऊ, जिसके वारे मे मेरा ख्याल वहुत अच्छा था, आज साम्प्रदायिक झगडो का अखाडा वन गया है। . अगर आप समझते हैं कि उसका उपाय तलवार ही है तो उसी को आजमाकर देख लीजिए. .पर मेरा निवेदन है कि अपने मतभेद दूर करके यथासम्भव शीघ्र एकता प्राप्त कर लीजिए। हाँ, वह एकता असली हो, नकली नहीं...।" अन्त मे उन्होंने खादी पहिनने और चर्खा अपनाने की अपील करते हुए कहा. ."खादी का मतलव है प्रत्येक सात आने मे से पाँच आने गरीवो को मिलना, और मिल के कपडे का मतलव है हर पांच आने मे से एक पैसा गरीव को मिलना।" अस्पृश्यता के विषय मे कहा—"यह हिन्दू धर्म का भाग नही। यह अधार्मिक और ईश्वर के विरुद्ध है।"

उसी दिन (१७ अक्तूवर) रात दस वजे मोटर से सीतापुर पहुँचे। वहाँ उन्हे हिन्दू सभा और वैद्य सभा के मानपत्र देने के लिए लेजाया गया। हिन्दू सभा के मानपत्र को ग्रहण करते हुए उन्होंने कहा—"कुछ लोगो का विचार है कि मैं अहिंसा के नाम पर कायरता का प्रचार कर रहा हूँ। यह विल्कुल गलत

सीतापुर में

है।...सच्ची अहिंसा के लिए सच्ची बहादुरी जरूरी है। हिन्दू-संगठन के लिए चरित्र-निर्माण सबसे ज्यादा आवश्यक है। जबतक यह नहीं होता, जबतक प्रत्येक हिन्दू सत्य और सच्चरित्रता पर आरूढ़ नही होता तबतक सच्चा संगठन असम्भव है। उस हालत में हिन्दू धर्म कही का न रह जायगा।" वैद्य सभा के मानपत्र के उत्तर में कहा—"वैद्यों का आत्मसन्तोषी रुख मुझे पसन्द नही।... यह सोचना गलत है कि उन्हें पश्चिम से कुछ नहीं सीखना है।...उन्हें जागरूक और क्रियाशील रहना चाहिए।" उसी दिन उनका नगरपालिका की ओर से अभिनन्दन किया गया। इस अवसर पर उन्होंने कहा था—"सेवा और आत्म-त्याग की सच्ची भावना के बिना नगरपालिका में प्रवेश करना बेकार है।" १८ अक्तूबर को श्रीरामजीलाल शर्मा की अध्यक्षता में प्रान्तीय हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन की ओर से गांधीजी का अभिनन्दन किया गया। उत्तर में गांधीजी ने कहा था—"हिन्दी ही भारत की राष्ट्रभाषा हो सकती है।" इसी दिन (१८ अक्तूबर को) सीतापुर के लालबाग में मौ० शौकतअली की अध्यक्षता में संयुक्त प्रान्तीय राजनीतिक सम्मेलन हुआ। इसमें मौ० मुहम्मद अली, पं० मोतीलाल, पं० जवाहर-लाल और डा० सय्यद महमूद आदि उपस्थित थे। अनुरोध किये जाने पर सम्मेलन को सम्बोधित करते हुए गांधीजी ने कहा—"...अगर भारत का हर आदमी चर्खे को अपना ले तो कोई भी भूखों न मरे। जनता के सहयोग और सहायता के बिना स्वराज्य सम्भव नहीं है। यह सहयोग और सहायता ग्राम-संगठन के बिना नहीं मिल सकती और इस संगठन का एक मात्र उपाय चर्खा है। मैंने चर्खा-संघ की स्थापना लोगों को संगठित करने के लिए ही की है, इसका राजनीति से कोई सम्बन्ध नही है।" उसी दिन वहाँ एक अस्पृश्यता-विरोधी सम्मेलन राजा साहब महेवा की अध्यक्षता में हुआ। उसमें बोलते हुए गांधीजी ने कहा—"... मेरा निश्चित विश्वास है कि हिन्दू धर्म में अस्पृश्यता के लिए कोई स्थान नहीं है। किसी भी मानव के प्रति अस्पृश्यता का व्यवहार करना पाप है।"

कानपुर में

कांग्रेस में शामिल होने के लिए गांधीजी २३ दिसम्बर (१९२५) को कान-पुर पहुँच गये थे। २४ दिसम्बर को उन्होंने कांग्रेस प्रदर्शिनी का उद्घाटन किया। उन्होंने कहा—"मैं इसे एक पुण्यकार्य मानता हूँ।...मैं हिन्दू-मुस्लिम ऐक्य का पक्षपाती जरूर हूँ किन्तु उसमें यदि खादी को स्थान नही दिया गया तो मैं उसे भी स्वीकार न करूँगा।...मैं आपको विश्वास दिलाता हूँ कि यदि आप सब विदेशी और देशी मिलों के कपड़ों का पूरा-पूरा बहिष्कार कर दें तो एक वर्ष से भी कम समय मे हमें स्वराज्य मिल सकता है।" २४ दिसम्बर को

काग्रेस अधिवेशन मे उन्होंने सदस्यो के आदतन खादीधारी होने का प्रस्ताव उपस्थित किया और कहा—"यदि आप लोगो को सचमुच ही विदेशी कपडे का वहिष्कार करना है तो मिलो के कपडे का विचार त्याग दें। मैं मिलो के प्रान्त का ही निवासी हूँ और मिल-मालिको के साथ मेरा मीठा सम्बन्ध भी है किन्तु मैं जानता हूँ कि देश के सकटकाल मे उन्होंने देश का साथ कभी नही दिया। . अँग्रेजो के साथ लडने मे हमे अपना खून पानी करना होगा। हाँ, पानी। स्वराज्य को प्राप्त करना कोई खेल नही है। उसे पाने के लिए भारतीयो को अपनी गर्दन कटाने के लिए तैयार रहना चाहिए। मैं आपको सचेत करता हूँ कि यदि आपने खादी को त्याग दिया तो जनता भी आपका परित्याग कर देगी।" २५ दिसम्बर के काग्रेस अधिवेशन मे उन्होंने दक्षिण अफ्रीका के भारतीयो से सम्बन्धित प्रस्ताव उपस्थित किया तथा उसके विषय मे एक मार्मिक भाषण भी दिया। प्रस्ताव हर्षध्वनि के बीच पास हुआ।

गाधीजी २८ दिसम्बर तक कानपुर रहे। २८ को उन्होंने एसोशिएटेड प्रेस आफ इण्डिया को एक भेट देते हुए कहा—"मेरा काम तो यही है कि मैं शान्त रहूँ और जो रचनात्मक कार्य कर सकूँ, करता रहूँ, शेष अर्थात् काग्रेस के प्रस्तावो को कार्यान्वित करने की जिम्मेदारी पूर्णरूप से स्वराजियो पर छोड दूँ।"

३ जनवरी १९२६ को गाधीजी ने सार्वजनिक जीवन से साल भर के लिए सन्यास लेने और साबरमती आश्रम तक ही अपना कार्य सीमित रखने की घोषणा की।

१९२७

स्वभावत १९२६ मे गाधीजी मुख्यत आश्रम मे ही रहे। दिसम्बर के अन्त मे वह गुवाहाटी (आसाम) काग्रेस गये। इस काग्रेस मे उनके अनुयायियो ने खादी-प्रदर्शिनी का निर्माण किया था जिसे देखकर मालवीय जी महाराज वडे प्रभावित हुए और गाधीजी से अनुरोध किया कि जब कभी बनारस आवें, मेरे विश्वविद्यालय के छात्रो को खादी का सन्देश सुनाने की कृपा करें।

काशी मे

७ या ८ जनवरी १९२७ को गाधी जी कृपालानी जी द्वारा स्थापित गाधी-आश्रम के वार्षिकोत्सव मे शामिल होने के लिए काशी आये और आश्रम का कार्य देखकर सन्तोष व्यक्त किया। इस अवसर पर मालवीय जी के अनुरोध से उन्होंने विश्वविद्यालय के छात्रो को सम्बोधित करते हुए कहा—" तुम जो शिक्षा पाते हो उसका खर्च चुकाते हैं भुक्खड गाँववाले। मैं तुमसे उन गरीबो का ज़रा-सा

किया। ४ मार्च को कलकत्ता में विदेशी वस्त्रों के अम्बार में आग लगाकर होली जलाई। ८ मार्च को कुछ दिनों के लिए वर्मा गये। लौटने पर ६ अप्रैल से २१ मई तक आन्ध्र का दौरा किया।

उत्तरा खण्ड की पहाड़ी यात्रा

अव भी गांधीजी का स्वास्थ्य वहुत अच्छा न था। जवाहरलालजी ने इसीलिए संयुक्तप्रान्त के उत्तराखण्ड में उनके लिए पहाड़ी यात्रा और विश्राम का सम्मिलित कार्यक्रम वनाया। गांवीजी ने उसे स्वीकार किया और ११ जून (१९२९) को अहमदावाद से चलकर १३ की सुवह वरेली पहुँचे। वहाँ नगर-पालिका-द्वारा मानपत्र दिया गया तथा सार्वजनिक सभा हुई जिसमें उन्होने हिन्दू-मुस्लिम ऐक्य और खादी का सन्देश देते हुए कहा कि "देश के जीवन के लिए स्वराज्य आवश्यक है और निवासियो के हर वर्ग के वीच एकता इस स्वराज्य का मौलिक आधार है।"

हल्द्वानी और ताकुला

१४ की सुवह हल्द्वानी पहुँचे। वहाँ एक छोटी सभा हुई। वहाँ से काठ-गोदाम गये। वहाँ भी सभा हुई। नैनीताल जाते हुए, ताकुला में रुके। कहते हैं, ताकुला में वह स्व० गोविन्द लाल शाह के मोती-भवन में ठहरे। फिर उसी दिन नैनीताल में २४ की शाम को सार्वजनिक सभा हुई जिसमें पर्वतीय अंचलो की गरीवी, खादी-प्रचार और आत्मावलम्वन पर वोले। १५ की सुवह वहाँ महिलाओं की भी एक सभा हुई जिसमें उनसे चर्खा और स्वदेशी अपनाने की अपील की।

भवाली और ताड़ीखेत

१५ को भवाली आये। वह शाम को एक सार्वजनिक सभा हुई। शिल्प-कारों (अन्त्यजों) की ओर से भी उन्हे मानपत्र दिया गया। इसमें आशा की गई थी कि गांवी जी के आगमन से उनके दुःखों का अन्त हो जायगा। गांधीजी ने कहा—"यह शक्ति मेरे नही, केवल ईश्वर के पास है और ईश्वर उन्ही की मदद करता है जो स्वयं अपनी मदद करने के लिए तैयार रहते हैं।" १६ को वह गरम पानी होते हुए ताड़ीखेत पहुँचे। यह रानीखेत के पास ही एक सुन्दर स्थान है जहाँ प्रेम-विद्यालय नामक राष्ट्रीय शिक्षणशाला का वार्पिकोत्सव था। गाधी-जी का दर्शन करने और उनका सन्देश सुनने के लिए दूर-दूर से लोग यहाँ एकत्र हुए थे। इस अवसर पर एक अच्छी खादी-प्रदर्शनी भी की गई थी जिसमें विद्या-लय के विद्यार्थियों-द्वारा वनाये गये सुन्दर ऊनी गलीचे, कम्वल और गर्म कपड़े

विशेप रूप से रक्खे गये थे। जिस मकान मे गाधीजी ठहराये गये थे उसका सारा लकडी का काम विद्यालय के छात्रो ने अपने हाथ मे किया था। गाधीजी ने अपने भाषण मे आत्मशुद्धि तथा देश के लिए मरने-जीने की तैयारी जीवन मे करने का सन्देश दिया। प्रेम-विद्यालय के कार्यकर्ताओ से कहा कि कोई भी सस्था कभी धनाभाव मे नही मरती। आप लोग चर्खे के आन्तरिक महत्व पर ध्यान दें और उसमे सन्निहित प्राणशक्ति तथा ऊर्जा का अनुभव करें।

ताडीखेत मे १६-१७ दो दिन रहने के बाद १८ को अलमोडा के लिए रवाना हुए और उसी दिन वहाँ पहुँच गये। रास्ते मे रानीखेत मे भी स्त्रियो और पुरुषो की एक-एक सभा हुई। अलमोडा मे उन्हे नगरपालिका की ओर से जो मानपत्र दिया गया था उसके उत्तर मे उन्होंने वहाँ के पाठ्यक्रम मे कताई-बुनाई का प्रवेश करके शिक्षा को स्वावलम्बी बनाने पर जोर दिया। यहाँ से लौटते समय चालक की जल्दबाजी के कारण पद्मसिह नाम का एक भाई उनकी गाडी से दब गया। बाद मे वह अस्पताल मे जाकर मर गया। इस घटना का गाधीजी के मन पर बडा गहरा प्रभाव पडा। १९ को स्त्रियो की तथा २० को सार्वजनिक सभा हुई। एक सभा ईसाइयो की भी उनके गिर्जा मे हुई। गाधीजी ने इन सब सभाओ मे भारत की गरीबी, बेकारी, स्वदेशी एव चर्खे तथा सर्वजाति ऐक्य की चर्चा की और देश-हित के लिए लोगो का त्याग के लिए आवाहन किया।

अलमोडा

२१ जून को अलमोडा से चलकर गाधीजी कौसानी पहुँचे। कौसानी मे वह एक डाक-बँगले मे ठहराये गये। यही स्थान उनके विश्राम के लिए चुना गया था। २२ को वह बागेश्वर पहुँचे जो कौसानी से तेईस मील दूर पहाड की तलहटी मे सरयू नदी के किनारे एक कस्बा है। बडा बीहड मार्ग था और गाधीजी को इच्छा के विरुद्ध डोली मे बैठकर जाना पडा था। यही वह स्थान है जहाँ बेगार और कुलीपन की अमानुषिक प्रथा के विरुद्ध लडाई लडी गई थी। वहा पहाडी लोगो की एक बडी सभा हुई थी। वहाँ पहाडी क्षेत्र के लगभग ४० कार्यकर्ताओ से गाधीजी ने विचार-विमर्ष भी किया। २३ जून को वह कौसानी लौट आये। और वहाँ की अपूर्व प्राकृतिक शोभा के बीच लगभग दो सप्ताह तक रहे। यहाँ हिमाद्रि के सौन्दर्य पर वह मुग्ध हो गये। उन्होंने स्वय ही लिखा है कि यहाँ आकर ही मैं समझ सका कि हिमालय क्या है। यहाँ उन्हे वह मानसिक शान्ति मिली जिसकी उन्हे आवश्यकता थी। यहाँ उन्होने गीता की "अनासक्ति योग" नामक अपनी टीका पूर्ण की और उसकी भूमिका लिखी।

बागेश्वर और कौसानी

बदला चुकाने को कहता हूँ। उनके लिए थोड़ा यज्ञ करो। गीता का वचन है कि जो यज्ञ किये बिना खाता है वह अपना भोजन चुराता है।...हमारे लिए इस युग का यज्ञ है—चर्खा...तुम कल कृपालानी जी के खादी-भण्डार पर धावा करो और उसमें एक गज खद्दर भी बाकी न छोड़ो और आज अपनी जेबें खाली कर दो।" अन्त में कहा—"पच्छिम से आने वाली वायु से बचो। वह अपवित्रता की वायु है।...अगर तुम समय रहते न चेते तो अनीति की बहिया, जिसका बल दिन-पर-दिन बढ़ता जा रहा है, तुम्हे बहा ले जायगी। मैं अपनी सारी शक्ति से तुम्हें पुकार-पुकार कर कहता हूँ कि सँभलो, चेतो, और जलने के पहिले ही भाग चलो।"

९ जनवरी को श्रद्धानन्द-दिवस था। उस दिन गांधीजी, मालवीयजी महाराज के साथ पैदल जुलूस बनाकर दशाश्वमेध घाट गये। और वहाँ स्नान करने के बाद स्वर्गीय आत्मा के लिए उन्होंने जलाञ्जलि दी। फिर काशी विश्वनाथ मन्दिर में जाकर प्रार्थना की। मन्दिर के बाहर कुछ गज पर यह जुलूस एक सभा में बदल गया जिसमें महिम्नस्तोत्र का पाठ हुआ; देवदास गांधी ने 'रामधुन लागी' गवाया और गांधी जी ने भाषण किया तथा स्वामी जी के गुणों एवं उनके जीवन से प्राप्त शिक्षा की चर्चा की। १० जनवरी को वह खादी-यात्रा पर विहार चले गये।

गुरुकुल कांगड़ी में

मार्च (१९२७) के मध्य में गांधीजी गुरुकुल काँगड़ी के महोत्सव मे शामिल होने के लिए हरद्वार आये। उन दिनों हरद्वार स्टेशन पर उतरकर कनखल होते हुए गुरुकुल जाना पड़ता था। जिस दिन गांधीजी पहुँचे गुरुकुल महोत्सव का तीसरा दिन था। राजेन्द्र बाबू अध्यक्ष थे। उनके भाषण के बाद साधु टी० एल० वास्वानी उठे। उन्होंने सभी ओर बैठे हुए श्रोताओं को प्रणाम किया और बैठ गये। इसका भी बड़ा प्रभाव पड़ा। इसके बाद मालवीयजी महाराज ने आशीर्वचन कहे। जब गांधीजी बोलने उठे तो उनका गला भर आया और कुछ क्षणों के लिए तो वाणी बिल्कुल खो गई। गर्म पानी पीने पर आवाज़ कुछ सुधरी। तब बोले—"सच कहे तो स्वामी जी का देहान्त[1] हुआ ही नही है। देहान्त तो तब होगा जब हम उनकी सच्ची देह को मिटाने की कोशिश करेंगे।...जबतक यह गुरुकुल कायम है तबतक स्वामी जी जीते ही हैं।...परन्तु गुरुकुल को चिरस्थायी रखने के लिए उस वीरता, ब्रह्मचर्य और क्षमा की आवश्यकता है जो हमने उनके जीवन में देखी। वीरता का लक्षण क्षमा और ब्रह्मचर्य का वीर्य-

---

१. स्वामी श्रद्धानन्द की दिसम्बर, १९२६ में, जब वह दिल्ली में बीमार पड़े थे, एक मुसलमान ने हत्या कर दी थी।

सयम है। इनकी रक्षा से ही तुम देश और धर्म की रक्षा कर सकोगे। . तुम्हे पग-पग पर रुपये मिल जायगे किन्तु ब्रह्मचर्य का, नीति का पाया यहाँ पर न होगा तो तुम्हारा गुरुकुल मिट्टी मे मिल जायगा। इस भूमि के तो आत्मा नहीं है। इसकी आत्मा तुम्ही हो। अगर तुम आत्मबल खो दोगे और 'उदर निमित्त कृत बहुवेश' जैसे बन जाओगे तो तुम्हारी सारी शिक्षा बेकार जायगी। . "

१९२९

निरन्तर के दुस्सह कार्य-भार से गाधीजी के स्वास्थ्य ने जवाब दे दिया। कर्नाटक के दौरे के आरम्भ मे ही वह बीमार पड गये। उन्हें अम्बोली और नन्दी-दुर्ग (मैसूर) मे विश्राम के लिए रखा गया। अप्रैल के अन्तिम सप्ताह (१९२७) से जून के मध्य तक वहाँ रहे। फिर उन्हे बगलौर मे रक्खा गया। ३ जुलाई (१९२७) को उन्होंने थोडा-थोडा काम फिर शुरू किया, मैसूर के प्रमुख केन्द्रो का दौरा करते रहे। इसी समय गुजरात भयकर जल-प्लावन से तहस-नहस हो गया। उसके लिए मैसूर से ही अपील की। २४ अगस्त मे तमिलनाड का दौरा शुरू किया। अक्तूबर मे वह ट्रावनकोर (त्रिवांकुर) पहुँचे और मासान्त तक वाइसराय से मिलने दिल्ली चले गये। ८ नवम्बर को वाइसराय ने साइमन कमीशन की नियुक्ति की घोषणा की। १३ नवम्बर को गाधीजी लका-प्रवास पर गये। लगभग तीन सप्ताह वहाँ के विविध स्थानो का भ्रमण कर दिसम्बर (१९२७) के प्रथम सप्ताह मे उन्होंने उडीसा का दौरा शुरू किया। उसके बाद मद्रास के काग्रेस-अधिवेशन मे शामिल हुए। वहाँ से साबरमती आश्रम चले गये। अप्रैल १९२८ मे उनके अन्यतम आत्मीय और शिष्य मगनलाल गाधी का देहावसान हो गया। साबरमती आश्रम का सारा भार उन्ही के कन्धो पर था। उनकी मृत्यु के बाद गाधीजी पर उसकी ज्यादा जिम्मेदारी आ गई। उधर बारडोली सत्याग्रह शुरू हो गया। साइमन कमीशन के आने से भी देश मे बडी उत्तेजना का वातावरण पैदा हुआ। वह जहाँ जाता वही विरोधी प्रदर्शन होते और उसे काला झण्डा दिखाया जाता। लाहौर के एक ऐसे ही प्रदर्शन मे लाला लाजपतराय के सीने पर लाठी की गहरी चोट लगी जिसके फलस्वरूप १७ नवम्बर (१९२८) को उनका देहान्त हो गया। १९२८ के अन्त मे काग्रेस का जो अधिवेशन हुआ उसमे गाधीजी ने विदेशी वस्त्र-बहिष्कार, खादी-प्रचार तथा मद्य-निषेध का कार्यक्रम पास कराया। उन्हे १९२९ मे यूरोप जाना था किन्तु इन रचनात्मक कार्यो को बढाने की नैतिक जिम्मेदारी आ जाने से उन्होंने वह यात्रा स्थगित कर दी और फिर खादी के लिए दौरा शुरू किया। फरवरी (१९२९) मे सिन्ध का दौरा

किया। ४ मार्च को कलकत्ता में विदेशी वस्त्रों के अम्बार में आग लगाकर होली जलाई। ८ मार्च को कुछ दिनों के लिए बर्मा गये। लौटने पर ६ अप्रैल से २१ मई तक आन्ध्र का दौरा किया।

उत्तरा खण्ड की पहाड़ी यात्रा

अब भी गांधीजी का स्वास्थ्य बहुत अच्छा न था। जवाहरलालजी ने इसीलिए संयुक्तप्रान्त के उत्तराखण्ड में उनके लिए पहाड़ी यात्रा और विश्राम का सम्मिलित कार्यक्रम बनाया। गांधीजी ने उसे स्वीकार किया और ११ जून (१९२९) को अहमदाबाद से चलकर १३ की सुबह बरेली पहुँचे। वहाँ नगर-पालिका-द्वारा मानपत्र दिया गया तथा सार्वजनिक सभा हुई जिसमे उन्होने हिन्दू-मुस्लिम ऐक्य और खादी का सन्देश देते हुए कहा कि "देश के जीवन के लिए स्वराज्य आवश्यक है और निवासियों के हर वर्ग के बीच एकता इस स्वराज्य का मौलिक आधार है।"

हल्द्वानी और ताकुला

१४ की सुबह हल्द्वानी पहुँचे। वहाँ एक छोटी सभा हुई। वहाँ से काठ-गोदाम गये। वहाँ भी सभा हुई। नैनीताल जाते हुए, ताकुला में रुके। कहते है, ताकुला में वह स्व० गोविन्द लाल शाह के मोती-भवन में ठहरे। फिर उसी दिन नैनीताल में २४ की शाम को सार्वजनिक सभा हुई जिसमें पर्वतीय अंचलों की गरीबी, खादी-प्रचार और आत्मावलम्बन पर बोले। १५ की सुबह वहाँ महिलाओ की भी एक सभा हुई जिसमें उनसे चर्खा और स्वदेशी अपनाने की अपील की।

भवाली और ताड़ीखेत

१५ को भवाली आये। वह शाम को एक सार्वजनिक सभा हुई। शिल्प-कारों (अन्त्यजों) की ओर से भी उन्हे मानपत्र दिया गया। इसमें आशा की गई थी कि गांधी जी के आगमन से उनके दुःखों का अन्त हो जायगा। गांधीजी ने कहा—"यह शक्ति मेरे नही, केवल ईश्वर के पास है और ईश्वर उन्ही की मदद करता है जो स्वयं अपनी मदद करने के लिए तैयार रहते है।" १६ को वह गरम पानी होते हुए ताड़ीखेत पहुँचे। यह रानीखेत के पास ही एक सुन्दर स्थान है जहाँ प्रेम-विद्यालय नामक राष्ट्रीय शिक्षणशाला का वार्षिकोत्सव था। गांधी-जी का दर्शन करने और उनका सन्देश सुनने के लिए दूर-दूर से लोग यहाँ एकत्र हुए थे। इस अवसर पर एक अच्छी खादी-प्रदर्शनी भी की गई थी जिसमे विद्या-लय के विद्यार्थियों-द्वारा बनाये गये सुन्दर ऊनी गलीचे, कम्बल और गर्म कपड़े

विशेष रूप से रक्खे गये थे। जिस मकान मे गाधीजी ठहराये गये थे उसका सारा लकडी का काम विद्यालय के छात्रो ने अपने हाथ से किया था। गाधीजी ने अपने भाषण मे आत्मशुद्धि तथा देश के लिए मरने-जीने की तैयारी जीवन मे करने का सन्देश दिया। प्रेम-विद्यालय के कार्यकर्ताओ से कहा कि कोई भी सस्था कभी धनाभाव से नही मरती। आप लोग चर्खे के आन्तरिक महत्व पर ध्यान दें और उसमे सन्निहित प्राणशक्ति तथा ऊर्जा का अनुभव करें।

ताडीखेत मे १६-१७ दो दिन रहने के बाद १८ को अल्मोडा के लिए रवाना हुए और उसी दिन वहाँ पहुँच गये। रास्ते मे रानीखेत मे भी स्त्रियो और पुरुषो की एक-एक सभा हुई। अलमोडा मे उन्हे नगरपालिका की ओर से जो मानपत्र दिया गया था उसके उत्तर मे उन्होंने वहाँ के पाठ्यक्रम मे कताई-बुनाई का प्रवेश करके शिक्षा को स्वावलम्बी बनाने पर जोर दिया। यहाँ से लौटते समय चालक की जल्दबाजी के कारण पद्मसिह नाम का एक भाई उनकी गाडी से दब गया। बाद मे वह अस्पताल मे जाकर मर गया। इस घटना का गाधीजी के मन पर बडा गहरा प्रभाव पडा। १६ को स्त्रियो की तथा २० को सार्वजनिक सभा हुई। एक सभा ईसाइयो की भी उनके गिर्जा मे हुई। गाधीजी ने इन सब सभाओ मे भारत की गरीबी, बेकारी, स्वदेशी एव चर्खे तथा सर्वजाति ऐक्य की चर्चा की और देश-हित के लिए लोगो का त्याग के लिए आवाहन किया।

अलमोडा

२१ जून को अलमोडा से चलकर गाधीजी कौसानी पहुँचे। कौसानी मे वह एक डाक-बँगले मे ठहराये गये। यही स्थान उनके विश्राम के लिए चुना गया था। २२ को वह बागेश्वर पहुँचे जो कौसानी से तेईस मील दूर पहाड की तलहटी मे सरयू नदी के किनारे एक कस्बा है। वहा बीहड मार्ग था और गाधीजी को इच्छा के विरुद्ध डोली मे बैठकर जाना पडा था। यही वह स्थान है जहाँ बेगार और कुलीपन की अमानुषिक प्रथा के विरुद्ध लडाई लडी गई थी। वहा पहाडी लोगो की एक बडी सभा हुई थी। वहाँ पहाडी क्षेत्र के लगभग ४० कार्यकर्ताओ से गाधीजी ने विचार-विमर्ष भी किया। २३ जून को वह कौसानी लौट आये। और वहाँ की अपूर्व प्राकृतिक शोभा के बीच लगभग दो सप्ताह तक रहे। यहाँ हिमाद्रि के सौन्दर्य पर वह मुग्ध हो गये। उन्होने स्वय ही लिखा है कि यहाँ आकर ही मैं समझ सका कि हिमालय क्या है। यहाँ उन्हें वह मानसिक शान्ति मिली जिसकी उन्हे आवश्यकता थी। यहाँ उन्होने गीता की "अनासक्ति योग" नामक अपनी टीका पूर्ण की और उसकी भूमिका लिखी।

बागेश्वर और कौसानी

२ जुलाई को वह कौसानी से रवाना हो गये। लौटते समय शाम को रानीखेत ठहरे। दूसरे दिन (३ जुलाई को) मोटर से रामनगर गये। यह रास्ता बहुत खराब था, और बीच-बीच में वर्षा होने लगती थी। यह पहाड़ के निम्न-भाग में बसी एक मण्डी है। वहाँ पहुँचते ही एक सार्वजनिक सभा हुई। एक सभा स्त्रियों की भी हुई। ४ को सवेरे एक घण्टे की रेलयात्रा के बाद वह काशीपुर पहुँचे। वहाँ जुलूस निकाला गया; किसी तरह भीगते-भागते सार्वजनिक सभा हुई। शाम को स्त्रियों की सभा में खादी एवं स्वदेशी का सन्देश देकर गांधीजी रेल से दिल्ली चले गये। इस यात्रा में उन्हें खादी कार्य के लिए लगभग पचीस हजार की धनराशि प्राप्त हुई।

खादी के लिए दौरा

अर्से से वह संयुक्त प्रान्त में खादी के लिए दौरा करना चाहते थे परन्तु वह टलता ही आ रहा था। अन्त में ११ सितम्बर से २४ नवम्बर १६२६ तक लगभग ढाई मास का लम्बा दौरा उन्होंने किया। यह दौरा ११ सितम्बर को आगरा से शुरू हुआ। उस समय भी उनका स्वास्थ्य बहुत अच्छा न था, इसलिए संयुक्तप्रान्त के कुछ नगरों को प्रमुख केन्द्र बनाकर निकतवर्टी जिलों के कार्यकर्ताओं को वही बुला लिया गया था। इस प्रकार आगरा, कानपुर, बनारस, लखनऊ, गोरखपुर, मसूरी (विश्राम के लिए) तथा इलाहाबाद में कई-कई दिनों के निवास की व्यवस्था की गई थी। कही-कही केन्द्रस्थानों से सन्निकटवर्ती स्थानों में लघु-यात्राएँ करने का प्रबन्ध था।

प्रवास-क्रम

अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटी की पत्रावलियों को देखने पर मालूम होता है कि उनका प्रवास-क्रम निम्न प्रकार से रखा गया था। पर सम्भव है इसमें कुछ परिवर्तन भी हुआ हो:—

स्थान	आगमन की तिथि और समय	प्रस्थान की तिथि एवं समय
आगरा	११ सितम्बर ८ बजे प्रातः	२० सितम्बर ६ बजे प्रातः
मैनपुरी	२० सितम्बर ११-३० दिन	२१ सितम्बर ६ 'बजे प्रातः
फर्रुखाबाद	२१ सितम्बर ११ बजे दिन	२२ सितम्बर ६ बजे प्रातः
कन्नौज	२२ सितम्बर ८ बजे सुबह	२२ सितम्बर ६ बजे सुबह
कानपुर	२२ सितम्बर ११ बजे दिन	२४ सितम्बर ३ बजे दिन

	मौन-दिवस कानपुर।	२३ सितम्बर
बनारस	२५ सितम्बर २ बजे प्रात	२६ सितम्बर ६-१६ शाम
लखनऊ	२७ सितम्बर ६-१५ प्रात	३० सितम्बर ४-१५ प्रात
	मौन दिवस फैजाबाद।	३० सितम्बर
फैजाबाद	३० सितम्बर ८-२२ प्रात	२ अक्टूबर १-२२ प्रात
बनारस	२ अक्तूबर ६-५५ प्रात	२ अक्तूबर १२ बजे दिन
गाज़ीपुर	२ अक्तूबर ३ बजे दिन	३ अक्तूबर १० बजे प्रात
आज़मगढ	३ अक्तूबर १२ बजे दिन	४ अक्तूबर ६ बजे प्रात
गोरखपुर	४ अक्तूबर ६ बजे दिन	८ अक्तूबर ६-३० प्रात
	मौन-दिवस गोरखपुर।	७ अक्तूबर
बस्ती	८ अक्तूबर १०-४० प्रात	९ अक्तू० ८-३० प्रात.
गोंडा	९ अक्तू० १०-४० प्रात०	१० अक्तूबर
बाराबंकी	१० अक्तू० ११-२७ दिन	१० अक्तू० ४-४७ शाम
हरदोई	१० अक्तू० ७-३५ शाम	११ अक्तू० १०-३५ प्राता
शाहजहापुर	११ अक्तू० १२-३० दिन	११ अक्तू० ६-५ शाम
मुरादाबाद	११ अक्तू० ९ बजे रात	१२ अक्तू० ५-३० शाम
धामपुर	१३ अक्तू० ६-३७ प्रात	१३ अक्तू० १-२९ दिन
नगीना	१३ अक्तू० १-४५ दोपहर	१४ अक्तू० १०-३५ प्रातः
	मौन-दिवस १४ अक्तूबर	हरद्वार
हरद्वार	१४ अक्तू० ४-४५ सुबह	१६ अक्तू० ५-२५ प्रात
देहरादून	१६ अक्तू० ७ शाम	१८ अक्तू० ८ बजे सुबह
मसूरी	१८ अक्तू० ११ बजे दिन	२७ अक्तूबर तक विश्राम
मेरठ	२८ अक्तूबर	
अलीगढ	४ नवम्बर	
वृन्दावन	८ नवम्बर	
शाहजहापुर	११ नवम्बर	
कालाकाकर	१४ नवम्बर	
इलाहाबाद	१५, १६, १७, १८ नवम्बर	

११ सितम्बर को गाधी जी आगरा पहुँचे। यहा २० सितम्बर तक उनका केन्द्रस्थान रहा। ११ को एक विराट सार्वजनिक सभा हुई जिसमे उन्होंने असहयोग की शक्ति मे अपने विश्वास की पुनर्घोषणा की। आगरा कालेज तथा सेण्ट जान्स कालेज के विद्यार्थियो की

आगरा में

संयुक्त सभा में उन्होंने आत्मनियन्त्रण तथा चरित्र-निर्माण पर जोर दिया। यहाँ रहते समय वीच-वीच में वह निकटवर्ती गाँवों की दशा देखने के लिए चले जाया करते थे। हल्के कार्यक्रम तथा विश्राम के कारण वह आगरा के आस-पास के उन ऐतिहासिक स्थानों को भी देख सके, जिनको देखने की इच्छा वहुत दिनों से अपने मन में सँजोये हुए थे। फतेहपुर सीकरी में अकवर-निर्मित इवादतखाना का उन पर वड़ा प्रभाव पड़ा। ताज तथा मुगल स्थापत्यकला के अन्य उदाहरणों को देखकर भी वह खुश हुए किन्तु यह भूल न पाये कि इनके निर्माण के पीछे वेगार तथा वलात् किये गये श्रम की कहानी छिपी हुई है।

मैनपुरी

२० सितम्वर को वह मैनपुरी पहुँचे। वहाँ एक सार्वजनिक सभा हुई, उसी में सव संस्थाओं की ओर से अभिनन्दन-पत्र प्रदान किये गये। गांधी जी का समय वचाने के लिए उन्हें पढ़ा हुआ मान लिया गया। जिला कांग्रेस कमेटी के अभिनन्दन पत्र में मैनपुरी की राष्ट्रीय जागृति की दीर्घकालीन परम्परा का, जो १८५७ से आरम्भ हुई थी, उल्लेख किया गया था।

कानपुर के छात्रों में

फर्रुखावाद और कन्नौज में वह २० तथा २१ को रहे। २२ सितम्वर (२६) को वह कानपुर पहुँचे। वहाँ तीन दिन रहे। इन तीन दिनों में वहाँ अनेक सभाएँ हुई। स्त्रियों की सभा में उन्होंने स्वदेशी अपनाने और खादी ग्रहण करने की अपील की; सार्वजनिक सभा में उन्होंने रचनात्मक कार्यों का स्वतन्त्रता तथा राष्ट्रनिर्माण के आन्दोलन में क्या स्थान है, यह समझाया। क्राइस्ट चर्च कालेज में छात्रों की जो सभा हुई, उसमें कहा—"मैं आपको १६३० में जरूरत पड़ने पर हँसते हुए मौत का सामना करते देखना चाहूँगा। किन्तु वह मौत पापी और अपरावी की मौत न हो। ईश्वर केवल उन्ही का वलिदान स्वीकार करता है जो हृदय से पवित्र होते हैं इसलिए मृत्यु में भी देश की सेवा का योग्य अस्त्र वनने के लिए आपको आत्मशुद्धि करनी चाहिए।"

वाराणसी में

२५ को वह वाराणसी पहुँचे। वहाँ भी कई सभाओं में उन्होंने लोगों को खादी का आन्तरिक महत्व और रहस्य समझाया। सार्वजनिक सभा और स्त्रियो की सभा के अतिरिक्त यहाँ भी छात्रो की दो महत्वपूर्ण सभाओं में उन्होंने भाषण किया। विश्वविद्यालय के छात्रों को सम्वोधित करते हुए कहा—"इन भूखे-नंगे कोटि-कोटि जनो के साथ तुम अपने ऐक्य का प्रदर्शन चर्खे के सन्देश का प्रचार

करके आसानी से कर सकते हो। .. जो शिक्षण तुम्हे यहाँ दिया गया है, उसके योग्य सिद्ध हो।" इसी दिन वह काशी विद्यापीठ के पदवीदान समारोह मे कुलपति के रूप मे उपस्थित हुए और वहाँ विद्यार्थियो की कम सख्या होने के विषय मे कहा —" ..प्रत्येक महत् कार्य मे उसके लिए लडनेवाले की सख्या का महत्व नही होता; निर्णायक तत्व सख्या नही वे लडवैये किन गुणो के पुज हैं, यह होता है। ससार के महत्तम पुरुष सदा एकाकी रहे हैं। तुमको अपने अन्दर और ईश्वर के प्रति जीवन्त विश्वास रखना चाहिए।"

अपने कार्यक्रम के अनुसार वह उत्तर प्रदेश के प्राय प्रत्येक महत्वपूर्ण केन्द्र मे गये। मुस्लिम विश्वविद्यालय के उपकुलपति के आग्रह पर वह अलीगढ गये।

अलीगढ़ मे

वहाँ उन्होने छात्रो मे भावोद्रेक से भरी हुई वक्तृता दी। उन्होने छात्रो को खलीफा उमर की सादगी का स्मरण कराते हुए बताया कि सारे ससार की दौलत उनके कदमो मे पडी रहने पर भी वह हर तरह के आराम-आसाइश से सदा दूर रहे। अन्त मे उन्होंने छात्रो से खादी अपनाने और उसके द्वारा अपने तथा भारत के कोटि-कोटि दरिद्रजनो के बीच एक जीवित सम्पर्क स्थापित करने की अपील की।

मथुरा और गोवर्द्धन की यात्रा मे वहाँ की गन्दगी, गरीबी और विशेषतः गो जाति की दुर्दशा देख उनका वैष्णव हृदय रो पडा। उन्होंने वहाँ की सभाओ मे अपने इस दुःख को मार्मिक शब्दो मे प्रकट किया।

इस प्रकार गाधी जी कई सप्ताह तक सयुक्तप्रान्त के गाँवो एव नगरो मे घूम-घूमकर लोगो को खादी और उसमे सन्निहित राष्ट्रीय जागरण का सन्देश देते रहे। ग्रामीण अचलो की अधिकाश सभाएँ दस हजार से लेकर पच्चीस हजार तक श्रोताओ की होती थी। पूर्वी सयुक्तप्रान्त के प्रमुख केन्द्रो मे जो सभाएँ हुईं उनमे, जैसे गोरखपुर मे, श्रोताओ की सख्या लाख के ऊपर चली जाती थी। चारो ओर जागरण का स्वर छा गया। युवको और छात्रो मे एक नई चेतना का सचार हुआ। प्रान्त भर मे घूम-घूमकर उन्होने रैयत की जो दशा देखी और उनके साथ जमीदारो के सम्बन्ध दिन-दिन बिगडते जाने का जो दृश्य देखा, उससे उनको बडी व्यथा हुई। तीर्थों की यात्रा का भी उन पर अच्छा प्रभाव नही पडा। इस प्रवास मे वह प्रयाग, काशी, अयोध्या, मथुरा, वृन्दावन, हरद्वार इत्यादि पावन तीर्थो मे गये और सदा की भाँति उनकी बाह्य एव आन्तरिक गन्दगी देखकर उनके हृदय को बडा आघात लगा। यात्रियो मे शौच एव स्वच्छता के नियमो का पालन करने की ओर जरा भी रुचि नही पाई। जो स्थान किसी समय पावन थे और पूर्वजो ने धर्मवृद्धि के लिए जिनकी प्रतिष्ठा कराई थी वे सब समय के प्रवाह मे कुरुचिपूर्ण, गन्दे और

अनीति के अड्डे बन गये। उनके सम्बन्ध में उन्होंने अपने हृदय की वेदना कई बार कई तरह से व्यक्त की।

२४ नवम्बर १६२६ को संयुक्तप्रान्त का दौरा समाप्त हुआ। इस दौरे में उन्होंने शताधिक सभाओं में भाषण दिया; हजारों मील की यात्रा की; लाखों आदमियों को खादी का सन्देश सुनाया और खादीकोष में तीन लाख बीस हज़ार रुपये एकत्र किये। उनके इस दौरे से इस प्रदेश की जनता, विशेषतः युवकों में, एक नया जीवन आ गया।

सत्याग्रह के तूफानी दिनों में : १६३०-३१

१६२६ के अन्त में लाहौर कांग्रेस में, पवित्र रावी के तट पर, राष्ट्र ने पूर्ण स्वतन्त्रता के ध्येय की घोषणा की। २६ जनवरी १६३० को सम्पूर्ण देश में लाखों व्यक्तियों ने स्वतन्त्र होने की प्रतिज्ञा ली। फिर भी गांधीजी समझौते का प्रयत्न करते रहे। उन्होने सरकार द्वारा ११ शर्तों की पूर्ति पर सत्याग्रह स्थगित करने की इच्छा प्रकट की किन्तु सरकार ने उस पर कोई ध्यान नहीं दिया। फरवरी (१६३०) में साबरमती में कांग्रेस कार्य-समिति की बैठक हुई। इसमें सविनय अवज्ञा और सत्याग्रह करने-चलाने का अधिकार उन्हीं तक सीमित कर दिया गया जिनको अहिंसा-द्वारा ही पूर्ण स्वराज्य प्राप्त करने में विश्वास हो। २ मार्च को गांधी-जी ने वाइसराय के पास अपना अल्टिमेटम भेजा और माँग की पूर्ति न होने पर सत्याग्रह आरम्भ करने की सूचना दी। वाइसराय ने गांधीजो के निश्चय पर केवल दुःख प्रकट किया। ७ मार्च को रास (गुजरात) में सरदार वल्लभभाई गिरफ्तार कर लिये गये। १२ मार्च को गांधीजी ने अपने ७८ आश्रमवासियों के साथ साबरमती से दांडी की ओर प्रयाण किया जहाँ पहुंचकर वह नमक-कानून भंग करने वाले थे। ये लोग प्रतिदिन १० से १५ मील तक चलते थे। प्रतिदिन प्रार्थनादि के बाद प्रातः साढ़े छः बजे यात्रा आरम्भ होती थी। इस यात्रा ने रास्ते के समस्त अंचल को उत्साह और नवजीवन से भर दिया। २५१ मील की यह यात्रा ५ अप्रैल को पूरी हुई। ६ अप्रैल को प्रातः साढ़े आठ बजे गांधीजी ने नमक-कानून तोड़ कर सत्याग्रह आन्दोलन का शुभारम्भ किया। फिर तो सारे देश में तूफान की तरह वह चल गया। कानूनों को तोड़ने की धूम मच गई। सरकार नंगी होकर दमन पर उतर आई। स्त्रियों, बच्चों, बूढ़ों को लाठियों से मार-मार कर सुला दिया गया। देश में कितने ही स्थानों पर गोलियाँ भी चलीं। सीमा-प्रान्त मे आन्दोलन को कुचलने के लिए सेना का भी प्रयोग किया गया। ऐसा दमन हुआ कि मनुष्यता थर्रा गई किन्तु इस दमन से देश दबा नही, झुका नही।

४ मई (१६३०) को गांधीजी गिरफ्तार कर लिये गये। ३० जून को कांग्रेस

के स्थानापन्न अध्यक्ष मोतीलालजी गिरफ्तार कर लिये गये और कांग्रेस कार्य-समिति को गैरकानूनी घोषित कर दिया गया। आर्डिनैन्सो का शासन शुरू हुआ। जेलें भर गई। राष्ट्रीय सस्थाएँ गैरकानूनी करार देकर वन्द कर दी गईं, उनमे ताला लगा दिया गया। कितने ही प्रेस और समाचारपत्र सरकारी दमन के शिकार हुए। परन्तु आन्दोलन रुका नही। उसकी सफलता देख सरकार घवरा गई। श्री जयकर और सप्रू की मध्यस्थता से उसने वाते शुरु की।२५ जनवरी १६३१ को वाइसराय लार्ड इर्विन ने गाधीजी तथा कार्यसमिति के अन्य सदस्यो को रिहा कर देने की घोषणा की। २६ जनवरी को वे छोड दिये गये। देश ने स्वतन्त्रता की प्रतिज्ञा फिर से दोहराई।

१९३१ मे

प्रयाग में

मोतीलालजी जेल मे ही वीमार थे। रोग वढ जाने पर ८ सितम्वर ३० को वह रिहा कर दिये गये थे किन्तु वाहर आकर भी उनकी तवीयत गिरती ही गई। सुनते ही गाधीजी प्रयाग आ गये। गाडी रात को देर से पहुँची थी किन्तु तव भी मोतीलाल जी उनकी प्रतीक्षा कर रहे थे। गाधीजी ने उन्हे आश्वासन देते हुए कहा—"यदि आप इस खतरे को पार कर गये तो हम निश्चय ही स्वराज्य प्राप्त कर लेंगे।" मोतीलालजी ने उत्तर दिया—"महात्माजी, मैं तो शीघ्र ही जा रहा हूँ और मैं स्वराज्य देखने के लिए यहाँ नही रहूँगा किन्तु मैं जानता हूँ, आपने उसे जीत लिया है, और शीघ्र ही उसे प्राप्त भी कर लेगे।" गाधी जी इस वीमारी मे वरावर उनके साथ रहे। उस समय इलाहावाद मे एक्सरे की व्यवस्था न होने के कारण ४ फरवरी को उन्हें मोटर से लखनऊ ले जाया गया। गाधीजी साथ गये। ६ फरवरी को सुवह ६ वजकर ४० मिनट पर उनका लखनऊ मे ही देहान्त हो गया। वहाँ से उनका शव प्रयाग लाया गया। उनकी चिता की ओर उगली उठाकर गाधीजी ने कहा—"यह चिता, नही, राष्ट्र-यज्ञ का हवन-कुण्ड है।" इस अवसर पर गाधीजी १६ फरवरी तक प्रयाग रहे। यहाँ से १६ को दिल्ली चले गये। वाइसराय से वार्ते होती रही। वातो का यह सिल-सिला कई दिनो तक चलता रहा और ५ मार्च (१६३१) को इर्विन-गाधी समझौता हो गया। सत्याग्रह के कैदी छोड दिये गये। काग्रेस सस्थाओ से रोक उठा ली गई। २८ मार्च को धूमधाम से करांची में काग्रेस का अधिवेशन हुआ।

समझौता होने पर भी पश्चिमोत्तर सीमाप्रान्त, वगाल और सयुक्तप्रान्त मे शासन द्वारा किसी-न-किसी वहाने दमन और छेडखानियाँ होती रही। सयुक्त-

नैनीताल में

प्रान्त में किसानों की, अकाल के कारण, बुरी दशा थी फिर भी उनसे जबरन लगान वसूल किया जा रहा था। १४ मई को गांधी जी ने नये वाइसराय लार्ड विलिंगडन से शिमला जाकर बातचीत की और उनकी सलाह से गवर्नर सर मालकम हेली से मिलने नैनीताल आये। यहाँ वह ५ दिन रहे। दोनों पक्षों की बातें सुनी परन्तु कुछ विशेष फल नही निकला। २१ मई को उन्होंने 'संयुक्तप्रान्त के किसानों के नाम' वहीं से, एक अपील प्रकाशित की।

कांग्रेस के अनुरोध पर २९ अगस्त को, गोलमेज़ सम्मेलन में भाग लेने के लिए वह विलायत को रवाना हुए। वहाँ से २८ दिसम्बर को बम्बई लौटे। उनकी अनुपस्थिति में सरकारी दमन के कारण स्थिति बहुत बिगड़ गई थी। गांधीजी के लौटते ही बम्बई में कांग्रेस कार्यसमिति की बैठक बुलाई गई थी। उसमे जाते हुए जवाहरलालजी तथा संयुक्त-प्रान्तीय कांग्रेस के अध्यक्ष शेरवानी गिरफ्तार कर लिये गये। गांधीजी ने वाइसराय से देश की विषम स्थिति पर बातचीत करने के लिए मुलाकात का समय माँगा परन्तु उन्हें इन्कार कर दिया गया। वस्तुतः सरकार ने लड़ाई के लिए सब तैयारी कर ली थी।

१९३२-३३

विवश हो कांग्रेस को सत्याग्रह आन्दोलन फिर जारी करना पड़ा। इस बार सरकार ने उस पर बड़े वेग से प्रहार किया। न केवल कांग्रेस बल्कि छात्र-संघ, स्वदेशी-संघ, खादी भण्डार आदि राष्ट्रीय विचार की सभी संस्थाएँ गैरकानूनी करार दे दी गईं। इतना ही नही, उनमें से अधिकांश पर सरकार ने कब्जा कर लिया। हड़ताल निषिद्ध कर दी गई, अखबारों को सत्याग्रह आन्दोलन की खबरें देने से रोक दिया गया। व्यवस्था के शासन की जगह भय एवं आतंक का राज्य शुरु हुआ। फिर भी आन्दोलन चलता रहा और मई १९३३ तक लगभग ६० हजार आदमी इस सम्बन्ध में जेल गये।

प्राणों की बाजी

१९३१ मे जब गांधीजी गोलमेज सम्मेलन में गये थे तभी उन्होंने हरिजनों को अलग प्रतिनिधित्व देकर सदा के लिए उनको हिन्दुओं से अलग कर देने की नीति की जबर्दस्त टीका की थी और यह भी कह दिया था कि ऐसे किसी प्रयत्न का मैं प्राणों की बाजी लगाकर भी विरोध करूँगा। जेल से भी उन्होंने ११ मार्च १९३२ को भारत-सचिव को अपना निश्चय दोहराते हुए सूचना दे दी थी।

अगस्त (३३) मे ब्रिटिश सरकार की ओर से प्रधान मन्त्री श्री रैमज़े मैकडानल्ड का निर्णय प्रकाशित हुआ। इसमे वही चाल थी। १८ अगस्त को गाधीजी ने उन्हे लिखा कि निर्णय मे परिवर्तन न होने की स्थिति मे २१ सितम्बर से मैं आमरण अनशन करूँगा। ठीक समय पर उन्होंने अपना यह अनशन शुरू किया। इससे तहलका मच गया। अन्त मे २६ सितम्बर को उच्चवर्णीय हिन्दू नेताओ एव अछूत नेताओ के बीच एक समझौता हो गया, जिसे सरकार द्वारा भी स्वीकार कर लिया गया और उपवास समाप्त हुआ। उच्चवर्ण के हिन्दू नेताओ ने अस्पृश्यता का कलक दूर करने की जिम्मेदारी ली थी, इसलिए दिल्ली मे अस्पृश्यता-निवारण सघ (बाद मे हरिजन-सेवक सघ) की स्थापना की गई और इस दिशा मे काफी काम भी हुआ किन्तु गाधी जी को ऐसा प्रतीत हुआ कि आन्दोलन पूर्ण सच्चाई और पवित्रता के साथ नही चल रहा है, सवर्ण हिन्दुओ का दिल जैसा बदलना चाहिए, नही बदला है। इससे उन्हे दु ख हुआ और इसे अपनी ही आत्मिक अपूर्णता मानकर उन्होंने बिना किसी शर्त के ८ मई १९३३ से २१ दिन का उपवास करने की घोषणा की। सरकार ने उन्हे रिहा कर दिया किन्तु छूटने के बाद भी पर्णकुटी, पूना मे रहकर उन्होंने अपना उपवास जारी रखा। प्रभु की कृपा से उपवास पूरा हुआ। परन्तु उनके उपवास से सारे देश का ध्यान उधर ही खिंच गया। १४ जुलाई को सामूहिक सत्याग्रह का आन्दोलन उठा लिया गया, हाँ, व्यक्तिगत सत्याग्रह की छूट रही। गाधीजी ने साबरमती का सत्याग्रह-आश्रम तोड दिया और अपना यह निश्चय प्रकट किया कि १ अगस्त को आश्रम के ३२ साथियो के साथ रास (गुजरात) स्थान की ओर प्रस्थान करेंगे, जहाँ किसानो की स्थिति बहुत खराब हो रही थी। ३१ जुलाई की रात मे उन्हे गिरफ्तार करके यरवदा जेल (पूना) भेज दिया गया। ४ अगस्त को वह इस शर्त पर छोड दिये गये कि पूना नगर की सीमा के बाहर न जाय किन्तु गाधीजी ने आज्ञा भग की और गिरफ्तार कर लिये गये। उनपर मुकदमा चलाया गया, जिसमे उन्हें एक वर्ष की सादी कैद की सज़ा दी गई।

जेल मे हरिजन-कार्यों की सुविधा देने से सरकार ने इन्कार किया, इस पर उन्होंने पुन उपवास करने का निश्चय किया। इस तरह कई बार के उपवास से उनकी तन्दुरुस्ती बहुत गिर गई। २१ अगस्त को वह सासून अस्पताल ले जाये गये किन्तु उनकी अवस्था बडी तेज़ी से खराब होने लगी। अन्तत २३ अगस्त को सरकार ने उन्हें बिना शर्त्त रिहा कर दिया। सितम्बर १९३३ मे वह सत्याग्रह-आश्रम, वर्धा चले गये। वहाँ ६ सप्ताह तक विश्राम करने के बाद अस्पृश्यता का कलक हिन्दू धर्म से दूर करने के लिए सारे देश मे भ्रमण करने का निश्चय किया।

यह दौरा वर्धा से ७ नवम्बर १९३३ को शुरू हुआ। इस प्रकार ३ साल तक वह संयुक्तप्रान्त में नहीं आ सके।

हरिजन-प्रवास : १९३४

१९३४ में अपने भारतव्यापी दौरे के सिलसिले में वह संयुक्तप्रान्त (बाद के उत्तरप्रदेश) आये और २२ जुलाई से २ अगस्त तक उन्होंने इस प्रान्त का दौरा किया। दौरे की संक्षिप्त निर्देशिका निम्नलिखित है :—

२२ जुलाई :

कलकत्ता से कानपुर आगमन। कानपुर : नगरपालिका और जिला परिषद के मानपत्र; सार्वजनिक सभा, मानपत्र और थैली ११००० रुपये; सायंकालीन प्रार्थना के समय धन-संग्रह ५१ रुपये १३ आने।

२३ जुलाई :

कानपुर। मौनदिवस; सायंकालीन प्रार्थना के समय धन-संग्रह ५७ रुपये ६॥ आने।

२४ जुलाई :

कानपुर। तिलक-स्मारक हाल का उद्घाटन; सनातनी प्रतिनिधि-मण्डल तथा संयुक्तप्रान्तीय हरिजन-सेवक-संघों के कार्यकर्त्ताओं से भेंट; विद्यार्थियों की सभा; सनातन धर्म कालेज के विद्यार्थियों का मानपत्र तथा थैली ५११ रुपये सवा दो आने; मेहतर सभा का मानपत्र। दिन भर का कुल धन-संग्रह ३२४२ रुपये सवा पन्द्रह आने।

२५ जुलाई :

कानपुर से लखनऊ प्रस्थान और वापसी रेल-द्वारा। उन्नाव स्टेशन पर थैली तथा फुटकर २८२ रुपये साढ़े बारह आने। लखनऊ : महिला-सभा तथा थैली ११७६ रुपये सवा छः आने; बाल-सभा में १०१ रुपये; सार्वजनिक सभा, सनातनियों तथा हरिजनों के मानपत्र तथा थैली और फुटकर संग्रह ३९४५ रुपये पौने बारह आने। कानपुर : जिला-हरिजन सेवक संघों के प्रतिनिधियों से मुलाकात; इटावा की थैली ७३२ रुपये; फर्रुखाबाद की थैली ६४५ रुपये; मुरादाबाद की थैली ३२२ रुपये आठ आने; जालौन की थैली ६०१ रुपये; वाल्मीकि-सुधार-सभा, आगरा की थैली ९ रुपये साढ़े पाँच आने; सीतापुर की थैली ३०१ रुपये सवा नौ आने, बांदा की थैली १८५ रुपये दो आने; युक्तप्रान्तीय आर्य प्रतिनिधि सभा का मानपत्र तथा थैली १३७ रुपये। हरिजन-बस्तियों का निरीक्षण; गुजरातियों

का मानपत्र तथा थैली ११३१ रुपये चार आने; गुजराती स्कूल के बच्चों की थैली १२ रुपये तीन आने; संध्या की प्रार्थना के समय धन-सग्रह ८२ रुपये आठ आने साढे दस पाई। दिन भर का कुल धन-सग्रह १०६४३ रुपये साढे सात पाई।

२६ जुलाई :

कानपुर . काग्रेसवालो, कानपुर जिले के हरिजन कार्यकर्त्ताओ और सयुक्त-प्रान्त के खादी-विक्रेताओ से भेंट, सेठ कमलापति सिंहानिया द्वारा दान १५४१ रुपये, महिलाओ की सभा, मानपत्र तथा धन-सग्रह ७४३ रुपये साढे दस आने, हरिजन-वस्तियो का निरीक्षण; सध्याकालीन प्रार्थना के समय धन-सग्रह २२० रुपये सवा तीन आने। दिन भर का कुल धन-सग्रह ३५६२ रुपये तेरह आने। कानपुर से काशी के लिए प्रस्थान।

२७ जुलाई :

काशी सार्वजनिक कार्य, सायकालीन प्रार्थना के समय धन-सग्रह १२२ रुपये छ आने ग्यारह पाई।

२८ जुलाई :

काशी। सार्वजनिक कार्य, गोरखपुर जिले की थैली ६५१ रुपये, साय-कालीन प्रार्थना के समय धन-सग्रह २७ रुपये ग्यारह आने साढे चार पाई, काशी विद्यापीठ की ओर से स्वागत तथा धन-सग्रह ४४ रुपये एक आना।

२९ जुलाई :

काशी जिलो के प्रतिनिधि-मण्डलो से मुलाकात, मथुरा की थैली १००० रुपये; गाजीपुर की थैली २०१ रुपये; आगरा की थैली ११६३ रुपये तेरह आने; वलिया की थैली ४७१ रुपये पाँच आने, आजमगढ की थैली १११ रुपये; लखीम-पुर की थैली ३१२ रुपये, जौनपुर की थैली ६० रुपये, नैनीताल की थैली २५२ रुपये; हरिजन-सेवक-सघ के केन्द्रीय वोर्ड की वैठक, सायंकालीन प्रार्थना के समय धन-सग्रह ७१ रुपये तेरह आने साढे ग्यारह पाई। दिन-भर का कुल धन-संग्रह ४०२६ रुपये पन्द्रह आने साढे ग्यारह पाई।

३० जुलाई :

काशी मौन-दिवस। वरेली की थैली १२५ रुपये। सायकालीन प्रार्थना के समय धन-सग्रह ३१ रुपये सात आने साढे चार पाई।

३१ जुलाई :

काशी. हरिजन विद्यार्थियों का मानपत्र, सार्वजनिक सभा और थैली ५००० रुपये, गुजरातियो की थैली १५४ रुपये, चन्दौली तहसील की थैली २१७ रुपये, सायकालीन प्रार्थना के समय धन-सग्रह ५२ रुपये आठ आने डेढ़

पाई; रायवरेली की थैली ४६० रुपये। दिन भर का कुल धन-संग्रह ६५२८ रुपये सवा ग्यारह आने।

१ अगस्त :

काशी : हिन्दू विश्वविद्यालय के विद्यार्थियों का मानपत्र और थैली १७६६ रुपये पन्द्रह आने आठ पाई; फैजावाद की थैली २०३ रुपये; हरिजन कार्यकर्त्ताओं की वैठक; हरिजनों की सभा; अछूतोद्धार समिति, राजभर एवं रैदास सभा के मानपत्र; धन-संग्रह ३७ रुपये नौ आने चार पाई; कांग्रेसवालों की वैठक, सायंकालीन प्रार्थना के समय धन-संग्रह ५५ रुपये सवा आना।

२ अगस्त :

काशी : हरिजन-वस्तियों तथा कवीर मठ का निरीक्षण; कवीर मठ में थैली तथा फुटकर संग्रह १२६ रुपये पौने तीन आने; काशी की पण्डित-मण्डली का मानपत्र; महिलाओं की सभा तथा थैली २७८८ रुपये।

गांधीजी का स्वास्थ्य खराव होने के कारण संयुक्तप्रान्त के प्रवास को दो मुख्य केन्द्रो में वाँट दिया गया था : पश्चिमी जिलों का केन्द्र कानपुर था और पूर्वी ज़िलों का काशी। व्यवस्था यह थी कि उस क्षेत्र के विभिन्न ज़िलों के कार्यकर्त्ता तत्सम्वन्धी केन्द्र में ही अपनी संस्थाओं के मानपत्र या एकत्र धनराशि की थैलियाँ गांधीजी को भेंट करेंगे। इससे उन पर कम वोझ पड़ेगा।

२२ जुलाई को कानपुर नगरपालिका और जिला-परिखद ने अपने मानपत्र डा० जवाहरलाल रोहतगी के वंगले पर, जहाँ गांधी जी ठहराये गये थे, दिये।

कानपुर में

नगरपालिका के मानपत्र में उन कार्यो का विवरण दिया गया था जो उसने अपने हरिजन कर्मचारियों के लिए किये थे। जिला परिपद् ने अन्य जाति के विद्याथियों की तरह ही हरिजन विद्यार्थियों के लिए भी स्कूलों में भरती करने की छूट दी थी। इस निश्चय के विरुद्ध आचरण करनेवाले अध्यापकों पर जुर्माना करने की व्यवस्था थी। प्राइमरी पाठशालाओं में हरिजन वच्चों को निःशुल्क शिक्षा देने का वन्दोवस्त था। कन्याशालाओं में कताई की शिक्षा की भी व्यवस्था थी। इस अवसर पर गांधीजी ने कहा था—"दरिद्रनारायण की सेवा विना खादी और चर्खे के हो ही नही सकती।" इसी दिन (२२ जुलाई) सार्वजनिक सभा में उन्हे नागरिको की ओर से मानपत्र और ग्यारह हज़ार की थैली भेंट की गई। गांधीजी ने भाषण करते हुए कहा—"आपने यदि इस हरिजन-प्रवृत्ति का महत्व समझा होता तो मुझे हज़ारों की जगह लाखों दिये होते। परन्तु धन तो अस्पृश्यता का अन्त नही कर सकता। वह तो तभी हो सकता है जव सवर्ण हिन्दुओं के हृदय

पिघल जाय। . .यह तो आत्म-शुद्धि की प्रवृत्ति है, सख्या से इस प्रवृत्ति का कोई सम्बन्ध नही।. .'' २४ जलाई को उन्होंने तिलक हाल का उद्घाटन करते हुए स्व० गणेशशकर विद्यार्थी का स्मरण किया। इसी दिन प्रान्त के विविध स्थानो मे आये हरिजन कार्यकर्त्ताओ मे उन्होंने भेंट की और कार्य करने की पद्धति के विषय मे उन्हे उचित परामर्श दिया। उसी दिन शाम को विद्यार्थियो एव हरिजनो की एक सयुक्त सभा हुई जिसमे गाधीजी ने कहा—"यदि हिन्दुस्तान के विद्यार्थी अपने अवकाश का समय हरिजन-सेवा मे लगा दें तो अस्पृश्यता-निवारण की गति मे दसगुनी तेज़ी आ जाय।" कानपुर-प्रवास मे उन्होंने नगर की फार्व्स कम्पाउण्ड, विपत खटिक का हाता, लक्ष्मी-पुरवा, हड्डी गोदाम, मीरपुर, मोती-महल, वैरहना, कैंटल वैरक और ग्वालटोली नामक हरिजन वस्तियो का निरीक्षण किया और वहाँ रहनेवाले हरिजनो से पूछताछ की। लक्ष्मीपुरवा, हड्डी गोदाम, वैरहना और ग्वालटोली की वस्तियो की दुर्दशा देखकर उन्हे वडा क्लेश हुआ और इनमे तुरन्त सुधार करने की ओर उन्होने नगरपालिका के अधिकारियो का ध्यान आकर्षित किया। कानपुर से ही २५ जुलाई को वह लखनऊ गये और वहाँ कुछ घण्टे विताये। वहाँ दो सभाएँ हुई—महिलाओ की और सार्वजनिक। सनात-नियो ने भी एक मानपत्र दिया। इन सभी स्थानो पर उन्होंने यही कहा कि अस्पृ-श्यता हिन्दू धर्म पर लगा हुआ महान कलक और मनुष्यता के विरुद्ध अपराध है।

२७ जुलाई को वह काशी पहुँचे। २८-२९ जुलाई को काशी विद्यापीठ मे हरिजन-सेवक सघ के केन्द्रीय वोर्ड की वैठक हुई। वैठक के अन्त मे २९ जुलाई को उन्होंने सदस्यो को सम्वोधित करते हुए कहा—

काशी मे

". . .मेरे लिए तो यह विशुद्ध सेवा और प्रायश्चित्त का आन्दोलन है।" उन्होंने हरिजन-सेवा के लिए दक्षिण अफ्रीका के ट्रेपिस्टमिशन-जैसी कोई शिक्षण-सस्था वनाने की आव-श्यकता पर ज़ोर दिया। ३१ जुलाई को वह विविध हरिजन शिक्षण-शालाओ के लगभग ५०० वच्चो से मिले। उन्होंने कहा—"वच्चो को देखकर हमे सन्तोष नही हुआ। वे ठीक तरह से साफ-सुथरे नही रक्खे जाते। हरिजन पाठशालाओ के शिक्षको को सवसे पहिले तो सफाई पर ही ध्यान देना चाहिए। स्वच्छता ही तो धर्म का सार है।" ३१ जुलाई को सार्वजनिक सभा वडे स्वच्छ, शान्त वाता-वरण मे हुई। काशी के विद्वान पण्डितो के मण्डल ने भी गाधी जी को मानपत्र भेंट किया। वर्णाश्रम-स्वराज्य सघ तथा भारत धर्म-महामण्डल के प्रतिनिधि-स्वरूप प० देवनायकाचार्य भी सभा मे आये और वोले। उसके वाद मालवीय-जी महाराज ने अस्पृश्यता-निवारण के समर्थन मे भाषण किया। गाधीजी ने

कहा—"...यह धार्मिक आन्दोलन है। इसमें दुराग्रह को स्थान नहीं है।··· अस्पृश्यता हिन्दू धर्म पर कलंक है।··· काशी के पण्डितों की ओर से मुझे जो स्वागतपत्र मिला है उसे मैं उनका आशीर्वाद मानता हूँ।" १ अगस्त को उन्होंने हिन्दू विश्वविद्यालय की सभा में भाषण किया और गीता-द्वारा अपने जीवन पर पड़े प्रभावों का उल्लेख किया। २ अगस्त को हरिश्चन्द्र हाई स्कूल में आयोजित स्त्रियों की सभा में वड़ा ही ओजस्वी भाषण करते हुए कहा—"...हम सव एक ही ईश्वर के वनाये हैं। तव कोई उनमें भेद-भाव कैसे कर सकता है?... आप माताओं से मेरी प्रार्थना है कि छूआछूत के भूत को नष्ट कर दें।... दूसरी बात यह है कि आपको विदेशी तथा मिलों के वस्त्र त्याग देने चाहिए और खद्दर पहिनना चाहिए। तीसरी वात यह कि आप सव कुछ-न-कुछ विद्याभ्यास करें। चौथी वात, आभूषणों का त्याग करें। माताओं की शोभा आभूषणों से नहीं, हृदय से है...।" इसी दिन (२ अगस्त को) उन्होंने इंग्लिशिया लाइन, चेतगंज, मलदहिया और कवीरचौरा की हरिजन वस्तियों का निरीक्षण किया। फिर कवीर-मठ गये। वहाँ की स्वच्छता तथा सादगी का उन पर वड़ा अच्छा असर पड़ा और उन्हें यह जानकर की प्रन्नसता हुई कि कवीर-सम्प्रदाय मे अस्पृश्यता नही है।

२ अगस्त को ही हरिजन-प्रवास पूर्ण हुआ। इस भारतव्यापी दौरे से देश में अभूतपूर्व जागृति हुई। सैकड़ों मन्दिरों के द्वार हरिजनों के लिए खुल गये तथा उनकी दुर्दशा की ओर जनता और सरकार ने भी ध्यान दिया। २८ अक्तूवर १९३४ को वम्बई के कांग्रेस-अधिवेशन में गांधीजी ने अपने को कांग्रेस के नेतृत्व से अलग कर लिया और ग्रामोद्योग तथा अन्य रचनात्मक कार्यो में ही अपना अधिकांश समय लगाने का निश्चय किया। इन दिनों उनका स्वास्थ्य भी गिर गया था। फलतः १९३५ में वह इस सूवे में न आ सके।

१९३६ में

१९३६ में वह दो वार संयुक्तप्रान्त में आये। लखनऊ कांग्रेस के समय २८ मार्च से १२ अप्रैल तक वहां रहे। अक्तूवर के मध्य भाग में वाराणसी आये।

अप्रैल १९३६ में कांग्रेस का अधिवेशन लखनऊ में हुआ था। इस अवसर पर कुछ पहिले से चर्खा संघ तथा ग्रामोद्योग संघ के सम्मिलित प्रयत्न से एक विशाल

लखनऊ में

ग्रामीण प्रदर्शनी का आयोजन किया गया था। २८ मार्च (१९३६) को गांधीजी ने इस प्रदर्शनी का उद्घाटन करते हुए कहा—"इस बार की प्रदर्शनी

अपने ढंग की पहली प्रदर्शनी है।. इस नुमाइश के जरिये हम दिखाना चाहते है कि भूख से वेहाल इस हिन्दुस्तान मे भी आज ऐसे हुनर, उद्योग-धन्धे और कला-कौशल मौजूद हैं जिनका हमे कभी खयाल भी नही होता। इसे कुछ सीखने की दृष्टि से देखें, तमाशे की दृष्टि से नही।" यद्यपि वह १५ दिन लखनऊ रहे किन्तु काग्रेस-अधिवेशन मे शरीक नही हुए। लखनऊ से रवाना होने के पूर्व १२ अप्रैल को उन्होंने पुनः प्रदर्शनी मे गावो से आये कारीगरो की ओर लोगो का ध्यान आकर्षित करते हुए उनको सरक्षण देने की अपील की। इस लखनऊ-निवास के बीच ५ अप्रैल को वह प्रयाग आये और हिन्दी-साहित्य सम्मेलन के सग्रहालय का उद्घाटन किया। इस अवसर पर जनता के अतिरिक्त माता कस्तूरवा, प० जवाहरलाल, काका कालेलकर, जमनालाल जी, महादेव भाई तथा सर्वश्री कैलासनाथ काटजू, विजयलक्ष्मी पण्डित, पुरुषोत्तमदास टण्डन, डा० गगानाथ झा, डा० अमरनाथ झा, डा० रघुवीर, डा० ताराचन्द, डा० वेनीप्रसाद, प० जगन्नाथ प्रसाद शुक्ल, श्री लक्ष्मीवर वाजपेयी, श्रीमती महादेवी वर्मा, मुशी ईश्वरशरण, श्री सीताराम सेकसरिया, श्री भगीरथ कनोडिया इत्यादि कितने ही प्रतिष्ठित व्यक्ति उपस्थित थे। गाधी जी ने उद्घाटन करते हुए कहा—"यह कार्य एक या दो आदमियो के प्रयत्नो से नही, वल्कि समस्त हिन्दी भाषा-भाषियो के सम्मिलित प्रयत्न से ही चल सकता है।" उन्होंने इस कार्य के लिए पाच हजार रुपये सहायता देने की घोपणा भी की।

प्रयाग मे

अक्तूवर के मध्य भाग मे वह भारतमाता मन्दिर का उद्घाटन करने काशी आये। यह अपूर्व मन्दिर स्व० वा० शिवप्रसाद गुप्त की अद्भुत कल्पना का साकार रूप है। मूर्ति १९३१ से ही गढी जा रही थी। यह कला की दृष्टि से ही नही, ज्ञान और शिक्षण की दृष्टि से भी अनुपम है। इसमे सगमर्मर के ७६२ टुकडे लगे हैं और इस भारतीय मानचित्र मे तिव्वत से लका और चीन की दीवार से हेरात तक का प्रदेश दिखाया गया है। गौरीशकर तथा अन्य चार सौ से ऊपर शिखर वनाये गये हैं। भव्य शिखरो के साथ हिमाच्छादित कैलास की ३०० मील लम्वी तथा १५० मील चौडी विशाल पर्वतश्रेणी वडी आकर्षक है। इस मन्दिर के उद्घाटन के पूर्व चारो वेदो का चार वार पाठ और मगल अनुष्ठान हुआ। फिर प्रत्येक धर्म की प्रार्थना हुई। गाधीजी ने इस अवसर पर पृथिवी माता तथा भारत-माता की आराधना के लिए लोगो का आवाहन किया। उसी दिन काशी विद्यापीठ के प्रागण मे आम के एक पौवे का

भारतमाता मन्दिर का उद्घाटन

आरोपण किया तथा नागरी प्रचारिणी सभा में स्थित कला-भवन को जाकर देखा।

१९३९ में

इसके बाद लगभग तीन वर्ष तक वह इस प्रान्त में न आ सके। १९३९ में युद्ध के कारण न केवल भारत वरं विश्व की स्थिति बड़ी तेजी से बदल रही थी।

इलाहाबाद में

शक्ति का सन्तुलन बदल रहा था। जपान के हिटलर की ओर आ जाने के कारण ब्रिटिश साम्राज्य, विशेषतः भारत, का अस्तित्व खतरे में पड़ गया। नेताओं के अनुरोध से कांग्रेस की बागडोर गांधीजी ने पुनः अपने हाथ में ले ली। कांग्रेस ने, ब्रिटिश सरकार से कोई सन्तोषजनक समझौता न होने की अवस्था में सत्याग्रह चलाने के समस्त अधिकार गाधीजी के हाथों में दे दिये। सरकार से समझौता क्या होता? अक्तूबर १९३९ के अन्त तक विभिन्न प्रान्तों के कांग्रेसी मन्त्रिमण्डलों ने इस्तीफा दे दिया। मध्य नवम्बर (१९३९) में भारतीय कांग्रेस कमेटी की बैठक इलाहाबाद में हुई। कांग्रेस कार्यसमिति तथा नेताओं की अनौपचारिक बैठक तो कई दिनों तक होती रही। गांधी जी इनमें बराबर शामिल रहे। कार्य-समिति की बैठक के बाद उन्होंने संयुक्तप्रान्त के प्रमुख कार्यकर्त्ताओं से भेंट की और उनके प्रश्नों के उत्तर दिये। १९ नवम्बर (१९३९) को उन्होंने कमला नेहरू अस्पताल का शिलान्यास किया और अवसर के उपयुक्त एक छोटा-सा भाषण दिया। २३ नवम्बर तक वह इलाहाबाद रहे।

१९४१ में

१९४० मे वह इस सूबे में नही आ सके। फरवरी १९४१ में वह पुनः इला-हावाद आये और प्रायः सवा वर्ष पूर्व जिस कमला नेहरू अस्पताल का शिलान्यास

प्रयाग में

किया था, २८ फरवरी (४१) को उसका उद्घाटन किया। उन्होने स्व० कमला नेहरू के आत्मार्पण, देश-सेवा, वलिदान एव त्याग का स्मरण करते हुए आशा प्रकट की कि इस अस्पताल में उसी भावना एवं प्रेरणा से दुखी मानवता की सेवा की जायगी।

१९४२ में

अगले साल के आरम्भ में ही वह पुनः युक्तप्रान्त आये। २१ जनवरी को

काशी में

हिन्दू विश्वविद्यालय के रजत जयन्ती समारोह मे शामिल हुए। इस अवसर पर उन्होंने हिन्दी मे भाषण किया और लोगो को विदेशी भाषा मे बोलने के लिए लताडते हुए कहा कि हमारे विश्वविद्यालय पश्चिम की नकल भर हैं, उनकी अपनी कोई विशेषता नही है।

२२ जनवरी को दूर-दूर से मिलने को आये हुए सयुक्तप्रान्त के काग्रेस-कार्यकर्त्ताओ मे उन्होंने भेंट की। देश की विशेष परिस्थिति मे उन्हें किस प्रकार काम करना चाहिए, यह बताया और कहा कि मृत्यु का खतरा तो हिंसा मे भी है, अहिंसा मे भी है। तब हम अहिंसा को धारण करते हुए मरण की तैयारी क्यो न करें?

इस यात्रा मे सारनाथ जाकर उन्होंने बुद्ध-मन्दिर के दर्शन भी किये।

१९४६ में

इसके बाद तो १९४२ का 'भारत छोडो' आन्दोलन ही उठ खडा हुआ। गाधीजी तथा प्राय सभी प्रमुख नेता आरम्भ मे ही पकड लिये गये। दमन की सीमा हो गई; दमन ही नही, जनता पर हर तरह का अत्याचार हुआ परन्तु लोग झुके नही। जेल मे होने के कारण स्वभावत कही आने-जाने का कोई प्रश्न ही नहीं था। जब लोग जेल मे मुक्त हुए, समझौते की बातें चलने लगी। १९४६ की गर्मियो मे शिमला मे वाइसराय तथा काग्रेस नेताओ के बीच हो रही लम्बी वार्ताओ से गाधीजी बहुत थक गये। डाक्टरो ने उन्हे दो माह किसी पहाडी स्थान पर

मसूरी मे

रहकर विश्राम लेने को कहा। बडी कठिनाई से वह मई के अन्तिम सप्ताह मे मसूरी पहुचे और वहा लगभग १५ दिन रहे। १० जून को पुन· दिल्ली लौट गये। मसूरी मे वह बिडला हाउस मे ठहरे थे। सुबह-शाम की प्रार्थना मे बहुत से लोग आते थे, फिर भी उन्हे वहा काफी विश्राम मिला। वहा की प्राकृतिक सुषमा, प्राणप्रद वायु और शान्त वातावरण का उनके मन और शरीर पर बहुत अच्छा प्रभाव पडा।

१९४७ में

१९४७ मे तो देश मे मार-काट मच गई। जगह-जगह साम्प्रदायिक दगे हुए, दंगाइयो के नृशस कृत्यो से मानवता थर्रा उठी। भयग्रस्त पुरुष, स्त्रिया और बच्चे इधर से उधर भागते फिरते थे। लाखो निराश्रित सरहदी सूबे और पजाब से

आकर सहारनपुर, देहरादून और हरद्वार में भर गये थे। हरद्वार में उनके लिए सरकारी सहयोग से कई छावनियां बनाई गई थी, यद्यपि उनका कोई ठीक प्रबन्ध न था। उनकी दुर्दशा की बात सुनकर २१ जून को गांधीजी दिल्ली से मोटर-द्वारा हरद्वार आये। साथ में सुशीला नैयर और जवाहरलाल जी भी थे। कई घण्टे घूम-घूम कर उन्होंने उनका निरीक्षण किया और जो कुछ किया जा सकता था, करने की सलाह देकर दुखी और भारी मन लिये दिल्ली लौट गये।

यही गांधीजी की इस प्रान्त में अन्तिम यात्रा थी।

इस प्रकार हम देखते है कि यौवनावस्था से लेकर प्रायः जीवन के अन्तिम दिनों तक, पचास वर्ष से भी अधिक समय तक, इस प्रान्त से उनका सम्बन्ध बराबर बना रहा। उनके मार्गदर्शन में हम जगे; हमने अपना सिर ऊंचा रखना सीखा; खड़े हुए; जीवन-पथ पर चले और हमने स्वतन्त्रता की अनेक लड़ाइयां लड़ी। इस प्रान्त में जो सामूहिक लोक-जीवन का जागरण हुआ, उसका बहुत अधिक श्रेय उनको है।

: दो :

पूर्वा

[तीर्थ-कथा : गांधीजी के शब्दों में]

१. प्रथम सम्पर्क : प्रयाग में आगमन

(१८९६ ई०)

५ जुलाई १८९६। लगभग ११ बजे दिन का समय। आकाश मे बादल घिरे हुए। फिर भी वेहद गर्मी। ऐसे समय अग्रेजी पोशाक मे एक आदमी जानसेनगज के चौरास्ते के पास धूल भरी सडक से तागे पर गुजर रहा है। वह चौकन्ना होकर चारो ओर देखता जा रहा है। थोडी देर बाद वह एक औषधि-विक्रेता की दुकान में घुस जाता है।

यह यात्री कौन है ?

यही हैं मोहनदास गाधी जो आगे चलकर हमारे देश के आधुनिक इतिहास के सर्वप्रधान नायक बन गये और पहिले 'कर्मवीर गाधी' फिर 'महात्मा गाधी' और अन्त मे 'राष्ट्रपिता बापू' के नाम से प्रसिद्ध हुए तथा जिनकी आवाज़ पर कोटि चरण और कोटि बाहु एक साथ चलते और एक साथ उठते थे।

दक्षिण-अफ्रीका मे तीन वर्ष रहने के बाद गाधी जी वहा के सार्वजनिक जीवन में ऐसे उलझ गये थे कि मित्रो एव हितैषियो की राय हुई कि वह भारत जाकर स्त्री-बच्चो को भी ले आवें क्योकि पता नही उन्हें वहा कब तक रहना पडे। जहा तक उस ज़माने के कागद-पत्रो से मालूम पडता है वह ५ जून १८९६ को डर्बन से हुगली जाने-वाले जहाज से भारत को रवाना हुए थे। २४ दिन की यात्रा के बाद उन्हें हुगली तट के दर्शन हुए थे। इस प्रकार वह शायद २९-३० जून को कलकत्ता पहुचे होंगे।

४ जुलाई को वह कलकत्ता मेल से प्रयाग-बम्बई मार्ग से राजकोट के लिए रवाना हुए। रास्ते मे कही रुकने का कोई इरादा न था किन्तु होना कुछ और था और विधाता को कुछ और ही मजूर था।

५ जुलाई को लगभग ११ बजे दिन मेल इलाहाबाद पहुँचा। यहा वह ४५ मिनट खडा होता था। अब इलाहाबाद की बात स्वय यात्री गाधी की ज़बानी सुनिए

"मैंने सोचा कि इतने समय में जरा शहर देख आऊँ। मुझे औषधि-विक्रेता के यहाँ से दवा भी लेनी थी। औषधि-विक्रेता ऊँघता हुआ बाहर आया। दवा देने में बड़ी देर लगा दी। ज्योही मैं स्टेशन पहुँचा, गाड़ी चलती

हुई दिखाई दी। भले स्टेशन-मास्टर ने गाड़ी एक मिनट रोकी भी पर मुझे वापिस न आता देख कर मेरा सामान उतरवा लिया।"

गाड़ी तो छूट ही चुकी थी। अव तो दूसरे ही दिन जाना सम्भव हो सकता था। इसलिए गांधीजी ने इस अप्रत्याशित बाधा का भी सदुपयोग करने का निश्चय किया। दक्षिण अफ्रीका में प्रवासी भारतीयों के प्रति गोरों द्वारा जो अमानवीय तथा विषम व्यवहार होता था तथा दिन-दिन विविध कायदे-कानून उनके विरुद्ध बनते जा रहे थे उनके विरोध में भारतीयों को संघटित कर आन्दोलन करने का काम वहां रहते समय गांधीजी ने शुरू कर दिया था। उनके प्रयत्न से इस ओर लोगों का ध्यान आकर्षित होने लगा था। इसलिए इस एक दिन प्रयाग में रह जाने का जो उपयोग गांधी जी ने किया, वह उन्हीं के शब्दों में सुनिए:

"मैं केलनर के होटल में उतरा और वहीं से अपना काम शुरू करने का निश्चय किया। यहाँ (प्रयाग) के 'पायोनियर' पत्र की ख्याति मैंने सुनी थी। भारत की आकांक्षाओं का वह विरोधी है, यह मैं जानता था। मुझे याद पड़ता है कि उस समय मि० चेज़नी उसके सम्पादक थे। मैं तो सब पक्षों के आदमियों से मिलकर सहायता प्राप्त करना चाहता था। इसलिए मैंने मि० चेजनी को, मुलाकात के लिए, पत्र लिखा। अपनी ट्रेन छूट जाने का हाल लिखकर उन्हें सूचित किया कि कल ही मुझे प्रयाग से चले जाना है।

"उत्तर में उन्होंने तुरन्त मिलने के लिए बुलाया। मुझे खुशी हुई। उन्होंने गौर से मेरी बातें सुनीं। मुझे आश्वासन दिया कि "आप जो कुछ लिखेंगे, मैं उस पर तुरन्त टिप्पणी करूँगा। परन्तु मैं आपको यह वचन नहीं दे सकता कि आपकी सब बातों को मैं स्वीकार कर सकूँगा। औपनिवेशिक दृष्टि-विन्दु भी तो हमें समझना और देखना चाहिए न?"

"मैंने कहा—"आप इस प्रश्न का अध्ययन करें और अपने पत्र में इसकी चर्चा करते रहें, इतना ही मेरे लिए काफी है। शुद्ध न्याय के अतिरिक्त मैं और कुछ नहीं चाहता।"

'पायोनियर' का कार्यालय आज के आनन्द भवन से थोड़ी दूर प्रयाग स्टेशन के पास था। मि० चेजनी से मिलने के बाद गांधी जी त्रिवेणी-संगम गये और वहां स्नान-दर्शनादि किये। लौटकर होटल में भोजन-विश्राम किया तथा अपने भावी कार्य का विचार करते रहे।

दूसरे दिन ६ जुलाई को बम्बई के रास्ते राजकोट के लिए रवाना हो गये। यह प्रयाग की उनकी प्रथम यात्रा थी।

यह उत्तर प्रदेश से उनका प्रथम सम्पर्क था।

आकस्मिक और अप्रत्याशित होते हुए भी यह उनके जीवन की एक प्रधान घटना है, क्योकि यही 'हरी पुस्तिका' (ग्रीन पैम्फलेट) नामक उस रचना के निर्माण का निश्चय हुआ जिसके कारण नेटाल के गोरे इनके विरुद्ध इतने उत्तेजित हो उठे कि वहा लौटने पर इन पर खुलेआम मारक प्रहार किया और जिसके कारण इनकी ख्याति दूर-दूर तक हो गई।

२. काशी-यात्रा

देखी तेरी काशी वच्चे, देखी तेरी काशी !

१९०१ के अन्तिम भाग मे गाधी जी दक्षिण अफीका से भारत के लिए रवाना हुए। स्वदेश मे वसकर ही जीविकोपार्जन और जन-सेवा साथ-साथ करने का इरादा था। भारतीयो ने उन्हें प्रेमपूर्वक विदा किया किन्तु उनसे वचन ले लिया कि यदि उनकी आवश्यकता पडेगी तो उन्हें पुन॰ आना पडेगा।

१८ अक्तूवर को गाधी जी द० अफ्रीका से रवाना हुए। पहिले मारीशस गये। ३० अक्तूवर को मारीशस के पार्टलुई मे उतरे। भारतीयो ने खूब स्वागत किया। १९ नवम्बर को वहा से भारत की यात्रा पर चल पडे। १४ दिसम्वर को पोरवन्दर होकर राजकोट पहुचे। कलकत्ता मे काग्रेस का सत्रहवा अविवेशन होने जा रहा था, उसमे शामिल होने की उनकी प्रवल इच्छा थी। इसलिए १७ को राजकोट से वम्वई के लिए रवाना हुए। १९ को वम्वई पहुचे। वम्वई से वह उसी गाडी से कलकत्ता रवाना हुए जिसमे सर फीरोजशाह मेहता तथा मनोनीत अध्यक्ष डी० ई० वाछा थे। कलकत्ता मे वह तिलक तथा अन्य प्रतिनिधियो के साथ रिपन कालेज मे ठहराये गये। उस समय तक काग्रेस केवल एक वाद-विवाद-सभा थी, स्वयसेवको या कार्यकर्ताओ मे सेवा की कोई भावना न थी। गाधीजी ने कार्यालय को अपनी सेवाए दी और गन्दगी देख कई वार स्वेच्छा से भगी का काम भी किया। २३ तारीख से वीडेन स्क्वायर मे सुसज्जित पण्डाल मे काग्रेस का अधिवेशन आरम्भ हुआ और २७ दिसम्वर तक चलता रहा। गाधीजी भी ५ मिनट के लिए वोले और उनका द० अफ्रीका-सम्वन्वी प्रस्ताव पास हो गया। यहा गाधीजी गोखले के निकट सम्पर्क मे आये और सदा के लिए उनके भक्त हो गये। प्राय॰ एक मास तक कलकत्ता मे रहकर विभिन्न नेताओ से परिचय और सम्पर्क स्थापित करते रहे। वही प्रसिद्ध रसायनशास्त्री डा० प्रफुल्लचन्द्र राय से परिचय हुआ, गाधीजी उनकी सादगी और सेवा से वडे प्रभावित हुए, जो अपने ८०० रुपये मासिक वेतन

मे से केवल ४० रुपये अपने लिए रखकर शेप सब सेवा-कार्यों में व्यय कर देते थे। कलकत्ता से गांधीजी थोड़े समय के लिए रंगून (वर्मा) गये। फरवरी १९०२ में पुनः कलकत्ता लौटे और वहां गोखले के साथ ही रहे। उनकी सलाह से उन्होंने भारत-भ्रमण का निश्चय किया। भारतीय जनता की ठीक-ठीक दशा जानने के लिए उन्होंने तीसरे दर्जे में यात्रा करने का संकल्प किया। गोखले ने उन्हें पूरी-मिठाई भरा एक टिफिन वक्स दिया। गांधीजी ने एक कनवैस वैग खरीद लिया जिसमें वह अपना गर्मकोट, एक धोती, तौलिया और कमीज रखते थे। उनके पास एक कम्वल भी था। गोखले उन्हें हवड़ा स्टेशन पर छोडने आये थे। वह २१ या २२ फरवरी को कलकत्ता से राजकोट रवाना हुए और वीच में काशी, आगरा, जयपुर और पालनपुर मे एक-एक दिन रुके।

काशी की गन्दगी और मन्दिरों के पास रहनेवाले भिक्षुकों का उन पर अच्छा प्रभाव नही पड़ा। अव काशी की इस पहिली यात्रा की कहानी उन्ही के शब्दों में सुनिए:—

काशी की तीर्थ-यात्रा : पण्डे के घर

"अव तीसरे दर्जे की यात्रा की चर्चा यहीं छोड़ कर काशी के अनुभव सुनिए। सुवह मैं काशी उतरा। मैं किसी पण्डे के यहाँ उतरना चाहता था। कई ब्राह्मणों ने मुझे चारों ओर से घेर लिया। उनमें से जो मुझे साफ-सुथरा दिखाई दिया, उसके घर जाना मैंने पसन्द किया। मेरी पसन्दगी ठीक निकली। ब्राह्मण के आँगन में गाय वँधी थी। घर दुमंजिला था। ऊपर मुझे ठहराया। मैं यथा-विधि गंगा-स्नान करना चाहता था। और तवतक निराहार रहना था। पण्डे ने सारी तैयारी कर दी। मैंने पहले से कह रक्खा था कि सवा रुपए से अधिक दक्षिणा मैं नहीं दे सकूँगा, इसलिए उसी योग्य तैयारी करना। पण्डे ने विना किसी झगड़े के मेरी वात मान ली। कहा—"हम तो क्या गरीव और क्या अमीर, सवसे एक ही-सी पूजा करवाते हैं। यजमान अपनी इच्छा और श्रद्धा के अनुसार जो दक्षिणा दे दे वही सही।" मुझे ऐसा नहीं मालूम कि पण्डे ने पूजा में कोई कोर-कसर रक्खी हो। वारह वजे तक पूजा-स्नान से निवृत्त होकर मैं काशी-विश्वनाथ के दर्शन करने गया। पर वहां जो कुछ देखा उससे मन में वड़ा दुःख हुआ।"

काशी विश्वनाथ

"सन् १८९१ ई० में जव मैं वम्वई में वकालत करता था, एक दिन प्रार्थना-

समाज मन्दिर मे काशी-यात्रा पर एक व्याख्यान सुना था। इसलिए कुछ निराशा के लिए तो वहीं से तैयार हो गया था, पर प्रत्यक्ष देखने पर जो निराशा हुई वह तो धारणा से अधिक थी। सँकरी-फिसलनी गली से हारकर जाना पडता था। शान्ति का कहीं नाम नहीं। मक्खियाँ चारो ओर भिनभिना रही थीं। यात्रियो और दूकानदारो का हो-हल्ला असह्य मालूम हुआ।

"जिस जगह मनुष्य ध्यान एव भगवच्चिन्तन की आशा रखता हो, वहां उनका नामोनिशान नहीं, ध्यान करना हो तो वह अपने अन्तर में कर ले। हा, ऐसी भावुक बहनें मैंने जरूर देखीं, जो ऐसी ध्यान-मग्न थीं कि उन्हे अपने आस-पास का कुछ भी हाल मालूम न होता था। पर इसका श्रेय मन्दिर के सचालको को नहीं मिल सकता। सचालको का कर्तव्य तो यह था कि काशी-विश्वनाथ के आस-पास शान्त, निर्मल, सुगन्धित, स्वच्छ वातावरण—क्या बाह्य और क्या आन्तरिक—उत्पन्न करें, और उसे बनाये रक्खें। पर इसकी जगह मैंने देखा कि वहाँ नये-से-नये तर्ज की मिठाई और खिलौनो की दूकानें लगी हुई थी।

"मन्दिर पर पहुँचते ही मैंने देखा कि दरवाजे के सामने सडे हुए फूल पडे थे और उनमें से दुर्गन्ध निकल रही थी। अन्दर बढ़िया संगमरमरी फर्श था। उस पर किसी अन्ध-श्रद्धालु ने रुपए जड रखे थे; रुपयो मे मैल-कचरा घुसा रहता था।

"मै ज्ञान-वापी के पास गया। यहाँ मैंने ईश्वर की खोज की। वह होगा; पर मुझे न मिला। इससे मैं मन-ही-मन घुट रहा था। ज्ञान-वापी के पास भी गन्दगी देखी। भेंट रखने की मेरी जरा भी इच्छा न हुई, इसलिए मैंने तो सचमुच ही एक पाई वहाँ चढ़ाई। इस पर पण्डा जी उखड़ पडे। उन्होंने पाई उठाकर फेंक दी और दो-चार गालियाँ सुनाकर बोले—"तू इस तरह अपमान करेगा तो नरक में पड़ेगा।"

"चुप रहा। मैंने कहा—"महाराज। मेरा तो जो होना होगा वह होगा, पर आपके मुँह से हलकी बात शोभा नहीं देती। यह पाई लेना हो तो लें वर्ना इसे भी गँवायेंगे।" "जा, तेरी पाई मुझे नहीं चाहिए" कह कर उन्होंने ज्यादा भला-बुरा कहा। मै पाई लेकर चलता हुआ। मैंने सोचा कि महाराज ने पाई गँवाई और मैंने बचा ली। पर महाराज पाई खोने वाले न थे। उन्होंने मुझे फिर बुलाया। और कहा—"अच्छा रख दे, मै तेरे जैसा नहीं होना चाहता। मैं न लूँ तो तेरा बुरा होगा।"

लम्बी साँस लेकर चलता बना। इसके

हूँ, पर वह तो तब, जब महात्मा

चुका था। इसलिए १९०२ के अनुभव भला कैसे मिलते? खुद मेरे ही दर्शन करने वाले मुझे क्या दर्शन करने देते? महात्मा के दुःख तो मुझ-जैसे महात्मा ही जान सकते हैं। किन्तु गन्दगी और हो-हल्ला तो जैसे-के-तैसे ही वहाँ देखे।

"परमात्मा की दया पर जिसे शंका हो, वह ऐसे तीर्थ-क्षेत्रों को देखे। वह महायोगी अपने नाम पर होनेवाले कितने ढोंग, अधर्म और पाखण्ड इत्यादि को सहन करते हैं। उन्होंने तो कह रक्खा है:—

ये यथा मां प्रपद्यंते तांस्तथैव भजाम्यहम्।

अर्थात् जैसा करना वैसा भरना। कर्म को कौन मिथ्या कर सकता है? फिर भगवान् को बीच में पड़ने की क्या ज़रूरत है? वह तो अपने कानून बतलाकर अलग हो गया।

श्रीमती बेसेण्ट के दर्शन

"यह अनुभव लेकर मैं मिसेज़ बेसेण्ट के दर्शन करने गया। वह अभी बीमारी से उठी थीं। यह मैं जानता था। मैंने अपना नाम पहुँचाया। वह तुरन्त मिलने आईं। मुझे तो सिर्फ दर्शन ही करने थे। इसलिए मैंने कहा—

"मुझे आपकी तबियत का हाल मालूम है, मैं तो सिर्फ आपके दर्शन करने आया हूँ। तबियत खराब होते हुए भी आपने मुझे दर्शन दिये, केवल इसी से मैं सन्तुष्ट हूँ, अधिक कष्ट मैं आपको नहीं देना चाहता।

"इसके बाद मैंने उनसे बिदा ली।"

गोखले के पत्र में भी वही ध्वनि

गांधी जी काशी, आगरा, जयपुर, पालनपुर होते हुए २६ फरवरी १९०२ को राजकोट पहुंचे। वहां से ४ मार्च को जो पत्र उन्होंने गोपालकृष्ण गोखले को लिखा था उसमें भी काशी के सम्बन्ध में उनके मन पर पड़े बुरे प्रभाव की ध्वनि है:—

"गरीब मुसाफिरों के लिए बनारस शायद सबसे बुरा स्टेशन है। रिश्वत का दौरदौरा है। जबतक आप पुलिस सिपाहियों को घूस देने के लिए तैयार न हों तबतक अपना टिकट पाना बहुत कठिन है। वे दूसरों के साथ-साथ मेरे पास भी कई बार आये और बोले कि अगर हमें इनाम (या रिश्वत?) दें तो हम आपके टिकट खरीद देंगे। कई लोगों ने इस प्रस्ताव का फायदा उठाया। हममें से जिन्होंने यह मंजूर नहीं किया उन्हें खिड़की खुलने के बाद भी करीब-करीब एक घण्टे तक राह देखनी पड़ी। तब कहीं टिकट मिले। यदि हम कानून के इन संरक्षकों

को एक-दो ठोकरो का उपहार लिये विना ही वैसा कर पाये तो यह हमारा सौभाग्य ही समझिए। इसके विपरीत मुगलसराय का टिकट-मास्टर वहुत सज्जन था। उसने कहा कि मैं राजा और रंक में भेद नहीं करता।"

यह है गाधी जी की दृष्टि मे १६०२ ई० की काशी।

३. हरद्वार-वर्णन : १९१५

शीघ्र ही दक्षिण अफ्रीका मे ऐसी परिस्थिति उत्पन्न हुई कि २० नवम्वर १६०२ को गाधीजी पुन· वहा के लिए वम्वई से रवाना हुए और तव से सत्याग्रह, जन-सेवा, आश्रम-जीवन के विविध प्रयोगो मे वहा ऐसे लगे कि १६१४ तक भारत आने का अवसर ही नही आया। १६१४ के अन्तिम भाग मे दक्षिण अफ्रीका का प्रश्न सुलझ जाने और गाधी-स्मट्स समझौता हो जाने पर उन्होंने अपने पुत्र मणि-लाल को वहा के काम देखने को छोड़ दिया और स्वदेश के लिए रवाना हुए। ६ जनवरी १६१५ शनिवार के दिन वह वम्वई पहुचे थे।

गोखले की सलाह थी कि इतने दिनो तक देश से वाहर रहने के कारण पहिले घूम-घूम कर यहा की स्थिति का अध्ययन करो, फिर किसी काम-धाम का निश्चय करना। तदनुसार ६ मार्च १६१५ शनिवार को सकुटुम्व शान्ति-निकेतन पहुचे, क्योंकि वहा गाधीजी के कई शिष्य और आत्मीय रह रहे थे। चार्ली एण्डरूज भी वही थे जो गाधी जी के परम स्नेही और मित्र थे। ६ से ११ तक शान्ति-निकेतन रहकर १२ मार्च को कलकत्ता होते हुए रगून गये। २८ मार्च को कलकत्ता लौटे और ३१ मार्च को फिर वोलपुर, शान्ति-निकेतन आ गये।

इस साल १२ वर्ष के अन्तर से पडनेवाला महाकुम्भ हरद्वार मे था। उसके प्रति कुछ उत्सुकता थी; गुरुकुल के महात्मा मुंशीराम (वाद मे स्वामी श्रद्धानन्द) से मिलने को भी आतुर थे। एण्डरूज ने उन्हें भारत मे जिन तीन आदमियो से मिलने का आग्रह किया था उनमे एक महात्मा मुशीराम भी थे।

हरद्वार में

गाधी जी कस्तूर वा के साथ ५ अप्रैल, १६१५ सोमवार की शाम हरद्वार पहुचे। उनकी १६१५ की हस्तलिखित डायरी से पता चलता है कि यहा पहुचकर वह श्रवणनाथ के वगीचे मे ठहरे और प्रसिद्ध काली कमलीवाले वावा रामनाथ से मुलाकात की।

६ अप्रैल मंगलवार की सुबह गुरुकुल देखने गये। महात्मा मुंशीराम से भेंट की और उनकी बैलगाड़ी से वापिस हुए। ७ अप्रैल को ऋषिकेश, लक्ष्मण झूला गये। स्वर्गाश्रम देखा। स्वामी नारायण एवं मंगलनाथ स्वामी से भेंट हुई। ८ को ज्वालापुर महाविद्यालय, हिन्दू सभा और ऋषिकुल देखा। इसी दिन गुरुकुल के ब्रह्मचारियों की ओर से उनका स्वागत किया गया। इस अवसर पर महात्मा मुंशीराम जी ने कहा था—मुझे आशा है कि श्री गांधी भारत के लिए ज्योतिस्तम्भ बन जायेंगे। उनकी वाणी आगे चलकर पूरी तरह सफल और सार्थक सिद्ध हुई।

नवीन व्रत

उनकी यह यात्रा इस दृष्टि से वहुत महत्वपूर्ण है कि यही ९ अप्रैल वृहस्पतिवार को उन्होंने हिन्दुस्तान मे २४ घण्टे में पांच ही वस्तुओं का और वह भी सूर्यास्त से पहिले, आहार करने का व्रत लेने का निश्चय किया जो दूसरे दिन से आरम्भ हो गया। पानी पांच वस्तुओं में शामिल नही था किन्तु इलायची इत्यादि उन्ही में गिनी गई। ११ को मोहिनी आश्रम, रामकृष्ण मिशन इत्यादि देखकर दिल्ली के लिए रवाना हो गये।

हरद्वार-यात्रा मे उन्हें पाखण्ड, दम्भ तथा तीर्थों की जिस गन्दगी का अनुभव हुआ, वह सब अब उन्हीं के शब्दों में सुनिए:

हरद्वार कुम्भ

"इस साल (१९१५) हरद्वार में कुम्भ का मेला पड़ता था। उसमें जाने की मेरी प्रवल इच्छा थी। फिर मुझे महात्मा मुंशीराम जी के दर्शन भी करने थे। कुम्भ के मेले के अवसर पर गोखले के सेवक-समाज ने एक बड़ा स्वयं-सेवक दल भेजा था। उसकी व्यवस्था का भार श्री हृदयनाथ कुंजरू को सौपा गया था। स्वर्गीय डाक्टर देव भी उसमें थे। यह बात तय पाई कि उन्हे मदद देने के लिए मैं भी अपनी टुकड़ी को ले जाऊं। इसलिए मगनलाल गांधी शान्ति-निकेतन वाली हमारी टुकड़ी को लेकर मुझसे पहले हरद्वार पहुंच गये थे। मैं भी रंगून से लौटकर उनके साथ शामिल हो गया।

कलकत्ता से हरद्वार

"कलकत्ते से हरद्वार पहुंचते हुए रेल में खूब आफत उठानी पड़ी। डिब्बों में कभी-कभी तो रोशनी तक भी न होती। सहारनपुर से तो यात्रियों को मवेशी की तरह डब्बों में भर दिया गया था। खुले डब्बे, ऊपर से मध्याह्न का सूर्य तप

रहा था, नीचे लोहे की फर्श गरम हो रही थी। इस मुसीबत का क्या पूछना? फिर भी भावुक हिन्दू प्यास से गला सूखने पर भी इस्लामी पानी आता तो नही पीते। जब हिन्दू-पानी की आवाज आती तभी पानी पीते। यही भावुक हिन्दू दवा मे जब डाक्टर शराब देते हैं, मुसलमान या ईसाई पानी देते हैं, मास का सत्व देते है, तब उसे पीने मे सकोच नही करते। उसके सम्बन्ध मे तो पूछ-ताछ करने की आवश्यकता ही नही समझते।

भगी का काम ही मेरा मुख्य काम

"हमने यह बात शान्ति-निकेतन मे ही देख ली थी कि हिन्दुस्तान मे भगी का काम करना हमारा विशेष कार्य हो जायगा। स्वयसेवको के लिए वहा किसी धर्म-शाला मे तम्बू ताने गये थे। पाखाने के लिए डाक्टर देव ने गड्ढे खुदवाये थे, परन्तु उनकी सफाई का इन्तजाम तो वह उन्ही थोडे से मेहतरो से करा सकते थे, जो ऐसे समय वेतन पर मिल सकते थे। ऐसी दशा मे मैंने यह प्रस्ताव किया कि गड्ढों मे मल को समय-समय पर मिट्टी से ढाकना तथा और तरह से सफाई रखना, यह काम फिनिक्स के स्वयसेवको के जिम्मे किया जाय। डाक्टर देव ने इसे स्वीकार किया। इस सेवा को मागकर लेनेवाला तो था मैं, परन्तु उसे पूरा करने का बोझा उठानेवाले थे मगनलाल गाधी।

दर्शनाभिलाषियो की भीड

"मेरा काम वहा क्या था? डेरे मे बैठकर जो अनेक यात्री आते उन्हें दर्शन देना और उनके साथ धर्म-चर्चा तथा दूसरी बातें करना। दर्शन देते-देते मैं घबरा उठा, उससे मुझे एक मिनट की भी फुरसत नही मिलती थी। मैं नहाने जाता तो वहा भी मुझे दर्शनाभिलाषी अकेला नही छोडते और फलाहार के समय तो एकान्त मिल ही कैसे सकता था? तम्बू मे कहीं भी एक पल के लिए अकेला न बैठता। दक्षिण अफ्रीका मे जो कुछ सेवा मुझसे हो सकी उसका इतना गहरा असर सारे भारत-खण्ड मे हुआ होगा, यह बात मैंने हरद्वार मे ही अनुभव की।

चक्की के दो पाटो के बीच

"मैं तो मानो चक्की के दोनो पाटो मे पिसने लगा। जहा लोग पहचानते नही वहा तीसरे दर्जे के यात्री के रूप मे मुसीबत उठाता, जहा ठहर जाता वहा दर्शनार्थियो के प्रेम से घबरा जाता। दो मे से कौन सी स्थिति अधिक दयाजनक है, यह मेरे लिए कहना बहुत बार मुश्किल हुआ है। हा, इतना तो जानता हू कि दर्श-

नार्थियों के प्रदर्शन से मुझे गुस्सा आया है और मन ही मन तो उससे अधिक वार सन्ताप हुआ है। तीसरे दर्जे की मुसीवतों से सिर्फ मुझे कष्ट ही उठाने पड़े हैं, गुस्सा मुझे शायद ही आया हो, और कष्ट से तो मेरी उन्नति ही हुई है।

पाखण्ड के दर्शन

"इस समय मेरे शरीर में घूमने-फिरने की शक्ति अच्छी थी। इससे मैं इधर-उधर ठीक-ठीक घूम-फिर सका। उस समय मैं इतना प्रसिद्ध नहीं हुआ था कि जिससे रास्तों में चलना भी मुश्किल होता हो। इस भ्रमण में मैंने लोगों की धर्म-भावना की अपेक्षा उनकी लापरवाही, अधीरता, पाखण्ड और अव्यवस्थितता अधिक देखी। साधुओं के और जमातों के तो दल टूट पड़े थे। ऐसा मालूम होता था मानों वे महज़ मालपुए और खीर खाने के लिए ही जन्मे हों। यहाँ मैंने पांच पांव वाली गाय देखी। उसे देखकर मुझे बड़ा आश्चर्य हुआ, परन्तु अनुभवी आदमियों ने तुरन्त मेरा अज्ञान दूर कर दिया। यह पांच पैरों वाली गाय तो दुष्ट और लोभी लोगों का शिकार थी। जीते बछड़े के पैर काटकर गाय के कन्धे का चमड़ा चीर कर उसमें चिपका दिया जाता था और इस दोहरी घातक क्रिया के द्वारा भोले-भाले लोगों को दिन-दहाड़े ठगने का उपाय निकाला गया था। कौन हिन्दू ऐसा है, जो इस पाँच-पांव वाली गाय के दर्शन के लिए उत्सुक न हो? इस पाँच-पांव वाली गाय के लिए वह जितना ही दान दे उतना ही कम।

"अब कुम्भ का दिन आया। मेरे लिए वह घड़ी धन्य थी। परन्तु मैं तीर्थ-यात्रा की भावना से हरद्वार नही गया था। पवित्रता आदि के लिए तीर्थक्षेत्र में जाने का मोह मुझे कभी न रहा। मेरा ख्याल यह था कि सत्रह लाख आदमियों में सभी पाखण्डी नही हो सकते। यह कहा जाता था कि मेले में सत्रह लाख आदमी इकट्ठे हुए थे। मुझे इस विषय में कुछ सन्देह नहीं था कि इनमें असंख्य लोग पुण्य कमाने के लिए, अपने को शुद्ध करने के लिए आये थे। परन्तु इस प्रकार की श्रद्धा से आत्मा की उन्नति होती होगी, यह कहना असम्भव नही तो मुश्किल जरूर है।

आहार-सम्बन्धी व्रत का निश्चय

"बिछौने पर पड़ा-पड़ा मैं विचार-सागर में डूब गया—चारों ओर फैले इस पाखण्ड में वे पवित्र आत्माएं भी तो हैं? वे लोग ईश्वर के दरबार में दण्ड के पात्र नही माने जा सकते। ऐसे समय हरद्वार में आना ही यदि पाप हो तो फिर मुझे प्रकट रूप से उसका विरोध करके कुम्भ के दिन तो हरद्वार अवश्य छोड़ देना चाहिए। यदि यहां आना और कुम्भ के दिन रहना पाप न हो तो मुझे कोई कठोर व्रत लेकर

इस प्रचलित पाप का प्रायश्चित्त करना चाहिए, आत्मशुद्धि करनी चाहिए। मेरा जीवन व्रतों पर रचा गया है, इसलिए कोई कठोर व्रत लेने का निश्चय किया। इसी समय कलकत्ता और रगून मे मेरे निमित्त यजमानो को जो अनावश्यक परिश्रम करना पडा उसका भी स्मरण हो आया। इस कारण मैंने भोजन की वस्तुओ की सख्या मर्यादित कर लेने का और शाम को अधेरे के पहले भोजन कर लेने का व्रत लेना निश्चित किया। मैंने सोचा कि यदि मैं अपने भोजन की मर्यादा नही रक्खूगा तो यजमानों के लिए बहुत असुविधाजनक होता रहूगा और सेवा करने के बजाय उनको अपनी सेवा करने मे लगाता रहूगा। इसलिए चौबीस घण्टो मे पाँच चीजो से अधिक न खाने का और रात्रि-भोजन त्यागने का व्रत ले लिया। दोनो की कठिनाई का पूरा-पूरा विचार कर लिया था। इन व्रतो मे एक भी अपवाद न रखने का निश्चय किया। बीमारी मे दवा के रूप मे ज्यादा चीजें लेना या न लेना, दवा को भोजन की वस्तु मे गिनना या न गिनना, इस सब बातो का विचार कर लिया और निश्चय किया कि खाने की कोई चीज पाँच से अधिक न लूगा। इन दो व्रतो को आज तेरह साल हो गये। इन्होंने मेरी खासी परीक्षा की है, परन्तु जहा एक ओर इन्होंने परीक्षा की है तहा मेरे लिए ढाल का भी काम दिया है। मैं मानता हू कि इन व्रतो ने मेरी आयु बढा दी है, इनकी बदौलत मेरी धारणा है कि मैं बहुत बार बीमारियो से बच गया हू।

लक्ष्मण-झूला

"पहाड-जैसे दीखनेवाले महात्मा मुन्शीराम के दर्शन करने और उनके गुरुकुल को देखने जब मैं गया तब मुझे बहुत शान्ति मिली। हरद्वार के कोलाहल और गुरुकुल की शान्ति का भेद स्पष्ट दिखाई देता था। महात्माजी ने मुझ पर भरपूर प्रेम की वृष्टि की। ब्रह्मचारी लोग मेरे पास से हटते ही नही थे। रामदेव जी से भी उसी समय मुलाकात हुई और उनकी कार्य-शक्ति को मैं तुरन्त पहचान सका था। यद्यपि हमारी मत-भिन्नता हमे उसी समय दिखाई पड गई थी, फिर भी हममें परस्पर स्नेह-गाँठ बँध गई। गुरुकुल मे औद्योगिक शिक्षण का प्रवेश करने की आवश्यकता के सम्बन्ध में रामदेव जी तथा दूसरे शिक्षको के साथ मे मेरा ठीक-ठीक वार्तालाप भी हुआ। इससे जल्दी ही गुरुकुल को छोडते हुए मुझे दु:ख हुआ।

"लक्ष्मण-झूला की तारीफ मैंने बहुत सुन रक्खी थी। ऋषीकेश गये बिना हरद्वार न छोडने की सलाह मुझे बहुत से लोगो ने दी। मैंने वहा पैदल जाना चाहा। एक मजिल ऋषिकेश की और दूसरी लक्ष्मण-झूले की की।

"ऋषीकेश में बहुत से संन्यासी मिलने के लिए आये थे। उनमें से एक को मेरे जीवन-क्रम में बहुत दिलचस्पी पैदा हुई। फिनिक्स-मण्डली मेरे साथ थी ही। हम सबको देखकर उन्होंने बहुतेरे प्रश्न पूछे। हम लोगों में धर्म-चर्चा भी हुई। उन्होने देख लिया कि मेरे अन्दर तीव्र धर्म-भाव है। मैं गंगा-स्नान करके आया था और मेरा शरीर खुला था। उन्होंने मेरे सिर पर न चोटी देखी और न वदन पर जनेऊ। इससे उन्हे दुःख हुआ और उन्होने कहा :

"आप हैं तो आस्तिक, परन्तु शिखा-सूत्र नहीं रखते, इससे हम-जैसों को दुःख होता है। हिन्दू-धर्म की ये दो बाह्य संज्ञाएं है और प्रत्येक हिन्दू को इन्हें धारण करना चाहिए।"

"जव मेरी उम्र कोई दस वर्ष की रही होगी तब पोरबन्दर मे ब्राह्मणों के जनेऊ से वंधी चाबियों की झकार मै सुना करता था और उसकी मुझे ईर्ष्या भी होती थी। मन मे यह भाव उठा करता कि मै इसी तरह जनेऊ में चाबिया लटकाकर झकार किया करू तो अच्छा हो। काठियावाड़ के वैश्य कुटुम्बों में उस समय जनेऊ का रिवाज नही था। हां, नये सिरे से इस बात का प्रचार अलबत्ता हो रहा था कि द्विज-मात्र को जनेऊ अवश्य पहनना चाहिए। उसके फल-स्वरूप गांधी-कुटुम्ब के कितने ही लोग जनेऊ पहनने लगे थे। जिस ब्राह्मण ने हम दो-तीन सगे-सम्वन्धियों को रामरक्षा का पाठ सिखाया था, उसी ने हमे जनेऊ पहनाया। मुझे अपने पास चाबियां रखने का कोई प्रयोजन नही था। तो भी मैने दो-तीन चाबियां लटका ली। जब वह जनेऊ टूट गया तब उसका मोह उतर गया था या नही, यह तो याद नही पड़ता, परन्तु मैंने नया जनेऊ फिर नही पहना।

"वड़ी उमर में दूसरे लोगों ने फिर हिन्दुस्तान में तथा दक्षिण अफ्रीका में जनेऊ पहनाने का प्रयत्न किया था। परन्तु उनकी दलीलों का असर मेरे दिल पर नही हुआ। शूद्र यदि जनेऊ नही पहन सकता तो फिर दूसरे लोगों को क्यो पहनना चाहिए? जिस वाह्य चिह्न का रिवाज हमारे कुटुम्ब में नही था उसे धारण करने का एक भी सवल कारण मुझे नही दिखाई दिया। मुझे जनेऊ से अरुचि नही थी। परन्तु उसे पहनने के कारण का अभाव मालूम होता था। हां, वैष्णव होने के कारण मैं कण्ठी जरूर पहनता था। शिखा तो घर के बड़े-बूढ़े हम भाइयों के सिर पर रखवाते थे, परन्तु विलायत में सिर खुला रखना पड़ता था। गोरे लोग देखकर हँसेंगे और हमें जंगली समझेंगे, इस शर्म से शिखा कटा डाली थी। मेरे भतीजे छगनलाल गांधी, जो दक्षिण अफ्रीका मे मेरे साथ रहते थे, वड़े भाव के साथ शिखा रख रहे थे। परन्तु इस वहम से कि उनकी शिखा वहां सार्वजनिक कामों मे

जाना जायेगा, मैंने इसके डर से उसे कटवा भी दी थी। इस तरह शिखा से मुझे उस समय शर्म लगती थी।

"इन स्वामी जी से मैंने यह सब कथा सुनाकर कहा :

"जनेऊ तो मैं धारण नही करूगा, क्योंकि असंख्य हिन्दू जनेऊ नही पहनते है फिर भी वे हिन्दू समझे जाते है। मैं अपने लिए उसकी जरूरत नही देखता। फिर जनेऊ धारण करने के मानी है—दूसरा जन्म लेना अर्थात् हम विचारपूर्वक शुद्ध हो, ऊर्ध्वगामी हो। आज तो हिन्दू-समाज और हिन्दुस्तान दोनो गिरी दशा मे है। इसलिए हमे जनेऊ पहनने का अधिकार ही कहा है? जब हिन्दू-समाज अस्पृश्यता का दोष धो डालेगा, ऊच-नीच का भेद भूल जायगा, दूसरी गहरी बुराइयो को मिटा देगा, चारो तरफ फैले अधर्म और पाखण्ड को दूर कर देगा, तब उसे भले ही जनेऊ पहनने का अधिकार हो। इसलिए जनेऊ धारण करने की आपकी बात तो मुझे पट नही रही है। हा, शिखा-सम्बन्धी आपकी बात पर मुझे अवश्य विचार करना पड़ेगा। शिखा तो मैं रखता था। परन्तु शर्म और डर से उसे कटा डाला। मैं समझता हू कि वह तो मुझे फिर धारण कर लेनी चाहिए। अपने साथियो के साथ इस बात का विचार कर लूगा।

"स्वामी जी को जनेऊ-विषयक मेरी दलील न जची। जो कारण मैंने जनेऊ न पहनने के पक्ष मे पेश किये, वे उन्हे पहनने के पक्ष मे दिखाई दिये। अस्तु। जनेऊ के सम्बन्ध मे उस समय ऋषिकेश मे जो विचार मैंने प्रदर्शित किया था वह आज भी प्राय वैसा ही कायम है। जब तक ससार मे भिन्न-भिन्न धर्मो का अस्तित्व है तबतक प्रत्येक धर्म के लिए बाह्य सज्ञा की आवश्यकता भी शायद हो, परन्तु जब वह बाह्य सज्ञा आडम्बर का रूप धारण कर लेती है अथवा अपने धर्म को दूसरे धर्म से पृथक् दिखलाने का साधन हो जाती है, तब वह त्याज्य है। आजकल मुझे जनेऊ हिन्दू-धर्म को ऊचा उठाने का साधन नही दिखाई पडता। इसलिए मैं उसके सम्बन्ध मे उदासीन रहता हू।

"शिखा के त्याग की बात जुदी है। वह शर्म और भय के कारण हटाई गई थी, इसलिए अपने साथियो के साथ विचार करके मैंने उसे धारण करने का निश्चय किया। पर अब हमको लक्ष्मण-झूले की ओर चलना चाहिए।"

प्राकृतिक शोभा बनाम गन्दगी

"ऋषीकेश और लक्ष्मण-झूले के प्राकृतिक दृश्य मुझे बहुत पसन्द आये। हमारे पूर्वजो की प्राकृतिक कला को पहचानने की क्षमता के प्रति और कला को धार्मिक स्वरूप देने की उनकी दूरदर्शिता के प्रति मेरे मन मे बडा आदर उत्पन्न

हुआ। परन्तु दूसरी ओर मनुष्य की कृति को वहाँ देख चित्त को शान्ति न हुई। हरद्वार की तरह ऋषिकेश में भी लोग रास्तों को और गंगा के सुन्दर किनारों को गन्दा कर डालते हैं। गंगा के पवित्र पानी को विगाड़ते हुए भी उन्हें कुछ संकोच न होता था। दिशा-जंगल जानेवाले आम जगह और रास्तों पर ही वैठ जाते, यह देखकर मेरे चित्त को वड़ी चोट पहुँची।

"लक्ष्मण-झूला जाते हुए रास्ते में लोहे का एक झूलता हुआ पुल देखा। लोगों से मालूम हुआ कि पहले यह पुल रस्सी का और वहुत मज़वूत था। उसे तोड़कर एक उदार-हृदय मारवाड़ी सज्जन ने वहुत रुपये लगाकर यह लोहे का पुल बना दिया और उसकी कुंजी सौंप दी सरकार को। रस्सी के पुल का तो मुझे कुछ खयाल नही हो सकता, परन्तु यह लोहे का पुल तो वहाँ के प्राकृतिक सौन्दर्य को कलुषित करता था और वहुत भद्दा मालूम होता था। फिर यात्रियों के इस रास्ते की कुंजी सरकार को सौप दी गई, यह वात तो मेरी उस समय की वफादारी को भी असह्य मालूम हुई।

यही स्वर्गाश्रम है!

"वहाँ से भी अधिक दु:खद दृश्य स्वर्गाश्रम का था। टीन के तवेले-जैसे कमरों का नाम स्वर्गाश्रम रखा गया था। कहा गया था कि यह साधकों के लिए वनाया गया है। परन्तु उस समय शायद ही कोई साधक वहाँ रहता हो। वहाँ की मुख्य इमारत में जो लोग रहते थे उन्होंने भी मेरे दिल पर अच्छी छाप नहीं डाली।

"जो हो, इसमें सन्देह नही कि हरद्वार के अनुभव मेरे लिए अमूल्य सावित हुए। मैं कहाँ जाकर बसूं और क्या करूँ, इसका निश्चय करने में हरद्वार के अनुभवों ने मुझे वहुत सहायता दी।"

वृन्दावन

हरद्वार से दिल्ली गांधी जी १२ अप्रैल को पहुँचे। दो दिन दिल्ली देखने तथा लोगों से मिलने के बाद, १४ अप्रैल, बुधवार की सुबह वृन्दावन के लिए प्रस्थान किया। दोपहर को वहाँ पहुँचे। शीघ्रता के साथ प्रेम महाविद्यालय, ऋषि-कुल, गुरुकुल, रामकृष्ण मिशन देखा। इस तीर्थ को भी उन्होंने गन्दा ही पाया। रात को मथुरा लौटकर मद्रास के लिए रवाना हो गये।

———

४. १९१५ की डायरी के कुछ पन्ने

उत्तर प्रदेश के सम्बन्ध में बापू की डायरी

अप्रैल ५, सोमवार

शाम को हरद्वार पहुँचा। सरवननाथ के बगीचे मे ठहरे। काली कमली वाले बाबा रामनाथ से मुलाकात।

अप्रैल ६, मगल

सवेरे गुरुकुल देखने गया। एक स्वयसेवक साथ आया। महात्मा जी से भेंट। उनकी बैलगाडी में वापस आया। जमनादास मेरे साथ था; वह गुरुकुल मे रुक गया। लड़के ऋषिकेश गये। अखण्डानन्द, पडियार आदि मिले। मूल जी तापीदास—गुरुकुल मे।

अप्रैल ७, बुध

ऋषिकेश गया। लक्ष्मण झूले की यात्रा। लटकता पुल देखा। स्वर्गाश्रम देखा। अनेक विचार आये। मंगलदास जी से मुलाकात। शिखासूत्र के विषय में चर्चा। स्वामी नारायण से भेंट।

अप्रैल ८, बृहस्पति

ज्वालापुर महाविद्यालय देखने गया। हिन्दू सभा देखी। ऋषिकुल के दर्शन। गुरुकुल के विद्यार्थियो की ओर से अभिनन्दन। राव जी भाई आये। कोतवाल भी आये।

अप्रैल ९, शुक्रवार

हिन्दुस्तान मे २४ घण्टे में पाँच ही वस्तुओ का और वह भी सूर्यास्त से पहले आहार करने का व्रत लिया। पानी पाँच वस्तुओ मे शामिल नही। इलायची आदि पाँच वस्तुओ मे आती है। मूंगफली तथा उसके तेल को एक ही वस्तु मानूंगा। रावजी भाई ने दूध और दूध से बने पदार्थों (को न लेने) का व्रत लिया।

अप्रैल १०, शनिवार

उक्त व्रत आज से लिया। देखिए पिछली तारीख। दूसरी सस्थाएँ देखी।

घारसीमल से ऋषिकेश जाते समय मुलाकात हुई। वह निकट सम्पर्क में आता जा रहा है।

अप्रैल ११, रविवार

मोहिनी आश्रम गया। रामकृष्ण मिशन देखा। दिल्ली जाने के लिए रवाना। सोसाइटी के सदस्यों के साथ विचार-विमर्श।

(११, १२, १३ दिल्ली में)

१४ अप्रैल, बुधवार

सबेरे वृन्दावन जाने के लिए दिल्ली से प्रस्थान किया। वृन्दावन दोपहर को पहुँचा। प्रेम महाविद्यालय, ऋषिकुल, गुरुकुल, रामकृष्ण मिशन देखने गया। शहर की गन्दगी। रात को मथुरा वापस आया और मद्रास की गाड़ी पकड़ी।

—गुजराती। गांधी जी के स्वाक्षरों में लिखी मूल गुजराती प्रति (जी० एन० ८२२१) से]

: तीन :

निर्झर

[भाषण, भेंट एवं सन्देश]

१. हरद्वार में : गुरुकुल कांगड़ी के मानपत्र का उत्तर

गांधी जी सपत्नीक कुम्भ पर्व के अवसर पर हरद्वार गये। ८ अप्रैल को गुरुकुल कांगड़ी गये। प्राध्यापक महेशचरण सिंह ने ब्रह्मचारियो के एक दल के साथ उनका स्वागत किया। इस अवसर पर एक मानपत्र दिया गया जिसे ब्रह्मचारी बुद्धदेव ने पढ़ा। मानपत्र के उत्तर में गांधी जी ने कहा:—

"महात्मा मुशीराम का जो प्रेम मेरे प्रति है उसके लिए उनका कृतज्ञ हू। केवल उ ही से मिलने हरद्वार आया हू। श्री ऐण्ड्रूज ने भारत के उन तीन महापुरुषों में उनका नाम गिनाया था जिनसे मुझे मिलना चाहिए। महात्मा जी ने एक पत्र में मुझे 'भाई' कहा है। इसका मुझे गर्व है। आप लोग प्रार्थना करें कि मैं उनका भाई बनने के योग्य हो सकू। २८ वर्षों के बाद अपने देश मे आया हू अत' कोई सलाह नही दे सकता। मैं तो मार्गदर्शन प्राप्त करने आया हू। जो भी मातृभूमि की सेवा मे लगा है ऐसे प्रत्येक व्यक्ति के सम्मुख झुकने को तय्यार हू। अपने देश की सेवा मे अपने प्राण देने के लिए तय्यार हू। अब विदेश नही जाऊगा। मेरे एक भाई (लक्ष्मीदास गाधी) चल बसे। मैं चाहता हू कोई मेरा मार्गदर्शन करे। आशा है, महात्मा जी उनका स्थान ले लेंगे और मुझे भाई मानेंगे।"

"ब्रह्मचारियो ने अपने अफ्रीकावासी भारतीय भाइयो के सहायतार्थ जो धन भेजा है इसके लिए उन्हे धन्यवाद देता हू। गुरुकुल मे फीनिक्सवासी छात्रो के प्रति प्रेम और स्नेह का व्यवहार किये जाने पर ब्रह्मचारियो का और महात्मा जी (मुशीराम जी) का विशेष आभार मानता हू। मुझे अपनी गुरुकुल की तीर्थयात्रा से बहुत सन्तोष हुआ है। आपका जो उद्देश्य है वही हम सबका भी है। ईश्वर हमारे पवित्र कार्य को सफल करें।"

— हिन्दी। हरद्वार, ८।४।१९१५। अंग्रेजी से। ['हिन्दू', १२।४।१९१५। सं० गां० वा० भाग १३, पृष्ठ ४९]

२. हरद्वार गुरुकुल

मेरा हरद्वार गुरुकुल मे भाई श्री मुशीराम से अच्छा सम्बन्ध हो गया है।

वहां मेरे पुत्र और अन्य मित्र रहे थे। और वहां उनको जो लाभ हुआ और उनको जो स्नेह मिला, वह भुलाया नही जा सकता।

——सूरत आर्यसमाज के वार्षिकोत्सव के अवसर पर भाषण करते हुए। २।१।-१९१६। 'गुजराती' ९।१।१९१६।]

३. भाषण : काशी हिन्दू विश्वविद्यालय में

[यह भाषण काशी हिन्दू विश्वविद्यालय के उद्घाटन-समारोह पर ४ फरवरी को दिया गया था। परन्तु ६ फरवरी को गांधी जी ने स्वयं ही उसका सम्पादन करके इसे तैयार किया था।——सम्पा०]।

मित्रो, यहां आते हुए रास्ते में मुझे बहुत देर लग गई। मैं इसके लिए क्षमा-याचना करता हूं। आप मुझे खुशी से माफ भी कर देंगे क्योंकि इस देरी के लिए न मैं जिम्मेदार हूं, न कोई और आदमी (हँसी)। सच कहो तो मैं पिंजरे का पंछी हूं और मेरी देख-रेख करने वाले लोग अत्यधिक ममता के कारण जीवन के एक महत्वपूर्ण पहलू अर्थात् शुद्ध संयोग की बात को भूल जाते है। इस बार भी हम लोग, मैं, मेरे निरीक्षक और मुझे उठाकर चलनेवालों को एक के बाद एक जिन दुर्घटनाओं का सामना करना पड़ा, उसकी पूर्व कल्पना करके तो कोई इन्तजाम नही किया गया था, इसीलिए इतनी देरी हो गई।

मित्रो, अभी-अभी जो महिला भाषण देकर बैठी हैं उनकी अद्भुत वाक्‌शक्ति के प्रभाव मे आकर आप लोग कृपया इस बात पर विश्वास न कर लें कि जो विश्वविद्यालय अभी तक पूरा बना और उठा भी नहीं है, वह कोई परिपूर्ण संस्था है; और अभी जो विद्यार्थी यहां आये तक नही हैं वे शिक्षा-सम्पादन करके यहां से एक महान साम्राज्य के नागरिक होकर निकल चुके है। मन पर ऐसी कोई छाप लेकर आप लोग यहा से न जायँ और जिनके सामने आज मै बोल रहा हूं वे विद्यार्थी-गण तो एक क्षण के लिए भी इस बात को मन में जगह न दें कि जिस आध्यात्मिकता के लिए इस देश की ख्याति है और जिसमें उसका कोई सानी नहीं है उस आध्यात्मिकता का सन्देश बातें बघार कर दिया जा सकता है। अगर आपको ऐसा कुछ खयाल हो तो मेहरबानी करके मेरी इस बात पर भरोसा कीजिए कि आपका वह खयाल गलत है। मुझे आशा है कि किसी दिन भारत संसार को यह सन्देश देगा, किन्तु केवल वचनों के द्वारा वह सन्देश कभी नही दिया जा सकेगा। मैं भाषणों और तकरीरों से ऊब गया हूं। अलबत्ता पिछले दो दिनों में यहां जो

भाषण दिये गये हैं, उन्हे मैं इस तरह की तकरीरो से अलग मानता हू, क्योकि वे जरूरी थे। फिर भी मैं यह कहने की धृष्टता कर रहा हू कि हम भाषण देने की कला के लगभग शिखर पर जा पहुँचे हैं और अब आयोजको को देख लेना और भाषणो को सुन लेना ही पर्याप्त नही माना जाना चाहिए। अब हमारे मनों में स्फुरण होना चाहिए, हाथ-पाँव हिलने चाहिए। पिछले दो दिनों मे हमें बतलाया गया कि अगर भारतीय जीवन की सादगी कायम रखनी है तो हमे अपने हाथ-पाँव और मन की गति मे सामञ्जस्य लाना आवश्यक है। वैसे यह भूमिका हुई, मैं कहना यह चाहता हू कि मुझे आज इस पवित्र नगर में, इस महान विद्यापीठ के प्रागण में अपने ही देशवासियो से एक विदेशी भाषा में बोलना पड रहा है। यह बडी अप्रतिष्ठा और शर्म की बात है। पिछले दो दिनो मे यहा जो भाषण दिये गये हैं यदि उनमे लोगो की परीक्षा ली जाय और मैं परीक्षक होऊ तो निश्चित है कि ज्यादातर लोग फेल हो जाय। क्यो ? इसलिए कि इन व्याख्यानो ने उनके हृदय नही छुए। मैं गत दिसम्बर मे राष्ट्रीय महासभा के अधिवेशन में मौजूद था। वहा बहुत अधिक तादाद मे लोग इकट्ठा हुए थे। आपको ताज्जुब होगा कि बम्बई के वे तमाम श्रोता केवल उन भाषणो से प्रभावित हुए जो हिन्दी में दिये गये थे। ध्यान दीजिए यह बम्बई की बात है, बनारस की नहीं, जहा सभी लोग हिन्दी बोलते हैं। बम्बई प्रान्त की भाषाओ[1] और हिन्दी मे उतना फर्क नही है जैसा अग्रेजी और भारतीय भाषाओं मे है और इसलिए वहां के श्रोता हिन्दी बोलनेवाले की बात ज्यादा आत्मीय भाव से समझ सके। मुझे आशा है कि इस विश्वविद्यालय मे विद्यार्थियो को उनकी मातृभाषा के माध्यम से शिक्षा देने का प्रबन्ध किया जायगा। हमारी भाषा हमारा ही प्रतिबिम्ब है और इसलिए यदि आप मुझसे यह कहे कि हमारी भाषाओ मे उत्तम विचार अभिव्यक्त किये ही नही जा सकते तब तो हमारा इस ससार से उठ जाना अच्छा है। क्या कोई व्यक्ति स्वप्न मे भी यह सोच सकता है कि अग्रेजी भविष्य मे किसी भी दिन भारत की राष्ट्रभाषा हो सकती है ? (नही, नही की आवाजें) फिर राष्ट्र के पावो मे यह बेडी किसलिए ? जरा सोचकर देखिए कि अग्रेजी भाषा मे अग्रेज बच्चो के साथ होड कराने मे हमारे बच्चो पर कितना वजन पडता है। पूना के कुछ प्रोफेसरो से मेरी बात हुई। उन्होंने बताया कि चूकि हर भारतीय विद्यार्थी को अग्रेजी के द्वारा ज्ञान-सम्पादन करना पडता है इसलिए

---

१. तब बम्बई प्रान्त में, सिन्ध, कच्छ, काठियावाड़, सौराष्ट्र और महाराष्ट्र का बहुत सा भाग आ जाता था। सिन्धी, गुजराती और मराठी समान रूप से महत्वपूर्ण भाषाएँ थीं।

उसे अपने जीवन के मूल्यवान वर्षों में से कम-से-कम छ: वर्ष अधिक नष्ट करने पड़ते हैं। हमारे स्कूलों और कालेजों से निकलनेवाले विद्यार्थियों की संख्या में इस छ: का गुणा कीजिए और फिर देखिए कि राष्ट्र के कितने हजार वर्ष बरबाद हो चुके हैं। हम पर आरोप लगाया जाता है कि हममें पहल करने का माद्दा नहीं है। हो भी कैसे सकता है? यदि हमें एक विदेशी भाषा पर अधिकार पाने के लिए जीवन के अमूल्य वर्ष लगा देने पड़ें तो फिर और हो क्या सकता है? और तो और हम इसमें भी सफल नही हो पाते। श्री हिगिन बाथम ने श्रोताओं को जितना प्रभावित किया, क्या कल और आज बोलनेवालों में एक भी अन्य वक्ता उतना प्रभावित कर सका? यह उन बोलनेवालों का कसूर नहीं था। सामग्री तो उनके भाषणों में भरपूर थी, लेकिन उनके भाषणों ने हमारा मन नहीं पकड़ा। कहा जाता है कि आखिरकार भारत के अंग्रेजीदां ही देश का नेतृत्व कर रहे हैं और वे ही राष्ट्र के लिए सब कुछ कर रहे है। अगर इसके विपरीत बात होती तो वह और भी भयानक होती, क्योंकि हमें शिक्षा के नाम पर केवल अंग्रेजी शिक्षा ही तो मिलती है। शिक्षा का कुछ-न-कुछ परिणाम तो निकलता ही है। किन्तु मान लीजिए हमने पिछले पचास वर्षों में अपनी-अपनी भाषाओं के जरिए शिक्षा पाई होती, तो हम आज किस स्थिति में होते? तो आज भारत स्वतन्त्र होता; तब हमारे पढ़े-लिखे लोग अपने ही देश में अजनबियों की तरह न रहते बल्कि देश के हृदय को छूने वाली वाणी बोलते; वे गरीब-से-गरीब लोगों के बीच काम करते और पचास वर्षों की उनकी उपलब्धि पूरे देश की विरासत होती। (तालियां) आज तो हमारी अर्धांगिनियां भी हमारे श्रेष्ठ विचारों की भागीदार नही है। प्रो० बसु[1] और प्रो० राय[2] तथा उनके शानदार आविष्कारों को ही लीजिए। क्या यह लज्जा की बात नही है कि जनता का उनसे कुछ लेना-देना नही है?

अब हम दूसरी बात ले। कांग्रेस ने स्वराज्य के बारे में एक प्रस्ताव पास किया है। यों तो मुझे विश्वास है कि अखिल भारतीय कांग्रेस और मुस्लिम लीग अपना कर्त्तव्य करेगी और कुछ-न-कुछ ठोस सुझावों के साथ सामने आयेगी, किन्तु जहां तक मेरा खयाल है मैं यह स्पष्ट रूप से कह देना चाहता हूं कि मुझे इस बात मे उतनी दिलचस्पी नही है कि वे क्या कुछ कर पाती हैं; जितनी इस बात में है कि विद्यार्थी-जगत् क्या करता है या जनता क्या करती है। कोई भी कागजी कार्रवाई हमें स्वराज्य नही दे सकती। धुंआधार भाषण हमे स्वराज्य के योग्य नही बना

---

१. जगदीश चन्द्र बसु, प्रसिद्ध भारतीय

२. प्रफुल्लचन्द्र राय.

सकते। वह तो हमारा अपना आचरण है जो हमे उसके योग्य वनायेगा। (तालिया) सवाल यह है कि हम अपने पर किस प्रकार राज्य करना चाहते है? मैं आज भापण नही देना चाहता, श्रव्य रूप मे सोचना चाहता हू। यदि आज आपको ऐसा लगे कि मैं असयत होकर वोल रहा हूं तो कृपया मानिए कि कोई आदमी जोर-जोर से वोलता हुआ सोच रहा है और वही आप सुन पा रहे हैं। और यदि आपको ऐसा जान पडे कि मैं शिप्टाचार की सीमा का उल्लघन कर रहा हू, तो कृपया उस स्वच्छन्दता के लिए आप मुझे क्षमा करेंगे। कल शाम मैं विश्वनाथ के दर्शनो के लिए गया था। उन गलियो मे चलते हुए मेरे मन मे खयाल आया कि यदि कोई अजनवी एकाएक ऊपर से इस मन्दिर पर उतर पडे और यदि उसे हम हिन्दुओ के वारे मे विचार करना पडे तो क्या हमारे वारे मे कोई छोटी राय वना लेना उसके लिए स्वाभाविक न होगा? क्या यह महान मन्दिर हमारे अपने आचरण की ओर उगली नही उठाता? मैं यह वात एक हिन्दू की तरह वडे दर्द के साथ कह रहा हू। क्या यह कोई ठीक वात है कि हमारे पवित्र मन्दिर के आसपास की गलिया इतनी गन्दी हो? उसके आसपास जो घर वने हुए हैं वे वेसिलसिले और चाहे जैसे हो? गलिया टेढी-मेढी और सँकरी हो? अगर हमारे मन्दिर भी कुशादगी और सफाई के नमूने न हो तो हमारा स्वराज्य कैसा होगा? चाहे खुशी से, चाहे लाचारी से अंग्रेजो का वोरिया-वँधना वँधते ही क्या हमारे मन्दिर पवित्रता और शान्ति के धाम वन जायँगे?

मैं काग्रेस के अध्यक्ष से इस वात मे सहमत हूँ कि स्वराज्य की वात सोचने के पहले हमे वडी मशक्कत करनी पडेगी। हमारे यहाँ हर शहर के दो हिस्से होते हैं, वस्ती खास और छावनी। वस्ती को अक्सर एक वदवूदार गन्दी कोठरी समझिए। यह ठीक है कि हम शहरो की जिन्दगी के आदी नही हैं। लेकिन जव शहरी जिन्दगी की हमें जरूरत ही है तो उसे हम अपने लापरवाह ग्राम्य-जीवन का प्रतिविम्व तो नही वना सकते। वम्वई की जिन गलियो मे भारतीय रहते हैं वहाँ राहगीर को यह धुकधुकी लगी रहती है कि कही कोई ऊपर की मजिल से उन पर पीक न छोड दे। यह वडी विचारणीय परिस्थिति है। मैं काफी रेल-यात्रा करता हूँ। तीसरे दर्जे के यात्री की तकलीफो पर ध्यान जाता है। किन्तु इन सभी तकलीफो की जिम्मेदारी रेलवे के अधिकारियो के ऊपर नही मढी जा सकती। यह जानते हुए भी कि डिव्वे का फर्श अक्सर सोने के काम मे वरता जाता है, हम उस पर जहाँ-तहाँ थूकते रहते हैं। हम जरा भी नही सोचते कि हमें वहाँ क्या फेंकना चाहिए क्या नही, और नतीजा यह होता है कि सारा डिव्वा गन्दगी का अवर्णनीय नमूना बन जाता है। जिन्हें कुछ ऊँचे दर्जे का माना जाता है, वे अपने से कम भाग्यशाली

अपने भाइयों के साथ डाँट-डपट का व्यवहार करते हैं। विद्यार्थी-वर्ग को भी मैंने ऐसा करते पाया है। वे भी (गरीव) सहयात्रियों के साथ (कुछ अच्छा) व्यवहार नहीं करते। वे अंग्रेजी बोल सकते हैं और नारफाक जाकिटें पहने होते हैं और इसलिए वे अधिकार जताकर डिव्बे में घुस जाते हैं और बैठने की जगह ले लेते है। मैंने हर अँधेरे कोने को मशाल जलाकर देखा है, और चूंकि आपने मुझे बातचीत करने की यह सुविधा दी है, मैं अपना मन आपके सामने खोल रहा हूँ। स्वराज्य की दिशा में बढ़ने के लिए हमें बिलाशक ये सारी बातें सुधारनी चाहिए। अब मैं आपको दूसरी जगह ले चलता हूँ। जिन महाराजा महोदय[1] ने कल की हमारी बैठक की अध्यक्षता की थी उन्होंने भारत की गरीबी की चर्चा की। दूसरे वक्ताओं ने भी इस बात पर बड़ा जोर दिया। किन्तु जिस शामियाने में वाइसराय-द्वारा शिलान्यास हो रहा था वहाँ हमने क्या देखा? एक ऐसा शानदार प्रदर्शन, जड़ाऊ गहनों की ऐसी प्रदर्शनी जिसे देखकर पेरिस से आनेवाले किसी जौहरी की आँखें भी चौंधिया जातीं। जब मैं गहनों से लदे हुए उन अमीर-उमरावों को भारत के लाखों गरीब आदमियों से मिलाता हूँ, तो मुझे लगता है कि मैं इन अमीरों से कहूँ कि जबतक आप अपने ये जेवरात नहीं उतार देते और उन्हें गरीबों की धरोहर मानकर नहीं चलते तबतक भारत का कल्याण नहीं होगा। (हर्ष-ध्वनि और तालियां) मुझे यकीन है कि सम्राट् अथवा लार्ड हार्डिंज सम्राट् के प्रति वास्तविक राजभक्ति दिखाने के लिए किसी का गहनों के सन्दूक उलटकर, सिर से पाँव तक सजकर आना जरूरी नहीं समझते। अगर आप चाहें तो मैं जान की बाजी लगाकर महाराज जार्ज पंचम का सन्देशा आपको लाकर दे दूँ कि वह यह नहीं चाहते। भाइयो, जब कभी मैं सुनता हूँ कि कहीं, फिर वह ब्रिटिश भारत में हो चाहे हमारे बड़े-बड़े राजाओं और नवाबों-द्वारा शासित रजवाड़ों में, कोई बड़ा भवन उठाया जा रहा है तो मेरा मन दुखी हो जाता है और मैं सोचने लगता हूँ —यह पैसा तो किसानों के पास से इकट्ठा किया गया पैसा है। हमारे ७५ प्रतिशत से भी अधिक लोग किसान हैं; कल श्री हिगिनबाथम ने अपनी प्रवाहमयी वाणी में कहा—ये ही वे लोग हैं जो एक के दो दाने करते हैं। यदि हम इनके परिश्रम की सारी कमाई दूसरों को उठाकर ले जाने दें तो कैसे कहा जा सकता है कि स्वराज्य की कोई भी भावना हमारे मन में है? हमें आजादी किसान के बिना नही मिल सकती। आजादी वकील और डाक्टर या सम्पन्न जमीन्दारों के वश की बात नही है।

---

१. दरभंगा के सर रामेश्वर सिंह (१८६०-१९२९), बी० एच० यू० की स्थापना में मालवीय जी के सहायक।

अब अन्त मे उस बात का थोड़ा-सा विवेचन करना मैं अपना कर्त्तव्य समझता हूँ जिसने आज दो-तीन दिनो से हमारे मनो को उद्विग्न कर रक्खा है। श्रीमन् वाइसराय के यहाँ के रास्तो से निकलने के समय हम सब लोग बड़ी ही चिन्ता मे थे। स्थान-स्थान पर खुफिया पुलिस के लोग नियत थे। हम दग रह गये। हमारे मन मे बार-बार यह प्रश्न उठता था कि हम लोगो के प्रति इतने अविश्वास का क्या कारण है? इस प्रकार मरणान्तक दु:ख भोगते हुए जीने की अपेक्षा क्या लार्ड हार्डिज के लिए सचमुच ही मर जाना अधिक श्रेयस्कर नही है? परन्तु एक बलशाली सम्राट् के प्रतिनिधि इस प्रकार मर भी नहीं सकते। मृतक की भाति जीना ही वह शायद जरूरी समझते होगे। पर दूसरा प्रश्न यह है कि खुफिया का जुआ हमारे सिर पर लादने का क्या कारण है? हम क्रुद्ध होते हो, बडबडाते हो, हाथ-पैर पटकते हो, या जो चाहे सो करते हो, पर फिर भी यह नही भूलना चाहिए कि भारत मे अराजक दल की उत्पत्ति का कारण उतावलेपन का नशा है। मैं खुद भी अराजक ही हूं, पर दूसरे वर्ग का। हमारे यहा अराजको का एक वर्ग है जिससे यदि मुझे मिलने का अवसर मिले तो मैं उनसे स्पष्ट कह दगा कि भाइयो! यदि भारत को अपने विजेताओ पर विजय प्राप्त करनी हो तो आपकी अराजकता के लिए यहा जगह नही है। यह भीरुता का लक्षण है। यदि आपका ईश्वर पर विश्वास हो और यदि आप उसका भय मानते हो तो फिर आपको किसी से डरने का कोई कारण नहीं है, फिर वे चाहे राजा-महाराजा हो, वाइसराय हो अथवा स्वय सम्राट् हो। अराजको के स्वदेश-प्रेम का मैं बडा आदर करता हूँ। वे जो स्वदेश के लिए आनन्दपूर्वक मरने के लिए प्रस्तुत रहते हैं उनकी मैं इज्जत करता हू। पर मैं उनसे पूछता हू कि क्या किसी की जान लेना प्रतिष्ठा का कार्य है? क्या छुरे से हत्या करने के फलस्वरूप जो मृत्युदण्ड प्राप्त होता है उसे किसी भी प्रकार गौरवपूर्ण माना जा सकता है? मैं कहता हू "नही।" कोई धर्मग्रन्थ ऐसे उपाय का अवलम्बन करने की अनुमति नहीं देता।

यदि मुझे इस बात का विश्वास हो जाय कि अग्रेजों के रहते हुए इस देश का कदापि उद्धार न होगा, उन्हें यहाँ से निकाल ही देना चाहिए तो उनसे अपना बोरिया-बिस्तर समेट कर यहाँ से चलते होने की प्रार्थना करने मे मैं कभी आगा-पीछा न करूगा और मुझे विश्वास है कि अपनी इस दृढ़ धारणा के समर्थन मे मैं मरने को भी तैयार रहूगा। ऐसा मरण ही मेरी सम्मति मे प्रतिष्ठा का मरण है। बम फेंकने वाला गुप्त रूप से षड्यन्त्र करता है। वह बाहर निकलने से डरता रहता है और पकडे जाने पर अपने अयोग्य और अतिरिक्त उत्साह का प्रायश्चित्त भोगता है। ये लोग कहते हैं कि यदि हम लोग ऐसी कार्रवाइयाँ न करते, यदि हमारे कुछ

साथी बहुतों को बम का निशाना न बनाते तो बंगभंग के सम्बन्ध में · · · (इस स्थान पर श्रीमती बेसेण्ट ने गांधी जी से शीघ्र ही भाषण समाप्त करने के लिए कहा) मि० लायन्स की अध्यक्षता में बंगाल में भी मैंने यही बात कही थी। मेरा खयाल है कि मै जो कुछ कह रहा हूँ वह बिल्कुल ठीक है। मुझे अपना भाषण बन्द करने को कहा जायगा तो मैं बन्द कर दूंगा। (अध्यक्ष को सम्बोधित करके) महाराज! मै आपकी आज्ञा की प्रतीक्षा कर रहा हूं। यदि आपकी समझ में मेरी इनबातों से देश और साम्राज्य को हानि पहुँच रही है तो मुझे अवश्य चुप हो जाना चाहिए। (कहिए, कहिए का शोर, अध्यक्ष ने गांधी जी से अपना मतलब साफ तौर पर बतलाने को कहा) मैं अपना मतलब स्पष्ट करता हूँ। मै सिर्फ (फिर गड़बड़) मित्रो, इस गड़बड़ से आप रुष्ट न हों। श्रीमती बेसेण्ट को मेरा चुप हो जाना उचित जान पड़ता है, इसका कारण यह है कि भारत पर उनका बहुत अधिक प्रेम है और वह समझती हैं कि युवकों के सामने इस प्रकार की स्पष्ट बातें कह कर मै अनुचित काम कर रहा हूँ। पर यदि ऐसा हो तो भी मेरा कहना है कि मुझे भारत को उस अविश्वास से मुक्त करना है जो राजा और प्रजा, सभी के मन में उत्पन्न हो गया है। यदि अपने साध्य को प्राप्त करना हो तो परस्पर की प्रीति तथा विश्वास पर स्थापित साम्राज्य से ही हमारा काम चलेगा और अपने-अपने घरों में बैठे-बैठे दायित्व-हीन ढंग से यही बातें करने की अपेक्षा क्या इस विद्यालय के प्रांगण में खड़े होकर उन्हे खुले तौर पर कहना अधिक अच्छा नही है? मेरा तो खयाल है, इन बातों को पूरी स्पष्टता से कहना ही अधिक अच्छी बात है। पहले भी मैंने ऐसा ही किया है और उसका परिणाम बड़ा ही उत्तम हुआ है। मैं यह भी जानता हूँ कि आज ऐसी कोई बात नही है जिसकी चर्चा विद्यार्थियो में न होती हो या जिसे वे न जानते हों। इसीलिए मैंने यह आत्म-निरीक्षण आरम्भ किया है। अपने देश का नाम मुझे बहुत ही प्यारा है। इसीसे मैंने आप लोगों के साथ विचार-विनिमय की इतनी चेष्टा की है और आप लोगों से मेरी नम्रतापूर्वक प्रार्थना है कि अराजकता को भारत मे बिल्कुल स्थान न मिलने दीजिए। राज्यकर्त्ताओं से आपको जो कुछ कहना हो उसे खुलकर साफ शब्दों में कह दीजिए, और यदि आपका कथन उन्हें बुरा लगे तो उसके परिणामस्वरूप जो कष्ट मिले उन्हें भोगने के लिए तैयार रहिए। आप उन्हें गालियां न दीजिए। जिस सिविल सर्विस पर निन्दा की गहरी बौछार की जाती है एक बार उसके एक अधिकारी से मुझे वार्तालाप करने का अवसर मिला था। इन लोगों से मेरा कुछ बहुत हेल-मेल नही है, तथापि उसकी बातचीत का ढंग प्रशंसनीय था। उसने पूछा—क्या आपका ऐसा ही खयाल है कि हम सभी सिविल सर्विस वाले बुरे होते है और जिन लोगों

पर शासन करने के लिए हम यहाँ आते है उन पर हम केवल अत्याचार ही करना चाहते हैं? मैंने कहा—'नही-नही, मैं ऐसा नही मानता।' इस पर उसने कहा —'तो फिर जब कभी आपको मौका मिले आप हम अभागे सिविल सर्वेण्टो के पक्ष में लोगो के सामने दो शब्द कहने की कृपा करें।' वे दो शब्द मैं यहाँ कहने वाला हूँ। इण्डियन सिविल सर्विस के बहुत से लोग नि:सन्देह उद्धत, अत्याचार-प्रिय, और अविवेकी होते हैं। इसी तरह के और कितने ही विशेषण उन्हें दिये जा सकते हैं। यह सब कुछ मुझे स्वीकार है। यही नही, मैं यह भी मानता हूँ कि कुछ वर्षो तक हमारे देश मे रहकर वे और भी ओछी मनोवृत्ति के बन जाते हैं। पर इससे क्या सूचित होता है? यहाँ आने के पहले यदि वे सभ्य एव सत्पुरुष थे पर यहाँ आकर यदि वे नीतिभ्रष्ट हो गये तो क्या इसे हमारे ही चरित्र का प्रतिबिम्ब नही कहना चाहिए? (नही, नही) आप लोग खद ही विचार करें कि एक मनुष्य जो कल तक भला आदमी था, मेरे साथ रहने पर खराब हो जाय तो उसके इस अव-पतन के लिए कौन उत्तरदायी होगा? वह या मैं? भारत में आने पर खुशामद की जो हवा उन्हें चारो ओर से घेर लेती है वही उनके नीति-च्युत होने का कारण है। ऐसी हालत मे कोई भी व्यक्ति नीति-च्युत हो सकता है। कभी-कभी अपने दोष स्वीकार करना भी अच्छा होता है।

यदि किसी दिन हमे स्वराज्य मिलेगा तो यह अपने ही पुरुषार्थ से मिलेगा। वह दान के रूप मे कदापि नही मिलने का। ब्रिटिश-साम्राज्य के इतिहास पर दृष्टि-पात कीजिए। ब्रिटिश-साम्राज्य चाहे जितना स्वातन्त्र्य-प्रेमी हो, फिर भी स्वातन्त्र्य-प्राप्ति के लिए स्वय उद्योग न करनेवालो को वह कभी स्वतन्त्रता देनेवाला नही है। आप चाहें तो बोअर-युद्ध से कुछ शिक्षा ले सकते हैं। कुछ ही वर्ष पहले जो बोअर लोग साम्राज्य के शत्रु थे, वही अब उनके मित्र हैं।

(इस समय फिर गड़बड शुरू हुई और श्रीमती बेसेण्ट उठकर चल दीं। उनके साथ और भी कई बड़े-बड़े लोग उठकर चलते बने और व्याख्यान का अन्त वहीं हो गया।)

—अंग्रेजी। काशी ४।२।१९१६ संशोधित ६।२।१९१६। 'स्पीचेज़ ऐण्ड राइ-टिंग्स आव महात्मा गांधी' से]

४. भाषण : काशी नागरी-प्रचारिणी सभा में

[५ फरवरी १९१६ को नागरी-प्रचारिणी सभा के २२ वें वार्षिकोत्सव में

गांधी जी ने निम्नांकित भाषण किया था। अध्यक्षता की थी कश्मीर के महाराजाधिराज ने। गांधी जी हिन्दी में ही बोले थे।--सम्पा०]

महाराज तथा भाइयो,

मैं बहुत शर्मिन्दा हूँ कि आप लोगों के सामने हिन्दी में अच्छी तरह नहीं बोल सकता। आप जानते हैं कि मैं दक्षिण अफ़्रीका में रहता था। वहीं अपने हिन्दी भाइयों के साथ काम करते-करते थोड़ी-बहुत हिन्दी सीख सका हूं, इसलिए आप लोग मेरी भूलों को क्षमा करेंगे।

मैं नहीं जानता था कि मुझे इस सभा में बोलना पड़ेगा। मैं व्याख्यान देने के लायक भी नही हूँ। मुझसे कहा गया कि कुछ कहो। यद्यपि कुछ कहना मेरी शक्ति के बाहर है तो भी दो-चार बातें आपको सुनाता हूं, जो इस समय मेरे खयाल में आई है। आप शायद यह नही जानते कि मेरे साथ तीस-पैंतीस स्त्री-पुरुष हैं। उन सबकी प्रतिज्ञा है कि बराबर हिन्दी का अध्ययन करेंगे। मैंने इस सभा के साथ पत्र-व्यवहार भी किया था। मुझे कुछ पुस्तकें दरकार थीं जो मिल नही सकी। सभा ने जो कुछ किया है उसके लिए उसे धन्यवाद एवं मुबारकबाद देता हूँ और ईश्वर से प्रार्थना करता हूँ कि उसके सदस्य बढ़ते जायं। जो पुस्तकें मुझे नहीं मिली है वह उन सबको तैयार कराने का प्रयत्न करे। इसके पदाधिकारियों में सब एम० ए०, बी० ए०, एल० एल० बी० हैं जो अंग्रेजी में उन पुस्तकों को पढ़ चुके हैं। इस सभा के तो अधिकारी वकील हैं। उनसे मैं पूछता हूं कि आप अदालत में अपना काम अंग्रेज़ी में चलाते हैं या हिन्दी में? यदि अंग्रेजी में चलाते हैं तो कहूंगा कि हिन्दी में चलायें। जो युवक पढ़ते हैं उनसे भी कहूंगा कि वे इतनी प्रतिज्ञा करें कि हम आपस का पत्र-व्यवहार हिन्दी में करेंगे।

साहित्य-विहीन जाति को स्वतन्त्रता नही मिल सकती, इसलिए लोगों को चाहिए कि वे अंग्रेजी के उच्च विचार और नये खयाल सब लोगों के सामने रक्खें। कल डा० जगदीशचन्द्र वसु व्याख्यान देंगे। यदि वह बंगला में व्याख्यान देंगे तो मेरा कोई झगड़ा नहीं है, पर यदि वह अंग्रेजी में दें तो उनसे मेरा झगड़ा है। नागरी-प्रचारिणी सभा का कर्त्तव्य है कि जो पुस्तकें डा० जगदीशचन्द्र वसु ने अंग्रेजी में लिखी है उनका वह हिन्दी में अनुवाद करे। जर्मनी में जो विद्वत्तापूर्ण पुस्तकें तैयार होती है अंग्रेजी में दूसरे ही सप्ताह उनका अनुवाद हो जाता है, इसी से वह भाषा प्रौढ़ है। हिन्दी में भी ऐसा ही होना चाहिए। लोगों को अपनी भाषा की असीम उन्नति करनी चाहिए क्योंकि सच्चा गौरव उसी भाषा को प्राप्त होगा जिसमें अच्छे-अच्छे विद्वान जन्म लेगे और उसी का सारे देश में प्रचार भी होगा। यदि तमिल मे अच्छे-अच्छे विद्वान पैदा होंगे तो हम भी तमिल ही बोलने लग जायँगे। जिस

भाषा मे तुलसीदास जैसे कवि ने कविता की है वह अवश्य पवित्र है और उसके सामने कोई भाषा नही ठहर सकती। हमारा मुख्य काम हिन्दी सीखना है, पर तो भी हम अन्य भाषाएँ भी सीखेंगे। अगर हम तमिल सीख लेंगे तो तमिल बोलने-वालो को भी हिन्दी सिखा सकेंगे।

—हिन्दी। काशी, ५।२।१९१६। 'महात्मा गांधी' से]।

५. भेंट : बनारस की 'घटना' के सम्बन्ध में ए० पी० आई० को

श्री गाधी जी से, जो कल तीसरे पहर बनारस से बम्बई पहुँचे, एक सम्वाद-दाता ने बनारस की उस घटना का हाल जानना चाहा जिसमे उनको (एक सभा मे) अपना भाषण पूरा नही करने दिया गया था। श्री गाधी जी ने उत्तर मे कहा था कि मुझे न यह मालूम है कि मेरे किन शब्दो पर आपत्ति उठाई गई थी, और न श्रीमती बेसेण्ट ने ही मेरे भाषण के आपतिजनक अश की ओर सकेत किया था। उन्होंने तो अध्यक्ष महोदय से केवल इतना ही कहा था कि मुझे और आगे न बोलने दिया जाय। उस दिन की सभा मे दिये गये भाषण के उस अंश मे, जो अराजकता से सम्बन्ध रखता है, लगभग वे ही बातें दुहराई गई थी जिन्हे मैंने गत वर्ष कलकत्ते मे श्री लायन्स के सभापतित्व मे आयोजित एक सभा मे कहा था। श्रीमती बेसेण्ट की मुझे न बोलने देने की बात पर श्रोताओ ने मुझसे अपना भाषण जारी रखने का आग्रह किया, परन्तु मैंने उत्तर दिया कि मैं 'अब अध्यक्ष महोदय की अनुमति पाने पर ही बोलूंगा। उस सभा मे उपस्थित सज्जनो से मैंने श्रीमती एनी बेसेण्ट द्वारा उठाई गई आपत्ति पर रोष न करने को—यद्यपि वे ऐसा करने के इच्छुक हो रहे थे—कहा, और यह भी कहा कि जिस किसी के दिल को मेरे विचारो से दुःख पहुँचा हो, उसे अध्यक्ष से इस पर निर्णय मांगने का हक है।

महाराजा दरभंगा (अध्यक्ष) से अनुमति पाने पर ही मैंने आगे बोलना शुरू किया था। महाराजा ने यह अनुमति कुछ देर तक मामले पर गौर करके तथा मुझसे अपनी बातें सक्षेप मे व्यक्त करने की ताकीद करके दी थी। किन्तु जब मैं पुनः बोलने खडा हुआ, तो मुझे सभा-मच पर कुछ खलबली-सी दीख पडी। मैंने यह भी देखा कि श्रीमती बेसेण्ट समीप बैठे हुए राजाओ से कानाफूसी कर रही हैं। वे उनसे यह कह रही थी कि मैं न तो अपने शब्द वापस ले रहा हूँ और न उनके सम्बन्ध में सफाई पेश कर रहा हूँ। उन्होंने उनसे यह भी कहा कि उन लोगो का वहा बैठे रहना अब ठीक नही है।' दूसरी चीज जो मेरी निगाह मे आई, वह यह थी

कि राजा लोग एक-एक करके उठकर चल दिये थे। अध्यक्ष महोदय ने भी सभा-मण्डप छोड़ दिया और मैं अपना भाषण समाप्त न कर पाया।

प्रश्न—क्या आप अपने उस दिन के भाषण का कोई अंश वापस लेना चाहते है?

उत्तर—मैंने प्रत्येक शब्द भलीभांति सोच-विचार कर ही कहा था। इस बात की तो कल्पना भी नहीं की जा सकती कि मैं कभी हिंसात्मक तरीकों का समर्थन करूगा। मैं (उस सभा में) भाषण देने को तैयार भी न था। मित्रों के जोर डालने पर मुझे बोलना पड़ा, क्योंकि लोगों का खयाल था कि देश के विद्यार्थी-समाज पर मेरा थोड़ा-बहुत प्रभाव है। मुझसे हिंसात्मक तरीकों पर अपने विचार व्यक्त करने को कहा गया; दुर्भाग्य से कुछ भावुक युवकों ने हिंसा को अपना सिद्धान्त बना रखखा है। और नवयुवकों के इसी ध्येय के कारण हमें अपने सम्मानित अतिथि की जान की हिफाजत के लिए असाधारण सावधानियाँ बरते जाने का लज्जाजनक दृश्य देखना पड़ा। मेरे उस व्याख्यान में शुरू से आखिर तक कही भी हिंसात्मक कृत्यों का समर्थन न था। हाँ, मैंने तो यह स्पष्ट ही कर दिया था कि हिंसात्मक कार्य और भी अधिक निन्द्य इस कारण है कि आगे चलकर इस कृत्य से जो क्षति होगी वह कभी पूरी न की जा सकेगी। मेरे पूरे व्याख्यान का उद्देश्य खुद हम लोगों की त्रुटियों का अवलोकन करना तथा यह दिखाना था कि अपनी अनेक कठिनाइयों के लिए हम स्वयं ही उत्तरदायी है। मेरा दृढ़ विश्वास है कि यदि श्रीमती एनी-बेसेण्ट जल्दबाजी से भरा और विवेक-हीन खलल न डालतीं तो कुछ भी गडबडी न होती और मेरा पूरा भाषण सुननेवाले के मन में मेरे अभिप्राय के विषय में किसी प्रकार का सन्देह न होता।

प्रश्न—क्या यह सच है कि पं० मदनमोहन मालवीय ने उस घटना के पश्चात् सभा से क्षमा मांगी थी?

उत्तर—मालवीय जी ने सभा में भाषण अवश्य दिया था, परन्तु उनके भाषण में मुझे क्षमा-याचना प्रतीत नहीं हुई। उन्होने इतना ही कहा था कि गांधीजी मेरे विशेष आग्रह से सभा में बोले थे और उनके भाषण का एक मात्र उद्देश्य यह दिखाना था कि हिंसात्मक तरीके कितने आत्मघातक होते हैं।[1]

—अंग्रेजी। बम्बई, १५।२।१९,१६, बाम्बे क्रानिकल. १०।२।१९१६]

---

१. 'न्यू इण्डिया' (१०-२-१९१६) में गई भेंट के इस विवरण के अतिरिक्त छपा था:—

६. भाषण : गुरुकुल के अछूतोद्धार सम्मेलन में

यदि नानकचन्द यह न कह गये होते कि अछूतो के गोत्र वे ही हैं जो दूसरे राजपूतों के हैं, तो भी हम उन्हे अछूत न समझते, क्योकि सबसे प्रेम करना हमारा कर्त्तव्य है। श्री शकरन नायर ने मुझसे कहा था कि अछूतो के साथ असमानता का व्यवहार करने के कारण भारत हमारे हाथ से चला गया। मैं भी ऐसा विश्वास करता हू। जब कोई और हमारे साथ वैसा ही अपमानजनक व्यवहार करेगा तब हम इसे समझेंगे। सच कहे तो हमने वास्तव मे भयानक पाप किया है। अपनी अन्तरात्मा और अपने कल्याण के लिए हमे पश्चात्ताप करना ही चाहिए और अपने को फिर पहले ही जैसा निष्पाप बना लेना चाहिए। हमे प्रायश्चित्त करना चाहिए। प्रायश्चित्त क्या है ? इस पाप का व्यावहारिक हल क्या है, यह मैं आपको तत्काल ही बता सकता हू। सबसे पहले तो हमको निश्चित रूप से यह जान लेना चाहिए कि उनके साथ समानता का व्यवहार, उनके बच्चो को अपने स्कूलो मे लेना आदि

मद्रास
१० फरवरी, सन् १९१६

श्री गांधी ने एक वक्तव्य दिया है। उसे तार-द्वारा पाकर हमने अपने पत्र मे छापा है। इस सम्बन्ध मे मुझे यह कह देना उचित लगता है कि मेरे हस्तक्षेप का कारण मेरे पीछे खड़े अंग्रेज का, जो मेरे खयाल से खुफिया पुलिस का अधिकारी था, कथन था। मैंने उसे यह कहते हुए सुना—"ये जो कुछ कह रहे हैं, यह सब नोट किया जा रहा है, और कमिश्नर के पास भेजा जायगा।" जो कुछ कहा गया था उनमे से कई वाक्यों का अर्थ ऐसा निकाला जा सकता था, जो मैं जानती हूँ निश्चय ही श्री गांधी को अभिप्रेत नहीं हो सकता था, इसलिए मैंने अध्यक्ष से यह कहना अधिक अच्छा समझा कि इस सभा में राजनीति की चर्चा अनुपयुक्त है। मैंने यह भी नहीं कहा था कि राजा लोग चले जायं। मुझे यह भी ज्ञात नहीं कि यह बात किसने कही थी। मैं बहुत अच्छी तरह जानती थी कि श्री गांधी किसी को मारने के बजाय स्वय मरना पसन्द करेंगे। किन्तु मेरा खयाल यह है कि उनके कथन का गलत अर्थ निकाला जा सकता था और बनारस की जैसी स्थिति थी उसमें मुझे उनकी व्यक्तिगत सुरक्षा खतरे में मालूम होती थी। सार्वजनिक शान्ति किसी भी प्रकार भग न हो, यह चिन्ता उनके इस विचार से ही बहुत ही स्पष्ट हो जाती है कि हमें कांग्रेस अधिवेशन बुला कर भी सरकार को परेशानी मे नहीं डालना चाहिए।

—अंग्रेजी। 'न्यू इण्डिया', १०।२।१९१६। 'बंगाली' १२।२।१९१६]

हमें उनकी नहीं बल्कि अपनी मुक्ति के विचार से करना है। हम केवल ईसाई प्रचारकों का अनुकरण करते हैं, किन्तु जो लोग इस समस्या के हल में सक्रिय भाग ले रहे हैं उन्हें मैं सुझाव देता हूं कि वे इस समस्या पर अधिक गम्भीरता तथा सच्चाई के साथ विचार तथा व्यवहार करें और तब देखें कि इसके लिए क्या करना चाहिए।

—हिन्दी। हरद्वार, १८।३।१९१६। अंग्रेजी से। वैदिक मेगजीन, अप्रैल-मई १९१६]।

७. भाषण : गुरुकुल के वार्षिक उत्सव में

[गुरुकुल काँगड़ी के वार्षिक उत्सव में मार्च २०, १९१६ को गांधी जी ने भाषण दिया था, यह उसका उन्हीं के द्वारा बाद में तैयार किया हुआ विवरण है।—सम्पा०]

मैं भाषण का केवल वही अंश यहाँ लिखने की बात सोच रहा हूँ, जो मेरी राय में लिखने लायक है। यदि कहीं आवश्यक हुआ तो कुछ जोड़ने की बात भी सोचता हूँ। स्मरण रहे कि भाषण हिन्दी में दिया गया था। महात्मा मुंशीराम जी ने मेरे बच्चों को दो विभिन्न अवसरों पर आश्रय दिया और उनके साथ पितृवत् व्यवहार किया, इसलिए मैंने पहले उन्हें धन्यवाद दिया। फिर इस बात की ओर लोगों का ध्यान खींचा कि भाषणों का समय बीत चुका है। और काम का समय आ गया है। मैंने यह भी कहा कि मैं आर्य-समाज के प्रति कृतज्ञ हूँ। मैं प्रायः उसके कामों से प्रेरणा लेता रहा हूँ। समाज के सदस्यों में मैंने जबरदस्त आत्मत्याग की भावना देखी है। अपनी भारत-यात्रा के दौरान, मैं ऐसे अनेक आर्य-समाजी भाइयों से मिला हूँ जो उत्तम देश-सेवा कर रहे हैं। इसलिए मैं महात्मा जी का आभारी हूँ कि उन्होंने मुझे आप लोगों के बीच आने का अवसर दिया। साथ ही यह कह देना भी उचित होगा कि मैं बिल्कुल सनातनी हूँ। मेरी दृष्टि मे हिन्दू-धर्म में सब-कुछ आ जाता है। इसकी आदर्श छाया में सभी तरह के विभिन्न विचारों को आश्रय मिल जाता है। और मुझे इसमें कोई सन्देह नहीं है कि आर्य-समाज और सिख तथा ब्रह्म-समाज भले ही अपने आपको हिन्दुओं से अलग वर्ग में रखना चाहे, किन्तु वे सब बहुत जल्दी हिन्दू-धर्म में लीन हो जायंगे और उन्हें अपनी परिपूर्णता भी इसी में मिलेगी। मानव की अन्य सभी संस्थाओं की तरह हिन्दू-धर्म में भी दोष और कमियाँ हैं। (इसलिए) प्रत्येक कार्यकर्ता

के लिए उनके सुधारार्थ जुटने की भरपूर गुंजाइश तो यहाँ है, किन्तु इससे टूटकर अलग हो जाने का कोई कारण नही है।

निर्भयता की भावना

अपनी इस यात्रा के दौरान मुझसे सभी जगह यह पूछा गया है कि भारत की तात्कालिक आवश्यकता कौन-सी है। मैंने जो उत्तर अन्य स्थानो पर दिया है, मेरी समझ मे यहाँ भी इसे दोहराना ही सबसे अच्छी वात होगी। मोटे तौर पर कहा जा सकता है कि उचित धार्मिक भावना हमारी सबसे वडी और तात्कालिक आवश्यकता है। वैसे यह ठीक है कि यह उत्तर वहुत स्थूल है और इससे किसी को पूरा सन्तोष नहीं मिल सकता। और फिर यह ऐसा उत्तर भी है जो किसी भी परिस्थिति मे दिया जा सकता है। इसलिए मैं कहना तो चाहता हूँ कि हमारी धार्मिक भावना सुप्त है, और हम लोग इसी कारण हमेशा भयभीत वने रहते हैं। हम लौकिक और अलौकिक दोनो प्रकार की सत्ताओ से डरते हैं। अपने पुरोहितों और पण्डितो के सामने हम मन की वात खुलकर नही कह पाते। राजसत्ता से भी हम थरथर काँपते रहते हैं। इसमे कोई सन्देह नही है कि हमारा यह आचरण उनके और हमारे, दोनो के, लिए अकल्याणकारी है। हमारे आध्यात्मिक, शैक्षणिक अथवा राजनीतिक शिक्षको या शासको की यह इच्छा कभी नही रही होगी कि हम सत्य को उनसे छिपाते रहे। लार्ड विलिंग्डन ने अभी वम्वई की एकसभा में व्याख्यान देते हुए कहा कि हम लोग किसी वात को अस्वीकार करने की इच्छा मन मे रखते हुए भी 'ना' कहते हुए हिचकिचाते हैं। उन्होने श्रोताओ से निर्भयता की भावना का विकास करने को कहा। नि:सन्देह निर्भयता का अर्थ दूसरो के सम्मान या भावना की उपेक्षा करना नही है। मेरी विनम्र राय मे यदि हम कोई टिकाऊ और सच्चा काम करना चाहते हैं, तो निर्भयता उसकी सबसे वडी और जरूरी शर्त है। निर्भयता का गुण धार्मिक चेतना के विना प्राप्त नहीं किया जा सकता। हम भगवान से डरना सीखें तो हमारा आदमी से डरना खत्म हो जाय। अगर हम इस तथ्य को समझ लें कि हमारे भीतर दिव्य अश है और हम जो-कुछ करते हैं या सोचते हैं, वह उसका साक्षी है और वही दिव्य अश हमारी रक्षा करता है, हमें सच्ची राह वतलाता है, तो यह वात विल्कुल साफ हो जाती है कि हम भगवान् के भय के सिवाय धरती पर किसी अन्य भय को मानने से इनकार कर देंगे। जो राजाओ का भी राजा है, यदि हमारी निष्ठा उसमें दृढ है तो यह वडी-से-वडी राजभक्ति से भी ऊँची चीज है और साथ ही यह हर प्रकार की राजभक्ति का एक सुचिन्तित आधार भी है।

स्वदेशी का अर्थ

निर्भयता की भावना का भली प्रकार विकास कर चुकने के बाद हम देखेंगे कि सच्ची स्वदेशी की भावना के बिना मुक्ति सम्भव नही है। सच्ची स्वदेशी-भावना उस स्वदेशी-भावना से भिन्न है, जिसे हम अपनी सुविधा के अनुसार पालना चाहते हों। मेरे लेखे स्वदेशी का बड़ा गहरा अर्थ है। मैं तो उसे अपने धार्मिक, राजनीतिक और आर्थिक जीवन पर लागू करना चाहता हूँ। वह अवसर-विशेष पर स्वदेशी कपड़ा पहन लेने तक ही सीमित नहीं है। इतना तो हमें हर समय करना ही है और सो भी ईर्ष्या अथवा बदले की भावना से नही, बल्कि इसलिए कि अपने प्रिय देश के प्रति यह हमारा कर्तव्य है। इसमें कोई सन्देह नही है कि अगर हम विदेश में बना हुआ कपड़ा पहनते है, तो हम स्वदेशी का उल्लंघन करते हैं। किन्तु यदि हम देशी कपड़े को विलायती ढंग से सिलवा लेते है, तो भी हम उसका उल्लंघन करते है। आखिरकार वातावरण से पहरावे का कुछ-न-कुछ सम्बन्ध तो होता ही है। हमारी पोशाक शोभा और सुरुचि में कोट या पैण्ट से कई गुना बढ़कर है। जब मै किसी भारतीय को पाजामे के ऊपर कमीज और कमीज पर बिना नेकटाई के वास्कट पहने हुए देखता हूँ और देखता हूँ कि उसके पल्ले हवा में उड़ते चले जा रहे है, तो मुझे अच्छा नही लगता। धर्म के क्षेत्र में स्वदेशी हमें अपने गौरवशाली अतीत का मूल्यांकन करना सिखाती है और सिखाती है आधुनिक काल में उसका सुधरा हुआ आचरण। यूरोप में चारों ओर जो अशान्ति फैली हुई है, उससे स्पष्ट हो जाता है कि आधुनिक सभ्यता अशिव और अन्धकारमय शक्तियों का प्रतिनिधित्व करती है, जब कि प्राचीन अर्थात् भारतीय सभ्यता मूलत· दैवी शक्तियों का प्रतिनिधित्व करती हैं। आधुनिक सभ्यता मुख्य रूप से भौतिकता-वादी है जब कि हमारी सभ्यता प्रधान रूप से आध्यात्मिक है। आधुनिक सभ्यता भौतिक नियमों की खोज में लगी हुई है और मानवीय प्रतिभा को उत्पादन और विनाश के साधनों की खोज में जुटाये हुए है, और हमारी सभ्यता मुख्य रूप से आध्यात्मिक नियमों की खोज में लगी हुई है। हमारे शास्त्रों में स्पष्टतः यह कहा गया है कि सत्य-जीवन के लिए सत्य का ठीक-ठीक पालन, पवित्र आचरण, प्रत्येक जीव के प्रति अहिंसा की भावना, किसी और के धन की इच्छा न रखना और दैनिक जीवन के लिए जो आवश्यक है केवल उसी का संचय नितान्त आवश्यक होते है। उन्होंने यह भी कहा है कि इन बातों के बिना आत्मतत्व का ज्ञान असम्भव है। हमारी सभ्यता ने दृढ़तापूर्वक यह कहने का साहस किया है कि अहिंसा का समुचित और सम्पूर्ण विकास सारे संसार को हमारे चरणों मे लाकर डाल देता है। सक्रिय रूप में अहिंसा का अर्थ है पवित्रतम प्रेम और करुणा। इस वचन का उच्चारण करनेवाले महापुरुष ने अनन्त उदाहरण देकर इसे प्रमाणित कर दिया है।

अहिंसा का सिद्धान्त

राजनीतिक जीवन मे इसके परिणामो पर नजर डालिए। हमारे शास्त्रो मे जीवन-दान से वडा कोई दान ही नही है। सोचकर देखें कि अगर हम अपने शासको को उनके जीवन की ओर से विल्कुल निश्चिन्त कर दें, तो हमारे और उनके सम्वन्ध कितने अच्छे हो सकते हैं। अगर उन्हे इस वात का विश्वास हो जाय कि हमारी भावना उनके कामो के प्रति कैसी ही क्यो न हो, हम उनके शरीर को अपने ही शरीर की तरह रक्षणीय मानेंगे, तो वहुत जल्दी पारस्परिक विश्वास का वातावरण निर्मित हो जायगा और दोनो एक दूसरे से विल्कुल खुलकर वातचीत करेंगे और इस तरह जो समस्याएँ हमे आज विचलित किये हैं उनमे से अनेक सम्मानास्पद और न्यायोचित ढग से सुलझ जायेंगी। याद रखना चाहिए कि अहिंसा के आचरण में दूसरे से भी वैसे ही आचरण की अपेक्षा रखना आवश्यक नही है। सच पूछो तो अपनी आखिरी मजिलो मे अहिंसा की प्रतिक्रिया अहिंसा के सिवा और कुछ होना असम्भव है। हममे से वहुतो का और मेरा भी यह विश्वास है कि हमे अपनी सभ्यता के जरिए ससार को सन्देश देना है। ब्रिटिश सरकार के प्रति मेरी राजनिष्ठा का कारण विल्कुल स्वार्थमय है। मैं ब्रिटिश कौम की मारफत अहिंसा का जवरदस्त सन्देश सारी दुनिया मे फैलाना चाहता हूँ, किन्तु यह तो तभी सम्भव है जव हम अपने कथित विजेताओ पर विजय प्राप्त कर लें और मेरे आर्य-समाजी भाइयो, मेरी समझ मे इस महान् कार्य के लिए आप लोग खासतौर पर उपयुक्त माने गये हैं। आपका दावा है कि आपने शास्त्रो का वारीकी से अध्ययन किया है। आप आँखें वन्द करके किसी भी विचार को स्वीकार नही करते और अपने विचार के अनुसार आचरण करने मे भी आप विल्कुल नही डरते। मेरी समझ मे अहिंसा के सिद्धान्त को कम कूतने या उसकी सीमा निर्धारित करने की कोई जरूरत नही है। तव फिर आइए, हम इसके तात्कालिक परिणामो की चिन्ता न करते हुए इसे अपने आचरण मे उतारें। इसके तात्कालिक परिणाम आपकी निष्ठा की शक्ति को कसौटी पर कसेंगे। यदि आप इसका आचरण करें, तो आप भारत को गुलामी से छुडा लेंगे। इतना ही नही, आप मानव-जाति की वडी-से-वडी सेवा भी करेंगे। और आपका यह कहना भी ठीक होगा कि ऐसी सेवा के लिए ही स्वामी दयानन्द ने जन्म लिया था। स्वदेशी एक नितान्त सक्रिय शक्ति है और उसका उपयोग सतत् जाग्रत रहकर आत्म-निरीक्षण करते हुए निरन्तर करते रहना चाहिए। आलसी व्यक्ति इसका आचरण नही कर सकता। यह तो उनके आचरण के योग्य है जो सत्य के लिए अपना जीवन खुशी से न्यौछावर कर सकते हैं। स्वदेशी के और भी अनेक पहलुओ पर विस्तार से विचार किया जा

सकता है, किन्तु अपनी समझ में मैंने जो कुछ कहा है, उससे आप मेरा मतलब समझने में समर्थ हो सकेंगे। मैं यही आशा करता हूँ कि आप लोग, जो भारत के एक विशिष्ट सुधारवादी दल के प्रतिनिधि हैं, मेरी बात को अच्छी तरह कसौटी पर कसे बिना त्याज्य नही मान लेंगे, और अगर मेरी बात आपको जँच गई तो आपके द्वारा किये हुए कामों को देखते हुए, मैं आशा करता हूँ, कि आप उन शाश्वत तत्वों को अपने जीवन में स्थान देंगे जिनकी मैंने आपसे अभी बात की है, और तदनुसार आप सारे भारतवर्ष में जुट जायेंगे।

आर्य-समाज का कार्य

मैं उपर्युक्त विवरण के अन्त में वह बात भी कहना चाहता हूँ जो मैंने वहां के श्रोताओं से नहीं कही। मैं अब तक दो बार गुरुकुल जा चुका हूं। आर्य-समाज के अपने भाइयों से कुछ प्रमुख मतभेद होते हुए भी मन-ही-मन में उनकी बड़ी इज्जत करता हूँ, और आर्य-समाज की गतिविधि का सर्वश्रेष्ठ परिणाम कदाचित् गुरुकुल की स्थापना और उसके परिचालन में दिखाई पड़ता है। यह ठीक है कि महात्मा मुन्शीराम की प्रेरणादायक उपस्थिति ही उसकी शक्ति का अधिष्ठान है, किन्तु यह संस्था सच्चे अर्थो में एक स्वशासित, प्रजातन्त्रीय और राष्ट्रीय संस्था है; किसी भी प्रकार की सरकारी सहायता या आश्रय से वह बिल्कुल मुक्त है। उसका कोष कुछ लक्ष्मीपुत्रों के दान के बल पर सम्पन्न नहीं हुआ है। तमाम गरीब लोग साल-दर-साल कांगड़ी की यात्रा करते हैं। वे यथाशक्य इस राष्ट्रीय महाविद्यालय के संचालन की दिशा में प्रसन्नतापूर्वक जो-कुछ देते हैं, यह कोष उसी से सम्पन्न हुआ है। प्रत्येक वार्षिक उत्सव पर बहुत बड़ी संख्या में लोग यहाँ आते हैं और यहां उनके रहने और खाने-पीने की जो सुचारु व्यवस्था होती है, वह संगठन की जबरदस्त शक्ति की परिचायक है। सबसे अधिक आश्चर्य की बात तो यह है कि इन आये हुए लोगों में लगभग १,००० आदमी, स्त्री और बच्चे होते हैं और उनका प्रबन्ध एक भी पुलिस के सिपाही या फौजी किस्म की किसी शक्ति की सहायता का तमाशा खड़ा किये बिना हो जाता है। आये हुए लोग ओर संस्था के प्रबन्धकों के बीच काम करने वाली शक्ति केवल पारस्परिक प्रेम और आदर की शक्ति है। गुरुकुल-जैसी बड़ी संस्था के जीवन में १४ वर्ष की अवधि कोई लम्बी अवधि नही है। पिछले दो या तीन वर्षो में जो स्नातक यहां से निकले हैं, वे क्या-कुछ करके दिखाते हैं, सो तो अभी देखना है। जनता तो व्यक्ति या संस्थाओं को उनके द्वारा प्रस्तुत परिणामों से ही परखती है। जनता एक सख्त मुनसिफ है और वह अपने मन में असफलताओं को गुंजाइश नही रखती। इसलिए अन्ततो-

गत्वा सभी सार्वजनिक सस्थाओ की तरह गुरुकुल के काम की जाँच भी जनता ही करेगी। इस प्रकार जो विद्यार्थी इस महाविद्यालय से पढकर निकले हैं और जिन्होने जीवन के कटकाकीर्ण पथ पर पाँव रक्खा है, उनके कन्धो पर बहुत बडी जिम्मेदारी है। उन्हे सावधानी से काम लेना चाहिए। और जो इस जबरदस्त प्रयोग की शुभ-कामना करते हैं, वे यह बात सोचकर आश्वस्त रह सकते हैं कि फल का वृक्ष के अनुरूप होना जीवन का अकाट्य सिद्धान्त है। वृक्ष तो सुन्दर हरा-भरा है तथा एक महात्मा पुरुष उसे सीच रहा है, इसलिए फल कैसा होगा, यह चिन्ता करना व्यर्थ है।

औद्योगिक शिक्षण

गुरुकुल का हितेच्छु होने के नाते मैं उसकी समिति और अभिभावकों को एक-दो सुझाव देने की धृष्टता करना चाहता हू। आत्मनिर्भर और स्वावलम्वी बनने के लिए गुरुकुल के बालको को कोई ठोस औद्योगिक शिक्षण दिया जाना चाहिए। मेरे विचार मे तो हमारे देश मे चूकि ८५ प्रतिशत लोग किसान हैं और १० प्रतिशत लोग उनकी जरूरत को पूरा करनेवाले धन्धो मे लगे हुए हैं इसलिए खेती और बुनाई का खासा अच्छा व्यावहारिक ज्ञान यहा के प्रत्येक तरुण के शिक्षण का एक भाग होना चाहिए। अगर उसे औजारो का उचित उपयोग आ जाय, अगर वह एक लकडी का तख्ता सीधा-सीधा चीर सके और गुनिये का सही उपयोग करके ऐसी दीवार उठा सके जो बिल्कुल सीधी हो और जो इस कारण गिर नही सकती, तो उसमे बुराई की कोई बात नही,है। जो बालक यह सब काम करने मे समर्थ हो जायगा, वह जीवन-सघर्ष मे कभी निराश नही होगा और धन्धे की समस्या उसके लिए कोई समस्या न होगी। इसके सिवाय स्वास्थ्य और सफाई के नियम तथा शिशु-पालन भी गुरुकुल के विद्यार्थियो की शिक्षा का एक आवश्यक अग होना चाहिए। यहा मेले मे सफाई की जो व्यवस्था होती है, उसमे अभी बहुत कसर है। यह बात मक्खियो की भरमार से स्पष्ट हो जाती है। मक्खियाँ मानो अदम्य स्वास्थ्य-निरीक्षिकाए है। वे हमे लगातार हिदायतें देती रहती हैं कि सफाई के मामले मे अभी तक सब-कुछ सम्पूर्ण नही किया गया है। उनकी भरमार से यह स्पष्ट हो जाता है कि जूठन और मल पर ठीक ढग से मिट्टी नही डाली गई है। मुझे यह सोचकर बडा दुख हुआ कि हम इस स्वर्ण अवसर को यो ही खो दिया करते हैं। इस अवसर पर आनेवाले यात्रियो को सफाई के पदार्थ-पाठ पढाये जा सकते हैं। किन्तु यह काम शुरू तो गुरुकुल के विद्यार्थियो से ही होना चाहिए। यदि ऐसा हो, तो व्यवस्थापक लोगो के पास वार्षिक उत्सव

के समय ३०० सीखे-सिखाये स्वास्थ्य-शिक्षक मौजूद रहें। अन्त में एक महत्वपूर्ण बात और। बच्चों के माता-पिता और संस्था की समिति अपने बच्चों को यूरोपीय वेश-भूषा और आधुनिक विलास की सामग्री मुहैया करके उन्हें नकल करना न सिखाये। अपने परवर्ती जीवन में ये चीजें उनके मार्ग में बाधा डालनेवाली बनेंगी और ब्रह्मचर्य के विरोध में आयंगी। यह दुष्ट प्रवृत्ति सभी लोगों में फैल रही है और इन्हें तो इससे लड़ना ही चाहिए। हम उनकी वासनाओं को बढ़ाकर इन प्रवृत्तियों के विरुद्ध संघर्ष को और कठिन न बनायें।

—हिन्दी। हरद्वार, २०।३।१९१७। अंग्रेजी। 'स्पीचेज़ एण्ड राइटिंग्ज़ आफ महात्मा गांधी' से]

८. भाषण : गुरुकुल के पुरस्कार-वितरण समारोह में

मैं देखता हूं, इन ग्रामीण पाठशालाओं में शिक्षा का स्तर एक-जैसा नहीं है। कुछ तो धनिकों की पाठशालाओं के समान ही अच्छा कार्य कर रही हैं, किन्तु कुछ में बहुत ही अपर्याप्त शिक्षा दी जाती है। अछूतों के प्रति न्याय करने के लिए हमें अपने बच्चे हरिजनों की पाठशालाओं में भेजने ही चाहिए और ध्यान रखना चाहिए कि उनके शैक्षणिक स्तर में गिरावट न आने पाये। किन्तु एक बात और है। शिक्षा ऐसी न हो कि वह इन ग्रामीण कार्यकर्त्ताओं को, अस्वास्थ्यकर नगरों में खानसामा, कारखानों के मैले-कुचैले मजदूर और निम्न श्रेणी के बाबू या मुंशी बना दे। उनकी शिक्षा ऐसी हो कि वे अपने पिताओं के पेशे अधिक वैज्ञानिक ढंग से तथा अधिक कुशलता से अपना सकें। पाठशाला को ग्रामीण जीवन, ग्रामीण शिल्प, खुली हवा, आजादी तथा अपने लोगों की सेवा के प्रति आकर्षण उत्पन्न करना चाहिए[1]।

—हिन्दी। हरद्वार, २०।३।१९१६। अंग्रेजी से। वैदिक मैगज़ीन, अप्रैल-मई १९१६। सं० गां० वां० खण्ड १३ पृ० २६२]

९. भाषण : आर्यसमाज-भवन, हरद्वार में

आर्यसमाज-भवन में शाम को दयानन्द आंग्ल वैदिक स्कूल के विद्यार्थी ले जाये गये और श्री गांधी ने अस्वस्थ होने के कारण छोटा-सा भाषण दिया।

---

१. भाषण का इतना ही अंश उपलब्ध है।

श्रोताओं को भी गांधी जी ने अपने विश्वास के मुताविक आचरण करने का आग्रह किया और कहा कि मार्गदर्शक या शासकों का अनुसरण करने में हमे उनके बाहरी व्यवहार की नकल नहीं करनी चाहिए।

उनका रहन-सहन, उनकी पोशाक अथवा रीति-रिवाज जैसे मांस खाना आदि हमारे आदर्श नहीं वन सकते। उन्होंने विद्यार्थियों से कहा कि उन्हें अपनी आत्मा के प्रति सच्चा वनना चाहिए और तभी वे देश के प्रति सच्चे वन सकेंगे।

—हिन्दी। हरद्वार २३।३।१९१६। अंग्रेजी से। सीक्रेट एक्स्ट्रैक्ट्स १९१६ पृ० २४३-४। सं० गां० वा० खण्ड १३, पृ० २६७]

१०. भाषण : म्योर कालेज, इलाहाबाद में

[श्री गांधी ने म्योर सेण्ट्रल कालेज, इलाहाबाद की अर्थशास्त्र-विभाग समिति (इकानामिक सोसाइटी) के तत्वावधान मे आयोजित एक सभा में एक सारगर्भ भाषण दिया। सभा के अध्यक्ष थे, माननीय पं० मदनमोहन मालवीय। सभा मे आये हुए प्रतिष्ठित व्यक्तियो मे माननीय डा० तेजवहादुर सप्रू, माननीय डा० सुन्दरलाल[1], श्री एच० एस० एल० पोलक, श्री सी० वाई० चिन्तामणि, श्री शिवप्रसाद गुप्त, श्री पुरुषोत्तमदास टण्डन तथा डा० ई० जी० हिल के नाम उल्लेखनीय हैं। व्याख्यान का विषय था : 'क्या आर्थिक उन्नति वास्तविक उन्नति के विपरीत बैठती है?' अध्यक्ष के द्वारा श्री गान्धी का परिचय दिये जाने के पश्चात् श्री गांधी का व्याख्यान प्रारम्भ हुआ था।—सम्पा०]

प्रस्तुत विषय पर आप लोगों के समक्ष वोलने के लिए आज जव मैंने प० कपिलदेव मालवीय का निमन्त्रण स्वीकार किया, उस समय मेरा ध्यान अपनी सीमाओ की ओर गया और मुझे अपनी कमियो पर खेद भी हुआ। आपकी समिति (इकानामिक सोसाइटी) अर्थशास्त्रीय विषयो के अध्ययन से सम्वन्ध रखती है और आपने अपनी कार्यक्रम-पत्रिका मे इस वर्ष तथा अगले वर्ष के लिए नियत किये गये विषयो पर भाषण देने के निमित्त प्रख्यात विशेषज्ञो को चुन रक्खा है। उनमे केवल मैं ही ऐसा आदमी हू जिसमे सौंपे हुए कार्य को सुचारु रूप से निवाहने की क्षमता नही है। सच कहू तो वास्तव मे आप लोग अर्थशास्त्र को जिस रूप मे

---

१. सर सुन्दरलाल इलाहावाद के विख्यात वकील तथा उस समय विश्वविद्यालय के उपकुलपति।

जानते है उस रूप में इस विषय का मेरा ज्ञान बहुत ही स्वल्प है। अभी एक दिन शाम को मैं एक मित्र के साथ भोजन कर रहा था। तभी उसने मेरी खब्तों के बारे में सवालों की झड़ी लगा दी। चूंकि मैंने स्वेच्छा से ही अपने को उसकी जिरह का शिकार बन जाने दिया, उसे बड़ी आसानी से यह मालूम हो गया कि उसकी समझ में मैं जिन विषयों पर किसी ज्ञान-बन्धु की तरह बोलता हूं, बताता हूं उनमें मैं बिल्कुल कोरा हूं और मुझे अपने अज्ञान की खबर नही है। मेरा खयाल है कि जब उसे यह मालूम हुआ कि मैने मिल, मार्शल, एडम स्मिथ, जैसे विख्यात अर्थशास्त्रियों के ग्रन्थों का अवलोकन तक नही किया है, तब उसे बड़ा अचम्भा हुआ और उसे मेरे प्रति बड़ी झुँझलाहट भी हुई। हताश होकर उसने अन्त में मुझे यही सलाह दी कि मैं अर्थशास्त्र-सम्बन्धी मामलों पर प्रयोग करने और इस प्रकार जनसाधारण के समय एवं धन का दुरुपयोग करने से पूर्व उपर्युक्त लेखकों की कृतियों को पढ़ जाऊं। उस बेचारे को यह मालूम न था कि मैं ऐसा व्यक्ति हूं कि उन पुस्तकों को पढ़ जाने पर भी मूढ़ का मूढ़ ही रहूंगा। मैं अपने उन मित्रों के बल पर, जो मुझमें विश्वास रखते हैं, अपने प्रयोग करता ही रहता हूं। क्योंकि जीवन में कभी ऐसा भी अवसर आता है जब हमें कुछ बातों के बारे में बाहरी प्रमाण की आवश्यकता नहीं रह जाती। हमारी अन्तरात्मा से यही ध्वनि निकलती है कि तुम ठीक रास्ते पर हो, दायें-बायें मुड़े बिना सीधे चलते-चलते जाओ। इस प्रकार की सहायता के सहारे हम धीमे ही सही आगे की ओर निश्चित रूप से निरन्तर बढ़ते जाते हैं; मेरी यही स्थिति है। यह स्थिति मेरे लिए तो सन्तोषजनक हो सकती है परन्तु आपकी जैसी संस्थाओं की आवश्यकताएं उससे किसी भी प्रकार पूरी नही हो सकती। इन सबके होते हुए भी पं० कपिलदेव मालवीय को मेरा नाम व्याख्यान-दाताओं की सूची में न रखने के लिए समझाना-बुझाना था। मैं जानता था कि वह आप लोगों के समक्ष किसी-न-किसी दिन पेरा भाषण कराने पर तुले हुए हैं। शायद मेरे आज के भाषण को सुनकर आप मन में यही सोचेंगे कि चलो अच्छा हुआ, रोज-ब-रोज एक ही तरह के सिद्धान्तों के प्रतिपादन और उनकी बारीकियों के निरूपण से एक दिन तो विश्राम मिला। बहुत दिनों तक लगातार स्वादिष्ट भोजन करते रहने पर बीच-बीच में लंघन करना प्राय: आवश्यक हो जाया करता है। जो बात शरीर के लिए कही जा सकती है, वही मस्तिष्क के लिए भी। और यदि आज आपके मस्तिप्क को बढ़िया-बढ़िया व्यंजन न मिले और वह भूखा ही रह जाये तो, निश्चय ही आप लोग आगामी १२ तारीख को रायबहादुर चन्द्रिका प्रसाद का भाषण सुनकर अधिक तृप्ति का अनुभव करेंगे।

मेरे निजी अनुभवो और प्रयोगों को सुनने के पूर्व यह उचित होगा कि हम

लोग पहले आज के व्याख्यान के शीर्षक के अर्थ के वारे मे आपस मे सहमत हो लें। हमारे व्याख्यान का विषय है—"क्या आर्थिक उन्नति वास्तविक उन्नति के विपरीत वैठती है?" मेरा खयाल है कि आर्थिक उन्नति का अर्थ हम सीमा-विहीन भौतिक प्रगति लगाते है और वास्तविक उन्नति को हम नैतिक प्रगति का पर्याय मानते हैं। यह नैतिक प्रगति हमारे ऊपर अन्तर मे रहनेवाले शाश्वत अग के विकास के सिवा और क्या है? अतएव प्रस्तुत विषय को दूसरे शब्दो मे इस प्रकार रखा जा सकता है 'क्या नैतिक उन्नति उसी अनुपात मे नही हुआ करती जिस अनुपात मे भौतिक उन्नति होती है?' मैं जानता हू कि यह विषय प्रस्तुत विषय की अपेक्षा अधिक व्यापक है, परन्तु मेरा खयाल है कि छोटे प्रश्न को वढाते समय भी हमारा अभिप्राय वडे प्रश्न से ही रहा करता है। हममे विज्ञान की इतनी जानकारी ज़रूर है कि हमारे इस गोचर विश्व मे पूर्ण गतिशून्यता-जैसी कोई वस्तु नही है। इसलिए यदि भौतिक उन्नति नैतिक प्रगति के विरोध मे नही पडती तो वह उसके विकास मे सहायक हुए विना नही रह सकती और फिर अपने को वृहत्तर समस्या का समर्थन करने मे असमर्थ पानेवाले व्यक्ति कभी-न-कभी जिस भद्दे ढग से अपनी वात सामने रखते हैं हमे उससे भी सन्तोष नहीं हो सकता।

स्वर्गीय सर विलियम हण्टर ने कहा है कि भारत मे तीन करोड व्यक्ति केवल एक वक्त खाकर वसर करते हैं। मालम होता है कि लोग इसी कथन को इतना सत्य मान वैठे हैं कि दूसरी कोई वात उनके दिमागो मे घुस ही नही सकती। वे कहते हैं कि लोगो की नैतिक उन्नति की वात सोचने या उसका जिक्र करने के पहिले हमें उनकी रोज-रोज की जरूरतें पूरी करनी चाहिए। उनका कहना है कि उनके लिए भौतिक उन्नति ही उन्नति है। इसके वाद वे एक दम एक लम्वी छलाग लगाकर इस निष्कर्ष पर जा पहुँचते हैं कि जो वात तीन करोड के वारे में सत्य है वही समस्त ससार के लिए भी है। वे भूल जाते हैं कि अपवाद-रूप मामलों के आधार पर कोई नियम निर्धारित नही किया जा सकता। यह कहना आवश्यक नही है कि यह निष्कर्ष कितना गलत है और हास्यास्पद है। यह तो आज तक किसी ने भी नही कहा कि अतिशय दरिद्रता नैतिक पतन के अतिरिक्त कुछ और दे सकती है। प्रत्येक मनुष्य को जीवित रहने का अधिकार है और इसलिए उसे पेट भरने के लिए भोजन तथा आवश्यकतानुसार तन ढकने के लिए वस्त्र और रहने के लिए मकान मुहैया करने का अधिकार है। परन्तु इस विलकुल मामूली मे काम के लिए हमे अर्थशास्त्रियो अथवा उनके द्वारा गढे गये विषयो की मदद की जरूरत नही है।

ससार के सभी धर्मग्रन्थो मे इस आशय के आदेश मिलते है कि कल की चिन्ता मत करो। किसी भी सुव्यवस्थित समाज मे रोजी कमाना सवसे सुगम वात

होनी चाहिए और हुआ करती है। निस्सन्देह किसी देश की सुव्यवस्था की पहचान यह नहीं है कि उसमें कितने लखपति लोग रहते हैं बल्कि यह कि जनसाधारण का कोई भी व्यक्ति भूखों तो नही मर रहा है। अब केवल यही बात देखनी रह जाती है कि भौतिक उन्नति का अर्थ ही नैतिक उन्नति है, यह सब जगह और सब समय में लागू होने वाला नियम माना जा सकता है या नही।

आइए, अब कुछ दृष्टान्त लें। भौतिक उन्नति के उच्च शिखर पर पहुँचते ही रोमन लोगों का नैतिक पतन आरम्भ हो गया। मिश्र देश में भी यही हुआ और कदाचित् उन सभी देशों में भी, जिनका इतिहास हमें उपलब्ध है, ऐसा ही हुआ है। परमात्मा की विभूतियों से विभूषित कृष्णचन्द्र महाराज के कुटुम्बियों का, यादवों का भी, जब वे खूब दौलतमन्द होकर गुलछर्रे उड़ाने लगे, पतन हो गया। अमेरिका के प्रसिद्ध धनी राक फैलर और कारनेगी या ऐसे ही दूसरे लोगों में सामान्य नैतिकता का अभाव है, ऐसा मै नही कह रहा हूं, परन्तु हम लोग उनके अवगुणों की ओर ध्यान न देकर उनकी प्रशंसा ही किया करते हैं। मेरे कहने का मतलब यह है कि हम उनसे नैतिकता की कड़ी-से-कड़ी कसौटी पर खरे उतरने की आशा भी नही करते। उनके लिए भौतिक उन्नति का अनिवार्य परिणाम नैतिक उन्नति नही हुआ। दक्षिण अफ्रीका में मुझे अपने हजारों देशवासियों के निकट सम्पर्क में आने का सौभाग्य प्राप्त था। मैंने वहां लगभग सदा यही देखा कि आर्थिक दृष्टि से जो जितना सम्पन्न होता था उसका नैतिक स्तर गया-गुजरा होता था। और कुछ नही तो इतना तो कहा ही जा सकता है कि सत्याग्रह के हमारे नैतिक संघर्ष को गरीबों से जितना बल मिला, उतना अमीरों से नही। वहां की स्थिति को देखकर धनाढ्य लोगों के स्वाभिमान को वैसी ठेस नही लगती थी जैसी निर्धन-से-निर्धन व्यक्तियों के हृदयों को पहुँचती थी। वैसे तो मै अपने देश के ही दृष्टान्त देकर आपके सामने यह प्रमाणित कर देता कि धन-सम्पत्ति का बाहुल्य व्यक्तियों की वास्तविक उन्नति के मार्ग में बाधक हुआ है। किन्तु वैसा करना खतरे से खाली नही है। मेरा खयाल है कि अर्थशास्त्र-सम्बन्धी नियमों के बारे में अर्थशास्त्र के बदले हमारे धर्मग्रन्थ हमारा अधिक उचित मार्ग-दर्शन करते है। आज जिस प्रश्न की चर्चा हम कर रहे है वह नया नही है। दो हजार वर्ष पूर्व ईसा मसीह से भी वही प्रश्न पूछा गया था। संत मार्क ने उस दृश्य का बड़ा सजीव चित्रण किया है। ईसा सामने विराजमान हैं। उनका भाव शान्त, उदार है और मुखमुद्रा वीर-गम्भीर। वह अमरता के सम्बन्ध में कुछ कहते है। अपने आसपास के ससार का उनको पूरा ज्ञान है। वे स्वयं अपने काल के सबसे बड़े अर्थशास्त्री हैं। देश और काल को नाप कर उसका अधिकतम सदुपयोग करके,

वह देश और काल से ऊपर उठ चुके हैं। ऐसे सर्वसम्पन्न (परमश्रेष्ठ) ईसा के पास एक जिज्ञासु हाँफता हुआ आता है, घुटने टेक कर नमन करता और पूछता है : "हे कृपासिन्धु प्रभु, बताइए मैं किस रास्ते चलूं कि अविनाशी जीवन की विरासत पा जाऊं ?" ईसा ने उससे कहा—"तुम मुझे कृपासिन्धु क्यो कहते हो ? एक को छोड कर और कोई कृपासिन्धु है ही नही और वह है परमात्मा। तुम धर्मानुशासनो (कमाण्डमेण्ट्स) से परिचित हो। व्यभिचार मत करो, अपने माता-पिता का आदर करो।" उस व्यक्ति ने उत्तर मे कहा—"प्रभो ! इन सब उपदेशो पर मैंने युवावस्था से ही आचरण किया है।" इस पर ईसा ने उसे धन्यवाद दिया। उन्होंने उस पर स्नेह-वर्षा करते हुए कहा—"तुममे एक बात की कमी रह गई है। लौट जाओ, जो कुछ तुम्हारे पास है उसे बेंच डालो और इस प्रकार प्राप्त धन को गरीबो मे बाँट दो, तो तुम्हें स्वर्ग-निधि प्राप्त होगी। आओ, इस क्रास को हाथ मे ले लो और मेरे पीछे चलो।" यह सुनकर वह व्यक्ति उदास हो गया और चल दिया, क्योकि उसके पास बहुत बडी जायदाद थी। ईसा मसीह ने इधर-उधर निगाह दौडाई और अपने शिष्यो से कहा—"जिनके पास दौलत है वे ईश्वर के राज्य मे किस प्रकार प्रवेश पा सकते हैं ?" यह सुनकर शिष्यगण अचम्भे मे आ गये। परन्तु ईसा ने उनसे बार-बार कहा—"बच्चो ! जो लोग अपनी दौलत पर भरोसा रखते हैं उनके लिए ईश्वर के राज्य मे प्रवेश पाना कितना दुष्कर है। सुई के छेद से ऊँट का गुजर जाना आसान है, परन्तु धनाढ्य व्यक्ति के लिए ईश्वर के राज्य मे प्रवेश पाना कठिन है।" इस दृष्टान्त मे जीवन का शाश्वत नियम अत्यन्त सुन्दर शब्दो मे व्यक्त है। परन्तु शिष्यो को प्रतीति नही हुई। आजकल भी ऐसा ही देखने मे आता है। ईसा मसीह से उन्होंने कहा, जैसा कि आजकल हम कहा करते हैं—"व्यवहार मे तो यह नियम चलता नही है। अगर हम सब-कुछ बेच डालें, अपने पास कुछ न रक्खें, तो खायेंगे क्या ? हमारे पास रुपया होना ही चाहिए वर्ना हम सामान्य रूप से भी नीतिवान नही बने रह सकते।" वे आश्चर्य-चकित स्वर मे आपस मे कहने लगे—"तो फिर परित्राण किसका सम्भव है ?" ईसा मसीह ने उनकी ओर मुखातिब होकर कहा—"मनुष्य के लिए यह असम्भव जरूर है, परन्तु ईश्वर के लिए नही। क्योकि ईश्वर के लिए हर एक काम सम्भव है।" उसके पश्चात् पीटर ने उनसे कहा—"देखिए, हम लोगो ने अपना सब-कुछ त्याग दिया है। हमने आपके आदेश का पालन भी किया है।" ईसा मसीह ने उत्तर मे कहा—"सत्य मानो, जिसने भी अपना घर, भाई-बहिन, माता-पिता, पुत्र-कलत्र, जमीन इत्यादि का मेरे तथा धर्मो के निमित्त त्याग किया हो, उसे यहा यह सब सौगुना मिलेगा। बेशक उसे अत्याचार सहने

के लिए भी तैयार रहना होगा और परलोक में मोक्ष मिलेगा। परन्तु लोगों में से वहुतेरे आज जो आगे है, पीछे रह जायँगे और पीछे की पंक्तिवाला आगे पहुँच जायगा।" सज्जनो, नीति का फल अथवा यदि यह शब्द आपको ठीक न लगे तो नीति का पुरस्कार यही है।

मैंने ये वाक्य एक ऐसे धर्मग्रन्थ से उद्धृत किये है जो हिन्दू-धर्म का ग्रन्थ नही है। मैं अन्य अहिन्दू-ग्रन्थों से उपर्युक्त प्रकार के वाक्य उद्धृत करने की परेशानी में नही पड़ूँगा और ईसा मसीह-द्वारा प्रतिपादित सिद्धान्त के समर्थन में मैं भारतीय ऋषि-मुनियों द्वारा कहे या लिखे गये वाक्यों को, ऐसे वाक्य जो इंजील (वाइविल), के उपर्युक्त वाक्यों से सम्भवतः अधिक जोरदार हैं, उद्धृत करके आपको खिन्न नहीं करूँगा। प्रस्तुत प्रश्न के इस उत्तर के अनुमोदन के लिए सबसे अधिक विश्वसनीय और जोरदार प्रमाण संसार के सबसे बड़े उपदेशकों के जीवन-चरित्र हैं। ईसा मसीह, मुहम्मद, बुद्ध, नानक, कबीर, चैतन्य, शंकराचार्य, दयानन्द, रामकृष्ण ऐसे व्यक्ति थे जिनका लाखों नरनारियों के हृदयों पर प्रभाव था और जिन्होंने असंख्य व्यक्तियों का चरित्र गढ़ा है। ये महापुरुष इस पृथिवी पर अवतरित हुए, और उनके अवतरित होने से विश्व की नैतिकता में समृद्धि हुई। ध्यान रहे कि ये सब ऐसे व्यक्ति थे जिन्होंने जान-बूझकर गरीबी को अपनाया था।

यदि मेरा यह विश्वास न होता कि जिस हद तक हम आधुनिक भौतिकवाद के पीछे दीवाने बने रहेंगे उस हद तक हम उन्नति के मार्ग से दूर रहकर अवनति की दिशा में अग्रसर होते जायँगे, तो मैंने आज जो इस प्रकार विस्तारपूर्वक अपनी बात आपके सामने रखने का प्रयास किया है सो कदापि न करता। मेरी धारणा है कि आर्थिक उन्नति उस अर्थ में जिसमें उसे मैने आपके समक्ष रखा है, वास्तविक उन्नति के विरुद्ध पड़ती है। यही कारण है कि हमारा प्राचीन आदर्श धन-सम्पत्ति में वृद्धि करनेवाली गतिविधियों पर नियन्त्रण रखता रहा है। इससे भौतिक समृद्धि की आकांक्षा समाप्त हो जाती है, सो बात नही है। हमारे मध्य जैसा कि सदा से होता आया है आगे भी ऐसे व्यक्ति पैदा होते रहेंगे जिन्होंने अपने जीवन का लक्ष्य धन अर्जित करना ही बना रक्खा है। परन्तु हमारा सदा से ही यह विचार रहा है कि धनोपार्जन को लक्ष्य बना लेना आदर्श से गिर जाना है। आपको यह जानकर आनन्द होगा कि हममें से सब-से-अधिक धनवान व्यक्तियों ने प्रायः अनुभव किया है कि यदि हमने स्वेच्छा से निर्धनता अपनाई होती तो वह स्थिति हमारे लिए उच्चतर होती। परमेश्वर और माया दोनों को एक साथ नही साधा जा सकता। यह अत्यन्त महत्वपूर्ण आर्थिक सत्य है। हमें इन दोनों में से एक को चुन लेना है। आज पाश्चात्य देश भौतिकवाद रूपी राक्षस के पांवों तले पड़े हुए

कराह रहे हैं। उनकी नैतिक उन्नति को जैसे लकवा मार गया है, वे अपनी उन्नति का मापदण्ड रुपया, आना, पाई वनाये हुए हैं। अमेरिका की दौलत उनका मापदण्ड वनी हुई है। अन्य राष्ट्र उसी के समान धनाढ्य वनने की इच्छा रखने लगे हैं। मैंने अपने अनेक देशवासियो को कहते हुए सुना है कि हम अमेरिका की तरह धनवान होना तो पसन्द करेंगे परन्तु उसके तरीके न अपनायेंगे। मेरा नम्र निवेदन है कि यदि इस प्रकार का प्रयास किया गया तो वह असफल हुए विना न रहेगा। हम एक ही समय मे वुद्धिमान, सयमशील और क्रूर नही हो सकते। मैं अपने नेताओ से इस वात की अपेक्षा करूँगा कि वे हमे ससार-भर मे सबसे अधिक नीतिवान वनना सिखायें। हमे वताया गया है कि हमारे इस देश मे किसी समय देवता निवास करते थे। जिस देश को मिलो की चिमनियो से निकलने वाला धुआ और कारखानो का कर्कश स्वर भयजनक वनाये हुए है, जिसकी सडको पर मुसाफिरो से खचाखच-भरी असख्य मोटर-गाडिया तेजी के साथ इधर-से-उधर दौड रही हैं और जिसकी इन मोटर-गाडियो मे लक्ष्य को भूले हुए ऐसे यात्री सवार हैं जो प्राय भ्रान्तचित्त रहा करते हैं और जिन्हे उन वाहनो मे भेड-वकरी की तरह भर दिये जाने के कारण तथा विल्कुल अपरिचित, असहिष्णु, विद्वेषपूर्ण व्यक्तियों के साथ, जो यदि उनका वस चले तो परस्पर एक-दूसरे को निकाल वाहर करते, यात्रा करने के लिए विवश होने के कारण अपना होश नही रहता, उस देश मे देवताओ का निवास असम्भव है। मैं इन वातो का जिक्र इसलिए कर रहा हू कि ये भौतिक उन्नति की प्रतीक मानी जाती हैं। परन्तु इनसे हमारी सुख-समृद्धि में किंचित् भी वृद्धि नही होती। महान वैज्ञानिक वैलेस अपने सुचिन्तित विचार इन शब्दों मे व्यक्त करते हैं

"अतीत काल से चला आनेवाला साहित्य जो हमें आज उपलब्ध है, उससे स्पष्टतः प्रकट होता है कि आज जो सामान्य नैतिक विचार और धारणाएं नैतिकता का सर्व-स्वीकृत मानदण्ड और इनसे उत्पन्न होनेवाला जो पारस्परिक व्यवहार देखने मे आता है, वह आज की अपेक्षा प्राचीनकाल में किसी प्रकार भी कम न था।"

वही लेखक अनेक परिच्छेदो मे इस वात का विवेचन करता है कि ब्रिटिश राष्ट्र की धन-सम्पत्ति की वृद्धि के साथ-साथ क्या दशा हुई। वह कहता है—

"धन-सम्पत्ति की इस वेगवती उन्नति तथा प्रकृति पर हमारा प्रभुत्व स्थापित होने के फलस्वरूप हमारी अपरिपक्व सभ्यता और हमारे दिखावटी ईसाई धर्म पर वहुत बड़ा वोझ आ पडा है। और यह उन्नति अपने आप अनीति को उसके नाना प्रकार के रूपों मे लाई है जो उतनी ही आश्चर्यजनक और अभूतपूर्व है जितनी की सम्पत्ति की वृद्धि।"

आगे चलकर वह बताते हैं कि किस प्रकार आदमियों, औरतों और बच्चों की लाशों पर कारखाने खड़े किये गये हैं और किस प्रकार ज्यों-ज्यों वह देश तेजी से धनवान बनता गया त्यों-त्यों उसका नैतिक पतन होता गया। वह अपनी इस बात के प्रमाण में अस्वच्छता, प्राणघातक व्यवसाय, जिन्सों में मिलावट, रिश्वत-खोरी, जुआ इत्यादि का उल्लेख करते हैं। वह यह भी सिद्ध करते हैं कि ज्यों-ज्यों दौलत बढ़ती गई, त्यों-त्यों न्याय में अनैतिकता आती गई, मद्यपान के कारण मृत्यु-संख्या और आत्मघात की घटनाओं में वृद्धि हुई है, समय से पूर्व प्रसव और तत्सम्बन्धी खराबियां बढ़ गई हैं और वेश्यागमन ने संस्था का रूप धारण कर लिया है। लेखक ने वर्तमान अधोगति का वर्णन इन सारगर्भ शब्दों में समाप्त किया है :

"दौलत और निठल्लेपन के परिणामों के दूसरे पहलुओं के बारे में हम तलाक-अदालतों के कार्य-विवरण से बहुत-कुछ जान सकते हैं। मेरे एक मित्र हैं जो लन्दन में बहुत अर्से तक रहे हैं। वह निश्चयात्मक रूप से कहते हैं कि धनिकों के देहाती घरों में और खुद लन्दन शहर में ऐसी-ऐसी बदमाशियाँ प्रायः देखने में आती हैं जैसी बड़े-से-बड़े दुराचारी सम्राटों के शासनकाल में भी न हुई होंगी। युद्ध के विषय में मुझे कुछ कहना ही नहीं है। रोम सम्राज्य के उत्थान के दिनों से युद्ध जल्दी-जल्दी होने लगे हैं, परन्तु निश्चय ही आज सभी सभ्य राष्ट्रों में युद्ध के प्रति भारी अरुचि उत्पन्न हो गई है। शान्ति के पक्ष में उत्कट धार्मिक भावना के साथ की गई घोषणाओं के सन्दर्भ में शस्त्रास्त्रों के उस भण्डार का विचार करें, जिसका राष्ट्रों ने संग्रह कर रक्खा है, तो उससे यह प्रकट होता है कि शासक-वर्गों में एक व्यावहारिक मार्ग-दर्शक सिद्धान्त के रूप में नैतिकता का पूर्ण अभाव हो गया है।"

ब्रिटिश छत्रछाया में हमने बहुत-कुछ सीखा है, परन्तु यह मेरा निश्चित मत है कि ब्रिटेन यथार्थ नैतिकता की दिशा में कुछ भी देने में असमर्थ है। मेरी यह भी धारणा है कि यदि हम जागरूक न रहे तो उन सब अवगुणों का, जिनका ब्रिटेन शिकार बना है, समावेश हो जायगा। इसका कारण भौतिकवाद से उत्पन्न होनेवाले दोषों के सिवा और कुछ नहीं है। हम उस सम्बन्ध से उसी दिशा में लाभ उठा सकते हैं जब हम अपनी सभ्यता और अपनी नैतिकता को विचलित न होने दें अर्थात् यदि हम अपने गौरवमय अतीत की डींग न हाँककर स्वयं अपने जीवन में उन दिव्य गुणों को उतारें और हमारा जीवन हमारे भूतकाल की साक्षी दे। उसी हालत में हम उसे (ब्रिटेन को) तथा स्वयं अपने को लाभ पहुँचा सकेंगे। यदि हम ब्रिटेन की नकल इसलिए करते हैं कि हमारा शासक-वर्ग वहां का है तो हमारी और उन दोनों की अवनति होगी। हमें आदर्शों के पूर्णतया कार्यान्वित

करने से भयभीत नही होना चाहिए। हमारा राष्ट्र सच्चे अर्थ मे आध्यात्मिक राष्ट्र उसी दिन होगा जब हमारे पास सोने की अपेक्षा सत्य का भण्डार अधिक होगा, धन और शक्ति के प्रदर्शन की अपेक्षा निर्भयता अधिक होगी और अपने प्रति प्रेम की अपेक्षा दूसरो के प्रति उदारता अधिक होगी। यदि हम केवल इतना ही करें कि अपने घरो, मुहल्लो और मन्दिरो मे धन के आडम्बर का प्रवेश न होने देकर नैतिकता का वातावरण पैदा करें तो हम भारी रणसज्जा का बोझ उठाये बिना शत्रु से, वह चाहे कितना भीषण क्यो न हो, निपट सकते हैं। हमे सर्वप्रथम दैवी सम्पद् की, परमपिता के राज्य और उसकी पवित्रता की कामना करनी चाहिए। जो ऐसा करेगा उसे यह अमोघ वचन मिला हुआ है कि उसके पास सब वस्तुए आ जायेंगी। सच्चा अर्थशास्त्र यही है। ईश्वर करे हम और आप दैवी सम्पद का सञ्चय करे और अपने जीवन मे उसे उतारें।"

इसके अनन्तर गाधीजी से कुछ प्रश्न पूछे गये। प्रोफेसर जेवन्स ने कहा—समाज के लिए अर्थशास्त्रियो का रहना आवश्यक है। (समाज का) लक्ष्य क्या होना चाहिए, इसे निर्धारित करना उनका काम नहीं है। यह काम दार्शनिकों का है।

प्रोफेसर गिडवानी ने, जो कि म्योर कालेज इकानामिक सोसाइटी के अध्यक्ष थे, श्री गांधी को धन्यवाद दिया।

प्रोफेसर हिगिनबॉटम ने कहा कि ऐसा कोई भी आर्थिक प्रश्न नहीं है जिसे नैतिक प्रश्न से अलग किया जा सके।

श्री गाधी ने प्रो० जेवन्स के कथन के सम्बन्ध में अपना विचार व्यक्त करते हुए कहा :

"कूडा-करकट गलत जगह मे रखे हुए पदार्थ के सिवा और कुछ नही है, ऐसा कहा जाता है। इसी प्रकार जब कोई अर्थशास्त्री गलत जगह पर आ बैठता है तब वह हानिप्रद बन जाता है। जिस प्रयोजन के लिए उसकी सृष्टि हुई है यदि अर्थशास्त्री अपने उसी क्षेत्र मे रहे तो मैं यह मानता हू कि प्रकृति की व्यवस्था मे अर्थशास्त्री का भी स्थान है। यदि कोई अर्थशास्त्री ईश्वर के बनाये नियमो की खोज-बीन नही करता और निर्धनता-निवारण को लक्ष्य मानकर सम्पत्ति कैसे बाँटी जाय, हमे यह नही बताता, तो उसने भारतभूमि पर नाहक ही जन्म लिया है। मैं एक और बात अर्थशास्त्र के विद्यार्थियो तथा अध्यापको के विचारार्थ रखना चाहता हू, वह यह है कि जो बात इग्लैण्ड और अमेरिका के लिए अच्छी हो सकती है, यह जरूरी नही कि वह भारत के लिए भी अच्छी ही हो। मेरा विचार तो यह है कि नैतिक सिद्धान्तो से सगति रखनेवाले अर्थशास्त्र-सम्बन्धी अधिकाश सिद्धान्त

ाब जगह समान रूप से लागू किये जा सकते है। किन्तु अलग-अलग क्षेत्रों में नके विनियोग में थोड़ा-बहुत अन्तर तो करना ही होगा। इसलिए मै चेतावनी ा चाहता हूं कि चूकि भारतीय परिस्थिति कुछ बातों में अमेरिका और इंग्लैण्ड ी परिस्थिति से बहुत भिन्न है, अर्थशास्त्रियों को चाहिए कि वे अपने सामने ानेवाली बातों पर नये दृष्टिकोण से विचार किया करें। ऐसा करने से अर्थ-ास्त्री और भारतीय जनता दोनो ही लाभान्वित होंगे। श्री हिगनबाटम वास्त-वेक अर्थशास्त्र का अध्ययन कर रहे है और भारत के लिए इसी प्रकार का अर्थशास्त्र बहुत जरूरी है। वह अपने अध्ययन को क्रमशः कार्यरूप में परिणत कर रहे हैं और चाहे हम विद्यार्थी हों या शिक्षक हमारे लिए इसी नीति पर चलते जाना सर्वोत्तम होगा।"

एक विद्यार्थी के प्रश्नों के उत्तर में गांधी जी ने कहा—

मनुष्य को चाहिए कि वह अपने निजी स्वार्थ के लिए धन-संग्रह न करे, परन्तु यदि वह भारत के करोडों निवासियो के न्यासी की भाँति धन-संग्रह करना चाहता है तो मै कहूंगा कि वह जितना चाहे उतना धन इकट्ठा कर सकता है। साधारण-तया अर्थशास्त्री अर्थशास्त्र के नियम अमीर लोगों के (लाभ के) लिए रचते है। ऐसे अर्थशास्त्रियो का मैं सदा विरोध करूंगा।

"अब मै दूसरे प्रश्न को लेता हूं। प्रश्न यह पूछा गया है कि क्या कारखानों को मिटाकर कुटीर-उद्योगों को चालू करना ज्यादा अच्छा न होगा? मैं इस सुझाव को पसन्द करता हू, परन्तु अर्थशास्त्रियों को चाहिए कि सबसे पहले धैर्यपूर्वक अपनी देशी संस्थाओ पर नजर डालें। यदि वे निकम्मी है, तो उन्हें समूल नष्ट कर देना चाहिए और यदि उनमे सुधार और उन्नति की गुंजाइश है तो उपाय ढूँढ़ निकालने चाहिए और उन्हे विकसित करना चाहिए।

"दूसरे देशो के साथ सम्पर्क स्थापित करने के बारे में मेरी धारणा तो यह है कि हमारे देशवासियो की दूसरे देशो के निवासियों के सम्पर्क से रत्ती-भर भी नैतिक उन्नति होना जरूरी नही है। उदाहरण के तौर पर दक्षिण अफ़्रीका में बसे हुए भारतीयो की दशा पर विचार कीजिए। यातायात के द्रुतगामी साधनों, जैसे स्टीमर या रेलगाड़ियों इत्यादि, ने अनेक आदर्शों को उनकी जगहों से हिला दिया है और बहुत अनर्थ का सृजन किया है।"

[और इस प्रश्न के उत्तर में कि किसी व्यक्ति को कम-से-कम कितना और अधिक-से-अधिक कितना धन रखना चाहिए श्री गांधी ने कहा]—

किञ्चितमात्र नही जैसा कि ईसा मसीह, रामकृष्ण और अन्य (महापुरुष) कह गये है।

माननीय पण्डित मदनमोहन मालवीय ने सभा को विसर्जित करते हुए श्री गाधी को उनके इतने सुन्दर भाषण के लिए धन्यवाद दिया। उन्होंने कहा कि जो सिद्धान्त उन्होंने (श्रीगाधी ने) हमारे सामने रक्खे हैं वे इतने ऊँचे हैं कि मैं यह आशा नहीं करता कि सभी लोग उन पर चलने के लिए तैयार हो जायेंगे। परन्तु मैं आशा करता हूँ कि गांधीजी के इस मुख्य अभिप्राय से कि अर्थशास्त्र-सम्बन्धी सारे प्रश्नो और सिद्धान्तों का ध्येय मानव-जाति का कल्याण होना चाहिए, आप सभी सहमत होंगे।[1]

—इलाहाबाद, २२।१२।१९१६। अंग्रेजी से। 'लीडर', २५।१२।१९१६।]

११. भाषण : इलाहाबाद में प्राचीन और अर्वाचीन शिक्षा पर

[प्रयाग की एक बहुत बड़ी सार्वजनिक सभा मे, जो मुंशी रामप्रसाद के विशाल उद्यान मे पं० मदनमोहन मालवीय के सभापतित्व मे हुई थी, महात्मा गाधी ने हिन्दी मे निम्नलिखित आशय का एक व्याख्यान दिया था।—सम्पा०]

आप लोगों के सामने हिन्दी मे व्याख्यान देने मे मुझे कुछ कठिनाई का अनुभव हो रहा है, जिसके लिए मैं लज्जित हू—और यह बात आज के मेरे व्याख्यान के विषय अर्थात् आधुनिक शिक्षा-प्रणाली पर एक कडी टीका है। यद्यपि मैं अपने विचार अग्रेजी मे अधिक सुगमता से व्यक्त कर सकता हू तथापि मैं हिन्दी मे ही बोलना पसन्द करूगा। वास्तविक शिक्षा का आरम्भ साधारणत १६ या १७ वर्ष की अवस्था मे कालेज मे होता है। स्कूल मे जो शिक्षा मिलती है वह उपयोगी नहीं होती। मसलन, भारतीय विद्यार्थी इग्लैण्ड का भूगोल तो अच्छी तरह जानता है पर स्वय अपने देश के भूगोल का उसे यथेष्ट ज्ञान नही होता। उन्हें भारत का जो इतिहास पढाया जाता है, वह बहुत-कुछ विकृत होता है। आजकल शिक्षा प्राप्त करने का उद्देश्य सरकारी नौकरी पाना है। विद्यार्थियो की बडी-से-बडी इच्छा यही रहा करती है कि हम शाही परिषद् के सदस्य हो जायें। विद्यार्थियो ने अपने पूर्वजो के पेशे छोड दिये हैं और अपनी मातृभाषा भुला दी है। वे अग्रेजी भाषा, यूरोपीय विचार और यूरोपीय वेशभूषा अपनाते जा रहे हैं। वे सोचते भी अग्रेजी मे हैं और अपना सारा राजनीतिक और सामाजिक काम अग्रेजी मे ही

---

१. भाषण समाप्त होने पर श्री चिन्तामणि ने गांधी जी से इसकी हस्तलिखित प्रति प्रकाशनार्थ ले ली थी।

करते हैं तथा व्यापार आदि का भी सब काम उसी भाषा में चलाते हैं और समझते हैं कि बिना अंग्रेजी भाषा के हमारा काम चल ही नहीं सकता। उनका यह खयाल बन गया है कि इसके अतिरिक्त हमारे लिए और कोई मार्ग ही नहीं है। अंग्रेजी भाषा के द्वारा दी गई शिक्षा ने मुट्ठीभर शिक्षितों और सर्व-साधारण के बीच बड़ी भारी खाई उत्पन्न कर दी है। परिवारों में भी यही हुआ है; अंग्रेजी पढ़े मनुष्य के विचार और भाव आदि का उसके घर की स्त्रियों के विचारों और भावों आदि से किसी प्रकार का सरोकार ही नहीं होता। और, जैसा कि मैं अभी कह चुका हूं, अंग्रेजी पढ़े-लिखे लोगों का लक्ष्य या तो सरकारी नौकरियां पाना होता है या बहुत हुआ तो, शाही परिषद् की सदस्यता प्राप्त करना होता है। जिस शिक्षा-प्रणाली से ऐसी बातें उत्पन्न होती हों, उसे मैं तो कभी ठीक नहीं समझता और जिन लोगों को ऐसी शिक्षा मिलती है, उनसे कभी यह आशा नहीं की जा सकती कि वे देश की कोई बड़ी सेवा करेंगे। मेरे कहने का मतलब यह नहीं है कि शिक्षित लोग सर्वसाधारणकी दशा के प्रति हमदर्दी नहीं रखते। बल्कि मैं यह स्वीकार करता हूं कि कांग्रेस आदि बड़े-बड़े सार्वजनिक आन्दोलन इन्हीं लोगों के चलाये हुए हैं और वे ही उनका संचालन कर रहे है। लेकिन साथ ही मैं यह कहे बिना नहीं रह सकता कि यदि लोगों को उनकी मातृभाषा में शिक्षा दी गई होती तो इतने वर्षों में और भी अधिक काम होता और विशेष उन्नति हो गई होती। यह दुर्भाग्य की ही बात है कि लोग यही मानने लगे हैं कि जिस रास्ते पर हम लोग चल रहे हैं उसके सिवा हमारे लिए और कोई रास्ता है ही नहीं। लोग अपने आपको बिल्कुल असहाय दशा मे पाते हैं। लेकिन अपने को लाचार मान बैठना मर्दानगी नहीं है।

प्राचीन काल में गांव के साधारण गुरु जो आरम्भिक शिक्षा दिया करते थे उससे विद्यार्थियो को उन सब बातों का ज्ञान हो जाता था जो कि उनके पेशे के लिए आवश्यक थी। जो लोग उच्च शिक्षा प्राप्त करते थे वे अर्थशास्त्र, नीतिशास्त्र तथा धर्मशास्त्र से अच्छी तरह परिचित हो जाते थे। प्राचीनकाल में शिक्षा पर किसी प्रकार का प्रतिबन्ध नहीं था। शिक्षा का प्रबन्ध राज्य की ओर से नहीं किया जाता था, बल्कि वह प्रबन्ध ब्राह्मणों के हाथ में रहता था, जो केवल प्रजा के कल्याण की ओर ही ध्यान रख कर शिक्षा-प्रणाली का स्वरूप निर्मित करते थे। उसका आधार संयम और ब्रह्मचर्य था। यह इसी शिक्षा-प्रणाली का प्रताप था कि हजारों वर्षों से अनेक प्रकार के आघात सहने पर भी भारतीय सभ्यता आज तक जीवित है, जब कि यूनान, रोम तथा मिस्र की सभ्यताएं लुप्त हो गई हैं। इसमें सन्देह नहीं कि इस समय भारत में एक नई सभ्यता की हवा बह निकली है लेकिन मुझे

पूरा यकीन है कि थोडे ही समय मे यह वात खत्म हो जायगी और फिर से भारतीय सभ्यता का प्रचार होगा। प्राचीन काल मे जीवन का आवार सयम था, पर आजकल भोग-विलास ही प्रवान है। इसका फल यह हुआ कि लोग वलहीन और कायर हो गये है और सत्य को भूल वैठे है। हम लोग इस समय दूसरी सभ्यता के फेर मे पडे हुए है, इसलिए यह आवश्यक है कि हम अपनी नई परिस्थिति के अनुकूल अपनी पुरानी सभ्यता मे कुछ फेरफार कर लें। लेकिन हमारी जिस प्राचीन सभ्यता को अनेक यूरोपीय विद्वान भी सर्वश्रेष्ठ मानते हैं उसमे हमे कोई मूलभूत परिवर्तन नही करना चाहिए। कहा जा सकता है कि पाश्चात्य सभ्यता की भौतिक शक्तियो से टक्कर लेने के लिए उस सभ्यता के उपायो और सावनो को ग्रहण करना आवश्यक है, लेकिन भारतीय सभ्यता का प्रवान आधार आध्यात्मिक वल है और वह भौतिक वल से कही वढ-चढ़कर है। भारतवर्ष प्रधानत धर्म-भूमि है। उसे धर्म-भूमि वनाये रखना भारतवासियो का सवसे वडा कर्त्तव्य है। उन्हे अपनी आत्मा से, ईश्वर से, वल ग्रहण करना चाहिए। यदि हम लोग इसी मार्ग पर चलते रहेगे, तो जिस स्वराज्य की हमे इतनी अधिक आकाक्षा है और जिसके लिए हम जुटे हुए हैं वह स्वराज्य हमे स्वत मिल जायगा।

—हिन्दी। इलाहावाद, २३।१२।१९१६। 'लीडर', २७।१२।१९१६। 'महात्मा गांधी, हिज़ लाइफ, राइटिंग्ज़ ऐण्ड स्पीचेज़']।

१२. भाषण : लखनऊ कांग्रेस में

श्री मो० क० गांधी ने लखनऊ में हुए भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस के ३१वें अधिवेशन में २८ दिसम्बर, १९१६ को ११वां प्रस्ताव पेश करते हुए कहा :

सभापति महोदय, प्रतिनिधि वन्धुओ, वहनो और भाइयो,

मैं देखता हूँ, मेरे तमिल भाइयों ने मुझसे अपील की है कि मैं उनके सम्मुख अँग्रेजी मे वोलूं और मैं उनके इस आग्रह को अशत स्वीकार कर रहा हूँ। किन्तु मैं वदले मे उनसे यह अपील करना चाहता हूँ कि वे अगले वर्ष-भर मे राष्ट्रभाषा सीख लें। यदि उन्हो ने अगले वर्ष तक राष्ट्रभाषा नही सीखी—मैं जानता हूँ कि जव भारत को स्वराज्य दे दिया जायगा तव कौन-सी भाषा राष्ट्रभाषा होगी (तालियाँ)—यदि उन्होंने अगले वर्ष मे ऐसा नही किया तो जहाँ तक मेरा सम्वन्ध है मैं अँग्रेजी मे नही वोलूँगा। अभी मैं पहले अँग्रेजी मे प्रस्ताव पढूँगा और फिर उसी को हिन्दी मे। प्रस्ताव इस प्रकार है:

(क) यह कांग्रेस जोर देकर अनुरोध करती है कि आगामी वर्ष के अन्दर ही गिरमिटिया मजदूरों की भरती पर प्रतिबन्ध लगाकर गिरमिटियों के प्रवास को बन्द कर देना चाहिए।

(ख) कांग्रेस के विचार में यह अत्यन्त वाञ्छनीय है कि भारत-सरकार एक ऐसे प्रतिनिधि भारतीय को, जो भारतीय जनता के विचारों का प्रतिनिधित्व करने वाली संस्थाओं के परामर्श से चुना गया हो, निकट भविष्य में इस प्रश्न पर विचार करने के लिए लन्दन में होनेवाले अन्तर्विभागीय सम्मेलन में भाग लेने के लिए नियुक्त करे।

(ग) यह कांग्रेस हार्दिक प्रार्थना करती है कि श्री मार्जोरीबैंक्स तथा माननीय श्री थम्बी मराक्यार और अन्तर्विभागीय समिति की रिपोर्ट को, कोई कार्रवाई करने से पहले, आम लोगों के सूचनार्थ प्रकाशित कर दिया जाय।

संवाददाता तथा प्रतिनिधिगण, जिसके पास प्रस्ताव की प्रतियां हैं ध्यान-पूर्वक देखें कि धारा (क) में एक शाब्दिक परिवर्तन किया गया है—प्रस्ताव में 'दरम्यान' के स्थान पर 'अन्दर ही' कर दिया गया है। ऐसा एक मित्र के अनुरोध पर किया गया है। उनको डर था कि सरकार यह सोच सकती है कि यदि गिरमिट प्रथा आगामी वर्ष बन्द रखी जाय तो हम सन्तुष्ट हो जायेंगे जब कि हमारा मतलब है उसे हमेशा के लिए समाप्त करवाना। धारा (ख) में भी आप देखेंगे कि 'जनता के विचार' से पहले 'भारतीय' शब्द जोड़ दिया गया है।

श्री गांधी ने प्रस्ताव को हिन्दी में पढ़ा और उसके उद्देश्य पर प्रकाश डाला।

—अंग्रेजी से। लखनऊ, २८।१२।१९१६। भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस के ३१वें अधिवेशन की रिपोर्ट, पृ० ६२-६३]।

१३. भाषण : अखिल भारतीय एक-भाषा व एक-लिपि सम्मेलन, लखनऊ में[1]

मुझे जो कुछ कहना है वह मैं फिर कहूँगा। इस समय मैंने वक्ताओं के उपदेश से जो-कुछ सीखा है केवल वही कहूँगा। मैं गुजरात से आता हूँ। मेरी हिन्दी टूटी-फूटी है। मैं आप सब भाइयों से टूटी-फूटी हिन्दी ही में बोलता हूँ क्योंकि

१. गांधी जी इस सम्मेलन के अध्यक्ष थे।

थोड़ी अँग्रेजी वोलने मे भी मुझे ऐसा मालूम पडता है मानो मुझे इससे पाप लगता है। मुझे आपको हिन्दी का गौरव वताने की जरूरत नही है। आप लोगो की मुझसे हिन्दी का गौरव जानने की इच्छा ऐसी ही है जैसे कोई आदमी गगा मे स्नान करता रहे और कहे कि 'गगा जी, इधर आओ'। यदि कोई आदमी राजपूताने मे रह कर 'गगा जी, इधर आओ' यह प्रार्थना करता तो उचित भी था। आप लोग हिन्दी पढ़ें और नागरी सीखें, यह आपसे, आपके सम्मेलन से कहना मेरा काम नही है। यदि मुसलमानो से कोई कहे कि उर्दू पढ़ना-लिखना सीख लो तो यह भी ऐसी ही व्यर्थ वात है। आप लोग कहते हैं कि मैं वोलनेवाला नही, काम करनेवाला हूँ, तो मैं जो कहता हूँ, मेरा कहना मानिए। सज्जनो, देखिए, क्रिश्चियन लिटरेचर डिपो ऐंड वाइविल सोसाइटी सारे विश्व मे घूम रही है, वह अपनी पुस्तको का सारे विश्व मे प्रचार कर रही है, सव भाषाओ मे उनका अनुवाद करके आवश्यक स्थानो मे वितरण करती है, यहाँ तक कि दक्षिण अफ्रीका में रहनेवाले मजदूरों और जगली जातियो को भी उनकी भाषाओ मे वाइविल आदि देती है। इस कार्य मे वह करोड़ो रुपया खर्च करती है। वे लोग हमारी तरह खाली सम्मेलन नही करते। हाँ, कभी-कभी सम्मेलन करते हैं पर केवल रुपया इकट्ठा करने या अपने काम की रिपोर्ट आदि सुनाने के लिए। यदि आज हिन्दी सिखानेवाले और काम करनेवाले लोग होते तो मद्रासी भी हिन्दी जानते होते। खाली सम्मेलन नही, किन्तु काम चाहिए, जैसे क्रिश्चियन लिटरेचर डिपो ऐण्ड वाइविल सोसाइटी कर रही है। हर काम मे पैसा चाहिए। पर पैसे की कमी नहीं है। कमी है काम करनेवालो की। यदि कार्यकर्ता हो तो गुजरात, मद्रास, दक्षिण सव जगह लोग हिन्दी सीख सकते हैं। हिन्दी मे नई-नई पुस्तकें वनें, अनुवाद हो, वाहर जाकर लोगो को पढाया जाय, और जो लोग यहाँ आये उन्हें पढवाया जाय। यदि दक्षिण या गुजरात आदि मे हिन्दी पढाने और उसका प्रचार करने आदि के लिए आदमी भेजें तो मुफ्त नही पर उचित रूप मे निर्वाह करने के लिए उन्हे वेतन मिलेगा। पहले तो ऋषियो के समय मे भारतवर्ष मे वडा आत्मत्याग होता था, विद्या मुफ्त ही दी जाती थी। मैं हिन्दी सीखना चाहता था, अहमदावाद मे हिन्दी सिखाने वाला नही मिला। एक गुजराती सज्जन से, जो टूटी-फूटी हिन्दी जानते थे और काशी मे १५-२० वर्ष रहे थे, मैंने हिन्दी सीखी। सम्मेलन आदि संस्थाएँ कार्यकर्त्ता वाहर भेजें तो वहुत से लोग हिन्दी सीख जायेंगे। आप स्वराज्य चाहते हैं, मैं भी स्वराज्य चाहता हूँ। पर स्वराज्य मिलने का ढग दूसरा है, वातें वनाने से स्वराज्य नही मिलता। पहले खुद काम करो पीछे सरकारी मदद लो। सरकारी मदद पहले नही मिलेगी। पहले खुद आगे वढेंगे तो सरकार भी हमारे पीछे आयेगी। सरकार कभी पहले स्वय

आगे नहीं बढ़ती। आप बाहर जाकर लोगों को हिन्दी सिखायें, और उचित रूप में काम करें। जब आप काम करेंगे, तब सरकार आपकी प्रार्थना सुनेगी, नही तो अर्जियों को फेंक देगी। काम बड़ा है। पर इच्छा करें तो आप स्वराज्य का भवन बना सकते है। प्राचीन समय का गौरव पण्डित जी (मालवीय जी) अच्छी तरह दिखा चुके हैं। अँग्रेजी का शब्द-भण्डार पहले १,००० था। अब बढ़कर कोई एक लाख हो गया। उसमें न्याय, वैद्यक आदि सब विषयों के ग्रन्थ हैं। लोग कहते हैं हिन्दी में कुछ नहीं है और अँग्रेजी के बिना काम नही चलता। बाजे-बाजे समय अँग्रेजी के बिना लोगों को बड़ा कष्ट उठाना पड़ता है, यह मैं मानता हूँ। जैसे रेल्वे आदि में लोग अँग्रेजी के व्यवहार के बिना कष्ट उठाते हैं। यहाँ तक कि मुझ-जैसे लोगों को हिन्दी का व्यवहार करने के कारण धक्के भी खाने पड़ते हैं। पर काम करनेवाले इन बातो की परवाह नहीं करते। अँग्रेजी से हिन्दी कितनी ही पीछे क्यों न हो, पर हमें उसका गौरव बढ़ाना ही पड़ेगा। हमारे प्राचीन ऋषि बड़े यम-नियम से रहते थे। बहुत बड़ा त्याग करते थे। अतः हमें कटिबद्ध होकर, स्वार्थत्यागपूर्वक उनका गौरव बढ़ाना चाहिए। सरकारी कौसिलों में अँग्रेजी ही की पूछ है। लोग कहते है वाइसराय आदि अँग्रेजी के अतिरिक्त और कुछ नही समझते, इसलिए उसी का उपयोग करना आवश्यक है। पर मैं कहता हूँ कि यदि मैं बोलना जानता हूँ और मेरे बोलने में कोई ऐसी बात रहेगी जिससे वाइसराय लाभ उठा सके तो अवश्य ही वह मेरी बातें हिन्दी में बोलने पर भी सुन लेंगे। उन्हें आवश्यकता होगी तो उसका अनुवाद करा लेंगे। अथवा सी० आई० डी० का कोई आदमी आकर उसकी रिपोर्ट ले जायगा। मैं तो प्रजा ही से स्वराज्य माँगता हूँ। प्रजा से स्वराज्य मिल जायगा तो पीछे राजा से भी मिल जायगा। यदि आपने इतना कर लिया तो आपमें सच्ची निर्भयता आ जायगी और आपके मनोरथ सफल होंगे।

—हिन्दी। लखनऊ, २९।१२।१९१६। **प्रताप,** १।१।१९१७।]

१४. अध्यक्षीय भाषण : अखिल भारतीय एक-भाषा व एक-लिपि सम्मेलन, लखनऊ में

मेरे प्यारे भाइयो,

पं० मदनमोहन मालवीय जी ने अभी आप लोगों को हिन्दी-भाषा के प्राचीन गौरव का वर्णन सुनाया है। परन्तु इस वर्णन से ही राष्ट्रभाषा का प्रचार नहीं हो

जायगा। भागीरथी की बडी अगाध महिमा है, ऐसा कहने से ही भागीरथी में स्नान का पुण्य नही मिल जाता। राष्ट्रभाषा का यदि प्रचार करना है तो उसके लिए भगीरथ प्रयत्न करना होगा। आप लोग लाट साहव को या सरकार के दरवार में जो प्रार्थनापत्र भेजते हैं तो किस भाषा मे लिखकर भेजते हैं ? यदि हिन्दी-भाषा मे नही भेजते हैं तो हिन्दी-भाषा मे लिखकर भेजें। आप लोग कहेगे कि हिन्दी भाषा मे लिखकर भेजने से वे हमारी वात नही सुनेंगे। मैं कहता हूँ कि आप अपनी भाषा मे वोलें, अपनी भाषा मे लिखें। उनको गरज होगी तो वे हमारी सुनेंगे। मैं अपनी वात अपनी भाषा में कहूँगा। जिसको गरज होगी, वह सुनेगा। आप इस प्रतिज्ञा के साथ काम करेंगे तो हिन्दी भाषा का दर्जा वढ़ेगा। अभी तक उसका प्रचार सव प्रान्तो मे नही हुआ है। राष्ट्रीय सभा मे भी राष्ट्रभाषा का प्रचार नही है। यह किसका दोष है ? यह दोष आप लोगो का है। मुझे हिन्दी पढने के लिए एक हिन्दी जाननेवाले मनुष्य की आवश्यकता थी और है। परन्तु अहमदावाद मे मुझे कोई ऐसा मनुष्य नही मिला जो मुझे और मेरे आश्रमवालो को हिन्दी पढा सके। मद्रास मे अभी तक हिन्दी का प्रचार नही हुआ। आपने कोई प्रयत्न ही नही किया। दस-पाँच लोग ऐसे जुटाइए जो मद्रास प्रान्त मे जाकर हिन्दी का प्रचार करें। उनको जो वेतन देना उचित है वह दीजिए। इतना रुपया मिलना कुछ कठिन नही है, क्योकि इन सभाओ के करने मे आप लोग इतना रुपया खर्च कर देते हैं। ऐसा प्रयत्न होगा तव राष्ट्रभाषा का सर्वत्र प्रचार होगा।

—हिन्दी। लखनऊ, २९।१२।१९१६। 'महात्मा गाधी।']

१५. भेंट : लखनऊ में

राष्ट्रभाषा

प्रश्न—क्या आप आवश्यक समझते हैं कि राष्ट्रीय सभा का कार्य राष्ट्रभाषा हिन्दी में ही हुआ करे ?

उत्तर—जरूर। हिन्दी-भाषा में जवतक सार्वजनिक सारा कार्य नही होगा तवतक देश की उन्नति नहीं हो सकती। राष्ट्रीय सभा में जवतक राष्ट्रभाषा-द्वारा ही सव काम न हो तवतक स्वराज्य नही मिल सकता।

प्रश्न—परन्तु यह कैसे सम्भव है कि सव प्रान्तों के लोग एकाएक हिन्दी सीख कर हिन्दी वोलने लग जायें ?

उत्तर—मैं यह नहीं कहता कि सब प्रान्त अपनी-अपनी भाषा को छोड़कर हिन्दी बोलने और लिखने लग जायँ। जहाँ प्रान्तिक प्रश्न हो वहाँ प्रान्तीय भाषा में काम हो। जहाँ राष्ट्रीय प्रश्न हो, वहाँ राष्ट्रभाषा में ही उसका विचार होना चाहिए। यह काम बहुत कठिन नहीं है, और करने से सहज हो जाता है। जहाँ आजकल अँग्रेजी से काम लिया जा रहा है वहाँ हिन्दी से काम लेना चाहिए।

राष्ट्रीय महासभा का 'स्वराज्य'

प्रश्न—काँग्रेस ने स्वराज्य का जो प्रस्ताव किया है और जिस ढंग से उसे अमल में लाने की चेष्टा होने वाली है उसके विषय में आपकी क्या सम्मति है?

उत्तर—यह अच्छा हो चाहे बुरा, मेरी उस पर विशेष श्रद्धा नहीं है।

प्रश्न—इसका क्या कारण है?

उत्तर—उसमें द्वेष का निवास है।

प्रश्न—द्वेष तो उसमें कुछ नहीं है और यदि है भी तो वह नौकरशाही (ब्यूरोक्रेसी) के सिद्धान्त के साथ है।

उत्तर—नौकरशाही से ही क्यों न हो, उसमें द्वेष है। इसलिए मेरी श्रद्धा उस पर नहीं है। पर मैं यह नहीं कहता कि यह प्रयत्न अच्छा नहीं है या वह प्रयत्न विफल होगा। द्वेष करना सर्वत्र हानि ही नहीं करता। द्वेष को मन से दूर करने के लिए भी द्वेष के साथ द्वेष करना ही पड़ता है। परन्तु मेरा यह मार्ग नहीं है। यह भारतीय मार्ग—प्राचीन परम्परागत मार्ग—नहीं है; यह पाश्चात्य मार्ग है।

प्रश्न—तो आपका यह हमारा भारतीय मार्ग (स्वराज्य प्राप्त करने का) क्या है?

उत्तर—वह मैं अभी न बताऊँगा।

वर्णाश्रम धर्म

प्रश्न—चातुर्वर्ण्य के विषय में आपकी क्या सम्मति है।

उत्तर—यह संस्था बहुत अच्छी है। इसने देश का बड़ा उपकार किया है। इसका रहना बहुत जरूरी है।

प्रश्न—हिन्दू-समाज में यदि चार ही वर्ण हैं और वे ऐसे ही रहेंगे तो अछूत जातियों को आप किस वर्ण में गिनते हैं?

उत्तर—अछूत जातियों का अस्तित्व चातुर्वर्ण्य की ज्यादती है। चातुर्वर्ण्य ने अनुचित रूप से ज्यादती करके इन जातियों को बहिष्कृत किया है। इनका स्थान चातुर्वर्ण्य के अन्दर ही है।

प्रश्न—यदि ऐसा है तो इन अछूतों को किस वर्ण मे स्थान मिलना चाहिए ?

इस प्रश्न के उत्तर मे आपने वहुत देर तक समझाया कि समाज की स्वाभाविक गति इनको यथाधिकार वर्णाश्रम प्रदान करेगी।

आर्यसमाज का शुद्धि-आन्दोलन

प्रश्न—हिन्दू और मुसलमान का प्रश्न कैसे हल होगा ?

उत्तर—यह प्रश्न पूर्णतया हल नही हो सकता। अन्य देशो मे जैसे हुआ वैसे यहाँ भी होगा। हिन्दू, मुसलमान दो पक्ष रहेंगे और ऐसा होने से देश की कुछ हानि न होगी।

प्रश्न—आर्यसमाज शुद्धि करके मुसलमानो को हिन्दू बना लेता है। यदि ऐसा करने में कोई धर्म-घात न हो और सारे मुसलमान हिन्दू वन जायेंगे, ऐसी कल्पना की जाय तो शुद्धि से यह प्रश्न क्या हल नहीं हो सकता ?

उत्तर—परन्तु यह मार्ग अच्छा नही है। यह धर्म-मार्ग नही है। यह स्वाभाविक गति नही है और समस्त मुसलमानो को हिन्दू वना लेने की कल्पना भी व्यर्थ है।

— हिन्दी। लखनऊ, २९-३१।१२।१९१६। 'महात्मा गांधी'। सं० गा० वां० खण्ड १३, पृ० ३२५-२६।]

१६. भाषण : मुस्लिम लीग सम्मेलन, लखनऊ में

[३१।१२।१९१६ को सुबह लखनऊ में मुस्लिम लीग सम्मेलन की बैठक फिर से हुई थी, जिसमे अध्यक्ष का स्थान श्री जिन्ना ने ग्रहण किया था। उन्होंने यह प्रस्ताव रखा था कि "यह सम्मेलन उपनिवेशो में भारतीयों के साथ किये जानेवाले व्यवहार के प्रति तीव्र असन्तोष प्रकट करता है।" इस सम्मेलन में उर्दू भाषा को राष्ट्रभाषा वनाने का भी प्रस्ताव था। इस सभा मे गाधीजी भी उपस्थित थे। उनसे भी कुछ वोलने को कहा गया। उन्होंने उस अवसर पर जो भाषण दिया उसे सक्षेप मे यहाँ दिया जा रहा है।—सम्पा०]।

"यदि आप अपने इस प्रस्ताव को कि भारत की राष्ट्रभाषा उर्दू रहे, कार्यान्वित करना चाहते हैं तो आप लोगो को अपनी कार्रवाई उर्दू मे करनी चाहिए। आपको उचित है कि आप लोग हिन्दी साहित्य में भी कुछ दिलचस्पी लिया करें। इससे आप लोग हिन्दू समाज के साथ स्थायी मैत्रीभाव रखने मे समर्थ होंगे।

उपनिवेशों में हिन्दू और मुसलमान सदा से ही मिल-जुल कर काम करते आये हैं और यदि भारत में भी वैसा ही किया गया तो हमारी मनोकामना शीघ्र पूरी हो सकती है। आप लोग जो प्रचार-कार्य करते हैं, उसे करने में आप सरकार से डरना छोड़ दें, क्योंकि अंग्रेजों का स्वभाव यह है कि वे बलवान के आगे झुकते है और निर्बलों पर सवारी कसते हैं।

—लखनऊ, ३१।१२।१९१६। 'लीडर,' ३।१।१९१७]।

१७. भाषण : अलीगढ़ में[1]

उन्होंने श्रोताओं को वतलाया कि जवतक हममें एकता नहीं हो जाती तवतक स्वराज्य-प्राप्ति से राष्ट्र का लाभ होगा, ऐसा कहना वेकार होगा। आज के दंगों का उल्लेख करते हुए उन्होंने हिन्दुओं द्वारा प्रकाशित, घृणित और हेय वर्वरता के प्रति घृणा व्यक्त की और कहा कि हिन्दुओं को अपनी कमी पूरी करनी चाहिए। हिन्दुओं और मुसलमानों के झगड़े पारिवारिक झगड़ों की तरह तय कर दिये जाने चाहिए। उन्होने अली-व्रन्धुओं का कई वार उल्लेख किया।

—हिन्दी। अलीगढ़, २८।११।१९१७। अंग्रेजी से। वाम्वे सीक्रेट एब्स्ट्रैक्ट्स १९१७। सं० गां० वां० खण्ड १४, पृ० ९६]

भाषण : अलीगढ़ कालेज में[2]

उन्होंने कहा मुझे उम्मीद है कि मैं यहाँ इस कालेज में अली-वन्धुओं के साथ

---

१. यहाँ छात्रों की भारी भीड़ ने गांधीजी का स्वागत किया। स्टेशन से लायल पुस्तकालय के मैदान तक उनका जुलूस निकला। मैदान में २००० लोगों की सभा में हिन्दू-मुस्लिम एकता पर भाषण दिया। स्वराज्य की कामना करते हुए एक छात्र ने गांधीजी को माला पहनाई। १।१२।१९१७ को 'लीडर' ने लिखा—गांधी जी ने सर सैयद अहमद खाँ की इस युक्ति का उल्लेख किया कि हिन्दू-मुसलमान भारत की दो आँखें हैं।

२. पुस्तकालय के मैदान में भाषण देने के वाद गांधीजी ने कालेज के कार्यकारी प्रिंसपल श्री रेनल से अनुमति लेकर छात्रों के समक्ष—सत्य और मितव्ययिता पर भाषण दिया। वाद में ख्वाजा अव्दुल मजीद के घर गये और वहाँ से कलकत्ता जाने के लिए स्टेशन चले गये।

आऊँगा। मैंने अलीगढ़ को राष्ट्र और देश के लिए कार्य करते देखा है। परन्तु मुसलमान अपने देश के उत्थान की दिशा मे उस लगन से काम नही कर रहे हैं, जिससे उनके हिन्दू भाई कर रहे हैं। मुझे यह देखकर प्रसन्नता होगी कि अलीगढ कालेज के यदि सव नही तो कुछ विद्यार्थी श्री गोखले की तरह राष्ट्र-नायक वनें। उन्होंने अपनी पोशाक की (सफेद कुर्ता-धोती और टोपी) का जिक्र करते हुए कहा कि भारतीयो के लिए यही उपयुक्त पोशाक है। दलित वर्ग के लोग आधुनिक वेश-भूषा वाले व्यक्तियो की अपेक्षा भारत के प्राचीन ढग के अनुसार वस्त्र पहनने वालो की वात अधिक तत्परता से सुनेंगे और उनसे सम्मति लेने भी अधिक प्रसन्नता के साथ उनके पास पहुँचेंगे।

—मूल हिन्दी। अलीगढ़, २८।११।१९१७। अंग्रेजी से। बाम्बे सी क्रेटएब्सट्रैक्ट्स १९१७। स० गां० वा० खण्ड १४, पृ० ९६-९७]

१८. भाषण : इलाहाबाद में सत्याग्रह पर

मुझे खेद है कि मैं आपके सामने स्वय वोलने में असमर्थ हूँ। इस सभा के दूसरे छोर तक मेरी आवाज का पहुँचना नितान्त असम्भव है। इसलिए मुझे इसी से सन्तोष कर लेना होगा कि मैंने जो कुछ पक्तियाँ लिख ली हैं मेरी ओर से वे आपको सुनाई जायेंगी।[1]

जो व्यक्ति सत्याग्रह की शपथ लेना चाहता है, उचित है कि वह शपथ लेने के पूर्व उस पर सागोपाग सोचविचार ले। सत्याग्रह के सिद्धान्तो को समझने के लिए रौलट विधेयको की मुख्य-मुख्य वातो को समझना और यह तसल्ली कर लेना भी जरूरी है कि ये विधेयक वास्तव मे इतने आपत्तिजनक हैं कि उनके विरुद्ध सत्याग्रह-जैसी अत्यन्त प्रवल शक्ति का उपयोग किया जाना उचित है। साथ ही यह पक्का विश्वास होना भी आवश्यक है कि अन्तर्मन को मुक्त करने तथा किसी भी व्यक्ति अथवा सस्था के प्रति पूर्ण निर्भयता प्राप्त करने के लिए हर प्रकार का शारीरिक कष्ट सहन करने की क्षमता मुझमे आ गई है। उसमे एक वार शामिल हो जाने पर पीछे मुडना हो ही नही सकता। अतएव सत्याग्रह मे पराजय की

---

१. यह वक्तव्य अंग्रेजी में सभा के अध्यक्ष सय्यद हुसेन द्वारा तथा हिन्दी में गाधीजी के निजी सचिव महादेव देसाई द्वारा सुनाया गया था।

कल्पना ही नहीं है। सत्याग्रही मरते दम तक संघर्ष करता रहता है। इसलिए हर एक आदमी इसमें आसानी से शामिल नही हो सकता।

इसलिए सत्याग्रही को उचित है कि अपने साथ शरीक न होनेवालों के प्रति सहनशीलता से काम ले। सत्याग्रह-सभाओं के कार्यविवरण को पढ़ने पर मैंने प्रायः देखा है कि हमारे इस आन्दोलन में सम्मिलित न होनेवालों का उपहास किया जाता है। यह हरकत सत्याग्रह-शपथ की मूल भावना के विल्कुल विपरीत वैठती है। सत्याग्रह में हम आत्मवलिदान, अर्थात् प्रेम के द्वारा अपने विरोवियों को जीतने की आशा रखते है। जिस कार्यप्रणाली के द्वारा हम अपने ध्येय तक पहुँचने की आशा करते है वह यह है कि वह अपना वरताव इस प्रकार का रक्खें कि धीरे-धीरे तथा अव्यक्त रूप से विरोधी का सब विरोध जाता रहे। दो परस्पर-विरोधी व्यक्ति या दल स्वभावतः एक दूसरे से दुष्ट व्यवहार और यदि उभय पक्ष समान वलशाली हों तो हिंसा की अपेक्षा करते हैं। परन्तु जव सत्याग्रह का अवलम्ब लिया जाता है, तव उस पक्ष के मन में जिसके विरुद्ध सत्याग्रह किया जाता है, वह अपेक्षा एक सुखद आश्चर्य के रूप में परिवर्तित हो जाती है। अन्त में उसका मन पसीजता है और वह अपना कदम वापस ले लेता है, जिसके कारण सत्याग्रह आरम्भ किया गया था। मैं आप लोगों को विश्वास दिलाता हूँ कि यदि हम दिन-प्रतिदिन अपनी शपथ का पालन करते रहेंगे तो हमारे आसपास का वातावरण शुद्ध हो जायगा। और जिन लोगों का हमसे शुद्ध उद्देश्य के कारण मतभेद है—मेरा यह पक्का खयाल है कि यह ऐसा ही है—वे यह समझने लग जायँगे कि उनकी आशंका निर्मूल थी। हिंसा-मार्ग के समर्थक कहीं भी हों उनकी समझ में यह आने लगेगा कि सुधारों को प्राप्त करने के लिए गुप्त अथवा प्रकट हिंसा की अपेक्षा सत्याग्रह कहीं अधिक समर्थ साधन है। उनको यह भी भासित हो जायगा कि सत्याग्रह में उनकी अपार कार्यशक्ति का उपयोग करने के लिए काफी काम मौजूद है। यदि हमारे कामों की वदौलत हिंसा-नीति प्रत्यक्ष रूप से कम हो जायगी—भले ही वह पूरी तौर पर समाप्त न हो—तो सरकार के पास अपनी कार्रवाइयों के पक्ष में कहने को कुछ भी शेष न रहेगा। इसलिए मैं आशा करता हूँ कि सत्याग्रह-सभाओं में हम शर्म-शर्म के नारे नही लगायेंगे और सरकार के खिलाफ अथवा अपने उन देशवासियों के विरुद्ध , जो हमसे मतभेद रखते हैं और जिनमें से कुछ लोग देश के काम में यथाशक्ति योग देते आये हैं, ऐसे शब्दो का प्रयोग नही करेंगे जिनसे हमारी असहिष्णुता या अधीरता प्रकट हो।

—हिन्दी। इलाहावाद, ११।३।१९१९। अंग्रेजी से। लीडर १३।३।१९१९।]

● सत्याग्रह में पराजय की कल्पना ही नहीं है।

१९. भाषण : लखनऊ में सत्याग्रह पर

श्री गाधी का भाषण सुनने के लिए सत्याग्रह के समर्थको की एक सार्वजनिक सभा सुवह ८-३० वजे रिफाह-ए-आम हाल मे हुई।

इसके वाद गाधी जी ने, जो वहुत अविक कमजोरी के कारण अधिक वोलने मे असमर्थ थे, थोडे से शव्दो मे सत्याग्रह के आधारभूत सिद्धान्तो के वारे में वताया और श्रोताओ से कहा कि वे "शेम-शेम" (शर्म-शर्म) न चिल्लायें क्योकि ऐसा व्यवहार सत्याग्रह के विपरीत है। इसके अलावा सभी लोगो से यह आशा भी नहीं की जा सकती कि वे आन्दोलन का समर्थन करें या उसमे शामिल हो।

(सभा के) अव्यक्ष-सहित कुल मिलाकर ग्यारह लोगो ने प्रतिज्ञा ली. . ।

—हिन्दी। लखनऊ, ११।३।१९१९। अंग्रेजी से। 'लीडर' १३।३।१९१९।]

२०. मेरठ में एस० डब्ल्यू० क्लैम्ज को भेंट

क्लैम्ज—क्या आप वतायेंगे कि पश्चिम के देश पूर्व के देशों और खास कर भारतवर्ष के सर्वतोमुखी विकास मे किसी प्रकार सहायक हो सकते हैं?

गाधी जी—अभी तो भारत ऐसी स्थिति मे है जव उसे वहुत-सी सीखी हुई वातें भूलनी है, क्योकि उसने ऐसा वहुत कुछ सीख रक्खा है जो वेकार है और जिसका कोई लाभ नही है। पश्चिमी दुनिया और विशेषकर आपके देश को देखकर मैंने दो महत्वपूर्ण वातें सीखी हैं। पहली है सफाई और दूसरी है स्फूर्ति। मेरा पक्का विश्वास है कि मेरे देश के लोग जवतक सफाई रखना नही सीखते तवतक उनका आत्मिक विकास नही हो सकता। आपके देश के लोगो मे इतनी अधिक स्फूर्ति है कि आश्चर्य होता है। वैसे वहुत हद तक इस स्फूर्ति का उपयोग उन्होंने सासारिक समृद्धि प्राप्त करने के लिए किया है। अगर भारतीयो मे भी उतनी ही स्फूर्ति हो तो सही दिशा देने पर वह उनके लिए वहुत वडा वरदान होगी।

क्लैम्ज—भारत में जो चतुर्दिक राष्ट्रीय भावना दिखाई देती है उसको ध्यान में रखते हुए ईसाइयत किस प्रकार सवसे अच्छी तरह इसकी सेवा कर सकती है?

गांधी जी—हमे जिस चीज की सवसे ज्यादा जरूरत है वह है सहानुभूति। एक दृष्टान्त देता हूँ। उस समय मैं दक्षिण अफ्रीका मे था और मुझे वहाँ पर कुछ पाताल-तोड कुवें खोदने थे। स्वच्छ जल-स्रोत की खोज मे मुझे वहुत गहरी खुदाई करनी पडी थी। हमारे देशवासियो के वारे मे जानकारी हासिल करने के लिए दूसरे देशो से आनेवाले वहुत सारे लोग सिर्फ सतह की खरोच कर रह जाते हैं।

अगर वे सहानुभूति के सहारे जरा गहरे उतर कर देखें तो उन्हें वहाँ जीवन का एक स्वच्छ और निर्मल प्रवाह दिखाई देगा।

क्लैम्ज़—किसी पुस्तक या व्यक्ति ने आपको सबसे अधिक प्रभावित किया है?

गांधी जी—जो कुछ मिल जाय वह सब कुछ पढ़नेवाला पाठक मैं नहीं हूँ। बहुत ही उत्तम ढंग की चीजें छाँट कर पढ़ा करता हुँ। जैसे बाइबिल, रस्किन की कृतियाँ, तालस्ताय की कृतियाँ। ऐसे बहुत से अवसर आये हैं जबकि मुझे यह नहीं सूझता था कि कौन-सा रास्ता अपनाऊँ। लेकिन मैं 'बाइबिल' और विशेषकर 'न्यू टेस्टामेण्ट' की शरण में गया हूँ और उसके सन्देश से मैंने शक्ति प्राप्त की है।

क्लैम्ज—हमारा मेरठ स्नातक संघ, जिसमें नगर के सुसंस्कृत से सुसंस्कृत शिक्षित व्यक्ति शामिल हैं, इस नगर के कल्याण के लिए किस प्रकार काम कर सकता है?

गांधी जी—मेहतर बन कर। और मेहतर कहने मे मेरा मतलब इस शब्द के जितने भी अर्थ होते है, सबसे है। अगर इस संघ के सदस्यगण बाहर निकल कर नगर को वास्तविक रूप से तथा नैतिक रूप से भी स्वच्छ बनाने में हाथ बँटायें तो यह बहुत बड़ा काम होगा।

—अँग्रेजी। मेरठ, २२।१।१९२०। यं० इ०, २५।२।१९२०]।

- **पश्चिमी दुनिया और विशेष कर आपके देश को देखकर मैंने दो महत्त्वपूर्ण बातें सीखी हैं: पहली है सफाई और दूसरी है स्फूर्ति।**

२१. भाषण: मेरठ की सभा में[1]

आज भारत के सामने जितनी समस्याएँ मौजूद है उनमें खिलाफत की समस्या सबसे अधिक महत्व रखती है, क्योंकि वह हमारे मुसलमान भाइयों की समस्या है। मेरे अंग्रेज और हिन्दू मित्र मुझसे पूछा करते है कि आप-जैसे कट्टर हिन्दू को खिलाफत के मसले में इतनी दिलचस्पी क्यो है? उन सबको मेरा उत्तर यही हुआ करता है कि मैं और मेरे हिन्दू भाई भारत में बसने वाले सात करोड मुसलमान भाइयों के साथ शान्ति और प्रेम से रहना चाहते हैं। जबतक खिलाफत का मसला मुसलमानों की न्याय-विषयक धारणाओ के अनुसार हल नही हो जाता तबतक

---

१. इस सार्वजनिक सभा में गांधी जी को खिलाफत कमेटी तथा मेरठ के नागरिकों की ओर से मानपत्र दिये गये। खान बहादुर शेख वहीदुद्दीन ने सभा की अध्यक्षता की। गांधी जी हिन्दी में बोले। उनका मूल हिन्दी भाषण उपलब्ध नहीं है।

भारत मे शान्ति नही हो सकती। सरकार कुछ समय के लिए असन्तोष को दबा सकती है परन्तु जिनकी भावनाओ को गहरी चोट पहुँची है, वे सदा शान्ति के साथ नही रह सकते।

मैं अपने मुसलमान भाइयो से यह कहना चाहता हूँ कि इस प्रश्न के समाधान के लिए सत्याग्रह से अधिक कारगर कोई और उपाय नही है। आप शरीर-बल द्वारा खिलाफत के प्रश्न को कभी हल नही कर सकते। लेकिन अगर आप सत्याग्रह को अपना लें तो आप स्वय ही देखेंगे कि सफलता की कितनी बडी सम्भावनाएँ हैं। यदि दक्षिण अफ्रीका के भारतीय अपनी रक्षा के लिए हथियार उठा लेते तो उल्टे वे स्वय ही उन हथियारो के शिकार बन सकते थे। परन्तु वे धैर्यपूर्वक अपने व्रत पर डटे रहे। खिलाफत की समस्या के बाद भारत की स्वतन्त्रता का सवाल लें तो वह सदा से स्वदेशी अपनाने की बात से सम्बद्ध रहा है। भारत की गुलामी उसी दिन से शुरू हुई जिस दिन उसने अपनी देशी चीजो का उपयोग छोड दिया। ईस्ट-इण्डिया कम्पनी का लक्ष्य कभी भी लोगो को जीतना न था। उसके उद्देश्य विशुद्ध रूप से व्यावसायिक थे। परन्तु हम सब जाल मे फँस गये। हम लोग लका-शायर और मैनचेस्टर मे तैयार की गई चीजो का इस्तेमाल करते हैं। यदि हम लोग भारत को स्वतन्त्र करना चाहते हैं, तो हम सुधारो के बल पर वैसा नही कर सकते, इग्लैण्ड मे बनाये गये नियमोपनियमो के बल पर नही कर सकते, यह तो हम स्वदेशी वस्तुओ का उपयोग करके ही कर सकते हैं।

"पाखण्ड करने और चिकनी-चुपडी बाते कहने से सच्ची एकता प्राप्त नही हो सकती। आप दूसरे लोगों को तो धोखा दे सकते हैं मगर ईश्वर को नही। यदि हिन्दू लोग चिकनी-चुपडी बातें कहकर मुसलमानो को गोवध बन्द कर लेने पर राजी करना चाहते हो या इसी तरह मुसलमान खिलाफत के सवाल पर हिन्दुओ का सहयोग प्राप्त करने की सोचते हो तो बहुत सम्भव है कि उन्हे निराशा ही हाथ लगे। ये तो अस्थायी वस्तुएँ हैं। जहाँ तक आप लोगो का अपना-अपना धर्म अनु-मति दे वहाँ तक आपको एक दूसरे के हित के लिए अपने प्राण भी निछावर करने को तैयार रहना चाहिए।

—मूल हिन्दी। मेरठ, २२।१।१९२०। अंग्रेजी से। ट्रिब्यून १२।२।१९२०]।

२२. भाषण : खिलाफत और हिन्दू-मुस्लिम एकता पर

बनारस टाउनहाल के मैदान मे तीसरे पहर ३-३० बजे खिलाफत की एक

आम सभा हुई।...मौलाना शौकत अली और अबुल कलाम आजाद के अतिरिक्त सभा में आनेवाले विशिष्ट व्यक्तियों में श्री गांधी, पण्डित मदनमोहन मालवीय, पण्डित मोतीलाल नेहरू, लाला हरकिशनलाल और पंजाब के अन्य नेतागण थे।... हकीम मुहम्मद हुसेन खाँ को सभापति चुना गया।...

भारत के प्रेमी और प्रेम-भाजन श्री गांधी गगनभेदी हर्षध्वनि के बीच उठे। उन्होने खिलाफत के प्रश्न तथा हिन्दू-मुस्लिम एकता पर अपने विचार प्रकट करते हुए इस पर जोर दिया कि ये दोनों जातियाँ अपने-अपने धर्म के आदेशों का पालन करते हुए भी एक दूसरे के प्रति शुद्ध और सच्चा प्रेम-भाव रख सकती हैं। उन्होंने श्री केण्डलर[1] से हुई भेट का उल्लेख भी किया, जिसमें श्री केण्डलर ने उनसे पूछा था कि क्या हिन्दू लोग मुसलमानों के साथ रोटी-बेटी का सम्बन्ध स्थापित करने को तैयार है। महात्मा जी ने कहा कि मैंने उत्तर में उनसे कहा कि हिन्दू-मुस्लिम एकता के लिए यह कदापि जरूरी नही कि दोनों जातियों के बीच परस्पर विवाह-सम्बन्ध और खानपान हो। मैंने उनसे पूछा : जब जर्मन और अंग्रेज एक ही जाति के है और एक ही धर्म के अनुयायी है और उनका आपस में विवाह आदि का सम्बन्ध भी था तब यदि एकता के लिए यही सब जरूरी है, तो उन्होने एक-दूसरे से युद्ध क्यों किया?

श्री गांधी ने हिन्दुओं से जोरदार शब्दों में अपील की कि वे खिलाफत के आन्दोलन में, जिसका उद्देश्य बड़ा पवित्र है, मुसलमानों की मदद करें।

—मूल हिन्दी। काशी, २०।२।१९२०। अँग्रेजी। बाम्बे क्रानिकल, २३।२।१९२०।]

२३. भाषण : विद्यार्थियों की सभा बनारस में[2]

श्री गांधी हिन्दी मे बोले[3] और उन्होंने अपने भाषण में तुलसीदास का उल्लेख

---

१. एडमण्ड केण्डलर, विख्यात अँग्रेजी पत्रकार, उन दिनों पंजाब के प्रचार-अधिकारी। उन्होंने गांधी जी को कुछ खुले पत्र लिखे थे, जिनमें खिलाफत के सवाल पर गांधी जी के रुख पर शंकाएँ उठाई थीं।

२. हिन्दू विश्वविद्यालय, काशी में छात्रों की यह सभा विश्वविद्यालय के सह-उप-कुलपति की अध्यक्षता में हुई थी।

३. मूल हिन्दी भाषण उपलब्ध नहीं है। इस सम्बन्ध में देखिए 'काशी-यात्रा' न० जी० २९।२।१९२०।

अनेक वार किया। उन्होंने विद्यार्थियो को पूरी ईमानदारी बरतने का उपदेश देते हुए कहा कि इसे केवल नीति के रूप मे ही नही अपनाना चाहिए। उन्होने यह भी कहा कि "पजाव मे मार्शल ला के कारण विद्यार्थियो ने वडी मुसीवतें उठाई, परन्तु वे भी सर्वथा निर्दोष नही कहे जा सकते। विद्यार्थियो को राजनीति का अध्ययन करना चाहिए परन्तु उसमे सक्रिय भाग नही लेना चाहिए। विद्यार्थियो का आदर्श सयम होना चाहिए, न कि स्वेच्छाचारिता।" उन्होने भरत के जीवन से सयम के दृष्टान्त प्रस्तुत किये और कहा कि "यदि यहा के विद्यार्थी सयम के प्राचीन आदर्श पर चलने मे असफल रहे तो विश्वविद्यालय के अस्तित्व का औचित्य नहीं रहेगा और इसके निर्माताओ को प्रोत्साहन नही प्राप्त होगा। मैं गुजरात कालेज (अहमदावाद) के लगभग प्रत्येक विद्यार्थी को जानता हू, और उनमे से कुछ को अपने अध्यापको मे ही खामिय दिखाई देती हैं। मैं स्वीकार करता हू कि अध्यापको ने भौतिकतावादी प्रणाली के अन्तर्गत शिक्षा ग्रहण की है, परन्तु विद्यार्थियो को उचित है कि अपने गुरुओ के प्रति श्रद्धाभाव रखना सीखें, उनमे दोष न निकालें।" उन्होंने पण्डित मालवीय की सेवाओ की प्रशसा करते हुए कहा कि उनका जीवन अध्यापको और विद्यार्थियो के लिए दृष्टान्त-रूप है।

—काशी। २१।२।१९२०। अंग्रेजी से। 'लीडर', २३।२।१९२०। स० गा० वां०, खण्ड १७ पृ० ४८]।

२४. भाषण : खिलाफत-समिति की इलाहाबाद की बैठक में (३ जून, १९२०)[1]

मैं अच्छी तरह जानता हू कि मुसलमान महसूस करते हैं कि भारतवर्ष के सामने अब चार चरणो मे असहयोग अपनाने के अलावा और कोई उपाय नही है। उनके साथ मेरी पूरी सहानुभूति है। और शान्ति-सन्धि मे परिवर्तन कराने के उनके प्रयत्नो मे पूरा सहयोग देने के लिए तैयार हूँ। मेरे विचार से यह सघर्ष झूठी ईसाइत और सच्चे इस्लाम के बीच होनेवाला सघर्ष है। एक ओर शस्त्रास्त्रो का बल है और दूसरी ओर नैतिकता का। हम यह युद्ध नैतिक बल के जोर पर

१. १ और २ जून को इलाहाबाद में हिन्दुओ-मुसलमानों का एक सयुक्त सम्मेलन हुआ। ३ जून को इलाहाबाद मे अ० भा० केन्द्रीय खिलाफत समिति की बैठक हुई। यह भाषण उसी बैठक का है।

जीतना चाहते हैं। असहयोग आन्दोलन चार चरणों में किया जायगा। लेकिन पहला चरण प्रारम्भ करने से पहले हम परमश्रेष्ठ वाइसराय महोदय से अपनी बात अर्ज करें और उन्हे इस बात के लिए एक महीने का समय दें कि वे शान्ति-सन्धि की शर्तों में मुसलमानों की माँगों के अनुरूप परिवर्तन करवा दें और अगर वह ऐसा न करवा सके तो अपना पद छोड़कर असहयोग आन्दोलन में शामिल हो जायँ। एक महीने के बाद प्रथम चरण को कार्यान्वित किया जायगा। जो लोग मेरे साथ काम करने को तैयार हों, उनकी एक समिति बना दी जाय, जिसे असहयोग की योजना को कार्यान्वित कराने की पूरी सत्ता दी जाय और जिसके निर्णय सभी लोगों के लिए बन्धनकारी हों। (उन्होंने बहिष्कार को अव्यवहार्य बताते हुए उसके प्रति असहमति प्रकट की और उसके बदले स्वदेशी अपनाने को कहा। उन्होंने लोगों से किसी भी रूप में हिंसा न करने का अनुरोध किया।)

—अंग्रेजी से। अमृतबाजार पत्रिका, ७।६।१९२०]।

२५. भाषण : बनारस हिन्दू विश्वविद्यालय के बारे में

२३ जून, १९२०

[कल माधव बाग, बम्बई में एक सार्वजनिक सभा की गई, उसमें माननीय पं० मदन मोहन मालवीय ने बनारस हिन्दू विश्वविद्यालय पर एक भाषण दिया। ग्वालियर-नरेश महाराजा सिन्धिया अध्यक्ष थे। सभा में बड़ी संख्या में लोग उपस्थित थे, जिसमें महाराजा बीकानेर, श्री मो० क० गांधी, मौलाना शौकत अली... भी थे।

श्री गांधी ने अपने भाषण में कहा]—हमारे मित्र पं० मालवीय ने विश्व-विद्यालय[1] के लिए जितने उत्साह और परिश्रम से काम लिया है उतना और किसी ने नही। जब-जब इस विषय पर बात करने का अवसर मुझे मिला है तब-तब उन्होने मुझे बतलाया कि विश्वविद्यालय के काम को और आगे बढ़ाना वह अपने जीवन का मुख्य कार्य मानते हैं। उन्होने मुझसे यह भी कहा कि यदि बन सका तो वह राजनीति का क्षेत्र बिल्कुल ही छोड़ देंगे और अपने आप को विश्वविद्यालय के

---

१. मालवीय जी ने १९१६ में विश्वविद्यालय की स्थापना की थी; उन्होंने उसकी योजना पर कई वर्षों तक काम किया और उसका खर्चा चलाने के लिए एक करोड़ का कोष संग्रह किया।

काम मे पूरी तौर से लगा देंगे। बम्बई हमेशा इस बात के लिए प्रसिद्ध रही है कि वह एक उचित उद्देश्य की सहायता के लिए तुरन्त तत्परता से आगे आती है और इस बात मे मुझे जरा भी सन्देह नही है कि बम्बई अपनी उसी परम्परागत उदारता से काम लेगी और विश्वविद्यालय की सहायता करेगी। केवल प० मालवीय ही नही, दो महाराजा भी आज आपके बीच नम्र याचको के रूप मे पधारे हैं। अतएव आपका कर्त्तव्य है कि विश्वविद्यालय कोष के लिए जितना भी दान हो सके दे तथा यह दान तत्परता के साथ और इसी स्थल पर देना उचित होगा। [श्री गाधी ने महाराजा सिन्धिया को अध्यक्ष पद ग्रहण करने के लिए हार्दिक धन्यवाद देने के उपरान्त अपना भाषण समाप्त किया।]

—बम्बई, २३।६।१९२०। अग्रेजी मे। बाम्बे क्रानिकल, २४।६।१९२०]।

२६. भाषण : संयुक्त प्रान्तीय सम्मेलन, मुरादाबाद में

मुझे अपने भाई पण्डित मदनमोहन मालवीय से भिन्न मत रखने पर बहुत गहरा दुःख है। मैं चाहता हू कि आप सब यह बात ध्यान मे रखते हुए कि पण्डित जी निरन्तर निष्ठापूर्वक देश की सेवा करते रहे, उनके दृष्टिकोण पर बहुत सम्मान-पूर्वक विचार करे। आप अपना निर्णय देते समय अपने मन में मेरा खयाल न रक्खें। मेरे विचार अब भी वही हैं जो कलकत्ते मे थे। बहुत गम्भीर चिन्तन के बाद भी मैं यही मानता हू कि देश की स्वतन्त्रता का एकमात्र रास्ता असहयोग ही है और कलकत्ते मे स्वीकार किया गया कार्यक्रम सबसे अच्छा है। मुझसे पूछा गया है कि क्या मैं साम्राज्य से भारत का सम्बन्ध तोड लेने के पक्ष मे हूँ। मैं यह स्वीकार करता हूँ कि असहयोग के कार्यक्रम मे ब्रिटिश साम्राज्य से सम्बन्ध तोड लेने की बात है लेकिन यह ध्यान मे रखना है कि मेरा लक्ष्य भारत को स्वतन्त्रता दिलाना है। यदि वर्तमान सरकार अपने दोषो को दूर कर देती है और लोग अपने को अवसर के अनुकूल सिद्ध करते हैं तथा सरकार और उसके अधिकारी भारतीयो को बराबरी का दर्जा देते हैं तो ब्रिटिश साम्राज्य से सम्बन्ध बना भी रह सकता है। लेकिन यह स्पष्ट कर दिया जाना चाहिए कि जनता मालिक है और सरकार उसकी सेवक। यदि लोगो के साथ बराबरी और साझेदारी का व्यवहार किया जाता है तो ठीक है। लेकिन अगर सरकार और अग्रेज जाति मालिक होने का दावा करती है तो मैं क्षण-भर को भी इसे बरदाश्त न करूंगा और न उन्हे भारत की एक इच भूमि पर ही टिकने दूगा। भारत को आजादी दिलाने के लिए

दो बातें आवश्यक है। पहली तो यह कि हिन्दुओं और मुसलमानों में एकता हो। मेरा अनुरोध है कि आप दोनों समुदायों के लोग एक दूसरे के प्रति सहिष्णुता वरतें। लेकिन हिन्दू होने के नाते मैं हिन्दुओं से अधिक खुलकर अनुरोध कर सकता हूं। आप मुसलमानों को प्यार करें, उनका विश्वास करें और ऐसा आप अपने धर्म का दृढ़ता से पालन करते हुए भी कर सकते हैं। दूसरी शर्त है असहयोग आन्दोलन को सफल बनाना। (वर्तमान बुराइयों को दूर करने का) यही सबसे अच्छा और एकमात्र उपाय है। मैं हिंसा में विश्वास नही करता। हिंसा से मौजूदा बुराइयां दूर नही होंगी बल्कि उससे उन्हें उत्तेजन ही मिलेगा। सरकार खिलाफत के सम्बन्ध में अपने वादों से मुकर गई है। उसने पंजाब पर कहर बरपा किया है। इस अपराध पर उसने पश्चात्ताप भी नहीं प्रकट किया है। वर्तमान प्रणाली के अन्तर्गत जनता लोगों को (फौज में भरती होकर) मैसोपोटामिया जाने और छोटे-छोटे देशों की स्वतन्त्रता छीनने से नहीं रोक सकती। ऐसी सरकार से सम्वन्ध वनाये रखना अपराध है। इसी सरकार ने रौलट अधिनियम वनाया है; इसी सरकार ने खिलाफत के सम्बन्ध में अपना वचन-भंग किया है; इसी सरकार ने कुख्यात फौजी अदालतों की स्थापना की और इसी सरकार ने आपके बच्चों को ब्रिटिश झण्डे के सामने सिर झुकाने को मजवूर किया। मेरे विचार से ऐसी सरकार के साथ सहयोग करना, इसकी विधान-परिषदों में बैठना या अपने बच्चों को इसके स्कूलों में भेजना हराम है।

—हिन्दी। मुरादाबाद, ११।१०।१९२०। अंग्रेजी से। सर्चलाइट (पटना), १७।१०।१९२०]।

२७. भाषण : कानपुर में असहयोग पर

"यूरोप की सवसे बड़ी ताकत से हमारी यह लड़ाई चल रही है। ऐसी लड़ाई में विजय चाहते हैं तो हमें उसकी आवश्यक शर्तें समझ लेनी चाहिए। इनमें एक शर्त है संगठन की क्षमता। अंग्रेजों-जैसी संगठन की क्षमता के बिना हम अपना काम-काज चला भी नहीं सकते।...एक वार मुझे दस हजार आदमियों की एक सैनिक टुकड़ी के साथ सुवह के पहले पहर में चलने का मौका आया था। सारे सैनिक पूर्ण अनुशासन का पालन कर रहे थे। लेकिन वह सैनिक ताकत से जीती जानेवाली लड़ाई थी। हम इस लड़ाई में असहयोग के हथियार का उपयोग करके जीतना चाहते हैं। यहाँ अनुशासन की और भी अधिक आवश्यकता है।

दूसरी शर्त है हिन्दू-मुस्लिम एकता। यह एकता जबानी जमा-खर्च की नही बल्कि हृदयो की एकता होनी चाहिए। हिन्दुओं और मुसलमानो की समझ मे ज्योही यह बात आ जायगी कि उनके सहयोग के बिना ब्रिटिश शासन असम्भव है और ज्योंही वे उन्हे अपना सहयोग देना बन्द कर देंगे, त्योंही विजय हमारे हाथ मे होगी। हम अपनी शक्ति का परिचय खून-खराबी या आगजनी के कामो के द्वारा नहीं करा सकते। अपनी शक्ति का परिचय तो हम आत्मोत्सर्ग और समर्पण के कार्यों द्वारा ही दे सकते हैं। मेरा दृढ विश्वास है कि बलिदान ही सचाई की सच्ची कसौटी है और सचाई तबतक विजयी नही होती जबतक उसके पीछे बलिदान की सच्ची भावना न हो। आप अपने बच्चो को सरकारी स्कूलो से निकाल लें, अदालतो और कौंसिलो के चुनावो का बहिष्कार करे तथा विलासिता का जीवन छोड़कर स्वदेशी को अपनायें।[1]

—हिन्दी। कानपुर, १४।१०।१९२०। अंग्रेजी से। 'लीडर' २१।१०।१९२०]

२८. भाषण : लखनऊ में

हमे तो बडी राष्ट्रीय सेना बनानी है। जबरदस्त अनुशासन के बिना वैसी सेना नही बना सकेंगे।

० ० ०

ब्रिटिश हुकूमत इस समय शैतान की प्रतिमूर्ति है। और जो खुदा के बन्दे हैं वे शैतानियत के साथ मुहब्बत नही रख सकते।

० ० ०

तुमने तलवार न उठाने की प्रतिज्ञा ली है, तो इस तरह छिटपुट हत्याओं का होना अनुशासन का गम्भीर उल्लघन सूचित करता है। मैं नही मानता कि इस्लाम धर्म मे भी ऐसे अनुशासन-भग की इजाजत है। जबतक मुसलमान हिंसा-रहित असहयोग से बँधे हुए हैं, तबतक उन्हे यह विचार तक नही आना चाहिए कि तलवार उठाने से अच्छा काम होगा। इस हुकूमत ने बुराई की है, परन्तु बेगुनाह आदमियो को मारकर तो हम सरकार की दमन और आतक की नीति को ही प्रोत्साहन देंगे। इस्लाम मे तलवार के उपयोग की इजाजत जरूर है परन्तु

---

१. जिस सभा में गांधी जी ने यह भाषण किया था वह परेड मैदान (कानपुर) में हुई थी।

मेरा विश्वास है कि इस प्रकार सिर उड़ाने की बात तो इस्लाम में भी नहीं होगी और मैं मानता हूं कि उलेमा भी मेरे खयाल की ताईद करेंगे। आप (यानी मुसलमान) जिस दिन हिंसारहित असहयोग का सिद्धान्त छोड़कर तलवार उठाने का निश्चय करें, उस दिन अवश्य ही प्रत्येक यूरोपीय स्त्री, पुरुष और बच्चे को चेतावनी दे सकते है कि उनकी जिन्दगी जोखिम में है। परन्तु मैं ऐसी आशा रक्खूंगा कि आपको ऐसा निश्चय करने की नौवत नहीं आयेगी।

० ० ०

जफरुल्मुल्क तो अत्यन्त प्रामाणिक और निडर आदमी हैं, इसलिए उन्हें तो जेल जाकर ही शान्ति मिलनेवाली है। वह किसलिए जेल में हैं? उन्होंने एक भाषण में कहा था कि यह हुकूमत मिट्टी में मिलेगी इसलिए सरकार की रँगरूटी में जाना दोजख का रास्ता अपनाना है।

० ० ०

इस हुकूमत ने इतने घोर अत्याचार किये है कि यह खुदा और हिन्दुस्तान के आगे तोबा न करे, तो जरूर मिट्टी में मिल जायगी। मैं तो यह तक कहूंगा कि जबतक वह तोबा न करे, तबतक उसे मिटाना हर भारतीय का कर्त्तव्य है। सरकार की रँगरूटी में जाना नरक में जाने के समान है—यह कहना यदि अपराध हो तो अवश्य ही यह अपराध करके पवित्र बनना प्रत्येक व्यक्ति का फर्ज है।

० ० ०

हम ऐसी (मौ० जफरुल्मुल्क का मुकदमा सार्वजनिक रूप में चलाने की) माँग कर ही नही सकते। ऐसी माँग करना यह बताता है कि जेल में जाने की हमारी नीयत नही है। समझ में नहीं आता कि हम ऐसा क्यों करते है। खुद जफ़रुल्मुल्क के लिए जेल महल के समान है। हमें तो ऐसा काम करना चाहिए, जिससे सरकार त्राहि-त्राहि पुकारे और हमारा माँगा हुआ दे दे अथवा हमें समुद्र में डाल दे। गुलामी में रहने से समुद्र में डूबना बेहतर है।

मैं सरकार की तुलना डाकू से करता रहा हूं। कोई डाकू हमारी जायदाद लूट ले जाय और बाद में हमें आधी वापस देना चाहे तो क्या हम उसे ले सकते है? परन्तु यह सरकार तो डाकू से भी बुरी है। सरकार ने हमारा सब छीन लिया है। इतना ही नहीं, वह तो हमारी आत्मा पर भी अधिकार करना चाहती है। सरकार हमें गुलाम बनाना चाहती है तो हमें उससे इतना-भर कह देना है कि जबतक हमारा वित्तमात्र ही नही, बल्कि हमारी इज्जत, हमारी आजादी वापस नही मिलती, तबतक तुमसे मुहब्बत रखना हराम है।

—हिन्दी। लखनऊ, १५।१०।१९२०। गुजराती से। न० जी० ३१।१०।१९२०]

२९. भेंट : लखनऊ में समाचार-पत्रों के प्रतिनिधियों से

[सर्वश्री गांधी, मुहम्मद अली और शौकत अली बम्बई मेल से आज सवेरे यहाँ पहुँचे।...एक पत्र-प्रतिनिधि द्वारा यह पूछे जाने पर कि वे सुधारों का समर्थन करनेवालों का नेतृत्व तथा सरकार के साथ सहयोग क्यो नहीं करते, श्री गांधी ने उत्तर दिया] "वह मेरे लिए बहुत भयकर बात होगी। मैं तो इस जनसमूह का ही नेतृत्व करना पसन्द करूंगा। मैंने पिछले तीस वर्षो से लगातार सरकार से सहयोग करने का प्रयत्न किया है, लेकिन अब मैं ऐसा नही कर सकता। यह सरकार दुष्ट है और शैतानी से भरपूर है, जिसने अपना वचन तोड़ा है। अगर मुझे लायड जार्ज से बात करने का अवसर मिले तो मैं उनके मुंह पर यह बात कहू।"

[यह पूछे जाने पर कि वह अंग्रेजी भाषा तथा डाक व तार का क्यो प्रयोग करते हैं, श्री गाधी ने कहा कि] मैं अग्रेजी भापा का प्रयोग इसलिए करता हूँ कि हिन्दी मे मेरे अभिप्राय को नहीं समझा जायगा। [डाक और तार के सम्बन्ध में जिक्र करते हुए उन्होंने कहा कि] "मैं सरकारी विभागो को अपनी निजी सम्पत्ति मानता हूँ, अगर सरकार मुझसे ये दोनो सुविधाए छीन ले तो मुझे प्रसन्नता ही होगी।"

—अंग्रेजी। लखनऊ १५।१०।१९२०। हिन्दू १६।१०।१९२०]।

३०. भाषण : बरेली में[1]

१७ अक्तूबर, १९२०

चूंकि आप लोग अब इतने निडर हो गये हैं अत मैं आपसे यही आशा करूंगा कि आप ऐसे ही बने रहे। अमृतसर मे नगरपालिका से सरकार ने बहुत नीच कृत्य करवाये हैं, यहा तक कि लोगो को जल देना बन्द करवा दिया है। इससे घोर कृत्य और क्या हो सकता है? चाहे आप पर कितने ही अत्याचार क्यो न किये जाय, आप अपनी स्वतन्त्रता को बनाये रखने का प्रयत्न करें, दबाव मे न आयें, अमृतसर की नगरपालिका जैसा व्यवहार न करें। दूसरी बात मैं यह कहता हूं कि अगर आप मे शक्ति हो तो आप अपने स्कूलो की स्वतन्त्रता को बनाये रखें। अगर आप सरकार की ओर से मिलनेवाला अनुदान (लेना) बन्द कर दें तो

१. बरेली नगरपालिका द्वारा दिये गये अभिनन्दनपत्र के उत्तर मे।

[illegible] हो जायेंगे। मेरी कामना है कि इन दोनों बातों पर आप खूब विचार करें।

[हिन्दी नवजीवन, १०।११।१९२०। गुजराती से। न० जी०, ३१।१०।१९२०।]

६१. भाषण : झांसी में

श्री गांधी ...ने रोलट एक्ट और पंजाब-काण्ड की[1] निन्दा करते हुए भाषण आरम्भ किया। उन्होंने कहा कि जब तक खिलाफत के सवाल[3] का हल नहीं होता, पंजाब में किये गये अत्याचारों का इंसाफ नहीं किया जाता और स्वराज्य नहीं हासिल हो जाता तब तक किसी को भी कौंसिलों में शामिल नहीं होना चाहिए। हमारे उद्देश्य केवल हिन्दू-मुस्लिम एकता और हिंसा-रहित असहयोग से ही पूरे हो सकते हैं। [illegible] निकाली जानी चाहिए। इसके बाद उन्होंने असहयोग कार्यक्रम के विभिन्न अंगों पर बल दिया और कहा कि किसी को भी सेना में भरती नहीं होना चाहिए। इसके बाद उन्होंने सरस्वती पाठशाला के लिए चन्दे की अपील की। उन्होंने बताया कि यह पाठशाला एक शुद्ध राष्ट्रीय संस्था है।

—[हिन्दी। [illegible], २०।११।१९२०। 'लीडर', २४।११।१९२०।]

६२. भाषण : आगरा में असहयोग पर[4]

[गांधी जी ने भाषण का आरम्भ हाल में आगरा में हुए हिन्दू-मुस्लिम दंगों

---

१. महादेव देसाई के यात्रा-विवरण से संकलित।

२. झांसी शहर और खास-तौर से हार्डीगंज को, जहाँ यह भाषण हुआ था, गांधीजी का स्वागत करने के लिए बहुत अच्छी तरह से सजाया गया था और खूब रोशनी की गई थी। गांधीजी के साथ मौलाना शौकत अली भी थे।

३. खिलाफत आन्दोलन का उद्देश्य तुर्की के सुलतान को खलीफ़ा होने के नाते मुस्लिम दुनिया में वही प्रतिष्ठा और अधिकार दिलाना था जो उन्हें प्रथम विश्व-युद्ध के पूर्व प्राप्त थे।

४. यह भाषण एक विशाल सार्वजनिक स
[illegible]लाम आजाद इस सभा के अध्यक्ष

के उल्लेख से किया और अधिकारियो की मध्यस्थता के बिना ही विवाद सुलझाने के लिए जनता को बधाई दी। उन्होंने कहा] "मुझे अनुशासनहीन सभा देखकर दुख होता है, क्योकि उससे तो स्वराज्य प्राप्त नही हो सकता। जुलूस[1] से समय नष्ट होता है और बडी सभाओ से वह उद्देश्य पूरा नही होता जिसके लिए उनका आयोजन किया जाता है। इन दोनो मे ही समय नष्ट होता है। शायद मुझे यह व्रत लेना पडे कि मैं जुलूसो मे नही जाऊगा और वडी सभाओ मे भापण नही दूंगा। भारत जलियाँवाले वाग मे मारे गये १५०० लोगो के लिए शोक मना रहा है। शोक के समय सगीत और जुलूस का विचार मुझसे सहन नही हो सकता। यह भी खेद की वात है कि सजावट और झण्डियो आदि मे विदेशी कपडे और विदेशी वस्तुओ का इस्तेमाल किया गया है और रोशनी मे विदेशी मोमबत्तियो और लैम्पो का। खिलाफत के मामले मे जो अन्याय हुआ है उसे दूर कराने या स्वराज्य प्राप्त करने मे इन तरीको से कोई मदद नही मिलेगी।

मैं केवल विद्यार्थियो के बीच[2] भाषण देने आया हूँ और शीघ्र ही जह ठहरा हू वह चला जाऊगा। उस सभा मे केवल विद्यार्थी ही शरीक हो सकेंगे।... मैं इस सरकार को शैतान की सरकार मानता हू और मेरा विश्वास है कि यदि लोग सच्चाई पर रहें और नेक आचरण करें तो एक साल मे स्वराज्य मिल सकता है। सरकार मुझे पागल कहती है परन्तु मैं जानता हू कि मैं पागल नही हूँ। मैं इस धूर्त सरकार से सच्चाई से निपटूगा। [इसके वाद उन्होंने वकीलो से वकालत छोड देने का, उम्मीदवारो से कौंसिल का वहिष्कार करने का और मतदाताओं से मत न देने का आग्रह किया। उन्होंने कहा कि] चुनाव मे चमार को उम्मीदवार वनाना हास्यास्पद है। नौकरशाही उस पर और लोगो पर हँसेगी और चूंकि इस ढग से स्वराज्य नही मिलेगा, वे दोनो का ही मजाक उडायेंगे।

— हिन्दी। आगरा, २३।११।१९२०। न० जी० तथा 'लीडर', २६।११।१९२०। अंग्रेजी एवं गुजराती से]।

---

१. गांधी जी एक जुलूस में सभास्थल तक ले जाये गये थे। जुलूस के साथ बैण्ड था और सारा मार्ग सजाया गया था। सभास्थल तक पहुँचने में दो घण्टे लग गये थे।

२. देखिए विद्यार्थियो की सभा का भाषण।

रखनेवाला लडका था। मुझे ईश्वर मे भी विश्वास था। यह सच है कि माता-पिता के प्रति भक्ति रखनेवाला मैं आज माता-पिता की अवज्ञा करने को कहता हूँ। लेकिन माता-पिता को जन्म देनेवाला भी भगवान है और जह ईश्वर और माता-पिता की आज्ञा मानने मे चुनाव करना पडे, वहाँ मैं आपसे ईश्वर की आज्ञा मानने के लिए कहता हू।

जिनके दिल से यह आवाज आये कि जैसा मैंने वताया है वैसे साम्राज्य-द्वारा सचालित स्कूलो मे आजादी की शिक्षा प्राप्त नही की जा सकती, जिन्हे यह ईश्वरीय निर्देश प्राप्त हो कि आजादी पाने के लिए इस गुलामी से छूटना चाहिए, उन्हें माता-पिता को विनयपूर्वक समझाना चाहिए। यदि आपको यह जान पडे कि यह घर जल रहा है और इसे तत्काल छोडने मे ही छूटकारा है तो उसे छोड देना चाहिए। मैं तो इस साम्राज्य मे पल-भर भी नही रह सकता, ऐसा मुझे चौबीस घण्टे महसूस होता रहता है और अगर आपको भी ऐसा महसूस हो तो आपको यह पूछने की जरूरत ही नही रह जायगी कि हमारे लिए दूसरे स्कूलो की व्यवस्था है या नही। विना शर्त के स्कूलो का त्याग करना स्वतन्त्रता का पहला पाठ है। लेकिन अगर आप मे धीरज का अभाव हो, आपमे स्कूलो का त्याग करके नई राष्ट्रीय पाठशाला के स्थापित होने तक उसके लिए पैसे इकट्ठे करने का, भिक्षा मांगकर लाने का धीरज न हो तो आप हर्गिज शाला न छोडें।

आपको शारीरिक श्रम करने की शिक्षा मिलनी चाहिए। अग्रेज लडके जव स्कूलो-कालेजो से निकलते हैं तव उनमे शारीरिक श्रम करने की शक्ति तो होती ही है। लेकिन अगर आप पढ़-लिखकर सरकारी नौकर होने की आकाक्षा रखते हो तो आपके लिए यही पाठशालाए ठीक हैं। दक्षिण मे मधुकरी की जो प्राचीन प्रथा आज भी मौजूद है उसके गौरव को आप समझ सकते हो तो आप भिक्षा मांग कर भी शिक्षा प्राप्त करें। आपमे भिक्षा मांगकर शिक्षा लेने की सामर्थ्य न हो तो मैं आपकी मार्फत देश की स्वतन्त्रता प्राप्त नहीं करना चाहता।

यह शिक्षा नास्तिकता की शिक्षा है। ऐसी शिक्षा के वावजूद जिसे ईश्वर मे श्रद्धा हो, जिसे इन्द्रियो पर कावू हो, जिसने अहिंसा और अस्तेय का पालन किया हो, अन्तर की आवाज तो वही सुन सकता है। मैं केवल सयम का पालन करने वाले विद्यार्थियो से कहता हू कि अगर आपको ईश्वरीय निर्देश मिले तो आप वेधडक कालेज छोड दें।

मुझे ऐसे ही विद्यार्थियो की आवश्यकता है जिनमे समय आने पर वलिदान देने की, फांसी पर चढने की, भिक्षा मांगने की शक्ति हो। यदि देश तथा मुसलमानो

पर हुए अत्याचारों से आपके हृदय में अग्नि धधक रही हो तो आप कालेज छोड़ सकते हैं।[1]

—मूल हिन्दी। आगरा, २३।११।१९२०। गुजराती से अनूदित। न० जी०, ८।१२।१९२०]।

- जिस शिक्षा में सचाई से चलने का अवकाश नहीं, देशभक्ति को अवकाश नहीं, वह कैसी शिक्षा है?
- यह शिक्षा नास्तिकता की शिक्षा है।
- मुझे ऐसे विद्यार्थियों की आवश्यकता है जिनमें समय आने पर बलिदान देने की, फाँसी पर चढ़ने की...शक्ति हो।

---

१. २६।११।१९२० के 'लीडर' में इस सभा का जो विवरण प्रकाशित हुआ था, उसके अन्त में विद्यार्थियों से गांधीजी ने कहा है—"मेरा भाषण सोलह साल से अधिक अवस्था वाल विद्यार्थियों के लिए है। किसी भी हालत में हिंसा का प्रयोग नहीं होना चाहिए। मेरे कुछ मुसलमान मित्रों ने बताया है कि वे असहयोग को, तर्क मवालात को आजमायेंगे किन्तु यदि वह सफल न हुआ तब वे तलवार को अपनायेंगे। मैं तलवार का प्रयोग करने के खिलाफ़ हूँ। जो विद्यार्थी स्कूलों का त्याग करें, उनके अभिभावक यदि उन्हें आर्थिक सहायता देने से इनकार करते हैं तो उन्हें अपनी पढ़ाई जारी रखते हुए, पत्थर तोड़कर या भीख माँगकर भी अपना और अपने गुरु का पेट भरना चाहिए। केवल उन्हीं विद्यार्थियों को बिना किसी शर्त स्कूलों और कालेजों को छोड़ना चाहिए जो कष्ट सहने को तैयार हों। उत्तेजना में आकर उन्हें ऐसा हर्गिज न करना चाहिए।"

'लीडर' की उक्त रिपोर्ट में यह भी बताया गया है कि भाषण समाप्त हो जाने के बाद गांधीजी ने विद्यार्थियों को प्रश्न पूछने का समय दिया। एक विद्यार्थी ने पूछा कि कोई विद्यार्थी तकनीकी या किसी और तरह की शिक्षा प्राप्त करने के लिए इंग्लैण्ड या किसी दूसरे यूरोपीय देश में जा सकता है या नहीं। गांधीजी ने जवाब दिया कि वह तो इसे पसन्द नही करते किन्तु कोई जाना ही चाहे तो जा सकता है। तब विद्यार्थी ने पूछा कि क्या वह जपान या अमेरिका जा सकता है, जो स्वतन्त्र देश है। गांधीजी ने कहा कि उनकी दृष्टि में सब एक-से हैं; वे भारत नहीं हैं।

३४. भाषण : विद्यार्थियों की सभा, काशी में[1]

कुछ मास पूर्व मैंने आपसे सयम के बारे मे कुछ कहा था, आज भी आपके सामने मैं अपने हिसाब से सयम की ही बात करने आया हू। आजकल यह कहा जा रहा है कि मै विद्यार्थियो को बहका रहा हू। मैं पूरी तरह अपनी जिम्मेदारी समझते हुए कहता हू कि किसी को बहकाना नही चाहता। मैं विद्यार्थियो को बहका ही नही सकता। मै भी एक विद्यार्थी था और विद्यार्थी-अवस्था मे हर काम विनयपूर्वक करता था। मैं चार बच्चो का पिता हू और ऐसे सैकडो लडके मेरे पास आ चुके हैं, आज भी जिनके पिता-स्वरूप होने का दावा करता हू। ऐसी हालत मे मेरे मुंह से उन्हे बहकाने की बात निकल ही नही सकती।

परन्तु आज तो मैं जो -कुछ कर रहा हू, उसे बुजुर्ग लोग ऐसा मानते हैं कि मैं उनके साथ अन्याय कर रहा हू। उनका खयाल है कि जिस सत्य के आग्रह का मैं दावा करता हू, उससे भी मैं थोडा डिग गया हूं, और जिस विवेक का दावा करता रहा हू, मेरी आजकल की भाषा मे वह भी नही बचा है। इन सब बातों को मैं सोचता हू, और मेरी आत्मा कहती है कि ऐसा नही है। मैं अविवेकपूर्ण भाषा का इस्तेमाल नही करता। मैं जो कहता हू शान्ति से, सोच-समझकर कहता हू। बात यह है कि मैं पिछले दिसम्बर तक[2] जिस भ्रम मे था, मेरा वह भ्रम भग हो गया है और इस कारण आज मेरे मुंह से जो भाषा निकलती है, वह कुछ अलग है। परन्तु बात जैसी है, वैसी ही मैं कह रहा हू। मुझे जो कुछ गन्दा जान पडता है उसे गन्दा न कहने से सत्य का भग और अविवेक होता। जो चीज जैसी है उसे वैसा ही बताने मे विवेक का भग नही है और सत्य का पालन है, यद्यपि एकान्तिक सत्य तो मौन मे ही है,] फिर भी जब भाषा का प्रयोग करना पडता है, तब उसमे सम्पूर्ण सत्य तो तभी आयेगा, जब मैं स्थिति को जैसी पाऊ, वैसी ही व्यक्त करू।

'लीडर' मे पण्डित जी[3] का एक व्याख्यान आया है। उनसे उसके प्रकाशन की अनुमति ले ली गई थी। इसके एक वाक्य की ओर मैं आपका ध्यान दिलाना चाहता हूँ। वाक्य है "सब कुछ सोच-समझकर जो तुम्हारी अन्तरात्मा कहे,

---

१. महादेव देसाई के यात्रा-विवरण से उद्धृत।

२. दिसम्बर, १९१९ मे अमृतसर काग्रेस मे गाधी जी ने माण्टेग्यु-चेम्सफोर्ड सुधारों का समर्थन किया था।

३. प० मदनमोहन मालवीय।

सो करो।" मैं भी यही बात कहना चाहता हूँ। यदि आपकी अपनी अन्तरात्मा की सच्ची आवाज के बारे में कुछ भी सन्देह रह जाय, यदि आप स्वयं मन में निर्णय न कर पायें तो मेरी न मानें, किसी दूसरे की भी न मानें, केवल मेरे पूज्य भाई साहब पण्डित जी की ही मानें। मालवीय जी से बड़े धर्मात्मा मैंने नहीं देखे। जीवित भारतीयों में मुझे उनसे ज्यादा भारत की सेवा करनेवाला भी कोई दिखाई नही देता। पण्डित जी में और मुझमें, दोनों में कैसा सम्बन्ध है? मैं तो दक्षिण अफ़ीका से आया, तभी से उनका पुजारी हूँ। मैं अपने दुःख अनेक बार उनके आगे रोये है और उनसे आश्वासन प्राप्त किया है। वह तो मेरे भाई के समान है।

मेरा ऐसा सम्बन्ध है। इसलिए मैं तो यह कह सकता हूँ कि आप मेरे कहे अनुसार तभी करें जब आपके दिल से यह आवाज निकले कि जो गांधी कहता है वही सत्य बात है। परन्तु यदि आपको ऐसा लगे कि दोनों हमारे नेता हैं, दोनों में से एक को चुनना है तो आप पण्डित जी का ही कहना मानें। जरा भी अन्देशा हो तो आप मेरी बात न मानें, यदि मानेंगे तो उससे आपका अहित ही होगा। पण्डित जी विश्वविद्यालय के कुलपिता हैं; पण्डित जी ने उसकी स्थापना की है, वह उसकी आत्मा है और उनका आदर करना हमारा धर्म है। इस मामले में मैं मानता हूँ कि पण्डित जी भूल रहे है। इस बारे में आपको लेशमात्र भी शंका हो तो आप लोग मेरी बात न मानें। मेरे पास एक सज्जन आये। उन्होंने कहा कि आप काशी जायेंगे, परन्तु इस समय पण्डित जी की तन्दुरुस्ती नाजुक है। आपके वहाँ जाने से उन्हे सख्त आघात पहुँचेगा, और पण्डित जी को गँवा बैठने की नौबत आ सकती है। कही आपका काशी पहुँचना पण्डित जी की मृत्यु का कारण न बन जाय। पण्डित जी की मृत्यु का कारण मैं कैसे बन सकता हूँ? पण्डित जी की आत्मा तो मर नही सकती परन्तु उन सज्जन को मेरे काशी जाने में पण्डित जी की मृत्यु दिखाई दी। उन्होने कहा, लड़के आपका कहना मानेंगे, वे विश्वविद्यालय से निकल जायेंगे; पण्डित जी को अपना जीवन-कार्य नष्ट हुआ दिखाई देगा और इससे उनका शरीरान्त हो जायगा। मुझे इस पर कुछ हँसी आई। मुझे ऐसा लगा कि ये सज्जन पण्डित जी को नही जानते। पण्डित जी कोई कायर नही है कि ऐसी बात से प्राण छोड़ दें।

यह सही है कि विश्वविद्यालय पण्डित जी का प्राण है। परन्तु मेरी समझ में उससे भी अधिक भारत उनका प्राण है। पण्डित जी आशावादी ठहरे। पण्डित जी का दृढ़ विश्वास है कि कोई भी भारत का बुरा करने में समर्थ नही है। भारत की बागडोर किसी के हाथ में नही है, वह ईश्वर के हाथ में है और उसका

कल्याण करनेवाला ईश्वर विद्यमान है। फिर भी मैंने पण्डित जी को तार[1] दिया और पण्डित जी ने मीठे शब्दो मे जवाव दिया कि मैं काशी पहुँचू।

पण्डित जी का खयाल है कि आप लोगो मे से कुछ विना विचारे कदम उठा रहे हैं और विना विचारे आप कुछ भी करेंगे तो स्थान-भ्रष्ट हो जायेंगे। परन्तु यदि आप लोगो को ऐसा लगे कि इस सस्था मे पढना पाप है तो आप इसे तुरन्त छोड दें, पण्डित जी आपको आशीर्वाद देंगे। परन्तु यदि आपकी आत्मा प्रज्वलित नही है तो आप मेरे वजाय पण्डित जी की ही सुनें।

हमारा काम तभी अन्तरात्मा से प्रेरित हो सकता है जव अपने आपमे वह स्वच्छ हो, उसका हेतु स्वच्छ हो और उसका परिणाम भी स्वच्छ हो, परन्तु उसपर एक और भी वन्धन शास्त्रों ने लगा रक्खा है। जो सयमी है, जो अहिसा, सत्य एव अपरिग्रह का पालन करनेवाला है, वही कह सकता है कि मुझे अन्तरात्मा का आदेश हुआ है। यदि आप ब्रह्मचारी नही हैं, आपके हृदय मे दया नही है, मर्यादा नही है, सत्य नही है तो आप अपने किसी काम को अन्तरात्मा से प्रेरित नही कह सकते। परन्तु यदि आपका हृदय वैसा है जैसा मैंने वर्णित किया है, यदि आपने पश्चिम के ढग का त्याग कर दिया है, आपके स्वच्छ हृदय-मन्दिर मे प्रभु का निवास है तो आप अपने माँ-वाप का भी सविनय अनादर कर सकते हैं। उस स्थिति मे आप स्वतन्त्र हैं और इसलिए आप कदम उठा सकते हैं। मुझे मालूम है कि पश्चिम मे स्वेच्छाचार की हवा वह रही है। परन्तु भारतीय विद्यार्थियो को मैं स्वच्छन्द नही वनाना चाहता। यदि इस पवित्र काशी क्षेत्र मे, मैं आपको स्वेच्छाचारी बनाना चाहूँ तो मैं अपने कार्य के योग्य नही।

मैं लडको से ऐसा क्यो कह रहा हूँ कि पाठशाला छोडना धर्म है? क्या मैं उनका विद्यार्थी-जीवन नष्ट करना चाहता हूँ? नही। मैं स्वय अभी तक विद्यार्थी जीवन विता रहा हूँ, विद्यार्थी ही हूँ। परन्तु मैं कहना चाहता हूँ कि जिसे स्वतन्त्रता की शिक्षा नही मिली—निश्चय ही वह मिल कृत "लिवर्टी" के अध्ययन से नही मिलती—वह स्वतन्त्र नही कहलाता। आपकी तालीम अरविस्तान के लडको से भी हीन है। उस ओर से हमारे देश में आये हुए एक व्यक्ति ने मुझे वताया था कि वहाँ के विद्यार्थियो को जो शिक्षा मिलती है, हमारे विद्यार्थियो को शिक्षा उसकी चौथाई भी नही। अरविस्तान का एक भी विद्यार्थी इस हुकूमत को स्वीकार नही कर सकता। वहाँ उनके लिए डाक, तार और ट्राम आदि जारी किये गये, हवाई सेवा जारी करने का लालच दिया गया और यह भी कहा गया कि वे

१. देखिए "तार : मदनमोहन मालवीय को" २०।११।१९२० के आस-पास।

उसके देश की उस जलती हुई रेत को भी ठण्डा कर देंगे जिस पर घड़ी-भर में खिचड़ी पक जाती है। तालीम देने के लिए बड़ी शिक्षा-संस्थाएँ खोलने का प्रलोभन भी उन्हें दिया गया। परन्तु वहाँ के लड़के कहते है कि हमें यह सब नहीं चाहिए। वहाँ के छात्रों को अच्छी धार्मिक शिक्षा मिलती है। आपको भी वैसी धार्मिक शिक्षा की जरूरत है। आप जिन परिस्थितियों में पढ़ते है, उनमें ऐसी ही शिक्षा मिलती है कि मन में मनुष्य का डर रखना पड़े। परन्तु उसे सच्चा एम० ए० कहूँगा जिसने मनुष्य का डर छोड़कर ईश्वर का डर रखना सीखा हो। आपमें इतना बल आ जाय कि आजीविका के लिए आपको किसी के सामने हाथ न फैलाना पड़े, तब आपकी शिक्षा ठीक कहलायेगी। जब मन में यह विचार घर कर ले कि जबतक मेरे हाथ-पैर साबित है, तबतक आजीविका प्राप्त करने के लिए भले कही भी सिर नही झुकाना है, आपकी शिक्षा तभी ठीक कहलायेगी।

अंग्रेज इतिहासकार कहते है कि भारत में तीन करोड़ लोगों को दिन में दो बार पेट-भर खाने को नहीं मिलता। बिहार में अधिकांश लोग सत्तू नामक निःसत्व खुराक खाकर रहते हैं। जब भुनी हुई मक्की का यह आटा, पानी और लाल मिर्चो के साथ, गले उतारते हुए मैंने लोगों को देखा तो मेरी आँखों से आग बरसने लगी। आपको वैसा करना पड़े तो आप उस पर कितने दिन गुजार सकते है? रामचन्द्र जी की भूमि में—जनक राजा की पुण्यभूमि में—लोगों को आज घी नही मिलता, दूध तक नही मिलता। ऐसी स्थिति में आप निश्चिन्त होकर कैसे बैठ सकते है? हमें यदि ऐसी शिक्षा नही मिलती कि हमारा प्रत्येक मनुष्य मैक्स्विनी बन जाय, तो उस शिक्षा का कोई अर्थ नही है। यदि हमें आजादी से खाने को न मिले तो हममें भूखों मरकर आजाद होने की ताकत आनी चाहिए, मै यह चाहता हूँ। अरब और मेसोपोटामिया के लड़कों को ऐसी तालीम प्राप्त है। वे अंग्रेजों से दो-दो हाथ करने का हौसला रखते है। वहाँ तो शस्त्र-बल मौजूद है, हमारे यहाँ वह नही है। परन्तु भारत की सत्यवृत्ति में जबरदस्त आत्मिक शक्ति विद्यमान है, इसीलिए हम अत्याचार को हटा सकते है। असन्तों का त्याग करने का तुलसीदास जी का उपदेश है। मैं कहता हूँ कि यह हुकूमत राक्षसी है, इसलिए उसका त्याग धर्म है। त्याग करने का अर्थ हिजरत करना ही होता है। परन्तु मै वैसा करने को नही कहता। देश छोड़कर हम कहाँ जायें? हिन्द महासागर अथवा बंगाल की खाड़ी मे समा जाने के सिवा हम और कहाँ जा सकते है? परन्तु तुलसीदास जी ने कहा है कि असन्तों का सर्वथा त्याग न कर सको, तो दूर अवश्य रहो। रावण के पकवानो और दासियों का त्याग करके अशोक-वाटिका मे केवल फल-फूल पर निर्वाह करनेवाली सीता जी जैसी शान्तिमय

असहयोग करने की ताकत आप मे न आये, तो भारत नष्ट हो जायगा। वह गुलामी मे सडता ही रहेगा, इस बारे मे मुझे जरा भी सन्देह नही।

यह हुकूमत राक्षसी क्यो है, इसके कारणो मे मैं जाना नही चाहता। परन्तु पजाव मे अत्याचार करनेवाली, छ-छ सात-सात वर्ष के बालको को धूप मे चलानेवाली, स्त्रियो की लाज लूटनेवाली—और जिन कर्मचारियो ने ये अत्याचार उनके लिए किये उनके बारे मे यह कहनेवाली कि उन्होंने कोई अपराध नही किया, उन्होंने तो हुकूमत को बचाया—ऐसी हुकूमत के अधीन पाठशालाओ मे पढना मेरे खयाल मे सबसे बडा अधर्म है। मेरे बुजुर्ग पण्डित जी इसमे धर्म देख पाते है। शास्त्र मुझे ऐसा नही सिखाते। मैं रावण के हाथो, "गीता", "कुरान", या "बाइबिल" नही पढ सकता। जिसने गीता का धार्मिक दृष्टि से अध्ययन किया हो मैं तो उससे "गीता" सीखूँगा। शराब पीनेवाले से कैसे सीख सकता हूँ? मेरी आत्मा कितनी जल रही है, उसका मैं आपको अन्दाज नही करा सकता। इस सल्तनत की मैंने तीस वर्ष सेवा की। मुझे उसका पश्चात्ताप नही है। सिर्फ इतना ही कहना चाहता हूँ कि अब मैं उसकी सेवा नही कर सकता, क्योकि मैंने पजाव के अत्याचार देखे हैं। साथ ही मुझे यह भी दीख रहा है कि यह हुकूमत कितने ही वर्षों से भारत का ऐसा सर्वनाश कर रही है कि उसके मुकाबले मे पजाव के अत्याचार कुछ भी नही। जब मैं आपकी उम्र का था, तब मैंने दादाभाई नौरोजी[1] का 'पावर्टी ऐण्ड अनब्रिटिश रूल इन इण्डिया' पढा था। उसमे उत्तरोत्तर बढनेवाला देश का जो शोषण साबित किया गया था, क्या वह आज भी कुछ कम हो सका है? सैनिक खर्च बढता ही गया है या नही? पेंशनो में देश के बाहर बह कर जानेवाली राशि भी बढी है या नही? विदेशी माल का आयात अधिकाधिक बढ रहा है या नही? यदि इन प्रश्नो का उत्तर "हाँ" हो तो मैं कहता हूँ कि लार्ड सिन्हा[2] जैसे व्यक्ति गवर्नर भले ही बन जायँ—यहाँ तक कि पण्डित जी जैसे व्यक्तियो को वाइसराय ही क्यो न बना दिया जाय, मैं उन्हें सलाम करने हर्गिज नही जाऊँगा। असली स्थिति यह है कि राजप्रथा के मातहत हमारी गुलामी

---

१. दादाभाई नौरोजी (१८२५-१९१७), प्रसिद्ध राजनीतिज्ञ तथा देशभक्त, 'भारत के पितामह' नाम से प्रसिद्ध। १८८६, १८९३ और १९०६ के कांग्रेस अधिवेशनो के अध्यक्ष।

२. सत्येन्द्र प्रसन्न सिन्हा (१८६४-१९२८), वाइसराय की परिषद के कानून-सदस्य। प्रथम भारतीय गवर्नर। बम्बई में १९१५ मे हुए भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस अधिवेशन के अध्यक्ष।

बढती ही जा रही है और गुलाम जब गुलामी की जंजीर की चमक देखकर मुग्ध हो जाय, तब उसकी गुलामी सम्पूर्ण हुई कहलाती है। मै कहता हूँ कि पैंतीस वर्ष पहले जो गुलामी थी, उससे हममें अब अधिक गुलामी है। हम अधिक हताश होते जा रहे है। हमारी कायरता बढ़ती जा रही है। इसलिए मै तात्विक दृष्टि से कहूँ तो मुझे यह कहना ही पड़ेगा कि हममें गुलामी की मात्रा बढ़ती जा रही है।

बाबू भगवानदास[1] के विद्वत्तापूर्ण व्याख्यान[2] का एक भाग मुझे सदा याद आता रहता है। उन्होंने कहा कि यदि हमारे राज्यकर्ता वणिक बनकर राज्य करें, और साधारण चीजों का ही नही, भाँग-गाँजे-जैसे नशे के साधनों का व्यापार करें, तब वे अधम बन जाते है और हमें उनका त्याग कर देना चाहिए। इस हुकूमत ने हिन्दुस्तान को नापाक कर दिया है। आबकारी विभाग बढ़ता ही जा रहा है। गोखले जी जैसे लोगों ने पाठशालाएँ बढ़ाने की आवाज उठाई थी, परन्तु स्थिति यह है कि सन् १८५७ में पंजाब में ३०,००० पाठशालाएँ थीं, और आज वहाँ ५,००० है। सरकार ने इतनी पाठशालाएँ खत्म कर दी। सरकार में योजना-शक्ति है। हममें भी है। परन्तु हमें उसने भ्रम में रक्खा है। वह हमें स्वराज्य का कौन-सा पाठ पढ़ायेगी। धारासभा में जाकर हम स्वराज्य का क्या सबक सीखेगे? स्वराज्य-शक्ति सीखना चाहते हो तो अरबों के पास जाओ, बोअरों के पास जाओ। मैं तो कहता हूँ कि हममें आज भी स्वराज्य-शक्ति है। परन्तु हम सिंह होते हुए भी अपने को बकरी मान बैठे है। जब यह भावना उत्पन्न हो जाय कि जिनमें आत्मा है, उन्हें कौन डरा सकता है, तब सच्ची शिक्षा मिली समझिए। ऐसी तालीम पा लेने के बाद ही आप दूसरी साधारण शिक्षा प्राप्त कर सकते है। आज तो आप ऐसी शिक्षा पा रहे है जिससे बेड़ियाँ और अधिक मजबूत हो जायँ। डिग्रियों पर मुग्ध होने के कारण हम आज कह रहे हैं कि हमें चार्टर चाहिए। हम इन पेड़ों के नीचे क्यों नही पढ़ते? हमें बड़ी-बड़ी शानदार इमारतें क्यों चाहिए? देश में जहाँ कितने ही मनुष्यों को पूरा खाने को नही मिलता, जहाँ की स्त्रियाँ बदलने को दूसरे कपड़े न होने के कारण कई दिनों तक स्नान नही कर पाती, वहाँ आप लोगों को पढ़ने-लिखने के लिए बड़े-बड़े महल चाहिए? ऐसा आग्रह हो तो

---

१. (१८६९-१९५९) सुप्रसिद्ध दार्शनिक और लेखक; काशी की प्रसिद्ध राष्ट्रीय शिक्षा-संस्था काशी विद्यापीठ के प्रथम कुलपति; उत्तर प्रदेश के एक प्रमुख नेता, भारत-रत्न की उपाधि से सम्मानित।

२. मुरादाबाद में ९, १० और ११ अक्तूबर को हुए राजनीतिक सम्मेलन में अध्यक्ष पद से दिया गया भाषण।

आप असहयोग को भूल जायँ। देश के लिए दर्द हो, मेरे अन्दर जो आग जल रही है, वही आपके भीतर जल रही हो तो मकान-वकान की वात भूल जाइए और जैसा मैं कहता हूँ वैसा असहयोग कीजिए। यदि आप ऐसा करेंगे तो जो प्रतिज्ञा मैंने अन्यत्र[1] की है, इस पवित्र स्थान मे उसे फिर दुहराता हूँ कि हमे एक वर्ष मे स्वराज्य मिल जायगा।

मैं वार-वार कहता हूँ कि स्वराज्य तभी मिलेगा जव आप अपना धर्म पहचानेंगे। जयनाद करने से वह नही मिल सकता। मैं ये वातें क्यो कह रहा हूँ? मुझे धन-दौलत नही चाहिए, मान-सम्मान नही चाहिए, भारत का राज्य नही चाहिए, मुझे तो भारत की आजादी चाहिए। लोग मुझसे कहते हैं कि आप दूसरो से मिल जाइए। परन्तु मैं मिल नही सकता, अपने हृदय के मत के विरुद्ध मे किसी से मिलकर एक नही हो सकता, अन्तरात्मा की आवाज को धोखा देकर एक नहीं हो सकता, मैं सिद्धान्त की वात को छोडकर नही मिलना चाहता। और सिद्धान्त की वात यह है कि स्वराज्य लेना हो, तो प्रत्येक आदमी को आजाद होना चाहिए। जितना स्पष्ट आप सामने के पेडो को देख रहे हैं, उतना ही स्पष्ट जव आपकी अन्तरात्मा प्रत्यक्ष यह अनुभव करे कि यह सल्तनत राक्षसी है, इसकी दी हुई शिक्षा पाप है, लेफ्टिनेन्ट गवर्नर कितना ही कहे कि हमारा विश्वविद्यालय पर कोई नियन्त्रण नही है, फिर भी वे प्रत्यक्ष रूप से अपना असर उस पर डाल सकते हैं। यदि आपको यह प्रतीत हो जाय कि इस हुकूमत से शिक्षा प्राप्त करना देश के प्रति वेवफाई है तो आप एक क्षण भी इस विद्यालय मे न रहें, इसके पास भी न फटकें।

मैं कहता हूँ कि आप इस धधकती आग से दूर हो जायें, अन्य सारी जोखिम उठा लीजिए। दूसरे प्रश्न मुझसे न पूछें। यह न पूछें कि विद्यार्थी फिर क्या करें। यह न पूछें कि प्रोफेसर नही हैं, मकान नही है, पढेंगे कहाँ। ताकत हो तो अपने-अपने घर चले जाओ। घर ही आपका विश्वविद्यालय है। विनयी वनो, सत्यशील वनो तो तुम्हारा घर ही विश्वविद्यालय है। परन्तु इन प्रासादो से (विद्यालय के मकानों की ओर इशारा करके) उसकी तुलना करना चाहोगे तो आपका पतन हो जायगा। इन प्रासादो के प्रति यदि आपकी आसक्ति है तो आप भ्रष्ट हो चुके हैं। इन महलो और घरो मे क्या साम्य है? विलायत में (घरों और विद्यालयो मे) तो कुछ-कुछ साम्य होता है, परन्तु यहाँ वह इतना भी नही) यहाँ तो ये (भवन) निरे लूट के पैसो से वने हैं। जो स्वतन्त्र नही है वह तो

---

१. सितम्बर १९२० मे कलकत्ता के विशेष कांग्रेस अधिवेशन मे।

ईश्वर का नाम भी सुखपूर्वक नहीं ले सकता। आप आज ही अपनी शारीरिक, मानसिक और आत्मिक स्वतन्त्रता प्राप्त कर सकते हैं। यदि इन विद्यालय से निकल कर कोई रामायण का नाम जपे, राम-नाम भजे तो वह भी बहुत बड़ी शिक्षा है, ऐसा विश्वास जिसे हो जाय, वह उपर्युक्त तीनों प्रकार की स्वतन्त्रता प्राप्त कर चुका समझिए। भारत के विद्यार्थियों में मैं ऐसी रूह फूंक सकूं, तो मैं उनमें से स्वराज्य की सेना खड़ी कर सकता हूँ। मैं कहता हूँ कि इस सल्तनत की हवा जबतक इन पाठशालाओं पर प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से असर कर रही है, तबतक इन पाठशालाओं को छोड़े बिना कोई चारा ही नहीं है। परन्तु यदि आपमें आत्म-विश्वास न हो तो आप जहाँ हैं, वहीं बने रहें।

यहाँ दो सौ विद्यार्थियों ने विद्यालय छोड़ने की प्रतिज्ञा ली है। इसने मुझे दुःख हुआ। दुःख प्रतिज्ञा लेने से नहीं हुआ। दुःख इस बात से हुआ कि कहीं बाद में इन विद्यार्थियों में अविश्वास पैदा न हो जाय। आप लोग यह मानते हैं कि गांधी कोई जादूगर है, वह पलक मारते ही विद्यालय भी बना देगा। यह आपकी भूल है। तब तो मैं आपसे कहता हूँ कि अनारम्भ प्रथम बुद्धि-लक्षण है। आप लोग इतना सोचे-विचारे बिना विद्यालय छोड़ेंगे तो मैं पाप का भागी बनूंगा। मैं तो कहता हूँ कि आप विद्यालय छोड़ कर घर बैठें, इस आग से बचें। आपमें आत्म-विश्वास होगा, तो आप आज ही विद्यालय भी बना सकेंगे। परन्तु जैसा पण्डित जवाहरलाल ने और अलीगढ़ में मुहम्मद अली ने कहा है, बिना किसी शर्त के विद्यालय छोड़ें। सात हजार बार गरज हो, तो छोड़ें, नहीं तो वापस चले जायँ। और छोड़कर वापस जाना हो तो, छोड़ें ही नहीं। यदि हम अपने धर्म का पालन न करे, तो हमारा देश अपना नहीं बनता। आपकी प्राचीन संस्कृति और पवित्रता का नाम लेकर मैं आपसे जो कह रहा हूँ, उसका खयाल करें। मैं बार-बार कहता हूँ जिसे ज़रा भी अन्देशा हो तो मालवीयजी की ही बात मानें। उन्होंने यह विश्वविद्यालय बनाने में अपनी उम्र खपा दी है। पर जैसे सामने की वस्तु साफ दीखती है, वैसे ही अन्तरात्मा में आपको यह स्पष्ट प्रतीत हो कि यहाँ रहना पाप है तो आप विद्यालय छोड़ दें। 'प्राप्ते तु षोडशे वर्षे पुत्रं मित्रवदाचरेत्" हमारा शास्त्र वचन है। आप सोलह वर्ष के ऊपर के हो गये हैं, इसलिए जबमैंने आज आपसे कहा है वह कहने का मुझे अधिकार है। यही तालीम मैंने अपने पुत्रों को दी है और मैंने उनका कुछ नहीं बिगाड़ा। अन्त में आपसे कहता हूँ कि काशी विश्वनाथ आपको निष्कलुष बनायें, धैर्य दें, तपश्चर्या दें और वह सभी कुछ दें जिसकी आपको आवश्यकता है।

—हिन्दी। काशी, २६।११।१९२०। गुजराती से। न० जी०, ५।१२।१९२०]।

- एकान्तिक सत्य तो मौन ही है।
- मालवीयजी से बड़े धर्मात्मा मैंने नहीं देखे।
- यह सही है कि विश्वविद्यालय पण्डित जी का प्राण है। किन्तु मेरी समझ में उससे भी अधिक भारत उनका प्राण है।
- उसे सच्चा एम० ए० कहूँगा जिसने मनुष्य का डर छोड़ कर ईश्वर का डर रखना सीखा हो।
- भारत की सत्यवृत्ति में जबरदस्त आत्मिक शक्ति विद्यमान है।
- मैं रावण के हाथो गीता, कुरान या बाइबिल नहीं पढ़ सकता।
- हम में आज भी स्वराज्य-शक्ति है किन्तु हम सिंह होते हुए भी अपने को बकरी मान बैठे हैं।
- घर ही आपका विश्वविद्यालय है। विनयी बनो, सत्यशील बनो तो तुम्हारा घर ही विश्वविद्यालय है।

३५. भाषण : काशी की सार्वजनिक सभा में[1]

उपाधि, अदालत, स्कूल और कौंसिलो का त्याग

मैं अशक्त होने के कारण खडा होकर नही बोल सकता, इसलिए आप लोग क्षमा करें। कुछ दिन हुए, मौलाना अबुल कलाम आजाद[2] और हम यहा आये थे। उस समय हमने आपसे कुछ कहा था। उसी काम के लिए हम आज फिर आये हैं। हम इस वक्त खासतौर से विद्यार्थियो से कुछ कहना चाहते थे पर आप लोगो की मुहब्बत इतनी अधिक थी कि यहा आना ही पडा। आप लोगो से हमे यह कहना है कि हमारी सल्तनत राक्षसी सल्तनत है। हमारा फर्ज है कि या तो उसे दुरुस्त करे या मिटा दें। हमारी हालत बडी खराब है। आजतक हम लोगो ने सिर्फ बातो से काम लिया है। अब हरएक स्त्री-पुरुष का फर्ज है कि वह काम

---

१. यह सभा बाबू भगवानदास की अध्यक्षता में टाउन हाल के मैदान मे हुई थी। उपस्थित लोगों में पं० मोतीलाल नेहरू, पं० जवाहरलाल नेहरू, मौलाना अबुल-कलाम आजाद और देशबन्धु चित्तरंजन दास भी थे।

२. १८८९-१९५८, कांग्रेसी नेता तथा कुरान के प्रसिद्ध व्याख्याकार, भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस के दो बार निर्वाचित अध्यक्ष, भारत-सरकार के शिक्षा-मन्त्री।

करे। आप लोग क्या कर सकते है? अगर आप लोग इस सल्तनत को राक्षसी सल्तनत नही समझते तो हम उसका कोई सबूत नहीं देंगे। हम इसे बहुत बुरी मानते हैं और इसे मिटा डालना या सुधारना जरूरी समझते है। अगर इसने पश्चात्ताप नही किया, अगर पंजाब के प्रति न्याय और खिलाफत के प्रति इन्साफ नही किया तो इसका साथ नही दिया जा सकता। इसको हम लोग दुरुस्त कैसे कर सकते हैं? हमारी कांग्रेस, मुस्लिम लीग, सिख लीग सबने इसको दुरुस्त करने का तरीका बतला दिया है। यह तरीका अहिंसात्मक असहयोग का या बाअमन तर्के-मवालात का है, अर्थात् न सरकार से मदद लें, न सरकार को मदद दें। इसके साथ असहयोग किस तरह करें? पहले हम खिताबों को छोड़ दें। हमारे लिए खिताब हराम है। फिर हमें अदालतें छोड़नी चाहिए। इन्साफ करना हमारे ही हाथ में रहना चाहिए। ये अदालतें सरकार की जड़ मजबूत करती है। वकीलों को वकालत छोड़ देनी चाहिए। अगर उनसे हो सके तो वकालत छोड़ने के बाद देश की सेवा करें। अगर सेवा न हो सके तो वकालत छोड़ना ही काफी सेवा है। उनको दूसरा धन्धा करना चाहिए। मां-बाप को चाहिए कि मदरसों और विश्व-विद्यालयों से अपने सब लड़कों को हटा लें। जो लड़के १६ वर्ष के हो गये हों उनको वे मित्र की तरह सलाह देकर हटा लें। उनसे कहना चाहिए कि तुम वहां न पढ़ो, तुम्हें ऐसी जगह तालीम लेनी चाहिए जहां तुम आजाद रह सको। जहां सरकार का झण्डा हो, वहां तालीम नही लनी चाहिए।

हिन्दुस्तान की आजादी के सिपाही बनें

कांग्रेस ने यह भी कहा है कि कौंसिलों में नही जाना चाहिए। ३० तारीख को कौंसिलों का चुनाव है। यह इम्तहान का दिन है। पहले हमें उम्मीदवारों से कहना चाहिए कि बैठ जाइए। अगर वे न मानें तो वोटर का फर्ज है कि वह उस रोज घर में बैठा रहे और वोट न दे। २९ की रात तक उम्मीदवारों को समझाना चाहिए। पैर छू-छू कर उनसे कहना चाहिए कि आप कौंसिल के लिए खड़े न हों। अगर वे आपकी बातें न माने और कौंसिल में जाना चाहें तो आपका फर्ज है कि उन्हें कोई मदद न दें और उनसे काम न लें। फिर, सिपाहीगिरी करना हराम है। आप लोग भर्ती के सिपाही न हों, आप लोगों को हिन्दुस्तान की आजादी का सिपाही होना चाहिए।

स्वदेशी और चर्खा

दूसरा मसला स्वदेशी का है। जो कपड़ा यहां तैयार हो उसी को इस्तेमाल

करना चाहिए। हमारी माताओं को अपने घरो मे चर्खा दाखिल करना चाहिए। जुलाहो से बुनवा कर कपडे पहनना चाहिए। मैं हिन्दुस्तान के सभी भाइयो और बहनों से कहता हू कि स्वदेशी तुम्हारा फर्ज है। खद्दर पहनो, यही करना तर्क-मवालात है। तलवार मत खीचो। उसको मियान मे रक्खो। तलवार से हमारा ही गला कटेगा। हिन्दू और मुसलमानो मे जुवानी नही, दिली एकता होनी चाहिए। अगर ऐसा हो तो हम एक साल मे स्वराज्य की स्थापना कर सकते हैं। खिलाफत के मसले को और पजाब के मसले को तय करना आपके हाथ मे है। आप इतने लोग यहा जमा हैं, मैं अदब से पूछता हू कि आपने क्या किया। क्या आपने लड़को को स्कूल-कालेजो से हटा लिया? अगर आपका लडका बडा है तो आपने उसे उसका धर्म बता दिया? इस काम मे उसे आपने आशीर्वाद दे दिया? अगर आपने ऐसा नहीं किया है तो आप यहा क्यो जमा हुए हैं? लडको को चाहिए कि मदरसो से हट जायँ, बडो को समझायें। क्या आपने निश्चय कर लिया है कि वोट न देंगे? क्या आपने स्वदेशी का व्रत लिया है? सबके साथ इन बातो का सम्बन्ध है। सरकार की फौज मे भरती बन्द होनी चाहिए। हमको अपने मुकदमे लेकर इन्साफ के लिए अपने बुजुर्गों के पास जाना चाहिए। इससे सरकार की 'प्रेस्टीज' (इज्जत-रुतबा) जाती रहेगी। उसी समय सरकार को पता लग जायगा कि अब उसके एक लाख गोरे ३० करोड पर हुकूमत नही कर सकते। अभी तक हमे आपस मे लडा-लडा कर, हमे फुसला कर, मदद देकर, मदद लेकर सरकार राज्य कर रही है। "यथा राजा तथा प्रजा" की पुरानी कहावत है। इससे ज्यादा सत्य "यथा प्रजा तथा राजा" है। अगर हम साफ दिल से काम करेंगे, और पवित्र भाव से ईश्वर के चरणो मे अपने को अर्पित करेंगे, अगर इस प्रकार का सच्चा बलिदान देंगे तो हमे स्वराज्य फौरन मिल जायगा। यही स्वराज्य रामराज्य है।

—हिन्दी। काशी, २६।११।१९२० । आज, २७।११।१९२०]

३६. भाषण : विद्यार्थियों की सभा, काशी में[1]

मैं यहा जो दृश्य देख रहा हू उससे मुझे अलीगढ़ का स्मरण हो आता है।

---

१. इसके एक दिन पहले गाधी जी ने विश्वविद्यालय के अहाते के बाहर विद्यार्थियों की एक सभा मे भाषण दिया था (देखिए "भाषण : विद्यार्थियों की

विद्यार्थियों से जो-कुछ मुझे कहना था सो मैंने अलीगढ़ में कह दिया। मैं अपनी जिम्मेदारी जानता था। मैं जानता था कि अलीगढ़ का विद्यालय यहां से प्राचीन है। मुझे यह भी मालूम था कि मुसलमान विद्यार्थियों को अलीगढ़ से कितनी मुहब्वत है। मैं यह भी जानता था कि एक महान मुसलमान ने उसे स्थापित किया है।[1] तब भी निडर होकर जो-कुछ मुझे कहना था, मैंने कहा। मेरा दिल रो रहा था कि मैं ऐसा क्यों कर रहा हूं। जब मै आप लोगों को देखता हूं, बड़ी-बड़ी इमारतें देखता हूं तो मेरा हृदय रोता है। लेकिन आज ज्यादा रो रहा हूं, क्योंकि विश्वविद्यालय के प्राण मेरे पूजनीय बड़े भाई मालवीय जी है। मैं उनको छोड़कर कोई काम नहीं करता। जबसे मैं हिन्दुस्तान वापस आया तबसे यही खयाल था कि उन्ही के साथ अपना जीवन व्यतीत करूंगा। ऐसा मेरा सम्बन्ध अलीगढ़ से नही था। अलीगढ़ का प्राण कौन है सो मैं नही जानता। और इस विश्वविद्यालय के आँगन में बैठा हुआ मैं इस भय से काँप रहा हूं कि कही मेरे मुंह से कोई ऐसी बात न निकल जाये जिससे मेरे आदरणीय भाई को कोई दुःख हो। किन्तु मेरा धर्म मुझे सिखाता है कि जिस बात को मैं धर्म समझता हूं उसके लिए प्यारी-से-प्यारी वस्तु को भी त्याग दूं। मैं आज ऐसा ही कर रहा हूं। मैं आपसे कहना चाहता हूं कि मेरे भाई और मुझमें बड़ा मतभेद है, पर इसके कारण मेरा पूज्यभाव थोड़ा भी कम नहीं है। आपसे भी मेरी प्रार्थना है कि यदि आप मेरी ही राय के हों तो भी उनके प्रति अपने पूज्यभाव में कदापि कमी न करें।

(किसी भी परिस्थिति में) विद्यादान लेना यदि आप पाप न समझें, अधर्म न मानें तो आप कभी विद्यालयों को न छोड़ें। मैं तो अधर्मी के हाथ से स्वर्ण-दान भी नही ले सकता। इसी तरह जहां उसकी ध्वजा फहराती है, वहां विद्या लेना दोष समझता हूं। वहां पर "गीता" पढ़ना, कला-कौशल तक सीखना भी मैं पाप समझता हूं। सच तो यह है कि मैं इस सल्तनत में ही नही रहना चाहता। अगर एकदम त्याग सकता तो त्याग देता। लेकिन तब मैं यहां कैसे आता और यह पैगाम भी आपको कैसे दे पाता। इसी कारण इस असह्य स्थिति में भी जी रहा हूं। मैं इसको रावण-राज्य समझता हूं। तुलसीदास जी ने ऐसे राज्य में रहना पाप बतलाया है। मैं निस्संकोच यह कह सकता हूं कि मैं २४ घण्टे एक ही

सभा, बनारस में २६।११।१९२०), लेकिन मालवीय जी के आग्रह पर उन्होंने युनिवर्सिटी हाल में विद्यार्थियों की सभा में फिर भाषण दिया। अध्यक्षता स्वयं मालवीय जी ने की थी।

१. सर सैयद अहमद इसके संस्थापक थे।

जप करता हू कि इसे कैसे हटा सकूँ या दुरुस्त कर सकू। इसी से मैं यहा हू। विद्यार्थियो से मैं कहता हू कि इस सल्तनत से सहकार छोडना ही हमारा परम धर्म है। जितना आपसे सम्भव है, उतना कीजिए। आपके लिए सवसे वडी चीज यही है कि यहा जो विद्यादान आपको मिलता है, उसका त्याग कर दें। मैं सर्व-सामान्य सहकार के वारे मे नही कहता। विद्यार्थी जो विशेष सहकार देते हैं, वही देना वन्द करने को कहता हू। यदि आपका इस सल्तनत के वारे मे वही खयाल हो जो मेरा है तो अपना धर्म समझकर इसे छोड दीजिए। इसमे कोई शर्त की वात नही है कि फिर विद्या किस प्रकार मिल सकेगी। मैं तो आपको धर्म वताता हू। सवसे यही कहता हू कि दूसरे स्थान पर चाहे विद्या मिलने का प्रवन्ध हो चाहे न हो, इसे आप छोड़ दें। आप अगर चाहें तो इसी किस्म की विद्या ले सकते हैं, लेकिन सरकार की छाया त्याग दें। मैं यह कहना चाहता हू कि यह आजीविका की वात नही है, मनुष्यत्व की वात है। मनुष्यत्व के वाद ही आजीविका की वात आ सकती है। स्वतन्त्रता धर्म है। धर्म के पीछे देह है, देह के लिए धर्म नही छोडा जा सकता, लेकिन धर्म के लिए देह छोडी जा सकती है। हमे आर्थिक, मानसिक, आत्मिक किसी प्रकार की स्वतन्त्रता नहीं है। आत्मिक नही, क्योकि मुसलमानो को धर्म के हुक्म पर चलने से रोका जा रहा है, फुसलाया जा रहा है कि इसमे (धर्म के हुक्म पर न चलने का) दोष नही है। धार्मिक खयालात रोके जाते हैं, अर्थात् आत्मिक स्वतन्त्रता भी नही है। यहा पर करोडो के पास न वस्त्र है, न अन्न। ऐसी अवस्था मे आर्थिक स्वतन्त्रता असम्भव है। ऐसी हालत मे जो-कुछ लाभ भी है उसे छोड देना चाहिए। कई वातो का हमे लालच दिया जाता है, फायदा दिखलाया जाता है। इस विश्वविद्यालय मे कई वातो की सुविधा है। इजीनियरी की तालीम मिलती है, और वातो की भी आसानी है। किन्तु हिन्दुस्तान के लाभ के लिए इसका वलिदान करना चाहिए। यदि थोडा-थोडा लाभ हम स्वीकार करते रहे तो यह राज्य चलता रहेगा।

हिन्दू धर्म असहयोग सिखलाता है। कुछ लोगो का खयाल है कि तलवार उठानी चाहिए, लेकिन सव लोगो ने देख लिया है कि फिलहाल हममे वैसी ताकत नही है। असहयोग ही एक मात्र उपाय है जिससे या तो स्वतन्त्रता मिल जायगी या सल्तनत की खराबिया हट जायेंगी। मुझे विश्वास है कि जो-कुछ मालवीय जी कर रहे हैं उसे अपना धर्म समझकर कर रहे हैं। मतभेद के कारण मेरा उनका परस्पर का स्नेह कम नही हो सकता। हमारी उनकी मैत्री कम नही हो सकती और मुझे आशा है कि उनके प्रति आप लोगो का पूज्य भाव भी कभी कम न होगा।

आप ऐसा न समझिएगा कि आपमें वुद्धि ज्यादा है और उनमें कम, या आपमें देश-भक्ति ज्यादा है, उनमें कम। सब आदमियों का एक ही विचार होना असम्भव है। यदि हिन्दुस्तान के प्रत्येक स्त्री-पुरुष का एक ही भाव हो जाय तो स्वतन्त्रता एक दिन में मिल सकती है। इतिहास से मालूम होता है कि स्वतन्त्रता बड़े कष्ट से मिलती है। यह समझना अनुचित होगा कि विना इस कष्ट को उठाये हमें स्वतन्त्रता मिल जायगी। मेरी प्रार्थना है कि आप अपनी सभ्यता और नम्रता न छोड़िएगा। यदि आपको मेरी वातें पसन्द हों तो ठीक है, किन्तु जो विद्यार्थी आपके साथ न हों उनसे घृणा या द्वेष न कीजिएगा, उन्हें न सताइएगा। अपना काम इस तरह से कीजिए कि जो शक लोगों के मन में हो, वह निकल जाय। विश्वविद्यालय छोड़ने के बाद आप धर्माचरण ज्यादा करें तो मालवीय जी का आशीर्वाद लेकर विश्वविद्यालय छोड़ें। जो इसे छोड़ने के बाद मुल्क की सेवा न करेंगे, जो स्वार्थी, व्यसनी हो जायँगे, उनके कारण मुझे बड़ा पाप होगा। उनको भी पाप होगा और मुझे भी पाप लगेगा। मेरी प्रार्थना है कि जो-कुछ आपको करना हो स्वयं सोचकर कीजिए। आपको यदि किसी दूसरे की सलाह ही माननी है, यदि आपका दिल कुछ साफ नही बतलाता तो आप पण्डित जी की ही सलाह मानिए; उनकी सलाह को प्रथम स्थान दीजिए। अगर आपका दिल स्वीकार करे तो आप अपना धर्म समझ कर असहयोग कर सकते हैं। न आप मेरी सलाह पर भरोसा कीजिए, न उनकी सलाह पर। मेरे भाई साहब आपको अवश्य आशीर्वाद देंगे, एक क्षण के लिए भी आपको न रोकेंगे। अब मै यह कहना चाहता हूं कि असहयोग में विद्यार्थियों-द्वारा यह त्याग मैंने क्यों रक्खा है। मेरा दृढ़ विश्वास है कि हिन्दुस्तान में जो सल्तनत चल रही है, वह जो अत्याचार कर रही है उसके कायम रहने का बडा भारी सबब यह है कि हमको उसकी तालीम के असर ने मुग्ध कर लिया है। इसके यहां दाखिल होने के पहले हम स्वाश्रयी थे; जैसे पराधीन आज हैं, वैसे नही थे। इस शिक्षा-प्रणाली से हम और भी पराधीन हो गये। लेकिन अभी मैं इस तालीम के ढंग की वात नही करता। मेरा इस वक्त यह कहना सही है कि ढंग में त्रुटियां है। यह तो मेरे भाई साहव भी मानते है कि ऐसी त्रुटियां हैं, जिन्हे निकाला जाना चाहिए। मैं (त्रुटियों के कारण) इन शिक्षण-संस्थाओं को छोड़ने को नही कहता। मैं अभी यह भी नही कहता कि क्या ढंग होना चाहिए। इसका सवव यह है कि जिस सल्तनत को हम राक्षसी समझते हैं, जिसने पंजाब में इतना अत्याचार किया, उसकी छाया में शिक्षा लेना मैं अधर्म समझता हूं। अगर ऐसा ही आपको भी निश्चय हो तो आप इसको छोड़ दीजिए। लेकिन अगर आप इस सल्तनत को राक्षसी न समझे जिसने पजाव पर इतना अत्याचार

किया, मुसलमानो को धोखा दिया, हिन्दुस्तान से दगा किया उससे'. विद्यार्थियो को भी कुर्वानी करनी चाहिए। और जो-कुछ मुझे कहना था कल कह चुका हू। मैं इस पवित्र स्थान मे अपने पूजनीय भाई के सामने सिर्फ यह कहना चाहता हू कि जो कोई इस शिक्षण को छोडना चाहता है, वह एक वडा भारी काम कर रहा है। इसी मे स्वतन्त्रता है। आप अपनी सभ्यता मत छोडिएगा, किसी से घृणा मत कीजिएगा। वाहर जाकर कष्ट वर्दाश्त कीजिए। मैं यह भी कहना चाहता हू कि मैं आपके लिए कोई प्रवन्ध नही कर सकता। अगर मैं यहाँ आपके साथ रह सकता तो प्रवन्ध कराना कोई मुश्किल नही था। लेकिन, मैं आपको कोई लालच नही देना चाहता। मैं सिर्फ इतना कह देना चाहता हू कि वाहर जाकर आप उद्धत न हो, स्वेच्छाचारी न वनें। सयम आपका धर्म है। सहिष्णुता न छोडिएगा। शान्त चित्त से सव काम कीजिएगा। माता-पिता से पूछिए। अगर आपका दिल पक्का हो गया है और वे नही मानते तो उनसे दलील कीजिए। अगर आप उनकी वात ठीक मानते हो तो उनकी वात स्वीकार कीजिए। अगर आप उनकी वात गलत मानते हो और अपनी आत्मा की वात सच मानते हो तो फिर उसे स्वीकार कीजिए। आप विनयपूर्वक उनकी वात को अस्वीकार कर सकते हैं। ऐसा हिन्दूधर्म कहता है। यह आपकी परीक्षा है। अपने विनय मे असहयोग को सुशोभित कीजिए, स्वेच्छाचारी न वनिए। अपनी प्रतिज्ञा को भग न कीजिए। दो वातें याद रखिएगा, एक तो असहयोग मे आपकी विनय की शिक्षा निहित है। दूसरी वात यह कि हमे आत्म-वलिदान की आवश्यकता है। गिरी हुई हालत मे हम लोग नामर्द वन गये हैं, पराधीन वन गये हैं, रोटी की वात सोचते हैं। इसका प्रवन्ध करना कठिन है। अगर आप वलिदान करने को तैयार है तो (शिक्षण-सस्थाए) छोडिए, नही तो नही। ईश्वर से मेरी प्रार्थना है कि वह आपको स्वच्छ भाव दे, आपको वल दे। आप अपने अन्त करण की ही आवाज को स्वीकार करें। मैं कल चला जाऊगा। जो लोग असहयोग करना चाहते हैं, जो ऐसा करने की वहुत दिनो से सोच रहे हैं उनको अपने अध्यापको से वात कर लेनी चाहिए। मेरे भाई, मालवीय जी से वातें करनी चाहिए। उनसे आशीर्वाद पाकर अपना काम कीजिए। जिन्होंने लिखकर नाम दे दिया है उनको अपने इरादे पर पक्का रहना चाहिए, और (इस प्रकार) जो लोग आना चाहे वे ही अपना नाम दें।

—हिन्दी। काशी, २७।११।१९२०। आज, ३०।११।१९२०]

● मनुष्यत्व के वाद ही आजीविका की वात आ सकती है।

---

१. यहाँ कुछ शब्द मिट गये हैं।

- स्वतन्त्रता धर्म है। धर्म के पीछे देह है; देह के लिए धर्म नहीं छोड़ा जा सकता, लेकिन धर्म के लिए देह छोड़ी जा सकती है।
- जैसे पराधीन हम आज हैं, वैसे कभी नहीं थे।
- संयम आपका धर्म है।
- असहयोग में आपकी विनय की शिक्षा निहित है।

३७. भाषण : काशी की सार्वजनिक सभा में[1]

२७ नवम्बर, १९२०

श्री गांधी ने हिन्दू धर्म की दृष्टि से गोरक्षा का महत्व समझाया और फिर कहा कि केवल असहयोग ही स्वराज्य हासिल कराने में आपकी मदद कर सकता है। स्वराज्य आपको गोरक्षा की शक्ति देगा। उन्होंने कहा कि स्वदेशी चीजों का इस्तेमाल और विदेश में बनी चीजों का बहिष्कार राष्ट्रीय और भौतिक प्रगति के लिए जरूरी है। उन्होंने व्यापारियों से विदेशी माल का व्यापार न करने का आग्रह किया। गांधीजी ने उनसे अपील की कि वे देश की गम्भीर स्थिति को अच्छी तरह समझें और निर्णय करें कि देश का प्रशासन अपने हाथ में लेने के सर्वोत्तम उपाय क्या होंगे। हिन्दू-मुस्लिम एकता पर बोलते हुए उन्होंने कहा कि इन दो प्रमुख जातियों में प्रेम और सद्भाव ही राष्ट्र की प्रगति का एक मात्र रास्ता है।
—हिन्दी। काशी, २७।११।१९२०। अंग्रेजी से। 'लीडर' २९।११।१९२०]

३८. भाषण : इलाहाबाद में असहयोग पर[2]

असहयोग के सिवा रास्ता नहीं

२८ नवम्बर, १९२०

[महात्मा गांधी भाषण देने के लिए खड़े हुए। लोगों ने भारी हर्षध्वनि की। हिन्दी में भाषण देते हुए उन्होंने आरम्भ में इस बात पर जोर दिया कि] यह समय

---

१. यह सभा बनारस हिन्दू विश्वविद्यालय के उपकुलपति आनन्दशंकर बापूभाई ध्रुव की अध्यक्षता में रामघाट के निकट हुई थी।

२. यह भाषण मोतीलाल नेहरू की अध्यक्षता में हुई सार्वजनिक सभा में दिया

काम करने का है और भाषणो और सभाओ का नही। यह आसुरी सरकार है और रावण के राज्य जैसी है। उसने मुसलमानो के साथ अन्याय किया है और पजाव के अत्याचारो के लिए वही उत्तरदायी है। यह भारतीयो को अव तक धोखा देती रही है। आज भी उसको इसका पछतावा नही है, बल्कि वह हमसे यह कहती है कि हम उसके अत्याचारो को भूल जायें। यदि आप इस सबको अनुभव नही करते तो मुझे आपसे कुछ भी कहना नही है, किन्तु आप ज्योही असली स्थिति को जान जायेंगे आपके सामने केवल असहयोग करने के सिवा कोई रास्ता नही बचेगा।

ऐक्य

[इसके बाद महात्मा जी ने एकता पर जोर देते हुए कहा कि] एकता अत्यन्त आवश्यक है। यदि आप सव एक हो जायँ तो सरकार जिस तरह आपकी राय की उपेक्षा अबतक करती रही है, उसका वैसी उपेक्षा कर सकना आप असम्भव कर सकते हैं। आप लोग एक बार एक हो जायँ तो आप खिलाफत और पजाब के अन्यायो को दूर करवा सकते हैं और स्वराज्य ले सकते हैं। सरकार आपकी सहायता से ही भारत पर शासन चला रही है। किन्तु यह देखकर दुःख होता है कि हिन्दू और मुसलमान अभी तक एक दूसरे पर पूरा विश्वास नही करते लेकिन मैं आपसे पूछता हू कि क्या सरकार पर आपको कुछ भी विश्वास है? काले-से-काले मन का हिन्दू भी इस्लाम को खतरे मे नही डालेगा। आपको चाहिए कि वर्तमान सरकार को या तो सुधार दें या समाप्त कर दें। अपने इस ध्येय की पूर्ति के लिए एकता बहुत जरूरी है। सरकार से असहयोग करने के लिए आपको आपस मे सहयोग करना चाहिए। सरकार भी आप में फूट डालने का प्रयास कर रही है। यह तो वह करती ही आई है और इसी के द्वारा भारत पर राज्य चला रही है। यदि हिन्दू और मुसलमान आज एक हो जायें तो ससार की कोई भी शक्ति हमे दवा नही सकती। हमने देख लिया है कि हम तलवार से स्वराज्य नही ले सकते। भारतीय आज जिस पौरुषहीन अवस्था मे हैं उसमे खुली लडाई का खयाल भी नही किया जा सकता, वह देश के हितो के लिए घातक सिद्ध होगी। सरकार अपने सभी साधनो को काम मे लाकर अपनी पूरी शक्ति से हमारी राष्ट्रीय आकाक्षाओ को कुचलने का प्रयास कर रही है, वह एक दल को दूसरे से भिडा रही है। और खुली धमकिया दे रही है। हमारा ऐसी सरकार से भौतिक वल से निपटने और उसे हटाने की आशा करना सम्भव

गया था। इस सभा मे कर्नल वेजवुड, मौ० आजाद, और शौकतअली भी शामिल थे।

नहीं है। हमें हिंसा का मुकाबला हिंसा से करना भी नही चाहिए। हमें शैतान को सजा देने के लिए शैतानी साधनों का उपयोग भी नही करना चाहिए। मैं अपने ३० साल के अनुभव के आधार पर कह सकता हूं कि हम निर्दयता और छल-कपट से इसे नष्ट नही कर सकते। जैसे उजाला अन्धेरे को दूर करता है, वैसे ही हम झूठ को सत्य से और बुरी शक्तियों को आत्मबल से निवृत्त कर सकते है। इसके अलावा, सरकार की हिंसा के प्रयोग की शक्ति वहुत जवर्दस्त है और इसलिए भी नैतिक दृष्टि से लोगों का उसकी हिंसक शक्ति का मुकाबिला हिंसा से करना अनुचित है। इसी बात को ध्यान में रखकर कांग्रेस ने आपके सामने अहिंसात्मक असहयोग का कार्यक्रम रक्खा है।' स्कूलों और कालेजों के बहिष्कार का उल्लेख करते हुए महात्मा जी ने अभिभावको से पूछा क्या आपका विश्वास यह नहीं है कि इस समय अपने बच्चों को सरकारी सहायता-प्राप्त स्कूलों से निकाल लेना आपका कर्त्तव्य है? यदि आपका विश्वास ऐसा नही है तो आपको ऐसी सभा में नही आना चाहिए और यदि आप इसमें आ ही गये है तो आपको इस कार्यक्रम से अपना मतभेद प्रकट करना चाहिए। अन्यथा यदि आप यहा से चुपचाप चले जाते है तो इससे यही प्रकट होगा कि आप इस कार्यक्रम से सहमत है और तब फिर इसीलिए आपका अपने बच्चों को स्कूलों और कालेजों से हटा लेना उचित होगा। यदि आपके लड़के वयस्क हैं तो आप उन्हें स्कूलों और कालेजो को छोड़ने के लिए समझायें और यदि वे वैसा न करें तो आप उनकी सहायता से हाथ खीच लें और जहा उनकी तकदीर ले जाये वहां जाने दें।

गांधीजी ने स्वदेशी की आवश्यकता पर वल देने के बाद इलाहाबाद में एक राष्ट्रीय कालेज की स्थापना के निमित्त धन की अपील की।

— हिन्दी। इलाहाबाद, २८।११।१९२०। अंग्रेजी से। 'लीडर' और बाम्बे क्रानिकल १।१२।१९२०]।

---

१. यहाँ १-१२-१९२० के 'लीडर' में इतना और दिया गया है : 'श्री गांधी ने इसके बाद स्वदेशी वस्तुओं के प्रयोग का आग्रह करते हुए कहा कि "स्वदेशी का व्यवहार नौकरशाही के विरुद्ध अत्यन्त शक्तिशाली शस्त्र है। यदि आप उन ६० करोड़ रुपयों को जिनसे ब्रिटेन का बना माल खरीदा जा रहा है, बचा लेंगे तो लंकाशायर के ५७ संसदीय सदस्य आपकी मुट्ठी में आ जायेंगे। यदि आप केवल स्वदेशी माल का ही व्यवहार करने का निश्चय कर लें तो स्वराज्य मिल जाये। किन्तु यह केवल तभी सम्भव हो सकता है जब आप

३९. भाषण : इलाहाबाद में

२९ नवम्बर, १९२०

उत्तर-प्रदेश हिन्दुस्तान का केन्द्र है। इसलिए उससे देश के अन्य भागो से आगे रहने की आशा की जाती है। किन्तु दरअसल उसने अभी तक गुजरात से ऊचा स्थान पाने के योग्य कोई कार्य नही किया है। फिर भी मैं आशा करता हू कि वह आगे चलकर वर्तमान सघर्ष मे उचित स्थान प्राप्त किये विना नही रहेगा। उन्होंने झासी का उदाहरण दिया और कहा कि वहा हिन्दू और मुसलमान छात्रो ने 'गीता' और कुरान हाथ में लेकर शपथ ली है कि वे सरकार द्वारा नियन्त्रित सस्थाओ को छोड देंगे।

हिन्दू-मुस्लिम एकता के प्रश्न पर वोलते हुए महात्मा गाधी ने खेदपूर्वक कहा कि उत्तर प्रदेश मे सरकार की चाल सफल हो गई है और उसने फूट डाल कर दोनो जातियो को पौरुषहीन वना दिया है। उन्होने दोनो जातियो को उनके धर्मग्रन्थो की याद दिलाई और अनुरोध किया कि वे अपने मतभेद भुला दें। इतना कह चुकने पर उन्होंने लखनऊ से मिले एक तार का उल्लेख किया और वतलाया कि वहा गाय की कुर्वानी से सम्वन्धित एक प्रस्ताव पर नगरपालिका के सदस्यो मे कुछ गहरा मतभेद है। उन्होंने इस आरोप की भी चर्चा की कि उन्होने अलीगढ का कालेज तो खाली करा दिया किन्तु वनारस विश्वविद्यालय खाली नही कराया। उन्होंने कहा कि यह सव इस वात का द्योतक है कि हममे अभी तक आपसी विश्वास और सद्भाव की कमी है। मैं नही जानता कि ऐसे प्रश्न कैसे तय किये जाय। मैं तो हिन्दू विश्व-विद्यालय और अलीगढ कालेज दोनो को ही खाली करा देना चाहता हू और उनमे अपना सन्देश लेकर गया भी हू। यह तो अपने-अपने कर्त्तव्य का प्रश्न है और इसमे जो सवसे आगे आता है वही अधिक सफल होता है, फिर वह चाहे अलीगढ का कालेज हो या वनारस का विश्वविद्यालय, या कोई दूसरी सस्था हो। यदि कोई इस प्रकार के कर्त्तव्य के पालन मे यह सोचता है कि पहले अन्य लोग आगे वढें तव हम वढेंगे तो उससे उसकी कमजोरी ही जाहिर होती है।

हिन्दुओ को सम्वोधन करते हुए महात्मा जी ने कहा. यह सन्देह करने का कोई कारण नही है कि अली-वन्धु हमे धोखा दे जायेंगे। क्योकि उन्होंने यह तो साफ-साफ कह ही रखा है कि व पहले मुसलमान हैं और वाद को कुछ और। उन्होंने

अपनी आदतें सीधी-सादी वना लें। आप अव मलमल पहनना छोड दें और केवल खद्दर ही पहनें।"

वचन दिया है कि भारत की स्वतन्त्रता के लिए वे (जरूरत होगी तो) सारी दुनिया से लड़ेंगे। (उन पर) इस प्रकार के सन्देह से हममें आत्म-विश्वास की कमी प्रकट होती है। यह भी कहा गया है कि अली-बन्धु अखिल इस्लामवाद के हिमायती है। यदि संसार के दूसरे भागों के मुसलमानों से सहानुभूति दिखाना अखिल इस्लामवाद है तो हिन्दू भी अखिल हिन्दुत्ववादी है। क्योंकि सहधर्मियों से सहानुभूति की भावना स्वाभाविक भावना है और वह सभी जातियों में होती है। इसलिए मैं आपसे अनुरोध करता हूं कि आप पराक्रमी बने और कायरों के दिलों में उत्पन्न होने-जैसी शंकाओं को निकाल बाहर करें। अब समय आ पहुंचा है जब सबको संगठित होकर पूरे मन से देश के प्रश्न को हाथ में लेना चाहिए, किन्तु यदि सामान्य जन मेरी बात नही सुनेंगे तो मैं उन ४ या ५ व्यक्तियों को ही साथ लेकर, जिन्होंने इस मामले को हाथ में उठा लिया है, इस संघर्ष को अन्त तक चलाता रहूंगा। (जोर की तालियां)।

—मूल हिन्दी। इलाहाबाद, २९।११।१९२०। अंग्रेजी से। बाम्बे क्रानिकल १।१२।१९२०। सं० गां० वा० खण्ड १९ पृष्ठ ४५-४६ में भी]।

४०. भाषण : महिलाओं की सभा, इलाहाबाद में

२९ नवम्बर, १९२०

महात्मा जी ने महिलाओं से अनुरोध किया कि वे देश की आजादी की लड़ाई में अपना फर्ज अदा करने में गफलत न करें। उन्होंने उनसे जोर देकर कहा : आप अपने पतियों और पुत्रों से अनुरोध करें और उन्हें प्रोत्साहन दें कि वे अपने कर्त्तव्य के पथ पर चलें। आप स्वयं स्वदेशी को अपनाकर स्वतन्त्र भारत के निर्माण में प्रबल एवं प्रभावकारी सहायता दें। रावण के राज्य में सीता को भी चौदह साल तक वल्कल वसन (पेड़ की छाल के मोटे कपड़े) पहनकर रहना पड़ा था। इसी तरह आज भी जब स्वदेशी वस्तुओं को अपनाने का अर्थ भारत को स्वतन्त्र करने की दिशा में एक बड़ा कदम उठाना है, तब भारतीय महिलाओं को हाथ-कते और हाथ-बुने खद्दर का कपड़ा पहनना अपना पुनीत कर्त्तव्य बना लेना चाहिए। इतना ही नही बल्कि उन्हे प्रतिदिन कम-से-कम एक घण्टा सूत भी कातना चाहिए और इस प्रकार हाथ से कपड़ा बुनने में सहायक बनना चाहिए। भारतीय स्त्रियों का देश के प्रति यह कर्त्तव्य हो गया है कि वे महीन कपड़े पहिनना छोड़ कर खादी की पोशाक अपनायें।

स्वराज्य प्राप्त करने का स्वदेशी एक अमोघ उपाय है। उसके द्वारा पजाब और खिलाफत के अन्यायो का परिमार्जन कराया जा सकता है और राष्ट्रीय सम्मान की रक्षा की जा सकती है। स्वदेशी के प्रचार का मुख्य भार भारतीय स्त्रियो पर ही है और उन्हे वह अवसर चूकना नही चाहिए।[1]

—हिन्दी। इलाहावाद, २९।११।१९२०। अंग्रेजी से। वाम्बे क्रानिकल १।१२।-१९२०]।

● स्वराज्य प्राप्त करने का स्वदेशी एक अमोघ उपाय है।

४१. भाषण : विद्यार्थियों की सभा, इलाहाबाद में[2]

प्रतिज्ञा का सम्मान करो।

३० नवम्बर, १९२०

मुझे यह समाचार[3] सुनकर अत्यन्त दु ख हुआ। यहा भी भाई जवाहरलाल के साथ वहुत विद्यार्थियो से मुलाकात हुई थी। उन्होंने उनसे साफ-साफ कह दिया था कि वे पाठशाला तभी छोडें जव उन्हें यह अपना धर्म जान पडे, इस आशा से न छोडें कि हम लोग कोई व्यवस्था करेंगे। वे हमारी शक्ति के अनुसार व्यवस्था स्वीकार करने को रजामन्द हो गये और भाई जवाहरलाल ने उनके लिए मकान ले भी लिया, परन्तु वह एक हफ्ते से खाली पडा है। इन समाचारो से मुझे जितना दुःख हुआ है, यह मैं प्रकट नही कर सकता। मुझे ये घटनाए हमारी गुलामी के स्पष्ट चिह्न प्रतीत होती हैं। प्रतिज्ञा लेकर तोडनेवाला हैवान वन जाता है, नामर्द वन जाता है। लार्ड विलिंग्डन[4] विलायत से आने के वाद वम्बई मे कुछ समय व्यतीत

---

१. भाषण के वाद कई महिलाओ ने अपने आभूषण उतार कर राष्ट्रीय कार्य के निमित्त दे दिये और स्वदेशी की शपथ लेने में भी उत्साह दिखाया।

२. सभा आनन्द-भवन में हुई थी और उसमें मौलाना अबुल कलाम आजाद तथा शौकत अली भी बोले थे। यह भाषण महादेव देसाई के यात्रा-विवरण से उद्धृत किया गया है।

३. गाधी जी के झांसी पहुँचने पर बहुत से विद्यार्थियों ने 'गीता' और 'कुरान' की शपथ के साथ अपने-अपने विद्यालय छोड़े थे। फिर समाचार मिला कि दो-तीन दिन वाद ही विद्यार्थी वापस विद्यालयो मे चले गये हैं।

४. १८६६-१९४१। बम्बई (१९१३-१९) और मद्रास (१९१९-२४) के गवर्नर और भारत के वाइसराय (१९३१-३६)।

हसन और हुसैन के उदाहरण मौजूद हैं। इस्लाम को कायम रखनेवाली तलवार नहीं, ऐसी अटल टेकवाले जबरदस्त फकीर ही हैं। उन्हीं के कारण वह कायम रहा है। एम० ए० हो जाने से या सेवासमिति के स्वयंसेवक बनने से या कांग्रेस में जाकर भाषण देने की शक्ति प्राप्त कर लेने से आप देश को स्वतन्त्र नही कर सकते। आप प्रतिज्ञा का आदर करके और उसका पालन करके ऐसा अधिक अच्छी तरह कर सकेंगे।

अंग्रेजी हुकूमत शैतानियत से भरी है

इस राज्य और रावण-राज्य में फर्क नहीं है। कुछ फर्क हो भी तो वह इतना ही है कि रावण के हृदय में कुछ दया होगी, कुछ कम दगा होगी। उसने तो मन्दोदरी से कहा था कि "दस सिरवाला होकर भी क्या मैं राम का मुकाबला नहीं कर सकता? तू तो पागल हो गई है।" उसने यह भी कहा कि "मैं जानता हूं कि वे अवतारी पुरुष हैं और मुझे मालूम है कि मैं इतना बुरा हो गया हूं कि उनके हाथ से मारा जाऊं, तो भी बुरा नही।" परन्तु हमारी हुकूमत को तो खुदा का ऐसा डर भी नही रहा। उसे यह खयाल नही आता कि खुदा के हाथों मर जाना ठीक रहेगा। वह तो खुदा को घोलकर पी गई है। उसका खुदा तो उसका अहंकार, उसकी दौलत और उसकी दगा है। यूरोपीय संस्कृति शैतानियत से भरी है। परन्तु इसमें भी अंग्रेजी हुकूमत सबसे अधिक शैतानियत से भरी है। अब तक मैं यूरोप में अंग्रेजी सल्तनत को कम-से-कम खराब मानता था, अब मुझे इत्मीनान हो गया है कि इसके जैसी खुदा को भूली हुई कोई और हुकूमत नही है। इस हुकूमत की सेवा मैं नहीं करना चाहता। मैं इसके आश्रय में एक क्षण भी नही रहना चाहता।[1]

यह तालीम हमें पक्का गुलाम बनाने के लिए है

आपको मेरे वचनों के बारे में सन्देह हो, आपको इस सरकार में मेरी तरह

---

१. 'लीडर' २।१२।१९२० की रिपोर्ट में यहाँ कुछ वाक्य और हैं: "इस सरकार-द्वारा संचालित स्कूलों में गीता और कुरान पढ़ना भी हराम है। मेरा विश्वास है श्री लायड जार्ज और लार्ड चेम्सफोर्ड दोनों ही हमें धोखा दे रहे हैं। अगर वे चाहते तो तुर्की पर लादी जा रही सन्धि को रद्द करा सकते थे। किन्तु वे वैसा करना नहीं चाहते। वे अच्छी तरह जानते हैं कि ओ' डायर और डायर दोनों निश्चित रूप से अपराधी हैं, लेकिन वे उन्हें सजा देना नहीं चाहते। मैं तो ऐसी सरकार के साथ कदापि सहयोग नहीं कर सकता।'

बुराई दिखाई न देती हो तो आप बेशक अपनी पाठशालाओ मे पढते रहे। परन्तु यदि आप मेरे विचार के है, तब तो इस हुकूमत की पाठशाला मे 'गीता' पढना भी व्यर्थ है। हमे गुलाम बनाकर रखनेवाली सरकार हमे महल मे रखे और उसमे 'गीता' पढाये, डाक्टरी, साइंस, इजीनियरी सिखाये तो भी क्या वह सब सीखा जा सकता है? मैं कहता हू "नही", क्योकि इस सारी शिक्षा मे जहर भरा है, यह सारी तालीम हमे और पक्का गुलाम बनाने के लिए है। हमारी लडाई धर्म की है, सरकार की अधर्म की है। जो सरकार माइकेल ओ' डायर[1]-जैसे कर्मचारी के अपराध जानकर भी उनका पक्ष लेती है, डायर[2] की हैवानियत जानकर भी उसके अन्याय को केवल विचार-दोष मानती है, उस सरकार की मदद कैसे ली जाय अथवा उसके साथ सम्बन्ध कैसे रखा जाय? उसके साथ सम्बन्ध रखना अधिक हैवान बनने और ज्यादा पक्का गुलाम बनने के बराबर है।

आप लोग यह प्रश्न मुझसे बिल्कुल न करें कि मैं आपके लिए क्या-क्या करूगा। मैं आपको सरकार की गुलामी छोडकर मेरा गुलाम बन जाने को नही कहता। यदि आप मेरे गुलाम बनना चाहे तो फिर मुझे आपसे कोई वास्ता नही। आपमे अपना पेट भरने की, कोई न कोई मेहनत-मजदूरी करके अपने माता-पिता का पोषण करने की ताकत न हो तो आप स्कूल-कालेज हर्गिज न छोडें। वैसे आपके लिए व्यवस्था करना हमारा काम है, और हम यथासम्भव व्यवस्था जरूर करेंगे। परन्तु भारत का वातावरण इतना बिगडा हुआ है कि शिक्षक, अध्यापक मुझे पागल तक मानते होंगे और सम्भव है मुझे उनकी मदद न मिले। ऐसे लोगो की मदद मैं चाहता भी नही हू। यदि शिक्षक अध्यापक न मिलें, तो आप अपने अध्यापक स्वय बनें और अपने ही पैरो पर खडे हो जायें। मेरी, मोतीलाल जी की या शौकत अली की ताकत पर खडे रहने की आशा से आना चाहे, तो जहा आप हैं, वही बनें रहे।

o o o

आप पूछेंगे, "आज प्रह्लाद कहा से लाये?" प्रह्लाद इस जमाने मे भी हैं।"[3]

o o o

मैं कोई नशा (एक्साइटमेण्ट) नही देना चाहता। आपकी तालीम का

---

१. पजाब के लेफ्टिनेण्ट गवर्नर, १९१३-१९१९।

२. रेजिनाल्ड एडवर्ड हैरी डायर (१८६४-१९२७), अमृतसर क्षेत्र के कमाडिंग आफिसर जिन्होंने जलियावाला बाग मे एकत्र शान्त जनता पर गोलियां चलाने का हुक्म दिया था।

३. इसके बाद उन्होंने स्वामी दयानन्द का वृत्तान्त सुनाया।

करने के पश्चात् अपना अनुभव सुनाते हुए कहते थे कि भारत में आकर मैंने किसी हिन्दू-मुसलमान को 'ना' कहने की हिम्मत करते नहीं देखा। यह आक्षेप अब भी सही है। हमारे दिल में 'नहीं' होने पर भी हम 'नहीं' नहीं कह सकते। सामने वाले का मुँह देखकर उसे 'हां' चाहिए या 'ना' यह सोचते हैं और तब तदनुसार बात करते हैं। यहां पण्डित जी के घर किसी तीन-चार वर्ष की लड़की से भी मैं उसकी इच्छा के विरुद्ध कुछ नही करा सकता। मै उसे कहता हूं कि तू मेरी गोद में बैठ, तो वह कहती है, 'नही'; उससे कहता हूं कि "तू खादी के कपड़े पहनेगी?' तो कहती है "नही।" हममें इस बच्ची की-सी ताकत भी नहीं है। एक महापुरुष ने कहा है कि हमें स्वर्ग में जाना हो तो बालक-जैसा बनना होगा। बालक-जैसे बनने का अर्थ यह है कि बालक की-सी निर्दोषता और हिम्मत चाहिए। एडविन अर्नाल्ड[1] ने बालक की निर्दोषता का बढ़िया ढंग से वर्णन किया है। बच्चा बिच्छू को पकड़ लेता है, सांप को भी पकड़ लेता है, आग में हाथ डाल देता है, उसे डर का जरा भी भान नही होता। आप भी ऐसी ही निर्भयता पैदा करें। आपके मन में ईश्वर का भरोसा नही है, इसलिए आप डर के वश में होते हैं।

मुझे अक्सर खयाल आता है कि या तो जल्दी-से-जल्दी भारत से भाग निकलूं या उसे जल्दी-से-जल्दी स्वतन्त्र करूं। स्वतन्त्रता का इतना ही अर्थ है कि हम किसी से भी न डर कर जो हमारे दिल में हो, वही कह सकें, वही कर सकें। जो लड़का करोड़ों मनुष्यों के सामने सीधा खड़ा रहकर अपनी बात कह सके, सच्चा साहसी है। इसलिए आपके लिए पहला पाठ तो "ना" कहना सीखना है। आप प्रतिज्ञा लें ही नहीं यह बेहतर है; प्रतिज्ञा लेकर तोड़ना, मैं कहूंगा कि, एक बड़ा अपराध करने जैसा है। आपने ऊंची शिक्षा पाई हो, बड़ी डिग्री ली हो, फिर भी यदि आप बिना आगा-पीछा सोचे प्रतिज्ञा तोड़ दें, तो मैं जरूर कहूंगा कि आप जमुना में जाकर डूब क्यों नही मरते? आप शायद यह सफाई दें कि आपके दिल ने एक बार कुछ कहा, इसलिए आपने वैसा किया; उसने फिर दूसरी बात कही तो आपने दूसरा व्यवहार किया, परन्तु इसका जवाब यह है कि तब आपको प्रतिज्ञा नही लेनी चाहिए। शास्त्रों में कहा है कि प्रतिज्ञा लो तो उसके लिए मरो। इसे साबित करने वाले थे हमारे हरिश्चन्द्र और रोहिताश्व। वे अपना वचन निभाने के लिए भंगी के यहां

---

१. एडविन अर्नाल्ड (१८३२-१९०४)। संस्कृत साहित्य के अध्येता, अंग्रेज कवि। उनका भगवद्गीता का अंग्रेजी पद्य-अनुवाद 'सांग सिलेशियल' और बुद्ध-चरित्र सम्बन्धी काव्य-ग्रन्थ 'लाइट आफ एशिया' अंग्रेजी साहित्य में बहुत प्रसिद्ध हैं।

सेवक वन कर रहे। हम उन धर्मवीरो की सन्तान हैं, इसे आप कैसे भूल जायेंगे? हा, व्यभिचार करने की, झूठ वोलने की प्रतिज्ञा ली हो तो जरूर तोडी जा सकती है, क्योकि इसे तोडकर मनुष्य अपनी उन्नति करता है। त्याग करने की प्रतिज्ञा कभी वदली नही जा सकती। हिन्दू की गौमास न खाने की अथवा मुसलमान की शराव न पीने और सूअर का मास न खाने की प्रतिज्ञा है। यदि वह वीमार हो, मरणासन्न हो और डाक्टर आग्रह करें कि जरा-सा अभक्ष्य ले लो तो उस समय भी उसका इन्कार करना लाजिमी है। इस प्रकार जिन्दगी कुर्वान करने, अभक्ष्य छोड कर अपनी प्रतिज्ञा पर डटे रहनेवाले मनुष्य को ही जन्नत मे जाने पर खुदा 'शेर का वच्चा' कहेगा।

दुनिया के तमाम धर्मो मे प्रतिज्ञा के वारे मे ऐसी ही कठोर सख्ती है। सत्य की प्रतिज्ञा ली हो तो गाव को वचाने के लिए या किसी मनुष्य को वचाने की खातिर आप असत्य नही वोल सकते। प्रतिज्ञा-भग से जो दु:ख हुआ, मैं उसे व्यक्त किये विना नही रह सकता। कोई वूढा खूसट आदमी अपनी प्रतिज्ञा तोडे तो थोडा-वहुत समझ मे भी आ सकता है। मैं स्वय वूढा ठहरा, इसलिए कोई भूल कर सकता हू। परन्तु आप तो नौजवान हैं, आप मे ताजा खून दौडता है, मैं आपको कैसे माफ कर दू? इस अवसर पर कुछ विपयान्तर का खतरा उठा कर भी मैं अपना अनुभव सुना रहा हू। अहमदावाद मे दो वर्ष पूर्व हजारो मजदूरो ने सावरमती के किनारे एक पेड के नीचे ईश्वर को साक्षी मान कर प्रतिज्ञा ली कि जव तक उनकी मांग मजूर न हो, तवतक वे काम पर नही जायगे। वीस दिन तक वे टिके रहे परन्तु वाद मे मुझे महसूस हुआ कि वे गिरने जा रहे हैं, इसलिए मैंने उनसे कहा कि तुम गिरोगे तो मैं भी अन्न न लेकर शरीर छोड दूगा। तुम प्रतिज्ञा न लेते तो हर्ज नहीं था, परन्तु लेकर तोडो, यह मुझे असह्य है। मजदूर रोने लगे, पैरो पडने लगे कि "कुछ भी करके पेट भरेंगे, परन्तु पुराने काम पर नही जायेंगे।" इस प्रकार उन्हें गिराने से रोकने के लिए मुझे अनशन का व्रत लेना पड़ा था। आप मजदूरो से ज्यादा अशिक्षित न वनें। उनसे अधिक नास्तिक तो कदापि न वनें। आप इन्सान की गुलामी छोड कर खुदा की गुलामी करें। इस हुकूमत को मिटाना हो तो यह गुलामी छोडनी पडेगी। प्रतिज्ञा नही लेंगे तो स्वराज्य नहीं मिलेगा, सो वात नही है, परन्तु आप प्रतिज्ञा तोडेंगे तो स्वराज्य का समय आगे अवश्य खिसक जायेगा। कसम तोडनेवाले ऐसे विद्यार्थियो की मदद से मुसलमान मुसलमानो की मदद नही कर सकेंगे। इसलिए मैं विनयपूर्वक कहता हूँ कि कसम न लो, और कसम लो तो पृथिवी रसातल मे चली जाय तो भी उसे न छोडो। आपमे से इने-गिने ही कसम लें, तो उससे भी स्वराज्य मिल जायगा। मुसलमान विद्यार्थियो के सामने इमाम-

हसन और हुसैन के उदाहरण मौजूद हैं। इस्लाम को कायम रखनेवाली तलवार नहीं, ऐसी अटल टेकवाले जबरदस्त फकीर ही हैं। उन्हीं के कारण वह कायम रहा है। एम० ए० हो जाने से या सेवासमिति के स्वयंसेवक बनने से या कांग्रेस में जाकर भाषण देने की शक्ति प्राप्त कर लेने से आप देश को स्वतन्त्र नहीं कर सकते। आप प्रतिज्ञा का आदर करके और उसका पालन करके ऐसा अधिक अच्छी तरह कर सकेंगे।

अंग्रेजी हुकूमत शैतानियत से भरी है

इस राज्य और रावण-राज्य में फर्क नहीं है। कुछ फर्क हो भी तो वह इतना ही है कि रावण के हृदय में कुछ दया होगी, कुछ कम दगा होगी। उसने तो मन्दोदरी से कहा था कि "दस सिरवाला होकर भी क्या मैं राम का मुकाबला नहीं कर सकता? तू तो पागल हो गई है।" उसने यह भी कहा कि "मैं जानता हूं कि वे अवतारी पुरुष हैं और मुझे मालूम है कि मैं इतना बुरा हो गया हूं कि उनके हाथ से मारा जाऊं, तो भी बुरा नहीं।" परन्तु हमारी हुकूमत को तो खुदा का ऐसा डर भी नहीं रहा। उसे यह खयाल नहीं आता कि खुदा के हाथों मर जाना ठीक रहेगा। वह तो खुदा को घोलकर पी गई है। उसका खुदा तो उसका अहंकार, उसकी दौलत और उसकी दगा है। यूरोपीय संस्कृति शैतानियत से भरी है। परन्तु इसमें भी अंग्रेजी हुकूमत सबसे अधिक शैतानियत से भरी है। अब तक मैं यूरोप में अंग्रेजी सल्तनत को कम-से-कम खराब मानता था, अब मुझे इत्मीनान हो गया है कि इसके जैसी खुदा को भूली हुई कोई और हुकूमत नहीं है। इस हुकूमत की सेवा मैं नहीं करना चाहता। मैं इसके आश्रय में एक क्षण भी नहीं रहना चाहता।[1]

यह तालीम हमें पक्का गुलाम बनाने के लिए है

आपको मेरे वचनों के बारे में सन्देह हो, आपको इस सरकार में मेरी तरह

---

१. 'लीडर' २।१२।१९२० की रिपोर्ट में यहाँ कुछ वाक्य और हैं: "इस सरकार-द्वारा संचालित स्कूलों में गीता और कुरान पढ़ना भी हराम है। मेरा विश्वास है श्री लायड जार्ज और लार्ड चेम्सफोर्ड दोनों ही हमें धोखा दे रहे हैं। अगर वे चाहते तो तुर्की पर लादी जा रही सन्धि को रद्द करा सकते थे। किन्तु वे वैसा करना नहीं चाहते। वे अच्छी तरह जानते हैं कि ओ' डायर और डायर दोनों निश्चित रूप से अपराधी हैं, लेकिन वे उन्हें सजा देना नहीं चाहते। मैं तो ऐसी सरकार के साथ कदापि सहयोग नहीं कर सकता।'

बुराई दिखाई न देती हो तो आप बेशक अपनी पाठशालाओ मे पढते रहे। परन्तु यदि आप मेरे विचार के है, तब तो इस हुकूमत की पाठशाला मे 'गीता' पढना भी व्यर्थ है। हमें गुलाम बनाकर रखनेवाली सरकार हमे महल मे रखे और उसमे 'गीता' पढाये, डाक्टरी, साइंस, इजीनियरी सिखाये तो भी क्या वह सब सीखा जा सकता है ? मैं कहता हू "नही", क्योकि इस सारी शिक्षा मे जहर भरा है, यह सारी तालीम हमे और पक्का गुलाम बनाने के लिए है। हमारी लडाई धर्म की है, सरकार की अधर्म की है। जो सरकार माइकेल ओ'[1] डायर'-जैसे कर्मचारी के अपराध जानकर भी उनका पक्ष लेती है, डायर[2] की हैवानियत जानकर भी उसके अन्याय को केवल विचार-दोष मानती है, उस सरकार की मदद कैसे ली जाय अथवा उसके साथ सम्बन्ध कैसे रखा जाय ? उसके साथ सम्बन्ध रखना अधिक हैवान बनने और ज्यादा पक्का गुलाम बनने के बराबर है।

आप लोग यह प्रश्न मुझसे बिल्कुल न करें कि मैं आपके लिए क्या-क्या करूगा। मैं आपको सरकार की गुलामी छोडकर मेरा गुलाम बन जाने को नही कहता। यदि आप मेरे गुलाम बनना चाहें तो फिर मुझे आपसे कोई वास्ता नही। आपमे अपना पेट भरने की, कोई न कोई मेहनत-मजदूरी करके अपने माता-पिता का पोषण करने की ताकत न हो तो आप स्कूल-कालेज हर्गिज न छोडे। वैसे आपके लिए व्यवस्था करना हमारा काम है, और हम यथासम्भव व्यवस्था जरूर करेंगे। परन्तु भारत का वातावरण इतना बिगडा हुआ है कि शिक्षक, अध्यापक मुझे पागल तक मानते होंगे और सम्भव है मुझे उनकी मदद न मिले। ऐसे लोगो की मदद मैं चाहता भी नही हू। यदि शिक्षक अध्यापक न मिलें, तो आप अपने अध्यापक स्वय बनें और अपने ही पैरो पर खडे हो जायें। मेरी, मोतीलाल जी की या शौकत अली की ताकत पर खडे रहने की आशा से आना चाहे, तो जहा आप हैं, वही बनें रहे।

० ० ०

आप पूछेंगे, "आज प्रह्लाद कहा से लाये ?" प्रह्लाद इस जमाने मे भी है।"[3]

० ० ०

मैं कोई नशा (एक्साइटमेण्ट) नही देना चाहता। आपकी तालीम का

---

१. पजाब के लेफ्टिनेण्ट गवर्नर, १९१३-१९१९।

२. रेजिनाल्ड एडवर्ड हैरी डायर (१८६४-१९२७), अमृतसर क्षेत्र के कमाडिंग आफिसर जिन्होंने जलियावाला बाग में एकत्र शान्त जनता पर गोलियां चलाने का हुक्म दिया था।

३. इसके बाद उन्होंने स्वामी दयानन्द का वृत्तान्त सुनाया।

नशा आपके लिए काफी है।[1] मैं आपमें शान्त साहस फूंकना चाहता हूं। मैं यह चाहता हूं कि आपका हृदय कुर्बानी और तपश्चर्या के योग्य पवित्र बने।

० ० ०

सही बात यह है कि मां-बाप बच्चों को नहीं रोक रहे हैं, बच्चे ही मां-बाप के कहने पर भी पाठशाला छोड़ने को तैयार नहीं है। हिन्दू युनिवर्सिटी में मैंने सौ-डेढ़ सौ लड़कों से पूछा था। उन्होंने कहा कि हमारे मां-बाप की हमें इजाजत तो है ही, वे हमें हर हालत में खर्च देने को भी तैयार हैं। कोई कुछ भी कहे, सरकार-द्वारा चलनेवाले स्कूल-कालेजों में पढ़ते रहना पाप है, यदि आपकी आत्मा ऐसा कहती हो तभी आप उन्हें छोड़ें, थोड़ी भी दुविधा हो, तो आप मालवीय जी की सलाह मानें। मुझे तो अभी भारत में पांच वर्ष ही हुए है, मालवीय जी ने तो सारा जीवन देश की सेवा में अर्पित किया है। इसलिए कहता हूं कि मेरी आवाज ही आपकी आत्मा की आवाज न हो, तो आप मालवीय जी की बात मानें। मेरी आवाज ही आपकी आवाज हो तो मालवीय जी की सलाह भी हर्गिज न मानें।

—हिन्दी। इलाहाबाद, ३०।११।१९२०। गुजराती से। न० जी० १९।१२।-१९२०]।

४२. भाषण : इलाहाबाद में तिलक विद्यालय[2] के उद्घाटन पर

"मुझे इस विद्यालय के उद्घाटन की रस्म पूरी करते हुए बहुत प्रसन्नता हो रही है। मुझे श्री श्यामलाल नेहरू ने बताया है कि विद्यालय का नाम राष्ट्रीय विद्यालय नही, तिलक विद्यालय होगा। स्वराज्य के लिए जितना आत्मत्याग श्री तिलक[3] ने किया है उतना किसी दूसरे व्यक्ति ने नही किया। इसलिए उस

---

१. गांधी जी ने ये वाक्य एक श्रोता के इस सुझाव के उत्तर में कहे थे : "जब कि आप (गांधीजी) यह मानते है कि आपका यह संघर्ष एक युद्ध है तो लड़ने के लिए आपको हमें कोई "नशा" देना चाहिए।"

२. यह राष्ट्रीय हाईस्कूल स्वराज्यसभा के कार्यालय में चलाया जाता था। स्कूल की कार्यकारिणी ने इसे गांधीजी द्वारा बताई हुई पद्धति से चलाने का निश्चय किया था।

३. लोकमान्य बाल गंगाधर तिलक (१८५६-१९२०)।

महान देशभक्त के नाम पर इसका नाम रखा जाना उचित ही है। यदि कालेज के विद्यार्थी आयेंगे तो कालेज भी खोला जायेगा, विद्यालय मे वे सभी विषय पढाये जायँगे जो दूसरे स्कूलो मे पढाये जाते है।"

इसके वाद गाधीजी ने विद्यालय की कार्यकारिणी के सदस्यो के नाम घोषित किये। इनमे प० मोतीलाल नेहरू, अध्यक्ष और सर्वश्री जवाहरलाल नेहरू, मोहनलाल नेहरू और गौरीशकर मिश्र सदस्य थे। उन्होंने आगे कहा —"विद्यालय मे १५ अध्यापक हैं जिनमे से कुछ के पास डिगरिया हैं। मेरा खयाल है कि ये सभी ऊचे चरित्र के लोग है। यदि अध्यापक अच्छे हो तो विद्यालय उन्नति करेगा। जिन लोगो ने विद्यालय की सेवा करने का वचन दिया है उन्हे दूसरी सव वाते भुला देनी चाहिए। कुछ स्कूलो मे अध्यापक अपने काम के अलावा दूसरे वाहरी काम भी करते हैं। इस विद्यालय मे ऐसा नही होना चाहिए। राष्ट्रीय विद्यालय के अध्यापको का अपना पूरा ध्यान विद्यालय के काम पर केन्द्रित होना चाहिए। विद्यालय मे छात्रो को कुर्सिया और डेस्कें नही मिलेंगी। सरकार ने हममे उनके उपयोग की वुरी आदत डाल दी है। किन्तु आप लोग केवल आसनो का प्रयोग करने के लिए तैयार रहे। आप अपनी विद्या और चरित्रशीलता से यह दिखायें कि आप दूसरे स्कूलो के छात्रो से अच्छे हैं। इस सस्था मे आपको कोई-सुख-सुविधा नही मिलेगी। यदि जरूरत होगी तो छात्रो को खुले मे पेडो के नीचे वैठकर पढना-लिखना होगा और मेरी राय मे भारत की प्राचीन पद्धति मे तो इस वात पर आग्रह रक्खा जाता था। प्राचीन काल में जव वर्षाकाल आता था, छात्र खेतो मे काम किया करते थे। मुझे यह देख कर प्रसन्नता होती है कि विद्यालय के पाठ्यक्रम मे टाइप, सकेत-लिपि, कताई और वुनाई के विषय भी सम्मिलित होंगे। लडको को उर्दू और देवनागरी दोनो लिपियाँ सीखनी होगी। आपका ऐसा करना स्वराज्य और हिन्दू-मुस्लिम ऐक्य, दोनो ही दृष्टि से अच्छा है। दोनो लिपियो को सीखने से हिन्दू और मुसलमान दोनो ही वहुत कुछ सीखेंगे। मेरे मित्र श्री शौकत अली ने मुझे वताया कि भारतीय भाषाओ मे उर्दू का साहित्य वहुत सम्पन्न है। इस वारे मे मैं उनसे सहमत हूँ। उर्दू वँगला या गुजराती से अधिक शक्तिशाली है, क्योकि उर्दू लिखने वाले मौलवियो ने किसी विदेशी भाषा से नही, अरवी से प्रेरणा ली है। उन्होंने अग्रेजी से कभी कोई पुस्तक अनुवादित नही की। मेरा ख्याल है कि उर्दू लिपि सीखने के वाद लडके सादी और फारसी के दूसरे शायरो की कृतियाँ पढ सकेंगे।"

[उन्होंने खासतौर से छात्रो को सम्वोधित करते हुए कहा कि] "आप आज स्वराज्य की दिशा मे एक कदम आगे वढ़े हैं। मैं आपसे अनुरोध

करता हूँ कि आप अपने आचरण से अहिंसात्मक असहयोग को सफल बनायें।"

—हिन्दी। इलाहाबाद, १।१२।१९२०। अंग्रेजी से। 'लीडर', ३।१२।१९२०]

४३. भाषण : काशी की सभा में

[यह भाषण गांधी जी ने ९ फरवरी, १९२१ को दिया था। सभा टाउन-हाल वाले मैदान में हुई थी और उसमें लगभग एक लाख आदमी आये थे। श्री भगवानदास जी ने सभा की अध्यक्षता की थी। इस सभा में मौ० मुहम्मद अली तथा जवाहरलाल जी भी उपस्थित थे।—सम्पा०]

भाइयो,

हम दोनों भाई, मुहम्मद अली और मैं आज आपके पास आये है। आप लोग यहां विद्यापीठ की स्थापना करेंगे। हम लोग उसी में शरीक होने आये हैं। हमारे भाई अबुल कलाम आज़ाद भी इसीलिए यहाँ पहुँचे है। मै आपका यह समय दूसरे काम में नही लगाऊँगा। मैं आप लोगों से केवल इतना ही कह देना चाहता हूं कि हम लोगों की शक्ति दिन-पर-दिन बढ़ती जा रही है। इसके साथ-साथ हम लोगों की जिम्मेदारी भी बढ़ती जा रही है और साथ-ही-साथ भय भी बढ़ता जा रहा है। हम लोगों को यह स्थिर करना है कि किस तरह काम करना चाहिए। यदि हमारी शक्ति जान कर हम आगे बढ़ना चाहते हैं तो हमें समझ लेना चाहिए कि यह शक्ति बढ़ी कैसे? इसका एकमात्र कारण यही है कि हम लोग शान्ति से काम करते हैं। भाई शौकत अली कहा करते है कि हम लोगो की ताकत की वृद्धि का कारण ठण्डी हिम्मत है। यदि हम लोग क्रोध या आवेश में आकर तलवार उठा ले तो उससे अपना गला काटेंगे या अंग्रेज का? इससे हमारी ही ताकत कम होगी। यह ठण्डी हिम्मत और अमन की लड़ाई है। इसके लिए सब तैयार हो जायं। यदि इसमें हमने तलवार उठा कर अंग्रेज का या अपने भाई का गला काटा तो हमारा पतन हो जायगा। फैजाबाद के किसानों ने क्या किया? मदोन्मत्त होकर उन्होंने दूकाने लूटी, अपने भाइयों का माल लूटा। वहाँ हमारी शक्ति का पतन हो गया। सल्तनत देख रही है कि हम लोगों ने इतना भारी आन्दोलन आरम्भ कर दिया है। इस शासन को मिटा देने या दुरुस्त कर देने का संकल्प लिया है। पर फिर भी इतनी शक्तिशाली सरकार कुछ भी नही बोल रही है। क्यों? सरकार देख रही है कि हम लोग शान्ति से काम कर रहे है। यही हमारा

वर्म हो गया है। इस दशा मे सरकार हमारा कुछ नही कर सकती। यदि आज हम शस्त्र उठा ले तो उसकी ताकत की वृद्धि होने लगेगी। यदि आप पजाब के अत्याचारो का निवारण, खिलाफत के मामले मे न्याय और स्वराज्य की प्राप्ति चाहते हैं तो ठण्डी हिम्मत से काम लीजिए। इसी ढंग मे अगर काम होगा तो ठीक होगा। चाहे वकील वकालत न छोडे, विद्यार्थी विद्यालयो का वहिष्कार न करें, लोग कौंसिल मे जायें, सरकारी नौकरी और खितावो का त्याग न करें, इन सवसे मुझे जरा भी रंज नही होता, किन्तु यदि एक भी खून हो जाय, लकडी चल जाय या कोई किसी को गाली दे तो मुझे वड ही रज होता है, क्योकि वहाँ हमारी ताकत का पतन होता है। फैजावाद के किसानो का पागलपन और वम्वई के विद्यार्थियो की करनी से मैं निहायत असन्तुष्ट हू। विद्यार्थियो ने श्री शास्त्री[1] और श्री पराजपे का अपमान करके वडी भूल की। दोनो वडे ही योग्य व्यक्ति और मेरे समान ही देश-सेवक हैं। हम लोगो मे मतभेद है पर देश-सेवा का उन्हे भी उतना ही अभिमान है जितना हमे है। यदि आज आप लोग यहा एकत्र न हुए होते तो मुझे दुःख न होता। पर यहा आकर गोलमाल करें, शोर-गुल मचाकर वाधा डालें तो यह कितने दुःख की वात होगी। मेरी समझ मे नही आता कि यह कैसे होता है? सभा मे आने के वाद विघ्न नही डालना चाहिए। जो विघ्न डालता है वह सज्जन नही है। मुझे वाध्य होकर कहना पडता है कि वम्वई के छात्रो ने अपने खानदान की मर्यादा त्याग दी, काग्रेस और खिलाफत के हुक्म की अवज्ञा की। यदि आप हमारी वात को मानना चाहते हैं तो आपको यही सवक सीखना चाहिए। यदि आप किसी दूसरे से अपना काम कराना चाहते हैं और वह आपके मन के माफिक करने पर राजी नही होता तो आप जवरदस्ती न करें, मेरी इस शर्त को याद रखिए। मैं एक वर्प मे अर्थात् सितम्बर तक स्वराज्य चाहता हू। वह स्वराज्य केवल शान्ति रखने से मिल सकता है। विना इस ताकत के स्वराज्य मिलना असम्भव है। लोग कहते हैं कि हम शान्ति भग करना नही चाहते पर सरकार और खुफिया वाले हम लोगो को इसके लिए वाध्य करते हैं। मैं कहता हू, यह पागलपन की वात है। मैं आप लोगो से कहू कि आप लोग अपना दीन छोड दीजिए तो क्या आप इसके लिए तैयार हैं? कभी नही। इसी तरह जव हम किसी वात को करने के लिए तैयार हैं, तो सरकार हमसे वैसा कुछ नही करा सकती। गुस्से मे तो कुछ नही करना चाहिए। क्रोध किया तो स्वराज्य नामुमकिन है। मैं सव वातें छोड़ देने के लिए तैयार हू—वकीलो का प्रश्न न उठाऊ, छात्रो

---

१. श्रीनिवास शास्त्री।

को न छेड़ूं, पर मैं शान्ति कभी नहीं छोड़ सकता। जव हम परदेसी राज्य नहीं चाहते तो हमें परदेसी लिबास भी छोड़ देना चाहिए। साथ ही हमें विदेशी वस्त्र भी त्याग देना चाहिए। यदि हम लोग यह नहीं कर सकते तो एक क्या दस वर्षो में भी स्वराज्य नहीं मिल सकता। हमें अधिक संख्या की आवश्यकता नहीं है। जो थोड़े लोग त्याग कर रहे हैं उतने ही काफी हैं। पं० मोतीलाल नेहरू तथा श्री दास तथा लाला लाजपत राय ने वकालत छोड़ दी। अव और क्या चाहिए ? दूसरे भी धीरे-धीरे छोड़ेंगे। किसी के साथ किसी तरह की जवरदस्ती न की जाय। जिनकी आत्मा गवाही दे, वे ही छोड़ें। संस्कृत के विद्यार्थी हमसे पूछते हैं कि उनका क्या कर्त्तव्य है। अब कर्त्तव्य का प्रश्न नहीं रहा। सरकारी विद्यालयों का त्याग ही एकमात्र कर्त्तव्य है। जबतक हमारे दुःखों का प्रतिकार न किया जाय, तबतक सरकारी विद्यालय हराम हैं। स्वदेशी वस्त्र का प्रचार भी अत्यावश्यक है। इसके लिए चर्खो का प्रचार करना चाहिए। यदि विद्यार्थी विद्यालयों का वहिष्कार करके देश की सेवा में जुटना चाहते है तो चर्खे के प्रचार से बढ़कर कोई दूसरा काम हो ही नहीं सकता। उन्हें फौरन चर्खा ग्रहण करना चाहिए। यदि ५० लाख विद्यार्थी ४ घण्टा यही काम करें तो कितना काम हो सकता है। प्रत्येक विद्यार्थी इतना सूत कात सकता है कि चार दिन में एक धोती तैयार हो सकती है अर्थात् सारे विद्यार्थी मिलकर एक दिन में साढ़े बारह लाख धोतियां तैयार कर सकते हैं। यदि हमें सब सामान मिल जाय तो कितनी भारी सेवा हो सकती है। उस समय आप जलसा करना भूल जायँगे। मैं जलसों से थक गया हूं। इन जलसों में शरीक होने से हमें यह अनुभव हुआ है कि हम लोग अपने बल का उपयोग अपना गला घोंटने के लिए करते हैं। जहां प्रत्येक व्यक्ति एक दूसरे के स्थान को ग्रहण करना चाहता है, वहां क्या होगा ? सितम्बर मास से मैं यह अनुभव कर रहा हूं। मै घबरा उठा हूं। हम इतने (छोटे) जलसे में भी शान्ति नहीं रख सकते। गोरखपुर में प्रायः डेढ़ लाख जन उपस्थित थे और बड़ी शान्ति से काम हुआ। पर हमारा काम केवल इससे नहीं चल सकता। यदि काम चलाना है तो चर्खा ले लो, जिस दिन सव लोग इस बात को समझ लेंगे उस दिन ऐसे जलसों की आवश्यकता नही रह जायगी और न उसके लिए किसी को फुर्सत ही रहेगी। जितना समय जलसों में नष्ट किया जाता है यदि उतने ही समय में हम सूत कातें तो कितने नंगों को ढक सकते हैं ? यदि एक वर्ष में स्वराज्य प्राप्त करना है तो दो बातें आवश्यक है—एक तो शान्ति का ध्यान वनाये रखना और दूसरे विदेशी वस्त्र का त्याग करना और उसको सफल बनाने के लिए चर्खा ग्रहण करना। जिस दिन आप लोग इन वातो को समझ जायंगे, उस दिन ऐसे जलसों की आवश्यकता न

रह जायगी। यदि आपने चर्खे के मन्त्र को समझ लिया है तो स्वराज्य निकट है। यदि आपने समझ लिया है कि तर्के-मवालात (असहयोग) शान्ति से चलाना है और यदि आपने समझ कर इसमे हाथ डाला है तो शान्ति से रहिए। इसमे हम सरकार को मजबूर कर सकते है। काम करते चलिए। जेल से मत घवराइए। जो जेल जानेवालों को छुडाने का प्रयत्न करते है वे अपनी वुजदिली दिखाते हैं। वे स्वय तो जाना ही नही चाहते। जेल मे हमे प्रसन्नचित्त जाना चाहिए। उसे महल समझ लेना चाहिए। हमारा काम जेल मे जाना और दूसरो को भेजना है। यदि हम लोग यह नही करते तो ससार यही कहेगा कि भारत के लोग कहना जानते हैं और करना कुछ भी नही जानते। पर इन सब प्रवृत्तियो को चलाने के लिए रुपयो की आवश्यकता है। चर्खा चलाने के लिए, विद्यापीठ स्थापित करने के लिए, राष्ट्रीय काम के लिए, जो लोग वकालत छोड देंगे उनके लिए पैसा चाहिए। इतनी वडी सभा मे से मैं खाली हाथ नही जा सकता। मैं भीख माँगता हू। जो आप लोगो को देना हो, दें। स्मरण रखिए, यदि आपने चर्खे को अपनाया और अपने हाथो से ही वने कपडे पहनने का सकल्प किया, तो स्वराज्य सितम्बर मे मिल जायगा।

—हिन्दी। काशी, ९।२।१९२१। 'आज', १०।२।१९२१।]

४४. भाषण : फैजाबाद में

गाधी जी ने सभा मे एक ऊचे मच पर रखी हुई कुर्सी पर वैठकर भाषण दिया। उन्होंने वैठे-वैठे भाषण देने के लिए क्षमा-याचना की। उन्होंने श्री केदारनाथ की, जो गिरफ्तार[1] कर लिये गये थे, प्रशसा की और कहा कि सरकार ने उनको गिरफ्तार करके उनकी तथा लोगो की परीक्षा लेनी चाही है। सरकार लोगो को डराना चाहती है। यदि श्री केदारनाथ आन्दोलन से अलहदा होने के लिए तैयार हो जायेंगे तो वह उन्हें छोड देगी।

उसके वाद उन्होने किसानो के उपद्रवो की चर्चा की और किसानो-द्वारा किये गये हिंसात्मक कार्य पर खेद प्रकट किया. . । गाधी जी ने हिंसा की अत्यन्त तीव्र और स्पष्ट शब्दो मे निन्दा की और कहा कि उनके ख्याल से ऐसा करना

---

१. जनवरी १९२१ में उत्तर प्रदेश के कुछ भागों मे हुए किसानो के उपद्रवों के कारण।

ईश्वर और मानव के प्रति पाप है। उन्होंने जमींदारों और किसानों में झगड़ा करवाने के समस्त प्रयत्नों की भर्त्सना की और किसानों को सलाह दी कि वे ऐसे लड़ने के बजाय स्वयं कष्ट सहें; क्योंकि हमें तो अपनी समस्त शक्ति सर्वाधिक शक्तिशाली जमीदार अर्थात् अंग्रेज सरकार से लड़ने के लिए सञ्चित कर रखनी है। उन्होने लोगों से अनुरोध किया कि वे अपने हृदयों को शुद्ध करें, मनों से भय निकाल दें और मजबूत बनकर निर्भयतापूर्वक आगे बढ़ें।

उन्होंने अपने दक्षिण अफ्रीका में किये गये सत्याग्रह और उसकी सफलता का स्मरण कराया और (अपने स्वागत के समय) स्टेशन पर तलवारें लेकर निकाले गये जुलूस[1] की निन्दा की। उन्होंने कहा कि हिंसा तो कायरता का लक्षण है। तीस करोड़ लोग स्वयं एक शक्ति है और हिंसा किये विना असहयोग के द्वारा स्वराज्य ले सकते है। तलवार तो कमजोर का हथियार है। उन्होंने लोगों से संगठित होने, चर्खा चलाने और धन-संग्रह करने की अपील की। उन्होंने छात्रों-द्वारा स्कूल और कालेज छोड़ने का उल्लेख करते हुए कहा कि सोलह साल से अधिक आयु के लड़के अपने माता-पिता की इच्छा के विरुद्ध भी इन संस्थाओं का त्याग कर सकते है। उन्होंने कहा कि स्वराज्य शान्ति रखकर, चर्खा चलाकर, असहयोग करके और धन-संग्रह करके सात महीने में लिया जा सकता है। उन्होंने अन्त में लोगों से धन देने की अपील की।

—हिन्दी। फैजाबाद, १०।२।१९२१। 'लीडर', १३।२।१९२१ की रिपोर्ट।]

• हिंसा कायरता का लक्षण है।

४५. भाषण : काशी विद्यापीठ के शिलान्यास के अवसर पर

बाबू भगवानदास, बहनो और भाइयो,

मेरे मन में इस समय एक बात का दुःख है। उसे मैं किसी तरह आप लोगों से छिपा नहीं सकता। यहा आने के पहले मै अपने भाई साहब पं० मदनमोहन मालवीय के पास गया और उनसे पूछा कि आप विद्यापीठ के आरम्भोत्सव मे आ रहे हैं या नहीं। उन्होंने कहा, 'नही; मेरा वहां न जाना ही अच्छा होगा।' वह

---

१. मुसलमान स्वयंसेवकों ने स्टेशन के दरवाजे पर नंगी तलवारें लिये हुए पंक्तिबद्ध होकर गांधी जी का स्वागत किया था। यहाँ उसी घटना का उल्लेख किया गया है।

हमारे कितने घनिष्ठ हैं, मैं वतला नही सकता। आज वह हमारे साथ नहीं हैं। उनको आज यहा न देखना हमारे लिए कितने दुःख की वात है, यह मैं कह नही सकता। पर हमारी लडाई ऐसी है कि हमे ये सव दु ख वरदाश्त करने होंगे। पिता को पुत्र के, पति को पत्नी के, पत्नी को पति के वियोग का दु ख सहना पडेगा। वावू भगवानदास ने सुमधुर शब्दो मे वतलाया है कि यह लडाई धर्म-युद्ध है। मुझे इस वात मे जरा भी सशय नही रह गया है, नही तो मैं उस सस्था को कभी न छूता, जिसके प्राण मालवीय जी हैं। मेरी आत्मा यही कहती है कि या तो वह सस्था मेरी हो जाय या नष्ट हो जाय। यदि मैं ऐसा नही करू तो यह पाप होगा। कल मेरे पास कानपुर के कई विद्यार्थी आये। वे वहा से पढाई छोड-छाड कर आये हैं। मैंने उनसे पूछा, आप लोग पढना छोडकर क्यो आये। उन्होने उत्तर दिया, हम लोग चाहते हैं कि इससे वढकर कोई अच्छा राष्ट्रीय काम करें। मैंने उनसे कहा, यह सवव अच्छा नही। यदि आप इस खयाल से पढाई छोडकर आये होते कि आप सरकारी सहायता से चलनेवाले विद्यालयो मे पढना पाप समझते हैं तो अधिक लाभ होता। मेरी वात को वे कुछ समझ गये पर उनकी मुखाकृति से स्पष्ट झलकता था कि उनके हृदय मे अभी कुछ सशय रह गया है, क्योकि उन्होंने प्रश्न किया कि परीक्षा के केवल दो ही मास रह गये है यदि हम लोग उपाधि लेकर असहयोग करें, तो अच्छा है। मैंने कहा कि यह ठीक नही, जव हमे निश्चय हो गया कि इन विद्यालयो मे शिक्षा लेना पाप है तो इसे त्यागना ही उचित होगा। यही तर्के-मवालात है। हमारे विस्तरे के नीचे पचासो वर्ष से साँप छिपा है। हमे उसका पता नही। आज हमे एकाएक इसका पता लगता है। हम उस विस्तरे पर अव नही रह सकते। चाहे हमारे पिता उसको छोडने के लिए हमे मना करें, चाहें नाराज हो, हम उस विस्तरे पर रह नही सकते। मैं पिता की वह आज्ञा नही मान सकता, क्योकि पिता को तथ्य मालूम नही है। उस विस्तरे पर मैं शान्त नही रह सकता। यही खयाल करके विद्यालयो को छोडिए; यह समय परीक्षा का प्रश्न उठाने का नही है।

यही वात हमे यहा के विद्यार्थियो से भी कहनी है। कल मुझे अपने भाई एण्डरूज का पत्र मिला। उन्होंने लिखा है कि जिस तरह यह काम चल रहा है उस तरह से तो सफलता की आशा उन्हें गुजरात मे भी नही है, जो मेरा घर है। पर दो स्थानो के लिए वे निश्चिन्त हैं—पटना और काशी। पटना मे इसका भार वावू राजेन्द्रप्रसाद पर और काशी का भार वावू भगवानदास पर है। सवको पूरा एतवार है कि ये काम विगाडेंगे नही। वावू भगवानदास ने शिक्षा के लिए वहुत काम किया है। अन्य प्रान्तो के काम करनेवालो मे राजनीतिक प्रवृत्ति अधिक

है, इसीलिए वे शिक्षा में भी भाग ले रहे हैं। काशी और पटना के लिए मैं भी निश्चिन्त हूं। पर श्री एण्डरूज के उत्तर में मैं यह कहना चाहता हूं कि और स्थानों में भी यह काम राजनीति की दृष्टि से नही किया जा रहा है, धार्मिक दृष्टि से किया जा रहा है। हम लोगों को असहयोग को सफल करने में अपना चित्त रखना चाहिए। हम लोग विद्या भी ऐसी ही चाहते हैं कि एक वर्ष में स्वराज्य प्राप्त हो सके। यह भी विचार करने की बात है कि स्वराज्य कैसे मिल सकता है। सरकारी सहायता से चलनेवाले विद्यालयों का त्याग सम्भव है। लोग कहते हैं कि सरकार की कृपा से मिलने वाले अनाज का त्याग हम क्यों नही कर देते? मै इससे सहमत हूं। पर यह सहज नही है। विद्या तो अन्य स्थानों में भी मिल सकती है। बाबू भगवानदास ने अभी सीता-हरण की कहानी सुनाई। भूमि का स्वामित्व हमारे हाथ में नही है। वह अपरिहार्य है। अपरिहार्य को परिहार्य न करना क्षम्य है। पर शिक्षा अपरिहार्य नही। यदि उनको छोड़ देने पर बदले में कुछ भी न मिले तो भी हमें सरकारी विद्यालय छोड़ देना चाहिए। आज हमको रावण राज्य के नेता क्या सुनाते है। वे कहते है, हम आपको साथ रखकर चलना चाहते है। वर्मा से क्रेडाक साहब कहते है कि हम शस्त्र नही चलाते। हमको उन्हें कह देना चाहिए कि हम आपके साथ नही रहना चाहते, मजबूरी से आपका साथ दे रहे है। अली भाइयों का कहना है कि यदि हमें यहां कुरान पढ़ने के लिए भी हृदय की शुद्धता नही मिल सकती तो हमें हिजरत करना चाहिए, अर्थात् उन्होने राज्य का त्याग करने के लिए कहा है। तुलसीदास ने भी मलिन राज्य का त्याग करने के लिए कहा है। पर हम अभी उसका सर्वथा त्याग नही कर रहे हैं; सत्ता को भी अभी मौका देंगे। हम अपने चित्त को समझायेंगे कि क्या इस राज्य को मिटाने या दुरुस्त करने का कोई दूसरा उपाय नही है। यदि है तो ३० करोड़ लोगों के हिजरत करने की क्या आवश्यकता है। थोड़ा यज्ञ ही काफी है। इसीलिए इस विद्यापीठ की स्थापना हो रही है। हमें विद्या-जैसे पुण्यदान को मलिन हाथों से नही लेना चाहिए। जितने विद्यालय सरकार के असर में है, उनसे हमे विद्या नही लेनी चाहिए। जिस विद्यालय पर उसकी ध्वजा फहराती है, वहां विद्यादान लेना पाप कर्म है। आप सबको निमन्त्रण है कि यदि आप उसे पाप समझते है तो यहां चले आइए। केवल इस खयाल से न आइए कि वहां शिक्षा बुरी है और यहां अच्छी मिलेगी। इससे आपको पश्चात्ताप होगा। वहां की शिक्षा की बुराई हम भी मानते हैं। एक तो वहां अंग्रेजी में शिक्षा दी जाती है। अंग्रेजी हमारी मातृभाषा नही है। हमारी राष्ट्रीय भाषा हिन्दुस्तानी है, जिसे २१ करोड़ आदमी बोलते हैं। अंग्रेजी को हम मातृभाषा का स्थान नही देना

चाहते, पर उसे त्यागना भी नही चाहते। वह बडी ओजस्वी भाषा है। उसका व्यवहार बहुत बढा-चढा है। उसे सीखिए। हमारी मातृभाषा स्थानच्युत हो गई है और उसका स्थान दूसरी भाषा ने ग्रहण कर लिया है, और अब हमें उसे पुन: अपने स्थान पर प्रतिष्ठित करना है।

ऐसी ही और बहुत सी त्रुटिया हैं, पर उन्हें दूर करने और नई कार्य-प्रणाली स्थिर करने के लिए हम ठहर नही सकते। हम उस झण्डे के नीचे नही रह सकते, जिसको सलाम करने के लिए हमारे लडके मजबूर किये गये थे।[1] विद्यार्थियो, आप अपना विचार स्थिर कर लें। यदि वह त्याज्य है तो वहा की गीता-कुरान सब छोडिए। यहां आपको वे विशाल भवन नही मिलेंगे, यहा न मकान है, न बडा मैदान। झोपडी मे रह कर काम करना अच्छा है। महल मे झण्डे की सलामी बुरी है। जो विद्यार्थी आगे आना चाहते है, उन्हे स्पष्ट कहना चाहिए। विद्यालयो की दुरुस्ती करना मेरा काम नही है, उसके लिए मुझे वक्त नही। यदि हमारे विद्यालय खुलेंगे तो विद्या अपने-आप पवित्र हो जायगी। मैं यहा आ गया हू, इसका कारण यह है कि बाबू भगवानदास और बाबू शिवप्रसाद के दिलो मे असहयोग की प्रतिष्ठा हो गई है। असहयोग को बढाने के लिए ही इस विद्यापीठ की स्थापना की गई है। असहयोग ही हमारे लिए एकमात्र शास्त्र है। तत्वज्ञान, मजहबी ज्ञान आदि शास्त्र नहीं हैं। यहा वणिक् बुद्धि का काम नही है। उसे हम हटाना चाहते हैं, उच्च करना चाहते हैं। अगर हम आज सेवा करते हैं तो स्वार्थ से, अपनी स्त्री और बच्चो को सुख पहुँचाने की लालसा से करते हैं। हमको राष्ट्र की सेवा करनी चाहिए। राष्ट्र के लिए हम सब काम करेंगे। हमे व्यापार को जुआ नहीं बनाना है। हम हिन्दुस्तान को पुण्यभूमि बनायेंगे, यहा से हर साल ६० करोड रुपये कपडो के लिए विदेश चले जाते हैं। इसके रोकने का यहा तरीका बताया जायगा। सीता (भूमि) की स्थापना तो लंका से लाकर करनी है, पर यदि वस्त्र-हरण को नही रोक सकते तो हमने क्या किया ? भूमि को अपना करना नामुमकिन है, पर वस्त्र नही छिनने देना चाहिए। हम सबको प्रतिज्ञा करनी चाहिए कि विदेशी वस्त्र धारण करना महापाप है। हिन्दुओ और मुसलमानो को यह बात सुनाने मे बडा सुभीता है क्योकि सयम और त्याग दोनो का धर्म है। विदेशी कपडा पहनना पाप है। पहला धर्म चर्खा चलाना है। विद्यालय को चलानेवाले इसे याद रक्खेंगे। हम लोग विद्यार्थियो के जरिये ६० करोड रुपया बचा सकते हैं। इसको बचाइए। विद्यार्थी यही करें। इसी से हमारी आर्थिक शुद्धि होगी।

---

१. सन् १९१९ में मार्शल ला के दौरान, पंजाब मे।

दूसरा कर्त्तव्य अपनी मातृभाषा को विकसित करना है। उसे न लिख-पढ़ सकना शर्म की बात है। जो-कुछ अंग्रेजी में तालीम मिली है, उसे मातृभाषा में हजम कीजिए। हिन्दुओं और मुसलमानों की, सेवा कैसे हो सकती है, सो सीखना है। हमें उर्दू और देवनागरी दोनों लिपियां सीखनी चाहिए। हमें ऐसी हिन्दी चलाना है, जिसमें संस्कृत और उर्दू मिली हो, जिससे हिन्दू-मुसल्मान एक दूसरे के हृदय में प्रवेश कर सके। अंग्रेज कहते है कि यह मेल दिखावा-मात्र है। हिन्दुओं और मुसलमानों का मेल कभी नही हो सकता। यह केवल अपने-अपने मतलब के लिए है। जहां मतलब सिद्ध हुआ कि फिर वही हालत हो जायगी। पर यह व्यर्थ है। यदि हिन्दू और मुसलमान परस्पर रक्षा के लिए कटिबद्ध हैं, तो यह नही हो सकता। गुरु विद्यार्थी को खीच सकता है। बाबू भगवानदास ऐसे गुरु हैं। सारा भारत आपकी विद्वत्ता को जानता है। जिस समय गुजरात मे राष्ट्रीय विद्यालय खुल रहा था उस समय मैंने आपसे प्रार्थना भी की थी कि आप काशी छोड़कर थोड़े दिन के लिए गुजरात आ जायँ। वह आपके आचार्य है। मैं उनसे दीनता-पूर्वक प्रार्थना ही कर सकता हूं। कृपलानी तो हमारे छोटे भाई है। उनको तो मै हुक्म देने का भी अधिकार रखता हूं। अन्य महाशय को, जिनका नाम बाबू भगवानदास ने लिया है, मैं स्वयं नही जानता। इस कारण यहां मै प्रार्थना करता हूं कि काशी अब ऐसी होनी चाहिए कि सारे भारत की इस पर दृष्टि हो। हमे मालवीय जी का मन जीतना चाहिए। मालवीय जी ने मुझसे कहा है कि अगर उनके चित्त में विश्वास हो जाय कि ऐसा करना ठीक है तो वह हिन्दू विश्वविद्यालय छोड़ देंगे। उनका कहना है कि उसे छोड़ने से हिन्दुस्तान की हानि है। इस विद्यालय को आप लोग सुशोभित कीजिए। इससे यह यज्ञ-कार्य जल्दी ही यशस्वी हो कर चलने लगेगा। हमारे माननीय भाई मालवीय जी भी तब हमारी बात समझ जायँगे। अगर यहां हिन्दू-मुसलमान मिलकर काम करेंगे तो आपकी मार्फत हमें स्वराज्य मिल जायगा। इसी अभिलाषा से मैंने शिवप्रसाद और जवाहरलाल से कहा था कि इस कार्य का आरम्भ मेरे हाथ से कराइए। मेरी क्या अपेक्षा है, मैंने आपको बता दी। प्रभु से मेरी प्रार्थना है दिन-प्रति-दिन इस विद्यापीठ की वृद्धि हो और यह विद्यालय इस राक्षसी सल्तनत को मिटाने या इसे दुरुस्त करने में हिस्सा ले।

—हिन्दी। काशी, १०।२।१९२१। 'आज' ११।२।१९२१।]

४६. भाषण : लखनऊ की खिलाफत-सभा में

कल खिलाफत सभा में गांधी जी ने उर्दू में बोलते हुए कहाकि "अक्तूवर तक शेष सात महीनो में वह खिलाफत प्रश्न का निपटारा कर लेंगे तथा स्वराज्य प्राप्त कर लेंगे। वह तलवार तो नहीं खींच सकते किन्तु स्वराज्य प्राप्त कर लेने पर तलवार खींचने की शक्ति उत्पन्न कर सकते हैं। पहले वाइसराय उन पर हँसा करते थे कि किन्तु अब वह उनके साथ सहयोग करना चाहते हैं।" गाधीजी ने लोगो को ब्रिटिश माल का वहिष्कार करने तथा विदेशी कपडों को त्यागने की सलाह दी और वताया कि इसके जरिए वे दूसरे ही दिन स्वराज्य प्राप्त कर सकते हैं।[1]

वकीलो और विद्यार्थियो के सम्बन्ध मे हमे जो कुछ करना जरूरी था उतना हम कर चुके। उस दिशा मे अव कोई विशेष प्रयत्न करने की जरूरत नही रही। हम अपनी आवाज जहा तक पहुँचा सके हैं, उससे मैं सन्तुष्ट हू। जिन्हें हम अपनी वात मानने के लिए राजी नही कर सके है, वे अपनी इच्छा से सहयोग करना चाहे तो करें। वकालत करनेवाले वकीलो और सरकारी विद्यालयो मे जानेवाले विद्यार्थियो की कोई प्रतिष्ठा नही रही। उनमे से अधिकाश स्वय स्वीकार करते हैं कि वे गलत काम कर रहे हैं। हमारे लिए यही काफी है। वकीलो तथा सरकारी स्कूलो मे पढाई जारी रखनेवाले छात्रो ने जिस हद तक अपनी प्रतिष्ठा खो दी है, उसी हद तक सरकार की भी प्रतिष्ठा कम हो गई है।

—लखनऊ, २६।२।१९२१। अंग्रेजी और गुजराती से। अमृत वाजार पत्रिका, २।३।१९२१। न० जी० १७।४।१९२१। सं० गा० वा०, खण्ड १९ पृ० ३९१।]

४७. भाषण : मानपत्र के उत्तर में, इलाहाबाद में[3]

आप लोगो ने जिस उत्साह से मेरा स्वागत किया है उसके वास्ते आप लोगो को अनेक धन्यवाद। मैं आज के पहले इतनी वार प्रयाग आया हू कि मुझे यह

१. यह अनुच्छेद 'अमृत वाजार पत्रिका' से लिया गया है।
२. यह अनुच्छेद 'नवजीवन' की गुजराती रिपोर्ट से लिया गया है।
३. यह मानपत्र इलाहाबाद जिला-सम्मेलन मे नागरिकों की ओर से भेंट किया गया था जिसे पं० मोतीलाल नेहरू ने पढ़ा था और मौ० मुहम्मद अली ने

अपना घर ही सा प्रतीत होता है। मेरी हाल की यात्राओं में मुझे कई नगरपालिकाओं की ओर से अभिनन्दन पत्र दिये गये हैं। अभिनन्दन-पत्र देने का अर्थ यही होता है कि वे असहयोग आन्दोलन से सहमत है और इस स्वराज्य-संग्राम में हमारे साथ हैं। आपकी नगरपालिका के सदस्यों की राय में मेरे राजनीतिज्ञ होने के कारण नगरपालिका-द्वारा मुझे अभिनन्दनपत्र दिया जाना उचित न होगा। एक प्रकार से वे ठीक कहते है, परतु उनके इन विचारों में आमूल परिवर्तन की आवश्यकता है। मेरी इच्छा है कि नगरपालिकाएं अपनी शक्ति को समझें और केवल वँधे-वँधाये कामों को पूरा करने की मशीनें न वनी रहें। परन्तु लोगों को यह विल्कुल नही सोचना चाहिए कि उन्होने मेरे प्रति किसी वैमनस्य के कारण अभिनन्दनपत्र नही दिया। अभी तक अभिनन्दनपत्र, जो मुझे या मौ० शौकत अली को दिये गये हैं, वे प्रयाग की अपेक्षा छोटी नगरपालिकाओं द्वारा दिये गये है। वड़ी नगरपालिकाओं को एकाएक अपना ढंग वदलना कठिन हो जाता है।

वहरहाल, हम लोगों को इस मामले पर ध्यान नहीं देना चाहिए और कांग्रेस-द्वारा निर्धारित काम में जुटे रहना चाहिए। हम लोगों को इसी वर्ष स्वराज्य लेना और खिलाफत और पंजाव के प्रति किये गये अन्याय का परिमार्जन कराना है। परन्तु यह केवल कान्फ्रेंसों, वक्तृताओं, कविताओं और अभिनन्दनपत्रों से नही होगा। यदि इस प्रकार लक्ष्य प्राप्त करना सम्भव होता तो यह काम केवल कांग्रेस के द्वारा ही हो जाता। एक समय ऐसा भी था कि साल में एक वार कांग्रेस और कान्फ्रेन्स के द्वारा कुछ माँगें सरकार के सामने पेश कर दी जाती थी और हम लोग उतने से ही सन्तुष्ट हो जाते थे। यदि साल भर में सरकार ने उसको पूरा न किया तो अगले साल के वार्पिक अधिवेशन में फिर विरोध-सूचक प्रस्ताव पास कर दिये जाते थे और मामला वही खत्म हो जाता था। परन्तु अव समय वदल गया है और लोगों को अपने ही प्रयत्नों से अपने उद्देश्य पूरे करने हैं। कांग्रेस ने एक व्यावहारिक कार्यक्रम उनके सामने रख दिया है और अव जनता को अपने उद्देश्य पूरे करने के लिए उस पर अमल करना है। यदि हम लोग कान्फ्रेंसों, कविताओं

सभा की अध्यक्षता की थी। सम्मेलन में प्रतिनिधियों और किसानों के अतिरिक्त कस्तूरवा, लाला लाजपत राय, मौ० शौकत अली, पं० रामभजदत्त चौधरी, मौ० हसरत मोहानी, डा० सैफुद्दीन किचलु, स्वामी श्रद्धानन्द, पुरुषोत्तमदास टण्डन, सरोजिनी नायडू और जवाहरलाल नेहरू उपस्थित थे।

और अभिनन्दन-पत्रो इत्यादि को छोड दें तो कोई हानि नहीं होगी, परन्तु यदि हम लोग कांग्रेस के कहने पर नही चलेंगे तो कदापि स्वराज्य नही मिलेगा।

अपने अभिनन्दन-पत्र मे आप लोगो ने यह भी कहा है कि इलाहाबाद का एक नाम और है फकीराबाद। मेरी हार्दिक इच्छा यही है कि यह नगर पूर्ण रूप से उस नाम के योग्य हो। इस आन्दोलन को सफलीभूत बनाने के वास्ते फकीरो यानी धार्मिक मनुष्यो की आवश्यकता है और मै आशा करता हू कि इसमे आपका नगर अगुवाई करेगा।

काग्रेस चाहती है कि आप लोग तीन काम करें अर्थात् काग्रेस के १ करोड सदस्य बनाना, तिलक स्वराज्य कोष के वास्ते १ करोड रुपया इकट्ठा करना, और भारत के घरो मे २० लाख चर्खे चलवाना। मैं यह जानना चाहता हू कि आप लोगो ने इसके लिए कितना काम किया है। पहले अश के सम्बन्ध मे मुझे यह जानकर प्रसन्नता हुई है कि जितने लोग यहा उपस्थित हैं वे सभी काग्रेस के सदस्य हैं, परन्तु मैं चाहता हू कि आप लोग और अधिक कार्य करें और अपने नगर की जन-सख्या के अनुसार अश चन्दे मे इकट्ठा करके दें।[1]

मुझे यह जानकर खेद हुआ कि प्रयाग से तिलक स्वराज्य-कोष मे अभी काफी चन्दा जमा नही हुआ है। यदि प्रयाग गरीब है तो मैं यह नही चाहता कि सब लोग रुपये-ही-रुपये दें। यदि प्रान्त का हर एक आदमी दो-दो पैसे भी दे तो इलाहाबाद का हिस्सा काफी हद तक पूरा हो जायगा। प्रयाग तीर्थ-स्थान है जहा बहुत से तीर्थयात्री आते हैं। आप लोग उनकी सहायतार्थ सेवा-समिति बनाइए और उनकी सहायता करने के बाद उनसे तिलक स्वराज्य-कोष के वास्ते चन्दा माँगिए। मुझे पूरा विश्वास है कि यदि इस प्रकार मेहनत की जाय तो आप लोग सुगमता से यदि अधिक नही तो अपने हिस्से की रकम इकट्ठी कर ही लेंगे।

फिर २० लाख चर्खे चालू कराने हैं। मैं यह नही चाहता कि आप लोग चर्खो को अपने घरो मे रखकर इनकी सिर्फ पूजा करें, आप लोगो को मौ० मुहम्मद अली के शब्दो मे उनसे वही काम लेना चाहिए जो अग्रेजी सरकार मशीनगनो से लेती है। यदि २० लाख चर्खे कम-से-कम ४ घण्टे रोज चलें तो मुझे विश्वास है

---

१. पायनियर के १२।५।१९२१ के अंक में प्रकाशित विवरण के अनुसार उन्होंने जानना चाहा कि इलाहाबाद जिले और नगर के कितने लोग कांग्रेस में शामिल हो चुके हैं और उन्होंने अनुरोध किया कि श्रोताओ मे ऐसे व्यक्ति सम्मेलन की कार्रवाई समाप्त होने से पहले अपने नाम भेज दें।

कि थोड़े ही समय में किसी भी हिन्दुस्तानी को देश का बना कपड़ा पहनने में लज्जा नहीं आयेगी।

अपने हाल के दौरे में मौ० शौकत अली और मैंने हिन्दू-मुस्लिम एकता की आवश्यकता देश को वतलाई और यदि इतने पर भी देश ने इस आवश्यकता को न समझा हो तो चाहे कितना भी प्रचार किया जाय, लोग इसको नहीं समझ सकेंगे। हम लोगों ने यह वात भी अच्छी तरह समझा दी है कि हमारा कार्यक्रम पूर्ण रूप से अहिंसक है। मुझे देखकर खेद हुआ है कि कुछ किसान लोग इस वात को भूल जाते हैं। मैं इसकी निन्दा करता हूँ। आप लोगों को पूरी तरह समझ लेना चाहिए कि हमें अपने दुश्मनों के प्रति भी सख्त भाषा का प्रयोग नहीं करना चाहिए। हिंसा का सहारा लेने के बदले आप लोगों को कष्ट-सहन और आत्म-त्याग की भावना पैदा करने के लिए प्रस्तुत रहना चाहिए और यदि आप लोगों में से कुछ को जेलखाने भी भेज दिया जाय तो कोपित होकर कोई जुलूस वगैरह नहीं निकालना चाहिए, क्योंकि जब आप लोग जेलखाने जाने के लिए तैयार हो जायँगे तभी स्वराज्य का मार्ग सुगम होगा। मालेगाँव के निवासियों ने वहुत ही वुरा किया है और आप लोगों को उससे सवक लेना चाहिए ताकि फिर कभी वैसा न होने पावे। यदि मैं या मौ० शौकतअली या मुहम्मद अली या और कोई नेता गिरफ्तार किये और जेलखाने भेजे जायँ तो भी आप लोगों को किसी थानेदार की हत्या न करनी चाहिए, चाहे वह हमारे कुछ आदमियों को जान से भी मार दे। जब आप लोगों में इस प्रकार की भावना आ जायगी और आपके हृदय से जेल का, जो मेरे लेखे कार्यकर्ता का विश्राम-स्थल है, भय निकल जायगा, तव स्वराज्य वहुत समीप आ जायागा।

मुझे नही मालूम कि सरकार मौ० मुहम्मद अली को जेल में वन्द करने के लिए इतनी उत्सुक क्यों है? मैं भी तो अक्षरशः वही कहता हूँ जो मौलाना कहते हैं। मौ० मुहम्मद अली का अपराध यह वतलाया जाता है कि उन्होने यह कहा है कि यदि अफगान लोग भारत पर आक्रमण करेंगे तो वह उनके पास यह सन्देशा भेजेंगे कि हिन्दुस्तानी लोग धन या जन से ब्रिटिश सरकार की सहायता नहीं करेंगे। मैं उनके इस कथन का अक्षरशः समर्थन करता हूँ। मैं अपने हिन्दू भाइयों से कहता हूँ कि वे इस अफगानी हौए से न डरें क्योंकि कोई भी धर्म यह नही सिखाता कि उसके अनुयायी कायर हों। मैं जानता हूँ कि पठान लोग वड़े शक्तिशाली हैं परन्तु कोई पठान मुझे गोमांस खाने या अपने धर्म के विरुद्ध काम करने को वाध्य नही कर सकता। वर्तमान सरकार से हमारा विश्वास उठ गया है और जवतक खिलाफत और पंजाव के विषय में यह सरकार न्याय नही करेगी तवतक उसे

हिन्दुस्तानियो से अफगानिस्तान या और किसी शक्ति के मुकाबले सहायता की आशा नही करनी चाहिए। जिस सरकार के विरुद्ध हमने आन्दोलन उठाया है वह जबतक अपने को सुधार न ले तबतक हम लोगो से सहायता की आशा किस प्रकार कर सकती है? और जिन लोगो ने हम लोगो को पेट के बल रेंगाया है वे लोग कैसी ही कठिनाई क्यो न पडे हममे सहयोग की आशा नही कर सकते। परन्तु हम लोगो को हर हालत मे अहिंसक और शान्तिप्रिय रहना चाहिए। हम लोगो को कितना भी भडकाया जाय, हमको किसी की हत्या नही करनी चाहिए, क्योकि हत्या करने से हम स्वराज्य पाने का हक खो देंगे।

अन्त मे मुझे आपमे यह कहना है कि इस समय देश के हिन्दुओ और मुसलमानो दोनो का केवल एक धर्म है—पजाब और खिलाफत के मामले मे न्याय हासिल करना और देश को गुलामी से बचाना। यदि आपको अपने देश की सेवा करनी है तो आपको काग्रेम के नेतृत्व मे चलना चाहिए और उसके आदेशो का पालन करना चाहिए, चाहे वे हमारे महत् उद्देश्य को देखते हुए कितने ही महत्वहीन क्यो न लगे।

अन्त मे भगवान से मेरी यह प्रार्थना है कि वह हम लोगो को काग्रेस के नेतृत्व मे चलने की शक्ति दे।[1]

—हिन्दी। इलाहाबाद, १०।५।१९२१। 'आज', १२।५।१९२१। सं० गां० वा० खण्ड २० पृ० ८१-८४।]

४८. सन्देश : अलीगढ़ की जनता को

१६ जुलाई, १९२१

महात्मा गाधी ने इस आशय का एक सन्देश भेजा है कि अलीगढ़-काण्ड से उनको मार्मिक व्यथा हुई है। उन्होंने आशा व्यक्त की है कि मजिल के इतने निकट पहुँचने पर अब अलीगढ की जनता उत्तेजना दिखा कर या हिंसा का सहारा लेकर या असहयोगियों अथवा अन्य किन्ही लोगो द्वारा की गई हिंसा की जिम्मेदारी लेने

---

१. इस भाषण का मिलान अमृत बाजार पत्रिका १३।५।१९२१ में प्रकाशित विवरण से भी किया गया है।

से इन्कार करके कोई कमजोरी नहीं दिखायेगी और इस तरह घड़ी की सुई पीछे की ओर घुमाने की कोशिश नहीं करेगी।[1]

—१६।७।१९२१। अमृत बाजार पत्रिका, १७।७।१९२१।]

४९. भाषण : मुरादाबाद की सार्वजनिक सभा में

सज्जनो,

संयुक्त-प्रान्त में सरकार की ओर से जगह-जगह जो अमन सभाएं स्थापित की जा रही है, मेरी समझ में अब तक यह नही आया कि उनका उद्देश्य क्या है? यदि इनका उद्देश्य वास्तव में अमन कायम रखना है, तो ये सभाएं हमारे साथ मिल कर क्यों काम नहीं करती? हमारे असहयोग आन्दोलन का वास्तविक उद्देश्य भी तो अमन कायम रखते हुए अपने अभीष्ट स्वराज्य को प्राप्त करना है। जब दोनों का अभिप्राय एक है तब फिर उक्त सभाओं के अलग अस्तित्व की क्या आवश्यकता रह जाती है? इसको आपही विचार कर स्थिर करें। किन्तु हाँ, यदि यह अमन सभा के नाम से लोगों में बदअमनी फैलाती हो, लोगों को अनुचित तैश दिलाती हो और लोग झगड़ा-फसाद करने को उद्यत होते हों, और ये सभाएँ अपने नाम का दुरुपयोग करके कलंकित होती हो, तो मै आपसे कहुँगा कि ऐसी अमन सभाओं को दूर से ही नमस्कार कीजिए। मृगतृष्णा के पीछे मत दौड़िए, जिससे पीछे पछताना न पड़े। कहना मेरा काम है, इतने पर भी जो सज्जन न समझे वे स्वतन्त्र है। वे अपनी इच्छानुसार काम करें।

[आगे गांधीजी ने विदेशी वस्त्रों का बहिष्कार तथा स्वदेशी पहनने पर जोर दिया और कहा]:

यद्यपि खादी अभी मँहगे दामों में मिलेगी तो भी मलमल के मुकाबले उसमें किफायत ही रहेगी, क्योंकि जहां एक वर्ष में मलमल के आप आठ कुरते फाड़ेगे वहां खादी के चार कुरते भी मुश्किल से फटेंगे। कई बरस से अनवरत खादी पहनने के कारण यह मेरा पक्का अनुभव है। यदि आप लोगों ने मेरे कथनानुसार सच्चे मन से स्वदेशी वस्त्र अपनाया, चर्खा काता, विदेशी कपड़ों को शव पर पड़े

---

१. यह सन्देश उर्दू और हिन्दी दोनों में प्रचारित किया गया था और स्थानीय नेताओं ने अलीगढ़ काण्ड की सचाई का पता लगाने की बड़ी मुस्तैदी से कोशिश की थी।

वस्त्र की नाई त्याग दिया तो दयामय जगदीश कभी हमारे प्रति अप्रसन्न न रह सकेंगे, शीघ्र ही उनका आसन चलित होगा, और स्वराज्य प्राप्त कराने मे वह हमारे सहायक होंगे।

—हिन्दी। मुरादाबाद, ६।८।१९२१। 'आज', १०।८।१९२१।]

५०. भाषण : लखनऊ में

[गाधी जी ने अमीनुद्दौला पार्क लखनऊ की विराट सार्वजनिक सभा मे, जिसमे एक लाख के लगभग श्रोता थे, यह भाषण ७।८।१९२१ को दिया था। भाषण की पूरी रिपोर्ट उपलब्ध नही है। 'आज' की रिपोर्ट से निम्नलिखित अवतरण ले लिये गये हैं।—सम्पा०]

७ अगस्त, १९२१

महात्मा जी ने अपने भाषण में अहिंसात्मक असहयोग तथा हिन्दू-मुसलमानो की एकता पर अधिक जोर दिया। उन्होंने कहा कि मै आप लोगो से इतना ही कहता हूं कि किसी प्रकार का असन्तोष तथा उद्दण्डता हम लोगो के मन्तव्य में बाधक होगी। विदेशी वस्त्रो का बहिष्कार ही खिलाफत की बुराइयो को हटाने तथा अंकारा[1] की मदद के लिए एक मात्र उपाय है। आप लोग सयुक्त प्रान्त की सरकार की ज्यादतियों को देखिए। यह सूबा इस दमन-नीति में अन्य सूबो से बढा-चढ़ा है। किन्तु फिर भी मैं शान्तिपूर्वक रहने के लिए ही आप लोगो से कहूंगा। यदि आप लोग पचास हजार ऐसे काम करने वालो की एक फौज तैयार कर लें जो स्वतन्त्रता की रक्षा का फाटक बनने को तैयार रहें तो मैं आशा करता हूं कि कोई फौज इसे न हरा सकेगी और तीन महीने के अन्त मे या तो यह सरकार को सुधार देगी या समाप्त कर देगी। मेरा फिर से यही कहना है कि हिन्दू-मुसलमानो की एकता पर बड़ा ध्यान रखना चाहिए। दोनों से मेरा यही कहना है कि एक-दूसरे के साथ सहानुभूति रक्खें। आनेवाली बकरीद पर कोई दंगा न होने पाये। हिन्दुओं से मेरा यह कहना है कि यदि वे गौवो को बचाना चाहते हैं तो उन्हें चाहिए कि बिना किसी विचार या लालच के खिलाफत के मामले में मुसलमानों की मदद करें।

—हिन्दी। लखनऊ, ७।८।१९२१। आज, १०।८।१९२१।]

---

१. उस समय तुर्की की राजधानी।

५१. भाषण : कानपुर में

[६ अगस्त १९२१ को गांधी जी ने कानपुर में कई भाषण किये थे। महिलाओं की एक सभा में स्वदेशी पर तथा मारवाड़ी विद्यालय में आयोजित कपड़े के व्यापारियों की सभा में विदेशी वस्त्र-बहिष्कार पर उनका भाषण हुआ था। खेद है, इनका विवरण सरकारी अभिलेखागार में भी नहीं है। जिस भाषण की रिपोर्ट यहां दी जा रही है वह कानपुर के नागरिकों द्वारा प्रस्तुत अभिनन्दनपत्र के उत्तर में दिया गया था। यह भी पूरा प्राप्त नहीं है।—सम्पा०]

महात्मा जी ने आरम्भ में सबको धन्यवाद देते हुए कहा कि आप लोगों के अभिनन्दन पत्र में त्रुटि है। आप लोगों ने मौ० मुहम्मद अली का नाम इसमें नहीं लिया, इससे ऐक्य में फर्क पड़ता है। इस समय हिन्दू-मुस्लिम ऐक्य की परम आवश्यकता है। इसी ऐक्य पर खिलाफत तथा पंजाब के अन्यायों का निपटारा और अन्त में स्वराज्य की सिद्धि निर्भर है। गोरक्षा का प्रश्न भी खिलाफत पर ही निर्भर है। हिन्दुओं को बिना किसी बदले के खिलाफत के वास्ते आत्मत्याग करने के लिए प्रस्तुत रहना चाहिए। मैं नित्य प्रातःकाल गौओं की रक्षा के लिए प्रार्थना करता हूँ। गोवध हिन्दुओं के पाप का फल है। और उन्हीं पापों के कारण हमारे साथ हमारे भाइयों की सहानुभूति नहीं है। हम लोगों को अपने पापों का प्रायश्चित्त करना चाहिए। हिन्दू-मुस्लिम ऐक्य की अत्यन्त आवश्यकता है ताकि खिलाफत प्रश्न का सन्तोषजनक निर्णय हो। खिलाफत ही हिन्दू-मुसलमानों को एक करेगी।

इसके साथ-साथ शान्ति और अहिंसा की भी बड़ी आवश्यकता है। हम लोगों को अपने क्रोध को जीतना चाहिए और ईश्वर से प्रार्थना करनी चाहिए कि हम लोगों में से क्रोध का लोप हो जाय।

स्वदेशी के बिना स्वराज्य नहीं मिल सकता। महिलाओं का धर्म है कि वे खादी ही पहिनें। उनको महीन वस्त्रों का त्याग कर देना चाहिए। मुझे पूर्ण आशा है कि पहिली जनवरी तक स्वराज्य अवश्य मिलेगा। यदि उस समय तक स्वराज्य न मिला तो जीवन भारी हो जायगा। हम लोग स्वावलम्बन भूल गये हैं। हम लोगों को यह सीखना है कि मरना किस तरह चाहिए। यदि गोली चले तो उसे हमें अपनी छाती पर रोकना चाहिए न कि उसे पीठ देनी चाहिए। यदि अंग्रेज हमारे देश में रहना चाहते हैं तो उन्हें सहयोगी तथा सेवकों की ही तरह रहना सीखना पड़ेगा। वे अब मालिक की हैसियत से यहाँ नहीं रह सकते। महिलाओं को विदेशी वस्त्र का बहिष्कार तथा चर्खा चलाना अपना धर्म समझना चाहिए

ताकि यदि मैं जेल मे रहूँ या फाँसी पर चढ़ा दिया जाऊँ तब भी स्वराज्य अवश्य मिले।

—हिन्दी। कानपुर, ९।८।१९२१। आज, ११।८।१९२१, सं० गा० वा०, खण्ड २०, पृ० ५००-०१।]

५२. स्वदेशी का सवाल

['आज' के प्रतिनिधि की भेट]

प्रश्न—यदि स्वदेशी वस्त्र का मूल्य बढता जाय और विदेशी का घटता जाय तो उस हालत मे हमारा धर्म क्या है?

उत्तर—स्वदेशी व्रत के माने यही है कि यदि विदेशी मुफ्त भी मिले तो हम नही ले सकते। जैसे रोटी बहुत मँहगी भी हो तो भी हिन्दू गोमास नही खा सकता।

प्रश्न—यदि विदेशी सूत से भारत मे कपडा तैयार किया जाय तो वह विदेशी होगा कि स्वदेशी?

उत्तर—वह विदेशी है।

प्रश्न—यदि किसी मिल मे धन भारतीयो का लगा हो परन्तु उसके मैनेजर और उसका प्रबन्ध विदेशियो के हाथ मे हो तो वह स्वदेशी कही जायगी या विदेशी?

उत्तर—वह विदेशी कही जायगी। स्वदेशी वही है जिसमे धन और प्रबन्ध दोनो भारतीयो का हो। स्वदेशी मिलो के बने कपडे गरीबो के वास्ते छोड दिये जाने चाहिए। काग्रेस के कार्यकर्ताओ को शुद्ध खादी पहननी चाहिए।

पहली अगस्त को बनारस की सभा में पुलिस की तरफ से जो ज्यादती हुई थी उसके सम्बन्ध मे महात्मा जी ने कहा कि उनको क्षमा करना चाहिए, नहीं तो हम स्वराज्य के योग्य नहीं हैं।

—हिन्दी। कानपुर, ९।८।१९२१। 'आज', १०।८।१९२१।]

५३. भाषण : इलाहाबाद की सभा में[1]

सयुक्त प्रान्त मे इस समय जो दमन हो रहा है मैं उसके बारे मे कुछ कहना

---

१. यह सभा स्वराज्य-सभा के मैदान में शाम को हुई थी। १०,००० से अधिक

चाहता था, किन्तु अब उसके विषय में कुछ कहे बिना केवल उन साथी कार्यकर्त्ताओं को बधाई देना चाहता हूं, जो जेल गये हैं। आपको यह समझ लेना चाहिए कि यदि आप में से कोई जेल चला जाय तो भी स्वराज्य के कार्य में ढील नहीं होनी चाहिए। जबतक आप ऐसा अनुभव नहीं करते तबतक आप न तो स्वराज्य के योग्य है और न जेल के ही। यदि आप इसी वर्ष स्वराज्य प्राप्त करना चाहते है तो आपको जेल और मृत्यु का भय छोड़ देना चाहिए। बल्कि आपको तो यह सोचना चाहिए कि निर्दोष व्यक्ति की हर जेल-यात्रा और मृत्यु स्वराज्य को अधिकाधिक निकट ले आती है। जबतक आप ऐसा अनुभव नही करते तबतक मैं समझूंगा कि आप अहिंसा और असहयोग के अर्थ को भलीभांति नहीं समझ सके हैं। असहयोग का अर्थ निष्क्रिय बैठे रहना नही है। इसका अर्थ है अपनी शक्ति को संगठित करना, क्योंकि असहयोग के लिए महान शक्ति की आवश्यकता है। मैं ब्रिटिश झण्डे यूनियन जैक के सामने, जिसके सामने फौजी कानून के दिनों में पंजाब के बालकों को अपना सिर झुकाना पड़ता था, तबतक सिर नही झुकाऊँगा, जबतक सरकार अपने पिछले अत्याचारों के लिए पश्चात्ताप प्रकट करके क्षमा नही मांगती।

छोटे-छोटे बालक जेल भेजे जा रहे है और तिस पर भी यह घोषित किया जा रहा है कि संयुक्त प्रान्त में कहीं कोई दमन नही हो रहा है। संयुक्तप्रान्त की सरकार पंजाब-सरकार से कही अधिक चालाक है। उसने बड़े-बड़े नेताओं को नही छुआ, क्योंकि उसे डर था कि उनकी गिरफ्तारी से प्रान्त में अशान्ति फैल जायगी, किन्तु यह छोटे बालकों को कालकोठरी में बन्द करने की सजा दे रही है। यह दमन का भयानक तरीका है। दमन की प्रणाली में लोगों को भयभीत करना तथा उन्हें नैतिक रूप से गिरा देना भी आता है। किसानों पर भी इसी प्रकार का दबाव डाला जा रहा है। उन्हें अमन-सभा का सदस्य बनने तथा असहयोग आन्दोलन से अलग रहने को मजबूर किया जा रहा है। इसके लिए मै उच्च अधिकारियों को दोषी ठहराने को तैयार नही, क्योंकि गवर्नर और उनके सहकारी यह बात जानते है या नही, इसका मुझे अभी तक निश्चय नही है। मै तो अब भी महमूदाबाद के राजा और श्री चिन्तामणि[1] तथा अन्य लोगों का सम्मान करता हूं। किन्तु

लोग शामिल थे और सभा की अध्यक्षता पं० मोतीलाल नेहरू ने की थी। इस सभा में मौ० मुहम्मदअली और स्टोक्स ने भी भाषण दिये थे।

१. उस समय अहमदाबाद के राजा तथा श्री चिन्तामणि दोनों सरकार के मिनिस्टर थे।

उनके हाथ भी पाप से पंकिल हो गये हैं, भले ही उन्होंने वे पाप जानबूझ कर या स्वेच्छा से न किये हो। अव वे सरकारी सदस्य वन गये है, इसलिए उनके दिमाग वदल गये हैं। उन्होंने घोषित किया है कि स्वय असहयोगी ही अपने विरोधियो के खिलाफ हिंसा का प्रयोग कर रहे हैं। मैं इस आरोप से एकदम इन्कार नही करता, और इसीलिए मैंने अलीगढ तथा मालेगाँव की घटनाओ पर पश्चात्ताप व्यक्त किया है और हिंसक कार्यो की निन्दा की है। फिर भी मेरा विचार है कि कुल मिलाकर असहयोग का कार्य शान्तिपूर्ण ढग से हो रहा है।

मैं चाहता हू कि शान्ति की यह भावना प्रगति करे। सरकार आप लोगो को जेल मे डाले या गोली से मारे तव भी आपको सरकारी अधिकारियो को वुरा-भला नही कहना चाहिए और न उनका सामाजिक रूप से वहिष्कार ही करना चाहिए। जव आप अपने ऊपर इतना नियन्त्रण प्राप्त कर लेंगे तव समझिए कि स्वराज्य आपका है और तभी पजाव और खिलाफत के सम्वन्ध मे आप न्याय प्राप्त कर सकेंगे। किन्तु ऐसा तवतक सम्भव नही जवतक कि हिन्दू और मुसलमान एक नही हो जाते। वकरीद आ रही है। यदि हिन्दू गाय को वचाना चाहते हैं तो वे खिलाफत की पवित्र अग्नि मे अपनी वलि दे दें, किन्तु वे सौदेवाजी की भावना से ऐसा न करें। वे मुसलमान भाइयो से गोवध न करने का आग्रह भी न करें।

स्वदेशी की वकालत करने का अर्थ है प्रतिवर्ष ६० करोड रुपए की वचत, भुखमरी से पीडित अपने देशवासियो के लिए भोजन तथा अपनी स्त्रियो की पवित्रता की रक्षा। किन्तु इन सवसे वढ कर इसका उद्देश्य है सविनय अवज्ञा के लिए तैयारी करना। यदि आप स्वदेशी के मुद्दे को सितम्वर तक सफल वना देते हैं तो मैं समझूगा कि आप सरकार को अन्तिम चेतावनी देने के लिए पर्याप्त समर्थ हो चुके हैं। इसके अतिरिक्त इसका अर्थ दुनिया को यह वतला देना भी होगा कि भारत ने अपनी शक्ति को सगठित कर लिया है। मैं चाहता हू कि आप अपने विदेशी वस्त्रो को जला दें। यदि आप स्मरना[1] की सहायता करना चाहते हैं तो आप अपने उतारे कपडे न भेज कर वहा नकद और नये कपडे भेजें। किन्तु यदि आप अपने काम मे लाये हुए कपडे ही भेजना चाहते है तो भी मैं आपत्ति नही करूगा। किन्तु आप को तो अपने सभी विदेशी वस्त्रो का त्याग करना ही होगा। आप अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटी के निर्णयानुसार काम करें और कर्घे तथा चर्खे को अपनायें। अर्थात् आपको उन कपडो का आयात नहीं करना चाहिए,

---

१. तुर्की।

चाहे आपको अर्ध-नग्न ही क्यों न रहना पड़े। इससे आप पर स्वदेशी वस्त्रों का नाम लेकर विदेशी वस्त्र थोपने का खतरा मिट जायगा।

अव मैं यहां एकत्र विदेशी वस्त्रों के ढेर में आग लगाने जा रहा हूं। इसमें किसी के भी प्रति दुर्भावना की कोई वात मेरे मन में नही है। प्रेम, अहिसा और शान्ति मेरा धर्म है। अन्त में मैं आशा करता हूं कि पुरुषों की अपेक्षा महिलाएं इस दिशा में अधिक कार्य करेगी इसलिए मैं उनसे अपील करता हूं कि वे इस कार्य में हाथ वटायें।'

—हिन्दी। इलाहाबाद, १०।८।१९२१। अंग्रेजी से। 'लीडर', १२।८।१९२१। सं० गां० वां०, खण्ड २० पृ० ५०२-०४।]

५४. भाषण : मथुरा में

[५।११।१९२१ को दिल्ली राजनीतिक सम्मेलन का उद्घाटन करते हुए गांधी जी ने यह भाषण किया था। पं० मोतीलाल नेहरू सम्मेलन के अध्यक्ष थे।—सम्पा०]

५।११।१९२१

अक्तूवर खतम होते-होते स्वराज्य प्राप्त कर लेने के प्रश्न पर विचार करते हुए गांधीजी ने कहा कि मैंने यह कभी नहीं कहा था कि मैं अकेले ही स्वराज्य-प्राप्ति के अनुकूल परिस्थिति पैदा कर सकता हूँ। जिन लोगों ने पिछली वार भारतीय कांग्रेस के प्रतिनिधि की हैसियत से कांग्रेस द्वारा निश्चित किये गये असहयोग के कार्यक्रम को चलाते रहने की स्वयं ही प्रतिज्ञा की थी उन्ही लोगों पर अव यह दायित्व आता है। अव तो इस देश की जनता उन्ही से पूछ सकती है कि उन्होंने अपनी प्रतिज्ञा पूरी क्यों नहीं की? हमारे देश ने अभी तक यह सिद्ध करके नही दिखलाया कि उसमें स्वतन्त्रता को अर्जित कर लेने की सामर्थ्य आ चुकी है। केवल त्याग और अनुशासन का जो सीधा-सादा रास्ता था वह भी तै नही किया जा सका। केवल उसी से स्वराज्य मिल सकता था। अव तो इस देश पर ही निर्भर है कि वर्ष वीतते-वीतते शेष कार्यक्रम को पूरा कर लेने में वह अपनी सारी शक्ति लगा दे। अगर ऐसा करने में उसे सफलता मिल गई तो मैं अपने जान की

२. अपने भाषण के वाद गांधीजी ने विदेशी वस्त्रों के विशाल ढेर की होली जलाई।

वाजी लगाकर यह आश्वासन दे सकता हू कि इस वर्प के अन्त तक हम स्वतन्त्रता हासिल कर लेंगे।

—हिन्दी। ५।११।१९२१। अंग्रेजी। 'हिन्दू', ११।११।१९२१। स० गा० वा० खण्ड २१, पृ० ४१६।]

५५. भेंट : संयुक्तप्रान्त के कांग्रेस नेताओं से

३०।१२।२१

महात्माजी ने कहा .

"अभी सविनय अवज्ञा करने की जरूरत नही है। अभी इतना ही काफी है कि स्वयसेवको मे नाम लिखाकर, फिर चाहे गिरफ्तार हो अथवा नही, अपने जिम्मे सौंपे काम को जारी रक्खें।

स्वराज्य प्राप्त करने के मेरे तरीके मौलाना हसरत मोहनी के तरीको से बिल्कुल भिन्न हैं। अगर मैं अपने को इस लायक समझता तो फौरन पूर्ण स्वाधीनता की घोषणा कर देता। क्योकि ऐसी घोपणा के वाद फिर रेलो, डाकघरो एव तारो तथा ऐसी ही अन्यान्य वस्तुओं का व्यवहार करना पाप होगा। अगर अधिकाश लोग हम लोगो के पक्ष मे आ जायँ तो केवल तीन ही महीने मे पूर्ण स्वाधीनता प्राप्त की जा सकती है।

"अगर सव देशभाई मेरा साथ छोड दें, यहाँ तक कि मेरी पत्नी भी मुझसे अलग हो जाय, तो भी मैं अकेला ही काम करने को तैयार हू।

"सयुक्त प्रान्त के गवर्नर श्री हरकोर्ट वटलर चाहते हैं कि फिर सन् १८५७ की तरह विद्रोह मचे और लोग सरकार की दुहाई देकर पुकार मचाये।

"अच्छा होता कि इलाहावाद मे राष्ट्रीय कोतवाली कायम करने का काम अभी वन्द कर दिया जाता। पर जब यह काम शुरू हो गया है तो इसे जारी रखना ही उचित है।

"मुझे खेद है कि अव तक सयुक्त-प्रान्त मे स्वदेशी का प्रचार जितना चाहिए था उतना नही हुआ है। इससे मैं सन्तुप्ट नही हू।

"काग्रेस के दफ्तरो मे स्वयसेवको की भरती का काम जारी रहना चाहिए। पण्डित मोतीलाल नेहरू चाहते है कि 'इण्डिपेण्डेण्ट' की प्रतिया हिन्दी और उर्दू भाषा मे प्रकाशित की जाय, अत स्वयमेवको को इसके प्रकाशन मे पूरी मदद करनी चाहिए।

"हम लोगों को चोरों एवं डाकुओं के प्रति भी कदापि हिंसा का भाव मन में न लाना चाहिए। अहिंसा ही हम लोगों का एकमात्र व्रत होना चाहिए।

"जबतक हम लोग जेल जाने को तैयार न होंगे, जबतक हम मरने तक के लिए कमर न कसेंगे और क्रोध को वश में नही कर लेंगे, तबतक पंजाब पर किये गये अत्याचार तथा खिलाफत के प्रश्न कदापि हल न हो सकेंगे।

"स्वराज्य का अर्थ यह है कि सेना पर हमारा पूरा अधिकार हो।

"स्वयंसेवकों की सूची समाचारपत्रों में प्रकाशित की जाय और कोतवाली भेजी जाय।

"स्वयंसेवक घूम-फिरकर खादी बेचें। उनकी वर्दी केवल एक मामूली चपरासी की होनी चाहिए। विदेशी कपड़ों की दूकानों पर धरना देने की जरूरत नही। शराब की दूकानो पर धरना जारी रहे।

"राष्ट्रीय स्कूलों को सूत कातने और कपड़े बुनने के कारखानों में परिणत करना चाहिए। इनमें अठारह साल के नीचे की उम्र के लड़के काम करें और स्त्रियां इनकी देखभाल करें।

"अठारह वर्ष से अधिक उम्र वाले जो छात्र एवं शिक्षक स्वयंसेवक बनने से इन्कार करे उन्हें स्कूलों से निकाल दिया जाय।

"जिनकी जायदाद जब्त हो जाय, वे प्रसन्नतापूर्वक उसका त्याग करें, क्योंकि ऐसी अत्याचारी सरकार के राज्य में जायदाद रखना ही पाप है। स्वराज्य मिलते ही फिर से जायदाद लौटा दी जायगी।"

—हिन्दी। इलाहाबाद, ३०।१२।१९२१। 'आज' १।१।१९२२।]

५६. भाषण : बलिया की जिला परिषद् में

१६ अक्तूबर, १९२५

लोगों से शान्त रहने का अनुरोध करने और मानपत्र भेंट करनेवाली संस्थाओ को धन्यवाद देने के बाद श्री गांधीजी ने कहा कि १९२१ में मैं बलिया आना चाहता था, लेकिन मुझे अफसोस है कि मैं न आ सका। तब मैने पण्डित मोतीलाल नेहरु से यहां आकर आप लोगों को तसल्ली देने का अनुरोध किया था। अब चार साल बाद आप लोगों के बीच आकर मैं बहुत खुश हूं। अगर समय की कमी न होती तो मैं आप लोगों के साथ ज्यादा समय तक रहता। एक बात ऐसी है, जिससे मुझे दुःख पहुँचा है, और मैं उसे छिपाना नही चाहता,। बलिया के निवासियों

की शक्ति मे मुझे पूरा विश्वास है, लेकिन साथ ही मैं यह भी मानता हू कि कार्यकर्त्ताओ की सगठन -क्षमता से ही शक्ति को नियन्त्रण मे रखा जा सकता है। चूंकि मैं अव कमजोर और अशक्त हो गया हू और भीड के शोरगुल को नही सह पाता हू, इसलिए मैंने उम्मीद की थी कि इस प्रकार की सभाओ से स्वभावत मुझे जो तकलीफ होती है उसका अवसर नही आयेगा।

आगे वोलते हुए गाधी जी ने कहा कि "बलिया के कार्यकर्त्ताओ ने जो रचनात्मक कार्य किया है, उसे देखकर मुझे वहुत खुशी हुई है और उसके लिए मैं उनको वधाई देता हू। मुझे यह जानकर भी प्रसन्नता हुई है कि यह दोनो कौमे मिल-जुलकर रह रही है। ईश्वर से मेरी यही प्रार्थना है कि आपकी मित्रता की यह टेक पूरी हो और आप दूसरो के लिए इस दिशा मे आदर्श स्थापित कर सके।" हिन्दुस्तान की गरीबी का जिक्र करते हुए महात्मा जी ने पूरे विश्वास के साथ कहा कि "गरीवी दूर करने के लिए चर्खे से बढकर कोई और कारगर उपाय नही है। वहुत-सी स्त्रियो को अपने जीविकोपार्जन के लिए पत्थर तोडने पडते हैं और मैं यह भी जानता हूँ कि कुछ ओवरसियर उनके साथ कैसा सलूक करते हैं। मैं अपने निजी अनुभव से वोल रहा हू। आप लोगो से यही अनुरोध है कि विदेशी वस्त्रो का त्याग करके, चर्खा चलाकर आप भारतीय नारियो को सीता के समान पवित्र वनने मे सहायता दें।' खादी पहनो और चर्खे की शक्ति वढाओ।" लोगो को मादक द्रव्यो, जुए और व्यभिचार से वचने की सलाह देते हुए उन्होंने कहा, "यादव-कुल के नाश का कारण यही था कि वे धर्म का त्याग करके जुए मे लिप्त रहने लगे थे। आपने मुझे याद दिलाया है कि आपकी भूमि वाल्मीकि, गगा और सरयू की भूमि है और आप भारत की सेवा करने को कटिवद्ध हैं। इसमे शक नही कि आपने १९२१ मे जो कुछ भी सम्भव था, किया। लेकिन उन दिनो आपने जो गलतियाँ की है, उनके लिए आपको प्रायश्चित्त करना चाहिए।"

अन्त मे महात्माजी ने देशवन्धु कोष के लिए दान देने की अपील की, और कहा कि उसका उपयोग चर्खे के प्रचारार्थ किया जायगा। उन्होंने भारत के पुनरुद्धार के लिए वास्तविक और ठोस काम करने की आवश्यकता पर जोर दिया।

—हिन्दी। वलिया, १६।१०।१९२५। अग्रेजी से। 'लीडर', २१।१०।१९२५।]

ध्यान करें। आप ईश्वर का नाम लेकर, मुसलमान खुदा का नाम लेकर चर्खा चलायें तो देखेंगे कि इसमें से कैसी शक्ति का निर्माण होता है। कितने ही लोग मूर्ति को पत्थर समझते है परन्तु भावना से क्या नही हो जाता? भावना से पूर्ण होने के कारण ही आज श्री रामदास जी गौड़ मुझे अपने घर श्री राम की मूर्ति दिखाने ले गये थे।

मै देहात का अर्थशास्त्र जानता हूं, इसी से मैं अपने को जुलाहा कहता हूं। मै भंगी-चमार वनता हूं, क्योंकि मैं उनके कष्टों को जानता हूं। मैं चर्खे का दीवाना हूं —लैला-मजनू से भी वढ़कर दीवाना! किसी विद्यार्थी को चर्खे में विश्वास न हो, तो भी वह केवल विद्या के ध्यान से विद्यापीठ में आ सकता है। किन्तु विद्यापीठ किसी सिद्धान्त के लिए ही चलाया जाना चाहिए। ईश्वर इस विद्यापीठ की उन्नति करे।"

महात्मा जी का भाषण समाप्त हो जाने पर श्री भगवानदास जी ने विद्यार्थियों की ओर से महात्मा जी से प्रश्न किया कि आप चर्खे द्वारा देश की उन्नति करना चाहते हैं, क्या इसका यह अर्थ है कि आप इसी को हमारा उपास्यदेव वनाना चाहते हैं?

महात्मा जी ने कहा कि हां, यही उसका ठीक अर्थ है।

श्री भगवानदास जी : यदि देश की उन्नति का और भी कोई उपाय हो तो उसका उपदेश देकर कृतार्थ कीजिए। प्रत्येक विद्यापीठ का कोई विशेष प्राण-सिद्धान्त होता है। यह विद्यापीठ किस सिद्धान्त को विशेष प्राण की तरह अपनाये? मेरा खब्त यह है कि इस विद्यापीठ के विद्यार्थी जो कि हिन्दू है, 'कर्मणा वर्णः' के सिद्धान्त को ग्रहण करें तो यही सिद्धान्त इस विद्यापीठ का विशेष प्राण हो जाय। मैं चर्खे को आपद्-धर्म मानता हूं परन्तु, देवता की—लक्ष्मी, सरस्वती और अन्नपूर्णा की उपासना केवल चर्खे से कैसे होगी यह मैं नही समझ पाया। हमें राजनीतिक और सामाजिक परिवर्तन करना है, स्वराज पाना है। यह 'कर्मणा वर्णः' के सिद्धान्त पर चलने से हो सकता है। अस्पृश्यता दूर करने में इसका मन पर कुछ प्रभाव पड़ेगा।

महात्मा जी ने कहा :

"मैं वर्ण केवल कर्मणा नहीं, जन्मना भी मानता हूं। चर्खे को मैने प्रधान स्थान दिया है, परन्तु इसी को मैं सर्वस्व नही कहता। चर्खे को प्रधान स्थान इसलिए देना होगा कि करोड़ों हिन्दुस्तानियों की कंगाली को दूर करने का इससे वढ़कर उपाय नहीं है। इससे लक्ष्मी की व्यक्तिगत नही, सामाजिक शक्ति मिलती है। सरस्वती के लिए विद्यापीठ है। हमारी पुरानी सभ्यता में वड़ा मैल भर

गया है। अस्पृश्यता का रोग मिट जाने से सारा मैल दूर हो जायगा। हम अस्पृश्यता को निकाल सकें तो हमारा सुधार हो जायगा। चौवीस घण्टे मे आधा घण्टे ही चर्खा कातें और साढे तेईस घण्टे चाहे जो करें, परन्तु अनिवार्य रूप से आधा घण्टा कातना चाहिए। इस विद्यापीठ का विशेष प्राण-सिद्धान्त क्या होना चाहिए मैं यह बता सकने के अयोग्य हू। यह बात श्री भगवानदास जी ही बता सकते हैं।

—हिन्दी। वाराणसी, १७।१०।१९२५, आज, १९।१०।१९२५।]

५८. भाषण : लखनऊ नगरपालिका की सभा में[1]

(१७ अक्तूबर, १९२५)[2]

सदर साहब, भाइयो और बहनो,

आपने जो यह ऐड्रेस मुझको दिया है उसके लिए मैं आप लोगो का एहसान मानता हू। आपने बडी अच्छी लखनवी जबान मे मुझे यह ऐड्रेस दिया है। मैंने यरवदा जेल मे उर्दू का इतना मश्क किया फिर भी आपकी यह लखनवी उर्दू समझने मे मुझे मुश्किल होती है। इसलिए मैं आप लोगो से कहता हू कि आपकी यह लखनवी जबान आपको मुबारक रहे। मैं तो ऐसी उर्दू चाहता हू कि जिसे वह भी समझ ले जो यू० पी० का रहनेवाला न हो। वह हिन्दुस्तानी जबान हो। हिन्दुस्तानी जबान मैं उसे कहता हू कि जिसमे सस्कृत और फारसी के ऐसे लफ्ज आते हो जिन्हे मुझ जैसा किसान आदमी भी समझ सके।

कलकत्ते के कारपोरेशन ने जब मुझे मानपत्र दिया था तो मैंने जवाब मे दो-तीन बातें कही थी। वे ही बातें मैं यहा भी कहना चाहता हू। बिहार मे जिन म्युनिसिपैलिटियो ने मुझे मानपत्र दिये थे उन्होंने उनमे अपनी त्रुटिया भी स्वीकार की थी। आप लोगो ने मानपत्र मे त्रुटिया स्वीकार नही की हैं। जब मैं मोटर मे आ रहा था तो पण्डित मोतीलाल जी ने बताया था कि यहा की सडकें कैसी हैं? सो मैं आप लोगो से कहता हू कि जैसी अच्छी आप लोगो की लखनवी उर्दू जबान है

---

१. यह सभा नगरपालिका के अहाते मे ५ बजे शाम को हुई थी। सभा मे मोतीलाल नेहरू, जवाहरलाल नेहरू और सैयद महमूद भी थे।

२. हिन्दुस्तान टाइम्स के २०।१०।१९२५ के अंक और पायनियर के १९।१०।१९२५ के अक मे प्रकाशित रिपोर्टों के अनुसार।

५७. भाषण : काशी विद्यापीठ में

शनिवार, १७ अक्तूबर, १९२५

बाबू भगवानदास, अध्यापकगण, विद्यार्थीगण, तथा भाइयो और बहिनो, यह सच है कि इस विद्यापीठ का आरम्भ मेरे हाथ से हुआ था, परन्तु विद्यापीठ की हस्ती आज भी बनी हुई है, इसका कारण एक तो हैं शिवप्रसाद जी की उदारता और प्रेम; उसे प्रेम या मोह कहो। दूसरा कारण है श्री भगवानदास जी का प्रेम। उनकी भावना के लिए मैं मोह शब्द का प्रयोग नही कर सकता क्योंकि वह कोई काम अपना कर्त्तव्य समझकर विवेकपूर्वक ही करते हैं। आज इन दोनों के उत्साह —एक के बुद्धिप्रयोग और दूसरे के द्रव्य प्रयोग से यह विद्यापीठ मौजूद है।

मुझसे पूछा गया है कि क्या अब भी राष्ट्रीय विद्यापीठों पर मेरा विश्वास है। सन् १९२१ मे मैंने विद्यार्थियों से जो यह कहा था कि आप सरकारी पाठशालाओं से निकल जायँ, क्या यह ठीक किया था या वह मेरी गलती थी? मैं कई बार अपनी आत्मा से यह प्रश्न पूछ चुका हूं। आप जानते है कि मैं गलती स्वीकार करने को लज्जा की बात नही मानता। और प्रायश्चित्त करने को भी तैयार रहता हूं। मैं अपनी गलती जनता के सामने स्वीकार कर लेता हूं। मै अपनी आत्मा से अपने काम के अच्छे अथवा बुरे होने के बारे मे प्रश्न करता रहता हूं। मेरा तजुरबा है कि उससे जो ध्वनि निकलती है, वह सच्ची होती है। मुझे पता नही कि कभी उस ध्वनि से सच्चे न निकलने का मुझे अनुभव हुआ हो। इस सम्बन्ध में इतने कटु अनुभव के बाद भी यही ध्वनि निकलती है कि मै ठीक रास्ते पर था। सन् १९२१ में जो कुछ हुआ वह योग्य ही था। विद्यापीठों का आरम्भ करना भी ठीक था। विद्यापीठो की स्थापना बालक-बालिकाओं के लिए आवश्यक है। हिन्दुस्तान में जितने विद्यापीठ स्थापित हुए उनमें से काशी, पटना, पूना और गुजरात, इन चार स्थानों के विद्यापीठ आज भी चल रहे है। उत्तम रीति से चल रहे हैं यह तो नही कहता, परन्तु मैं चाहता हूं कि ये चलते रहें और उन्नति करें। उन्नति का अर्थ मैं यह नही करता कि उनमें हजार-हजार विद्यार्थी हों। मधुपुर में एक राष्ट्रीय अध्यापक ने मुझसे कहा कि विद्यार्थी नही मिलते। मैंने उनसे कहा कि इससे आप निराश न हो। आप अपने दिल से पूछें, जिस सिद्धान्त पर आपने इसे चलाया है यदि आप उस सिद्धान्त पर अटल है तो एक विद्यार्थी रह जाने पर भी आप पाठशाला चलाते रहे। उनको संस्था का मोह था, इससे उनके दिल को आघात पहुँचा। हमारी तो यह प्राचीन प्रथा है कि चाहे किसी विद्यालय में एक ही विद्यार्थी और एक ही अध्यापक हो किन्तु यदि दोनों में एक दूसरे पर श्रद्धा हो, गुरु समझे कि

विद्यादान अच्छा है और विद्यार्थी समझे कि यह मेरे उत्थान के लिएहै, इससे मेरा इहलौकिक और पारलौकिक जीवन बनेगा तो वह विद्यालय चलता रहना चाहिए। यही बात इस विद्यापीठ पर भी लागू होती है। मैं श्री भगवानदास जी और श्री शिवप्रसाद जी से कहना चाहता हू कि आप लोग भी सस्था के बारे मे चिन्ता न करें। काग्रेस के आदेश का बन्धन तो अब दूर ही हो गया है। यदि आप लोगो की भीतरी आवाज कहे कि इसको चलाना चाहिए तो इसे जीवन अर्पित कर दिया जाय। सस्कृत श्लोक भी है कि जो काम आरम्भ करो उसके लिए जीवन दे दो। परन्तु यह अर्द्ध सत्य है। क्या कोई शराब पीना आरम्भ करे तो जीवन-भर पीता ही चला जाय? शास्त्र ने यह बात श्रद्धा दृढ करने के लिए कही है। अगर आप अपने सिद्धान्त पर कायम हैं और नया प्रयोग करना चाहते हैं तो जनता के प्रतिकूल रहने की भी कुछ चिन्ता न करें। यदि विद्यापीठ से पाच अथवा एक भी विद्यार्थी ऐसा निकल सके जो अपना सारा जीवन हिन्दुस्तान के लिए अर्पण कर दे तो समझ लीजिए कि विद्यापीठ सफल हो गया। क्योकि हिन्दुस्तान के लिए जीवन अर्पण करने की शिक्षा देना ही विद्यापीठ का ध्येय है। जबतक ध्येय सामने है तबतक विद्यार्थी ५ है या १ इसकी कोई फिक्र नही करना। ३५ वर्षो के अपने सार्वजनिक जीवन मे यह मैं एक नही अनेक बार अनुभव कर चुका हू कि यदि हमारी श्रद्धा दृढ रहे और उसके साथ हम प्रयत्न करते जाय तो लोग अधिकाधिक सख्या मे हमारे साथ हो जाते है। इसलिए आप सिद्धान्त को समझ कर चलते रहे, इसी मे हिन्दुस्तान का भला है। विद्यार्थियो से प्रार्थना है कि वे भी इस विद्यापीठ मे सख्या के कम ज्यादा होने की चिन्ता न करें, आजीविका की भी चिन्ता न करें। आजीविका के लिए गारण्टी नही दी जा सकती, फिर भी शरीर से श्रम और सेवा करें तो खाने पीने-भर के लिए मिल ही जायगा, मौज-शौक और आभूषण आदि के लिए नही मिलेगा। परन्तु जो विद्यार्थी यह सोचते हैं कि उन्हे पढ-लिख लेने के बाद दूसरो की तरह अधिक पैसा कमाने के लिए नौकरी करनी है, उनका यहा से भाग जाना ही अच्छा है। यहा का ध्येय अच्छी तरह समझ कर ही यहा रहे।

मैंने अपने कार्यक्रम मे चर्खे को प्रधान स्थान दिया है, इसके लिए मुझे कोई सकोच नही होता। अगर सारा हिन्दुस्तान चर्खा चलाना छोड दे, तो मुझे रोज ८-१० घण्टे चर्खा चलाने को मिल जायेंगे। क्योकि तब लोगो के सामने बकवास करने से मैं बच जाऊगा। मेरे नजदीक देश को दरिद्रता से छुटकारा दिलानेवाली चर्खे को छोडकर दूसरी कोई वस्तु नही है। जहा चर्खे चलने लगे हैं वहा लोगो के जीवन मे परिवर्तन हो रहा है। यह मैंने विहार के दौरे मे देखा है। आप लोग आध घण्टे, पाव घण्टे ही चर्खा चलायें और चर्खा चलाते-चलाते हिन्दुस्तान का

ध्यान करें। आप ईश्वर का नाम लेकर, मुसलमान खुदा का नाम लेकर चर्खा चलायें तो देखेंगे कि इसमें से कैसी शक्ति का निर्माण होता है। कितने ही लोग मूर्ति को पत्थर समझते है परन्तु भावना से क्या नही हो जाता? भावना से पूर्ण होने के कारण ही आज श्री रामदास जी गौड़ मुझे अपने घर श्री राम की मूर्ति दिखाने ले गये थे।

मै देहात का अर्थशास्त्र जानता हूं, इसी से मैं अपने को जुलाहा कहता हूं। मैं भंगी-चमार बनता हूं, क्योकि मै उनके कष्टों को जानता हूं। मैं चर्खे का दीवाना हूं —लैला-मजनू से भी वढ़कर दीवाना! किसी विद्यार्थी को चर्खे मे विश्वास न हो, तो भी वह केवल विद्या के ध्यान से विद्यापीठ में आ सकता है। किन्तु विद्यापीठ किसी सिद्धान्त के लिए ही चलाया जाना चाहिए। ईश्वर इस विद्यापीठ की उन्नति करे।"

महात्मा जी का भाषण समाप्त हो जाने पर श्री भगवानदास जी ने विद्यार्थियो की ओर से महात्मा जी से प्रश्न किया कि आप चर्खे द्वारा देश की उन्नति करना चाहते है, क्या इसका यह अर्थ है कि आप इसी को हमारा उपास्यदेव बनाना चाहते हैं?

महात्मा जी ने कहा कि हां, यही उसका ठीक अर्थ है।

श्री भगवानदास जी : यदि देश की उन्नति का और भी कोई उपाय हो तो उसका उपदेश देकर कृतार्थ कीजिए। प्रत्येक विद्यापीठ का कोई विशेष प्राण-सिद्धान्त होता है। यह विद्यापीठ किस सिद्धान्त को विशेष प्राण की तरह अपनाये? मेरा खब्त यह है कि इस विद्यापीठ के विद्यार्थी जो कि हिन्दू है, 'कर्मणा वर्णः' के सिद्धान्त को ग्रहण करें तो यही सिद्धान्त इस विद्यापीठ का विशेष प्राण हो जाय। मैं चर्खे को आपद्-धर्म मानता हूं परन्तु, देवता की—लक्ष्मी, सरस्वती और अन्नपूर्णा की उपासना केवल चर्खे से कैसे होगी यह मैं नही समझ पाया। हमें राजनीतिक और सामाजिक परिवर्तन करना है, स्वराज पाना है। यह 'कर्मणा वर्णः' के सिद्धान्त पर चलने से हो सकता है। अस्पृश्यता दूर करने में इसका मन पर कुछ प्रभाव पड़ेगा।

महात्मा जी ने कहा :

"मै वर्ण केवल कर्मणा नहीं, जन्मना भी मानता हूं। चर्खे को मैंने प्रधान स्थान दिया है, परन्तु इसी को मैं सर्वस्व नही कहता। चर्खे को प्रधान स्थान इसलिए देना होगा कि करोड़ों हिन्दुस्तानियों की कंगाली को दूर करने का इससे बढ़कर उपाय नही है। इससे लक्ष्मी की व्यक्तिगत नहीं, सामाजिक शक्ति मिलती है। सरस्वती के लिए विद्यापीठ है। हमारी पुरानी सभ्यता में वड़ा मैल भर

गया है। अस्पृश्यता का रोग मिट जाने से सारा मैल दूर हो जायगा। हम अस्पृश्यता को निकाल सके तो हमारा सुधार हो जायगा। चौबीस घण्टे मे आधा घण्टे ही चर्खा कातें और साढे तेईस घण्टे चाहे जो करें, परन्तु अनिवार्य रूप से आधा घण्टा कातना चाहिए। इस विद्यापीठ का विशेष प्राण-सिद्धान्त क्या होना चाहिए मैं यह बता सकने के अयोग्य हू। यह बात श्री भगवानदास जी ही बता सकते हैं।

—हिन्दी। वाराणसी, १७।१०।१९२५, आज, १९।१०।१९२५।]

५८. भाषण : लखनऊ नगरपालिका की सभा में[1]

(१७ अक्तूबर, १९२५)[2]

सदर साहब, भाइयो और बहनो,

आपने जो यह ऐड्रेस मुझको दिया है उसके लिए मैं आप लोगो का एहसान मानता हू। आपने बडी अच्छी लखनवी जबान मे मुझे यह ऐड्रेस दिया है। मैंने यरवदा जेल मे उर्दू का इतना मश्क किया फिर भी आपकी यह लखनवी उर्दू समझने मे मुझे मुश्किल होती है। इसलिए मैं आप लोगो से कहता हू कि आपकी यह लखनवी जबान आपको मुबारक रहे। मैं तो ऐसी उर्दू चाहता हू कि जिसे वह भी समझ ले जो यू० पी० का रहनेवाला न हो। वह हिन्दुस्तानी जबान हो। हिन्दुस्तानी जबान मैं उसे कहता हू कि जिसमे सस्कृत और फारसी के ऐसे लफ्ज आते हो जिन्हे मुझ जैसा किसान आदमी भी समझ सके।

कलकत्ते के कारपोरेशन ने जब मुझे मानपत्र दिया था तो मैंने जवाब मे दो-तीन बाते कही थी। वे ही बातें मैं यहा भी कहना चाहता हूं। बिहार मे जिन म्युनिसिपैलिटियो ने मुझे मानपत्र दिये थे उन्होंने उनमे अपनी त्रुटिया भी स्वीकार की थी। आप लोगो ने मानपत्र मे त्रुटिया स्वीकार नही की हैं। जब मैं मोटर मे आ रहा था तो पण्डित मोतीलाल जी ने बताया था कि यहा की सडकें कैसी हैं? सो मैं आप लोगो से कहता हू कि जैसी अच्छी आप लोगो की लखनवी उर्दू जबान है

---

१. यह सभा नगरपालिका के अहाते मे ५ बजे शाम को हुई थी। सभा मे मोतीलाल नेहरू, जवाहरलाल नेहरू और सैयद महमूद भी थे।

२. हिन्दुस्तान टाइम्स के २०।१०।१९२५ के अक और पायनियर के १९।१०।१९२५ के अक में प्रकाशित रिपोर्टों के अनुसार।

उन्होंने श्रोताओं से खद्दर पहनने का निवेदन किया और उसके कुछ लाभ समझाये। उन्होंने कहा :

खद्दर का मतलब है, प्रत्येक सात आने में से पांच आने गरीबों को मिलना। और मिल के कपड़े का मतलब है, हर पांच आने में से एक पैसा गरीबों को मिलना। लेकिन विदेशी कपड़े से इंग्लैण्ड के गरीबों को भी फायदा नहीं होता। उसका सारा लाभ पूंजीपतियों को मिलता है।

उसके वाद उन्होंने कहा कि भारत के ऊंचे सामाजिक दर्जे के लोगों को चर्खे का उपयोग करना चाहिए, ताकि गरीबों को इस बात की प्रतीति हो जाये कि चर्खे में हमारा सच्चा विश्वास है और हम जो कहते हैं उसके लिए ईमानदारी से प्रयत्न भी करते हैं।

इसके बाद उन्होंने अस्पृश्यता की प्रथा की निन्दा की। उन्होंने कहा कि यह हिन्दू धर्म का हिस्सा नही है। यह अधार्मिक और ईश्वर के विरुद्ध है। हमें भारत के कुत्सित कलंक को दूर कर डालना चाहिए।

—हिन्दी। लखनऊ, १७।१०।१९२५। अंग्रेजी से। हिन्दुस्तान टाइम्स, २०।१०।१९२५।]

६०. भाषण : सीतापुर में

१७ अक्तूबर, १९२५

सीतापुर की नगरपालिका ने लालबाग में महात्मा गांधी को एक अभिनन्दन-पत्र भेंट किया। अभिनन्दन-पत्र नगरपालिका के अध्यक्ष बाबू शम्भूनाथ ने पढ़ा। उसमें महात्मा जी से अनुरोध किया गया कि उन्हें तो देश-विदेश की नगरपालिकाओं के कार्यकलापों का विस्तृत अनुभव है, इसलिए वह कुछ ऐसे सुझाव दें, जिनको आदर्श मानकर सीतापुर की नगरपालिका के सदस्य नगर को सुधारने के लिए प्रयत्न कर सकें। उन्होने कहा कि यह मानपत्र भेंट करने के लिए सिर्फ एक रुपये का खर्च स्वीकार किया गया है।

उत्तर में महात्मा गांधी ने कहा कि अगर मैं सीतापुर नगरपालिका का सदस्य होता तो इस काम के लिए एक पैसा भी स्वीकृत न करता। उन्होंने कहा कि मैं कांग्रेसियों के अपने देशभाइयों की सेवा करने के लिए नगरपालिका और जिला बोर्ड के प्रवेश करने के खिलाफ नही हूं। लेकिन अपनी महत्वाकांक्षाओं की पूर्ति के लिए और स्वार्थपूर्ण उद्देश्यों से किसी को इन स्थानीय संस्थाओं का सदस्य बनने

की कोशिश नही करनी चाहिए। सेवा और आत्मत्याग की सच्ची भावना के विना नगरपालिका मे प्रवेश करना वेकार है। मुझे नगरपालिका का एकमात्र आदर्श यही मालूम है कि नगर को साफ-सुथरा और रोगो से मुक्त रक्खा जाय, गरीवो की मदद की जाय और उनके हलको को गन्दगी से दूर रक्खा जाय तथा ऐसी स्थिति उत्पन्न कर दी जाय जिससे गन्दी वस्तिया पनप ही न सकें।

आर्थिक तगी की आड नही लेनी चाहिए। अगर पैसा न हो तो नगरपालिका के सदस्यो को अपने हाथ से काम करने के लिए तैयार रहना चाहिए। इस प्रकार वे ऐसा उदाहरण पेश करेंगे जिसका सभी अनुकरण करेंगे और नगरपालिका के कार्यकलापो की प्रगति के मार्ग की सारी कठिनाइया निश्चित रूप से दूर हो जायँगी।

—हिन्दी। सीतापुर, १७।१०।१९२५। अंग्रेजी से। अमृत बाजार पत्रिका, २४।१०।१९२५।]

६१. भाषण : अभिनन्दन-पत्रों के उत्तर में

सीतापुर
१७ अक्तूबर, १९२५

.महात्मा गाधी ने कहा कि मैं इन दो सभाओ[1] द्वारा अभिनन्दन-पत्र पाने के योग्य नही हू, क्योकि मैं इन दोनो सभाओ का आलोचक रहा हू। इनकी टीका-टिप्पणी के सिवाय मैंने कुछ नही किया है। लेकिन मैं यह कह सकता हू कि मैंने इनकी आलोचना सचाई के साथ और सहानुभूतिपूर्वक एक मित्र तथा हितैषी के नाते उनको मदद पहुचाने की इच्छा से की है। हिन्दू-सभा की सच्ची सेवा करने के लिए सच्चा हिन्दू होना जरूरी है। हिन्दू धर्म सनातन धर्म है। मैं वेदों तथा हिन्दू धर्म को अनादि मानता हू। सत्य भी अनादि है। इसलिए मुझे हिन्दू धर्म और सत्य मे कोई अन्तर दिखाई नहीं देता। जो असत्य है उसका हिन्दू धर्म से सम्बन्ध नही हो सकता। मैं किसी भी दशा मे सत्य का त्याग नही कर सकता। चाहे कितना भी विरोध हो, चाहे मेरे खिलाफ हजारो लोग तलवारें उठाकर खडे हो जायें, फिर भी मैं सत्य ही कहूगा। सत्य और अहिंसा मे कोई अन्तर नही है। एक हिन्दू के रूप में किसी के विरुद्ध अपने हृदय मे द्वेषभाव को

१. हिन्दू सभा और वैद्य सभा।

वैसी ही अच्छी यहां की सड़कों को भी आप बना दें। (हँसी) जिससे इक्के की सवारी करने वाले और मुझ-जैसे मोटर की सवारी करनेवाले दोनों को आराम मिले। म्युनिसिपैलिटियाँ मुझे मानपत्र देते समय पैसे की कमी की बात उठाती हैं। अगर आपकी म्युनिसिपैलिटी में भी काफी पैसा नही है तो मैं चेयरमैन से कहूंगा कि वे कुदाल ले लें और कांग्रेस के स्वयंसेवकों की मदद से यहां की सड़कों को ठीक कर दें, जिससे इक्के की सवारी करनेवालों को आराम मिले।

मानपत्र में डेरीफार्म का जिक्र किया गया है। मैं नही जानता कि ये गौशा-लाएं शहर के लोगों को अच्छा दूध पहुँचाने का साधन बन सकती हैं या नही। काफी गायें और भैंसें रखने पर ही आप शहर के लोगों को अच्छा दूध दे सकेंगे।

यह खुशी की बात है कि जो लोग आपके विरुद्ध राजनीतिक मत रखते है वे आपके प्रबन्ध का विरोध नही करते। मैं आप लोगों को इसके लिए मुबारक-बादी देता हूं कि पिछले बोर्ड की अपेक्षा आपने अच्छा काम किया है। बोर्ड का फिर चुनाव होनेवाला है। मेरी लखनऊ के वोटरों को सलाह है कि वे ऐसे ही लोगों को चुनें जो उन्हें लखनऊ की सड़कों को ठीक कर देने का, अच्छे दूध का प्रबन्ध करने का और ऐसी जबान में जिसे सब लोग समझ सके काम करने का वचन दें। अगर लखनऊ के अगले बोर्ड ने इस प्रकार अच्छा काम कर दिखाया तो मैं कांग्रेस की सभानेत्री सरोजनी देवी से कहूंगा कि वह कांग्रेस से आपके लिए मुबारकबादी का प्रस्ताव पास करा दे।

हिन्दू-मुस्लिम एकता के प्रश्न पर मानपत्र मे कुछ भी चर्चा नही की गई है। यह खेद की बात है। यह शर्म की बात है कि यहां के हिन्दुओं और मुसलमानों में बहुत अनबन है। इस वक्त सारे हिन्दुस्तान की आबोहवा खराब हो गई है। मै कहता हूं कि यदि हिन्दू और मुसलमान दोनों को लड़ना है तो लड़ लें, पर आखिर अंजाम क्या होगा? दोनों को यही रहना है। न हिन्दू हिन्दुस्तान छोड़ सकते है और न मुसलमान ही। आखिर में दोनों को यही रहना होगा, दोनों को मिलना होगा; अगर लखनऊ में हिन्दू-मुसलमान नही मिल सकते तो कहाँ मिल सकेंगे? यह बड़े शर्म की बात है। अगर दोनों जातियां मिलकर रहें तो क्या कारण है कि हम जो चाहते हैं वह न मिल जाय? सारे संसार में हमारी हँसी हो रही है। डा० अंसारी ने कहा कि बाहरवालों को आश्चर्य है कि क्या गाय और बाजा ऐसी बाते है कि जिनके लिए हिन्दुस्तानी हिन्दू और मुसलमान लड़ते रहें और एक दूसरे का सिर फोड़ते रहे।

मैं अभिनन्दन-पत्र नही चाहता। मैं प्रशंसा सुनते-सुनते थक गया हूं। पर मै आप लोगों को यह जिम्मेदारी सौपना चाहता हूं कि जब मैं दूसरी बार लखनऊ

आऊ तो आप यह कह सके कि लखनऊ मे इस बीच झगड़ा नही हुआ और हिन्दू-मुसलमानो मे मेल है। ईश्वर यहा के रहनेवालो को समझ दे। मैं अन्त मे इस मानपत्र के लिए आपको धन्यवाद देता हू।

—हिन्दी। लखनऊ, १०।१०।१९२५। 'आज', २४।१०।१९२५।]

५९. भाषण : लखनऊ की सार्वजनिक सभा में[१]

१७ अक्तूबर, १९२५

महात्मा जी ने यह कहते हुए अपना भाषण शुरू किया कि मुझे पहले से कुछ मालूम नही था, मैं नही जानता था कि मुझे लखनऊ मे किसी समय आम सभा में बोलना पडेगा। मुझे बहुत दुःख है कि लखनऊ, जिसके बारे मे मेरा खयाल बहुत अच्छा था, साम्प्रदायिक झगडो का अखाडा हो गया है। जब मैं दिल्ली मे २१ दिन का उपवास कर रहा था तब मुझे लखनऊ से हिन्दू और मुसलमान नेताओ का एक पत्र मिला था, जिसमे मुझे मामले मे बीच-बचाव करने के लिए आमन्त्रित किया गया था। मैं उसके लिए तैयार हो गया, लेकिन फिर कोई आया ही नही। मैं समझता हू कि अच्छा हो कि आप मेरी सहायता के बिना खुद ही अपने झगडे सुलझा लें। लेकिन यदि आप समझते हैं कि उनका एकमात्र समाधान तलवार ही है, तो ठीक है, आप उसी को आजमा कर देख लीजिए, बजाय इसके कि आप मेरे जैसे असहाय और अहिंसक व्यक्ति से सहायता माँगें। यूरोप से लौटने पर डा० असारी यूरोप के अपने अनुभवो का हाल सुनाने भागे-भागे मेरे पास आये। उनको यूरोप मे सभी तरह के लोगो से मिलने का मौका मिला, विशेषकर तुर्को से। सबने यही कहा कि यह हिन्दुओ और मुसलमानो का पागलपन ही है कि वे बडे लक्ष्यो की बलि देकर छोटी-छोटी बातो पर झगडने मे अपनी शक्ति गँवा रहे हैं। इसलिए श्रोताओ से मेरा निवेदन है कि सब अपने मतभेद दूर करके यथासम्भव जल्दी ही एकता प्राप्त करें। लेकिन यह एकता असली एकता होनी चाहिए, नकली नही।

महात्मा जी ने कहा अगर मैं लखनऊ के फैशनपरस्त नागरिको से खद्दर के लिए अपील करू तो यह आशका तो है ही कि आप उसे अनसुनी कर दें। लेकिन मैं अपने इस भय के बावजूद भारत के गरीबो की ओर से यह अपील करता हू।

१. यह सभा हरकरणनाथ मिश्र की अध्यक्षता मे अमीनुद्दौला पार्क में हुई थी।

उन्होंने श्रोताओं से खद्दर पहनने का निवेदन किया और उसके कुछ लाभ समझाये। उन्होने कहा :

खद्दर का मतलब है, प्रत्येक सात आने में से पांच आने गरीबों को मिलना। और मिल के कपड़े का मतलब है, हर पांच आने मे से एक पैसा गरीबों को मिलना। लेकिन विदेशी कपड़े से इंग्लैण्ड के गरीबों को भी फ़ायदा नहीं होता। उसका सारा लाभ पूंजीपतियो को मिलता है।

उसके वाद उन्होंने कहा कि भारत के ऊंचे सामाजिक दर्जे के लोगों को चर्खे का उपयोग करना चाहिए, ताकि गरीबों को इस वात की प्रतीति हो जाये कि चर्खे में हमारा सच्चा विश्वास है और हम जो कहते हैं उसके लिए ईमानदारी से प्रयत्न भी करते हैं।

इसके वाद उन्होने अस्पृश्यता की प्रथा की निन्दा की। उन्होंने कहा कि यह हिन्दू धर्म का हिस्सा नहीं है। यह अधार्मिक और ईश्वर के विरुद्ध है। हमें भारत के कुत्सित कलंक को दूर कर डालना चाहिए।

—हिन्दी। लखनऊ, १७।१०।१९२५। अंग्रेजी से। हिन्दुस्तान टाइम्स, २०।१०।१९२५।]

६०. भाषण : सीतापुर में

१७ अक्तूबर, १९२५

सीतापुर की नगरपालिका ने लालबाग में महात्मा गांधी को एक अभिनन्दन-पत्र भेंट किया। अभिनन्दन-पत्र नगरपालिका के अध्यक्ष वावू शम्भूनाथ ने पढ़ा। उसमे महात्मा जी से अनुरोध किया गया कि उन्हे तो देश-विदेश की नगरपालिकाओं के कार्यकलापों का विस्तृत अनुभव है, इसलिए वह कुछ ऐसे सुझाव दें, जिनको आदर्श मानकर सीतापुर की नगरपालिका के सदस्य नगर को सुधारने के लिए प्रयत्न कर सके। उन्होने कहा कि यह मानपत्र भेंट करने के लिए सिर्फ एक रुपये का खर्च स्वीकार किया गया है।

उत्तर मे महात्मा गांधी ने कहा कि अगर मैं सीतापुर नगरपालिका का सदस्य होता तो इस काम के लिए एक पैसा भी स्वीकृत न करता। उन्होने कहा कि मैं कांग्रेसियों के अपने देशभाइयों की सेवा करने के लिए नगरपालिका और जिला वोर्ड के प्रवेश करने के खिलाफ नही हूं। लेकिन अपनी महत्वाकांक्षाओं की पूर्ति के लिए और स्वार्थपूर्ण उद्देश्यों से किसी को इन स्थानीय संस्थाओं का सदस्य वनने

की कोशिश नही करनी चाहिए। सेवा और आत्मत्याग की सच्ची भावना के बिना नगरपालिका मे प्रवेश करना बेकार है। मुझे नगरपालिका का एकमात्र आदर्श यही मालूम है कि नगर को साफ-सुथरा और रोगो से मुक्त रक्खा जाय, गरीबो की मदद की जाय और उनके हलको को गन्दगी मे दूर रक्खा जाय तथा ऐसी स्थिति उत्पन्न कर दी जाय जिससे गन्दी बस्तिया पनप ही न सकें।

आर्थिक तगी की आड नही लेनी चाहिए। अगर पैसा न हो तो नगरपालिका के सदस्यो को अपने हाथ से काम करने के लिए तैयार रहना चाहिए। इस प्रकार वे ऐसा उदाहरण पेश करेंगे जिसका सभी अनुकरण करेंगे और नगरपालिका के कार्यकलापो की प्रगति के मार्ग की सारी कठिनाइया निश्चित रूप से दूर हो जायेंगी।

—हिन्दी। सीतापुर, १७।१०।१९२५। अंग्रेजी से। अमृत बाजार पत्रिका, २४।१०।१९२५।]

६१. भाषण : अभिनन्दन-पत्रों के उत्तर में

सीतापुर
१७ अक्तूबर, १९२५

...महात्मा गाधी ने कहा कि मैं इन दो सभाओं[1] द्वारा अभिनन्दन-पत्र पाने के योग्य नही हू, क्योकि मैं इन दोनो सभाओ का आलोचक रहा हू। इनकी टीका-टिप्पणी के सिवाय मैंने कुछ नही किया है। लेकिन मैं यह कह सकता हूं कि मैंने इनकी आलोचना सचाई के साथ और सहानुभूतिपूर्वक एक मित्र तथा हितैषी के नाते उनको मदद पहुचाने की इच्छा से की है। हिन्दू-सभा की सच्ची सेवा करने के लिए सच्चा हिन्दू होना जरूरी है। हिन्दू धर्म सनातन धर्म है। मै वेदो तथा हिन्दू धर्म को अनादि मानता हू। सत्य भी अनादि है। इसलिए मुझे हिन्दू धर्म और सत्य मे कोई अन्तर दिखाई नही देता। जो असत्य है उसका हिन्दू धर्म से सम्बन्ध नही हो सकता। मैं किसी भी दशा में सत्य का त्याग नहीं कर सकता। चाहे कितना भी विरोध हो, चाहे मेरे खिलाफ हजारो लोग तलवारें उठाकर खडे हो जायें, फिर भी मैं सत्य ही कहूगा। सत्य और अहिंसा मे कोई अन्तर नही है। एक हिन्दू के रूप में किसी के विरुद्ध अपने हृदय मे द्वेषभाव को

१. हिन्दू सभा और वैद्य सभा।

पनपने नही दे सकता। यदि मेरा कोई शत्रु भी हो तो मैं उसे प्यार से ही जीतूंगा। अगर हिन्दू लोग अपने धर्म को आगे वढ़ाना चाहते हों और उसकी सेवा करने के इच्छुक हों तो उसका सवसे अच्छा तरीका यह है कि वे अहिंसा के मार्ग पर चलें। अपने धर्म का पुनरुद्धार करने के लिए अवश्य कार्य करें, किन्तु अपने मुसलमान भाइयों के प्रति उनके हृदय में तनिक भी दुर्भावना नही होनी चाहिए।

कुछ लोगों का ऐसा विचार है कि मैं अहिंसा के नाम पर कायरता का प्रचार कर रहा हूं। यह विल्कुल गलत है। वेतिया के हिन्दुओं ने मुझे गलत समझा। यदि वे अपनी मां-वहिन की इज्जत के लिए लड़ते हुए मर जाते हैं, तो मैं इसे अच्छा समझूंगा। और यदि ऐसा मौका आने पर वे भाग खड़े होते है तो यह निरी कायरता ही होगी। और इससे अधिक लज्जाजनक वात और कुछ नही हो सकती। हिंसा का मुकाबला अहिंसा से करना तो अच्छी चीज है, लेकिन कायरता अच्छी चीज नही है। सच्ची अहिंसा के लिए सच्ची वहादुरी की जरूरत होती है। हिन्दू-संगठन के लिए चरित्र-निर्माण सवसे ज्यादा जरूरी है। जवतक यह नही होता और जवतक हर हिन्दू सत्य और सच्चरित्रता पर आरूढ़ नहीं होता, तवतक सच्चा संगठन असम्भव है। उस हालत में हिन्दू धर्म कही का नहीं रह जायगा।

वैद्य सभा के मानपत्र का उत्तर देते हुए उन्होंने कहा कि अखवारों में और सभा-मंचों से उन वातों के लिए मेरी तीव्र आलोचना की गई है, जो मैंने वैद्यों के वारे में कही हैं। लेकिन मेरा अब भी वही विचार है। मैं अपनी वात वापस नही ले रहा हूं और न यह मानता हूं कि उसका एक भी शव्द अनुचित है। मुझे लगता है कि लोगों ने मुझे गलत समझा है। मैंने जो टीका-टिप्पणी की, वह आज के वैद्यों को लक्ष्य करके की है, न कि उस आयुर्वेदिक प्रणाली को लक्ष्य करके, जिसकी वे लोग सेवा कर रहे है। मैं खुद इस प्रणाली के खिलाफ नही हूं। लेकिन उनका आत्म-सन्तोषी रुख मुझे पसन्द नही है और न वे तरीके ही मुझे पसन्द हैं जिन पर वैद्यगण चल रहे हैं।

मैंने उनकी आलोचना इसलिए की है कि उन्होंने आयुर्वेद को नही समझा है और उसके साथ न्याय नही किया है। मैंने आयुर्वेद की प्रगति के लिए अपनी तरफ से भरपूर कोशिश की है और वैद्यों की जितने तरीकों से सहायता हो सकती है, करने का प्रयत्न किया है, लेकिन उनका काम देखकर निराशा होती है। वैद्यों को आगे वढ़ना चाहिए। यह सोचना गलत है कि उन्हें पश्चिम से कुछ भी नही सीखना है। यद्यपि मैंने आत्मा की उपेक्षा के लिए पश्चिमी दुनिया की भर्त्सना की है, फिर भी उसने कई क्षेत्रों में जो कर दिखाया है, उसके प्रति मेरी आँख वन्द नहीं है। वैद्यों को पश्चिम से जरूरी बातें सीख कर अपने ज्ञान को पूरा करने के लिए

तैयार रहना चाहिए। उन्हें ऐसा मानकर निश्चिन्त नही बैठना चाहिए कि उनकी चिकित्सा-प्रणाली मे जो कुछ है, उससे आगे चिकित्सा-शास्त्र मे कुछ है ही नही। उन्हे जागरूक और क्रियाशील रहना चाहिए और उनका लक्ष्य प्रगति होना चाहिए।

—हिन्दी। सीतापुर, १७।१०।१९२५। अंग्रेजी से। अमृत बाजार पत्रिका, २४।१०।१९२५।]

६२. भाषण : संयुक्त प्रान्तीय राजनीतिक सम्मेलन में[1]

१८ अक्तूबर, १९२५

श्री गांधी से, जो अभी तक सूत कात रहे थे परिषद् के सम्मुख भाषण करने का अनुरोध किया गया। उन्होंने कहा—मैं हिन्दू-मुस्लिम समस्या के सम्बन्ध मे कुछ नही कहूगा, क्योंकि अब दो मे से किसी जाति पर—कम-से-कम उन लोगो पर, जो झगड़ रहे हैं—मेरा कोई वश नही रह गया है। मैं चर्खे और अस्पृश्यता के विषय मे विस्तार से बोलूगा। अध्यक्ष महोदय ने चर्खे का उल्लेख-मात्र किया और गैर-हिन्दू होने के नाते उन्होंने अस्पृश्यता के विषय मे कुछ नही कहा। किन्तु चर्खा और खादी ये दोनो चीजें तो मेरा धर्म हैं और इनके सम्बन्ध मे अपनी बात कहे बिना नही रह सकता। मैं तो समझता हूँ कि अगर भारत का हर एक आदमी चर्खे को अपना ले तो कोई भी भूखो न मरे। मैंने ग्रामीण क्षेत्रो का दौरा करके देखा है कि किसान लोग किस तरह गरीबी मे पिस रहे हैं। वर्ष मे कम-से-कम चार महीने वे बेकार रहते हैं, और अगर वे अपने खाली समय मे कताई किया करें तो उनकी अल्प आय मे काफी वृद्धि हो जाय।

यन्त्रो पर उन किसानो के श्रम का उपयोग नही हो सकता। जहा कही भी लोग चर्खा चला रहे हैं, उनकी आय अवश्य बढी है। बंगाल मे मैंने देखा कि हर मजदूर परिवार की आय मे प्रतिमास २ रुपये की वृद्धि हुई है, जब कि लार्ड कर्जन के अनुसार प्रति व्यक्ति उनकी वार्षिक आय सिर्फ ३० रुपये है। इस प्रकार चर्खे से आपको प्रति व्यक्ति २४ रुपये की अतिरिक्त वार्षिक आय हो सकती है। हर

---

१. यह सम्मेलन शौकत अली की अध्यक्षता मे सीतापुर के लाल बाग में हुआ था। उपस्थित लोगों मे मुहम्मद अली, मोतीलाल नेहरू, जवाहरलाल नेहरू और डा० सैयद महमूद भी थे।

६ रुपये पर रूई की कीमत के रूप में २ रुपये किसानों को मिलेंगे, ५ या ४ रुपये कतैयों को और बुनकरों को।

अभी कुछ ही समय पहले मैं अटरिया में था। वहां मैंने देखा कि कताई को एक सहायक धन्धे के रूप मे अपना लेने से हजारों परिवारों की दशा कितनी सुधर गई है। लेकिन अगर गाँवों में यह सहायक धन्धा रूढ़ करना है तो यह जरूरी है कि लोग खादी पहनना शुरू करें। उन्होंने आगे कहा कि आम जनता के सहयोग और सहायता के बिना स्वराज्य सम्भव नही है। यह सहयोग और सहायता ग्राम-संगठन के बिना नही मिल सकती, और इस संगठन का एकमात्र उपाय चर्खा है। जो लोग मेरे इस चर्खा-प्रेम के कारण कहते हैं कि यह आदमी तो पागल हो गया है, वे अगर ऐसी कोई दूसरी चीज सुझा सकें जिससे इसी लक्ष्य को इतनी ही अच्छी तरह या इससे भी अच्छे ढंग से प्राप्त किया जा सकता हो तो मुझे चर्खा छोड़ते हुए कोई हिचकिचाहट नही होगी। लेकिन, अबतक तो ऐसा कोई विकल्प सुझाया नही जा सका है।

मैंने चर्खा-संघ की स्थापना लोगों को संगठित करने के लिए की है। इस संघ का राजनीति से कोई सरोकार नही है। यहां तक कि चाहे तो लार्ड रीडिंग और भारतीय सैनिक भी इसमें शामिल हो सकते हैं।

भाषण के दौरान महात्मा जी ने कहा कि शीघ्र ही इस सम्मेलन से अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटी की पटना की बैठक में पास किये गये प्रस्ताव को अपना सहयोग और समर्थन देने को कहा जायगा। लोगों को कांग्रेस का सदस्य बनने के लिए और अधिक सुविधा प्राप्त कराने के उद्देश्य से इस प्रस्ताव में सदस्यता की योग्यता मे एक बुनियादी परिवर्तन किया गया है। यह कांग्रेस को पूरी तरह से एक राजनीतिक संगठन बना देता है। तदनुसार कांग्रेस अपना सारा काम स्वराज्य-वादी दल के जरिये करेगी और स्वराज्यवादी दल की नीति पर कांग्रेस का नियन्त्रण रहेगा। स्वराज्यवादी दल तमाम स्थानीय और केन्द्रीय विधायिका संस्थाओं में अपनी नीति और नियम स्वयं निर्धरित करेगा। इस दल के अपने कार्यक्रम हैं, अपने नियम है। इन कार्यक्रमों और नियमों को कांग्रेस ने अंगीकृत कर लिया है। स्वराज्यवादी दल के राजनीतिक कार्य में कांग्रेस हर तरह की सहायता देगी। कांग्रेस ने बेलगाँव, दिल्ली और पटना में स्वराज्यवादी दल को यह वचन दिया है कि वह उसे कांग्रेस के नाम पर अपना काम करने की पूरी छूट देगी और उसमें पूरा सहयोग भी करेगी। स्वराज्यवादियों ने विधायक संस्थाओं में खादी पहनने का चलन दाखिल कर दिया है—यहां तक कि विधानसभा के अध्यक्ष भी खादी ही पहनते है। वे लोग नशाखोरी बन्द करने और जनता की

गरीवी दूर करने के लिए विधायक सस्थाओ के जरिये वहुत-कुछ कर सकते हैं।

अगर कोई दूसरा दल इससे एक कदम आगे जाता, या कम-से-कम विधायक सस्थाओ और स्थानिक निकायो मे ही हमारे रचनात्मक कार्यक्रम को स्थान दिला देता तो मैं उसे भी अपना समर्थन देने मे कोई सकोच नही करता। अपना भाषण समाप्त करते हुए उन्होंने हिन्दुओ से अनुरोध किया कि वे हिन्दू धर्म से अस्पृश्यता के महाकलक को दूर करें।[1]

—हिन्दी। सीतापुर, १८।१०।१९२५। अंग्रेजी से। 'लीडर' २१।१०-१९२५।]

६३. भाषण : उ० प्र० हिन्दी साहित्य सम्मेलन[2] में

१८ दिसम्बर, १९२५

अपने स्वागत मे भेंट किये गये अभिनन्दन-पत्र का उत्तर देते हुए श्री गाधीजी ने कहा कि हिन्दी ही भारत की राष्ट्रभाषा हो सकती है। मुझे इस वात से वडी प्रसन्नता है कि मद्रास मे हिन्दी को लोकप्रिय वनाने के लिए काम किया जा रहा है, लेकिन खेद है कि वगाल और अन्य स्थानो मे कोई काम नही किया जा रहा है। अभिनन्दन-पत्र की भाषा के विषय मे वोलते हुए गाधीजी ने कहा कि जिस प्रकार कल लखनऊ नगरपालिका-द्वारा भेंट किये गये अभिनन्दन-पत्र मे फारसी शब्दो की भरमार थी, उसी प्रकार इसमे सस्कृत शब्दो का वाहुल्य है। ऐसी भाषा समझना मेरे लिए मुश्किल है। किसी भाषा को राष्ट्रभाषा पद पर आरूढ होने के लिए ऐसा होना चाहिए जिससे उसको सर्वसाधारण आसानी से समझ सकें।

—हिन्दी। सीतापुर, १८।१०।१९२५। 'लीडर', २१।१०।१९२५।]

---

१. अन्त में सभा ने देशबन्धु दास और सर सुरेन्द्रनाथ की मृत्यु पर अध्यक्ष द्वारा रखा गया प्रस्ताव पास किया। मोतीलाल नेहरू ने सभा मे अन्य एक प्रस्ताव भी, जिसमे पटना में हुई अ० भा० का० कमेटी की बैठक मे किये गये निर्णयों की ताईद की गई थी, पेश किया था।

२. यह सम्मेलन सीतापुर में पण्डित रामजीलाल शर्मा की अध्यक्षता मे राजा स्कूल में हुआ था।

६४. भाषण : सीतापुर के अस्पृश्यता-विरोधी सम्मेलन[1] में

१८ अक्तूबर, १६२५

गांधीजी ने कहा कि मैं स्वर्गीय गोखले के कथन से पूरी तरह सहमत हूं कि भारतीय अपने कुछ देशवासियो को अस्पृश्य मानकर स्वयं सारी दुनियां में अस्पृश्य हो गये हैं। मैं स्वामी श्रद्धानन्द के इस सुझाव को भी ठीक मानता हूं कि अस्पृश्यता को दूर करने का व्यावहारिक मार्ग यही है कि हरएक उच्च वर्ण हिन्दू घर-परिवार में एक तथाकथित अस्पृश्य व्यक्ति को रक्खे। मेरा निश्चित विश्वास है कि हिन्दू धर्म में अस्पृश्यता के लिए कोई स्थान नही है। किसी भी मानव के प्रति अस्पृश्यता का व्यवहार करना पाप है। अतः तथाकथित उच्च जाति के लोगो को अस्पृश्यों के वजाय स्वय अपनी ही शुद्धि करनी चाहिए। उन्होंने अछूतों से भी अनुरोध किया कि वे अपने को शारीरिक रूप से और नैतिक दृष्टि से भी स्वच्छ रक्खें एवं चर्खे को अपनायें और खद्दर खरीद-पहन कर उसे वढ़ावा दे।

—हिन्दी। सीतापुर, १८।१०।१९२५। 'लीडर', २१।१०।१९२५।]

६५. सन्देश : कानपुर के कांग्रेस-सदस्यों को

१६ अक्तूबर, १६२५

मेरी उम्मीद है कि महासभा को सफल करने के लिए सव भाई-बहिन सर्व प्रकार से सहायता देंगे।

मोहनदास गांधी

—हिन्दी। १९।१०।१९२५। सं० गां० वा० खण्ड २८ से]
सौजन्य : श्री परशुराम मेहरोत्रा।

६६. भाषण : कानपुर की स्वदेशी प्रदर्शनी में

२४ दिसम्बर, १६२५

प्रदर्शनी का उद्घाटन करते हुए गांधी जी ने कहा—"मैं इसे एक पुण्य कार्य मानता हूं। सरोजिनी देवी ने मुझे वताया कि यहां इस सप्ताह में ३० सम्मेलन

---

१. यह सम्मेलन महेवा के राजा साहव की अध्यक्षता में संध्या समय हुआ था।

होने वाले हैं और इनमें से बहुत से सम्मेलनों में मुझे सभापति-पद ग्रहण करने के लिए कहा गया है। मैंने अपनी विवशता प्रकट कर दी है क्योंकि मैं अपने को केवल इस स्वदेशी प्रदर्शनी का उद्‌घाटन करने के योग्य मानता हू। मैं हिन्दू-मुस्लिम एकता का पक्षपाती जरूर हूं पर यदि उसमें खद्दर को स्थान नहीं दिया जायगा तो मैं उसे भी स्वीकार न करूगा।

"मैं केवल खद्दर ही का स्वप्न देखा करता हू। मैंने प्रदर्शनी खोलने की जिम्मेदारी उसी समय ली, जब जवाहरलाल जी ने मुझे इस बात का विश्वास दिला दिया कि इस प्रदर्शनी मे कोई भी विदेशी चीज नहीं रक्खी जायगी। मैं अपने पाँच वर्ष के खद्दर-सम्बन्धी अनुभव के आधार पर यह कह सकता हूं कि हमने पर्याप्त प्रगति कर ली है। १९२० में मैंने अपने हाथ से सत्रह आने गज खद्दर बेचा था और लोग खुशी से खरीदते और पहनते थे। आजकल अच्छा खद्दर नौ आने गज मिल सकता है। क्या यह उन्नति श्लाघनीय नहीं है? शुरू-शुरू में जो खद्दर की टोपियाँ पहनते थे, लोग उन्हीं को खद्दरधारी समझ लेते थे। पर अब यह बात नहीं है। ऐसे लोगो की सख्या जो पूरी तौर पर खद्दर पहनते हैं, और दूसरा कपड़ा पहनते ही नहीं हैं, काफी बढ गई है। बहुत से लोगो ने खद्दर के प्रति सहानुभूति दिखलाई और प्रतिज्ञा भी की पर खद्दर पहना नहीं। इसके लिए मैं क्या कर सकता हूँ? कोई कारण नहीं था कि मैं इनकी बातों पर अविश्वास करता। लोगों ने अपनी प्रतिज्ञा पूरी नहीं की, इसी कारण हम आशा के अनुरूप, १ वर्ष के अन्दर स्वराज्य प्राप्त नहीं कर सके। आज भी मैं आपको पूरे विश्वास के साथ यकीन दिलाता हू कि यदि आप सब विदेशी तथा देशी मिलो के कपड़ों का पूरा-पूरा बहिष्कार कर दें तो एक वर्ष से कम समय मे ही हमें स्वराज्य मिल सकता है। पर आपको मेरा यह कहना अक्षरशः मानना पड़ेगा।"

इसके पश्चात् गाधीजी ने कहा कि चर्खे की सख्या और किस्म दोनो मे उन्नति हुई है। उन्होंने यह भी कहा कि मैंने तो अपने हस्ताक्षरों का भी मूल्य निर्धारित कर रक्खा है, जो व्यक्ति मेरे हस्ताक्षर चाहता है, जब खद्दर पहनने का सकल्प कर लेगा तभी वे उसे मिल सकते हैं। (हर्षध्वनि)

—हिन्दी। कानपुर, २४।१२।१९२५। 'लीडर', २६।१२।१९२५।]

६७. भाषण : अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटी की बैठक में

(कानपुर)
२४ दिसम्बर, १६२५

महात्मा गांधी ने अ० भा० कांग्रेस कमेटी के अध्यक्ष पद से निवृत्त होते हुए और कांग्रेस सरकार की वागडोर औपचारिक रूप से श्रीमती सरोजिनी नायडू को सौपते हुए कहा—

"कमेटी के सभी सदस्यों ने मेरा सदा समर्थन किया, इसके लिए मैं उनके प्रति कृतज्ञता प्रकट करता हूं। कमेटी के सदस्यों ने एक वार भी मेरे निर्णयों के प्रति शंका प्रकट नहीं की और मेरे सभी आदेशों का तुरन्त पालन किया। अगर वे यह नीति उन प्रस्तावों के सम्वन्ध में भी रखते जिन्हें कि उन्होंने स्वयं पास किया था तो हमारी स्थिति अधिक अच्छी और दृढ़तर हो गई होती। अव कांग्रेस के नेतृत्व का भार श्रीमती सरोजिनी नायडू के कन्धों पर आया है। मेरी यही कामना है कि उन्हें पूरी सफलता मिले। ईश्वर से मेरी प्रार्थना है कि उनके काल में हमारी स्थिति अधिक अच्छी वने। और जो वादल सँडरा रहे हैं, छिन्न-भिन्न हो जायँ। श्रीमती सरोजिनी नायडू ने दक्षिण अफ्रीका में जाकर भारतवासियों की अत्यन्त आश्चर्यजनक सेवा की है। अपनी काव्यशक्ति से उन्होंने वहाँ के यूरोपीयों को मुग्ध तथा अपनी विवेकशक्ति और मधुर संभाषण-कला के द्वारा विरोधियों का मुँह वन्द कर दिया; अपनी राजनीतिज्ञतापूर्ण कार्यशैली से उन्होंने सिंह का सामना उसकी माँद में ही किया। फिलहाल तो एशिया-विरोधी कानून का पास होना स्थगित हो गया है। आज दक्षिण अफ्रीका के यूरोपीय यह समझने लगे हैं कि अगर श्रीमती सरोजिनी नायडू जैसे व्यक्ति दक्षिण अफ्रीका जायँ तो कोई झगड़ा होगा ही नहीं। दक्षिण अफ्रीका-निवासी मेरे अंग्रेज दोस्तों के पत्र मेरे पास वरावर आते हैं और वे कहते हैं कि श्रीमती सरोजिनी नायडू को या उन्हीं की तरह के अन्य व्यक्तियों को फिर दक्षिण अफ्रीका भेजा जाय। इन सव वातों से प्रकट होता है कि वह वहुत-कुछ कर सकती हैं और कांग्रेस का नेतृत्व करने के योग्य हैं, लेकिन मैं उन्हें कांग्रेस कोष के सम्वन्ध में सावधान करता हूं कि वे अत्यन्त उदार न हो जायँ जैसा कि स्त्रियाँ साधारणतः हुआ करती हैं। कांग्रेस का कोष इस समय सम्भवतः १॥ लाख से अधिक नहीं है।"[1]

—कानपुर, २४।१२।१९२५। 'हिन्दुस्तान टाइम्स', २७।१२।१९२५]

---

१. इस चेतावनी का उत्तर देते हुए सरोजिनी नायडू ने कहा कि रुपये-पैसे से

६८. भाषण : कानपुर-कांग्रेस-अधिवेशन[1] में

२४ दिसम्बर, १९२५

बावा साहब पराजपे और श्री साम्वमूर्ति ने मुझसे यह प्रस्ताव लौटा लेने के लिए कहा है। मैं ऐसा किस अधिकार से करू? यह तो केवल एक सयोग की ही वात है कि उसे पेश करने का भार मुझ पर आ पडा है। यह प्रस्ताव तो कार्यकारिणी समिति का है। फिर मुझसे 'अपील' क्यो की जा रही है? यह न मुझे शोभा देता है और न आपको। आखिर मैं कौन हू? मुझे भूल जाइए। यदि आप लोग लोकतन्त्र चाहते हैं तो प्रस्तावक किस श्रेणी का नेता है इसका खयाल छोड दें, प्रस्ताव की योग्यता का ही विचार करें। इसके अतिरिक्त आप मुझसे किस वात को वापस लेने का आग्रह कर रहे हैं? मेरे अन्तस्तल मे वैठे हुए अत्यन्त प्रिय जीवन-सिद्धान्तो को?

श्री जयकर और केलकर ने भी एतराज उठाये हैं। आप लोग यह भूल जाते हैं कि मताधिकार का आधार ध्येय पर निर्भर होता है। व्यवहारत अमुक कार्य दुर्गम है, क्या महज इसलिए हम उससे विमुख हो जायेंगे? हम लोगो के लिए स्वराज्य प्राप्त करना मुश्किल है तो फिर हम उसकी वात क्यो नही छोड देते?[2]

यदि मुझे इस वात का यकीन हो जाय कि काग्रेस के एक करोड सदस्य वन जाने पर ही स्वराज्य-प्राप्ति सम्भव हो जायगी तो मैं चार आने का चन्दा भी निकाल दू, उम्र-सम्वन्धी प्रतिवन्ध भी हटा दू—कोई भी शर्त न रखू। अवतक जो कार्य किया जा चुका है उसपर यदि पानी फेरना है तो हम यही प्रस्ताव पास करें कि जो चाहे सो काग्रेस का सदस्य हो सकता है। लेकिन भाई, काग्रेस के लिए जो व्यक्ति

सम्वन्धित सारा काम मैं महात्मा गांधी-जैसे जाने-माने दक्ष व्यक्तियो को सौंप रही हूँ।

१. विषय-समिति में मतदान-सम्बन्धी इस प्रस्ताव द्वारा यह सिफारिश की गई थी कि गत सितम्बर मे कांग्रेस-विधान मे जो परिवर्तन स्वीकृत किये गये थे, वे अब पुनः स्वीकृत किये जायें। उनमे से एक सुझाव यह भी था कि अपरिवर्तन-वादियों और स्वराज्यवादियो के वीच समझौते के रूप मे मूल-मताधिकार वैकल्पिक रखा जाय अर्थात् वार्षिक चन्दे के तौर पर या तो चार आने दिये जायें या खुद का काता २००० गज सूत (कांग्रेस को) दिया जाय। और जो व्यक्ति खद्दर न पहनता हो उसे मत देने का अधिकार न हो।

२. मूल में यहां कुछ छूट गया है।

तनिक भी शरीर-श्रम करने के लिए तैयार न हो, क्या उसे कांग्रेसी कहलाने में शर्म मालूम न होगी ? यदि आप लोगों को सचमुच विदेशी कपड़े का वहिष्कार करना है तो मिलों के कपड़े का विचार त्याग दें। मैं मिलों के प्रान्त का ही निवासी हूं। और मिल-मालिको के साथ मेरा वहुत मीठा सम्वन्ध है, लेकिन मैं यह जानता हू कि देश के संकटकाल में उन्होंने देश का साथ कभी नहीं दिया है। वे साफ कहते है कि हम देश-प्रेमी नही हैं, हमें तो धन-सञ्चय करना है। यदि सरकार तय कर ले तो वह सभी मिले वन्द करा सकती है, वाहर से मशीनों का हिन्दुस्तान में आना रोक दे सकती है, लेकिन सरकार में इतना सामर्थ्य नही कि वह हमारे चर्खों और तकुओं को आग में झोक दे। उसने एक जर्मन इंजीनियर को इस देश में आने से रोका था। मुझे अंग्रेज जाति के चरित्र के सम्वन्ध मे ठीक उसी प्रकार विश्वास है जिस प्रकार मनुष्य-स्वभाव में। लेकिन अंग्रेज जाति के स्वभाव का एक लक्षण यह भी है कि वह अपने देश का हित पहिले देखेगी। और वह हित-रक्षा लंकाशायर को जीवित रखने से और हिन्दुस्तान-जैसे देशों में उनकी इच्छा के विरुद्ध अपना घटिया माल भेजते रहने से ही हो सकती है। इन अंग्रेजों के साथ लड़ने में हमें अपना खून पानी करना होगा, पानी! स्वराज्य-प्राप्ति कोई खेल नही है— वह कोई सस्ते दामों मिलनेवाली चीज भी नही है। उसे पाने के लिए भारतीयों को अपनी गर्दन कटाने तक के लिए तैयार रहना ही चाहिए, वह मुफ्त में मिलनेवाली जिन्स नही है। आप लोग आज मेरा विरोध कर सकते हैं, लेकिन अव ऐसा समय आने ही वाला है कि जव आप सभी लोग कहेंगे कि गांधी जो कहता था सो सच था। इसलिए जवतक इस मामले में वहुमत मेरे पक्ष में है, तवतक मैं विपक्षी लोगों से प्रार्थनापूर्वक कहता हूं कि वे इस प्रस्ताव का विरोध इसलिए न करें कि मानने में उन्हें थोडा-वहुत त्याग करना पड़ेगा।

हम लोग ऐसा विश्वास क्यों न रक्खें कि हम कांग्रेस के सभी सदस्य प्रामाणिकतापूर्वक काम करेंगे ? क्या हम इस वात की आशा न रक्खें कि लोग अपने ही द्वारा पारित प्रस्ताव को कार्यान्वित करेंगे ? हां, यदि आपको खादी पहनने में सिद्धान्ततः आपत्ति हो अथवा वह वात आपकी अन्तरात्मा के विरुद्ध पड़ती हो तो आपको कांग्रेस छोड़ देनी चाहिए। लेकिन कांग्रेस में रहते हुए आप उसके प्रस्ताव का अनादर नही कर सकते। जवतक मैं कांग्रेस में हूं तवतक उसके द्वारा पास किये गये प्रस्ताव के अनुसार काम करना मेरा कर्त्तव्य है, भले ही मेरे द्वारा प्रस्तुत किये गये प्रस्ताव के पक्ष मे वहुत ही कम सदस्यो ने मत क्यो न दिया हो।

आप लोग यह भी कहते है कि वहुमत अत्याचार कर रहा है। जरा सोचिए कि मुट्ठीभर लोग इस विशाल देश पर मनमाने ढंग से शासन चला रहे हैं और

आपके कानो पर जू तक नही रेगती? परन्तु सच्चाई के विरोध मे निराधार आपत्तिया उठाना हमे जरूर आता है। मैं आपको सचेत कर रहा हू, याद रखे कि यदि आपने खादी को त्याग दिया तो जनता भी आपका परित्याग कर देगी। यदि आपने खादी छोड दी तो आपके तथा उदार दलवाले लोगो के बीच फर्क ही क्या रह जायगा? हम लोग कैसे विचित्र है—हम स्वय तो खादी का उपयोग नही करते और नेताओ से उसके उपयोग की आशा रखते हैं। मैंने जनता की सेवा बाबा साहब के समान भले ही न की हो, परन्तु इन दस वर्षो की अवधि मे मैंने जनसाधारण की जो सेवा की है उससे मैं उसको भलीभाति जान गया हू। यही कारण है कि आप लोगो को मैं सचेत कर रहा हू और कहता हू कि खद्दर को त्याग देने से आपको हाथ कुछ न लगेगा।

—कानपुर, २४।१२।१९२५। न० जी०, ३।१।१९२६।]

६९. भाषण: दक्षिण अफ्रीकी भारतीयों से सम्बन्धित प्रस्ताव पर[1]

२५ दिसम्बर १९२५

श्री गाधी जी ने प्रस्ताव पेश किया

काग्रेस दक्षिण अफ्रीकी भारतीय काग्रेस के शिष्टमण्डल का हार्दिक स्वागत करती है और वह दक्षिण अफ्रीका-वासी भारतीयो को आश्वस्त करना चाहती है कि जिन एक-जुट शक्तियो के कारण उस उप-महाद्वीप मे उनके अस्तित्व को ही खतरा है उनके विरुद्ध किये जानेवाले सघर्ष मे काग्रेस पूर्ण समर्थन करेगी।

काग्रेस का दृढ मत है कि प्रस्तावित विधान—जो कि क्षेत्र सरक्षण तथा प्रवासी पजीकरण (अतिरिक्त उपलब्ध) विधेयक (एरियाज रिजर्वेशन एण्ड एमिग्रेशन रजिस्ट्रेशन) (फरदर प्रोविजन) के नाम मे पुकारा जाता है—१९१४ मे स्मट्स-गाधी समझौते का उल्लघन है, क्योकि एक तो इसका स्वरूप जातीय है और फिर इसका उद्देश्य न केवल भारतीय अधिवासियो की स्थिति को १९१४ से बदतर बनाना है, बल्कि इसका उद्देश्य किसी भी स्वाभिमानी भारतीय के लिए उस देश में रहना असम्भव बना देना भी है। काग्रेस के विचार मे उक्त समझौते का जो अर्थ भारतीय प्रवासियो-द्वारा लगाया जाता है, यदि सघ सरकार उसे स्वीकार नही करती तो इस मामले का उसी प्रकार पच-फैसले से निर्णय होना

---

१. कानपुर मे हुई कांग्रेस की विषय-समिति की बैठक में।

चाहिए जैसा कि १८९३ में ट्रान्सवाल के भारतीय प्रवासियों के मामले का हुआ था और जैसा कि १८८५ के कानून ३ को कार्यान्वित करते समय किया गया था।

कांग्रेस इस सुझाव का हार्दिक समर्थन करती है कि इस प्रश्न का निपटारा करने के लिए गोलमेज परिषद् बुलाई जाय, जिसमें दूसरे लोगों के साथ-साथ उपयुक्त भारतीय-प्रतिनिधियों को भी आमन्त्रित किया जाय और कांग्रेस का विश्वास है कि उपनिवेश सरकार इस सुझाव को स्वीकार करेगी। यदि गोलमेज परिषद का और पंच-निर्णय के प्रस्ताव न माने जायँ, तो कांग्रेस का विचार है कि इस विधेयक के संघ-संसद में पास हो जाने पर साम्राज्य-सरकार को इस पर अपनी स्वीकृति नहीं देनी चाहिए।

पण्डित बनारसीदास चतुर्वेदी का मत था कि कांग्रेस ने विदेशों में बसे भारतीयों की दुर्दशा की उपेक्षा करके निन्दनीय काम किया है। वह चाहते थे कि विभिन्न नेता उनके समर्थन और सहायता के लिए विशाल आन्दोलन संगठित करें, अन्यथा प्रस्ताव में किया गया "पूर्ण समर्थन" का वादा निरर्थक हो जायगा। उन्होंने जनता में किये जानेवाले ऐसे प्रचार की भी निन्दा की कि जबतक हमें स्वराज्य नहीं मिलता तबतक हम विदेशों मे बसे भारतीयों की सहायता नहीं कर सकते।

इसका उत्तर देते हुए श्री गांधी ने स्वीकार किया कि पण्डित बनारसीदास उन थोड़े से कार्यकर्त्ताओं मे से हैं जो विदेशों में बसे भारतीयों के लिए कार्य कर रहे है। किन्तु वह भी अति उत्साह में भटक गये है। कांग्रेस जो-कुछ कर सकती थी वह सब उसने किया है। उससे अधिक वह कर नही सकती। मेरे इस प्रस्ताव का मस्विदा[1] दक्षिण अफ्रीकी शिष्टमण्डल के साथ तीन घण्टे की बातचीत के बाद तैयार किया गया है। इस प्रस्ताव द्वारा कांग्रेस ने घोषणा कर दी है कि वह अधिक से-अधिक क्या कर सकती है। जहां तक अर्थिक सहायता का सवाल है साम्राज्यीय नागरिक संघ (इम्पीरियल सिटिजनशिप एसोसिएशन) के पास इस कार्य के लिए पर्याप्त सार्वजनिक निधि है। मैंने स्वयं पण्डित बनारसीदास को धन मुहय्या करके दिया है। दूसरे वक्ता ने यह आपत्ति उठाई है और इस बात पर जोर दिया है कि उस वाक्य को हटा दिया जाय जिसमें ब्रिटिश सरकार से स्वीकृति न देने के लिए कहा गया है। इसके बारे में मेरा कहना है कि यदि इस वाक्य को भी हटा लिया गया तो इस प्रस्ताव से दक्षिण अफ्रीकी भारतीयों को क्या सान्त्वना मिलेगी? फिर क्या आप लोग कौसिलों में काम करने नहीं गये है? मै तो चाहता हू कि मैं बिना कौसिलों के काम कर सकू, किन्तु आप लोग नहीं कर सकते। आप मुझपर

१. देखिए "भाषण : कानपुर अधिवेशन में", २६।१२।१९२५।

विश्वास कीजिए, मैं दक्षिण अफ्रीकी का भीतर-बाहर सब कुछ जानता हूं। यदि मैं ऐसा अनुभव करता कि मेरे दक्षिण अफ्रीका जाने से कुछ लाभ हो सकता है, तो मैं वहा अवश्य चला जाता।

अन्त मे प्रस्ताव हर्षध्वनि के साथ स्वीकृत हो गया।

—कानपुर, २५।१२।१९२५। 'लीडर', २८।१२।१९२५।]

७०. सन्देश : 'जमाना'[1] को

कानपुर

(२६ दिसम्बर, १९२५)

आप चाहे उदार दलवादी, नरम दलवादी या राष्ट्रवादी हो, हिन्दू हो या मुसलमान, पूरब के रहनेवाले हो या पश्चिम के, पर यदि आप भारत की उस जनता के साथ अपना भाईचारा मानते हो जिसके साथ आपका भाग्य जुडा हुआ है, जिनके बीच आप पैदा हुए हैं, तो आप केवल हाथकती और हाथबुनी खादी के वस्त्रो का उपयोग करें, इसके अतिरिक्त और कुछ नही।

—कानपुर, २६।१२।१९२५। अमृत बाजार पत्रिका, २९।१२।१९२५।]

७१. भाषण : कांग्रेस के कानपुर-अधिवेशन में

२६ दिसम्बर, १९२५

काग्रेस के कानपुर-अधिवेशन में दक्षिण अफ्रीका के भारतीयों की स्थिति के विषय में काग्रेस की ओर से प्रस्ताव गांधी जी ने पेश किया था। निम्नलिखित भाषण उसी अवसर का है। पहले वह हिन्दी[2] में बोले:

"यदि वर्गक्षेत्र विधेयक को कानून का रूप मिल गया तो ऐसे प्रत्येक भारतीय को, जिसके मन मे किंचित् भी स्वाभिमान होगा, दक्षिण अफ्रीका छोडकर चले जाने के लिए विवश होना पडेगा। उसकी एक विवशता प्रत्यावर्तन से भी बदतर होगी, प्रत्यावर्तित व्यक्तियो को किसी प्रकार का मुआवजा नहीं दिया जायगा

---

१. कानपुर का प्रसिद्ध उर्दू मासिक।

२. मूल हिन्दी भाषण उपलब्ध नहीं है।

और उन्हें कानून के नाम पर वाहर निकाल दिया जायगा। यह काम एशियाई लोगों का दक्षिण अफ़्रीका से नामोनिशान मिटा देने की खातिर गोरी जातिवालों के दृढ़ संकल्प का सूचक होगा। वहां वसे हुए भारतीय समाज के अत्यन्त प्रतिष्ठित व्यक्तियों को—डाक्टरों तथा गाडफ्रे जैसे वैरिस्टरो को भी, जो शिष्टमण्डल के एक सदस्य भी हैं, जिनका लालन-पालन शिक्षा-दीक्षा सव-कुछ दक्षिण अफ़्रीका में ही हुआ है और जो भारत में प्रथम वार आ रहे है—नही रहने दिया जायगा। इस प्रस्ताव द्वारा समस्या के समाधान के रूप मे तीन वातें कही गई हैं। पंच फैसला कराया जाय, गोलमेज परिपद् वुलाई जाय और अगर इन दोनों मे से एक भी सम्भव न हो तो भारत सरकार सम्राट की सरकार से निवेदन करे कि वह अपने विशेपाधिकार का प्रयोग करके प्रस्ताव पर स्वीकृति न दे। इस प्रस्ताव में भारतीयों से यह भी कहा गया है कि वे अपने देशवासियों के संकट-काल में उनका साथ दें और उनकी पूरी मदद करें। यदि दक्षिण अफ़्रीका के भारतीय सत्याग्रह करने की ठानें तो यहां के भारतीयों का कर्त्तव्य है कि धन से उनकी यथाशक्ति सहायता करें। इस महत्वपूर्ण समस्या के सम्वन्ध में सत्याग्रह शुरू करने में मुझे खुशी तो होगी, पर वात यह है कि वातावरण अनुकूल नही है। यदि भारत के हिन्दू और मुसलमान उन्हें इस वात का विश्वास दिला सके कि वे शान्तिपूर्ण सत्याग्रह शुरू करने के वारे में एकमत है और इस वात का भी विश्वास दिला सकें कि दक्षिण अफ़्रीका में वसे हुए हिन्दुओं और मुसलमानों के गाढ़े वक्त में वे अपने आपसी झगड़े भूल गये हैं तो मैं संघर्ष प्रारम्भ करने के लिए कटिवद्ध हो जाऊंगा। जवतक यह नही हो जाता तवतक संघर्ष वहाँ के भारतीय ही चलायें और भारत यथाशक्ति सहायता देकर ही सन्तोष मान ले।"

वाद में इस खयाल से कि डा० रहमान इस मामले में गांधी जी की भावनाओं को समझ सकें और इस उद्देश्य से कि चेतावनी भरे उनके शब्द दक्षिण अफ्रीका के राजनीतिज्ञों के कानों तक पहुँच जायँ, गांधी जी काफी देर तक अंग्रेजी में वोले :—

श्रीमती सरोजिनी देवी और मित्रो,

मुझे मालूम नहीं कि जो प्रस्ताव मैं रख रहा हूँ, उसकी प्रतिलिपियाँ आप लोगों तक पहुँच गई है या नही। आप लोगों को प्रस्ताव सुनने का कष्ट न उठाना पड़े और राष्ट्र का थोड़ा-सा समय भी वच जाय इसलिए आप प्रस्ताव सुन ही लें। वह इस प्रकार है :[1]

---

१. यह अनुच्छेद भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस के ४०वें अधिवेशन की रिपोर्ट से लिया गया है। प्रस्ताव के लिए देखिए "भाषण : दक्षिण अफ्रीका के भारतीयों से सम्बन्धित प्रस्ताव पर", २५।१२।१९२५।

आप लोगों के सामने इस प्रस्ताव को स्वीकृति के लिए पेश करते हुए मुझे वडी खुशी होती है; यही नहीं, श्रीमती सरोजिनी देवी ने इसे आपके सामने पेश करने का कार्य मुझे सौंपा है, इसे मैं अपना परम सौभाग्य मानता हूँ। सरोजिनी देवी ने मुझे "दक्षिण अफ्रीकी" कहकर आप लोगो से मेरा परिचय कराया है, लेकिन यदि उन्होंने इसमे इतने शब्द "जन्म से भारतीस्तानी लेकिन दक्षिण अफ्रीका के दत्तक पुत्र" और जोड दिये होते तो ज्यादा ठीक होता। दक्षिण अफ्रीका ने मुझे गोद जरूर लिया है। दक्षिण अफ्रीका से आये हुए जिस शिष्टमण्डल का आप प्रेम-पूर्वक स्वागत करनेवाले हैं उसके नेता जब मच पर आयेंगे और डा० रहमान आप लोगो से यह कहेंगे कि दक्षिण अफ्रीका के भारतवासियो का यह दावा है कि हिन्दुस्तान को गाधी हम लोगो ने दिया है तब आप पर यह बात प्रकट हो जायगी। उनका यह दावा मुझे स्वीकार है। यह बात बिल्कुल सच है कि हिन्दुस्तान की जो-कुछ भी सेवा मैं कर सकता हूँ—वह असेवा भी हो सकती है—उसका कारण ही यह है कि मैंने उसकी क्षमता दक्षिण अफ्रीका मे प्राप्त की थी। मेरी यह सेवा, यदि असेवा है तो यह उनका दोष नही है, यह तो मेरी त्रुटि के कारण है। इसलिए, इस प्रस्ताव मे जो-कुछ कहा गया है उसके समर्थन में मैं आप लोगो के सामने कुछ तथ्य रखूँगा। यह विधेयक दक्षिण अफ्रीकी भाइयो के सिरो पर नगी तलवार की तरह लटक रहा है, इसका उद्देश्य भारतवासियो के प्रति केवल अधिक अन्याय करना ही नही, बल्कि दक्षिण अफ्रीका से उन्हे निकाल बाहर करना है।

निःसन्देह इस विधेयक का यही अर्थ है। दक्षिण अफ्रीका के गोरों ने इस अर्थ को सही माना है। सघ सरकार ने भी नही कहा कि उसका यह अर्थ नही है। यदि विधेयक का परिणाम यही हो तो दक्षिण अफ्रीका के भारतवासियो को उससे कितना दुःख होगा, इसकी कल्पना आप स्वय ही कर सकते हैं। थोडी देर के लिए यह मान लिया जाय कि विधानसभा की बैठक मे देशनिकाले का कोई कानून पास होनेवाला है और उससे एक लाख भारतवासियो को हिन्दुस्तान मे से निकाल दिया जायगा तो ऐसी आफत के समय हम लोग क्या करेंगे? ऐसे प्रसग मे हमारा व्यवहार कैसा होगा? ठीक, ऐसा ही प्रसग वहाँ उपस्थित है। इसीलिए यह शिष्टमण्डल आप लोगो के पास आया है। हिन्दुस्तान की जनता से, काग्रेस से, वाइसराय से, भारत-सरकार से और उसके जरिये साम्राज्यीय सरकार से मदद प्राप्त करने के लिए यह शिष्टमण्डल यहाँ आया हुआ है।

लार्ड रीडिंग ने उन्हें एक लम्बा उत्तर दिया है, और कितना अच्छा होता कि मैं इसे सन्तोषजनक उत्तर भी कह सकता। किन्तु वाइसराय महोदय का उत्तर जितना लम्बा है उतना ही असन्तोषजनक भी है। और यदि लार्ड रीडिंग का

इरादा शिष्टमण्डल के सदस्यों से यही बात कहने का था तो वह यह बात थोड़े से शब्दों में कह सकते थे, और इस प्रकार वह उन सदस्यों को और इस देश को यह करुण और दयनीय दृश्य देखने से बचा सकते थे जिसमें एक शक्तिशाली सरकार खुले तौर पर यह स्वीकार कर रही है कि वह दक्षिण अफ़्रीका के उन भारतीयों की समुचित मदद करने मे असमर्थ है, जो अपनी किसी गलती के कारण नहीं बल्कि, जैसा कि दक्षिण अफ़्रीका के अनेक यूरोपीय स्वीकार करेंगे, अपने गुणों के कारण अब दक्षिण अफ़्रीका से निष्कासित होने के खतरे मे पड़ गये हैं। जिन लोगों को वहाँ से निकाल देने की कोशिश की जा रही है उनमें से कितनों की तो दक्षिण अफ़्रीका जन्मभूमि ही है। वाइसराय महोदय के इस कथन से कि भारत-सरकार ने दक्षिण अफ़्रीका की सरकार के पास अर्जियां भेजने का अथवा न्याय की भीख माँगने का अधिकार हमेशा से अपने ही हाथ में रखा है, न तो उनके उन मित्रों को सन्तोष मिला है और न हमें ही। दूसरे शब्दों मे एक जबर्दस्त सरकार, जिस सरकार के बारे में यह माना जाता है कि तीस करोड़ मनुष्यों की किस्मत उसके अधीन है, अपनी लाचारी जाहिर कर रही है! ऐसा क्यों? कारण यह है कि दक्षिण अफ़्रीका औपनिवेशक स्वराज्य-प्राप्त देश है और इसलिए भी कि वह यह धमकी दे रहा है कि यदि भारत-सरकार और सम्राट की सरकार ने उसके द्वारा की गई किसी भी कार्रवाई का विरोध या उसमें हस्तक्षेप करने की कोशिश की तो वह साम्राज्य से सम्बन्ध-विच्छेद कर लेगा।

गृहनीति

लार्ड रीडिंग ने शिष्टमण्डल से कहा है कि जो राज्य औपनिवेशिक स्वराज्य हासिल किये हुए है उनके घरेलू मामलों मे दखल देने का अधिकार न तो भारत-सरकार को है और न साम्राज्यीय सरकार को। जिस नीति का उद्देश्य दक्षिण अफ़्रीका में बसे हुए हजारों भारतवासियों की खानाखराबी हो और उन्हें मनुष्यत्व के सामान्य अधिकार से भी वंचित रखना हो, उस नीति को "घरेलू नीति" के नाम से पुकारने का मतलब ही क्या है? भारतवासियों के बजाय यदि यूरोपीय या अंग्रेज लोग ही ऐसी स्थिति में होते तो क्या होता?

एक उदाहरण पेश करता हूँ। आप यह जानते हैं कि बोअर युद्ध किसलिए हुआ था? दक्षिण अफ़्रीका में जो यूरोपीय लोग स्थायी रूप से बस गये थे और जिनको ट्रान्सवाल की रिपब्लिकन सरकार ने "आउट लैण्डर्स" नाम दे रखा था, उनका संरक्षण करने के लिए यह युद्ध छेड़ा गया था। स्वर्गीय श्री जोजेफ चेम्बरलेन

का ब्रिटिश सरकार की ओर से यह कहना था कि यद्यपि ट्रान्सवाल की सरकार स्वतन्त्र है फिर भी उसे घरेलू प्रश्न नही माना जा सकता।

सस्कृतियो का वैषम्य

लार्ड लैंसडाउन ने कहा था कि जब मैं ट्रान्सवाल के भारतीयो की तकलीफो का विचार करता हूँ तब मेरा खून खौलने लगता है। वह मानते थे कि दक्षिण अफ्रीका के भारतीयो की तकलीफें भी—अधिक ठीक तो यह कहना है कि ट्रान्सवाल के भारतीयो की तकलीफें—बोअर युद्ध के मुख्य कारणो मे से एक थी। अब वे घोषणाएँ कहाँ विलीन हो गईं? आज जब डेढ़ लाख भारतवासियो की जान, इज्जत और रोजी जोखिम मे आ पडी है, ब्रिटिश सरकार को सघ सरकार के साथ युद्ध करने की बात क्यो नही सूझती?

इस कानून को बनाने के परिणामो के सम्बन्ध मे मैंने जिस परिस्थिति का वर्णन ऊपर किया है उसके सम्बन्ध मे किसी को कुछ भी सन्देह नही है। दक्षिण अफ्रीका मे ब्रिटिश भारतवासियो की तकलीफें बढती जा रही है, इससे भी कोई इनकार नही कर सकता। विशप फिशर ने, जो कुछ ही मास पूर्व दक्षिण अफ्रीका गये थे, एक छोटी-सी सुन्दर पुस्तिका लिखी है। यदि आप उसको देखेंगे तो आपको दक्षिण अफ्रीका मे बसे हुए भारतीयो पर बरपा होने वाली मुसीबतो का कुछ अन्दाज हो जायगा। विशप फिशर निष्पक्ष होकर इस राय पर पहुँचे हैं कि इसमे भारतीयो का कोई कसूर नही है। इन अन्यायो के लिए तो वहाँ के गोरो का द्वेष-भाव और उद्दण्डता ही उत्तरदायी है। विशप फिशर का दृढ मत है कि भारतीयो की भलमनसी को देखते हुए तो उसके प्रति दक्षिण अफ्रीका के गोरो का वर्ताव अधिक अच्छा ही होना चाहिए था। यदि ससार मे न्याय कोई चीज है और यदि अभीतक अधिकारो के सिर पर राजछत्र है तो दक्षिण अफ्रीका के गोरो के लिए उस कानून को पास करना सम्भव न होता। उस हालत में दक्षिण अफ्रीका के गोरो के लिए उस विधेयक को कानून का रूप दिलाना सम्भव नही होता और न यह जरूरी होता कि मैं आप लोगो का मूल्यवान समय नष्ट करूँ और शिष्टमण्डल अपना धन व्यर्थ ही नष्ट करे।

लेकिन नही। अधिकार की तूती बोलने के बजाय "जिसकी लाठी उसकी भैंस" यही देखने मे आ रहा है। दक्षिण अफ्रीका के गोरे हमारे देशवासियो के प्रति अन्याय करने पर उतर आये हैं, सो किसलिए? दो सस्कृतियो का परस्पर-विरोधी होना इसका कारण है। ये शब्द मेरे नही हैं, जनरल स्मट्स के हैं। वह इस विरोध को सहन नही करते। दक्षिण अफ्रीका के यूरोपीय यह मानते हैं कि यदि हिन्दुस्तान

से आनेवाले इन दलों को दक्षिण अफ़्रीका में आने से रोक न दिया जायगा तो उन्हें भय है कि पूर्व के लोग उन्हें पीस डालेंगे। किन्तु समझ में नहीं आता कि हम लोग उनकी संस्कृति को नष्ट कैसे कर सकते हैं? हमारे यहाँ के सभी स्त्री-पुरुष मितव्ययी होते हैं, क्या इसी कारण उनकी संस्कृति नष्ट हो जायगी? क्या वह इस कारण भ्रष्ट हो जायगी कि हम लोगों को शाकभाजी या फलों की फेरी लगाकर ये चीजें दक्षिण अफ़्रीका के किसानों के सोलहों दरवाजे-दरवाजे पहुँचाने में शर्म नहीं लगती है? दक्षिण अफ़्रीका के किसानों के पास दो या तीन बीघे के नहीं, सैंकड़ों एकड़ के खेत हुआ करते हैं और एक ही व्यक्ति उनका सोलहो आने मालिक होता है। आप जानते हैं कि भारतीय फेरीवाले दक्षिण अफ़्रीका के बोअर तथा यूरोपीय किसानों की कितनी बड़ी सेवा कर रहे हैं। झगड़े का मूल कारण यही है।

इस्लाम से खतरा

किसी ने कहा है, यह याद नहीं है कि किसने, लेकिन कहा अभी-अभी है कि दक्षिण अफ़्रीका के गोरों को वहाँ इस्लाम के फैल जाने का डर है। जिस इस्लाम ने स्पेन में संस्कृति को प्रविष्ट किया और भारत तथा मोरक्को में सभ्यता फैलाई और जिसने सारी दुनिया को भ्रातृभाव का सिद्धान्त सिखाया उस इस्लाम से खतरा कैसा? उन्हें डर है कि अगर दक्षिण अफ़्रीका के मूल निवासी इस्लाम को स्वीकार कर लेंगे तो वे बराबरी का दर्जा माँगेंगे। यदि वे इस बात से डरते हैं तो डरें। भाईचारे की भावना यदि पाप है और यदि वे काले लोगों को बराबरी का दर्जा मिल जाने से डरते हैं तब तो कहा जा सकता है कि उनका डर बेजा है। क्योंकि मैंने देखा है कि यदि कोई जुलू ईसाई धर्म अंगीकार कर लेता है तो ऐसा करते ही लाजिमी तौर पर वह अन्य सारे ईसाइयों के बराबर का नहीं हो जाता। परन्तु यदि वही व्यक्ति इस्लाम धर्म ग्रहण कर लेता है तो वह उसी दिन से सब मुसलमानों के साथ बराबरी के दर्जे पर खानपान करने लगता है। उन्हें डर इस बात का ही है। हकीकत यही है कि उन्हें आलमगीर बनना है, दुनिया में जितनी भी जमीन है, सब पचा लेनी है। कैसर की सब शान मिट गई है, वह पददलित है, फिर भी उसे एशियाई संगठन का डर लगा हुआ है और देश-निकाला हो जाने पर भी एक कोने में बैठा हुआ वह यही आवाज लगाता रहता है कि यह ऐसा संकट है जिससे यूरोपीयों को सावधान रहना चाहिए। यही तो संस्कृति का झगड़ा है और इसीलिए लार्ड रीडिंग में उनके घरेलू इन्तजाम में हस्तक्षेप करने की शक्ति नहीं है।

इस संघर्ष के परिणाम भयंकर हो सकते हैं। प्रस्ताव में इस संघर्ष को असमान

प्रतिपक्षियो का युद्ध कहा गया है और प्रस्ताव द्वारा इस असमान युद्ध मे काग्रेस से अपना कर्त्तव्य निबाहने के लिए कहा गया है। यदि मेरी आवाज दक्षिण अफ्रीका जैसे सुदूर देश तक पहुँच सकती है तो मैं वहाँ के राजनीतिज्ञो से, जिनके हाथ मे दक्षिण अफ्रीका के भारतीयो का भविष्य है, (न्याय करने की) अपील करना चाहता हूँ।

उज्ज्वल पहलू

अव तक मैंने दक्षिण अफ्रीका के भारतीयो से सम्बन्धित धूमिल पहलू को ही प्रस्तुत किया है। मुझे यहाँ यह भी कह देना चाहिए कि इन गोरो मे कितने ऐसे भी है, जिन्हे मैं अपना अति मूल्यवान मित्र समझता हूँ। दक्षिण अफ्रीका के गोरो मे से कुछ व्यक्तियो ने मुझ पर अपना प्रेम वरसाया है और मेरा वहुत आतिथ्य-सत्कार किया है। मुझे इस वात का भी गर्व है कि दक्षिण अफ्रीका की उस त्याग की मूर्ति दानशीला महिला आलिव श्राइनर से, जोकि एक प्रख्यात कवयित्री हैं, मेरी घनिष्ट मैत्री रही है। वह दक्षिण अफ्रीका के मूल निवासियो की तथा वसे हुए भारतीयो की समान रूप मे हितैषिणी थी, उनकी निगाह मे काले-गोरे सभी समान थे। उनके हृदय मे भारतीयो, जुलू तथा वण्टू जाति के लोगो के प्रति इतना प्यार था मानो वे उन्ही की सन्तान हो। उन्हे अन्य लोगो की अपेक्षा दक्षिण अफ्रीका के वतनी की झोपडी मे ठहरना ज्यादा पसन्द था। वह दान करती थी, परन्तु उसका ढिढोरा नही पीटती थी। दक्षिण अफ्रीका मे ऐसे नर-रत्नों और स्त्री-रत्नो ने जन्म लिया है और उनका वही लालन-पालन भी हुआ है।

चेतावनी

मैं आपको अन्य अनेक व्यक्तियो के नाम गिना सकता हूँ—जनरल स्मट्स के साथ मेरा परिचय है, यद्यपि मैं उनका मित्र होने का दावा नही कर सकता। सघ-सरकार की तरफ से मेरे साथ समझौता इन्ही सज्जन ने किया था। उन्होंने ही कहा था कि "दक्षिण अफ्रीका के ब्रिटिश भारतीय स्वय उस समझौते के अधिकारी हैं। यह करार अपने अन्तिम रूप मे है, अव भारतीय सत्याग्रह करने की धमकी न दें और दक्षिण अफ्रीका के गोरे यहाँ वसे हुए भारतीयो को चैन से वैठने दे", ये वचन भी जनरल स्मट्स के ही थे।

लेकिन दक्षिण अफ्रीका से मैंने पीठ फेरी नही कि भारतीयो पर एक-के-वाद-एक अन्याय होने शुरू हो गये। जनरल स्मट्स का वह वादा अव कहाँ गया? एक दिन प्रत्येक मनुष्य को जिस मार्ग से जाना है, उसी मार्ग से एक दिन उन्हे भी

तो जाना है। उनकी वाणी और उनकी करनी ही पीछे रह जायगी। वह जनरल स्मट्स की व्यक्तिगत हैसियत से बोले हों, सो बात नहीं है। उन्होंने एक राष्ट्र के प्रतिनिधि की हैसियत से एक यथोचित बात कही थी। वह ईसाई होने का दावा करते हैं, दक्षिण अफ्रीका की सरकार का हरएक सदस्य अपने को ईसाई कहता है। संसद का काम शुरू करने से पहले वे "बाइबिल" में से प्रार्थना पढ़ते हैं और द० अ० का एक पादरी प्रार्थना से ही सदन का कार्य शुरू करता है। यह प्रार्थना जिस ईश्वर की की जाती है वह ईश्वर न तो गोरों का है, न हब्शियों का, न मुसलमानों का और न हिन्दुओं का। वह तो सभी का, सम्पूर्ण सृष्टि का ईश्वर है।

मैं इस गौरवपूर्ण पद पर बैठा हुआ और अपनी जवाबदेही को पूरी तरह समझता हुआ यह कहता हूँ कि दक्षिण अफ्रीका के भारतीयों को जो आधारभूत न्याय प्राप्त करने का हक है उस न्याय को देने में जरा भी संकोच किया गया और न्याय न किया गया तो वह आचरण "बाइबिल" के विरुद्ध होगा और वे ईश्वर के प्रति भी अश्रद्धा रखने के दोषी बनेंगे।

—हिन्दी-अंग्रेजी। कानपुर, २६।१२।१९२५। यं० इं०, ७।१।१९२६।]

७२. भेंट : एसोसिएटेड प्रेस आफ इण्डिया के प्रतिनिधि से

कानपुर
२९ दिसम्बर, १९२५

एसोसिएटेड प्रेस आफ इण्डिया के प्रतिनिधि ने गत शाम कांग्रेस अधिवेशन में पास हुए पण्डित मोतीलाल नेहरू के प्रस्ताव के बारे में गांधीजी का मत जानने के लिए उनसे भेंट की। गांधीजी ने प्रतिनिधि से कहा :

मैंने कल कांग्रेस की बैठक में भाग नहीं लिया क्योंकि कल मेरा मौन दिवस था और जहाँ तक बन सके मैं मौन के समय अपने स्थान से बाहर नहीं जाता। जहाँ तक स्वयं प्रस्ताव का सम्बन्ध है, मेरी स्थिति इस प्रकार है: पटना में मैंने सारा नियन्त्रण व्यक्तिगत रूप से स्वराज्यवादी दल को सौंप दिया था और मैंने उन्हें ऐसी सहायता देने का वादा किया था जैसा कोई कौंसिल-विरोधी दे सकता है। मैं अब भी सिद्धान्त रूप से कौंसिल-प्रवेश के विरुद्ध हूँ। किन्तु मेरे सामने विकल्प अपने पुराने साथियों को बिलकुल छोड़ देने और यथासम्भव उनकी सहायता करने के बीच में था। मुझे फैसला करने में कोई कठिनाई नहीं हुई। मैंने अनुभव किया कि यदि मैं सक्रिय रूप से उन्हें सहायता नहीं दे सकता तो मुझे उन्हें

किसी प्रकार की हिदायत आदि भी न देनी चाहिए। इसलिए मुझे लगा कि मैं अपने जैसे दूसरे अपरिवर्तनवादियों को भी यह सलाह दूं कि वे कांग्रेस पर कब्जा करने की कोशिश न करें और उसे स्वेच्छया स्वराज्यवादियों को सौंप दें। मुझे खुशी है कि उन्होंने वैसा ही किया है।

प्र०——क्या आप उस प्रस्ताव से सन्तुष्ट हैं जो कांग्रेस ने पास किया है?

वास्तव में पण्डित मोतीलाल नेहरू ने वह प्रस्ताव मुझे दिखाया था। जब वह मेरे पास आये तो मैंने उनसे कहा कि प्रस्ताव के पाठ के बारे में निर्णय करना उनका और स्वराज्यवादी दल का काम है। चूंकि उन्होंने प्रस्ताव मुझे दिखाया इसलिए मैंने कुछ सुझाव भी दिये थे। जो उन्हें ऐसे लगे कि वे विवेकपूर्वक स्वीकार कर सकते हैं, उन्होंने स्वीकार कर लिये किन्तु कुछ ऐसे भी सुझाव थे, जिन्हें वह स्वीकार नहीं कर सके। लेकिन उन्हें स्वीकार करने के लिए मेरा जोर देना भी उचित न था। मुझे अपने कर्त्तव्य का निर्वाह करना था और मैं अपने कर्त्तव्य का तभी निर्वाह कर सकता था जब कि मैं वही प्रस्ताव स्वीकार करता जो स्वराज्यवादी दल के अधिकांश प्रतिनिधियों को स्वीकार हो।

यह पूछने पर कि कांग्रेस के निर्णय के फलस्वरूप आपका भावी कार्यक्रम क्या होगा, गांधीजी ने उत्तर दिया :

मेरा काम तो यही है कि मैं शान्त रहूं, और जो रचनात्मक कार्य मैं कर सकूं, करता रहूँ, तथा बाकी अर्थात् कांग्रेस के प्रस्ताव को कार्यान्वित करने के दायित्व को पूर्ण रूप से स्वराज्यवादियों पर छोड़ दूं, उसमें कोई रुकावट न डालूं, बल्कि जहां सम्भव हो मैं उन्हें मदद दूं।

—अंग्रेजी। कानपुर, २९।१२।१९२५। हिन्दुस्तान टाइम्स, ३१।१२।१९२५।]

७३. 'फ्रीडम'[1] पत्र के लिए सन्देश

मई १, १९२६

किसी समाचारपत्र के लिए 'फ्रीडम' (मुक्ति) एक आकर्षक नाम है। किन्तु यह ऐसा शब्द है जिसका बहुत दुरुपयोग होता है। जब एक गुलामों का मालिक मुक्ति की बात करता है, तब हम जानते हैं कि उसका आशय बिना किसी विघ्न-बाधा के अपने गुलाम का उपयोग करना है। एक मद्यप की मुक्ति (स्वतन्त्रता)

---

१. यह पत्र पं० मोतीलाल नेहरू एवं श्री श्रीप्रकाश इत्यादि ने निकाला था।

का अर्थ उसका तबतक मद्यपान करते जाने की छूट है जबतक कि वह ज्ञानरहित नहीं हो जाता और उसके बाद भी बहुत समय तक। किसकी मुक्ति और कैसी स्वतन्त्रता यह पत्र चाहता है, यह प्रसंगोचित सवाल है। यह तथ्य कि यह पत्र मोतीलाल जी की सृष्टि है, स्वयं अपने में आश्वासन है कि मुक्ति का अर्थ जन-समूह की मुक्ति है। और जन-समूह की मुक्ति का अर्थ है, जिस अर्द्ध-बुभुक्षा की स्थिति में कोटि-कोटि लोग रह रहे हैं उसका सामना करने और उसको दूर करने की उनकी क्षमता। इस क्षण तो मुक्ति का यही पक्ष मुझे सबसे ज्यादा अपील करता है, क्योंकि जन-समूह की मुक्ति में स्वयं ही अछूतों की मुक्ति और विभिन्न धर्मावलम्बियों के लिए किसी भी मनुष्य-द्वारा कोई बाधा उपस्थित किये जाने के बिना अपने धर्म-विश्वास का अनुसरण करने की स्वतन्त्रता शामिल है। और जिस ढंग से मैंने जन-समूह की मुक्ति की व्याख्या की है वह तबतक नितान्त असम्भव है जबतक हाथ-कताई को पुनर्जीवित नही कर दिया जाता और केन्द्रीय तथ्य के रूप मे गहरे खादी-प्रचार को ग्रहण नही किया जाता।

मुझे आशा करनी चाहिए कि 'फ्रीडम' बार-बार उस जनसमूह के जीवन के इस केन्द्रीय तथ्य के राष्ट्रीय महत्व का अपने पाठकों को स्मरण दिलाता रहेगा, जिसके साथ, अगर हम स्वराज्य चाहते है तो, हमें घुल-मिलकर रहना चाहिए।

मो० क० गांधी

—अंग्रेजी। साबरमती, १।५।१९२६। साबरमती संग्रहालय में सुरक्षित पत्रावली से।]

७४. भाषण : हिन्दू विश्वविद्यालय के विद्यार्थियों में

[७ जनवरी १९२७ को गांधीजी कृपलानी जी-द्वारा स्थापित गांधी-आश्रम, काशी के वार्षिकोत्सव में सम्मिलित होने के लिए काशी आये थे। इस प्रवास में मालवीय महाराज के अनुरोध से ८ जनवरी को, उन्होंने हिन्दू विश्वविद्यालय के छात्रों की एक सभा में खादी के महत्व पर भाषण दिया। वह संक्षिप्त रूप में यहाँ दिया जाता है।—सम्पा०]

...कुछ लोग मुझे सलाह देते हैं कि कोई आपकी बात सुनता नही है, इसलिए खद्दर के विषय में बोलना बन्द क्यों नही कर देते ? किन्तु मैं भला अपने प्रिय मन्त्र का पारायण कैसे बन्द कर सकता हूँ, जब मेरे सामने प्राचीन काल के प्रह्लाद का उदाहरण मौजूद है जिसने मृत्यु से अधिक भयंकर यन्त्रणाओ के बीच

भी रामनाम की रटन नही छोडी ? मैं उस एकमात्र सन्देश को भला कैसे छोड सकता हूँ जो मेरे देश की दुरवस्था मेरे कानो मे कहता रहता है ? पण्डित जी ने तुम्हारे लिए लाखो जमा किये हैं और अब भी राजाओ-महाराजाओ से लाखो जमा कर रहे हैं, देखने मे यह रुपया राजाओ-महाराजाओ से आता है, किन्तु वस्तुतः वह हमारे कोटि-कोटि दरिद्रजनो के पास से आता है। यूरोप के प्रतिकूल हमारे देश के धनवान, हमारे ग्रामवासियो की बदौलत धनिक होते जा रहे है और उन दरिद्रो को एक बार भी पूरा भोजन नही मिलता। तुम जो शिक्षा पाते हो, उसका खर्च चुकाते हैं ये भूखे गाँववाले, जिन्हे खुद भी इस प्रकार की शिक्षा नही मिलेगी। सच पूछें तो यह तुम्हारा कर्त्तव्य है कि जो शिक्षा गरीबो के बस की नही है, उसे लेना बन्द कर दो, किन्तु मैं तुम लोगो से इतनी आशा नही करता। मैं तुमसे उन गरीबो का जरा-सा बदला चुकाने के लिए कहता हूँ। उनके लिए थोडा यज्ञ करो। गीता कहती है कि जो यज्ञ किये बिना खाता है, वह अपना भोजन चुराता है। युद्ध काल मे ब्रिटिश नागरिको का यज्ञ यह था कि प्रत्येक घर अपने आँगन मे आलू पैदा करे और थोडा सिलाई का काम करे। हमारे युग और हमारे लिए यह यज्ञ चर्खा ही है। मैं जब-तब दिन-रात इसके बारे मे कहता रहता हूँ, लिखता रहता हूँ। पर आज इससे ज्यादा और नही कहूँगा। यदि भारत के गरीबो के इस करुण सन्देश का तुम्हारे दिलो पर कुछ भी असर पडा हो तो तुम कल कृपलानी जी के खद्दर भण्डार पर धावा बोल दो और उसमे एक गज खद्दर भी बाकी न रहने दो और आज अपनी जेबें खाली कर दो। पण्डित जी ने भिक्षा-कला मे कमाल हासिल किया है। मैंने यह विद्या उन्ही से सीखी है। यदि वह राजाओ-महाराजाओ से कर वसूल करने मे उस्ताद हैं तो मैं भी गरीब लोगो की जेबें उनसे भी अधिक गरीबो के लिए खाली कराने मे वैसा ही बेशर्म हूँ।

. तुम्हारे लिए लाखो रुपये माँगने और महलो के समान इन मकानो को उठाने मे मालवीय जी महाराज का एकमात्र उद्देश्य है—मातृभूमि की सेवा के लिए खरे रत्न भेजना। यह मतलब पूरा न हो सकेगा, अगर तुम पच्छिम से आनेवाली हवा मे बह गये। वह अपवित्रता की वायु है। अगर तुम समय रहते न चेते तो अनीति की बढिया, जिसका बल दिन-पर-दिन बढता जा रहा है, तुम्हे बहा ले जायगी। मैं अपनी सारी शक्ति से तुम्हे पुकार-पुकार कर कहता हूँ कि सँभलो, चेतो, और जलने के, नष्ट होने के पहिले ही भाग चलो।

—हिन्दी। काशी, ८।१।१९२७। यं० इं० मे महादेव भाई के साप्ताहिक पत्र तथा तेंदुलकर के विवरण से।]

७५. भाषण : गुरुकुल कांगड़ी के रजतजयन्ती महोत्सव' में

[महाराष्ट्र के खादी-प्रवास के बाद मार्च १९२७ के मध्य में गांधीजी गुरुकुल कांगड़ी के रजतजयन्ती महोत्सव में शामिल होने के लिए हरद्वार आये। वहाँ के आचार्य रामदेवजी ने महीनों पहिले उनसे इसके लिए अनुरोध कर रक्खा था। स्वा० श्रद्धानन्द की वीरगति के बाद तो उनका वहाँ जाना अत्यन्त आवश्यक हो गया था। उन दिनों हरद्वार स्टेशन पर उतर कर कनखल से होते हुए गुरुकुल जाना पड़ता था। जब गांधीजी गुरुकुल पहुँचे, महोत्सव का तीसरा दिन था। अध्यक्ष राजेन्द्र बाबू के बाद साधु वास्वानी उठे; वह सब श्रोताओं को प्रणाम कर बैठ गये। फिर मालवीयजी महाराज का आशीर्वचन हुआ। तब गांधीजी बोलने उठे। यहाँ उनका भाषण संक्षेप में दिया गया है।—सम्पा०]

आज तो मेरे मन मे ऐसा होता है कि साधु वास्वानी की तरह मैं भी प्रणाम करके बैठ जाऊँ, परन्तु वह अनुकरण-मात्र होगा, स्वाभाविक न होगा। सच पूछें तो स्वामीजी का देहान्त हुआ ही नही है। देहान्त तो तब होगा जब हम उनकी सच्ची देह को मिटाने की कोशिश करेंगे, यद्यपि हमारी कोशिश से भी उनकी देह का नाश होने को नही है। जबतक यह गुरुकुल कायम है, जबतक एक भी स्नातक गुरुकुल की सेवा करता है, तबतक स्वामीजी जीवित ही हैं।

गुरुकुल शिक्षा के क्षेत्र मे उनकी सर्वाधिक मौलिक देन है, क्योंकि जब हम लोग पाश्चात्य शिक्षा के पीछे पागल हो रहे थे तब उन्होंने यह निर्णय लिया कि हमें वैदिक पद्धति पर चिन्तन, आचरण करते हुए अपने को प्रशिक्षित करना चाहिए।

परन्तु गुरुकुल को चिरस्थायी रखने के लिए उस वीरता, ब्रह्मचर्य और क्षमा की आवश्यकता है जो हमने उनके जीवन में देखी है। वीरता का लक्षण क्षमा और ब्रह्मचर्य का वीर्य-सम्बन्धी संयम है। इनकी रक्षा से ही तुम देश और धर्म की रक्षा कर सकोगे। मै जानता हूँ कि यह काम मुश्किल है। तुम्हारे यहाँ के बहुत से विद्यार्थियों के पत्र मेरे पास पड़े हुए है। कोई मेरी स्तुति करते है तो कोई गाली देते है। स्तुति तो निरर्थक वस्तु है। उसका असर मुझ पर नही होता। परन्तु जब विद्यार्थी चिढ़ कर गाली देते हैं तो मुझे चिन्ता होती है, क्योंकि क्रोध से वीर्य का नाश होता है। स्वामीजी के सामने मैंने ब्रह्मचर्य की अपनी व्याख्या रखखी थी, और वह मेरे साथ सम्मत थे। किसी स्त्री का मलिन स्पर्श न करने में ही ब्रह्मचर्य नही होता। हाँ, ब्रह्मचर्य का वहाँ से आरम्भ अवश्य होता है। पर ब्रह्मचर्य का

---

१. देखिए परिशिष्ट में महादेव भाई का लेख।

लक्षण तो क्षमा की पराकाष्ठा है। पिछले साल जब स्वामीजी मुझसे मिलने आये थे तब उन्होंने मुझसे कहा—हिन्दू धर्म की रक्षा नीति से ही सम्भव है। यदि तुम वैदिक आचार-विचार की रक्षा करना चाहते हो तो तुम यह बात याद रक्खो कि तुम्हें पग-पग पर रुपये मिल जायेंगे, किन्तु ब्रह्मचर्य का, नीति का पाया वहाँ पर न होगा तो तुम्हारा गुरुकुल मिट्टी मे मिल जायगा। इस भूमि के तो आत्मा नही है, इसकी आत्मा तो तुम्ही हो। यदि तुम आत्मबल खो दोगे और 'उदरनिमित्त कृत बहुवेश'—जैसे बन जाओगे तो तुम्हारी सारी शिक्षा बेकार जायगी।

मैं आज तुम्हारे आगे चर्खा और खादी की बात करने नही आया हूँ। तुम्हारा पहिला काम ब्रह्मचर्य और वीरता का, क्षमा का है। उसे भूल जाओगे तो स्वामी जी का काम समाप्त हो जायगा। रशीद की गोली से स्वामी जी का क्या हुआ? वह तो उस गोली से ही अमर हुए।

स्वामी जी का दूसरा काम अछूतोद्धार था। जिन शब्दो मे मालवीय जी महाराज ने खादी की वकालत की, मैं नही कर सकता। किन्तु इतना अवश्य कहूँगा कि यदि हम अपने हृदय मे सदा दीन-दुखियो और अछूतो का ख्याल रक्खेंगे तो खादी से अलग नही रह सकते। यदि किसी व्यावहारिक काम मे वीर्य-रक्षा का उपयोग करना हो तो खादी से बढकर दूसरा कोई काम नही है। खादी के कार्य के साथ मैं स्वामी जी का नाम नही जोडना चाहता क्योकि यह उनका मुख्य काम नही था। किन्तु तुम स्नातको! विदेशी कपडे से अपने शरीर सजाने का विचार न करोगे और अपने गरीबो की, अछूतो की रक्षा के ख्याल से केवल खादी ही धारण करोगे।

ईश्वर तुम सबके ब्रह्मचर्य, सत्य और तुम्हारी प्रतिज्ञाओ की रक्षा करें, गुरुकुल का कल्याण करे और स्वामी जी का प्रत्येक कार्य चालू रक्खें।

—हिन्दी। गुरुकुल कांगडी, मध्य मार्च १९२७। गुजराती न० जी० मे लिखे महादेव देसाई के विवरण तथा महात्मा (तेंदुलकर), भाग २ के आधार पर]

७६. भाषण : गुरुकुल महोत्सव में

[गुरुकुल के रजतजयन्ती महोत्सव में दूसरे दिन चन्दे के लिए अपील करते हुए गाधीजी ने जो सक्षिप्त भाषण किया था, वह यहाँ दिया जा रहा है। इस अवसर पर लगभग दो लाख रुपये एकत्र हुए थे।—सम्पा०]

आर्य-समाज की टीका करता हूँ, परन्तु स्तुति भी करता हूँ और जो हार्दिक स्तुति करता है, उसे टीका करने का अधिकार होता ही है। मैं मानता हूँ कि

ब्रिटिश राज्य स्थापित होने के बाद जनता के साथ शिक्षितों के आध्यात्मिक सम्वन्ध का नाश हुआ और उस सम्वन्ध का पुनरुद्धार करनेवाला आर्यसमाज है।

आज जो दृश्य यहाँ दिखलाई पड़ता है, वैसे दृश्य भाग्य से ही कही दूसरी जगह देखने मे आते हैं[1]। मैं आपका कुछ अनुकरण करता हूँ परन्तु मुझे बालटियों में पैसे नही मिलते। मै तो रुमालों में पैसे इकट्ठा करता हूँ। मुझे तो पैसे मिलते हैं, जब आपको रुपये मिलते हैं। सव के सव पंजावी कुछ धनिक ही नही है। आप में भी गरीब लोग तो है ही। परन्तु आपका हृदय उदार है। मैं आर्यसमाज की टीका करता हूँ, आपको झगड़ालू कहता हूँ परन्तु आज आपका काम करने आया हूँ। उदार पंजाबियों से मैं कहता हूँ कि जो पैसे दे चुके है, वे फिर से दें क्योकि मैं यहाँ स्वीकार करना चाहता हूँ कि गुरुकुल की मार्फत हिन्दुस्तान की सेवा हो रही है। मै ऐसा नही मानता कि आपकी टीका करते हुए मैं आपका त्याग न समझता होऊँगा। आप में त्याग तो भरा हुआ है ही परन्तु इस त्याग पर सन्तुष्ट होकर वैठ न रहो। जो त्याग आगे दिखलाना है, उसकी तुलना में यह त्याग कुछ भी नही है। परन्तु मै आपके त्याग की स्तुति करता हूँ क्योकि आपके समान त्याग-शक्ति दूसरों में नही है। काम तो वही है जो त्यागवृत्ति से किया जाय, शेप तो स्वच्छन्दता है।

आपकी स्तुति करता हूँ तो इससे सन्तुष्ट न हो जाना। आपने दिया तो इससे यह न समझना कि पूरा दे दिया। दान का अर्थ ही है कि वह अधिक-से-अधिक दिया जाय। जिस संस्था के लिए स्वामी श्रद्धानन्द के सर्वस्व का त्याग था, उसके लिए जितना दे सको, दो। और कुछ परिणाम न भी निकले तो भी गुरुकुल ने संस्कृत के अभ्यास को स्थान दिया है, क्या यह कोई छोटी वात है? जब किसी पजावी को मैं देवनागरी पढ़ते देखता हूँ तो अटकल लगाता हूँ कि वह गुरुकुल का पढा होगा। दोप किस संस्था में नही होते? परन्तु दोपों के होते हुए भी गुरुकुल संस्था की सेवा वहुत बड़ी है। इस गुरुकुल की आप सेवा करो और उसे जीवन्त रक्खो। स्वामी श्रद्धानन्द का कहना है कि इस संस्था के लिए उन्होने ब्रह्मचर्य और तपश्चर्या के दो दान दिये थे। आप कहो कि इस सस्था को जीवित रखने के लिए हमसे जितना हो सकेगा, हम दान करेगे।

—हिन्दी। कांगड़ी, मध्य मार्च १९२७। न० जी०। हि० न० जी०, ३१।३। १९२७।]

---

१. स्वयंसेवक वालटियो में धन एकत्र कर रहे थे जो बार-बार भर जाती थीं। नोटों एवं रुपयों की वर्षा-सी हो रही थी। उसी की ओर गांधीजी का संकेत है।

७७. भाषण : गुरुकुल की राष्ट्रीय शिक्षण-परिष मेंद्

[गुरुकुल रजत जयन्ती महोत्सव के दूसरे दिन एक राष्ट्रीय शिक्षण-परिषद् हुई थी, जिसमे जामिया मिल्लिया के श्री मुजीव और शान्ति-निकेतन के श्री रामचन्द्रन ने भाषण किये थे। गांधीजी परिषद के अध्यक्ष थे। उन्होंने अपने सक्षिप्त भाषण में सर्वधर्मसमभाव तथा संस्कृत शिक्षा पर जोर देते हुए निम्नलिखित बातें कही थीं।—सम्पा०]

.जो संस्था दूसरी जातियो के प्रति द्वेष पैदा करती हो, उसका तो नाश ही होना चाहिए। ऐसी सस्थाओ का लक्ष्यविन्दु होना चाहिए—'दया धरम को मूल है, पाप मूल अभिमान।' धर्म के सार्वत्रिक मूल सिद्धान्तों पर जोर देने की जरूरत है। इन सिद्धान्तो के भूलने से आदमी पशु वन जाता है।

सस्कृत सीखना प्रत्येक भारतीय विद्यार्थी का कर्त्तव्य है। हिन्दुओ का तो है ही, मुसलमानो का भी है, क्योकि आखिर उनके वाप-दादा भी तो राम और कृष्ण थे और उन्हें पहिचानने के लिए सस्कृत जानना चाहिए। परन्तु मुसलमानो के साथ सम्वन्ध रखने के लिए उनकी भाषा सीखना हिन्दुओ का भी कर्त्तव्य है। आज हम एक दूसरे की भाषा से भागते फिरते हैं क्योकि हम पागल वन गये हैं। यह निश्चित मान लेना कि जो सस्था आपस मे द्वेष और भय रखना सिखाती है, वह राष्ट्रीय नही है।

—हिन्दी। गुरुकुल कागड़ी, मध्य मार्च, १९२७। न० जी०। हि० न० जी० ३१।३।१९२७ मे महादेव देसाई के विवरण से।]

७८. भाषण : बरेली में

[अपनी पर्वतीय यात्रा के आरम्भ मे गाधीजी १३ जून १९२९ को बरेली पहुँचे थे। इस अवसर पर बरेली म्युनिसिपलटी ने खादी पर से चुगी उठा दी थी और मानपत्र दिया था। इस दिन एक सार्वजनिक सभा भी हुई जिसमे अनेक मानपत्र दिये गये। इस अवसर पर गांधी जी ने एक सक्षिप्त भाषण किया था, जो यहाँ दिया जाता है।—सम्पा०]

"मुझे यह जानकर दु ख हुआ है कि वरेली मे हिन्दू मुसलमानों के सम्वन्ध अच्छे नही हैं। किन्तु देश के क्षितिज पर अनैक्य के जो बादल छा गये है और उसे तमसावृत कर रक्खा है उसके होते हुए भी मैं हिन्दू-मुस्लिम एकता की स्थापना मे

अपने विश्वास की घोषणा करने यहाँ आया हूँ, क्योंकि जनता समझ गई है कि देश की आत्मा के लिए स्वतन्त्रता उतनी ही जरूरी है जितनी कि खुराक मनुष्य की शरीर-रक्षा के लिए जरूरी है। और देशवासियों के हर वर्ग के बीच एकता इस स्वराज्य का मौलिक आधार है।"

—हिन्दी। बरेली, १३।६।१९२९]

७९. भाषण : भवाली में

[अपनी पर्वतीय यात्रा में १५ जून १९२९ को गांधीजी नैनीताल से भवाली पहुँचे थे। भवाली की सभा में नागरिकों तथा अन्त्यजों की ओर से मानपत्र दिया गया था। इस अवसर पर गांधीजी ने जो भाषण दिया उसे संक्षिप्त रूप से यहाँ दिया जा रहा है।—सम्पा०]

"प्राण देकर भी अपने मनुष्यत्व और स्वभाव की रक्षा करनी चाहिए। किसी की वेगार उठाने की अपेक्षा मर मिटने का दृढ़ निश्चय करना कही अच्छा है। आप अपना ऊन वाहर भेजते है और विदेशी कपड़ों पर पानी की तरह पैसे वहाते है। यह मूर्खता है, इससे वचना चाहिए और अपने घरों में चर्खे को योग्य स्थान देना चाहिए। हृदय में केवल ईश्वर का भय रक्खो और दूसरे किसी से भी न डरो। आप मुझसे कहते हैं कि सरकार ने चरागाहों के उपयोग के अधिकार आपसे छीन लिये है किन्तु यदि आप संगठित हो जायँ, एकता से काम लें और यह निश्चय कर लें कि चरागाह आपके है और आपके रहेगे तो संसार की कोई भी ताकत आपसे आपके चरागाह छीन नही सकती। आपने अपने मानपत्र में यह आशा प्रकट की है कि मेरे यहाँ आने से आपके संकट टलेंगे किन्तु संकट-निवारण का काम तो एक ईश्वर ही कर सकता है। ईश्वर भी विना उद्यम के किसी की सहायता नही करता। अस्पृश्यता का कलंक मिटाकर, आत्मशुद्धि करके, आप स्वयं अपने को ईश्वरीय सहायता के योग्य वना सकते है।"

—हिन्दी। भवाली, १५।६।१९२९।]

८०. भाषण : प्रेम-विद्यालय ताड़ीखेत में

[१९२९ की पर्वतीय यात्रा में १६-१७ जून को गांधीजी प्रेम-विद्यालय

ताडीखेत मे रहे थे। उस समय विद्यालय का वार्षिकोत्सव भी था और दूर-दूर के पर्वतीय स्थानो से लगभग दस हजार आदमी गांधीजी को देखने-सुनने एकत्र हुए थे। १६ जून को गांधीजी ने जो भाषण किया वह सक्षिप्त रूप से यहाँ दिया जाता है।—सम्पा०]

यहाँ आने के पहिले ही मैं आप लोगो के दु ख-दर्द का किस्सा सुन चुका हूँ। मेरे पास इसका एक ही रामवाण उपाय है, और वह है, आत्मशुद्धि और कर्त्तव्य-परायणता। हमारी तमाम व्याधियो का मूल कारण हमारे मन की सकुचितता है। हम कुटुम्ब के लिए मर मिटने के धर्म को समझे हैं, समझते हैं। मगर अव एक कदम और आगे वढने की जरूरत है। हमारे कुटुम्ब-प्रेम मे सारे गाँव को स्थान मिलना चाहिए, गाँव मे तालुके को, तालुके मे जिले को, जिले मे प्रान्त को, यहाँ तक कि आखिरकार सारा देश हमारे लिए कुटुम्ववत् हो जाय। भारत के किसी भी कोने से आनेवाले मनुष्य की सेवा करते समय हमे यह अनुभव होना चाहिए, मानो हम अपने रिश्तेदार की सेवा कर रहे हैं। महासभा के सगठन के मूल मे भी इसी कल्पना का हाथ है। आज हमारी महासभा-समितियाँ मृतवत् हो गई हैं, उन्हें सजीव करने का कर्त्तव्य इस समय हमारे सामने उपस्थित है।

मैं कह चुका हूँ कि हमारे रोग का इलाज हमारे हाथो मे है। हमारी जन-सख्या एक चीन को छोडकर और सव से ज्यादा है। मगर आज हम आत्मविश्वास खो वैठे हैं। वह खोया हुआ आत्मविश्वास आज हमे फिर से प्राप्त कर लेना है। हम किसी से न डरें, अकेले उस प्रभु की शरण मे जायँ। ईश्वर से महान दूसरी कोई शक्ति नही है। जिसके हृदय मे ईश्वर का डर हो उसके हृदय मे दूसरा कोई डर होता ही नही।

यहाँ आने पर आपके विद्यालय के सम्वन्ध मे मैंने जो कुछ देखा या सुना है, उससे आशा होती है कि एक दिन वह अपने नाम को सार्थक करेगा और प्रेम-विद्यालय सचमुच ही प्रेम का साक्षात् स्वरूप वन जायगा।

पुरुषार्थ मनुष्य का धर्म है, मगर होता वही है जो विधाता ने ठहरा रक्खा है। आपने अपने निवेदन मे पैसे की कमी की शिकायत की है, लेकिन इससे आप घव-रायें नही। अपने चालीस वर्ष के अनुभव से मैं विश्वासपूर्वक कह सकता हूँ कि हर एक सस्था को उसकी सच्ची उपयोगिता के अनुसार धन मिल ही जाता है। और जिस सस्था को जनता की सेवा करनी है, उसे तो आर्थिक मामलों में जनता पर आधार रखना ही इष्ट है। इससे उस पर जनता का अकुश रहता है, संस्था जाग्रत रहती है और उसे विनय का पाठ सीखना पडता है। इसके विपरीत जव कोई सस्था वहुत-सा धन इकट्ठा करके आर्थिक चिन्ता से मुक्त हो जाती है, तो वहुधा

यह देखा जाता है कि तब वह निरंकुश और लापरवाह बन जाती है। हर एक संस्था के लिए सबसे अच्छा नियम तो यह है कि वह अपनी आर्थिक हैसियत के भीतर रहकर जितना काम कर सके, करे, और कर्ज लेकर काम बढ़ाने की लालच में न फँसे। सारांश, अगर आपकी ताकत सिर्फ एक ही विद्यार्थी को रखने की है तो आप उसे अकेला ही रखिए, मगर कर्जदार न बनिए, यही सलाह है।

मुझे यह देखकर हर्ष होता है कि प्रेम-विद्यालय ने अपने कार्य-क्रम में खादी को स्थान दिया, और चर्खे को अपनाया है। आज से इक्कीस वर्ष पहिले मैंने यह आविष्कार किया था कि हिमालय से कन्याकुमारी और कराची से आसाम तक की करोड़ों भारतीय जनता को एक सूत्र मे संघटित करने के लिए सूत के कच्चे धागे से अधिक जोरदार और कोई उपाय नही है। आज भी मेरी इस विषय में उतनी ही श्रद्धा है। मैं चाहता हूँ कि आप कच्चे सूत के धागे में छिपी हुई शक्ति को समझे और चर्खा आन्दोलन की कीमत रुपया-आना-पाई में नही बल्कि लोकमत को जोरदार बनने की उसकी उपयोगिता को खयाल में रखकर कूतने लगें।"

—हिन्दी। ताड़ीखेत, १६।६।१९२९। श्री प्यारेलाल के विवरण[1] से। हि० न० जी० ४।७।१९२९।]

८१. भाषण : अल्मोड़ा में ईसाइयों की सभा में

"एक जमाना ऐसा भी था, जब ईसाई भाई अपने को हिन्दुस्तानी कहते लजाते थे। यह बताने मे कि वह हिन्दुस्तानी भाषा बोल ही नही सकते और यूरोपियन लोगों के रीति-रिवाज और रहन-सहन की नक़ल करने में ही अपना गौरव समझते थे। इससे मेरा मतलब किसी के दोष बताना नही है; यही कहूँगा कि यह समय का दोष था। आज हालत बदली है, और ईसाई भाई भी अन्य भारतीय भाइयों के साथ 'वन्दे मातरम्' गाते है। फिर भी अभी सुधार की बहुत गुंजाइश है। कई ईसाई युवक मुझसे शिकायत करते हैं कि उनके बड़े-बूढ़े उन्हें राष्ट्रीय प्रवृत्ति में भाग नही लेने देते और यदि वे उसमें हाथ बँटाते हैं तो कहा जाता है, वे बड़े-से-बड़े अपराधी या देशद्रोही है। मैं आपसे यही नम्र प्रार्थना करता हूँ कि हम इस भयंकर हालत मे से उबर जायँ।

वर्तमान युग आत्म-शुद्धि का युग है, मगर कई यूरोपियन लोग इसमें अकेली

---

१. देखिए परिशिष्ट में : उत्तराखण्ड में पर्वतीय यात्रा-२।

अपवित्रता के ही दर्शन करते हैं। आपने अपने मानपत्र मे वर्तमान आन्दोलन को आत्मशुद्धि का यज्ञ कहा है, इसके लिए मैं आपको धन्यवाद देता हूँ और आशा रखता हूँ कि आप भी इस यज्ञ मे पूरा-पूरा हाथ बँटायेंगे।

"मैं सब धर्मों को सच्चा मानता हूँ। मगर ऐसा एक भी धर्म नही है, जो सम्पूर्णता का दावा कर सके क्योकि धर्म तो हमे मनुष्य-जैसी अपूर्ण जाति के द्वारा मिलता है। अकेला ईश्वर ही सम्पूर्ण है। अतएव हिन्दू होने के कारण अपने लिए हिन्दू धर्म को सर्वश्रेष्ठ मानते हुए भी मैं यह नही कह सकता कि हिन्दू धर्म सबके लिए सर्वश्रेष्ठ है, और इस बात की तो मैं स्वप्न मे भी आशा नही रखता कि सारी दुनिया हिन्दू धर्म को अपनावे। आपको भी यदि अपने अ-ईसाई भाइयो की सेवा करनी है, तो आप उनकी सेवा उन्हे ईसाई बनाकर नही, बल्कि उनके धर्म की त्रुटियो को दूर करने मे और उसे शुद्ध बनाने मे उनकी सहायता करके भी कर सकते हैं।

"जिस समाज मे आपने जन्म लिया है, जिस देश का आपने अन्न खाया है, उसका तिरस्कार करना आपको शोभा नही देता। किसी चीज के साथ असहयोग करना धर्म हो सकता है, बशर्ते उसमे दुष्टता ही खास चीज हो। भारत की प्राचीन सस्कृति और सभ्यता, जिसके फल-स्वरूप देश मे इतने बडे-बडे ऋषि-मुनि हो गये हैं, जिसने श्री चैतन्य और टागोर-जैसे सुपुत्रो को जन्म दिया है, और जिसके लिए आज भी कितनी ही पवित्र आत्माएँ तपश्चर्या कर रही हैं, विश्वासघात करने की चीज नही है। आपके विचारानुसार अगर अ-ईसाई लोग अन्धकार में पडे है, तो वे इस सभ्यता के सच्चे प्रतिनिधि भले ही न हो सकें किन्तु आपको, जैसा कि आप दावा करते हैं, यदि सच्चा ज्ञान मिला है तो, इस सभ्यता का संरक्षक बनना चाहिए, नाशक नही।

"आज हमारे धनवान लोग गरीबो के कन्धो पर चढ बैठे हैं। अगर आपको गरीबो के साथ सच्चा हेलमेल पैदा करना है, करोडो की सेवा करनी है, और स्वेच्छा से निर्धन बने हुए नहीं बल्कि अनिच्छा से दारिद्रय-पीडित जनता की सहायता करनी है, तो चर्खायज्ञ मे हाथ बँटाना ही उसका एकमात्र उपाय है।"

—अंग्रेजी। अलमोड़ा २०।६।१९२९। हि० न० जी० ४।७।१९२९ मे प्यारे-लाल जी के विवरण से]।

८२. भाषण : आगरा की सार्वजनिक सभा में

[गांधीजी ने अपना उत्तरप्रदेश का खादी-प्रवास ११ सितम्बर १९२९ को आगरा से शुरू किया था। पहले ही दिन सार्वजनिक सभा में उन्हें ८,००० रुपये की थैली दी गई थी। इस सभा में उन्होंने जो भाषण किया था, वह, संक्षेप में, यहाँ दिया जा रहा है।—सम्पा०]

"मैं यहाँ असहयोग की क्षमता में अपनी आस्था की पुनर्घोषणा करने आया हूँ। आप सब को अभी से जनवरी १९३० के लिए तैयारी करनी है। भारतीय कांग्रेस कमेटी ने वे शर्तें निश्चित कर दी हैं जिनकी पूर्ति पर ही अहिंसात्मक साधनों से स्वराज्य की प्राप्ति हो सकती है। ये शर्तें हैं : त्रिविध रचनात्मक कार्यक्रम की, अर्थात् खादी के जरिये विदेशी वस्त्र-बहिष्कार, मादक द्रव्य-निषेध तथा हिन्दुओं-द्वारा अस्पृश्यता का त्याग। चूंकि ये सब कार्य समुचित कांग्रेस-संगठन से ही सम्भव है इसलिए सदस्यों की भर्ती द्वारा संगठन, कांग्रेस का पुनर्गठन आवश्यक है। मैं गम्भीर चेतावनी देता हूँ कि यदि हम कुछ न करेंगे, हाथ-पर-हाथ धरे बैठे रहेंगे तो केवल दिसम्बर में कांग्रेस की घोषणा मात्र से आकाश से स्वराज्य टपकने वाला नही है। मैं तो इसके और आगे जाकर यहाँ तक कहना चाहता हूँ कि यदि हमने बीच के काल में अपनी भावी घोषणा के लिए, जो ३१ दिसम्बर १९२९ की अर्द्ध रात्रि तक राष्ट्रीय माँग की सरकार-द्वारा पूर्ति न करने पर की जायगी, शक्ति न पैदा की तो वह घोषणा भी निर्जीव और निष्प्रभाव-सी पड़ी रह जायगी।"

—हिन्दी। आगरा, ११।९।१९२९।]

८३. भाषण : आगरा के विद्यार्थियों में

[१२ सितम्बर १९२९ को आगरा कालेज तथा सेण्ट जान्स कालेज के विद्यार्थियों की एक संयुक्त सभा हुई थी। यहाँ छात्रों की ओर से गांधीजी से कहा गया कि "यद्यपि हम आपके आदर्शों में विश्वास रखते हैं किन्तु उनके अनुसार आचरण करने में असमर्थ हैं।" इस पर गांधीजी ने जो कुछ कहा, वह यहाँ दिया जा रहा है।—सम्पा०]

"मैं छात्रों से असमर्थता की बात सुनने के लिए तैयार नही हूँ। तुम्हारी सारी विद्वत्ता, शेक्सपीयर और वर्ड्सवर्थ सब का तुम्हारा सारा अध्ययन निरर्थक है, यदि तुम उसी के साथ अपने चरित्र का निर्माण नही करते तथा अपने विचारों एवं कार्यो

पर प्रभुत्व नही स्थापित कर लेते। जव तुम अपने ऊपर प्रभुत्व स्थापित कर लोगे तथा अपनी वासनाओ पर कावू रखना सीख लोगे, तव तुम्हारे मुंह से निराशा की वाणी नही निकलेगी। यह नही हो सकता कि एक ओर तुम हृदय-दान दो और दूसरी ओर आचरण की दरिद्रता की वात करो। हृदय-दान का मतलव सर्वस्व समर्पण करना है। पहिले तुम देने के लिए दिल पैदा करो। "
—हिन्दी। आगरा, १२।९।१९२९।]

८४. भाषण : हिन्दू विश्वविद्यालय, काशी के छात्रों में

"...यदि तुम चरित्र की आवश्यक पवित्रता को आचरण मे व्यक्त करना चाहते हो तो उसे चर्खा के माध्यम के अतिरिक्त और किसी माध्यम से उतने उत्तम रूप मे प्रकट नही कर सकते। ईश्वर के नाना रूपो मे दरिद्रनारायण रूप सर्वाधिक पवित्र है, क्योकि वह चन्द धनिको की अपेक्षा कोटि-कोटि दरिद्रजनो का प्रतिनिधित्व करता है। इन भूखे-नगे कोटि-कोटि जनो के साथ तुम अपने ऐक्य का प्रदर्शन चर्खे के सन्देश का प्रचार करके आसानी से दे सकते हो। तुम ऐसा स्वय कुशल कतवैये वनकर, खादी पहिनकर और अर्थ-दान करके कर सकते हो। याद रक्खो कि मालवीय जी ने तुम्हें जो सुविधाए दे रक्खी हैं वे कोटि-कोटि लोग नही पा सकते। तव इन भाइयो और वहिनो को तुम वदले मे क्या दोगे? तुम्हें यह विश्वास होना चाहिए कि जब मालवीय जी ने विश्वविद्यालय की स्थापना की तव उनके मन मे यही भाव रहा होगा कि तुम अपने जीवन को इस प्रकार सचालित करोगे कि जो शिक्षण तुम्हे यहाँ दिया गया है, उसके योग्य सिद्ध हो।"
—हिन्दी। काशी, २५।९।१९२९।]

८५. भाषण : काशी विद्यापीठ में

[२५।९।१९२९ को गाधी जी ने काशी विद्यापीठ के पद्वीदान समारोह में भाग लिया, जिसका संचालन स्व० आचार्य नरेन्द्रदेव जी कर रहे थे। गांधीजी कुलपति के रूप मे इस समारोह मे उपस्थित हुए थे। समारोह के अन्त में उन्होंने जो भाषण दिया, सक्षेप में यहाँ दिया जा रहा है।—सम्पा०]

"...मैं जानता हूँ कि आपकी लघुसख्या प्रायः आपको चिन्तित कर देती

है और आपके मन में अपनी पुरानी संस्थाओं का त्याग करने के औचित्य के विषय में शंका भी उठती है। कोई-कोई उन पुरानी संस्थाओं में लौट जाने की प्रच्छन्न इच्छा भी रखते हैं। मैं आपसे निवेदन करता हूँ कि प्रत्येक महत् कार्य में उसके लिए युद्ध करनेवालों की संख्या का महत्व नहीं होता; निर्णायक तत्व संख्या नहीं वरंच वे योद्धा किन गुणों के आकर होते हैं, यह होता है। संसार के महत्तम पुरुष सदा एकाकी ही रहे हैं। जरथुस्त्र, बुद्ध, ईसा, मुहम्मद तथा अन्य अनेक प्रवक्ताओं को अकेले ही खड़ा होना पड़ा था किन्तु उनको अपने अन्दर और अपने प्रभु के अन्दर जीवन्त विश्वास था और चूंकि वे समझते थे कि ईश्वर उनके साथ है, वे अपने को एकाकी नहीं अनुभव करते थे। जब हज़रत मुहम्मद हिजरत में थे, उनके साथ केवल अबूबकर था। शत्रुओं की एक बड़ी तादाद उनका पीछा करते हुए आ रही थी। इसे देख अबूबकर घबड़ा गया और भय से काँपते हुए कहा—'हम सिर्फ दो हैं। इनके विरुद्ध क्या कर लेंगे?' हजरत ने उसे झिड़क कर कहा—"नहीं अबूबकर, हम दो नहीं, तीन हैं। अल्लाह भी हमारे साथ हैं।" विभीषण और प्रह्लाद की अदम्य आस्था को देखो। मैं चाहता हूँ, तुममें अपने अन्दर और ईश्वर के अन्दर वही विश्वास, वही जीवन्त आस्था हो।"

—हिन्दी। काशी, २५।९।१९२९।]

८६. भाषण : मथुरा में

[गांधीजी मुस्लिम विश्वविद्यालय, अलीगढ़ के उपकुलपति के आग्रह पर अलीगढ़ गये थे। वहाँ वह ४ नवम्बर को पहुँचे थे। वहाँ से वह ५ को चलकर मार्ग के कई स्थानों का कार्यक्रम निपटाते हुए सम्भवतः ७ को मथुरा पहुँचे थे। वहाँ कृष्ण-भूमि के किसी लक्षण का दर्शन न पा उनको बहुत क्लेश हुआ। उन्हें जब सभा में मानपत्र दिया गया तो उत्तर में उन्होंने बड़ा ही मर्मस्पर्शी भाषण किया था। यहाँ वह संक्षेप में दिया जा रहा है।—सम्पा०]

"...जब कोई आदमी मथुरा और निकटवर्ती प्रदेश में, जो गोपाल की जन्म और लीलाभूमि कही जाती है, आता है तो वह यह आशा लिये आता है कि यहाँ उसे संसार के सर्वोत्तम चौपाये देखने को मिलेंगे और, जैसा कि कृष्ण के काल में था, शुद्ध और अमिश्रित दूध पानी के मोल प्राप्त होगा। एक दर्शक के मन में यह आशा भी होगी कि मथुरा के लोगों में वह कठोर पवित्रता, सरलता और वीरता दिखाई देगी जो कृष्ण में थी। वह यह भी आशा लेकर जायेगा कि तिरस्कृत अछूत यहाँ

प्रेम और सद्भाव से ग्रहण किया जाता होगा। मथुरा की सडको से गुजरता हुआ मैं देखता हूँ कि चौपायो की हड्डियाँ बाहर निकल आई हैं, गायें इतना कम दूध देती है कि आर्थिक बोझ बन जाती हैं। इस पवित्र स्थान मे मैं एक बूचड-खाना देखता हूँ जहाँ उन गौओ का मासाहार के लिए वध किया जाता है जिनकी कृष्ण रक्षा और पूजा करते थे। यह कल्पना गलत है कि इस लज्जाजनक स्थिति के लिए मुसलमान या अग्रेज जिम्मेदार हैं। हम हिन्दू ही इसके लिए मुख्यत जिम्मे-दार हैं। चूंकि चौपाये भूमि पर तेजी के साथ आर्थिक बोझ बनते जा रहे हैं, वे मारे जायँगे और यदि वे भारत मे नही मारे जायँगे तो जहाज द्वारा कही विदेश मे उसके वधगृहो के लिए भेज दिये जायँगे जैसा कि आस्ट्रेलिया मे भेजे भी जा रहे हैं। भारत के चौपायो का अधिकाश हिन्दुओ की मिल्कियत है। वे ही उसे वधिको या उनके खरीददारो को बेच देते हैं। यदि हम उस दिव्य बालकृष्ण के प्रति, जिसकी उपासना का दम हम भरते हैं, अपने कर्तव्य का पालन करें तो पशु-पालन के विज्ञान का अध्ययन कर दृढ निश्चय कर ले कि हम अपने गोधन को ससार मे सर्वोत्तम बनाकर छोडेंगे और मूर्खतापूर्ण गतानुगतिकताओ को, फिर भले ही वे कितनी ही प्राचीन हो, छोड देंगे।"

—हिन्दी। मथुरा, ७ या ८।११।१९२९।]

८७. भाषण : गोवर्द्धन में

[जब गांधीजी, अपनी सयुक्त प्रान्त की खादी-यात्रा मे गोवर्द्धन गये और वहाँ उन्होंने गो-जाति की भयंकर दुर्दशा देखी तो उन्हें उससे भी अधिक आघात लगा था, जितना मथुरा में लगा था। तब उन्होंने जो कहा, यहाँ दिया जा रहा है।—सम्पा०]

"आप मुझे ऐसी जगह ले आये हैं जो मेरे अन्तरतम तक को छेड देता है। मैं एक वैष्णव परिवार का व्यक्ति हूँ। बचपन से मुझे कृष्ण की जन्मभूमि तथा क्रीडाभूमि के बारे मे सिखाया गया है कि यहाँ आने से पापो का क्षय हो जाता है। परन्तु जब मैं यहाँ की सडको से गुजर रहा था, ऐसी कोई भावना मेरे अन्दर उत्पन्न नही हुई। यह वही स्थान है जहाँ कहा जाता है कि कृष्ण ने, अपने ग्वाल सखाओ तथा गौओ की वर्षा और तूफान से रक्षा करने के लिए, अपनी उगली पर गोवर्द्धन-पर्वत उठा लिया था। मानवता और उनकी साथिन गाय की सेवा की वह भावना मैं आज यहाँ नही पाता। उसकी जगह मैं अस्थिचर्मावशेष गोवृन्द को देखता हूँ, मैं अपने सामने ऐसे आदमियो और बच्चों को देखता हूँ जिनमे कोई जीवन

नहीं, कोई ज्योति नहीं है। मुझे बताया गया है कि यहाँ ब्राह्मणों को भिक्षुक कहा जाता है। प्राचीन युग के ब्राह्मण ऐसे न थे। यही थे वे जिन्होंने ईश्वर का साक्षात् किया था और ईश्वर-दर्शन का रहस्य सब मनुष्यों को बताया था। वे दूसरों की दया या दान पर नही जीते थे। जिन्हे वे ईश्वरीय ज्ञान देते थे वे लोग उनके भरण-पोषण का प्रबन्ध स्वयं अपने ऊपर उठा लेते थे। कृष्ण के युग में वे सच्चे धर्म के रक्षक थे।...अब इस पवित्र गोवर्द्धन में उनका कही कोई चिह्न शेष नही है।"

—हिन्दी। गोवर्द्धन (मथुरा), ८।११।१९२९।]

८८. सन्देश : 'दरिद्रनारायण' को

["दरिद्रनारायण" नामक साप्ताहिक पत्र कालाकांकर के स्व० राजा अवधेश सिंह जी (वर्तमान विदेश-मंत्री, भारत श्री दिनेश सिंह जी के पिता) ग्रामवासियों के लिए कालाकांकर से निकालते थे।—सम्पा०]

नाम दरिद्रनारायण रखा है तो काम भी नाम के योग्य होगा; ऐसा मेरा विश्वास है—और कोई राजा जब रैयत के लिए वर्तमान पत्र[1] नीकालता है तो उसे दोगुनी सावधानी की आवश्यकता रहती है—वह यदि अपने को स्वामी समझे तो रैयत का नाश होता है। रैयत का अपने को दास समझे तो अपना और रैयत दोनों का उद्धार होता है।

मोहनदास गांधी

सौजन्य : श्री सुरेशसिंह, कालाकांकर (अवध)

—हिन्दी। लखनऊ, ६।२।१९३२।]

८९. सन्देश : शिवप्रसाद गुप्त को

शिवप्रसाद गुप्त की भयंकर बीमारी के समाचार आते रहते है। कल तो बापू कहते थे—"शायद हमें उन्हें खोना पड़ेगा। आज उनके मंत्री को (हिन्दी में)

---

१. समाचारपत्र।

लिखा—"शिवप्रसाद से कहो कि अखवार पढना छोड दे, गीता पढे या योग-वाशिष्ठ या रामायण वालकाण्ड या उत्तर काण्ड पढे अथवा सुक्रात का मृत्य पर सवाद। जगत का चक्र भगवान के हाथ मे छोड दे।"
—४।३।१९३३। म० भा० डा०, भाग ३, (न० जी०) पृ० १७२।]

९०. भाषण : कानपुर की सार्वजनिक सभा में

[२२ जुलाई को कानपुर की सार्वजनिक सभा में गाधीजी ने जो भाषण दिया था, उसका सारमर्म नीचे दिया जाता है।—सम्पा०]

आपने मुझे जो यह ११००० रु० की थैली दी है, उसके लिए मैं आपका आभारी हूँ। लेकिन मैं आपके कानपुर शहर को नही जानता, यह वात तो नही है। मैं समझता हूँ, कि जो हरिजन-कार्य हमारे सामने है उसकी महत्ता को अगर आपने महसूस किया होता, तो मुझे इससे कई गूना अधिक वन आप देते।

मुझे मालूम हुआ है कि कानपुर मे कुछ ऐसे लोग हैं, जो मेरी हरिजन-प्रवृत्ति को पुण्य-कार्य नही, वल्कि पाप-कार्य समझते हैं। इनकी तरफ से जनता मे वहुत-से पर्चे वाँटे गये हैं। मुझे यह देखकर दु ख हुआ, कि वे पर्चे सरासर असह्य, हानि-कारक अर्द्धसत्य, अत्युक्ति और तोड-मरोड कर वनाई हुई वातो से भरे हुए हैं। यह सव सत्य का अपलाप है। उन्होंने मेरे वारे मे समझ कर ऐसा नही लिखा, ऐसा मैं मान लेना चाहता हूँ। उदाहरण के लिए, यह कहा जाता है, कि एक जगह निर्दयतापूर्वक सनातनियो को कतल करवा दिया। मगर मैं इस विषय मे कुछ भी नही जानता। अगर मुझे इसका पता होता, तो मैं इसके विरुद्ध जरूर कडी कारंवाई करता। मैं कोई चुप वैठने वाला आदमी नही हूँ। यह कितने अफसोस की वात है, कि ऐसी-ऐसी मिथ्या वातो का प्रचार सनातनवर्म के नाम पर किया जाता है। मैं सनातनियो से प्रार्थना करता हूँ, कि वे इस मिथ्या-प्रचार की हीन प्रवृत्ति को रोकें।

आपने मुझे हजारो की जगह लाखो रुपये दिये होते, अगर आपने इस हरिजन-प्रवृत्ति का महत्व समझा होता। पर धन तो अस्पृश्यता का अन्त नही कर सकता। यह तो तभी वन सकता है, जव सवर्ण हिन्दुओ के हृदय पिघल जायें। दान देने वालो ने यदि यह अनुभव कर लिया है, कि अस्पृश्यता धर्म पर एक कलक है, तो उनके दान का महत्व सैकडो गुना वढ जाता है। यह तो आत्मशुद्धि की प्रवृत्ति है। सख्या से इस प्रवृत्ति का कोई मतलव नही। जो यह कहते हैं, कि हरिजन-

आन्दोलन मुसलमानो के खिलाफ लड़ने के लिए खड़ा किया गया है, वे गल्ती करते है। हमें हरिजनो मे से गुण्डों को तैयार नही करना है। हम तो उन्हें योग्य नागरिक बनाना है। अगर हमे कामयाबी मिली तो इससे हमें और सारी दुनिया को लाभ पहुँचेगा। धर्म के नाम पर अपने पाँच करोड़ भाइयों के प्रति हम जो अत्याचार कर रहे है उसके लिए अगर दुनिया हमसे और हमारे धर्म से घृणा करे, तो यह उचित ही है। यदि कोई शुद्ध रीति से शास्त्रों को, गीता को और वेदों को पढे, तो उन धर्मग्रन्थो मे उसे कही भी अस्पृश्यता नही मिलेगी। आज तो हम हिन्दू धर्म को भूल बैठे है। हरिजनों के प्रति हमने जो अपराध किया है, जो पाप किया है, उसके प्रायश्चित्त के लिए ही यह हरिजन-आन्दोलन चलाया गया है। उपनिषद तो यह कहते हैं, कि आत्मा सर्वव्यापक है।

काली झण्डियाँ दिखलानेवालों का मुझे उतना ही ख्याल है, जितना कि सुधारको का। और अगर सम्भव होता तो मै उनकी बात को मान लेता, और जैसा वे चाहते खुशी से करता। पर सत्य के अनुकूल ही आचरण करना मै अपना धर्म समझता हूँ। धर्म को कैसे छोड़ दूं? ईश्वर क्या कहेगा? सवर्ण हिन्दू मेरा निरादर करे, मेरे ऊपर पत्थर फेके, या बम फेंकें या रिवाल्वर चलावे, पर ऐसी बातों से मैं डिगने का नहीं। धर्म के कार्य से अगर मै हट जाऊँ, तो ईश्वर कहेगा, कि क्या तेरा शरीर अमर है? नही तो फिर क्यों डर गया? मैं भी तो आखिर को एक अपूर्ण ही मनुष्य हूं। मैं कोई तपस्वी तो हूं नही, कि एक ही फूंक हिमालय पर बैठ कर मार दूं, तो अस्पृश्यता उड जाय। पर मेरे जैसा अल्पज्ञानी भी कुछ करना चाहता है। जो लोग मेरी बात सुनना चाहते हैं उन्हें मैं सिर्फ सुना सकता हूं। और इसी कारण मैं जगह-जगह भ्रमण कर रहा हूं, यद्यपि इस लगातार लम्बी यात्रा की थकान दूर करने के लिए अब मैं कही बैठकर आराम करना चाहता हूं।

जो सनातनी धर्म का इजारा लेकर बैठ गये हैं, उनसे मैं यह कह देना चाहता हूँ, कि जिन शास्त्रों को वे मानते हैं मैं भी उन्ही को मानता हूं। पर हमारा मतभेद तो शास्त्रो के अर्थ लगाने में है। जब अर्थ का विरोध हो, तो शास्त्र कहते हैं, कि अपने विवेक को प्रमाण मानो। और मैं ठीक यही कर रहा हूं। अगर वे मुझे यह समझा दे, कि मै गलती कर रहा हूं, तो मैं उनका गुलाम बन जाऊं। पर, जबतक ऐसा नही होता, तबतक तो मैं आखिरी दम तक यही कहता रहूगा, कि यदि हमने अस्पृश्यता के कलंक को न धो डाला, तो हिन्दू जाति और हिन्दू धर्म का दुनिया से लोप हो जायगा।

अब, हरिजन-आन्दोलन के सम्बन्ध में मुझे कुछ बातें स्पष्ट कर देनी चाहिए। ऊच-नीच के भाव तक ही यह आन्दोलन सीमित है, रोटी-बेटी-सम्बन्ध से इसका

कोई वास्ता नही। मैं मुसलमानो और भगियो के साथ खाता हू, पर यह तो मेरी व्यक्तिगत वात है। मैं तो अपने को भगी मानता हू, इसमे मेरे लिए कोई शर्म की वात नही। पर इसमे मेरा स्वेच्छाचार नही है, सयम है। और ऐसा करने को मैं आपसे नही कहता। मैं शास्त्र के वाहर नही जाता। मैं तो अपनी इस वात को भी शास्त्र-विहित ही मानता हू। रोटी-बेटी-सम्वन्ध के व्यक्तिगत सयम के प्रचार करने की न तो आवश्यकता है, न समय। मैं तो सिर्फ वर्म का तत्व ही लोगो के सामने रख रहा हू। इस आन्दोलन का तो यही उद्देश्य है कि जो सामाजिक, नागरिक और धार्मिक हक दूसरे स र्ण हिन्दुओ को मिले हुए हैं वही सब हरिजनो को भी मिलने चाहिए।

मन्दिर-प्रवेश के विपय मे यह वात है, कि जवतक किसी मन्दिर मे पूजा करनेवाले सवर्ण हिन्दुओ का काफी वहुमत न हो तवतक वह मन्दिर हरिजनो के लिए न खोला जाय। मन्दिर तो हमारे प्रायश्चित्त-स्वरूप ही खुलने चाहिए। मैं यहा यह कह देना चाहता हू, कि एक पाई भी इस हरिजन-फण्ड से मन्दिरो के वनाने मे खर्च नही की जा सकती। हमारा सतत प्रयत्न तो यह है, कि इस फण्ड का पैसा जिस तरह हो सके अधिक-से-अधिक हरिजनो की ही जेव मे जाय।

चूंकि मेरा यह हरिजन-प्रवास है, इसलिए खादी के विपय मे मैं अक्सर चर्चा नही किया करता, यद्यपि उसमे मेरा विश्वास तो वैसा ही है। पर आपको यह नही भूल जाना चाहिए कि खादी से हजारो हरिजनो को काम मिलता है। खादी कातने और वुननेवालो के लिए अन्नपूर्णा का काम देती है। इसलिए खादी को तो आप कभी भी गौण वस्तु न समझें।

जिस शान्ति से आप लोगो ने मेरी वात सुनी है, उसके लिए मैं आपको धन्यवाद देता हू। पर एक वात की चर्चा तो मैं जरूर करूगा, और वह यह कि यहाँ हम पुलिस की छाया के नीचे इकट्ठे हुए हैं, मैं वहुत चाहता हू पुलिस यहाँ न रहे, पर उसे भी तो अपना फर्ज अदा करना है। सुधारको और सनातनियो को तो इस पर शर्म आनी चाहिए, कि मेरी रक्षा अथवा मेरी उपस्थिति मे शान्ति कायम रखने के लिए पुलिस की जरूरत पडे। सुधारको को अपने अनुशासन के महत्व को खुद महसूस करना चाहिए, ताकि पुलिस की रक्षा उनकी दृष्टि मे विल्कुल अनावश्यक हो जाय। खैर, पुलिस का यहाँ होना मुझे चाहे अच्छा न लगे, पर मैं यह जरूर कहूगा, कि पुलिस ने मेरी यात्रा मे प्रशसनीय रीति से व्यवहार किया है। इसी तरह रेल के अधिकारियो ने समय-समय पर मुझे जो सुविधाए दी हैं, उनके लिए मैं उनकी भी सराहना करता हू।

—हिन्दी। कानपुर, २२।७।१९३४। ह० से०, ३।८।१९३४।]

- यह (हरिजन-आन्दोलन) तो आत्मशुद्धि की प्रवृत्ति है।
- यदि हमने अस्पृश्यता के कलंक को न धो डाला तो हिन्दू जाति और हिन्दू धर्म का दुनिया से लोप हो जायगा।
- खादी कातने और बुननेवालों के लिए अन्नपूर्णा का काम देती है।

९१. भाषण : कानपुर के तिलक-हाल में

[२४ जुलाई को कानपुर में तिलक-हाल के उद्घाटन के अवसर पर गांधीजी ने निम्नलिखित आशय का भाषण दिया था।--सम्पा०]

मैंने आज प्रातःकाल जब सुना, कि मुझे तिलक-हाल खोलने का कार्य करना है, तो मुझे एक बात का स्मरण आ गया। जब मैं पहली बार कानपुर आया था, तब मेरी यहां किसी से जान-पहिचान नहीं थी। कानपुर आकर मैं गणेशशंकर विद्यार्थी को कैसे भूल सकता हूं? उन्होंने ही तो मुझे अपने घर पर टिकाया था। उस समय और किसी व्यक्ति की हिम्मत नहीं थी, कि वह मुझे अपने घर पर ठहराता। वह उन दिनों नौजवान थे। उस समय मुझे देश में थोड़े-से लोग जानते थे। मैं स्वयं भी नहीं जानता था कि यहां के राजनीतिक क्षेत्र में मेरा क्या स्थान होगा। सद्भाग्य से तिलक महाराज भी उसी दिन नगर में पधारे। उस ज़माने में तिलक जी को अपने घर में ठहराना कोई आसान काम नहीं था। यह चिन्ता हुई, कि उन्हें कौन स्थान देगा। यह काम तो निर्भीक युवक गणेशशंकर से ही हो सकता था। मेरे हृदय मे तो इस नगर के संसर्ग के साथ ही गणेशशंकर जी की स्मृति भी कायम रहेगी। हम लोग जैसा जानते हैं, उन्होंने वीर मृत्यु पाई। गणेशशंकर जी की सेवाएं क्या थीं, उनका त्याग कैसा था, इसका आपको मुझसे ज्यादा पता है। उनको इस अवसर पर मैं कैसे भूल सकता हूं?

यह जो तिलक-हाल का उद्घाटन हो रहा है, और इसके अन्दर कानपुर के लोगों की जो श्रद्धा है, उसको मैं जानता हूं। तिलक महाराज ने तो अपना सारा ही जीवन भारतवर्ष की उन्नति के लिए दे दिया। यह बात मेरे लिए भी प्रस्तुत है, और आपके लिए भी प्रस्तुत है। हिन्दू धर्म को अगर तिलक महाराज नहीं जानते थे, तो कोई नहीं जानता था। उन्होंने जिस प्रकार वेदशास्त्रों पर प्रकाश डाला, उसके अर्थों का संशोधन किया, वैसा और किसने किया? वह तो सच्चे सनातनी थे। पर उन्होंने यह कभी ख्याल नहीं किया, कि हम उच्च है, और वे नीच हैं। उनके साथ मैंने इस विषय पर काफी बहस की थी। उन्होंने जो कुछ हमे दिया,

उनका चिरस्थायी स्मारक, जबतक हिन्दुस्तान को कायम रहना है, तबतक कायम रहेगा। आज तो स्वराज्य की बात असम्भावित-सी लगती है। पर स्वराज्य मिलने पर तो स्वाभाविक हो जायगी। तब उनका दिया हुआ राजनीतिक स्वत्व भी भुला भी जा सकेगा, पर उनकी विद्वत्ता, उनकी आत्मशुद्धि और उनके सच्चरित्र का चित्र तो, हिन्दुस्तान जबतक जिन्दा रहेगा, तबतक सारी दुनिया में अमर रहेगा। इसे कोई कैसे भूल सकता है? तिलक महाराज का वह स्मारक तो अमर स्मारक रहेगा।

—हिन्दी। कानपुर, २४।७।१९३४। ह० से०, ३।८।१९३४।]

९२. हरिजन-सेवकों को सलाह

[काशी-विद्यापीठ में २८-२९ जुलाई, १९३४ को अखिल भारतीय हरिजन-सेवक संघ की बैठक हुई थी। कार्रवाई के अन्त में २९ जुलाई को गांधीजी ने करीब डेढ़ घण्टे तक संघ के सदस्यों से जो बातचीत की थी, उसका सारमर्म संक्षेप में नीचे दिया जाता है।—सम्पा०]

ट्रस्ट, न कि जन-तन्त्र

दो प्रश्न हैं, जिनके सम्बन्ध में कि मुझे आप लोगों से कुछ कहना है—एक तो यह है, कि संघ का संगठन किस प्रकार किया जाय, और दूसरा है एक ऐसी शिक्षण-संस्था स्थापित करने के सम्बन्ध का, जिससे समय-सेवी अथवा आजीवन सदस्य हरिजन-सेवा की शिक्षा पा सकें। मैं जानता हूं, कि आप लोगों की आमतौर से यह इच्छा है, कि जन-तन्त्र अर्थात् वोट, चुनाव इत्यादि का रूप हमारे संघ में लाया जाय। पहले मैं कुछ दुविधा में पड़ गया था, पर यह नौ महीने का प्रवास करने के बाद मैं इस नतीजे पर पहुंचा हूं, कि चुनाव या जनतन्त्र जैसी किसी चीज के लिए हमारे संघ में स्थान नहीं है। हमारी संस्था तो एक भिन्न ही प्रकार की है। मामूली तरह से यह कोई लोक-संस्था नहीं है। हम तो एक प्रकार के ट्रस्टी हैं, जिन्हें हमने अपने आप नियुक्त कर रक्खा है। पैसा महज ट्रस्टी के रूप में हम अपने पास रखते हैं, और केवल हरिजनों के हितार्थ उसका उपयोग करते हैं—और इस ढंग से कि वह सीधा हरिजनों की ही जेब में जाय। हमारे संघ का संगठन इस विचार को सामने रखकर हुआ है, कि जिन भाइयों को हमने सदियों से तुच्छ मान रक्खा है, उनके प्रति अब अपना कर्त्तव्यपालन करें। १९३२ के सितम्बर मास में, जब मेरा

उपवास चल रहा था, बम्बई में मालवीय जी महाराज की अध्यक्षता में हिन्दू-प्रतिनिधियों की जो विशाल सभा हुई थी उसमें हरिजनों के प्रति कर्त्तव्य-पालन की प्रतिज्ञा की गई थी, यह तो आप जानते ही हैं। उस प्रतिज्ञा को अमल में लाने के लिए ही हमारे इस संघ का निर्माण हुआ है। हरिजन-कोष में, हम मानते हैं, कि लोग प्रायश्चित्त की भावना से दान देते हैं। तब हमारा यही एकमात्र कर्त्तव्य है, कि इस फण्ड का उपयोग हम हरिजनों के ही हितार्थ करें। जनतन्त्रात्मक संस्था के चलाने में पैसा भी खर्च होगा और काम में देरी भी होगी। हमारा उद्देश्य तो यह है, कि हम कम-से-कम खर्च और कम-से-कम समय में इस फण्ड को हरिजन-हितकारी कार्यों में लगा दें। हरिजनों और अपने बीच हम हस्तक्षेप करनेवाला कोई मध्यस्थ नहीं चाहते; हम महज ट्रस्टी हैं और ट्रस्टी की भारी जिम्मेवारी हमारे ऊपर है। कुछ लोग कहते हैं, कि प्रबन्ध-कार्य में पैसा देनेवालों की भी आवाज होनी चाहिए। मेरी राय में वे भूलते हैं। मेरी दृष्टि में तो एक पाई देनेवाला और दस से लेकर पचास हजार रुपये तक देनेवाले, जैसे घनश्यामदास बिड़ला, दोनों ही एक समान दाता हैं। घनश्यामदास के दस हजार रुपयों से भी उस एक पाई की कीमत स्यात् अधिक हो। उड़ीसा में मैंने खुद अपनी आँखों देखा है, कि वहां के ग़रीब आदमी किस प्रकार अपने फटे-पुराने चीथड़ों की गाँठ में बड़े जतन से बँधे हुए पैसे-पाई को प्रेम से हमारी झोली में डालते थे। हजारों रुपयों की अपेक्षा चाहे वे कितनी ही राजी-खुशी से लोगों ने दिये हों, मुझे तो गरीब की गाँठ की वह कौड़ी ही पाकर अधिक आशा और प्रसन्नता हुई है। आत्मशुद्धि के इस यज्ञ में गरीब की कौड़ी के बिना हजारों की थैलियाँ किसी अर्थ की नहीं लेकिन आपके उस जन-तन्त्र में उन हजारों गरीबों को तो वोट मिलेगा नहीं। प्रबन्ध में उन बेचारों की आवाज तो होगी नहीं। हम उनके नाम तक तो जानते नहीं। फिर भी हमारी उनके प्रति उतनी ही या उससे भी अधिक जवाबदेही है, जितनी कि हजारों की थैलियां भेंट करनेवाले बड़े-बड़े दानियों के प्रति। हमारी तो यह एक दातव्य संस्था है, जिसका अस्तित्व प्रामाणिक और योग्य प्रबन्ध के ही ऊपर निर्भर करता है। अपने प्रबन्ध-कार्य का अगर हमें अधिक-से-अधिक प्रभाव लोगों पर डालना है, तो हमें अच्छे-से-अच्छे और ऊँचे दर्जे के प्रामाणिक कार्यकर्ता चुनने होंगे।

बस, मुझे जो कहना था, कह चुका, अब आपको जो ठीक जँचे वह करें। इस आन्दोलन को मैं विशुद्ध धार्मिक या नैतिक आन्दोलन मानता हूं। मेरे लिए तो यह शुद्ध सेवा और प्रायश्चित्त का ही आन्दोलन है। मैं नहीं जानता कि हरिजन-कोष में पैसा देनेवाले लाखों लोग मेरी इस मान्यता से कहां तक सहमत होंगे। जहां तक मेरा सम्बन्ध है, मुझे यह स्पष्ट कर देना चाहिए, कि अस्पृश्यता को आश्रय

देकर वर्षों से हम जो पाप करते चले आ रहे है, उसका प्रायश्चित्त करने के विचार को छोडकर मेरे मन मे कोई दूसरी बात नही है। इसलिए मेरे विचार मे इस आन्दोलन मे कोई राजनीतिक हेतु नही है। यह बात नही, कि इसके राजनीतिक परिणाम न होंगे, किन्तु उनके विषय मे हम सोचें ही क्यो? हमारे कार्य का क्या फल होगा, इस पर विचार करने की हमे आवश्यकता नही। अगर हमने इस आन्दोलन का विशाल उद्देश्य सामने रक्खा, तो निश्चय ही इसका यह फल होगा, कि मुसलमानो, ईसाइयो तथा अन्य सम्प्रदायो के साथ हमारा प्रेम-सम्बन्ध अत्यन्त शुद्ध हो जायगा। मैं चाहता हू, कि इस विचार को तो दिल से निकाल ही देना चाहिए, कि हमारा छ करोड गुण्डो की एक फौज तैयार करने का उद्देश्य है। इस प्रकार हिन्दूधर्म की रक्षा हर्गिज होने की नही। मेरा विश्वास है, कि अस्पृश्यता के अभिशाप से हिन्दूधर्म मुक्त हो गया, तो सारा ससार भी उसका कुछ नही बिगाड सकता। यह कोई छोटा-मोटा सकुचित दायरे का आन्दोलन नही है। मुझे उम्मीद है, कि हमारे इस युग का यह सबसे विशाल और व्यापक आन्दोलन है।

आजीवन सेवक

दूसरा प्रश्न अब इससे सरल है। आजीवन-सेवा-कार्य मे मेरा विश्वास है। मैं तो ऐसे लगनदार सेवको की टोह मे हू, जिनकी यही एकमात्र अभिलाषा हो कि हरिजन-सेवा मे ही हम अपना तन, अपना मन और अपनी आत्मा लगा देंगे। अगर ऐसे कार्यकर्त्ता हमे दस हजार मिल जायँ—मैं तो यहाँ तक कहूँगा, कि एक ही हजार मिल जायँ—तो हमारे इस सेवा-कार्य के आश्चर्यकारी परिणाम होंगे। ऐसे कार्यकर्त्ताओ के लिए शिक्षण-सस्था खोली जाय, यह विचार मुझे अच्छा लगता है। दक्षिण अफ्रीका मे डरबन के पास पाइन टाउन मे एक ट्रेपिस्ट आश्रम है। तीस साल से ऊपर हुआ जब मैंने यह आश्रम देखा था। मैंने वहाँ बडी कठिन साधना देखी। वहा कोई गोपनीय या लिपीपुती बात नही देखी। एक लम्बा-सा कमरा था, उसी मे वे सब आश्रमवासी रहते थे। सवेरे २॥ बजे वे लोग उठते थे। बिल्कुल निरामिष भोजन करते और मौनव्रत को बडी दृढ़ता से पालते थे। सिर्फ दो-तीन व्यक्ति उनमे बोल सकते थे, जिन्हें हाट-बाजार मे काम से जाना होता था और आश्रम मे आने-जानेवालो से बात करनी पडती थी, शेष सबको चुपचाप काम करना पडता था। जुलू लोगो को यह आश्रम शिक्षा-दीक्षा देता था। जुलू लोगो के बीच वे काम करते और अपने जीवन का सुन्दर-से-सुन्दर साधन-फल उन्हें देते थे। मठवासी सभी आजीवन सेवक थे। सभी विद्वान सन्यासी थे। ज्ञान के साथ-साथ उद्योग की भी उन्होंने साधना की थी। उनमे बढ़ई थे, कुम्हार थे, पल्लेदार

थे और मोची थे। उन्होंने सब प्रकार के प्रयोग किये थे। उनका वह आश्रम सुन्दरता का मानो नमूना था। कितनी अच्छी सफ़ाई थी। धूल का तो कही नाम भी नही था। आश्रम का बाग़ भी रमणीक था। चारों ओर सारे वातावरण में एक मधुर शान्ति छा रही थी। आश्रम में जुलू युवक बिल्कुल अन-घड़ भरती होते थे, पर जब निकलते थे तो पक्के कारीगर बनकर। मेरा विचार इसी ढंग की शिक्षण-संस्था स्थापित करने का है। चीज़ बनानी ही है तो बहुत अच्छी क्यों न बनाई जाय। पर आज हममे हमारा वह गौरव कहाँ रहा है? पहले इस प्रकार की कठिन साधना का तो हमारे देश में अनुशासन था। पर जहां अपने आश्रम-जीवन में हमने तनिक भी उन्नति नहीं की, वहा वे लोग हमसे बहुत आगे बढ़ गये है। उन्होंने नये-नये शोध किये है और प्रगति-पथ पर बहुत आगे निकल गये है। अगर हम वैसी कोई चीज बना सकें, तो मुझे सन्तोष हो। ऐसे अगर पाँच भी आदमी मिल जायं, जो अपने माता-पिता, पुत्र-कलत्र आदि सब भूल जाने को तैयार हों, और जो हरिजन-सेवा में ही अपना शेष जीवन खपा दें, तो मेरा काम बन जाय। ऐसे त्यागी और अनुरागी साधक जो संस्था बनायेंगे, वह एक सार की चीज होगी; अगर हमारा इतना ऊंचा लक्ष्य नही हो सकता, तो हमें अभी एकाध उद्योग-गृह, हरिजन-छात्रालय या कोई ऐसी ही संस्था बनानी चाहिए। करांची में सेठ शिवरतन मोहता की, उनके भाई की पुण्यार्थनिधि से, एक ऐसी हुनरशाला चल रही है। आगरे के सुप्रसिद्ध दयालबाग के दो शिक्षक वहां काम सिखाते हैं। वहां एक बढ़िया बोर्डिंग-हाउस भी है, जिसमें छात्रों को बड़ी अच्छी तरह रखते है। एक जूते बनाने का और एक सिलाई सिखाने का, यह दो विभाग फ़िलहाल उस हुनरशाला मे हैं। यह कोई शिक्षण-संस्था नहीं किन्तु एक उद्योगालय है। वहां के हरिजनों का यह विश्वास है, कि कोई-न-कोई दस्तकारी सीखकर ही वे हुनरशाला से निकलेंगे, ताकि उन्हे पेट के लिए दर-दर न घूमना पड़े। ऐसी औद्योगिक संस्थाएं हम चाहे तो और भी जहां-तहां खोल सकते हैं।

हरिजन पत्रों के बारे में

हम हरिजन-सेवको ने खुद अपने प्रति न्याय नही किया है। बहुत-से तो हममें ऐसे हैं, जिन्होंने अपना सारा समय हरिजन कार्य में नही दिया। इस कार्य को तो यों ही शौकिया कर रहे हैं। मैंने अक्सर उनसे पूछा कि क्या आप 'हरिजन' पढ़ते है? तो उन्होने इसका 'नही' मे जवाब दिया। तीन हरिजन पत्र चल रहे हैं—अंग्रेजी हरिजन, गुजराती हरिजन-बन्धु और हिन्दी हरिजन-सेवक। अंग्रेजी और गुजराती के पत्र तो स्वावलम्बी हो गये है, पर हिन्दी का अब भी नही हुआ।

इन पत्रो को जैसा चाहिए वैसा लोगो ने अपनाया नही, हालाकि इनका सम्पादन वडे परिश्रम से हो रहा है। ग्राहक वनना-वनाना तो दूर रहा, सूचनाए या घटनाओ का विवरण तक तो हमारे कार्यकर्त्ता सम्पादको के पास ठीक-ठीक भेजते नही। आये दिन जो समस्याए उपस्थित होती रहती हैं, उन पर तक वे विचार-विनिमय नही करते। अगर हमारे हरिजन-सेवक सचमुच कार्यरत होते, तो इतना अधिक मैटर सम्पादको को भेजते रहते, कि उसमे से सकलन करना उन्हे कठिन हो जाता। आज तो मैटर का भी अकाल पडा हुआ है। यह पत्र कार्यकर्त्ताओ के हैं, अतः इनमे उनके पथ-प्रदर्शन की सामग्री तथा उनके विचार-विनिमय की वातें रहनी चाहिए। मैं इन पत्रो मे निवन्ध इत्यादि नही देना चाहता हूं। मुझे दुःख होता है, जब हमारे कार्यकर्त्ता मुझसे ऐसे प्रश्न पूछ वैठते हैं, जिनके उत्तर हरिजन पत्रों मे निकल चुके हैं। अगर वह इन पत्रो को ध्यान से पढते होते, तो कभी ऐसे सवाल न पूछते। पर बहुत से तो इन अखवारो को छूते भी नही। अगर आप लोग हरिजन समाचारो का व्यौरा ठीक तरह से न पढेंगे, तो इतने वडे आन्दोलन की प्रगति के साथ आप कैसे सगति रख सकेंगे? आपको यह जानना जरूरी है, कि दूसरे हरिजन-सघ क्या-क्या काम कर रहे हैं। हमारे पास जगह-जगह घूमनेवाले ऐसे सम्वाद-सग्रही तो हैं नही, जो तमाम सस्थाओ के समाचार भेज दिया करें। और यह साधन खर्चीला भी है। हरिजन-पत्रो मे खवरें रहती तो हैं, पर उनमे और भी यथार्थ खवरें और विविध वातें दी जा सकती हैं।

कृपा कर यह विचार मन मे लेकर न जाइयेगा कि जो कुछ थोडा-सा काम हुआ है, उसकी मैं कद्र नही कर सका। कुछ अच्छे काम हुए हैं सही, पर यहा उनका बखान करने की जरूरत नही। धर्म का फल तो स्वय धर्म ही है। पर मैं ठहरा एक इन्सपेक्टर, इससे मैं तो आपको आपकी त्रुटियाँ ही बताऊगा। आपने जो अच्छे कार्य किये हैं, उनका बखान करके मैं आपको रिझाने की चेष्टा नही करूगा।

सावरमती हरिजन-आश्रम

सावरमती के हरिजन-आश्रम के वारे मे अव एक शब्द। सावरमती का आश्रम एक बहुत वडी चीज है। उसका पूरा-पूरा उपयोग अभी नही हो रहा है। पर इसमे किसी का दोष नही। वेचारा परीक्षित लाल वहा की देखरेख करता है, पर इतने वडे आश्रम का चलाना उसके सामर्थ्य के वाहर है। परीक्षित लाल को समस्त गुजरात का भी तो हरिजन-कार्य देखना पडता है। इसलिए इतना वडा काम एक आदमी के बूते का नही। इस सस्था के चलाने का भार तो खासतौर पर नियुक्त ट्रस्टी ही ले सकेंगे। अव आप लोग समझ सकते हैं, कि क्यो हम ट्रेपिस्ट

शान्तिपूर्वक सुनने के लिए आप लोगों को भी धन्यवाद देता हूं। परन्तु देवनायकाचार्य जी को कुछ भी उत्तर न दूं तो असभ्यता मानी जायगी। पण्डित जी की मुख्य आपत्ति मन्दिर-प्रवेश बिल के सम्बन्ध में है। जैसा कि मालवीय जी ने कहा है कि मुझसे और उनसे बातचीत होनेवाली है और आगे कोई ऐसा उपाय निकल आये जिससे मन्दिर में जानेवालों का बहुमत होने से हरिजनों के मन्दिर-प्रवेश में कोई कानूनी बाधा न आये, तो मुझे कोई एतराज न होगा, और यह तो मैं कह ही चुका हूं कि बिना हिन्दू लोगों के बहुमत के इस सम्बन्ध का कोई कानून नहीं बनेगा, इतना कहने से सन्तोष हो जाना चाहिए। बिल के सम्बन्ध में तो अपने हरिजन-दौरे में मैंने कोई आन्दोलन ही नही किया, नाम भी नही लिया। शास्त्रार्थ के विषय में यह कहना है, कि आज कल या कभी भी और कहीं भी शास्त्रार्थ हो सकता है, परन्तु धर्म बुद्धिग्राह्य विषय नहीं, हृदयग्राह्य विषय है। मन्दिर-प्रवेश को छोड़ कर और किसी विषय में किसी का विरोध मुझे नही मालूम पड़ता है। मैं किसी के साथ बलात्कार तो करना नही चाहता और न झगड़ा ही करना चाहता हूं। किसी को भी मुझसे डर नही होना चाहिए। मुझसे सनातन धर्म का अहित, अश्रेय नहीं हो सकता। जिस सनातन धर्म को आप मानते हैं उसी को मैं भी मानता हूं।

—हिन्दी। काशी, ३१।७।१९३४। ह० से०, १०।८।१९३४।]

९४. भाषण : हिन्दू विश्वविद्यालय की सभा में

[१।८।१९३४ को गांधीजी ने हिन्दू विश्वविद्यालय की सभा में निम्नलिखित भाषण दिया था।—सम्पा०]

हिन्दू विश्वविद्यालय मेरे लिए कोई नई चीज नही है। जब वह आरम्भ हुआ तभी से मालवीय जी महाराज ने मेरा सम्बन्ध इससे बाँध दिया है और आज तक वैसा ही बना हुआ है। यदि कोई परिवर्तन हुआ है तो वह और भी घनिष्ठ ही हुआ है और मेरा आदर भाव इसकी ओर बढ़ता ही जा रहा है। विश्वविद्यालय की उन्नति के साथ-साथ धर्म की भी उन्नति होनी चाहिए। पण्डित मालवीय जी के भाव यही हैं। मुझे आशा है कि विद्यार्थी लोग विद्या प्राप्त करके उसका सद्व्यय करेंगे, संकुचित धर्म को ग्रहण नहीं करेंगे। उदार धर्म दूसरे धर्मों को भी अपनाता है। आज लोकमान्य तिलक की पुण्य-तिथि होने का शुभ अवसर है और इस अवसर पर धर्म के एक अंश में क्या होना चाहिए यह बताने के लिए मैं आया हूं। लोकमान्य तिलक की राजनीतिक शक्ति के सम्बन्ध में कुछ नही कहूंगा,

उसे कहने के लिए मैं अभी स्वतन्त्र भी नही हूं। तिलक महाराज ने धर्म के बारे मे क्या सुनाया है यह इस समय कहना है। आपको जानना चाहिए कि लोकमान्य के दिल मे हरिजन भाइयो के प्रति बडी दया थी। मुझसे और उनसे जो विचार-विनिमय हुआ था उसमे उन्होंने कहा था कि धर्मशास्त्रो मे अस्पृश्यता के लिए प्रमाण नही है और हो भी नही सकता, क्योकि हिन्दू धर्म मे सत्य का दर्जा सबसे ऊचा है। अगर तराजू पर एक ओर सत्य रक्खा जाय और दूसरी ओर अन्य सब बातें, तो भी सत्य का ही पलडा भारी रहेगा। कोई भी शास्त्री वेद, पुराण, इतिहास मे कही भी धर्म के सिद्धान्त के विपरीत कोई बात नही बता सकता। और धर्मों मे तो अस्पृश्यता की कोई चर्चा ही नही है। हिन्दू धर्म ने ही तो इजारा नही लिया है। हमारे धर्म मे कई बाते ऐसी बताई गई है जो और कही नही हैं। हमारे यहाँ जो यह वर्णाश्रम धर्म है वह यदि लोप हो जाय तो हिन्दूधर्म ही लोप हो जायगा। वर्णाश्रम धर्म के साथ आधुनिक अस्पृश्यता का कोई सम्बन्ध नही। इस बात पर मेरा विश्वास दृढ होता जा रहा है और ९ मास के इस दौरे के बाद तो मै यह दृढता के साथ कहता हू।

गीता माता

अब समय कम रह गया है, इसलिए इस सम्बन्ध मे अधिक न कहूगा। किन्तु आचार्य ध्रुव जी ने आज्ञा दी है कि गीता माता के बारे मे कुछ कहना होगा। उनके और मालवीय जी के सामने, जो गीता को घोटकर पी गये हैं, मैं क्या कह सकता हूँ। परन्तु मेरे-जैसे आदमी पर गीता-माता का क्या प्रभाव पडा है यह बतलाने के लिए मैं कुछ कहता हू। ईसाई के लिए बाइबिल है, मुसलमान के लिए कुरान है और हिन्दुओ के लिए किसको कहे, वेद को कहे, स्मृति को कहे या पुराणो को कहे? २२-२३ साल की उम्र मे मुझे ज्ञान प्राप्त करने की इच्छा हुई। मालूम हुआ, कि वेदो का अभ्यास करने के लिए १५ वर्ष चाहिए, पर इसके लिए मैं तैयार नही था। मुझे मालूम हुआ, मैंने कही पढा कि गीता सब शास्त्रो का दोहन है, कामधेनु है। मुझे बतलाया गया कि उपनिषद आदि का निचोड ७०० श्लोको मे आ गया है। थोडी सस्कृत की भी शिक्षा थी, मैंने सोचा कि यह तो सरल उपाय है। मैंने अध्ययन किया और मेरे लिए वह बाइबिल, कुरान नही रही, माता बन गई। प्राकृतिक माता नही, ऐसी माता जो मेरे चले जाने पर भी रहेगी। उसके करोडो लडके-लडकियाँ बिना आपस के द्वेष के उसका दुग्धपान कर सकते हैं। पीडा के समय वे माता की गोद मे बैठ सकते हैं और पूछ सकते है, कि यह सकट आ गया है, मैं क्या करू, और माता ज्ञान बता देगी। अस्पृश्यता के सम्बन्ध मे भी मेरे ऊपर

कोटि के कार्यकर्त्ताओं की आवश्यकता महसूस कर रहे है। साबरमती के हरिजन-आश्रम को ऐसे ही त्यागी और चरित्रवान जन-सेवक पूर्णतया उपयोगी बना सकेंगे।

—हिन्दी। काशी, २९।७।१९३४। ह० से०, १७।८।१९३४।]

● धर्म का फल तो स्वयं धर्म ही है।

९३. भाषण : काशी की सार्वजनिक सभा में

[अपने हरिजन-प्रवास में जब गांधीजी काशी पहुँचे तो ३१।७।१९३४ को वहाँ की सार्वजनिक सभा में नीचे लिखे आशय का भाषण दिया था।—सम्पा०]

ईश्वर की कृपा से मुझे काशी जी में दूसरी बेर आने का जो अवसर मिला है उससे मुझे बड़ा ही हर्ष होता है, और इस हर्ष में वृद्धि होती है, जब यह खयाल आता है कि इस पवित्र पुरी में ही मेरा हरिजन-दौरा समाप्त होता है। मुझे यह कार्य बड़ा प्रिय जँचता है, कि यदि कोई भाई किसी प्रकार का मतभेद रखते हो तो वे भी इसी मंच पर कुछ कहें। मालूम नहीं, वर्णाश्रम-स्वराज्य-संघ के पण्डित जी किस कारणवश नही आ सके। हरिजन-आन्दोलन धार्मिक आन्दोलन है। इसमें दुराग्रह को स्थान नही है। मैं कितना ही जतन क्यों न करूं, मुझसे भी गलतियाँ हो सकती हैं और हुई भी है। मैंने कभी गलती नही की है, यह दावा न तो मैने कभी किया है और न करूंगा। जो बात मै आज मान रहा हूँ वह नई नही है। यह बात बचपन से ही मेरे दिल में स्वयंसिद्ध रही है। जब मै स्वेच्छाचारी बालक था, तभी मैं अस्पृश्यता को नहीं मानता था। मुझे रामनाम का मन्त्र सिखाया गया, जिसके प्रताप से मैं सुरक्षित रह सकता था। इस स्वयंसिद्ध बात के मानने में अगर मुझसे भूल हुई होगी तो इस तीर्थक्षेत्र में उसे स्वीकार करने में तनिक भी संकोच न होगा। जिस हालत में अस्पृश्यता इस समय मौजूद है उसके लिए शास्त्र में स्थान नही है। अस्पृश्यता हिन्दूधर्म पर कलंक है। कितने ही शास्त्री मेरे निमन्त्रण पर और कितने ही स्वेच्छा से आये और उन्होंने आधुनिक अस्पृश्यता को शास्त्र-सम्मत बताने की चेष्टा की, परन्तु नम्रता से शास्त्रियों की बातों को समझने की चेष्टा करते हुए भी मुझ पर उनका असर न हुआ।

यह कहते बड़ा दुःख होता है कि सरकारी मनुष्य-गणना के अनुसार अस्पृश्य कहे जाने वाले भाइयों और बहिनों की संख्या ७ करोड़ के लगभग बताई जाती है। सेन्सस वाले इस बात की जाँच करने का प्रयत्न नही करते, कि मनुस्मृति के अनुसार

वे सचमुच अस्पृश्य हैं या नही। सेन्सस करनेवालो को जो कोई भी जो कुछ लिखा देता है उसे वह लिख लेते हैं। हर दस वर्ष पर मनुष्यगणना होती है और मनुष्यो की सख्या हर दस वर्ष पर घटती-वढती रहती है। जलाशय पर एक कुत्ता भले ही चला जाय, पर प्यासा हरिजन वालक वहा नही जा सकता। यदि गया भी तो वह मार खाने से वच नही सकता। इस समय की अस्पृश्यता मनुष्य को कुत्ते से भी हीन मानती है।

एक हरिजन को न्यूमोनिया हो गया। फीस देकर एक सनातनी डाक्टर वुलाये गये। फीस तो आप ले चुके, पर रोगी को कैसे छूते ? एक मुसलमान को वुलाकर उसे घडी देकर कहा, कि एक मिनट मे इसकी नाडी जितनी वार चले उसे गिनकर मुझे वताओ। डाक्टर साहव को नाडी की गति वताई गई, और आप नुसखा लिख कर चले गये। फिर एक दूसरे डाक्टर वुलाये गये। उन्होने अच्छी तरह फेफडे और हृदय की गति की परीक्षा करके दवा दी, तव रोगी को आराम पहुँचा। इस प्रकार की जो अस्पृश्यता मानी जा रही है उसके लिए शास्त्र मे कोई प्रमाण है, मेरे ख्याल मे इसे कोई भी शास्त्री मानने को तैयार नही होगा। ऐसी अस्पृश्यता को शास्त्रसम्मत न मेरी वुद्धि मान सकती है, न मेरा हृदय। **(इसी समय वर्णाश्रम-स्वराज्य-संघ के मन्त्री पण्डित देवनायकाचार्य मच पर पहुँचे। आपको देख कर गाधी जी ने कहा)** वस, मैं अव आगे कुछ नही कहूगा, पण्डित जी को भाषण करने का मौका देना इस समय मेरा सर्वप्रथम कर्त्तव्य है। सिर्फ एक वात कहूगा। काशी के पण्डितो की ओर से मुझे जो मानपत्र मिला है, उसके लिए मैं आभारी हू। उसे मैं आप लोगो का आशीर्वाद मानता हू। जो द्रव्य मुझे मिला है उसके लिए मैं धन्यवाद देता हू। यद्यपि वह वहुत थोडा है, परन्तु मुझे विश्वास दिलाया जा रहा है कि अभी और सग्रह करने की चेष्टा की जायगी। आप लोग पण्डित जी की वात को ध्यान से शान्तिपूर्वक सुनें और अस्पृश्यता-निवारण के सम्बन्ध मे आपकी वुद्धि जो निश्चय करे उसे मानें। पण्डित जी का भाषण आप लोग अदव के साथ सुने।

(अस्पृश्यता के समर्थन पर पण्डित देवनायकाचार्य जी ने शान्ति और शिष्टता-पूर्वक भाषण दिया। उनके वाद मालवीय जी महाराज अस्पृश्यता-निवारण के पक्ष मे वोले। इसके पश्चात् गाधी जी ने अपना अधूरा भाषण समाप्त करते हुए कहा :)

पण्डित मालवीय जी ने आपको जो हृदय की वात सुना दी है उसके वाद मुझे कुछ कहने की आवश्यकता नही। पण्डित देवनायकाचार्य ने जो शान्ति के साथ और सक्षेप मे उपदेश दिया है उसके लिए मैं उनको धन्यवाद देता हू। और

शान्तिपूर्वक सुनने के लिए आप लोगों को भी धन्यवाद देता हूं। परन्तु देवनायकाचार्य जी को कुछ भी उत्तर न दूं तो असभ्यता मानी जायगी। पण्डित जी की मुख्य आपत्ति मन्दिर-प्रवेश बिल के सम्बन्ध में है। जैसा कि मालवीय जी ने कहा है कि मुझसे और उनसे बातचीत होनेवाली है और आगे कोई ऐसा उपाय निकल आये जिससे मन्दिर में जानेवालों का बहुमत होने से हरिजनों के मन्दिर-प्रवेश में कोई क़ानूनी बाधा न आये, तो मुझे कोई एतराज न होगा, और यह तो मैं कह ही चुका हूं कि बिना हिन्दू लोगो के बहुमत के इस सम्बन्ध का कोई कानून नहीं बनेगा, इतना कहने से सन्तोष हो जाना चाहिए। बिल के सम्बन्ध मे तो अपने हरिजन-दौरे में मैंने कोई आन्दोलन ही नही किया, नाम भी नहीं लिया। शास्त्रार्थ के विषय में यह कहना है, कि आज कल या कभी भी और कहीं भी शास्त्रार्थ हो सकता है, परन्तु धर्म बुद्धिग्राह्य विषय नही, हृदयग्राह्य विषय है। मन्दिर-प्रवेश को छोड़ कर और किसी विषय मे किसी का विरोध मुझे नही मालूम पड़ता है। मै किसी के साथ बलात्कार तो करना नही चाहता और न झगड़ा ही करना चाहता हूं। किसी को भी मुझसे डर नही होना चाहिए। मुझसे सनातन धर्म का अहित, अश्रेय नही हो सकता। जिस सनातन धर्म को आप मानते हैं उसी को मैं भी मानता हूं।

—हिन्दी। काशी, ३१।७।१९३४। ह० से०, १०।८।१९३४।]

९४. भाषण : हिन्दू विश्वविद्यालय की सभा में

उसे कहने के लिए मैं अभी स्वतन्त्र भी नही हू। तिलक महाराज ने धर्म के बारे मे क्या सुनाया है यह इस समय कहना है। आपको जानना चाहिए कि लोकमान्य के दिल मे हरिजन भाइयो के प्रति बडी दया थी। मुझसे और उनसे जो विचार-विनिमय हुआ था उसमे उन्होंने कहा था कि धर्मशास्त्रो मे अस्पृश्यता के लिए प्रमाण नही है और हो भी नही सकता, क्योकि हिन्दू धर्म मे सत्य का दर्जा सबसे ऊचा है। अगर तराजू पर एक ओर सत्य रक्खा जाय और दूसरी ओर अन्य सब बातें, तो भी सत्य का ही पलडा भारी रहेगा। कोई भी शास्त्री वेद, पुराण, इतिहास मे कही भी धर्म के सिद्धान्त के विपरीत कोई बात नही बता सकता। और धर्मों मे तो अस्पृश्यता की कोई चर्चा ही नही है। हिन्दू धर्म ने ही तो इजारा नही लिया है। हमारे धर्म मे कई बातें ऐसी बताई गई हैं जो और कही नही हैं। हमारे यहाँ जो यह वर्णाश्रम धर्म है वह यदि लोप हो जाय तो हिन्दूधर्म ही लोप हो जायगा। वर्णाश्रम धर्म के साथ आधुनिक अस्पृश्यता का कोई सम्बन्ध नही। इस बात पर मेरा विश्वास दृढ होता जा रहा है और ६ मास के इस दौरे के बाद तो मैं यह दृढता के साथ कहता हू।

गीता माता

अब समय कम रह गया है, इसलिए इस सम्बन्ध मे अधिक न कहूगा। किन्तु आचार्य ध्रुव जी ने आज्ञा दी है कि गीता माता के बारे मे कुछ कहना होगा। उनके और मालवीय जी के सामने, जो गीता को घोटकर पी गये हैं, मैं क्या कह सकता हूँ। परन्तु मेरे-जैसे आदमी पर गीता-माता का क्या प्रभाव पडा है यह बतलाने के लिए मैं कुछ कहता हू। ईसाई के लिए बाइबिल है, मुसलमान के लिए कुरान है और हिन्दुओ के लिए किसको कहे, वेद को कहे, स्मृति को कहें या पुराणो को कहे? २२-२३ साल की उम्र मे मुझे ज्ञान प्राप्त करने की इच्छा हुई। मालूम हुआ, कि वेदो का अभ्यास करने के लिए १५ वर्ष चाहिए, पर इसके लिए मैं तैयार नही था। मुझे मालूम हुआ, मैंने कही पढा कि गीता सब शास्त्रो का दोहन है, कामधेनु है। मुझे बतलाया गया कि उपनिषद आदि का निचोड ७०० श्लोको मे आ गया है। थोडी सस्कृत की भी शिक्षा थी, मैंने सोचा कि यह तो सरल उपाय है। मैंने अध्ययन किया और मेरे लिए वह बाइबिल, कुरान नही रही, माता बन गई। प्राकृतिक माता नही, ऐसी माता जो मेरे चले जाने पर भी रहेगी। उसके करोडो लडके-लडकियाँ बिना आपस के द्वेष के उसका दुग्धपान कर सकते है। पीडा के समय वे माता की गोद मे बैठ सकते है और पूछ सकते हैं, कि यह सकट आ गया है, मैं क्या करू, और माता ज्ञान बता देगी। अस्पृश्यता के सम्बन्ध मे भी मेरे ऊपर

कितना हमला होता है, कितने लोग विपरीत है। मैं माता से पूछता हूं, क्या करूं, वेद आदि तो पढ़ नही सकता। वह कहती है, नवां अध्याय पढ़ ले। माता कहती है, मैं उन्ही के लिए पैदा हुई हूं, मै पतितों के ही लिए हूं। इस तरह आश्वासन वे ही पा सकते हैं, जो सच्चे मातृभक्त है। जो सब कुछ उसी में से पान करना चाहते हैं, वह उसके लिए कामधेनु है। कोई-कोई कहते हैं कि गीता माता बहुत गूढ़ ग्रन्थ है। लोकमान्य तिलक के लिए वह गूढ़ ग्रन्थ भले ही हो, पर मेरे लिए तो इतना ही काफी है—पहला, दूसरा और तीसरा अध्याय पढ़ लीजिए बाकी में तो इसमें की बातों का दोहराना मात्र है। इसमें भी थोड़े-से श्लोकों में सभी बातों का समावेश है। और सबसे सरल गीता माता में तीन जगह कहा है कि जो सब चीजों को छोड़ कर मेरी गोद में बैठ जाते है उन्हें निराशा का स्थान नहीं, आनन्द ही आनन्द है। गीता माता कहती है कि पुरुषार्थ करो, फल मुझे सौंप दो। ऐसी मोटी-मोटी बातें मैंने गीता माता से पाईं। यह भक्ति से पाना सम्भव है। मैं रोज-रोज उससे कुछ-न-कुछ प्राप्त करता हूं, इसलिए मुझे निराशा कभी नही होती। दुनिया कहती है कि अस्पृश्यता आन्दोलन ठीक नही, गीता माता कह देती है, कि ठीक है। आप लोग प्रतिदिन सुबह गीता का पाठ करें। वह सर्वोपरि ग्रन्थ है। १८ अध्याय कण्ठ करना बड़े परिश्रम की बात है। जंगल मे या कारागार में चले गये तो कण्ठ करने से गीता साथ जायगी। प्राणान्त के समय जब आंख काम नहीं देती, केवल थोड़ी बुद्धि रह जाती है, तो गीता से ही ब्रह्म या निर्वाण मिल जा सकता है। आपने जो मानपत्र और रुपया दिया है और आप हरिजनों के लिए जो कर रहे हैं उसके लिए मैं धन्यवाद देता हूं, पर इतने से मुझे सन्तोष नही। मैं सोचता हूं कि यहां इतने अध्यापक और लड़के-लड़कियां है, फिर इतना कम काम क्यों हो रहा है?

— हिन्दी। काशी, १।८।१९३४। ह० से०, १०।८।१९३४।]

९५. भाषण : काशी की महिलाओं की सभा में

[२ अगस्त १९३४ को काशी में महिलाओं की सभा में गांधीजी ने जो भाषण दिया था, वह नीचे दिया जाता है।—सम्पा०]

माताओ और बहिनो, आप लोगों से इस काशी धाम को छोड़ने के पहिले दो-तीन बातें कर लेना चाहता हूं। पहिली बात तो यह है कि जिसके बारे में करीब ६ महीने से दौरा कर रहा हूं और जो आज इसी सभा से समाप्त होती है। हिन्दू-

९६. भाषण[1] : लखनऊ की ग्रामोद्योग प्रदर्शिनी में

[कांग्रेस ने बम्बई के अधिवेशन में जो प्रस्ताव पास किया था उसके ठीक-ठीक आशय के अनुसार चर्खा-संघ के मन्त्री श्री शंकरलाल बैंकर और ग्राम-उद्योग-संघ के मन्त्री श्री जे० पी० कुमाराप्पा की सहायता से लखनऊ-कांग्रेस की स्वागत-समिति ने लखनऊ में एक प्रदर्शिनी का आयोजन किया है, जिसका उद्घाटन २८ मार्च की शाम को गांधीजी ने किया। अपने ढंग की यह एक अपूर्व प्रदर्शिनी है। तफसीलवार वर्णन तो इसका मैं अगले अंक में करूँगा, यहाँ तो सिर्फ गांधीजी के भाषण को संक्षिप्त रूप में दे रहा हूँ।—म० दे०]

मुझे आशा नहीं थी कि ईश्वर मुझे इस प्रदर्शिनी को खोलने का मौका देगा। मेरी स्थिति कुछ ऐसी थी कि आखिरी वक्त तक प्रदर्शिनी के कार्यकर्त्ताओं को मैं यह विश्वास न दिला सका कि मैं अवश्य ही आ जाऊंगा। शुरू से ही मेरा दिल तो बहुत चाहता था कि इस प्रदर्शिनी को खोलने के लिए मैं यहां जरूर आऊं। यद्यपि मैं यह जानता हूं कि डा० मुरारीलाल और श्री शंकरलाल बैंकर ने इस प्रदर्शिनी को जुटाने में बहुत अधिक परिश्रम किया है, तो भी उनकी इस मेहनत के पीछे कल्पना मेरी ही थी। इस तरह की प्रदर्शिनी के बारे में बरसों से अपने दिल में जो कल्पना मैं रखता आया था, उसको मैं इस प्रदर्शिनी में देखता हूं। सन् १९२० में कांग्रेस का जब नया विधान बनाया गया, तो पहली बार हमारा ध्यान गांवों की ओर गया। उसके बाद से ही हम अपने देहाती भाई-बहिनों के विषय में भी कुछ सोचने लगे। नये विधान के बाद अहमदाबाद की कांग्रेस के साथ जो नुमाइश हुई थी, उसमें मैंने इस सम्बन्ध की अपनी कुछ कल्पनाओं को मूर्त्त रूप देने की चेष्टा की थी। मैं मानता हूं कि, देहातों और देहातियों के बारे में मैंने खूब सोचा है। और यह तो मैंने हमेशा ही कहा है कि हिन्दुस्तान हमारे चन्द शहरों से नहीं बल्कि सात लाख गांवों से बना है। आज हम लोग जो यहां इकट्ठे हुए है, देहात के नहीं, शहर के रहनेवाले है और हममें से कइयों का यह खयाल है कि हिन्दुस्तान शहरों में है और देहातवाले शहरवालों की खिदमत के लिए हैं। यही वजह है कि हम देहातों के बारे में, उनके सुख-दुःख और भूख-प्यास के सम्बन्ध में बहुत कम सोचते हैं। हम इस बात का कभी खयाल भी नहीं करते कि उन्हें क्या तो खाने-पीने को मिलता है और क्या पहनने-ओढने को। कांग्रेस काम करने वाले चन्द लोग ऐसे जरूर है, जो देहातियों के सुख-दुःख में हाथ बटाने की कोशिश

---

१. श्री महादेव देसाई-द्वारा प्रस्तुत विवरण से।

करते हैं। लेकिन इन थोडे-से लोगो के नाम पर शहरवाले यह दावा नही कर सकते कि वे देहातवालो की सेवा करते हैं।

देहातो की जो हालत है, उसे मैं खूब जानता हू। मेरा खयाल है कि हिन्दुस्तान को घूमकर जितना मैंने देखा है, उतना काग्रेस के नेताओ मे से किसी ने नही देखा है। पजाब से लेकर कन्याकुमारी तक जितना भ्रमण मैंने किया है उतना और किसी ने नही किया। यह बात मैं किसी अभिमान के वश होकर नही कह रहा हू। मैं तो सिर्फ यह बतलाना चाहता हू कि देहात के बारे मे जो-कुछ मैं कहता हू वह पूरे तजुर्बे के आधार पर। मैं यह कह सकता हू कि हिन्दुस्तान के देहातो को शहरवालो ने इतना चूसा है कि उन बेचारो को अब रोटी का एक टुकडा भी वक्त पर नही मिलता और वे दाने-दाने को तरसते हैं। यह बात अकेला मैं ही नही कहता, जिन अग्रेजो की यहा हुकूमत है वे यह तो नही कह सकते कि हिन्दुस्तान भूखो मर रहा है लेकिन उनमे से किसी ने अबतक यह नही कहा कि हिन्दुस्तानियो को भरपेट खाना मिलता है। क्या आप जानते हैं कि देहातवालो को खाने के लिए क्या मिलता है? अगर चावल मिलता है तो दाल नही मिलती, और रोटी मिलती है तो साग-भाजी नही मिलती। कही-कही तो देहातवाले सिर्फ सत्तू खाकर जीते हैं। यह सत्तू क्या है सो मैं आपको बताऊ? लोग मटर, चना और जौ वगैरा को भूनकर पीस लेते हैं और अगर मिला तो थोडी मिर्च और गन्दा-सा नमक मिलाकर उसी को खा लेते हैं। यही उनकी खूराक होती है। इस खूराक पर कैसे तो वे जिन्दा रह सकते हैं, कैसे तगडे और तन्दुरुस्त बन सकते हैं और कैसे उनकी बुद्धि का विकास हो सकता है? यह बिल्कुल नामुमकिन बात है। अगर हम लोगो को इस खूराक पर जीना पडे तो शायद दूसरे ही दिन हम यह शिकायत करेंगे कि इसे खाकर जीना हमारे लिए सम्भव ही नही है, तन्दुरुस्त रहना, काम करना और दिमाग से सोचना तो दूर की बात है।

देहातवालो की इन्ही सब मुश्किलो का खयाल करके पिछले साल बम्बई मे काग्रेस ने अखिल भारतीय ग्राम-उद्योग-सघ नामक एक नई सस्था खोली। इससे पहले अखिल भारत चर्खा-सघ द्वारा देहात मे खादी का काम हो रहा था। आज भी हो रहा है, लेकिन अकेले इससे मुझे कभी सन्तोष न था। मैं तो कई वर्षो से यह मानता आ रहा हू कि खादी के अलावा दूसरे भी ऐसे अनेक धन्धे हैं, जो गाँववालो के जीवन के लिए बहुत आवश्यक और उपयोगी है और जिनमे उनकी हालत एक बडी हद तक सुधारी जा सकती है। इसके लिए हमे यह देखना है कि देहातवाले कैसे रहते हैं, क्या काम करते हैं और उनके काम को कैसे तरक्की दी जा सकती है। यही वजह है कि काग्रेस ने गाँवो मे काम करनेवाले चर्खा-सघ और

ग्राम-उद्योग-संघ को इन प्रदर्शनों के आयोजन का भार सौंपा है। इस बार की यह प्रदर्शिनी अपने ढंग की पहली प्रदर्शनी है। इसकी रचना के पीछे कल्पना मेरी रही है। यह देहातवालों के हित के लिए है। लेकिन उन्हें लखनऊ लाना तो बड़ा कठिन काम है। उनमें से असंख्य स्त्री-पुरुष तो ऐसे हैं कि जो लखनऊ का नाम तक नहीं जानते। हमारे लिए यह कोई अचरज की बात नहीं है, बल्कि बड़े रंज और शर्म की बात है। इसीलिए इस नुमाइश के जरिये हम दिखाना यह चाहते हैं कि भूख से बेहाल इस हिन्दुस्तान में भी आज ऐसे-ऐसे हुनर, उद्योग-धन्धे और कला-कौशल मौजूद हैं, जिनका हमें कभी खयाल भी नहीं होता। इस नुमाइश की यही विशेषता है।

अगर आप शहरों मे होनेवाली दूसरी नुमाइशों से इसकी तुलना करेंगे तो मैं आपसे कहूंगा कि आपको इसमें निराशा होगी। लेकिन यदि आप देहातवालों का खयाल लेकर वैसी नजर से इसे देखेंगे तो आपको इस नुमाइश से कभी नाउम्मीद न होना पड़ेगा। साथ ही मैं यह भी कहूंगा कि यह नुमाइश कोई तमाशा नहीं है और न इसे तमाशा बनाने का कभी खयाल ही रहा है। यह नुमाइश तो एक ऐसी चीज है जिससे आदमी बहुत-कुछ सीख सकता है। जिन्होंने इसे बनाया है उन्होंने तो अपने वश भर इसे तमाशा न बनाने की ही चेष्टा की है। लेकिन अक्सर कांग्रेस के साथ होनेवाली नुमाइश से कांग्रेस का खर्च निकालने का खयाल रहता है और अब तक की कांग्रेस-प्रदर्शिनियों का आयोजन बहुत कुछ इसी खयाल से होता रहा है। लेकिन आज की इस नुमाइश से पैसा पैदा करने का इरादा असल मे कभी नहीं रहा। मद्रास-कांग्रेस के साथ जो नुमाइश हुई थी उसमें हमें सबसे ज्यादा पैसा मिला था। लखनऊ में भी चाहे तो काफी पैसा मिल सकता है।

पर यह नुमाइश तो एक ऐसी चीज है जिससे मनुष्य बहुत-कुछ सबक सीख सकता है। इसे देखने का सबसे अच्छा तरीका यह है कि कोई अगर कुछ सीखना चाहे तो जबतक यह नुमाइश खुली है तबतक इससे फायदा उठाकर वह बहुत-कुछ सीख सकता है। हम इसे कुछ सीखने की दृष्टि से देखें, तमाशे की दृष्टि से नहीं। मैं तो यह मानता हूं कि जो एक बार इस नुमाइश को देख लेगा, उसे फौरन ही पता चल जायगा कि हिन्दुस्तान के देहातों में अब भी कितनी ताकत भरी पड़ी है।

देहातों की इस ताकत को पहचानकर जो २८ करोड़ देहातियों की सेवा करता है, वही कांग्रेस का सच्चा सेवक है। जो इन करोड़ों की सेवा नहीं करता, वह कांग्रेस का सरदार या नेता हो सकता है, सेवक या बन्दा नहीं बन सकता।

मृतप्राय या अधमरा होने पर भी हिन्दुस्तान मे जो ताकत आज मौजूद है, उसका खयाल आपको इस नुमाइश में मैसूर, मद्रास, और कश्मीर से आये हुए

कारीगरो के कौशल को देखकर होगा। इन कारीगरो-द्वारा वडी मेहनत से वनाई हुई रुपयो की चीजो को कौड़ियो के मोल खरीदकर हमने उन्हे जिस दशा को पहुँचा दिया है, वह हमारे लिए जरा भी शोभास्पद नही है। चर्खा-सघ और ग्राम-उद्योग-सघ के जरिये हम इस वात की कोशिश कर रहे है कि इन कारीगरो को अपनी मेहनत के वदले मे पूरी मजदूरी मिले ताकि वे सुख से रह सके। लेकिन हमारी यह कोशिश वगैर आपकी मदद के कैसे कामयाव हो सकती है? हम तो यह चाहते है कि जिन लोगो को पहले सारा दिन काम करने पर दो पैसे दिये जाते थे उन्हे दो, तीन या चार आने दे और अगर हो सके तो आठ आने, एक रुपया भी दे। लेकिन यह तो तभी हो सकता है कि जव आप हमे इस वात की गारण्टी दे कि उनकी वनाई चीजो को आप पूरे दाम देकर खरीदेगे। किन्तु मै यह जानता हू कि आज आप इसके लिए तैयार नही है।

इस वात को यही छोडकर मै आपका ध्यान नुमाइश के अन्दर रक्खी हुई चीजो की ओर दिलाना वेहतर समझता हू। आमतौर पर हमारी नुमाइशे सिनेमा का ठाठ वन जाती है यहा वह सव ठाठ नही है। और नुमाइश का यह सीधा-सादा-सा दरवाजा मेरी इस वात का सवूत है। दरवाजे पर हल, पहिये, पजे और नरह्ही वगैरा जो लगे है, सो सव हमारे ग्राम-जीवन के सूचक है। दरवाजे के आस-पास दोनो ओर हमारे ग्राम-जीवन का परिचय करानेवाले जो चित्र लगे है, वे श्री रवीन्द्रनाथ ठाकुर के शान्ति-निकेतन से आये हुए श्री नन्दलाल वोस की प्रेरणा से उन्ही की देखरेख मे वने है। नन्दलाल वावू तो हिन्दुस्तान के एक वडे ऊचे कलाकार है। नुमाइश के अन्दर जिस चित्र-शाला का निर्माण उन्होने किया है, वह तो अवश्य ही देखने योग्य है। इससे हमे हिन्दुस्तान की पुरानी कला के उत्कर्ष का वोध होता है, और इस समय जो ज्ञात और अज्ञात कलाकार देश मे मौजूद है उनके सामर्थ्य का परिचय करानेवाली कृतिया देखने को मिलती है।

देहातवालो के वारे मे मै अपने आपको वहुत विज्ञ समझता हू। लेकिन इस नुमाइश मे तो मुझे भी सवक सिखानेवाली कई चीजे मै देख रहा हू। अगर मेरी तन्दुरुस्ती ठीक रही तो मै इसे कई वार आकर देखनेवाला हू। मै यह मानता हू कि मै यहा से वहुत-कुछ सीखकर जा सकता हू। जो सीखना चाहते है वे तो प्रवेशद्वार की रचना और आस-पास वने हुए इन चित्रो से भी वहुत-कुछ विना पैसा खर्च किये भी सीख सकते है।

इनके अलावा भी नुमाइश के अन्दर कई चीजें ऐसी हैं जिनका गौरव के साथ उल्लेख किया जा सकता है, लेकिन मैंने तो एक देहाती के ढग से वहुत थोडे मे कुछ वातें आप लोगो को वतला दी हैं। अगर मैं कलाकार होता तो इन्ही सव वस्तुओ

का ऐसा वर्णन आपको सुनाता कि आप सुनकर मुग्ध हो जाते। लेकिन मेरे जैसे देहाती के लिए यह सम्भव नही है। मैं देहाती हूं या नही, यह तो मैं नही कह सकता, लेकिन मेरा दिल देहाती है इसमें मुझे जरा भी शक नहीं। इसलिए मैंने इस नुमाइश का जिक्र एक देहाती की हैसियत से आपके सामने किया है। हाँ, बैंड-बाजों और खेलतमाशों का अभाव देखकर आप निराश न हों। ये नुमाइशें इन चीजों के लिए है ही नही। यहां तो आपको कुछ ऐसे बेहाल आदमी देखने को मिलेंगे, जो दिनभर मेहनत करके मुश्किल से दो-चार आने पैसे पाते हैं।

इस नुमाइश में नुमाइशी चीजों के अलावा ऐसे कारीगर भी यहा आये हैं, जो अपने हुनर आपको बताने को तैयार है। आप उनके पास बैठकर उनसे बहुत-सी बातें सीख सकते हैं। ऐसा सुभीता और ऐसा अवसर छोड़ने योग्य नहीं है। इसीलिए मैं कहता हूं कि आप जो चन्द लोग यहाँ आ गये हैं, वे इस नुमाइश के लिए मेरे प्रचारक बन जाय और दूर-दूर तक इसका सन्देश पहुचा दें। वर्ना आपके सिर यह इलजाम रहेगा कि देहातवालो के लाभ के लिए जो नुमाइश की गई थी उसकी आपने उपेक्षा की।

आप यह याद रखिए कि यह नुमाइश देहातवालों के लिए नही, आपके लिए है। देहातवाले इसे क्या देखेगे? वे तो इसे देखकर यही कहेगे कि ऊंह, इसमें क्या रक्खा है। इससे अच्छी-अच्छी चीजे हम अपने गॉव में दिखा सकते हैं। इसलिए मैं कहता हू कि यह नुमाइश तो शहरवालों के लिए है। और यदि मैं इसके लिए आपसे पैसा न लू तो किससे लूं? क्या देहातवालो से लूँ? उनके लिए जैसी नुमाइश मैं चाहता हूं, मौका मिलने पर वैसी नुमाइश भी मैं करके दिखाऊँगा। और यदि मैं मर गया तो मेरे पीछे रहनेवाले उसे करके दिखायेगे।

इस नुमाइश के लिए स्वागत-समिति ने एसे निवास-स्थान का प्रबन्ध करके ३५ हजार रुपये के खर्च का बजट बनाया है। मैं जानता हूं कि इस कार्य में उसे कई परेशानियों और मुसीबतों का सामना करना पड़ा है। स्वागत-समिति ने जो ३५००० रु० खर्च किया है, उसे वापस दे देना आपका फर्ज है, इसीलिए तो मैं आपको अपना प्रचारक नियुक्त कर रहा हूं। इस प्रचार-कार्य का कोई कमीशन मैं आपको नही दूगा। लेकिन ईश्वर जरूर देनेवाला है। अगर आपको उस पर एतबार है, तो वह आपका कमीशन जरूर आपको भेज देगा।

मैं भी आपके इस शहर मे थोड़े दिन पड़ा रहनेवाला हूं। मै रोज यह पता लगाता रहूंगा कि किस तरह आप मेरी एजेन्सी का काम करते हैं। आपके काम की परीक्षा के लिए मैं नुमाइश के खजांची से रोजाना यह पूछता रहूँगा कि आपने नुमाइश के लिए कितने आदमी और कितने पैसे भेजे। मै उम्मीद करता हूं और

अदब के साथ कहता हू कि नुमाइश के लिए रक्खे गये आठ आने या चार आने के टिकट के लिए कोई शिकायत आपको नही होनी चाहिए। अगर आप लोगो की पूरी सहायता रही तो हमारा यह इरादा है कि हम यहा आनेवाले देहाती किसानो और मजदूरो को यह नुमाइश मुफ्त मे देखने का मौका दे, लेकिन यह तभी हो सकता है, जब आप लोग लाख-दो-लाख की सख्या मे इस नुमाइश को देखने आवे और मेरा होसला बढ़ा दें। वर्ना यह सुनकर कि आज नुमाइश मे दो हजार आदमी आये, कल एक हजार और परसो कोई भी नही आया, मुझे सदमा पहुचेगा। लेकिन अगर मेरे जैसे देहाती के नसीब मे यह भी लिखा है तो उसे सह लूगा। अन्त मे, मै यह कहूगा कि इस प्रदर्शिनी मे जो त्रुटियां रह गई है, मुझे उम्मीद है, आप उन कमियो को दरगुजर करके इसमे जो कुछ सीखने लायक है उसे जरूर सीखेगे।
--हिन्दी। लखनऊ, २८।३।१९३६। ह० से०, ४।४।१९३६।]

९७. भाषण : भारत-माता मन्दिर, काशी के उद्घाटन में

"इस मन्दिर का उद्घाटन करते हुए मैं अपने मन के भावो को किस तरह व्यक्त करू ? सेगांव छोड कर कही न जानेवाला व्यक्ति यहा दौडा आया, क्योकि प्रेम एक अजीव वस्तु है। यह मनुष्य को कहा से कहा उडा ले जाता है। मीरावाई का कहा जानेवाला एक भजन गुजराती मे है, जिसमे प्रेम की उपमा सूत के कच्चे धागे से दी गई है, किन्तु इस धागे के कच्चे होने पर भी इसका वल इतना जवरदस्त है कि अपने परिचित प्रेमी को वह चाहे जहाँ खीच ले जाता है। इस पर कृष्ण-सरीखे भी प्रहार करें तो भी यह टूटता नही, क्योकि कृष्ण की तो यह प्रतिज्ञा ही है कि जहाँ सच्चा प्रेम है वहा मैं हूँ। सो यह प्रेम का धागा ही मुझे यहाँ खीच लाया है।

"शिवप्रसाद जी का प्रेम मुझे खीच न लाता, तो मै यहा आता नही, क्योकि इस पवित्र भावना पर रचे हुए इस मन्दिर का उद्घाटन करने के लिए मैं अपने को योग्य नही समझता। शिवप्रसाद को जब से मैं जानता हूँ तव से मैं देखता हूँ कि गगा-तट को इन्होंने अपना निवास-स्थान वनाया है और गगा-जल से अपनी देह को पवित्र रखते हैं, तिस पर भी इन्होंने अपने हृदय मे एक दूसरी ही गगा को धारण कर रक्खा है। यह भावना और कल्पना की गगा इनके हृदय मे हमेशा वहती रहती है और इसमे यह नित्य ही अवगाहन करते रहते हैं। वह भावना के घोडे भी वनाते और पृथिवी की प्रदक्षिणा करते हैं। भावना का ऐसा वल है कि वह यदि शुद्ध हो तो स्वर्ग मे भी उडा ले जा सकता है और अशुद्ध हो तो नरक

में भी ले जा सकता है। इनकी भारत-भक्ति की भावना पूना के कर्वे विधवाश्रम में खुदे हुए एक उठावदार नक्शे को देखकर मूर्त्तिमन्त हुई, और इस पर अपनी समुचित धनराशि खर्च कर डालने का उन्होंने विचार किया। जैसी इनकी भावना थी वैसे ही इनको कलाकार भी मिल गये। शिल्पी और इंजीनियर भी वैसे ही मिल गये। एक बार तो इन्हें अपने जीवन की भी आशा नहीं रही थी, किन्तु भगवान ने जीवित रक्खा और इनका स्वप्न, इनकी भावना की प्रतिमा आज हम अपने सामने खड़ी देखते हैं।

"सवेरे जब मैं पूर्णाहुति देने आया, तो उस समय वेदमन्त्र सुनते-सुनते मुझे २० वर्ष से जो श्लोक अपनी प्रभात की प्रार्थना मे बोलते हैं, उसका स्मरण हो आया—

समुद्रवसने देवि पर्वतस्तनमण्डले,
विष्णुपत्नि नमस्तुभ्यं पादस्पर्शं क्षमस्व मे।

"यह विष्णुपत्नी ही हमारे पास है। हमारा पोषण करती है, रक्षण करती है, जिसके हम सब ऋणी हैं और जिससे हमें सदा क्षमा माँगनी चाहिए। उसका चित्र मेरे सामने खड़ा हो गया। जिस माता ने हमे जन्म दिया, वह तो थोड़े ही वर्ष जीवित रहेगी, किन्तु यह माता तो सदैव ही है और यदि यह नहीं है तो हम भी नहीं हैं। जिस दिन इसका नाश होगा उस दिन यह हमे अपनी गोद में लेकर चली जायगी। भारतमाता इसी माता का अंश है और उसका मानचित्र आज वेदमन्त्रों से पुनीत हुआ है। शिवप्रसाद जी ने सबको बिना किसी प्रकार की शर्त के इस माता की आराधना के लिए निमन्त्रित किया है। जिन्हें माता के प्रति प्रेम है, वे यहाँ चले आवें। मैं तो प्रेम का दावा करता ही हूँ तब फिर मैं इस मन्दिर का उद्घाटन क्यों न करूं?

"इस मन्दिर को शिवप्रसाद जी का आशीर्वाद तो मिला ही है। यहां हम सब अपने दिल का द्वेष और मैल भूलकर, अपने तमाम संकुचित भेद-भाव भूलकर एकत्र हों और भारत-माता की सेवा की प्रतिज्ञा करें। शिवप्रसाद जी की शुभ-कामनाएँ सब सफल हों और जबतक वे सफल हों, तबतक की आयु भगवान उन्हे प्रदान करें।

—हिन्दी। काशी, दशहरा, १९३६। ह० से०, ३१।१०।१९३६।]

९८. भाषण : हिन्दू विश्वविद्यालय की रजत्‌जयन्ती में

[२१ जनवरी १९४२ के दिन गांधी जी ने काशी हिन्दू विश्वविद्यालय की रजत-जयन्ती के अवसर पर नीचे लिखा भाषण हिन्दी मे दिया था।—सम्पा०]

तीर्थ-यात्रा

"पूज्य मालवीय जी, सर राधाकृष्णन्, भाइयो और वहिनो!

"आप सव जानते है कि आजकल मुझमे न तो सफर करने की ताकत ही रही है, और न इच्छा ही, लेकिन जव मैंने इस विश्वविद्यालय के रजत महोत्सव की वात सुनी और मुझे सर राधाकृष्णन् का निमन्त्रण मिला, तो मैं इन्कार न कर सका।

"आप जानते है कि मालवीय जी महाराज के साथ मेरा कितना गाढ सम्वन्ध है। अगर उनका कोई काम मुझसे हो सकता है, तो मुझे उसका अभिमान रहता है, और अगर मैं उसे कर सकूं, तो अपने को कृतार्थ समझता हूँ। इसलिए जव सर रावाकृष्णन् का पत्र मुझे मिला, तो मैंने निमन्त्रण स्वीकार कर लिया। यहाँ आना मेरे लिए तो एक तीर्थयात्रा के समान है।

"यह विश्वविद्यालय मालवीय जी महाराज का सवसे वडा और प्राणप्रिय कार्य है। उन्होंने हिन्दुस्तान की वहुत-वहुत सेवाएँ की हैं, इससे आज कोई इन्कार नही कर सकता। लेकिन मेरा अपना खयाल यह है कि उनके महान् कार्यों मे इस कार्य का महत्व सवसे ज्यादा रहेगा। २५ साल पहिले, जव इस विश्वविद्यालय की नीव डाली गई थी, तव भी मालवीय जी महाराज के आग्रह और खिचाव से मैं यहाँ आ पहुँचा था, उस समय तो मैं यह सोच भी न सकता था कि जहाँ वडे-वडे राजा, महाराजा और खुद वाइसराय आनेवाले हैं, वहाँ मुझ-जैसे फकीर की क्या जरूरत हो सकती है। तव तो मैं महात्मा भी नही वना था। अगर कोई मुझे महात्मा के नाम से पुकारते भी थे, तो मैं यही सोच लेता था कि महात्मा मुशीराम जी के वदले भूल से मुझे किसी ने पुकार लिया होगा। उनकी कीर्ति तो मैंने दक्षिण अफ्रीका मे ही सुन ली थी। हिन्दुस्तान से धन्यवाद और सहानुभूति का सन्देश भेजनेवालो मे एक वह भी थे, और मैं जानता था कि हिन्दुस्तान की जनता ने उन्हे उनकी देश-सेवाओ के लिए 'महात्मा' की उपाधि दी थी। उस समय भी मालवीय जी महाराज की कृपादृष्टि मुझ पर थी। कही भी कोई सेवक हो, वह उसे ढूंढ निकालते हैं, और किसी-न-किसी तरह अपने पास खीच ही लाते हैं। यह उनका सदा का धन्धा है।

भिक्षां देहि

"लोग मालवीय जी महाराज की बड़ी प्रशंसा करते हैं। आज भी आपने उनकी कुछ प्रसंशा सुनी है। वह सब तरह उसके लायक हैं। मैं जानता हूँ कि हिन्दू विश्वविद्यालय का कितना बड़ा विस्तार है। संसार में मालवीय जी से बढ़कर कोई भिक्षुक नहीं। जो काम उनके सामने आ जाता है, उसके लिए—अपने लिए नहीं—उनकी भिक्षा की झोली का मुँह हमेशा खुला रहता है; वह हमेशा मांगा ही करते हैं। और परमात्मा की भी उन पर बड़ी दया है कि जहां जाते हैं, उन्हें पैसे मिल ही जाते हैं। तिस पर भी उनकी भूख कभी नहीं बुझती। उनका भिक्षा-पात्र सदा खाली रहता है। उन्होंने विश्वविद्यालय के लिए एक करोड़ इकट्ठा करने की प्रतिज्ञा की थी। एक करोड़ की जगह डेढ़ करोड़ दस लाख रुपया इकट्ठा हो गया, मगर उनका पेट नहीं भरा। अभी-अभी उन्होंने मुझसे कान में कहा है कि आज के हमारे सभापति महाराजा साहब दरभंगा ने उनको एक खासी बड़ी रकम दान में और दी है।

तीर्थस्वरूप मालवीय जी

"मैं जानता हूँ कि मालवीय जी महाराज स्वयं किस तरह रहते हैं। यह मेरा सौभाग्य है कि उनके जीवन का कोई पहलू मुझसे छिपा नहीं। उनकी सादगी, उनकी सरलता, उनकी पवित्रता और उनकी मुहब्बत से मैं भलीभांति परिचित हूँ। उनके इन गुणों में से आप जितना कुछ ले सकें, जरूर लें; विद्यार्थियों के लिए तो उनके जीवन की बहुतेरी बातें सीखने लायक हैं। मगर मुझे डर है कि उन्होंने जितना सीखना चाहिए, सीखा नहीं है। यह आप का और हमारा दुर्भाग्य है। इसमें उनका कोई कुसूर नहीं। धूप में रहकर भी कोई सूरज का तेज न पा सके, तो उसमें सूरज बेचारे का क्या दोष? वह तो अपनी तरफ से सबको गर्मी पहुँचाता रहता है, पर अगर कोई उसे लेना ही न चाहे, और ठण्ड में रहकर ठिठुरता फिरे, तो सूरज भी उसके लिए क्या करे? मालवीय जी महाराज के इतने निकट रहकर भी अगर उनके जीवन से सादगी, त्याग, देशभक्ति, उदारता और विश्वव्यापी प्रेम आदि सद्गुणों का अपने जीवन में अनुकरण न कर सकें, तो कहिए, आपसे बढ़कर अभागा और कौन होगा?

कैसी गुलामी!

"अब मैं विद्यार्थियों और अध्यापकों से दो शब्द कहना चाहता हूँ।

"मैंने तो सर राधाकृष्णन् से पहले ही कह दिया था कि मुझे क्यों बुलाते हो?

मैं वहाँ पहुँचकर क्या कहूँगा ? जब बडे-बडे विद्वान् मेरे सामने आ जाते हैं, तो मैं हार जाता हूँ। जब से हिन्दुस्तान आया हूँ, मेरा सारा समय काग्रेस मे और गरीबो, किसानो और मजदूरो वगैरा मे बीता है। मैंने उन्ही का काम किया है। उनके बीच मेरी जबान अपने आप खुल जाती है। मगर विद्वानो के सामने कुछ कहते हुए मुझे बडी झिझक मालूम होती है। श्री राधाकृष्णन् ने मुझे लिखा कि मैं अपना लिखा हुआ भाषण उन्हे भेज दूं। पर मेरे पास उतना समय कहाँ था ? मैंने उन्हे जवाब दिया कि वक्त पर जैसी प्रेरणा मुझे मिल जायगी, उसी के अनुसार मैं कुछ कह दूंगा। मुझे प्रेरणा मिल गई है। मैं जो कुछ कहूँगा, मुमकिन है, वह आपको अच्छा न लगे। उसके लिए आप मुझे माफ कीजिएगा। यहाँ आकर जो कुछ मैंने देखा, और देखकर मेरे मन मे जो चीज़ पैदा हुई, वह शायद आपको चुभेगी। मेर खयाल था कि कम से कम यहाँ तो सारी कारंवाई अग्रेजी मे नही, बल्कि राष्ट्रभाषा मे ही होगी। मैं यहाँ बैठा यही इन्तजार कर रहा था कि कोई-न-कोई तो आखिर हिन्दी या उर्दू मे कुछ कहेगा। हिन्दी-उर्दू न सही, कम-से-कम मराठी या सस्कृत मे ही कोई कुछ कहता। लेकिन मेरी सब आशाएँ निष्फल हुईं।

"अग्रेजो को हम गालियाँ देते हैं कि उन्होंने हिन्दुस्तान को गुलाम बना रक्खा है, लेकिन अग्रेजी के तो हम खुद ही गुलाम बन गये हैं। अग्रेजो ने हिन्दुस्तान को काफी पामाल किया है। इसके लिए मैंने उनकी कडी-से-कडी टीका भी की है। परन्तु अग्रेजी की अपनी इस गुलामी के लिए मैं उनको जिम्मेदार नही समझता। खुद अग्रेजी सीखने और अपने बच्चो को अग्रेजी सिखाने के लिए हम कितनी-कितनी मेहनत करते हैं ? अगर कोई हमे कह देता है कि हम अग्रेजो की तरह अग्रेजी बोल लेते हैं, तो मारे खुशी के फूले नही समाते। इससे बढकर दयनीय गुलामी और क्या हो सकती है ? इसकी वजह से हमारे बच्चो पर कितना-कितना जुल्म होता है ? अग्रेजी के प्रति हमारे इस मोह के कारण देश की कितनी शक्ति और कितना श्रम बरबाद होता है ? इसका पूरा हिसाब तो हमे तभी मिल सकता है, जब गणित का कोई विद्वान् इसमे दिलचस्पी ले। कोई दूसरी जगह होती, तो शायद यह सब बरदाश्त कर लिया जाता, मगर यह तो हिन्दू विश्वविद्यालय है। जो बातें इसकी तारीफ मे अभी कही गई हैं, इनमें सहज ही एक आशा यह भी प्रकट की गई है कि यहाँ के अध्यापक और विद्यार्थी इस देश की प्राचीन सस्कृति और सभ्यता के जीते-जागते नमूने होगे।

"मालवीय जी ने तो मुंह-माँगी तनख्वाहे देकर अच्छे-से-अच्छे अध्यापक यहाँ आप लोगो के लिए जुटा रक्खे हैं। तब उनका दोष तो कोई कैसे निकाले

सकता है? दोष जमाने का है। आज हवा ही कुछ ऐसी बन गई है, कि हमारे लिए उसके असर से बच निकलना मुश्किल हो गया है। लेकिन अब वह जमाना भी नहीं रहा, जब विद्यार्थी जो कुछ मिलता था, उसी में सन्तुष्ट रह लिया करते थे। अब तो वे बड़े-बड़े तूफान भी खड़े कर लिया करते हैं, छोटी-छोटी बातों के लिए भूख-हड़ताल तक कर देते है। अगर ईश्वर उन्हें बुद्धि दे, तो वे कह सकते हैं : हमें अपनी मातृभाषा में पढ़ाओ। मुझे यह जानकर खुशी हुई कि यहाँ आन्ध्र के २५० विद्यार्थी हैं। क्यों न वे सर राधाकृष्णन् के पास जायें और उनसे कहें कि यहाँ हमारे लिए एक आन्ध्र-विभाग खोल दीजिए और तेलगू में हमारी सारी पढ़ाई का प्रबन्ध करा दीजिए? और अगर वे मेरी अक्ल से काम करें, तब तो उन्हें कहना चाहिए कि हम हिन्दुस्तानी हैं, हमें ऐसी ज़बान में पढ़ाइए, जो सारे हिन्दुस्तान में समझी जा सके। और ऐसी जबान तो हिन्दुस्तानी ही हो सकती है।

कहां जपान, कहां हम?

"जपान आज अमेरिका और इंग्लैण्ड से लोहा ले रहा है। लोग इसके लिए उसकी तारीफ़ करते हैं। मैं नहीं करता। फिर भी जपान की कुछ बातें सचमुच हमारे लिए अनुकरणीय हैं। जपान के लड़कों और लड़कियों ने यूरोप-वालों से कुछ जो पाया हैं, अपनी मातृभाषा जपानी के ज़रिये ही पाया है, अंग्रेजी के जरिये नहीं। जपानी लिपि बड़ी कठिन है, फिर भी जपानियों ने रोमन लिपि को कभी नहीं अपनाया। उनकी सारी तालीम जपानी लिपि और जपानी जबान के ज़रिये ही होती है। जो चुने हुए जपानी पश्चिमी देशों में खास-खास विषयों की तालीम के लिए भेजे जाते हैं, वे भी जब आवश्यक ज्ञान पाकर लौटते हैं, तो अपना सारा ज्ञान अपने देशवासियों को जपानी भाषा के जरिये ही देते हैं। अगर वे ऐसा न करते और देश मे आकर दूसरे देशों के जैसे स्कूल और कालेज अपने यहाँ भी बना लेते, और अपनी भाषा को तिलाञ्जलि देकर अंग्रेजी में सब कुछ पढ़ाने लगते, तो उससे बढ़कर बेवकूफी और क्या होती? इस तरीके से जपानवाले नई भाषा तो सीखते, लेकिन नया ज्ञान न सीख पाते। हिन्दुस्तान में तो आज हमारी महत्वाकांक्षा ही यह रहती है कि हमें किसी तरह कोई सरकारी नौकरी मिल जाय, या हम वकील, बैरिस्टर, जज, वगैरा बन जायँ। अंग्रेजी सीखने में हम बरसों बिता देते हैं, तो भी सर राधाकृष्णन् या मालवीय जी महाराज के समान अंग्रेजी जानने-वाले हमने कितने पैदा किये हैं? आखिर यह एक पराई भाषा ही न है? इतनी कोशिश करने पर भी हम उसे अच्छी तरह सीख नहीं पाते। मेरे पास सैकड़ों

खत आते रहते हैं। इनमे कई एम० ए० पास लोगो के भी होते है। परन्तु चूंकि वे अपनी ज़बान मे नही लिखते, इसलिए अंग्रेजी मे अपने ख़याल अच्छी तरह जाहिर नहीं कर पाते।

"इसलिए यहाँ बैठे-बैठे मैंने जो कुछ देखा, उसे देखकर मैं तो हैरान रह गया। जो कार्रवाई अभी यहाँ हुई, जो कुछ कहा या पढा गया, उसे जनता तो कुछ समझ ही नही सकी। फिर भी हमारी जनता मे इतनी उदारता और धीरज है कि वह चुपचाप सभा मे बैठी रहती है और खाक समझ मे न आने पर भी यह सोचकर सन्तोष कर लेती है कि आखिर हमारे नेता ही न हैं, कुछ अच्छी ही बात कहते होंगे। लेकिन इससे उसे लाभ क्या? वह तो जैसी आई थी, वैसी ही खाली लौट जाती है। अगर आपको शक हो, तो मैं अभी हाथ उठवाकर लोगों से पूछूं कि यहाँ की कार्रवाई मे वे कितना कुछ समझे है? आप देखिएगा कि वे सब 'कुछ नही', 'कुछ नहीं' कह उठेंगे। यह तो हुई आम जनता की बात। अब अगर आप यह सोचते हो कि विद्यार्थियो मे से हर एक ने हर बात को समझा है, तो वह दूसरी बडी गलती है।

"आज से पच्चीस साल पहले जब मैं यहाँ आया था, तब भी मैंने यही सब बाते कही थी। आज यहाँ आने पर जो हालत मैंने देखी, उससे उन्ही चीजो को दोहराने के लिए विवश हो गया।

शारीरिक ह्रास

"दूसरी बात जो मेरे देखने मे आई, उसकी तो मुझे जरा भी आशा न थी। आज सुबह मैं मालवीय जी महाराज के दर्शनो को गया था। वसन्तपचमी का अवसर था, इसलिए सब विद्यार्थी भी वहा उनके दर्शनो को आये थे। मैंने उस वक्त भी देखा कि विद्यार्थियो को जो शिक्षा मिलनी चाहिए, वह उन्हे नही मिलती। जिस सभ्यता, मौन और व्यवस्था के साथ उन्हे चलना आना चाहिए, उस तरह चलना उन्होंने सीखा ही नही था। यह कोई मुश्किल काम नही, कुछ ही समय मे सीखा जा सकता है। सिपाही जब चलते हैं, तो सिर उठाये, सीना ताने, तीर की तरह सीधे चलते हैं। लेकिन विद्यार्थी तो उस वक्त आडे-टेढे, आगे-पीछे, जैसा जिसका दिल चाहता था, चलते थे, उनके उस चलने को चलना कहना भी शायद मुनासिब न हो। मेरी समझ मे तो इसका कारण भी यही है कि हमारे विद्यार्थियो पर अंग्रेजी ज़बान का बोझ इतना पड जाता है, कि उन्हें दूसरी तरफ सर उठाकर देखने की फुरसत नहीं मिलती। यही कारण है कि उन्हे जो वस्तुत सीखना चाहिए, वे सीख नही पाते।

बौद्धिक थकान

"एक और वात मैंने देखी। आज सुवह हम श्री शिवप्रसाद गुप्त के घर से लौट रहे थे। रास्ते में विश्वविद्यालय का विशाल प्रवेश-द्वार पड़ा। उस पर दृष्टि गई तो देखा, नागरी लिपि में हिन्दू विश्वविद्यालय इतने छोटे अक्षरों में लिखा है, कि ऐनक लगाने पर भी नही पढ़ा जाता, पर अंग्रेजी में उसी नाम ने तीन चौथाई से भी ज्यादा जगह घेर रक्खी थी। मैं हैरान हुआ कि यह क्या मामला है? इसमें मालवीय जी महाराज का कोई कसूर नहीं। यह तो किसी इंजीनियर का काम होगा। लेकिन सवाल तो यह है कि अंग्रेज़ी की वहां जरूरत ही क्या थी? क्या हिन्दी या फ़ारसी मे कुछ नही लिखा जा सकता था? क्या मालवीय जी, और क्या सर राधाकृष्णन् सभी हिन्दू-मुस्लिम एकता नहीं चाहते हैं? फ़ारसी मुसलमानों की अपनी खास लिपि मानी जाने लगी है। उर्दू का देश में अपना खास स्थान है इसलिए अगर दरवाजे पर फ़ारसी में, नागरी में या हिन्दुस्तान की दूसरी किसी लिपि मे कुछ लिखा जाता, तो मैं उसे समझ सकता था। लेकिन अंग्रेजी मे उसका वहां लिखा जाना भी हम पर जमे हुए अंग्रेजी भापा के साम्राज्य का एक प्रमाण है। किसी नई लिपि या जवान को सीखने से हम घवराते हैं। जव कि सच तो यह है कि हिन्दुस्तान की किसी जवान या लिपि को सीखना हमारे लिए वायें हाथ का खेल होना चाहिए। जिसे हिन्दी या हिन्दुस्तानी आती है, उसे मराठी, गुजराती, वंगाली वगैरा सीखने में तकलीफ़ ही क्या हो सकती है? कन्नड़, तमिल, तेलुगू और मलयालम का भी मेरा तो यही अनुभव है। इनमें भी संस्कृत के और संस्कृत से निकले हुए काफ़ी शब्द भरे पड़े हैं। जव हममें अपनी मातृभापा के लिए सच्चा प्रेम पैदा हो जायगा, तो हम इन सब भाषाओं को वड़ी आसानी से सीख सकेंगे। रही वात उर्दू की, सो वह भी आसानी के साथ सीखी जा सकती है। लेकिन दुर्भाग्य से उर्दू के विद्वान् इधर उसमें अरवी और फ़ारसी के शब्द ठूंस-ठूंस कर भरने लगे है, उसी तरह, जिस तरह हिन्दी के विद्वान् हिन्दी में संस्कृत शब्द भर रहे है। नतीजा इसका यह होता है कि जव मुझ-जैसे आदमी के सामने कोई लखनवी तर्ज की उर्दू बोलने लगता है, तो सिवा वोलनेवाले का मुह ताकने के और कोई चारा नही रह जाता।

अपनी विशेषता चाहिए

"एक वात और। पश्चिम के हरएक विश्वविद्यालय की अपनी एक-न-एक विशेपता होती है। कैम्ब्रिज और आक्सफर्ड को ही लीजिए। इन विश्वविद्यालयों को इस वात का अभिमान है कि इनके हरएक विद्यार्थी पर इनकी अपनी विशेषता

की छाप इस तरह लगी रहती है कि वे तुरन्त पहचाने जा सकते हैं। हमारे देश के विश्वविद्यालयो की अपनी ऐसी कोई विशेषता होती ही नही। वे तो पश्चिमी विश्वविद्यालयो की एक निस्तेज और निष्प्राण नकल-भर हैं। अगर हम उनको पश्चिमी सभ्यता का सिर्फ सोख्ता या स्याही-सोख कहे, तो शायद बेजा न होगा। आपके इस विश्वविद्यालय के बारे मे अक्सर यह कहा जाता है कि यहा शिल्प-शिक्षा और यन्त्र-शिक्षा का यानी इजीनियरिंग और टेक्नालोजी का देशभर मे सबसे ज्यादा विकास हुआ है, और इनकी शिक्षा का अच्छा प्रबन्ध है। लेकिन इसे मैं यहा की विशेषता मानने को तैयार नही। तो फिर इसकी विशेषता क्या हो? मैं इसका एक उदाहरण आपके सामने रखना चाहता हू। यहा जो इतने हिन्दू विद्यार्थी है, उनमे से कितनो ने मुसलमान विद्यार्थियो को अपनाया है? अलीगढ के कितने छात्रो को आप अपनी ओर खीच सके है? दरअसल आपके दिल मे चाह तो यह पैदा होनी चाहिए कि आप तमाम मुसलमान विद्यार्थियो को यहा बुलायेंगे, और उन्हे अपनायेंगे।

हिन्दुस्तान की पुरानी सस्कृति का सन्देश

"इसमे सन्देह नही कि आपके विश्वविद्यालय को काफी धन मिल गया है, और जबतक मालवीय जी महाराज है, आगे भी मिलता रहेगा। लेकिन मैंने जो कुछ कहा है, वह रुपये का खेल नही। अकेला रुपया सब काम नही कर सकता, हिन्दू विश्वविद्यालय से मैं विशेष आशा तो इस बात की रक्खूंगा कि यहा वाले इस देश मे बसे हुए सभी लोगो को हिन्दुस्तानी समझें, और अपने मुसलमान भाइयो को अपनाने मे किसी से पीछे न रहे। अगर वे आपके पास न आयें, तो आप उनके पास जाकर उन्हे अपनाइए। अगर इसमे हम निष्फल भी हुए तो क्या हुआ? लोकमान्य तिलक के हिसाब से हमारी सभ्यता दस हजार बरस पुरानी है। बाद के कई पुरातत्वशास्त्रियो ने उसे इससे भी पुरानी बताया है। इस सभ्यता मे अहिसा को परम धर्म माना गया है। अत इसका कम-से-कम एक नतीजा तो यह होना चाहिए कि हम किसी को अपना दुश्मन न समझें। वेदो के समय से हमारी यह सभ्यता चली आ रही है। जिस तरह गगा जी मे अनेक नदिया आकर मिली हैं, उसी तरह इस देश की सस्कृति-गगा मे भी अनेक सस्कृति-रूपी सहायक नदिया आकर मिली हैं। यदि इन सबका कोई सन्देश या पैगाम हमारे लिए हो सकता है, तो यही कि हम सारी दुनिया को अपनायें और किसी को अपना दुश्मन न समझें। मैं ईश्वर से प्रार्थना करता हूं कि वह हिन्दू विश्वविद्यालय को यह सब करने की शक्ति दे। यही इसकी विशेषता हो सकती है। सिर्फ अग्रेजी सीखने से यह काम

नही हो पायेगा। इसके लिए तो हमें अपने प्राचीन ग्रन्थों और धर्मशास्त्रों का श्रद्धापूर्वक यथार्थ अध्ययन करना होगा, और यह अध्ययन हम मूल ग्रन्थों के सहारे ही कर सकते हैं।

आखिरी वात

"अन्त में एक वात मुझे और कहनी है। आप लोग रहते तो महलों में हैं, क्योंकि मालवीय जी महाराज ने आपके लिए महलों-जैसे छात्रावास वगैरा वनवा दिये है। पर इसका यह मतलव नही कि आप महलों में रहने के आदी वन जावें। आप मालवीय जी महाराज के घर जाइए और देखिए, वहां आपको इनमें से कोई चीज न मिलेगी। न ठाठ-वाट होगा, न साजो-सामान और न किसी तरह का कोई दिखावा। उनसे आप सादगी और गरीवी का पाठ सीखिए। आप यह कभी न भूलिए कि हिन्दुस्तान एक गरीव देश है और आप गरीव मां-वाप की सन्तान हैं। उनकी मेहनत का पैसा यों ऐशोआराम मे वरवाद करने का आपको क्या हक़ है? ईश्वर आपको चिरजीवी करे और ऐसी सद्‌वुद्धि दे कि जिससे आप मालवीय जी महाराज की त्यागशीलता, आध्यात्मिकता और सादगी से अपने जीवन को रँग सकें और आज जो कुछ मैंने आपसे कहा है, उस पर समझदारी के साथ आचरण कर सकें।"

—हिन्दी। काशी, २१।१।१९४२। ह० से०, १।२।१९४२।]

९९. काशी में कांग्रेस-कार्यकर्त्ताओं से भेंट

[काशी में जवाहरलाल जी ने दो ऐसी सभाओं का प्रवन्ध किया था जिनमें कांग्रेस के कार्यकर्त्ता गांधीजी के साथ दिल खोलकर वातें कर सकें। एक सभा में संयुक्त प्रान्त की प्रान्तीय समिति की कार्यकारिणी के सदस्य थे और दूसरी में समूची प्रान्तीय समिति के सदस्य। कई सवाल पूछे गये। कुछ काम के थे। कुछ यों ही। इनसे गांधीजी का और उनके श्रोताओं का काफी मनोरंजन हुआ और लोगों को यह देखने का मौका मिला कि गांधीजी का विनोद उनके जीवन और स्वास्थ्य को वनाये रखने में कितना सहायक होता था।—सम्पा०]

सिद्धान्त और ध्येय

प्रश्न—आपका अन्तिम ध्येय क्या है? क्या आप यह चाहते हैं कि कांग्रेस आपके सिद्धान्त स्वीकार कर ले या यह कि वह अपना ध्येय प्राप्त करे?

उत्तर—मैंने कांग्रेस के सामने जितनी भी योजनाएं और कार्यक्रम रखे हैं उन सब की तह में स्वराज्य-प्राप्ति का ही ध्येय रहा है। सत्य और अहिंसा को मैं अपना जीवन-सिद्धान्त समझता हूं। यों कहिए कि वे मेरे लिए धर्मरूप हैं। लेकिन मैंने यह कभी नहीं चाहा कि मैं अपने धर्म का प्रचार कांग्रेस के जरिए करूं। कांग्रेस के सामने तो मैंने उन्हें एक खास लक्ष्य को प्राप्त करने के साधन के रूप में ही रक्खा है यानी राजनीतिक ध्येय के राजनीतिक साधन के रूप में, जैसा कि मैंने दक्षिण अफ्रीका में किया था। अगर ऐसा न हो तो मैं राजनीतिक कार्यकर्ता न रह जाऊं और एक धर्माचार्य मात्र बन जाऊं। जब व्यवहार की दृष्टि से राजनीतिक पद्धति को बदलना जरूरी मालूम हो, तो वह बदली जा सकती है। लेकिन इस तरह का परिवर्तन साफ दिल से और खूब सोच-समझ कर किया जाना चाहिए। व्यवहार में उसका त्याग करके भी उस पर कायम रहने का ढोंग न करना चाहिए। इसमें हम अपने को भी धोखा देते हैं और दुनिया को भी धोखे में रखते हैं।

अगला कार्यक्रम

प्रश्न—अगले बारह महीनों या छः महीनों का जो चित्र आपके सामने हो, उसकी एक झलक हमें भी दिखाइए। आपने कई बार कहा है कि यह आखिरी फैसले का वक्त है; आपकी यह आखिरी लड़ाई है; जबतक लक्ष्य सिद्ध न होगा, यह जारी रहेगी। तो कृपया कहिए कि आपके विचार में आगे क्या होगा?

उत्तर—यह एक अच्छा सवाल है। लेकिन मुश्किल भी है। इसलिए नहीं कि मेरे विचार स्पष्ट नहीं हैं बल्कि इसलिए कि यह हमें कल्पना के प्रदेश में ले जाता है। जो घटनाएं घटती हैं उनका प्रभाव मुझ पर पड़ता रहता है गोकि मैं यह कबूल करता हूं कि जिस तरह जवाहरलाल अपने अन्तर्राष्ट्रीय राजनीतिक अध्ययन की मदद से उन्हें समझ सकते हैं उस तरह मैं नहीं समझ सकता। जवाहरलाल का अपना यह दृढ़ विश्वास है कि ब्रिटिश साम्राज्य खत्म हो गया। हम सब चाहते हैं कि वह खत्म हो जाय लेकिन मैं यह नहीं मानता कि वह खत्म हो चुका है। हम जानते हैं कि अंग्रेज पक्के लड़वैया हैं। हम यह भी जानते हैं कि साम्राज्य का, विशेषत हिन्दुस्तानी साम्राज्य का विलायत के एक-एक घर के लिए कितना महत्व है। चुनांचे वह लोग अपने भरसक निरे ब्रिटिश द्वीपवासी बनना कभी मंजूर न करेंगे। मि० चर्चिल ने कहा है—हम शकर की डली नहीं हैं जो सहज ही घुल जायेंगे। हम घूंसे का जवाब घूंसे से दे सकेंगे। इसलिए साम्राज्य के खत्म होने में देर लगेगी। लेकिन इसमें कोई शक नहीं कि उसका अन्त निकट आ रहा है और जवाहरलाल ने सच ही कहा है कि यद्यपि हम लड़ाई को रोकने में असमर्थ रहे हैं तथापि ऐसा

कोई समझौता हम न होने देंगे जिसमें हमारी सुनवाई न हो; उसे रोकने के लिए हम अवश्य वहुत-कुछ करेंगे। हर एक कांग्रेसजन को यह चीज़ ध्यान में रखनी चाहिए। इसके लिए हमें सजग होकर काम करते रहना होगा। अगर हम हाथ-पर-हाथ धरे बैठे रहे तो शायद हमारी इच्छा के विरुद्ध कोई समझौता हो जाय। आज भी मैं यही कहता हूं कि यह हमारी आखिरी लड़ाई है। लेकिन हाल में जो घटनाएं घटी हैं उनके कारण युद्ध हमारे द्वार पर आ पहुँचा है और इसीलिए हमें अपना कार्यक्रम बदलना पड़ा है। मैं कांग्रेस के अधिकारयुक्त नेतृत्व से मुक्त हो गया हूं लेकिन सत्याग्रह को मुल्तवी करने का उसके साथ कोई सम्बन्ध न था। अगर सत्याग्रह जारी भी रहता तो मैं इस मौके पर जवाहरलाल को वापस जेल जाने के लिए कैसे कहता? विला शक, अगर सरकार उन्हें हमारे द्वारा निश्चित काम करने से रोकेगी, तो वह जेल जायँगे। लेकिन घटनाएं इतनी तेजी के साथ घटी है कि आगे क्या होगा, इसकी हमें रंचमात्र भी कल्पना न थी। ऐसी दशा में मैं अगले बारह महीनों या छः महीनों की बात कैसे कह सकता हूं? इसमें तो शक नहीं कि हम पूर्ण स्वराज्य की ओर वेग से आगे बढ़ रहे हैं। हमारे सामने जो कार्यक्रम है, उसके सम्बन्ध में भी किसी प्रकार की शंका या अन्देशा नही। किसी भी कांग्रेसजन को साल में सिर्फ चार आने के पैसे देकर सन्तुष्ट न हो रहना चाहिए। उसे तो चौबीसो घण्टे काम में लगे रहना होगा। अकेला एक खादी-उत्पत्ति का सक्रिय कार्यक्रम ही हमारी सारी शक्तियों को हजम कर सकता है। हिन्दू विश्व-विद्यालय में ४००० विद्यार्थी है; क्या वे रोज एक घण्टा कातेंगे? मैं कातने की वात करता हूं क्योंकि उसकी मुझे धुन लगी है, वह मेरे हृदय के अधिक-से-अधिक निकट है। लेकिन उसके सिवा दूसरी सैकड़ों चीज़ें करने जैसी हैं। क्या देहातियों के पास खाने के लिए पूरा अनाज है? ये सवाल मेरे मन में फिर-फिर पैदा होते हैं। भूखो को खिलाने की, नंगों को ढंकने की और संकट के समय आम जनता की अनेक विध सेवा करने की जितनी ताक़त हमारे पास होगी, उतना ही समझौते पर, जब कभी उसका समय आयेगा, हम अपना असर डाल सकेंगे। जो बात मैंने कही है, वह सब दलों को लागू होती है; जो इस काम को अच्छे-से-अच्छे ढंग से करेंगे वे ही अन्त तक टिक सकेंगे, और अपनी आवाज़ को प्रभावशाली बना सकेंगे।

प्रश्न—क्या आप यह मानते हैं कि वे अपना मनचाहा समझौता नहीं कर सकेंगे?

उत्तर—हाँ, मै मानता हूँ। मैं आशा करता हूँ कि अब गुप्त सन्धियों के दिन नही रहे। अगर हम ठीक से व्यवहार करेंगे तो और नही, तो कम-से-कम अपने मामलों मे तो हम अपना मनचाहा करा ही लेंगे। लेकिन ये सब बाते तो जवाहर-

लाल आपको ज्यादा अच्छी तरह समझा सकेंगे। मैंने न तो इतिहास का उतना अध्ययन किया है और न ससार की वर्तमान घटनाओ का।

मत क्यो नही लिये ?

प्रश्न—आपने एक वार यह कहा था कि आप वारडोलीवाले प्रस्ताव पर अखिल-भारत काग्रेस कमेटी मे मत-विभाजन का प्रयत्न करेंगे, फिर क्या वजह थी कि आपने सदस्यो को उस प्रस्ताव का समर्थन करने की सलाह दी ? महासमिति की वर्धावाली बैठक के वाद इधर राजाजी ने जो भाषण किये हैं, वे बम्बईवाले प्रस्ताव के विरुद्ध पड़ते हैं और व्यावहारिक दृष्टि से देखने पर भी यह मालूम होता है कि मरते हुए साम्राज्य के साथ सहयोग नहीं किया जा सकता।

उत्तर—मैं मानता हूँ कि कानूनन आप यह सवाल पूछ नही सकते। लेकिन चूंकि आपने पूछा है और मुझे कुछ छिपाना नही है इसलिए मैं इसका जवाव दिये देता हूँ। सच तो यह है कि महासमितिवाले अपने भाषण मे मै इसका जवाव दे चुका हूँ। अगर आपने वह भाषण ध्यान से सुना होता तो इस प्रश्न की जरूरत न रह जाती। खैर, तो अव मैं आपसे यह कहना चाहता हूँ कि यद्यपि वुढापे ने मुझे आ घेरा है तो भी दिमाग मेरा कमजोर नही पडा है। उसका तो लगातार विकास ही हो रहा है। मत न लेने का निश्चय भी मेरी अपनी विकासमान अहिंसा का ही एक चिह्न है।

मैंने सोचा कि मत लेकर समिति मे फूट डालना हिंसा होगी। अगर महा-समिति का एक एक सदस्य राजनीतिक अहिंसा मे दृढ विश्वास रखनेवाला होता तो वात दूसरी थी। लेकिन मैं जानता था कि हकीकत ऐसी न थी। वारडोली-वाला प्रस्ताव काग्रेस की मनोदशा का सूचक था। ऐसे मामलो मे अल्पमत या वहुमत से काम नही चल सकता। और जो सम्पूर्ण अहिंसा को माननेवाले हैं, उनके लिए तो रास्ता खुला था। वे जहाँ तक जाना चाहें जा सकते थे।

सरकार के साथ सहयोग करने का समय कभी आया भी तो वहुत देर मे आयेगा। तवतक तो सवको अहिंसा का ही अनुसरण करना है। जव सरकार के साथ सहयोग करने का मौका आयेगा, तव पूर्ण अहिंसावादी काग्रेस से हट सकेंगे। और सच तो यह है कि उस समय हम फिर मिल कर इस सारे प्रश्न पर लोगो की राय जान सकेंगे।

दगो मे अहिंसा

प्रश्न—दगो के समय आततायियो के विरुद्ध शस्त्र उठाकर अपनी रक्षा करना उचित है या अनुचित ?

उत्तर—इसका जवाब मैं दे चुका हूँ और कांग्रेस भी दे चुकी है। हमें आततायी शब्द का उपयोग नही करना चाहिए। उचित-अनुचित की बात मुझसे मत पूछिए। अगर मुझसे पूछते है तो मैं कहूँगा कि आप जो करना चाहते हैं सो उचित नही है। अगर आप अहिसक हैं तो आपको हथियार न उठाना चाहिए। आप वीरो की अहिंसा न दिखा सकें तो जिस तरह बने, अपनी रक्षा कर लें। कानून हर आदमी को अधिकार देता है कि वह डाकुओं से अपनी हिफाजत करे। काग्रेस इस कानूनी अधिकार को छीनना नहीं चाहती। लेकिन उपद्रवों में और कौमी दंगों में हर एक काग्रेसवादी को अहिसा का पालन करना चाहिए। कांग्रेस का यही निर्णय है। अगर वक्त पर हिम्मत आपका साथ न दे और आप पशुबल का उपयोग करे, तो काग्रेस आपको बुरा-भला न कहेगी क्योकि काग्रेस किसी भी दशा में नामर्दगी को बढ़ावा देना नही चाहती।

सहयोग की मर्यादा

प्रश्न—कहा जाता है कि आपने खादी-भण्डारों को सरकार के हाथों कम्बल बेचने की इजाजत दी है। क्या यह सरकार के युद्ध-प्रयत्न के साथ सहयोग न हुआ?

उत्तर—हाँ, मैने यह सलाह दी। मेरे लिए यह पूछना उचित न था कि कम्बल किसके लिए खरीदे जा रहे है—सिपाहियो के लिए या और किन्ही के लिए। जब आदमी, बन्दूक, तलवार या जहरीली दवा बेचता है, तो बात दूसरी हो जाती है। बेचनेवाले के लिए यह पूछना लाजमी हो जाता है कि बन्दूक किसलिए खरीदी जा रही है और जहरीली दवा बेचनेवाले को तो डाक्टर का प्रमाणपत्र भी माँगना पड़ता है। इसके विपरीत चावल बेचनेवाला यह नही पूछता कि चावल कौन खानेवाला है; पूछना उसके लिए लाज़िमी नही है।

"लेकिन आप मुझसे भी आगे जा सकते है। अगर आप समझते है कि मुझसे गलती हुई तो आप खुशी से मेरी निन्दा कर सकते है। अगर आप यह मानते हो कि अहिसक आदमी को सैनिकों के हाथ चावल या कम्बल न बेचने चाहिए, तो आप अहिसा का वैसा अर्थ करने के लिए स्वतन्त्र है। लेकिन जहाँ तक मेरा अपना सवाल है मेरे पास कोई खून से सने हाथ लेकर भी आये, तो मै उसे खिलाने-पिलाने में संकोच न करूँगा। मेरा दयाधर्म मुझे इसके विपरीत कुछ करने ही न देगा।"

इसके बाद नकली खादी का प्रश्न छिड़ा। उसके सिलसिले मे गाधीजी ने कहा—"इसका बहुत कुछ आधार तो लोगों की समझदारी और सजगता पर

है। अगर जनता इस तरह की खादी के प्रचार को रोकने का निश्चय कर ले तो वह आसानी से रोक सकती है। लेकिन जैसा कि लार्ड विलिगडन ने कहा था, हमने अपने अन्दर 'ना' कहने की हिम्मत अभी पैदा नही की। जिन्हे खादी से दिलचस्पी है वे सबके सब, चर्खा सघ के भागीदार हैं, और उनका कर्त्तव्य है कि वे इस काम को उठा लें। भूखो को अन्न देना और नगो को वस्त्र पहनाना हमारा तात्कालिक कार्यक्रम है। इसमे आप सबको अपनी पूरी ताकत से हाथ बँटाना है। अगर आप इसके लिए कटिबद्ध हो जायँ तो नकली खादी का सवाल ही न खडा हो। कोई भी काग्रेसवादी नकली खादी का व्यापार नही कर सकता।"

आखिरी सवाल यह था कि हवाई हमलो की हालत मे लोगो मे हौलदिली पैदा हो और दगे वगैरा खडे हो, तो वैसे मौको पर काग्रेस जनो को क्या करना चाहिए?

गाधीजी—यह वक्त तो अब आ ही गया है। डाके पडने लगे हैं। ऐसे समय अगर काग्रेस ने सख्त उपायो से काम न लिया तो परिस्थिति बेकाबू हो जायगी। शान्ति दलो की जितनी अनिवार्य आवश्यकता आज है उतनी पहले कभी नही थी। आप चाहे हिसा को पसन्द करें चाहे अहिसा को, मौत का खतरा तो दोनो तरफ है। तो फिर अहिसक रीति से मरने की तैयारी क्यो न कीजिए? आन्तरिक विग्रह या गृहकलह की हालत मे अहिसा आपको उसका दृढ प्रतिकार करने की शक्ति प्रदान करेगी। हवाई हमलो के समय घायलो की रक्षा का अधिकतर काम आप ही के जिम्मे आयेगा। आप हवाई हमलो से रक्षा करनेवाले सरकारी दलो मे शामिल नही होगे, क्योकि एक तो उनकी व्यवस्था पर आपका कोई अकुश नही, दूसरे, उनमे शामिल होने से आप युद्ध-प्रयत्न मे सक्रिय भाग लेने लगते हैं। लेकिन यह तो स्पष्ट ही है कि सरकार सब जगह मदद नही पहुँचा सकेगी। रगून मे पहुँचा पाई थी क्या? हमारे पास इस विषय की दिल दहलाने वाली खबरे आई हैं कि रगून मे रास्तो पर मुर्दों और घायलो के ढेर पडे रहे, मगर उनकी कोई सार-संभाल न की गई। इसलिए जहाँ सरकारी हाकिम कुछ नही कर पायेंगे, वहाँ हमे काफी काम करने का मौका मिलेगा। हमे ऐसे स्वयसेवक तैयार करने होगे, जो जोखिम उठाने और जरूरत के वक्त अपनी सूझ से काम करने को मुस्तैद रहे। हमे मुर्दों को और घायलो को यथास्थान पहुँचाने की व्यवस्था करनी होगी, खाली मकानो को अपने कब्जे मे लेना होगा, और ऐसे अनेक काम करने होगे। इन कामो मे सरकारी हाकिम जहाँ-जहाँ आपकी मदद लेना स्वीकार करें, आपको दिल से उनकी मदद करनी चाहिए।

—हिन्दी। काशी, २२।१।१९४२। ह० से० २२।२।१९४२। सेवाग्राम मे १।२।१९४२ को लिखे महादेव देसाई के विवरण से।]

१००. मसूरी में : गांधीजी के हृदयोद्गार

[१९४६ में गांधीजी जब दिल्ली में थे और देश के भाग्य-निर्णय के विषय में वाइसराय तथा अधिकारियों से गम्भीर और थकानेवाली लम्बी वार्ताओं का क्रम चल रहा था, उनके स्वास्थ्य पर वहुत वोझ पड़ा। इसलिए चन्द दिनों के लिए वह मसूरी आये। वहाँ विड़ला हाउस में ठहरे। २५-२६ मई से ९ जून तक, लगभग १५ दिन, वह वहाँ रहे। यद्यपि यहाँ दिल्ली की कड़ाके की धूप और धूलभरी आँधियों की जगह प्रकृति के वैभव ने उनका स्वागत किया; चीड़ की सुगन्ध से लदी शीतल वायु की लहरियाँ उनके उत्ताप को आत्मसात् करने दौड़ पड़ीं, श्यामल हरीतिमा ने उन्हें अपने वीच समेट लिया किन्तु देश में एक ओर साम्प्रदायिकता की जो आँधी चल रही थी और दूसरी ओर हिंसा तथा सत्ता की राजनीति सेवा की लोकनीति को अपदस्थ करती जा रही थी, उससे उनका मन बहुत उदास था, उनकी वातों में अव वह प्रेरणा की ज्वाला न थी; उसकी जगह गहरी पीड़ा और विराग था। सुवह-शाम अहाते में जो प्रार्थना होती थी, उसमें वहुत से लोग आ जाते थे। पहली ही प्रार्थना के वाद तथा अन्य प्रार्थना-सभाओं में उन्होंने जो भाषण किये, वे ही यहाँ संकलित किये जा रहे हैं।
— सम्पा०]

रक्षा तो भगवान ही कर सकता है

आज मसूरी आया हूँ। यह मेरी पहली यात्रा नहीं। पहले भी दो वार आ चुका हूँ। तव कांग्रेस के काम से आया था, आज केवल अपने ही निमित्त आया हूँ। आपको मालूम है कि आजकल तो मैं कांग्रेस का मेम्वर भी नहीं हूँ। आपका सेवक जरूर हूँ। ऐसे सेवक करोड़ों है। उनको जनता जानती भी नहीं, और न वे चवन्नी ही देते है। केवल अपनी शक्ति के अनुसार सेवा करना जानते है। न नाम की इच्छा है, न इनाम की आशा। फिर ऐसे लोग कांग्रेस की सेवा क्यों करते है? आजादी तो हरएक को चाहिए, किन्तु सव समझते नही कि आजादी कैसे लेनी है। उन्होने सुन रक्खा है कि कांग्रेस एक वड़ी जमात है, जो साठ वरस से सवकी आजादी के लिए लड़ रही है। इसलिए करोड़ों लोग कांग्रेस के गुण गाते हैं, और जो सेवा उनसे वन पड़ती है, करते है। इन करोड़ों के जैसा मैं भी एक सेवक हूँ। यह अलग वात है कि वड़ा हो गया हूँ, नाम मशहूर हो गया है और वहुत जगह घूमा हूँ। मैंने अपने मन की आज की हालत आपको वताई है। मैं ऐसा एक सेवक अपने आपको मानता हूँ।

यही कारण है कि मैंने यहाँ की कांग्रेस को लिखा तक नही, और न किसी प्रकार की आशा उनसे रखता हूँ। यह अलग वात है कि वे मेरी सेवा कर रहे हैं। किन्तु मैं कोई आशा नही करता कि वे मेरा कुछ काम करें—जैसे कि मेरी रक्षा करना। मेरी रक्षा कौन कर सकता है? न कांग्रेस कर सकती है, न सल्तनत, न विड़ला ब्रदर्स। मेरी रक्षा तो भगवान ही कर सकता है। आदमी कहे कि वह किसी की रक्षा करता है तो गलत होगा। जिसको खुद यह पता नही कि कल ज़िन्दा रहेगा या मर जायगा, वह किसी की क्या रक्षा कर सकता है? ईश्वर चाहे तो हमारी रक्षा करे, और चाहे तो हमे मार डाले। असल मे तो वह मारकर भी हमारी रक्षा करता है। हर तरह से वही रक्षा करनेवाला है, और कोई नही।

गरीबो के जीवन मे प्रवेश कीजिए

.यहाँ गरीव हैं किन्तु सिर्फ आपकी गुलामी करने के लिए, आपका रिक्शा खीचने के लिए। कोई वीमार हो, अशक्त हो और रिक्शा मे वैठे तो दूसरी वात है परन्तु जव एक भला-चगा आदमी रिक्शा मे वैठता है, तो मुझे वुरा लगता है। आपको भी वुरा लगना चाहिए। हम क्यो किसी को वैल समझ कर उसकी पीठ पर सवार हो? मैं आपकी शिकायत नही करता, सिर्फ यह कहता हूँ कि गरीवो के जीवन मे प्रवेश कीजिए और जानिए कि हिन्दुस्तान क्या है?

मैं तो चाहता हूँ कि राम नाम मुझे पहाडो पर आने से भी वचाये। करोडो यहाँ थोडे ही आ सकते हैं? वे वीमार भी हो तो भी उन्हे तो मैदान मे ही जीना या मरना पडता है।

मैं यहाँ मौज-शौक के लिए नही आया, केवल शरीर की मजवूरी से आया हूँ। अगर आराम कर लिया तो ज्यादा काम कर सकूँगा। इसमे आप लोगो का आशीर्वाद चाहता हूँ। आप मुझे आराम लेने दीजिए। कुछ काम तो रहता ही है, किन्तु शेष समय एकान्त मे ईश्वर का नाम लेना चाहता हूँ।

—हिन्दी। मसूरी, २६।५।१९४६। १।६।१९४६ के प्यारेलाल जी के साप्ताहिक पत्र से। ह० से० ९।६।१९४६।]

१०१. मसूरी में गांधीजी के भाषण

गरीबों के लिए जगह

...मसूरी में एक ऐसी जगह होनी चाहिए जहाँ गरीब आ सकें और पहाड़ की जलवायु का लाभ उठा सकें। मै तो जान-बूझकर हरिजन बना हूँ। मुझे ऐसी जगह रहना बहुत अच्छा लगेगा, जहाँ हरिजन भी आ सकें और आकर रह सके। जो जन्म से हरिजन है वह अपने वर्ण को छोड़ सकता है किन्तु जो आप हरिजन बना हो, वह उसे कैसे छोड़ सकता है ? मै तो बेझिझक सब सवर्णो से कहता हूँ कि वे अतिशूद्र बन जायँ। तभी ऊँच-नीच का भाव मिट सकेगा। और यह अगर नही मिटा तो हिन्दू धर्म का नाश हो जायगा।

काल की चेतावनी

[मसूरी के शौकीन लोगों को लक्ष्य कर गांधीजी ने कहा :]

आपकी जियाफत पर मृत्यु की छाया मँडरा रही है। उसका ध्यान कीजिए। सच्ची बात तो यह है कि अकाल पहिले से ही मुल्क में है। करोड़ों को पूरा खाना नही मिलता। अमीर लोग शायद पैसा दे सके किन्तु पैसे से किसी का पेट थोड़े ही भरता है। जितना अनाज चाहिए, उतना मुल्क में नही है। जो है भी, वह भी आसानी से भूखे इलाकों मे नही भेजा जा सकता। सरकार का इन्तजाम कितना निकम्मा है। फिर कई ऐसी जगहे है, जहाँ खाद्य-सामग्री के ढेर पड़े है, पर लोग भूखों मर रहे है, क्योकि हमारे अपने लोग ही बेईमान और लालची हो गये है। यदि लोग सहयोग करे और काला बाजार, रिश्वत और बेईमानी खत्म हो जाय, तो शायद इस कठिनाई को पार करने के लिए मुल्क मे काफी अनाज निकल आये। कुछ लोग है, जो इस बात को नही मानेगे। वे कहते है कि अगर बाहर से अनाज न आया, तो हम भूख और मौत से नही बच सकेगे। मेरी राय इससे अलग है। अव्वल तो माल को हिन्दुस्तान पहुँचने मे देर लगेगी और फिर बन्दरगाह से जरूरत की जगह तक पहुँचाने में लगभग ६ हफ्ते लग जायंगे। इसका इलाज बस एक ही है कि आपस मे सहयोग हो और बेईमानी खत्म हो जाय। मसूरी के अमीर लोगो को चाहिए कि जितना अनाज वे भूखों के लिए बचा सकें, बचाये। अगर सब केवल उतना ही खायँ, जितना स्वास्थ्य के लिए जरूरी है तो मुल्क इन सब कठिनाइयो को पार कर सकेगा।

—हिन्दी। मसूरी, २५, २६, २७।५।१९४६। श्री प्यारेलाल जी के १।६।१९४६ को लिखे अंग्रेजी साप्ताहिक पत्र से। ह० ज०, ह० से० ९।६।१९४६।]

: चार :

सम्बोध–१

[उत्तर प्रदेश-वासियों के नाम गांधीजी के पत्र एवं तार]

१. पत्र : महात्मा मुंशीराम[1] को

सर्वेंट्स आफ इण्डिया सोसाइटी
पूना सिटी
माघ कृष्ण पक्ष ८ (८ फवररी, १९१५)

महात्मा जी,

आपका तार मुझे मीला था। उस्का प्रत्यूत्तर तार से भेजा था वो आपको मीला होगा। मेरे वालको के लीये जो परिश्रम आपने उठाया और उन्हो को जो प्यार वतलाया उस वास्ते आपका उपकार मानने का मैंने भाई एड्रूझ को लीखा था। लेकीन आपके चरणो मे सीर झुकाने की मेरी उमेद है। इसलीये विन आमत्रण आने की भी मेरी फरज समझता हु। मैं वोलपुर से पीछे फीरूँ उस वखत आपकी सेवा मे हाजर होने की मुराद रखता हू।

आपका सेवक,
मोहनदास गाधी

—हिन्दी। पूना, ८।२।१९१५। गाधीजी के स्वाक्षरो मे मूल पत्र (जी० एन० २२०५) की फोटो-नकल से।]

---

१. महात्मा मुंशीराम (१८५६-१९२६) बाद मे स्वामी श्रद्धानन्द के नाम से प्रसिद्ध, गुरुकुल कागडी के सस्थापक, और आर्यसमाज के नेता। उन दिनो उनका मुख्य कार्यक्षेत्र गुरुकुल उत्तर प्रदेश मे होने के कारण तवतक उनको उत्तर प्रदेश के निवासियो मे रखा गया है जवतक कि वह जाकर मुख्यतः दिल्ली में नहीं रहने लगे।—सम्पा०।]

२. तार : हृदयनाथ कुँजरू[1] को

बोलपुर
२० फरवरी, १९१५

ऐक्सप्रेस

कुँजरू
सर्विडिया
इलाहाबाद

श्री गोखले का देहान्त। आज रात डाकगाडी से पूना को रवाना। छिवकी स्टेशन पर मिलिए। बेहतर हो आप भी साथ हो लें।

गांधी

—अंग्रेजी। बोलपुर, २०।२।१९१५। गांधीजी के स्वाक्षरों में मूल अंग्रेजी मस्विदा (सी० डब्लू० ५६७२) से; सं० गा० वा० भाग १३, पृ० २७।] सौजन्य : राधाबेन चौधरी।

३. पत्र : महात्मा मुंशीराम को

अहमदाबाद[2]
जेठ शुक्ल २ (जून १४, १९१५)

महात्मा जी,

लड़के सब गुरुकुल से आने के बाद में सब व्यवस्था करने की जंजाल में पड़ गया; उसलीये आपको में पत्र अगाड़ी न लीख सका। लड़कों पर आपने जो प्रेम बतलाया है वह वे कभी भूल नहि सकते है। मेरे लड़कों और साथीओं को आश्रय देकर मुझको आपका ऋणी बनाया है।

---

१. जन्म १८८७ ई०। सर्वेण्ट्स आफ इण्डिया सोसाइटी (हिन्द-सेवक संघ) के वर्तमान अध्यक्ष तथा इलाहाबाद के बहुत पुराने नागरिक।

२. यह पत्र सम्भवतः बम्बई में लिखा गया होगा क्योंकि उस दिन गांधीजी वहीं थे, जैसा कि उनकी १९१५ की डायरी से विदित होता है। अगले दिन अहमदाबाद में होने के कारण, शायद वहाँ का पता लिख दिया होगा।

अमदावाद मे हाल तो आश्रम खोल दीया है। उसकी नियमावली हिंदी मे बन रही है। तैयार होने से आपका अभिप्राय जानने के लीये भेजी जायगी।

हरद्वार मे फेर आकर आपकी साथ कुछ दिन रहने की वात मे वीलकूल भूला नहि हुं। वखत मीलने से मैं जरूर पहोचुगा।

आपका कृपाकांक्षी
मोहनदास गांधी के वन्देमातरम्

—हिन्दी। अहमदाबाद, १४।६।१९१५। गांधीजी के स्वाक्षरो मे मूल हिन्दी पत्र (जी० एन० २२०८) की फोटो-नकल से।]

४. पत्र : माधुरीप्रसाद को

अमदावाद
भाद्रपद शुक्ल १ (१०-९-१९१५)

रा० रा० माधुरीप्रसाद,

आपका और तोताराम[1] जी का खत मुझे मीला है। मैं दिलगीर हु की मुझे फीरोजाबाद जाने का हाल तुरत मे वीलकुल वखत नहि है। इन आश्रम के काम मे से मेरा छुटकारा न होने सकता है।

आपका,
मोहनदास गांधी

रा० रा० माधुरीप्रसाद,
भारतीभुवन कार्यालय, फीरोजाबाद

—हिन्दी। अहमदाबाद, १०।९।१९१५। गांधीजी के स्वाक्षरों मे मूलपत्र (जी० एम० २७६४) की फोटो-नकल से। स० गां० वा० भाग १८, पृष्ठ १२८ पर भी।]

---

१. तोताराम सनाढ्य, जो फीजी में २१ वर्ष रहे थे। उन्होंने अपने वहाँ के अनुभवों पर एक पुस्तक भी हिन्दी में लिखी थी और बाद में साबरमती आश्रम में गांधीजी के पास भी रहे थे।

५. बनारस की घटना[1] पर महाराज दर्भंगा को लिखे पत्र का अंश

वाइसराय महोदय के बनारस पधारने के विषय में कुछ शब्द कहने का मेरा उद्देश्य केवल यही था कि हिंसा-मूलक और तथाकथित अराजकतापूर्ण सभी कृत्यों के विरुद्ध मैं अपने उन विचारों को, जिन्हें मैं पक्की तौर पर माने हुए हूं और जिनमें फेरफार की गुंजाइश नहीं है, प्रकट कर सकूं। मुझे तथा हममें से और भी बहुत लोगों को इस बात पर बहुत ही लज्जा मालूम हुई कि एक अत्यन्त सज्जन वाइसराय के प्राणों की रक्षा के लिए, उस समय जब कि वे इस पवित्र नगरी में हमारे विशिष्ट और सम्मानित अतिथि थे, असाधारण सतर्कता से काम लेना जरूरी समझा गया था। मेरे जीवन का लक्ष्य अपने देश के लिए अधिक-से-अधिक स्वतन्त्रता-प्राप्ति के विचार प्रचारित करना और इसकी प्राप्ति के निमित्त किये जानेवाले कामों में मदद पहुंचाना जरूर है, परन्तु किसी भी मनुष्य के प्रति, भले ही उस व्यक्ति की ओर से हमारे उत्तेजित होने के अनन्त कारण उपस्थित किये गये हों, हिंसा का प्रयोग करके कदापि नहीं। मेरे भाषण का मुख्य उद्देश्य यह था कि (हमारे देश के) नवयुवकों के दिलों में मेरी यह सलाह घर कर जाय।

—अंग्रेजी। काशी, ७।२।१९१६। 'पायनियर' ९।२।१९१६। सं० गां० वा० भा० १३, पृ० २१८-२१९।]

---

१. काशी हिन्दू विश्वविद्यालय के उस समारोह में जिसके अध्यक्ष महाराज दर्भंगा थे, ६ फरवरी १९१६ को गांधीजी ने जो भाषण दिया था उसके कुछ विचारों से खिन्न होकर उपस्थित राजा-महाराजा और कुछ अन्य लोग भी उठकर चले गये थे तथा सभा भंग हो गई थी। उसी घटना के विषय में महाराजा दरभंगा को गांधीजी ने अपना मंशा स्पष्ट करते हुए जो पत्र लिखा था उसका यह अंश 'पायनियर' के 'हिन्दू यूनिवर्सिटी, ए रिमार्किबुल इन्सिडेण्ट' शीर्षक एक लेख में उद्धृत किया गया था।

६. पत्र : अजितप्रसाद को

अहमदाबाद,
१ नवम्बर, १९१६

प्रिय श्री अजित प्रसाद,

मुझे खूब याद है कि मैं आपसे बम्बई में मिला था।

मैंने पण्डित अर्जुन लाल[1] के सम्बन्ध में वर्ष के प्रारम्भ में कार्रवाई की थी, किन्तु मुझे मालूम हुआ कि उनके खिलाफ सरकार के पास निश्चित प्रमाण हैं। तब से मेरा उत्साह मन्द पड़ गया है। मामले में आगे कदम उठाने के पहले मैं उस पर आपसे बातचीत करना चाहता हूं। आपका यह तर्क ठीक है कि हम बिना शर्त छोड़ देने की नहीं, बल्कि उचित रूप से मुकदमा चलाने की मांग करते हैं, किन्तु अपील सर्वाधिक प्रभावकारी तो केवल तभी बन सकती है जब सम्बन्धित पक्ष बिल्कुल निरपराध हो। यदि मैं कांग्रेस के अधिवेशन में लखनऊ आया तो हम सम्पूर्ण मामले पर बातचीत करेंगे।

हृदय से आपका
मो० क० गांधी

—अंग्रेजी। अहमदाबाद १।११।१९१६। गांधीजी के हस्ताक्षरों में मूल अंग्रेजी प्रति (जी० एन०, १००) की फोटो-नकल से। सं० गां० वा० भाग १३, पृ० ३०८-९ पर भी।]

७. पत्र : महात्मा मुंशीराम को

बेतिया
वैशाख सुदी ५ (२६ अप्रैल, १९१७)

महात्मा जी,

आपका नाम बोलने से मुझे बहुत आनन्द प्राप्त हुआ है। आपने जो नया नाम[2] धारण किया है वह तो उचित है।

---

१. अर्जुन लाल सेठी, राजस्थान के एक क्रान्तिकारी नेता।

२. स्वामी श्रद्धानन्द।

यहां का काम बड़ा भारी है। ईश्वरकृपा से अत्याचार दूर होगा। परन्तु चार छ मास तो अवश्य मुझे रहना पड़ेगा। वावू व्रीजकिशोरप्रसाद इ० जो सहाय कर रहे है वे योग्य पुरुष है।

आपका

मोहनदास गांधी

—हिन्दी। बेतिया, २६।४।१९१७। गांधीजी के स्वाक्षरों में मूलपत्र। गांधी स्मारक संग्रहालय, नई दिल्ली में प्राप्त फोटो-नकल से।]

८. पत्र : हृदयनाथ कुंजरू को

सत्याग्रहाश्रम

सावरमती

फरवरी १०, १९१८

...[1]इस समय मैं एक बड़ी खतरनाक परिस्थिति से गुजर रहा हूं और उससे भी ज्यादा खतरनाक परिस्थिति में कूद पड़ने की तय्यारी कर रहा हूं।[2] ... अव आप समझ लेंगे कि मैं मेले में क्यों नही आया।[3] हिन्दू धर्म को उसके आसुरी और दिव्य दोनों स्वरूपों में देखने का वहां जो अवसर मिल सकता है, मैं बहुत चाहता था कि उसका उपयोग करूं। मैं जानता हूं कि मुझपर आसुरी स्वरूप का कोई असर नहीं हो सकता। किन्तु मै चाहता था कि उसके दिव्य स्वरूप का मुझपर वही प्रभाव पड़े जो हरद्वार में पड़ा था।[4] साथ ही वहां आपसे मिलना भी हो जाता और भारत-सेवकों को हर दूसरे महीने वीमार पड़ने की कुटेव न

---

१. व २. मूल में कुछ अंश छोड़ दिये गये हैं।

३. उनको कुम्भमेले के अवसर पर आमन्त्रित किया गया था।

४. गांधीजी १९१५ के कुम्भमेले में अपने अनुभव का उल्लेख कर रहे हैं। उन्होंने दिनभर में पांच से अधिक खाद्य वस्तुएँ न खाने और रात हो जाने पर भोजन न करने का व्रत वहीं पर लिया था। देखिए आत्मकथा भाग ५, अध्याय ७।

डालनी चाहिए, इस बारे मे आपको थोडा उपदेश देने का मौका भी मिलता। लेकिन शायद ऐसा बदा नही था।

आपका

मो० क० गाधी

—अंग्रेजी। १०।२।१९१८। महादेव देसाई की हस्तलिखित डायरी से। सं० गा० वा० भाग १४, पृ० १७४।]

सौजन्य : नारायण देसाई।

९. पत्र : महात्मा मुंशीराम को

साबरमती

वैशाख कृष्ण ५ (३० मई, १६१८)

महात्मा जी,

आपका प्रेम-पूरित हृदयद्रावक खत मुझे मीला है। वखत का अभाव के लीये उत्तर देने मे विलब हुआ। मैं चि० इद्र को दिल्ली मे कह रहा था "क्या महात्मा जी मुझको भूल गये हैं?" इसके पश्चात् दो तीन रोज मे आपका खत मीला। मैं खूब राजी हुआ। खेडा जिल्ला की रैयत की जमीन खालसा की गई थी उसको वापस दे दी है। अब तो लोगो को बहुत आर्थिक हानि नहि होगी। इस लडत से लोको को बडा जोर प्राप्त हो गया है।

आपका पत्र मुझको बल देता है। मेरे कार्य मे आर्थिक टूटी (त्रुटि, कमी) आयगी तब आपका स्मरण अवश्य करूगा।

आपका दर्द अब कमी होगा। ईश्वर आपकी रक्षा करे।

आश्रमवासी सब आपके आने की राह देखते हैं। अवत्र वीतने से हम सब अधीरे बन जावेंगे।

आश्रमवासी सब आपको नमस्कार कहते हैं।

आपका

मोहनदास गाधी

—हिन्दी। साबरमती, ३०।५।१९१८। गाधी स्मारक सग्रहालय, नई दिल्ली मे उपलब्ध पत्र से।]

१०. पत्र : गोविन्द मालवीय को

(बम्बई)
जुलाई २२, १६१८

तुम्हारा पत्र आने से मैं बहुत खुश हुआ। हम जिनको मुरब्बी समझते हैं, उनके पास हम अपना सब आवेग खोल सकते हैं, खोलना आवश्यक है। मुझको पत्र लिखकर तुमने उचित कार्य किया है। भरती में क्या अत्याचार होता है, वह मैं नहीं जानता। यदि ज्यादा होता होगा, तो भरती में मेरे शामिल होने की ज्यादा आवश्यकता है।

माण्टेग्यु-चेम्सफोर्ड योजना मेरी राय में बड़ी अच्छी है। उसकी त्रुटियां हम आन्दोलन करके दूर करवा सकते हैं, परन्तु योजना कैसी भी हो, मेरा निश्चित मन्तव्य है कि हमें युद्ध में दाखिल होना चाहिए। हम अंग्रेज प्रजा का उपकार करने के लिए दाखिल नही होते है। लेकिन देश की सेवा करने के लिए देश का स्वार्थ देखकर हम भरती होना चाहते हैं। मैं भारतवर्ष की दुर्दशा का क्या बयान करूं? मैं स्पष्ट देख सकता हूं कि भारतवर्ष को सच्चे स्वराज्य की प्राप्ति ही नहीं हो सकती। मैं जानता हूं कि अब हमारे भरती होने से हम दो कार्य कर सकते हैं, हममें वीरता पैदा होगी, हम थोड़ी-बहुत शस्त्र-क्रिया सीख लेंगे और जिनके साथ हिस्सेदार होना चाहते हैं, उनको मदद देकर हमारी योग्यता ज्यादा सिद्ध करेंगे। उनके अत्याचारों का विरोध करना और उनके कष्ट में हिस्सा लेना, ये दोनों कार्य करना हमारे लिए योग्य है। मैं चाहता हूं कि तुम इस प्रश्न पर खूब शान्ति से विचार कर लो। मेरी सलाह है, यह पत्र देवदास को भेज देना और उसके साथ भी इस विषय में वार्तालाप करना।

मोहनदास गांधी

—महादेव भाईनी डायरी, २२।७।१९१८, खण्ड ४। सं० गां० वा० भाग १४, पृ० ४८१-८२ पर भी।]

११. पत्र : सैयद हुसैन को[1]

जनवरी ३०, १९१९

आपके नये प्रयास की सफलता की कामना करते हुए मैं अपनी यह हार्दिक आशा व्यक्त करना चाहता हूं कि आपने अपने पत्र का जो नाम चुना है, उसके अनुरूप ही आपके लेख भी होंगे। मैं यह उम्मीद भी रखता हू कि आप अपने लेखो मे निर्भीक स्वतन्त्र विचारो के साथ-साथ उसी मात्रा मे आत्म-सयत और सत्यनिष्ठा का भी परिचय देंगे। अक्सर हमारे पत्रो मे, दूसरो मे भी, तथ्यो के स्थान पर कल्पना और गम्भीर तर्कों के वजाय जोश पाया जाता है। मैंने जिन त्रुटियो की तरफ आपका ध्यान दिलाया है, उनसे वचते हुए अपने "इण्डिपेण्डेण्ट"[2] पत्र को देश मे शक्ति और लोक-शिक्षा का एक साधन वनाइए।

हृदय से आपका,

—अंग्रेजी। ३०।१।१९१९। सं० गा० वा० भाग १५, पृष्ठ ८३-८४।]

१२. पत्र : स्वामी सत्यदेव[3] को

मुबई

गुरुवार माघ सुद्ध ६ (फरवरी ६, १९१९)

स्वामि जी,

आपका पत्र मिला। आप सच कहते हो देविदास की साथ भेजा हुआ पेगाम से आप सन्तुष्ट न हो शकते। पत्र नहिं लिखने का सवव शीर्फ मेरा आलस्य ही है। मुझे क्षमा कीजिएगा। देविदास को मैंने कहा था कि आप सन्तुष्ट न होगे तो मैं अवश्य लेखित उत्तर भेज दऊगा। हिन्दी शिक्षा के लिए मद्रास प्रात मे आप

---

१. यह पत्र सैयद हुसेन के २९-१-१९१९ के निम्न तार के उत्तर मे था। "इण्डि-पेण्डेण्ट ५ फरवरी को निकल रहा है। कृपया पहले अंक के लिए हस्ताक्षरयुक्त सन्देश भेजें।"

२. इलाहावाद से प्रकाशित होनेवाला अंग्रेजी दैनिक, जिसे जवाहरलाल जी ने निकाला था।

३. स्वामी सत्यदेव परिव्राजक, हिन्दी मे अनेक भ्रमणग्रन्थों के रचयिता।

सव योग्य प्रबंध कर शकते हो। सारा इलाका में गुम सकते हो। जग जग हिन्दी पाठशाला निश्चित कर सकते हो। पाठशालाओं के लिए आपने चूंने हुये शिक्षकों आप निर्मित कर सकते हो। आप पढ़ाने का कार्य न करे परन्तु सव पाठशालाओं का निरीक्षण योग्य समय पर करते रहे। जब सारे इलाके में आपको सन्तोष मिले ऐसी पाठशाला खूल जाये और आपके सिवाय इन पाठशाला चल शके, ऐसा आप निश्चितता से कह सके उस वखत आप मद्रास इलाका छोड़ शकते हो। इस प्रवृत्ति में आप दश हजार रुपैया तक खर्च कर शकते हो। आपको पैसा भेजने की जवाव-दारी मेरे शीर पर है। आपको प्रयाग जी की साहित्यकमिटी[1] से कुच्छ वी संवंध नहि रहेगा। परन्तु मै सव पैसा प्रयाग जी से मांगना चाहता हूं। उसमें कुछ आपत्ति आजायेगी तो मैं दूसरा प्रवंध कर लौंगा। अव मुझे लगता है आपका सव प्रश्न का उत्तर मैंने दे गया। यदि कुच्छ त्रुटि हो तो आप कहेंगे। सुरेन्द्र के लिये में कल देविदास कु लंवा पत्र लिखा है। इस समय सुरेन्द्र मानसिक-व्याधि से ग्रस्त है। उसको इंग्रेजी पाठशाला का प्रवंध पर मोह उत्पन्न हुआ है। इस मोह में उसकु छोड़ाना आवश्यक मालुम पड़ता है। आप उसको शान्ति दे सकेंगे। यदि आप उसका विचार को पसंद करते होंगे तो आप मुझे समजायेगा।

—हिन्दी। ६।२।१९१९। साबरमती संग्रहालय में उपलब्ध हस्तलिखित दफ्तरी प्रति की फोटो-नकल से।]

१३. पत्र : मदनमोहन मालवीय को

मुंबई

शनिवार माघ सुद्ध ८ (फरवरी ८, १६१६)

भाई साहेव,

आज रोव्लेट वील के वारे में सब व्याख्यान पड लिया। मुझे वहोत रंज पैदा हुआ। वाईसरोय का व्याख्यान निराशाजनक है। ऐसी हालत में तो इह उमेद रखता हूं के सब हिन्दी मेम्वर सिलेक्ट कमेटी से निकल जायगे और यदि जरु हो तो कौन्सिल में से वी निकल जाये और देश में आंदोलन करे। आपने और दूसरे मेम्वरों ने कहा है यदि रोव्लेट वील पसार होंगे तो हिन्दुस्थान में कोई रोज नहि हूआ है ऐसा भारे आंदोलन हो जायेगा। जे आंदोलन चल रहा है इसकी

---

१. हिन्दी साहित्य सम्मेलन की समिति।

भीति सरकार को नही है ऐसा लाउस[1] साहेव ने सूनाया है और उनकी वात वी सची है। हिन्दुस्थान मे एक लाख सभा कर सके तो भी क्या हूआ। मेने निश्चय नहि किया है परतु मुझको ऐसा लगता है सरकार जव जेरी कायदा दाखल कर देगी तव उनके दूसरे कायदे का निरादर करने का प्रजा को अधिकार प्राप्त होता है। परि हम इस समय प्रजा का जोर नहि वतायेंगे तो जो-कुछ रिफोर्म मिलने के है व निकवे होगे। मेरा राइ यह है के आप सव सरकार कु जाहेर कर दो के उने टेकस जव तक रोव्लाट वील कायम रहेंगे तव तक नहि भरेंगे और सजा को नहि देने की सलाह देंगे। मैं जानता हू ऐसी सलाह देना वडी जिमेदारी का काम है। परन्तु हम कुछ वडा काम नहि करेंगे जव तक उन लोगो को हमारे लिए कुछ भी मान पैदा नहि होगा। जीसके पास हमारा मान नहि है उसके पास से कुछ भी मिलने की हम आशा कर शकते। सिविल सर्विस और अग्रेजो का व्यापार के लिए वाइस-रोय ने जो कुछ कहा है व भी मुझको तो ठीक नहि लगता है। सिविल सर्विस की सत्ता वौत ही कमती करनी चाहे और इग्रेज लोक उने व्यापर को सुरक्षित कर रहे हैं ऐसी रक्षा स्वराज्य की पीछे उन्को हरगीज नहि मिलेगी। आज तो वे लोक हमसे वौत ही अधिक हक रखते हैं। मैं कल आश्रम पर जाता हू। प्रत्युत्तर वही भेजने की कृपा किजियेगा।

गाधी

—हिन्दी। बम्वई, ८।२।१९१९। सावरमती सग्रहालय मे उपलब्ध पत्र की फोटो-नकल से।]

१४. तार : मदनमोहन मालवीय को

(फरवरी २५, १९१९)

शिष्ट मण्डल के प्रति उत्साह और विश्वास नही। रौलट विधेयक सारी प्रगति रोके खडे हैं।

गाधी

—अंग्रेजी से। २५।२।१९१९। 'लीडर' २७।२।१९१९।]

---

१. सर जार्ज लाउण्डेज, भारत-सरकार के फानून-सदस्य (ला-मेम्बर)।

१५. तार : सैयद हुसेन[1] को

मार्च २, १६१६

प्रतिज्ञा के वर्तमान रूप पर ही हस्ताक्षर करायें। इसमें भरपूर गुंजाइश रहती है। कानूनों की व्याख्या करने से क्षेत्र सीमित हो जायगा। इसलिए पहले से व्याख्या करना असम्भव। आन्दोलन की प्रगति देखकर समय-समय पर भंग किये जानेवाले कानून सूचित किये जाते रहेंगे। आपकी समिति या तो यहां की समिति का, जिसे कि केन्द्रीय समिति कह सकते हैं, अंग हो, या चाहे आप उसे अपनी स्वतन्त्र समिति कह सकते हैं। कल दिल्ली जा रहे हैं यदि आवश्यकता हो तो कोई वहां मिल ले।

—अंग्रेजी। २।३।१९१९। साबरमती संग्रहालय में सुरक्षित पत्रावली से।]

१६. तार : मदनमोहन मालवीय को

लैबर्नम रोड़
बम्बई
३ अप्रैल, १६१६ या उसके पश्चात्

माननीय पण्डित मालवीय जी,
भारती भवन
इलाहाबाद

दिल्ली में जो कुछ हुआ है वह निर्दोष व्यक्तियों का कत्ल ही माना जा सकता है। उसे देखते हुए मेरी राय में आप आन्दोलन में शरीक हों चाहे न हों, परन्तु मौन ग्रहण नहीं कर सकते। आशा है आप तथा अन्य नेतागण अपने विचार स्पष्ट शब्दों में व्यक्त किये बिना न रहेंगे। रौलट विधेयकों का विरोध करने में सत्याग्रही लोग उस कानून के पीछे निहित दमन की भावना का विरोध कर रहे हैं। बेगुनाह लोगों के खून के कारण सत्याग्रहियों पर एक बड़ी जिम्मेदारी आ पड़ी

---

१. इलाहाबाद के अंग्रेजी दैनिक 'इण्डिपेण्डेण्ट' के सम्पादक।

है। मेरे मन मे इस बात के बारे मे सन्देह नही है कि वे अपना कर्त्तव्य निभायेंगे। कृपया इस तार को प० नेहरू[1] तथा अन्य सज्जनो को दिखा दें।

गांधी

—अंग्रेजी। बम्बई, ३।४।१९१९। साबरमती संग्रहालय में उपलब्ध मूल अंग्रेजी की गांधीजी-द्वारा संशोधित प्रति से।]

१७. तार : मदनमोहन मालवीय को

बम्बई

२७ जून, १९१९

माननीय प० मालवीय जी

राक हाउस, शिमला

दूसरा तार लाहौर

महिलाओ ने (आधार-शिला) समारोह रविवार[2] को रखा है। आपकी ओर से मैं जा रहा हूँ। कृपया सन्देश यही के पते से भेजिए।

गांधी

—अंग्रेजी। बम्बई, २७।६।१९१९। साबरमती संग्रहालय मे उपलब्ध प्रति से।]

---

१. मोतीलाल नेहरू।

२. अहमदाबाद मे वनिता-विश्राम नामक लड़कियो के एक स्कूल की आधार-शिला रखने का आयोजन २९ जून को किया गया था।

सार्वजनिक सभाओं में प्रस्ताव पास करके वाइसराय और लेफ्टिनेण्ट गवर्नर को भेजे जा सकते हैं। मुझे यह कहने की जरूरत नहीं है कि तत्काल राहत हासिल करने के लिए तत्परता दिखाना आवश्यक है।

हृदय से आपका

—अंग्रेजी। बम्बई, १२।७।१९१९। साबरमती संग्रहालय में प्राप्त पत्रावली से।]

२१. पत्र : अब्दुलबारी को

१० अक्टूबर, १९१९ के बाद

प्रिय मौलाना साहब,

अगली १७ तारीख के सम्बन्ध में आपने मेरा पत्र देखा होगा। मैं यह आशा कर रहा हूं कि सभी हिन्दू उपवासादि में शामिल होंगे और यह कार्यक्रम बहुत ही शान्तिपूर्ण ढंग से समाप्त हो जायगा। प्रदर्शन शान्तिपूर्वक सम्पन्न हो जाये, इसी में उसकी सफलता निहित है। इसलिए मैं आशा करता हूं कि आप सार्वजनिक रूप से और व्यक्तिगत तौर पर भी इस आशय के निर्देश जारी करेंगे कि जो लोग अपनी भावना को प्रकट करने के लिए इस कार्यक्रम में शामिल हों, वे अपने घरों में ही रहें, और जो लोग मस्जिदों में जायं वे सर्वथा शान्तिपूर्ण ढंग से प्रार्थनामय मन से जायं।

फिरंगी महल
लखनऊ

हृदय से आपका

—अंग्रेजी। १०।१०।१९१९। साबरमती संग्रहालय में प्राप्त पत्रावली से।]

२२. तार : सादिकअली को

अक्टूबर १०, १९१९ या उसके बाद

सादिक अली
रामपुर

(अली-)बन्धुओं को अनुमति देने के लिए शिमला तार भेजा है। कृपया तार-द्वारा (उनकी मां की) हालत सूचित करें।

—हस्तलिखित अंग्रेजी मस्विदे (एस० एन० १९८२४) की फोटो-नकल से १०।१०।१९१९ के बाद। सं० गां० वा० भाग १६, पृष्ठ २३६।]

२३. तार : श्यामलाल नेहरू को

लाहौर
जनवरी २४, १९२०

पजाव से वाहर जाना सभव नही, मेरी ओर से क्षमा माग लें।

गाधी

—अंग्रेजी। लाहौर, २४।१।१९२०। सावरमती संग्रहालय में प्राप्त पत्रावली से।]

२४. पत्र : आनन्दशंकर ध्रुव[1] को

३१ जनवरी, १९२०

सुज्ञ भाई,

धर्म-शिक्षा की पुस्तको के सम्वन्ध मे मुझे जो पत्र प्राप्त हुआ है उसे मैं इस पत्र के साथ भेज रहा हू। क्या आप इस विपय मे कुछ कर सकेंगे ? क्या वाइविल स्टोरी आदि पुस्तको के ढग की महाभारत, रामायण आदि पर आधारित किताबें प्रकाशित नही की जा सकती ? धन का . . .[2] खाने मे ही खर्च किया जाया करेगा। . . .भीख माँग-माँग कर धन एकत्र करना सम्भव हो जायगा। परन्तु उसकी झंझट मे मैं आपको नही डालना चाहता। आपके पास समय है ? (इस प्रकार की पुस्तकें) लिखने की ओर क्या आपकी रुचि हो सकेगी ? मैं कोरे विद्वानो-द्वारा लिखी हुई पुस्तकें नहीं चाहता। मुझे आपके सिवाय ऐसा अन्य कोई व्यक्ति नजर नही आता जिसमे विद्वत्ता और चरित्र दोनो का सम्मिश्रण हो। इसीलिए आपकी शरण आया हू। इस पुस्तक की माँग मुझसे पहली ही बार नही की गई है। कुछ ऐसा चाहता हू कि पुस्तक को पढ़ते ही बालक समझ जाय कि हिन्दू धर्म क्या है ?

आपका स्वास्थ्य ठीक रहता है, यह समाचार मुझे मिलता रहता है। अंग्रेजी चरखे की तस्वीर मिल गई। उसे भेजने के विचार मे जो प्रेम समाया हुआ है, वह तस्वीर की अपेक्षा अधिक प्रिय लगा।

---

१. हिन्दू विश्वविद्यालय, काशी के सह-उपकुलपति।
२. यहाँ कुछ शब्द लुप्त हैं।

१८. पत्र : मौलाना अब्दुलबारी[1] को

वम्बई

मई ४, १९१९

मौलाना अब्दुलबारी,

मेरा ख्याल है कि इस्लामी सवालों पर मुस्लिम मत अच्छी तरह संगठित नहीं है। हर एक की भावना तो अत्यन्त तीव्र है, पर कोई तर्कपूर्ण और सर्वसम्मत वक्तव्य नही देता। मैं चाहता हूँ कि उलेमाओं की ओर से कोई वक्तव्य निकले। वह उर्दू या अरवी भाषा में हो, तो कोई हर्ज नही। उसका सही अनुवाद आसानी से हो सकता है। दोनों जातियों के वीच के झगड़ों के कारण जांच करने और दोनों के वीच स्थायी एकता स्थापित करने के उपाय सुझाने के लिए हिन्दू-मुसलमानों का एक मिला-जुला आयोग मुकर्रर करने का आपका विचार मुझे वहुत पसन्द है। किन्तु मेरा ख्याल है कि उसके लिए यह ठीक अवसर नहीं है। अभी तो सवकी शक्ति रौलट कानून, इस्लामी प्रश्नों और राजनीतिक सुवारों पर केन्द्रित हो गई है और यही ठीक है। सारे हिन्दुस्तान के लिए सन्तोषप्रद ढंग से इन प्रश्नों का निपटारा कराने की क्रिया में हम सवका नजदीक आना सम्भव है। इन सवालों का फैसला हो जाने के वाद आपका सुझाया हुआ आयोग ज्यादा कारगर हो सकेगा।

हृदय से आपका

मो० क० गांधी

—अंग्रेजी। वम्वई, ४।५।१९१९। सं० गां० वा० भाग १५ से।]

१९. पत्र : सादिकअली खां को

प्रिय सादिक अली खां,

जून २३, १९१९

आपका पत्र मिला। यह जानकर खुशी हुई कि दादी जी तथा सव वच्चे वहां सकुशल पहुँच गये। यह सुनकर भी हर्ष हुआ कि वेगम साहिवा[2] को अली भाइयों

---

१. उस जमाने में लखनऊ के प्रसिद्ध धर्मनेता और खिलाफत आन्दोलन के प्रवल समर्थक।

२. श्रीमती मुहम्मद अली।

को देखने का अवसर मिल गया। जेल मे उनकी हर एक सुविधा का खयाल रखा जायगा, मेरे मन मे इसे लेकर कोई शक नही था। मैं सरकारी विज्ञप्ति मे लगाये गये आरोप का विल्कुल सही जवाव पाने के लिए वहुत उत्सुक हू। जैसा कि मैं पहले कह चुका हू, हमे फिलहाल अली-भाइयो के सम्वन्ध मे समाचारपत्रो के जरिए आन्दोलन करने से वचना चाहिए। मैं ठीक नहीं कह सकता कि भारत सरकार के खिलाफ क्या-कुछ कदम उठाये जा सकते हैं, लेकिन अभी तो मैं इस आरोप के वारे मे और अधिक जानना चाहूगा। सत्याग्रह अव किसी भी दिन प्रारम्भ कर दिया जा सकता है, परन्तु अगले सोमवार से पहले नही। फिर भी मैं चाहता हू कि सत्याग्रह मैं ही प्रारम्भ करू, अन्य कोई नही। अर्थात् मेरे जेल भेज दिये जाने के दिन से एक मास तक कोई सत्याग्रह न करे। कुछ हिदायतें छपवाई जा रही हैं। उसकी एक प्रति आपके पास भेजूगा। आप उन्हे अजीमुद्दीन खा को समझा दें। कृपया वेगम साहिवा तथा अन्य मित्रो से मेरा यथा योग्य कहे।

हृदय से आपका

—अंग्रेजी। २३।६।१९१९। साबरमती आश्रम मे सुरक्षित पत्रावली से।]

२०. पत्र : सुन्दर लाल को

लेवर्नम रोड
गामदेवी, वम्बई
१२ जुलाई, १९१९

इसके साथ मे "यग इण्डिया" का वह अक भेज रहा हू जिसमे लाला राधाकृष्ण के मामले की चर्चा हैं। मेरी सम्मति मे यह मामला अधिक नही तो वावू कालीनाथ राय[1] के मामले-जितना वुरा तो अवश्य ही है और मेरा खयाल है चूकि लाला राधाकृष्ण श्री राय के वरावर प्रभावशाली व्यक्ति नही हैं, इसलिए आपको उनके मामले मे और भी शीघ्रता करनी चाहिए। मेरे खयाल से श्री राय के मामले मे जो तरीका अपनाया गया है, वही इस मामले मे भी अपनाया जाना चाहिए। इस मामले मे वकील, सम्पादक और आम जनता अलग-अलग ज्ञापन न देकर सयुक्त रूप से एक ही ज्ञापन दें, कदाचित् इससे काम चल जायगा। चूकि मामला अव भी पजाव सरकार के विचाराधीन है, अत सभाए निश्चय ही की जायें।

---

१. ट्रिब्यून (लाहौर) के सम्पादक।

सार्वजनिक सभाओं में प्रस्ताव पास करके वाइसराय और लेफ्टिनेण्ट गवर्नर को भेजे जा सकते हैं। मुझे यह कहने की जरूरत नही है कि तत्काल राहत हासिल करने के लिए तत्परता दिखाना आवश्यक है।

हृदय से आपका

—अंग्रेजी। बम्बई, १२।७।१९१९। साबरमती संग्रहालय में प्राप्त पत्रावली से।]

२१. पत्र : अब्दुलबारी को

१० अक्टूबर, १९१९ के बाद

प्रिय मौलाना साहब,

अगली १७ तारीख के सम्बन्ध में आपने मेरा पत्र देखा होगा। मैं यह आशा कर रहा हूं कि सभी हिन्दू उपवासादि में शामिल होंगे और यह कार्यक्रम बहुत ही शान्तिपूर्ण ढंग से समाप्त हो जायगा। प्रदर्शन शान्तिपूर्वक सम्पन्न हो जाये, इसी में उसकी सफलता निहित है। इसलिए मैं आशा करता हूं कि आप सार्वजनिक रूप से और व्यक्तिगत तौर पर भी इस आशय के निर्देश जारी करेंगे कि जो लोग अपनी भावना को प्रकट करने के लिए इस कार्यक्रम में शामिल हों, वे अपने घरों में ही रहें, और जो लोग मस्जिदों में जायं वे सर्वथा शान्तिपूर्ण ढंग से प्रार्थनामय मन से जायं।

फिरंगी महल
लखनऊ

हृदय से आपका

—अंग्रेजी। १०।१०।१९१९। साबरमती संग्रहालय में प्राप्त पत्रावली से।]

२२. तार : सादिकअली को

अक्टूबर १०, १९१९ या उसके बाद

सादिक अली
रामपुर

(अली-)बन्धुओं को अनुमति देने के लिए शिमला तार भेजा है। कृपया तार-द्वारा (उनकी मां की) हालत सूचित करे।

—हस्तलिखित अंग्रेजी मस्विदे (एस० एन० १९८२४) की फोटो-नकल से १०।१०।१९१९ के बाद। सं० गां० वा० भाग १६, पृष्ठ २३६।]

२३. तार : श्यामलाल नेहरू को

लाहौर
जनवरी २४, १९२०

पंजाब से बाहर जाना संभव नही, मेरी ओर से क्षमा माग लें।

गाधी

—अंग्रेजी। लाहौर, २४।१।१९२०। साबरमती संग्रहालय में प्राप्त पत्रावली से।]

२४. पत्र : आनन्दशंकर ध्रुव[1] को

३१ जनवरी, १९२०

सुज्ञ भाई,

धर्म-शिक्षा की पुस्तको के सम्बन्ध मे मुझे जो पत्र प्राप्त हुआ है उसे मैं इस पत्र के साथ भेज रहा हू। क्या आप इस विषय मे कुछ कर सकेंगे? क्या बाइबिल स्टोरी आदि पुस्तको के ढग की महाभारत, रामायण आदि पर आधारित किताबें प्रकाशित नही की जा सकती? धन का . . .[2] खाने मे ही खर्च किया जाया करेगा। . . .भीख मांग-मांग कर धन एकत्र करना सम्भव हो जायगा। परन्तु उसकी झंझट मे मैं आपको नही डालना चाहता। आपके पास समय है? (इस प्रकार की पुस्तकें) लिखने की ओर क्या आपकी रुचि हो सकेगी? मैं कोरे विद्वानो-द्वारा लिखी हुई पुस्तकें नही चाहता। मुझे आपके सिवाय ऐसा अन्य कोई व्यक्ति नजर नही आता जिसमे विद्वत्ता और चरित्र दोनो का सम्मिश्रण हो। इसीलिए आपकी शरण आया हू। इस पुस्तक की मांग मुझसे पहली ही बार नहीं की गई है। कुछ ऐसा चाहता हू कि पुस्तक को पढते ही बालक समझ जाय कि हिन्दू धर्म क्या है?

आपका स्वास्थ्य ठीक रहता है, यह समाचार मुझे मिलता रहता है। अंग्रेजी चरखे की तस्वीर मिल गई। उसे भेजने के विचार मे जो प्रेम समाया हुआ है, वह तस्वीर की अपेक्षा अधिक प्रिय लगा।

---

१. हिन्दू विश्वविद्यालय, काशी के सह-उपकुलपति।

२. यहाँ कुछ शब्द लुप्त हैं।

'नवजीवन' के लिए यथावकाश कुछ-न-कुछ लिख कर भेजेंगे ही। काशी जी का वर्णन, (हिन्दू) विश्वविद्यालय का परिचय इत्यादि। आपके काशी जी जाने से पण्डित जी[1] को बहुत सन्तोष हुआ है। पण्डित जी ने इस आशय के उद्गार मुझसे अनेक बार व्यक्त किये हैं। उन्हें सुनकर मुझे गर्व का अनुभव हुआ।

प्रो० आनन्दशंकर ध्रुव, काशी

—गुजराती। ३१।१।१९२०। साबरमती संग्रहालय में प्राप्त पत्रावली से।]

२५. पत्र : मोतीलाल नेहरू[2] को

वनारस

२० फरवरी, १९२०

सेवा में

माननीय पण्डित मोतीलाल नेहरू

पदेन अध्यक्ष, उप-समिति

आल इण्डिया कांग्रेस कमेटी, लाहौर

महोदय,

१४ नवम्बर, १९१९ को अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटी की पंजाव उप-समिति ने आपको तथा माननीय फजलुल हक[3] श्री चित्तरंजनदास, श्री अव्वास तैयव[4] जी और मो० क० गांधी को आयुक्त और श्री के० संतानम् को सचिव नियुक्त किया था, जिनका काम गत अप्रैल में हुई पंजाव की घटनाओं से सम्वन्धित वयानों की, जो पहले ही उप-समिति द्वारा या उसकी ओर से इकट्ठे किये जा चुके हैं, जांच

१. पं० मदनमोहन मालवीय।

२. भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस की पंजाव उप-समिति द्वारा नियुक्त किये गये आयुक्तों ने रिपोर्ट का जो मसविदा तैयार किया था उसके साथ गांधीजी ने यह पत्र पण्डित मोतीलाल नेहरू को भेजा था। गांधीजी द्वारा तैयार किया गया मूल मसविदा उपलब्ध नहीं है। इस हस्तलिखित रिपोर्ट को गांधीजी ने श्री एम० आर० जयकर की सहायता से अन्तिम रूप दिया था।

३. राष्ट्रीय मुस्लिम नेता, द्वितीय विश्व-युद्ध के समय वंगाल के मुख्य मन्त्री।

४. १८५३-१९३६, गुजरात के राष्ट्रीय मुस्लिम नेता।

करना, उनकी वारीकी से छानवीन करना, तथ्यो का मिलान करना और विश्लेषण करना तथा जहा आवश्यक समझा जाय वहा और भी तथ्य जुटा कर इन वयानो की पूर्ति करना तथा उसके वाद उनसे सम्वन्धित अपने निष्कर्ष प्रस्तुत करना था।

राष्ट्रीय काग्रेस के अध्यक्ष मनोनीत होने पर आपने आयुक्त के पद से इस्तीफा दे देना जरूरी समझा। उप-समिति ने उसे विधिवत् स्वीकार कर लिया था और चूकि आपके द्वारा इस्तीफा दिये जाने के समय तक वयान लेने का काम लगभग पूरा हो चुका था, अत. आपके स्थान पर कोई अन्य आयुक्त नियुक्त नही किया गया।

माननीय फजलुल हक को उनके आने के तुरन्त वाद किसी महत्वपूर्ण कार्य के सम्वन्ध मे वापस वुला लिया गया था। अतएव उनके स्थान पर वम्वई के वकील श्री एम० आर० जयकर को नियुक्त किया गया।

हमने अपना काम १७ नवम्वर को शुरू किया।

हमने १७०० से ऊपर गवाहो के वयानो की जाच की और लगभग ६५० वयानो को प्रकाशनार्थ छाटा है, जिन्हे आप साथ मे भेजी जा रही रिपोर्ट के खण्डों मे शामिल पायेंगे। जो वयान शामिल नही किये गये हैं, वे अधिकतर ऐसे वयान थे जो एक ही तरह की वातें प्रमाणित करते थे।

हममे से किसी-न-किसी के द्वारा प्रत्येक स्वीकृत वयान की जाच कर ली गई है और उसे तभी स्वीकृत किया गया है जव हम लोग वयान देनेवाले की प्रामाणिकता से सन्तुष्ट हो गये। यह वात मनियावाला तथा आसपास से प्राप्त कुछ उन वयानो पर लागू नही होती, जिनमे से अधिकाश वयान हमारी प्रार्थना पर श्री लाभसिह, एम० ए० वैरिस्टर द्वारा एकत्र किये गये थे। ऐसे प्रत्येक वयान के नीचे उनका नाम दिया हुआ है। गवाह से पर्याप्त प्रश्नोत्तर किये विना कोई वयान स्वीकार नही किया गया।

आप देखेंगे कि कुछ गवाहो ने अधिकारियो के विरुद्ध गम्भीर आरोप लगाये हैं। प्रत्येक मामले मे हमने गवाहो को चेतावनी के रूप मे सूचित कर दिया था कि आप लोग जो आरोप लगा रहे हैं उनके परिणाम क्या निकल सकते हैं, और उनको तभी शामिल किया गया जव गवाह अपने वयानो पर, यह जानने के वावजूद दृढ रहे कि वे व्यक्तिगत जोखिम उठा रहे हैं और उनकी अतिशयोक्ति या उनके असत्य भाषण के कारण हमारे उद्देश्य को क्षति पहुच सकती है। हमने उन वयानो को अस्वीकार कर दिया है जिनका पुष्टीकरण नही किया जा सका। यद्यपि कुछ मामलो मे हम वयान देनेवालो की वात पर विश्वास करने को तैयार

थे। उदाहरणार्थ, औरतों के प्रति दुर्व्यवहार के सम्बन्ध में दिये गये बयान ऐसे ही थे।

यह कहने की जरूरत नही कि हमारी जांच मार्शल ला के क्षेत्र तथा उन जिलों[1] तक ही सीमित थी, जिनमें उसकी घोषणा की गई थी। मुख्य-मुख्य स्थानों पर हम लोग स्वयं गये। इस प्रकार लाहौर, अमृतसर, तरनतारन, कसूर, गुजरावाला, वजीराबाद, निजामाबाद, अकालगढ़, रामनगर, हाफजाबाद, सागला, शेखूपुरा, चूहड़खाना, लायलपुर, गुजरात, मलकवाल और सरगोधा हममें से कोई-न-कोई स्वयं गया था। अधिकांश स्थानों में विशाल आम सभाएं की गईं और जनता से अपने बयान देने के लिए कहा गया। पहले से लिये गये बयानों को इन सभाओं में लोगों के सामने रक्खा गया और उन्हें आमन्त्रित किया गया कि जो लोग इन बयानों की यथार्थता को चुनौती देना चाहते हों वे अपने बयान लिख भेजें। साथ ही उन्हें यह आश्वासन भी दिया गया कि उनके बयानों को बिल्कुल गुप्त रखा जायगा। लेकिन हमे कोई भी खण्डन प्राप्त नही हुआ।

अपने निष्कर्षों को मजबूत बनाने या संशोधित करने के उद्देश्य से हमने उपद्रव जांच समिति[2] के समक्ष दिये गये सभी सबूतों का निःसंकोच उपयोग किया है।

यहां यह उल्लेखनीय है कि साथ मे दिये गये बयानों में से बहुतेरे लार्ड हण्टर की समिति की बैठके शुरू होने से पहले हमें प्राप्त हो चुके थे।

अधिकतर बयान देशी भाषाओं में दिये गये। हमने उनका अत्यन्त शुद्ध अनुवाद उपलब्ध कर सकने की चेष्टा की है परन्तु हमारी रिपोर्ट के साथ दिये गये बयानों को मूल जैसा ही समझना चाहिए, क्योकि हमने इन बयानों के अनुवादों के आधार पर गवाहों से दुबारा पूछताछ करके तदनुसार उनमें आवश्यक सुधार या संशोधन कर दिये थे।

हमने मार्शल ला आयुक्तों या समरी अदालतों द्वारा किये गये फैसलो के रेकर्डों का, जहां तक वे हमें मिल सके, अध्ययन भी किया है और हमने कई ऐसे मामलो के, जो भरती के दौरान भरती के तरीकों के सम्बन्ध मे खड़े हुए थे, अदालती विवरण भी देखे। अन्त में हम यह बात प्रकट कर देना चाहते है कि जहां-जहा हम लोग गये उन सब स्थानों के प्रमुख व्यक्तियो के और लाहौर तथा अन्य स्थानों के उन अनेक कार्यकर्त्ताओं के हम आभारी है जिन्होंने हमारी

---

१. अमृतसर, लाहौर, गुजरांवाला, गुजरात और लायलपुर।
२. लार्ड हण्टर की समिति।

ऐसी मूल्यवान सहायता की जिसके विना हम निर्धारित समय मे काम समाप्त न कर पाते।

आपके विश्वस्त,
मो० क० गाधी
सी० आर० दास
अव्वास एस० तैयवजी
एम० आर० जयकर

—अंग्रेजी। काशी, २०।२।१९२०। रिपोर्ट आफ द कमिश्नर्स एपांइटेड वाइ द पंजाव सव-कमिटी आफ द इण्डियन नेशनल कांग्रेस। सं० गां० वा० भाग १७, पृ० ४४-४६।]

२६. तार : शौकतअली को[1]

६ मार्च, १९२०

उन्नीस[2] के लिए अपील तैयार कर रहा हू। उसमे अपने समर्थन की वात शर्त के साथ रख रहा हू। आपको मेरी सलाह है कि दृढ़ता जरूर रखिए परन्तु नरमी से काम लीजिए। सत्य को व्यक्त कीजिए परन्तु प्रेम की भाषा मे, घृणा की भाषा मे नही। तभी हमारी जीत सम्भव है।

—अंग्रेजी से। ६।३।१९२०। वाम्बे सीक्रेट एब्स्ट्रैक्ट्स १९२०।]

---

१. रामपुर (संयुक्त प्रान्त) के निवासी। खिलाफत आन्दोलन में गाधीजी के दाहिने हाथ तथा मौलाना मुहम्मदअली के वड़े भाई। शौकतअली २८-२९ फरवरी को हुए वगाल प्रान्तीय खिलाफत सम्मेलन के सिलसिले मे कलकत्ता गये हुए थे।

२. १९ मार्च को खिलाफत-दिवस मनाया गया था।

२७. तार : गोकर्णनाथ को[1]

अहमदाबाद
१२ मार्च, १९२०

अप्रैल के पहले सप्ताह में तो यहीं रहना पड़ेगा।

गांधी

—अंग्रेजी। अहमदाबाद, १२।३।१९२०। सं० गां० वा० खण्ड १७ से।]

२८. तार : गोकर्णनाथ को

अहमदाबाद
१५ मार्च, १९२०

गोकर्णनाथ,
लखनऊ

सर रवीन्द्रनाथ अहमदाबाद आने वाले हैं। क्या उस समय अहमदाबाद में सभा की जा सकती है? वह सम्भव न हो तो बम्बई में करें।

गांधी

—अंग्रेजी। अहमदाबाद, १५।३।१९२०। सं० गां० वा० खण्ड १७ से।]

२९. पत्र : श्रीप्रकाश को

पोस्ट कार्ड

प्रिय श्रीप्रकाश

पिता जी के कहने पर जो कागज तुमने भेजे हैं उनके लिए धन्यवाद। मैं

---

१. लखनऊ के प्रसिद्ध वकील एवं नेता। अखिल भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस के महामन्त्री।

हिन्दी और उर्दू का मेल पसन्द करता हूं। मुझे आशा है, तुम्हें वहा अच्छी सफलता मिली होगी।

तुम्हारा विश्वसनीय
मो० क० गाधी

सावरमती
१८-४-२०

टिप्पणी—यह कार्ड वनारस मे २१-४-१९२० को प्राप्त हुआ था।

—अंग्रेजी। सावरमती। १८।४।१९२०। नेहरू संग्रहालय मे सुरक्षित पत्रावली से।]
सौजन्य : श्री श्रीप्रकाश
तथा नेहरू संग्रहालय।

३०. पत्र : अब्दुलबारी को

सिंहगढ
२० अप्रैल, १९२०

प्रिय मौलाना साहब,

मैं फैजावाद नही आया, इसके लिए आपसे माफी चाहता हू। अगर आता तो मेरे स्वास्थ्य के लिए वुरा सावित होता। और कुछ नही तो अगली लड़ाई के लिए ही मैं अपना स्वास्थ्य ठीक रखना चाहता हू। लगता है, मेरा वाया पैर काम नही कर रहा है। अगर मुझे कुछ दिन यहा रहने दिया जाय तो मुझे आशा है कि यह यही ठीक हो जायगा। हमारे साथियो से भी मेरी लाचारी का इजहार कर दीजिएगा।

इग्लैण्ड जाने के वारे मे तो आपने सब कुछ सुन ही लिया होगा। दोस्तो की खास ख्वाहिश के विना मैं वहा जाना नही चाहता था और ऐसी किसी ख्वाहिश की कोई साफ निशानी दिखाई नही दी इसलिए मैने श्री माण्टेग्यु को तार[1] दे दिया है। अव उनके जवाव की राह देख रहा हू। मैं यह जरूरी समझता हू कि मौलाना अवुलकलाम आजाद और शौकतअली वम्बई मे ही रहे ताकि उनसे वरावर सलाह-मशविरा किया जा सके। सगठन का काम फौरन शुरू हो जाना चाहिए।

---

१. १३-३-१९२० के वाद यह तार दिया गया था।

वदकिस्मती से मौलाना अवुलकलाम आजाद अभी तक वीमार हैं। मैंने उन्हें जितनी जल्दी हो सके, वम्वई आ जाने को कह दिया है।

—अंग्रेजी। सिंहगढ़, २०।४।१९२०। सं० गां० वा० भाग १८, पृ० ३९२।]

३१. पत्र : देवदास गांधी को[1]

आश्रम
वैशाख वदी १३
(१७ मई, १९२०)

चि० देवदास,

तुम्हारे ६ तारीख के पत्र से मैं स्तब्ध रह गया। तुम्हारे वीमार होने का भय मुझे सदैव वना रहता है। मैं तुमसे यहां आने को आग्रह नही करता, इसका एक कारण मेरा यह भय भी है। मुझे ऐसा लगा कि तुम्हारा किसी ठण्डे स्थान में अकेले रहना तुम्हारे लिए हितकर होगा। अव तुम्हारा दूसरा पत्र पाने के लिए अधीर हू। ६ तारीख से पहले का पत्र तो मेरे पास है ही नहीं; पता नहीं, मिलेगा भी कि नही। आजकल डाक की गड़वड़ी का कुछ हिसाव ही नही है। मैंने पण्डित जी[2] को तुम्हारे वारे में तार दिया था, उसका भी उत्तर नही आया है। स्मरण रहे कि मै तीस तारीख को काशी जी जाने वाला हूं। अब यदि तव तक तुम वही रहो, तो हर्ज नही। हम मिलने पर भविष्य के सम्वन्ध में विचार करेंगे।

लगता है, विलायत जाना तो नही हो सकेगा। शर्तें मालूम हो गई हैं, इसलिए अभी तो यही सलाह करनी है कि क्या किया जाय।

(पुनश्च)

बापू के आशीर्वाद

कुमारी फेरिंग परसों डेनमार्क के लिए रवाना होंगी।

—गुजराती। साबरमती, १७।५।१९२०। साबरमती संग्रहालय में प्राप्त पत्रावली से।]

---

१. गांधीजी के सबसे छोटे पुत्र। उन दिनों वह उत्तर प्रदेश में ही कार्य कर रहे थे।

२. पं० मदनमोहन मालवीय।

३२. पत्र : देवदास गांधी को

आश्रम

अमावस्या (१८ मई, १९२०)[1]

चि० देवदास,

तुम्हारा १२ तारीख का पत्र मुझे आज ही मिला। मेरे पत्र की कमी तुम्हें लगभग एक सप्ताह तक महसूस हुई होगी, क्योकि मैंने यह मान कर तुम्हे कोई पत्र न लिखा था कि तुम आनेवाले हो। जब तुम्हारा कोई पत्र न आया और मैं राह देखते-देखते थक गया तब मैंने खुद ही पत्र लिखना शुरू किया। फिर भी तुम्हारी ओर से कोई पत्र न आने पर मैंने तार दिया और अब तुम्हारे पत्र आने लगे हैं।

पण्डित जी[2] के प्रेम का जितना बखान करोगे वह सब सच है। अपने हृदय की विशालता के कारण ही वह इतने सारे कार्य कर सकते हैं।

तुम्हारे बारे मे मुझे सामान्यतया चिन्ता हो ही जाती है। लेकिन यह सोच कर शान्त हो जाता हू कि तुम्हारा चरित्र तुम्हारी रक्षा करेगा ही।

मैं वहा[3] २६ तारीख को पहुचूगा। बम्बई से रात को निकलूगा, इसलिए गाडी तो एक ही है। मैं मान लेता हू कि पण्डित जी तो वहा होंगे ही। प० मोतीलाल जी ने लिखा है कि सब लोग किसी होटल मे ठहरें। लेकिन मैंने उनसे कहा है कि यदि पण्डित जी वहा हुए तो मुझे और कही ठहरने नही देंगे।

श्री माण्टेग्यु के उत्तर की प्रति तो मैं तुम्हे भेज ही चुका हू। यहा पण्डिचेरी वाले श्री ऐयर आये थे, तीन दिन तक रहे।

मजदूरो की हडताल आज खत्म होगी, कल वे काम पर जायगे, ऐसा मानता हू। मेरा खयाल है कि तुम्हें (मैंने) सब पत्रिकाए भेजी हैं।

अभी-अभी फातिमा बहन अपनी सास के साथ मुझसे मिलने आई हैं, इसलिए पत्र समाप्त करता हू।

बापू के आशीर्वाद

—गुजराती। साबरमती, १८।५।१९२०। साबरमती संग्रहालय में प्राप्तपत्रावली से।]

---

१. पत्र में अहमदाबाद मे मजदूरो की जिस हड़ताल की चर्चा की गई है वह २१ मई १९२० को समाप्त हुई थी। १९२० के मई महीने मे अमावस्या १८ तारीख को थी।

२. मालवीय जी महाराज से अभिप्राय है।

३. अर्थात् काशी।

३३. पत्र : देवदास गांधी को

बम्बई

ज्येष्ठ सुदी २ (२० मई, १९२०)[1]

चि० देवदास,

तुम्हारे पत्र अब नियमपूर्वक आते रहते हैं। मैं वहां आनेवाला हूं[2] इसलिए तुम अल्मोडा जाओ, यह कहने मे हिचकिचाता हूं, तथापि जाना हो तो जाना। रुकने की इच्छा हो तो मैं जब वहा आऊंगा तभी हम (दोनों बैठकर) कार्यक्रम बनायेंगे।

आज खिलाफत के सम्बन्ध मे एक दिन के लिए यहा आया हूं। इस बारे मे तुम्हें यंग इण्डिया और नवजीवन में सब कुछ पढने को मिलेगा।

जहां तक मेरे स्वास्थ्य का प्रश्न है, मैं दुर्बलता के सिवाय कुछ और महसूस नही करता। कमजोरी इतनी है कि मुझसे तनिक भी नही चला जाता। टांगों से ताकत चली गई है। कारण समझ में नहीं आता। अपने पढ़ने-लिखने आदि का कार्य ठीक-ठीक कर पाता हूं।

सिंहगढ़ में मेरे साथ प्रभुदास, बालकृष्ण, डाक्टर, महादेव और रेवाशंकर भाई रहे। कुमारी फेरिंग कल रवाना हो गई।

बापू के आशीर्वाद

—गुजराती। बम्बई, २०।५।१९२०। साबरमती संग्रहालय में प्राप्त पत्रावली से।]

३४. तार : शौकतअली को[3]

२२ मई, १९२०

हां। इलाहाबाद। पहली अथवा दूसरी जून को ठीक है।

—अंग्रेजी। बाम्बे सीक्रेट एक्स्ट्रेक्ट्स। २२।५।१९२०।]

---

१. कु० एस्थर फेरिंग १९ मई १९२० को डेनमार्क के लिए रवाना हुई थीं और यह पत्र जैसा कि मजमून से पता चलता है दूसरे दिन लिखा गया था।

२. गांधीजी मई के अन्त में बनारस पहुचनेवाले थे।

३. यह तार इलाहाबाद में खिलाफत की समस्या पर किये जाने वाले सम्मेलन के सम्बन्ध में है।

३५. तार : मुहम्मदअली[1] को

(७ जुलाई १९२० के पूर्व)

प्रभावशाली व्यक्तियो के हस्ताक्षरो से युक्त मुसलमानो का प्रार्थनापत्र वाइसराय के पास पहुच गया है, जिसमे पूरी नम्रता प्रदर्शित करते हुए भी अपनी बात पर दृढ आग्रह। प्रार्थनापत्र मे घोषणा की गई है अगर शान्ति-सन्धि की शर्तों मे परिवर्तन नही किया जाता या यदि वाइसराय महोदय खिलाफत आन्दोलन का नेतृत्व नही करते तो १ अगस्त से असहयोग आन्दोलन प्रारम्भ होगा। मैंने अपनी ओर से एक अलग प्रार्थनापत्र दिया है जिसमे इस आन्दोलन से अपने सम्बन्धो पर प्रकाश डाला है और अपने-आपको इसमे पूरी तरह से शामिल बताया है। मेरे विचार से मुसलमानो और हिन्दुओ का विशाल बहुमत मुसलमानो की धार्मिक भावना के सम्मान के निमित्त तथा मन्त्रियो के वचनो को पूरा कराने के उद्देश्य से छेडे जानेवाले इस महान और न्यायसम्मत आन्दोलन के साथ है। आप भरोसा रखें कि यहा जो कुछ भी सम्भव है सब किया जा रहा है। मुझे तनिक भी सन्देह नही कि अगर हम अपनी सहायता आप करेंगे तो इस महान् अनुष्ठान मे ईश्वर हमारी सहायता अवश्य करेगा।

—अंग्रेजी। यं० इं० ७।७।१९२०।]

३६. तार : शौकतअली को[2]

(२१ सितम्बर १९२० या उसके बाद)

जफ़रअली खा वकील द्वारा कतई बचाव न करें। वह केवल वक्तव्य दे सकते हैं। मेरा दृढ मत है कि वकील द्वारा बचाव की कोई गुंजाइश नही है।

—अंग्रेजी। २१।९।१९२० या उसके बाद। सं० गा० वा० खण्ड १८ से।]

---

१. रामपुर (उ० प्र०) निवासी। १८७१-१९३१; वक्ता, पत्रकार और राजनीतिज्ञ। एक जमाने मे प्रमुख अपरिवर्तनवादी असहयोगी नेता। १९२० मे इंग्लैण्ड भेजे गये शिष्ट मण्डल के नेता; १९२३ मे भारतीय राष्ट्रीय महासभा के अध्यक्ष। मौ० शौकत अली के भाई। यह तार उन्हें लन्दन भेजा गया था।—सम्पा०]

२. शौकतअली ने एक तार भेजा था जिसमे बताया था कि 'जमींदार' के सम्पादक जफरअली खाँ के मुकदमे की सुनवाई २७ तारीख को होगी। उन्होने गाधीजी से बचाव के सम्बन्ध मे भी सलाह मागी थी। यह तार उसी के उत्तर में भेजा गया था।

३७. तार : शौकत अली को[1]

(२३ सितम्बर १९२० या उसके बाद)

खुद तो जाना नहीं चाहता। यदि आप समझते हैं कि उद्देश्य को लाभ पहुंचेगा तो जाने को राजी हूं। महीने के अन्त तक मुझे विश्राम की आवश्यकता है।

—अंग्रेजी। २३।९।१९२० या बाद। सं० गां० वा० भाग १८, पृष्ठ ३०७।]

३८ तार : मुहम्मदअली को[2]

(१ नवम्बर १९२० या उसके पूर्व)

एक्सप्रेस
मौलाना मुहम्मदअली
अलीगढ़

कालेज की परिस्थिति पूरी तौर पर तार से सूचित करें। क्या अभी तक आपने कालेज का अहाता खाली नही किया? नडियाद के पते पर एक्सप्रेस तार करें।

गांधी

—अंग्रेजी। नडियाद, १।११।१९२०। साबरमती संग्रहालय में प्राप्त पत्रावली से।]

---

१. यह शौकतअली द्वारा २३ सितम्बर १९२० को बम्बई से भेजे गये तार के जवाब में था। शौकतअली ने अपने तार में कहा था "२७ तारीख को ज़फर-अली खॉ के मामले की सुनवाई है, इसलिए पंजाब खिलाफत समिति चाहती है कि आप तत्काल वहां पहुंच जांय . . .।"
२. पहली नवम्बर को बापू नडियाद में थे।

४१. तार : मुहम्मदअली को

(८ नवम्बर १९२०)[1]

मुहम्मदअली
अलीगढ़

शौकतअली ने पूरी जानकारी दी। हारवर्ड के मेधावी स्नातक एण्ड्रयूज और हिन्दू विश्वविद्यालय के कृपलानी[2] को भेजने का प्रबन्ध कर रहा हूं। जरूरत हो तो और भी लोग भेजे जा सकते हैं। आपको हार्दिक बधाई। आशा है कि विद्यार्थी दृढ़ रहेंगे और नाजुक समय मे बराबर शिष्ट और शान्त व्यवहार कायम रखा जायगा। मैं विद्यार्थियो को अपनी उस इच्छा की याद दिलाना चाहूंगा जो मैंने पहली बार उनसे अलीगढ़ में मिलने पर व्यक्त की थी। शील, प्रतिष्ठा, इस्लाम और भारत की खातिर उन्हें सादा रहन-सहन और ऊंचे विचार जीवन के सिद्धान्त बना लेने चाहिए। हमारे देश को सच्चे फकीरों और नम्रता की कभी इतनी आवश्यकता नही रही जितनी आज है।

—अंग्रेजी। ८।११।१९२०। अमृतबाजार पत्रिका, ९।११।१९२०।]

४२. पत्र : देवदास गांधी को

झांसी
(२०-११-१९२०)[3]

चि० देवदास,

हम लोग झांसी अभी-अभी पहुचे हैं। यहां थोड़ी-बहुत शान्ति मिल पाई। गंगाधर राव[4] तथा श्रीमती सरला देवी[5] मेरे साथ ही हैं। ऐसा लगता है कि सरला-

---

१. तार ८ नवम्बर को प्राप्त हुआ था।

२. जीवतराम भगतराम कृपलानी (१८८८) शिक्षाविद और राजनीतिज्ञ, १९४६ में भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस के अध्यक्ष, संसद-सदस्य।

३. गांधीजी बम्बई से झांसी के लिए १९ नवम्बर १९२० को रवाना हुए थे और २१ नवम्बर को दिल्ली पहुंचे थे।

४. कर्नाटक-केसरी के नाम से प्रसिद्ध कर्नाटक के प्रसिद्ध राजनीतिक कार्यकर्त्ता गंगाधर राव बालकृष्ण देशपाण्डेय।

५. रवीन्द्रनाथ ठाकुर की भांजी, पं० रामभजदत्त की पत्नी। १९१९ में गांधीजी की अनुयायी बनीं। अपने पुत्र दीपक को पढ़ने के लिए साबरमती आश्रम भेजा था।

देवी कल दिल्ली होती हुई लाहौर जायगी परन्तु पक्का निश्चय तो पण्डित जी[1] का पत्र आने पर हो सकेगा।

तुम्हारा स्वास्थ्य ठीक रहता होगा। वीरू से मिलते रहना। यदि वह रहने के लिए आश्रम पहुचे तो उसे दाखिल कर लेना, अन्यथा उसे राष्ट्रीय विद्यालय के छात्रालय मे भरती करा देना। शहर मे उसका रहना जरा भी ठीक न होगा। रेवाशकर[2] भाई का भी ऐसा ही खयाल है। शकरलाल का भाजा भी आश्रम पहुचने वाला है। उसके साथ उठना-बैठना तथा इस बात का खयाल रखना कि उसे आश्रम मे बुरा न लगने पाये।

बेलाबेन से परिचय बढाना। उन्होंने मेरे मन पर बहुत अच्छा प्रभाव डाला है। मुझे यह महिला प्रामाणिक और साध्वी प्रतीत हुई है। उसके बाल-बच्चे भी ठीक लगे हैं। परन्तु तुम और अच्छी तरह से इन सब बातो को परख सकोगे। मेरा इरादा इन लोगो पर काम का भारी बोझ डालने का नही है, फिर भी ऐसा हो सकता है कि अनजाने ही उनके कन्धो पर भारी बोझ पड़ जाय।

हिन्दी मे जो सशोधन किये हैं उन्हें मैंने समझ लिया है परन्तु दोष तो तभी दूर होंगे जब संशोधन लगातार किया जायगा। बोलते समय कोई भी व्यक्ति जान-बूझकर गलतिया नही करता। बात यह है कि इन अशुद्धियों की ओर बार-बार ध्यान आकर्षित करने पर ही उनसे बचा जा सकता है। तुम्हारे अध्ययन का कार्य-क्रम जानने के लिए उत्सुक हू।

बापू के आशीर्वाद

—गुजराती। झांसी, २०।११।१९२०। गांधी स्मारक संग्रहालय में प्राप्त पत्रावली से।]

---

१. पंजाब के नेता और कवि पं० रामभजदत्त चौधरी।

२. बम्बई के व्यापारी तथा गाधीजी के प्रशंसक रेवाशंकर जगजीवन झवेरी।

४३. तार : शिवप्रसाद गुप्त[1] को

(२०-११-१९२० के आसपास)[2]

मालवीय जी[3] का स्वास्थ्य कैसा है? यदि उनके स्वास्थ्य को नुकसान पहुंचने[4] का अन्देशा है तो फिर मैं बनारस नहीं आना चाहूँगा। दिल्ली तार दीजिए।

गांधी

—अंग्रेजी। २०।११।१९२०। साबरमती संग्रहालय में प्राप्त पत्रावली से।]

४४. तार : मोतीलाल नेहरू को

(२० नवम्बर १९२० के आस-पास)

सुना है मालवीय जी बीमार हैं और यदि मैं गया तो स्वास्थ्य और बिगड़ने की सम्भावना है। कृपया उनके स्वास्थ्य की खबर तार से दिल्ली भेजिए।

—अंग्रेजी। २०।११।१९२०। सं० गां० वा० खण्ड १९, पृष्ठ ५।]

---

१. (१८८३-१९४४) काशी के प्रसिद्ध देशभक्त, मातृभाषा-प्रेमी, दानवीर, राष्ट्रीय हिन्दी दैनिक 'आज' और राष्ट्रीय शिक्षा-संस्था काशी विद्यापीठ के संस्थापक और काशी के सुप्रसिद्ध भारत-माता मन्दिर के निर्माता।

२. महादेव देसाई की डायरी "में काशी में" शीर्षक के अन्तर्गत २६ नवम्बर १९२० के विवरण से यह स्पष्ट है कि यह तार तथा बादवाले दो तार नवम्बर १९२० में भेजे गये थे। गांधीजी १९ नवम्बर को बम्बई से झांसी के लिए रवाना हुए थे और २१ नवम्बर को दिल्ली में थे। २४ नवम्बर को वह दिल्ली से बनारस के लिए चल पड़े और २५, २६ तथा २७ नवम्बर को पं० मदनमोहन के साथ रहे। अतः अनुमानतः ये तीनों तार २० नवम्बर के आस-पास भेजे जा चुके थे।

३. पं० मदनमोहन मालवीय—(१८६१-१९४६) काशी हिन्दू विश्वविद्यालय के संस्थापक। शाहीविधान परिषद के सदस्य, भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस के दो बार अध्यक्ष।

४. गांधीजी मालवीय जी से मिलने के लिए बनारस जाना चाहते थे क्योंकि असहयोग आन्दोलन के प्रति उनकी प्रतिक्रिया पूरी तरह अनुकूल नहीं थी।

४५. तार : मदनमोहन मालवीय को

(२० नवम्बर १९२० के आस-पास)

यदि आप राजी हो तो २४ को बनारस आना चाहता हू। कृपया दिल्ली तार दीजिए।

गाधी

—अंग्रेजी। २०।११।१९२०। सं० गां० वा० खण्ड १९, पृष्ठ ५।]

४६. तार : चिरावुरी यज्ञेश्वर चिन्तामणि[1] को

(२५ नवम्बर १९२० को या उसके बाद)[2]

मैं निश्चय ही असहयोगियो द्वारा किसी का प्रचार[3] करने का विरोधी हू। चूकि मैंने उनमे पक्ष लेने का रुझान पाया इसीलिए मैंने असहयोगियो को उस प्रलोभन के विरुद्ध चेतावनी देना शुरू किया। इससे अधिक मैं कुछ नही कहूगा। मेरे नाम से किसी को भी झासी मे या अन्यत्र किसी उम्मीदवार को (किसी दूसरे उम्मीदवार की तुलना मे ज्यादा) अच्छा बताने का अधिकार नही है। आशा है यदि आप झासी के अधिकाश मतदाताओ को चुनाव के विरुद्ध पायेंगे तो आप उक्त चुनाव-क्षेत्र की इच्छा का सम्मान करेंगे।

—अंग्रेजी। २५।११।१९२० या बाद। सं० गा० वा० भाग १९, पृष्ठ २४।]

---

१. सर सी० वाई० चिन्तामणि (१८८०-१९४१), 'लीडर' के सम्पादक, किसी समय संयुक्त प्रान्त के एक मन्त्री और उदार दल के प्रसिद्ध राजनीतिज्ञ।

२. यह तार श्री चिन्तामणि के झासी से दिये २५।११।१९२० के इस तार के जवाब मे था :—"आपके कुछ अनुयायी आपके नाम पर मेरे विरुद्ध काम कर रहे हैं। मुझे पूरा विश्वास है कि आपका ऐसा मन्तव्य कभी नहीं हो सकता। आप से प्रार्थना है कि अपने मित्रो को तदनुसार तार दें। कृपया उत्तर तार से दीजिए।"

३. माण्टेग्यू-चेम्सफोर्ड सुधारों के अनुसार नवम्बर-दिसम्बर १९२० में हुए विधान-सभाओ के चुनावो के बारे मे।

४७. पत्रांश : देवदास गांधी को

...काशी में दो दिन बिताये। काफी अनुभव हुआ। पण्डित जी[1] के साथ कटुता आने का जरा भी भय नहीं था। दूसरों को जो अन्देशा था, वह भी मिट गया होगा। विद्यार्थियों में खूब बातें हुईं। अब यह देखना है कि परिणाम क्या होता है। देश में बेहद कमजोरी है। असहयोग ही देश को सबल बनायेगा।

—गुजराती। इलाहाबाद, २८।११।१९२०। सं० गां० वा० खण्ड १९ से।]

४८. तार : शौकतअली को

कृपया बम्बई के छात्रों द्वारा शास्त्री कानजी[2] के प्रति किये गये व्यवहार का विवरण तार-द्वारा बनारस[3] भेजें। हमें इस प्रकार के काण्डों को रोकना चाहिए, और उनसे अपने को अलग रखना चाहिए।

—अंग्रेजी। काशी, ९।२।१९२१। सं० गां० वा०, खण्ड १९, पृ० ३४७।]

४९. पत्र : वर्मा को

मुलतान

५ मार्च (१९२१)[4]

प्रिय श्री वर्मा,

आपका पत्र मेरी यात्रा में मेरे पीछे-पीछे चक्कर काटता हुआ यहां मिला।

युवकों मे जो उच्छृंखलता की प्रवृत्ति आ रही है, उसे रोकने के लिए मैं जितना कुछ कर सकता हूं, कर रहा हूं। आशा है कि उनके उत्साह का यह अशोभनीय अतिरेक ठण्डा पड़ जायगा और स्थिति सामान्य तथा सही रूप धारण कर लेगी।

---

१. पं० मदनमोहन मालवीय।

२. कानजी द्वारकादास बम्बई के एक सार्वजनिक कार्यकर्त्ता।

३. गांधीजी ९ और १० फरवरी को काशी में थे।

४. सन् १९२१ में कई बार गांधीजी ने अपने लेखों और पत्रों में छात्रों के उपद्रवों का उल्लेख किया। वह ५ मार्च १९२१ को मुलतान में थे।

क्या हम सभी आज सक्रमण-काल मे ही नही है? शायद हम उनके कार्यों के गुण-दोषो को समझने या उनका सही-सही मूल्याकन करने मे असमर्थ हैं। फिर भी काशी मे जैसे अशोभनीय दृश्य[1] देखने मे आये वैसे फिर न हो। इसके लिए मैं थोडा-बहुत जो कुछ कर सकता हू, मुझे अवश्य करना चाहिए। मैं उस मामले मे पण्डित जवाहरलाल नेहरू से ध्यान देने के लिए कह रहा हू।

हृदय से आपका
मो० क० गाधी

—अंग्रेजी। मुलतान, ५।३।१९२१। सावरमती संग्रहालय मे सुरक्षित पत्रावली से।]

५०. तार : मदनमोहन मालवीय को

बम्बई
२८ जून, १९२१

पण्डित मदनमोहन मालवीय,
शिमला

सरकार से क्षमा मांगने का मंशा तो था ही नही। यदि होता तो मैं स्पष्टतः वैसा कहता। भेंट का (दोनो पक्षो द्वारा) स्वीकृत विवरण प्रकाशित करने या गोपनीयता से मुझे बरी किये जाने के लिए मैंने पिछले सप्ताह वाइसराय को पत्र लिखा था।

—अंग्रेजी से। बाम्बे सीक्रेट एब्स्ट्रैक्ट्स, १९२१। बम्बई, २८।६।१९२१। सं० गा० वा० खण्ड २०, पृ० २९०।]

---

१. यहाँ गांधीजी ने कदाचित् कुछ समय पहले की एक घटना का उल्लेख किया है जिसमे बनारस मे छात्रों ने पण्डित मदनमोहन मालवीय के प्रति अशिष्ट व्यवहार किया था।

५१. पत्र : महादेव देसाई[1] को

वुधवार (६ जुलाई, १९२१ या उसके पश्चात्)[2]

चि० महादेव,

कल तुम्हारा पत्र मिला। तुमने जो लिखा था सो मैं समझ ही गया था। मैंने न उलटा अर्थ किया और न करने की मेरी आदत है। जब एक वाक्य के दो अर्थ होते हो तव जो अर्थ हमारे प्रतिकूल पड़े उसे ही अपने ऊपर लागू करना चाहिए, यही उचित है और यही सच भी है। उपर्युक्त दोनो वाक्यों में यह दोष नहीं था। दोष तो मैंने जो वताया वही था। २५ लाख मानना हमारे कोई विशेष अनुकूल नही होगा, क्योंकि इस रकम के विना भी एक करोड़ हो गये थे और अन्तिम पत्र लिखने के वाद ही यह तार आया था। वे एक लाख चर्खे दान में देना चाहते है अथवा कम दाम में देना चाहते हैं, इससे भी हमारे कार्य में कोई फर्क नही पड़ता। अभी तक एक लाख चर्खों वाले वाक्य का मैं दूसरा अर्थ नही करता। लेकिन वाक्यो का अर्थ लगाने में उतावली की गई है और यह उतावली भी आसक्ति की सूचक है। आसक्ति में हमेशा असत्य ही भरा होता है। अनासक्त पुरुष के पास सोचने-विचारने का समय होता है और वह कुछ ऐसा ही अर्थ करता है जिससे विरोधी पक्ष का वचाव हो सके और यदि व्यक्ति सत्यनिष्ठ है तो जैसा मैंने वताया है वह पत्र-लेखक के अभिप्राय की सही कल्पना कर लेता है।

तुम्हारे वारे में पढ़ा। जो हुआ सो विपरीत हुआ। इससे यह प्रगट होता है कि हम किस तरह भूल में पड़ जाते हैं। सच्चा प्रायश्चित्त तो यही हो सकता है कि फिर कभी ऐसा न हो। तथापि मैं निम्नलिखित सुझाव देता हूँ। प्रत्येक एकादशी को सिर्फ एक सेर, ८० तोला, गर्म दूव पर रहो। न फल लो, न शक्कर। और वह दूध भी दो या तीन वार में पियो, एक ही वार में नही। अगली एकादशी से ऐसा एक वर्ष तक करो।

श्रीमद् राजचन्द्र जी के[3] लेखों को पढ़ जाना और उन पर विचार करना।

---

१. उस समय महादेव भाई इलाहावाद के 'इण्डिपेण्डेण्ट' के सम्पादकीय विभाग में थे।

२. २५ लाख के उल्लेख से प्रतीत होता है कि यह पत्र ३० जून के वाद पड़ने वाले वुधवार अथवा उसके वाद अर्थात् ६ जुलाई को लिखा गया था।

३. श्री रायचन्द्र भाई जिनके आचार-विचार का गांधीजी पर सवसे अधिक प्रभाव पड़ा था।

तुलसीदास की 'मणिरत्नमाला' पढ कर उस पर मनन करना।

भर्तृहरि के 'वैराग्यशतक' को पढ उस पर अच्छी तरह से विचार करना।

'योगवाशिष्ठ' का वैराग्य प्रकरण खूब ध्यान से पढ जाना।

हर रोज कम-से-कम एक घण्टा चर्खा कातना और उस समय हमेशा यह विचार करना कि इस यज्ञ के द्वारा मन की मलिनता धुल जाये। यह भी एक वर्ष तक करना, यात्रा और बीमारी अपवाद है।

सवेरे उठने पर अन्य समस्त कार्य बाद मे करना। सवेरे उठ शौचादि करना हो तो वह करके, यदि आश्रम मे हो तो प्रार्थना करके, आध घण्टे तक चुपचाप उपर्युक्त पुस्तको का पाठ करना और बाद मे एक घण्टा चर्खा चलाना। इसके बाद कुछ और काम करना।

एक वर्ष के लिए नौ बजने से पहिले सो जाना और चार बजने के बाद बिस्तर पर कतई न रहना। इस कार्यक्रम मे परिवर्तन तभी हो सकता है जब तुम बीमार पडो।

इस प्रायश्चित्त का विधान करते समय मैं दोष को बढ़ा-चढा कर नही कहता और नही मैं उसको कम मानता हूँ। उसमे से तुम्हे जो कुछ निकालना हो उसे निकाल देना। लेकिन लोक-लाज के अधीन होकर चर्खे को मत निकालना। और लोक-लाज अथवा लोक-सेवा के विचार से नौ बजे सोना मत छोडना। 'इण्डि-पेण्डेण्ट' को आडे नही आने देना।....दैनिक मे लिखने के लिए रात को जागने की जरूरत नही है। और फिर जिस शैली से हम चलाना चाहते है उसमे ऐसा कुछ नही है।

और जान लो कि ऊपर का डेढ़ घण्टा तो मौन का ही है। देवदास ने निर्दोष भाव से तुम्हारे पत्र को पढ़ना शुरू किया, उससे उसे रोकना मुझे उचित नही लगा।

तुमने न आने का जो कारण दिया है वह सबल है इसलिए चाहो तो मत आओ। पण्डितजी अथवा जोसेफ भेजें और आओ, यह अलहदा बात है। तुम्हारे न आने की मुझे चिन्ता नही, लेकिन अगर आ जाते तो मुझे खुशी ही होती।

तुम्हारे दोष को देखने पर मेरे प्रेम मे कोई कमी आ जायगी, ऐसा तो तुम कभी नही मानोगे। मैं पूर्ण होऊँ तो कमी को अवकाश नही हो सकता। मैं अपूर्ण मुमुक्षु अगर दूसरो के दोषो को बढा-चढा कर देखूँ तो अपनी अपूर्णता मे वृद्धि करूँगा।

मैंने नित्य स्मरण करने के लिए कहा है तथापि ग्लानि नही होनी चाहिए।

शुद्ध पश्चात्ताप ग्लानि का विरोधी है। पाप लम्बा मुँह बनाता है। मलिनता का स्मरण हमें विनम्र बनाता है, ग्लानि कभी नही देता।

'सुख दुःखे समेकृत्वा'[1] की बात यहाँ भी लागू होती है।

वापू के आशीर्वाद

—गुजराती। ६।७।१९२१।]

- उतावली भी आसक्ति की सूचक है।
- शुद्ध पश्चात्ताप ग्लानि का विरोधी है।
- पाप लम्बा मुँह बनाता है। मलिनता का स्मरण हमें विनम्र बनाता है, ग्लानि कभी नहीं देता।

५२. तार : मोतीलाल नेहरू को

बम्बई

(८ जुलाई १९२१ या उसके पश्चात्)

मोतीलाल नेहरू

अध्यक्ष का आग्रह है कि बहिष्कार के संगठन का खयाल करते समिति की तारीख चौवीस के बाद रखी जाय। मेरा सुझाव है कि बैठक अट्ठाइस तारीख को बम्बई में बुलाई जाय। मंजूरी तार से दें।

गांधी

—अंग्रेजी प्रति (एस० एन० ७५६७) की फोटो-नकल से। बम्बई, ८।७।१९२१ या बाद। सं० गां० वा० खण्ड २०, पृ० ३५२।]

५३. पत्र : महादेव देसाई को

अलीगढ़

५ अगस्त, १९२१

भाई श्री महादेव,

तुम्हारा पत्र मिला। तुम मुझसे मिले नहीं, इससे कोई हानि नही। मेरी

१. भगवद्गीता, २-३८।

शुभेच्छा मे आशीर्वाद तो मिला ही हुआ था। तुम्हे वहाँ कोई कष्ट न होगा और कोई कठिनाई नही होगी। मथुरादास[1] और दुर्गादास की स्थिति तो मैं समझता हूँ। उन दोनो से मिलने की मेरी प्रवल प्रच्छा थी। किन्तु वम्वई मे यह कैसे हो सकता था? वम्वई ने जो कुछ किया है उसमे प्रयत्न की तो कोई कमी नही रही न? हम १० तारीख को तो मिलेंगे ही, इसलिए अविक कुछ नही लिखता।

वापू के आशीर्वाद

पुनश्च·

प्रभुदास[2] आ गया है। स्टोक्स भी साथ है।

—गुजराती। ५।८।१९२१।]

५४. पत्र : महादेव देसाई को

लखनऊ जाते हुए
रविवार (७ अगस्त १९२१)[3]

भाई श्री महादेव,

लखनऊ पहुँचने से पहले यह पत्र लिख रहा हू। वहा[4] वुधवार के प्रातः पहुँचकर उसी रात को आरा रवाना हो जाना है।

मैं जोजेफ की गिरफ्तारी की खवर मिलने की राह देख रहा हू। मुझे लग रहा है कि रगा अय्यर अकेले नही रहने चाहिए।

लोगो की जय-जयकार से तग आ रहा हू।

मेरे लिए पेडे, सोडा-पडी पूडियाँ और मीठी टिकिया (गोल पापडी) वन सकें तो वनवा लेना। इस वार यात्रा मे मेरे पास पेडे ही हैं और उनके भी समाप्त होने की सम्भावना है। और सफर लम्वा है। सम्भव है, वहा, वकरी के दूव से वनाया हुआ घी सुगमता से न मिले सके। पेडे ही वन सकें तो भी ठीक है। हर जगह से टोपिया खूव मिल रही हैं।

---

१. मथुरादास त्रिकम जी (१८९४-१९५१) गाधीजी के भाजे के पुत्र।
२. छगनलाल गाधी के पुत्र।
३. गाधी जी मुरादावाद से इसी दिन लखनऊ पहुँचे थे और उस दिन रविवार था।
४. इलाहावाद।

वालजी[1] को तुम्हें 'यंग इण्डिया' के प्रूफ भेजने के लिए लिख दिया है।

बापू के आशीर्वाद

—गुजराती। पत्र (एस० एन० ११४२१) की फोटो-नकल से। ७।८।१९२१।]

५५. पत्र : ओंकारनाथ पुरोहित को

पटना जाते हुए
१५ अगस्त, १९२१

भाई ओंकारनाथ,

आपका पत्र मीला। छपेला पत्र मैं भेजता हुं। उस पत्र में ऐसी कोई अनीतिमय बात नहिं देखता हुं जिसलीये आपको अनीति प्रकट करने के कारन खत को छापना चाहिये। उस खत को न प्रकट करने की प्रतिज्ञा का पालन करना हि चाहिए। उसमें दी हुई सलाह का पालन न करना या करना आपका हि हृदय पर निर्भर रहता है।

मोहनदास गांधी

ओंकारनाथ पुरोहित
द्वारा—लाला चन्दूलाल,
राजा का बाजार
आगरा

—गांधीजी के स्वाक्षरों में मूलपत्र (जी० एन० ६०८८) की फोटो-नकल से। १५।८।१९२१।]

---

१. वालजी गोविन्द देसाई कुछ समय तक गुजरात कालेज, अहमदाबाद में अंग्रेजी के प्राध्यापक। त्यागपत्र देकर गांधी जी के साथ हो गये थे। 'यंग इंडिया' के सम्पादकीय कार्यों में सहायक।

५६. पत्र : महादेव देसाई को

कलकत्ता जाते हुए
(१७ अगस्त १९२१ के पूर्व[1])

भाई श्री महादेव,

तुम्हारा पत्र मिला। मोतीलाल जी तो यही चाहते हैं कि तुम रहो किन्तु मुख्य बात तो तुम्हारी इच्छा ही है। यदि वहा बहुत मेहनत पडे या तुम्हारी तबीयत ही अच्छी न रहे तो निश्चय ही चले आना। किसी आदमी का दाहिना हाथ बनने से अधिक महत्वपूर्ण और क्या हो सकता है? यह वाक्य कि "यदि मैं दाहिना हाथ बन सकता" केवल दु ख मे अथवा ज्ञानपूर्वक लिखा जा सकता है। यदि दु ख मे लिखा हो, तो फिर तुमने मुझे नही समझा है। यदि ज्ञानपूर्वक लिखा है, तब तो कुशल है। दो दिमाग़ एक दूसरे से विलग रह सकते हैं, किन्तु हाथ दिमाग से विलग रह कर क्या कर सकता है? मैं तुम्हे दिमाग मानकर शिक्षित कर रहा हू। सन्तराम तो 'पर्मनिण्ट अण्डर सेकेट्री' है, इसलिए वह तो खिसक नही सकता।

मैं चाहता हूँ कि तुम अपनी सही परिस्थिति को समझो। मैं प्यारेलाल[2] को क्यो रक्खे हुए हूँ, यह भेद तुम नही समझोगे। मेरी जिन्दगी के इस भाग को तुम समझ नही सकोगे। बा का और मेरा स्वभाव एक नही है। बा मुझे नही समझती। आश्रम मे अभी तक तो मुझे जैसी चाहिए वैसी एक भी स्त्री नहीं मिली। रसोईघर के काम-काज को सँभालना (विकट) काम है। विरला ही उसे सँभाल सकता है। मैं उसे तुम्हारी शक्ति के बाहर मानता हूँ। उसके लिए तो फिलहाल मगनलाल, विनोबा, छोटेलाल[3], मैं और कुछ अश मे भुवरजी[4] ने अपने को सिद्ध किया है। हमारा भोजन तो एक शास्त्र के अनुसार है। गोकी बेन[5] को लेकर काफी परेशानियाँ थी। हमे एक प्रौढ मनुष्य की निश्चय ही आवश्यकता है।

---

१. गाधीजी १७ अगस्त १९२१ को कलकत्ता मे थे।
२. प्यारेलाल नय्यर १९२० मे गाधीजी के साथ हुए और महादेव देसाई की मृत्यु के बाद उनके मुख्य सचिव बने।
३. छोटेलाल जैन, सत्याग्रह-आश्रमवासी।
४. सत्याग्रह-आश्रमवासी।
५. गाधीजी की बहिन।

मैं अपनी समझ में प्यारेलाल का अच्छे-से-अच्छा उपयोग कर रहा हूँ। वक्त आने पर मै उसे अन्यत्र रख सकूँगा।

जोजेफ़ के बाहर रहते हुए तुम्हारा देवदास अथवा प्यारेलाल को माँगना तो ज्यादती जान पड़ती है। तुम्हें इन दोनों से कुछ हलके दर्जे के व्यक्ति से सन्तोप करना चाहिए। तुम प्रभुदास को रख सकते हो।

दुर्गा के अच्छे हो जाने पर क्या तुम जोज़ेफ के साथ रह सकते हो? लेकिन यह तो दूर की बात हुई। पहले तो मुझे तुम्हारी इच्छा ही जाननी है। मै तुम्हें अभी यं० इं० में नही भेजूंगा। क्या तुम्हे मेरा पिछला पत्र मिला था? फिलहाल तो मैं इसी तरह सोचता हूँ कि या तो तुम वही रहो या फिर मेरे साथ।

तुम्हारे लेख पढ़े। सभी अच्छे है यानी उन पर कोई टीका-टिप्पणी जरूरी नही है। विपिनचन्द्र[1] को ठीक जवाव दिया गया है।

मुझे गौहाटी लिखना। मैं २५ तक गौहाटी के आसपास रहूँगा। क्रिस्टोदास[2] यं० इं० के विचार से साथ है। उसके आने की वात थी और वह आ गया है। वह मेरे साथ ही है।

बापू के आशीर्वाद

—मूल गुजराती पत्र (एस० एन० ११४१३) की फोटो-नकल से। १७।८।-१९२१ के पूर्व। सं० गां० वा० खण्ड २०, पृ० ५३५-३६।]

१. विपिनचन्द्र पाल।

२. कृष्णदास, गांधीजी के सचिव।

५७. पत्र : ख्वाजा को

(१७ अगस्त, १९२१ के वाद)[1]

प्रिय ख्वाजा साहव[2],

मैं गोवध के सम्बन्ध मे आपके तार का जवाव पहले नही भेज सका, इसके लिए आप कृपया मुझे क्षमा करेंगे। मैं जानता हूँ भारत के वहुत से भागो मे सचमुच वहुत ही अच्छा कार्य हुआ है। आप अन्न की कमी के वारे मे तार चाहते थे। अव तार देने का कोई उपयोग नही वचा है। मैं ४ तारीख[3] को आपसे मिलने की आशा करता हूँ। यदि स्थिति पर फिर भी विचार करने की जरूरत हो तो उस समय आप इसका उल्लेख करें।

हृदय से आपका

—अंग्रेजी। एस० एन० ७५९९ की फोटो-नकल से। १७।८।१९२१ के वाद। सं० गा० वा०, खण्ड २०, पृ० ५३८।]

---

१. यह पत्र ख्वाजा के १६ तारीख के उस तार के जवाव मे लिखा गया था जो गाधीजी को १७ अगस्त को मुगेर मे मिला था। तार इस प्रकार है—

"पिछले वर्ष की ६ गौओ के मुकावले इस वर्ष कुल २ की कुर्वानी की गई।... स्वदेशी के सम्वन्ध मे प्रतिक्रिया अत्यन्त आशाजनक। रुपये का ४ सेर गेहूँ। अधिक महँगा होने की अफवाह। इससे नगर में महान विक्षोभ। खतरनाक स्थिति उत्पन्न होने की आशका। कृपया तार से सलाह दें।"

२. अनुमानत. अलीगढ़ के राष्ट्रीय मुस्लिम विश्वविद्यालय के उपकुलपति ख्वाजा अब्दुल मजीद।

३. गाधीजी को ६ सितम्वर को होनेवाली कार्यकारिणी की वैठक मे शामिल होने के लिए ४ तारीख को कलकत्ता पहुँचना था।

५८. पत्र : महादेव देसाई को

तेजपुर

मौनवार (२२ अगस्त, १९२१)[1]

भाई श्री महादेव[2]

आशा है तुम्हें मेरे पत्र मिले होंगे। तुमने भी मुझे लिखा ही होगा किन्तु अभी तक तो कोई पत्र मुझे नही मिला। असम में यदि तुम मेरे साथ होते तो तुम्हारी काव्यशक्ति को अच्छा भोजन मिलता। किन्तु इस कर्मभूमि में कोई भोग भोगने के लिए हमारा जन्म नहीं हुआ है। इसलिए असम अथवा प्रयाग[3] दोनों स्थानों से हमें काव्यशक्ति को सींचने के लिए जो मिल जाय, उसी से सन्तोष करना है।

भ्रमण-सम्बन्धी निम्नांकित कार्यक्रम लगभग ठीक है।

२३ जोरहाट

२४-२५ डिब्रूगढ़

२७ सिलचर

२८-२९ सिलहट

३१-१ चटगाँव

३ बरिसाल

४ कलकत्ता

हम लोग कलकत्ता में लगभग दस दिन रहेंगे। उसी बीच एक दिन के लिए हमें शायद बोलपुर भी जाना होगा।

अन्य समाचार 'नवजीवन' तथा यं० इं० में तुम्हें मिल जायंगे।

बापू के आशीर्वाद

—गुजराती पत्र (एन० एन० ११४२२) की फोटो-नकल से। २२।८।१९२१। सं० गां० वा०, खण्ड २१, पृ० ६ में भी।]

---

१. गांधीजी २२ तारीख को तेजपुर से नाव-द्वारा रवाना हुए और नौगांव के रास्ते २३ की बजाय २४ अगस्त १९२१ को जोरहाट पहुँचे।

२. (१८९२-१९४२), २५ वर्षों तक गांधीजी के सेक्रेटरी।

३. महादेव देसाई उस समय प्रयाग में थे।

५९. पत्र : महादेव देसाई को

सिलचर के रास्ते पर
शनिवार (२७ अगस्त, १९२१)[1]

भाई श्री महादेव,

कांग्रेस द्वारा बताई गई असम की हद को आज छोड़ कर हम अब सुरमा घाटी मे प्रवेश कर रहे हैं। दृश्यावली भी बदल गई है। ब्रह्मपुत्र की यात्रा मे हमने तुम्हे काफी याद किया। लेकिन क्या हम अपने मनचाहे भोजन को हमेशा प्राप्त कर सकते हैं या खा ही सकते हैं? तुम्हारी ओर से कोई भी पत्र नही मिला है। वस्तुतः गोहाटी छोडने के बाद हमे डाक मिली ही नही और ऐसी आशका है कि अभी कलकत्ता पहुँचने से पहले मिलेगी भी नही। वहाँ तो मुश्किल से चार तारीख तक ही पहुँचेंगे। अन्नपूर्णादेवी का पता है: चतापारु, एलौर, मद्रास प्रान्त।

एस्थर फॅरिंग का[2] पता याद हो तो लिख भेजना।

तुम्हारे स्वास्थ्य के बारे मे समाचार जानने को आतुर हूँ।

बापू के आशीर्वाद

—गुजराती। २७।८।१९२१। साबरमती संग्रहालय में सुरक्षित पत्रावली से।]

६०. पत्र : महादेव देसाई को

चटगांव
१ सितम्बर, (१९२१)

भाई श्री महादेव,

पेन्सिल से लिखा तुम्हारा एक लम्बा पत्र मुझे मिला है। तुम्हारे इस पत्र को पढ़ने मे मुझे तकलीफ हुई। कभी-कभी पेन्सिल से लिखे हुए अन्य लोगो के पत्र

---

१. देखिए "पत्र : महादेव देसाई को", २२।८।१९२१।

२. एक डेनिश मिशनरी जो १९१६ मे भारत आई थीं और बाद मे कुछ समय तक साबरमती आश्रम मे रही। गांधीजी उनके साथ पुत्री का-सा व्यवहार करते थे।

भी मुझे प्राप्त होते हैं और उन्हें पढ़ने में मुझे दिक्कत होती है, इससे मेरी समझ में यह आ गया है कि पेन्सिल से लिखे हुए मेरे पत्र भी लोगों के लिए कष्टकर होते होंगे। मुझे यह आशंका तो थी ही कि पेन्सिल से लिखना गुनाह है लेकिन अपनी विषम स्थिति को देखते हुए मैंने यह छूट ले ली थी। लेकिन जब दूसरा कोई यह गुनाह करता है तब मुझसे नहीं सहा जाता। तुमने तो गुनाह नहीं किया है, यह मैं जानता हूँ। तुम्हें एक प्रति अपने लिए रखनी थी। बहुत बार पहली कार्बन कापी अधिक साफ होती है।

विचार बदलता हूँ[1]। तुम मुझे पहले कलकत्ते में मिलो और बाद में देवदास[2] को बुलाओ—यही अधिक उचित जान पड़ता है। तुमने फिलहाल वहीं रहने का निश्चय किया हो तो देवदास को तार कर देना। लेकिन मुझे ऐसा लगा कि मेरे साथ तुम सलाह-मशविरा कर लो, उसके बाद ही कुछ करना ठीक होगा, इसलिए मैं एक बिल्कुल ही अलग प्रकार का तार[3] भेज रहा हूँ।

मलाबार में जो-कुछ हुआ उसका समाचार मैंने बाद में देखा। उसके सम्बन्ध में 'यंग इण्डिया' के लिए एक टिप्पणी लिखकर मैंने भेज भी दी है। तुम्हें उसकी एक प्रति भेजी होती तो अच्छा होता। तुम्हारे लेख तो मुझे कलकत्ता पहुँचने पर ही देखने को मिलेंगे।

मालवीय जी[4] अथवा कवि के मन में मेरे प्रति कोई ईर्ष्या-भाव है, यह बात तो मैं स्वप्न में भी नहीं सोच सकता। दोनों में भीरुता है और दोनों को अपने विचारों के सम्बन्ध में अभिमान है। यदि अभिमान के साथ भीरुता न हो तो अभिमान को सहन किया जा सकता है। हम जिस दृष्टि से असहयोग को देखते हैं, असहयोगियों के दोषों को दरगुजर कर देते हैं वैसा ये दोनों नहीं कर सकते और इसीलिए इसका विरोध करते हैं। इसके अतिरिक्त मेरे विचारों की नवीनता और सरलता उन्हें भ्रमित भी है। उनके सम्बन्ध में इससे अधिक कुछ मानना मुझे तो पापरूप ही लगता है। विपिन बाबू[5] अथवा विजयराघवाचार्य[6] के मन में अवश्य बहुत-

१. गांधीजी ने यहाँ दो वाक्य लिखकर काट देने के कारण यह लिखा है।
२. १९००-१९५७, गांधी जी के सबसे छोटे पुत्र।
३. यह उपलब्ध नहीं है।
४. १८६१-१९४६, बनारस हिन्दू विश्वविद्यालय के संस्थापक, १९०६ और १९१८ में भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस के अध्यक्ष।
५. विपिनचन्द्र पाल (१८५८-१९३२), बंगाल के शिक्षाशास्त्री, पत्रकार, वक्ता और राजनीतिक नेता।
६. १८५२-१९४३, अध्यक्ष, भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस, १९२०।

कुछ हो सकता है। रमाकान्त को मैं बालक मानता हूँ। ऐसा जान पडता है कि उसने स्वतन्त्र विचार रखने का दावा करने की खातिर ही मेरा विरोध किया है। हमे उसका विचार ही नही करना चाहिए और पत्रकार के रूप मे मधुर टीका करने के काम को करते रहना चाहिए। .[1] के सम्बन्ध मे कवि और मालवीय जी के विचारो को अवश्य बताते रहो। यह काम 'यग इण्डिया' मे अधिक नही हो सकता लेकिन 'इण्डिपेण्डेण्ट' मे आराम से और बखूबी हो सकता है।

इन्दु के लिए हाथ से कते सूत के हार सहज ही बनाये जा सकते है।

तुम काफी पिओ तो इससे मुझे तनिक भी बुरा नही लगेगा। मेरे लिए यह ज्यादा जरूरी है कि तुम अपने स्वास्थ्य को बनाये रखो। अलबत्ता, मेरा ऐसा अनुभव है कि सामान्य रूप से काफी की जरूरत नही होती और मैं ऐसा मानता भी हूँ। जब मैं काफी पीता था, मुझे कोई फायदा नजर नही आया। अब नहीं पीता इससे भार तो कम हुआ ही है, और बला टली सो अलग।

बापू के आशीर्वाद

—गुजराती। चटगाँव, १।९।१९२१। सं० गा० वा० खण्ड २१ से।]

६१. पत्र : जवाहरलाल नेहरू को

मद्रास जाते हुए
१४-९-२१

भाई जवाहरलाल,

यू० पी० की कमीटी ने जो स्वदेशी-प्रचार के लीये ग्रांट माँगी है उस बारे मे बहोत सी खबर चाहीये। स्वदेशी का कारोबार किसके हाथ मे रहवेगा? उनको चरखा का, करघा का, कपास का कुछ ज्ञान है? किस तरह से व्यय कीया जायगा। मेरी सलाह है की जो इस काम को करना चाहते है उनको मेरे पास मुबई भेज दीया जाय। मैं इस मास की आखिरी को मुबई पहोचने की उमीद रखता हु।

पिता जी मुझे कहते थे की अब भी तुम्हारी तबीयत की रक्षा चहिये। इतनी

---

१. साधन-सूत्र मे यहाँ एक शब्द स्पष्ट नहीं है।

नहि करते हो। ऐसा न होना चाहिए। दूध और रसमय फल का उपयोग करने की दाक्तर की सलाह को संपूर्ण अमल करने की मेरी सला है।

आपका

मोहनदास गांधी

—हिन्दी। गांधीजी के, नेहरू संग्रहालय, नई दिल्ली में सुरक्षित स्वलिखित मूल पत्र से। १४।९।१९२१।]

सौजन्य : श्रीमती इन्दिरा गांधी
तथा नेहरू-संग्रहालय।

६२. पत्र : जवाहरलाल को[1]

त्रिचनापल्ली

२० सितम्बर, २१

प्रिय मित्र,

मौलाना शौकत अली तथा मौ० मुहम्मद अली एवं अन्य लोगों की गिरफ्तारी को देखते हुए हम कार्यकर्त्ताओं में से कुछ को मिलने और स्थिति पर विचार करने की जरूरत है। कार्य-समिति की वैठक अहमदावाद में ६वीं अक्तूबर को होगी। परन्तु यदि हम ४ थी अक्तूबर को ठीक १ बजे दिन में वम्बई में लेवर्नम रोड पर मिल सकें तो अच्छा होगा। क्या तुम कृपापूर्वक मुझे वम्बई के पते पर सूचित करोगे कि क्या तुम उपस्थित रहोगे? मैं २ अक्तूबर को वम्बई पहुँचूंगा।

तुम्हारे प्रान्त से मैंने केवल तुम्हे और मौलाना अव्दुल बारी, मौ० हसरत मोहानी तथा श्री ख्वाजा को निमन्त्रित किया है। तुम ऐसे किसी और मित्र को भी ला सकते हो जिसकी उपस्थिति (कार्य में) सहायक हो।

तुम्हारा निश्छल

मोहनदास क० गांधी

—अंग्रेजी। त्रिचनापल्ली, २०।९।१९२१। नेहरू संग्रहालय में सुरक्षित दस्तावेज से।]

सौजन्य : श्रीमती इन्दिरा गांधी
तथा नेहरू संग्रहालय, नई दिल्ली।

---

१. यह पत्र लिखा किसी और ही की हस्तलिपि में है, पर नीचे गांधीजी के हस्ताक्षर हैं।

में नजर नहीं आया। यहाँ भी वह दिखाई नहीं देता इसी से मैं घबरा गया हूँ। सामान्य जनता को उसमें विश्वास है, लेकिन उन्हें मदद की जरूरत है, कौशल की जरूरत है। अगर सब कोई कुछ-न-कुछ करने के लिए कहें और करनेवाला कोई भी न हो, तो क्या स्थिति होगी? वही हाल हमारा है। सम्प और रणजीत को तो क्या कह सकते है? लेकिन जवाहरलाल समझेगा, ऐसा मैं मानता हूँ। मैं आश्रम में बैठकर सिर्फ यही काम करने लगूँ, यह बात होने में देर नहीं लगेगी।

हिन्दुस्तान की अधोगति से मुझे इतना परिताप होता है कि अगर हिन्दुस्तान इस वर्ष के अन्त तक सचेत नही हो जाता तो यह परिताप कदाचित् मुझे जिन्दा ही जला डालेगा—मेरे इतना सब कहने और लिखने का आशय यही है। मैंने अपनी श्रद्धा को तो छोड़ा नही है। मैं तो जब बुद्धि का प्रयोग करके हिसाब करने बैठता हूँ तब मैं व्याकुल हो जाता हूँ। इतने मे ही मेरे अन्तर से आवाज आती है कि "करनेवाला तो ईश्वर है।" 'कछुआ और कछुवी का संवाद'[1] और 'मामेरु'[2] आदि को याद करता हूँ और शान्त हो जाता हूँ। मैं दो तारीख को बम्बई पहुँचूंगा। तुम चार तारीख को आना।

बापू के आशीर्वाद

—गुजराती। २५।९।१९२१। साबरमती संग्रहालय में सुरक्षित पत्रावली से।]

६५. पत्र : बनारसीदास चतुर्वेदी को

रेलगाड़ी में
२५ सितम्बर, १९२१

भाई श्री ५,

मैं आपका पोस्टकार्ड अभी पढ़ रहा हूँ, आपको रुपये न भेज सका, अब तो

---

१. भोजा भगत (१७८५-१८५०) का सुप्रसिद्ध गुजराती भजन।
२. कवि प्रेमानन्द (१६९२-१७९०) रचित गुजराती भक्तिकाव्य जिसमें भक्त नरसिंह मेहता की पुत्री के सीमन्त की रस्म स्वयं भगवान द्वारा अदा किये जाने का मार्मिक वर्णन है।

मैं मुबई मे दे दूंगा, मैं मुबई मे २ अक्टोबर को पहुचुगा, चार तारीख तक रहूगा, इतने मे आप आ जायें, ऐसा चाहता हू।

मोहनदास गाधी

वनारसीदास चतुर्वेदी एस० क्यू०[1]
शान्ति निकेतन,
वोलपुर, ई० आई० रेलवे

—जी० एन० २५७८ की फोटोनकल से। २५।९।१९२१। सं० गा० वा०, खण्ड २१, पृ० २१८।]

६६. पत्र : बनारसीदास चतुर्वेदी को

१८ अक्तूवर, १९२१[2]

भाई श्री,

आपका पत्र मिला। आपको नौकरी करने की कोई आवश्यकता नही है। न है विना काम असोसिएशन की आफिस पर जाने की। आपका भी पेटीट पर का पत्र देखा। मुझे खेद हुआ है। उसमे रोप ही देखता हू। मुझे मेरे पर रख दिया है तो ली .उनको कुछ भी लीखने की आवश्यकता न थी।

मेरा कार्य भी अव थोडा सा मुश्केल हो जायगा। परन्तु आप निश्चन्त रहे। भविष्य के लिए मेरा इशारा है।

मोहनदास गाधी

वनारसीदास चतुर्वेदी,
हीरावाग
गीरगाव मुवई

—हिन्दी।१८।१०।१९२१। जी० एन० २५७९ की फोटोनकल से।]

---

१. जुलाई १९२० मे चीफ्स कालेज इन्दौर से त्याग-पत्र देकर शान्ति-निकेतन में सी० एफ० एण्ड्रूज के पास चले गये। वाद मे प्रवासी भारतीयो का कार्य। विशाल भारत का सम्पादन। राज्यसभा के सदस्य रहे।

२. पत्र पर १९ अक्तूवर १९२१ की वम्बई डाकखाने की मुहर है।

मैं मुवई मे दे दूंगा, मैं मुवई में २ अक्टोवर को पहुचुगा, चार तारीख तक रहूगा, इतने मे आप आ जायें, ऐसा चाहता हू।

मोहनदास गाधी

वनारसीदास चतुर्वेदी एस० क्यू०[1]
शान्ति निकेतन,
वोलपुर, ई० आई० रेलवे
—जी० एन० २५७८ की फोटोनकल से। २५।९।१९२१। सं० गा० वा०, खण्ड २१, पृ० २१८।]

६६. पत्र : बनारसीदास चतुर्वेदी को

१८ अक्तूवर, १९२१[2]

भाई श्री,

आपका पत्र मिला। आपको नौकरी करने की कोई आवश्यकता नही है। न है विना काम असोसिएशन की आफिस पर जाने की। आपका भी पेटीट पर का पत्र देखा। मुझे खेद हुआ है। उसमे रोप ही देखता हू। मुझे मेरे पर रख दिया है तो ली...उनको कुछ भी लीखने की आवश्यकता न थी।

मेरा कार्य भी अव थोडा सा मुश्केल हो जायगा। परन्तु आप निश्चन्त रहे। भविष्य के लिए मेरा इशारा है।

मोहनदास गाधी

वनारसीदास चतुर्वेदी,
हीरावाग
गीरगाव मुवई
—हिन्दी।१८।१०।१९२१। जी० एन० २५७९ की फोटोनकल से।]

---

१. जुलाई १९२० मे चीफ्स कालेज इन्दौर से त्याग-पत्र देकर शान्ति-निकेतन में सी० एफ० एण्ड्रूज के पास चले गये। वाद मे प्रवासी भारतीयो का कार्य। विशाल भारत का सम्पादन। राज्यसभा के सदस्य रहे।
२. पत्र पर १९ अक्तूवर ... वम्वई डाकखाने की मुहर है।

६७. पत्र : महादेव देसाई को

आश्रम

वुधवार (१९ अक्तूबर, १९२१ को या उसके पश्चात्)[1]

भाई श्री ५ महादेव,

तुम्हारा भेजा हुआ चेक तो मुझे रखना ही पड़ेगा। वाद में, जव तुम्हें जरूरत होगी तव तुम्हें पैसा मुझसे माँगना पड़ेगा। ऐसा लगता है कि मोतीलाल जी को परिवार के लोगों की इन वीमारियों से छुटकारा कभी मिलेगा ही नहीं।

स्वदेशी के विषय में लोगों को अपनी बात मैं जँचा नहीं पाता, इससे क्या मेरी तपस्या की कमी नही सूचित होती? एक पूर्ण तपस्वी बोले विना भी लोगों को अपनी भावनाओं से प्रभावित करता है। कुछ लोग संकेतमात्र से, तो कुछ वोलकर और कुछ लिखकर ही अपनी बात समझा पाते हैं? इस सवका क्या रहस्य है? जो लोग खादी केवल मेरी हाजिरी में पहनते है वे मेरी तपस्या के कारण नही, मेरे प्रति अपने प्रेम के कारण ही ऐसा करते हैं। भविष्य में स्वतन्त्र हिन्दुस्तान अपना अनाज क्या विदेशों से मंगायेगा? यदि नहीं तो कपड़ा भी नही मंगायेगा। क्या हम पानी और दवा भी विदेश से मंगायेंगे? अलवत्ता, जव हमारे देश में कपास पैदा होना वन्द हो जायगा तव जरूर हमारा धर्म वदल जायगा। लेकिन तव तो हमें यह देश ही छोड़ देना पड़ेगा।

यह तो तुमने सुन ही लिया होगा कि किशोरलाल ने एकान्त में एक झोपड़ी वनवाई है और आजकल उसी मे रह रहे हैं।

—गुजराती। सावरमती, १९।१०।१९२१। सं० गां० वा० खण्ड २१ से।]

६८. तार : मोतीलाल नेहरू को

अहमदावाद

१९ अक्तूबर, १९२१

मैं आपसे सहमत हूँ कि अध्यक्ष कार्यसमिति के प्रस्ताव की अवहेलना नही

---

१. अन्तिम अनुच्छेद में किशोरलाल मशरूवाला के एकान्त में एक झोपड़ी में जाकर रहने का उल्लेख है। श्री मशरूवाला इस झोपड़ी में शुक्रवार, १४ अक्तूबर, १९२१ को रहने के लिए गये थे।

कर सकना। जैसा निश्चय किया जा चुका है, समिति[1] की बैठक दिल्ली मे होनी चाहिए।

—अंग्रेजी। अहमदाबाद, १९।१०।१९२१। बाम्बे क्रानिकल, २२।१०।१९२१।]

६९. पत्र : बनारसीदास चतुर्वेदी को

साबरमती
२४ अक्तूबर, १९२१

भाई श्री बनारसीदास जी,

आपका पत्र मीला। मैं चाहता हू अब आप भी जहांगीर पीटीट को कुछ भी न लिखें।

आपका,
मोहनदास गाधी

—हिन्दी। साबरमती, २४।१०।१९२१। गा० स्मा० स० में सुरक्षित मूल पत्र की फोटो-नकल से।]

७०. पत्र : भगीरथ मिश्र को

२७।१०।१९२१

जब आप पूरी प्रणाली को बुरा समझ कर उससे असहयोग कर रहे हैं, तब ऐसा नही हो सकता कि किसी दूसरी प्रणाली के आ जाने के कारण आप फिर पहली वाली प्रणाली से सहयोग करने लगें। उस हालत मे तो आपको दोनो से असहयोग करना होगा। मेरी "धमकी" का यही कारण है कि अगर भारत में हिंसा सर्वव्यापी हो जाय और उसी की चपेट मे आकर मैं दुनिया से उठ न जाऊँ तो मैं हिमालय की गुफाओ मे शरण ले लूंगा।

—अंग्रेजी। यं० इं०, २७।१०।१९२१।]

---

१. अखिल भारतीय कांग्रेस समिति।

७१. पत्र : महादेव देसाई को

नववर्ष दिवस[1]
मौनवार (३१ अक्तूबर, १९२१)

भाई श्री महादेव,

वर्ष-प्रतिपदा और मौनवार, इन दोनों का मिलन मेरे लिए तो बहुत शुभ है। आज से मेरे चर्खे का व्रत शुरू हुआ है। प्रतिदिन दूसरी बार का भोजन करने से पहिले आधा घण्टा कातूंगा और अगर न कात पाया तो भोजन ही न करूँगा। यह कोई बहुत बड़ी बात नहीं है। तथापि चूंकि मैंने व्रत लिया है इसीलिए मेरा कातना कुछ नियमित रूप से चलेगा। जब मैं रेल में होऊँ तब यह बन्धन नहीं होगा।

दीवाली के उपलक्ष में लिखा हुआ तुम्हारा पत्र और भजन मिले। ये किसलिए लिखे? तुम्हारा धर्म तो जल्द-से-जल्द रोग-शय्या से उठने का था। इस काम के लिए तुम दुर्गा को अथवा किसी अन्य व्यक्ति को कैसे जगा सकते हो? तुम्हारे तार भी मिले। एक तार में "एम्बलेजन यूनिवर्सिटी" शब्द लिखे हुए मिले जिन्हें कोई भी न समझ सका। विजयराघवाचार्य चालाक आदमी नहीं है और ऋषि भी नहीं है। "नाट" शब्द तो भूल से रह गया होगा, लेकिन जब मैंने उन्हें एक कड़ा तार भेजा तब उन्होंने उत्तर में अपनी भूल क्यों न सुधारी?

नये वर्ष में तुम तन, मन और हृदय से स्वस्थ रहो—यह मेरा तुम दोनों को आशीर्वाद है।

बापू के आशीर्वाद

—गुजराती। आश्रम, ३१।१०।१९२१। साबरमती संग्रहालय में सुरक्षित पत्रावली से।]

७२. पत्र : महादेव देसाई को

दिल्ली
मौनवार (७ नवम्बर, १९२१)

चि० महादेव,

दिल अर्थात् आत्मा क्योंकि दिल अर्थात् हृदय। तन्दुरुस्त तो प्रचलित शब्द

---

१. विक्रम संवत् के अनुसार कार्तिक मास की प्रथम तिथि।

है। मुझे लिखना तो था शरीर की तन्दुरुस्ती के वारे मे ही लेकिन केवल इतने-भर से मुझे कैसे सन्तोप हो सकता था?

परसराम मे दोप होने के वावजूद मैंने उसे पुत्र के रूप मे स्वीकार कर लिया है। तुम्हे तो मैंने मित्र ही माना है। दुर्गा को पहली ही मुलाकात मे वेटी मानने मे कोई सकोच नही हुआ। जमनालाल पुत्र वनने का दावा किया करता है लेकिन उसके सम्वन्व मे मेरे मन मे पितृत्व की भावना आ ही नही सकती।

तुम्हारे एक भजन के वारे मे मुझे ऐसा लगा कि मैंने उसे कही पढा है, तथापि कोई कारण नही कि वैसा ही भजन तुम्हे क्यो नही सूझ सकता? लेकिन मैं तुम्हारा पत्र मिलने से पहले ही कल इसका उत्तर दे चुका हूँ। वीमारी मे तुम्हारे मन मे आत्मा-सम्वन्वी विचार ही आये, सो इसमे ही स्वराज्य आ गया। स्वराज्य का अलग से विचार करने की कोई जरूरत ही न थी।

शरीर-वर्म को पूरा किये विना निस्तार नही है। खाने, नहाने, भीख माँगते हुए घूमने की वात को हम वुरा नही समझते और मात्र मेहनत करके अन्न खाने की वात से द्वेप करते हैं। मन के यज्ञ से मन की, आत्मा के यज्ञ से आत्मा की और देह के यज्ञ से देह की शुद्धि होती है। देह को जो अन्न मिलता है उसका वदला मनुष्य मन का काम करके नही दे सकता। जव अनाज मिलने की अपेक्षा किये विना मनुष्य मजदूरी करता है तव वह यज्ञ होता है। इस युग मे, इस देश मे शरीर-यज्ञ चर्खे से ही सम्भव है। क्योकि उसी के अभाव से हिन्दुस्तान का शरीर जीर्ण हो गया है। जव हिन्दुस्तान की आवोहवा वदल जायगी और हमारी जरूरतें वदल जायेंगी तव हम दूसरा यज्ञ कर सकते हैं। यदि ऐसा हो कि इस देश मे पानी प्राप्त करने के लिए हमेशा कुआँ खोदना पडे तो कुआँ खोदने की क्रिया कुछ अश मे यज्ञ वन जायगी। लेकिन जवतक ऐसी स्थिति कायम है तवतक जिस तरह ब्रह्मचर्य आदि आवश्यक है उसी तरह शरीर-यज्ञ भी आवश्यक है। लेकिन चूकि वह केवल शरीर का ही वर्म है इसलिए जव शरीर अनशन कर रहा हो तव वह इस यज्ञ से मुक्त रह सकता है (अन्यथा नही)। लेकिन जिस तरह मेरे-जैसा व्यक्ति सहज ही अथवा अपने मन को फुसला कर यह मान लेता है कि मैं तो निरन्तर २४ घण्टे प्रार्थना ही करता रहता हूँ और उसके लिए एक निश्चित समय निर्वारित नही करता उसी तरह अगर कोई व्यक्ति शरीर-यज्ञ किये विना ही यह मानता है कि वह यज्ञ कर रहा है तो वह भूल करता है, क्योकि प्रार्थना मानसिक या हार्दिक क्रिया है जव कि यह क्रिया तो केवल शरीर-द्वारा ही सम्पादित की जा सकती है। हाँ, वह इस क्रिया को निष्ठापूर्वक एकाग्र मन से न करे और लोगो को छले, यह

एक अलग वात है लेकिन यह क्रिया उसे करनी तो अवश्य पड़ेगी। इतने में तुम्हारे इस सम्वन्ध में पूछे गये दोनों प्रश्नों का उत्तर आ जाता है।

मैंने श्री दास के तार को गलत समझा। छोटानी मियाँ के पत्र के वारे में भी मुझे गलतफहमी हुई। उनमें गलतफहमी पैदा करने की जानवूझ कर कोई कोशिश नहीं की गई थी। छोटानी मियाँ से जव मेरी वातचीत हुई उस समय भी उन्होंने मेरी गलतफहमी दूर करने की कोशिश नहीं की। यह सच है कि हमने लम्वी वातचीत नहीं की। लेकिन जो अच्छी तरह समझता नहीं है वह भी सत्य का पूरा-पूरा पालन नहीं करता। मैं तो जानता हूँ कि यदि मैं मन, वचन और कर्म से सत्य, अहिंसा और ब्रह्मचर्य का पालन कर सकूँ तो इसी वर्ष स्वराज्य मिल जाय, अथवा हममें से कोई ऐसा हो जाय तो भी, अथवा हम सव लोगों का तप मिलकर उसके लिए पर्याप्त हो तो भी; मैं अपने सम्वन्ध में ऐसी आशा नहीं छोड़ता। अपनी कोशिश में तो मैं कोई कसर. . .।[1]

—गुजराती। दिल्ली, ७।११।१९२१। सावरमती संग्रहालय में सुरक्षित पत्रावली से।]

७३. पत्र : महादेव देसाई को

सावरमती

मंगलवार (१५ नवम्वर, १९२१)

चि० महादेव,

विना रोये तो माँ भी दूध नही देती, आवाज लगाये विना वेर भी नही विकते। माँ विचारी क्या जाने कि वालक को क्या चाहिए और वेरवाली के टोकरे की दशा तो वही जाने। इसलिए तुमने माँगा और लिया, इसमें शरमाने की क्या वात है?

तुम्हारे भजन मिले हैं। उन्हें पढ़ गया हूँ। मुमकिन है वीमारी में काव्यशक्ति अधिक वढ़ती हो लेकिन क्या उसका प्रयोग करने से स्वस्थ होने में अधिक समय नही लगेगा? अगर इस काव्यशक्ति को संगृहीत कर रक्खा जाय तथा स्वस्थ होने के वाद भी वह प्रकट हो तो वह और भी सराहनीय होगी।

---

१. यहाँ मूल पत्र कटा-फटा है।

मनुष्य वीमारी के अवसर को अन्तर्नाद सुनने का अवसर मानकर इस समय का उपयोग अपना ही निरीक्षण करने मे करे तो उससे मनुष्य की शक्ति वढती है।

तुम्हारी तवीयत अच्छी है, इसकी खबर मुझे मोतीलाल जी ने तार-द्वारा दी है।

तुम दोनो सुखी रहो और सेवा करो

वापू के आशीर्वाद

—गुजराती। सावरमती, १५।११।१९२१। सावरमती संग्रहालय में सुरक्षित पत्रावली से।]

७४. तार : श्रीमती मोतीलाल नेहरू को[1]

अहमदावाद

८ दिसम्वर, १९२१

श्रीमती नेहरू

इलाहावाद

आपको (और) कमला को वधाई। भगवान आपको साहस और आशा प्रदान करे।

गाधी

—अंग्रेजी। अहमदावाद, ८।१२।१९२१। इलाहावाद नगरपालिका संग्रहालय से।]

७५. पत्र : महादेव देसाई को

सावरमती

(८ दिसम्वर, १९२१)[2]

चि० महादेव,

तुम्हारा तार और पत्र मिले। श्रीमती नेहरू शान्त होगी। तुम निश्चिन्त भाव से अपना काम करते रहना।

---

१. ६ दिसम्वर को मोतीलाल नेहरू और जवाहरलाल नेहरू की गिरफ्तारी पर।

२. महादेव भाई का तार ७ तारीख को रात मे देर से मिला था और देवदास ८ तारीख की सुबह दिल्ली के लिए रवाना हो गये थे।

देवदास आ रहा है, तुम्हें उसकी पूरी मदद मिलेगी। और मदद की जरूरत हो तो माँगना। 'इण्डिपेण्डेण्ट' को सुधारना। सम्वाददाताओं की रिपोर्टों पर खूब अंकुश रखना। चाहे कम मिले लेकिन अच्छी हों, ऐसा प्रवन्ध करना। सतीश वावू की[१] मदद मिले तो लेना। एण्ड्रूज़ को मैंने तो नही लिखा है लेकिन तुम लिख सकते हो। मैने नही लिखा क्योंकि यह कुछ दवाव डालने की वात मानी जायगी।

श्रीमती नेहरू अगर मुझे पत्र लिखें तो इससे मुझे खुशी होगी।

दूसरों द्वारा वताये गये व्रतो को लेने में निश्चय ही भय है। तुम्हें जो व्रत सुझाये गये है उनमें से जो तुम्हें लेने योग्य मालूम हो और लिया जा सकता हो उसे ले लो और उसके साथ भूत की तरह लगे रहो। अभी लेने की शक्ति न हो तो मत लेना। न लेने में विघ्न नही है, विघ्न तो उसके न पालने में है।

बापू के आशीर्वाद

—गुजराती पत्र (एस० एन० ११४२८) की फोटो-नकल से। ८।१२।१९२१। सं० गां० वा० खण्ड २१, पृष्ठ ५८३।]

७६. पत्र : महादेव देसाई को

शुक्रवार (९ दिसम्वर, १९२१)[२]

चि० महादेव,

तुम्हारा तार मिला। 'इण्डिपेण्डेण्ट' के प्रकाशन के लिए तुम्हें जमानत जमा करनी पड़ी, यह वात मुझे अच्छी नहीं लगी, लेकिन पण्डितजी जो कुछ कहें, उसे करना हमारा कर्त्तव्य है। तुम गिरफ्तार हो जाओ तो निश्चय ही मुझे खुशी होगी। लेकिन पण्डितजी से कह दो कि अगर फिर कोई जमानत माँगी जाती है तो उसे जमा न कराकर हस्तलिखित पत्र निकालना अच्छा होगा। ऐसा करना सवसे आसान है। वे निश्चय ही तुम्हें गिरफ्तार कर लेंगे, लेकिन इसकी कोई चिन्ता

---

१. सतीशचन्द्र मुखर्जी।

२. महादेव देसाई ने जमानत देकर ७ तारीख को 'इण्डिपेण्डेण्ट' का काम-काज अपने हाथ में लिया। शुक्रवार को उपर्युक्त तिथि ही पड़ती थी।

नही है। सरूप और रणजीत वहाँ जा रहे है, वे भी (पत्र के) मालिक वन सकते हैं। मैं यहाँ से किसी को भेजने की कोशिश जरूर करूँगा।

प्यारेलाल वेशक आ सकता है।

वापू के आशीर्वाद

—मूल अंग्रेजी पत्र (एस० एन० १०६०२८) से। ९।१२।१९२१।]

७७. तार : मदनमोहन मालवीय को[1]

१४।१२।१९२१ या इसके वाद

प० मालवीय जी,
वनारस शहर

अहमदावाद छोडना असम्भव (है) २३ को कार्य समिति की वैठक यहाँ पर हो रही है। यदि अहमदावाद मे अपना अधिवेशन रक्खें तो प्रसन्नतापूर्वक भाग लूंगा। कांग्रेस मे कृपया आवें या उसके वाद (अधिवेशन) रक्खें।

गाधी

—अंग्रेजी। १४।१२।१९२१। अंग्रेजी प्रति (एस० एन० ७७१५) की फोटो-नकल से। सं० गा० वा० खण्ड २१ में भी]।

---

१. यह तार मालवीयजी-द्वारा १४ दिसम्वर १९२१ को प्रेषित उस तार के उत्तर मे भेजा गया था जिसका मजमून इस प्रकार है—

"तार के लिए धन्यवाद। १८ को आश्रम आ रहा हूं। वम्वई में २२ और २३ को सभी दलो के प्रतिनिधियो का एक अधिवेशन इस वात पर विचार करने के लिए वुला रहा हूं कि मौजूदा परिस्थिति मे कौन सा संगठित कदम उठाना चाहिए। विश्वास है आप शरीक होंगे। तार दें।"

७८. तार : श्रीप्रकाश को[1]

१५ दिसम्बर १९२१ को या उसके पश्चात्

श्री प्रकाश[2]
सेवाश्रम
बनारस

हार्दिक बधाई। ऐसे अन्त के लिए बिल्कुल तैयार नहीं था।

गांधी

—१५।१२।१९२१, अंग्रेजी प्रति (एस० एन० ७७२९) की फोटो-नकल से। सं० गां० वा० खण्ड २२ में भी।]

७९. पत्र : देवदास गांधी को[3]

गुरुवार (१५ दिसम्बर, १९२१)[4]

चि० देवदास,

तुम्हारे दो पत्र मिले। विषय-वस्तु जितनी सुन्दर है, तुम्हारी लिखावट उतनी ही खराब है। खूब प्रयत्न करो। मैं जानता हूँ कि अभी तुम्हें समय नहीं है। फिर भी तुम्हें प्रयत्न तो करना ही होगा।

---

१. यह तार श्रीप्रकाश जी के १५ दिसम्बर, १९२१ के निम्नलिखित तार के उत्तर में भेजा गया था : "पिताजी अपराध संहिता की धारा १०७ के अधीन गिरफ्तार। और सब ठीक है।"

२. जन्म १८९०, काशी के प्रख्यात विद्वान् डा० भगवानदास के पुत्र। कांग्रेस के नेता और स्वतन्त्रता के सैनिक। पाकिस्तान में भारत के उच्चायुक्त। कई राज्यों के राज्यपाल।

३. उस समय देवदास जी संयुक्तप्रान्त में थे।

४. हरिलाल रविवार, १५ दिसम्बर, १९२१ को गिरफ्तार किये गये थे।

हरिलाल ने बहुत सुन्दर काम किया। मैंने अभी-अभी सुना कि उसे छ. मास का सपरिश्रम कारावास मिला है।

शेष बातें महादेव भाई को[1] मैंने जो पत्र लिखा है, उसमे है।

बापू के आशीर्वाद

—गुजराती पत्र (एस० एन० ७७७५) की फोटो-नकल से। १५।१२।१९२१। स० गा० वा० खण्ड २२, पृष्ठ ३४ मे भी।]

८०. पत्र : महादेव देसाई को

गुरुवार (१५ दिसम्बर, १९२१)[2]

चि० महादेव,

मैं तुम्हें लगभग नित्य ही पत्र लिखता रहा हूँ। स्वरूपरानी का[3] पत्र सुन्दर है अर्थात् तुम्हारा पत्र सुन्दर है। लेकिन हमे किसी बात का श्रेय तो लेना नही है। सर्व देवताओं को किया हुआ नमस्कार वस्तुत: केशव को ही जाता है। सब कार्य कृष्णार्पण है इसलिए कुछ भी चिन्तनीय नही है।

दास की पत्रिकाएँ बहुत ओजपूर्ण हैं। उन्होंने (अहिंसा का) अमृत खूब पिया जान पडता है। बगाल ने सचमुच गुजरात का स्थान ले लिया है और गुजरात पिछड़ गया है। मुझे यह अच्छा भी लगता है।

प्यारेलाल[4] शेष बातें तो तुम्हें बता ही देगा। उसका खूब उपयोग करना और अपने स्वास्थ्य का ध्यान रखना। मैं चाहता हूँ कि तुम अब देवदास को जेल भेज दो। प्यारेलाल को वहाँ भेजने का यह कारण भी है।

---

१. महादेव देसाई (१८९२-१९४२), २५ वर्ष तक गाधी जी के निजी मन्त्री रहे।

२. गाधीजी ने गुरुवार ८।१२।१९२१ को, श्री देसाई को लिखे एक पत्र मे यह इच्छा व्यक्त की थी कि स्वरूप रानी उन्हें पत्र लिखें। उन्होंने पत्र मे श्री देसाई को यह भी लिखा था कि वह उनकी सहायता के लिए प्यारेलाल को भेजने को तैयार हैं। उन्होंने यह पत्र सम्भवतः अगले गुरुवार को लिखा था।

३. मोतीलाल नेहरू की पत्नी।

४. प्यारेलाल नय्यर, १९२० से गांधीजी के दूसरे सचिव। इन्होंने १९४२ में महादेव देसाई की मृत्यु के बाद उनका स्थान ग्रहण किया, 'महात्मा गाधी : दि लास्ट फेज' आदि के रचयिता।

गोडबोले[1] को मैं अलग पत्र नहीं लिख रहा हूँ। वह सब कागजात लेकर यहाँ आ जाय। अगर वह यहाँ आ जायगा तो कुछ काम जल्दी निपट जायगा। वहाँ अब उसकी कोई जरूरत नही जान पड़ती।

बापू के आशीर्वाद

(पुनश्चः)

निस्सन्देह गोडबोले को स्वयंसेवक के रूप में अपना नाम दर्ज करवाने की कोई जरूरत नहीं है।

—गुजराती पत्र (एस० एन० ११४२७) की फोटो-नकल से। गुरुवार, १५।१२।१९२१]

८१. तार : जियाराम सक्सेना को

१६-१२-२१ या उसके बाद

जियाराम[2]
कांग्रेस कमेटी
इलाहाबाद

कार्य समिति (की बैठक) तेईस को।

गांधी

—अंग्रेजी प्रति (एस० एन० ७७२३) की फोटो-नकल से। १६।१२।१९२१।]

---

१. गुजरात विद्यापीठ के भूतपूर्व प्राध्यापक, अ० भा० कां० कमेटी के संयुक्त सचिव।

२. संयुक्त प्रान्तीय कांग्रेस समिति के मन्त्री।

८२. तार : मौलाना अब्दुल बारी को[1]

(१६ दिसम्बर, १९२१ या उसके पश्चात्)

इस सबके लिए हमें हर तरह से ईश्वर की कृपा का ही अनुगृहीत होना चाहिए। आशा है आप स्वस्थ होंगे।

गांधी

—अंग्रेजी प्रति (एस० एन० ७७२४) की फोटो-नकल से। १६।१२।१९२१। सं० गा० वा० खण्ड २२, पृष्ठ ४१ में भी]

८३. पत्र : महादेव देसाई को

रविवार (१८ दिसम्बर १९२१)[2]

चि० महादेव,

'इण्डिपेण्डेण्ट'[3] की छपाई सुन्दर नहीं है, उसका कारण मशीन की खराबी ही होगी।

---

१. १८३८-१९२६, लखनऊ के राष्ट्रीय मुसलमान नेता और मुल्ला जिन्होंने खिलाफत आन्दोलन में सक्रिय भाग लिया था।
यह तार मौलाना अब्दुल बारी के १६ दिसम्बर १९२१ के तार के जवाब में भेजा गया था। तार इस प्रकार था : "आज हैदराबाद से वापस आया हूं। मौलवी सलामत उल्ला तथा अपने अन्य बहुत प्यारे हिन्दू-मुसलमान दोस्तों की अजेय भावना देखकर मैं बहुत ही खुश हुआ। उनकी गिरफ्तारी पर मैं आपको बधाई देता हूं। इलाहाबाद और लखनऊ के नागरिकों के धीरज, उनकी सहनशक्ति, अनुशासन, अमल की एकता और कांग्रेस के हुक्म की पाबन्दी के लिए हमें उन पर गर्व है। इलाहाबाद और लखनऊ दोनों जगह हड़ताल का सही ब्यौरा यह है कि वह मुकम्मिल और पूरी तरह अहिंसात्मक थी। अभी-अभी पण्डित मोतीलाल जी, मौलाना सलामत उल्ला और उनके साथियों से जेल में मुलाकात की है। सभी बहुत खुश हैं। अभी-अभी आपके बेटे की गिरफ्तारी की बात सुनी। हार्दिक बधाई। आसार अच्छे हैं।"

२. महादेव देसाई को गांधीजी ने १५ दिसम्बर १९२१ को लिखे अपने पत्र में इच्छा प्रकट की थी कि गोखले को अहमदाबाद आ जाना चाहिए। इस पत्र में गांधीजी ने कहा है कि "वह यहां पहुँच गये हैं।" अतः यह पत्र स्पष्टतः १५ दिसम्बर के बाद आनेवाले रविवार को लिखा गया होगा।

३. इलाहाबाद से निकलनेवाला अंग्रेजी राष्ट्रीय दैनिक पत्र।

स्वयंसेवक दल के सम्बन्ध में कांग्रेस में प्रस्ताव अवश्य पास किया जायगा। अच्छे लोग ही उसमें भरती किये जायँगे। तुमने प्रस्ताव तो देखा ही होगा।

स्वरूप रानी और अन्य महिलाएँ आयेंगी अथवा नहीं और अगर आयेंगी तो कब आयेंगी?[१]

इसके साथ का पत्र श्रीमती जोजेफ[२] को दे देना।

गोडबोले पहुँच गये हैं। मालवीय जी सम्मेलन की व्यवस्था कर रहे हैं।

अपने और दुर्गा[३] के स्वास्थ्य का समाचार देना।

बापू के आशीर्वाद

(पुनश्च:)

श्रीमती जोजेफ तो कलकत्ता गई हैं इसलिए मैं उनका पत्र उनके बताये हुए पते पर भेज रहा हूँ।

—गुजराती पत्र (एस० एन० ११४२५) की फोटो-नकल से। १८।१२।-१९२१।]

८४. पत्र : महादेव देसाई को

(२२ दिसम्बर, १९२१)[४]

चि० महादेव,

मैं नियमित रूप से पत्र लिखने का प्रयत्न अवश्य करता रहूंगा। ख्वाजा पकड़ लिये गये है। उनकी पत्नी ने लिखा है कि उनके स्थान पर अब वह काम करेंगी।

मुझे जो प्रस्ताव सूझ पड़ा है उसका मस्विदा भेज रहा हूँ। उसे ध्यान से पढ़कर अगर कोई सुझाव देना चाहो तो अवश्य देना। तार भेजना तो व्यर्थ ही है क्योंकि उन तक पहुँचता ही नही। एकाध तार की बात अलग है।

---

१. अहमदाबाद के कांग्रेस अधिवेशन में भाग लेने के लिए।

२. जार्ज जोजेफ की पत्नी।

३. महादेव देसाई की पत्नी।

४. इस पत्र के अन्तिम अनुच्छेद में इस तारीख के 'यंग इण्डिया' का जिक्र है जिससे गांधीजी ने श्रीमती ख्वाजा का पत्र उद्धृत किया है।

मैं चाहता हूँ कि देवदास फौरन जेल चला जाय। इसका महत्व तुम समझ सकते हो।

स्वरूप रानी के सन्देश की अंग्रेजी मुझे उत्तम जान पडी।

अपने स्वास्थ्य का ध्यान रखना। क्रिस्टोदास[1] जो कुछ भेजते हैं उसे मैं पढ जाता हूँ। मैंने जिसमे सशोधन कर दिया हो उसको यदि तुम बाँचे विना भी प्रकाशित कर दो तो कोई हर्ज नही।

आज का 'इग इण्डिया' भी तुम्हारे 'इण्डिपेण्डेण्ट' को भर सकता है। दो दिन से 'इण्डिपेण्डेण्ट' नही आ रहा है।

वापू के आशीर्वाद

—मूल गुजराती पत्र (एस० एन० ११४२६) की फोटो-नकल से। २२।१२।-१९२१।]

८५. पत्र : महादेव देसाई को

शुक्रवार (२३ दिसम्बर या उसके पूर्व)[2]

भाई श्री महादेव,

तुम्हारा पत्र पढा। तुम्हारे "दु ख" और "सुख" दोनो का ही कोई अन्त नही है। इस पर जिस दृष्टि से विचार करना चाहे उस दृष्टि से विचार किया जा सकता है। भगवान करे, तुम अपने निश्चय पर अटल रहो।

तुम्हें जवतक वहाँ अथवा. रहने की जरूरत जान पडे. तक रहो। अपने परिवार का तुम पर वडा दायित्व है, उसका भी तुम्हे निर्वाह करना है।

तुम्हे वहनो के विवाह का प्रवन्ध करना चाहिए अथवा नही, इस सम्वन्ध मे मैं किसी निष्कर्ष पर नही पहुँच सका हूँ। अगर मैं तुम्हारे स्थान पर होऊँ तो मैं पिता जी से स्पष्ट रूप से वात कर लूँ अथवा यदि उनका विवाह करने का अविकार मेरे ही हाथ मे हो तो जिसने नरसिंह मेहता की ओर से भोज की व्यवस्था

---

१. कृष्णदास, गाधीजी के सचिव।

२. अनुमानतः यह पत्र प्रापक को २४ दिसम्वर, १९२१ को उनके जेल जानेसे पूर्व लिखा गया था। उनके पिता उस समय जीवित थे और तवतक उनकी किसी भी वहिन की शादी नहीं हुई थी। उनकी एक वहिन का विवाह १९२२ मे हुआ और १९२३ मे उनके पिता की मृत्यु हुई।

८८. तार : मौलाना अब्दुल बारी[1] को

जब तक कार्यसमिति की बैठक बुलाई जा सकती हो तबतक डिक्टेटर का प्रश्न नहीं उठता। कार्य समिति की बैठक बुलाना सम्भव न होने पर डिक्टेटर के अधिकार कार्य-समिति जैसे होंगे। जेल जाना, मार खाना, प्राण देना अपने आप में उद्देश्य नही है, इन कष्टो को धर्म या देश के लिए ही सहना है।

गांधी

—अंग्रेजी प्रति (एस० एन० ७७७९) की फोटो-नकल से। १।१।१९२२। सं० गां० वां० खण्ड २२ पृष्ठ १२९।]

८९. पत्र : देवदास गांधी को

बुधवार (४ जनवरी, १९२२)[2]

चि० देवदास,

तुम्हारा समाचार-पत्र[3] मुझे मिलता ही रहता है, किन्तु तुम्हारा कोई पत्र नही आया है। इस समस्त परिश्रम के बीच तुम अपनी लिखावट सुधारने की बात मत भूलना। इस बार के 'यग इण्डिया' में तुम्हें 'इण्डिपेण्डेण्ट' की बहुत-सी सामग्री

---

१. यह तार मौलाना अब्दुल बारी-द्वारा बम्बई से ३१ दिसम्बर १९२१ को प्रेषित उस तार के उत्तर में था जिसमें कहा गया था"...कृपया निम्न प्रश्नों का उत्तर तार से भेजें ताकि मैं धार्मिक दृष्टि से उठनेवाले सन्देह दूर कर सकूं। क्या डिक्टेटर की हैसियत से आपके अधिकार वही हैं जो कार्य-समिति के या उससे अधिक हैं? क्या कार्य-समिति डिक्टेटर के अधिकार छीन सकती है? स्वयंसेवक दलों का मुख्य उद्देश्य क्या होगा, देश के लिए काम करते हुए जेल जाना, मार खाना और प्राण तक दे देना या ये अपने आप में उद्देश्य माने जायं?"

२. नेहरू परिवार के सदस्य २८ दिसम्बर को कांग्रेस का अधिवेशन समाप्त होने के बाद अहमदाबाद से रवाना हुए थे और गोविन्द मालवीय को ८ जनवरी, १९२२ से पहले सजा दे दी गई थी।

३. हस्तलिखित 'इण्डिपेण्डेण्ट' जिसे महादेव देसाई की गिरफ्तारी और सजा के बाद देवदास निकाल रहे थे।

मिलेगी। हमने तुम्हारे सब अको का सार देने का निश्चय किया है, इसलिए वह सप्ताह मे एक बार तो तुम्हे आसानी से मिल जायगा। तुमने 'गूंगा मौन' (म्यूट साइलेंस) शब्दो का प्रयोग किया है। यह 'गूंगा मौन' क्या होता है?

अभी तुम्हारे अक्षर इतने स्पष्ट नही होते कि वे पढे जा सकें। तुम टाइप कराना बिल्कुल छोड दो, यह बात मुझे अधिक ठीक जान पडती है। जिस व्यक्ति से समाचारपत्र की सामग्री लिखवाते हो उसकी लिखावट तो अच्छी है।

तुम्हारा तीसरा पृष्ठ अच्छा नही है। टाइप करनेवाले ने बहुत-सी जगह खाली छोड दी है। बंगाल के गवर्नर के सम्बन्ध मे खबर कौन देगा? मालवीय जी कानून भग करते हैं, यह लिखनेवाले को सूली पर चढा देना चाहिए। वह तो मद्रास गये भी नही।

दूसरे पृष्ठ पर 'गोलमेज सम्मेलन' शीर्षक दो बार आया है।

आज नेहरू-परिवार के लोग लखनऊ के लिए रवाना हो गये। वे सब तीसरे दर्जे मे गये हैं, यह टिप्पणी तुम दे सकते हो। उर्मिला देवी भी उसी वर्ग मे यात्रा कर रही हैं।

१४ तारीख को मैं बम्बई मे होऊँगा। वहाँ उसी दिन नरमदलीय सम्मेलन है। मुझे १५ तारीख को भी वहाँ रहना पडेगा। सुन्दरम् फिलहाल यही रहेगा।

तुम्हे अपने पत्र की प्रत्येक पक्ति पढ़ लेनी चाहिए। सामग्री अभी और कम कर सकते हो, लेकिन जितनी दो उतनी ठोस हो, और उसे सुन्दर भी बनाओ।

बापू के आशीर्वाद

(पुनश्च:)

स्वदेशी की खबर तो देनी ही चाहिए। जिन्हे अवकाश हो उन्हे स्वदेशी का प्रचार करना चाहिए। उन्हे सूत कातना, रूई पीजना, कपडा बुनना और बेचना चाहिए।]

गोविन्द के फिर गिरफ्तार होने का तार मिला है। इस बार किसलिए पकड़ा गया है, इस बात का पता नही चलता। इसके बाद की खबर तुमसे मिलेगी।

—गुजराती पत्र (एस० एन० ७७२०) की फोटो-नकल से। ४।१।१९२२। सं० गां० वा० खण्ड २२, पृष्ठ १३१।]

कर दी थी उस भगवान पर विश्वास रखता और अपनी बहन के गले में सूत की माला पहना कर उसे ससुराल भेज देता। मेरी सलाह यही है। तुम्हें दुर्गा[1] से सलाह...वह दुखित हो तो...पिता जी से तो बात...[2] उनकी सलाह तो लेनी ही चाहिए और बाद में तुम्हारी आत्मा जो कहे सो करना चाहिए। तुम सब कुछ दे दो तो भी कोई हर्ज नहीं और यदि कुछ भी न दो तो भी मैं समाज के सामने तुम्हारा समर्थन करूँगा। मेरी कल की बात मेरे अस्तस्तल से निकली हुई विचारधारा थी। उस धारा में मुझे ही बहना है, किसी दूसरे को नहीं। इस प्रवाह को देखकर यदि दूसरों के हृदय में भी वैसी ही भावनाएँ प्रस्फुटित हो जायँ तो वे उनमें खुशी से अवगाहन करें। सिखाये पूत दरबार नहीं चढ़ते। मथुरादास ने जो उत्तर दिया वह सही था। जो सर्वस्व अर्पण करना चाहता है वह स्वतः करेगा ही।

हाँ, तुमने मुझसे पूछा सो ठीक ही किया। मैंने जो ऊपर कहा है वही तुमसे भी कहूँगा। हमें अधिक से अधिक श्रद्धावान् बनने का प्रयत्न तो करना ही होगा।

बापू के आशीर्वाद

—मूल गुजराती पत्र (एस० एन० ८७६३) की फोटो-नकल से। २३।१२।-१९२१।]

८६. तार : देवदास गांधी को

(२४ दिसम्बर, १९२१ या उसके पश्चात)

महादेव के सम्बन्ध में आह्लादित। आशा है दुर्गा सशक्त और स्वस्थ होगी। चाहे तो वापस आ सकती है। आशा है तुम गिरफ्तार होने तक अखबार जारी रक्खोगे और अन्य लोग तुम्हारा स्थान लेने के लिए तैयार होंगे।

बापू

—अंग्रेजी। बाम्बे क्रानिकल, ३।१।१९२२। सं० गा० वां०, खण्ड २२, पृष्ठ ९६।]

---

१. महादेव देसाई की पत्नी।

२. साधन-सूत्र जहाँ-तहाँ क्षतिग्रस्त है।

३. स्पष्ट है कि यह तार २४ दिसम्बर, १९२१ को महादेव देसाई को इण्डिपेण्डेण्ट का हस्तलिखित संस्करण प्रकाशित करने के जुर्म में दण्डविधि संशोधन अधिनियम (क्रिमिनल ला एमेण्डमेण्ट ऐक्ट) के अन्तर्गत सजा होने के तुरन्त बाद भेजा गया था।

८७. पत्र : देवदास गांधी को[1]

शुक्रवार (३० दिसम्बर, १९२१)

चि० देवदास,

श्रीमती जोजेफ का पत्र इसके साथ है। मैंने उन्हे लिखा है कि तुम उन्हे वहाँ से पैसा भेजोगे। 'इण्डिपेण्डेण्ट' के सचालको से मिलकर आवश्यक प्रवन्ध कर लेना या जैसा तुम्हे सूझे, वैसा करना। ध्यान रहे कि तुम्हारे जेल जाने के बाद भी उन्हे कोई तकलीफ न हो।

गोविन्द[2] के चले जाने से मुझे तो बडा सन्तोष हुआ है। उन्होंने तुम्हें अभी तक गिरफ्तार नही किया है, सो तो जानबूझ कर ही नही किया। इसकी चिन्ता नही करनी चाहिए। यदि वे तुम्हे गिरफ्तार नही करते, तो नया काम सम्पन्न किया जा सकेगा, अगर पकड लें तो लोगों का जोश बढेगा।

इस समय पाल रिशार[3] यहाँ है। मैंने किशोरलाल[4] से उन्हे मिलाया। किशोरलाल अभी-अभी उनसे मिलकर गया है, इसलिए मुझसे भी मिल गया। कुमारी पीटर्सन[5] आज यहाँ है। कल आई थी, आज चली जायगी। श्री रिशार रविवार को जायँगे। श्रीमती सन्तानम् अभी तक यहाँ हैं।

बापू के आशीर्वाद

—गुजराती पत्र (एस० एन० ७६८३) की फोटो-नकल से। ३०।१२।१९२१। स० गा० वा० खण्ड २२, पृष्ठ १२५ मे भी।]

---

१. इस पत्र के आखिरी हिस्से में पाल रिशार का उल्लेख है और वह दिसम्बर के अन्तिम सप्ताह मे अहमदाबाद मे थे। श्री रिशार शनिवार ३१ दिसम्बर, १९२१ को गाधीजी के साथ गुजरात महाविद्यालय देखने गये थे।

२. पं० मदनमोहन मालवीय के पुत्र। उन्हे धरना देने के आरोप मे २० दिसम्बर, १९२१ को गिरफ्तार किया गया था किन्तु बाद मे छोड दिया गया था।

३. एक फ्रांसीसी लेखक।

४. किशोरलाल मशरूवाला, प्रसिद्ध विचारक, बाद मे गांधी-सेवा-संघ के अध्यक्ष।

५. एन० मेरी पीटर्सन, जिन्होंने एक डेनिश मिशनरी एस्थर फैरिंग के साथ दक्षिण अफ्रीका में कार्य किया और कुछ समय के लिए साबरमती मे भी रहीं।

८८. तार : मौलाना अब्दुल बारी[1] को

जब तक कार्यसमिति की बैठक बुलाई जा सकती हो तबतक डिक्टेटर का प्रश्न नही उठता। कार्य समिति की बैठक बुलाना सम्भव न होने पर डिक्टेटर के अधिकार कार्य-समिति जैसे होगे। जेल जाना, मार खाना, प्राण देना अपने आप मे उद्देश्य नही है, इन कष्टों को धर्म या देश के लिए ही सहना है।

गांधी

—अंग्रेजी प्रति (एस० एन० ७७७९) की फोटो-नकल से। १।१।१९२२। सं० गां० वां० खण्ड २२ पृष्ठ १२९।]

८९. पत्र : देवदास गांधी को

बुधवार (४ जनवरी, १९२२)[2]

चि० देवदास,

तुम्हारा समाचार-पत्र[3] मुझे मिलता ही रहता है, किन्तु तुम्हारा कोई पत्र नही आया है। इस समस्त परिश्रम के बीच तुम अपनी लिखावट सुधारने की बात मत भूलना। इस बार के 'यंग इण्डिया' में तुम्हें 'इण्डिपेण्डेण्ट' की बहुत-सी सामग्री

---

१. यह तार मौलाना अब्दुल बारी-द्वारा बम्बई से ३१ दिसम्बर १९२१ को प्रेषित उस तार के उत्तर में था जिसमें कहा गया था"...कृपया निम्न प्रश्नों का उत्तर तार से भेजें ताकि मैं धार्मिक दृष्टि से उठनेवाले सन्देह दूर कर सकूं। क्या डिक्टेटर की हैसियत से आपके अधिकार वही हैं जो कार्य-समिति के या उससे अधिक हैं? क्या कार्य-समिति डिक्टेटर के अधिकार छीन सकती है? स्वयंसेवक दलों का मुख्य उद्देश्य क्या होगा, देश के लिए काम करते हुए जेल जाना, मार खाना और प्राण तक दे देना या ये अपने आप में उद्देश्य माने जायं?"

२. नेहरू परिवार के सदस्य २८ दिसम्बर को कांग्रेस का अधिवेशन समाप्त होने के बाद अहमदाबाद से रवाना हुए थे और गोविन्द मालवीय को ८ जनवरी, १९२२ से पहले सजा दे दी गई थी।

३. हस्तलिखित 'इण्डिपेण्डेण्ट' जिसे महादेव देसाई की गिरफ्तारी और सजा के बाद देवदास निकाल रहे थे।

मिलेगी। हमने तुम्हारे सब अकों का सार देने का निश्चय किया है, इसलिए वह सप्ताह मे एक वार तो तुम्हे आसानी से मिल जायगा। तुमने 'गूंगा मौन' (म्यूट साइलेंस) शब्दो का प्रयोग किया है। यह 'गूंगा मौन' क्या होता है ?

अभी तुम्हारे अक्षर इतने स्पष्ट नही होते कि वे पढे जा सकें। तुम टाइप कराना बिल्कुल छोड दो, यह वात मुझे अधिक ठीक जान पडती है। जिस व्यक्ति से समाचारपत्र की सामग्री लिखवाते हो उसकी लिखावट तो अच्छी है।

तुम्हारा तीसरा पृष्ठ अच्छा नही है। टाइप करनेवाले ने वहुत-सी जगह खाली छोड दी है। बंगाल के गवर्नर के सम्बन्ध मे खवर कौन देगा ? मालवीय जी कानून भग करते हैं, यह लिखनेवाले को सूली पर चढा देना चाहिए। वह तो मद्रास गये भी नही।

दूसरे पृष्ठ पर 'गोलमेज सम्मेलन' शीर्षक दो वार आया है।

आज नेहरू-परिवार के लोग लखनऊ के लिए रवाना हो गये। वे सब तीसरे दर्जे मे गये हैं, यह टिप्पणी तुम दे सकते हो। उर्मिला देवी भी उसी वर्ग मे यात्रा कर रही हैं।

१४ तारीख को मैं वम्बई मे होऊँगा। वहाँ उसी दिन नरमदलीय सम्मेलन है। मुझे १५ तारीख को भी वहाँ रहना पडेगा। सुन्दरम् फिलहाल यही रहेगा।

तुम्हे अपने पत्र की प्रत्येक पक्ति पढ लेनी चाहिए। सामग्री अभी और कम कर सकते हो, लेकिन जितनी दो उतनी ठोस हो, और उसे सुन्दर भी वनाओ।

वापू के आशीर्वाद

(पुनश्च)

स्वदेशी की खबर तो देनी ही चाहिए। जिन्हे अवकाश हो उन्हे स्वदेशी का प्रचार करना चाहिए। उन्हे सूत कातना, रूई पीजना, कपड़ा बुनना और वेचना चाहिए।

गोविन्द के फिर गिरफ्तार होने का तार मिला है। इस वार किसलिए पकड़ा गया है, इस वात का पता नही चलता। इसके वाद की खवर तुमसे मिलेगी।

—गुजराती पत्र (एस० एन० ७७२०) की फोटो-नकल से। ४।१।१९२२। सं० गां० वा० खण्ड २२, पृष्ठ १३१।]

९०. तार : देवदास गांधी को

अहमदाबाद
६ जनवरी १९२२

देवदास गांधी
आनन्द-भवन
इलाहाबाद

कृष्णकान्त[1], खन्ना, सैयद मुहीउद्दीन और गोविन्द को उनके सौभाग्य पर बधाई।

बापू

—अंग्रेजी। अहमदाबाद, ६।१।१९२२।]

९१. पत्र : देवदास गांधी को

रविवार (२२ जनवरी १९२२)[2]

चि० देवदास,

आखिर आज मुझे तुम्हारा पत्र मिल ही गया। 'इण्डिपेण्डेण्ट' की प्रति साफ नही होती। प्रति ऐसी होनी चाहिए जिससे पढ़ने में तनिक भी कठिनाई न हो। भले ही उसकी संख्या कम हो। तुम्हारे लेख भी तो साफ होने चाहिए न? इस तरह से समाचार-पत्र निकालना भी एक कला है। लीथोग्राफिंग कैसी होती है; यह तुम्हे समझ लेना चाहिए।

माडर्न हाई स्कूल के सम्बन्ध में जोजेफ से तुम्हारी जो बात-चीत हुई है, उसका पूरा ब्यौरा भेजो।

बापू के आशीर्वाद

मास्टर देवदास गाधी
आनन्द-भवन
इलाहाबाद

—गुजराती। २२।१।१९२२। सा० सं० में प्राप्त पत्रावली से।]

---

१. पण्डित कृष्णकान्त मालवीय, पण्डित मदनमोहन मालवीय के भतीजे और अभ्युदय के सम्पादक।

२. डाक की मुहर से यह तिथि ली गई है।

९२. पत्र : जोसेफ जे० घोष को

(मगलवार, २४ जनवरी, १९२२)[1]

प्रिय श्री घोष[2]

आपके पत्र के लिए धन्यवाद। आपका पत्र मिलते ही मैंने उसे अपने पुत्र के पास भेज दिया था। उसका यह तार अभी-अभी आया है.

"घोष का पत्र विस्मयकारी। आरोप झूठे। इलाहाबाद के स्वयसेवको का सबसे अच्छा आचरण।"

क्या ऐसी कोई सम्भावना है कि आपको गलत सूचना दी गई हो? सम्भव है मेरे पुत्र को ही गुमराह किया गया हो। ऐसी तो कल्पना भी नही कर सकता कि वह मुझसे छल करेगा। मैं चाहता हूँ कि आपके सहयोग से मै मतभेद की असलियत का पता लगाऊँ। इतना और कह दूँ कि मेरा पुत्र बडा सावधान रहता है और उसकी राय हमेशा ठीक उतरती है। मैं यह भी मानता हूँ कि वह सघर्ष की भावना को बड़ी अच्छी तरह समझता है। अच्छा हो, आप उससे मिल कर इस मामले पर बात कर लें। मैं उसे आपसे मिलने के लिए लिख रहा हू।

मैं सभी प्रकार के धरनो को बन्द करने की बात नही सोचता। मैं समझता हू कि धरने यदि पूर्णतया शान्तिपूर्ण हो तो इनका एक नैतिक महत्व होता है।

आज्ञा पालन न करने वाले लडको को दण्ड देने का आपको अवश्य पूर्ण अधिकार था। अवज्ञा करने वाले लडको को निकाले जाने का खतरा उठाने के लिए भी तैयार रहना ही चाहिए।

मुझे दु ख है कि आपको यह तमाम परेशानी उठानी पड रही है।

—अंग्रेजी प्रति (एस० एन० ७६५६) की फोटो-नकल से। २४।१।१९२२।
सं० गा० वा० खण्ड २२, पृष्ठ २५५ पर भी।]

---

१. घोष के ३१ जनवरी, १९२२ के उत्तर (एस० एन० ७८१०) से।

२. जोजेफ जे० घोष, इलाहाबाद के माडर्न हाई स्कूल के तत्कालीन प्रधानाध्यापक; यह बाद में एक अच्छे प्रेतविद् भी निकले।

९३. पत्र : देवदास गांधी को

मंगलवार (२४ जनवरी, १९२२)[1]

चि० देवदास,

तुम्हारे तार मिले। शेरवानी को (वकीलों की सूची से) खारिज कर दिया गया, यह ठीक ही हुआ। जबतक देश का कार्य-भार हमारे हाथ में नहीं आजाता तवतक क्या वह वकालत करनेवाले हैं?

मैंने श्री घोप को तुम्हारे तार की नकल भेज दी है। तुम उन्हें पहले से लिखकर (और समय लेकर ही) उनके पास जाना और सब कुछ स्पष्ट रूप से कह देना। मैंने उन्हें जो पत्र लिखा है, उसकी नकल तुम्हें भेज रहा हूं।

हममें यदि मलिनता है तो उसका छिपाया जाना विल्कुल उचित नहीं है। गुरुवार की रात को वारडोली के लिए रवाना हो रहा हूं। वाद में तो अधिकतर वहीं रहना होगा।

वापू के आशीर्वाद

—गुजराती। २४।१।१९२२। सा० सं० में प्राप्त पत्र की फोटो-नकल से।]

९४. पत्र : महादेव देसाई को

वारडोली

३ फरवरी, १९२२

चि० महादेव,

तुम्हारे पत्र का उत्तर मैंने भेजा है। आशा है तुम्हें मिला होगा। तुम्हारे पत्रों का उपयोग मैं नियमित रूप से करता रहता हूं।

जवतक तुम जेलर की अनुमति से कुछ भी काम करते हो तवतक मैं कोई कठिनाई नहीं देखता। और जब जान-बूझ कर और खुले तौर पर जेल के नियमों को भंग करने की बात हो तब तो कठिनाई का कोई सवाल ही नहीं उठता। नियमों का भंग कब किया जा सकता है, इसके वारे में मैं तुम्हें लिख ही चुका हूँ।

---

१. श्री शेरवानी को सूची से खारिज किये जाने का समाचार देवदास ने गांधीजी को तार-द्वारा २३ जनवरी १९२२ को दे दिया था। मंगलवार २४ तारीख को पड़ता था।

यह तो तुमने देखा ही होगा कि वारडोली शुरुआत करे, यह निश्चय हो चुका है। अब मैंने नियमानुसार वाइसराय को अल्टीमेटम भेजा है। उसकी अवधि ११ तारीख को पूरी होती है। इसलिए ११ तारीख को हमे कुछ करके बताना होगा। मेरा पत्र वाइसराय को आज मिल जाना चाहिए। उसमे लिखी हुई माँगो को यदि वह स्वीकार करते है तो फिलहाल सविनय अवज्ञा वन्द रहेगी। मेरी माँग यह है कि वाइसराय अपनी विज्ञप्ति वापस ले ले, कैदियो को रिहा करें और भविष्य मे शान्त प्रवृत्तियो मे हस्तक्षेप न करने की घोषणा करें। अगर वह ऐसा करें तो हम फिर से शान्तिपूर्वक अपने कार्य का सगठन करने मे जुट जायँगे। इन माँगो मे समाचारपत्रो की स्वतन्त्रता प्रदान करने की वात आ जाती है। इस माँग को तो वाइसराय कदाचित स्वीकार नही करेंगे अन्तत. उन्हे इसे स्वीकार करना ही होगा, वशर्ते कि वारडोली वलिदान की शक्ति का परिचय दे और देश के अन्य भाग शान्त रहे।

तुम लोग तो अब वहा स्वराज्य का तन्त्र चलाने लगे होगे। तुम्हे अध्यक्ष आदि का चुनाव करके ऐसा प्रवन्ध करना चाहिए कि हर एक व्यक्ति का मिनट-मिनट का हिसाव लिया जा सके।

मेरे साथ रामदास और कृष्णदास हैं। गगावेन भी आई हैं। थोडे समय मे आश्रम से कातने और वुननेवाले लोगो को वुलाने वाला हू। यहा वुनाई का काम कुछ ढीला जरूर है।

विट्ठलभाई अधिकतर यही रहेंगे।

तुम्हारा स्वास्थ्य वहुत अच्छा होना चाहिए।

वापू के आशीर्वाद

—गुजराती। वारडोली, ३।२।१९२२। सा० सं० मे प्राप्त पत्रावली से।]

९५. पत्र : परशुराम मेहरोत्रा को

(६ फरवरी, १६२२)[1]

चि० परसराम[2],

तुम्हारा खत मीला। इलाहाबाद में चर्खा का कुछ भी काम होता है क्या ?

बापू के आशीर्वाद

मास्टर परसराम मेहरोत्रा
आनन्द भवन
इलाहाबाद

—हिन्दी। ६।२।१९२२। सं० गां० वा० खण्ड २२ से।]

९६. तार : देवदास गांधी को

बम्बई
६ फरवरी, १६२२

देवदास गांधी
कांग्रेस कार्यालय
गोरखपुर

तार मिला। सही-सही पूरा ब्योरा भेजो।[3] लोगों को हिंसा से दूर रक्खो। पूरी जानकारी प्राप्त करो। कार्यकर्त्ताओं से कहो, मुझे बहुत दुःख पहुँचा है। शान्त रहो, ईश्वर सफलता देंगे। आज रात बारडोली वापस जा रहा हूं।

बापू

—अंग्रेजी। बम्बई, ९।२।१९२२। सा० सं० में प्राप्त पत्रावली से।]

---

१. डाक की मुहर से।
२. इन दिनों परशुराम मेहरोत्रा 'इण्डिपेण्डेण्ट' में कार्य करते थे, बाद में आश्रम में हिन्दी के अध्यापक हुए।
३. चौरी-चौरा की घटना के बारे में।

९७. पत्र : देवदास गांधी को

मौनवार (१२ फरवरी १९२२)[1]

चि० देवदास

मुझे हमेशा तुम्हारी याद आती रहती है लेकिन तुम्हें पत्र लिखने की फुरसत ही नही मिलती।

तुम्हारा तार मिला है। मैंने बम्बई से जो तार दिया था वह तुम्हे मिल गया होगा।

मैंने आज से उपवास शुरू किया है। यह शुक्रवार की शाम को छूटेगा। इतना किये बिना तो चल ही नही सकता था। साँप की बाँबी मे हाथ डालना और इस अविनय के वातावरण मे सविनय अवज्ञा करना दोनो एक जैसे है। मेरे उपवास से तुम घबराना मत। तुम इसमे मेरा अनुकरण तो कदापि न करना। पीडा तो प्रसूता को ही भोगनी पडती है। दूसरे तो केवल उसकी मदद कर सकते हैं। मुझे भी अहिंसा और सत्य-धर्म को जन्म देना है इसलिए उपवासादि की पीडा तो मुझे ही भोगनी होगी। तुम सब तो उसके लिए आत्म-शुद्धि करो और निर्धारित कार्य करते रहो। सो तो तुम करते ही हो। इन पापो मे तुम्हारा कोई भाग नही है।

वहाँ से मुझे खबर बराबर भेजते रहना।

तुम्हे यह जानकर प्रसन्नता होगी कि हरिलाल की सजा कम नही हुई है। मुझे (उसकी सजा कम होने की) खबर अच्छी नही लगी थी। वह वहा प्रसन्न है। मालवीय जी कल बम्बई रवाना हो गये। वह कार्य समिति की बैठक मे हाजिर हुए थे।

मैं तुम्हे निम्नलिखित तार भेज रहा हू :

"तुम्हारा तार। कार्य समिति ने बडे पैमाने पर सविनय अवज्ञा अनिश्चित काल के लिए स्थगित कर दी है और आक्रामक प्रकार की अन्य छोटी प्रवृत्तियाँ भी। प्रायश्चित्त के रूप मे और उन लोगो को चेतावनी के रूप मे, जिन्होने मेरे नाम पर सिपाहियो की निर्दयतापूर्वक हत्या की है, शुक्रवार शाम तक उपवास कर रहा हू। अपराधियो को अपना अपराध स्वीकार करने और अपने-आपको

---

१. गाधीजी ने चौरीचौरा की घटना पर प्रायश्चित्त के रूप मे पांच दिन का उपवास किया था। उपवास रविवार, १२ फरवरी, १९२२ की शाम को शुरू हुआ था।

अधिकारियों के हवाले कर देने की जोरदार सलाह दे रहा हूं। तुम उपवास मत करना। चिन्ता न करके काम करो और प्रार्थना करो।"

तुम नियमपूर्वक तार और पत्र लिखते रहो। मालवीयजी को दो-चार दिनों में वहां पहुँच जाना चाहिए।

बापू के आशीर्वाद

—गुजराती। १२।२।१९२२।]

⊙ पीड़ा तो प्रसूता को ही भोगनी पड़ती है। मुझे भी अहिंसा और सत्य-धर्म को जन्म देना है इसलिए उपवास की पीड़ा तो मुझे ही भोगनी होगी।

९८. तार : देवदास गांधी को

बारडोली
१५ फरवरी, १९२२

देवदास
कांग्रेस कमेटी
गोरखपुर

अखबारी गलतबयानियों की परवाह न करो। भूल सुधार दो और भूल जाओ। सब हालात सविस्तार लिखो। मैं बहुत ठीक हूं।

गांधी

—अंग्रेजी। बारडोली, १५।२।१९२२। सा० सं० में प्राप्त पत्र की फोटो-नकल से।]

९९. पत्र : महादेव देसाई को

वारडोली
१५ फरवरी १९२२

प्रिय महादेव,

बहुत लम्बे अर्से से तुम्हारा कोई पत्र नही आया, न तुम्हारे साथ के कैदियो के बारे मे किसी से कुछ मालूम हुआ। तुम्हे जेल से लिखने की अनुमति है या नही, इसके बारे मे मुझे सूचित करना। तुम गुजराती मे पत्र नही लिख सकते, केवल इसी कारण लिखना मत छोड देना, क्योंकि मुझे यह मालूम नही कि तुम्हे जेल मे क्या छूट दी गई है। मैने गोविन्द को कोई पत्र नही लिखा, मुझे उसका ध्यान तो निरन्तर बना रहता है। उसने मुझे बहुत सुन्दर पत्र लिखा है। मालवीय जी ने मुझे गोविन्द और कृष्णकान्त को लिखे अपने पत्रो को उद्धृत करने की अनुमति दे दी है। मैं किसी समय उन्हे उद्धृत करूगा।

मुझे उम्मीद है कि सार्वजनिक सविनय अवज्ञा आन्दोलन स्थगित किये जाने की बात तुम सबको पसन्द आई होगी। अगर तुम्हे 'यग इण्डिया' पढने की अनुमति हो तो तुम 'यग इण्डिया' के आगामी अक[1] मे यह सब देख सकोगे जिसके कारण मैंने आन्दोलन स्थगित किया है। मेरे उपवास को लेकर तुम चिन्ता न करना। जबतक तुम्हे यह पत्र मिलेगा तबतक मेरा छोटा-सा उपवास खत्म हो चुका होगा। मेरा इरादा तो इससे भी बडा उपवास करने का था, लेकिन मैंने सोचा कि मेरे लिए और उन गलती करनेवाले लोगो के लिए, जिनके कारण मैंने यह उपवास किया है, अभी इतना ही काफी है।

मालवीय जी, श्री जयकर और श्री नटराजन् पिछले शनिवार को यहा आये थे। मालवीय जी दो दिन और अन्य लोग एक दिन ठहरे। देवदास अभी तक गोरखपुर मे है और वहा बहुत-अच्छा काम कर रहा है। प्यारेलाल और परसराम[2] इलाहाबाद मे हैं। मैं अभी कुछ दिनो के लिए बारडोली मे हू। आश्रम से मगनलाल और कुछ अन्य लोग भी कुछ दिनो के लिए यहा आये हुए हैं। ये लोग हाथ-करघे और चर्खे के आन्दोलन का प्रसार करने के उद्देश्य से आये हैं।

मेरे उपवास का यह तीसरा दिन है। अभी पौ फटी है, और मैं यह पत्र बोल कर लिखा रहा हू। मुझे उपवास के कारण कोई कमजोरी महसूस नहीं हो रही

---

१. १६ फरवरी, १९२२ का।
२. परशुराम मेहरोत्रा।

है। इसलिए उम्मीद है कि मुझे शुक्रवार को भी ज्यादा कमजोरी महसूस नहीं होगी।

तुम्हारा
बापू

श्रीयुत महादेव ह० देसाई
मार्फत सुपरिण्टेण्डेण्ट
जिला जेल
आगरा

——अंग्रेजी। बारडोली, १५।२।१९२२। सा० सं० में प्राप्त पत्रावली से।]

१००. पत्र : देवदास गांधी को

शुक्रवार (१७ फरवरी, १९२२)[1]

चि० देवदास,

तुम्हारी ओर से कोई पत्र नही आया, यह दुःख की बात है। मैं समझता हूं कि तुम्हे काम रहता है लेकिन ऐसे समय में मै तुमसे पूरी-पूरी रिपोर्ट की आशा तो रखता ही हूं। वह मिले तो मैं (वस्तु स्थिति को) अच्छी तरह समझ सकूंगा और अधिक विचार भी कर सकूगा। सिपाही का काम है कि वह अपने जनरल को सब बातो की पूरी-पूरी रिपोर्ट दे।

उपवास आज अभी एक घण्टे में खत्म हो जायगा। मुझे कमजोरी के अलावा और कोई कष्ट नही हुआ। 'यंग इण्डिया' और 'नवजीवन' तो तुम्हें मिलते ही होंगे।

२४ तारीख को मैं दिल्ली मे होऊंगा। यहाँ से २२ तारीख की शाम को निकलूंगा। २४-२५ के दिन दिल्ली में समझो। बाद मे कदाचित् कलकत्ते जाना पड़े। निश्चित कुछ भी नही है। बा यहीं है।

आशा है, तुम्हारी तबीयत अच्छी होगी।

बापू के आशीर्वाद

---

१. चौरीचौरा हत्याकाण्ड के कारण गांधीजी ने पॉच दिन का जो उपवास किया था, यह पत्र उस उपवास के आखिरी दिन लिखा गया था।

पुनश्च :

यह 'टाइम्स' मे प्रकाशित हुआ है। जवाब देने-जैसा लगे तो देना, मुझे भेजना। कतरन भी वापस भेजना।

बापू

—गुजराती। बारडोली, १७।२।१९२२। सा० सं० मे प्राप्त पत्र की फोटो-नकल से।]

१०१. पत्र : जवाहरलाल को

[आंधी की भांति चलते हुए असहयोग आन्दोलन मे, जब हजारो आदमी जेल, जब्ती तथा अन्य अनेक प्रकार से मातृभूमि के स्वातन्त्र्य-युद्ध मे अपनी भेंट दे रहे थे, चौरी-चौरा (गोरखपुर) मे भयानक हिंसाकाण्ड हुआ। किसानो की एक उत्तेजित भीड़ ने वहां की पुलिस चौकी पर हमला करके उसे जला दिया और सिपाहियों को मार डाला। इस पर क्षुब्ध होकर गाधीजी ने आन्दोलन को स्थगित करने का आदेश प्रचारित किया, जिसे काग्रेस कार्यसमिति ने मजूर कर लिया। उस समय देश के प्राय. सब बडे नेता जेलो मे थे, केवल गाधीजी बाहर थे। उन्हे यह जानकर बडा दु:ख हुआ कि किसी एक समूह के अनैतिक आचरण के कारण एक महान आन्दोलन इस प्रकार वापिस ले लिया गया। जवाहरलाल इत्यादि ने अपनी मानसिक व्यथा गाधीजी तक पहुंचवा दी। गाधीजी ने उसी का जवाब महादेव भाई की पत्नी दुर्गा बहिन-द्वारा जवाहरलाल की बहिन सरूपकुमारी (बाद की विजयलक्ष्मी पण्डित) को इस उद्देश्य से भेजा कि जब वह जेल मे मिलने जाय तो पत्र पढ़कर जवाहरलाल को सुना दें।—सम्पा०]

बारडोली

१९ फरवरी १९२२

प्रिय जवाहरलाल,

मुझे मालूम हुआ है कि तुम सबको कार्यसमिति के प्रस्तावो पर भयकर पीडा हुई है। मुझे तुमसे हमदर्दी है और पिताजी की बात सोचकर मेरा दिल टूटता है। उन्हे जो पीडा हुई होगी, उसकी मैं अपने मन मे कल्पना कर सकता हू। परन्तु मुझे यह भी अनुभव होता है कि यह पत्र अनावश्यक है, क्योंकि मैं

जानता हूं कि पहिले आघात के बाद स्थिति ठीक तरह से समझ में आ गई होगी। बेचारे देवदास की बचपनभरी नासमझियों का हमारे दिमाग पर बहुत बोझ नहीं होना चाहिए। बिल्कुल सम्भव है कि उस गरीब लड़के के पैर उखड़ गये हों और उसका मानसिक सन्तुलन जाता रहा हो। परन्तु इससे इन्कार नहीं किया जा सकता कि असहयोग आन्दोलन से सहानुभूति रखनेवाली क्रोध से पागल भीड़ ने पुलिस के सिपाहियों की बर्बर ढंग से हत्या की। इससे भी इन्कार नहीं किया जा सकता कि वह भीड़ राजनीतिक चेतना रखनेवाली भीड़ थी। ऐसी साफ चेतावनी पर ध्यान न देना बड़ा अपराध होता।

मैं बता दूं कि यह चरम सीमा थी। वाइसराय के नाम मेरी चिट्ठी शंकाओं से रहित नहीं थी, जैसा कि उसकी भाषा से प्रकट है। मद्रास की करतूतों से भी मैं बहुत अशान्त हुआ था, किन्तु मैंने चेतावनी की आवाज को दबा दिया। मुझे कलकत्ता, इलाहाबाद और पंजाब से हिन्दुओं और मुसलमानों के पत्र मिले थे। यह सब गोरखपुर की घटना से पहिले की बात है। उनका कहना था कि सम्पूर्ण दोष सरकारी पक्ष का ही नहीं है, हमारे लोग आक्रामक, हैकड़ और धमकानेवाले बनते जा रहे हैं; हाथ से निकले जा रहे है और उनका रवैया अहिंसक नहीं है। जहां फीरोजपुर जिले की घटना सरकार के लिए अपयशकारी है, वहां हम भी एकदम निर्दोष नहीं हैं। हकीम जी ने बरेली के बारे में शिकायत की। मेरे पास झज्झर के विषय में कड़ी शिकायतें हैं। शाहजहांपुर में भी टाउनहाल पर ज़बर्दस्ती कब्जा करने की कोशिश की गई। कन्नौज से भी स्वयं कांग्रेस के मन्त्री ने तार दिया कि स्वयंसेवक उद्दण्ड हो गये हैं और हाईस्कूल पर धरना देकर सोलह वर्ष से छोटे लड़कों को स्कूल जाने से रोक रहे हैं। गोरखपुर में छत्तीस हजार स्वयंसेवक भरती किये गये, जिनमें से सौ भी कांग्रेस की प्रतिज्ञा का पालन नहीं करते। जमनालाल जी मुझे बताते हैं कि कलकत्ता में घोर असंगठन है। स्वयंसेवक विदेशी कपड़े पहनते हैं और अहिंसा की प्रतिज्ञा से कतई बंधे हुए नहीं हैं। ये सब खबरें और दक्षिण से आई इससे भी अधिक सूचनाएँ मेरे पास थीं, तब चौरी-चौरा के समाचारों ने बारूद में जबर्दस्त चिनगारी का काम दिया और आग लग गई। मैं उन्हें विश्वास दिलाता हूं कि यदि यह चीज स्थगित न कर दी जाती तो हम एक अहिंसक आन्दोलन के स्थान पर वस्तुतः हिंसक संग्राम को चलाते। यह निस्सन्देह सत्य है कि देश के एक कोने से दूसरे कोने तक अहिंसा गुलाब के इत्र की सुगन्ध की भाँति फैल रही है। परन्तु हिंसा की दुर्गन्ध भी अभी तक प्रबल है और उसकी उपेक्षा करना, उसे तुच्छ समझना, बुद्धिमानी नहीं है। हमारे इस तरह पीछे हटने से काम आगे बढ़ेगा। आन्दोलन, अनजाने ही, सही रास्ते से हट गया था। अब

हमने अपनी पतवार फिर सँभाल ली है और सीधे आगे जा सकते हैं। घटनाओ को सही रूप मे देखने के लिए तुम्हारी स्थिति जितनी प्रतिकूल है मेरी उतनी ही अनुकूल है।

दक्षिण-अफ्रीका का अपना अनुभव मैं बताऊँ? जेलो मे हमारे पास तरह-तरह की खबरें पहुँचाई जाती थी। अपने पहिले अनुभव के दो-तीन दिनो मे तो मैं इधर-उधर के समाचार सुनकर प्रसन्न होता रहा, किन्तु मैंने तुरन्त समझ लिया कि इस रिश्वतखोरी मे मेरा दिलचस्पी लेना बिल्कुल व्यर्थ है। मैं कुछ कर तो सकता नही था, मेरे किसी सन्देश के भेजने से कोई लाभ नही था और मैं व्यर्थ अपनी आत्मा को कष्ट पहुँचाता था। मैंने अनुभव किया कि जेल मे बैठकर आन्दोलन का पथ-प्रदर्शन करना मेरे लिए असम्भव है। इसलिए मैं तो तबतक प्रतीक्षा ही करता रहा जबतक बाहरवालो से मुलाकात होकर खुलकर बातें नही हुईं। फिर भी मेरी बात सच मानो कि मैंने दिमागी दिलचस्पी ही ली, क्योकि मैंने अनुभव किया कि किसी बात का निर्णय करना मेरे अधिकार के बाहर है। और मुझे मालूम हो गया कि मैं सही रास्ते पर हू। मुझे याद है कि किस तरह हर बार मेरे जेल से छूटने के समय तक जो विचार बनते थे, वे रिहाई के बाद और रूबरू जानकारी मिलने पर तुरन्त बदल जाते थे। जो हो, जेल के वायुमण्डल के कारण हमारे मन मे सारी बातें नही रहती। इसलिए मैं चाहूँगा कि तुम बाहर की दुनिया को अपने खयाल से ही निकाल दो और यही समझ लो कि वह है ही नही। मैं जानता हू कि यह काम बहुत ही कठिन है, परन्तु यदि कोई गम्भीर अध्ययन शुरू कर दो और कोई शरीर-श्रम का काम हाथ मे ले लो तो यह काम हो सकता है। सबसे बडी बात यह है कि तुम कुछ भी करो किन्तु चर्खे से न उकताओ। तुम्हारे और मेरे पास बहुत-सी बातें करने और बहुत-सी मान्यताए रखने पर अपने-आपसे अरुचि होने के कारण हो सकते हैं, किन्तु इस बात पर अफसोस करने का कभी कारण न मिलेगा कि हमने चर्खे पर श्रद्धा क्यो केन्द्रित कर ली या मातृभूमि के नाम पर हमने नित्य इतना अच्छा सूत क्यो काता। तुम्हारे पास "साग सिलेशियल" है। मैं तुम्हें एडविन आर्नल्ड जैसा अप्रतिम अनुवाद तो नही दे सकता, किन्तु मूल सस्कृत का उल्था यो है —"शक्ति व्यर्थ नही जाती, नष्ट तो होती ही नही। थोडे-से धर्म से भी मनुष्य कई बार गिरने से बच जाता है।"[1] इस धर्म का आशय

---

१. नेहाभिक्रमनाशोऽस्ति प्रत्यवायो न विद्यते।
स्वल्पमप्यस्य धर्मस्य त्रायते महतो भयात्॥

—गीता, २–४०।

कर्मयोग से है और हमारे युग का कर्मयोग चर्खा है। प्यारेलाल की मार्फत तुमने मुझे खून सुखानेवाली खुराक पिलाई है, उसके बाद तुम्हारा उत्साहवर्द्धक पत्र आना चाहिए।

तुम्हारा
मो० क० गांधी

प्रिय सरूप,

यदि तुम्हारा खयाल हो कि उपर्युक्त पत्र से लखनऊ के वन्दियों को कुछ ढाढ़स मिल सकता है तो अगली मुलाकात में जवाहरलाल को पढ़कर सुना देना। वैसे भी मुझे अवश्य वताना कि वहां के क्या हाल-चाल हैं। आशा है, तुम लोगों में से कोई दिल्ली जा रहा है। तुम्हारे नाम पिता जी के पत्रों में से एक रणजीत[1] ने मेरे पढ़ने के लिए भेजा था।

तुम्हारा
वापू

वारडोली
२०।२।१६२२

प्यारेलाल वताते हैं कि तुम्हारे नाम भेजे पत्र देर से मिल सकते हैं। इसलिए यह पत्र दुर्गा[2] की मार्फत भेजा जा रहा है।

—अंग्रेजी। वारडोली, २०।२।१९२२। नेहरू संग्रहालय, नई दिल्ली में प्राप्त पत्रावली से।]

१. श्री रणजीत पण्डित, सरूपकुमारी (बाद की विजयलक्ष्मी) के पति।
२. उस समय 'इण्डिपेण्डेण्ट' के सम्पादकीय विभाग में काम करनेवाले महादेव भाई देसाई की पत्नी।

१०२. तार : देवदास गांधी को

वारडोली
२० फरवरी, १९२२

देवदास गाधी
काग्रेस कमेटी
गोरखपुर

यदि सम्भव हो तो दिल्ली अवश्य आओ।[1]

—वापू

—अंग्रेजी। वारडोली, २०।२।१९२२। सा० स० में प्राप्त पत्रावली से।]

१०३. पत्र : मुहम्मद अली को[2]

सैसून अस्पताल
पूना
७ फरवरी, १९२४

प्यारे दोस्त और भाई

आपके काग्रेस अध्यक्ष होने के नाते मैं आपको कुछ शव्द लिख रहा हू। मैं जानता हू कि मेरी इस अचानक रिहाई के सम्वन्ध मे मेरे देश-भाई मुझसे कुछ सुनने की आशा रखते हैं। मुझे खेद है कि सरकार ने मुझे वीमारी के कारण अवधि के पहिले छोड दिया है। ऐसी रिहाई मेरी प्रसन्नता का कारण नही वन सकती क्योकि मैं मानता हू कि कोई कैदी वीमारी के आवार पर रिहा नही किया जा सकता।

---

१. २४ और २५ फरवरी को होने वाली अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटी की वैठक मे भाग लेने के लिए गांधीजी अपने पांच दिन के उपवास के वाद दिल्ली के लिए रवाना होने वाले थे।

२. यह पत्र ८।२।१९२४ के वाम्वे क्रानिकल और हिन्दू मे भी प्रकाशित किया गया था।

वीमारी के दिनों में जेल और अस्पताल के अधिकारियों ने पूरी मेरी देखभाल की है, यदि यह बात मैं आपसे और आपके द्वारा सर्वसाधारण से न कहूं तो यह अकृतज्ञता होगी। यरवदा जेल के सुपरिण्टेण्डेण्ट कर्नल मरे को ज्योंही मेरी वीमारी के जरा भी गम्भीर होने का शक हुआ, त्योंही उन्होंने कर्नल मैडाक को अपनी मदद के लिए वुलाया और इसमें सन्देह नही कि मेरे लिए जल्दी-से-जल्दी अच्छे-से-अच्छे इलाज की व्यवस्था की गई। मुझे डेविड अस्पताल और सैसून अस्पताल में जल्दी-से-जल्दी पहुँचाया गया। कर्नल मैडाक तथा उनके अमले ने वड़ी चिन्ता और ममता के साथ मेरी शुश्रूषा की है। मै उन नर्सों का उल्लेख करना भी कैसे भूल सकता हूं जिन्होंने मेरी स्नेहपूर्ण परिचर्या की है। यद्यपि अव अस्पताल में रहना न रहना मेरी मर्जी की वात है, पर मैं जानता हूं कि इससे अच्छा इलाज दूसरी जगह नही हो सकता। मैंने कर्नल मैडाक की कृपापूर्ण अनुमति से यह तय किया है कि जवतक विलकुल घाव अच्छा न हो जाय और फिर किसी इलाज की जरूरत न रहे तवतक मैं उन्ही की देखरेख में रहूं।

इससे जनता आसानी से यह समझ सकती है कि अभी कुछ समय तक मैं सक्रिय कार्य के सर्वथा अयोग्य रहूंगा। जो लोग यह चाहते है कि मैं शीघ्र ही सार्वजनिक कार्यक्षेत्र में उतर पड़ूं, यदि वे मुझसे मिलने आने की अपनी स्वाभाविक इच्छा को रोके रहें तो यह जल्दी सम्भव हो सकेगा। मैं अभी इस योग्य नही हूं कि वहुत से लोगों से मिल-जुल सकू और शायद कुछ सप्ताहों तक यही हाल रहेगा। मित्रगण, आज अपना जितना समय राष्ट्रीय कार्यों और खासकर चर्खा कातने मे लगा रहे हैं यदि वे उससे अधिक समय लगाने लगें तो मै उनके प्रेम को अधिक मूल्यवान मानूंगा।

अपनी इस रिहाई से मुझे कोई राहत नही मिली। तव तो मैं जिम्मेदारियों से मुक्त था, उन दिनों मेरा सिर्फ इतना ही काम था कि मैं अपने को जेल-जीवन के अनुशासन में रक्खू और अधिक कार्यक्षम वनूं; अव ऐसी जिम्मेदारियों के खयाल मुझे घेरे हुए है कि जिन्हे उठाने में मैं इस समय असमर्थ हूँ। मेरे पास वधाई के तौर पर तार आ रहे है। मेरे प्रति मेरे देश-भाइयो के प्रेम के जो वहुत से सवूत मिलते रहे ह, इनसे उनकी संख्या में वृद्धि हो गई है। इससे मुझे स्वभावतः खुशी और तसल्ली तो होती है, पर कितने ही तार ऐसे भी आये है जिनसे यह जाहिर होता है कि देश मेरी सेवाओं से वड़े-वड़े परिणामों की आशा लगाये वैठा है और यह वात मुझे विकल वनाये हुए है। यह खयाल कि मैं अपने सामने पड़े हुए कामो को निभाने मे विलकुल असमर्थ हूँ, मेरे गर्व को चूर-चूर कर देता है।

यद्यपि मैं देश की मौजूदा हालत के वारे में वहुत कम जानता हूँ फिर भी

मेरे पास यह समझ सकने के लिए पर्याप्त जानकारी है कि देश की समस्याएँ बारडोली के प्रस्तावो के समय जितनी जटिल थी, आज उससे भी अधिक जटिल हो गई हैं। यह बिल्कुल स्पष्ट है कि हिन्दू-मुसलमान, सिख-पारसी, ईसाई तथा दूसरी जातियो की एकता के बिना स्वराज्य की बात करना ही व्यर्थ है। जिस एकता को मैं १९२२ मे गलती से देश मे लगभग पूर्णत स्थापित समझता था, देखता हूँ कि जहाँ तक हिन्दू-मुसलमानो का ताल्लुक है उसमे बडा व्यवधान उपस्थित हो गया है। परस्पर विश्वास की जगह अविश्वास ने ले ली है। यदि हमे आजादी हासिल करनी है तो विभिन्न जातियो को मित्रता के अटूट बन्धन मे बांधना ही होगा। मेरी रिहाई पर राष्ट्र जिस सद्भावना का प्रदर्शन कर रहा है, क्या वह विभिन्न जातियो की पक्की एकता के रूप मे परिणत हो सकेगी ? किसी भी उपचार, या विश्राम की अपेक्षा मैं इस तरह कही जल्दी स्वास्थ्य-लाभ कर सकूंगा। जब जेल मे मैंने सुना कि कुछ स्थानो मे हिन्दुओ और मुसलमानो के बीच तनातनी की हालत है तब मेरे मन मे उदासी छा गई। मुझे डाक्टरो ने आराम करने की सलाह दी है। किन्तु जबतक आपसी फूट का घुन मेरे मन को खा रहा है तबतक डाक्टरो के बताये हुए विश्राम से मुझे आराम नही मिलसे का। जो लोग मेरे प्रति प्रेम-भाव रखते हैं उन सबसे मेरा अनुरोध है कि वे इस प्रेम का उपयोग उस एकता को बढ़ाने मे करें जो हम सबको प्रिय है। मैं जानता हूँ कि यह काम कठिन है किन्तु हमारे अन्दर ईश्वर के प्रति जीवन्त श्रद्धा हो तो कोई भी काम कठिन नही। आइए, हम अपनी कमजोरियो को समझें और ईश्वर की शरण मे जायें, वह अवश्य मदद करेगा। कमजोरी मे डर और डर से अविश्वास पैदा होता है। आइए, हम दोनो डर को अपने दिल से निकाल दें। मैं जानता हूँ कि यदि हममे से एक भी अपने डर को दूर कर दें तो हमारे लडाई-झगडे बन्द हो जायें। मैं तो यहाँ तक कहता हूँ कि आपके कार्य-काल का महत्व केवल इस बात से आंका जायगा कि आप एकता के लिए क्या कर रहे हैं। मैं जानता हूँ कि हम एक दूसरे से भाई की तरह प्रेम करते हैं। इसलिए मैं आपसे प्रार्थना करता हूँ कि मेरी चिन्ताओ मे हाथ बटाइए और मेरी मदद कीजिए, जिससे मैं अपनी बीमारी के दिन हलके मन से बिता सकूं।

यदि हम सिर्फ देश की बढती हुई दरिद्रता का चित्र अपनी आंखो के सामने ला सकें और यह समझें कि चर्खा ही इस रोग की एकमात्र दवा है तो वही एक काम हमे लडने के लिए फुरसत नही मिलने देगा। मुझे पिछले दो वर्षो के दौरान गहराई के साथ सोचने के लिए काफी समय और एकान्त मिला है। उसने मेरे विश्वास को बारडोली कार्यक्रम की क्षमता मे और इसलिए भिन्न-भिन्न जातियो की एकता,

चर्खे, अस्पृश्यता-निवारण और स्वराज्य के लिए कायिक, वाचिक, मानसिक अहिंसा की अनिवार्यता में और भी अधिक दृढ़ बना दिया है। यदि हम ईमानदारी के साथ इस कार्यक्रम को पूरा-पूरा चलायें तो हमें सविनय अवज्ञा का सहारा लेने की जरा भी आवश्यकता नहीं है और मेरा खयाल है कि उसकी कभी आवश्यकता भी नहीं होगी। तथापि मैं यह जरूर कहूँगा कि एकान्त में प्रार्थनापूर्वक चिन्तन और मनन करने पर भी सविनय अवज्ञा की क्षमता तथा उसके औचित्य पर मेरा विश्वास जरा भी कम नहीं हुआ है। मैं इस बात को पहले से भी अधिक दृढ़ता के साथ मानता हूँ कि जब किसी व्यक्ति या राष्ट्र भी आत्मा पर ही आघात हो रहा हो तब सविनय अवज्ञा में कम खतरा है। युद्ध के अन्त में जहाँ विजेता और विजित दोनों को हानि पहुँचती है वहाँ सविनय अवज्ञा दोनों का मंगल करती है।

आप मुझसे इस बात की उम्मीद नहीं रक्खेंगे मैं कि यहाँ कांग्रेसियों के विधान परिषदों तथा सभाओं में प्रवेश के जटिल प्रश्न पर अपनी राय जाहिर करूँ। यद्यपि मैंने परिषदों, अदालतों और सरकारी शिक्षालयों के बहिष्कार के सम्बन्ध में अपनी राय किसी भी रूप में नहीं बदली है, तथापि दिल्ली में जो परिवर्तन किये गये उनके सम्बन्ध में अपनी राय कायम करने योग्य सामग्री अभी मेरे पास नहीं है और इस पर तबतक अपनी राय जाहिर करने का मेरा इरादा नहीं है जबतक कि मुझे उन प्रसिद्ध देश-भाइयों से इस प्रश्न पर विचार करने का अवसर नहीं मिलता, जिन्होंने देश-हित के खयाल से विधान-सभाओं के बहिष्कार हटा लेना जरूरी माना है।

अन्त में मैं अपनी मार्फत बधाई भेजने वाले तमाम सज्जनों को धन्यवाद देता हूँ। हर शख्स को अलहदा उत्तर देना मेरे लिए असम्भव है। कितने ही पत्र नरम दल के अपने मित्रों की ओर से भी मुझे मिले हैं, यह देखकर मुझे बड़ी खुशी हुई। मेरा उनसे कोई झगड़ा नहीं है और न असहयोगियों का ही हो सकता है। नरम दलवाले भी देश के हितैषी हैं और प्रामाणिक रूप से अपनी मान्यताओं के अनुसार देश की सेवा करते हैं। यदि हम समझते हों कि वे गलती पर हैं, तो हम मित्र-भाव और धीरज के साथ उनसे दलील करके ही उन्हें अपने पक्ष में लाने की आशा कर सकते हैं, उन्हें गालियाँ देकर हरगिज नहीं। वस्तुतः हम अंग्रेजों को भी अपना मित्र समझना चाहते हैं; उन्हें अपना शत्रु समझकर उनके सम्बन्ध में कोई गलत खयाल नहीं बनाना चाहते। यदि आज ब्रिटिश सरकार के साथ हमारी लड़ाई चल रही है तो वह उनके खिलाफ नहीं बल्कि उनकी शासनप्रणाली के खिलाफ है। मुझे मालूम है कि हममें से बहुतों ने इस बात को नहीं समझा है और हमेशा

इस भेद को ध्यान मे नही रक्खा है और जिस हद तक हमने इसमे गफलत की है उस हद तक खुद अपना ही नुकसान किया है।

आपका सच्चा मित्र और भाई
मो० क० गाधी

—अंग्रेजी। पूना, ७।२।१९२४। यं० इ०, १४।२।१९२४।]

१०४. तार : मुहम्मद अली को[1]

पूना
२४ फरवरी, १९२४ या उसके पश्चात

समिति के मार्गदर्शन के लिए पर्याप्त जानकारी अथवा योग्यता नही।

गाधी

—अंग्रेजी। पूना, २४।२।१९२४। सं० गा० वा० खण्ड २३, पृ० २२४ से।]

१०५. पत्र : मुहम्मद अली को

सैसून अस्पताल
पूना
५ मार्च, १९२४

प्यारे दोस्त और भाई,

आपके दुःख मे मेरी पूरी सहानुभूति आपके साथ है। अमीना की बीमारी का दु खद व्यौरा हयात ने मुझे लिखा है।[2] मैंने अखबार मे भी पढ़ा था कि आप

---

१. यह मुहम्मद अली के २४ फरवरी, १९२४ के इस तार के उत्तर मे भेजा गया था "आवश्यक समझें तो हाल मे उत्पन्न स्थिति पर दिल्ली मे २६ को होने वाली कार्यसमिति को तार से सन्देश तथा आदेश दें" (एस० एन० ८३७१)।

२ अलीगढ़ राष्ट्रीय विश्वविद्यालय के एच० एम० हयात ने २८ फरवरी को गाधीजी को पत्र लिखा था। मुहम्मद अली की बेटी अमीना का स्वर्गवास इसके एक महीने बाद हुआ था।

सिन्ध के खिलाफत सम्मेलन में भाग नही ले सके। इसी बात से जाहिर होता है कि वह कितनी बीमार है। ईश्वर हमारी परीक्षा कई तरह से लेता है। वह जानना चाहता है कि उसका बन्दा जिन तकलीफों से बचा रहना चाहता है; वे अगर आही पड़ें तो उस समय उसका क्या आचरण होगा। मैं जानता हूँ कि परिणाम चाहे कुछ भी हो, आप इस परीक्षा में खरे उतरेंगे। अमीना को मेरी ओर से ढाढस बँधायें और कहें कि जिनका भगवान में विश्वास है उन्हें भगवान चाहे धरती पर रक्खे चाहे उठा ले, दोनों स्थितियों में उनका कल्याण है। मैं जानता हूँ कि आपकी बहादुर बीबी इस संकट की घड़ी में वही करेगी जिसकी उनसे आशा की जाती है।

—अंग्रेजी। पूना, ५।३।१९२४। अमृत बाजार पत्रिका, ११।३।१९२४]

१०६. पत्र : महेन्द्र प्रताप को[1]

पोस्ट अन्धेरी
१५ मार्च, १९२४

प्रिय मित्र,

आपका पत्र पाकर बहुत प्रसन्नता हुई। मैं जब प्रेम विद्यालय गया था, तब मेरा खयाल है, भाई कोतवाल ने आपके सम्बन्ध में मुझसे बातचीत की थी। यद्यपि यह सच है कि हमें प्रकृति में अच्छी और बुरी दोनों तरह की शक्तियाँ पूरे जोरों पर काम करती दिखाई देती हैं किन्तु मेरा निश्चित विश्वास है कि इस शाश्वत द्वन्द्व से ऊपर उठना तथा चित्त की समवृत्ति प्राप्त करना मनुष्य का अपना विशिष्ट अधिकार है। और इसे प्राप्त करने का एक मात्र उपाय है सत्यबल; दूसरे शब्दों में प्रेम-बल अथवा आत्मिक बल पर पूर्णतया आचरण करना। मै यह बात तर्क-द्वारा सिद्ध करके बताऊँ, इसकी अपेक्षा तो आप मुझसे नहीं ही करेंगे। इस सम्बन्ध में मैं केवल अपने दीर्घ-कालीन अनुभव से उत्पन्न दृढ़ विश्वास को ही आपके सामने रख सकता हूं। इस सुदीर्घ अनुभव के दौरान मुझे स्मरण नहीं आता कि मेरे सामने एक भी ऐसा अवसर आया हो, जब किसी समस्या के समाधान के लिए सत्यबल का सहारा लेने पर मुझे पूरी सफलता न मिली हो।

---

१. राजा, सुप्रसिद्ध क्रान्तिकारी तथा प्रेम-महाविद्यालय, वृन्दावन के संस्थापक।

नि सन्देह इसके लिए धैर्य, विनम्रता और इसी तरह के अन्य गुणो का विकास करना जरूरी होता है।

हृदय से आपका,

श्री एम० प्रताप
वाग वावर
कावुल

—अंग्रेजी, अन्धेरी, १५।३।१९२४। सा० स० मे प्राप्त पत्र की फोटो-नकल से।]

१०७. पत्र : जवाहरलाल नेहरू को

पोस्ट अन्धेरी
१५ मार्च, १९२४

प्रिय जवाहरलाल,

तुम्हारा पत्र[1] मिला। पणिक्कर के सम्वन्ध मे तुम्हारा और मुहम्मद अली का, दोनो तार पहिले ही मिल गये थे। तुम्हारे पत्र से मै कुछ परेशानी मे पड गया हूँ।

---

१. प्रतीत होता है कि गाधी जी ने १२ मार्च को पण्डित जवाहरलाल नेहरू को तार दिया था। उक्त तार उपलब्ध नहीं है। श्री नेहरू ने १३ मार्च को इसका उत्तर दिया। उन्होने लिखा था : "श्री पणिक्कर प्रसिद्ध व्यक्ति हैं। मैं कई वर्षों से उन्हें जानता हूँ। कोकोनाडा मे कुछ समय के लिए मैं उनसे मिला भी हूँ। मुझ विश्वास है कि अमृतसर मे उनकी उपस्थिति उपयोगी सिद्ध होगी। उनमे एक कमी अवश्य है कि वह हिन्दुस्तानी नहीं जानते, लेकिन उनकी अन्य अनेक योग्यताए इस कमी को बखूबी पूरा कर देंगी। प्रचार कार्य के लिए वह अत्यन्त उपयोगी व्यक्ति साबित होंगे। भाषा-सम्वन्धी कठिनाई के कारण, शायद वह सिखो और हिन्दुओ को एक दूसरे को समीप लाने मे बहुत अधिक सहायक नहीं होंगे। लेकिन कुल मिलाकर श्री पणिक्कर अमृतसर के लिए एक उपलब्धि ही होगे। जहाँ तक नौकरी की शर्तें तय करने की वात है, आप जो कुछ भी उचित समझेंगे वह निःसन्देह सव लोगो को मान्य होगा। जहाँ तक कार्य-समिति की विधिवत् वैठक की वात है, वह २१ अप्रैल तक न हो सकेगी। आपके तार मे नौकरी की जिन शर्तों के सुझाव

नियुक्तियाँ और वेतन-निर्धारण आदि के बारे में कोई निश्चित मत बनाने का न मेरा इरादा कभी रहा और न इस समय है। चूंकि मैं जोजेफ के इस विचार से सहमत था कि पत्नी जब इतने कष्ट में है तब उनका उसके पास रहना जरूरी है और चूंकि जो सिख भाई मुझसे मिलने आये, वे इस बात के लिए बहुत उत्सुक जान पड़े कि गिडवानी के स्थान पर कोई अच्छा व्यक्ति मिल जाय, ऐसा व्यक्ति जो उनके पत्र 'आनवर्ड' का सम्पादन-भार भी सम्हाल ले, इसलिए मैं उसकी तलाश में था। वे सुन्दरम को लेना चाहते थे, जो 'इण्डिपेण्डेण्ट' में काम करते थे, और उन्होंने कहा कि वह प्रचार-कार्य और सम्पादन दोनों कर सकते है। जब मैं अन्वेरी के निकट स्थित विश्राम-गृह में आया तो यहीं पणिक्कर से मेरी मुलाकात हुई। श्री पणिक्कर को 'इण्डियन डेलीमेल' ने अपने यहाँ नौकरी करने को आमन्त्रित किया था। वह श्री एण्डरूज से इसी सम्बन्ध में सलाह-मशविरा करने आये थे। वह इस नौकरी को स्वीकार करने में हिचकिचा रहे थे, क्योंकि 'मेल' का राजनीतिक दृष्टिकोण उनके विचारों से भिन्न था, तब मुझे प्रचार कार्य का ध्यान आया और मैंने उनसे पूछा कि क्या वह इस भार को सँभाल सकेंगे। चूंकि मैं उन्हें अच्छी तरह से नहीं जानता था, मैंने श्री एण्डरूज से भी सलाह की, और जब श्री पणिक्कर ने यह कहा कि अगर नेहरू जी को जरूरत हो तो मैं अमृतसर जा सकता हूँ। और चूंकि एण्डरूज की राय थी कि वह श्री गिडवानी के स्थान पर योग्य ठहरेंगे, मैंने तुम्हें तार कर दिया। लेकिन मेरी यह इच्छा नहीं थी कि तुम सिर्फ इसलिए अपने निर्णय में कोई रद्दोबदल करो कि तार मैंने भेजा है। यदि मैं स्वस्थ होता और सभी तथ्यों की जानकारी पा सकता तो मैं उम्मीदवारों के चुनाव के सम्बन्ध में बेशक, अपनी सलाह और विचार व्यक्त करता। लेकिन इस समय तो मैं उन चन्द बातों के अलावा, जो अत्यन्त आवश्यक हैं, और किसी भी बात में अपनी शक्ति नहीं लगाना चाहता।

हैं वे कुछ हद तक पेचीदा हैं। लेकिन यह तो आपके तय करने की बात है। मुझे यह जानकर खुशी हुई कि श्री पणिक्कर अमृतसर में लम्बे समय तक रहने का इरादा रखते हैं। वैसे मेरा निजी ख्याल यह है कि वहाँ उन्हें ज्यादा अर्से तक रखना आवश्यक न होगा। बहुत सम्भव है कि गिडवानी शीघ्र ही रिहा हो जायँ और यह भी उतना ही सम्भव है कि गिडवानी का उत्तराधिकारी (श्री पणिक्कर) भी जल्दी ही गिरफ्तार कर लिया जाय। निःसन्देह श्री पणिक्कर अकारण ही कोई ऐसा काम नहीं करेंगे जिससे उन्हें जेल जाना पड़े, लेकिन श्री गिडवानी ने भी तो ऐसा नहीं किया था।"

जहाँ तक वेतन का सवाल है, स्थिति यह थी। पणिक्कर 'स्वराज्य' कार्यालय मे ७०० रुपये माहवार पर नियुक्त हुए थे, लेकिन चूकि पत्र आत्मनिर्भर नही है, वे लोग उन्हे कुछ महीनो का वेतन नही दे पाये है। श्री पणिक्कर ने नौकरी छोड दी, क्योकि इस सवाल पर श्री श्रीनिवास आयगार से उनका समझौता नही हो पाया। उन्हे मद्रास मे ६०० रुपये का एक कर्ज चुकाना है। उन्हे ३०० रुपये माहवार की जरूरत है। इसलिए मैंने सोचा उन्हे ६०० रुपये पेशगी दे दिये जायें तो वे अपना कर्ज चुकाकर अमृतसर के लिए रवाना हो जायेंगे। अमृतसर मे अपना खर्च चलाने के लिए तो उन्हे फिर भी पैसो की जरूरत होगी ही। इसके लिए उन्हे ऋण के रूप मे १०० रुपये प्रतिमास दिया जाना चाहिए। इस तरह तीन महीने नौकरी करने के वाद वह काग्रेस के ३०० रुपये के कर्जदार होंगे। फिर यह रकम १०० रुपये प्रतिमास के हिसाव से उनके वेतन से ली जा सकती है। इसका अर्थ यह हुआ कि उन्हे जो कर्ज मिलेगा उसे चुकाने के लिए उन्हे छ. महीने तक काम करना होगा। लेकिन अव मैं परेशानी मे पड गया हूँ, क्योकि तुम्हारे पत्र के द्वारा पता चलता है कि इतने अर्से के लिए शायद उनकी सेवाओ की जरूरत नहीं पडेगी। मैं काग्रेस पर व्यर्थ का खर्च लादने का निमित्त नही वनना चाहूँगा। इसलिए मै सारी स्थिति श्री पाणिक्कर के सम्मुख रख देना चाहता हूँ। वह शायद इस वात पर सहमत हो जायेंगे कि अगर उनकी नौकरी छ महीने से पहले ही खत्म हो गई तो वह कर्ज की वकाया रकम अदा करने के लिए जिम्मेदार होंगे। वह इस समय यहाँ नही हैं, अन्यथा मैं तुम्हे अधिक निश्चित पत्र भेजता।

मेरा खयाल है, मुमकिन हुआ तो तुम नही चाहोगे कि मैं नौकरी की वावत पणिक्कर के साथ तय हुई वात तोड दूं। इसलिए उस वात को वरकरार रखकर मैं उन्हे कल अमृतसर भेज रहा हूँ। तुम्हारे सवसे आखिरी तार के मुताविक वह सीधे अमृतसर जायेंगे। मैं श्री पणिक्कर को जो रकम दूंगा, तुम खजाची से वह रकम फिर मुझे वापस देने को कह देना।

निश्चय ही अगर मेरा इरादा तुमसे अपने विचारो के अनुसार काम कराने का हो तो मैं तुमसे हर नियुक्ति के वारे मे दो वातो को ध्यान मे रखकर फिर से विचार करने के लिए कहूँगा।

(१) क्या काग्रेस को काग्रेस से वाहर के कार्य पर पैसा खर्च करना चाहिए ?

(२) काग्रेस को अपने सेवको को अधिक-से-अधिक कितना वेतन देना चाहिए ?

यह तो हुई काम-काज की वात। मेरा घाव पूरी तरह भर गया है, लेकिन चीरे की जगह अभी नरम है और उसके वारे मे देखभाल और सावधानी रखना अत्यन्त

आवश्यक है। अभी जो मैं समुद्र-तट पर आराम ले रहा हूँ, आशा है वह अनुकूल पड़ेगा। इसलिए सामान्यतया यहाँ तीन महीने रहने का इरादा करता हूँ। इस अवधि में मुझसे जितना हो सकेगा उतना ही लिखने का काम करूँगा और कौंसिल-प्रवेश आदि के सम्बन्ध में नेताओं से सलाह-मशविरा करता रहूंगा। इस महीने के अन्त तक (तुम्हारे) पिता जी, हकीम जी और अन्य लोगो के यहाँ आने की आशा है। मेरे साथ सलाह-मशविरा करने के लिए जब भी तुम्हारी इच्छा हो तुम निःसंकोच यहाँ आ जाया करो। चाहे जो हो, मुझे उम्मीद है कि तुम अगले महीने की २० तारीख के आस-पास तो मुझसे मिलने आओगे ही, क्योकि मुझे मालूम हुआ है कि इस तारीख को कांग्रेस कार्य-समिति की बैठक होनेवाली है। मुझे विश्वास है, तुम स्वस्थ हो और अपने स्वास्थ्य का पूरा ध्यान रख रहे हो।

पणिक्कर ने इस पत्र को पढ़ लिया है और तुम जब भी चाहोगे, वह नौकरी से मुक्त होने तथा कर्ज की बाकी रकम चुकाने के लिए तैयार रहेंगे।

हृदय से तुम्हारा,

पण्डित जवाहरलाल नेहरू।

—अंग्रेजी। अँधेरी, १५।३।१९२४। सं० गां० वां० खण्ड २३ से।]

१०८. पत्र : शौकत अली को

१८ मार्च, १९२४

प्रिय मित्र तथा बड़े भाई,

आपको मियादी बुखार या किसी भी बुखार का होना ठीक नही। हमारे बीच बीमारी मेरी ही किस्मत में रहे। लेकिन मै आपको लम्बा पत्र देकर परेशान नही करूँगा। ईश्वर आपको शीघ्र ही स्वस्थ करे।

हृदय से आपका

मो० क० गांधी

—अंग्रेजी। १८।३।१९२४। **सा० सं० में प्राप्त पत्रावली से।]**

१०९. पत्र : मोतीलाल नेहरू को

अन्वेरी
१८ मार्च, १९२४

प्रिय मोतीलाल जी[1],

वित्त विधेयक की[2] अस्वीकृति के बारे मे आपका तार मिला। मैं इससे प्रसन्न हुआ हूँ क्योंकि इस विजय से आप प्रसन्न हुए हैं। किन्तु मैं इसे लेकर बहुत खुशी दिखाने से रहा, और मैं इस विजय से चकित भी नही हुआ हूँ। उचित अनुशासन और कौशल का उपयोग करने पर इसका सब जाना असम्भव नही था और मैंने आपकी जबरदस्त व्यवहारकुशलता, कायल कर देने वाली वाग्मिता और धमकियो के सामने आपके धैर्य पर कभी भी सन्देह नही किया। मैं आपसे पूरी तरह सहमत हूँ कि यदि आपके पास सगठन के लिए और समय होता और आपको देश का अधिक समर्थन प्राप्त होता तो आप प्रान्तीय तथा केन्द्रीय विधान सभा मे बाजी मार ले जाते। फिर भी मैं एक बात अपने मन को समझा नही पा रहा हूँ। इसके बारे मे मैंने लाला जी[3] से थोडी बात . . की थी। तब से मैं बराबर उसी दिशा मे सोचता रहा हूँ। एक बार तो यह भी मन मे आया कि मैं अपने विचार व्यक्त करते हुए एक लम्बा-सा पत्र लिखवा भेजूँ। किन्तु मैंने लिखवाया नही। इसके तीन कारण रहे। एक तो मुझे इसी मे सन्देह था कि यह उचित होगा कि नही। दूसरे आपकी व्यस्तता को मैं जानता हूँ। इसलिए लम्बा पत्र न लिखना ठीक जान पडा। और तीसरे यह कि मैं अपने रोजमर्रा के आवश्यक कार्यों के लिए अपनी शक्ति सुरक्षित रखना चाहता था। यदि आप मूल कार्य-क्रम को पूरा करने मे सफल हो गये तो फिर हम जल्दी ही मिलेंगे।

---

१. पण्डित मोतीलाल नेहरू (१८६१-१९३१), वकील और राजनीतिज्ञ, भारतीय राष्ट्रीय काग्रेस के दो बार अध्यक्ष।

२. १७ मार्च को मदनमोहन मालवीय के एक प्रस्ताव पर केन्द्रीय विधान सभा ने वित्त विधेयक पर विचार करने के लिए लाये गये एक प्रस्ताव को ५७ के विरुद्ध ६० मतो से ठुकरा दिया था। १८ मार्च को मोतीलाल नेहरू ने तार मे लिखा था कि वाइसराय की सिफारिश से आज फिर वित्त विधेयक लाया गया। विधान सभा ने बिना मत लिए अनुमति देने से इन्कार कर दिया।

३. लाला लाजपतराय।

दारी करने से मुझे कितनी खुशी हासिल होगी, लेकिन यह तभी हो सकता है जब मैं चंगा हो जाऊं। इन सब मरीजों को यहां रखने का मंशा भी साफ-साफ समझा जाना चाहिए। आपको मालूम होना चाहिए कि मैं अगर्चे एक सियासी आदमी हूं फिर भी मुझमें नर्स होने का माद्दा उससे भी बढ़कर है। और इतना ही नहीं, मुझे तो शर्म महसूस हो रही थी कि मैं अकेले ही इतना बड़ा बँगला दबाये बैठा हूं जबकि बाहर इतने सारे मरीज पड़े हैं और उनमें कुछ तो ऐसे हैं जो मेरी ही देख-रेख में बड़े हुए हैं और जिन्हें तीमारदारी और आबोहवा की तब्दीली की कही ज्यादा जरूरत है। इसलिए वे सब यही आ गये हैं—मेरे दिमागी सुकून के लिए नहीं, अपने ही भले के लिए। पर बँगले को इस तरह अस्पताल बना देने पर अब मैं खुद मेहमानों की देखभाल नही कर पाता। और मैं अगर अपने मेहमानों की तरफ जरूरत के मुताबिक तवज्जह न दे पाऊँ, तो मैं उन्हें आने की दावत ही नहीं दूंगा। मैं आपको तो बड़ी खुशी से आपकी मर्जी पर छोड़ सकता हूँ, और सोच सकता हूँ कि मैंने काफी कुछ कर लिया पर बेगमासाहिबा के बारे में तो मै ऐसा महसूस नहीं कर सकता।

अब आप मेरे बारे में सभी कुछ जान गये हैं। इसलिए लिखिए कि आप कब आ रहे हैं। हफ्ते भर के अन्दर-अन्दर यहाँ कुछ नेता लोग आ रहे हैं; मैं चाहता था कि आप भी उनके साथ बहस-मुबाहिसे मे शामिल हो सकते। शौकत से कहिए कि उन्हें खाट पकड़ लेने का कोई हक नही है। उनके सामने सबसे अच्छा रास्ता यही है कि वह जल्द-से-जल्द चंगे हो जायँ।

हयात का क्या हाल है ? उसे मेरे एक पत्र का जवाब देना है।

आपको प्यार

स्नेहाधीन,

मौलाना मुहम्मद अली
अलीगढ़

—अंग्रेजी। अँधेरी, २५।३।१९२४। सं० गां० वा० खण्ड २३, पृ० ३२९ से।]

११२. पत्र : ए० डब्ल्यू० मैकमिलन को

पोष्ट अन्वेरी
२८ मार्च, १९२४

प्रिय श्री मैकमिलन,

पत्र के लिए आपको अनेक धन्यवाद।

आप फीजी मे वहाँ के भारतीय निवासियों की ओर से जो उद्योग कर रहे है, उसमे मैं आपकी पूरी सफलता चाहता हूँ। उन लोगो के लिए मेरा सन्देश यही है कि उन्हे अपने-आपको इस तरह तैयार कर लेना चाहिए कि जिससे वे हर तरह की कठिनाइयो का सामना कर सकें।

आप फीजी मे अपने देश-बन्धुओ से निरन्तर विरोध रखकर रहना नही चाहते, मैं आपकी इस भावना से पूरी तरह सहमत हूँ। मेरा निश्चित विश्वास है कि आप अपने देश-भाइयो से विरोध रखकर भारतीयो की सेवा कर भी नही सकते। मेरे खयाल मे आवश्यकता इस बात की है कि जो सचाई है उसे साफ-साफ कहा जाय और चाहे कुछ भी हो, न्याय का आग्रह रक्खा जाय। इसमे किसी का विरोध करने की कोई आवश्यकता भी नही पड सकती।

हृदय से आपका,

श्री ए० डब्ल्यू मैकमिलन
बनारस छावनी
बनारस

—अंग्रेजी। अँधेरी, २८।३।१९२४। सा० सं० मे प्राप्त पत्रावली से।]

११३. पत्र : रामानन्द संन्यासी को

पोष्ट अन्वेरी
२८ मार्च, १९२४

प्रिय रामानन्द सन्यासी,

मुझे आपका २३ तारीख का पत्र मिला, धन्यवाद।

पूरी बातें जाने बिना आपको सलाह देना मेरे लिए कठिन है।

(१) क्या भरती अभी शुरू हुई है और यदि हुई है तो किस तारीख से ?

(२) क्या इसके पहिले भरती नही हुई ?

मुझे आशा है कि आप तमाम बड़े-बड़े आश्चर्यजनक कामों को करते हुए भी स्वस्थ होंगे।

हृदय से आपका,

(पुनश्चः)

आपका दूसरा तार मुझे अभी मिला है। मैं कितना चाहता हूं कि मेरे विचार आपके विचारों से मिल सकते और मैं आपकी खुशी में पूरी तरह हिस्सा बँटा सकता।

पण्डित मोतीलाल नेहरू
२५, वेस्टर्न होस्टल
दिल्ली

—अंग्रेजी। अँधेरी, १८।३।१९२४। सं० गा० वां० खण्ड २३ से।]

११०. पत्र : राजबहादुर को

पोस्ट अन्धेरी
२० मार्च, १९२४

प्रिय तरुण मित्र,

तुम्हारा पत्र मिला।

तुमने अपने पिता की आज्ञा का पालन नही किया, यह निश्चित ही अशिष्टता हुई। उन्होने तुम्हें जो करने को कहा था वह अपने-आप में शुद्ध था और यदि तुम्हारी अन्तरात्मा ने उसे शुद्ध कहने की अनुमति न दी हो तो भी वह निश्चय ही अशुद्ध नही था। किन्तु तुम्हारे यह स्वीकार करने पर कि तुमने भूल की है, पिता ने तुम्हे जो दण्ड दिया वह आज्ञोल्लघन के अनुपात में बहुत ही अधिक हुआ। पिता का अपने बच्चे के बुरे काम के कारण स्वयं अपने को किसी चीज से वंचित करना एक तरह का दण्ड ही है। तुमने मेरे प्रति कोई अपराध नही किया, इसलिए मेरे क्षमा करने का प्रश्न नही उठता। फिर भी तुमने अपने पिता को नरम बनने और अपनी शपथ वापस लेने के लिए अभिप्रेरित किया, इसके लिए मै तुम्हे

अपनी तरफ से हजार बार माफ करता हू। यह पत्र उन्हे दिखाओ और मुझे लिखो कि उन्होंने तुम्हारा दिया हुआ भोजन लेना शुरू कर दिया अथवा नही।

हृदय से तुम्हारा,

श्रीयुत राजबहादुर
कक्षा ८ सेक्शन बी
सनातन धर्म हाई स्कूल
इटावा नगर।

—अंग्रेजी। अंधेरी, २०।३।१९२४। सा० सं० मे प्राप्त पत्रावली से।]

१११. पत्र : मुहम्मद अली को

पोष्ट अन्धेरी
२५ मार्च, १९२४

प्यारे दोस्त और भाई

आपका पत्र[1] मिला। मैं समाचारपत्रो के जरिये आपकी गति-विधियो की जानकारी रखता आया हू और मैंने देखा है कि अपने परिवार पर टूटनेवाली इस विपत्ति[2] का सामना आपने जिस साहस और तितिक्षा-भाव से किया वह आपके ही योग्य है। मुझे भी ठीक यही उम्मीद थी। आपने अमीना के अन्तिम क्षणो का जो विवरण मुझे लिखा है, उसे मैं अपनी दोस्ती का एक खास हक मानता हू। वह बडी अच्छी और प्यारी बच्ची थी। बहुत ही अच्छा हो, अगर मेरे साथ आप एक हफ्ता गुजार सकें। मेरी तो इच्छा है कि आप बेगमसाहिबा और अपने समस्त परिजनो के साथ आये। लेकिन इस इतने बड़े बँगले मे भी जगह की कुछ तगी हो गई है। आपकी देख-भाल तो मैं आसानी से कर सकता हू, मतलब यह कि आप अपनी मर्जी के मुताबिक रहेगे और इस बँगले मे जो अस्पताल ही बन गया है, जितना भी मुमकिन है उतना आराम पा सकेंगे। मैं यहा मरीजो के बीच रह रहा हू। मगनलाल की पुत्री राधा और वल्लभभाई की पुत्री मणिबाई ने चारपाई तो नही पकडी है, पर वे चलने-फिरने से लाचार है। और मैंने पगले मजली को भी यहा आने के लिए लिखा है। मैं कह नही सकता कि बड़े भाई की भी तीमार-

१. यह उपलब्ध नहीं है।
२. तात्पर्य मुहम्मद अली की पुत्री, अमीना की मृत्यु से है।

दारी करने से मुझे कितनी खुशी हासिल होगी, लेकिन यह तभी हो सकता है जब मैं चंगा हो जाऊं। इन सब मरीजों को यहां रखने का मंशा भी साफ-साफ समझा जाना चाहिए। आपको मालूम होना चाहिए कि मैं अगर्चे एक सियासी आदमी हूं फिर भी मुझमें नर्स होने का माद्दा उससे भी बढ़कर है। और इतना ही नहीं, मुझे तो शर्म महसूस हो रही थी कि मैं अकेले ही इतना बड़ा बँगला दबाये बैठा हूं जबकि बाहर इतने सारे मरीज पड़े है और उनमें कुछ तो ऐसे है जो मेरी ही देख-रेख में बड़े हुए हैं और जिन्हें तीमारदारी और आबोहवा की तब्दीली की कहीं ज्यादा जरूरत है। इसलिए वे सब यहीं आ गये है—मेरे दिमागी सुकून के लिए नहीं, अपने ही भले के लिए। पर बँगले को इस तरह अस्पताल बना देने पर अब मैं खुद मेहमानों की देखभाल नही कर पाता। और मैं अगर अपने मेहमानों की तरफ जरूरत के मुताबिक तवज्जह न दे पाऊँ, तो मैं उन्हें आने की दावत ही नहीं दूंगा। मैं आपको तो बड़ी खुशी से आपकी मर्जी पर छोड़ सकता हूँ, और सोच सकता हूँ कि मैंने काफी कुछ कर लिया पर बेगमासाहिबा के बारे में तो मैं ऐसा महसूस नहीं कर सकता।

अब आप मेरे बारे में सभी कुछ जान गये हैं। इसलिए लिखिए कि आप कब आ रहे है। हफ्ते भर के अन्दर-अन्दर यहाँ कुछ नेता लोग आ रहे हैं; मैं चाहता था कि आप भी उनके साथ बहस-मुबाहिसे मे शामिल हो सकते। शौकत से कहिए कि उन्हें खाट पकड़ लेने का कोई हक नही है। उनके सामने सबसे अच्छा रास्ता यही है कि वह जल्द-से-जल्द चंगे हो जायँ।

हयात का क्या हाल है ? उसे मेरे एक पत्र का जवाब देना है।

आपको प्यार

स्नेहाधीन,

मौलाना मुहम्मद अली
अलीगढ़

—अंग्रेजी। अँधेरी, २५।३।१९२४। सं० गां० वा० खण्ड २३, पृ० ३२९ से।]

११२. पत्र : ए० डब्ल्यू० मैकमिलन को

पोष्ट अन्धेरी
२८ मार्च, १९२४

प्रिय श्री मैकमिलन,

पत्र के लिए आपको अनेक धन्यवाद।

आप फीजी मे वहां के भारतीय निवासियो की ओर से जो उद्योग कर रहे हैं, उसमे मैं आपकी पूरी सफलता चाहता हूं। उन लोगो के लिए मेरा सन्देश यही है कि उन्हे अपने-आपको इस तरह तैयार कर लेना चाहिए कि जिससे वे हर तरह की कठिनाइयो का सामना कर सकें।

आप फीजी मे अपने देश-बन्धुओ से निरन्तर विरोध रखकर रहना नही चाहते, मैं आपकी इस भावना से पूरी तरह सहमत हूं। मेरा निश्चित विश्वास है कि आप अपने देश-भाइयो से विरोध रखकर भारतीयो की सेवा कर भी नही सकते। मेरे खयाल मे आवश्यकता इस बात की है कि जो सचाई है उसे साफ-साफ कहा जाय और चाहे कुछ भी हो, न्याय का आग्रह रक्खा जाय। इसमे किसी का विरोध करने की कोई आवश्यकता भी नही पड सकती।

हृदय से आपका,

श्री ए० डब्ल्यू मैकमिलन
बनारस छावनी
बनारस

—अंग्रेजी। अंधेरी, २८।३।१९२४। सा० सं० मे प्राप्त पत्रावली से।]

११३. पत्र : रामानन्द संन्यासी को

पोष्ट अन्धेरी
२८ मार्च, १९२४

प्रिय रामानन्द सन्यासी,

मुझे आपका २३ तारीख का पत्र मिला, धन्यवाद।

पूरी बातें जाने बिना आपको सलाह देना मेरे लिए कठिन है।

(१) क्या भरती अभी शुरू हुई है और यदि हुई है तो किस तारीख से?

(२) क्या इसके पहिले भरती नहीं हुई?

(३) यदि नही हुई तो यह कब से बन्द हुई?

(४) चाय-बागानों मे जाकर किस बात की जॉच करनी है?

जबतक बागान के मालिकों की शर्तों में रद्दोबदल न हो, तबतक हालात पहले से बेहतर नही हो सकते। यदि शर्तें भिन्न प्रकार की हैं तो उनकी एक नकल आपको उन गाँवों मे मिल जानी चाहिए, जहा भरती हो रही है। इसलिए मेरी समझ में नही आता कि अभी चाय-बागानों में जाकर जाँच करने से क्या लाभ हो सकता है। इसके अलावा, कोई भी कदम उठाने से पहले असम की प्रान्तीय कांग्रेस कमेटी से पत्र-व्यवहार कर लेना चाहिए। इसलिए मैं तो यह सुझाव दूँगा कि आप उल्लिखित जिलों में हो रही भरती का पूरा विवरण देते हुए एक पत्र[1] लिखें। यदि आप मेरे सुझाव को मान लें, तो उत्तर देते समय असम कमेटी को लिखे गये अपने पत्र की नकल भी कृपया मेरे पास भेज दें।

हृदय से आपका,

रामानन्द संन्यासी
बलदेव आश्रम, खुर्जा यू० पी०

—अंग्रेजी। अँधेरी २८।३।१९२४। सं० गां० वा० खण्ड २३, पृष्ठ ३५०।]

११४. तार : कानपुर की अग्रवाल परिषद् को[2]

(१ अप्रैल १९२४ या उसके पश्चात्)

अग्रवाल परिषद्
कानपुर

परिषद् की सफलता की कामना करता हूँ। आशा है परिषद् खद्दर की जो कि अकेले लाखों देशभाइयों की भुखमरी को दूर कर सकता है, और दक्षिण भारत में हिन्दी प्रचार की मदद करेगी, जिसमें अब तक अग्रवाल लोग इतनी उदारता से हाथ बँटाते रहे हैं। सेठ जमनालाल जी इतने कमजोर है कि इतनी थकान बरदाश्त नही कर सकते।

गांधी.

—अंग्रेजी। १।४।१९२४। सं० गां० वा० खण्ड २३, पृ० ३६२।]

---

१. रामानन्द संन्यासी ने १ अप्रैल को फिर पत्र लिखा और उसमें गांधीजी ने जो ब्यौरा माँगा था वह सब दिया और साथ में जैसा गांधीजी ने सुझाया था असम कांग्रेस कमेटी को लिखे पत्र की एक नकल भी भेजी।

२. यह तार गांधीजी ने तार-द्वारा प्राप्त निम्नलिखित सन्देश के जवाब में दिया

११५. तार : अल्मोड़ा कांग्रेस कमेटी को[1]

(५ अप्रैल १९२४ या उसके पश्चात्)

धन्यवाद। आपका कृपापूर्ण आतिथ्य स्वीकार करने मे असमर्थ हूँ।

गाधी.

—अंग्रेजी। अँधेरी, ५।४।१९२४, सं० गां० वा० खण्ड २३ से।]

११६. पत्र : परसराम को

चैत्र शुक्ल ४ (८ अप्रैल, १९२४)

चि० परसराम,

तुम्हारा खत मीला। मैंने कुछ तार तो कान्फरेन्स मे भेजा था। कुछ परिणाम आया? जब तुम्हारा काम नियमबद्ध होगा।

बापु के आशीर्वाद

परसराम मेहरोत्रा
स्पिनिंग स्कूल
फीलखाना
कानपुर

—मूल हिन्दी। अँधेरी, ८।४।१९२४। गा० स्मा० संग्रहालय, नई दिल्ली में सुरक्षित फोटो-नकल से।]
सौजन्य : श्री परशुराम मेहरोत्रा।

था—"अखिल भारतीय मारवाड़ी अग्रवाल परिषद् ५, ६, ७ अप्रैल को। निर्वाचित अध्यक्ष बम्बई के सेठ आनन्दीलाल जी पोद्दार वहाँ ४ को पहुँच रहे हैं। सेठ जमनालाल जी की भी उम्मीद है। आपके आशीर्वाद और आध्यात्मिक सन्देश की हृदय से याचना है, स्वागत"। (एस० एन० ८६४१)।

जमनालाल जी बजाज ने भी १ अप्रैल को देवदास गांधी को तार भेजा था जो इस प्रकार था : "कानपुर अग्रवाल परिषद् उपस्थिति के लिए जोर दे रही है। कृपया पूना के वैद्य से निजी राय देने के लिए विनती कीजिए। यदि अनुमति मिले तो तीन तारीख को अवश्य रवाना होना चाहिए। बापू की भी राय लेनी जरूरी है।" (एस० एन० ८६४२)।

१. यह तार अल्मोडा काग्रेस कमेटी के मन्त्री द्वारा ५ अप्रैल, १९२४ को भेजे

११७. पत्र : मुहम्मद अली को

पोस्ट अन्धेरी
१० अप्रैल, १९२४

मेरे अजीज दोस्त और भाई,

आपके दोनों पत्र मिल गये, एक आपके सेक्रेटरी का लिखा हुआ पत्र जिसके साथ वह पत्र नत्थी है जो आपको मिला है और दूसरा आपका अपना लिखा हुआ।

मै सहपत्र के सम्वन्ध में अपने ढंग से कार्रवाई कर रहा हूँ। आप जव यह समझें कि आप बड़े भाई साहव[1] के पास से विना कोई जोखिम उठाये हट सकते है, तभी आयें।

मैंने आपको अपनी ओर से आश्वासन भेज दिया है और उसे यहाँ फिर दोहराता हूँ कि इन दोनों प्रश्नों के सम्वन्ध में आपसे मिले विना मैं अपने विचार प्रकाशित नही करूँगा। आप अपना काम फुरसत से करें। आप देखेंगे कि आपने स्वामी जी को जो पत्र लिखा है उसका मैंने "यंग इण्डिया"[2] के स्तम्भों में उपयोग किस तरह किया है।

वर्तमान उत्तेजना का दोष दोनों पक्षों पर है, मुझे इस कथन के पक्ष में करने के लिए किसी भी प्रकार का अनुरोध जरूरी नहीं है, और मैं आशा कर रहा हूँ कि जव अवसर उपस्थित होगा ईश्वर मुझे सत्य, पूर्ण सत्य और उतना ही सत्य कहने की शक्ति और साहस देगा जितनेका मुझे बोध है।

मैं नही जानता कि देवदास ने डाक्टर अन्सारी को क्या लिखा है, किन्तु उस वेचारे ने मुझे वताया कि उसके पत्र में ऐसा एक भी शव्द नहीं है जिससे आपको अथवा डा० अन्सारी को कुछ भी परेशानी हो। लेकिन शायद आप यह चाहते

गये इस तार के उत्तर में था—"नववर्ष के अवसर पर बधाई। स्वास्थ्य-लाभ के लिए अल्मोड़ा का जलवायु अत्युत्तम। ठहरने के लिए बँगले की व्यवस्था कर ली गई है। कृपया अवश्य आइए।"

१. शौकत अली जो वीमार पड़े थे और जिनकी हालत फिर खराव हो गई थी। गांधीजी को शौकत अली के लड़के जहीर अली का ६ अप्रैल को एक पत्र मिला था कि मुहम्मद अली गांधीजी से मिलने के लिए तबतक वम्बई रवाना नहीं हो सकते जवतक उनके भाई की हालत में सुधार नहीं हो जाता।

२. देखिए 'मौलाना मुहम्मद अली और उनके आलोचक' १०।४।१९२४।

हैं कि देवदास उक्त अशो को लिखकर मेरे पास भेज दें ताकि मुझे उन अशों पर कार्रवाई करने योग्य हकीकत का पता चल जाय।

मुझे अभी डा० अन्सारी का तार मिला कि शौकत अली का ज्वर फिर उतर गया है। मन को धीरज हुआ।

सस्नेह,

हृदय से आपका

मौलाना मुहम्मद अली
मार्फत डा० मु० अ० अन्सारी
१, दरियागज
दिल्ली

—अंग्रेजी। अंधेरी,[१०।४।१९२४। साबरमती संग्रहालय मे सुरक्षित फोटो-नकल से।]

११८. पत्र : मोतीलाल नेहरू को

जुहू
रविवार (१३ अप्रैल, १९२४)[१]

प्रिय मोतीलाल जी,

साथ मे मस्विदे को सशोधित करके भेज रहा हूँ। यदि आपको तथा अन्य मित्रो को यह स्वीकार हो तो आप जितना जल्दी चाहे, मैं उसे प्रकाशित करा सकता हूँ। मुझे तो लगता है कि प्रायोगिक कलाविधि नियत करने से सम्बन्धित धारा हटा दी जानी चाहिए। परन्तु मैं उन सज्जनो से यह बात अवश्य कहूगा कि मेरा इरादा कोकोनाडा के प्रस्ताव को रद्द कराने के लिए प्रस्ताव पेश करने का नही है। बात केवल इतनी है कि यह धारा जिस रूप मे है, उस रूप मे उसके फलितार्थ मैं नही जानता। शेष सशोधनो के बारे मे कुछ कहने की आवश्यकता नही है। परन्तु मस्विदे के अन्त मे मैंने जो दो वाक्य जोडे हैं, उनकी ओर मैं आपका ध्यान आकृष्ट करना चाहता हूँ। उनका अर्थ स्पष्ट है। ये दो वाक्य जोडने मे

---

१. पहला मस्विदा ११ अप्रैल, १९२४ को तैयार किया गया था और उसके बाद जो रविवार पड़ता था, उसकी तारीख १३ अप्रैल थी।

मेरा उद्देश्य कल की बात-चीत के निष्कर्ष को इसमें किसी हद तक शामिल करना है।

हृदय से आपका,
मो० क० गांधी

—अंग्रेजी। जुहू, १३।४।१९२४। साबरमती संग्रहालय में सुरक्षित फोटो-नकल से।]

११९. तार : मदनमोहन मालवीय को[1]

बम्बई
(१९ अप्रैल १९२४ या उसके पश्चात्)

आशा है आपके स्वास्थ्य में सुधार हो रहा होगा। स्वास्थ्य का हाल तार-द्वारा सूचित कीजिए। कहीं बाहर जाने के पहले पूरा विश्राम कर लीजिए।

गांधी

—अंग्रेजी। बम्बई, १९।४।१९२४। साबरमती संग्रहालय में सुरक्षित पत्रावली से।]

१२०. पत्र : परशुराम मेहरोत्रा को

ज्येष्ठ सुदी १ (३ जून १९२४)[2]

चि० परसराम,

तुम्हारा पोस्ट कार्ड मीला। रामायण का अभ्यास खूब ध्यान से करना।

---

१. यह तार मालवीय जी के १९ अप्रैल १९२४ के निम्नलिखित तार के उत्तर में भेजा गया था—"खेद है कि अस्वस्थता के कारण अभी एक सप्ताह और बम्बई नहीं आ सकता।"

२. डाकखाने की मुहर से।

एक बार पढ़ने से काफी नहि होगा। मेरा विश्वास है कि "रामायण" तुमको शातिप्रद होगा। सब बीमार खरे तो रहे?

बापू के आशीर्वाद

परसराम मेहरोत्रा[1]
यू० पी० खद्दर बोर्ड
कानपुर

—हिन्दी। ३।६।१९२४। स० गा० वा०, खण्ड २४, पृष्ठ १८२ से।]

१२१. जवाहरलाल के लिए रुक्का

[निम्नलिखित नोट अंग्रेजी में शान्ति-निकेतन से २७।५।२४ को सी० एफ० एण्डरूज-द्वारा जवाहरलाल जी को भेजे गये एक पत्र पर है। जवाहरलाल जी ने ३०।५।२४ को नोट देकर वह पत्र देवदास जी को भेज दिया था कि बापू उसके विषय में क्या सोचते हैं, यह लिखो। एण्डरूज ने आसाम मे गाधीजी द्वारा किये गये दौरे से हुई जागृति का उल्लेख किया था और उस सम्बन्ध मे अफीम पर एक रिपोर्ट तैयार करने को कहा था। गाधीजी ने उस पर पेंसिल से जो "नोट" लिखा था, उसका हिन्दी अनुवाद यहां दिया जा रहा है।—सम्पा०]

मेरे प्रिय जवाहरलाल,

मि० एण्डरूज ने मुझे भी लिखा था। जब स्वय मेरे-सहित सब कुछ अनिश्चय की स्थिति मे है, तब मैं कोई निश्चित सलाह नही देना चाहता। कदाचित् मामला हम लोगो के मिलने तक रुका रह सकता है। पर मैं नही जानता।

आशा करता हूँ, इन्दु ठीक होगी।

तुम्हारा
मो० क० गाधी

६।६।२४

—अंग्रेजी से। ६।६।१९२४। नेहरू संग्रहालय में सुरक्षित गांधीजी के स्वाक्षरों में लिखा "नोट"।]
सौजन्य : श्रीमती इन्दिरा गांधी
तथा नेहरू संग्रहालय

---

१. आश्रमवासी और गाधीजी के सचिव।

१२२. पत्र : मोतीलाल नेहरू को

३ जुलाई १९२४

प्रिय मोतीलाल जी,

आज मैंने एक पत्र[1] पढ़ा है। मैं उससे बहुत क्षुब्ध हुआ हूँ। मैं सोच रहा हूँ कि इसके बारे में कुछ लिखूँ तो मित्रता के अधिकार का दुरुपयोग तो नहीं होगा? मेरी अन्तरात्मा की आवाज कहती है कि मुझे इस प्रश्न का निर्णय स्वयं न करके इसे आप पर छोड़ देना चाहिए। यदि आप इसे दुरुपयोग समझें तो इस अपराध के लिए मुझे क्षमा कर दें और इस पत्र पर कोई विचार न करें।[2] लेखक ने पत्र के साथ ('लीडर' की) एक कतरन भी नत्थी करके भेजी है।[3] इसे मैंने पहले नहीं पढ़ा था। उनका कहना है कि किसी अन्य सान्ध्य भोज में आपने यह कहा बताते हैं:—"पानी शुद्ध बताया गया है, किन्तु शराब भबके से तीन बार खींची जाने पर बनती है, इसलिए वह पानी से भी अधिक शुद्ध है।"[4] कृपया मेरी बात का गलत अर्थ न लगाइयेगा। यदि आपने फिर शराब पीना शुरू कर दिया हो तो इस बारे में मुझे कुछ नहीं कहना है। यदि यह समाचार विश्वस्त है तो मुझे इससे दुःख हुए बिना नहीं रह सकता। आपका मद्यपान-विरोधी आन्दोलन चलाते हुए

---

१. यह पत्र उपलब्ध नहीं है। इसमें स्पष्ट रूप से यह कहा गया था कि मोतीलाल नेहरू ने शिमला में एक सान्ध्य भोज में मद्यपान किया। इस भोज में वह मुख्य अतिथि थे। देखिए मुकुन्दराव जयकर की 'द स्टोरी आफ माई लाइफ', खण्ड २।

२. मोतीलाल नेहरू ने १० जुलाई को इसका लम्बा उत्तर देते हुए लिखा था : "मैं प्रारम्भ में ही आपको यह विश्वास दिलाना चाहता हूँ कि आपके उक्त पत्र को मैं मित्रता के अधिकार का दुरुपयोग नहीं समझता, बल्कि यह जानना आपका अधिकार और कर्त्तव्य समझता हूँ कि आपके द्वारा अपने प्रति सार्वजनिक रूप में अविश्वास प्रकट किये जाने पर भी जो आपके साथ और आपके आधीन काम करने का यथाशक्ति प्रयास कर रहे हैं, उनका आपके प्रति क्या भाव है।"

३. "लीडर" में छपी इस खबर में, जिसको जयकर ने उद्धृत किया है, इस घटना पर व्यंगपूर्ण टिप्पणी की गई थी।

४. इस सम्बन्ध में मोतीलाल जी ने लिखा था कि यह शराब से सम्बन्धित एक फारसी शेर का अभिप्राय भर था।

खुले आम शराब पीना बुरा है और शराबबन्दी का मजाक उडाना तो इससे भी बुरा है।

मुझे विशेष कुछ नही कहना है। यह कहने की आवश्यकता नही कि मैं पत्र की प्रतीक्षा बडी व्यग्रता से करूँगा।

हृदय से आपका
मो० क० गाधी

(पुनश्च:)

मैं जानता हूँ कि यदि कोई आदमी अपने घर शराब पीता है तो वह खुले आम भी पी सकता है फिर भी यदि खुले आम शराब पीने से लोगो की भावना को ठेस लगने की सम्भावना हो तो एक लोक-सेवक को खुले आम शराब नही पीना चाहिए। मैं अपने घर शराब पीने और छिपकर शराब पीने मे भेद करता[1] हूँ।

मो० क० गाधी

—अग्रेजी। दि स्टोरी आफ माई लाइफ, खण्ड २-३।७।१९२४। स० गा० वा० भाग २४, पृष्ठ ३५८-५९।]

१२३. पत्र : मोतीलाल नेहरू को

२६ जुलाई, १९२४

प्रिय मोतीलाल जी,

नीचे आपके प्रश्नो के उत्तर दे रहा हू.

(१) मेरे विचार से अपरिवर्तनवादियो को कौंसिल-प्रवेश के खिलाफ सक्रिय प्रचार करने की पूरी छूट है, लेकिन राष्ट्रीय उद्देश्य की दृष्टि से मैं इसे सर्वथा अवाञ्छनीय मानता हू।

---

१. श्री मोतीलाल जी ने इसका यह उत्तर दिया था:—"मेरी दृष्टि में यह बात स्पष्ट है कि झूठा दिखावा करके लोगो को धोका देने से उनकी भावना को ठेस पहुँचाना अधिक अच्छा है। मैं यह बात समझने मे बिल्कुल असमर्थ हूं कि यदि मुझे शराब पीनी हो तो अपने घर में पीऊँ, आपके ऐसे सुझाव का आपके स्वभाव से कैसे मेल बैठ सकता है। आप घर में शराब पीने और छुपकर शराब पीने मे जो अन्तर करते हैं, मैं उससे भी सादर मतभेद प्रकट करता हूँ।"

(२) अगर एक पक्ष ऐसा कोई प्रचार शुरू कर दे तो दूसरे पक्ष को भी विरोधी प्रचार करने का उतना ही अधिकार है लेकिन मै तो दोनों से संयम से काम लेने को कहूंगा।

(५)[१] वहुमत के पक्ष से मैं न कुछ कर रहा हूं और न तवतक कुछ करने के लिए ही तैयार हूं, जबतक कि उस काम में कताई और ऐसी ही दूसरी चीजें शामिल न की जायँ।

(६) अपरिवर्तनवादी लोग चाहे जो करें या न करें, वेशक मैं ऐसा मानता हूं कि स्वराज्यवादियों को हर उचित तरीके से अपनी शक्ति वढ़ाने का अधिकार है।

(७क) इन सवको कार्यकारिणी संस्थाएं होना चाहिए। मुझे नही मालूम कि आज वे क्या है। जैसा कि मैं आपको वता चुका हूं कांग्रेस को अधिक प्रभावकारी वनाने के खयाल से मैं संविधान में कुछ संशोधन करने का सुझाव देना चाहूंगा।

(७ख) मेरा निश्चित मत है कि अगर कांग्रेस को कुछ प्रभावकारी काम करना हो तो इसकी सभी कार्यकारिणी समितियां ऐसे लोगों के हाथ में रहनी चाहिएं, जिनका कांग्रेस के कार्यक्रम में पूरा विश्वास हो और जो फिलहाल कांग्रेस कार्यक्रम पर अमल करें।

मेरा खयाल है कि मौलाना मुहम्मद अली आपके प्रश्नों के उत्तर देंगे। ३० अगस्त को मैं वम्वई मे रहूंगा। आशा है, आपके पिछले पत्र के उत्तर में भेजा गया मेरा कार्ड आपको मिल गया होगा।

हृदय से आपका
मो० क० गांधी

—अंग्रेजी। २६।७।१९२४। महादेव देसाई की डायरी से।]
सौजन्य : नारायण देसाई

---

१. प्रश्न ३, ४ के उत्तर उपलब्ध नहीं हैं।

१२४. पत्र : जवाहरलाल को

[संयुक्त प्रान्तीय सरकार ने स्व० रामदास गौड़ की राष्ट्रीय विद्यालयों में चलनेवाली पोथियों को जब्त कर लिया था। यह पत्र उसी ओर इंगित करता है।—सम्पा०]

२७।७।२४

मेरे प्रिय जवाहरलाल,

मेरी राय में, तुम्हें जब्ती के कारण का पता लगाने के लिए सरकार से पत्र-व्यवहार करना चाहिए, जिसमें तुम कहो कि यदि समिति को सचमुच आपत्तिजनक कोई बात बताई जायगी तो तुम्हारी समिति उन अंशों को निकाल देने के लिए तैयार होगी। यदि सरकार असन्तोषप्रद उत्तर भेजती है, तो तुम उसे सूचित कर सकते हो कि कुंजियां बन्द नहीं की जायगी।

सरकार के बच्चों को छेड़ने की उम्मीद नहीं है और यदि वह ऐसा करती भी है तो वह सिर्फ इतना ही कर सकती है कि वह बच्चों से किताब ले ले। ऐसी हालत में बच्चों को सलाह दी जा सकती है कि पर्वा न करें और पुस्तकें पुलीस को सौंप दें। मैं नहीं समझता कि इसमें कोई दूसरा दण्ड भी है। कृपया कानून देखकर सूचित करो। मैं अनुभव करता हूं कि हम चाहे जितने भी दुर्बल हो गये हों, यदि हम पर लड़ाई थोपी गई तो हम उससे भाग नहीं सकते। हम भले ही आक्रामक सविनय अवज्ञा न करें, हम भले ही सामूहिक सविनय अवज्ञा न शुरू करें, किन्तु जो हमारी राह में आता है और हमारी परीक्षा लेता है, उसका सामना तो हमें करना ही पड़ेगा। क्या तुम ऐसा नहीं समझते? लड़ाई कैसे की जाय, यह ऐसा सवाल है जिसका स्थिति की आवश्यकतानुसार तुम्हें निर्णय करना है।

तुम्हारा सच्चा
मो० क० गांधी

२७।७।२४

मेरे स्वास्थ्य की चिन्ता मत करो। वह ठीक है और मेरे काम लायक है।[1] चर्खे के विषय में तुम्हें पर्याप्त ज्ञान होना चाहिए। मुठिया के लिए तुम्हें बस इतनी ही जरूरत है कि वह काठ की जगह लोहे की हो। सदा लोहे से चलाओ। ज्योंही तुम उसमें लोहे का छल्ला लगा लोगे, तुम देखोगे कि वह बिल्कुल ठीक

चलता है। कृपा करके याद रखो कि केवल कँटियों से यह न होगा। मुठिया का कोई हिस्सा लोहे के एक्जल से रगड़ नहीं खाना चाहिए।

—अंग्रेजी। साबरमती, २७।७।१९२४। नेहरू संग्रहालय में सुरक्षित गांधीजी के पेंसिल से लिखे पत्र से।]
सौजन्य : श्रीमती इंदिरा गांधी
तथा नेहरू संग्रहालय

१२५. पत्र : बाबू भगवानदास को

२७ जुलाई १९२४

प्रिय वाबू भगवानदास,

पत्र के लिए धन्यवाद। विश्वास कीजिए मैं बराबर सोचता रहता हूं कि इस विवाद को कैसे खत्म किया जाय। मैं जानता हूं कि दोनों नीतियों के लिए गुंजाइश है। आपने बहुत ही ठीक ही कहा है कि इन दोनों नीतियों को पनडुब्बी और विमान की तरह समझिए। दोनों के कार्य-क्षेत्र अलग-अलग होने चाहिए। तब वे नीतियां एक-दूसरे से टकरायेंगी नहीं, बल्कि परस्पर मदद पहुँचायेंगी। मै कांग्रेस से निकल आने का कोई ऐसा उपाय सोच रहा हूं कि निकल भी आऊं और उसकी ज्यादा बात भी न हो। श्री तिलक के समय मुझे अपने तरीकों से काम करने मे कोई कठिनाई नही होती थी। मै जानता हूं, मेरे हृदय में उनके प्रति श्रद्धा थी और वह भी मुझे नापसन्द नही करते थे, बल्कि जहां-कही बन पड़ता, मेरी सहायता ही करते थे।

आपका
मो० क० गांधी

बाबू भगवानदास जी
सेवाश्रम, सिगरा
बनारस कैण्ट

—अंग्रेजी। साबरमती, २७।७।१९२४। महादेव देसाई की हस्तलिखित डायरी से।]
सौजन्य : नारायण देसाई

१२६. पत्र : मोतीलाल नेहरू को

साबरमती
२९।७।१९२४

प्रिय मोतीलाल जी,

आपके प्रेमपूर्ण पत्र के लिए आभारी हूं। मैं आपकी बात जरूर मान लेता, यदि आपने ही मुझे न कहा होता कि आपके एक बहुत घनिष्ठ मित्र खूब बुखार होने पर भी विधानसभा में बैठे रहे और डाक्टरों की सलाह के बावजूद विधानसभा नहीं छोड़ी। विधानसभा की चर्चा पूरी होने के बाद भी उन्होंने आराम नहीं लिया। ऐसे घनिष्ठ मित्र को आप नहीं समझा सके, तो मुझे कैसे समझा सकते हैं ? हमारी काषियों में शिक्षा का सूत्र होता है कि "कहने से करके दिखाना बेहतर है।" परन्तु मेरे स्वास्थ्य के लिए तो सचमुच जरा भी चिन्ता करने की बात नहीं। यह बात सच है कि मैंने इतना वजन खोया है, जिससे डर पैदा हो। परन्तु जब काम का दबाव होता है, तब मैं खुराक नहीं ले सकता। उन सभाओं के बीच केवल बैठे रहने का श्रम ही मेरे लिए भारी था। बहुत कामों में मैं व्यस्त नहीं होता तो मैंने गंगा किनारे शान्ति से आराम लेने के आपके सुझाव का उत्साहपूर्वक स्वागत कर लिया होता। परन्तु दिल्ली के लोग मुझे लिखते ही रहते हैं। फिर आश्रम में बहुत से नाजुक सवाल मुझे हल करने हैं। इस बारे में आपको लिखना मुझे बहुत अच्छा लगता है। लिखकर मैं हलका होता हूं। परन्तु यह सब लिखने का मुझे समय कहां है ? और आप भी यह सब सुनने का वक्त कहां से लायें ? इसीलिए मैं नहीं लिखता।

आज ही मैं आपको एक जरूरी खत लिखने का विचार कर रहा था, परन्तु कुछ मित्र मिलने की प्रतीक्षा में बैठे हैं, इसलिए आज नहीं लिखा जा सकता। कल लिखने का प्रयत्न करूंगा। मेरा आपसे अनुरोध है कि आपको काम-काज के मामले में कभी भी मुझे कुछ कहने जैसी बात लगे, तो लिखने में संकोच न करें।

मैंने मुहम्मद अली को पत्र लिखा है कि आपको जवाब दें। आपको मैंने जो उत्तर लिख भेजे हैं, उनकी नकल मैंने उन्हें भेजी है।

सेवक
मो० क० गांधी

—अंग्रेजी। साबरमती, २९।७।१९२४। म० भा० डा० भाग ३ से।]
सौजन्य : श्री नारायण देसाई।

१२७. पत्र : मोतीलाल नेहरू को

साबरमती
८ अगस्त, १९२४

अति गोपनीय

प्रिय मोतीलाल जी,

मैंने आपको एक महत्व-पूर्ण पत्र लिखने का वादा किया था किन्तु अभी तक लिख नहीं पाया था। अभी चार दिन पहले मैं लिखने जा ही रहा था कि श्रीमती नायडू का पत्र आ गया, जिसमें उन्होंने सूचित किया था कि वह यहां आ रही है। इसलिए उनके आने तक मैं फिर रुक गया। मैं यह कहना चाहता था कि कांग्रेस आपके नियन्त्रण में आ जाय। इसके लिए मे आपका रास्ता सुगम बनाने, वास्तव मे उसमें आपको सहायता देने के लिए तैयार हूं। लेकिन मतदाताओं को अपने पक्ष में करने का जो अर्थ लगाया जा रहा है, उस अर्थ मे मैं उन्हें किसी पक्ष में करने के प्रयत्न में शामिल नही होऊंगा। मै कांग्रेस से बाहर रहकर काम करने को तैयार हूं किन्तु उसके विरोध में काम करने के लिए तैयार नही हूं। वातावरण में शान्ति लाने, खद्दर तथा हिन्दू-मुस्लिम एकता को बढ़ावा देने और अस्पृश्यता को दूर करने के अलावा और किसी वात में मेरी दिलचस्पी नही हे। मैं जानता हू कि इस सव में मुझे आपकी मदद मिलेगी। स्वाभाविक है कि उस काम के लिए मैं अपने अधीन कोई संगठन भी चाहूगा लेकिन ऐसी किसी इच्छा से नही कि मै किसी दिन कांग्रेस पर कब्जा कर लू। आज जैसा वातावरण है, उसमे मैं नही चाहूगा कि बहुमत प्राप्त करने के लिए विवाद खड़ा हो और उसमें राष्ट्र का समय बर्बाद हो।

अगर आप पूरे कांग्रेस सगठन की वागडोर हाथ में लेने को तैयार न हों तो मैं उन प्रान्तों की कांग्रेस को हाथ में लेने में आपकी मदद करने के लिए विल्कुल तैयार हूं जहां उसके संचालन में आपको कोई कठिनाई दिखाई न देती हो। आपके कार्यक्रम में शामिल होने की वात को छोड़कर आप और जो कुछ चाहें, मैं करने को तैयार हूं।

फिर कांग्रेस अध्यक्ष का सवाल भी एक वड़ा सवाल है। राजगोपालाचारी, गंगाधर राव और राजेन्द्र बाबू का आग्रह है कि यह पद मैं स्वीकार कर लू। लेकिन वल्लभभाई और शंकरलाल को मेरा यह विचार ठीक जान पड़ता है कि मैं उसे स्वीकार न करूं। जमनालाल तटस्थ है और शायद यही स्थिति श्रीमती नायडू की भी है। हां, यह वताना भूल गया कि शौकत अली का भी आग्रह है कि मै यह

पद स्वीकार कर लू। लेकिन मैं एक ही हालत मे अपने निर्णय पर पुन· विचार कर सकता हू—यानी अगर आप चाहे कि मुझे यह पद स्वीकार कर लेना चाहिए तो आप कृपया श्री दास, केलकर तथा अन्य सज्जनो से सलाह-मश्विरा करके सूचित करे कि जिन दोनो बातो के बारे मे मैंने आपसे पूछा है उन पर आपका क्या सुझाव है।

यह पत्र मैंने श्रीमती नायडू को पढकर सुना दिया है।

हृदय से आपका
मो० क० गाधी

—अंग्रेजी। साबरमती, ९।८।१९२४। सं० गां० वा० खण्ड २४, पृष्ठ ५४१-४२।]

१२८. पत्र : तीरथराम जुनेजा को

साबरमती
९ अगस्त, १९२४

प्रिय मित्र,

इस दु:ख मे आपके साथ मेरी पूरी सहानुभूति है। आत्म-हत्या पाप है और हर एक पाप वियोगकारी होता है। इसलिए आत्म-हत्या करने से तो आपके और आपकी पत्नी के बीच की दूरी बढेगी ही। फिर मृत्यु से समस्या हल भी नही होगी, क्योकि तब आप वहा चले जायेंगे जहा जाना आपके भाग्य मे लिखा है और वह वहा रहेगी जहा रहना उनके भाग्य मे लिखा है। लेकिन आप इस शरीर को छोडने तक खुद को सुधार सकते हैं। आप उनके शरीर को प्यार करते थे या उसमे प्रतिष्ठित आत्मा को? यदि आप शरीर को प्यार करते थे तब तो आपको चाहिए था कि उस पर मसाले चढाकर उसे अपने कमरे मे बन्द करके रखते। यदि उनकी आत्मा को प्यार करते थे तो वह तो अब भी आपके साथ है। उनमे जो कुछ अच्छा था, उसकी स्मृति ही क्या आपके लिए पर्याप्त नही है? या आपका

प्रेम स्वार्थपूर्ण था ? जिन्हें हम प्यार करते हैं उनकी मृत्यु के बाद तो हमें ऐसा अनुभव होना चाहिए कि वे हमारे और भी निकट आ गये हे।

हृदय से आपका
मो० क० गांधी

श्री तीरथराम जनेजा
कानपुर

--अंग्रेजी। साबरमती, ९।८।१९२४।] सं० गां० वा० खण्ड २४, पृष्ठ ५४५।]

- आत्म-हत्या पाप है।
- ...हर एक पाप वियोगकारी होता है।
- जिन्हें हम प्यार करते हैं उनकी मृत्यु के बाद तो हमें ऐसा अनुभव होना चाहिए कि वे हमारे और भी निकट आ गये हैं।

१२९. पत्र : लाला बालकिरण को

साबरमती
१०।८।१९२४

लाला बालकिरण
भास्कर प्रेस
५, कचहरी रोड
देहरादून

प्रिय मित्र,

अमीर (अफगानिस्तान के) को कोई सन्देश भेजने की मेरी इच्छा नहीं होती। मैं चाहता हूं कि मेरा काम ही बोले। इसी तरह उन्हें कोई भेंट भेजने को भी जी नहीं चाहता। मेरे सूत का अलग कपड़ा नहीं बुना जाता।

सेवक
मो० क० गांधी

पुनश्च :

अभी-अभी आपका दूसरा पत्र मुझे मिला। ये त्याग-पत्र मुझे अच्छे लगते हैं। हम सत्य का अनुसरण करते हैं। सत्याग्रह में उत्तेजना नहीं होती,

उसमे ठण्डा निश्चय होता है। अनिश्चित काल तक मैं प्रतीक्षा करने के लिए तैयार हू।

— हिन्दी। सावरमती, १०।८।१९२४। म० भा० डा० ३ से।]
सौजन्य : श्री नारायण देसाई।

१३०. पत्र : मोतीलाल नेहरू को

सावरमती
१५ अगस्त, १९२४

प्रिय मोतीलाल जी,

पत्र के लिए धन्यवाद देता हू।

मैं अपने मन की सारी वात आपके सामने रख रहा हू।

मैं जितना ही सोचता हू मेरी अन्तरात्मा वेलगाव मे सत्ता के लिए होने वाली रस्साकशी के खिलाफ उतना ही अधिक विद्रोह करती है। परन्तु मैं कौंसिलों के कार्यक्रम के झमेले मे अपने को नही डालना चाहता। यह तभी हो सकता है जव स्वराज्यवादी काग्रेस पर छा जायें या फिर वे काग्रेस से हट जायें। आपको और हमारे मित्रो को इनमे से जो रास्ता ठीक जँचे, मैं उसी पर चलने के लिए विल्कुल तैयार हू। मैं काग्रेस मे रहता हू तो कौंसिलो के समर्थक उससे वाहर रहे। मैं तभी आपको मदद पहुचा सकता हू, और यदि वे लोग काग्रेस मे रहते हैं तो फिर मुझे काग्रेस से व्यवहारत वाहर हो जाना चाहिए। तव मेरी जो स्थिति १९१५ से १९१८ तक थी, मैं वडी खुशी से उसी स्थिति मे रह सकूगा। मेरा उद्देश्य स्वराज्यवादियो की शक्ति को कम करना नही है और उनके काम मे अडचन डालने का तो है ही नही। आप रास्ता सुझाइए, आपकी इच्छानुसार चलने का भरसक प्रयत्न करूगा। यदि कोई बात विल्कुल साफ न हो पाई हो तो कृपया लिखिएगा।

मैं मुहम्मद अली के तार पर कल दिल्ली जा रहा हू।

हृदय से आपका,
मो० क० गाधी

— अग्रेजी। सावरमती, १५।८।१९२४। सा० सं० में प्राप्त पत्र की फोटो-नकल से।]

१३१. पत्र : मोतीलाल नेहरू को

बम्बई, ता० ३०।८।१९२४

प्रिय मोतीलाल जी,

आपका मेरे नाम लिखा हुआ पत्र श्रीमती नायडू ने कल दिया। असल पत्र तो साबरमती पहुँचा होगा। आपको लिखे गये दो पत्रों में मैंने पूरी तरह छोड़ देने की अर्थात् जहां तक मैं कर सकता हूं, वहां तक छोड़ देने की तैयारी बताई है। आपको लिखने के बाद बहुत समय पहिले के प्रसंग का मुझे पता चला। इससे भी अधिक छोड़ देने की बात रही होती तो इस प्रसंग की बात सुनने के बाद बाकी चीज भी छोड़ने के बारे मे मैंने आपको तार दिया होता।

इसलिए अब आप लगभग अपनी शर्त पर मुझे स्वीकार कर सकते हैं। "लगभग" इसलिए आवश्यक है कि कुछ चीजें ऐसी है, जिन्हे अपने प्राणों से और इस दुनिया के तमाम बन्धनों से अधिक मानता हूं। आप राजी-खुशी से और पूरे हृदय से अर्थात् यह मानकर कि यह देना उचित है, मुझे देना चाहते हैं तो मैं इस प्रकार चाहता हूँ।

हमारा प्रस्ताव ऐसा होना चाहिए कि

१. पूर्ण असहयोग के सिद्धान्त और नीति में, विधानसभाओं के बहिष्कार तक में, कांग्रेस को अपना विश्वास फिर से प्रकट करना चाहिए।

२. परन्तु विदेशी कपड़े के सिवा और सब बहिष्कार १९२५ के अन्त तक मुल्तवी रक्खे जायं।

३. सबको कांग्रेस मे शामिल होने का निमन्त्रण दिया जाय।

४. साम्राज्य के माल का बहिष्कार उसमें न आना चाहिए।

५. हाथ-कती और हाथ-बुनी खादी का प्रचार, हिन्दू-मुस्लिम एकता और हिन्दुओं के लिए अस्पृश्यता-निवारण—इन्ही तक कांग्रेस की प्रवृत्ति सीमित रक्खी जाय।

इसका अर्थ यह हुआ कि कांग्रेसियों के नाते उनका विधानसभाओं अथवा बहिष्कारो के साथ कोई सम्बन्ध नही होगा। परन्तु जो विधान-सभा का कार्यक्रम चलाना चाहते हों, और ऐसी दूसरी प्रवृत्तियां करना चाहते हों जो कांग्रेस की प्रवृत्तियो से असगत न हों, वे कांग्रेस से स्वतन्त्र रूप में अपना अलग संगठन बना लें। अर्थात् प्रस्ताव मे स्थगित रक्खे गये कौसिलों के अथवा अन्य बहिष्कारों के अमल के लिए कोई सगठन नही होगा। मौजूदा राष्ट्रीय पाठशालाओं की मदद

जारी रहनी चाहिए। और जहा सम्भव हो, वहा नई पाठशालाएँ भी खोली जाय। परन्तु सरकार के साथ उनका कोई सम्बन्ध न होना चाहिए।

कांग्रेस के सदस्य बनने के लिए चार आने की फीस हटा दी जाय, उसके बजाय जो मनुष्य कांग्रेस का सदस्य बनें, उसे खादी पहनना चाहिए। और सदस्य होने के लिए हर महीने अपना ही काता हुआ कम-से-कम दो हजार गज सूत देना चाहिए। किसी सदस्य को पूरे वर्ष का सूत इकट्ठा देना हो, तो उसे ऐसा करने की छूट होनी चाहिए।

कांग्रेस को सच्ची और जीवन्त वस्तु बनाने का और कोई उपाय मुझे दिखाई नही देता। और भारत के गरीबो के लिए चर्खे के सिवा और कोई आशा मुझे नजर नही आती। साथ ही जबतक हम खुद न कातें, तबतक हम उसके हृदय को हिला नही सकते।

मैं संविधान मे और कुछ परिवर्तन भी सुझाना चाहता हू। परन्तु इस समय मैं इसमे नही आऊगा। यह सिर्फ इसलिए है कि कांग्रेस का काम अधिक कारगर ढग से और तेजी से हो। हमे यह भी घोषित करना चाहिए कि कांग्रेस की सभी कार्य-समितियो को अमली काम करनेवाली समितिया मानना चाहिए और महा-समिति विचार या सलाह-मशविरा करनेवाली सस्था मानी जाय।

कार्य-समितियो मे ऐसे ही आदमी जायें, जो कांग्रेस के सम्पूर्ण कार्यक्रम मे बँधे हुए हो। मेरे प्रस्ताव के अनुसार कार्य-समिति मे चुने जाने के लिए आप भी मेरे बराबर योग्य माने जाय। मै जो कहना चाहता हू, वह यह है कि यदि चार बहिष्कार स्थगित रखे जाय, तो विधान-सभा-प्रवेश अथवा अदालतो मे वकालत करना उसमे चुने जाने के लिए बाधक न होना चाहिए। वस्तुत ऐसा हो सकता है कि वकालत मे अथवा कौंसिल मे पूरा समय देनेवाले के लिए कार्य-समिति मे आना वाञ्छनीय न हो, क्योकि उसके सदस्य कांग्रेस कार्यक्रम की तीन चीजो को अपना पूरा समय और पूरा ध्यान देनेवाले होंगे।

मेरी योजना मे बगाल का कोई अपवाद नही हो सकता। वस्तु-स्थिति यह होगी कि प्रत्येक प्रान्त मे कांग्रेस की तरफ से किसी भी प्रकार की बाधा या कठिनाई के बिना स्वराज्यवादी अपना सगठन पूरी तरह कर सकेंगे। परन्तु कांग्रेस सस्था का प्रत्येक स्थान पर एक ही कार्यक्रम होगा। इसलिए दासबाबू कांग्रेस सगठन को स्वराज्य सगठन मे परिवर्तित कर सकेंगे और केवल तीन कार्यक्रमोवाला कांग्रेस सगठन दूसरो को करने देंगे या स्वय करेंगे। विचार यह है कि जिस तरह कांग्रेस दूसरे सगठनो को सहायता न पहुचाये, उसी तरह उनमे बाधा भी न डाले, परन्तु दूसरे सगठनो मे यदि कांग्रेसी सदस्य होगे, तो उन्हे कांग्रेस के

२४

कार्यक्रम की सहायता करनी होगी। इसके विपरीत जो कांग्रेसी कांग्रेस-द्वारा वर्जित अन्य वस्तुओं को मानते होंगे, वे अपनी अन्य प्रवृत्तियों के लिए दूसरे संगठनों में शामिल हो सकेंगे।

० ० ०

काम-काज के बारे मे मैं देख सकता हूँ, उसके अनुसार सदस्य बनने की योग्यता का मापदण्ड शायद बाधक सिद्ध हो। परन्तु मैं आशा रखता हूं कि आप यह स्वीकार करेंगे कि यदि हम सब खादी को एक आर्थिक आवश्यकता के रूप में मानते हों तो मेरे प्रस्ताव को स्वीकार करना जरूरी है।

आप देखेंगे कि मुझे जैसे विचार आते गये, वैसे इस पत्र में लिख डाले है। अपनी चिन्ता मैं नही करता, क्योंकि आप जितना करने देंगे उतना ही मुझे करना है।

स्नेहाधीन
मो० क० गांधी

—अंग्रेजी। बम्बई, ३०।८।१९२४। म० भा० डा० भाग ३ से।]
सौजन्य : श्री नारायण देसाई

१३२. पत्र : जवाहरलाल नेहरू को

सावरमती, ता० ६।६।१६२४

प्रिय जवाहरलाल,

तुम्हारा तार मिला। पिता जी की ओर से भी मुझे तार और पत्र मिले हैं। जो कुछ हुआ, उसके लिए मुझे खेद है। मैने सोचा था कि अपनी भावना की उत्कटता बताने के लिए मैं एक निर्दोष पत्र लिख रहा हूं।

० ० ०

मैंने पिता जी से प्रार्थना की है कि मेरे प्रस्ताव के गुण-दोष पर ही वह मुझे अपने विचार बतायें। स्वराज्य दल के बहुत मित्रों के साथ मैने इसकी चर्चा कर ली है। कठिनाई मे से और कोई सम्मानपूर्ण मार्ग मुझे दिखाई नही देता। इस बारे मे उनका क्या खयाल है, मुझे लिखना।

नाभा का जवाब उनके दृष्टिबिन्दु से तो पूरा और आखिरी था। उन्हें एक ही उत्तर दिया जा सकता है कि कैद करने की उनकी चुनौती स्वीकार कर ली जाय। परन्तु वर्तमान स्थिति में यह कदम उठाना समझदारी का काम नही

दीखता। इसलिए उत्तम बात यह है कि मौन रखकर और अधिक अच्छे अवसर की प्रतीक्षा की जाय।

अमेठी के बारे में तुमने जल्दी ही विवरण भेजा, वह मुझे मिल गया। गुलबर्गा की घटनाओं की जाँच करने के लिए मैंने श्वेब और कृष्णदास को खानगी तौर पर भेजा है। तुम यथाशक्ति जल्दी साँभर जाओ। अपने साथ को और · को (ये नाम पढ़े नहीं जाते) लेते जाना। वे वहां के जानकार जरूर होंगे। मुहम्मदअली कोई खास प्रगति नहीं कर सके, इसलिए मेरे कार्यक्रम के सम्बन्ध में कुछ कहना कठिन है। सोमवार तक तो यहां हूं ही।

बापू के आशीर्वाद

— हिन्दी। साबरमती, ६।९।१९२४। म० भा० डा० भाग ३ से।]
सौजन्य : श्री नारायण देसाई

१३३. पत्र : मोतीलाल नेहरू को

साबरमती
६।६।१६२४

प्रिय मोतीलाल जी,

आपका पत्र मुझे कल सूरत में मिला। आपके तार का उत्तर मैंने संक्षेप में बम्बई से दिया था। आपके पत्र के जवाब में कल एक संक्षिप्त तार दिया है। मेरे पत्र से आपको बुरा लगा, इसका मुझे अफसोस है। मुझे क्षमा कीजिए। मैंने जो सुना, उसे मैं अपने मन में ही रक्खूं, इसके बजाय आपसे कह देना क्या बेहतर नहीं? क्या मेरा कहना आप मानेंगे कि मेरे आस-पास वाले शायद ही कभी मेरे साथ बोलते भी हैं?

मेरे प्रस्ताव का उसके गुणों पर से आप विचार करें। इस प्रकार विचार करके मुझे आभारी करेंगे? आप जानते हैं कि श्रीमती बेसेण्ट तथा श्री जयकर और श्री नटराजन के साथ मैंने इसकी चर्चा कर ली है। पूना के स्वराज्यवादियों के साथ भी मैंने इसकी चर्चा की है। मेरा प्रस्ताव मंजूर हो या न हो, परन्तु मेरा निर्णय तो अन्तिम है कि प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप में कांग्रेस में मतगणना कराकर फूट डालने में मैं कारणीभूत नहीं बनूंगा। जो कुछ हो, सो समझौते से होना चाहिए।

आपका तार मिला। जो कुछ ऊपर लिखा है, उसमें कुछ भी जोड़ने की जरूरत मुझे दिखाई नहीं देती।

आपका

मो० क० गांधी

—अंग्रेजी। साबरमती, ६।९।१९२४। म० भा० डा० भाग ३ से।]

सौजन्य : श्री नारायण देसाई

१३४. पत्र : जवाहरलाल नेहरू को

[जवाहरलाल जी अपने पिता के लाडले थे। बचपन से उन पर बहुत व्यय किया जा रहा था। किन्तु असहयोग-काल में वकालत छोड़ देने के कारण मोतीलाल जी की आय का स्रोत बन्द हो गया था। खर्चे बहुत कुछ वैसे ही थे। इसलिए जवाहरलाल जी के मन में इस बात को लेकर बड़ा द्वन्द्व चलता था कि वह अपने पिता के ऊपर भार-रूप हैं। उनकी इच्छा थी कि वह अपने पैरों पर खड़े हों। इसके लिए उन्होंने गांधीजी से मार्ग-प्रदर्शन की प्रार्थना की। उधर मोतीलाल जी को जवाहरलाल जी की मनःस्थिति से अलग चिन्ता हुई। गांधीजी का यह पत्र जवाहरलाल के ऐसे ही पत्र के उत्तर में है।—सम्पा०]

१५ सितम्बर, १९२४

प्रिय जवाहरलाल,

दिल को छूनेवाला तुम्हारा निजी पत्र मिला। मैं जानता हूं कि इन सब चीजों का तुम बहादुरी से सामना करोगे। अभी तो पिता जी चिढ़े हुए हैं और मैं बिल्कुल नही चाहता कि तुम या मैं उनकी झुंझलाहट बढ़ाने का जरा भी मौका दें। सम्भव हो तो उनसे जी खोलकर बातें कर लो और ऐसा कोई काम न करो, जिससे वह नाराज हों। उन्हें दुःखी देखकर मुझे दुःख होता है। उनकी झुंझलाहट उनके दुःख की अचूक निशानी है। हसरत[1] आज यहां आये थे। उनसे पता चला कि हर कांग्रेसी के कातने-सम्बन्धी मेरे प्रस्ताव से भी उन्हें अशान्ति होती है। मुझे ऐसा महसूस होता है कि कांग्रेस से हट जाऊं और चुपचाप तीनों काम करने लगूं। उनमें जितने भी सच्चे स्त्री-पुरुष मिल सकते है उन सबके खपने की गुंजाइश है। किन्तु इससे भी लोगों को अशान्ति होती है। पूना के स्वराज्यवादियों

---

१. उर्दू के प्रसिद्ध राष्ट्रीय कवि, कानपुर के मौलाना हसरत मोहानी।

से मेरी लम्बी बात-चीत हुई। वे कातने को भी ज़रा राज़ी नही और मेरे काग्रेस छोड देने से भी सहमत नही। उनकी समझ मे यह नही आता कि ज्योही मैं अपना स्वरूप छोड दूगा, मेरा कोई उपयोग नही रह जायगा। यह भद्दी स्थिति है, किन्तु मैं निराश नही हू। मेरा ईश्वर पर विश्वास है। मैं तो इतना ही जानता हू कि इस घडी मेरा क्या धर्म है। इससे आगे का मुझे मालूम ही नही। फिर मैं क्यो चिन्ता करू?

क्या तुम्हारे लिए कुछ रुपये का प्रवन्ध करू? तुम कुछ कमाई का काम हाथ मे क्यो न ले लो? आखिर तो तुम्हे अपने ही पसीने की कमाई पर गुज़र करनी होगी, भले ही तुम पिता जी के घर मे रहो। कुछ समाचारपत्रो के सम्वाद-दाता वनोगे? या अध्यापकी करोगे?

प्रेम सहित, तुम्हारा
मो० क० गाधी

—अंग्रेजी। १५।९।१९२४।]

१३५. पत्र : मोतीलाल नेहरू को

दिल्ली, ता० १७।९।१९२४

प्रिय मोतीलाल जी,

आपका तार मिला। थोडे समय तो अभी मैं दिल्ली मे ही हू। इसलिए आप और दासवावू जव आयें, तव आपसे मिलकर मुझे आनन्द होगा। जिसे आखिरी छलाग कहा जा सकता है, वह मैंने तो लगा दी है। आज से मेरे इक्कीस दिन के उपवास शुरू होते हैं। मैंने धर्म को इसी प्रकार पहचानना सीखा है।

आपका
मो० क० गाधी

—अंग्रेजी। दिल्ली, १७।९।१९२४। म० भा० डा० भाग ३ से।]
सौजन्य : श्री नारायण देसाई

१३६. पोस्टकार्ड : जवाहरलाल नेहरू को

१७।९।२४[1]

मेरे प्रिय जवाहरलाल,

कृपया गोरखपुर कमेटी से कहो कि इस समय मैं (कार्यक्रम के लिए) कोई समय देने की जुर्रत नहीं कर सकता। मुझे खुशी है कि 'मावटना' हमारी कारगुजारी की चीज नहीं है। क्या तुम ऐसे ठोस उदाहरण दे सकते हो जहां मुसलमानों ने चमारों के लिए एतराज किया हो? क्या वे दूसरे हिन्दुओं को सुविधा देते है?

तुम्हारा सच्चा
मो० क० गांधी

१७।९।२४

टिप्पणी—कार्ड पर पता है : पं० जवाहरलाल नेहरू, आनन्द भवन, इलाहाबाद। उस पर दिल्ली आर० एम० एस० १७ सिदम्बर, २४ साढ़े सात बजे शाम की मुहर है।

—अंग्रेजी। दिल्ली, १७।९।१९२४। नेहरू संग्रहालय में सुरक्षित गांधीजी की हस्तलिखित प्रति से।]

सौजन्य : श्रीमती इन्दिरा गांधी
तथा नेहरू संग्रहालय, नई दिल्ली

१३७. पत्र : जवाहरलाल नेहरू को

[१९२४ ई० में बढ़ते हुए हिन्दू-मुस्लिम वैमनस्य से क्षुब्ध होकर गांधीजी ने तीन सप्ताह का उपवास किया था। निम्नलिखित पत्र उसी सन्दर्भ में लिखा जान पड़ता है।—सम्पा०।]

---

१. इसी दिन गांधीजी ने बढ़ते हुए हिन्दू-मुस्लिम संघर्ष के कारण दिल्ली में २१ दिन का उपवास शुरू किया था। इस पत्र के लिखने के बाद ही यह निश्चय हुआ होगा। इसी दिन महादेव भाई ने जवाहरलाल जी को निम्नलिखित तार दिया था—"पं० जवाहरलाल नेहरू, इलाहाबाद। हिन्दू-मुस्लिम झगड़ों के लिए बापू ने प्रायश्चित्त रूप २१ दिन के उपवास की घोषणा की है। —महादेव।" इलाहाबाद तार-घर में यह तार १३ बजकर ११ मिनट (दिन में १-११) बजे पहुँचा था।

१९ सितम्बर, १९२४

प्रिय जवाहरलाल,

तुम्हे स्तब्ध नही होना चाहिए, वल्कि हर्ष मनाओ कि ईश्वर तुम्हे अपना कर्त्तव्य पालन करने का वल और आदेश दे रहा है। मैं और कुछ कर ही नही सकता था। असहयोग के प्रवर्त्तक की हैसियत से मेरे कन्धो पर भारी जिम्मेदारी है। लखनऊ और कानपुर मे क्या छाप पड़ी, यह मुझे जरूर लिख भेजो। मुझे यह प्याला पूरा पी लेने दो। मुझे पूर्ण आन्तरिक शान्ति है।

प्रेम सहित

तुम्हारा

मो० क० गाधी

—अंग्रेजी। १९।९।१९२४। 'ए वंच आफ ओल्ड लेटर्स' से।]

सौजन्य : श्रीमती इन्दिरा गांधी

१३८. पत्र : जवाहरलाल नेहरू को

१२।११।२४

मेरे प्रिय जवाहरलाल,

मुझे यह वात जरूरी लगती है कि हमारे पास हिन्दू और मुसलमान कार्यकर्त्ताओ की एक द्रुतगामी टुकडी होनी चाहिए जो क्षणभर की सूचना पर प्रभावित क्षेत्रो मे जाँच के लिए जा सके। हमे सदा प्रतिष्ठित व्यक्तियो के ही जाने की राह नही देखनी चाहिए। उदाहरण के लिए कल जो मामला तुम्हारे पास भेजा गया है उसे ही लो। यदि उसमें दिये गये वयान ठीक है, तो अपराधियो का पर्दा फाश हो जायगा। यदि वे झूठे हैं तो समाचारपत्रो के सम्वाददाता दोषी सिद्ध होंगे। जाँच-कार्य तुरन्त और मुकम्मिल होने चाहिए। मैं महादेव[1] को इस काम के लिए तैयार कर रहा हू और प्यारेलाल[2] को भी इसके लिए राजी करना चाहता हू, जो अनावश्यक रूप से झिझक रहा है। क्या मसूर अली यह काम करेंगे? उन्हें इसके लिए उजरत दी जा सकती है। उन्हें पारिश्रमिक लेने पर कोई एतराज नही होना चाहिए। उनके चर्खे के काम मे वाधा पडने की जरूरत नही। उनका कार्यक्षेत्र सयुक्त प्रान्त तक ही सीमित रखखा जा सकता है, यद्यपि मैं तवतक इस प्रकार

---

१. स्व० महादेव देसाई।

२. प्यारेलाल नैयर, गांधीजी के सयुक्त निजी सचिव।

के प्रतिवन्ध लगाने को तर्जीह न दूंगा जवतक हमें इस क्षेत्र में काम करने के लिए कार्यकर्त्ताओं की एक सेना न मिल जाय।

जो मामला कल तुम्हारे पास भेजा गया है, उसके लिए मुझे आशा है, तुम तुरन्त किसी को भेजोगे। उस मामले का क्या हुआ जो कुछ हफ्ते पहिले तुम्हें भेजा गया था?

तुम्हारा सच्चा
मो० क० गांधी

१२।११।२४

मैं मान लेता हूं कि तुम पिता जी के साथ वम्वई में, यदि और पहिले नहीं तो गुरुवार की सुवह तो आही जाओगे। मैं उसी दिन सुवह (वहाँ) पहुंचूगा। श्रीमती नायडू यहां से कल रवाना हो रही हैं।

मो० क० गांधी

—अंग्रेजी से। १२।११।१९२४। नेहरू संग्रहालय में सुरक्षित पत्रावली से।]
सौजन्य : श्रीमती इन्दिरा गांधी
तथा नेहरू संग्रहालय

१३९. पत्र : जवाहरलाल नेहरू को

१६ नवम्बर, १९२४

प्रिय जवाहरलाल,

यह पंक्ति इस मंगल-कामना के साथ लिख रहा हूं कि मातृभूमि की सेवा और आत्म-दर्शन के हेतु यह शुभ दिन वार-वार आता रहे।

सम्भव हो तो पिता जी को लेकर जरूर आना।

सस्नेह तुम्हारा
मो० क० गांधी

—अंग्रेजी। १६।११।१९२४। 'ए वंच आफ ओल्ड लेटर्स' से।]
सौजन्य : श्रीमती इन्दिरा गांधी।

१४०. तार : जवाहरलाल नेहरू को

[नवम्बर १९२४ मे जवाहरलाल एवं कमला जी को एक पुत्र पैदा हुआ था किन्तु एक ही सप्ताह मे चला गया। यह तार उसी अवसर पर दिया गया था।—सम्पा०]

साबरमती
२८ नवम्बर, १९२४

नेहरू, इलाहाबाद

बालक की मृत्यु से दुःख हुआ। ईश्वरेच्छा बलीयसी।

—गाधी

—अंग्रेजी। साबरमती, २८।११।१९२४। 'ए बंच आफ ओल्ड लेटर्स' से।]
सौजन्य : श्रीमती इन्दिरा गांधी

१४१. तार : मदनमोहन मालवीय को

९ फरवरी, १९२५

पण्डित मालवीय
बिड़ला भवन
दिल्ली

गोरक्षा सविधान की क्या स्थिति है? आशा है आप आज रावलपिडी जा रहे हैं।

—गाधी

—अंग्रेजी। ९।२।१९२५। सं० गा० वा० खण्ड २६, पृ० ११९।]

१४२. तार : मदनमोहन मालवीय को

जैतपुर
१६ फरवरी, १९२५

मालवीय जी
बिड़ला भवन
दिल्ली

आपके लिए नकलें मुहैया कर रहा हूं।[1] आशा है आप रावलपिण्डी[2] हो आये होंगे।

गांधी

—अंग्रेजी। जैतपुर, १६।२।१९२५। सं० गां० वा० खण्ड २६, पृ० १५२।]

१४३. तार : मोतीलाल नेहरू को

पोरबन्दर
२० फरवरी, १९२५

पण्डित नेहरू
वेस्टर्न होस्टल
दिल्ली

मेरी राय में डा० बेसेण्ट अपनी रिपोर्ट प्रकाशित कर सकती हैं।

गांधी

—अंग्रेजी। पोरबन्दर, २०।२।१९२५। सं० गां० वा० खण्ड २६, पृष्ठ १७१।]

---

१. पत्र की।
२. देखिए "तार : मदनमोहन मालवीय को" ९।२।१९२५।]

१४४. तार : मोतीलाल नेहरू को[1]

२३ फरवरी, १९२५

लाला जी को तार भेजा है। अन्य सदस्यो की राय लिये बिना मुल्तवी नही कर सकता। बैठक होनी चाहिए।

गाधी

—अंग्रेजी। २३।२।१९२५। सं० गां० वा० खण्ड २६, पृष्ठ १८४।]

१४५. पत्र : शौकत अली को

साबरमती
२३ फरवरी, १९२५

प्यारे दोस्त और भाई,

मैंने आज कोहाट-सम्बन्धी अपने वक्तव्य पर आपकी टिप्पणी पढी। आपकी स्पष्टवादिता से मेरे दिल मे आपके प्रति और भी ज्यादा प्रेम और सम्मान पैदा हो गया है। पर आपकी टिप्पणी से यह जाहिर होता है कि कभी-कभी हम लोगो की तरह परस्पर इतने घनिष्ट सम्बन्ध रखनेवाले व्यक्ति भी पूरी तौर पर तटस्थ और निष्पक्ष रहने के बावजूद, हुबहू एक-से तथ्यो के आधार पर भी, सर्वथा विपरीत निष्कर्षों पर पहुँच जा सकते हैं। इससे मैं अपने विरोधियो के प्रति पहले से ज्यादा उदार और अपने निर्णयो के प्रति और अधिक अविश्वस्त बन गया हू। टिप्पणी दूसरी बार भी गौर से पढ ली है और मैंने देखा है कि इस मामले मे मेरे और आपके विचारो के बीच बहुत ही चौडी खाई है। मैं कविता के प्रकाशन की जोरदार शब्दो मे निन्दा करने को तैयार हू, किन्तु लूटमार तथा आगजनी को मैं माफ नही कर सकता। मैं आपकी इस राय की पुष्टि नही करता कि उपद्रवों का कारण पुस्तिका थी। उसकी पृष्ठभूमि तो पहले ही तैयार हो चुकी थी। मैं उन धर्म-परिवर्तन के मामूलो को उतना मामूली नही मान सकता जितना आप मानते हैं। मेरी राय मे खिलाफती लोगो ने अपने कर्तव्य की बुरी तरह उपेक्षा की है और मौलवी अहमद गुल ने निश्चय ही, उन पर जो विश्वास किया जाता था, उसका घात किया है।

---

१. यह २३ फरवरी को मिले, मोतीलाल नेहरू के एक तार के उत्तर मे भेजा गया था।

मैं ये सब बातें आपकी राय को, यदि उसके बदले जाने का आप कोई कारण न मानें तो, बदलने के लिए नही कह रहा हूं। किन्तु मैं यह अवश्य चाहता हूँ कि आपने तथ्यों पर जितनी गहराई से गौर किया है उससे ज्यादा गहराई तक आप जायें और देखें कि क्या फिर से गौर करने की जरूरत है। मैं आपका वक्तव्य प्रकाशित करने के विचार तक से काँप उठता हूं। उसके प्रकाशन से कटुतापूर्ण विवाद छिड़ जायगा। इसलिए मैं तो यह भी सुझाव दूंगा कि हकीम साहब या डा० अंसारी पूरे मामले की जांच कर लें। इस प्रश्न पर कोई नये विचार या तथ्य सामने आयें तो मुझे बड़ी ही खुशी होगी। मैं यह भी चाहूंगा कि सभी मित्र तथ्यों पर विचार करें और हम दोनों को अपनी-अपनी राय बदलने को प्रेरित करें। लेकिन यदि एक ही निष्कर्ष पर पहुँचने के हमारे सभी उपाय विफल हो जायँ तो हमें जनता के समक्ष अपने मतभेद प्रस्तुत करने और उस पर यह बात जाहिर कर देने का साहस अवश्य करना होगा कि इन मतभेदों के बावजूद हम दोनों के बीच प्रेम बना रहेगा, और हम साथ-साथ काम करते रहेंगे। किन्तु इसी प्रेम का तकाजा है कि हम जल्दबाजी में कोई कदम न उठायें। क्या आप दिल्ली आ रहे हैं? यदि आ रहे है तो क्यों न हम साथ-साथ सफर करें? मैं २६ तारीख को छोटी लाइन से रवाना होऊँगा। यदि आप आ रहे हों और आप पंजाब मेल से रवाना हो सकें, तो मैं आपको बड़ौदा में मिल जाऊँगा। अच्छा हो कि हमारी बातचीत फुरसत से हो। और ऐसी बातचीत के लिए तो मुझे रेलगाड़ी ही सबसे अच्छी जगह जान पड़ती है। आप जो निश्चित करें उसकी सूचना अवश्य दीजिए, और हो सके तो तार दीजिए। वक्तव्य को मै इस सप्ताह प्रकाशित नहीं कर रहा हूं।

सस्नेह

आपका

मो० क० गांधी

(पुनश्च :)

मुझे खुशी हुई कि आप डा० कूने की पद्धति से इलाज कर रहे हैं। निश्चय ही आपको काफी व्यायाम की जरूरत है।

मो० क० गांधी

—अंग्रेजी। मस्विदे साबरमती, २३।२।१९२५, सं० गां० वा० खण्ड २६, पृष्ठ १८४-८५।]

१४६. तार : अब्दुल मजीद को

दिल्ली
२८ फरवरी, १९२५

ख्वाजा साहब अब्दुल मजीद
अलीगढ

आशा है कल सुबह आप यहाँ जरूर पहुँच जायेंगे। मैं शायद कल शाम चल दूंगा।

गाधी

—अंग्रेजी। दिल्ली, २८।२।१९२५। सं० गां० वा० खण्ड २६, पृष्ठ २०१।]

१४७. तार : मदनमोहन मालवीय को

बम्बई
२६ मार्च, १९२५

पण्डित म० मो० मालवीय
बिडला मिल
दिल्ली

गोरक्षा बैठक बाईस अप्रैल को बम्बई मे बुलाने का विचार। अनुकूल हो तो साबरमती तार दें।

गाधी

—अंग्रेजी। बम्बई, २६।३।१९२५।]

१४८. पत्र : जवाहरलाल नेहरू को

२५ अप्रैल, १९२५

प्रिय जवाहरलाल,

मैं तीथल मे हू। यह जगह कुछ-कुछ जुहू जैसी है। यहा मैं बगाल की अग्नि-परीक्षा के लिए तैयार होने को चार दिन से आराम ले रहा हू। मैं यहा अपना पत्र-व्यवहार निपटाने की कोशिश कर रहा हू। उसमे तुम्हारा वह पत्र भी है,

जिसमें 'ईश्वर और काग्रेस' शीर्षक लेख का जिक्र है। तुम्हारी कठिनाइयों में मेरी सहानुभूति तुम्हारे साथ है। चूंकि सच्चा धर्म जीवन में और संसार में सबसे बड़ी चीज़ है, इसलिए इसी का सबसे अधिक दुरुपयोग किया गया है, और जिन लोगों ने इन शोषकों और शोषण को तो देखा और वास्तविकता को नही देख पाये, उन्हें स्वभावतः इस वस्तु से ही अरुचि हो गई। परन्तु धर्म तो आखिर प्रत्येक व्यक्ति की वस्तु है और वह भी हृदय की वस्तु है, फिर चाहे उसे किसी भी नाम से पुकारो। जो चीज़ मनुष्य को घोर ज्वालाओं के बीच अधिक-से-अधिक सान्त्वना देती है वही ईश्वर है। कुछ भी हो, तुम सही रास्ते पर हो। बुद्धि ही एकमात्र कसौटी हो तो भी मुझे पर्वा नही। हालांकि उससे प्रायः मनुष्य पथभ्रष्ट हो जाता है और ऐसी गलतियाँ कर बैठता है जो लगभग अन्धविश्वास के निकट पहुंच जाती है। गोरक्षा मेरे लिए केवल गाय को बचाने से कही बड़ी चीज़ है। गाय तो प्राणिमात्र का केवल प्रतीक है। गोरक्षा का मतलब है दुर्बलों, असहायों, गूंगों और बहरों की रक्षा। फिर तो मनुष्य सारी सृष्टि का प्रभु और स्वामी न रह कर सेवक बन जाता है। मेरी दृष्टि में गाय दया का जीता-जागता उपदेश है। फिर भी हम तो गोरक्षा के साथ निरा खिलवाड़ करते हैं, किन्तु हमें शीघ्र ही वस्तु-स्थिति के साथ जूझना पड़ेगा।

आशा है, मेरे पिछले सब पत्र तुम्हें मिल गये होंगे। डा० सत्यपाल[1] का एक दुःखभरा पत्र मुझे मिला है। काश तुम, भले कुछ ही दिन के लिए सही, पंजाब जा सको। तुम्हारे जाने से उनका उत्साह बढ़ेगा। मैं चाहता हूं कि पिता जी दो महीने किसी शान्त और ठण्डे स्थान पर रहें, और तुम हफ्ते-दस दिन के लिए अल्मोड़ा क्यों नही चले जाते, ताकि काम के साथ-साथ ठण्डी हवा मे भी साँस ले सको?

सस्नेह, तुम्हारा
बापू

—अंग्रेजी। २५।४।१९२५। 'ए बंच आफ़ ओल्ड लेटर्स' से।]
सौजन्य : श्रीमती इन्दिरा गांधी

● मेरी दृष्टि में गाय दया का जीता-जागता उपदेश है।

---

१. तत्कालीन पंजाब के एक प्रसिद्ध नेता।

१४९. पत्र : राजा महेन्द्रप्रताप को

१५ जून, १९२५ या उससे पूर्व

आप मुझे जब-तब लिखते रहे हैं। मैं जानता हूँ कि जीवन के बारे मे हमारे दृष्टिकोण भिन्न-भिन्न हैं। मैं जानता हूँ कि जितने लोग हैं उतने ही सोचने के तरीके हैं। लेकिन जैसे एक ही समय मे, एक ही परिस्थिति मे और एक ही जगह पर सर्दी और गर्मी का साथ-साथ रहना सम्भव नही, इसी तरह एक ही समय, स्थान और एक ही परिस्थिति मे हिंसा और अहिंसा का एक साथ रहना असम्भव है।

हृदय से आपका,
मो० क० गांधी

—अंग्रेजी। १५।६।१९२५।]

१५०. पत्र : मोतीलाल नेहरू को

बारीसाल
१५ जून, १९२५

प्रिय पण्डित जी,

आपके पत्र मे जवाहर को फिर से बुखार आने की बात पढकर मुझे बडा सन्ताप हुआ। आशा है कि पत्र लिखने के बाद आप दोनो शीघ्र ही स्वस्थ हो गये होंगे और अब स्फूर्तिदायक जलवायु का आनन्द ले रहे होंगे।

ख्वाजा के[1] सम्बन्ध मे मैंने आपको तार[2] दे दिया है। वह मुझ पर जिम्मेदारी डालने की गलती कर रहे हैं लेकिन अगर उन्हे यह करना ही हो तो मैं क्या कह सकता हू? परन्तु उनके स्थान पर बैठ कर मैं करूँ क्या? यदि जामिया असहिष्णुता की भावना पैदा करती है, तो यह ख्वाजा का ही तो दोष है। वह उसके प्रधान हैं। उसकी शुरुआत भले-से-भले मुसलमानो ने की थी। अगर उसमे बुराई आ गई हो तो सुधार किया जा सकता है, लेकिन मेरी राय मे उसकी तरफ से ऐसी लापरवाही नही की जानी चाहिए कि वह खत्म ही हो जाये। इसलिए उसे ख्वाजा का पूरा समय और ध्यान मांगने का हक है और तभी वह फल-फूल

---

१. जामिया मिलिया इस्लामिया, अलीगढ़ के ए० एम० ख्वाजा।
२. यह तार उपलब्ध नहीं है।

सकती है। ख्वाजा केवल नाम के प्रधान तो नही है। वह तो इस आन्दोलन के प्राण हैं। वह प्रशासक भी हैं। इसलिए मैं सिद्धान्त के आधार पर नहीं, नीति के आधार पर ही आपत्ति उठा रहा हूं और इस मामले में अभी नीति तो सिद्धान्त से भी अधिक महत्व रखती है। ख्वाजा के सामने अव चुनाव कराने का वस यही मार्ग रह गया है कि वह कालेज के लिए अपने समान ही योग्य अन्य व्यक्ति ढूंढ़ ले।

और फिर मै अकेला ही तो सलाह देनेवाला नही हूं। ख्वाजा यदि अली-वन्धुओं से मशविरा न करें तो भी हकीम साहव और डा० अन्सारी से तो करना पड़ेगा। वे उनके सह-न्यासी हैं। आशा है कि अव आप मेरी कठिनाई समझ गये होगे। मुझे लगता है कि मैं पूरे दिल से इस पक्ष की मदद कर रहा हूं। मैं अपने मित्रों के सन्तोप को बड़ा महत्व देता हूं, पर मैं इस संस्था की सहायता अपने मित्रों के सन्तोप की अपेक्षा अपने स्वयं के सन्तोष के लिए ही अविक करना चाहता हूं।

अगर इससे उन्हें स्वतन्त्र निर्णय करने में मदद मिल सके तो आप इस पत्र को ख्वाजा को दिखा सकते हैं।

आपका सच्चा,
मो० क० गांधी

पुनश्च :

आशा है कि आपके पहले पत्र के उत्तर में लिखा मेरा पत्र आपको मिल गया होगा।[1]

—अंग्रेजी। बारीसाल, १५।६।१९२५। महादेव देसाई की डायरी से।]
सौजन्य : नारायण देसाई।

---

१. गांधीजी ने २३ मई को ख्वाजा को एक पोस्टकार्ड लिखा था लेकिन वह उपलव्ध नहीं है। २५ को इसकी प्राप्ति-स्वीकार करते हुए, ख्वाजा ने लिखा था "पण्डित मोतीलाल नेहरू मुझे राज्य परिषद् के लिए खड़ा करने पर जोर दे रहे हैं। मैंने आपके आदेश की मॉग की थी, क्योंकि मैंने उन्हें लिखा था कि मैंने एक वर्ष तक के लिए अपनी सेवाएँ आपकी मरजी पर छोड़ दी है। आपकी अनुमति के विना मैं कुछ भी नहीं करूँगा। पहाड़ जाते समय रास्ते में पण्डित जी से मेरी मुलाकात हो गई और उन्होंने आपकी इजाजत लेने की जिम्मेदारी अपने पर ले ली है, किन्तु मैने आपसे कोई आदेश मिले बिना इसकी घोपणा नही की है।"

१५१. तार : मुहम्मद अली को

खुलना
१७ जून, १९२५

दिल्ली के उपद्रवो के सिलसिले मे दोषी या अपराधी कौन इस पर कुछ कहना नही चाहता। आपकी सत्यनिष्ठा और धर्मपरायणता पर पूरा-पूरा विश्वास है। ईश्वर हम सब का पथप्रदर्शन करे।

गाधी

[अंग्रेजी। खुलना, १७।६।१९२५। साबरमती संग्रहालय में सुरक्षित पत्रावली से।]

१५२. तार : मोतीलाल नेहरू को

कलकत्ता
(१८ जून, १९२५)[1]

पण्डित मोतीलाल जी नेहरू
हर्स्ट लाज
डलहौजी

मैं यहाँ आपके प्रतिनिधि के रूप मे हूँ। जानते-बूझते कोई ऐसा काम नही करूँगा जो आपको नापसन्द हो। बासन्ती देवी के पास से हिलता नही हू। कृपया विश्राम कीजिए, कोई जोखिम मत उठाइए। आपको पूरी ताकत आ जाने पर ही पहाडो से लौटना चाहिए। श्रद्धाजलि-सभा तक तो कलकत्ता मे रुकूगा ही। तार-द्वारा सूचित कीजिए कि स्वास्थ्य मे कितना सुधार हो पाया है। क्या जवाहरलाल वही हैं?

गाधी

[अंग्रेजी। कलकत्ता, १८।६।१९२५। सा० स० मे सुरक्षित पत्रावली से।]

---

१. चित्तरंजन दास के अस्थि-अवशेष इसी दिन कलकत्ता पहुँचे थे।

१५३. पत्र : मोतीलाल नेहरू को

[स्वराज्य-कौंसिल तथा कार्य-समिति की बैठक और महासमिति के वहाँ मौजूद सदस्यों के साथ पारस्परिक परामर्श के बाद गांधीजी ने नीचे लिखा पत्र पण्डित मोतीलाल जी के नाम भेजा।—सम्पा०]

कलकत्ता, १६ जुलाई (१९२५)

प्रिय पण्डित जी,

इन कुछ दिनों से मैं यह सोच रहा हूं कि देशबन्धु की यादगार में और लार्ड बरकनहेड के भाषण से उत्पन्न स्थिति पर मैं अपने अकेले की तरफ से कौन-सा काम करूं और मैं इस परिणाम पर पहुँचा हूं कि मैं स्वराज्य-दल को पिछले साल के ठहराव के बन्धन से मुक्त कर दूं। इस कार्य का फल यह होगा कि अब आगे महासभा के मुख्यतः कताई-संघ रहने की आवश्यकता नहीं। मैं मानता हूँ कि उस भाषण से उत्पन्न परिस्थिति में स्वराज्य-दल की सत्ता और प्रभाव बढ़ाने की आवश्यकता है। और यदि मैं अपने बस भर उस दल को मजबूत बनाने के लिए एक भी काम से विमुख रहूँगा तो मैं अपने कर्त्तव्य से च्युत होऊँगा। यह तभी हो सकता है जब महासभा मुख्यतः राजनीतिक संस्था हो जाय। मौजूदा ठहराव के अनुसार महासभा का कार्य रचनात्मक कार्यक्रम तक ही परिमित है। मैं समझता हूँ कि अब परिवर्तित दशा में, जो देश के सामने है, इस कैद के कायम रहने की आवश्यकता नहीं। इसलिए मैं स्वयं ही आपको इस बन्धन से मुक्त नहीं करता बल्कि मैं आगामी महासमिति से भी कहना चाहता हूं कि वह भी ऐसा ही करे और महासभा की सारी सत्ता आपके हवाले कर दे जिससे कि आप उसमें ऐसे राजनीतिक प्रस्ताव ला सकें जिन्हें आप देश-हित के लिए आवश्यक समझते है और जिन-जिन मामलों में मैं अपनी अन्तरात्मा को सामने रखकर आपकी सेवा और स्वराज्य-दल की सेवा कर सकता हूं उन उन मे मुझे सदा आप अपना ही समझिएगा।

आपका स्नेहांकित
मो० क० गांधी

—अंग्रेजी। कलकत्ता, १९।७।१९२५। यं० इं० २३।७।१९२५।]

१५४. पत्र : बनारसीदास चतुर्वेदी को

कलकत्ता
श्रावण सुदी ६ (जुलाई २७, १९२५)[1]

भाई वनारसीदास जी,

मेरी दाहिनी अगुली मे दर्द होने के कारण मैं वायें हाथ से लीखता हू. तुम्हारा पत्र मीला है. पैसे के लीये मैंने चि० छगनलाल को लीखा है कि उसको कुछ उजर न हो तो वाकी के सव पैसे तुमको भेज दे. मैं समझता हू कि हिसाव भी पीटीट को सीधा भेजते रहोगे. मैंने यह भी मान लीया है कि इस समय जो हम कर रहे हैं वह सब ठीक मी० पेटीट के साथ के समझौता के अनुकूल है।

तुमारे पत्र के अतीम हिस्से मे मुझे रोप और निराशा प्रतीत होते हैं। ऐसा क्यो ?

मोहनदास के व० मा०

पडित बनारसीदास चतुर्वेदी
फिरोजावाद
जिला आगरा

—हिन्दी। कलकत्ता, २७।७।१९२५। गांधी-स्मारक संग्रहालय, नई दिल्ली मे सुरक्षित पत्रावली से।]

१५५. पत्र : बनारसीदास चतुर्वेदी को

श्रावण कृष्ण १५, (१९ अगस्त, १९२५)[2]

भाई वनारसीदास जी,

मैंने भाषा पर से रोप का अनुमान कीया था. न था तो मुझे कुछ कहने का रहता नहिं है स्वास्थ्य अच्छा रहता होगा.

मोहनदास गाधी

---

१. डाक की मुहर २८ जुलाई, १९२५ की है।

२. डाक की मुहर से।

(पुनश्चः)

दक्षिण भुजा में दुःख होने के कारण यह उत्तर से लीखा गया है।

पंडीत वनारसीदास चतुर्वेदी

फीरोजावाद

डिस्ट्रिक्ट आगरा

—हिन्दी। १९।८।१९२५। गांधी स्मारक संग्रहालय, नई दिल्ली में सुरक्षित पत्रावली से।]

१५६. तार : इलाहाबाद की रामलीला समिति के मन्त्री को

रांची

(१७ सितम्वर, १९२५ या उससे पूर्व)[1]

खेद है दोनों में से किसी भी पक्ष पर मेरा कोई प्रभाव नहीं है।[2]

गांधी

—अंग्रेजी। राँची, १७।९।१९२५ या पूर्व। 'लीडर', २०।९।१९२५।]

१५७. पत्र : जवाहरलाल नेहरू को

[वहुत अधिक काम करने के कारण दाहिना हाथ थक जाता था। इसलिए गांधीजी ने वाय हाथ से लिखना शुरू किया था। उसी अवधि का लिखा यह पत्र है। —सम्पा०]

३० सितम्वर, १९२५

प्रिय जवाहर,

हम विचित्र समय में रह रहे हैं। शीतला सहाय अपना वचाव कर सकते हैं। आगे की घटनाओं से मुझे परिचित रखना। वह क्या है? वकील हैं? उनका कभी क्रान्तिकारी प्रवृत्तियों से कोई सम्बन्ध रहा है?

---

१. साधन-सूत्र के अनुसार यह तार १७ सितम्वर को मिला था।

२. यह स्पष्ट नहीं है कि तार किस सम्वन्ध में भेजा गया था। लेकिन सन्दर्भ से ऐसा लगता है कि दशहरा के त्यौहार के सिलसिले में भेजा गया होगा।

काग्रेस की वात यह है कि उसे जितना सादा वना दिया जाय उतना अच्छा है ताकि जो कार्यकर्त्ता रह गये है, वे उसे सँभाल सकें। मैं जानता हूँ, तुम्हारा वोझ अव वढेगा। परन्तु तुम्हे अपने स्वास्थ्य को किसी भी तरह खतरे मे नही डालना चाहिए। मुझे तुम्हारी तन्दुरुस्ती की चिन्ता है। तुम्हे वार-वार बुखार आना मुझे विल्कुल पसन्द नही है। काश तुम स्वय और कमला[1] थोडी छुट्टी ले लो।

पिताजी का पत्र मेरे पास आया है। वेशक जहाँ तक उनकी मान्यता है, उतनी दूर जाना मैं हर्गिज़ नही चाहता था। मैं पिताजी को आर्थिक सहायता देने के लिए किसी से कहने की वात सोचता तक नही। किन्तु किसी मित्र या मित्रो से, जो तुम्हारी सार्वजनिक सेवाओ के वदले मे तुम्हारी सहायता करना अपना सौभाग्य समझें, कहने मे मुझे कोई सकोच न होगा। मैं तो आग्रह करूँगा कि तुम्हारी जो स्थिति है और रहेगी, उसके कारण, यदि तुम्हारी आवश्यकताएँ असाधारण न हो तो तुम्हे सार्वजनिक कोप से लेना चाहिए। मेरा अपना तो दृढ मत है कि कोई व्यवसाय करके या अपनी सेवा सुरक्षित रखने के लिए किसी मित्र को अपने लिए रुपया जुटा देने देकर तुम सामान्य कोप की वृद्धि करोगे। तुरन्त कोई जल्दी नही है, किन्तु इधर-उधर परीशान न होकर किसी अन्तिम निश्चय पर पहुँच जाओ। तुम कोई व्यवसाय करने का फैसला करो तो भी मुझे आपत्ति नही होगी। मुझे तो तुम्हारी मानसिक शान्ति चाहिए। मैं चाहता हूँ कि किसी व्यवसाय के प्रवन्धक की हैसियत से भी तुम देश की सेवा ही करोगे। मुझे विश्वास है, जवतक तुम्हारे किसी भी निश्चय से तुम्हें पूर्ण शान्ति मिलती होगी, तवतक पिता जी को कोई आपत्ति नही होगी।

सस्नेह, तुम्हारा
वापू

मैं समझता हू मुझे दाया हाथ य० इ० के लिए ही सुरक्षित रखना चाहिए।

—अग्रेजी। ३०।९।१९२५। 'ए वच आफ ओल्ड लेटर्स' से।]
सौजन्य : श्रीमती इन्दिरा गाधी

---

१. कमला नेहरू, जवाहरलाल जी की पत्नी।

१५८. पत्र : लखनऊ के एक कार्यकर्त्ता को

(पटना)
१२ अक्तूबर, १९२५

प्रिय मित्र,

आपका पत्र मिला। मुझे एक तार मिला है, जिसमें यह शिकायत की गई है कि मैं सीतापुर के कार्यक्रम में व्याघात डाल रहा हूँ। मुझे आपका तार भी मिला था। इसलिए मैंने आपको इस आशय का तार भेजा कि आप सीतापुर कमेटी की सहमति से अपने यहाँ का कार्यक्रम निर्धारित करें। फिर भी मैं यह बता दूँ कि यदि लखनऊ में बीच में पाँच घण्टे का भी अन्तर पड़े तो इतना समय मुझे आराम के लिए मिलना चाहिए। लेकिन यह यदि सम्भव न हो तो आप मुझे लखनऊ में पाँच घण्टे व्यस्त न रक्खें, बल्कि मोटर से सीतापुर पहुँचा दे। मोटर-यात्रा की अपेक्षा रेल-यात्रा मैं ज्यादा पसन्द करूँगा पर देर तक काम करने से तो मोटर-यात्रा करना ही ज्यादा पसन्द करूँगा। मै इतना ज्यादा कमजोर हो गया हूँ कि शाम को ७ बजे तक थक कर चूर हो जाता हूँ। जब रात की सभाओं में शामिल होता हूँ, तो मुझे जम्हाइयाँ आने लगती है। इस तरह मैने अपनी हालत और मेरी इच्छा क्या है सो सब बता दिया। अब आप सार्वजनिक हित में जो भी काम ठीक समझें, कर सकते है। कारण, अब मै भाषण आदि देना नही चाहता। इससे कही अच्छा तो यह होगा कि आप मुझसे कताई-प्रदर्शन करने के लिए कहें।

हृदय से आपका,
मो० क० गांधी

—अंग्रेजी। पटना, १२।१०।१९२५। सं० गां० वा० खण्ड २८, पृष्ठ ३२४।]

१५९. पत्र : मोतीलाल नेहरू को

अहमदाबाद
२४ नवम्बर, १९२५

प्रिय मोतीलाल जी,

आपका पत्र मिला। मैं तीन दिन से आपको पत्र लिखने की बात सोच रहा था। इलाज के लिए कमला का जवाहरलाल के साथ स्विटजरलैण्ड जाने का विचार

बहुत ही अच्छा है। यहां की बनिस्पत वहां के इलाज से निश्चय ही अधिक स्थायी लाभ होगा। लेकिन सोचता हूं कि उसे वहां जाड़ो मे न भेजा जाये, वल्कि अप्रैल मे ही वह वहां जाये। इसलिए मेरा ऐसा विचार है कि इस समय विना आगा-पीछा किये उसे लखनऊ भेजना ठीक रहेगा, और जवाहरलाल को चाहिए कि वह जहां तक बने ज्यादा-से-ज्यादा उसी के पास रहे। मेरा मन आपकी इस पारिवारिक परेशानियो के बारे मे सोचता रहता है। मैं आशा करता हूं कि कमला फिर से जल्द ही स्वस्थ हो जायगी।

पर पारिवारिक परेशानियो के कारण ही सही आपको काम मे थोडी फुरसत मिल जाना ठीक ही है। लगातार परिश्रम करते हुए आपको वीच-वीच मे आराम लेना ही चाहिए। राजनीतिक परेशानियां और मतभेद तो हमेशा बने रहेगे। इसलिए थोडे समय विश्राम कर लेने मे कुछ खास हानि नही है। मैंने बैठको की पूरी-पूरी रिपोर्ट नही देखी है, लेकिन मैं सम्बन्धित मोटी-मोटी सुर्खियो और विवरणो की दो-चार लकीरें जरूर देखता रहा हूं। इस तरह सरसरी निगाह डालते रहने से मुझे इतना अन्दाज तो हो ही गया है कि आपको काफी सफलता मिल रही है; इसमे मुझे जरा भी सन्देह नही है।

आपने मेरा ध्यान मेरे द्वारा दी गई किसी भेंट की तरफ दिलाया है। लेकिन मैंने ऐसी कोई भी भयकर भूल करने का अपराध नही किया है। हमारे मित्र सदानन्द[1] ने मेरे पास भेंट के लिए कहलवाया था, लेकिन मैंने उन्हें खबर भेज दी थी कि मुझे कुछ भी नही कहना है। एसोसिएटेड प्रेस का सवाददाता मेरे पास अनेक बार आ चुका है और मैंने उसे भी वही जवाब दिया है। मैंने देवदास से कहा है कि समाचारपत्रो मे क्या छपा है, मुझे वताये। उसने भी किसी सम्वाददाता की ओर से एक अश के सिवाय कुछ और नही देखा। मेरा खयाल है कि वह अश 'यग इण्डिया' से लिया गया है।

श्रीमती नायडू एक दिन अहमदावाद रही। उन्होंने कहा तो यह कि यात्रा के दौरान यहां केवल यह देखने के लिए उतर गई हूँ कि कच्छ मे कुछ पौंड वजन खोकर अव मैं कैसा लग रहा हूँ। उन्होंने मुझे वताया कि भाषण मे क्या-कुछ कहा जाये इसकी चर्चा करने वह महीने के अन्त मे यहाँ आयेंगी। इस समय वे वम्बई मे हैं। सात दिसम्वर को मैं वम्वई से सत्याग्रह आश्रम के लिए रवाना होकर आठ को वम्वई पहुँच रहा हूँ। मैं ९ को वम्वई से वर्धा के लिए रवाना होकर १० को वहां पहुँच जाऊँगा। यदि आप समझते हैं कि तवतक रुकने मे हर्ज नही है तो हम

---

१. वम्वई के अंग्रेजी दैनिक फ्री प्रेस जर्नल के सम्पादक।

वर्धा में मिल सकते हैं। लेकिन शायद श्रीमती नायडू खुद तवतक न रुक सकें। यों आप कभी भी यहाँ आयें मुझे तो अवकाश रहेगा और वेशक वर्धा में भी। यदि आप सुनें कि मैं फिर उपवास कर रहा हूँ तो चिन्तित न हों। यह केवल एक सप्ताह का उपवास है, यह मैने आश्रम से सम्बद्ध शाला में पढ़नेवाले कुछ-एक वच्चों के गलत वर्ताव के सिलसिले मे आत्मशुद्धि के निमित्त किया है। ऐसे उपवास करना मेरी जरूरतों का अंग वन गया है। उससे मुझे लाभ होता है और कम-से-कम कुछ समय के लिए आसपास का वातावरण शुद्ध हो जाता है। उपवास मंगलवार की सुबह समाप्त होगा और जल्दी ही ताकत वापस पा लेने में कोई कठिनाई नही होगी। मैं दास्ताने को पहले ही लिख चुका हूँ। गंगाधर राव चूंकि यहाँ थे, इसलिए उनसे मैंने खुद ही कह दिया था।

मैं आशा करता हूँ कि इस संकट से अपको जो मानसिक चिन्ता और परेशानी इन दिनों है उसके वोझ के वावजूद आप अपने स्वास्थ्य का पूरा ध्यान रक्खेगे।

हृदय से आपका,
मो० क० गांधी

—अंग्रेजी। अहमदाबाद, २४।११।१९२५। साबरमती संग्रहालय में सुरक्षित पत्रावली से।]

१६०. तार : जवाहरलाल नेहरू को

अहमदाबाद, १-१२-१९२५

जवाहरलाल नेहरू, आनन्द भवन, इलाहाबाद

उपवास टूटा। हालत बिल्कुल ठीक है। आशा है, कमला वरावर प्रगति कर रही होगी। सरूप यहाँ है।

गांधी

—अंग्रजी। अहमदाबाद, १।१२।१९२५। 'ए वंच आफ ओल्ड लेटर्स' से।]
सौजन्य : श्रीमती इन्दिरा गांधी

१६१. पत्र : जवाहरलाल नेहरू को

[इलाज के बावजूद कमला नेहरू की तबीयत अधिकाधिक बिगड़ती जा रही थी। इसलिए उनको यूरोप ले जाने की सलाह चिकित्सकों ने दी थी। निम्नांकित पत्र इसी सन्दर्भ मे है।—सम्पा०।]

२१ जनवरी, १९२६

प्रिय जवाहर,

मुझे खुशी है कि तुम कमला को अपने साथ ले जा रहे हो। हाँ, दोनो नही आ सको तो जाने के पहिले कम-से-कम तुम्हे तो यहाँ आना चाहिए। देशबन्धु-स्मारक के बारे मे जमनालाल जी के नाम तुम्हारा पत्र काफी होगा। चर्खा सघ के मन्त्री तो तुम रहोगे ही, किन्तु यदि कोई सहायक चाहिए तो शकरलाल के पास होना चाहिए। नक्शा तैयार न करने के लिए मै तुम्हे दोष नही दे सकता। तुमने अपना समय व्यर्थ नही गवाया है। तुम्हारे पास यूरोप मे काम करने लायक कपडे होने चाहिए।

सस्नेह, तुम्हारा
बापू

—अंग्रेजी। २१।१।१९२६]
सौजन्य : श्रीमती इन्दिरा गांधी

१६२. पत्र : मोतीलाल नेहरू को

आश्रम, साबरमती
फरवरी १७, १९२६

प्रिय मोतीलाल जी,

मुझे आपका पत्र मिल गया है। मैं जानता हूँ कि बीमार पड जाना मेरे लिए लज्जा की बात है। अब मैं दूने एहतियात से काम ले रहा हूँ। वर्ष के अन्त तक अपने को स्वस्थ रूप मे पेश करने के लिए मैं कुछ भी उठा न रखूंगा। और यदि आपके पास कोई ऐसी होमियोपैथी की गोलियाँ हो जो पूर्ण रोग-निवारण की गारण्टी कर सकें और ५६ वर्ष के बूढ़े की जगह मुझे २६ वर्ष का जवान बना दें, तो मैं उन्हें प्रतिदिन उतनी मात्रा मे ले लूंगा जितनी कि आप मुझे लेने के लिए कहेंगे!

मुझे वहुत खुशी है कि जवाहरलाल और कमला जा रहे हैं, और उनके साथ सरूप और रणजित भी रहेंगे। मुझे इससे आश्चर्य नहीं हुआ कि कृष्णा भी पीछे छोड़ दिये जाने के लिए तैयार नहीं है। मैं तो आशा करता हूँ कि उसे किसी-न-किसी तरह यों निचोड़ना (दवाना) सम्भव हो जायगा कि वह जितना भी सम्भव हो, वाहर घूमने जाने लगे। मैं इस यात्रा से वहुत वड़े परिणामों की आशा करता हूँ,—न केवल कमला के लिए, वल्कि जवाहरलाल के लिए भी।

हाँ, मैंने इस तथ्य पर ध्यान दिया था कि वाइसराय और दोनों सदनों के नेताओं के वीच जो सम्मेलन हुआ, उसमें आप उपस्थित थे। मुझे खुशी है कि आप भी उस दल में से एक थे।

यदि असेम्वली की समस्त समितियों को छोड़ना है तो मुझे वहुत भय है कि स्कीन कमेटी[1] के वारे में भी वैसा ही करना होगा, यद्यपि उसमें वह प्राविधिक अन्तर है जिसकी ओर आपने इशारा किया है किन्तु हमारे मतलव के लिए वह काफी नहीं होगा। यद्यपि व्यक्तिगत रूप से स्कीन कमेटी से आपके हटने की वात मैं नापसन्द करता हूँ किन्तु यदि कौंसिलों से वाहर चले जाना अच्छा है तो स्कीन कमेटी से वाहर आजाना भी जरूरी हो जायगा।

यदि आप सव इस माह एक दिन के लिए भी यहाँ आ सकें तो मुझे वड़ा आनन्द होगा। चूँकि आप कठिनाइयों पर जीवित रहनेवाले व्यक्ति हैं, मुझे उम्मीद है कि आप पूर्णत: स्वस्थ एवं सुदृढ़ होंगे।

आपका विश्वासपात्र

—अंग्रेजी। सावरमती, १७।२।१९२६। सावरमती संग्रहालय में सुरक्षित पत्रावली से।]

---

१. यह कमेटी १९२५ में सर एण्डरू स्कीन की अध्यक्षता में भारत में एक सैनिक कालेज की स्थापना के वारे में विचार करने के लिए नियुक्त की गई थी। इसे 'इण्डियन सेण्डहर्स्ट' कमेटी भी कहा जाता था।

१६३. पत्र : मोतीलाल नेहरू को

२७ फरवरी, १९२६

प्रिय मोतीलाल जी,

मैंने आपको मु० शफी का पत्र दिखा दिया है। कृपया उनको तथा अन्य मुसलमान मित्रों को बता दीजिए कि जो प्रस्ताव[1] पश्चिमोत्तर प्रान्तों के बारे में पेश किया गया है, मेरी सम्मति में उसका समर्थन करना स्वराजियों के लिए गलत होगा। इसके साथ ही कांग्रेस यदि स्वशासन की किसी योजना को स्वीकार करती है तो उसमें मैं इन प्रान्तों के शामिल किये जाने का समर्थन करूँगा। उस दिशा में मैंने आपको दो प्रस्तावों के मसविदे सुझाये हैं, जिन्हें, मैं आशा करता हूँ, मुसलमान मित्र स्वीकार कर लेंगे। अगर कोई रजामन्दी नहीं हो सकती तो मैं अनुभव करता हूँ कि (उस अवस्था में) स्वराजी सदस्यों द्वारा मत देने पर आपका रोक लगा देना ही एक मात्र सम्मानपूर्ण रास्ता होगा।

आपका

मो० क० गांधी

—अंग्रेजी। साबरमती, २७।२।१९२६। हिन्दुस्तान टाइम्स, १९।३।१९२६।]

१६४. पत्र : जवाहरलाल नेहरू को

आश्रम, साबरमती

५ मार्च, १९२६

प्रिय जवाहरलाल,

तुम्हारा पहिली तारीख का पत्र मिला। यद्यपि तुम डा० मेहता के नाम पत्र छोड़ ही गये हो, फिर भी दुगनी निश्चिन्तता कर लेने के लिए मैंने भी उन्हें लिखा है। आशा है, जहाज पर कमला का स्वास्थ्य बहुत अच्छा रहा

१. सय्यद मुर्त्तजा साहब बहादुर ने केन्द्रीय धारा-सभा में पश्चिमोत्तर प्रान्तों के विषय में यह प्रस्ताव पेश किया था।

होगा। तुम सबको समुद्र-यात्रा से लाभ हुआ? अधिक लिखने के लिए समय नहीं है।

सस्नेह, तुम्हारा
मो० क० गांधी

—अंग्रेजी। साबरमती, ५।३।१९२६।]
सौजन्य : श्रीमती इन्दिरा गांधी

१६५. पत्र : सुन्दर स्वरूप को

आश्रम, साबरमती
मार्च ११, १९२६

प्रिय मित्र,

मुझे आपका पत्र मिल गया है। 'यंग इण्डिया' से जो कुछ आपको पसन्द हो उसका अनुवाद आप कर सकते हैं, किन्तु कोई चीज मेरे द्वारा प्रमाणित कह कर नहीं छाप सकते क्योंकि मैं आपके अनुवादों की जाँच नहीं कर सकता। इसलिए आप जो कुछ करें सिर्फ अपनी जिम्मेदारी पर करें और अपने प्रयास में मेरे नाम का प्रयोग न करें। मैं तो सिर्फ इतना ही कर सकता हूँ कि आपके मार्ग में कोई कानूनी बाधा आती हो तो उसे दूर कर दूँ। इस पत्र-द्वारा वह दूर हो गई है।

आपका
...

श्रीयुक्त सुन्दर स्वरूप
लखनरा भवन
मेरठ सिटी

—अंग्रेजी। साबरमती, ११।३।१९२६। साबरमती संग्रहालय में सुरक्षित पत्रावली से।]

१६६. पत्र : परशुराम मेहरोत्रा को

[टिप्पणी : पत्र की मूल हिन्दी प्रतिलिपि, परिस्थिति-वश, प्राप्त नहीं की जा सकी, यह उसके अंग्रेजी अनुवाद से किया गया हिन्दी रूपान्तर है। डाक की मुहर से जान पड़ता है कि यह पत्र २० मार्च १९२६ को लिखा गया था।—सम्पा०]

आश्रम, साबरमती
शनिवार

भाई परसराम,

तुम्हारा पत्र। विद्यापीठ की जगह भर गई तो उसकी चिन्ता न करो। तुम विलम्ब भी करोगे तो दूसरी जगह भरी नहीं जायगी। तुम वहाँ का काम खतम करने के बाद भी आ सकते हो। यह अच्छी बात है कि तुम टाइप-राइटिंग का अभ्यास कर रहे हो।

बापु के
आशीर्वाद

श्री परसराम
"स्त्रीदर्पण" कार्यालय,
कानपुर (म० प्रा०)

—मूल हिन्दी। साबरमती, २०।३।१९२६। कलेक्टेड वर्क्स आफ महात्मा गांधी खण्ड ३० से।]
सौजन्य : श्री परशुराम मेहरोत्रा

१६७. पत्र : ज० प्र० नैयर को

आश्रम, साबरमती
मार्च २७, १९२६

प्रिय मित्र,

आपने मुझे जो खुली चिट्ठी लिखी थी उसका उत्तर न देने पर आपको दुःख का अनुभव हुआ है। किन्तु मुझे आपसे कहना चाहिए कि किसी खुली चिट्ठी पर

विचार प्रकट करने या उसकी प्राप्ति देने की आवश्यकता नहीं हुआ करती। खुली चिट्ठियाँ सार्वजनिक पुरुषों को इसलिए लिखी जाती हैं कि जिन बातों से उनका सम्बन्ध होता है उनपर उनका ध्यान विशेष रूप से दिलाया जाय। जब मैं अनुभव करता हूँ कि उनमें यदि किसी बात को तुच्छ ठहराया गया है या उसके बारे में गलतबयानी की गई है तब मैं उस पर यह सोचकर ध्यान देता हूँ कि इससे मैं उस विषय में कुछ सेवा कर सकूगा। आपके प्रति अशिष्ट होने की कोई इच्छा नहीं थी। इस बार आपने जो अनुरोध किया है वह कठिन है। जब मैं नहीं जानता कि जो पत्र आप प्रकाशित करने जा रहे हैं उसकी नीति क्या होगी, तब मैं आपको पथ-दर्शन या प्रेरणा कैसे दे सकता हूँ? आपने जो नाम चुना है वह निश्चित रूप से मुझे चौका देता है। यह बात नहीं कि मैं गणराज्यवाद (रिपब्लिकनिज़्म) की प्रशंसा नही करता, किन्तु इस समय भारत के लिए गणराज्य की बात मेरी राय में, एक निरर्थक पद है। मैं जानता हूँ कि इस मामले में मत-भेद है किन्तु मुझे तो अपने ही विचार पर कायम रहना चाहिए। मैं तरुण पीढ़ी के साथ मिल कर काम करने को उत्सुक हूँ किन्तु मैं उनकी दृष्टि से देख नहीं सकता। ज्यादा-से-ज्यादा मैं यह कर सकता हूँ कि अपने को पृष्ठभूमि में रख लूँ और जो कुछ वे दूसरों के अनुभव से सीखने को तैयार नही है उन्हें उन्ही के कडुवे अनुभवों से सीखने का अवसर दूं।

आपका

...

श्री ज० प्र० नैयर
सम्पादक
'रिपब्लिक'
मालरोड, कानपुर

—अंग्रेजी। साबरमती, २७।३।१९२६। सा० सं० में सुरक्षित पत्रावली से।]

१६८. पत्र : स० प० एण्डरूज दुबे को

आश्रम, साबरमती
एप्रिल १, १६२६

मेरे प्रिय दुबे,

मुझे तुम्हारा पत्र मिल गया है। मैं नही जानता कि वे लोग मसूरी मे मुझे कहाँ ठहराने की व्यवस्था करने जा रहे हैं।सारा प्रवन्ध बिडलाओ और जमनालाल जी वजाज द्वारा किया जा रहा है। किन्तु मैं समझता हूँ कि जब मैं मसूरी पहुँचूंगा तो तुम्हें वहाँ पाऊँगा, और तुम अपने कटु अनुभवो के विषय मे सब कुछ मुझे वताओगे।

रामदास अमरेली से अभी यहाँ आया है। मैं तुम्हारा पत्र उसे दिखा रहा हूँ।

तुम्हारा

श्री स० प० एण्डरूज़-दुबे
सर्वेण्ट्स आफ इण्डिया सोसाइटी
लखनऊ

—अंग्रेजी। साबरमती, १।४।१९२६। सा० सं० नं० १९४०३ से।]

१६९. पत्र : ज० प्र० नैयर को

आश्रम, सावरमती
अप्रैल ३, १६२६

प्रिय मित्र,

मुझे आपका पत्र मिल गया है। 'रिपब्लिक' (गणतन्त्र) शब्द के अर्थ के विषय मे आपने मुझे पहले से भी ज्यादा चक्कर मे डाल दिया है। मैं देख रहा हूँ कि आपके और मेरे विचारो के वीच सर्वाधिक-सम्भव अन्तर है। तव भला मैं आपको प्रोत्साहन देनेवाली कोई चीज कैसे भेज सकता हूँ ?

मैं क्षण-भर के लिए भी यह विश्वास नही करता कि अ० (असहयोग) आन्दोलन का चमत्कार समाप्त हो गया है, न तो मुझे यही यकीन है कि वारडोली का निर्णय एक भूल थी। और मैं तो पहिले से इस वात पर कही ज्यादा विश्वास रखता हूँ कि जो लोग गरीवो का खयाल [illegible] और जो उन्हे समझते हैं वे इससे ज्यादा

अच्छी सेवा नही कर सकते कि चर्खे, खद्दर और विदेशी वस्त्र-वहिष्कार के प्रचार-प्रसार में अपनी सारी शक्ति लगा दें।

आपका,

श्रीयुक्त ज० प्र० नैयर,
सम्पादक 'रिपब्लिक'
मालरोड, कानपुर

[—अंग्रेजी। सावरमती, ३।४।१९२६। सावरमती संग्रहालय में सुरक्षित पत्रावली से।]

१७०. पत्र : ग० ग० राय को

आश्रम, सावरमती
एप्रिल ७, १९२६

प्रिय मित्र,

मुझे आपका पत्र मिल गया है। जो दिलचस्प कतरन आपने भेजी है वह मुझे बिल्कुल "हिस्टीरिकल" लगती है। उस ज़माने में वहाँ ३३ शाकाहारी जलपान-गृह थे। मै नही जानता कि इस समय कितने हैं। और जहाँ तक मेरी जानकारी है, लेखक ने जिन (भोजनयुक्त) तश्तरियों का ज़िक्र किया है उन्हें लोग बड़े स्वाद से ग्रहण किया करते थे और उनसे लाभान्वित होते थे। परन्तु ये सब तो मन के विषय है। जिन चटनियों का उसने बड़े आन-बान से वर्णन किया है वे मुझमें उबकाई पैदा करती है।

आपका निश्छल

...

श्री ग० ग० राय
मोतीमहल
कानपुर

[—अंग्रेजी। सावरमती, ७।४।१९२६। सावरमती संग्रहालय में सुरक्षित पत्रावली से।]

बेबस पाया। उस समय तो उन्हें मुक्त करना सम्भव नहीं है। [illegible] उन्हें छोड़ना असम्भव हो सकता है। हमारे राष्ट्रीय जीवन में, [illegible] मुक्ति प्राप्त करने के लिए, अर्थात् [illegible], दो वर्ष [illegible] अपना आश्वासन देता हूँ कि यदि कोई ऐसा सुयोग उपस्थित होता [illegible] जी को उसके पूर्व मुक्त किया जा सके, तो मैं सहायता [illegible] क्योंकि मैं जानता हूँ कि आपका काम कितना मूल्यवान है और [illegible] [illegible] को उससे कहीं ज्यादा फलप्रद बनाता है, जितना वह [illegible] आपके बीच उनका निरन्तर रहना कितना जरूरी है। इसलिए मैं आशा करता हूँ कि उनके यहाँ का कार्य संगठित करने में आप [illegible] जी का मार्ग सरल बनायेंगे।

आपका निश्छल

...

गांधी आश्रम,
बनारस

—अंग्रेजी। साबरमती, ११।४।१९२६। साबरमती संग्रहालय में सुरक्षित पत्रावली से।]

१७३. पत्र : जवाहरलाल नेहरू को

आश्रम, साबरमती
२६ अप्रैल, १९२६

प्रिय जवाहरलाल,

मैं प्रति सप्ताह तुम्हें लिखने का विचार करता रहा और हर बार असफल रहा। किन्तु यह सप्ताह मैं यों ही नहीं गुजर जाने दूँगा। तुम्हारे बारे में ताजे समाचार मुझे पिता जी से मिले, जब वह प्रतिसहयोगवादियों[1] के साथ यहाँ आये थे। जो समझौता हुआ, वह तुमने देख लिया होगा।

हिन्दू और मुसलमान दिन-दिन एक-दूसरे से दूर होते जा रहे हैं, किन्तु इस

1. तात्कालिक भारतीय राजनीति का एक दल, जिसका मुख्य गढ़ था महाराष्ट्र। मुकुन्दराव जयकर एवं नरसिंह चिन्तामणि केलकर इसके नेताओं में थे।

बात से मुझे अशान्ति नही होती। किसी भी कारण से सही, मुझे मालूम होता है कि यह अलगाव इसीलिए बढ रहा है कि आगे चलकर वे सब और नजदीक आयें।

मैं आशा करता हूँ, कमला को लाभ हो रहा है।

सस्नेह, तुम्हारा

बापू

—अंग्रेजी। साबरमती, २३।४।१९२६। 'ए बच आफ ओल्ड लेटर्स' से।]
सौजन्य : इन्दिरा गाधी

१७४. पत्र : जी० स्टेनली जोंस को

आश्रम, साबरमती

एप्रिल २४, १९२६

प्रिय मित्र,

मुझे आपका खत तथा आपके पत्र की एक, दो नही, प्रति प्राप्त हुई है।

यह साप्ताहिक है या मासिक? मेरे सामने जो प्रति है उससे मुझे इसकी जानकारी नही मिलती। ज्योंही मुझे कुछ फुर्सत मिलेगी, मैं आपके पास कुछ (लिख) भेजूंगा, किन्तु आप से इस पत्र का उत्तर पाने के बाद।

मैं मसूरी जा रहा था किन्तु जो मित्र मुझे वहाँ भेजने मे दिलचस्पी ले रहे थे उन्होंने अपना आग्रह ढीला कर दिया है और आश्रम मे रहने दिया है। मैं आश्रम मे आपके आगमन की प्रतीक्षा करूँगा और चाहे जितने भी कम समय के लिए हो अपने बीच आपके ठहरने की राह देखूंगा। आपने मुझसे ऐसा कहा था न कि आप इसके पहिले आश्रम मे एक-दो दिन रह चुके हैं? यदि मैं किसी कारण से, जुलाई मे आश्रम से कही चला जाऊँ, तब भी आप आयेंगे। मुझे आशा है कि विश्व-छात्र-सम्मेलन में मेरे फिनलैण्ड जाने की किञ्चित् सम्भावना है। मैं कहता हूँ किञ्चित् सम्भावना क्योंकि मामला बात-चीत के स्तर से आगे नही बढ़ा है।

आपका निश्छल

...

जी० स्टेनली जोस महोदय,
सीतापुर, यू० पी०

—अंग्रेजी। साबरमती, २४।४।१९२६। साबरमती संग्रहालय मे सुरक्षित पत्रावली से।]

१७५. पत्र : श्रीप्रकाश को

आश्रम, साबरमती
मई १, १९२६

प्रिय मित्र,

अभी तक मैं तुम्हारे पत्र तक नही पहुँच पाया। 'फ्रीडम' के लिए मेरा लेख यह रहा[1] यदि इसे लेख कहा जा सके।

तुम्हारा निश्छल
. . .

श्रीयुक्त श्रीप्रकाश,
सेवाश्रम
बनारस कैण्ट

—अंग्रेजी। साबरमती, १।५।१९२६। साबरमती संग्रहालय में सुरक्षित सामग्री से।]

१७६. पत्र : शरदिन्दु बी० बनर्जी को

आश्रम, साबरमती
मई ११, १९२६

प्रिय मित्र,

मुझे आपका पत्र मिली गया है। मुझे स्पष्ट नहीं हुआ कि आप सचमुच चाहते क्या हैं। क्या आप थोड़े समय के लिए मेरे साथ ठहरना चाहते हैं? और यदि ऐसा है तो आप करना क्या चाहते हैं? जैसा कि आप जानते हैं, मेरा अत्यन्त व्यस्त जीवन है। मुझे लोगों से बात करने का समय मुश्किल से मिलता है। और मैं अपने तात्पर्य के सिवा ऐसा क्वचित् ही करता हूं। इसलिए यदि कोई मेरे पास आता है तो उसे तुरन्त किसी उपयोगी काम पर लगा दिया जाता है और वह

---

१. देखिए 'फ्रीडम' पत्र के लिए सन्देश।

पन-खुड्डियो की सफाई से अपने काम का आरम्भ करता है, और कताई तो आवश्यक है ही।

आपका निश्छल

. . . .

श्रीयुक्त शरदिन्दु वी० वनर्जी
१३ एडमास्टन रोड
इलाहावाद

—अंग्रेजी। सावरमती, ११।५।१९२६। सावरमती संग्रहालय मे सुरक्षित पत्रावली से।]

१७७. पत्र : मोतीलाल नेहरू को

महावलेश्वर
मई १६, १९२६

प्रिय मोतीलाल जी,

मुझे देवदास के वारे मे आपका तार मिल गया था। डा० दलाल को अपेण्डिसाइटिस का शुवहा था और उन्होंने आपरेशन की सलाह दी थी। मुझे राजी होने मे कोई हिचकिचाहट नही थी। इसलिए जमनालाल जी और महादेव की उपस्थिति मे आपरेशन हुआ। मैं उपस्थित नही था। किन्तु महावलेश्वर और देवलाली, जहा मैं वीमार मथुरादास को देखने गया था, के रास्ते मे मैंने उसे गुरुवार को देखा था। देवदास अच्छी तरह है और २५ के लगभग अस्पताल से छोडे जाने की आशा रखता है। ज़रा भी चिन्ता का कारण नही है। मैं यह पत्र बोलकर महावलेश्वर मे, जहा मैं आज तीसरे पहर ५ वजे पहुँचा, लिखवा रहा हू। मुझे मगलवार[1] को गवर्नर से मिलना है।

विट्ठलभाई के पत्र की प्रतिलिपि साथ है। पत्र लिखने के वाद वह आश्रम आये थे। मैंने उनसे उस वार्तालाप की चर्चा की, जो हमारे वीच स्पीकर (केन्द्रीय धारा सभा के अध्यक्ष) के वेतन के विषय मे हुआ था। उन्होंने मुझसे कहा कि तन-

---

१. अर्थात् मई १८, १९२६ को। दूसरी मुलाकात के लिए १९ तारीख का निश्चय हुआ था।

ख्वाह का आधा या कोई भी अंश दलीय कोष में देने के विषय में उन्हें किसी व्यवस्था का ज्ञान नहीं है। इस पर मैंने उनसे कहा कि चेक स्वीकार करने के पूर्व मुझे आपसे मश्विरा करना ही होगा। क्या आप कृपापूर्वक बतायेंगे कि क्या करना है ?

जब हम टहल रहे थे, सर चुन्नीलाल मेहता[1] ने मुझे बताया कि आपने इंग्लैण्ड न जाने का निश्चय किया है और दल का नेतृत्व श्री एयंगर[2] के लिए छोड़कर किसी पहाड़ी पर विश्राम करना चाहते हैं। क्या आप इंग्लैण्ड नहीं जा रहे हैं ?

आपका निश्छल

....

पण्डित मोतीलाल नेहरू
आनन्द भवन,
इलाहाबाद,

—अंग्रेजी। महाबलेश्वर, १६।५।१९२६। साबरमती संग्रहालय में सुरक्षित पत्रावली से।]

१७८. पत्र : मोतीलाल नेहरू को

मई २४, १९२६

प्रिय मोतीलाल जी,

सफर मंसूख करने के लिए आपने मुझे जो कारण बताये हैं उनकी मैं कल्पना नहीं कर सकता था। किन्तु कारण जान लेने के बाद, मैं इस मंसूखी के लिए दुःख नहीं करता। कृष्णा के जवाहर के पास चली जाने से आपकी सब चिन्ताएं छूट गई हैं। मैं जानता हूं कि आप 'चेम्बर प्रैक्टिस' से अपनी सारी जरूरतों के लिए, बल्कि उससे भी ज्यादा, कमा लेंगे !

मुझे अभी तक आपका बोलकर लिखाया पत्र नहीं मिला है। मैं इसके लिए प्रतीक्षा कर सकता हूं। महाबलेश्वर के बारे में मैं आपको इतनी ही रिपोर्ट दे सकता हूं कि मैंने गवर्नर के साथ तीन सुखद घण्टे बिताये। ज्यादातर हमने चर्खे पर, और

---

१. महाबलेश्वर में गांधी जी के मेजबान।

२. श्री निवास एयंगर, कांग्रेस-स्वराज्य दल के प्रसिद्ध नेता।

थोडी वहुत भारत के पशु-धन पर वातें की। यदि इस मुलाकात के पीछे कुछ और रहा हो तो मैं उसे भाप नही पाया, न मैंने उसके लिए कोशिश की।

देवदास को उम्मीद है कि वह (अस्पताल से) एक सप्ताह मे छूट जायगा; तव वहुत करने वह स्वास्थ्य-लाभ के लिए मसूरी जायगा।

फिनलैण्ड के वारे मे अभी तक कुछ भी निश्चय नही हुआ है। सम्भावना यही है कि मैं नही जा रहा हू। एक हफ्ते के अन्दर मैं जान सकूगा।

आपका निश्छल

मो० क० गाधी

—अंग्रेजी। सावरमती, २४।५।१९२६। सावरमती संग्रहालय मे सुरक्षित सामग्री से।]

१७९. पत्र : मोतीलाल नेहरू को

आश्रम, सावरमती

जून ३, १९२६

प्रिय मोतीलाल जी,

आपके पत्र की जो प्रतिलिपि मैंने विट्ठल भाई को भेजी थी, उसका उत्तर साथ है।

मुझे आशा है कि मसूरी-निवास से आपको लाभ हो रहा होगा।

आपका निश्छल

. ...

सलग्न १

पण्डित मोतीलाल नेहरू

मसूरी

—अग्रेजी। सावरमती, ३।६।१९२६। सावरमती सग्रहालय मे सुरक्षित पत्रावली से।]

१८०. पत्र : परशुराम मेहरोत्रा को

सावरमती आश्रम
जून १८, १९२६

चि० परसराम,

अब मैं जानना चाहता हूं कि तुम कब आ सकते हो। मै हिन्दी नवजीवन के लिए तुम्हारा उपयोग करना चाहता हूं। काम शीघ्रता के साथ होना चाहिए।

बापु के आशीर्वाद

श्री परसराम जी
"मालव-मयूर" कार्यालय
अजमेर।

—हिन्दी। साबरमती, १८।६।१९२६। मूल हिन्दी के कलेक्टेड वर्क्स द्वारा किये गये अंग्रेजी अनुवाद से अनूदित। क० व० म० गां०, खण्ड ३१ से।]

१८१. पत्र : ए० एस० डेविड को

आश्रम, सावरमती
जून १९, १९२६

प्रिय मित्र,

मुझे आपका पत्र[1] मिला है। आपका जो अभिप्राय है उसे मैं समझता हूं। किन्तु मुझे स्वीकार करना चाहिए कि मैं आपके इस सबसे ताज़े पत्र को और भी कम पसन्द करता हूं। किन्तु मैं बहस में पड़ना नहीं चाहता। मै अपनी इस सलाह को दोहराता हूं कि कोई कदम उठाने के पहिले आपको यहां आना और खुद सब वातें देख लेनी चाहिए।

आपका निश्छल

ए० एस० डेविड महोदय
७१, दिलकुशा
लखनऊ

—अंग्रेजी। सावरमती, १९।६।१९२६। साबरमती संग्रहालय में सुरक्षित पत्र की फोटो-नकल से।]

---

१. अपने १०।६।१९२६ के इस पत्र में श्री डेविड ने शरीर-श्रम करके आजीविका प्राप्त करने के सिद्धान्त में अपनी दिलचस्पी बताते हुए आश्रम में शामिल होने की इच्छा प्रकट की थी।

१८२. पत्र : मोतीलाल को

आश्रम,
जून २६, १९२६

भाई श्री मोतीलाल,

तुम्हारा पत्र (मिला)। जो व्यक्ति सद्गुरु की खोज मे निकलता है, मेरा विश्वास है कि उसे खुद त्रुटियो और वासनाओ से मुक्त होना चाहिए। त्रुटियो और वासनाओ से मुक्त होने का मतलब पूर्णत परिपूर्ण होना नही है। वह गुरु की जरूरत अनुभव होने का लक्षण है। गुरु का जीवित पुरुष होना भी जरूरी नही है। आज भी मैं कुछ ऐसे लोगो को अपना पथप्रदर्शक मानता हू, जो यद्यपि अभी परिपूर्ण नही हो पाये हैं, किन्तु (आध्यात्मिक विकास के) उच्च धरातल पर पहुच गये हैं। परिपूर्ण व्यक्ति तथा परमेश्वर के बीच के अन्तर की जानकारी प्राप्त करने मे कोई सार नही है। चूकि इसका परिपूर्ण उत्तर प्राप्त करना असम्भव है, इसलिए उसे अपने ही अनुभव मे इसका उत्तर खोजना चाहिए।

मोहनदास गाधी का
वन्देमातरम्

श्री मोतीलाल
द्वारा मेसर्स कुवरजी उमर्षि ऐण्ड कम्पनी,
कूपरगज,
कानपुर

—गुजराती। साबरमती, २९।६।१९२६। साबरमती आश्रम मे सुरक्षित पत्रावली से।]

१८३. पत्र : जफरुलमुल्क अलवी को

आश्रम, साबरमती
जुलाई १६, १९२६

प्रिय मित्र,

मुझे आपका खत मिला है। आपने आश्रम मे आने के बारे मे जो कुछ कहा है, उसे मैंने नोट कर लिया है।

मेरी राय मे, आपने मेरे पास जो स्कीम भेजी है उससे पता चलता है कि अका-

दमी एक अर्द्ध-सरकारी संस्था होगी। किन्तु सच पूछिए तो इसके सर्वोत्तम निर्णायक तो आप ही हो सकते हैं कि आपको क्या करना चाहिए। चाहे संस्था कितनी ही उपयोगी हो, आपकी जगह मैं तो उसमें शामिल हूंगा नही। हमारे असहयोग का रहस्य है उस प्रणाली के लाभों का त्याग, जिसे लेने की हमें आवश्यकता नही है। उन लाभों में से भी जिन्हें हम स्वेच्छया प्राप्त करते है, असहयोग शुरू होने पर हमने कुछ को चुन लिया। शिक्षण-संस्थाएं इनमें से एक चीज थी। किन्तु वर्तमान परिस्थिति में, जब असहयोग केवल व्यक्तियों तक सीमित है, हर आदमी का दर असल, खुद अपने लिए तय करना होगा। और जहां उसके अन्तःकरण में चुभता न हो, उसे विना किसी हिचकिचाहट के, असहयोग को छोड़ देना चाहिए।

यदि मैं हर एक स्वराजी को कौंसिलें छोड़ देने के लिए प्रेरित कर सकता तो मैं उसी दिशा में अपना सब प्रभाव लगाता और मैं जानता हूं कि इससे बड़ा लाभ होता। इसी प्रकार वे अपरिवर्तनवादी, जो अदालतों में अपनी वकालत शुरू कर रहे है या सीनेट में स्थान ग्रहण कर रहे हैं, अपरिवर्तनवादी नही हैं। किन्तु मैं नहीं चाहता कि आप असहयोग को अन्धश्रद्धा की चीज़ बनालें या किसी भी सत्ताधीश के फतवे पर निर्भर करें, भले आप उसकी चाहे जितनी इज्जत करते हों। आप अपने हर काम को अन्तःकरण की कसौटी पर कसिए और जिसे आपका अन्तःकरण कहे, उसे विना किसी हिचकिचाहट के ग्रहण कीजिए।

आपका निश्छल

जफरुलमुल्क अलवी महोदय,
लखनऊ

—अंग्रेजी। साबरमती, १६।७।१९२६। साबरमती संग्रहालय में सुरक्षित सामग्री से।]

१८४. पत्र : डाक्टर मुरारीलाल को

आश्रम,
साबरमती
जुलाई २८, १९२६

प्रिय श्री मुरारीलाल,

बम्बई के राष्ट्रीय स्त्री-मण्डल की कुमारी मीठूबेन पेटिट ने मुझसे कहा है

कि कुछ शर्तों पर खादी की फैंसी-सुदर्शन-वस्तुएँ उन्होंने काग्रेस सप्ताह मे लगी नुमाइश मे विकने के लिए भेजी थी। वह वार-वार हिसाव भेजने के लिए लिखती रही हैं किन्तु उन्हे कोई उत्तर नही मिला है। क्या आप कृपापूर्वक इस ओर ध्यान देंगे? उन्हे अनिश्चित काल तक विना पैसे के नही रखना चाहिए।

यह सस्था दानशीला-महिलाओ-द्वारा चलाई जा रही है। वे कोई मुनाफा नही उठाती और प्रत्येक पैसा उन गरीव स्त्रियो के हाथ मे जाता है जो इन मनोहर डिज़ाइनों को वनाने मे लगी हुई हैं। फिर इसके विशुद्ध उदारता का काम होने के अलावा हमे खुद भी अव्यावसायिक ढग नही अपनाना या किसी का आभार नही लेना चाहिए। मुझे पता लगा है कि स्त्री-मण्डल तथा प्रदर्शनी-समिति के वीच का इकरारनामा सव लिखित हैं।

आपका निश्छल

डा० मुरारीलाल,
कानपुर

—अंग्रेजी। सावरमती, २८।७।१९२६। सावरमती संग्रहालय मे सुरक्षित पत्रावली से।]

१८५. पत्र : आचार्य गिदवाणी को

आश्रम,
सावरमती
जुलाई ३०, १९२६

मेरे प्रिय गिदवाणी,

मुझे तुम्हारा खत[1] मिला है। नमूने का एक तकुवा तुम्हे भेजा जा चुका है। मैं आशा करता हूँ कि इस नमूने के अनुसार ही कारखाना तकुए वनायेगा।

न सिर्फ अगूरो के लिए वल्कि अन्य पौधो के लिए भी खाद-सम्वन्धी साहित्य चारों ओर से मुझे मिलता रहा है। इसलिए तुम्हारे मित्र जो कुछ भेजेंगे, वह एक और वृद्धि होगी?[2]

---

१. श्री गिदवाणी ने यह पत्र २२।७।१९२६ को भेजा था।

२. गिदवाणी ने अपने हैदरावाद के एक मित्र को लिखा था कि वह अपने द्राक्षा-

कताई और बुनाई सिखाने के लिए मैं तुम्हें संयुक्तप्रान्त का रहनेवाला एक होशयार लड़का भेज सकता हूँ। वह लगभग निरक्षर है। किन्तु वह परिश्रमी है, जितनी हिन्दी जानता है उससे ज्यादा पूर्णता के साथ उसे सीखना चाहता है; वह अंकगणित भी सीखना चाहता है। अगर उसे वहाँ दो घण्टे किसी दर्जे में बैठने की सुविधा मिल जाय तो उसे सन्तोष होगा। तुम्हें उसके रहन-सहन का और आने-जाने का खर्च उठाने के अलावा और कुछ देना नहीं पड़ेगा। अगर तुम समझते हो कि मैं उसे भेज सकता हूँ तो वह तुरन्त ही भेज दिया जायगा। वह धुनाई, कताई और बुनाई जानता है और अक्सर इनका प्रदर्शन करने के लिए भेजा जाता रहा है।

कृपया गंगाबेन से कहो कि वह मुझे लिखे और अपनी धमकी पूरी करे। जब वह भूगोल और इतिहास में अपना पाठयक्रम पूरा कर ले तो एक कुशल बुनवैया, कतवैया इत्यादि बनने के लिए अन्तिम शिक्षण ग्रहण करने यहाँ आ जाय जिससे वह कोटि-कोटि जनों का साथ देना चाहे तो ग्राम्य पुर्ननिर्माण कार्य उठा सके।

तुम्हारा निश्छल

आचार्य ए० टी० गिदवाणी
प्रेम महाविद्यालय
वृन्दावन

—अंग्रेजी। साबरमती, ३०।७।१९२६। साबरमती संग्रहालय में सुरक्षित पत्रावली से।]

कानन में उगाये अंगूरों का नमूना गांधी जी को भेज दें, तथा जो खाद अंगूर की खेती में प्रयोग कर रहे हैं, उसके सम्बन्ध में भी सूचना दें।

१. गिदवाणी ने एक अध्यापक के लिए गांधी जी को लिखा था।

कताई और बुनाई सिखाने के लिए मैं तुम्हें संयुक्तप्रान्त का रहनेवाला एक होशयार लड़का भेज सकता हूँ। वह लगभग निरक्षर है। किन्तु वह परिश्रमी है, जितनी हिन्दी जानता है उससे ज्यादा पूर्णता के साथ उसे सीखना चाहता है; वह अंकगणित भी सीखना चाहता है। अगर उसे वहाँ दो घण्टे किसी दर्जे में बैठने की सुविधा मिल जाय तो उसे सन्तोष होगा। तुम्हें उसके रहन-सहन का और आने-जाने का खर्च उठाने के अलावा और कुछ देना नहीं पड़ेगा। अगर तुम समझते हो कि मैं उसे भेज सकता हूँ तो वह तुरन्त ही भेज दिया जायगा। वह धुनाई, कताई और बुनाई जानता है और अक्सर इनका प्रदर्शन करने के लिए भेजा जाता रहा है।

कृपया गंगाबेन से कहो कि वह मुझे लिखे और अपनी धमकी पूरी करे। जब वह भूगोल और इतिहास में अपना पाठ्यक्रम पूरा कर ले तो एक कुशल धुनवैया, कतवैया इत्यादि बनने के लिए अन्तिम शिक्षण ग्रहण करने यहाँ आ जाय जिससे वह कोटि-कोटि जनों का साथ देना चाहे तो ग्राम्य पुर्ननिर्माण कार्य उठा सके।

तुम्हारा निश्छल

आचार्य ए० टी० गिदवाणी
प्रेम महाविद्यालय
वृन्दावन

—अंग्रेजी। साबरमती, ३०।७।१९२६। साबरमती संग्रहालय में सुरक्षित पत्रावली से।]

कानन में उगाये अंगूरों का नमूना गांधी जी को भेज दें, तथा जो खाद अंगूर की खेती में प्रयोग कर रहे हैं, उसके सम्बन्ध में भी सूचना दें।

१. गिदवाणी ने एक अध्यापक के लिए गांधी जी को लिखा था।

कताई और बुनाई सिखाने के लिए मैं तुम्हें संयुक्तप्रान्त का रहनेवाला एक होशयार लड़का भेज सकता हूँ। वह लगभग निरक्षर है। किन्तु वह परिश्रमी है, जितनी हिन्दी जानता है उससे ज्यादा पूर्णता के साथ उसे सीखना चाहता है; वह अंकगणित भी सीखना चाहता है। अगर उसे वहाँ दो घण्टे किसी दर्जे में बैठने की सुविधा मिल जाय तो उसे सन्तोप होगा। तुम्हें उसके रहन-सहन का और आने-जाने का खर्च उठाने के अलावा और कुछ देना नहीं पड़ेगा। अगर तुम समझते हो कि मैं उसे भेज सकता हूँ तो वह तुरन्त ही भेज दिया जायगा। वह धुनाई, कताई और बुनाई जानता है और अक्सर इनका प्रदर्शन करने के लिए भेजा जाता रहा है।

कृपया गंगाबेन से कहो कि वह मुझे लिखे और अपनी धमकी पूरी करे। जब वह भूगोल और इतिहास में अपना पाठ्यक्रम पूरा कर ले तो एक कुशल धुनवैया, कतवैया इत्यादि बनने के लिए अन्तिम शिक्षण ग्रहण करने यहाँ आ जाय जिससे वह कोटि-कोटि जनों का साथ देना चाहे तो ग्राम्य पुनर्निर्माण कार्य उठा सके।

तुम्हारा निश्छल

आचार्य ए० टी० गिदवाणी
प्रेम महाविद्यालय
वृन्दावन

—अंग्रेजी। साबरमती, ३०।७।१९२६। साबरमती संग्रहालय में सुरक्षित पत्रावली से।]

कानन में उगाये अंगूरों का नमूना गांधी जी को भेज दें, तथा जो खाद अंगूर की खेती में प्रयोग कर रहे हैं, उसके सम्बन्ध में भी सूचना दें।

१. गिदवाणी ने एक अध्यापक के लिए गांधी जी को लिखा था।

१८६. पत्र : गंगा बेन को

आश्रम,
साबरमती,
अगस्त ६, १९२६

मेरी प्रिय बहिन,

मैं देखता हूँ कि तुम अंग्रेजी लिखने लगी हो, यद्यपि गुजराती नही (लिखती)। तुम यह क्यो कहती हो, "मेरे पति छोटे बच्चो को कैसे पढा सकते हैं?" क्या उनको पढाना एक सुविधा की बात नहीं है? और जो इस समय गन्दा और अस्वास्थ्यकर है उसे तुम स्वच्छ और स्वास्थ्यकर बनाओगी। अहमदाबाद के प्रति तुम्हारी आसक्ति को मैं समझता हूँ। किन्तु मैं नही चाहता कि तुम वहाँ की लडाई छोड दो। यह चेतावनी देने के बाद, मैं कह सकता हूँ: जब चाहो, आओ और इसे अपना ही घर समझो।

तुम्हारा निश्छल

श्रीमती गगा बेन
द्वारा आचार्य गिदवाणी
वृन्दावन

—अंग्रेजी। साबरमती, ६।८।१९२६। साबरमती संग्रहालय में सुरक्षित पत्रावली से।]

१८७. पत्र : आचार्य गिदवाणी को

आश्रम,
साबरमती
अगस्त ६, १९२६

मेरे प्रिय गिदवाणी

मुझे तुम्हारा पत्र मिला है। अब तो तकुवे भी मिल गये हैं। तकुवे अच्छे नही हैं। थोडे ही दबाव से वे सिरे पर झुक जाते हैं। यह इतनी नाजुक चीज है कि रेतते समय भी गरम हो जाती है, इसलिए बीच-बीच मे ठण्डा करना पडता है। आशा करता हूँ कि तुम्हे नमूनेवाले तकुवे नही मिले हैं। यदि वहाँ के कारखाने मे

कताई और बुनाई सिखाने के लिए मैं तुम्हें संयुक्तप्रान्त का रहनेवाला एक होशयार लड़का भेज सकता हूँ। वह लगभग निरक्षर है। किन्तु वह परिश्रमी है, जितनी हिन्दी जानता है उससे ज्यादा पूर्णता के साथ उसे सीखना चाहता है; वह अंकगणित भी सीखना चाहता है। अगर उसे वहाँ दो घण्टे किसी दर्जे में वैठने की सुविधा मिल जाय तो उसे सन्तोष होगा। तुम्हें उसके रहन-सहन का और आने-जाने का खर्च उठाने के अलावा और कुछ देना नहीं पड़ेगा। अगर तुम समझते हो कि मैं उसे भेज सकता हूँ तो वह तुरन्त ही भेज दिया जायगा। वह धुनाई, कताई और बुनाई जानता है और अक्सर इनका प्रदर्शन करने के लिए भेजा जाता रहा है।

कृपया गंगावेन से कहो कि वह मुझे लिखे और अपनी धमकी पूरी करे। जब वह भूगोल और इतिहास में अपना पाठ्यक्रम पूरा कर ले तो एक कुशल धुनवैया, कतवैया इत्यादि बनने के लिए अन्तिम शिक्षण ग्रहण करने यहाँ आ जाय जिससे वह कोटि-कोटि जनों का साथ देना चाहे तो ग्राम्य पुर्ननिर्माण कार्य उठा सके।

तुम्हारा निश्छल

आचार्य ए० टी० गिदवाणी
प्रेम महाविद्यालय
वृन्दावन

—अंग्रेजी। सावरमती, ३०।७।१९२६। सावरमती संग्रहालय में सुरक्षित पत्रावली से।]

कानन में उगाये अंगूरों का नमूना गांधी जी को भेज दें, तथा जो खाद अंगूर की खेती में प्रयोग कर रहे हैं, उसके सम्बन्ध में भी सूचना दें।

१. गिदवाणी ने एक अध्यापक के लिए गांधी जी को लिखा था।

१८६. पत्र : गंगा बेन को

आश्रम,
सावरमती,
अगस्त ६, १९२६

मेरी प्रिय बहिन,

मैं देखता हूँ कि तुम अग्रेजी लिखने लगी हो, यद्यपि गुजराती नही (लिखती)। तुम यह क्यो कहती हो, "मेरे पति छोटे बच्चो को कैसे पढा सकते है ?" क्या उनको पढाना एक सुविधा की बात नही है ? और जो इस समय गन्दा और अस्वास्थ्य-कर है उसे तुम स्वच्छ और स्वास्थ्यकर बनाओगी। अहमदाबाद के प्रति तुम्हारी आसक्ति को मैं समझता हूँ। किन्तु मैं नही चाहता कि तुम वहाँ की लडाई छोड दो। यह चेतावनी देने के बाद, मैं कह सकता हूँ : जब चाहो, आओ और इसे अपना ही घर समझो।

तुम्हारा निश्छल

श्रीमती गगा बेन
द्वारा आचार्य गिदवाणी
वृन्दावन

—अंग्रेजी। सावरमती, ६।८।१९२६। सावरमती संग्रहालय में सुरक्षित पत्रा-वली से।]

१८७. पत्र : आचार्य गिदवाणी को

आश्रम,
सावरमती
अगस्त ६, १९२६

मेरे प्रिय गिदवाणी

मुझे तुम्हारा पत्र मिला है। अब तो तकुवे भी मिल गये हैं। तकुवे अच्छे नही हैं। थोड़े ही दवाव से वे सिरे पर झुक जाते हैं। यह इतनी नाजुक चीज है कि रेतते समय भी गरम हो जाती है, इसलिए बीच-बीच मे ठण्डा करना पडता है। आशा करता हूँ कि तुम्हे नमूनेवाले तकुवे नही मिले हैं। यदि वहाँ के कारखाने मे

वैसे तकुवे तैयार हो सकें तो बहुत बड़ी बात होगी। वैसे कई हजार के आर्डर पड़े हुए हैं। जो नमूने तुमने भेजे हैं वे ठीक भी नहीं हैं। अगर कोई तकुवा बिल्कुल ठीक नहीं है तो चक्कर खाते समय वह डगमगाता रहता है और यह डगमगाना अच्छी कताई के लिए घातक है। मैं भरत, उस तरुण के साथ नकली का भी एक नमूना भेज रहा हूँ। जितनी जल्दी सम्भव होगा, वह भेजा जायगा।

तुम्हारा निश्छल

आचार्य ए० टी० गिदवाणी
प्रिंसपल
प्रेम महाविद्यालय
वृन्दावन

—अंग्रेजी। साबरमती, ६।८।१९२६। साबरमती संग्रहालय में सुरक्षित पत्रावली से।]

१८८. पत्र : आचार्य गिदवाणी को

आश्रम,
साबरमती
अगस्त १२, १९२६

रे प्रिय गिदवाणी,

कताई-शिक्षक, भारत, कल तुम्हारे यहाँ गया। मुझे आशा है कि वह हिफा- के साथ तुम्हारे पास पहुँच गया होगा। भरत नाम उसने तुलसीदास की । के भरत के गुणों के लिए ग्रहण किया है; वह उन गुणों का अपने अन्दर करना चाहता है। मुझे आशा है, तुम उसे पूर्ण कुशल और श्रमशील नह अपनी नयनदृष्टि में किसी दोष की शिकायत करता रहा है। तुम्हारे पूर्व एक डाक्टर ने उसकी परीक्षा की और बताया कि उसकी आँखों नहीं है, किन्तु यदि वह अपनी आँखों में कोई खराबी होने की शिकायत म खुद समझ लोगे कि तुम्हें क्या करना चाहिए। भरत तुम्हें एक । कुछ दिन पहिले एक तकुवा भेजा गया था। अपने आदमियों को प्रयत्न करने दो जिससे वे चीज बना सकें जिसे हम चाहते हैं।

राय ने प्रार्थना-सम्बन्धी जो कठिनाई उठाई है उसका समाधान तो तुम मुझसे न चाहोगे।

स्टैनगर के लोग जैसा शिक्षक चाहते है वैसा कोई शिक्षक इस समय हमारे पास नही है। वह पत्र तुम्हे वापिस भेज रहा हूँ कि शायद तुम्हे उसकी जरूरत हो।

तुम्हारा निश्छल

—अंग्रेजी। साबरमती, १२।८।१९२६। साबरमती सग्रहालय में सुरक्षित पत्रावली से।]

१८९. पत्र : डा० मुरारीलाल को

आश्रम,
साबरमती
अगस्त १७, १९२६

प्रिय डा० मुरारीलाल,

बम्बई की राष्ट्रीय स्त्री-सभा का प्रदर्शिनी समिति के नाम जो रुपया निकलता है उसके सम्बन्ध मे मैंने आपको जो पत्र लिखा था, उसका प्राप्तिस्वीकार अभी तक मुझे नही मिला है। अब मुझे श्री कोटक से यह दूसरी शिकायत मिली है कि उनका पैसा भी बाकी है और वह कहते हैं कि उन्हे रजिस्ट्री से भेजे गये पत्रो तक का प्राप्ति-स्वीकार नही मिलता है। यह सब लापरवाही किस कारण है? क्या वहाँ कोई भी कांग्रेस का कार्य निपटानेवाला या अत्यन्त जरूरी पत्रो को देखनेवाला नही है? कृपया इन छोटी तफसील की बातो के लिए भी कुछ क्षण निकालिए।

आपका निश्छल

डा० मुरारीलाल
कानपुर

—अंग्रेजी। साबरमती, १७।८।१९२६। साबरमती संग्रहालय मे सुरक्षित पत्रावली से।]

१९४. पत्र : डाक्टर मुरारीलाल को

आश्रम,
अक्तूबर ७, १९२६

प्रिय डा० मुरारीलाल,

मुझे आपका पत्र मिल गया है। आपकी महती क्षति में मेरी सारी सहानुभूतियाँ आपके साथ हैं। मुझे कोई खयाल नहीं था कि आपके भाई गत हो गये। किन्तु यह एक ऐसा अविभार है जो हर सार्वजनिक कार्यकर्ता को चुकाना पड़ता है।

चुनाव की कटुता के प्रसंग में आप मुझ पर ऐसी शक्तियों का आरोप कर रहे हैं जो मुझमें नहीं है। यदि मैं अनुभव करता कि मैं उपयोगी रूप से हस्तक्षेप कर सकता हूँ तो किसी आवाहन की प्रतीक्षा न करता; मैं पण्डित जी[1] और लालाजी[2] का ध्यान बलात् अपनी ओर खींचता। किन्तु मैं अपनी अक्षमता जानता हूँ, इसलिए छटपटाता हूँ और सहन कर रहा हूँ।

आपका निश्छल

डा० मुरारीलाल
कानपुर

—अंग्रेजी। साबरमती, ७।१०।१९२६। साबरमती आश्रम में सुरक्षित पत्रावली से।]

१९५. पत्र : चन्द्र त्यागी को

२१-३-२७

आपके साथ मैं रात्री को बातें करना चाहता था परंतु आप नहि थे. दस बजने पर मैंने मौन ले लीया. क्या इच्छा है? यदि आप यहा निश्चित हे और शांत है तो जिन चीजों को आप मानते हैं उसका प्रचार करें और उस द्वारा देश की सेवा करें.

---

१. पण्डित मोतीलाल नेहरू।

२. लाला लाजपत राय।

आप जब दिल चाहे आश्रम में जा सकते है. इस समय मेरा तो वहां रहना नहि होता है. इसलीये मैं नहि जानता आप वहा जाना चाहेंगे या नहि।

मुझको भी जब चाहें लीख सकते है।

—हिन्दी। वर्धा, २१।३।१९२७। जी० एन० ६६२८ तथा सी० डबल्यू० ४२७६ की फोटो-नकल से।]

१९६. पत्र : जवाहरलाल नेहरू को

नन्दी पर्वत (मैसूर राज्य)
२५ मई, १९२७

प्रिय जवाहरलाल,

तुम्हारा पत्र तब मिला जब मैं रोग-शय्या पर था और बहुत पत्र-व्यवहार नही कर सकता था। अभी मैं अच्छा हो रहा हूँ और हल्का-हल्का काम ही कर पाता हूँ। किन्तु मेरी प्रगति बराबर जारी है।

अब तुम्हे वहाँ[1] लम्बा समय हो गया, किन्तु मैं जानता हूँ कि तुमने उसे बेकार नही खोया है। फिर भी मुझे आशा है कि जब तुम लौटोगे तबतक कमला पूरी तरह स्वस्थ हो जायगी। यदि उसके स्वास्थ्य के लिए ज्यादा दिन रहना जरूरी हो तो मैं मान लेता हूँ कि तुम वहाँ रह जाओगे।

दलित राष्ट्र-सम्मेलन की कार्रवाइयों के बारे मे मैंने तुम्हारा सार्वजनिक विवरण और तुम्हारा निजी गुप्त विवरण भी खूब ध्यान लगाकर पढा। खुद मुझे इस सघ से बहुत आशा नही है, क्योंकि और कुछ कारण न भी हो तो यह तो है ही कि उसकी स्वतन्त्र प्रवृत्ति का दारोमदार उन्ही सत्ताओ के सद्भाव पर है,

---

१. युरोप मे जहाँ जवाहरलाल अपनी रुग्णा पत्नी के इलाज के लिए गये थे और बीच बीच मे युरोपीय प्रवृत्तियो मे भी शामिल होते रहते थे।

१९०. तार : मोतीलाल नेहरू को

अगस्त २०, १६२६

पण्डित नेहरू
इलाहाबाद

गोरखपुर से घनश्यामदास की उम्मीदवारी की बात जानता तक नहीं था। इसमें जरूर कोई गलती होगी।[1]

गांधी

[अंग्रेजी। साबरमती, २०।८।१९२६। साबरमती संग्रहालय में सुरक्षित पत्रावली से।]

१९१. पत्र : कृष्णकान्त मालवीय को

भाद्र शुक्ल, १, १६८२ (सितम्बर ८, १६२६)

मुझे तुम्हारा तार मिला। यह रहा मेरा लेख।

एक सरल बालिका थी। कई वक्ताओं के भाषण सुनने के बाद, वह अपनी माँ के पास गई और बोली :—"माँ! देखो तो। ये पगले लोग न जाने क्या बक रहे है! मैं तो सिर्फ चर्खा का मधुर संगीत सुनना चाहती हूँ। मै यह पागलपन नही चाहती।" अपने वक्ताओं के भाषण सुनने और हमारे समाचारपत्र जो कुछ लिखते हैं उसे पढ़ने के बाद मैं भी उस लड़की की तरह ही परीशानी में पड़ जाता हूँ।

तुम्हारा
मोहनदास गांधी

भाई कृष्णकान्त मालवीय
अभ्युदय प्रेस, इलाहाबाद

[हिन्दी। साबरमती, ८।९।१९२६। कलेक्टेड वर्क्स आफ महात्मा गांधी, भाग ३१ के अंग्रेजी अनुवाद से।]

---

१. देखिए १९।८।१९२६ का श्री मोतीलाल नेहरू का तार गांधी जी के नाम।

१९२. पत्र : आचार्य गिदवाणी को

आश्रम,
साबरमती,
सितम्बर ९, १९२६

मेरे प्रिय गिदवाणी,

तुम्हारा पत्र मुझे मिल गया है। श्री वसु के आगमन पर उनका उचित सत्कार किया जायगा। उन्होंने अभी तक कोई सूचना नही दी है।

मैं जुगल किशोर[1] के बारे मे सब कुछ भूल गया हूँ। उनके प्रति क्षमा माँगता हूँ। मैं समझता हूँ कि यदि वह किसी विशेष बात की सीमा मुझ पर नही लगाते, तो लेने की बिल्कुल सम्भावना की जा सकती है। इसका आशय यह है कि क्या खादी मे उनका विश्वास है? और क्या वह खादी-विभाग मे काम करने को तैयार होंगे? उनकी जरूरतें क्या होंगी? क्या वह विवाहित हैं?

तुम्हारा निश्छल

आचार्य ए० टी० गिदवाणी,
प्रेम-महाविद्यालय,
वृन्दावन

—अंग्रेजी। साबरमती, ९।९।१९२६। साबरमती संग्रहालय मे सुरक्षित पत्रावली से।]

१९३. तार : बाबा राघवदास को[2]

२४ सितम्बर, १९२६ या उसके बाद

मैंने किसी चुनाव के लिए कुछ भी स्वीकृति नही दी है, न मुझे अधिकार ही है।

गाधी

—अंग्रेजी। साबरमती, २४।९।१९२६। साबरमती संग्रहालय मे सुरक्षित पत्रावली से।]

---

१. बाद के आचार्य जुगल किशोर, जो भारतीय कांग्रेस के मुख्य सचिव, उत्तर प्रदेश के शिक्षा-मन्त्री तथा कानपुर विश्वविद्यालय के उपकुलपति हुए।

२. देखिए २३।९।२६ का राघवदास जी का तार।

१९४. पत्र : डाक्टर मुरारीलाल को

आश्रम,

अक्तूबर ७, १९२६

प्रिय डा० मुरारीलाल,

मुझे आपका पत्र मिल गया है। आपकी महती क्षति में मेरी सारी सहानुभूतियाँ आपके साथ हैं। मुझे कोई खयाल नही था कि आपके भाई गत हो गये। किन्तु यह एक ऐसा अधिभार है जो हर सार्वजनिक कार्यकर्त्ता को चुकाना पडता है।

चुनाव की कटुता के प्रसंग में आप मुझ पर ऐसी शक्तियों का आरोप कर रहे हैं जो मुझमें नहीं है। यदि मैं अनुभव करता कि मैं उपयोगी रूप से हस्तक्षेप कर सकता हूँ तो किसी आवाहन की प्रतीक्षा न करता; मैं पण्डित जी[1] और लालाजी[2] का ध्यान वलात् अपनी ओर खीचता। किन्तु मैं अपनी अक्षमता जानता हूँ, इसलिए छटपटाता हूँ और सहन कर रहा हूँ।

आपका निश्छल

डा० मुरारीलाल
कानपुर

—अंग्रेजी। सावरमती, ७।१०।१९२६। सावरमती आश्रम में सुरक्षित पत्रावली से।]

१९५. पत्र : चन्द्र त्यागी को

२१-३-२७

आपके साथ मैं रात्री को वातें करना चाहता था परन्तु आप नहिं थे. दस वजने पर मैंने मौन ले लीया. क्या इच्छा है? यदि आप यहां निश्चित है और शांत है तो जिन चीजों को आप मानते हैं उसका प्रचार करें और उस द्वारा देश की सेवा करें.

---

१. पण्डित मोतीलाल नेहरू।

२. लाला लाजपत राय।

आप जब दिल चाहे आश्रम मे जा सकते हैं. इस समय मेरा तो वहां रहना नहि होता है. इसलीये मैं नहि जानता आप वहा जाना चाहेंगे या नहि।

मुझको भी जब चाहे लीख सकते है।

— हिन्दी। वर्धा, २१।३।१९२७। जी० एन० ६६२८ तथा सी० डब्ल्यू० ४२७६ की फोटो-नकल से।]

१९६. पत्र : जवाहरलाल नेहरू को

नन्दी पर्वत (मैसूर राज्य)
२५ मई, १९२७

प्रिय जवाहरलाल,

तुम्हारा पत्र तब मिला जब मैं रोग-शय्या पर था और बहुत पत्र-व्यवहार नही कर सकता था। अभी मैं अच्छा हो रहा हूँ और हल्का-हल्का काम ही कर पाता हूँ। किन्तु मेरी प्रगति बराबर जारी है।

अब तुम्हे वहाँ[1] लम्बा समय हो गया, किन्तु मैं जानता हूँ कि तुमने उसे बेकार नही खोया है। फिर भी मुझे आशा है कि जब तुम लौटोगे तबतक कमला पूरी तरह स्वस्थ हो जायगी। यदि उसके स्वास्थ्य के लिए ज्यादा दिन रहना जरूरी हो तो मैं मान लेता हूँ कि तुम वहाँ रह जाओगे।

दलित राष्ट्र-सम्मेलन की कार्रवाइयो के बारे मे मैंने तुम्हारा सार्वजनिक विवरण और तुम्हारा निजी गुप्त विवरण भी खूब ध्यान लगाकर पढा। खुद मुझे इस सघ से बहुत आशा नही है, क्योकि और कुछ कारण न भी हो तो यह तो है ही कि उसकी स्वतन्त्र प्रवृत्ति का दारोमदार उन्ही सत्ताओ के सद्भाव पर है,

---

१. युरोप मे जहाँ जवाहरलाल अपनी रुग्णा पत्नी के इलाज के लिए गये थे और बीच बीच में युरोपीय प्रवृत्तियो मे भी शामिल होते रहते थे।

जो दलित राष्ट्रों के शोषण में भागीदार है, और मेरा खयाल है कि युरोपीय राष्ट्रों के जो सदस्य इस संघ में सम्मिलित हुए, वे अन्त तक गर्मी कायम नहीं रख सकते। कारण, जिसे वे अपने स्वार्थ की हानि समझेंगे उसमें वे अपने को अनुकूल नहीं बना सकेंगे। इधर यह खतरा है कि हमारे लोग अपनी भीतरी शक्ति का विकास करके मुक्ति प्राप्त करने के बजाय उसके लिए फिर बाहरी शक्तियों की ओर देखने और बाहरी सहायता ढूंढ़ने लगेंगे। किन्तु यह तो कोरी दिमागी राय है। मैं युरोप की घटनाओं का ध्यानपूर्वक अवलोकन नहीं कर रहा हूँ। तुम मौके पर हो और तुम्हें वहाँ के वातावरण में वास्तविक सुधार दिखाई दे सकता है, जो मुझे बिल्कुल दिखाई नहीं देता।

तुम्हारे आगामी कांग्रेस का अध्यक्ष चुने जाने की कुछ चर्चा है। इस विषय में मेरा पिताजी से पत्र-व्यवहार हो रहा है। हिन्दू-मुस्लिम प्रश्न पर महासमिति के सर्वसम्मत प्रस्ताव के बावजूद यहाँ भविष्य बिल्कुल उज्ज्वल नहीं है। पता नहीं कि सिर फोड़ने का सिलसिला किसी भी तरह रोका जायगा या नहीं। आम लोगों पर हमारा नियन्त्रण नहीं रहा और मुझे ऐसा दिखाई देता है कि अगर तुम अध्यक्ष बन गये तो सर्वसाधारण की दृष्टि से तुम कम-से-कम साल भर के लिए तो खो जाओगे। फिर भी इसका यह अर्थ नहीं कि कांग्रेस के काम की उपेक्षा करनी है। किसी-न-किसी को तो उसे करना ही है। किन्तु बहुत लोग हैं जो इस काम को करने के लिए रजामन्द और उत्सुक हैं, उनकी नीयत मिली-जुली या स्वार्थपूर्ण भी हो सकती है, परन्तु वे कांग्रेस की गाड़ी किसी-न-किसी तरह चलाते रहेंगे। संस्था सदा उनकी मर्जी पर उनके हाथ में रहेगी, जिनमें सामूहिक कार्य करने के गुण होंगे और जिनका आम लोगों पर काबू हो जायगा। तब प्रश्न यह है कि तुम्हारी सेवाओं का सर्वोत्तम उपयोग कैसे किया जा सकता है? तुम्हारा अपना जो विचार हो, वह तुम्हें करना चाहिए। मुझे मालूम है कि तुम में अनासक्त विचार करने की क्षमता है और तुम दादाभाई या मैकस्विनी की तरह बिल्कुल निःस्वार्थ होकर कहोगे कि "यह ताज मेरे सिर पर रख दो।" और मुझे कोई सन्देह नहीं कि वह रख दिया जायगा। स्वयं मुझे मार्ग इतना स्पष्ट नहीं दिखाई देता कि मैं वह ताज जबर्दस्ती तुम्हारे सिर पर रख दूँ और उसे पहिनने के लिए तुम्हे समझाऊँ। पिताजी ने यदि पहिले ही न लिख दिया हो तो इसी डाक से तुम्हे लिखेंगे। इस पत्र की एक नकल उनके पास भिजवा रहा हूँ।

अच्छा हो, तुम भी अपनी इच्छा की सूचना समुद्री तार द्वारा दे दो। जुलाई के अन्त तक मेरे बंगलौर में रहने की सम्भावना है। इसलिए तुम अपना तार सीधे बंगलौर भेज सकते हो, या बिल्कुल पक्की बात करनी हो तो

आश्रम के पते पर भेज दो। मैं जहाँ भी जाऊँगा वही वह तार दोहरा दिया जायगा।

तुम सबको प्यार।

तुम्हारा,

मो० क० गांधी

[अंग्रेजी। नन्दी पर्वत, २५।५।१९२७।]

सौजन्य : श्रीमती इन्दिरा गांधी

१९७. पत्र : श्रीप्रकाश को

नान्दी पर्वत

२६वीं मई, १९२७

मेरे प्रिय श्रीप्रकाश,

आश्रम से पुन: प्रेषित तुम्हारा पत्र पाकर आनन्दित हुआ। तुम्हारा सूत काम-चलाऊ है और तुम्हे सूत्रकार संघ (चर्खा संघ) के सदस्य के रूप मे, बिना किसी खरखशे के, भरती हो जाना चाहिए।

मैं समझ सकता हूँ कि गर्मी के दिनो मे तकली तुम्हे कष्ट देती होगी। ऐसे दिनों मे उसे उष:काल मे जब तुम बिना किसी नकली रोशनी के तार को साफ साफ देख सको, चलाना सबसे अच्छा होगा। उस समय, सूखे से सूखे मौसम मे भी, कुछ नमी रहती है जिसके कारण पूनियाँ ज्यादा अच्छा काम देती हैं। और तकली चलाते समय, यदि उसे तुम एकान्त मे चला रहे हो, तुम अपने सब भगवद्गीता के या अन्य प्रिय श्लोको का पाठ भी कर सकते हो।

यह रही रु० २६५-३ की रसीद जो आश्रम से लोगो ने मेरे पास भेज दी है।

मुझे प्रसन्नता है कि तुमने विद्यापीठ मे खद्दर पहनना और चर्खा चलाना अनिवार्य करने का निश्चय किया है।

मुझे आशा है, तुमने कुछ समय आश्रम मे बिताने के विचार का त्याग नही कर दिया है।

तुम्हारा विश्वसनीय

मो० क० गांधी

संलग्न १ : ([illegible] आश्रम, साबरमती से [illegible] श्रीप्रकाश जी के नाम [illegible]।)

—अंग्रेजी। नन्दी पर्वत, २६।५।१९२७। नेहरू संग्रहालय में सुरक्षित पत्रावली से।]
सौजन्य : श्री श्रीप्रकाश
तथा नेहरू संग्रहालय।

१९८. पत्र : श्रीप्रकाश को

कुमार पार्क,
बंगलौर
१५ जून, १९२७

मेरे प्रिय श्रीप्रकाश,

मुझे तुम्हारा पत्र मिला। तुम्हारा भय विश्वास में परिवर्तित होना चाहिए कि विद्यापीठ के सम्बन्ध में भेजी हुई तुम्हारी विज्ञप्ति 'यंग इण्डिया' में प्रकाशित हो जायगी।

कुछ दिन पहिले जो एक चेक तुमसे मिला था उसकी पावती दी जा चुकी है। मैंने २० मई को तुम्हें लिखा था। क्या तुमने उसके बाद भी कोई चेक भेजा था?

तुम्हारा शुभैषी
मो० क० गांधी

श्री श्रीप्रकाश
सेवाश्रम
बनारस कैण्ट

—अंग्रेजी। बंगलौर, १५।६।१९२७। नेहरू संग्रहालय में सुरक्षित पत्रावली से।]
सौजन्य : श्री श्रीप्रकाश
तथा नेहरू संग्रहालय।

१९९. पत्र : राजकिशोरी को

(पोस्टकार्ड)

वगलौर
२६-७-२७

चि० राजकिशोरी,

तुम्हारा पोस्टकार्ड मिला है। वैसे ही लिख भी रहा। आज कल मदनमोहन क्या हो रहा है? दिनचर्या क्या है? शरीर प्रकृति कैसी है? अगस्त मास तक मैं वगलौर मे ही हू। मुझको शक्ति आ रही है।

बापु के
आशीर्वाद

(टिप्पणी—पत्र लिखा किसी और के हाथ का है। हस्ताक्षर गाधी जी के हैं।—सम्पा०)

—हिन्दी। वंगलौर, २६।७।१९२७। पत्र की फोटो-नकल (जी० एन० ६०९९) से।]

२००. तार : जवाहरलाल नेहरू को

[टिप्पणी। कोष्ठक के शब्द सम्पादक-द्वारा, अर्थ समझने की दृष्टि से जोड़े गये हैं। आलोचनाओ और काग्रेस के आन्तरिक विरोधो से क्षुब्ध होकर जवाहरलालजी काग्रेस से पद-त्याग करना चाहते थे। गाधीजी ने उसी ओर इशारा किया है:—सम्पा०]

मथुरा से ६।९।१९२७

जवाहरलाल नेहरू
आनन्द भवन
इलाहावाद

(तुम्हारी) नैतिक कठिनाई (मैं) गहराई के साथ समझ रहा हूँ, किन्तु निर्णय तक पहुँचने मे कोई जल्दी नही होनी चाहिए। इस्तीफे पर

जोर नहीं देना चाहिए। अगर अब भी दुःख हो तो जहां भी चाहो, मुझसे मिलो।

गांधी

—अंग्रेजी। मथुरा, ६।९।१९२७। नेहरू संग्रहालय में सुरक्षित पत्रावली से।]
सौजन्य : श्रीमती इन्दिरा गांधी
तथा नेहरू संग्रहालय।

२०१. पत्र : बनारसीदास चतुर्वेदी को

(पोस्टकार्ड)

भाई बनारसीदास जी,

आप के दो पत्र मीले थे परंतु मुसाफरी के कारण इसके आगे मैं उत्तर न लीख सका.

अब कुछ स्थायी काम ले लिया है. उससे मुझे बहोत अच्छा लगता है.

गेरीसन की जीवनी तो आश्रम में है. उसको भेजने का मैं आश्रम में लीखता हूं. उपयोग होने के बाद आप वापिस भेज देंगे.

आपका
मोहनदास

७-११-२७

अफरीका जाने का छोड़ दीया. उचित हुआ है

—हिन्दी। ७।११।१९२७। जी० एन० २५५८ की फोटो-नकल से।]

२०२. पत्र : रमेशचन्द्र को

भाई रमेशचंद्र जी,

आपको उत्तर देने की आशा से आपका पत्र मैंने आज तक रक्खा. आज उत्तर दे सकता हु.

मांस भक्षण और वनस्पति भक्षण दोनों हिंसा है परंतु एक वस्तु के सिवा मनुष्य कही भी नही जी सकता है दूसरी के सिवा प्रायः सब जगह में जी सकता

है यदि जीव जीव मे दु ख के ज्ञान का भेद है तो जो दु ख गाय के मरने के समय होता है वह वनस्पति जीव को नहि होता है जीव मात्र के लीये कुछ कुछ हिंसा अपरिहार्य है अहिंसा धर्म का पालक अल्पतम हिंसा करेगा अन्य धर्मों मे मासाहार की आज्ञा नहि है उसका प्रतिवध नहि है, दूसरे धर्मों मे या तो हिंदु धर्म मे भी ऐसी प्रथा है हमारे जाणना अच्छा है परतु यदि हमारी वुद्धि निरामिषाहार को नैतिक दृष्टि से विशेष माने तो हमारे उसका स्वीकार करना चाहीये अहिंसा का उपासक वनस्पति के उपभोग मे भी मर्यादित होता जायगा ग्रीन लैंड इ० प्रदेश मे निरामिषाहारी रहना कठिन है, असभवित नही यदि असभवित भी सिद्ध किया जाय तो भी हमारे हर जगह मासाहार की आवश्यकता सिद्ध नहि हो सकती है प्रवृत्तिमात्र सदोष होते हुए भी हम तुलना करके वहोत त्याग करते रहते हैं मुमुक्षु के जीवन मे निरतर त्याग वृत्ति की वृद्धि होती है, ऐसा होना आवश्यक है

दूध अडे मे भेद है अडे अनावश्यक है दूध भी करोडो के लीये अनावश्यक है मैंने मूर्छा के वश होकर विलायत मे अडे खाये हैं जैसे इस देश मे मास परतु जव मैं सावधान हुआ तव मैंने उसका त्याग कर दिया और निरामिषाहारी मित्रो के साथ तो इतनी हि चीज़ लेता था जिसमे अडे न थे इतना मैंने अव समझ लीया है कि निर्जीव अडें वहुत पैदा होते है इसका शोर है और प्रामानिक निर्जीव अडे ही लोक खाते हैं परतु इस वात से अडे खाद्य पदार्थ नहि वन सकते हैं

अहिंसा व्यापक धर्म है शरीर को प्राण से अलग करना हि हिंसा नहिं है ब्रह्मचर्य का त्याग भी मेरी दृष्टि मे हिंसा है प्रसिद्ध वात है की मासाहार अडे और दूध भी ब्रह्मचारी के लीये त्याज्य वस्तु है केवल वनस्पति के आहार से ब्रह्मचर्य सुलभ हो जाता है

अत मे, यद्यपि आहार का विषय धार्मिक मनुष्य के लीये अत्यावश्यक है तथापि न इसी मे धर्म अथवा अहिंसा की समाप्ति है न यहि सर्वोपरि वस्तु है. धर्म और अहिंसा का पालन हृदय की वात है. हृदय को विशुद्ध वनाने मे जिसको मासाहार के त्याग की आवश्यकता प्रतीत न हो वह त्याग न करे.

आपका

मोहनदास

मुसाफरी मे

१३-१२-२७

[हिन्दी। १३।१२।१९२७। श्री रमेशचन्द्र (इलाहाबाद) को लिखे पत्र की फोटो-नकल (जी० एन० ४२७९) से।]

२०३. पत्र : जवाहरलाल को

[जवाहरलाल जी दिसम्बर १९२७ ई० में युरोप से लौटे और कांग्रेस के मद्रास अधिवेशन में सीधे चले गये। उस अधिवेशन में उन्होंने कुछ ऐसी बातें की, जो गांधीजी को पसन्द नहीं आईं। निम्नांकित पत्र उसी सन्दर्भ में लिखा गया है।—सम्पा०]

सत्याग्रह-आश्रम,
साबरमती
४ जनवरी, १९२८

असंशोधित

प्रिय जवाहरलाल,

मेरा खयाल है, तुम्हें मुझसे इतना अधिक प्रेम है कि मैं जो कुछ लिखने जा रहा हूँ उसका तुम बुरा नही मानोगे। मुझे तो तुमसे इतना अधिक प्रेम है कि जब मुझे लिखने की आवश्यकता प्रतीत हो तब मैं अपनी कलम को रोक नहीं सकता।

तुम बहुत ही तेज जा रहे हो। तुम्हें सोचने और परिस्थिति के अनुकूल बनने के लिए समय लेना चाहिए था। तुमने जो प्रस्ताव तैयार किये और पास कराये उनमें अधिकांश के लिए एक साल ठहरा जा सकता था। "गणतन्त्री सेना" (रिपब्लिकन-आर्मी) मे तुम्हारा कूद पड़ना जल्दबाजी का कदम था। परन्तु मुझे तुम्हारे कामों की इतनी चिन्ता नही, जितनी तुम्हारे शरारतियों और हुल्लड़बाजों को प्रोत्साहन देने की है। पता नही, तुम अब भी विशुद्ध अहिंसा में विश्वास रखते हो या नही। परन्तु तुमने अपने विचार बदल दिये हों तो भी तुम यह नहीं सोच सकते कि अनधिकृत और अनियन्त्रित हिंसा से देश का उद्धार होनेवाला है। यदि अपने यूरोपीय अनुभवों के प्रकाश मे देश के ध्यानपूर्वक अवलोकन से तुम्हें विश्वास हो गया हो कि प्रचलित तौर-तरीके गलत हैं तो बेशक अपने ही विचारों पर अमल करो, किन्तु कृपा करके कोई अनुशासनबद्ध दल बना लो। कानपुर का अनुभव तुम्हे मालूम है। प्रत्येक सग्राम में ऐसे मनुष्यो की टोलियाँ चाहिए जो अनुशासन मानें। तुम अपने अस्त्रों के बारे में लापरवाह होकर इस तत्व की उपेक्षा कर रहे हो।

अब तुम राष्ट्रीय महासभा के कार्यवाहक मन्त्री हो। ऐसी सूरत में मैं तुम्हें सलाह दे सकता हूँ कि तुम्हारा कर्त्तव्य है कि केन्द्रीय प्रस्ताव अर्थात् एकता पर और

साइमन कमीशन के बहिष्कार के महत्वपूर्ण किन्तु गौण प्रस्ताव पर अपनी सारी शक्ति लगा दो। एकता के प्रस्ताव के लिए सगठन करने और समझाने-बुझाने के तुम्हारे समस्त बडे गुणो के उपयोग की जरूरत है। मेरे पास अपनी बातो का विस्तार करने के लिए समय नही है, परन्तु बुद्धिमान के लिए इशारा काफी होना चाहिए।

आशा है, कमला का स्वास्थ्य यूरोप की तरह ही अच्छा होगा।

सप्रेम तुम्हारा,
बापू

—अग्रेजी। साबरमती, ४।१।१९२८।]
सौजन्य : श्रीमती इन्दिरा गाधी

२०४. पत्र : जवाहरलाल नेहरू को

सत्याग्रहाश्रम
साबरमती
११।१।१९२८

मेरे प्रिय जवाहरलाल,

तुम्हारा पत्र।

मैं आशा करता हूँ, चाँद सकट से मुक्त हो गई होगी।

मेरा मुद्दा यह नही है कि तुमने अपने किसी प्रस्ताव पर विचार नही किया था, फिर स्वतन्त्रता के प्रस्ताव की तो बात ही क्या, किन्तु मेरा मुद्दा यह है कि न तो तुमने, न और किसी ने सम्पूर्ण परिस्थिति का विचार किया या प्रस्तावो के परिणाम एव औचित्य पर ध्यान दिया। सर्वोत्तम प्रस्ताव भी असम्बद्ध और अप्रासगिक हो सकते हैं। किन्तु तुम्हें काग्रेस पर मेरे लेखो को ध्यान देकर पढना चाहिए। स्वतन्त्रता पर मेरा विशेष लेख कल प्रकाशित होगा।

एकता प्रस्ताव मे बहुत सुधार की जरूरत है।

जब भी तुम आ सको, अवश्य आओ और जब आने लगो तो अपनी रचना साथ ले आओ और अपने को काफी वक्त दो।

यह (पत्र) खण्डान्वित-सा लगेगा परन्तु इस समय मैं तुम्हें और ज्यादा नहीं लिख सकता।

वापू

—अंग्रेजी। सावरमती, ११।१।१९२८। नेहरू संग्रहालय में सुरक्षित पत्रावली से।]
सौजन्य : श्रीमती इन्दिरा गांधी
तथा नेहरू संग्रहालय।

२०५. पत्र : जवाहरलाल नेहरू को

[यह पत्र महादेव देसाई की हस्तलिपि में है, परन्तु नीचे वापू जी ने हस्ताक्षर किये हैं।—सम्पा०]

सत्याग्रहाश्रम
सावरमती
वी० वी० सी० आई रेलवे
१५-१-२८

मेरे प्रिय जवाहरलाल,

मुझे तुम्हारा पत्र मिला है जिसे तुम्हारे द्वारा मुझे लिखे जा सकनेवाली और सव चीजों से मैंने ज्यादा पसन्द किया है क्योंकि इसे तुमने पूरी तरह खुलकर लिखा है, और मैं वह लेख लिखकर प्रसन्न हूँ कि (उसके कारण) मैं तुम्हारे मन से वे सव वातें वाहर ला सका, जिन्हें तुम इन लम्वे वर्षों में अपने अन्दर रक्खे हुए थे। किन्तु इसके विषय में वाद में।

यह पत्र वोलकर मै तुम्हे यह कहने के लिए लिखा रहा हूँ कि वेचारा व्राकवे[1] वुरी हालत में है। मुझे ज्ञात हुआ है कि उन्हें और भी गम्भीर ढंग का एक दूसरा आप्रेशन करवाना होगा, और हिन्दुस्तान में और कई महीनों तक रुकना पड़ेगा। मुझे यह भी पता चला है कि पिताजी-द्वारा भारतीय कांग्रेस कमेटी के साथ यह वात हुई थी कि उनके इंग्लैण्ड से भारत आने और लौटने का राह-खर्च कांग्रेस देगी। अगर वात ऐसी ही है, तो मै समझता हूँ कि हमें उनका अस्पताल का खर्च

---

१. फेनर व्राकवे—आंग्ल पार्लमेण्ट के सदस्य, लेखक तथा भारतीय स्वातन्त्र्य के प्रेमी।

भी देना चाहिए, यह देखते हुए कि वह काग्रेस मे ही आ रहे थे। मुझे पता चला है कि अपने अस्पताल के खर्च के कारण वह शीघ्र ही ऋणी हो जायँगे। क्या तुम पता लगाकर आवश्यक कार्रवाई करोगे तथा जरूरी हो तो खुद ही कार्रवाई चालू करोगे।

मुझे पता लगा है कि मद्रास कमेटी ने पहिले ही लगभग चार सौ दिये हैं। सिर्फ अस्पताल के चार्ज ही बारह रुपये प्रतिदिन हो जाते हैं। मैं श्रीनिवास आयगर को भी लिख रहा हूँ।

तुम्हारा सच्चा
बापू

—अंग्रेजी से। साबरमती, १५।१।१९२८। नेहरू सग्रहालय मे सुरक्षित पत्रावली से।]
सौजन्य : श्रीमती इन्दिरा गाधी
तथा नेहरू संग्रहालय

२०६. पत्र : जवाहरलाल नेहरू को

आश्रम, साबरमती
१७ जनवरी, १९२८

प्रिय जवाहरलाल,

मुझे बोलकर लिखवाने के द्वारा समय बचाना और अपने दुखते हुए कन्धे को आराम देना होगा। रविवार को मैंने तुम्हें फेनर ब्राकवे के बारे मे लिखा था। आशा है, तुम्हे वह पत्र ठीक समय पर मिल गया होगा।

तुम्हे मालूम है कि जिन लेखो की तुमने आलोचना की है, उन्हे, सिवा कथित 'अखिल भारतीय प्रदर्शिनी' वाले लेख के, मैंने इसीलिए लिखा था कि तुम उल्लिखित कार्य-विवरण मे मुख्य हिस्सेदार थे। मुझे एक प्रकार की सुरक्षा महसूस होती थी कि तुम्हारे-मेरे बीच के सम्बन्धो को देखते हुए मेरे लेखो को उसी भावना से समझा जायगा, जिससे वे लिखे जाते थे। फिर भी मैं देखता हूँ कि यह तो सब ओर भूल-ही-भूल हुई। मुझे इसकी पर्वा नही। कारण, यह स्पष्ट है कि ये लेख ही तुम्हे उस आत्मदमन से मुक्त कर सकते थे, जिसके नीचे तुम इतने वर्षों से दबे जा रहे थे। यद्यपि मझे तुम्हारे मेरे बीच का दृष्टि-भेद कुछ-कुछ दिखाई देने लगा था,

फिर भी मुझे तनिक भी कल्पना नहीं थी कि ये मतभेद इतने भयंकर हो जायंगे। जहाँ तुम देश की खातिर और इस विश्वास में कि मेरे साथ और मेरे नीचे अपनी इच्छा के विरुद्ध भी काम करके तुम राष्ट्र की सेवा करोगे और आंच आगे बिना निकल आओगे, तुम अपने-आपको बहादुरी के साथ दबा रहे थे, वहां तुम इस अस्वाभाविक आत्मदमन के भार के नीचे दब कर कुढ़ते रहे। और जबतक तुम उस स्थिति में रहे, तुम उन्ही चीजों की उपेक्षा करते रहे, जो अब तुम्हें मेरी गम्भीर त्रुटियाँ दिखाई देती है। मै 'यंग इण्डिया' के पृष्ठों मे तुम्हें दिखा सकता हूं कि इतने ही जोरदार लेख मैंने महासमिति की कार्रवाइयों की बाबत तब लिखे थे जब मै काग्रेस का सक्रिय पथ-प्रदर्शन कर रहा था। जब कभी महासमिति की बैठकों मे गैर-जिम्मेदारी और जल्दबाजी की बाते या कार्रवाई होती थी तब भी मैं इसी तरह बोला हूँ। किन्तु जबतक तुम मूर्छित अवस्था में थे तबतक ये चीजें आज की तरह नही खटकीं और इसलिए तुम्हारे पत्र की असंगतियां बताना मुझे बेकार मालूम होता है। इस समय मुझे तो भावी कार्रवाई की ही चिन्ता है।

यदि मुझसे कोई स्वतन्त्रता चाहिए तो मैं उस नम्रतापूर्ण अचूक वफादारी से तुम्हें पूरी स्वतन्त्रता देता हूँ, जो तुमसे मुझे इन तमाम वर्षों में मिली है और जिसकी मैं तुम्हारी स्थिति की जानकारी प्राप्त हो जाने के कारण अब और भी कद्र करता हूँ। मुझे बिल्कुल साफ दिखाई देता है कि तुम्हे मेरे और मेरे विचारों के विरुद्ध खुली लड़ाई लड़नी चाहिए। कारण, यदि मैं गलती पर हूँ तो मै स्पष्ट ही देश की वह हानि कर रहा हूं, जिसकी क्षतिपूर्ति नही हो सकती और उसे जान लेने के बाद तुम्हारा धर्म है कि मेरे विरुद्ध विद्रोह में खड़े हो, अथवा तुम्हे अपने निर्णयो के ठीक होने मे कोई शंका है तो मैं खुशी से तुम्हारे साथ निजी रूप मे उनकी चर्चा करने को तैयार हूँ। तुम्हारे और मेरे बीच मतभेद इतने विशाल और मौलिक है कि हमारे लिए कोई मिलन की जगह दिखाई नही देती। मै तुमसे अपना यह दुःख नही छिपा सकता कि मै तुम्हारे-जैसा बहादुर, वफादार, योग्य और ईमानदार साथी खोऊँ, परन्तु कार्य की सिद्धि के लिए साथीपन की बलि देनी पडती है। इन सब विचारों से कार्य को श्रेष्ठ मानना चाहिए। किन्तु साथीपन के इस विछोह से—यदि विछोह होना ही है—हमारी व्यक्तिगत घनिष्ठता मे कोई अन्तर नही पडेगा। हम लम्बे अर्से से एक ही परिवार के सदस्य बन चुके है और राजनीतिक मतभेदो के होते हुए भी हम वैसे ही बने रहेगे। मुझे कई लोगो के साथ ऐसे सम्बन्ध रखने का सौभाग्य प्राप्त है। उदाहरण के लिए शास्त्री को ही ले लो। उनके मेरे राजनीतिक दृष्टिकोण में जमीन-आसमान का फर्क है, किन्तु उसके मेरे बीच जो स्नेह-सम्बन्ध

राजनीतिक मतभेदों का भान होने के पहिले ही पैदा हो चुका था, वह बना हुआ है और कई अग्नि-परीक्षाएँ पास करके भी जीवित रह गया है।

तुम्हारी पताका फहरे, इसका एक शानदार तरीका सुझाऊँ ? मुझे प्रकाशन के लिए एक पत्र लिखो, जिसमे तुम्हारे मतभेद प्रकट किये गये हो। मैं उसे 'यग इण्डिया' मे छाप दूंगा और उसका सक्षिप्त उत्तर लिख दूंगा। तुम्हारा पहिला पत्र मैंने पढने और जवाब देने के बाद फाड दिया था। दूसरा रख लिया है और अगर तुम कोई और पत्र लिखने का कष्ट नही उठाना चाहते तो जो पत्र मेरे सामने है उसी को छापने के लिए तैयार हूँ। मुझे पता नही, इसमे कोई बुरा लगनेवाला अश है। किन्तु कोई हुआ तो, विश्वास रक्खो, मैं ऐसे हर अश को निकाल दूंगा। मैं उस पत्र को एक स्पष्ट और प्रामाणिक दस्तावेज मानता हूँ।

सप्रेम तुम्हारा,
बापू

—अग्रेजी। साबरमती, १७।१।१९२८।]
सौजन्य : श्रीमती इन्दिरा गाधी

२०७. तार : जवाहरलाल नेहरू को

साबरमती
२६।१।२८

जवाहरलाल नेहरू,
आनन्दभवन, इलाहाबाद,

तुम्हारा पत्र। मेरा (पत्र) तुम्हे राहत (और) स्वाधीनता देने के लिए लिखा गया था। तुम्हारा लिखा कुछ भी प्रकाशित करने की इच्छा नही। यदि सम्भव हो तो पिता को (साथ) लाओ। प्रेम।

बापू

—अग्रेजी। साबरमती २६।१।१९२८। नेहरू सग्रहालय मे सुरक्षित पत्रावली से।]
सौजन्य : श्रीमती इन्दिरा गाधी
तथा नेहरू सग्रहालय

२१०. पत्र : जवाहरलाल नेहरू को

सत्याग्रहाश्रम
साबरमती
१-४-२८

मेरे प्रिय जवाहर,

मुझे तुम्हारा पत्र मिल गया है।

साथ की प्रतियों से तुम्हे मालूम हो जायगा कि मिल-मालिकों के साथ समझौते में क्या प्रगति हुई है। फिर भी मं तुम्हारी इस बात से सहमत हूं कि इस समय उनसे कुछ परिणाम नहीं निकल सकता। किन्तु उचित समय आने पर समझौतों का फल निकल सकता है। एक समय वह था जब मिल-मालिक बहिष्कार तथा खादी-प्रचार के सर्वथा विरुद्ध थे। इन समझौते की बातों के समाप्त होने पर मं फिर लिखूगा।

यद्यपि रोमें रोलां का प्रथम पत्र, जिसकी उम्मीद थी, आ गया है और उसमें मेरे प्रस्तावित प्रवास के प्रति बड़े उत्साह का भाव है, फिर भी उससे मैं किसी निर्णय पर नही पहुँच सका हूं। ज्यों-ज्यों किसी निश्चित निर्णय पर पहुँचने का समय नज़दीक आता जा रहा है, मेरी हिचकिचाहट बढ़ रही है। परन्तु शायद अगले सप्ताह रोला से कोई समुद्री तार प्राप्त हो और वह मेरे भाग्य का निर्णय कर दे।

इस बीच, सिगापुर जाना तो नही ही हो रहा है। अभी तो मै यहीं रहूंगा। यदि मैं यूरोप नही गया तो मुझे वर्मा जाना और दो महीने वहां पहाड़ियो मे जाकर तथा अपने निवास-काल को वहां धनसंग्रह करके विताना है।

मै भी तुम्हारे इस मत का हूं कि किसी-न-किसी दिन हमे धनिकों और बोलने वाले शिक्षित वर्ग के बिना ही कोई गहरा आन्दोलन छेड़ना होगा। किन्तु वह समय अभी नही आया है।

तुमने यह नहीं लिखा कि कमला गर्मी के महीने कहाँ वितायेगी ?

तुम्हारा सच्चा
बापू

—अंग्रेजी। साबरमती, १।४।१९२८। नेहरू संग्रहालय में सुरक्षित पत्रावली से।]
सौजन्य : श्रीमती इन्दिरा गांधी
तथा नेहरू संग्रहालय

२११. पत्र : जवाहरलाल नेहरू को

आश्रम,
सावरमती, ५-४-२८

मेरे प्रिय जवाहर,

'यग इण्डिया' के अक मे तुम मिलो पर मेरा लेख देखोगे। सवसे ताजी वात यह है कि वे, हमारे सन्दर्भ के विना ही, अपनी तरफ़ से एक स्वदेशी-सघ खोलना चाहते हैं। ऐसा ख्याल न करो कि मेरी चेप्टा से कोई ठोस वात होनेवाली है। उन्हे अपनी योजनाओ पर जाने दो। जहा तक मैं देखता हू, हमे निश्चित रूप से अपना घ्यान घूम-घूम कर खादी वेचने पर सीमित करना चाहिए।

यूरोपीय-प्रवास के विपय मे अभी तक कोई अन्तिम निर्णय नही हो पाया है। मैं खुद ही इससे दूर हट रहा हू और यह रोला से कुछ और सकेत पाने पर, जो मुझे अगले सप्ताह मिलेगा, निर्भर करता है।

तुम्हारा सच्चा
वापू

— अंग्रेजी। सावरमती, ५।४।१९२८। नेहरू संग्रहालय मे सुरक्षित पत्रावली से।]
सौजन्य : श्रीमती इन्दिरा गांधी,
तथा नेहरू संग्रहालय

२१२. पत्र : जवाहरलाल नेहरू को

आश्रम
सावरमती, ८-४-२८

मेरे प्रिय जवाहर,

मुझे तुम्हारा पत्र मिल गया है। मुझे याद नहीं पडता कि पिताजी ने मुझसे यह वात कही हो कि वह इस महीने के अन्तिम सप्ताह मे मिल-मालिको से मश्विरा करने के लिए वम्वई लौटेंगे। किन्तु उन्होने और मैंने विस्तार के साथ, विदेशी वस्त्र-वहिप्कार के प्रश्न पर वात-चीत की थी और (इस विषय पर) सेठ लाल जी,

२०८. पत्र : जवाहरलाल नेहरू को

सत्याग्रहाश्रम,
साबरमती
२६।२।१६२८

मेरे प्रिय जवाहर,

मुझे तुम्हारे पत्र मिले है। दिल्ली में जो हो रहा है वह सब मैं महसूस कर रहा हूँ और तुमने अपने पत्र में जो कुछ लिखा है, उसका प्रत्येक शब्द समझ सकता हूँ। ज्यों-ज्यों दिन-प्रति-दिन मैं कान्फरेंस[1] की कार्रवाई का अध्ययन करता हूँ और उनके आशय का अनुमान करता हूँ तो उससे मुझे कितनी वेदना होती है उसकी पर्याप्त धारणा तुम्हें नही करा सकता। पिताजी के प्रकाशपूर्ण पत्र ने दूर से किये मेरे अध्ययन की पुष्टि ही की है। इसके बाद कल कृष्णदास को कृपालानी का पत्र मिला और उस पर आखिरी रंग देनेवाला तुम्हारा पत्र आज मिला। हम लोग लार्ड वर्कनहेड की गुस्ताखी और कमिश्नरो की कुटिलता के विरुद्ध कैसा दुःखद पार्ट कर रहे है? मैने सर जान साइमन से कुछ विशेष आशा नही की थी, किन्तु मैं उनके द्वारा नौकरशाही की सब ज्ञात चालबाजियाँ ग्रहण किये जाते देखने के लिए तैयार नही था, और यह, अस्पृश्यों-विषयक नवीनतम व्यापार तो सम्पूर्ण चित्र को ही गन्दा कर देता है। फिर भी हमें धीरज रखना होगा। इसलिए तुम धैर्यपूर्वक इस यन्त्रणा को बर्दाश्त करो और उसमें जहाँ सुधार कर सको, करो।

जितनी जल्द सम्भव हो, आ जाओ। मै आशा करता हूँ कि कमला, यदि अपनी शक्ति बढ़ा नही पा रही है तो उसे रख तो रही है। मुझे पता नही कि पिताजी ने तुमसे वह बात कही है या नही कि जब तुम्हारे आने के पूर्व, वह मेरे साथ बंगलौर में थे तो उन्होंने और मैंने, गर्मियो में उसके भव्य मौसिम के कारण बंगलौर मे तुम्हारे ठहरने के बारे में सोचा था। अब कष्टप्रद मौसिम के सिर्फ चार सप्ताह ही शेष बचे है किन्तु तुम सदा नन्दी हिल पर जा सकते हो, जो बंगलौर से केवल ३५ मील की दूरी पर है और जहाँ तुम्हे आनन्ददायिनी शीतल ऋतु

---

१. साइमन कमीशन के साथ की जानेवाली चर्चाओं और बैठकों से आशय है।

मिलेगी। स्वीजरलैण्ड मे कमला ने जो प्राप्त किया है उसे किसी भी तरह खोने का मौका उसे नही देना चाहिए।

तुम्हारा सच्चा
वापू

—अंग्रेजी। सावरमती, २६।२।१९२८। नेहरू संग्रहालय में सुरक्षित पत्रावली से।]

२०९. पत्र : जवाहरलाल नेहरू को

सत्याग्रहाश्रम
सावरमती
२०।३।२८

मेरे प्रिय जवाहर,

मुझे तुम्हारे दो पत्र मिले हैं। अभी तो मैं तुम्हारे द्वारा वताये हुए मित्र को एक सन्देश भेजने के लिए ही यह पत्र लिख रहा हूँ। अव तो उन्होंने सीधे मुझे लिखा है किन्तु जैसा कि मैंने वादा किया था, सन्देश तुम्हे भेज रहा हूँ। वह साथ है।

मैं आशा करता हूँ कि तुम मेरे लेखो को, जो मैं वहिष्कार और मिलो के ऊपर लिख रहा हूँ, पढते जा रहे होगे। मैं मिलमालिको के साथ सलाह-मश्विरा भी कर रहा हूँ। मैं नही जानता कि वे किसी वात पर राजी होंगे किन्तु यदि तुम्हे कोई वात गलत या कमजोर मालूम पडे, तो तुम कृपा करके मुझे वता दोगे।

कमला का क्या हाल-चाल है? गर्मियो की ऋतु मे उसे रखने के लिए तुम कहाँ जा रहे हो?

तुम्हारा सच्चा
वापू

—अग्रेजी। सावरमती, २०।३।१९२८। नेहरू सग्रहालय मे सुरक्षित पत्रावली से।]
सौजन्य : श्रीमती इन्दिरा गाधी
तथा नेहरू संग्रहालय।

२१०. पत्र : जवाहरलाल नेहरू को

सत्याग्रहाश्रम
साबरमती
१-४-२८

मेरे प्रिय जवाहर,

मुझे तुम्हारा पत्र मिल गया है।

साथ की प्रतियों से तुम्हें मालूम हो जायगा कि मिल-मालिकों के साथ समझौते में क्या प्रगति हुई है। फिर भी मैं तुम्हारी इस बात से सहमत हूँ कि इस समय उनसे कुछ परिणाम नहीं निकल सकता। किन्तु उचित समय आने पर समझौतों का फल निकल सकता है। एक समय वह था जब मिल-मालिक बहिष्कार तथा खादी-प्रचार के सर्वथा विरुद्ध थे। इन समझौते की बातों के समाप्त होने पर मैं फिर लिखूंगा।

यद्यपि रोमें रोलां का प्रथम पत्र, जिसकी उम्मीद थी, आ गया है और उसमें मेरे प्रस्तावित प्रवास के प्रति बड़े उत्साह का भाव है, फिर भी उससे मैं किसी निर्णय पर नहीं पहुँच सका हूं। ज्यों-ज्यों किसी निश्चित निर्णय पर पहुँचने का समय नजदीक आता जा रहा है, मेरी हिचकिचाहट बढ़ रही है। परन्तु शायद अगले सप्ताह रोलां से कोई समुद्री तार प्राप्त हो और वह मेरे भाग्य का निर्णय कर दे।

इस बीच, सिंगापुर जाना तो नही ही हो रहा है। अभी तो मैं यही रहूंगा। यदि मैं यूरोप नही गया तो मुझे बर्मा जाना और दो महीने वहां पहाड़ियों में जाकर तथा अपने निवास-काल को वहां धनसंग्रह करके बिताना है।

मैं भी तुम्हारे इस मत का हूं कि किसी-न-किसी दिन हमें धनिकों और बोलने वाले शिक्षित वर्ग के बिना ही कोई गहरा आन्दोलन छेड़ना होगा। किन्तु वह समय अभी नही आया है।

तुमने यह नहीं लिखा कि कमला गर्मी के महीने कहाँ बितायेगी ?

तुम्हारा सच्चा
बापू

—अंग्रेजी। साबरमती, १।४।१९२८। नेहरू संग्रहालय में सुरक्षित पत्रावली से।]

सौजन्य : श्रीमती इन्दिरा गांधी
तथा नेहरू संग्रहालय

२११. पत्र : जवाहरलाल नेहरू को

आश्रम,
साबरमती, ५-४-२८

मेरे प्रिय जवाहर,

'यग इण्डिया' के अक मे तुम मिलो पर मेरा लेख देखोगे। सबसे ताजी बात यह है कि वे, हमारे सन्दर्भ के बिना ही, अपनी तरफ़ से एक स्वदेशी-सघ खोलना चाहते हैं। ऐसा ख्याल न करो कि मेरी चेष्टा से कोई ठोस बात होनेवाली है। उन्हे अपनी योजनाओ पर जाने दो। जहा तक मैं देखता हू, हमे निश्चित रूप से अपना ध्यान घूम-घूम कर खादी बेचने पर सीमित करना चाहिए।

यूरोपीय-प्रवास के विषय मे अभी तक कोई अन्तिम निर्णय नही हो पाया है। मैं खुद ही इससे दूर हट रहा हू और यह रोला से कुछ और सकेत पाने पर, जो मुझे अगले सप्ताह मिलेगा, निर्भर करता है।

तुम्हारा सच्चा
बापू

—अंग्रेजी। साबरमती, ५।४।१९२८। नेहरू सग्रहालय मे सुरक्षित पत्रावली से।]
सौजन्य : श्रीमती इन्दिरा गांधी,
तथा नेहरू संग्रहालय

२१२. पत्र : जवाहरलाल नेहरू को

आश्रम
साबरमती, ८-४-२८

मेरे प्रिय जवाहर,

मुझे तुम्हारा पत्र मिल गया है। मुझे याद नहीं पडता कि पिताजी ने मुझसे यह बात कही हो कि वह इस महीने के अन्तिम सप्ताह मे मिल-मालिको से मश्विरा करने के लिए बम्बई लौटेंगे। किन्तु उन्होने और मैंने विस्तार के साथ, विदेशी-वस्त्र-बहिष्कार के प्रश्न पर बात-चीत की थी और (इस विषय पर) सेठ लाल जी,

शान्तिकुमार, सेठ अम्बालाल, कस्तूरभाई और मंगलदास की कान्फ्रेंस में मश्विरा भी किया था। यह एक अच्छी कान्फरेंस थी किन्तु उसमें कोई निश्चित बात नहीं हुई। अब मैंने निश्चित रूप से सुना है कि मिल-मालिक अपनी खुद की स्वदेशी लीग स्थापित करने जा रहे हैं, जिसका मतलब यही है कि हमारे बीच किसी प्रकार का समझौता नही हो पा रहा है।

आज लाल जी से मेरी लम्बी वार्त्ता हुई है क्योंकि वह यहां दो दिनों तक थे। वह विदेशी वस्त्र-बहिष्कार के विषय में उत्साहित हैं। मैंने उन्हें साहित्य दिया है। उन्होंने यहां तक सुझाव दिया कि मैं कुछ नेताओं को निमन्त्रित करूं और उनसे बहिष्कार के विषय पर बातचीत करूं। मैंने उनसे कहा कि मुझमें वैसा करने की हिम्मत नही है। उनकी राय यह है कि यदि बहिष्कार के विषय में गहरा प्रचार-कार्य करना है तो मुझे देश के बाहर नहीं जाना चाहिए। इस बात में तो मैं भी उनसे सहमत हूँ, किन्तु जबतक राजनीतिक मानस वाला भारत पूरे हृदय से मेरे साथ न हो और जबतक ब्रिटिश माल, मुख्यतः ब्रिटिश वस्त्र, के अस्थायी बहिष्कार का आन्दोलन बन्द न कर दिया जाय, तबतक मैं गहरे प्रचार का काम नही ले सकता। इसलिए हम इस अस्थायी व्यवस्था पर सहमत हुए हैं कि यदि प्रसिद्ध नेताओं की ओर से स्वयंप्रसूत कार्य के रूप में कोई ठोस बात सामने आती है, तब मै यूरोप जाने का विचार छोड़ दूँगा। इसके विपरीत यदि कोई ठोस बात नही होती, और मुझे और तरह से भी अपना रास्ता साफ दिखाई देता है, तो मैं यात्रा पर रवाना हो जाऊँ और लाल जी तथा दूसरे ऐसे लोग जो उनके जैसे मानस के हों, विदेशीवस्त्र-वहिष्कार के गहरे प्रचार-कार्य के लिए वातावरण तैयार करें—फिर चाहे इसमें मिलों की मदद न भी मिले। इसलिए मेरा सुझाव है कि तुम डा० अंसारी तथा दूसरों से सलाह-मश्विरा करो—मैं समझता हूँ कि सभी पंजाब जायँगे—और खादी के जरिये विदेशी वस्त्र-बहिष्कार का प्रस्ताव पास करो। मैं तुम्हें चेतावनी देना चाहूँगा कि उसमें विदेशी मिलों के वस्त्र की कोई चर्चा न हो। तुम तो बस इतना कह सकते हो : "चूंकि राष्ट्र की सम्मिलित शक्ति के तुरन्त प्रदर्शन रूप में विदेशी वस्त्र-बहिष्कार का एक मात्र साधन ही उपलब्ध है, यह सम्मेलन सब सम्बन्धित जनों से अनुरोध करता है कि वे विदेशी वस्त्रों का पूर्ण बहिष्कार करें और उनकी जगह हाथ की कती-बुनी खादी को अपनायें—फिर चाहे इसके कारण परिधान के विषय पर अपनी रुचि बदलनी ही क्यों न पड़े और चाहे इसमें कुछ आर्थिक क्षति ही क्यों न हो।" तुम मुझे उस व्यक्तिगत वार्तालाप के परिणाम से भी सूचित करना जो तुम मित्रों के साथ करोगे, और फिर मुझे सलाह भी देना कि क्या मुझे यूरोप जाने के विचार का त्याग

कर देना चाहिए। डा० असारी को, वस्तुत', यह निर्णय करने मे समर्थ होना चाहिए।

तुम्हारा सच्चा
वापू

—अंग्रजी। सावरमती-आश्रम, ८।४।१९२८। नेहरू संग्रहालय मे सुरक्षित पत्रावली से।]
सौजन्य : श्रीमती इन्दिरा गाधी
तभा नेहरू संग्रहालय

२१३. पत्र : जवाहरलाल नेहरू को

आश्रम
सावरमती, १७।४।२८

प्रिय मेरे जवाहर,

मुझे तुम्हारा पत्र मिल गया है। क्या तुम जानते हो कि जब तुमने मुझे लिख दिया था कि तुम पंजाव जा रहे हो, तव भी मुझे यह मालूम नही था कि तुम सम्मेलन के अध्यक्ष के रूप मे जा रहे हो? जब डा० किचलू ने मुझे लिखा था तव उन्होंने ऐसा कुछ भी नही कहा कि अध्यक्ष कौन होनेवाला है। जो भी हो, जब मुझे मालूम हुआ कि अध्यक्षता तुमने की, तो मुझे खुशी हुई।

निश्चय मैं सव जगह वही देखता हू जो तुमने सम्मेलन मे देखा। मुझे ताज्जुव है कि मैं जो कुछ सर्वत्र अनुभव कर रहा हू—गम्भीरता का सर्वथा अभाव तथा निरन्तर लगन के साथ कोई ठोस काम करने की ओर अरुचि, उस पर तुम्हारा ध्यान गया है या नही।

क्या तुम्हे पजाव मे हिन्दू-मुस्लिम ऐक्य के लिए कोई आशा प्राप्त होती है?

जहा तक युरोप-यात्रा का सवाल है, अव भी मैं तुम्हे कोई निश्चित समाचार देने मे असमर्थ हू।

जहां तक मिलों की निष्फल वात-चीत का सवाल है, तुम अव तक पिताजी से सव कुछ जान चुके होंगे।

बापू

—अंग्रेजी। साबरमती आश्रम, १७।४।१९२८। नेहरू संग्रहालय में सुरक्षित पत्रावरी से।]
सौजन्य : श्रीमती इन्दिरा गांधी
तथा नेहरू संग्रहालय।

२१४. पत्र : जवाहरलाल नेहरू को

आश्रम
साबरमती, २४-४-२८

मेरे प्रिय जवाहर,

तुम्हारा पत्र मुझे मिल गया। मगनलाल की मृत्यु के रूप में मुझपर जो विपत्ति आई है, उसे तुम निश्चित रूप से जान ही चुके हो। यह स्पष्ट ही असह-नीय है। फिर भी, मैं वीर मुद्रा बनाये हुए हूँ।

मैंने उस प्रस्ताव को नहीं पढ़ा था जिसमें कांग्रेस से "शान्तिमय एवं उचित साधनो का "त्याग कर" सम्पूर्ण सम्भव उपायों के रूप में अभिव्यक्ति को वदलने के लिए कहा गया था। मैं स्वतन्त्रता (इण्डिपेण्डेण्ट) को तो निगल सकता हूँ, 'सम्पूर्ण सम्भव उपायों' तो अग्राह्य है। किन्तु मैं समझता हूँ कि हमें ऐसे पेट का विकास करना होगा जो किसी भी विष को घूंटने के लिए पर्याप्त शक्तिमान हो। फिर भी मैं आशा करता हूँ कि तुम अपनी इच्छा और सामर्थ्य के वाहर अपना शोषण नहीं होने दोगे।

अब यह स्पष्ट हो गया है कि मिल-मालिक कांग्रेस से सौदा करना चाहते थे। किन्तु मैं इन निष्फल समझौता-वार्ताओं के लिए दुखी नहीं हूँ। उन्होंने वातावरण को स्पष्ट कर दिया है।

रोमें रोलां के जिस पत्र की प्रतीक्षा थी, वह रविवार को मिल गया। मैं उनसे जिस भार को उठाने की आशा रखता था, उसे वह न उठा सकेंगे। इसलिए

मैं इस साल (यूरोप) नहीं जा रहा हूँ। किन्तु इस विषय में सब-कुछ 'यंग इण्डिया' के पृष्ठों में पढ़ोगे।

तुम्हारा सच्चा
बापू

—साबरमती आश्रम, २४।४।१९२८। नेहरू संग्रहालय में सुरक्षित पत्रावली से।]
सौजन्य : श्रीमती इन्दिरा गांधी
तथा नेहरू संग्रहालय।

२१५. पत्र : जवाहरलाल नेहरू को

सत्याग्रहाश्रम
साबरमती
बी० बी० सी० आई रेलवे
तिथि १७-६-२८

मेरे प्रिय जवाहर,

मुझे तुम्हारे दो पत्र मिल गये। कमला और इन्दु-विषयक समाचार चिन्ताजनक हैं। मैं तुमसे और निश्चित सूचना की आशा कर रहा हूँ। मैं दोनों के लिए, और कम-से-कम कमला के लिए तो निश्चित रूप से, गरीब आदमियों की दवा अर्थात् नितम्ब-स्नान एवं कटि-स्नान सुझाने को ललच रहा हूँ। परन्तु मैं जानता हूँ कि यह व्यावहारिक नहीं है और उसे मामूली उपचार के बीच से ही गुजरना होगा।

मुझे आशा है, एक सर्वसम्मत विधान का मस्विदा परिपूर्ण रूप में कमेटी द्वारा प्रकाशित किया जायगा।

महादेव एक आश्रम-कूप के चबूतरे से बुरी तरह गिर पड़े हैं। वह शय्याग्रस्त परन्तु पहिले से अच्छे हैं।

बापू

—अंग्रेजी। सत्याग्रहाश्रम साबरमती, १७।६।१९२८। नेहरू संग्रहालय में सुरक्षित पत्रावली से।]
सौजन्य : श्रीमती इन्दिरा गांधी
तथा नेहरू संग्रहालय

२१६. पत्र : जवाहरलाल नेहरू को

मेरे प्रिय जवाहर,

मुझे तुम्हारा पत्र मिला है, पिता जी ने कमला एवं इन्दु के विषय में सब-कुछ मुझे लिखा था।

इतना स्पष्ट है कि हमें किसी उचित समझौते के योग्य वातावरण प्राप्त नहीं है। जरा खड्गपुर की विभीषिका को तो देखो। दोनों पक्ष अपने होश में आवें, इसके पहले जमकर और लड़ाइयाँ लड़नी पड़ेंगी।

मेरी कामना है कि तुम इकला अनुभव न करोगे। हमें इतना मान लेना चाहिए कि कार्यकर्त्ताओं के सामने का काम सरल नहीं है, जैसा कि एक समय हम, उसे समझते थे। मै चाहूंगा कि तुम धीरज न खोओ और कोई मशक्कत का काम, उसमें जीवित श्रद्धा रखकर, अपना लो। भगवद्गीता तुम्हारी पथदर्शक पुस्तिका हो।

प्रेमपूर्वक
बापू

—अंग्रेजी। ३।७।१९२८। नेहरू संग्रहालय में सुरक्षित पत्रावली से।]
सौजन्य : श्रीमती इन्दिरा गांधी
तथा नेहरू संग्रहालय

२१७. पत्र : जवाहरलाल नेहरू को

मेरे प्रिय जवाहरलाल,

मैं आशा करता हूँ, कमला और इन्दु विकसित हो रही हैं। मुझे तुम्हारा तार और पत्र मिल गये हैं। अध्यक्षता का मामला तो अब खत्म हुआ।

मैं यह पत्र भीवर जी (भुवरजी ?) के विषय में तुमसे सलाह लेने के लिए लिख रहा हूँ। उन्होने आश्रम से अपने को वीस रुपया प्रति मास देने को कहा है, और इसके लिए वह एक सौ रुपये पेशगी चाहते हैं। मै चाहूँगा कि तुम मुझे बताओ, कि वह कैसा काम कर रहे है, और आया तुम्हे सन्तोप दे रहे है। अखिल भारतीय चर्खा-संघ तो उन्हें कुछ देगा नही और दे सकता भी नही। क्या तुम आश्रम

को उनकी आवश्यकताओं की पूर्ति की सलाह देते हो ? वह किस तरह काम कर रहे हैं ?

तुम्हारा सच्चा
बापू

—अंग्रेजी। २९।७।१९२८। नेहरू संग्रहालय मे सुरक्षित पत्रावली से।]
सौजन्य : श्रीमती इन्दिरा गांधी
तथा नेहरू संग्रहालय।

२१८. पत्र : बनारसीदास चतुर्वेदी को

(पोस्टकार्ड)

भाई बनारसीदास जी,

आपका पत्र मीला है. भाई ओझा को जो उत्तर भेजा गया है योग्य है. तार भेजने की आवश्यकता नहिं है क्योकि मैंने पहले एक तार भेज दिया.

आपका
मोहनदास

२-८-२८

—हिन्दी। २।८।१९२८। जी० एन० २५६३ की फोटो-नकल से।]

२१९. पत्र : श्रीप्रकाश को

सत्याग्रहाश्रम
साबरमती
२।१०।२८

मेरे प्रिय प्रकाश,

तुम्हारा सूत पहिले से अच्छा है किन्तु अभी तक जैसा होना चाहिए नही है। तुम्हें ठीक ढग बताने के लिए कृपालानी के आश्रम से किसी को पकड़ना चाहिए या सीखने के लिए यहाँ आना चाहिए।

बनारस वाली घटना के सन्दर्भ में मैं कहूँगा कि मैंने जानबूझकर उसे छोड़ दिया है, जैसा कि मैंने अपने जीवन के कितने ही अन्य मनोरंजक अध्याय छोड़ दिये है। बल्कि बात तो यह है कि ज्यों-ज्यों मैं इन अध्यायों के साथ आगे बढ़ रहा हूँ, मेरी परेशानी बढ़ती जाती है क्योंकि प्रमुख अभिनेता अभी जीवित हैं और वे बहुत कुछ जनता की आँखों में हैं। कभी-कभी तो मैं अनुभव करता हूँ कि मुझे अगले अध्याय लिखना बन्द कर देना चाहिए, यद्यपि वैसा तबतक कर नहीं पाऊँगा जबतक कि (कांग्रेस के) १९२० के विशेष अधिवेशन तक पहुँच न जाऊँ। निस्सन्देह मैं बनारस के उस प्रसंग को अपने जीवन के गौरवमय प्रसंगों में मानता हूँ। मैं सचमुच उसके लिए तैयार नहीं था और मैं आज तक नहीं जानता कि उस परीक्षा में खड़े होने की शक्ति मुझमें कहाँ से आ गई। अपने जीवन के अनेक प्रसंगों के विषय मे मैं कह सकता हूँ—"तेरी श्रद्धा ने मुझे पूर्ण बना दिया।"

तुम्हारा भेजा चेक मुझे विधिवत् प्राप्त हो गया है।

तुम्हारा शुभैषी
मो० क० गांधी

[illegible]
[illegible],
[illegible]

—अंग्रेजी से। साबरमती, [illegible]। नेहरू संग्रहालय में सुरक्षित पत्रावली से।]
[illegible] नेहरू संग्रहालय।

मैंने यं० इ० के लीये नोट लीखकर भेज दीया पुस्तक तो नहिं पढा था टीका केवल आपके पत्र पर निर्भर थी. मैंने सोचा इस तरह टीका करना उचित नहिं होगा पुस्तक पढना चाहिए. मैंने पुस्तक आज खतम की मेरे मन पर जो असर आप पर हुआ, नहिं हुआ है. मैं तो पुस्तक का हेतु शुद्ध मानता हु. इसका असर अच्छा पड़ता है या बूरा मुझे मालम नहिं है लेखक ने अमानुषी व्यवहार पर घृणा ही पैदा की है आपके पत्र की चिन्ह अब खुलवा दुगा.

महाराज कुंवर सींग जी के वारे मे मैं क्या लीखु? वहोत सोच रहा हुं। सिर्फ लीखने से कुछ नही हो सकेगा, शास्त्री जी प्रयत्न कर रहे हैं मैं सावधान हुं

पर कु० सींग के वारे में विहार सरकार कुछ करे तो हो सकता है. अन्यथा क्या हो सकता है? इस विषय मे मैं कुछ हिस्सा लेना नही चाहता हु।

आपका
मोहनदास

१६-१०-२८
श्री वनारसीदास चतुर्वेदी
६१, अपर सर्कूलर रोड
कलकत्ता

—हिन्दी। १९।१०।१९२८। जी० एन० २५२१ की फोटो-नकल से।]

२२१. पत्र : जवाहरलाल नेहरू को

सत्याग्रहाश्रम, साबरमती
१७-११-२८

मेरे प्रिय जवाहर,

तुम्हारे पत्र से मेरी सब चिन्ता दूर हो गई है। जबतक तुम एजेण्ट[1] के रूप

चलाया था। उनकी चिट्ठी पर गांधी जी ने यं० इं० में टिप्पणी लिखी थी किन्तु बाद में स्वयं पुस्तक पढ़कर उसे मसूख कर दिया था।—सम्पा०

१. जवाहरलालजी उस समय संयुक्तप्रान्त में चर्खासंघ के एजेण्ट थे। कार्य

में काम करने को राजी हो, तब तक कोई परिवर्तन करने की जरूरत नहीं, और तव तो निश्चित रूप से नहीं, जब तुम्हारे पकड़कर भगा लिये जाने की अफवाह उठ रही है। जब वह घटना घटेगी तव हम देखेंगे। जव तुम अपने कन्धे पर यह बोझ न उठा सको तब के लिए मैं व्यक्तिशः कृपालानी[1] के एजेण्ट बनने के विचार को पसन्द करता हूँ। यदि तुम १८ दिसम्बर को वर्धा आ सकते हो तब हम इस विषय पर और बातचीत कर लेंगे या फिर वैसा कलकत्ता में करेंगे।

शीतला सहाय, और किसी बात से अधिक अपने मानसिक सन्तुलन के खयाल से, कुछ महीने आश्रम में रहना चाहता था। कुछ घरेलू तथा अन्य चिन्ताएँ उसके दिमाग़ पर सवार हैं। वह शान्त समय चाहता था। और वह उसे पा रहा है।

कमला के लिए मै दुःखी हूँ। स्पष्ट है कि स्वीज़रलैण्ड में वह पूर्णतः नीरोग नहीं हुई थी। मुझे खुशी है कि तुम उसे कलकत्ता ले जा रहे हो। (वहाँ) उसे सम्भव सर्वोत्तम सलाह तो मिलेगी।

मुझे आशा है, तुम अपनी सीमा से ज्यादा श्रम नहीं कर रहे हो। लालाजी[2] की मृत्यु एक भारी संकट है।

तुम्हारा सच्चा
बापू

पण्डित जवाहरलाल नेहरू
आनन्द भवन, इलाहाबाद

—अंग्रेजी। साबरमती, १७।११।१९२८। नेहरू संग्रहालय में सुरक्षित पत्रावली से।]
सौजन्य : श्रीमती इन्दिरा गांधी तथा नेहरू संग्रहालय।

पद्धति में कुछ मतभेद के कारण उनके परिवर्तन की बात कुछ क्षेत्रों में उठी थी।

१. आचार्य जीवतराम भगतराम कृपालानी। गांधीजी के पुराने साथी, प्रमुख अनुयायी, गांधी आश्रम के संस्थापक। भारतीय कांग्रेस के वर्षों तक प्रधान-मन्त्री और बाद में अध्यक्ष। स्वतन्त्र गांधीवादी विचारक।

२. लाला लाजपत राय।

२२२. पत्र : जवाहरलाल नेहरू को

सत्याग्रहाश्रम
वर्धा
२८-११-२८

मेरे प्रिय जवाहर,

मुझे तुम्हारा पत्र प्राप्त हो गया है। यदि तुम फिर म्यूनिसपलटी मे प्रवेश करते हो—जबतक कि तुम इस शर्त पर प्रवेश नही करते कि तुम्हारे प्रति पूर्ण आज्ञाकारिता का पालन किया जायगा, निश्चय ही मुझे दु ख होगा। यदि तुम्हे झगडो को सुलझाने के लिए अन्दर जाना पड रहा हो, तो यह तुम्हारे योग्य वात नही है। मेरा विश्वास है कि तुम अपने अखिल भारतीय काम को ठोस म्युनिसपल कार्य के साथ सयुक्त नही कर सकते। ठोस म्युनिसपल कार्य खुद अपने मे एक पूरा काम है और वह एक आदमी की सम्पूर्ण क्रियाशक्ति, जो वह लगा सकता है, चाहता है, और मै यह नही पसन्द करूँगा कि वहाँ तुम्हारा काम ठोस के सिवा कुछ और हो।

मुझे क्रिश्चियन कान्वेन्शन मे शरीक होने के लिए मैसूर जाना था। मैंने वर्ष के मध्य भाग मे मित्रो को ऐसी आशा दिलाई थी, किन्तु एक महीने पूर्व उन लोगों को सूचित कर दिया कि यदि मुझे जरा भी विश्राम लेना हो तो मेरा जाना असम्भव है।

तुमने कमला के विषय मे मुझे जो समाचार दिया था, वह बुरा है। कलकत्ता मे उसका इलाज किये जाने का विचार मुझे पसन्द है। वहाँ उसे सर्वोत्तम सम्भव डाक्टरी सलाह प्राप्त होगी।

मैं आशा करता हूँ कि तुम यहाँ बैठक मे उपस्थित होने के लिए समय निकालोगे।

तुम्हारा सच्चा
मो० क० गाधी

पण्डित जवाहरलाल नेहरू
आनन्द भवन, इलाहाबाद

—अंग्रेजी। वर्धा, २८।११।१९२८। नेहरू सग्रहालय मे सुरक्षित पत्रावली से।]
सौजन्य : श्रीमती इन्दिरा गाधी
तथा नेहरू संग्रहालय

२२३. पत्र : जवाहरलाल नेहरू को

[लखनऊ में साइमन-कमीशन का बहिष्कार संघटित करने के सिलसिले में जवाहरलाल जी तथा अन्य लोगों पर पुलिस ने लाठी चार्ज किया था। यह पत्र उसी के सन्दर्भ में लिखा गया है।—सम्पा०]

वर्धा
३ दिसम्बर, १९२८

प्रिय जवाहर,

तुम्हें मेरा प्यार। सब काम वीरतापूर्वक किया गया। तुम्हें इससे भी अधिक वीरता के कार्य करने हैं। भगवान तुम्हें दीर्घायु करे और भारत को गुलामी के जुए से छुड़ाने से तुम्हें अपना विशेष अस्त्र बनाये।

तुम्हारा,
बापू

—अंग्रेजी। वर्धा, ३।१२।१९२८]
सौजन्य : श्रीमती इन्दिरा गांधी

२२४. पत्र : जवाहरलाल नेहरू को

आश्रम,
साबरमती, १२-१-२९

मेरे प्रिय जवाहर,

तुम्हारा तार मुझे मिला। बाँदा और झाँसी के कुछ कार्यकर्त्ताओं के आग्रह को मानकर मैं निश्चय ही संयुक्तप्रान्त के कुछ हिस्सों की यात्रा करना चाहता था। किन्तु संयमशील होने के कारण उन्होंने अपना आग्रह वापिस ले लिया। अब एक दूसरी सम्भावना और है और वह मेरठ तथा दिल्ली के समीप की है। वे लोग चाहते हैं कि मैं वहाँ मार्च में जाऊँ किन्तु मार्च के लिए मेरे पास इतने अधिक ठहराव हैं कि उनमें से मुझे चुनाव करना पड़ेगा। दिल्ली और मेरठ के साथ आन्ध्र की बात है, कर्नाटक भी है और बर्मा की बात भी है, फिर पंजाब भी तो है। लाला जी की सोसाइटी[1] के लोग अपने वार्षिक समारोह के लिए मुझे वहां चाहते

१. सर्वेण्ट्स आफ पीपुल सोसाइटी।

हैं। प्रस्तावित यूरोपीय प्रवास के विषय मे मैं पिता जी के निर्णय की राह देख रहा हूँ। यदि वह उस प्रवास को खत्म कर देते हैं तो मेरा समय लेने की सब मांगो को सन्तुष्ट कर सकने की राह मेरे लिए खुल जायगी। यदि वह चाहते हैं कि युरोप की यात्रा हो तब मैं अपना दौरा एप्रिल के प्रथम सप्ताह के आगे नही बढा सकता। फिलहाल मैं इस मामले को इससे आगे नही ले जा सकता। किन्तु मैं चाहूगा कि चुनाव करने मे तुम मेरी मदद करो। तुम पिताजी से उनकी इच्छा के बारे मे राय लोगे तो इससे तुम मेरा ज्यादा अच्छी तरह पथ-दर्शन कर सकोगे।

जबतक यह (पत्र) तुम्हारे पास पहुचेगा तबतक शायद पिताजी मुझे अपनी राय तार से भेज चुके रहेगे। यदि वह न भेज पायें तो कृपया देखना कि वह वैसा करें।

अब कमला की क्या हालत है? और खुद तुम कैसे हो? तुम सेक्रेटरी (सचिव) हो गये हो, इसलिए मैं चाहता हू कि तुम दिलोजान से अपने को कार्यक्रम मे लगा दो और कार्य-समिति के आदेशो का पालन हो, इस पर बाध्य करो और वर्तमान लज्जाजनक अव्यवस्था के बीच व्यवस्था लागू करने की कोशिश करो।

तुम्हारा सच्चा
बापू

—अंग्रेजी। साबरमती, १२।१।१९२९। नेहरू संग्रहालय मे सुरक्षित पत्रावली से।]
सौजन्य : श्रीमती इन्दिरा गाधी तथा नेहरू संग्रहालय।

२२५. पत्र : जवाहरलाल नेहरू को

सत्याग्रहाश्रम
साबरमती
तिथि, १७-१-२९

मेरे प्रिय जवाहर,

मुझे तुम्हारा पत्र मिल गया। सयुक्त प्रान्त के दौरे के विषय मे मैं तुम्हें पहिले ही लिख चुका हू। यह (पत्र) मैं कृपलानी के बारे मे लिख रहा हू।

जमनालाल जी ने मुझे बताया कि तुम्हारी इच्छा है कि कृपलानी तुम्हारे नीचे संघटन का काम करें—मतलब यह कि वह काम करें, जो शीतला सहाय कर रहे थे तथा उसमें और जो वृद्धि कर सकें करें। तुम्हारे जिस पत्र का मैं उत्तर दे रहा हूं, उससे तो मुझ पर ऐसी छाप नहीं पड़ती। मैं समझता हूं कि कृपलानी तुमको इसके पहिले ही लिख चुके हैं, क्योंकि तुम्हारा पत्र पाने के पहिले ही, जमनालाल जी के पत्र के आधार पर मैं उनसे बातें शुरू कर चुका था; शंकरलाल[1] ने भी ऐसा ही किया था। इसलिए अब तुम मुझे लिखो कि इस मामले में ठीक-ठीक क्या चाहते हो।

यदि मैं निकट भविष्य में संयुक्त प्रान्त का प्रवास नहीं करता, और यदि तुम एक-दो दिन के लिए भी साबरमती आ सको तो हम बहुत-सी बातों पर विचार कर सकते हैं।

वे अनुकूल हों या प्रतिकूल, मैं कमला के विषय में डाक्टरों की रिपोर्टों पर पूर्णतः अविश्वास करता हूं। मेरी इच्छा है कि तुम और पिता जी तथा कमला अपने मन को इस बात के लिए तैयार करलें कि वह प्राकृतिक चिकित्सा का आश्रय ले—इसका मतलब है कूने के स्नान तथा सूर्य-स्नान। सूर्यस्नान तो अब डाक्टरी पेशे में भी प्रचलित हो गया है और उससे असाधारण परिणाम निकलने का दावा किया जाता है।

यदि जरूरी हो तो कृपलानी के विषय में तुम तार दे सकते हो।

तुम्हारा सच्चा
बापू

—अंग्रेजी। साबरमती, १७।१।१९२८। नेहरू संग्रहालय में सुरक्षित पत्रावली से।]

सौजन्य : श्रीमती इन्दिरा गांधी तथा नेहरू संग्रहालय।

१. शंकरलाल बैंकर, भारतीय चर्खा-संघ के प्रधान मन्त्री।

२२६. पत्र : जवाहरलाल नेहरू को

आश्रम,
सावरमती, २४।१।२९

मेरे प्रिय जवाहर,

युरोप-प्रवास के विषय मे पिताजी को लिखा मेरा पत्र तुम देखोगे। मैं चाहता हू कि तुम इस पर मुझे अपनी राय दो। इससे कोई निर्णय पर आने मे मदद मिलेगी।

मुझे कृपालानी के विषय मे तुम्हारा तार मिला है। जमनालाल जी और शंकरलाल, खासकर जमनालाल जी, ने अपने दिल कृपालानी पर लगा दिये हैं। उन लोगो को शीतला सहाय के कुछ ज्यादा कर सकने पर विश्वास नही है। उनका विचार है कि सयुक्तप्रान्त मे अपने काम के तीन वर्षों की अवधि मे वह कुछ ज्यादा उपयोगी सावित नही हुए हैं। इसलिए मैं शीतलासहाय से चर्चा करनेवाला हू और देखूगा कि उन्हे क्या कहना है। किन्तु इसके पहिले कि मैं अन्तिम रूप से कोई निर्णय करू, मैं चाहूगा कि तुम शीतलासहाय के वारे मे अपना विचार मुझे भेज दो।

इसके साथ मेरे सिन्ध कार्यक्रम की एक प्रति है।

तुम्हारा सच्चा
वापू

नत्थी : १

इतना लिख चुकने के वाद, तुम्हारा पत्र मिला। अव मैं शीतलासहाय से वात कर चुका हू। सव मिलाकर उनके लिए त्यागपत्र देना ही अच्छा है। जहा तक उनके भावी कार्यक्रम की वात है, आज रात को मैं उनसे वातें करनेवाला हू।

वापू

—अंग्रेजी। सावरमती, २४।१।१९२९। नेहरू सग्रहालय मे सुरक्षित पत्रावली से।]
सौजन्य : श्रीमती इन्दिरा गाधी तथा नेहरू सग्रहालय।

२२७. पत्र : जवाहरलाल नेहरू को

सत्याग्रहाश्रम
साबरमती, २६।१।२६

मेरे प्रिय जवाहर,

मैने शीतलासहाय से बात कर ली है, और हम दोनों एक परिणाम पर पहुचे हैं, कि सब बातों का विचार करते हुए उनके लिए त्यागपत्र देना ही सबसे अच्छा रहेगा। फिलहाल उन्हें अपनी पत्नी-सहित आश्रम में रहना चाहिए। इस अवधि में वह खादी की सारी तकनीक (यन्त्रकौशल) में उस्तादी हासिल कर लेंगे और आश्रम के और सब ऐसे दूसरे कार्यों में भी भाग लेंगे जो जरूरी होंगे। मैं उनसे यह भी चाहता हूं कि तैयारी और परिवीक्षा की इस अवधि में वह मेरे कार्य करने के ढंग को समझ ले।

मैं तुमसे इस बात में सहमत हूं कि वह एक मूल्यवान कार्यकर्त्ता है, इसलिए उन्हें उतना कुशल होना चाहिए जितना सम्भव है—सिन्ध के लिए मेरे रवाना होने के तुरन्त बाद, वह इलाहाबाद आयेंगे—अपना घरवार उठा देने तथा चार्ज सौपने को कागदपत्र तैयार करने तथा बैलेंसशीट अद्यतन बनाने के लिए, जिससे जब भी कृपालानी वहा जाने को तैयार हों, वह चार्ज ले सकें।

मैं चाहता हूं कि जब डाक्टर भारतीय सूर्य पर एतराज़ करे तो तुम उनकी बाते न सुनो। तुमने डा० मुथ्थू के बारे में सुना होगा। रेवाशंकर भाई का पुत्र धीरू अस्थि-क्षय से पीड़ित था। सोलन में सैनिटोरियम मे चिकित्सा करने और जो कुछ बम्बई में सब डाक्टर लोग कर सकते थे. उसे कर लेने के बाद, उन्होने डा० मुथ्थू को बुलवा भेजा। उन्हें एक हजार रुपये प्रतिदिन के हिसाब से फीस दी। डा० मुत्थू यह निर्धारित करने से ज्यादा अच्छी दूसरी कोई सलाह न दे सके कि मुक्त वायु, हलका भोजन और सूर्य-चिकित्सा का ही आश्रय लेना चाहिए। रुग्ण अस्थि से कभी-कभी तो एक पौण्ड मवाद प्रतिदिन निकलता था। रुग्ण अस्थि को हर सुबह कुछ घण्टों तक सूर्य की धूप में रक्खा जाता था। और उसे खुली हवा में सारे दिन लेटे रहना पड़ता था। वह सैनिटोरियम मे भी नहीं भेजा गया। अब वह पूरी तरह नीरोग हो गया है। युरोपीय सूर्य ज्यादा अच्छा हो सकता है, किन्तु भारतीय प्रतिद्वन्द्वी के प्रति किसी तरह के तिरस्कार की ज़रूरत नही है। यहा डाक्टर प्रातःकालीन सूर्य का सुझाव देते है। उनका कथन है कि अल्ट्रा वायलेट किरणे लेने का सर्वोत्तम समय ८ से १० बजे तक होता है, और

गर्मियों मे ७ से ८ तक। किन्तु यह सब वस्तुत रोगी की दशा पर निर्भर करता है।

तुम्हारा सच्चा
बापू

— अंग्रेजी। साबरमती, २६।१।१९२९। नेहरू सग्रहालय मे सुरक्षित पत्रावली से।]

सौजन्य : श्रीमती इन्दिरा गाधी तथा नेहरू संग्रहालय।

२२८. पत्र : जवाहरलाल नेहरू को

आश्रम,
साबरमती १-२-२९

मेरे प्रिय जवाहर,

कलकत्ता मे जो कुछ किया गया था, उसके विषय मे 'यग इण्डिया' मे मैंने जो 'पंजाब की चिट्ठी' छापी है वह तुम ध्यान से पढ़ना। चिट्ठी मे जो कुछ कहा गया है उसमे से शायद हर एक बात जानते थे। मेरी इच्छा है कि काग्रेस कमेटी को व्यवस्थित करने को तुम अपना पहला काम बनाओगे, और उसके बाद रचनात्मक कार्यक्रम-सम्बन्धी काम को सगठित करोगे। यदि अज्ञात परिस्थितियो मे ग्रेट-ब्रिटेन के साथ कोई सम्मानपूर्ण समझौता नही होता, तो देश मे, व्यवहारत स्वतन्त्रता की पार्टी के सिवा कोई दूसरी पार्टी नही होगी। किन्तु यदि हम समुचित लड़ाई नही लड सकेंगे तो शोर प्रभावहीन होगा। और यदि वह लडाई काग्रेस के जरिए लडी जानी है, तो काग्रेस को एक जीवन्त पदार्थ होना पडेगा। और यह लडाई अहिसात्मक लडाई होगी, तो वर्तमान रचनात्मक कार्यक्रम पर, उसका जो भी मूल्य है, अमल करना होगा। इसलिए इस तथ्य के सिवा भी कि जैसी तुम्हारी आदत है, सचिव पद स्वीकार करने के बाद तुम अपने कार्यालय मे पूरा दिल लगाकर काम करोगे, मैं चाहता हू कि योग्यता के बल पर भी काग्रेस कार्यक्रम पर तुम अपना सम्पूर्ण ध्यान लगाओगे। मैं यह महसूस किये बिना नही रह सकता कि हम खादी के द्वारा विदेशी वस्त्र-बहिष्कार का, और यदि काफी कार्यकर्त्ता हो तो शराब की दुकानो की पिकेटिंग का भी, बहुत ज्यादा काम कर सकते हैं। और

यदि इन कामों को करना है तो मेरी समझ में तुम्हारे लिए यह जरूरी है कि सब प्रान्तों में दौरा करके पहिले यन्त्र को ठीक स्थिति में ले आओ।

लोगों ने मुझे कल सिन्ध जाने से इसलिए रोक दिया कि सहसा सिन्ध को भयानक सर्द हवाओं ने दबोच लिया है। मुझे रोकना उनकी मूर्खता थी, किन्तु मैं असहाय था। अब मैं कल रवाना हो रहा हूं। इसलिए तुम कार्य-क्रम में दो दिनों बाद की तिथियां बढ़ा लेना।

वैलेंसशीट आदि तैयार करने के लिए, शीतला सहाय कल जा रहे हैं। मैं आशा करता हूं कि जबतक मैं सिन्ध से लौटूंगा, वह भी यहां लौट आयेंगे।

अब जब कि युरोपीय प्रवास का त्याग कर दिया गया है, तुम मुझे संयुक्त प्रान्त ले जाने के लिए आजाद हो। आन्ध्र और बर्मा, जिनमें पहिले ही जाना होगा, मुझे एप्रिल के अन्तिम सप्ताह से पहिले वहां (संयुक्त प्रान्त) जाने से विरत रक्खेंगे।

मुझे उम्मीद है कि कमला पहिले से अच्छी है।

तुम्हारा सच्चा
बापू

पण्डित जवाहरलाल नेहरू,
११ क्लाइब रोड, नई दिल्ली

—अंग्रेजी। साबरमती आश्रम, १।२।१९२९। नेहरू संग्रहालय सुरक्षित पत्रावली से।]

सौजन्य : श्रीमती इन्दिरा गांधी तथा नेहरू संग्रहालय।

२२९. तार : जवाहरलाल नेहरू को

जैकोबाबाद (सिन्ध) से
७।२।२९

जवाहरलाल नेहरू
११ क्लाइब रोड, नई दिल्ली

तुम्हारा तार। कार्यसमिति में १७ को उपस्थित हो सकता हूं। शिकारपुर तार दो।

गांधी

—अंग्रेजी। साबरमती आश्रम, १।२।१९२९। नेहरू संग्रहालय में सुरक्षित पत्रावली से।]

सौजन्य : श्रीमती इन्दिरा गांधी तथा नेहरू संग्रहालय।

२३०. पत्र : जवाहरलाल नेहरू को

[निम्नलिखित पत्र के अन्त मे एस० सुब्बैया (गांधी जी के स्टीनोग्राफर) ने इस टिप्पणी के साथ गांधी जी की जगह स्वयं हस्ताक्षर किया है कि "रात ज्यादा हो जाने के कारण बापू ने मुझे हस्ताक्षर कर आपको भेजने की आज्ञा दी है।"—सम्पा०]

सत्याग्रहाश्रम
साबरमती
२६-२-२६

मेरे प्रिय जवाहरलाल,

मुझे तुम्हारे पत्र मिल गये हैं। मैं तुम्हे एक लम्बी चीज (चिट्ठी) भेजना चाहता हूं, किन्तु वह इस समय हर्गिज न लिखनी चाहिए। मैं शीतला सहाय के विषय मे तुम्हे तार दे चुका हू। आज मैंने तुम्हे तार दिया है कि "मैं इलाहाबाद से गुजर रहा हू और यह कि मैं दिल्ली मे सात घण्टे तक रूकूंगा। मेरी इच्छा है कि हम एक दूसरे से दिल्ली या इलाहाबाद मे मिलें, और यदि ऐसा करना सम्भव हो तो तुम कुछ दूर तक मेरे साथ भी चल सकते हो।"

मैं बहिष्कार-समिति के लिए जयरामदास की सेवाए उसके सचिव के रूप मे प्राप्त करने की कोशिश कर रहा हू। वह कल यहा आ रहे हैं। यदि वह राजी हो जाते हैं तो निश्चय ही कम-से-कम इस साल के लिए तो उन्हे कौंसिल छोडनी ही पड़ेगी। हम बहिष्कार-समिति के भावी कार्यक्रम पर बातें करेंगे। मुझे दी जानेवाली थैलियो के उपयोग के विषय मे तुमने जो कुछ कहा है, वह बिल्कुल ठीक है। मुख्यतः खादी के कार्य मे उनका उपयोग किया जायगा। दौरा खादी के लिए ही था, किन्तु स्वभावत' मैं अब रचनात्मक कार्यक्रम के विषय मे बात करूंगा। किन्तु यदि लोग पैसा बिना किसी शर्त के देते हैं, जैसा कि उन्हें देना चाहिए, और यदि तुम सोचते हो कि थैली के किसी अश का कुछ और भी उपयोग हो सकता है, तो इस पर भी हम चर्चा कर लेंगे। किन्तु तुम इसे भी हमारे मिलने पर होनेवाली चर्चा के एक विषय के रूप मे लिख लेना जिससे जब हम मिलें तो मैं इसे भूल न जाऊ।

मैं तुमसे चाहूगा कि तुम मेरे लिए आधी की चाल से दौरे का कार्यक्रम न रक्खो, बल्कि कुछ ऐसे केन्द्रो को ज्यादा समय दो, जहा निकटवर्ती स्थानो से लोग एकत्र हो सकें, तथा एक गाव (स्थान) मे बहुत से समारोह न हो। यदि

तुमने इसके बारे में 'यंग इण्डिया' में मेरी टिप्पणी न पढ़ी हो तो कृपया अब पढ़ लो।

तुम्हारा सच्चा
एस० सुब्बैया
बापू के लिए

—अंग्रेजी। साबरमती, २६।२।१९२९। नेहरू संग्रहालय में सुरक्षित पत्रावली से।]
सौजन्य : श्रीमती इन्दिरा गांधी
तथा नेहरू संग्रहालय।

२३१. पत्र : जवाहरलाल नेहरू को

सत्याग्रहाश्रम
साबरमती
३-४-२६

मेरे प्रिय जवाहर,

मुझे तुम्हारा पत्र मिला है। जैसा कि अभी तक है, आन्ध्रवालों ने एक दिन भी मेरे लिए ऐसा नही छोड़ा है कि मैं आश्रम जा सकूं और वहां से बम्बई आ सकूं, और जैसा कि अभी है, मेरे प्रवास का मई वाला अंश तो सचमुच मेरी तफरीह के लिए है, इसलिए मै इलाहाबाद जाने के लिए २७ मई को बम्बई नही छोड़ना चाहूंगा। किन्तु मैं चन्द दिनों के लिए आश्रम जाना चाहूंगा, और तब अलमोड़ा जाऊंगा। मैं तब भी, अलमोड़ा जाने के पहिले कानपुर, इलाहाबाद और लखनऊ निपटा सकता हूं, और यदि पंजाब के लोग वैसा आवश्यक समझते हों तो पंजाब भी जा सकता हूं। अभी कोई घोषणा करने की जरूरत नही है। किन्तु यदि तुम कानपुर और लखनऊ, तथा अलमोड़ा के लिए भी पहिले से तिथि निश्चित करना चाहते हो तो उसे १० जून के बाद ही रहने दो। मैं तुमसे चाहूंगा कि बाहर निकलने के पहिले आश्रम को साफ़ एक सप्ताह दो। मैं तुमसे यह भी चाहूंगा कि पंजाब के लोगों से पता लगा लो कि वे मुझसे क्या कराना चाहते हैं।

मुझे अब तक भी आन्ध्रप्रदेश का अविचल रूप से निश्चित कार्यक्रम प्राप्त नही हुआ है। इसलिए फिलहाल तुम वेजवाडा का प्रधान कार्यालय के रूप मे उपयोग करना। मैं आठ को वेजवाडा पहुचने की आशा करता हू।

मैं चाहता हू कि यदि शीतलासहाय की जरूरत वहा न हो तो वह फिलहाल यहा आ जाय। मैं उन्हे उनकी पत्नी और पुत्री के सन्दर्भ मे चाहता हू—विशेपरूप मे मेरी अनुपस्थिति के दौरान।

मैं पद्मा के चश्मे की नापें भेज रहा हू, जिसे कृपया उसको दे दें। मैंने ये नापें लेकर उन्हे उनके पास भेजने का वादा किया था।

तुम्हारा सच्चा
वापू

—अग्रेजी। सावरमती, ३।४।१९२९। नेहरू सग्रहालय मे सुरक्षित पत्रावली से।]

सौजन्य : श्रीमती इन्दिरा गाधी तथा नेहरू सग्रहालय।

२३२. पत्र : जवाहरलाल नेहरू को

मेरे प्रिय जवाहर,

तुम्हे पत्र लिखने के लिए मुझे विल्कुल समय नही मिल रहा है। मैं वरेली रिपोर्ट देख गया हू। जहा तक मैं देख पाता हू, इसमे खादी की सम्भावना की कोई वात नही है। तुमने इसे पढा है? इसके वारे मे तुम्हारा क्या प्रस्ताव है?

जहा तक दौरे का सवाल है, तुम जिस रूप मे सर्वोत्तम समझो, व्यवस्था करो। प्रभुदास ने एक त्वरित पत्र भेजा था। मैंने उससे कह दिया है कि मैं १० जून के वाद ही जाने के लिए तैयार हो सकूँगा और तुमसे सलाह करके महेश कार्यक्रम तय करेगा।

यह दौरा कुछ कष्टप्रद है किन्तु मैं उसे भलीभाँति निवाह रहा हू।

मैंने तुम्हारे व्याख्यान का संक्षेप 'हिन्दू' में देखा। मुझे पसन्द आया।

तुम्हारा

२६।४।२६

बापू

मेरे प्रवास का कार्यक्रम तुम्हें भेजा गया है।

—अंग्रेजी। २९।४।१९२९। नेहरू संग्रहालय में सुरक्षित पत्रावली से।]

सौजन्य : श्रीमती इन्दिरा गांधी तथा नेहरू संग्रहालय।

२३३. पत्र : जवाहरलाल नेहरू को

कावली

१०वी मई १६२६

मेरे प्रिय जवाहर,

कमला और कृष्णा दोनों पर (रोग के) जिस कठोर आक्रमण का जिक्र तुमने किया है उससे तुम्हारे मन पर कितना बोझ आ पड़ा होगा! मेरी तो कल्पना है कि इन कौटुम्विक आपदाओं को निश्चित रूप से राष्ट्रीय अनुशासन के अंश के रूप ग्रहण किया जाना चाहिए। मुझे खुशी है कि कृष्णा को किसी आपरेशन की जरूरत नही है।

तुम नही जानते होगे कि आन्ध्र देश प्राकृतिक चिकित्सकों के लिए मशहूर है, और उनमें से कुछ तो सचमुच वीर पुरुष है—वीर इस अर्थ मे कि कठिनाइयों की पर्वा किये विना कठोरता के साथ वे अपने अनुसन्धान में लगे हुए है। इसचिकित्सा ने वहुतेरे मामलों में, वहां भी सफलता प्राप्त की है, जहां और सव वातें निष्फल हो गई हैं। फिर इसके साथ सरलता की विशेपता भी है और जहां रोगमुक्ति न भी हो तहां पूर्ण हानिरहितता की वात तो साथ में है ही। मेरी ख्वाहिश है कि तुम इन उपचारों पर ध्यान दो। यह तो जरूर है कि इसमें कठोर आहारसंयम वड़ा ही महत्वपूर्ण भाग लेता है। जहां रोगी आहार-प्रतिवन्धों का पालन नही करते वहां चिकित्सा निरर्थक हो जाती है।

मैं मानता हूं कि स्थगन के लिए वंगाल की इच्छा होने पर भी अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटी विज्ञापित तिथि को मिल रही है।

मुझे अल्मोड़ा के विपय मे तुम्हारा तार मिल गया था। मैं १० जून के वाद आश्रम छोड़ने की आशा करूंगा, जिससे १५ वीं को अल्मोड़ा पहुंच सकूं।

हां, तुम संयुक्तप्रान्त और पजाव तथा दिल्ली के लिए मुझे पूरे सितम्बर भर और अक्टूबर की जरूरत हो तो अक्टूबर मे भी, ले सकते हो। इलाहावाद म्युनिस्पिल वोर्ड के वारे मे तो तुम्ही निर्णय करोगे। मैं तो अभिनन्दनपत्रो से ऊव गया हू। इसलिए यदि इसमे कोई राजनीति हो या इससे कुछ और फायदा निकल सकता हो, तो मेरी ओर से तुम उसे स्वीकार कर सकते हो। यदि वोर्ड से मेरे पास कोई पत्र आया भी हो तो मुझे उसकी याद नही है।

आन्ध्र पी० सी० सी० (प्रदेश काग्रेस कमेटी) ने जून तक समय वढ़ाये जाने की माग, इस विना पर की है कि अधिकाश काग्रेस कार्यकर्त्ता अपने जिलो मे दौरे के प्रवन्ध मे व्यस्त हैं और मैं जो सूचनाए चाहता हू, उनकी पूर्ति करने मे असमर्थ है। यह तथ्य खुद अपने मे ही उस अव्यवस्था का प्रमाण है जिसका राज्य हमारे घर मे फैला हुआ है। जो कुछ मैं सारे आन्ध्र मे देख रहा हू, वही प्राय· प्रत्येक प्रान्त के लिए सही है।

उत्कल से कोई सन्तोप प्राप्त करने मे मैं असफल रहा हू। रविवार को तमिल-नाड के सेक्रेटरी के नेल्लोर मे आने की आशा करता हू।

वगाल प्रान्तीय काग्रेस कमेटी के हिसाव-किताव की जाच करने के लिए राम जी भाई की जगह मैंने घनश्यामदास विरला को लिखा है कि वे किसी यशस्वी आडिटर को खोज रक्खें।

तुम्हारा सच्चा
वापू

—अंग्रेजी। कावली (आन्ध्र प्रदेश), १०।५।१९२९। नेहरू सग्रहालय में सुरक्षित पत्रावली से।]
सौजन्य : श्रीमती इन्दिरा गाधी तथा नेहरू संग्रहालय।

२३४. पत्र : जवाहरलाल नेहरू को

मेरे प्रिय जवाहरलाल,

मुझे खुशी है कि दौरे मे तुम मेरे साथ रहोगे। रिपोर्टों की प्रतियो का पाठ दुःखदायी है। मेरा सुझाव है कि अपनी निरीक्षाओ और सुझाओ के साथ तुम्हें ये प्रतिया सम्वन्धित कमेटियो के पास भेजना चाहिए। विहार-विपयक रिपोर्ट

ने तो मुझे आश्चर्य में डाल दिया है। किन्तु इससे पता चलता है कि हम कहां तक गिर गये हैं।

आशा करता हूं, कमला और कृष्णा अच्छी हैं।

५।६।२६ वापू

—अंग्रेजी। ५।६।१९२९। नेहरू संग्रहालय में सुरक्षित पत्रावली से।]
सौजन्य : श्रीमती इन्दिरा गांधी तथा नेहरू संग्रहालय।

२३५. पत्र : जवाहरलाल नेहरू को

मेरे प्रिय जवाहरलाल,

मैंने प्रोग्राम पर सरसरी नजर डाल ली है। जहां तक मेरा सम्बन्ध है, यह ठीक है। मै समझता हूं कि इतना आसानी से झेल सकूंगा। मैंने सोमवारों के लिए इसे जॉचा नही है। किन्तु मैं मान लेता हूं कि तुमने सोमवारों को यात्रा न रक्खी होगी।

प्यारेलाल, देवदास और कुसुम वहन मेरे साथ होंगी। वल्लभ भाई, महादेव और मणिवहन जवलपुर होते हुए पहुंचेंगी। मैं नहीं सोचता कि मेरे साथ कोई और होगा।

कृपा करके मुझे २८ को मत रोकना। २७वी को समाप्त करने के वाद ही मै पहिली गाड़ी से चला जाना चाहूंगा।

मै आशा करता हूं कि कमला पहिले से अच्छी है। इलाहावाद आने पर मैं उसे स्वस्थ और दीप्तिमयी देखना चाहता हूं।

तुम्हारा
२०।७।२६ वापू

—अंग्रेजी। २०।७।१९२९। नेहरू संग्रहालय में सुरक्षित पत्रावली से।]
सौजन्य : श्रीमती इन्दिरा गांधी तथा नेहरू संग्रहालय।

२३६. पत्र : जवाहरलाल नेहरू को

रेल से
२६ जुलाई, १६२६

प्रिय जवाहरलाल,

इन्दु के नाम तुम्हारे पत्र बहुत अच्छे हैं[1] और प्रकाशित होने चाहिए। काश तुम उन्हे हिन्दी मे लिख सकते! जैसे भी हैं, उन्हे साथ-साथ हिन्दी मे भी छपवाना चाहिए।

तुम्हारा विषय-निरूपण बिल्कुल पुराने ढग का है। मानव का आदि अब एक विवादपूर्ण विषय है। धर्म का आदि और भी विवादास्पद है। परन्तु इन मतभेदों से तुम्हारे पत्रो का मूल्य घट नही जाता। उनका महत्व तुम्हारे निर्णयो की सचाई मे नहीं, वर निरूपण के ढग मे और इस तथ्य मे है कि तुमने इन्दु के हृदय तक पहुंचने और उसकी ज्ञान की आँखें खोलने की कोशिश अपनी बाह्य प्रवृत्तियो के बीच मे की है।

जो घडी मैं ले आया हू उसके बारे मे कमला से झगडना नही चाहता था। इस भेंट की तह मे जो प्रेम है, उसका मैं सामना नही कर सका। किन्तु फिर भी घडी इन्दु के लिए धरोहर के रूप मे रक्खी जायगी। इतने सारे छोटे-छोटे शैतानो से घिरा रहकर मैं शोभा की इस चीज को सुरक्षित नही रख सकता। इसलिए मुझे जानकर खुशी होगी कि इन्दु को उसकी प्यारी घडी वापस मिल जाने पर कमला राजी हो जायगी।

काग्रेस के 'ताज' पर मेरा लेख पहिले ही लिखा जा चुका है। वह य० इ० के अगले अक मे निकलेगा।

सप्रेम तुम्हारा
बापू

—अग्रेजी। २९।७।१९२९। नेहरू सग्रहालय में सुरक्षित पत्रावली से।]
सौजन्य : श्रीमती इन्दिरा गाधी तथा नेहरू सग्रहालय

---

१. ये पत्र बाद मे अग्रेजी और हिन्दी मे 'पिता के पत्र पुत्री के नाम' शीर्षक पुस्तक में प्रकाशित हुए।

२३७. पत्र : बनारसीदास चतुर्वेदी को

(पोस्टकार्ड)

भाई बनारसी दास,

आपका खत मीला है. मराठा का लेख पढ़ गया. मेरा अभिप्राय है कि हमारे इस बारे में कुछ भी नहीं लीखना चाहीये. मेरा विश्वास है इसका कोई असर पश्चिम में नहि पड़ेगा. यदि पड़ा तो उसका जो कुछ उत्तर हम देंगे उससे काम और बिगड़ेगा. सेवकों पर ऐसा हमला होता ही रहेगा. कुछ भी आवश्यक होगा तो दीनबंधु[1] मुझे अवश्य लीखेगा।

आपका

५-८-२६

मोहनदास

—हिन्दी। ५।८।१९२९। जी० एन० २५५६ की फोटो-नकल से।]

२३८. पत्र : जवाहरलाल नेहरू को

मेरे प्रिय जवाहरलाल,

मैं 'इतिहास का उषःकाल' (डान आव् हिस्ट्री) शीर्षक पसन्द नही करता। 'एक पिता के पत्र उसकी पुत्री के नाम', 'इन्दिरा को चिट्ठियाँ' की अपेक्षा ज्यादा अच्छा शीर्पक हो सकता है, यद्यपि बादवाले पर भी मुझे एतराज नहीं है।

मेरी कामना है कि कमला इन आवर्ती वेदनाओं से मुक्त हो जायगी। यदि डाक्टर करने को तैयार हों तो मैं आपरेशन का खतरा भी मोल ले लूंगा।

मैंने घड़ी ताले-कुंजी में बन्द कर रक्खी है और वहां आते समय ले आऊंगा।

जिन्ना से मिलने के लिए मैं ११ वी को बम्बई जा रहा हूं। मैं सरोजनी देवी की आशावादिता की कदर करता हूं। बम्बई मैं बड़ी आशा के साथ जा रहा हूं।

तुम्हारा

बापू

—अंग्रेजी। ७।८।१९२९। नेहरू संग्रहालय में सुरक्षित पत्रावली से।]

सौजन्य : श्रीमती इन्दिरा गांधी तथा नेहरू संग्रहालय।

---

१. दीनबन्धु=सी० एफ० एण्डरूज

२३९. पत्र : मदनमोहन मालवीयजी को

(पोस्टकार्ड)

भाई साहेव,

ब्राह्मण महा सम्मेलन नाम का अखबार है काशी मे प्रकट होता है. सनातन धर्म का रक्षक अपने को मनाता है (मानता) है उसमे महर्षि दयानद स्वामी पर वहोत गंदे आक्षेप आते हैं. इस वारे मे आर्यसमाजी पत्रो मे वहोत टीका भी आती है. क्या आप इन लेखो को रोक नही सकते हैं?

आपका स्वास्थ्य अच्छा होगा.

आपका
मोहनदास

भा० र०

पडित मदनमोहन मालवीय जी
विश्वविद्यालय, वनारस सिटी

(टिप्पणी—यह पत्र लिखा किसी और का है। हस्ताक्षर मात्र गाधीजी के हैं।—सम्पा०)

— हिन्दी। सावरमती, ७।८।१९२९। पत्र की फोटो-नकल (जी० एन० ६८८३) से]

२४०. पत्र : जवाहरलाल नेहरू को

मेरे प्यारे जवाहरलाल,

यह वर्णन भेजा है लोगो ने सत्याग्रहियो के उस लघुदल का, जो आपको अभिनन्दन पत्र देना चाहता है।

तुम्हें जो तार और विरोध (पत्र) प्राप्त हो रहे हैं उनका खयाल नही करना चाहिए। यदि कमला की स्थिति तुम्हें काठियावाड जाने की अनुमति देगी तो तुम वहा आने पर स्वय ही फैसला कर सकोगे।

मैं ७ सितम्वर को भोपाल के लिए वम्वई से रवाना हूगा और कार्यक्रम के अनुसार ११ को आगरा पहुचूगा—हा, तुम कोई परिवर्तन चाहो तो वात और है।

तुम्हारा
वापू

११।८।२९

—अंग्रेजी। ११।८।१९२९। नेहरू संग्रहालय में सुरक्षित भारतीय कांग्रेस समिति की पत्रावली संख्या ४१।१९२९ अनुक्रम २७३ से।]

सौजन्य : नेहरू संग्रहालय तथा भारतीय कांग्रेस समिति।

२४१. पत्र : जवाहरलाल नेहरू को

मेरे प्रिय जवाहरलाल,

कमला के आपरेशन से मैं आह्लादित हूं। मुझे आशा है, अब वह पूरी तरह से स्वस्थ हो जायगी।

तुम्हारा नाम राष्ट्र के ऊपर अनुचित रूप से न थोपने के बारे में तुम मुझपर निर्भर कर सकते हो। लाहौर से कमेटी के तार के जवाब में अपनी राय प्रकट करने के लिए मैंने अपने को बँधा हुआ अनुभव किया। तुम्हारे आत्म-सम्मान के लिए इतना काफी है कि तुम मुकुट नही चाहते। इस बार किसी भी आदमी के लिए यह एक भद्दा काम है। मैंने तो एक सिद्धान्त की दृष्टि से तुम्हारे नाम पर जोर दिया है। यदि देश उस सिद्धान्त को दृढ़ करने के लिए तैयार नहीं है तो हम प्रतीक्षा कर सकते हैं।

यदि तुम कर्णधार नहीं बनते हो तो इस समय एक मात्र विकल्प, जो मैं सोच सकता हूं, पिताजी का पुनः निर्वाचन है या ऐसा न हो सके तो डा० अंसारी हैं। क्या तुम दूसरा कोई नाम सोच सकते हो ?

मैं संयुक्त प्रान्त के दौरे के लिए तैयार हो रहा हूं। प्रतिदिन खोई हुई शक्ति प्राप्त कर रहा हूं। मैं अपने प्रयोग के लिए किसी प्रकार भी दुःखी नहीं हूं, मैंने उससे बहुत कुछ सीखा है।

तुम्हारा
२८।८।२९ बापू

— अंग्रेजी। २८।८।१९२९। नेहरू संग्रहालय में सुरक्षित पत्रावली से।]
सौजन्य : श्रीमती इन्दिरा गांधी
तथा नेहरू संग्रहालय

२४२. पत्र : बनारसीदास चतुर्वेदी को

(यह पत्र लिखा किसी और का है। हस्ताक्षर मात्र गांधीजी के है। सम्पा०)

आगरा
१५-९-२९

भाई श्री बनारसीदास !

आपके दोनों पत्र मिले। दयालबाग देख लूंगा। फिरोजाबाद में आपके

पिता और पुत्रादि को मिलने की उम्मीद अवश्य रहता हू। रामनारायण[1] यदि मुझको मिल गया है तो उसने मुझको अपनी पहचान नही करवाई। चिरजीलाल जी से भी मिलने की उम्मीद रखता हू। मेरी उम्मीद है कि विशाल भारत का घाटा शीघ्रता से दूर हो जायगा। बगाल मे हिन्दी-प्रचार का काम कैसे चल रहा है।

आपका
मोहनदास

—हिन्दी। आगरा, १५।९।१९२९। जी० एन० २५२२ की फोटो-नकल से।]

२४३. पत्र : जवाहरलाल नेहरू को

अलीगढ
४ नवम्बर, १९२९

प्रिय जवाहरलाल,

तुम्हारा पत्र अभी मिला। मैं तुम्हे कैसे सान्त्वना दू? दूसरो से तुम्हारी हालत सुनकर मैंने अपने मन मे कहा—"क्या मैंने तुम पर वेजा दवाव डालने का अपराध किया है?" मैंने सदा यह माना है कि तुम पर वेजा दवाव पड नही सकता। मैंने सदा तुम्हारे प्रतिरोध का सम्मान किया है। वह सदैव सम्मानपूर्ण रहा है। इसी विश्वास पर मैंने अपना दावा आगे वढाया। इस घटना से सवक लेना चाहिए। मेरा सुझाव जव भी तुम्हारे दिल या दिमाग को न जँचे तभी अड जाओ। ऐसे अड़ने से मेरा प्रेम तुम्हारे प्रति घटेगा नही।

किन्तु तुम उदास क्यो होते हो? आशा है, तुम्हे लोक-मत का भय नही है। तुमसे कोई वेजा वात नही की है, तो उदासी क्यो? स्वाधीनता का आदर्श अधिक स्वतन्त्रता से टकराता नही। इस समय कार्यकारी अधिकारी की और अगले साल अध्यक्ष की हैसियत से, तुम अपने अधिकाश साथियो की सामूहिक कार्रवाई से अपने-आपको अलग नही रख सकते थे। मेरी राय मे तुम्हारा हस्ताक्षर करना तर्कसगत, बुद्धिमत्तापूर्ण और अन्यथा भी ठीक था। इसलिए मैं आशा करता हू कि तुम्हारी उदासी दूर हो जायगी और तुम्हारी अचूक प्रसन्नता वापिस आ जायगी।

वक्तव्य तुम जरूर दे सकते हो, किन्तु इस विपय मे जल्दी करने की जरा भी आवश्यकता नही है।

१. रामनारायण, बनारसीदास जी के छोटे भाई।

अभी-अभी जो दो समुद्री तार मिले हैं उनकी नकलें साथ में हैं। इन्हें पिताजी को भी दिखा देना।

यदि मुझसे चर्चा करने की जी में हो तो जहां चाहो मुझे पकड़ लेने में संकोच न करना।

आशा है, जब मैं इलाहाबाद पहुंचूंगा, तब कमला को स्वस्थ और प्रसन्न पाऊंगा।

हो सके तो तार देना कि उदासी मिट गई है।

सप्रेम तुम्हारा,
बापू

—अंग्रेजी। अलीगढ़, ४।११।१९२९।]
सौजन्य : श्रीमती इन्दिरा गांधी

२४४. पत्र : जवाहरलाल नेहरू को

वृन्दावन
८ नवम्बर, १९२९

प्रिय जवाहर,

तुम्हारा पत्र मिला। तुम्हें मेरा तार मिल गया होगा। तुम्हें अभी इस्तीफा नहीं देना चाहिए। अपनी बात पर बहस करने का समय मेरे पास नहीं है। मैं इतना ही जानता हूं कि इससे राष्ट्रीय कार्य पर असर पड़ेगा। कोई जल्दी नहीं और किसी उसूल को खतरा नहीं। ताज की बात यह है कि उसे और कोई नहीं पहिन सकता। वह कभी फूलों का ताज नहीं होने वाला है। अब तो काँटों-ही-काँटे हैं। मैं उसे पहिनने को अपने-आपको राजी कर सकता तो मैं लखनऊ में ही पहिन लेता। मुझे विवश होकर पहिनना पड़ेगा, इसके लिए इस प्रकार की स्थिति मेरे ध्यान में नहीं थी। उन स्थितियों में से एक तुम्हारी गिरफ्तारी होने तथा दमन बढ़ जाने की थी! किन्तु ये सब बातें जब हम मिलें तब शान्त एवं अनासक्त चर्चा के लिए रख छोड़ें।

तब तक ईश्वर तुम्हें शान्ति दे।

बापू

—अंग्रेजी। वृन्दावन, ८।११।१९२९।]
सौजन्य : श्रीमती इन्दिरा गांधी

२४५. पत्र : जवाहरलाल नेहरू को

मेरे प्रिय जवाहर,

यह रहा मेरा मस्विदा। मैं चाहता हू कि तुम इस पर सावधानी के साथ विचार करो या आज रात चर्चा मे पूरी तरह भाग लो। मैं नही चाहता कि चाहे किसी भी तरह तुम अपने को दवाओ,—सिवाय उस जगह के जव तुम अनुभव करो कि विशेष अवसरो पर आत्म-दमन ही ज्यादा अच्छा आत्मप्रकाशन होता है। आखिरकार हम मे से हर एक को अपने ही प्रकाश (ज्ञान) के अनुसार, न कि उधार लिये हुए प्रकाश से, सेवा करनी चाहिए।

वापू

१८-११-२९

—अग्रेजी। इलाहावाद, १८।११।१९२९। नेहरू सग्रहालय मे सुरक्षित पत्रा-वली से।]
सौजन्य : श्रीमती इन्दिरा गाधी
तथा नेहरू संग्रहालय।

२४६. पत्र : जवाहरलाल नेहरू को

[यह पत्र तिथि-विहीन है पर स्पष्टतः गाधी जी के अलमोडा-प्रवास के वाद का लिखा है। गाधीजी १९२९ के अन्तिम भाग में सयुक्तप्रान्त (अव उत्तर-प्रदेश) के दौरे के वाद अलमोड़ा गये थे। इससे उसकी तिथि १९२९ अन्तिमांश हो सकती है।—सम्पा०]

मेरे प्रिय जवाहरलाल,

मैंने ताजा काग्रेस वुलेटिन पढ़ी। मेरा विचार है कि उस वक्तव्य का प्रकाशन एक ऐसे सस्थागत प्रकाशन मे अप्रासगिक था जो केवल काग्रेस की कारंवाइयो का विवरण देने के लिए जारी किया गया है। क्या यह गवर्नमेण्ट गजट की भाति नही हो गया ? योग्यता की दृष्टि से भी, मैं समझता हू, यह उनके वकील ने तैयार किया था। जैसा कि तुमने और मैंने सोचा था, यह ईमानदार आत्माओ के उद्गार नही हैं।

वे जो अनशन कर रहे हैं उसकी तुमने जो वकालत की है और सहमति दी है, उसे भी मैंने पसन्द नही किया। मेरी राय मे यह एक असम्वद्ध कार्य है, और जहा

तक सम्बद्ध भी हो तो यह एक मक्खी मारने के लिए लोहार के हथौड़े का इस्तेमाल करने-जैसा है। पर यह तो तुम्हारे विचार करने की बात है।

मैं चाहता हूं कि अध्यक्षता[1] के सम्बन्ध में तुम जल्दी कोई निर्णय ले लो। यह हिचकिचाहट क्यों? मैंने तो सोचा कि अलमोड़ा में इस पर सहमति हुई थी कि तुम्हीं मुकुट धारण करोगे। इस विषय पर संलग्न को पढ़ लो और पिताजी को दे दो।

आशा करता हूं, कमला अच्छी है।

तुम्हारा
बापू

—अंग्रेजी। १९२९ का अन्तिमांश। नेहरू संग्रहालय में सुरक्षित पत्रावली से।]
सौजन्य : श्रीमती इन्दिरा गांधी
तथा नेहरू संग्रहालय।

२४७. पत्र : बनारसीदास चतुर्वेदी को

भाई बनारसीदास चतुर्वेदी,

प्रवासी भारतीयों के उद्यम में और उनके व्यवहार में आज कुछ परिवर्तन करने की आवश्यकता नहि देखता हुं. परंतु इस बारे में चर्चा अनावश्यक है.

दीनबंधु के विरोध में अमेरिका में जो कुछ हुआ उसका मुझे पूरा पता है.

आपका
१९-१-३०
मोहनदास

—हिन्दी। १९।१।१९३०। जी० एन० २५६१ की फोटो-नकल से।]

---

१. कांग्रेस की।

२४८. पत्र : बनारसीदास चतुर्वेदी को

भाई वनारसी दास,

इतना निराश होने का कोई कारण नहि है जो अपनी दुर्बलता का दर्शन करता है और उसे दूर करने की इच्छा रखता है उसका आधा काम तो वन गया शेप जीवन सेवा मे देने का सकल्प कल्याणकारी होगा जो दु ख आ पडा है उसमे से वडी शक्ति पैदा कर लो तुम्हारे सामने वहोत सेवाकार्य पडे हैं. वालक अच्छा है जानकर सतोप होता है.

वापु के आशीर्वाद

४-२-३०
य० मं०

— हिन्दी। यरवडा-मन्दिर, पूना, ४।२।१९३०। जी० एन० २५२३ की फोटो-नकल से।]

२४९. पोस्टकार्ड : जवाहरलाल नेहरू को

मेरे प्रिय जवाहरलाल,

मैंने कभी सोचा नही था कि तुम ११ मुद्दो का महत्व भूल जाओगे। खैर, चूंकि इसके पहुचने के वाद एक-दो ही दिन रह जायगे जव तुम सावरमती के रास्ते मे होगे तव तर्क करके तुम्हरा समय मैं नष्ट नही करूगा। मैं १२ को निश्चित रूप से तुम्हारे यहा होने की आशा करता हू। आशा है, मैं तुम्हे सन्तुष्ट कर सकूगा कि ११ मुद्दो से हमारा मामला कमजोर नही, वल्कि मजवूत ही हुआ है।

क्या कमला तुम्हारे साथ आयेगी ?

तुम्हारा
वापू

६-२-३०

— अंग्रेजी। सावरमती, ६।२।१९३०। नेहरू संग्रहालय मे सुरक्षित पत्रावली से।]

सौजन्य : श्रीमती इन्दिरा गांधी
तथा नेहरू संग्रहालय।

२५०. पत्र : जवाहरलाल नेहरू को

मेरे प्रिय जवाहरलाल

मुझे तुम्हारा पत्र मिल गया है। मैंने भाषण पढा नहीं था। मुझे पढ़ने के लिए मुश्किल से ही वक्त मिलता है। आगामी अंक को देखना। उसमें बहुत कुछ होगा। सारांश तो गुजराती न० जी० में निकल भी चुका है। जब हम पहिली मार्च को मिलेंगे तब शायद बातों पर और पूर्णता के साथ चर्चा करने के लिए हमें कुछ क्षण मिल जायंगे। वा० (वाइसराय) के नाम मेरे पत्र से भी मामला साफ़ हो जायगा।

मुझे खुशी है कि कमला के विषय में कोई खतरे की बात नहीं है। किन्तु अब वह अस्पताल जाकर अवश्यक इलाज क्यों नहीं करा रही है?

तुम्हारा

२४-२-३०

बापू

—अंग्रेजी। २४।२।१९३०। नेहरू संग्रहालय में सुरक्षित पत्रावली से।]

सौजन्य : श्रीमती इन्दिरा गांधी
तथा नेहरू संग्रहालय।

२५१. पत्र : जवाहरलाल नेहरू को

मेरे प्रिय जवाहरलाल,

शीतला सहाय से बात करने के बाद मैंने उसे वहीं भेजने का निश्चय किया है। उसे देखने दो कि वह वहां क्या कर सकता है और तुम भी आगे की बातों पर ध्यान रक्खोगे। यदि वह और तुम निश्चय करो कि उसे लौट आना चाहिए, तो वह वैसा कर सकता है। उसकी स्त्री और बच्चे यही रहेंगे और वह अपनी जीवन-रक्षा भर के लिए आश्रम से ले सकता है। शेष तुम उसी से सुनोगे।

तुम्हारा

७-३-३०

बापू

—अंग्रेजी। साबरमती, ७।३।१९३०। नेहरू संग्रहालय में सुरक्षित पत्रावली से।]

सौजन्य : श्रीमती इन्दिरा गांधी
तथा नेहरू संग्रहालय।

२५२. पत्र : जवाहरलाल नेहरू को

[दिसम्बर २९ तथा जनवरी ३० के लाहौर कांग्रेस मे स्वाधीनता का निश्चय किया गया। २६ जनवरी ३० को सम्पूर्ण भारत में 'स्वाधीनता दिवस' मनाया गया। इसके बाद गांधीजी सत्याग्रह आन्दोलन के सर्वाधिकारी बना दिये गये। उन्होंने नमक-कानून तोड़कर सत्याग्रह-आन्दोलन आरम्भ करने का निश्चय किया। १३ मार्च को अपने चुने हुए सत्याग्रहियो के साथ उन्होंने अहमदाबाद से दाण्डी के लिए २०० मील लम्बा अभियान शुरू किया। ६ एप्रिल को नमक-सत्याग्रह करने की बात तय हुई। इसी अभियान-यात्रा के पूर्व तथा उसके बीच गांधीजी ने अगले दो पत्र जवाहरलाल जी को लिखे थे।—सम्पा०]

११ मार्च, १९३०

प्रिय जवाहरलाल,

अब रात के १० बजने वाले हैं। यहा जोरो की अफवाह फैली हुई है कि रात में ही पकड लिया जाऊगा। मैंने तुम्हें विशेष रूप से तार इसलिए नही दिया कि सम्वाददाता लोग अपना समाचार स्वीकृति के लिए पेश करते हैं और सभी पूरी गति से काम कर रहे हैं। तार देने लायक कोई विशेष बात थी भी नही।

घटनाए असाधारण रूप मे ठीक हो रही हैं। स्वयसेवकों के नाम धडाधड आ रहे हैं। टोली कूच करती ही रहेगी, भले ही मैं पकड लिया जाऊ। मैं गिरफ्तार न हुआ तो मेरी तरफ से तारो की आशा रख सकते हो, नही तो मैं हिदायत छोड़े जा रहा हू।

मेरे पास कोई विशेष बात कहने को मालूम नही होती। मैं काफी लिख गया हूं। आज शाम रेती[1] पर प्रार्थना के लिए एकत्र विशाल भीड को मैंने अन्तिम सन्देश दे दिया था।

भगवान तुम्हारी रक्षा करे और भार वहन करने की शक्ति तुम्हे दे।

तुम सबको प्यार,

बापू

—अंग्रेजी। साबरमती, ११।३।१९३०।]

सौजन्य : श्रीमती इन्दिरा गाधी

---

१. साबरमती नदी के तट पर।

२५३. पत्र : जवाहरलाल नेहरू को

१३ मार्च १९३०

प्रिय जवाहरलाल,

आशा है, तुम्हें मेरा पत्र मिल गया होगा, जो आखिरी हो सकता था। मेरी होनेवाली गिरफ्तारी की जो खबर मुझे दी गई थी, वह बिल्कुल विश्वस्त बताई गई थी। परन्तु हम दूसरी मंजिल पर सुरक्षित पहुंच गये हैं। तीसरी आज रात को शुरू करेंगे। मैं तुम्हें कार्यक्रम भेज रहा हूं। सभी साथियों का आग्रह है कि मुझे कार्यसमिति के लिए अहमदाबाद नही जाना चाहिए। इस सुझाव में काफ़ी बल है। इसलिए कार्यसमिति उस जगह आ जाय, जहां उस दिन हम हों या तुम अकेले आ सकते हो। यह भावना कि हम लड़ाई को पूर्ण किये बिना स्वेच्छा से वापिस नहीं लौटेंगे, अच्छी तरह घोषित की जा रही है। मेरे वापिस जाने से इसमें कुछ बट्टा लग जायगा। जमनालाल जी ने मुझे बताया कि उन्होंने इस बारे में तुम्हें लिखा था। आशा है, कमला का स्वास्थ्य अच्छा है। मैंने कल कह दिया था कि तुम्हें पूरे तार भेजे जायं।

सप्रेम तुम्हारा
बापू

—अंग्रेजी। १३।३।१९३०। दांड़ी-यात्री की दूसरी मंजिल से।]
सौजन्य : श्रीमती इन्दिरा गांधी

२५४. पत्र : जवाहरलाल नेहरू को

मेरे प्रिय जवाहरलाल,

तुम्हें सारी रात जागरण करना है, किन्तु यदि तुम्हें कल रात से पहिले लौटना है तो यह अनिवार्य है। जहां भी मैं रहूंगा सन्देशवाहक तुम्हें वहां ले आवेगा। तुम प्रयाण-यात्रा के सबसे कष्टकर भाग में मेरे पास पहुंच रहे हो। तुम्हें रात के दो बजे अभ्यस्त मछुवों के कन्धों पर एक सोता पार करना होगा। मैं राष्ट्र के सबसे मुख्य सेवक के लिए भी प्रयाण को रोक नहीं सकता।

प्रेम
१९-३-३०　　　　　　　　　　　　　　　　बापू

यह वही जगह है जहां वल्लभभाई गिरफ्तार हुए थे। इस गाव के सब पुश्तैनी अधिकारी मेरे हाथ मे अपने त्यागपत्र रखकर अभी-अभी गये हैं।

पण्डित जवाहरलाल नेहरू।

—अग्रेजी। दाड़ी-यात्रा के दौरान, १९।३।१९३०। नेहरू संग्रहालय मे सुरक्षित पत्रावली से।]

सौजन्य : श्रीमती इन्दिरा गाधी

तथा नेहरू संग्रहालय।

२५५. पत्र : जवाहरलाल नेहरू को

३१ मार्च, १९३०

प्रिय जवाहरलाल,

तुम्हारा पत्र मिला। मैंने तार नही दिया। क्योकि मैं नही समझता कि दाण्डी मे कोई पठान हैं, और होगे तो हम उनसे निपट लेंगे। सरहद से अच्छे और सच्चे मित्रो के आने से भी पेच पैदा होगे। मुझे दाण्डी पहुँचने दिया गया तो वहाँ पेचीदगियाँ बचाकर अकेला यही प्रश्न उपस्थित करना चाहता हू। सचमुच गुजरात मे घटनाए बहुत अच्छा रूप धारण कर रही हैं।

मुझे आश्चर्य है कि रायबरेली मे इन लोगो ने अभी से इतनी गिरफ्तारियाँ कर ली हैं। मेरे खयाल से फिलहाल नमक-कर पर ही अपना ध्यान सीमित करके तुम ठीक कर रहे हो। अगले पखवारे मे हमे पता चल जायगा कि हम और क्या कर सकते हैं या करना चाहिए।

मेरी ओर से कोई और समाचार न मिले तो एक साथ सब जगह आन्दोलन शुरू कर देने के लिए ६ अप्रैल का दिन समझ लो।

अब रात के दस बजनेवाले हैं। इसलिए राम-राम।

बापू

—अग्रेजी। ३१।३।१९३०। दाडी-यात्रा के बीच से।]

सौजन्य : श्रीमती इन्दिरा गाधी

२५६. पत्र : शीतला सहाय को

[शीतला सहायजी शिवगढ़ राज्य, जिला रायवरेली के निवासी, कांग्रेस के एक प्रतिष्ठित कार्यकर्त्ता थे। वह और उनकी पत्नी तथा वच्चे सावरमती आश्रम में, गांधी जी के पास काफी समय तक रह चुके थे। वाद में नमक-सत्याग्रह चलाने के लिए उन्हें गांधी जी ने रायवरेली भेज दिया था।—सम्पा०]

दांडी

११-४-३०

भाई सीतला सहाय,

तुम्हारे खत का उत्तर देर से जा रहा है। कालाकांकर के भाई[1] को नमक वनाने के लिये भेजे जायं भले वे जेल चले जायं काम तो सव जगह वहुत अच्छा चल रहा है। अविक लिखने का समय नहीं है।

वापु के आशीर्वाद

(केवल 'वापू के आशीर्वाद' वापू-द्वारा)

—हिन्दी। दांडी (गुजरात), ११।४।१९३०]

सौजन्य : श्री सुरेश सिंह, कालाकांकर (अवध)

२५७. तार : जवाहरलाल नेहरू को

नवसारी

१८-४-३०

नेहरू इलाहावाद।

वन्यवाद। तुमने वहुत दूर तक मुझे चिन्तामुक्त कर दिया है। ईश्वर तुम्हें शक्ति दे।

गांधी

—अंग्रेजी। नवसारी, १८।४।१९३०। नेहरू संग्रहालय में सुरक्षित पत्रावली से।]

सौजन्य : श्रीमती इन्दिरा गांधी

तथा नेहरू संग्रहालय।

---

१. उत्तरप्रदेश (तव संयुक्त प्रान्त) में रायवरेली को नमक सत्याग्रह का केन्द्र वनाया गया था। गांधीजी की आज्ञा थी कि कालाकांकर के कुंवर सुरेश सिंह पैदल जत्था लेकर वहां जायं और सत्याग्रह करें।

२५८. पत्र : जीवनकृष्ण शर्मा[1] को

मेरे प्रिय शर्मा,

तुम जल्दवाजी मे हो। तुम्हारा काम तो अनेक को अपने मत का वनाना है। मैं मामले पर आगे विचार कर रहा हू। अभी तक जो पत्र मिले हैं उनसे यही पता चलता है कि प्रतिवन्ध[2] लाभदायक और आवश्यक हैं। वे कहते हैं कि मिल के वस्त्रो के साथ-साथ खादी का प्रदर्शन करने से खादी को कुछ फायदा नही होता है। यह उसकी कमी की पूर्ति के लिए नही होती, वल्कि उसको स्थानच्युत करने लिए होती है। खादी का अपना एक मिशन है। वह राष्ट्रीय शिक्षण का अग है और कम-से-कम भारत के लिए वह एक नई और सच्ची अर्थ-व्यवस्था को सूचित करती है।

खादी कार्यकर्त्ताओ की अपनी आलोचना मे तुम सकीर्ण हो। वे अपने अनुभव के प्रकाश मे और गरीवो की एकमात्र भलाई के लिए काम कर रहे हैं। उनकी आलोचना करने के पूर्व तुम्हे उनका दृष्टिकोण और उनकी कठिनाई को समझना चाहिए।

तुम्हारा निश्छल
मो० क० गाधी

—अंग्रेजी। वर्धा, १७।६।१९३०। जी० एन० ८८ की फोटो-नकल से।]

२५९. पत्र : कमला नेहरू को

(मूल हिन्दी मे)

चि० कमला,

तुम्हारा खत पाकर मुझे वहोत आनन्द हुआ शरीर को विगडने मत दो उससे वहोत काम लेना है इन्दु का शरीर अव कैसा है? कुछ वढी है?

---

१. श्री जे० के० शर्मा, ला जर्नल प्रेस, इलाहावाद।

२. गांधी जी की सम्मति से यह प्रतिवन्ध लगाया गया था कि स्वदेशी-प्रदर्शनियो मे खादी सस्थाएँ तभी भाग लेंगी जव वहा मिल के वस्त्रों की दुकानें नहीं होंगी।

माता जी को प्रणाम। सरूप कृष्णा को आशीर्वाद।

बापु के आशीर्वाद

य० म० ३०-६-३०

—हिन्दी। यरवदा मन्दिर, ३०।६।१९३०। नेहरू संग्रहालय में सुरक्षित पत्रावली से।]
सौजन्य : श्रीमती इन्दिरा गांधी
तथा नेहरू संग्रहालय।

२६०. पत्र : परशुराम मेहरोत्रा को

चि० परसराम,

तुमारा खत मिला. जैसे शंकरलाल जी कहें ऐसा करो. लोक भले उपहास करे. तुमारे तो वही काम करते रहना. मील पुनी वेचनेवालों को प्रेम से मनाओ. धरणा मत दो. सत्य और अहिंसा हरगीज मत छोड़ो. ऐसा करने से बुद्धिबल अपने आप आवेगा. मुझे लिखते रहो.

बापु के
आशीर्वाद

३-१०-३०

—हिन्दी। ३-१०-१९३०। पत्र की फोटो-नकल (सी० डबल्यू० ४९६५) से।]

२६१. पत्र : बनारसीदास चतुर्वेदी को

भाई बनारसीदास,

तुमारी धर्मपत्नी के देहांत की खबर भाई काशीनाथ ने दी है. तुमारे शीर पे यह बड़ी आपत्ति आइ है. मृत्यु से तो हमने डर को छोड़ हि दिया है. दुःख स्वार्थ का है. मैं समझा हूं तुमारे छोड़े (छोटे?) बाल बच्चे हैं। परंतु इससे भी दुःख क्यों मानें? ऐसी घटनाएं जगत में बनती ही रहती है. हमारी परीक्षा का ये सब घटनाएं काल है. हमने परिश्रम करके जो ज्ञान पाया है वह हृदयगत

हुआ है या नहि उसकी कसौटी भी ऐसे मौके पर हो सकती है ईश्वर तुमको शाति वक्षे।

य० म०

१९-१०-३१

मोहनदास के व० मा०

—हिन्दी। यरवडा मन्दिर, पूना, १९।१०।१९३०। जी० एन० २५२५ की फोटो-नकल से।]

२६२. पत्र : हनुमानप्रसाद पोद्दार को

यरोडा मंदिर
४-१२-३०

रामनाम का चमत्कार सवको प्रतीत नहि होता है क्योंकि वह हृदय से निकलना चाहीये कठ से तो तोता भी निकालता है परन्तु जो मनुष्य भावपूर्वक कठ से रामनाम निकालता रहेगा उसके लिये आशा रखी जा सकती है कि वह सुवर्ण मंत्र कंठ के नीचे जाकर हृदय मे प्रवेश करेगा.

मोहनदास गांधी

—हिन्दी। यरवडा मन्दिर, ४।१२।१९।३०। गाधीजी के स्वाक्षरो मे लिखी मूल प्रति से।]

सौजन्य : श्री हनुमानप्रसाद पोद्दार

२६३. पत्र : चन्द्र त्यागी को

भारतीय पाठशाला
फरुखावाद

भाई त्यागी जी,

तुमारा खत पाकर मुझको वहोत आनद हुआ. यदि नियम-पालन से भी अशक्ति न हटे तो दूध लेना—उसके पहले पका हुआ अन्न खाकर देख लेना। हठ नहि करना. गुरुकुल के हाल सुनकर मुझे खेद होता है अभय जी[1] जानते हैं

---

१. अभयदेव विद्यालंकार, हिन्दी के सुलेखक। एक समय गुरुकुल के मुख्याधिष्ठाता तथा अरविन्द आश्रम, पाण्डिचेरी के सदस्य।

क्या? रामदेव जी ने क्या उत्तर दिया था. वलदेव सुतारी काम भले सीखे, उसे लिखो चर्खा, करघा, तकली इ, वनाने का सीख लेवे. वह. गु० (गुरुकुल) में आज-कल कौन मुख्य अध्यापक है?

प्रेमराज जी से कहो मुझे सब हाल लिखे—वहां क्या चल रहा है?

वापु के
आशीर्वाद

मुझे कभी पता नहिं था कि तुमारे उर्दू हरफ छपे हुए जैसे हैं. वहोत ही अच्छे हैं.

—हिन्दी। फर्रूखावाद, ५।१२।१९३०। जी० एम० ३२६६ की फोटो-नकल से]

२६४. पत्र : भवानीदत्त को

भाई भवानीदत्त,

तुमारा खत पाकर मुझे आनंद हुआ—जिसको सेवा का ध्यान है उसे ईश्वर ऐसा मौका दिया करता है—प्रभुदास के चर्खे पर हाथ जम जाने से अच्छा परिणाम आ जावे तो उस चर्खे के मार्फत वहोत काम हो सकेगा.

मोहनदास के
आशीर्वाद

—हिन्दी। यरवडा मन्दिर, १८।२१।१९३०। श्री भवानीदत्त जोशी, बरेली को लिखे पत्र की फोटो-नकल (जी० एन० १०४) से।]

२६५. पत्र : चन्द्र त्यागी को

भाई त्यागी जी,

तुमारा खत मिला—वलवीर मुझे क्यों नहिं लिखता है. वह क्या चाहता है मुझे लिखे. आश्रम जाना हि चाहेगा तो अवश्य जा सकेगा. प्रेम महाविद्यालय में आजकल आचार्य कौन है? देवशर्मा जी को क्यों कानपुर ले गये? उपवास इ०

पर जो लिखना है वह लिख रखो—छापने का आगे देखा जायेगा. एक दिन की पूरी दिनचर्या लिखो.

३-१-३१[1]

बापु के आशीर्वाद

—हिन्दी। ३।१।१९३१। जी० एन० ३२६७ की फोटो-नकल से]

२६६. पत्र : साहेब जी महाराज को

प्रिय मित्र,

आज ही मुझे कुछ शान्ति मिली है कि मैं अपने पडे हुए पत्रादि को देखू। मैं आपके पत्र के लिए आपका धन्यवाद करता हू।

आपका निश्छल

मो० क० गाधी

अहमदाबाद

१६-४-३१

श्री साहेबजी महाराज,

दयालबाग, आगरा

—अंग्रेजी। अहमदाबाद, १९।४।१९३१। जी० एन० २१५८ की फोटो-नकल से।]

२६७. पत्र : जवाहरलाल नेहरू को

केम्प बोरसद

मई ८, १९३१

मेरे प्रिय जवाहरलाल,

मुझे तुम्हारा तार मिल गया था और अब विगत ३०वी का तुम्हारा पत्र भी मिल गया है, किन्तु पिछला पत्र नही मिला है। निश्चय ही तुम्हारे लौटने की तुरन्त

1. स्पष्ट नहीं है। ३।२।१९३१ भी हो सकता है।

कोई आवश्यकता नहीं है। तुम्हारे पत्र से मैंने यह समझा है कि जिस ठिठुरन की वात तुमने अपने पत्र में लिखी है उसके वावजूद तुम सव खूब अच्छे हो। तुमने समाचारपत्रों में मेरी सेहत फिर खराव होने की जो वात पढ़ी, वह निराधार तो नही थी किन्तु इस समय गुजरात में स्वास्थ्य-भंग का फिलहाल कोई खतरा नहीं है। कुछ अनिष्पन्न मामलों पर मि० इमर्सन से मश्विरा करने के लिए मैं अगले हफ्ते शिमला जा रहा हूं। वह अपने पत्र में कहते हैं कि घटनाक्रम से गोलमेज़ सम्मेलन के वारे में सरकार से चर्चा भी हो जायगी। वह मुझसे १८ को या उसके आस-पास नैनीताल जाने की भी आशा रखते हैं। मैं नहीं जानता कि संयुक्तप्रान्त में इस समय स्थिति कैसी चल रही है, किन्तु मेरे लिए नैनीताल जाना भी अच्छा ही होगा। जिस स्पष्टता के साथ तुमने हिन्दू-मुस्लिम प्रश्न पर अपने पत्र में लिखा है, उसको मुझे लिखने में तुमने विल्कुल सही काम किया है। यदि तुमने इससे कम कुछ किया होता तो मुझे चोट लगती। मेरे द्वारा गलत समझे जाने का ज़रा भी भय किये विना तुम्हें अपने दिल का वोझ उतारने का पूरा अधिकार है। यह ज़रूर है कि मैं अपने को तुम्हारे आरोपों का अपराधी नहीं स्वीकार करता। मैंने सदा यह कहने में काफ़ी सावधानी रक्खी है कि मैं सिर्फ अपने लिए कह रहा हूं। जबतक हमने कोई ठोस नीति का निर्धारण नहीं किया है, तवतक मैं अपने व्यक्तिगत विचारों को प्रकट किये विना कैसे रह सकता हूं ? किन्तु ऐसे अवसर ज्यादा नहीं रहे हैं जव मैंने अपने को इस प्रकार चलने दिया हो। मैं तुमसे विल्कुल सहमत हूं कि पंच-निर्णय के वारे में डा० अंसारी का प्रस्ताव, जिसके लिए उन्होंने वहुत से नाम सुझाये है, वहुत ही अव्यावहारिक है। वेशक इसका कुछ फल नही निकला है। डा० महमूद का भय सर्वथा निराधार है। मैंने भोपाल (के नवाव) से उनके ही कहने से भेंट की थी और जव उन्होंने हिन्दू-मुस्लिम सवाल पर चर्चा की तो मैंने स्वभावतः कहा कि वह शौकतअली तथा अपने अन्य मित्रों को वुला लें, और अगर समझें कि कुछ किया जा सकता है तो मुझे भोपाल वुला सकते हैं। मैं उनसे यह नहीं कह सकता था कि वह इस मामले में पहल न करें। उसी दिन श्रीमती नायडू शौकत अली को "मणि भुवन"[१] ले आईं और भोपाल (नवाव) से मेरी जो वातचीत हुई थी, मैंने उन्हें वता दी। इससे ज्यादा कुछ नहीं हुआ है। मैंने कोई पहल नही की है और यह कहने के सिवा एक पंक्ति भी नही लिखी है कि मै प्रार्थना कर रहा हूं—और वह मैं शब्दशः कर रहा हूं। जव डा० महमूद ने मुझसे शिकायत की कि मैंने मूक रहने के समझौते को तोड़ दिया है, तव उनको भी गत सप्ताह मैंने इतना

---

१. बम्बई में गांधीजी और सरदार पटेल के ठहरने का स्थान।

ही लिखा था। जब तुम पूरी तरह स्वस्थ होकर लौटोगे, तब हमे निश्चित रूप से (कांग्रेस) कार्य-समिति की बैठक बुलानी होगी और यदि हम सब कांग्रेसियो के पथप्रदर्शन के लिए कोई फार्मूला निकाल सकेंगे, तो मेरे लिए उससे ज्यादा खुशी की बात दूसरी नही होगी। निजी तौर पर मैं सोचता हू कि हम इस समय कोई फार्मूला नही बना पायेंगे और मैं तो दिन-दिन उसी विचार की ओर खिचता जा रहा हू जिसे मैंने विदा होने के दिन या एक दिन पहिले तुम पर प्रकट किया था। बम्बई पहुचने पर, मैं चाहे जहा भी होऊ पहिले तुम मुझसे मिलना। बहुत सम्भव है कि उस समय तक मैं बोरसद या बारडोली मे होऊ।

हिन्दू-मुस्लिम ऐक्य के बिना लन्दन जाना नही हो सकता।

तुम सबको प्रेम।

बापू

पण्डित जवाहरलाल नेहरू
नूवेरा एलिया, सीलोन

—अंग्रेजी। बोरसद (गुजरात), ८।५।१९३१। नेहरू संग्रहालय मे सुरक्षित पत्रावली से।]

सौजन्य : श्रीमती इन्दिरा गांधी तथा नेहरू सग्रहालय।

२६८. पोस्टकार्ड : जवाहरलाल नेहरू को

[निम्नलिखित पोस्टकार्ड मे गांधीजी ने कोई तिथि नहीं दी है किन्तु डाकखाने की मुहर के अनुसार वह ५ जून १९३१ है। बम्बई में वह ६ जून को प्राप्त हुआ था।—सम्पा०]

मुझे आशा है कि तुमने सीलोन (लका) मे जो कुछ प्राप्त किया उसे दक्षिण भारत मे खो नही दिया होगा। अगर तुम ताजे हो और यात्रा (की कठिनाई) का खयाल नही करते हो तो रविवार के लिए बारडोली आजाओ, जिससे मगलवार को कार्यवाई शुरू करने के पहिले हम एक शान्त वार्ता कर सकें। मुझे आशा है कमला और इन्दु को विश्राम से लाभ हुआ होगा।

तुम्हारा
बापू

पण्डित जवाहरलाल नेहरू
द्वारा श्रीयुक्त गुलभाई नवरोजी,
नेपियनसी रोड, बम्बई।

—अंग्रेजी। बारडोली, ५।६।१९३०। नेहरू संग्रहालय में सुरक्षित पत्रावली से।]

सौजन्य : श्रीमती इन्दिरा गांधी तथा नेहरू संग्रहालय।

२६९. पत्र : परशुराम मेहरोत्रा को

चि० परसराम,

तुमारा खत मिला. विश्वास के भाजन बने या नहिं ऐसा क्या पूछते हो. यदि नहिं होता तो मैं तुमसे कठिन त्याग कैसे करवाता. हां यह कह दुं तुमारी विह्वलता अब गई ऐसा मै नहि कह सकता—घंटे में २५० गज तकली पर कात लेते हो ? जो चित्र तुम भेज रहे है वहोत हि बुरे हैं. सब के सब जला देने के योग्य है.

बापु के आशीर्वाद

सदस्यों के कातने के बारे में देखुंगा.

बोरसद, २०।६।३१

श्री परसराम मेहरोत्रा,

फीलखाना कानपुर (सं० प्रा०)

—हिन्दी। बोरसद, २०।६।१९३१। सी० डबल्यू० ४९६६ की फोटो-नकल से।]

२७०. पत्र : जवाहरलाल नेहरू को

बोरसद

२८ जून, १९३१

प्रिय जवाहरलाल,

तुम्हारा पत्र और पोस्टकार्ड मिले। खुशी है कि रायबरेली में धारा १४४ की नोटिस वापिस ले ली गई। निश्चय ही इसका कारण मुख्य सचिव के नाम तुम्हारा स्पष्ट पत्र था। जबतक तुम कार्यसमिति के लिए बम्बई पहुँचोगे तबतक समिति को निश्चित मार्ग-दर्शन के लिए तैयार रहना चाहिए।

मुझे पूर्ण विश्वास हो गया है कि हमारा मामला सम्पूर्ण बनाने के लिए आवश्यक है कि तुम गवर्नर को मिलने के लिए कहो। यह मुलाकात माँगते हुए तुम उनसे कहो कि तुम इस प्रयत्न मे कोई कसर बाकी नही रखना चाहते कि प्रान्त के सर्वोच्च अधिकारी के सामने स्पष्ट स्थिति रख दी जाय। कदाचित् गवर्नर से तुम कुछ भी लेकर नही आओगे, किन्तु उनसे मिलने और समझौते[1] का पालन कराने का प्रयत्न करके तुम अवश्य ही हमारी स्थिति को पहिले से सुदृढ बनाओगे। उनसे मिलने का प्रस्ताव करके और वह प्रस्ताव स्वीकार कर लें तो उनसे मिलकर हम कुछ खोयेंगे नही।

उन्नाव जिले की घटनाओ के विषय मे मैंने 'यग इडिया' मे जो लिखा है वह तुमने देखा होगा। तुमने और दूसरे लोगो ने जो सामग्री भेजी है उसके आधार पर मैं फिर लिखनेवाला हू।

यह दुर्भाग्य की बात हुई कि कार्यसमिति को स्थगित करना पडा। वहा की वर्तमान परिस्थिति मे वल्लभभाई का इलाहाबाद जाने के लिए घोर विरोध था। मेरा भी यही खयाल है कि कानपुर और उत्तरप्रदेश की अन्य उत्तेजनाओ को देखते हुए फिलहाल इलाहाबाद को छोड देना ही अच्छा था।

बापू

पण्डित जवाहरलाल नेहरू,
आनन्द भवन, इलाहाबाद

—अंग्रेजी। बोरसद, २८।६।१९३१। 'ए बंच आफ ओल्ड लेटर्स से।]
सौजन्य : श्रीमती इन्दिरा गाधी

२७१. पत्र : जवाहरलाल नेहरू को

बारडोली
जुलाई २५वी, १९३१

मेरे प्रिय जवाहरलाल,

मैं सी० एम० एस० पार्सनेज, क्वीयूर से आया एक पत्र नत्थी कर रहा हूं। क्या तुम इस मामले के बारे मे खतौली के कांग्रेसियो से तथ्य प्राप्त करोगे?

तुम्हारा सच्चा
बापू

---

१. गाधीजी को लन्दन के गोलमेज सम्मेलन मे भेजने के लिए वायसराय लार्ड विलिंगडन के साथ हुआ समझौता।

मुझे शिमला से एक तार प्राप्त हुआ है जिसमें कहा गया है कि वे लोग बम्बई सरकार से पत्र-व्यवहार कर रहे है और मुझे कोई उत्तेजक कार्रवाई नहीं करनी चाहिए।

संलग्न २

पण्डित जवाहरलाल नेहरू

आनन्द भवन, इलाहाबाद।

—अंग्रेजी। बारडोली, २५।७।१९३१। नेहरू संग्रहालय में सुरक्षित पत्रावली से।]

सौजन्य : श्रीमती इन्दिरा गांधी तथा नेहरू संग्रहालय।

२७२. पत्र : जवाहरलाल नेहरू को

मेरे प्रिय जवाहरलाल,

हमने अभी-अभी पोर्ट सईद छोड़ा है। बड़े भाई[1] यहां हममें शरीक हो गये है। आज मेरा मौनवार है। बातचीत के लिए हम कल मिलेंगे। ये रहीं डेलीमेल और डी० टी०[2] से ली गई दिलचस्प कतरनें, जिन्हें किनारे से कुछ मित्र ले आये है। ये तुम्हारे विनोद और दिलबहलाव के लिए हैं। तुम इनसे निपट चुको तो वल्लभ भाई को दे सकते हो।

तुम्हारी इन्दिरा के नाम और चिट्ठियां देवदास ने मुझे दी है। अभी तक उनको देखने का समय मुझे नही मिला है। मेरा सारा समय यं० इं० एवं न० जी०[3] की तैयारी करने, पत्र लिखने और कुछ लोगों से भेंट में तथा इनके बीच सोने में लग गया।

मैं आशा करता हूं कि संयुक्तप्रान्त की परिस्थिति सुधरी होगी। मै तुम्हारे पास से खबर पाने को उत्सुक हूं। मैं जानता हूं कि जब जरूरत होगी, तुम समुद्री तार का उपयोग करने में हिचकिचाओगे नही।

क्या तुम अ० गफ्फार खां से सम्बन्ध बनाये हुए हो? जयप्रकाश कैसा काम कर रहे हैं?

---

१. मौलाना शौकत अली, जिन्हें गांधी जी 'बिग ब्रदर' कहते थे।

२. डेली टेलीग्राफ।

३. नवजीवन।

मिस्र से आने वाले स्नेहपूरित सन्देशो के विपय मे सव कुछ तुम्हें य० इ० से मालूम होगा।

मालवीयजी वहुत अच्छी सेहत रख रहे हैं। एक दिन के अलावा समुद्र ने उन्हें तग नही किया। समुद्री वीमारी का सवसे वडा हिस्सा मीरावहन ने भोगा है। प्यारेलाल और देवदास को भी काफी हिस्सा मिला है। महादेव विल्कुल मुक्त रहा है। और उसने काम भी सवसे ज्यादा किया है।

तुम्हारा

७-६-३१ वापू

सलग्न : ३ कतरनें।

—अंग्रेजी। जहाज से ७।९।१९३१। नेहरू संग्रहलाय मे सुरक्षित सामग्री से।]

सौजन्य : श्रीमती इन्दिरा गाधी तथा नेहरू सग्रहालय ।

२७३. पत्र : जवाहरलाल नेहरू को

[गांधीजी लन्दन गोलमेज-सम्मेलन से लौटकर आ रहे थे। जवाहरलालजी इनसे मिलने वम्वई जा रहे थे कि इलाहावाद से कुछ दूर पर गिरफ्तार कर लिये गये। सारे देश मे दमन शुरू हो गया। तरह-तरह के आर्डिनेंस जारी किये गये। स्पष्ट प्रतीत हो रहा था कि गांधीजी के भारत की भूमि पर पैर रखने के पूर्व ही आन्वोलन कुचल दिया जाय, ऐसी इच्छा भारत-सरकार की है। इसी सन्दर्भ में गांधीजी ने यह पत्र लिखा था।—सम्पा०]

२८ दिसम्वर, १६३१

प्रिय जवाहर,

इन्दु[१] ने तुम्हारा पत्र मुझे दिया। कुछ भी हो, तुम्हारी गिरफ्तारी से मुझे आश्चर्य नही हुआ। मैं अभी तक कमला[२] के पास नही जा सका हू। आज रात को जा सकता हू, कल तो जरूर ही। तुम्हें यह जानकर प्रसन्नता होगी कि इन्दु के नाम तुम्हारी दूसरी पत्र-माला मैंने पढ ली है। मुझे कुछ सुझाव देने थे, परन्तु यह तो शायद तभी होगा जव हम अपने-अपने स्वरूप मे होंगे।

---

१. जवाहरलाल जी की पुत्री (बाद की इन्दिरा गांधी)

२. जवाहरलाल जी की पत्नी।

इस वीच तुम्हें और शेरवानी[1] को प्यार।

वापू

—अंग्रेजी। २८।१२।१९३१। 'ए वंच' आफ ओल्ड लेटर्स' से।]
सौजन्य : श्रीमती इन्दिरा गांधी

२७४. पत्र : चन्द्र त्यागी को

(पोस्टकार्ड)

भाइ चंद त्यागी,

पत्र मिल गया। मैं दिन को करीव सारा दिन आकाश के नीचे ही वैठता हूं और धूप में। उंगली अच्छी हैं। दूध खजूर नारंगी, मिलता है तव पपीता—इतना खुराक है। मीरा वहन वंवई के जेल में है। स्थूल और सूक्ष्म ब्रह्मचर्य का पालन शरींर और मन को रोके रखने से साध्य है।

मगन भाई जोशी भी आजकल मेरे साथ ही है। हम सव अच्छे हैं।

१७-१-३२

वापु के आशीर्वाद

[टिप्पणी—यह पत्र भी महादेव भाई के हाथ का लिखा है। हस्ताक्षर मात्र गांधी जी के हैं।]

—हिन्दी। यरवडा मन्दिर, १७।१।३२। जी० एन० ३२६१ की फोटो-नकल से।]

२७५. पत्र : जवाहरलाल नेहरू को

२६ जनवरी, १६३२

प्रिय जवाहर,

तुम्हारा पत्र पाकर हर्ष हुआ। हम वेचारे वाहरवालों से ईर्ष्या करने का तुम्हारे लिए कोई कारण नही। परन्तु हमें तुमसे इस वात की ईर्ष्या अवश्य है कि तुम्हें तो सारा गौरव प्राप्त हो रहा है और हम वाहरवालों के भाग्य में वेगार

१. उत्तर प्रदेश के एक नेता तसद्दुक अहमद शेरवानी जो जवाहरलाल जी के साथ ही गिरफ्तार कर लिये गये थे।

लिखी है। परन्तु हम वदला लेने का षडयन्त्र रच रहे हैं। आशा है, तुम्हें कुछ अखवार दिये जाते होगे। मैं जो कुछ कर रहा हू, उसमे तुम सदा मेरे मन मे वसे रहते हो।

उस दिन कमला से मिला था। उसे वहुत अधिक विश्राम की आवश्यकता है। मैं उससे एक वार फिर मिलने की कोशिश करूंगा और आग्रह करूंगा कि जवतक वह पूरी तरह अच्छी न हो जाय अपना कमरा न छोडे। आशा है कि डाक्टर महमूद[1] के वारे मे की गई कार्रवाई से तुम सहमत होगे। मुझे विश्वास है कि आनन्द भवन पर लगाया गया कर चुकाने का वचन पूरा किया जायगा।

तुम दोनो को प्यार।

वापू

ईश्वर ने और सरकार ने चाहा तो कल आश्रम जाऊगा और दो-तीन दिन मे लौट आऊंगा।

——अंग्रेजी। २९।१।१९३२। 'ए वच आफ ओल्ड लेटर्स' से।]

सौजन्य : श्रीमती इन्दिरा गाधी

२७६. पत्र : वावा राघवदास को

भाई राघवदास जी,

आपका पत्र. पाकर वहोत आनद हुआ. गीता रामयण का प्रचार कल्याणकारी है, उसमे कुछ सदेह नहि है. जेल मे कितने महिने काटे? कुछ कष्ट था?

वापु के आशीर्वाद

४-२-३२

—हिन्दी। ४।२।१९३२। गांधी जी के स्वाक्षरो मे लिखे मूल पत्र से।]

सौजन्य : श्री हनुमानप्रसाद पोद्दार।

२७७. पत्र : चन्द्र त्यागी को

६-४-३२[2]

भाइ त्यागी जी,

तुम्हारा पत्र मिलने से आनद हुआ, और ज्यादह इस जानने से कि प्लेग के रोगीयो की सेवा का काम कर रहे हैं। आजकल मैं दूध नही लेता हू। डवल

---

१. पटना के डा० सय्यद महमूद, जो वहुत दिनो तक कांग्रेस के प्रधान मन्त्री रहे हैं।

२. तारीख सम्भवत. अंग्रेजी में लिखी हैं। यहां अंग्रेजी मे लिखी मानकर तारीख

इस बीच तुम्हें और शेरवानी[1] को प्यार।

बापू

—अंग्रेजी। २८।१२।१९३१। 'ए बंच' आफ ओल्ड लेटर्स' से।]
सौजन्य : श्रीमती इन्दिरा गांधी

२७४. पत्र : चन्द्र त्यागी को

(पोस्टकार्ड)

भाइ चंद त्यागी,

पत्र मिल गया। मैं दिन को करीब सारा दिन आकाश के नीचे ही बैठता हूं और धूप में। उंगली अच्छी हैं। दूध खजूर नारंगी, मिलता है तब पपीता—इतना खुराक है। मीरा बहन बंबई के जेल में है। स्थूल और सूक्ष्म ब्रह्मचर्य का पालन शरीर और मन को रोके रखने से साध्य है।

मगन भाई जोशी भी आजकल मेरे साथ ही है। हम सब अच्छे हैं।

१७-१-३२ बापु के आशीर्वाद

[टिप्पणी—यह पत्र भी महादेव भाई के हाथ का लिखा है। हस्ताक्षर मात्र गांधी जी के है।]

—हिन्दी। यरवडा मन्दिर, १७।१।३२। जी० एन० ३२६१ की फोटो-नकल से।]

२७५. पत्र : जवाहरलाल नेहरू को

२९ जनवरी, १९३२

प्रिय जवाहर,

तुम्हारा पत्र पाकर हर्ष हुआ। हम बेचारे बाहरवालों से ईर्ष्या करने का तुम्हारे लिए कोई कारण नहीं। परन्तु हमें तुमसे इस बात की ईर्ष्या अवश्य है कि तुम्हें तो सारा गौरव प्राप्त हो रहा है और हम बाहरवालों के भाग्य में बेगार

---

१. उत्तर प्रदेश के एक नेता तसद्दुक अहमद शेरवानी जो जवाहरलाल जी के साथ ही गिरफ्तार कर लिये गये थे।

२७९. पत्र : हनुमानप्रसाद पोद्दार को

य० म०[1]
२१-७-३२

भाई हनुमान प्रसाद,

आपका पत्र मिला और आज तार भी .. [2]देवदास के लिये चिंता नही करूगा क्योकि आप वहा हैं और देवदास ने मुझको लिखा भी——[3](है) कि आपने उनसे वडा प्रेम किया था। डाकतर तो अच्छा है ही। आपके पत्र की आजकल हमेशा आजकल प्रतीक्षा करता रहुगा।

जो मनुष्य सासारिक वस्तु की प्राप्ति के लिये या और किसी कारण असत्य का सहारा लेता है, रागद्वेष से भरा है, उसको भगवत्प्राप्ति हो ही नही सकती है। और दूसरा दृष्टान्त जो आपने दिया है उसे मैं असभवित मानता हू। सत्य के मार्ग पर चलना और प्रपच अर्थात् प्रवृत्ति से अलग रहना आकाश-पुष्प जैसी (वात[4]?) हुई। जो प्रवृत्ति से अलग रहता है, वह किस मार्ग पर चलता है वह कैसे कहा जाय। सत्य के मार्ग पर चलने मे ही प्रवृत्ति प्रवेश आ जाता है। वगैर प्रवृत्ति प्रवेश के सत्य के मार्ग पर चलने न चलने का कोई मौका ही नही रहता। गीतामाता ने कई श्लोको मे स्पष्ट कर दिया है कि मनुष्य वगैर प्रवृत्ति एक (क्षण)[5] के लिये भी रह नही सकता। भक्त और अभक्त मे भेद यह है कि एक परमार्थ दृष्टि से ही प्रवृत्ति मे रहता है और प्रवृत्ति (मे)[6] रहते हुए सत्य को कभी छोडता नही है, और रागद्वेपादि को क्षीण करता है। दूसरा अपने भोगो के लिए ही प्रवृत्ति मे मस्त रहता है और अपना कार्य सिद्ध करने के लिए असत्यादि आसुरी चेष्टा से अलग रहने की कोशिश तक भी नही करता है। यह प्रपच कोई निंदा की वस्तु नही है। प्रपच के ही मार्फत भगवद्दर्शन शक्य है। मोहजनक प्रपच निंद्य और सर्वथा त्याज्य है। यह मेरा दृढ अभिप्राय है और अनुभव है।

वापु के आशीर्वाद

—हिन्दी। यरवदा जेल, २१।७।१९३२। गाधी जी के स्वलिखित मूल पत्र की प्रतिलिपि।]
सौजन्य : श्री हनुमानप्रसाद पोद्दार

---

१. यरवदा मन्दिर।
२-३-४-५-६. यहा कागज कीड़ो ने खा लिया है।

२८०. कार्ड : हनुमानप्रसाद पोद्दार को

भाई हनुमानप्रसाद,

देवदास की चिता तुमारे सिर से उतरी मुझे सब खत मिले हैं. मैं अनुग्रह क्या मानुं. क्यों मानूं. ऐसी सेवा मूक रहकर लेना हि मुझे तो सभ्यता प्रतीत होती है. सब सच्ची सेवा का बदला मनुष्य नहि दे सकता है. ईश्वर हि दे सकता है.

२-८-३२ बापु के आशीर्वाद

—हिन्दी। २।८।१९३२। गांधी जी के स्वाक्षरों में लिखी मूल प्रति से।]
सौजन्य : श्री हनुमानप्रसाद पोद्दार

२८१. पत्र : हीरालाल शर्मा को

प्रिय डा० शर्मा,

तुम्हारा पत्र पाकर मुझे प्रसन्नता हुई। प्राकृतिक चिकित्सा का अध्ययन पूर्ण करने के लिए योरप और अमेरिका जाने से मैं तुमको दृढ़तापूर्वक रोकूंगा। यह काम तो तुमको अपने निरीक्षणों की पूर्णता तथा मौलिक अनुसन्धानों के द्वारा यही करना है। पश्चिमी देशों में भी जिन लोगों ने इस दिशा में कुछ किया है तो उन्होने अपने निजी अनुभवो से ही सीख कर किया है। किसी दूसरे से नही सीखा था। यह मानना बहुत बड़ी भूल है कि पश्चिम जाकर तुम इस बारे में कुछ सीख सकोगे। वहां भी तो यह अपनी शैशवावस्था में ही है। पर सबसे पहिले तो तुम्हे यह करना होगा कि तुम अपने आपको स्वस्थ बनाओ। अगर तुम्हारा ही शरीर जर्जर हो तो लोग तुम्हारी सुनेंगे ही नही। यह निश्चित है कि तुम्हारा रोग[1] सूर्य-स्नान और दृढ़ संयम से जायगा ही।

अपनी कोहनी[2] के दर्द के लिए मैं तुम्हें कष्ट देना नही चाहता। फिर भी सेवा के लिए तुम्हारी उत्सुकता के वास्ते धन्यवाद।

तुम्हारा शुभचिन्तक
मो० क० गांधी

१२-८-३२
यरवदा मन्दिर।

---

१. उन दिनों श्री शर्मा को भारी जुकाम हो गया था।

२. यरवदा जेल में गांधीजी के दाहिने हाथ की कोहनी में दर्द रहता था।

—अंग्रेजी। य० म० (पूना), १२।८।१९३२। 'वापू की छाया मे मेरे जीवन के सोलह वर्ष' से।]

सौजन्य : श्री हीरालाल शर्मा

२८२. पत्र : हीरालाल शर्मा को

प्रिय मित्र,

तुम्हारा पत्र मिल गया। पश्चिम मे प्राकृतिक चिकित्सा की सस्थाओ के विपय मे तुमने जो सुना या पढा वह केवल दूर के सुहावने ढोल हैं। एक ऐसी संस्था के विपय मे जिसका अत्यधिक विज्ञापन किया गया था, जव एक मित्र ने पूछ-ताछ की तो ज्ञात हुआ कि उसी स्थान के लोग भी उसके सम्वन्ध मे कुछ नही जानते। इसका अर्थ यह नही कि उनमे कुछ है ही नही। मेरा तो तात्पर्य है कि यह समूचा ही विज्ञान अपनी शैशवास्वथा मे है। और इन सस्थाओ मे कोई एक व्यापक विधि नही है। वे जो कुछ भी हैं अपनी सस्थाओ के मौलिक अनुसन्धानो का ही फल-मात्र हैं। हम भारतीयो को तो अपनी परिस्थितियो के अनुसार ही अपना अनुसन्धान करना होगा। उनके अनुसन्धानो से हमे जो कुछ मिल सकता है वह उनके प्रकाशित साहित्य से भी हम आसानी से पा सकते हैं। तुम्हारे स्वास्थ्य के वारे मे तो तुम्हारे पत्र से ही मुझे कुछ ऐसा लगा कि वह ठीक नही है।

तुम्हारे लिए रूढ़िवादी चिकित्सको का अनुकरण करना काम न देगा। तुम तो एक पथ-प्रदर्शक हो अतएव तुम्हे ऐसा काम कर दिखाना है जो कठिन-से-कठिन कसौटी पर भी चढ सके। मुझे प्रसन्नता है कि तुमने पश्चिम जाने का विचार छोड दिया है। अपने शरीर को ही वनाओ। ऐसा करने से तुम वहुत से आविष्कार स्वयं कर लोगे। हो सकता है कि तुम्हारी प्रगति धीमी हो परन्तु यदि मूलाधार ठोस है तो उन्नति भी निश्चय होगी. .

तुम्हारा शुभचिन्तक

मो० क० गावी

—अंग्रेजी। २।९।१९३२। 'वापू की छाया मे मेरे जीवन के सोलह वर्ष' से।]

सौजन्य : श्री हीरालाल शर्मा

२८३. तार : जवाहरलाल नेहरू को

२४ सितम्बर, ३२

पण्डित जवाहरलाल नेहरू,
जेल, देहरादून।

वेदना के इन सारे दिनों में तुम मेरे मनश्चक्षु के सामने रहे हो। तुम्हारी राय जानने को उत्सुक हूँ। तुम जानते हो (कि) मैं तुम्हारी राय की कितनी कदर करता हूँ। इन्दु, सरूप और बच्चों को देखा। इन्दु खुश नजर आई, पहिले से ज्यादा मांस की स्वामिनी है। अच्छी तरह है। तार से जवाब दो। प्रेम।

वापू

—अंग्रेजी। पूना, २४।९।१९३२। नेहरू संग्रहालय में सुरक्षित पत्रावली से।] सौजन्य : श्रीमती इन्दिरा गांधी तथा नेहरू संग्रहालय।

२८४. पत्र : चिन्तामणि को

त्रिविध ताप के इन दिनों में ईश्वर मेरा पथ-प्रदर्शक और सहारा था।

—अंग्रेजी। यरवदा मन्दिर, ३०।९।१९३२। महादेव भाई की डायरी (नवजीवन), भाग २, पृष्ठ ८१ से।]

२८५. पत्र : यज्ञेश्वर चिन्तामणि को

माफी माँगने की जरा भी जरूरत नहीं। पहले आपका पत्र आया था। आशा है जवाब में लिखा हुआ मेरा पत्र आपको मिल गया होगा। आपके बताये हुए मार्ग के अपनाने में ऐसी कठिनाइयाँ हैं जिन्हें पार नही किया जा सकता। कैदी होने के कारण मैं उन सबकी चर्चा नही कर सकता। अगर कर सकता होता, तो मेरा विश्वास है कि अपनी दलीलों के ठोस होने का मै आपको यकीन करा सकता हूँ। इतना आपसे कह दूँ कि सरकार और लोगों या कांग्रेस के बीच अमन कायम हो जाय, इसके लिए मुझसे ज्यादा उत्सुक और कोई नहीं हो सकता। उम्मीद है आपकी तबीयत अच्छी होगी।

—अंग्रेजी। यरवदा-मन्दिर, ८।१०।१९३२। महादेव भाई की डायरी भाग २, पृष्ठ १०० से।]

२८६. पत्र : श्रीरामनाथ 'सुमन' को

"सामुदायिक प्रार्थना की जड वैयक्तिक प्रार्थना ही हो सकती है। सामुदायिक प्रार्थना पर मैंने वजन दिया है, उसका यह अर्थ कभी नही है कि वह वैयक्तिक प्रार्थना से अधिक महत्व रखती है। परन्तु क्योकि हमे सामुदायिक प्रार्थना की आदत ही नही है इसलिए मैंने उस प्रार्थना की आवश्यकता बताने की चेष्टा की है। जो कुछ अनुभव एकान्त मे बैठकर तुम्हे होता है, वह समूह मे होना अशक्य नही तो कठिन तो है ही और मैंने ऐसा भी देखा है कि कई लोग एकान्त मे बैठकर प्रार्थना कर ही नही सकते, समुदाय मे ही कर सकते हैं। उनके लिए वैयक्तिक प्रार्थना आवश्यक हो जाती है। मैं यह भी कबूल करूँगा कि सामुदायिक प्रार्थना के बिना मनुष्य रह सकता है, वैयक्तिक के बिना कभी नही रह सकता।

अस्पृश्यता के बारे मे आज कुछ भी लिख (नही) सकता। थोडे दिनों के बाद दुबारा पूछिए।

—हिन्दी। यरवदा-मन्दिर, २६।१०।१९३२। प्रधान सम्पादक द्वारा सुरक्षित पत्रावली से।]

- **सामुदायिक प्रार्थना के बिना मनुष्य रह सकता है, वैयक्तिक के बिना कभी नहीं रह सकता।**

२८७. पत्र : प्रो० हबीबुर्रहमान को

आपका पत्र पाकर मुझे आनन्द हुआ। अब आपकी पहचान भेजिए। आपने सस्कृत भाषा का अभ्यास कहाँ तक किया? कितने बरसो तक किया? आपकी उम्र कितनी है? कितने बरसो से आप अध्यापक हुए हैं? कितने लडके सस्कृत का अभ्यास कर रहे हैं? उनमे से कितने मुसलमान हैं? कितने हिन्दू? आपके माता-पिता जीते हैं? और हैं तो पिता जी क्या करते हैं?

अब आपके प्रश्नो का उत्तर देने की कोशिश करता हूँ। हिन्दू धर्म की खसूसियत यह है कि उसमे काफी विचार-स्वातन्त्र्य है। और उसमे हरएक धर्म के प्रति उदार भाव होने के कारण उसमे जो कुछ अच्छी बातें रहती हैं उनको हिन्दूधर्मी मान सकता है। इतना ही नही, परन्तु मानने का उसका कर्तव्य है। ऐसा होने के कारण हिन्दू धर्मग्रन्थो के अर्थ का दिन प्रतिदिन विकास होता रहा है।

महाभारत और गीता के पात्रो के बारे मे जो कुछ मैंने कहा है, वह मेरा कोई

मौलिक खयाल नही है, लेकिन मैंने टीकाग्रन्थों में से यह विचार पाया है। सदानन्द मिश्र-कृत भगवतगीता की एक टीका है। उसमें इस विचार को अच्छी तरह बताया है। प्राकृत ग्रन्थों में भी ऐसे विचार बताये गये है। हिन्दू धर्म के नाम से प्रचलित ग्रन्थों मे जो कुछ लिखा गया है वे सब-के-सब धर्म-वचन है, ऐसा नहीं है और हिन्दू जनता को यह सब मानना चाहिए, ऐसा भी नहीं है। वेद-पाठ सुननेवाले शूद्र के कान में गरम सीसा डालने की बात को अगर ऐतिहासिक माना जाय, तो मैं उसे धर्म मानने के लिए हर्गिज तैयार नही हू और ऐसे असंख्य हिन्दू है जो उसे धर्म-वचन नही मानते है। हिन्दू धर्म के लिए एक कसौटी रक्खी गई है, जिसको एक बालक भी समझ सकता है। जो बुद्धिग्राह्य वस्तु नही है और बुद्धि से विपरीत है, वह कभी धर्म नही हो सकती और जो सत्य और अहिंसा से विपरीत है वह भी धर्म नही हो सकती है।

अब रही यरवदा समझौते की बात। कम-से-कम मेरे नजदीक वोट की गिनती की वह बात किसी हालत मे नही थी। मेरे नजदीक हरिजन भाइयों का अंग्रेजी मन्त्रि मण्डल के प्रस्ताव से जो बुरा हो रहा था उसी को मिटाने की बात थी। अनशन व्रत के बारे में आपसे मैं क्या विनय करूँ? इतना ही कह सकता हूँ कि वह ईश्वर-प्रेरित बात थी, उसको मैं रोक नही सकता था।

—हिन्दी। यरवदा-मन्दिर, ५।११।१९३२। महादेव भाई की डायरी, भाग २, पृ० २७३-७४।]

२८८. पत्र : राधाकान्त मालवीय को

श्री चिन्तामणि और श्री कुंजरू के बारे में तुमने जो जानकारी अपने पत्र में दी है, वह मेरे लिए महत्व की है। इलिए या तो तुम्हें उनसे इस बात की तसदीक और सहमति प्राप्त करके भेजनी चाहिए या मुझे प्राप्त करने की स्वतन्त्रता देनी चाहिए।

—हिन्दी। यरवदा-मन्दिर, ८।११।१९३२। म० भा० डा० भाग २, पृ० १८२]

२८९. पत्र : चिन्तामणि को

[श्रीराधाकान्त ने चिन्तामणि और कुंजरू से पूछ लेने की अनुमति दे दी। इसलिए बापू ने चिन्तामणि और कुंजरू दोनों को एक ही तरह का पत्र लिखवाया था।—सम्पा०।]

"अस्पृश्यता-निवारण पर मेरे चौथे वक्तव्य मे जिस पत्र का उल्लेख है, उसका लिखनेवाला कौन है, यह अन्दाज़ आपने जरूर लगा लिया होगा। उसमे जिन नामो का जिक्र है, उनमे से एक आपका और दूसरा प० हृदयनाथ कुजरू का है। मेरी प्रार्थना पर उस पत्र के लेखक श्री राधाकान्त मालवीय ने अपना नाम आप दोनो को बता देने की मुझे इजाजत दे दी है। मैं कुछ भी कहूँ उससे पहले आपसे यह जान लेना मेरा फर्ज है कि मेरे उपवास से क्या आपको सचमुच बलात्कार महसूस हुआ था? और आपने अपनी अन्तरात्मा के विरुद्ध आचरण किया था? मैं पण्डित कुजरू को भी लिख रहा हूँ।"

—अंग्रेजी। यरवदा-मन्दिर, ११।११।१९३२। म० भा० डा० भाग २, पृष्ठ १९६।]

२९०. पत्र : गोविन्दलाल शाह को

यरवडा जेल
२६-११-३२

भाई गोविन्दलाल जी,

प्रभुदास लिखता है कि आप बीमार हो गये हैं, यहाँ तक कि आपरेशन के लिये राची जाने की तैयारी कर रहे थे। मेरी उम्मीद है कि अब अच्छा होगा। सम्पूर्ण हकीकत लिखें।

बापु के आशीर्वाद

—हिन्दी। यरवडा जेल, पूना, २६।११।१९३२।]
सौजन्य : श्री राजीवलोचन शाह, नैनीताल

२९१. पत्र : हनुमानप्रसाद पोद्दार को

य० म०
१६-१२-३२

[टिप्पणी : सिरनामे पर श्री हनुमानप्रसाद पोद्दार, गीताप्रेस, गोरखपुर (गोरखपुर यू० पी० अंग्रेजी मे भी) लिखा गया था। जान पड़ता है उस समय श्री पोद्दारजी रतनगढ़ (बीकानेर राज्य) चले गये थे। इसलिए पत्र का पता गीताप्रेस से काटकर 'रतनगढ़ (हिन्दी) रतनगढ़, बीकानेर (अंग्रेजी) किया गया है।—सम्पा०]

भाई हनुमान प्रसाद,

तुम्हारे पत्र मुझको हमेशा प्रिय लगते है। अब के पत्र अधिक प्रिय लगते है क्योंकि उनमें से तुम्हारी सत्यपरायणता का और भी अनुभव मिलता है। बुद्धि के प्रयोग करके मै अब मेरी वात नही समझा सकूंगा। इतना मानो कि जो कुछ मैं कर रहा हूँ ऐसा लगता है वह मै नही कर रहा हूँ। मुझको कोई करा रहा है। वह मेरी दृष्टि से निरंजन निराकार राम है, लेकिन दशमुख रावण भी हो सकता है। इसका पता तो मृत्यु के वाद ही जहा तक शक्य है मिल सकता है, और थोड़ा परिणाम से मिल सकता है। पूर्णतया तो मिल ही नही सकता है क्योकि मनुष्यहृदय की वात अतर्यामी के सिवा कोई जानता ही नही है।

तुम्हारा स्वास्थ्य अच्छा हो रहा होगा। मुझको लिखा करो।

बापु के आशीर्वाद

—हिन्दी। यरवदा जेल, १६।१२।१९३२। मूल हिन्दी पत्र से।]
सौजन्य : श्री हनुमानप्रसाद पोद्दार

२९२. पत्र : चिन्तामणि को

[श्री चिन्तामणि का पत्र आया था कि "कितने ही प्रसंग ऐसे होते हैं जहां मौन सम्मति-सूचक नहीं होता। मुझे आपके उपवास के प्रसंग पर न बोलने में कोई सत्य-त्याग नहीं लगा। और 'लीडर' में पूना-करार के बारे में कुछ नहीं लिखा था, इसलिए लोगों ने कुछ-कुछ अनुमान भी किया होगा।" इस पर गांधी जी ने उन्हें निम्नलिखित उत्तर दिया था।—सम्पा०]

"मैं अपने मित्रों का न्याय करने नही बैठता। अपनी राय मैं उन्हें वता देता हूँ और वह यदि उन्हे सही लगे तो वे उसके अनुसार सुधार कर लें। आपको लगता हो कि बम्वई में आपने अपने कृत्य से अपनी अन्तरात्मा के विरुद्ध कुछ नही किया तो मुझे सन्तोष है। मगर मैं आपसे एक वचन माँग लेता हूँ। प्रकट रूप से जव आप मेरा विरोध न करें, तब भी निजी रूप से तो आपको मुझे सावधान कर ही देना चाहिए। इस चेतावनी का मुझ पर वाह्यतः कोई असर न भी हो मगर मेरा मन विचारों को ग्रहण करनेवाला है, इसलिए ऐसी चेतावनियो से हमेशा मुझे मदद मिली है।"

—अंग्रेजी। यरवदा-मन्दिर, १९।१२।१९३२। म० भा० डा० भाग २, पृ० ३०६।]

२९३. पत्र : जवाहरलाल नेहरू को

यरवदा सेण्ट्रल जेल
पूना।
३१ दिसम्बर, १९३२

प्रिय जवाहरलाल,

सरूप[1] उस दिन अस्पृश्यता-सम्बन्धी अपनी योजना पर चर्चा करने मेरे पास आई थी। उसने कहा कि तुम्हारी सलाह सीलोन मे विश्राम लेने की है। मैं इसे अनावश्यक समझता हूँ। वह थोडा काम करने लायक जरूर है और कुछ अस्पृश्यता का काम करने को विल्कुल रजामन्द है। मेरे खयाल से जवतक वह काम करना चाहती है, करने देना चाहिए।

उसने मुझे वताया कि तुमने कुछ दाँत और निकलवा दिये हैं। उधर वह अपने वाल सफेद करने पर तुली है। मुझे तो आँखो देखनेवालो ने वताया है कि वैसे तुम्हारा स्वास्थ्य विल्कुल ठीक रहता है। मालूम होता है कि तुम अब भी मिलने आनेवालो से मुलाकात नही कर रहे हो। मैं चाहता हूँ कि यदि सम्भव हो तो तुम मुलाकातें करो। इससे तुम्हे सन्तोष मिलेगा।

छगनलाल जोशी के आ जाने से हमारी चार की सुखद टोली वन गई है। मुझे पता नही कि तुम हरिजन-कार्य मे दिलचस्पी ले रहे हो या नही। शास्त्रियो के साथ अच्छा समय वीत रहा है। शास्त्रो का अक्षर-ज्ञान मेरा पहिले से अच्छा हो गया है। परन्तु सच्चे धर्म का ज्ञान वे मुझे थोडा ही दे सकते हैं।

वापू

—अंग्रेजी। यरवदा जेल, पूना, ३१।१२।१९३२। 'ए वंच आफ ओल्ड लेटर्स' से।]
सौजन्य : श्रीमती इन्दिरा गाधी

२९४. पत्र : चन्द्र त्यागी को

भाई चद त्यागी,

तुमारा खत पाकर खुशी हुइ दूध लेने का शुरू किया तो अच्छा

---

१. सरूप कुमारी, श्रमती विजयालक्ष्मी पण्डित का पूर्व नाम।

किया। हरिजनों का कार्य अच्छा तरह हो रहा है। कुछ चिंता न करें, बलवीर कहां है?

बापु के आशीर्वाद

१।१।३३, य० मं०

श्री चन्द्र त्यागी

बन्दी, जेल सहारनपुर (सं० प्रा०)

—हिन्दी। यरवडा मन्दिर, १।१।१९३३। जी० एन० ३२६० की फोटो-नकल से।]

२९५. पत्र : हीरालाल शर्मा को

यरवदा सेण्ट्रल प्रिजन,
२४ जनवरी, १९३३

प्रिय शर्मा,

अम्तुल सलाम ने तुम्हारा १५ जनवरी का पत्र मेरे पास भेज दिया है। उसे पढ़ कर मुझे प्रसन्नता हुई। तुमने वास्तव में अपनी स्वयं-वारित प्रतिज्ञा का पालन किया है। कारण कि जो पत्र तुमने मुझे लिखा है वह अपने लिए नहीं लिखा है। मैंने अम्तुल सलाम को दिल्ली जाने के लिए पहिले ही कह दिया है और मुझे आशा है कि वह आश्रम से तत्काल चल देगी और उस समय तक दिल्ली ठहरी रहेगी जबतक कि तुम उसको पूर्णतः नीरोग करके छुट्टी न दो। तब ही वह आश्रम को लौटेगी। आश्रम आने से पूर्व अपने वहाँ के वर्तमान कर्त्तव्यों को पूर्ण करने की जो तुम्हारी इच्छा है उसका मैं आदर करता हूँ। वह सराहनीय ही है।

तुम्हारा, शुभचिन्तक,
मो० क० गांधी

श्रीयुत एच० एल० शर्मा
सन-रे हास्पिटल,
करोलबाग, दिल्ली।

—अंग्रेजी। यरवदा जेल (पूना), २४।१।१९३३। 'बापू की छाया में मेरे जीवन के सोलह वर्ष' से।]

सौजन्य : श्री हीरालाल शर्मा।

२९६. पत्र : श्रीप्रकाश को

यरवडा केन्द्रीय कारागार
१४वी फरवरी, १९३३

मेरे प्रिय श्रीप्रकाश,

विपादमय होने पर भी तुम्हारा पत्र पाकर मुझे आनन्द हुआ। मुझे इसमे किसी प्रकार का सन्देह नही है कि ग्राम-परिवेश की शान्ति मे शीघ्र ही तुम अपना खोया स्वास्थ्य प्राप्त कर लोगे और अपने टूटे उत्साह को सुधार लोगे। तुम कोई बूढे आदमी नही हो किन्तु आवेगपूर्ण व्यक्ति और भावनात्मक प्रकृति का होने के कारण तुम हर तरह की बुराई की कल्पना कर लेते हो। तुम्हारे सामने तो क्रियाशील जीवन एव सेवा के कितने ही वर्ष पडे हैं। तुम्हें जो शारीरिक कष्ट है उससे कही ज्यादा कष्ट से बहुत से लोग गुजर चुके हैं, फिर भी मैं उन्हें अच्छे स्वास्थ्य और खूब उत्साह से भरा हुआ पाता हू। तुमने अपनी जवानी मे सीखा था कि 'स्वस्थ शरीर मे स्वस्थ मस्तिष्क रहता है', इसलिए ज्योही शरीर स्वस्थ हो जायगा, मस्तिष्क मे भी तदनुकूल प्रतिक्रिया होगी। इसलिए इस बीच तुम्हारा प्रथम और अन्तिम कर्तव्य अपने स्वास्थ्य को फिर से प्राप्त करना और कुटुम्ब, देश या दुनिया के भविष्य की चिन्ता न करना है। हम इनमे से किसी के निर्माता नही बन सकते किन्तु तुम तीनो की प्रगति मे अपना हिस्सा अदा कर सकते हो। जीवन की सच्ची योजना मे एक ही वास्तविक प्रगति सब की प्रगति का कारण होती है। तुम्हे अपने इर्द-गिर्द होने वाली घटनाओ के कोई अनुभव लिखने की जरूरत नही है। वह निश्चित रूप से मेरे लिए बन्द किताब की तरह रहना चाहिए —सिवाय इसके कि जिन समाचारपत्रो को प्राप्त करने की इजाजत मुझे है उनके जरिये मुझे कुछ मालूम हो जाय, प्रकृति ने जिस प्रकार मुझे गढ़ा है उसके कारण मुझे उनके जानने की जरा भी उत्सुकता नही है। एक कैदी, नागरिकता की दृष्टि से बाहरी दुनिया के लिए मृत होता है और वह ठीक भी है। यदि वह प्रतिबन्धित क्षेत्र मे झाकने की चेष्टा करता है तो वह उस मृतात्मा की भांति है जो मृत्यु के फरिश्ते-द्वारा इस दुनिया से मुक्त कर दिये जाने के बाद भी उससे सम्बन्ध रखने की कोशिश करता है और इस प्रकार हमारे विश्वास के अनुसार दुष्ट आचरण करता है। जो कैदी, मृतात्मा की भांति अनुचित आचरण करता है, अपनी छोड़ी हुई दुनिया से वास्तविक सम्पर्क कायम करने से वञ्चित रह जाता है और उस निरर्थक प्रयत्न मे उस आनन्द को भी खो बैठता है जो कैदी के भाग्य मे भी होता है। इस सुन्दर सत्य का अनुभव करने के कारण मैंने कभी मृतात्मा का-सा व्यवहार नही किया है।

तुमने अपने नाम की वर्त्तनी के विपय में जो कुछ कहा है, उसे मै याद रक्खूंगा। पिता[1]जी ने ही मुझे यह बात बताई थी कि तुम अपने नाम की ठीक-ठीक वर्त्तनी के आग्रही हो, अब तुमने उन्हें उनके ही सिक्कों में चुका दिया है और जवाव भी उन्हें दे दिया है कि तुम नही वह आग्रही हैं। मैने तो झगड़े का सव पिता पुत्र के बीच फेंक दिया है। अब तुम लोग आपस में लड़कर तय कर लो। मुझे चिन्ता नही है क्योंकि मैं आघात के मार्ग से दूर हूं, और चूंकि मुझे तुम्हारी अनुमति है, मैं अपने ही ढंग से तुम्हारे नाम की हिज्जे करता रहूंगा।

किन्तु यदि मै तुम्हारे स्वास्थ्य के विषय में चिन्तित नहीं हूं तो मैं शिवप्रसाद[2] के स्वास्थ्य के विषय में जरूर बहुत चिन्तित हूँ। अव मैं समझता हूं कि मुझसे यह वादा करने के बाद भी, कि वह मुझे अपने स्वास्थ्य के विषय में साप्ताहिक रिपोर्ट भेजा करेगा, वह चुप क्यों है। मै उसे लिखूगा, किन्तु चाहे जो हो, तुम्हें जो कुछ समाचार मिले, वह मुझे भेजते रहोगे और यद्यपि तुम मुझे वाहरी दुनिया की कोई खबर नही दोगे' किन्तु अपनी प्रगति के वारे में मुझे लिखना जारी रक्खोगे।

बच्चो से मेरी याद दिलाना और हम सब का प्रेम उन तक पहुँचाना और तुम अपने लिए भी हमारी ओर से उसे ग्रहण करना।

बापू

—अंग्रेजी। यरवदा जेल, १४।२।१९३३। नेहरू संग्रहालय में सुरक्षित पत्रावली से।]

सौजन्य : श्री श्रीप्रकाश तथा नेहरू संग्रहालय।

२९७. पत्र : जवाहरलाल को

यरवदा सेण्ट्रल जेल,
पूना
१५ फरवरी, १९३३

प्रिय जवाहरलाल,

तुम्हारे सुन्दर पत्र के उत्तर मे अच्छा पत्र लिखने की आशा से मै तुम्हे लिखना

१. श्री प्रकाश जी के पिता डा० भगवानदास से आशय है।
२. काशी के प्रसिद्ध राष्ट्रवादी श्री शिवप्रसाद गुप्त।

टालता गया। परन्तु अव अधिक देर नही कर सकता। रोज काम वढ रहा है। इसलिए मुझे अभी, जैसा कि लिखा जा सके, लिखना होगा। पता नही तुम्हे 'हरिजन' जैसा निर्दोष पत्र भी दिया जाता है या नही। मैं तो इस आशा से भेज रहा हू कि तुम्हे मिलता होगा। यदि मिलता हो तो मुझे अपनी राय लिखो। सनातनियो के विरुद्ध लडाई दिन-दिन दिलचस्प होती जा रही है, साथ ही अधिकाधिक कठिन भी। एक अच्छी वात यह है कि वे दीर्घकालीन मानसिक आलस्य से जाग उठे है। मुझ पर जिन गालियो की वौछार ये कर रहे हैं वे अजीव ताजगी लानेवाली हैं। दुनिया भर की वुराइया और भ्रष्टाचार मुझमे मौजूद हैं। मगर तूफान ठण्डा हो जायगा, क्योकि मैं अहिंसा की—अप्रतिशोध की, रामवाण दवा का प्रयोग कर रहा हूं। मैं गालियो की जितनी उपेक्षा करता हू उतनी ही वे भयकर होती जा रही हैं। परन्तु यह तो दीपक के आस-पास पतग का मृत्यु-नृत्य है। वेचारे राजगोपालाचार्य और देवदास की भी अच्छी खवर ली जा रही है। लक्ष्मी[1] की सगाई को वीच मे घसीट कर उस विपय में गन्दे आरोप गढे जा रहे हैं। अस्पृश्यता का समर्थन इस तरह होता है। घरू मुलाकात के तौर पर इन्दु और अस्पृश्यता के वारे मे सरूप और कृष्णा मुझसे उस दिन मिली थी। इन्दु का स्वास्थ्य वहुत अच्छा था और वह विल्कुल प्रसन्न दिखाई देती थी। सरूप अस्पृश्यता-निवारण के लिए काठियावाड और गुजरात मे थोडे दिन का दौरा कर रही है और कृष्णा इलाहावाद जानेवाली थी। देवदास दिल्ली मे है और राजा जी की, जो कि अस्पृश्यता-निवारण के लिए कानून वनवाने मे असेम्वली के सदस्यो के सम्पर्क स्थापित कर रहे हैं, सहायता कर रहा है। हमारा समय पूरी तरह अस्पृश्यता के काम मे लग रहा है। सरदार वल्लभभाई वाहर जानेवाले पत्रों की वढती हुई सख्या के लिए सारे लिफाफे वनाकर देते हैं। वह समाचार-पत्रो को परिश्रम से पढते है और अस्पृश्यता के विषय मे और न जाने कहा-कहा की छोटी-छोटी वातो की जानकारी खोद-खोदकर निकाल लाते हैं। वह विनोद के भी अटूट भण्डार हैं। मुआइने का दिन उनके लिए वैसा ही होता है जैसा कोई और दिन। वह कभी कोई मांग नही करते। मेरा कोई भी दिन ऐसा नही जाता जव मैं कोई-न-कोई माग न रक्खू। पता नही हम दोनो मे से कौन अधिक सुखी है। मुंह फुलाये विना मैं अपनी हार को सहन कर लू तो मैं भी उनकी तरह सुखी क्यो नही हो सकता।

---

१. चक्रवर्ती राजगोपालाचार्य (राजाजी) की पुत्री। वाद मे गाधीजी के पुत्र देवदास गाधी की पत्नी।

तुम्हारे एकान्त और तुम्हारे अध्ययन से हम सवको ईर्ष्या होती है। यह सच है कि हमारे भार हमारे अपने ही या यों कहो कि मेरे ही ओढ़े हुए हैं। मैंने वल्लभ-भाई की संस्कृत के अच्छे पण्डित वनने की सारी आशा चूर-चूर कर दी है। वह हरिजन कार्य की उत्तेजना के वीच में अपने अध्ययन पर ध्यान नहीं जमा सकते। वंगाल के फुटवाल के खिलाड़ी जैसे अपने खेल का मजा लूटते हैं वैसे ही वल्लभभाई चटपटी आलोचना का आनन्द लेते हैं। महादेव तो, जैसा शौकत ने वर्णन किया था, टोली के हमाल वने हुए हैं। कोई भी काम उनके लिए अधिक या उनसे परे नही है। छगनलाल जोशी अभी पैर जमाने में लगे हुए हैं। किन्तु मजे में है। वसन्त आ रहा है, उन पर भी वहार आये विना नहीं रह सकती। वैसे हमें छाँट-छाँट कर रक्खा गया है। हम खेल के नियमों का पालन करते है और वर्णाश्रम-धर्म के नियमों का कठोर पालन करने वाला एक खासा भद्र परिवार वनाये हुए हैं। इससे डाक्टर अम्वेदकर और मेरी मिलीभगत वनकर सनातनियों के लिए नई सनसनी का सामान मुहय्या हो जायगा। मेरी परीशानी व्रढ़ जायगी, परन्तु विश्वास रक्खो कि वह मेरी मोल ली हुई नही होगी। समय रह अव मेरे पास इतना ही कहने का स्थान और गया है कि हम सवको आशा है कि तुम्हारी चतुर्मुखी प्रगति वरावर जारी होगी।

हम सवकी ओर से प्यार।

वापू

—अंग्रेजी। यरवदा जेल, पूना १५।२।१९३३। 'ए व्रंच आफ ओल्ड लेटर्स' से।]
सौजन्य : श्रीमती इन्दिरा गांधी

२९८. पत्र : कालीचरण को

भाई कालीचरण जी,

तुमारा खत मिला है, मेरे वारे में जो लिखा जाता है वह मैं जानता हूं। मैं नहि समझता उसका शान्ति के सिवाय और कोई इलाज हो सकता है। मेरी उम्मेद है कि कोई उसे मानता ही नही होगा। और मानगे वालों पर मेरे

इनकार का असर भी कैसे हो सकता है। तो भी चालु हरिजन मे इस बारे मे मैंने कुछ लिखा है।

२६-२-३३ मोहनदास गांधी

--हिन्दी। २६।२।१९३३। पत्र की फोटो-नकल (जी० एन० ८०३९ से।)

२९९. पत्र : हीरालाल शर्मा

यरवदा सेण्ट्रल प्रिज़न,
३ मार्च, १९३३

प्रिय डा० शर्मा,

तुम्हारा पत्र मिला और मुझे यह जानकर खुशी हुई कि आखिर तुम आश्रम मे आ रहे हो। अपने बच्चे को अवश्य लाना और मुझे प्रसन्नता होगी यदि आश्रम तुम दोनो को अनुकूल सिद्ध होगा।

नारायण दास[1] ने मुझे सूचना दी है कि प्रमुख रोगी आश्रम से अभी-अभी चले गये हैं। मुझे इसकी कुछ परवाह नही है। तुम्हारे लिए वहा प्राकृतिक चिकित्सा के विचार से देखने-भालने और परखने के लिए बहुत-सी चीजें हैं। मलावरोध की तो वहा एक साधारण शिकायत है जिस पर तुम्हे ध्यान देना होगा।

मुझे प्रसन्नता है कि तुमने अम्तुल सलाम का यह वहम निकाल दिया है कि उनको क्षय रोग है। उसकी कल्पना-शक्ति बडी तीव्र है। वह तो कुछ न होते हुए भी कल्पित बीमारिया खडी कर लेती है।

आश्रम मे तुम्हारी उपस्थिति से मेरा अभिप्राय केवल इन गिने-चुने रोगियो का इलाज ही नही, कुछ और भी है। मैं स्वय प्राकृतिक चिकित्सा मे दृढ विश्वास रखता हू। मैं समझता हू कि मैं तुममे मेरी तरह के अनुसन्धान की अनन्य निष्ठा रखने वाला एक साथी पाऊगा। और यदि मुझे ऐसा आदमी आश्रम के उद्देश्यो मे भी विश्वास रखने वाला मिल जाये तो मैं बडी बात समझूगा। मैं जानता हू कि तुम भी इसी विचार से आश्रम आ रहे हो। अतएव आश्रम मे पूर्णरूप से आराम और घर की तरह शान्ति से रहो और उसका बारीकी से निरीक्षण करो। मेरा तो विश्वास है कि प्राकृतिक चिकित्सा जानने वाला जलवायु पर अवलम्बित नही

---

१. साबरमती आश्रम के मैनेजर।

होगा। लाखों आदमी अपने को नीरोग रख सकते हैं अगर हर तरह के जलवायु को अपने अनुकूल बनाने का रहस्य वे समझ लें। उनको स्थान-परिवर्तन के वे साधन तो प्राप्त नहीं हो सकते जो धनिकों को प्राप्त होते हैं। और मेरी समझ में नहीं आता कि प्रकृति इतनी निर्दयी हो सकती है कि धनिकों का पक्ष ले और निर्धनों की उपेक्षा करे। इसके विपरीत मुझे तो बाइबिल की इस कहावत में विश्वास है कि "एक ऊंट सुई के नकुए में से निकल सकता है परन्तु धनवान के लिए स्वर्ग में प्रवेश नहीं मिल सकता।' बाइबिल का एक और वाक्य है कि 'स्वर्ग हमारे अन्दर ही हैं' इसलिए मेरा तो सदैव यही विचार रहा है कि प्रकृति के नियम सरल. सीधे-सादे और सर्व-साधारण के अनुसरण करने योग्य होते हैं।

अतएव मैं तुमसे कहूं कि तुम साधारण भारतीय जलवायु में स्वास्थ्य बनाये रखने और खोये हुए स्वास्थ्य को पुनः प्राप्त करने के साधनों की खोज करने के निश्चित उद्देश्य से आश्रम में आओ।

तुम्हारा शुभचिन्तक,
बापू

डा० एच० एल० शर्मा,
सन-रे हास्पिटल, करोलबाग, दिल्ली।

—अंग्रेजी: यरवदा जेल (पूना), ३।३।१९३३। 'बापू की छाया में हमारे जीवन के सोलह वर्ष' से।)
सौजन्य : श्री हीरालाल शर्मा, खुर्जा

३००. पत्र : हीरालाल शर्मा को

यरवदा सेण्ट्रल प्रिज़न,
१४ मार्च, १९३३

प्रिय डा० शर्मा,

तुम्हारा पत्र आज मिला और अम्तुल सलाम का पत्र पढ़ने से पहले ही मैं तत्काल इसका उत्तर दे रहा हूं। मेरा तुमसे कहना यह है कि तुम आश्रम चले जाओ। उन रोगियों को देखो जो अब भी वहां हैं और वहां कुछ समय तक रहेंगे और यह भी देख लो कि ठण्डे जलवायु के स्थान पर जाने के बगैर उनकी चिकित्सा हो सकती है कि नहीं। अहमदाबाद में अप्रैल तक तो इतनी गर्मी नहीं पड़ती जितनी लोग समझते हैं। रातें तो काफी ठण्डी रहती हैं और मुझे तो गर्मियों के दिन भी

कुछ कष्टकारी नहीं प्रतीत हुए। मैंने तो स्वय अपना इलाज आश्रम मे एक से अधिक बार कराने मे झिझक नही की, यद्यपि मुझे कुछ डाक्टरो ने परामर्श दिया था कि मैं किसी पहाडी स्थान या कम-से-कम किसी समुद्र-तट के किसी स्थान पर चला जाऊ। परन्तु तुमको तो स्वय ही निश्चय करना है और यदि तुम यह आवश्यक समझो तो मैं कोई ठण्डी जगह ढूढने का प्रयत्न करूगा। तुम्हारे आश्रम आने से दो काम बनेंगे—एक तो तुम जगह और परिस्थिति से परिचित हो जाओगे और आश्रम-जीवन का अनुभव ले सकोगे, साथ ही साथ वहाँ पुराने मलावरोध के रोगियो पर अपनी चिकित्सा आजमा सकोगे। आश्रम मे तो यह रोग व्यापक-सा है। दो रोगी वहा पुराने दमा से पीडित है जो प्राय: वे इन रोगो को दूर करने वाले जलाशयो का सेवन करने कही बाहर नही जाते और जहा तक बस चलता है आश्रम मे ही रहते है। तुम आश्रम मे जब चाहो जा सकते हो और यदि अम्तुल सलाम को भी साथ ले जाना चाहो तो ले जा सकते हो।

मुझे प्रसन्नता है कि तुम्हारी बच्ची प्राकृतिक चिकित्सा-द्वारा चेचक के रोग से ठीक हो गई है।

यदि तुम्हारा इरादा आश्रम आने का हो तो केवल एक तार या एक पत्र अपने वहा पहुचने की तिथि का भेज देना ही काफी होगा। मैं इस पत्र की एक प्रतिलिपि मैनेजर को भेज दूगा।

तुम्हरा शुभचिन्तक,
मो० क० गाधी

डा० एच० एल० शर्मा,
सन-रे हास्पिटल, करोलबाग, दिल्ली।

— अग्रेजी। यरवदा जेल (पून), १४।३।१९३३। 'बापू की छाया मे मेरे जीवन के सोलह वर्ष' से।]
सौजन्य : श्री हीरालाल शर्मा

३०१. पत्र : श्रीप्रकाश को

यरावडा केन्द्रीय कारागार
१८वी मार्च, १९३३

मेरे प्रिय श्रीप्रकाश,

मुझे तुम्हारा पत्र मिल गया है और मुझे खुशी है कि शरीर के पुन: स्वस्थ

होने के साथ तुम्हारी वह निराशा भी दूर होती जा रही है जो तुम पर छा गई थी और मुझे सन्देह नहीं है कि यदि तुम काफ़ी विश्राम लोगे और दूसरी सब चीजों को भुला दोगे तो उसके फन्दे से पूरा तरह छूट जाओगे। यद्यपि हम सब उस गीताधर्म के अनुयायी माने जाते हैं जो हमारे लिए कर्त्तव्य-स्वरूप मानता है कि किसी चीज की भी चिन्ता न करो और फल को ईश्वर के सर्वशक्तिमान हाथों में छोड़ दो, फिर भी मैं सोचता हूं कि इस मामले में अंग्रेज हमें हरा देते हैं। मुझे याद आता है कि स्वर्गीय लार्ड एसक्विथ, डाक्टरी सलाह मानकर उस समय भूमध्यसागर की समुद्री सैर के लिए चले गये थे जब युद्ध अपनी पूरी ऊंचाई पर था और राज्य की चिन्ता अपने उत्तराधिकारियों के हाथ मे छोड़ गये थे।

यद्यपि श्रेणी-विभाजन के सम्वन्ध में मै वड़े तीव्र विचार रखता हूं, फिर भी चर्चा के अनुमतिप्राप्त विपयों के वाहर होने के कारण, मुझे इस पर चर्चा नही करनी चाहिए।

मैं विश्राम लेने का अनुरोध करते हुए वावूजी को पत्र लिखूंगा, किन्तु मैं जानता हूं कि उनका दिल पूरी तरह अस्पृश्यता के विरुद्ध इस लड़ाई में लगा हुआ है।

हां, मुझे शिवप्रसाद से एक साप्ताहित विज्ञप्ति मिलती है जिसकी हम सव हर हफ्ते उत्सुकतापूर्वक प्रतीक्षा करते रहते हैं। जमनालाल जी का स्वास्थ्य काफ़ी अच्छा है। अपनी आंख की शिकायत से तो वह पूरी तरह मुक्त हो नही सकते। सरदार, महादेव और छगनलाल जोश, जिनसे तुम शायद मिल नही पाये किन्तु जिन्हें तुमने आश्रम में देखा जरूर होगा, मेरे साथ तुम्हें अपना प्रेम भेजते हैं।

प्रेम

तुम्हारा निश्छल

वापू

—अंग्रेजी। यरवदा जेल, १८।३।१९३३। नेहरू संग्रहालय में सुरक्षित पत्रावली से।]

सौजन्य : श्री श्रीप्रकाश तथा नेहरू संग्रहालय।

३०२. पत्र : श्रीप्रकाश को

यरवडा केन्द्रीय कारागार
८वी एप्रिल, १९३३

मेरे प्रिय श्रीप्रकाश,

मुझे तुम्हे तुम्हारी इस आशा मे निराश करना होगा कि मैं आगे सव पत्राचार वन्द कर दू, किन्तु आस्थगित आशा के कारण हृदय को अस्वस्थ न होने देना। तुम्हारे पत्र, यद्यपि लम्वे होते हैं किन्तु तुम्हारे पत्र मन का अधिकाधिक अन्तर्दृश्य प्रदान करते हैं और मैं इसे सभी साथी कार्यकर्त्ताओ के वारे मे पसन्द करता हू। तुमने यह खयाल नही किया कि जो प्रस्ताव तुमने रक्खे हैं, उसमे तुमने घोडे के आगे गाडी खडी कर दी है। तुम्हारे किसी भी प्रस्ताव में उस प्रयास की झलक नही है जो हमे खुद करना है। हर चीज व्यवस्थापको-द्वारा, इसलिए सरकार द्वारा, होनी है, और यही सम्पूर्ण इतिहास मे विनाश का मार्ग रहा है। वह सव सुधार, जिसकी रूपरेखा तुमने दी है, तभी आ सकते हैं जव हम लोग अस्पृश्यता-राक्षसी के विरुद्ध कम-से-कम जन-मानस को खडा करने के लिए काफी प्रयत्न कर चुकेंगे। उच्च वर्ण के हिन्दुओ द्वारा कथित निम्न जातियो का जो दमन है, अस्पृश्यता उसका अन्तिम रूप है। इसलिए मैं तुमसे चाहूगा कि तुम अस्पृश्यता के उद्‌गम तथा उसके दूरगामी प्रभावो का उससे अधिक पूर्णता के साथ अध्ययन करो, जितना तुमने किया जान पडता है।

मुझे आशा है कि तुमने अपना खोया स्वास्थ्य अव तक प्राप्त कर लिया होगा।

मुझे खुशी है कि पिता जी वीच-वीच मे आते रहे हैं।

कलकत्ता से प्राप्त साप्ताहिक विज्ञप्ति से मालूम होता है कि शिवप्रसाद अव भी अच्छे होने से काफी दूर हैं। हम सवको आशा करनी चाहिए कि हमे उनके वारे मे ज्यादा अच्छा समाचार मिलेगा।

तुम्हारा निश्छल
वापू

श्रीयुक्त श्रीप्रकाश,
सेवाश्रम,
वनारस छावनी।

[अंग्रेजी। यरवडा जेल (पूना), ८।४।१९३३। नेहरू सग्रहालय मे सुरक्षित पत्रावली से।]

सौजन्य : श्री श्रीप्रकाश तथा नेहरू सग्रहालय

३०३. पत्र : हीरालाल शर्मा को

यरवडा सेण्ट्रल प्रिजन,
पूना।

प्रिय डा० शर्मा,

तुम्हारा पत्र मुझे वहुत पसन्द आया। यह तुम्हें शोभा देता है। तुमने मेरे सामने एक आदर्श चिकित्सक का चित्रण ही कर दिखाया है। हां, यदि आवश्यक समझो तो वेशक उसके कपड़े तुम स्वयं साफ करो। यद्यपि आश्रम में वह पूरी तरह से तुम्हारी देख-रेख में है, उसे नियमित खुराक तथा आराम लेने के लिए काफी जोर दिया जाय। मै चाहता हूं कि तुम आश्रम की हर चीज को सूक्ष्म निरीक्षण की दृष्टि से देखो और तत्सम्बन्धी अपने विचारों से मुझे सूचित करते रहो। प्रत्येक आश्रम-निवासी, जो तुम्हें निरीक्षण करने दे उन सवके स्वास्थ्य का तुम अवलोकन करते रहना। हा, यह आवश्यक है कि जिन रोगियों का रोग तुम्हारी समझ से वाहर हो, उनके विपय में मुझे स्पष्ट कह देना होगा। मैं चाहता हूं कि तुम कुसुम वहन को भी देखो। आज तो वह डा० तलवलकर के इलाज मे है किन्तु मैं चाहता हूं कि तुम मुझे वता दो कि यदि वह तुम्हारे हाथ में सौप दी जाय तो तुम उसके लिए क्या उपचार नियत करोगे। और जमुना[1] बहिन भी तो है; वह पुराने दमा की रोगिणी है। यदि वह तुम्हारे देख-रेख में आना पसन्द करे तो तुम्हारे द्वारा उसका इलाज हो सकता है। एक रमा बहिन है। उनके कन्धे की हड्डी वढ़ी हुई है। मै अभी तक उसके रोग को अच्छी तरह नही समझ पाया। कदाचित् इनका रोग तुम्हारे क्षेत्र से वाहर है। यदि नही, तो कृपया बताओ कि तुम उनके लिए क्या उपचार निश्चित करोगे। अन्त में आनन्दी भी है। उसका अभी 'एपेण्डिसाइटिस' का आपरेशन हुआ है। केवल मेरा ही इलाज चल रहा है जैसा कि और लोग भी थोड़ा-वहुत करते रहते हैं। ये मुख्य-मुख्य रोगी हैं जिनको मै चाहता हूं कि जितनी जल्दी हो सके तुम इन्हे देख लो और उनके विषय में सब-कुछ वता दो। रोगी और भी है जिन पर ध्यान देने की आवश्यकता है।

अव कुछ तुम्हारे विपय में कहना है। जहां एक ओर मैं चाहता हूं कि तुम आश्रम की दिनचर्या मे रम जाओ, वहां दूसरी ओर यह भी कहना है कि तुमको अपनी शक्ति के वाहर नही जाना है। हर काम को आराम के साथ करते रहना है। अपनी विशेष आवश्यकताएँ पूरी करा लेना। यदि असाववानी के कारण

१. श्री नारायणदास गांधी जी की धर्मपत्नी।

तुम्हारा अपना ही स्वास्थ्य सकट मे पड़ गया तो मुझे वडा दु ख होगा। मुझे वड़ी सान्त्वना रहेगी यदि तुम आश्रम को अपने घर-जैसा समझोगे और अपनी आवश्यकताओ को वताते रहोगे। मैं चाहता हू कि तुम भगवान जी भाई के साथ हरिजन वस्ती देखने जाओ और रोगियो तथा वहां की सफाई की परिस्थितियो को देखो। अच्छा होता यदि तुम्हारे दोनो वच्चे तुम्हारे साथ आये होते। कोई वात नही। यदि सव ठीक-ठीक रहता है तो पीछे देखा जायगा।

तुम्हारा,
वापू

—अंग्रेजी। यरवदा जेल (पूना), १९।४।१९३३। 'वापू की छाया मे मेरे जीवन के सोलह वर्ष' से।]
सौजन्य : श्री हीरालाल शर्मा

२०४. पत्र : हीरालाल शर्मा को

यरवदा सेण्ट्रल प्रिज़न,
पूना।

भाई हीरालाल शर्मा,

तुम्हारा हिन्दी पत्र पाकर मुझको वहुत ही आनन्द हुआ। हिन्दी मे यह पहिला पत्र और ऐसे स्वच्छ अक्षर! आश्चर्यजनक वात है। हिन्दी भी अच्छी ही है। यह कैसे? मैंने पत्र और Prescriptions सव ध्यान से पढ लिये हैं।

प्राकृतिक चिकित्सा मे गाधी कुटुम्व अनभिज्ञ नही है। यह तो विनय की भापा हुई। उनका विश्वास कम है लेकिन यह भी सवके लिए नही कहा जा सकता है। वे और दूसरे भी वेचारे क्या करें? जो कुछ प्राकृतिक चिकित्सा का ज्ञान और प्रेम हो सकता था वह मेरी ही वजह से। लेकिन मेरा ज्ञान इतना अधूरा कि जिससे जल्द रोगो मे निकम्मा वन जाता हू। कभी व्यवस्थित तौर पर इस शास्त्र का अभ्यास करने का मुझको समय ही नही मिला। मेरे शौक की यह वस्तु होने के कारण थोडा वहुत मैं जान सका हूँ। मेरे अधूरापन के कारण हमेशा प्राकृतिक चिकित्सा विशारद को मैं ढूढ रहा हू। ऐसे उपचारक एक भक्त और वडा सज्जन हनुमन्त राव था। अपने उपचारो का वलि होकर वह मर गया। उसका ज्ञान

कम था। उसकी श्रद्धा अपूर्व थी। पीछे आया था गोपालराव। वह एक अस्पताल रखकर राजमन्द्री में बैठ गया है। उसी पर विश्वास करके मैंने एक मूर्ख प्रयोग किया। उसका वर्णन मैंने अखबार में भी दिया था। गोपालराव के परिचय से मुझको निराशा पैदा हुई। गोपालराव श्रद्धालु है लेकिन उसका ज्ञान बहुत ही अधूरा है और दुःख यह है कि अपने अधूरापन का उसको पूरा ख्याल नहीं है। अब तुम मिल गये हो। मैं तो चाहता हूं कि मुझे मत छोड़ो। आश्रम में और भी रहो, नम्रतापूर्वक अपने ज्ञान की मर्यादा को पहचान लो। आश्रम के लोगों का विश्वास संपादन करो और पीछे ऐसे उपचार के लिए जगत को निमन्त्रण भेजो। अगर आश्रम से शीघ्र लौट जाने की आवश्यकता नहीं है तो कम-से-कम थोड़े दर्दियों को तो अच्छे करके जाओ। अगर आश्रम तुमको अच्छा लगे और नारायणदास जी को तुम अच्छे लगो तो आश्रम में अवश्य रह जाओ। प्राकृतिक चिकित्सा का तुम्हारा ज्ञान पूरा हो अथवा अपूर्ण हो उसकी मुझे दरकार नहीं है। मुझे दरकार है सत्य की, जहां तक हम जा सकें वहीं तक जाकर सन्तुष्ट रहें तो कोई हानि नहीं हो सकती। अगर पत्नी भी आश्रम के नियमों का पालन करने को तैयार है तो कोई कारण नहीं है वह भी आश्रम में आकर क्यों नहीं रहे। तुम्हारी धर्मपत्नी को मैं खत लिखता हूं। इसी के साथ रक्खूंगा।

भगवान जी के साथ हरिजनों के पास गये सो अच्छा हुआ। यदि सम्भव है तो आश्रम छोड़ने के पहिले ही और जितना जल्दी हो सके उतना जल्दी मेरे पास आ जाओ। तब हरिजनों में आरोग्य के बारे में क्या करना चाहिए उस बारे में हम कुछ वार्तालाप कर लें। इतवार छोडकर जब दिल चाहे तब आ सकते हो। दोपहर को मिलने का हो सकता है।

आश्रम में खुराक के बारे में तुम्हारी सूचना की प्रतीक्षा करूंगा। आरोग्य की दृष्टि से आश्रम की खुराक को मैं सम्पूर्ण बनाना चाहता हूं। हरिजन बालकों को आश्रम में रखने का इरादा तो हमेशा रहा ही है लेकिन ऐसे बालक बहुत नहीं मिल सकते हैं। आश्रम में जो लोग अपना रोग छिपाते हैं उसको सलाह दे दो कि वे उसे प्रकट कर दें और जो अपने विकारों को शान्त नहीं कर सकते हैं वे भाग जायं।

कुसुम के बारे में मैं सोच रहा हूं क्या किया जाय। रमा बहिन के बारे में तो अगर उनके रोग का निदान के बारे में और चिकित्सा के बारे में तुम को कुछ भी शंका नहीं है तो वही उपचार किये जायं जो तुम्हें पसन्द हो। इसी तरह जमना बहन के लिए। अमीना से अगर भात और दूसरे स्टार्च के पदार्थ और तम्बाकू छोड़वा दोगे तो बहुत अच्छा होगा। प्रातःकाल दांतों पर तमाकू घिसती है। बम्बई के

अखबारो मे जो तुम्हारे आने का उल्लेख था उस बारे मे जो तुमने किया वह अच्छा ही हुआ और योग्य हुआ।

२-५-३३

बापु के
आशीर्वाद

—मूल हिन्दी। यरवदा जेल (पूना), २।५।१९३३। 'बापू की छाया में मेरे जीवन के सोलह वर्ष' से।]
सौजन्य : श्री हीरालाल शर्मा

३०५. पत्र : जवाहरलाल नेहरू को

यरवदा सेण्ट्रल जेल,
पूना
२ मई, १९३३

प्रिय जवाहरलाल,

जब मैं आनेवाले उपवास[1] से जूझ रहा था, तब तुम मानो सशरीर मेरे सामने थे। किन्तु कोई लाभ नही। काश मुझे अनुभव हो सकता कि तुमने उपवास की नितान्त आवश्यकता को समझ लिया है। हरिजन-आन्दोलन मेरे बौद्धिक प्रयत्न के लिए बहुत बडी चीज है। सारे ससार मे इतनी बुरी चीज कोई नही है। फिर भी मैं धर्म को और इसलिए हिन्दुत्व को छोड नही सकता। यदि हिन्दू धर्म से मैं निराश हो जाऊ तो मेरा जीवन मेरे लिए भार बन जायगा। मैं हिन्दुत्व के द्वारा ईसाई, इस्लाम और कई दूसरे धर्मों से प्रेम करता हू। इसे छीन लिया जाय तो मेरे पास रह ही क्या जाता है? किन्तु मैं इसे छुआछूत और ऊच-नीच की मान्यता के रहते हुए सहन भी नही कर सकता। सौभाग्य से हिन्दू धर्म मे बुराई का रामबाण इलाज भी है। मैंने उसी इलाज का प्रयोग किया है। सम्भव हो तो मैं तुम्हे यह महसूस करवाना चाहता हू कि यदि मैं उपवास के बाद बच रहू तो अच्छा ही है और यदि जीवित रहने की कोशिश के बावजूद यह शरीर नष्ट हो जाता है तो भी क्या बुराई है? आखिर यह है ही क्या?—एक झट से टूट जानेवाली चिमनी

---

१. हरिजनों को हिन्दुओ से अलग कर देने के ब्रिटिश प्रधान मन्त्री मैकडानल्ड के निर्णय के विरुद्ध आमरण अनशन।

से भी अधिक नाशवान है। उस कांच के गोले को फिर भी दस हजार वर्ष तक ज्यों-का-त्यों रक्खा जा सकता है, परन्तु इस शरीर को एक मिनट के लिए भी जैसे-का-तैसा नही रख सकते। और मृत्यु से अवश्य ही प्रयत्न-मात्र का अन्त नही हो जाता। ठीक ढंग से सामना किया जाय तो मौत इसी उदात्त प्रयत्न का आरम्भ भी हो सकता है। परन्तु यह सत्य तुम्हें स्वयं-स्फूर्ति से दिखाई न देता हो तो मैं दलीलों से तुम्हें कायल नही करना चाहता। मैं जानता हूं कि तुम्हरी स्वीकृति मेरे साथ न भी हुई तो भी अग्नि-परीक्षा के इस सारे दौरान में तुम्हारा बहुमूल्य स्नेह मेरे साथ रहेगा।

तुम्हारा पत्र मिल गया था, जिसका उत्तर मैंने सोचा था, फुर्सत से दूगा, परन्तु ईश्वर की इच्छा और ही कुछ थी। कृष्णा[1] से मेरी बातें हुई थी। मेरा ख़याल है कि सरूप के काठियावाड़ के काम के बारे में मैने तुम्हें लिखा था। कमला ने तो मुझे अपना पता तक नही भेजा। बहुत दिनों से उसका कोई पत्र नही आया है। जब तुम उससे मिलो, उसे और इन्दु को मेरा प्यार पहुंचा देना। कमला को उपवास की चिन्ता नही करनी चाहिए। हो सके तो मुझे तार देना।

हम सब की ओर से प्यार।

बापू

—अंग्रेजी। यरवदा जेल, पूना, २।५।१९३३। 'ए बंच आफ ओल्ड लेटर्स' से।].
सौजन्य : श्रीमती इन्दिरा गांधी

३०६. पत्र : जवाहरलाल नेहरू को

२२ जुलाई, १९३३

प्रिय जवाहरलाल,

मैंने तुम्हें लिखने की कई बार इच्छा की। परन्तु विवश था। नई प्राप्त होनेवाली रत्ती-रत्ती भर शक्ति सामने रक्खे हुए आवश्यक कार्य को निबटाने में लगाता रहा।

---

१. जवाहरलाल की बहिन, बाद की कृष्णा हठी सिंह। १९६८ ई० में लन्दन में उनका देहान्त हो गया।

माता जी और कमला के साथ बहुत अच्छा समय बीता। सरूप और रनजीत[1] से अधिक नही मिल सका।

माता जी को कृष्णा की चिन्ता है। उसके भविष्य के बारे मे उन्होने मुझसे लम्बी बातचीत की। इस मामले मे तुम्हारे पास मेरे लिए कोई सुझाव हो तो बताओ। अलबत्ता मेरी गति-विधिया अनिश्चित हैं। परन्तु इसकी पर्वा नही।

देवदास और लक्ष्मी को मैंने पूना मे छोडा था। अब वे आनेवाले हैं। बहुत करके देवदास अभी दिल्ली मे बस जायगा। महादेव,[2] बा और प्रभावती[3] मेरे साथ है। खयाल है कि वे सब शीघ्र ही बिखर जायगे।

उपवास से पहिले की शक्ति फिर से प्राप्त करने मे मन्द गति रही है। परन्तु मेरी दशा धीरे-धीरे सुधर रही है।

सप्रेम

बापू

—अंग्रेजी। २२।७।१९३३। 'ए बंच आफ ओल्ड लेटर्स'।]
सौजन्य : श्रीमती इन्दिरा गाधी

३०७. पत्र : जवाहरलाल नेहरू को

वर्धा

३१-८-३३

मेरे प्रिय जवाहरलाल,

तो तुम अपनी अवधि के पहिले बाहर आ गये। आशा है, तुम्हे मेरा तार मिला होगा। मैंने सोचा था कि मा इलाहाबाद वापिस जा रही हैं, मैं तुमसे पूरे विवरण की आशा करता हू।

इन्दु मेरे पास अक्सर आती रही है। आज शाम फिर आनेवाली है।

यदि किसी तरह सम्भव हो तो हमे शीघ्र मिलना चाहिए। किन्तु अगर मा (की हालत) खराब बनी रहती है तो तुम्हे वहा रुकना पडेगा। मैं तुम्हारे पूरे पत्र की आशा रखूगा। यह और भी अच्छा होगा कि तुम उसे रजिस्ट्री कराके भेजो।

---

१. रणजित पण्डित, सरूपरानी (बाद की विजयलक्ष्मी) के पति।

२. महादेव हरिभाई देसाई, गाधी जी के वैयक्तिक सचिव।

३. श्री जयप्रकाश नारायण की पत्नी।

मैं प्रवल रूप से खोई शक्ति प्राप्त कर रहा हूं। अतीत के विषय में मैं कुछ नही कहता क्योंकि मुझे उम्मीद है, अव तुम उसके वारे में सव कुछ जान चुके हो। अधिक, मिलने पर।

प्रेम

वापू

—अंग्रेजी। वर्धा, ३१।८।१९३३। नेहरू संग्रहालय में सुरक्षित पत्रावली से।]
सौजन्य : श्रीमती इन्दिरा गांधी तथा नेहरू संग्रहालय

३०८. पत्र : बनारसीदास चतुर्वेदी को

पर्णकुटी, पूना
२-९-३३

भाई बनारसीदास,

तुम्हारा पत्र मिला। आनंद हुआ। वंगाल मे हिन्दी प्रचार के लिये वेतन देकर अच्छे शिक्षक रखने चाहिए। रामानंद वावु ने हिंदी भापा की वड़ी सेवा की है इसमें कोई संदेह नही है। विशाल भारत स्वावलंबी करने के लिए तुमको धन्यवाद। मद्रास के दौरे का व्यान मैने देख लिया है। अच्छा है। तुम्हारी शारीरिक प्रकृति अच्छी होगी।

वापु के आशीर्वाद

[टिप्पणी—पत्र लिखा दूसरे के हाथ का है। हस्ताक्षर मात्र गांधीजी के हैं।]

—हिन्दी। पर्णकुटी, पूना, २।९।१९३३। जी० एन० २५६४ की फोटो-नकल से।]

३०९. पत्र : जवाहरलाल नेहरू को

मेरे प्रिय जवाहरलाल,

तुम्हारा पत्र मिला। स्पष्टतः तुम्हारी उपस्थिति ने मां के लिए 'टानिक' (वल्य औपधि) का काम किया है। यदि वह ज्वर से मुक्त रहती हैं तो तुम चन्द दिनों के लिए वाहर जाने के लिए स्वतन्त्र हो सकते हो। यदि ऐसा हो तो जितना

जल्द सम्भव हो तुम मेरे पास आओ। मैं यहा से आगामी शुक्रवार या शनिवार को वम्बई जाने को उत्सुक हू— वहा लगभग एक हफ्ता रहूगा और फिर वर्घा जाऊंगा।

जिस युवक के नाम का जिक्र तुमने किया है, उसे मैं नही जानता। मैं परिवार को अच्छी तरह जानता हू। मैं उस (युवक) से भी जरूर ही मिला हूगा किन्तु यदि मैं उसे देखूगा तो पहिचान न सकूगा। परिवार की परम्परा उदार है। इसलिए उन लोगो के साथ कृष्णा के खूब सुखी होने की सम्भावना है। मैंने अनसूया वहन को लिखा है। जरूरत होने पर मैं तुम्हे तार दूगा। निश्चय ही, मैं मामले को विल्कुल गुप्त रख रहा हू। मैं यह माने लेता हूं कि र० व० को मेरे लिखने का तुमने कुछ वुरा न माना होगा।

कमला को उत्तेजना और चिन्ता से मुक्त रखने की आवश्यकता है। मेरा यह मानने का मन होता है कि वम्वई मे वह नौरोजी वहिनो के साथ सुखी नही है। इसलिए मैं महसूस करता हू कि जव तुम यहा आओ तो उसे साथ ले आओ, और फिर उसे यही छोड दो।

इस आशा से कि हम जल्दी ही मिल रहे हैं, मैं राजनीतिक स्थिति या अपने उपवास के पराक्रमो के वारे मे कुछ नही कह रहा हू। मैं तेजी से खोई हुई शक्ति प्राप्त कर रहा हू।

वेचारा महादेव वेलगाम मे है। आग में से गुजरना अच्छा ही है।

कृपया मा से कहो कि वह निरन्तर मेरे विचारो मे हैं। उन्हे वादलो को हटते देखने के लिए काफी दिन जीना है।

तुम सवको मेरा प्रेम

२-६-३३

वापू

—अंग्रेजी। वर्धा, ३।९।१९३३। नेहरू संग्रहालय में सुरक्षित पत्रावली से।]
सौजन्य : श्रीमती इन्दिरा गांधी तथा नेहरू सग्रहालय।

३१०. तार : जवाहरलाल नेहरू को

वर्धागज

२३ सितम्वर ३३

जवाहरलाल नेहरू,
लखनऊ

तुम्हारा तार (मिला)। आज पत्र भेजा है। कल जाच पूरी करली।

३३

सब मिलाकर सन्तोपप्रद। तुम श्रीमती हथीसिंह को बाजाब्ता हस्त प्रदान[1] करोगे। प्रसन्न (हूं कि) मां पहिले से अच्छी है।

बापू

—अंग्रेजी। वर्धा, २३।९।१९३३। नेहरू संग्रहालय में सुरक्षित पत्रावली से।]
सौजन्य : श्रीमती इन्दिरा गांधी तथा नेहरू संग्रहालय।

३११. पत्र : जवाहरलाल नेहरू को

वर्धा
२३-९-३३

मेरे प्रिय जवाहरलाल,

कल ही मैं तुम्हें लिखने को तैयार हो सका हूं। मेरी जांच १ बजे दोपहर मे पूरी हुई। मैं अव तक कस्तूर भाई, श्री हथीसिंह और शंकरलाल से, जो परिवार को भलीभांति जानते है, मिल चुका हूं। अपने अनुभवों से मुझे पूरा सन्तोष नहीं है। मुझे साफगोई नही मिली। फिर भी प्रस्तावित विवाह के विरुद्ध कुछ कहने को मेरे पास नही है। नवीन परिस्थितियो में कृष्णा काफ़ी सुखी रहेगी। इससे भी बड़ी बात यह है कि उसने इस विवाह पर अपना दिल जमा लिया है। वह राजा की मां से पत्र-व्यवहार करती रही है। राजा बावू उसके चुने (जीवनसाथी) का प्यार का नाम है। कृष्णा के नाम पर वह कुछ छोड़ जायंगे, इसका तो कोई सवाल ही नही है। निश्चय ही मैने उन लोगों पर इसे पूरी तरह स्पष्ट कर दिया कि कृष्णा के नाम से कुछ कर देने का सुझाव सिर्फ मेरा था। किन्तु वैसा होते हुए भी उसे विवाह की कोई शर्त बनाने का विचार नही था। मैने उनसे कह दिया कि मैंने यह प्रस्ताव इसलिए किया था कि जहां तक सम्भव हो, मै सभी लड़कियो के लिए ऐसी व्यवस्था करने में विश्वास रखता हूं। यदि इस विवाह का अन्तिम रूप में निश्चय करना है तो तुम्हे निश्चित प्रस्ताव करते हुए श्रीमती हथीसिंह को अहमदावाद लिखना चाहिए और वह तुम्हे अपनी स्वीकृति भेज देंगी। वह जितनी जल्द कृष्णा चाहे, विवाह के लिए तैयार है। वह इच्छुक है और मेरा खयाल है,

---

१. मतलव है अपनी वहिन के व्याह के लिए लिखोगे।

कि मगनी और विवाह एक साथ ही कर देना चाहिए। अव तुम युवक हथीसिंह को जव चाहे वुलाने के लिए लिख सकते हो।

मुझे आशा है कि मा, और कमला भी, पहिले से अच्छी हैं।

मैं आज सुवह ही वर्धा पहुचा हू। सिवाय ऊचे रक्तचाप के, जिसे डाक्टरो ने लिखा है, मुझमे कोई खरावी नही है, फिर भी आज से कम-से-कम तीन हफ्तो तक, यानी आगामी १५ अक्तूवर तक, मेरा घूमना-फिरना वन्द रहेगा।

मथुरादास वम्वई मे हैं। चन्द्रशकर और नायर, निश्चय ही वा, मीरा वहन और प्रभावती के अलावा, मेरे साथ हैं। प्रभुदास जी मेरे साथ है।

प्रेम

२३-६-३३

वापू

—अंग्रेजी। वर्धा, २३।९।१९३३। नेहरू संग्रहालय मे सुरक्षित पत्रावली से।]
सौजन्य : श्रीमती इन्दिरा गाधी तथा नेहरू संग्रहालय।

३१२. पत्र : जवाहरलाल नेहरू को

वर्धा
२४-६-३३

मेरे प्रिय जवाहरलाल,

प्रस्तावित परिणय[1] के विषय मे आज जमनालाल जी से मेरी वात हुई। लगता है, वह परिवार को अच्छी तरह जानते हैं। उनकी निश्चित राय है कि परिवार, निश्चय ही कस्तूर भाई को छोडकर, उतनी अच्छी हालत मे नही है जैसा ऊपर से लगता है। उनकी राय तो यहा तक है कि वे अभावग्रस्त हो सकते हैं। मैंने सोचा कि मैं यह सूचना तुम तक पहुचा दू। वह खुद भी इसके लिए उत्सुक हैं कि उनकी राय तुम्हें मालूम हो जाय। निजी तौर पर तो मैं इससे अप्रभावित हू। किन्तु वह सोचते हैं कि कृष्णा को इसका पता होना चाहिए। जहा तक मैं विचार कर सकता हू, कोई चीज कृष्णा के चुनाव को तवतक प्रभावित नही कर सकती जवतक कि उसे तरुण (वर) के विरुद्ध कोई निश्चित वात न मिले।

---

१. कृष्णा का हथीसिंह के साथ।

और वह बिल्कुल सही है। कस्तूर भाई का दृढ़ मत है कि कृष्णा का चुनाव अच्छा है।

तुम सबको प्रेम
बापू

२४-६-३३

जो कुछ मैं सुझाना चाहता था वह यह है कि यदि विवाह होता है, और यदि मां राज़ी होती हैं तो धार्मिक संस्कार वर्धा में किया जा सकता है। कठिनाई को मैं जानता हूं। मैं जानता हूं कि मैं स्वार्थवश सोच रहा हूं। मैंने सिर्फ सुझाव फेंक छोड़ा है। हम देखें कि क्या होता है। कस्तूर भाई से मेरी भेंट की सम्भावना है। तुम इस बात में सफल हो सकते हो कि मेरे-जैसे आदमी तुम्हें पण्डित न लिखें किन्तु मैं देखता हूं कि (यह) विशेषण तुम्हारे साथ बना रहेगा।

—अंग्रेजी। वर्धा, २४।९।१९३३। नेहरू संग्रहालय में सुरक्षित पत्रावली से।]
सौजन्य : श्रीमती इन्दिरा गांधी तथा नेहरू संग्रहालय।

३१३. पत्र : जवाहरलाल नेहरू को

वर्धा

मेरे प्रिय जवाहरलाल,

तुम्हारे कई पत्र मिले। मैंने रफ़ी[1] से लम्बी वार्ता की है। वह तुम्हें इसके बारे में सब कुछ बतायेंगे। मेरी राय यह है कि भारतीय कांग्रेस कमेटी की बैठक करने से कोई लाभ नहीं होगा। किन्तु इसका यह मतलब नहीं है कि अगर ऐसी बैठक की गई तो इससे मुझे कोई गहरा आघात पहुँचेगा। इसके विपरीत, यदि पर्याप्त संख्या में लोग इसे चाहते हैं, तो उनका कर्त्तव्य है कि ऐसी बैठक के लिए अधियाचना भेजें। मैं महसूस यह करता हूं कि हमें पहल नही करनी चाहिए। यदि तुम व्यक्तिगत रूप से यह महसूस करते हो कि अधियाचना न होते हुए भी बैठक बुलाना ज्यादा अच्छा होगा, तो तुम्हें बैठक बुलानी चाहिए। मैं जानता हूं कि मैं कार्यकर्त्ताओं की सम्मति के भी स्पर्श में नही हूं। इसलिए मेरी राय उन लोगों को बिना किसी डर के निरस्त करनी चाहिए जो दूसरी राय रखते हैं।

रफी हमारी बातचीत का जो वर्णन देंगे उसके अतिरिक्त दूसरे जिस मुद्दे को

---

१. स्व० रफी अहमद किदवई।

मैं स्पष्ट करना चाहूगा, वह है कार्यकर्त्ताओ के विपय मे। यद्यपि मैं जो कुछ कर सकता हू वह तो करूगा ही, किन्तु यह मेरी सम्मति है कि हर सूबे को अपने कार्यकर्त्ताओ की सहायता करनी चाहिए, यह भी कि हर जिले या तहसील को भी अपने-अपने कार्यकर्त्ताओ का वोझ उठाना चाहिए। जवतक हम इस स्थिति पर नही पहुचते, हम वालू के घरौंदे की भाति रहेंगे। मैं समझता हूँ कि तुम्हें सूबे मे भिक्षापात्र लेकर निकल पडना चाहिए और लोगो को इस ओर गतिमान करना और उदाहरण उपस्थित करना चाहिए। मेरा आदर्श तो यह है कि प्रत्येक कार्यकर्त्ता को अपनी जीविका उसी क्षेत्र से, जिसकी सेवा वह करता है, प्राप्त करनी चाहिए और इसमे गौरव का वोध करना चाहिए। प्रत्येक श्रमिक अपनी मजदूरी के योग्य होता है।

शेप रफ़ी से।

आशा है, मा और कमला, दोनो, पहिले से अच्छी हैं। समय पर तुम मुझे वताना कि डा० विधान राय क्या कहते हैं।

प्रेम

वापू

२८-९-३३

निजी पत्रो के वारे मे मुझे कुछ कहने की जरूरत नही है। आशा करता हू, उनके साथ मेरे दो पत्र भी तुम्हें मिल गये होंगे।

—अंग्रेजी। वर्धा, २८।९।१९३३। नेहरू संग्रहालय में सुरक्षित पत्रावली से।]
सौजन्य : श्रीमती इन्दिरा गाधी तथा नेहरू संग्रहालय।

३१४. पत्र : जवाहरलाल नेहरू को

वर्धा

७-१०-३३

मेरे प्रिय जवाहरलाल,

मुझे तुम्हारे दो पत्र मिले हैं। पहिले का उत्तर देने की जरूरत नही है।

मैं देखता हू कि कृष्णा का विवाह २० वी को हो रहा है। मैं खुश हू कि मुझे इलाहावाद आने की चेप्टा न करनी चाहिए। मेरे लिए यह कही ज्यादा अच्छा है कि मैं तवतक पर्दे मे रहू जवतक कि डाक्टर लोग मुझे विल्कुल स्वस्थ नही घोपित कर देते। साथ मे कृष्णा के लिए पत्र है।

मैं देख रहा हूं कि मां अब भी मुसीबत के बाहर नहीं हैं। हमें आशा करनी चाहिए कि वह विवाह-समारोह में उपस्थित होने योग्य तन्दुरुस्ती हासिल कर लेंगी।

मैंने ड० ह० (डेली हेरल्ड?) के लिए लिखे तुम्हारे लेख को बहुत पसन्द किया। मैं इसे अगाथा[1] के पास भेज रहा हूं कि वह इसका जो उपयोग ठीक समझे करले। वह एक अद्भुत कार्यकर्त्री है। मीरा अपने जेल-सम्बन्धी अनुभवों के नोट की सब बात भूल गई थी। अब उसका मस्विदा तैयार हो गया है। वह एण्डरूज को देने के लिए तथा उनका और भी जो उपयोग तुम करना चाहो, उसके लिए तुम्हारे पास भेजा जायगा।

मैं सोच रहा हूं कि कार्यकर्त्ताओं के लिए क्या किया जा सकता है।

यह जो मैं टण्डन[2] के मतभेदों के बारे में पढ़ता हूं, वह क्या बात है? क्या तुमने वह अनुच्छेद देखा है?

प्रेम

बापू

—अंग्रेजी। वर्धा, ७।१०।१९३३। नेहरू संग्रहालय में सुरक्षित पत्रावली से।]
सौजन्य : श्रीमती इन्दिरा गांधी तथा नेहरू संग्रहालय।

३१५. पत्र : जवाहरलाल नेहरू को

मेरे प्रिय जवाहरलाल,

मुझे तुम्हारा तार मिला था, जिसका जवाब मैंने तीसरे पहर भेज दिया। मैं आशा करता हूं कि मां इतनी सबल हो जायंगी कि विवाह (समारोह) में उपस्थित रह सकें।

आज मुझे संलग्न (पत्र) सरला देवी से मिला है। मैंने उन्हें कह दिया है कि इन्दु जैसा भी चुनाव करना चाहे, करने के लिए स्वतन्त्र है, और जान नहीं पड़ता कि वह विवाह के किसी प्रस्ताव पर विचार करेगी, क्योंकि अभी पढ़ ही रही है। मैंने उनसे यह भी कह दिया है कि मैं पत्र तुम्हारे पास अग्रसर कर रहा हूं। यदि इन्दु विवाह-प्रस्ताव पर विचार करने को तैयार हो तो मैं समझता हूं कि दीपक एक अच्छा वर है।

---

१. अगाथा हेरिसन : ब्रिटेन की एक समाज-सेविका।
२. स्व० पुरुषोत्तमदास टण्डन।

हार्डीकर[1] तथा कमला चट्टोपाध्याय आज आये है। हार्डीकर भगन्दर से पीड़ित हैं और उनको आपरेशन की जरूरत पडेगी। ज्यादा मुझे कल मालूम होगा। जमनालाल जी एक मित्र की, जो आर्थिक सकट मे हैं, मदद करने बम्बई गये है। वह चार दिनो मे लौटेंगे।

यदि सब कुछ ठीक रहा तो मेरा दौरा ८ नवम्बर को शुरू हो रहा है। मैं खूब विश्राम ले रहा हू।

आजकल कमला कभी (पत्र) नही लिखती।

वर्धा
९-१०-३३

प्रेम
बापू

—अंग्रेजी। वर्धा, ९।१०।१९३३। नेहरू संग्रहालय मे सुरक्षित पत्रावली से।]
सौजन्य : श्रीमती इन्दिरा गाधी तथा नेहरू संग्रहालय।

३१६. तार : जवाहरलाल नेहरू को

वर्धा
९-१०-३३

जवाहरलाल नेहरू
आनन्द भवन, इलाहाबाद।

ईश्वर का धन्यवाद। आशा है, मा आगामी विवाह (सस्कार) मे उपस्थित रहने के लिए काफी अच्छी और खूब स्वस्थ होगी।

बापू

—अंग्रेजी। वर्धा, ९।१०।१९३३। नेहरू सग्रहालय मे सुरक्षित पत्रावली से।]
सौजन्य : श्रीमती इन्दिरा गाधी तथा नेहरू सग्रहालय।

३१७. पत्र : जवाहरलाल नेहरू को

सत्याग्रह आश्रम, वर्धा
अक्तूबर १५, १९३३

मेरे प्रिय जवाहरलाल,

मुझे तुम्हारा पत्र, जिसके साथ तुमने मदुरा के कृष्णमूर्ति को लिखे अपने पत्र की प्रतिलिपि भेजी है, मिल गया।

---

१. श्री एन० एस० हार्डिकर जो काग्रेस-सेवा दल के प्रधान थे।

यह रही हेलस को लिखे मेरे उस पत्र की एक प्रतिलिपि, जो उनके पत्र के उत्तर में मैंने लिखा है। उनका पत्र तुमने अखबारों में देखा होगा। मालवीयजी को लिखे पत्र की प्रतिलिपि भी नत्थी है। यह खुद ही अपनी बात कहता है।

परिणय के लिए मेरी समस्त शुभ कामनाएं। उस दिन मैं भावना में तुम्हारे साथ रहूंगा।

प्रेम
बापू

श्री जवाहरलाल नेहरू,
आनन्द भवन, इलाहाबाद।

—अंग्रेजी। वर्धा, १५।१०।१९३३। नेहरू संग्रहालय में सुरक्षित पत्रावली से।]
सौजन्य : श्रीमती इन्दिरा गांधी तथा नेहरू संग्रहालय।

३१८. पत्र : मालवीयजी को

सत्याग्रह आश्रम
वर्धा, अक्तूबर १५, १९३३

चूंकि, जो भी शक्ति मैं फिर से प्राप्त कर सका हूं, वह सब हाथ में लिये हुए तुरन्त के कामों में लग जाती रही है, मैं आपको लिख नही पाया हूं। मेरे पास कोई नई बात कहने के लिए नही थी, और मैं जानता था कि मै जो भी कार्रवाई करूंगा उसके बारे में आपको गलतफहमी नहीं होगी। इसीलिए मैने अपनी सफाई नही भेजी, क्योंकि मुझे विश्वास था कि यदि मेरे किये किसी काम में स्पष्टीकरण की जरूरत होगी तो आप उसको मुझसे तलब करने में कोई आनाकानी नही करेंगे।

मैं आपके स्वास्थ्य, वल्कि स्वास्थ्य के अभाव, के विषय में सूचना प्राप्त करता रहा हूं, और मैंने बहुत दिन पहिले समझ लिया था कि आप यह या वह परिवर्तन करें, इसके बारे में आपसे कुछ कहना ही व्यर्थ है। इस बात मे, जैसा कि दूसरे विषयों में भी है, आप स्वयं ही अपने नियम है। इसलिए मैं इतनी प्रार्थना से ही सन्तोष कर लेता हूं कि जिस ईश्वर ने, इतने लम्बे वर्षों तक आपकी सार-संभाल रखी है, और जिसने आपको ऐसी ऊर्जा से सुशोभित किया है, जिस पर भारत के युवक ईर्ष्या कर सकते हैं, आगे भी, जबतक उसे आपकी सेवा की आवश्यकता होगी, आपकी सार-संभाल करता रहेगा।

यह पत्र मैं आपके सबसे ताज़े वक्तव्य के सन्दर्भ मे लिख रहा हू। मेरा अपना खयाल है कि यदि भारतीय काग्रेस कमेटी की बैठक होती है तो वह अत्यधिक बहुमत से सविनय प्रतिरोध आन्दोलन को जारी रखने का प्रस्ताव पास करेगी। मेरा ऐसा विश्वास होने के कारण ऐसी मजूरी के लिए बैठक बुलाने की कोई आवश्यकता मैं नही समझता, क्योकि मजूरी से सविनय प्रतिरोध की गति नहीं बढ जायगी। उसे तो अपनी ही प्राकृतिक गति से चलना होगा। किन्तु, यदि आपका विश्वास हो कि अखिल भारतीय काग्रेस समिति एक नया कार्यक्रम स्वीकार करेगी और सविनय प्रतिरोध का त्याग कर देगी तो इसके लिए किसी भी प्रकार का कोई ऐसा कारण नही कि आप बैठक के लिए अधियाचना के पक्ष मे क्रियात्मक रूप से 'कन्वेसिंग' न करें। ऐसी अधियाचना प्राप्त होने पर जवाहरलाल बैठक बुलाने के लिए बाध्य हैं। मैं यह निवेदन करने का भी साहस करूगा कि यदि आप ऐसी अधियाचना को आगे बढाते हैं तो अधियाचकों से सलाह करके आप कोई निश्चित नीति और कार्यक्रम भी निर्मित करें जिसे आप अविचल रूप से कार्यान्वित करने को तैयार हो। यदि ऐसा नहीं किया जाता और सिर्फ अधियाचना ही भेजी जाती है तो बैठक का अन्त केवल निरर्थक चर्चा और अविचारपूर्ण प्रस्तावो मे होकर रह जायगा। यद्यपि मैं ऐसी किसी बैठक मे प्रसन्नतापूर्वक भाग लूगा और अपनी बात भी कहूगा, किन्तु मैं ऐसी किसी बैठक मे भाग लेने के लिए उत्सुक नही हू और यदि आप या जिम्मेदार सदस्यो का कोई समूह उच्च उद्देश्य से, चाहेगा कि मैं अनुपस्थित रहू तो मैं खुशी के साथ उसमे भाग लेने से विरत रहूगा।

पण्डित मदनमोहन मालवीय

मसूरी।

—अंग्रेजी। वर्धा, १५।१०।१९३३। नेहरू संग्रहालय मे सुरक्षित पत्रावली से।]

सौजन्य : नेहरू सग्रहालय।

३१९. पत्र : जवाहरलाल नेहरू को

सत्याग्रह आश्रम
वर्धा, अक्तूबर १६, १९३३

मेरे प्रिय जवाहरलाल,

यह रहा जमनालाल जी का त्यागपत्र। यदि तुम सोचते हो कि इसे नहीं भेजा

जाना चाहिए और इससे उलझन पैदा होगी तो तुम इस पर कोई कार्रवाई न करना। उस हालत में, विवाह की तैयारियों से छुट्टी पाने के बाद तुम इसे अपने कारण लिखकर लौटा सकते हो। किन्तु यदि तुम समझते हो कि त्यागपत्र स्वीकार किया जा सकता है, तो तुम इसे तुरन्त प्रकाशित कर सकते हो। मैं जानता हूं कि कोषाध्यक्ष केवल अखिल भारतीय कांग्रेस समिति-द्वारा ही नियुक्त किया जा सकता है। इसलिए फिलहाल कोषाध्यक्षता जमनालाल जी के हाथों में बनी रह सकती है। मुख्य बात तो यह है कि वह कार्यसमिति के सदस्य नहीं रह जाते। मेरी समझ में यह क़दम बुद्धिमत्तापूर्ण और आवश्यक है। जिस हालत में वह है, उनके लिए इस समय जेल जाना—मतलब विशेषज्ञ जिस विश्राम की आवश्यकता समझता है उसे लिये बिना जाना—खतरा मोल लेना है। किन्तु सामान्यतः सैनिक उस सीमा तक अपने स्वास्थ्य की पर्वा नहीं कर सकते जिस सीमा तक जमनालाल जी के स्वभाव की माग है और चूंकि वह सविनय प्रतिरोध के कर्त्तव्य के विषय में वही दृष्टि रखते हैं जो मैं रखता हूं, कांग्रेस संगठन में एक जिम्मेदारी के पद पर रहते हुए उन्हें बेचैनी होती है।

मैंने तुम पर अपनी वह तर्कना प्रकट कर दी है जिसके कारण जमनालाल जी के त्यागपत्र देने के प्रस्ताव पर स्वीकृति देने का निर्णय मुझे करना पड़ा।

तुम्हारा
बापू

श्री ज० ला० नेहरू,
इलाहाबाद।

—अंग्रेजी। वर्धा, १६।१०।१९३३। नेहरू संग्रहालय में सुरक्षित पत्रावली से।]
सौजन्य : श्रीमती इन्दिरा गांधी तथा नेहरू संग्रहालय।

३२०. पत्र : जवाहरलाल नेहरू को

[जवाहरलाल की छोटी बहिन कृष्णा का विवाह राजा हथीसिंह से होने के अवसर पर लिखा गया पत्र। —सम्पा०]

१८ अक्तूबर, १९३३

प्रिय जवाहरलाल,

साथ में दो मालाएं है। ये वर-वधू के लिए आज मेरे विशेष रूप से काते हुए सूत से बनाई गई हैं। इनके साथ मेरे शुभ आशीर्वाद जुड़े हुए है। मेरी

ओर से उनके गले मे डाल देना। आशा है, ये तुम्हारे पास समय पर पहुंच जायंगी।

मुझे इस वात का अवश्य दु.ख है कि श्रीमती हथीसिंह ने इस सस्कार के विरुद्ध राय दी है, परन्तु मेरा खयाल है कि इन मामलो मे मैं पिछडा हुआ हू। दीपक के वारे मे मैंने तुम्हारा कहना समझ लिया। मैं सरला देवी को जितने कोमल ढग से लिख सकता हू, लिखूगा।

तुम सवको प्यार।

वापू

जव सव काम निपट जाय तव मैं चाहता हू कि तुम मुझे तार से वताओ कि माताजी ने यह सव श्रम सहन कर लिया है।

—अंग्रेजी। १८।१०।१९३३। 'ए वंच आफ ओल्ड लेटर्स' से।]
सौजन्य : श्रीमती इन्दिरा गाधी

३२१. पत्र : कमला नेहरू को

चि० कमला,

तुमने मेरा त्याग ही कर दिया ? एक भी खत नहिं. ऐसा भी नहिं है कि लिख नहिं सकती, क्योंकि जवाहरलाल लिखता है वेटी के लिये खर्च करने मे तो धूम मचा रही थी एक ओर तुम, दूसरी ओर सरूप, वीच मे पैसे की थैली पीछे पूछना क्या था ? और अखवारनवीस लिखता है लग्न वहुत सादा था हा सादा तो था लेकिन पूजीवालो की दृष्टि से, मिस्कीनो की दृष्टि से नहिं। ।

अव तो लग्न खतम हुआ कुछ लिखने का समय मिल सकता है ?

वापु के
आशीर्वाद

२३-१०-३३

—हिन्दी। वर्धा, २३।१०।१९३३। गाधी जी के स्वलिखित पत्र की प्रतिलिपि।
प्रधान सम्पादक के निजी संकलन से]

३२२. पत्र : रानी विद्यावती को

चि० विद्या०,

क्या तुमको मेरे खत मिले ही नहिं हैं ? तुम्हारा खत आज मिला, उसमे कुछ

उल्लेख नहि है. दर्द होते हुए भी हरदोई क्यों गई. सेवा का भी मोह हो सकता है, मोह मात्र छोड़ने से ही सच्ची सेवा हो सकती है. क्या अपंग भक्ति नहि कर सकते हैं? मन से भी सेवा हो सकती है. एक-दो हरिजन वालकों को घर में रखो और पालो. लक्ष्मी तो कुछ लिखती ही नहि. यह कैसे?' उनसे लिखो मुझे एक कार्ड देगी तो संतोष होगा. 'हरिजन-सेवक' मिलता है ना?

२३-१०-३३ वापु के
आशीर्वाद

रानी विद्यावती
बिरुआगढ़ी, हरदोई जिला (यू० पी०)

—हिन्दी। वर्धा, २३।१०।१९३३। गांधी जी के स्वलिखित पत्र की प्रधान-सम्पादक द्वारा की हुई अपनी प्रतिलिपि से।]

- सेवा का भी मोह हो सकता है; मोह-मात्र छोड़ने से ही सच्ची सेवा हो सकती है।

३२३. पत्र : जवाहरलाल नेहरू को

मेरे प्रिय जवाहरलाल,

मुझे दो पत्र मिले थे, एक तुम्हारे यहां से और दूसरा कृष्णा तथा राजा[1] से। ईश्वर का धन्यवाद है. मां की वहादुरी मेरी पूजा की पात्री है। जव से मेरी उनकी भेंट हुई तभी से मैंने शान्त, गरिमामय शौर्य एवं वलिदान की मूर्ति के रूप में उनकी कल्पना कर रखी है।

एक बात मैं तुम्हे लिखने को भूल जाता रहा हूं। यदि तुम कभी महसूस करो कि तुम अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटी की वैठक वुलाना चाहते हो तो तुम उसे वुलाने में आनाकानी न करना। तुम्हें मेरी अरुचि का विचार करने की जरूरत नही है। मेरी अरुचि तो इस कारण है कि मैं समझता हूं, इससे भ्रान्ति और भी जटिल हो जायगी तथा उसका मतलव होगा—शक्ति, समय और धन का अपव्यय। किन्तु मैं विल्कुल ग़लत हो सकता हूं।

तुम सवको प्यार।

२३-१०-३३ वर्धा
वापू

—अंग्रेजी। वर्धा, २३।१०।१९३३। नेहरू संग्रहालय में सुरक्षित पत्रावली से।] सौजन्य : श्रीमती इन्दिरा गांधी तथा नेहरू संग्रहालय।

---

१. राजा हथीसिंह, कृष्णा (जवाहरलालजी की बहिन) के पति।

३२४. पत्र : जवाहरलाल नेहरू को

मेरे प्रिय जवाहरलाल,

इसके साथ है डा० आलम[1] का त्यागपत्र। मैंने उनसे कह दिया है कि इसे तुम्हारे पास भेजा जाता चाहिए था। मैं इसे स्वीकार कर लेने की सलाह देता हू। इसका उदय तीखी शिकायत के एक पत्र से हुआ है जो उनके विरुद्ध लाहौर से मिला था। मैंने उनको उसकी एक नकल भेज दी थी। उसमे लगाये गये आरोपो मे से कुछ को उन्होंने जोरो के साथ अस्वीकार किया, किन्तु प्रैक्टिस के वारे मे एक (आरोप) को मजूर किया।

जमनालाल जी अपने त्यागपत्र के वारे मे चिन्तित हैं। मेरी अपनी राय यह है कि उनका (त्यागपत्र) भी स्वीकार कर लिया जाना चाहिए। वह जेल जाने को उत्सुक हैं, किन्तु यह वात उन्हे खलती है कि वह तुरन्त नही जा रहे हैं।

मेरा अनुमान है कि कृष्णा अव वम्वई मे है।

आजकल मैं अखवारो मे मा के विपय मे कुछ नही देख रहा हू। क्या वह पहिले से अच्छी हैं?

विट्ठल भाई की मृत्यु की तो मुझे पूरी उम्मीद थी किन्तु वास्तविक घटना, मुझे अशान्त करती है। उनके विरोध की ही तो मैं कद्र करता था। वह मेरे दिमाग को स्पष्ट करता था और मुझे मौका देता था कि देश के सामने अपनी स्थिति को उससे ज्यादा साफ तौर पर रक्खू, जितनी कि मैं दूसरी हालत मे रखता।

प्यार
वापू

२६-१०-३३

—अंग्रेजी। वर्धा, २६।१०।१९३३। नेहरू संग्रहालय में सुरक्षित पत्रावली से।]
सौजन्य : श्रीमती इन्दिरा गाधी तथा नेहरू संग्रहालय।

---

१. डा० मुहम्मद आलम लाहौर के प्रसिद्ध कांग्रेस नेता।

३२५. तार : अद्वैतकुमार को

वर्धा, २८-१०-३३

अद्वैतकुमार रावारमन
मुंडेरी, वृन्दावन

यदि वह चाहे तो तुम नागिनी[1] देवी को आश्रय दे सकते हो।

गांधी

—अंग्रेजी। वर्धा, २८।१०।१९३३। जी० एन० ८०६ की फोटो-नकल से।]

३२६. पत्र : जवाहरलाल नेहरू को

सत्याग्रह आश्रम
वर्धा, अक्तूबर, ३०, १९३३

मेरे प्रिय जवाहरलाल,

मुझे अस्पताल के विषय में तुम्हारा पत्र मिला है। विना प्रतिवाद की आशंका के तुम में यह कहने की सामर्थ्य होनी चाहिए कि स्वराज्य भवन औपधालय पूरी तौर पर एक धोखा है और उसका पूर्ण वहिष्कार किया जाना चाहिए। पूर्ण प्रमाण के विना मुझे यह विश्वास करने का जी नहीं करता कि वे नकली मामले वनाते हैं। यह प्रमाण पाने को मैं उत्सुक हूं, क्योंकि कांग्रेस अस्पताल के विपय में अपनी राय वनाने के लिए यह आवश्यक है; मैं यह महसूस करता हूं कि यदि सरकारी प्रवन्ध निष्फल सावित हुआ है तो विशुद्ध अस्पताली काम के लिए स्वराज-भवन पर हम कब्जा कर सकेंगे। अगर तुम समझते हो कि कांग्रेस अस्पताल या औषधालय उसी स्थान पर चलाना चाहिए, जहां कि इस समय वह चलाया जा रहा है और स्वराज्य भवन को फिर से कब्जे में लेने के लिए कोई यत्न नही करना चाहिए, तव अपील आवश्यक हो जाती है, और वह मोहनलाल नेहरू तथा कमला के नाम पर प्रकाशित होनी चाहिए।

मुझे खुशी है कि मां की हालत वरावर सुधर रही है। उनमें जो मानसिक तनाव था वह निश्चय ही विवाहोत्सव की सफल समाप्ति से कम हुआ जान पड़ता है।

एण्डरूज के यहां वुधवार को आने की उम्मीद है।

---

१. नीला नागिनी नामक विदेशी महिला, जो कुछ समय आश्रम में रही थी।

तुम जमनालाल जी के विषय मे जो कुछ कहते हो, उसे मैं समझता हू। तुम्हारी राय मे उसे कब सुरक्षित रूप से घोषित किया जा सकता है?

ठक्कर बापा ने यह कहते हुए पत्र लिखा है कि तुमने कांग्रेसियो को हरिजन कार्य करने से मना कर दिया है—चाहे वे सविनय प्रतिरोध न कर रहे हो। सत्य क्या है? मैं तो ऐसे किसी प्रतिबन्ध को नही जानता।

तुम्हारा
बापू

श्रीयुक्त जवाहरलाल नेहरू
आनन्द भवन, इलाहाबाद

—अंग्रेजी। वर्धा, ३०।१०।१९३३। नेहरू सग्रहालय मे सुरक्षित पत्रावली से।]
सौजन्य : श्रीमती इन्दिरा गाधी तथा नेहरू सग्रहालय।

३२७. पत्र : जवाहरलाल नेहरू को

फिर से पढ़ा नही है

मेरे प्रिय जवाहरलाल,

तुम्हारे कई पत्र मिले है। मैं देखता हू, तुमने दोनो त्यागपत्र अखबारो मे (प्रकाशनार्थ) दे दिये हैं। उनसे वातावरण कुछ साफ होगा।

मैं हिन्दू सभा की कार्रवाइयो को समझ नही पाता। वे दूषित है। यदि वे शुद्धि के विषय मे मेरे नाम का इस्तेमाल कर रहे हैं तो यह उनकी अशिष्टता है। अगर तुम्हारे पास (ऐसा) कोई साहित्य हो तो कृपया मुझे भेज दो। मैं समझता हू कि तथाकथित या यथार्थ, राष्ट्रीय पत्रो ने उसकी कार्रवाइयो का स्वागत नही किया है, बल्कि अक्सर निन्दा भी की है। मुझे मौ० अ० क० आजाद की किताब पर किसी प्रतिबन्ध का ज्ञान नही है। जहा तक हरिजन कार्यों का सम्बन्ध है, शिकायत पूरी तौर पर नामुनासिब है। मेरा अन्त करण पूर्णत स्वच्छ है। जहा तक तुम्हारा और मेरा सम्बन्ध है, अगर तुम चाहो तो हम चिट्ठियो का विनिमय करके, अपने दिमाग और हाथ साफ कर सकते हैं। मैं नही जानता कि निश्चित कार्यों की अभ्रान्त निन्दा के अलावा कौन-सी आक्रामक कार्रवाई सम्भव या वाञ्छनीय है।

जहा तक गोरखपुर की बात है, मुझे समझ मे नही आता कि क्या किया जा सकता है। मैं दल के लोगो मे काम करनेवाले तुम्हारे कार्यकर्ताओ के लिए ही पैसे

जुटाने में कठिनाई का अनुभव कर रहा हूं। मैं अब भी दोनों के बारे में बात कर रहा हूं। बाबा राघवदास ने मुझसे कहा कि विपत्तिग्रस्त किसानों के लिए अन्न का संग्रह कर रहे हैं। उन्होंने मुझसे वादा कर रखा है कि जुल्म के प्रामाणिक ब्यौरे मुझे भेजेंगे।

कल नरीमन[1] यहां थे। मैंने उन्हें तुमसे मिलने की सलाह दी है और कह दिया है कि तुम मेरे राजनीतिक प्रधान हो। और मैं क्या कर सकता हूं? एक धार्मिक मुक्तिदाता के रूप में मैं पूरी तरह असम्मानित हो चुका हूं। और मैं मुख्यत. एक सामाजिक कार्यकर्त्ता हूं। मैंने उनसे कह दिया है कि यदि मुझे यह विश्वास हो जाय कि भारतीय कांग्रेस कमेटी के सदस्य स० अ० (सविनय अवज्ञा) आन्दोलन बन्द करना और कौंसिल प्रवेश कार्यक्रम पसन्द करते हैं, तो मैं तुरन्त तुम्हें अ० भा० का० क० की बैठक बुलाने के लिए कहूंगा। मेरा विश्वास है कि बहुमत स० अ० (सविनय अवज्ञा) कार्यक्रम पर जोर देगा और मैं नहीं चाहता कि इसके लिए अध्यादेशों को जारी करने का निमन्त्रण मैं दूं। मैंने उनसे कह दिया है कि अ० भा० कां० क० जो भी कार्यक्रम चाहे उसका प्रतिरोध मैं नहीं करूंगा, यद्यपि मैं स० अ० (सविनय अवज्ञा) के स्थगित किये जाने के लिए अपनी मंजूरी नहीं दे सकता। मैं केलकर के आचरण को ईमानदारी का और संगत मानता हूं। वह स्पष्ट रूप से असहयोग और स० अ० (सविनय अवज्ञा) को नापसन्द करते हैं। वह आतंकवादियों, या उन्हें जो भी नाम दिया जाय, का साथ नहीं देंगे। वैसी हालत में राजनीतिक कार्य करनेवाले आदमी के लिए कौंसिल-प्रवेश ही एक मात्र कार्य-क्रम रह जाता है। निराशापूर्ण निष्क्रियता सबसे बुरी चीज़ है और उसका अनुमोदन नहीं होना चाहिए।

मैं समझता हूं कि तुम्हारे पत्र में उठाई गई और न उठाई गई भी सब बातों का जवाब मैंने दे दिया है। अब प्रातः ४ बजनेवाले हैं।

आशा करता हूं, मां की प्रगति जारी है।

कमला के लिए एक रुक्का संलग्न है।

प्रेम

पहली नवम्बर, १९३३ बापू

वर्धा

—अंग्रेजी। वर्धा, १।११।१९३३। नेहरू संग्रहालय में सुरक्षित पत्रावली से।]
सौजन्य : श्रीमती इन्दिरा गांधी तथा नेहरू संग्रहालय।

---

१. के० एफ० नरीमन, बम्बई के एक राष्ट्रीय नेता।

३२८. पत्र : जवाहरलाल नेहरू को

सत्याग्रह आश्रम
वर्धा, नव० ३, १९३३

मेरे प्रिय जवाहरलाल,

सीमाप्रान्त वाली टिप्पणी मे जिन अत्याचारो का जिक्र किया गया है, उनके विषय मे मेरी अपनी राय तो यह है कि पहिले उनके लिए व्यक्तिगत रूप से प्रयत्न किया जाना चाहिए और इससे कम निर्दय उपाय ग्रहण करने के लिए अधिकारियों को तैयार करने मे हम जो भी साधन इस्तेमाल कर सकें, उनसे काम लेना चाहिए। मैं एण्डरूज से कह रहा हू कि वह सीमाप्रान्त वाली टिप्पणी का मामला अपने हाथ मे लें। और यदि तुम्हे कोई आपत्ति न हो तो मैं चाहूगा कि तुम वह टिप्पणी सर तेजबहादुर को भी दिखा दो, और देखो कि उसके बारे मे उनके पास कहने के लिए क्या है—यह भी कि क्या वह इस विषय मे कुछ करने की इच्छा रखते हैं।

हिजली मे जो कुछ हो रहा है, उसके बारे मे मैंने बगाल के गवर्नर को जो पत्र लिखा है उसकी एक प्रति इसके साथ सलग्न कर रहा हू।

प्रेम
बापू

श्रीयुत ज० लाल० नेहरू
आनन्द-भवन, इलाहाबाद

—अंग्रेजी। वर्धा, ३।११।१९३३। नेहरू सग्रहालय मे सुरक्षित पत्रावली से।]
सौजन्य : श्रीमती इन्दिरा गाधी तथा नेहरू संग्रहालय।

३२९. पत्र : जवाहरलाल नेहरू को

वर्धा, नव० ११, १९३३

मेरे प्रिय जवाहरलाल,

मैं अभी एक भारी दौरे के कार्यक्रम से लौटा हू और तुम्हारा पत्र पढने के बाद यह तार दिया है

"दो दिन देने में असमर्थ। किसी भी सोमवार के तीसरे पहर तीन घण्टे दे सकता हू। सत्ताईसवीं को रायपुर (मे), चौथी दिसम्बर जबलपुर।"

एक दिन से ज्यादा और तीन घण्टे से ज्यादा देना असम्भव है। कार्यक्रम इतना भरा हुआ है कि विश्राम के लिए भी शायद ही समय मिल पाता है। विश्राम, स्नान और भोजन के चार घण्टे घटकर अब दो ही रह गये हैं। एक कार्यक्रम जिससे

दसियों हजार आदमियों का सम्बन्ध है, आसानी से स्थगित या परिवर्तित नहीं किया जा सकता। संलग्न प्रति से तुम काम की कुछ कल्पना कर सकोगे, और जहां विश्राम के घण्टों का जिक्र है, वे गुरुवार की दोपहर के अतिरिक्त और दिन १० से ७ की जगह, समय पर अनधिकृत कब्जे के कारण, १२ बजे से २ बजे दिन तक ही रह गये हैं।

मैं तुम से पूरी तरह सहमत हूं कि प्रस्तावित वार्ता से, मामलों की किसी सन्तोषजनक सीमा तक, सफाई नहीं हो पायेगी। यदि अ० भा० का० क० की बैठक होती है, तो मैं नहीं जानता कि मैं बैठकों में कैसे उपस्थित हो सकूंगा। क्या यह मेरे लिए ज्यादा अच्छा न होगा कि मैं अनुपस्थित ही रहूं? यदि यह वाञ्छनीय है तो मैं अपने विचार लिखकर भेज दूंगा। जो राय मैंने तुमको लिखे अपने पिछले पत्र में व्यक्त की है, वह अधिकाधिक पक्की होती जा रही है।

तुमने हिजली जेल के बारे में लाहिड़ी का वक्तव्य जरूर ही देखा होगा। उससे सतीश बाबू के पत्र की जरूरत से ज्यादा पुष्टि होती है। मुझे गवर्नर का पत्र भी मिला है। उनके सचिव ने लिखा है कि "महामहिम उस मामले को, जिसके बारे में आपने लिखा है, देखेंगे।"

मैंने अस्पताल वाली अपील पढ़ी है। मुझे आशा है कि लोग इसका इसके योग्य उत्तर देंगे।

सरकारी मॉग के विषय में तुम्हारा पत्र मैंने ध्यान से पढ़ा है। तुम स्वराज भवन के बारे में जो कुछ करो, क्या तुम यह नहीं सोचते कि तुम्हें न्यासियों (ट्रस्टियों) से सलाह लेनी चाहिए, नकि उन्हें केवल सूचना देनी चाहिए? मैं निपट समयाभाव के कारण तुम्हारा पत्र जमनालाल जी तक को दिखा नहीं पाया हूं। वह मुझे लिखकर कहते हैं कि चूंकि मैं वर्धा में हूं, तुम उनकी पूर्णतः उपेक्षा कर रहे हो—यहां तक कि उनके पत्रों की प्राप्ति की सूचना भी नहीं देते। मैंने उनसे कह दिया है कि मुझको लिखे हुए तुम्हारे पत्र जैसे मेरे लिए हैं वैसे ही उनके लिए भी हैं, और हम में से थोड़े से जो लोग बाहर है, उनके पास केवल शिष्टाचार के कामों के लिए मुश्किल से समय है।

मां-जैसी एक वृद्ध मरीजा के लिए तेजी से सुधार की आशा तुम नहीं कर सकते। मेरे लिए तो आश्चर्य यही है कि उनपर जो आक्रमण हुआ था, उसे वह झेल कैसे गईं। मुझे आशा है, सुधार धीमा होते हुए भी बराबर जारी है।

श्रीयुत ज० ला० नेहरू — प्रेम

आनन्द भवन, इलाहाबाद — बापू

— अंग्रेजी। वर्धा, ११।११।१९३३। नेहरू संग्रहालय में सुरक्षित पत्रावली से।]

सौजन्य : श्रीमती इन्दिरा गांधी तथा नेहरू संग्रहालय।

३३०. पत्र : जवाहरलाल नेहरू को

१३-११-३३

दोहराया नही गया

मेरे प्रिय जवाहरलाल,

मैं अभी-अभी चादा[1] पहुचा हूं, और जबतक और लोग आते हैं, तबतक मैंने तुम्हारा पत्र हाथ मे लिया है। इस समय रात को नौ बज गये है। कार्यक्रम बडा श्रमसाध्य है। ६ बजे शाम मैं हींगनघाट मे था।

तिवारी ने मुझे तुम्हारा पत्र दिया। मैंने ज०[2] के नाम भी तुम्हारा (पत्र) पढा है। जहा तक उनको पता है, भारतीय काग्रेस कमेटी के हिसाब मे अब बहुत ही कम बच गया है। बहियां उनके पास नही हैं। उन्होने हिसाब मगाया है। इस बीच मैंने सुझाव दिया है कि हिसाब मे से कम-से-कम ५०० रुपये भेजे जा सकते हैं। यदि कोष रिक्त हो गया है तो मेरी समझ मे नही आता कि क्या किया जाय। मेरे पास एक नामाकित हिसाब है, मैं उसमे से रुपया निकालने को नापसन्द करता हू। मैं उसमें से हर्डीकर के लिए खर्च कर रहा हू और तुमने मेरे पास कार्यकर्त्ताओ की जो सूची भेजी है उनके लिए भी वैसा ही करना चाहता हूं। वह भी शीघ्र ही खतम हो जायगा। ऐसी परिस्थिति मे कार्यालय की कर्मचारी-मण्डली को यदि पूर्णतः खतम नही तो कम तो किया ही जा सकता है—मतलब उस हालत मे, जब सविनय प्रतिरोध आन्दोलन को जारी रखना है। मैं अपने चतुर्दिक जितना ही देखता हू, उतना ही ज्यादा मुझे इसका निश्चय होता जाता है कि जो लडाई मे हैं उन्हे बिना पैसो के काम चलाना होगा—सिवाय इस अपवाद के कि मेरे जैसे कुछ लोगो के हाथो मे कुछ पैसा रह जाय। मैंने कभी-कभी गुजरात और कर्नाटक की व्यवस्था की है। जिस महिला को ५०००० रुपये देना था, उसने अभी सन्देश भेजा है कि वह तुम्हे १०००० रुपये देना चाहती है। यदि वह देती है तो मैं तुमसे यह अपेक्षा रखूंगा कि तुम उसमे से उत्तर प्रदेश के कार्यकर्त्ताओ को दे दो। कुछ भी हो, तुम्हारे लिए सबसे अच्छा यह होगा कि जो कोष अब भी प्राप्य हैं उनके बारे मे जमनालाल जी से, और जरूरी समझो तो मुझसे भी, सलाह कर लो। मैंने सब जगह सूचना भेज दी है कि मुझसे अब और सहायता पाने की आशा न की जाय। जो कुछ मेरे पास (बच गया) है उसी से काम चलाने का मैं यत्न कर रहा हूं।

---

१. पुराने मध्यप्रान्त (अब महाराष्ट्र) का एक नगर।

२. जमनालाल जी से आशय है।

अब अनौपचारिक बैठक की बात लो। जो कार्यक्रम संलग्न है, उससे तुम देख सकते हो कि १० से १४ दिसम्बर के बीच में दिल्ली रहूंगा। ठक्कर बापा[1] कह रहे हैं कि अपनी बैठक के लिए १४ का अधिकांश मैं ले सकता हूं। १४ को ही ४ बजे दिन के बाद तुरन्त मुझसे आन्ध्र की ट्रेन पकड़ने की आशा की जाती है। अंसारी[2] ने, जो मेरे पास रविवार को मौजूद थे, दिल्ली का सुझाव दिया। यदि परामर्श-सम्मेलन को होना ही है तो तुम २७ (नवम्बर), ४ दिसम्बर और १४ दिसम्बर में से अपना चुनाव कर सकते हो।

जहां तक हरिजन-प्रवास का सम्बन्ध है, मैं उत्तर प्रदेश में प्रस्तावित बहिष्कार से बिल्कुल चिन्तित नहीं हूं। मुझे यहां कोई कठिनाई महसूस नहीं हो रही है। कांग्रेसी और गैर-कांग्रेसी प्रवास की व्यवस्था करने में सहयोग दे रहे हैं। तुम उदारदल वालों पर, जिन्हें मैं गैर-कांग्रेसियों में शामिल करूंगा, अनावश्यक रूप से कठोर हो। हमें तो उनसे भी काम लेना है। वे अपने विवेक के अनुसार काम करते हैं। किसी भी हालत में मैं ऐसे एक भी कांग्रेसी से, जो जेल जानेवाला हो, इस आन्दोलन में काम नहीं लेना चाहता। मेरे पास जो कोई आया है, उससे मैंने यही बात कही है। कुछ सर्वोत्तम कार्यकर्ताओं को, जो अभी-अभी बाहर आये हैं, मैं पुनः (जेल) भेज रहा हूं। मुझे आशा है, बा भी शीघ्र ही जा रही हैं, मणिबहन[3] पटेल भी वैसा ही करेगी। काका साहब,[4] स्वामी,[5] सुरेन्द्र[6] जा रहे हैं। जो कांग्रेसी जाने के लिए बहुत दुर्बल हैं अथवा जिनका विश्वास स० अ० (सविनय अवज्ञा) से उठ गया है, और जो हरिजनों के लिए काम करने को उत्सुक हैं, उन्हें ही मैं ले रहा हूं, किन्तु उन्हें नहीं, जो हरिजन कार्य को सिर्फ़ एक आड़ बनाना चाहते हैं। इस आन्दोलन को, यदि इसे सार्वदेशिक बनना है तो तब भी चलना ही चाहिए जब हर एक कांग्रेसी जेल चला जाय, या फिर इसे नष्ट हो जाना चाहिए। मैं यह भी महसूस करता हूं कि कांग्रेसियों को इस आन्दोलन का उपयोग सविनय अवज्ञा

---

१. स्व० अमृतलाल ठक्कर, हरिजनों एवं दलित वर्गों के परम बन्धु। उस समय हरिजन-सेवक-संघ के प्रधान मन्त्री।

२. डा० अंसारी, दिल्ली के प्रमुख चिकित्सक तथा कांग्रेसी नेता।

३. वल्लभभाई पटेल की पुत्री।

४. आचार्य दत्तात्रेय विष्णु कालेलकर, प्रमुख गांधीवादी, शिक्षण-शास्त्री, साहित्यकार और विचारक।

५. स्वामी आनन्द, नवजीवन और यं० इं० के मुद्रक-प्रकाशक, साधक।

६. प्रमुख आश्रमवासी।

आन्दोलन या जनता पर काग्रेस के अधिकार को दृढ करने मे नही करना चाहिए। यह इसे गलत दिशा मे ले जाना होगा। ऐसा रुख काग्रेस और हरिजन कार्य दोनो को हानि पहुँचायेगा। ऐसे मामले हमारी नजर मे आ चुके हैं। मैने ऐसे किसी काम के प्रति अपनी प्रबल नापसन्दगी जाहिर की है। मैं समझता हू कि मैंने अब काफी तौर पर तुम्हारे सब सवालो का जवाब दे दिया है। यदि ऐसा नही है तो कृपया पूछना।

तुमने ध्यान दिया होगा कि हिजली मे "सरकार सलाम" बन्द हो गया है। क्या सीमाप्रान्त के व्यवहार के बारे मे मैं सर तेज को लिखू ?

मुझे कृष्णा का एक सुन्दर पत्र मिला था। वह अपने नये घर मे सुखी जान पड़ती है।

मैं आशा करता हू कि मा की प्रगति जारी है।

प्रेम

१३-११-३३, चादा वापू

---अंग्रेजी। चादा, १३।११।१९३३। नेहरू सग्रहालय में सुरक्षित पत्रावली से।]
सौजन्य : श्रीमती इन्दिरा गाधी तथा नेहरू सग्रहालय।

३३१. पत्रांश : रामनरेश त्रिपाठी को

धमतरी
२४-११-३३

दूसरी भाषाओ से शब्द लेकर हिंदी ने कुछ नही गमाया है। हम से बन पड़े तो हम भाषा मे भी छुआछूत कर सकते हैं लेकिन ईश्वर का अनुग्रह है कि हिन्दी अस्पृश्यता के कलक से बच रही है।

बापु के आशीर्वाद

—हिन्दी। धमतरी, २४।११।१९३३। प्रधान सम्पादक-द्वारा सुरक्षित प्रति-लिपि से।]

३३२. पत्र : जवाहरलाल नेहरू को

मेरे प्रिय जवाहरलाल,

यह रहा गोसावी का पत्र। मैं उनको कह (लिख) रहा हू कि मुझे दल के प्रति तबतक कोई आपत्ति नही मालूम पडती जबतक कि उसके काग्रेस दल होने का

दावा नहीं किया जाता, और यह कि हर हालत में उन्हें तुम्हारी सलाह लेनी चाहिए।

मैंने नोट कर लिया है कि हमें ५ दिसम्बर को जबलपुर में मिलना है। यदि किसी तरह भी सम्भव हो सका, तो मैं और ज्यादा समय देने का प्रयत्न करूंगा।

क्या मैंने तुम्हें सी० पी० (मध्य प्रान्त) का कार्यक्रम भेजा नहीं है? उससे ज्यादा अब तक तैयार नहीं था।

तो तुम धीरे-धीरे शेयरों और वैसी चीज़ों के बोझ से मुक्त हो रहे हो। मुझे इसका अफसोस नहीं है। मेरे दृष्टिकोण से तो आदर्श बात यही होगी कि तुम स्वेच्छा से जो कुछ सम्पत्ति तुम्हारे पास है उसे या तो किसी संस्था को दे दो या कुटुम्ब के उन सदस्यों को, जो अपने को इस संग्राम में डालना नहीं चाहते—इस संग्राम में जिसका लम्बे समय तक चलना निश्चित है और जिसके शायद अधिकाधिक कठोर होते जाने की सम्भावना है। अन्तिम मोर्चे पर तो सिर्फ वे ही खड़े हो पायेंगे जिनके पास कोई जायदाद नहीं है और जिनके लिए सिर रखने को कोई जगह नहीं है। किन्तु भविष्य को लेकर चिन्ता करने से कोई लाभ नहीं है। चाहे जो हो, तुम तो अगली पंक्ति में ही पाये जाओगे।

मुझे खुशी है कि मां निरन्तर प्रगति कर रही हैं। पता नहीं, कि जो कुछ घटनाएं घट रही हैं इसकी जानकारी उन्हें है या नहीं।

हां, मैंने हिन्दू सभा पर तुम्हारा आक्रमण पढ़ा था। वह इससे कम कठोर हो सकता था। संक्षेप-सार से तुम एकपक्षीय जैसे बोलते दिखते हो।

प्रेम

२७-११-३३ बापू

तिथियां तुम्हें संलग्न कार्यक्रम में मिल जायंगी।

—अंग्रेजी। २७।११।१९३३। नेहरू संग्रहालय में सुरक्षित पत्रावली से।]
सौजन्य : श्रीमती इन्दिरा गांधी तथा नेहरू संग्रहालय।

३३३. पत्र : जवाहरलाल नेहरू को

मद्रास, २६-१२-३३

मेरे प्रिय जवाहरलाल,

यह है 'म० (मद्रास?) मेल' की एक कतरन। यद्यपि सम्पूर्ण वार्त्तालाप तुम्हारे विचारों के सन्दर्भ में है, स्वभावतः भेंट लेनेवाला उसे (ज्यों-का-त्यों)

प्रकट नही कर सका। मुझे प्रूफ तो दिखाया था। जो कुछ मैंने कहा था उसके सार की यह अच्छी प्रस्तुति है। कृपया इसे ध्यान से पढना और जहा तुम्हें लगे कि मैंने तुम्हारे वारे मे गलती की है वहा मुझे सही करना। हमारे हलके मे भी तुम्हारे वारे मे वहुत काफी गलतफहमी है। किन्तु इससे मुझे परीशानी नही होती।

जहा तक कार्यक्रम निश्चित है (इसके साथ) तुम्हे वह भी मिलेगा।

मुझे आशा है, मा प्रगति पर है।

प्रेम

२६-१२-३३

वापू

— अंग्रेजी। मद्रास, २६।१२।१९३३। नेहरू सग्रहालय मे सुरक्षित पत्रावली से।]
सौजन्य : श्रीमती इन्दिरा गांधी तथा नेहरू सग्रहालय।

३३४. पत्र : जवाहरलाल नेहरू को

मेरे प्रिय जवाहरलाल,

मेरे सामने तुम्हारे तीन पत्र पडे हैं।

जहा तक रुपये की वात है, मैंने समझा था कि अव तक वे तुम्हे मिल चुके होंगे। मैंने आदेश दे दिया था। मैं स्मरणपत्र भेज रहा हू।

मैं आशा करता हू कि कलकत्ता मे दी गई सलाह से कमला को कुछ लाभ हुआ होगा।

मुझे तुम्हारे लिए क्षमा मागने की इच्छा नही थी। उस भेंट मे भेंटकर्ता पर पडी, विचारो की छाप है। किन्तु उसमे क्षमाप्रार्थना नही है। मैंने तुम्हारे मानस और कार्यों की अपनी व्याख्या दी है। मैं महसूस करता हू कि तुम्हारा ठोस कार्यक्रम अव भी द्रवणशील (अनिश्चित) स्थिति मे है। तुम वैसा कहने के लिए अत्यधिक सच्चे हो। मुझे आज अपना सारा कार्यक्रम मालूम है। तुममे समाजवाद के विज्ञान के वारे मे कोई अनिश्चितता नही है किन्तु तुम पूरी तरह नही जानते कि सत्ता प्राप्त होने पर उसे किस प्रकार लागू करोगे।

तुमने काग्रेस मे अपने स्थान का सवाल अनावश्यक रूप से खडा कर दिया है। जहा तक मेरा सम्वन्ध है, तुम्हारे कारण मुझे कोई परीशानी नही है। तुम्हारे विना मैं खुद काग्रेस मे वीराना हो जाऊगा।

इस समय इससे ज्यादा नही कहूगा। लम्वा पत्र लिखने के लिए भी मेरे पास समय नहीं है।

दावा नहीं किया जाता, और यह कि हर हालत में उन्हें तुम्हारी सलाह लेनी चाहिए।

मैने नोट कर लिया है कि हमें ५ दिसम्बर को जबलपुर में मिलना है। यदि किसी तरह भी सम्भव हो सका, तो मैं और ज्यादा समय देने का प्रयत्न करूंगा।

क्या मैंने तुम्हें सी० पी० (मध्य प्रान्त) का कार्यक्रम भेजा नहीं है? उससे ज्यादा अब तक तैयार नही था।

तो तुम धीरे-धीरे शेयरों और वैसी चीजों के बोझ से मुक्त हो रहे हो। मुझे इसका अफसोस नही है। मेरे दृष्टिकोण से तो आदर्श बात यही होगी कि तुम स्वेच्छा से जो कुछ सम्पत्ति तुम्हारे पास है उसे या तो किसी संस्था को दे दो या कुटुम्ब के उन सदस्यों को, जो अपने को इस संग्राम में डालना नही चाहते—इस संग्राम मे जिसका लम्बे समय तक चलना निश्चित है और जिसके शायद अधिकाधिक कठोर होते जाने की सम्भावना है। अन्तिम मोर्चे पर तो सिर्फ वे ही खड़े हो पायेंगे जिनके पास कोई जायदाद नही है और जिनके लिए सिर रखने को कोई जगह नहीं है। किन्तु भविष्य को लेकर चिन्ता करने से कोई लाभ नही है। चाहे जो हो, तुम तो अगली पक्ति मे ही पाये जाओगे।

मुझे खुशी है कि मा निरन्तर प्रगति कर रही हैं। पता नहीं, कि जो कुछ घटनाएं घट रही है इसकी जानकारी उन्हें है या नही।

हां, मैंने हिन्दू सभा पर तुम्हारा आक्रमण पढ़ा था। वह इससे कम कठोर हो सकता था। संक्षेप-सार से तुम एकपक्षीय जैसे बोलते दिखते हो।

प्रेम

२७-११-३३ बापू

तिथियां तुम्हे संलग्न कार्यक्रम में मिल जायंगी।

—अंग्रेजी। २७।११।१९३३। नेहरू संग्रहालय में सुरक्षित पत्रावली से।]
सौजन्य : श्रीमती इन्दिरा गांधी तथा नेहरू संग्रहालय।

३३३. पत्र : जवाहरलाल नेहरू को

मद्रास, २६-१२-३३

मेरे प्रिय जवाहरलाल,

यह है 'म० (मद्रास?) मेल' की एक कतरन। यद्यपि सम्पूर्ण वार्त्तालाप तुम्हारे विचारों के सन्दर्भ में है, स्वभावतः भेंट लेनेवाला उसे (ज्यों-का-त्यों)

'हरिजन' नही पढते हो। मैंने समझा था कि उसे मेरे यहा से आये एक सामान्य साप्ताहिक पत्र की तरह पढने का नियम वनाओगे। अव भी इस सुधार के लिए ज्यादा देर नही हुई है। मैं इसे नियमित रूप से प्राप्त करने और पढने की सिफारिश करता हूं।

अव तुम्हारे तर्क को लेता हूं।

मैंने यह कभी नही कहा कि विदेशी वस्त्र खुद अपने मे कोई वुराई है। मैंने कहा यह था और अव भी इसे कहता हू कि भारत मे भारतीयो-द्वारा विदेशी वस्त्र का उपयोग एक वुराई है।

मैं आभूपणो के उपयोग को उसी श्रेणी मे नही रखता जिस श्रेणी मे विदेशी वस्त्र को रखता हू। किन्तु आभूपणो का उपयोग न करने का उपदेश करता हू। विदेशी वस्त्र के उपयोग की भाति आभूपणो के उपयोग के प्रति कोई मौलिक आपत्ति नही है, और जो पहनना ही चाहे उन्हे आभूपण वेचे जाने पर मैं कुछ एतराज नही करता। अगर मुझे गहनो का त्याग करनेवाली एक स्त्री भी मिल जाती है तो मेरे लिए काफी है। तुमको मालूम नही होगा कि उसका सौवा भाग ही आभूपणो के लिए विकता है, निन्यानवे सैंकडा गलाकर सोने मे तब्दील कर दिया जाता है और मुद्रा के रूप मे विकता है। तुम्हारे तर्क के अन्य भाग वृहत्तर क्षेत्र को स्पर्श करते हैं और उनमे पूंजी तथा श्रम, गरीवी और अमीरी के विषयो की चर्चा आ जाती है। उन्हे मैं समयाभाव के कारण छोड देता हू।

क्या तुम्हारे पत्र का मैं यह आशय लू कि तुम अभी तक पूर्ण स्वस्थ नही हो पाये, न निराशा की अधेरी के ऊपर उठ पाये हो? मुझे आशा है कि वावूजी अच्छे होगे।

तुम्हारा निश्छल
वापू

२२-१-३४

—अंग्रेजी। २२।१।१९३४। नेहरू सग्रहालय मे सुरक्षित पत्रावली से।]
सौजन्य : श्री श्रीप्रकाश तथा नेहरू सग्रहालय।

३३६. पत्र : परशुराम मेहरोत्रा को

चि० परसराम,

तुमारा खत मिला. जो लडकिया हिंदी मे लिखती हैं वहोत अच्छे खत लिखती है. हरेक प्रार्थना पर भगवान को रीझना हि क्यो चाहिये और वह कव

रीझता है और कब रूठता है इसका हमें क्या पता. प्रार्थना हि प्रार्थना का फल या बदला है.

सत्य में सत्य हि सबसे बड़ी युक्ति यों लिखि है. जहीं टेकटी (टैक्ट?) है वहीं डेलिकसि (डेलीकेसी) है. टेक्ट का तर्जुमा मृदुता कहा जाय. इस जगत में शुद्ध सत्य से बढ़के न कोई पोलिसि है, न टेक्ट है न डेलिकसि है।

बापु के आशीर्वाद

— हिन्दी। ४।२।१९३४। पत्र की फोटो-नकल (सी० डबल्यू० ४९६८) से।]

३३७. पत्र : द्रौपदी देवी को

चि० द्रौपदी,[१]

तुम्हारा आश्रम में आना मुझे बहुत प्रिय लगा है। जो सीखने का कार्य-क्रम अब बनाया है सो अच्छा लगता है। मेरी उम्मीद है तुम सबका स्वास्थ्य वर्धा में अच्छा रहेगा। आश्रम जीवन समझने की पूरी कोशिश करो। सब बहिनों का परिचय करके उनकी यथाशक्ति सेवा करो। तुमको आश्रम में लाने में बहुत आशायें बाध रक्खी हैं। मुझे खत अवश्य लिखो।

बापु के
आशीर्वाद

९-४-३४

— मूल हिन्दी। ९।४।१९३४। 'बापू की छाया में मेरे जीवन के सोलह वर्ष' से।]
सौजन्य : श्री हीरालाल शर्मा

३३८. पत्र : हीरालाल शर्मा को

भाई शर्मा,

तुम्हारा खत मिला है। अम्तुल सलाम को मैं तो लिखता रहूंगा लेकिन अब मैं उसके बारे में चिन्तामुक्त हुआ हू। उसका इलाज दिल चाहे ऐसे करो। अच्छी हो जाय तो सब झंझट मिट जाय। मुझे लिखा करो कैसे चल रहा है। तुमको तो मैंने लम्बा खत दिया है।

बापु के
आशीर्वाद

१४-४-३४

---

१. श्री हीरालाल शर्मा, प्राकृतिक चिकित्सक, खुर्जा की पत्नी।

खुराक के वारे मे कुहने, जुस्ट, कैलोग, कैरिंगटन अच्छे हैं। कोई पूर्ण नही है। मैंने जो परिणाम निकाला है वह यह है :

रसदार फल सवसे निर्दोप खुराक है। शक्ति के लिए दूव के पदार्थों की अत्यावश्यकता है। कच्चा ताजा दूव उत्तम है। नित्य वहुत चीज नही खाना। एक-एक चीज भिन्न खाना आवश्यक है। सिरियल्स मे गेहूं अच्छे हैं। चावल अनावश्यक है दाल अनावश्यक है इतना सक्षेप मे।

वापु

—हिन्दी। १४।४।१९३४[1]। 'वापू की छाया में मेरे जीवन के सोलह वर्ष' से।]
सौजन्य : श्री हीरालाल शर्मा

३३९. पत्र : जवाहरलाल नेहरू को

मेरे प्रिय जवाहरलाल,

वचे हुए काम को निवटाने के लिए मैं आज सुवह (रात ?) १२-१५ पर उठ गया हूं।

तुम सदा ही मेरे मन मे रहे हो। मुझे आशा है, तुम्हें यह पत्र प्राप्त करने की अनुमति मिल जायगी। मैं तुमसे इस आशय की एक पक्ति चाहूगा कि तुम कैसे हो और क्या कर रहे हो।

तुमने निश्चय ही मेरे दो निर्णय देखे होगे। वे दोनो एक ही समय हुए, यह तो केवल एक सयोग है। स्वराज्य दल का पुनर्जीवन ठीक कदम है। इसमे कोई सन्देह नही कि काग्रेस मे हमारे वीच ऐसे आदमियो का एक दल है जो कौंसिल-प्रवेश मे विश्वास रखते हैं और जिन्हे यदि वह कार्यक्रम नही प्राप्त हुआ तो और कुछ नही करेंगे। उनकी महत्वाकाक्षा की पूर्ति होनी ही चाहिए। दूसरा निर्णय, जिसमे जहा तक लक्ष्य का सम्वन्ध है, स० प्र० (सविनय प्रतिरोध) केवल मुझ तक सीमित कर दिया गया है, उससे कही ज्यादा महत्वपूर्ण है। यह अनिवार्य था। उस पर पहुचने के वाद, मैं हजारो कारणो से निर्णय के औचित्य को देख सकता हूं। मैंने निदान कारण दिया है। किन्तु निर्णय धीरे-धीरे मुझमे रूप ले रहा था।

---

१. श्री शर्मा ने लिखा है कि गाधी जी ने यह पत्र राची से लिखा था जो गलत मालूम होता है। १४।४ को गाधी जी राची नहीं, गौहाटी (आसाम) मे थे। राची वह ३०।४ को पहुचे थे। —सम्पा०]

मैं आशा करता हूं कि इससे तुम्हें परीशानी नहीं होगी। जब निर्णय रूप ले रहा था तब उस सारे समय तुम मेरे मनश्चक्षु के सम्मुख थे। मैं इस निदान पर पहुंचा कि यद्यपि यह क्षणिक आघात पहुंचायेगा, अन्त में तुम इसके सत्य को देख सकोगे और खुश होगे।

हम सब अक्सर तुम्हारे बारे में बात करते हैं। हमारा एक बड़ा दल है। जब मैं इलाहाबाद से गुजरा तो मां तथा कुटुम्ब के सदस्यों के साथ लगभग दो घण्टे तक था।

प्रेम

गौहाटी बापू
१४-४-३४

अलीपुर सेण्ट्रल जेल के सेंसर-द्वारा पास

— अंग्रेजी। गौहाटी, १४।४।१९३४। नेहरू संग्रहालय में सुरक्षित पत्रावली से।]
सौजन्य : श्रीमती इन्दिरा गांधी तथा नेहरू संग्रहालय।

३४०. पत्र : श्रीप्रकाश को

पोस्ट कार्ड

[डाकखाने की मुहर से पता लगता है कि यह पोस्टकार्ड बनारस में २० अप्रैल, १९३४ को प्राप्त हुआ था।—सम्पा०]

मेरे प्रिय श्रीप्रकाश,

(इस) निर्णय तक पहुंचने में, मैंने किसी भी अनुयायी या सहकार्यकर्त्ता का न्याय नहीं किया है। मैंने यदि किसी का न्याय किया है तो अपना न्याय किया है। निर्णय करने के कारण मैं अधिक मुक्त हो गया हूं। यदि मैं अपने तईं सच्चा रहता हूं तो उससे हम सब का भला होगा। सत्याग्रह एक अद्भुत अस्त्र है। इसलिए तुम्हें अपनी मलामत करने की जरूरत नहीं है। किन्तु मैं यह जरूर चाहता हूं कि जब वक्त आये तब तुम तैयार मिलो।

प्रेम

१६-४-३४

बापू

— अंग्रेजी। १६।४।१९३४। नेहरू संग्रहालय में सुरक्षित पत्रावली से।]
सौजन्य : श्री श्रीप्रकाश तथा नेहरू संग्रहालय।

३४१. पत्र : जवाहरलाल नेहरू को

मेरे प्रिय जवाहरलाल,

टिप्पणिया पढने से अच्छी लगती हैं। तुम्हारे उत्तर काफी पूर्ण और निश्चय ही वेलाग थे।

तुम आगामी वैठक के वारे मे चिन्तित क्यो होते हो? यदि चर्चा होती है तो वह एक-दूसरे के विचारो की उपयुक्तता को एक दूसरे को समझाने के लिए ही तो होगी। जव तुम समझना कि किसी प्रस्ताव पर भली प्रकार तर्क हो चुका है, तो तुम वहस वन्द कर देना। आखिर तो तुम दलवद्ध काम चाहते हो, और अगर ऐसा हो जाता है तो मुझे तो वडी आशा हो जाती है।

मैं २३ की शाम नागपुर पहुच रहा हू।

मेरी कामना है, रजीत[1] अपना भार खुद उठायेगा। मुझे खुशी है कि वह खाली[2] गया है। मैं आशा करता हू कि सरूप[3] तुम्हारे साथ आयेगी।

सरदार[4] अव भी पीडित हैं और इस समय सिर्फ मखनिया दूध पर हैं। ८ मई के वाद मैं उनको नान्दी दुर्ग ले जा रहा हू। मेरी कामना है कि तुम भी आ सकते।

प्रेम

२१-४-३४ वापू

—अंग्रेजी। २१।४।१९३४। नेहरू सग्रहालय में सुरक्षित पत्रावली से।]
सौजन्य : श्रीमती इन्दिरा गाधी तथा नेहरू संग्रहालय।

३४२. पत्र : श्रीप्रकाश को

जैसे पटना मे हू
६ ठी मई, १९३४

मेरे प्रिय श्रीप्रकाश,

मुझे तुम्हारा लम्वा और वाद मे छोटा पत्र मिला। मुझे मार्कण्डेय मन्दिर विपयक सही सूचना देने के लिए तुमने जो तकलीफ उठाई, उसका मुझे ध्यान

---

१. स्व० रणजित पण्डित, सरूप कुमारी (वाद की विजयलक्ष्मी जी) के पति।
२. खाली, अलमोडा, जिले का एक सुन्दर स्थान जहां श्री पण्डित ने 'ऋतु सहार' नामक एक सुन्दर आवास का निर्माण कराया था।
३. श्रीमती विजयलक्ष्मी।
४. सरदार वल्लभभाई पटेल।

है। यदि 'सनातन धर्म' का तुम्हारा अर्थ स्वीकार कर लिया जाय तो फिर बिला-शक कोई कठिनाई नही रह जायगी।

अगर भारत-सेवक-समाज (सर्वेण्ट्स आफ इण्डिया सुसाइटी) के सदस्यों के साथ मेरा दृष्टिकोण मिलता होता, तो मैं इस तरह उसका एक अमान्यताप्राप्त सदस्य मात्र न रह जाता। मैं सदस्य होने का दावा करता हूं क्योंकि जिस प्रेरणा ने गोखले को अनुप्राणित किया था, वही मुझे भी अनुप्राणित करती है। और कौन जानता है कि यदि १९१९ और बाद की घटनाएं उनके जीवन-काल में हुई होतीं तो तराजू के किस पलड़े पर वह अपना भार रखते ?

तुम्हें शब्दग्राही नही होना चाहिए। "अक्षर मार डालता है, अन्तर्भावना जीवन देती है" वाली उक्ति केवल ईसाइयों के लिए ही सत्य नहीं है, वह सम्पूर्ण जगत् के लिए सत्य है। देखो तो, अपने आपको सनातनी कहनेवाले सनातनियों को अक्षर किस तरह मार रहा है।

तुम्हारा
बापू

श्री श्रीप्रकाश,
सेवाश्रम, सिगरा, बनारस

—अंग्रेजी। पटना जाते हुए, ६।५।१९३४। नेहरू संग्रहालय में सुरक्षित पत्रा-वली से।]
सौजन्य : श्री श्रीप्रकाश। तथा नेहरू संग्रहालय।

३४३. पत्र : द्रौपदी देवी को

चि० द्रौपदी देवी,

तुमारा खत मिला. अच्छा है. माता पिता को अपने बच्चों का भार नहि लगना चाहिये. भले क्यों ब्रह्मचर्य का निश्चय भी किया हो. उसका पालन कर्त्तव्य समझ करना आवश्यक है. उसी के साथ दूसरी सेवा की जाय. इसका परीणाम यह आवेगा कि बालक भी सच्चे सेवक होंगे. यह तो हुई मेरी राय. इससे संतोष न रहे तो जैसा दिल कहे ऐस किया जाय. मुझे लिखा करो.

बापु के
आशीर्वाद

७-५-३४
पुरी

—हिन्दी। पुरी, ७।५।१९३४। 'बापू की छाया में मेरे जीवन के सोलह वर्ष' से।]
सौजन्य : श्री हीरालाल शर्मा

३४४. पत्र : गोविन्दलाल शाह को

भाई गोविंदलाल,

तुम्हारा खत बहुत दिनो से मिला। तुम्हारा स्वास्थ्य ठीक ही होगा।

बापु के
आशीर्वाद

१५-५-३४

—हिन्दी। दिल्ली, १५।५।१९३४।]
सौजन्य : श्री राजीवलोचन शाह, नैनीताल।

३४५. पत्र : हीरालाल शर्मा को

भाई शर्मा,

अमतुल सलाम तुमारी तारीफ करती है. इतनी ही शिकायत वह लिखती है कि तुम्हारा वजन बहूत कम हो गया है. खाना कम कर दिया है. मैं इतना हि कहना चाहता हू कि शरीर को निरर्थक कष्ट देना इतना हि गुनाह है जितना शरीर को पपालना इसलिये शरीर रक्षा के लिये जो आवश्यक है वह किया जाय इतना तो चार दिनो के पहले लिख चूका था. अब तुमारा खत मिला है. दिल चाहे तब मेरे पास आ सकते है लेकिन वहा के मरीजो को छोडकर नहि मेरा मुसाफिरी क्रम तो तुमारे पास होगा. जुन १२ तक तो यही काम चलेगा पीछे शायद मुबई.

तुमारी इच्छा[1] सिद्ध होने मे कुछ देर लगेगी मैं चाहता हू थोडे और स्थिर-चित्त बनो. लेकिन यह सब बातें करने पर. इस समय तो सब का प्रेम सपादन कर रहे हैं सो अच्छा ही है

बापु के
आशीर्वाद

२३-५-३४

—हिन्दी। पटना, २३।५।१९३४। 'बापू की छाया मे मेरे जीवन के सोलह वर्ष' से।]
सौजन्य : श्री हीरालाल शर्मा

---

१. आश्रम में रोगियो के लिए एक अलग वार्ड बनाने की बात।

३४६. पत्र : जवाहरलाल नेहरू को

सेगांव, वर्धा
१० अगस्त १९३४

प्रिय जवाहरलाल,

खानसाहब[1] को वम्बई की वैठकों में आने के लिए साधारण सूचना मिल गई है। उनकी इच्छा आने की नही है और मै उन्हें दवाना नही चाहता। वम्बई में उन्हे सभाओं और समारोहों में शरीक होने को कहा जायगा और वोलने का अनुरोध किया जायगा। मै नही चाहता कि अभी वह ऐसा करें। मैं यह चाहता हूं कि वह यह साल मेरे साथ वितायें। दूसरे, वीमारी के हमलों को रोकने की भी उनमे वहुत शक्ति नही है। इसलिए उन्हें सम्मिलित होने से माफ कर दोगे?

सस्नेह
वापू

—अंग्रेजी। सेगांव (वर्धा), १०।८।१९३४। 'ए वंच आफ ओल्ड लेटर्स' से।]
सौजन्य : श्रीमती इन्दिरा गांधी

३४७. पत्र : जवाहरलाल नेहरू को

वर्धा
१४-८-३४

मेरे प्रिय जवाहरलाल,

यद्यपि तुम संकटापन्न परिस्थितियों में वाहर आये हो, तुम्हारी रिहाई से मेरे दिमाग का एक वड़ा वोझ उतर गया है, क्योंकि यह कमला के लिए तीन-चौथाई दवा है। मैंने जो महत्वपूर्ण पग ग्रहण किये हैं उन सव के वीच तुम्हारी अनुपस्थिति मुझे वहुत खलती थी। किन्तु इनके वारे में तो तव वातें होंगी जव हम मिलेंगे।

मैं ठीक हूं, यद्यपि अन्तिम दिन सव दिनों से कष्टकर था, और उसने मुझे पूरी तरह धोकर रख दिया। किन्तु मुझे सन्देह नही है कि मैं अपनी खोई तन्दुरुस्ती तेजी से प्राप्त कर लूंगा।

मै यह पत्र तुम्हे यह सुझाव देने के लिए लिख रहा हूं कि तुम्हें कोई सार्वजनिक

---

१. सीमान्त गांधी खान अव्दुल गफ्फार खां।

राजनीतिक वक्तव्य नही देना चाहिए। मैंने महसूस किया है कि घरेलू बीमारी या शोक के मामलों में सरकार ने उचित ढग से काम किया है। इसलिए मैं महसूस करता हू कि हमे इस तरह प्राप्त स्वतन्त्रता को किसी ऐसे कार्य मे इस्तेमाल नही करना चाहिए जो सरकार के प्रतिकूल हो—विशेषत तब जब सविनय प्रतिरोध स्थगित कर दिया गया हो। अगर मेरा तर्क तुम्हारे विवेक को अपील करता हो तो तुम एक योग्य ढग पर अपने आत्म-नियन्त्रण की घोषणा करोगे। जब कमला की हालत कुछ अच्छी हो जाय तब तुमसे मैं यहा आने की आशा करूगा। मैं वर्धा मे (इस) महीने के अन्त तक रहूगा—सिवाय इस अपवाद के कि इसी महीने के अन्दर शायद जमनालालजी का जो कठिन आपरेशन हो उसमें उपस्थित रहने के लिए मुझे बम्बई जाना पडे।

मुझे आशा है कि मा ठीक हैं और कृष्णा भी अच्छी है। तुम मुझे यह जानकारी दोगे कि इस बार जेल मे तुम कैसे रहे?

प्रेम

बापू

—अंग्रेजी। वर्धा, १४।८।१९३४। नेहरू संग्रहालय मे सुरक्षित पत्रावली से।]
सौजन्य : श्रीमती इन्दिरा गांधी तथा नेहरू संग्रहालय।

३४८. पत्र : जवाहरलाल नेहरू को

१७ अगस्त १९३४

प्रिय जवाहरलाल,

तुम्हारा भावपूर्ण और मर्मस्पर्शी पत्र मिला। उसका उत्तर मेरी सामर्थ्य से कही अधिक लम्बा होना चाहिए।

मुझे सरकार से अधिक शराफत की आशा थी। किन्तु तुम्हारी उपस्थिति ने कमला के लिए और साथ ही मा के लिए जो काम किया वह किसी दवा या डाक्टर से नही हो सकता था। मुझे आशा है कि तुम जितने थोडे-से दिनो की अपेक्षा कर रहे हो, उनसे अधिक ठहरने दिये जाओगे।

तुम्हारे गहरे दु ख को मैं समझता हू। अपनी भावनाओ को पूरी तरह और स्वतन्त्रतापूर्वक प्रकट करके तुमने सर्वथ उचित किया है, परन्तु मुझे पूरा विश्वास है कि हमारे सामान्य दृष्टिकोण से लिखित बात को अधिक गहराई से अध्ययन करने पर तुम्हे पता चल जायगा कि तुमने जो इतना सारा दु ख और निराशा का

अनुभव किया है उसके लिए पर्याप्त कारण नही है। मैं तुम्हें विश्वास दिलाता हूं कि तुमने मुझमें अपना साथी खोया नही है। मै वही हूं जैसा तुम मुझे १८१७ मे और उसके वाद से जानते हो। मुझे देश के लिए पूरे अर्थ में सम्पूर्ण स्वाधीनता चाहिए और प्रत्येक प्रस्ताव जिसमें तुम्हें पीड़ा हुई है, उसी लक्ष्य को ध्यान में रखकर तैयार किया गया है। इन प्रस्तावों के लिए और उनकी सारी कल्पना के लिए पूरी जिम्मेदारी मेरी है।

किन्तु मेरा विचार है कि मुझे समय की आवश्यकता को पहिचान लेने का अन्दाज आता है। ये प्रस्ताव उसी का परिणाम है। हां, उपाय या साधन पर हमारे जोर देने मे अन्तर है। मेरे लिए साधन उतने ही महत्वपूर्ण हैं, जितना लक्ष्य बल्कि एक प्रकार से साधन बहुत महत्वपूर्ण हैं, क्योंकि उन पर तो हम कुछ नियन्त्रण रख सकते है। यदि साधनों पर हमारा काबू न हो तो लक्ष्य पर वह कहां रह जायगा।

'विचारहीन बातों' के बारे मे प्रस्ताव को निर्विकार होकर जरूर पढ़ो। समाजवाद के विषय मे उसमे एक भी शब्द नहीं है। समाजवादियों का अधिक-से-अधिक लिहाज रक्खा गया है, क्योंकि उनमें से कुछ के साथ मेरा घनिष्ट परिचय है। क्या मुझे उनका त्याग मालूम नहीं है?

किन्तु मैंने देखा है कि वे सब-के-सब जल्दी में है। क्यों न हों? बात इतनी ही है कि यदि मै उनकी तरह तेज नही चल सकता तो मुझे उनसे कहना पड़ता है कि ठहरो और मुझे अपने साथ ले चलो। अक्षरशः मेरा यही रवैया है। मैंने शब्दकोश में समाजवाद का अर्थ देखा है। परिभाषा पढ़ने से पहिले जहां मै था उससे आगे नही पहुंच सका। तुम बताओ, पूरा अर्थ जानने के लिए मुझे क्या पढ़ना चाहिए? मैंने मसानी[1] की दी हुई पुस्तकों में से एक पुस्तक पढ़ी है और अब मैं अपना सारा फालतू समय नरेन्द्रदेव[2] की सिफारिश की हुई पुस्तक पढ़ने में लगा रहा हूं।

तुम कार्यसमिति के सदस्यों के साथ कठोरता कर रहे हो। वे जैसे भी हैं, हमारे साथी है। आखिर तो हमारी एक स्वतन्त्र संस्था है। यदि वे विश्वासपात्र नहीं हैं तो उन्हें हटा देना चाहिए। परन्तु जो कष्ट कुछ दूसरे लोग सह चुके हैं, उन्हें वे न सह सके तो इसके लिए उन्हें दोष देना अनुचित है।

---

१ उस समय के एक भारतीय समाजवादी नेता।

२. आचार्य नरेन्द्रदेव, पहिले काशी विद्यापीठ के उपाचार्य, बाद में भारतीय समाजवाद के एक प्रवर्त्तक, लखनऊ तथा काशी विश्वविद्यालय के वाइसचांसलर।

विस्फोट के वाद हम रचना चाहते हैं। कदाचित् हमारा मिलना न हो, इसलिए अव मुझे ठीक-ठीक वतादो कि तुम मुझसे क्या कराना चाहते हो ? और तुम्हारे खयाल से तुम्हारे विचारो का सवसे अच्छा प्रतिनिधि कौन होगा ?

दु:ख की वात यह है कि मैं तो उपस्थित नही था। वल्लभभाई थे। तुम्हारे रवैये से क्रोध प्रकट होता है। तुम्हे ट्रस्टियो पर विश्वास रखना चाहिए कि वे अपना कर्त्तव्य पूरा करेंगे। मैं नही समझता कि कोई वेजा वात हुई। मैं इतना व्यस्त था कि उस पर एकाग्रता से ध्यान नही दे सका। अव मैं कागजात और हर चीज का अध्ययन करूगा।

वेशक तुम्हारी भावनाओ का आदर दूसरे ट्रस्टी पूरी तरह करेंगे। यह आश्वासन देने के वाद मैं तुमसे कहूगा कि इस मामले को इस प्रकार व्यक्तिगत न समझो, जैसा तुमने समझा है। यह तुम्हारे उदार स्वभाव के अधिक योग्य होगा कि पिताजी की स्मृति के लिए जितना लिहाज तुमको है उतना ही अपने साथी ट्रस्टियो को होने का श्रेय दे सको। पिताजी की स्मृति का सरक्षक राष्ट्र को वना दो और तुम राष्ट्र के एक अग वन जाओ।

आशा है, इन्दु अच्छी तरह होगी और उसे अपना नया जीवन पसन्द होगा। कृष्णा का क्या हाल है ?

स्नेह,
वापू

—अंग्रेजी। १७।८।१९३४। 'ए बच आफ ओल्ड लेटर्स' से।]
सौजन्य : श्रीमती इन्दिरा गाधी

३४९. पत्र : हीरालाल शर्मा को

चि० शर्मा,

शरनामे मे मेरी गलती[1] हो गई, इसका दु ख है होनी नही चाहिए थी. रामदास के हाल तुमारी दृष्टि से लिखो

---

१. वापू ने किसी लिफाफे पर शर्माजी का पता लिखते समय 'खुर्जा' की जगह 'खुर्वा' लिख दिया था। यह पत्र वहुत दिन वाद उड़ीसा से लौट कर खुर्जा आया था। उसकी इत्तला शर्माजी ने वापू को दी थी। उसी की ओर इशारा है।

अमतुलसलाम को तुमने पैसे भेजे सो तो अच्छा नहि था. तुमारे पास अब दान करने को पैसे कहां हैं? अमतुलसलाम की ऐसी हालत भी नहीं जिसलिये किसी न किसी तरह उसे मदद पहुंचाना आवश्यक था. मैंने उसे बताया है उसका धर्म इस तरह पैसे नहि लेने का था. वह समझ गई है. मित्रता का कभी यह अर्थ नहि है कि हम एक दूसरों के दौर्बल्य को पोपें. उसका हेतु है एक दूसरों की उन्नति करना. इसे मैं नैसर्गिक उपचारक के अभ्यास का विषय मानता हूं. नैसर्गिक उपचारक, शारीरिक, मानसिक और आत्मिक व्याधि को पहचानता है उसका इलाज करता है और वह ज्यादातर आन्तरिक शक्तियों के विकास से. उसमें पृथ्वी, पाणी, आकाश, तेज और वायु की मदद ली जाती है. नैसर्गिक उपचारक से आत्मा की अधोगति अशक्य होनी चाहिए. इस दृष्टि से अमतुलसलाम का केस लो. उसे हृदय-दौर्बल्य है. यह एक व्याधि है. दुर्बलता के वश होकर वह पैसे उड़ाती है. अपने घर से पैसे लेने से हिचकिचाती है. उसको पैसे भेजना अधोगति वर्धक है. न भेजना उन्नति-वर्धक है. नैसर्गिक उपचारक पैसे नहीं भेजेगा.

बापु के
आशीर्वाद

१७।८।३४

— हिन्दी। वर्धा, १७।८।१९३४। 'बापू की छाया में मेरे जीवन के सोलह वर्ष' से।]
सौजन्य : श्री हीरालाल शर्मा

३५०. पत्र : द्रौपदी देवी[1] को

चि० द्रौपदी,

तुमारे मेरा डर[2] तो छोड़ ही देना चाहिये. डराने की तो मैंने कोई बात नही कही थी. मैंने तो केवल माता पिता का अपने बच्चों के प्रति क्या धर्म है

---

१. श्रीमती हीरालाल शर्मा।

२. वर्धा में अपने बच्चों की तालीम के विषय में हीरालाल जी की धर्मपत्नी द्रौपदी देवी और बापू के बीच वार्ता हुई। बच्चों की माता चाहती थी कि उनको किसी पाठशाला में भेज दिया जाय। बापू का कहना था कि बच्चों को सच्ची तालीम उनके माता-पिता से ही मिलती है। इसके बाद से द्रौपदी देवी ने इस विषय पर बापू को लिखना बन्द कर दिया था।

वह वताया. लेकिन कुछ भी हो अव उसे भूल जाना मुझको निडर होकर लिखो

अव वात यहा की. आज शर्मा, रामदास, कनु और वा सावरमती गये. अच्छा ही हुआ हिसाव जैसे मुझे दिया गया कायम रखा है रामदास के चित्त को तुमने हर लिया है यह क्या चीज है? अमतुल सलाम का तो चोर लिया ही. वताओ यह क्या चीज है?

तुमको सावरमती वुलाने का यदि होगा तो दस अथवा पचीस दिन के वाद होगा. यदि रामदास का द० अफीका जाना हुआ तो वुलाने की वात छुट जाती है. अगर रामदास नही जायगा तो तुमारे सावरमती जाना है ही दस दिन या २४ का मतलव यह है कि द० अफरीका से जहाज हर चौदा दिन आती है एक शनीचर को आवेगी. उसमे अगर कोई पता न चला तो चौदा दिन के वाद तो मिलना ही चाहिये. तवतक भी न मिला तो रामदास नही जायगा वच्चे सव अच्छे होंगे.

वापु के
आशीर्वाद

वर्धा
२।९।३४

— हिन्दी। वर्धा, २।९।१९३४। 'वापू की छाया मे मेरे जीवन के सोलह वर्ष' से।]
सौजन्य : श्रीहीरालाल शर्मा

३५१. पत्र : साहेब जी महाराज को

वर्धा,
दूसरी सितम्वर, १९३४

प्रिय साहेब जी महाराज,

आपका पत्र पाकर एक सुखद आश्चर्य हुआ। किन्तु मुझे भय है कि आपकी वधाइया मुझे नही ग्रहण करनी चाहिए। भारत के विभिन्न भागो मे दयालवाग की पुनर्रचना करने की प्रतिभा मुझमे नही है। मेरा सन्दर्भ तो आप द्वारा कराची को सहायतार्थ भेजे हुए उन कुशल पुरुषो की ओर था, जो वहा मोहता-वन्धुओ द्वारा स्थापित उद्योग-सघ (इण्डस्ट्रियल इंस्टिट्यूट) को व्यवस्थित ढग पर चला रहे हैं। आपका तो विशाल प्रयास है। मैं अपनी सीमाए जानता हू। कुछ दिशाओ

में मेरे अनुभव विस्तृत हो सकते हैं, किन्तु आपने जिस दिशा में दयालबाग का निर्माण किया है उसमें मैं बहुत कम अनुभव का दावा कर सकता हूं। फिर मेरे पास साधन भी अपरिमित नहीं है। फिर भी जब मैं तैयार हो जाऊं तब हरिजनों के लिए औद्यागिक गृहों की स्थापना में मैं आपसे हरिजन-सेवक-संघ की मदद करने को कहूंगा। इसलिए निश्चित रूप से उन्हें अमहत्वाकांक्षी बनना पड़ेगा।

मुझे खुशी है कि आपने एक चर्मालय भी खोल दिया है। क्या आपके विशेषज्ञ मुझे एक संक्षिप्त लेख दे सकेंगे जिसमें चर्मकला की पद्धति का ऐसा वर्णन हो जिसे पढ़कर कोई बुद्धिमान पाठक चर्मकला में खुद अपने प्रयोग कर सके? क्या आपकी चर्मकला में लाशों की व्यवस्था, उनकी खाल उतारने और चमड़े को हड्डी-मांस से अलग करने की क्रिया भी शामिल है? और अगर ऐसा ही है तो हड्डी, रक्त, मांसादि का क्या उपयोग होता है? मेरे लिए तो गोवंश की पवित्रता के हिन्दू विश्वास के अनुसार चलते हुए, चर्मकला का पशु-रक्षण के महान प्रश्न से बहुत सम्बन्ध है। और क्या आप चमड़ा लेते भी हैं? या आप कत्ल किये हुए पशु की जगह केवल मरे हुए जानवरों के चमड़े तक ही अपने को सीमित रखते हैं?

क्या आपके कृपापूर्ण प्रस्ताव से मैं यह आशय निकाल सकता हूं कि हरिजन-सेवक-संघ अपने हरिजन छात्रों को कई दस्तकारियों में प्रशिक्षण के लिए जिन हरिजन बस्तियो में भेज सकता है उनमें दयालबाग भी शामिल है? और यदि संघ उन्हें भेज सकता है तो किन शर्तों पर?

जैसी कि मुझे हुई है, मीरा बहिन भी यह जानकर खुश होंगी कि आपने रेडियम नोकवाली ऐसी स्वर्ण-निबों के बनाने में सफलता प्राप्त कर ली है जो ग्यारह बटे बारह स्वदेशी हैं। आपने जो शुभ समाचार भेजा है उसे मैं मीरा बहिन को सूचित कर दूंगा।

आपने मेरे स्वास्थ्य के सम्बन्ध मे कृपापूर्वक पूछा है, उसके लिए मैं आपका धन्यवाद करता हूं। उपवास के बाद जितनी प्रगति की आशा की जा सकती है उतनी अच्छी प्रगति मैं कर रहा हूं।

आपका निश्छल
मो० क० गांधी

साहबजी महाराज,
श्री आनन्दस्वरूप,
दयालबाग, आगरा।

—अंग्रेजी। वर्धा, २।३।१९३४। जी० एन० २१५९ की फोटो-नकल से।]

३५२. पत्र : हीरालाल शर्मा को

चि० शर्मा,

दतून करके तुम्हारा पत्र पढ गया कल पूरा नहि पढ सका था ऐसे आजकल मेरे हाल हो गये हैं, कल के तार का तो उत्तर दे दिया है आज भी वही उत्तर है धीरज से काम करो वहा से हट जाओगे तो रामदास का शरीर और विगडेगा यह तो यहा वैठे हुए मेरा अभिप्राय, सुरेन्द्र[1] वहा है वह जैसा कहे ऐसे किया जाय मेरा अभिप्राय यह है तुमारे मूक नर्स वन जाना दाक्टरो का अपमान भी सहन करके रामदास जहा तक खुश रहता है उसको साथ देना जो वनता रहे मुझे वताते रहो वा को सहन करो जो वहा वन रहा है उस वारे मे मैंने चेतावनी दी थी कनु[2] को अभी भी यहा भेज दिया जाय तो अच्छा है ही लेकिन इन सव वातो मे सुरेन्द्र की सुनो मैं यहा वैठे हुए कर्तव्यविमूढ हू

मेरे कारण लोग भयभीत हो जाते हैं यह मैं जानता हू क्या करू? इसी कारण मैं काग्रेस छोडना चाहता हू इसी कारण सवसे अलग रहना पसद करता हू लेकिन यह सव वलात्कार से नहि होगा जैसे ईश्वर चाहता है ऐसे ही होगा तुम्हारा अतिम वचन सर्वथा योग्य है. हिंदुस्तान का अथवा एक मनुष्य के किस्मत का ठेका लेने वाला मैं कौन? ऐसा होते हुए भी रागादि के कारण मैं अनजानपन मे भी भ्रम मे पडता हू

सव कुछ देखते हुए यदि रामदास को छोडना ही पडे तो यहा होकर जाना द्रौपदी और वच्चो का ख्याल यहा कर लेंगे मुझे भी उनकी चिंता है ही लेकिन किसी वात मे जल्दवाजी नही करेंगे भविष्य की वात भी कर लेंगे.

वापु के
आशीर्वाद

१३।६।३४, वर्घा

—हिन्दी। वर्धा, १३।९।१९३४। 'वापू की छाया मे मेरे जीवन के सोलह वर्ष' से।]
सौजन्य : श्री हीरालाल शर्मा

---

१. सुरेन्द्र, बापू के पुराने साथी।
२. कनु—श्रीरामदास का पाचवर्षीय पुत्र।

३५३. पत्र : बनारसीदास चतुर्वेदी को

भाई वनारसीदास,

कोई और चीज ढुढ़ रहा था वह मिली और तुमारा २१ जुलाई का पत्र भी देखने मैं आया. यह पत्र तो यात्रा मै ही मिल सकता था. मैंने पढ़ भी लिया था. उत्तर देने के लिए खास जगह रखा तो उत्तर ही रह गया.

उमेद है कि अभी भी उत्तर समय के वाहर नहिं हो गया है, जव दिल चाहे आजाइये. जितने दिन ठहरना हो ठहरिये. तुमारा विरोध मुझे प्रिय लगता है. यह तुमको आने से रोकने का कभी कारण नहीं हो सकता था न हो सकता है.

आने का दिन वता देना—मतलव मै यह समझता हूं कि मेरे निकट रहना है. मेरा समय ज्यादा नहिं लेना है. समय तो मेरे पास कम हीं रहता है.

वापु के आशीर्वाद

—हिन्दी। वर्धा, १८।९।१९३४। जी० एन० २५१५ की फोटो-नकल से।]

३५४. पत्र : हीरालाल शर्मा को

चि० शर्मा,

तुमारा तार मिला था. तार का अमल मिलते ही किया और द्रौपदी को कल तार भेज दींया. यदि रामदास तुमको छोड़ने पर राजी हो गया है तो शीघ्र वर्धा आ जाओ और मेरे पास दो तीन दिन अथवा कम रह कर अब तो खुर्जे ही चले जाओ. द्रौपदी के खत का मेरे पर असर यह हुआ है कि तुमारे उससे अलग रहना पाप है. देवी की देखभाल करना तुमारा प्रथम कर्त्तव्य है यदि उसकी रक्षा तुमारे से हो ही न सके तो तुमारे उसको दिल्ली में छोड़ना शायद उचित होगा. मेरी दृष्टि में तो वह तुमारा पतन की निशानी होगी. लेकिन तुमारा धर्म नियत करने वाला मैं कौन? अंत में तो तुम्हारा हृदय कहे वही तुम्हारा धर्म हो सकता है. और तो क्या लिखूं?

२०।९।३४ वर्धा

वापु के आशीर्वाद

—हिन्दी। वर्धा, २०।९।१९३४। 'बापू की छाया में मेरे जीवन के सोलह वर्ष' से।]

सौजन्य : श्री हीरालाल शर्मा।

३५६. पत्र : सुरेश सिंह को

[यह पत्र गांधी जी ने कालाकांकर के राजा और श्री सुरेश सिंह के बड़े भाई राजा अवधेश सिंह के देहावसान के बाद लिखा था।—सम्पा०]

चि० सुरेश,

तुम्हारा पत्र मिला था राणी साहेबा को मेरा तार मिल गया होगा. जन्म मृत्यु तो हमारे नसीब में लिखा ही है. इसमें हर्ष शोक क्या करें. तुम्हारे दादा[1] के शुभ कार्य को सुशोभित रखना है. राणी साहेबा को धैर्य देना है. मेरी यह उम्मीद है कि सब व्यवस्था जैसे पहले थी वैसी ही रहेगी. मुझे खत लिखा करो.

बापु के
आशीर्वाद

२९।९।३४ वर्धा

—हिन्दी। वर्धा, २९।९।१९३४।]

सौजन्य : श्री सुरेश सिंह, कालाकांकर (अवध)

३५७. पत्र : हीरालाल शर्मा को

चि० शर्मा,

तुमारा लंबा खत पढ़ा दुःख हुआ और सुख भी हुआ. दुःख हुआ क्योंकि खत तुम्हारी अशांति का अच्छा प्रदर्शन है. सुख हुआ क्योंकि तुम्हारे हृदय में मैं स्वच्छता पाता हूं लेकिन मुझे शक है कि तुम अपने को दबा रहे हो. शक्ति बाहर जाकर काम कर रहे हो. यह अच्छा नहिं लगता है. तुमारा दिल मेरे पास पाता हूं. तुमारा दिमाग लड़ाई कर रहा है. मेरी बुद्धिमत्ता के बारे में तुमको शक है. मेरे साथियों की ओर तुम शक की नज़र से देख रहे हो, ऐसी हालत में मैं तुमको कैसे शांति दे सकता हूं. मैं यह भी महसूस करता हूं कि द्रौपदी का वियोग तुम्हारे लिए दुःखद है. अगर तुमारे खुर्जा जाने की कोई जरूरत है तो अवश्य जाओ. नरहरि भाई से पैसे लेना, अगर नही जाना हो तो वहीं रहो सुरेंद्र की प्रतीक्षा करो उसको मिलने के बाद आ जाओ. किसी हालत में शांत रहो. मुझे दूसरा खत लिखो. यहां सोमवार तक तो हूं.

बापु के
आशीर्वाद

२४।१०।३४ मुम्बई

—हिन्दी। बम्बई, २४।१०।१९३४। 'बापू की छाया में मेरे जीवन के सोलह वर्ष' से।]

सौजन्य : श्री हीरालाल शर्मा।

---

१. बड़े भाई।

३५८. पत्र : जवाहरलाल नेहरू को

सेगाव (वर्धा)
२५-१०-३४

मेरे प्रिय जवाहरलाल,

मैं अमरीकी चीज को देख गया हूं। यह बहुत व्यय-साध्य है। दूसरी बातों मे भी, यह मुझे आकर्षित नही करती। मुझे आशा है कि तुम्हें इन्दु के बारे में खुशखबरी मिली होगी।

प्रेम
बापू

[अंग्रेजी। सेगांव (वर्धा), २५।१०।१९३४। नेहरू संग्रहालय में सुरक्षित पत्रावली से।]

सौजन्य : श्रीमती इन्दिरा गांधी तथा नेहरू संग्रहालय।

३५९. पत्र : हीरालाल शर्मा को

चि० शर्मा,

तुमारा खत मिला सुरेन्द्र का भी पढा तुमारे यहा आना है बाद में देखा जाय क्या करना उचित है तुमारे बाहर रहने से तो लोग निर्भय नही होंगे निर्भय बनाने के लिए भी तुमारे यहा आना है विनोबा तो तुमारे आने से बिलकुल राजी है बाबा जी[1] के मीजबान बनो तो वह भी प्रसन्न रहेगे. और मैं तो हू ही, मैं जब बरदाश्त न करू तब देखा जायगा एक वर्ष की मर्यादा तो तुम्हारे लिए रखी है. भले (ही) अमर्यादित कैद मे रहो द्रौपदी के पास रहना, कुटुंब-सेवा मे ग्रस्त होना यह सब तो सोचने की बात है हमारे बीच में इतना समझौता है न कि तुम कोई भी चीज़ जबरदस्ती से नही करोगे. शक्ति के बाहर जाकर भी नहीं करोगे इतना अभयदान मुझे चाहिये. दूसरा मैं देख लूगा योगानद[2] को भूल जाओ. बाहर क्या बातें कर रहा है सो तो वही जाने यहा उसका कोई असर नहीं

---

१. आश्रम के मैनेजर श्री मोघे जी बाबा जी के नाम से पुकारे जाते थे।

२. खुर्जे का एक स्वामी, जिसे आश्रम में बापू के सामने शर्मा जी के विषय में कुछ कहलाने के लिए वहां के अधिकारियो ने बुलाया था।

है। मेरे पर तो उसने कोई असर ही नहीं डाला जिससे मेरे दिल में तुमारे वारे में किसी प्रकार का संशय हो. मैंने जो निदान किया है उसी पर मैं कायम हूं. वहम, अभिमान और परदोषदर्शन. वहम का औषध काल ही है अभिमान का औषध शून्यवत् वनना है, परदोषदर्शन का औषध स्वदोषदर्शन है. हम अपने को सवसे वुरा मानें तो किसी का दोष नहीं देखेंगे और दोष मात्र रोग का रूप लेगा. वातें करने का थोड़ा-थोड़ा समय तो मैं दूंगा लेकिन वात से हमारा काम नहीं वनेगा. तुमारे लिए मेरे पास मजदूरी का बहुत काम पड़ा है और इसी के साथ मैं थोड़ा और भी काम ले लूंगा.

आज तार दिया है आ जाने का।

२।११।३४ वर्धा वापु के आशीर्वाद

--हिन्दी। वर्धा, २।११।१९३४। 'बापू की छाया में मेरे जीवन के सोलह वर्ष' से।]

सौजन्य : श्री हीरालाल शर्मा।

३६०. पत्र : जवाहरलाल नेहरू को

वर्धा

२२ नवम्बर, १९३४

प्रिय जवाहरलाल,

कुछ दिन हुए, मैंने तुम्हें पत्र भेजा था, जिसमें केवल तुम्हारे स्वास्थ्य के समाचार पूछे थे। माता जी कल यहां आई थी। कहती थीं कि तुम्हें कमला के लिफाफे में भेजे हुए पत्रों के सिवा और पत्र नही मिलते। मैं जानना चाहता हूं कि तुम्हारे पत्र-व्यवहार के लिए क्या नियम है? लिखो, तुम्हारे क्या हाल-चाल हैं और तुम अपना समय किस तरह बिता रहे हो।

सस्नेह

वापू

—अंग्रेजी। वर्धा, २२।११।१९३४। 'ए बंच आफ ओल्ड लेटर्स' से।]

सौजन्य : श्रीमती इन्दिरा गांधी

३६१. पत्र : हीरालाल शर्मा को

चि० शर्मा,

तुमारा पत्र कल मिला. सम्भव है उससे सामान का पता मिल जाय.

उसमे तुमने जो लिखा है वह शोध करने के लिए काफी है. तुमको यहा इस काम के लिए कैसे वुलाऊ तुम्हारे वहा जाने का एक वडा सवव द्रौपदी और वच्चो के पास रह कर उनकी सेवा करना है. यही तुमारी शिक्षा का आरम्भ है इसी से नेचरोपेथी शुरु होती है फिर तुम लिखते हो डा० अनसारी कवूल करे तो उनके घर के एक कमरे मे रहोगे. यह भी द्रौपदी को छोडकर कृष्णा को हाड पिंजर की हालत मे रखे हुए ? नही, तुमारी शिक्षा, तुम्हारा कर्त्तव्य, आज तो द्रौपदी और वच्चो के पास रहते हुए जो कुछ हो सकता है सो करने का है

द्रौपदी और वच्चो को लेकर खुर्जे के नज़दीक के गाव मे कही रहो ऐसा न हो तो और किसी देहात मे दिल्ली के नजदीक नरेला है वहा कृष्णन नेयर रहता है सज्जन है उसके पास भी रह सकते हो मतलव वह जगह वतायेगा अथवा अपने साथ रखेगा खुर्जे मे भाइयो के साथ तो रहने का नही है जो भाई खर्च देते हैं वह तो जहा होगे वहा खर्च देता ही रहेगा. वताओ उनकी आमद कितनी है ?

अमतुल की इच्छा तुम्हारे साथ रहकर कुछ करने की है यदि किसी देहात मे रह सकते हो तो यह इच्छा भी फलित हो सकती है वह द्रौपदी और वच्चो की सेवा करना चाहती है लेकिन इस वात का तुमारे देहात मे जाकर रहने से कोई सम्वन्व नही है

ऐसा तो मुझे नही कहोगे कि ऐनेटमी के पुस्तक नही मिले हैं इस कारण तुमारा अभ्यास रुक गया है. पुस्तक कभी भी मिले तुमारा अभ्यास तो व्यवस्थित जीवन व्यतीत करने से हो ही रहा है वहम मात्र निकालने से भी होता है देखो ज्ञानोवा को मेरे पास नही लाने मे मेरी रक्षा ही कारण था अगर लोई मिल जाय तो मुझे उसे (ज्ञानोवा) मिलने का कोई कारण नही था किशोरीलाल (मशरूवाले) को मैंने ही नीचे भेजे थे ऐसे ही कमल नयन और मोघे जी की वात है जव वातें हुईं तव अमतुल वहा खडी थी उसने सब बातें सुनी वह कहती है कि कमल-नयन और मोघे जी सिर्फ मजाक करते थे उसमे तुमारे जाने मे खुशी की कोई वात नही थी सम्भव है तुमारे जाने का उनको न रज था न खुशी। नेचरोपैथ वनना चाहता है वह आदमी किसी पर वहम नही करेगा जल्दवाजी नही करेगा, किसी के दोष का ध्यान नही धरेगा

तुलसीदास के इस दोहे का नित्य मनन करेगा

जड चेतन गुण दोपमय विश्व कीन्ह करतार।
सत हस गुण गहहिं पय परिहरि वारि विकार॥

तव तो दूसरो की दवाई करेगा, दूसरो के रोग का निदान सच्चा करेगा रामदास यदि आयेगा तो मेरे साथ ही चलेगा देखता हू क्या होता है.

है। मेरे पर तो उसने कोई असर ही नहीं डाला जिससे मेरे दिल में तुमारे वारे में किसी प्रकार का संशय हो. मैंने जो निदान किया है उसी पर मैं कायम हूं. वहम, अभिमान और परदोषदर्शन. वहम का औषध काल ही है अभिमान का औषध शून्यवत् बनना है, परदोषदर्शन का औषध स्वदोपदर्शन है. हम अपने को सवसे बुरा मानें तो किसी का दोष नहीं देखेंगे और दोष मात्र रोग का रूप लेगा. वातें करने का थोड़ा-थोड़ा समय तो मैं दूंगा लेकिन वात से हमारा काम नही वनेगा. तुमारे लिए मेरे पास मजदूरी का बहुत काम पड़ा है और इसी के साथ मैं थोड़ा और भी काम ले लूंगा.

आज तार दिया है आ जाने का।

२।११।३४ वर्धा बापु के आशीर्वाद

--हिन्दी। वर्धा, २।११।१९३४। 'बापू की छाया में मेरे जीवन के सोलह वर्ष' से।]

सौजन्य : श्री हीरालाल शर्मा।

३६०. पत्र : जवाहरलाल नेहरू को

वर्धा

२२ नवम्बर, १९३४

प्रिय जवाहरलाल,

कुछ दिन हुए, मैंने तुम्हें पत्र भेजा था, जिसमें केवल तुम्हारे स्वास्थ्य के समाचार पूछे थे। माता जी कल यहां आई थी। कहती थी कि तुम्हें कमला के लिफाफे में भेजे हुए पत्रों के सिवा और पत्र नही मिलते। मैं जानना चाहता हूं कि तुम्हारे पत्र-व्यवहार के लिए क्या नियम हैं? लिखो, तुम्हारे क्या हाल-चाल हैं और तुम अपना समय किस तरह बिता रहे हो।

सस्नेह

बापू

—अंग्रेजी। वर्धा, २२।११।१९३४। 'ए बंच आफ ओल्ड लेटर्स' से।]

सौजन्य : श्रीमती इन्दिरा गांधी

३६१. पत्र : हीरालाल शर्मा को

चि० शर्मा,

तुमारा पत्र कल मिला. सम्भव है उससे सामान का पता मिल जाय.

उसमे तुमने जो लिखा है वह शोध करने के लिए काफी है तुमको यहा इस काम के लिए कैसे वुलाऊ तुम्हारे वहा जाने का एक वडा सवव द्रौपदी और वच्चो के पास रह कर उनकी सेवा करना है. यही तुमारी शिक्षा का आरम्भ है इसी से नेचरोपेथी शुरू होती है फिर तुम लिखते हो डा० अनसारी कवूल करे तो उनके घर के एक कमरे मे रहोगे. यह भी द्रौपदी को छोडकर कृष्णा को हाड़ पिंजर की हालत मे रखे हुए? नही, तुमारी शिक्षा, तुम्हारा कर्त्तव्य, आज तो द्रौपदी और बच्चो के पास रहते हुए जो कुछ हो सकता है सो करने का है

द्रौपदी और वच्चो को लेकर खुर्जे के नज़दीक के गाव मे कही रहो ऐसा न हो तो और किसी देहात मे दिल्ली के नजदीक नरेला है वहा कृष्णन नेयर रहता है सज्जन है उसके पास भी रह सकते हो मतलव वह जगह वतायेगा अथवा अपने साथ रखेगा खुर्जे मे भाइयो के साथ तो रहने का नही है जो भाई खर्च देते हैं वह तो जहा होगे वहा खर्च देता ही रहेगा वताओ उनकी आमद कितनी है?

अमतुल की इच्छा तुम्हारे साथ रहकर कुछ करने की है यदि किसी देहात मे रह सकते हो तो यह इच्छा भी फलित हो सकती है वह द्रौपदी और वच्चो की सेवा करना चाहती है लेकिन इस वात का तुमारे देहात मे जाकर रहने से कोई सम्वन्ध नही है

ऐसा तो मुझे नही कहोगे कि ऍनेटमी के पुस्तक नही मिले हैं इस कारण तुमारा अभ्यास रुक गया है पुस्तक कभी भी मिले तुमारा अभ्यास तो व्यवस्थित जीवन व्यतीत करने से हो ही रहा है वहम मात्र निकालने से भी होता है देखो ज्ञानोवा को मेरे पास नही लाने मे मेरी रक्षा ही कारण था अगर कोई मिल जाय तो मुझे उसे (ज्ञानोवा) मिलने का कोई कारण नही था. किशोरीलाल (मशरूवाले) को मैंने ही नीचे भेजे थे ऐसे ही कमल नयन और मोघे जी की बात है जव वातें हुई तव अमतुल वहा खडी थी उसने सव वातें सुनी वह कहती है कि कमल-नयन और मोघे जी सिर्फ मजाक करते थे उसमे तुमारे जाने मे खुशी की कोई वात नही थी सम्भव है तुमारे जाने का उनको न रज था न खुशी। नेचरोपैथ वनना चाहता है वह आदमी किसी पर वहम नहीं करेगा. जल्दवाजी नहीं करेगा, किसी के दोप का ध्यान नही धरेगा

तुलसीदास के इस दोहे का नित्य मनन करेगा

जड़ चेतन गुण दोषमय विश्व कीन्ह करतार।
सत हस गुण गहहिं पय परिहरि वारि विकार॥

तव तो दूसरों की दवाई करेगा, दूसरो के रोग का निदान सच्चा करेगा रामदास यदि आयेगा तो मेरे साथ ही चलेगा. देखता हू क्या होता है.

आजकल समय कैसे व्यतीत करते हो? क्या पढ़ते हो? तुमारे पास किताब तो काफी है ही.

दिल्ली[1] से मनाई हुक्म तो आया है. अब पत्र व्यवहार चल रहा है. देखें क्या होता है.

बापु के

४।१२।३४ वर्धा आशीर्वाद

—हिन्दी। वर्धा, ४।१२।१९३४। 'बापू की छाया में मेरे जीवन के सोलह वर्ष' से।]
सौजन्य : श्री हीरालाल शर्मा।

३६२. पत्र : साहेबजी महाराज को

प्रिय साहेबजी महाराज,

मैंने आपका ६ सितम्बर का पहलेवाला पत्र अपने पास रख छोड़ा है। मैं मैं अपकी 'गौवें, गौवों की मदद करो' (पुस्तिका) सिर्फ़ पिछले हफ्ते ही पढ़ सका हूं। वह बड़े सुन्दर ढंग से लिखी गई है। किन्तु मैं गौ के एक विनम्र प्रतिनिधि के रूप में शिकायत करना चाहता हूं। कुछ विशेषज्ञ उस मिश्रण के बारे में जैसा आप सोचते हैं, मुझसे कह रहे हैं कि वह पूर्णातः सफल नही होता। मैं तो समझता हूं कि ऐसे प्रयोगों की आवश्यकता है जिनसे ग्रामवासियों को उन्हीं के अपने गांवों में मदद मिले। अगर हम उस दिशा में कोई चीज़ नहीं प्राप्त कर सकते तो फिर दयालबाग-जैसे ग्राम से दूर स्थानों की अल्प संख्या को जीवित रखने के लिए गौवों को मरना होगा।

मैं ग्रामोद्योग कार्य में आपकी मदद चाहूंगा।

आपका निश्छल

वर्धा १५।१२।३४ मो० क० गांधी

—अंग्रेजी। वर्धा, १५।१२।१९३४। साहेबजी महाराज, आगरा को लिखे पत्र की फोटो-नकल (जी० एन० २१६) से।]

३६३. पत्र : साहेबजी महाराज को

प्रिय साहेब जी महाराज,

स्टेनलेस फौलादी निबों के साथ आपका तुरन्त भेजा हुआ पूरा उत्तर कल प्राप्त हुआ। (ये निबें) मुझे आनन्द और गौरव प्रदान करती हैं। मैं उनका

१. दिल्ली से वाइसराय और बापू की मुलाकात के सिलसिले में पत्र-व्यवहार चल रहा था उसके लिए वाइसराय की ओर से मनाही हो गई थी।

प्रयोग करूगा। किन्तु इस समय तो मेरी आत्मा गांवो मे वस रही है। जिस कागज पर मैं लिख रहा हू वह गाव का वना है और जिस नरकुल से मेरी कलम वनाई गई है, वह गाव मे पैदा होती है और वहुतेरे नियमो की भाति, आर्थिक नियम (कानून) भी दो तरह के होते हैं—भले और वुरे। अच्छे कानून सबके लिए अच्छे होने चाहिए। इस समय तो आदमी भी, गौवो की भाति ही, धरती पर भार से मालूम होते हैं। क्या वहुसख्या को इसलिए मरने की जरूरत है कि कुछ नगर-वासी जीवित रहे ? मेरा विनम्र प्रयास यह दिखाने का है कि गाववालो को मरने की जरूरत नही है और उनमे जीवित रहने की अन्तर्हित क्षमता है, यदि वे सिर्फ अपना आलस्य छोड दें और सघटित रूप से जीने की चेष्टा करें। नगर-वासियो में ऐसी अन्तर्हित शक्ति नही है। इसलिए वे तो चगेज की तरह सिर्फ मृत मानवो की ढेरिया ही पैदा कर सकते हैं।

आप मुझे कृपया तर्क करने के लिए क्षमा करेंगे। मैं ऐसा इसलिए करता हू कि मैं सर्वांगीण सुख के सामान्य लक्ष को पाने के अपने साघन मे यदि कोई त्रुटि हो तो उसे जानना चाहता हू।

आपका निश्छल
मो० क० गाधी

—अंग्रेजी। वर्धा, २५।१२।१९३४। साहेवजी श्री आनन्दस्वरूप महाराज, दयालबाग, आगरा को लिखे पत्र की फोटो-नकल (जी० एन० २१६०) से।]

३६४. पत्र : चन्द्र त्यागी को

भाई चन्द्र त्यागी,

तुमारा खत पाकर वहुत खुशी हासिल हूई

यदि सभव है तो राजकिशोरी को लेकर यहा मिल जाओ देखने के वाद कह सकूगा क्या उचित है शरीर अच्छा होगा वलवीर सतोप दे रहा है, सुनकर आनद होता है.

वापु के
आशीर्वाद

दिल्ली ६-१-३५

—हिन्दी। दिल्ली, ६।१।१९३५। पत्र की फोटो-नकल (जी० एन० ६६३० तथा सी० डवल्यू० ४२७८) से।]

३६५. पत्र : हीरालाल शर्मा को

चि० शर्मा,

तुमारा खत मिला. मुझे वहुत ही अच्छा लगा है. अविश्वास आया था क्योंकि अमतुल ने बहुत सख्त लिखा था. मुझको साथ देना कोई मामूली चीज नहि है. सब चीजों को, मोहमात्र को छोड़ देना और छोड़ने में खुशी मानना सबसे नही हो सकता. तुमने बाज चीज तो वहुत छोड़ दी है लेकिन भीतरी ज्ञान नहि होगा तो भीतरी आनंद कैसे? और जिसको भीतरी आनंद नही मिलता है वह गुस्से भी होता है और बीमार भी होता है और सब कुछ कर वैठता है.

अव मैं तुम जितना लिखोगे वह सब सत्य में ऐसा ही है ऐसा मान कर चलूंगा. इसमें कठिनाई है. यह भी समझो और कठिनाई का कारण तुमारे में जल्दीपन है क्रोध भी है और क्रोध के मारे जल्दी में कुछ लिख दिया उसे ऐसा ही मानकर मैं बैठ जाऊं तो उचित नहि होगा. लेकिन तुमारे साथ चलने में और कोई चारा पाता नहि हूं. गाय रखना तो मुझे अच्छा लगता है. इतना याद रखो कर्जा बिलकुल न करना. हरिजन का सम्पर्क होता है वह भी बहुत अच्छा है।

तुमारी डाक्टरी पढाई के बारे में नित्य खयाल आता है. डा० अंसारी को लिखा है. उत्तर का ठिकाना नही उसकी शिकायत भी क्या करें? शक्ति से ज्यादा काम ले लेता है.

मैं नही जानता किस चीज में बहतरी है. मद्रास का क्या कोर्स है मुझे पता नही है लेकिन मैं पता निकाल सकता हूं. कोई सर्जन के यहां रहना नहि हो सकेगा. अगर मद्रास जाना हुआ तो अकेले जाओगे? द्रौपदी का खुर्जे में अकेले रहना मेरे लिए असह्य हो जायगा. मेरे साथ रहे, मेरा काम करे, बा के स्वभाव की बर्दाश्त करे तो मुझे सबसे अच्छा लगेगा और जब वह इस तरह से रहने के लिए तैयार हो जायगी तब तुमारा काम और मेरा भी सरल हो जायगा. तुमारे बारे में मैंने वहुत आशायें बांध रखी है. तुमारे सब दोष निकल जाने से तुमारे पास से बहुत ही काम मैं ले सकता हूं ऐसा प्रतीत होता है. आखिर अगर तुमारा विलायत जाने का होगा तो भी साथ में द्रौपदी और बच्चों को ले जाने में मै कभी तैयार नही हूंगा क्योंकि उसको मैं अनावश्यक मानता हूं. तुमको भेजने के लिए कुछ तैयारी है वह पश्चिम के बारे में तुमारा मोह उतारने के लिए है. सच्ची नैसर्गिक चिकित्सा देहात में ही है. पश्चिम का जो ज्ञान है उसमें से जो लेना वह उनकी किताबों से ले लें. वाकी सब देहात में से ही मिलने वाला है. और अन्त में हम जो सेवा करना चाहते हैं वह भी देहातियों की ही है न? यह सब सोचो

और वाद मे लिखो तुमारी दृष्टि से क्या किया जाय? द्रौपदी मेरे साथ रह सकती है?

तुमारा टाइम टेविल अच्छी है. कौन सी किताव पढते हैं? वालको को क्या पढाते (हो)?

आटा घर पर पीसा जाता है? चावल वगैर पोलिश के हैं? वगैर पोलिश के चावल वाजार मे आते ही नहि यह पता मुझे अव लगा वगैर पोलिश के चावल निकालना वहुत आसान है ऐसा सुना है मैंने पेडी पैदा कर ली है और उसको पीस कर छिलका निकालने की कोशिश यही करूगा

प० कौन है जो सिखाता है मैं नही जानता, ऊपर के हरुफ पढ सकते हो या नही. मैं दाहिने हाथ से सिर्फ सोमवार को लिखता हू उसे थोडा आराम पहुंचे।

वापु के
आशीर्वाद

१३।२।३५ वर्धा

—हिन्दी। वर्धा, १३।२।१९३५। 'वापू की छाया में मेरे जीवन के सोलह वर्ष' से।]
सौजन्य : श्री हीरालाल शर्मा

३६६. पत्र : रमेशचन्द्र को

भाई रमेशचद्र जी,

आपका पत्र उचित है। निर्णय करने का मार्ग हिंदु, मुसलमानादि भेद नही है। ऐसे वहूत मृसलमान को जानता हू जो स्वच्छता का पालन भलीभाति करते हैं। चद निरा (मिष) भोगी भी होते हैं। इसलिये जिस जगह पर स्वच्छता के नियमो का पालन होता है वही खाना, पीना की मर्यादा रखें तो सव कुछ हो जाता है। मुझे तो ऐनोक्युलेशन मात्र अप्रिय है। लेकिन खुन इत्यादि के सर्वथा त्याज्य है। वनस्पति अयवा खनिज पदार्थ के इस तरह त्याज्य नही है।

मो० क० गाधी

१६।२।३५ वर्धा

[टिप्पणी—यह पत्र लिखा किसी और के हाथ का है। केवल हस्ताक्षर गाधी जी ने किये हैं।—सम्पा०]

—हिन्दी। १६।२।१९३५। श्री रमेशचन्द्र, रिटायर्ड चीफ इजीनियर, वलरामपुर हाउस, इलाहावाद से प्राप्त पत्र की फोटो-नकल (जी० एन० ६०९३) से।

३६७. पत्र : सुरेश सिंह को

[यह पत्र गांधीजी ने कालाकांकर, अवध के राजा अवधेश सिंह जी की मृत्यु के ५-६ महीने बाद उनके छोटे भाई सुरेश सिंहजी को लिखा था।—सम्पा०]

तुम्हारा खत मिला है. जितना हो सके इतना किया जाय. कोर्ट आफ वार्डस तरफ से नियामक कौन है? जितनी सादगी ग्रहण कर सकते हैं इतनी सादगी रखकर जीवन व्यतीत किया जाय. मुझे लिखा करो. देहातियों की जो कुछ सेवा हो सकती है वह की जाय.

बापु के आशीर्वाद

वर्धा १६।२।३५

—हिन्दी। वर्धा, १६।२।१९३५।]

सौजन्य : श्री सुरेश सिंह, कालाकांकर (अवध)

३६८. पत्र : चन्द्र त्यागी को

भाई चन्द्र त्यागी,

मुझे तो तुम्हारा काम का ध्यान चाहिये। राजकिशोरी को मैंने रख लिया क्योंकि दोनों अपने विवाह के बारे में तटस्थ थे। किसी को एक दूसरे के साथ रहने की लालसा ही न थी। भाई को कुछ परवाह न थी। मैने कड़ी शर्त रखी उसका सबने खुशी से स्वीकार कर लिया। तुम्हारे सर पै उसका बोझ रखना और तुमसे काम भी लेना गैरमुनासब जंचा। यह सबब था राजकिशोरी को रख लेने का। उसका काम अच्छी तरह से चल रहा है। कुछ जानती नही है लेकिन सरल लड़की है। शरीर अच्छा रहता है।

बापु के आशीर्वाद

वर्धा ता० ८-३-३५

(टिप्पणी—यह पत्र भी लिखा किसी और के हाथ का है। हस्ताक्षर गांधीजी के है।—सम्पा०]

— हिन्दी। वर्धा, ८।३।१९३५। जी० एन० ३२६२ की फोटो-नकल से]

३६९. पत्र : भगवानदीन मिश्र को

भाई भगवानदिन,

भाई अवधेश पर आया हुआ तुमारा पत्र मैंने पढ़ा है. अवधेश के जैसी गलती

वहूत युवक करते हैं. अवधेश ने गलती महसूस की है. प्रायश्चित्त भी कर लिया है इससे अबी उस वारे मे कोई कलक न माना जाय. हरिजन मे भी मैं ऐसे लिखूंगा.

मो० क० गाधी

वर्धा, ३०।३।३५

—हिन्दी। वर्धा, ३०।३।१९३५। श्री भगवानदीन मिश्र, वहराइच को लिखे पत्र की फोटो-नकल (जी० एन० ७३६) से]

३७०. पत्र : अवधेशदत्त को

अच्छी वात है. मेरे निकट ही रहोगे जैसे कि आज है. तुमको कातना इ० नहि आता होगा तो सिखा दूगा. दूसरा देख लूगा. जहा तक रहोगे रु० २५ माहवार दिया जायगा. खाने का खर्च उसमे से कट जायगा. खाने के खर्च का हिसाव करा रहा हु दिल मे कुछ भावना पैदा हो तो मुझे वताते रहो.

वापु के आशीर्वाद

३१।३।३५

अखवार मे भेज रहा हू

—हिन्दी। वर्धा, ३१।३।१९३५। जी० एन० ३२१९ की फोटो-नकल से]

३७१. पत्र : बनारसीदास चतुर्वेदी को

भाई वनारसी दास,

तुमारा खत मिला कुछ आघात नहीं पहोचा है. अंत मे तो मनुष्य जो कर सकता है वही करे मेरी सलाह है कि प्रथम तो तुमारे शादी कर लेना. हिंदी प्रचार का काम करना. इसमे तीन अर्थ[ ] सिद्ध होते हैं. विशाल भारत हिंदी प्रचार और लेखन प्रवृत्ति.

वापु के आशीर्वाद

वर्धा, ११।४।३५

—हिन्दी। वर्धा, ११।४।१९३५। जी० एन० २५५५ की फोटो-नकल से]

३७२. पत्र : अवधेशदत्त[1] को

चि० अवधेश,

तुमारा खत अच्छा है. ठीक वात है. तुमारा तनख्वा नहि मानेंगे लेकिन जव तुमारे जाने का होगा तव किराया दे दूंगा. तुमारा क्रोध निकाल दो. नम्र वन जाओ. यहां कोइ न ऊंच है न नीच है सव एक सा है. कोई सरदार नही है कोई नौकर नहीं है. हम सव सेवक है. किसी मजदूरी की हमें शर्म नही है.

वापु के आशीर्वाद

१२।४।३५

—हिन्दी। वर्धा, १२।४।१९३५। जी० एन० ३२१० की फोटो-नकल से)

३७३. पत्र : अवधेशदत्त को

चि० अवधेश,

इसमें कुछ नहीं था. अवश्य दिल में जो ख्याल आवे उसे लिखा करो. रामायण का तुम्हारा ज्ञान कैसा है?

२४।४।३५

वापु

—हिन्दी। वर्धा, २४।४।१९३५। जी० एन० ३२११ की फोटो-नकल से]

३७४. पत्र : जवाहरलाल नेहरू को

मेरे प्रिय जवाहरलाल,

महादेव ने अपनी सीमाप्रान्त-यात्रा के विषय में जो टिप्पणियां लिखी हैं उनकी एक प्रति यह रही। चूंकि मैं नहीं जा सका और चूंकि हमें अशान्तिकर समाचार मिल रहे थे, मैंने महसूस किया कि उसे भेजा जाना चाहिए। मैं ये टिप्पणियां सव सदस्यों में नही घुमा रहा हूं। मैं (इसकी) प्रतिलिपियां

---

१. अवधेशदत्त युवक थे और वहराइच, उत्तर प्रदेश के एक गांव के निवासी थे। उन दिनों वर्धा में गांधीजी के पास आकर रहे थे।

मौलाना[1] और सुभाष[2] को भेज रहा हू। ये टिप्पणिया उद्विग्न कर देती हैं। महादेव के पास तो कहने के लिए और बातें भी हैं। बेशक, मैं एक प्रतिलिपि (अली) भाइयो को भेज रहा हू। मुझे आशा है कि तुम (अली) भाइयो पर अपने महत प्रभाव का उपयोग करने को प्रेरित होगे। निस्सन्देह मैं भी तार-द्वारा सम्बन्ध रख रहा हू। यदि खा साहब[3] चाहेगे तो जो आघात मुझे लगा हैं उसके बावजूद मैं चन्द दिनो के लिए प्रान्त मे जा भी सकता हू। ऐसा लगता है कि हम अन्दर से दुर्बल होते जा रहे हैं। जब मैं देखता हू कि अपने इतिहास के इस खतरनाक समय मे महत्वपूर्ण प्रश्नों पर हम लोग एक दूसरे से सहमत नही हैं मुझे चोट लगती है। यह जानते हुए कि आजकल मैं तुम्हे अपने साथ नही ले जा पाता (सहमत नही कर पाता) मैं अपने को कितना अकेला अनुभव करता हू, यह मैं तुम्हे बता नही सकता। मैं यह जानता हू कि तुम स्नेह की खातिर बहुत कुछ करोगे, किन्तु राज्य के बारे मे जब बुद्धि विद्रोह करती है तब, स्नेह को आत्मार्पण नही किया जा सकता। तुम्हारे विद्रोह के कारण तुम्हारे प्रति मेरा आदरभाव और गहरा हो गया है। किन्तु इससे इकलेपन का दुःख और बढ जाता है। पर अब मुझे खतम करना चाहिए।

प्रेम

सेगांव, २५-४-३५ बापू

—अंग्रेजी। सेगांव (सेवाग्राम) वर्धा, २५।४।१९३५। नेहरू सग्रहालय मे सुरक्षित पत्रावली से।]
सौजन्य : श्रीमती इन्दिरा गांधी
तथा नेहरू संग्रहालय।

३७५. पत्र : अयोध्याप्रसाद को

भाई अजोध्याप्रसाद,

अवधेश पर तुमारा पत्र है सो मैंने सुना. यदि उसको मेरे पास ही रखना

---

१. मौलाना अबुल कलाम आजाद।

२. सुभाषचन्द्र बोस।

३. खां साहब, अब्दुल गफ़्फार खा के बड़े भाई, सीमाप्रान्त के मुख्य मन्त्री।

है तो थोड़ दिनों के लिये अपने पास बुलाने का मोह छोड़ दिया जाय. ऐसा करने से कार्य में बाधा आती है और पैसे बरबाद होते हैं.

मो० क० गांधी

६।५।३५ वर्धा के व० मातरम

—हिन्दी। वर्धा, ६।५।१९३५। जी० एन० ३२१६ की फोटो-नकल से]

३७६. पत्र : अवधेशदत्त को

चि० अवधेश,

तुलसीदास ने ही कहा है ना कि राम से नाम बड़ा है अर्थात् देहधारी राम से देहातीत अरूपी अनामी राम बड़ा है. दशरथनंदन सीतापति राम सही तदपि हमारी कल्पना के पूर्ण पुरुषोत्तम राम क्योंकि अव्यक्त भी व्यक्त से भिन्न नही है. अव्यक्त की ही यह सब माया है. राम शब्द पर मेरा कोई आग्रह नही. भले ओंकार, कृष्ण इ० भी क्यों न हो.

क्रोध तो आता है. उस पर क्रोध करता हूं. पूर्ण विजय आत्मदर्शन से ही संभव है।

हमको कोई कैसा भी नीच माने उनपर भी प्रेम करें वही अहिंसा बाकी सब माया.

७-५-३५

बापु के आशीर्वाद

—हिन्दी। वर्धा, ७।५।१९३५। जी० एन० ३२१२ की फोटो-नकल से]

३७७. पत्र : ठाकुरप्रसाद[1] शर्मा को

भाई ठाकुरप्रसाद शर्मा,

दोष छुपाकर हम इत्तेफाक नही पढ़ा सकते हैं. यदि दोनों पक्ष मिलकर पंच

---

१. श्री ठाकुरप्रसाद शर्मा हिन्दी के सुलेखक और बनारस म्युनिस्पल बोर्ड के भूतपूर्व एक्जिक्यूटिव अफसर।

नियत करें तो अदालत छोडे यदि ऐसे नही हो सकता है तो अदालती न्याय लेने की कोशीश करने मे कोई दोप नही पाता ऐसे कामो मे कोई निश्चित सिद्धात नही हो सकता है प्रत्येक केस का निर्णय उसके गुणदोप पर निर्भर रहता है.

वर्धा मो० क० गाधी

१३-५-३५

— हिन्दी। वर्धा, १३।५।१९३५। श्री ठाकुरप्रसाद शर्मा, काशी को लिखे पत्र की फोटो-नकल (जी० एन० १५६) से]

३७८. पत्र : हनुमानप्रसाद पोद्दार को

भाई हनुमान प्रसाद,

मैंने अखवार मे ही देखा था कि...[1] 'कृष्णकात के सामने खडी होगी. मुझे किसी ने पूछा भी नही था इलेक्शन के मामले मे मैं पडता ही हू थोडा, और काग्रेस छोडने के वाद तो खतम हो गया.

मालवीय जी महाराज ने वडी उदारता से और दूरदेशी से कार्य कर लिया.

पजाव की वात तो मेरे पास भी वहुत आई है जैसे पजाव में ऐसे अन्य प्रान्तो मे भी है न्यूनाधिकता की ही वात है।

उसका औषध हमारी लेखनी नही है हमारे आचार ही हैं. यदि हम थोडे भी मही इस कुत्सित वायु मे सन्तुलित रहेगे तो सव कुशल ही होगा. मैं असावधान नही हू, प्रयत्नशील भी हू

कुछ मतभेद होते हुए भी तुमारे प्रेम मे कुछ भी न्यूनता नही आ सकती है, यह मैं जानता हू यही हाल कई मित्रो के हैं यह ज्ञान मुझे नम्र वनाता है.

वापु के
आशीर्वाद

वर्धा १४।५।३५

— हिन्दी। वर्धा, १४।५।१९३५। गाधी जी के स्वाक्षरों मे लिखी हुई मूल प्रति से।]
सौजन्य : श्री हनुमानप्रसाद पोद्दार।

---

१. यहा शब्द स्पष्ट नहीं हैं, किसी का नाम जान पड़ता है... प्रभाजी या ऐसा ही कुछ।

३७९. पत्र : अवधेशदत्त को

चि० अवधेश,

अपना देश सब नैतिक बात में सर्वोत्कृष्ट बने और रहे. मनष्य का स्वाभिमान है कि वह आत्मोन्नति करे और करने में मत्यु से भी न डरे.

स्वाभिमान और गौरव की रक्षा के लिये अथवा कुचेष्टा दूर करने के लिये क्रोध क्यों चाहीये. मुझे कोई कहता है नाक घसीटो. मैं क्रोध न करूं लेकिन नाक न रगडुं. इसके लिये जो दण्ड मिले उसे प्रसन्नता से सहन करूं.

धर्म उसे कहते है जो आत्मा को ऊंचे ले जाता है. ईश्वर सत्य का नाम है. सत्य रूप है ऐसी कल्पना करे.

वर्धा बापु के आशीर्वाद
१५।५।३५

—हिन्दी। वर्धा, १५।५।१९३५। जी० एन० ३२१७ की फोटो-नकल से]

३८०. पत्र : हनुमानप्रसाद पोद्दार को

भाई हनुमान प्रसाद,

तुमारा खत मिला. तुमारे विचारों को पढ़कर मेरे को बड़ी खुशी होती है और संतोष भी। कभी कभी ऐसा दिल भी करता है कि तुम जैसा आदमी मेरे साथ रहता. भाई जमनालाल जी भी ऐसा ही चाहते है. पर जहां पर भी तुम रहो मन साथ है तो साथ ही हो. तुम कल्याण और गीताप्रेस से जो काम कर रहे हो वह ईश्वर की बड़ी सेवा है. तुमारी सेवा में मै भी अपना हिस्सा मानता हूं. क्योंकि तुम मुजको अपना समजते हो, वैसा ही मै भी समजता हूं.

कल्याण में जो तस्वीर छपती है उससे मुजको संतोष नही है. इतने दागीने[1] और शृंगार ईश्वर को क्यों. मैं राघवदास को भी इस बाबत लिखा था.

वर्धा १६।५।३५ बापु के आ०

—हिन्दी। वर्धा, १६।५।१९३५। गांधी जी के मूल पत्र से।]
सौजन्य : श्री हनुमानप्रसाद पोद्दार।

---

१. आभूषण।

३८१. पत्र : शालिग्राम वर्मा को

भाई शालिग्राम वर्मा,

मैंने जो कुछ कहा वह निर्दोष भाव से था जो दलील पेश की गई थी उसे सुनकर मेरे पर जो असर हुआ मैंने कह दिया. उसमे किसी पर आक्षेप तो हो ही नही सकता था मैंने राय ली उस वारे मे मैं कह चुका था की वह 'इन-फोर्मल' थी. मैं तो वाद मे समझ भी गया था कि प्रकाशको को मत्री पद से मुक्त ही रखना योग्य नही होगा आपको सवध छोडने का कोई कारण नही है मेरी आशा है कि आप इस्तीफा भेजने का इरादा छोड देंगे

आपका
मो० क० गाधी

१६।५।३५ वर्धा

—हिन्दी। वर्धा, १९।५।१९३५। श्री शालिग्राम वर्मा, मन्त्री हिन्दी साहित्य सम्मेलन, इलाहावाद को लिखे पत्र की फोटो-नकल (जी० एन० ८२१९) से]

३८२. पत्र : राजकिशोरी को

चि० राजकिशोरी,

तुमको मैं साथ नही ले चला उसका मुझको दु:ख था लेकिन तुमारा कल्याण तुमको वही रखने में था. लेकिन कोई अवसर आवेगा जव मेरे साथ ही चलेगी खुश होगी.

वापु के
आशीर्वाद

वोरसद २३।५।३५

—हिन्दी। वोरसद, २३।५।१९३५। पत्र की फोटो-नकल (जी० एन० ६६३६) से]

३८३. पत्र : अवधेशदत्त को

चि० अवधेश,

मनुष्य जीवन का उद्देश्य प्राणीमात्र की सेवा माना जाय

२. एकादश व्रत का पालन और उसके विरोधी वस्तु का त्याग आवश्यक है.

३. गरुड़ के वचन में क्रोध अवश्य था. उसका अर्थ यह कभी नहीं है कि हम भी क्रोध करें.

२४।५।३५   बापु के आशीर्वाद

—हिन्दी। वर्धा, २४।५।१९३५। जी० एन० ३२१५ की फोटो-नकल से]

३८४. पत्र : अवधेशदत्त को

चि० अवधेश,

माता पिता पत्नी आदि के प्रति जो धर्म है उसका त्याग करके समाज सेवा कभी हो नही सकती है। वह धर्म सेवाधर्म का विरोधी नहीं है। माता पिता आदि (के) प्रति क्या धर्म है, उसकी क्या मर्यादा है, यह जानना आवश्यक है। पत्नी का पालन करना और जहां तक वह सहधर्मिणी रह सकती है. वहां तक संयम में रहकर उसको साथ देना पति का धर्म है। माता पिता अपंग है और धनहीन है, उनके और कोई पुत्र नहीं है, इस हालत में उनका पोषण और उनकी सेवा करने का धर्म प्राप्त होता है।

बकरी का दूध लेता हूं क्योंकि लाचार बन गया था। व्रत के कारण गाय भैंस का तो ले ही सकता न था। व्रत का संकुचित अर्थ करके बकरी का दूध लेने की छूट ले ली।

यदि अंगार से पका कर कुछ न लेना है तो फलाहार से ही निपटारा हो सकता है।

बापु के
वर्धा २३।६।३५   आशीर्वाद

—हिन्दी। वर्धा, २३।६।१९३५। जी० एन० ३२१३ की फोटो-नकल से]

३८५. पत्र : हनुमानप्रसाद पोद्दार को

भाई हनुमान प्रसाद

हिन्दी साहित्य सम्मेलन (की ?)[1] परीक्षा के लिये जो मुझे लिखा है सो

१. यहां कागज फटा हुआ है।

समिति को लिखा जाय तो अच्छा होगा। काका साहब को आज प्रयाग भेज रहा हूं। तुम्हारे पत्र का वे उपयोग करेंगे। मैंने सोचा कि तुम्हारे जैसे सज्जन समिति मे सदस्य होंगे और उसको पत्र द्वारा भी मदद देते रहेंगे तो भी अच्छा होगा। कितना भी काम है, कोई कोई समय तो हाजरी भरना भी सभव होना चाहिये। हिन्दी भाषा की उन्नति हिन्दी साहित्य की शसुद्धि (सशुद्धि?) तुम्हारा विषय भी तो है. . .[1] और जो काम के लिए मेरे लिखने का एक अर्थ था उसका उल्टा राघवदासजी ने बना लिया। कुछ भी लिखने की इच्छा नही होती है। लेकिन तुमको मैं क्या कहू? यह मेरा एक वाक्य लेख—योगो के (का) सम्राट निष्काम कर्मयोग है।

हरिजन पानी फड के पैसे दिल्ही ही भेज दीजिये।

मगनवाडी, वर्धा — बापु के आशीर्वाद
ता० १२।७।३५

—हिन्दी। वर्धा, १२।७।१९३५। गांधी जी के मूल पत्र से।]
सौजन्य : श्री हनुमानप्रसाद पोद्दार।

३८६. पत्र : गोविन्दलाल शाह को

भाई गोविंदलाल जी,

तुम्हारा खत बहुत दिनो के बाद आया। जब म्युनिसिपालीटी से वादा कर लिया है तो कुछ कहने को ही नही है। यो भी हरिजन सेवक सघ इस जमीन व मकान का कबजा नही ले सकते हैं। म्युनिसिपालीटी को देना ही बेहतर है।[2]

तुम सबका स्वास्थ्य बेहतर है।

३०।७।३५ वर्धा — बापू के आशीर्वाद

—हिन्दी। वर्धा, ३०।७।१९३५]।
सौजन्य : श्री राजीवलोचन शाह
नैनीताल।

---

१. यहां पत्र फटा है।
२. गोविन्दलाल जी ने ताकुला (नैनीताल) में स्थित अपनी जमीन दान करने के विषय में गांधी जी की सलाह मागी थी।

३८७. पत्र : जवाहरलाल नेहरू को

मुंवई जाते हूए
१०-८-३५

चि० जवाहरलाल,

तुम्हारा खत मिला है. चर्खा संघ की काश्मीर शाखा की थोड़ी वात तो मैं जानता हूं. दवाखाना क्यों वंद हुआ, मैं नही जानता हूं. तुमने मुझको लिखा सो तो अच्छा हुआ. मैंने खत की नकल जाजू[1] को भेज दी है. मैं तो मुंवई जा रहा हूं. वहां से सरदार को लेकर पूना जाउंगा. वहां कितना रहना होगा मुझे पता नहीं है. जाजू जीं का जवाव आने पर फिर लिखुंगा.

तुमको काश्मीर की मुसाफिरी से फायदा होना ही था.

मोलाना साहव पर क्या हमला हूआ था ?

वापु के आशीर्वाद

—हिन्दी। १०।८।१९३५। गांधी जी के स्वाक्षरों में लिखे पत्र की प्रतिलिपि। नेहरू संग्रहालय में सुरक्षित पत्रावली से।]
सौजन्य : श्रीमती इन्दिरा गांधी तथा नेहरू संग्रहालय।

३८८. पत्र : अवधेशदत्त को

चि० अवधेश,

जो धर्म तुमारे सामने तात्कालिक पैदा हो उसका पालन करने से सव अच्छा ही होगा.

जो सदस्य अपनी संस्था के नियमों को जानवूझकर भंग करते हैं उनको उस स्थान में रहने का कोई अधिकार नहीं है.

वर्धा, २६-८-३५

वापु के आशीर्वाद

श्री अवधेशदत्त अवस्थी,
गांव रमपुरवा, पो० वड़वापुर
(जिला वहराइच)

—हिन्दी। वर्धा, २६।८।१९३५। जी० एन० ३२१८ की फोटो-नकल से]

---

१. श्रीकृष्णदास जाजू, चर्खा संघ के प्रमुख।

३८९. पत्र : जवाहरलाल नेहरू को

मेरे प्रिय जवाहरलाल,

तुम्हारा तार मिलने पर मुझे जो आराम मिला, उसकी तुम कल्पना कर सकते हो। सदा की तरह महादेव इसे अपने साथ ले जा रहा है। काश मैं खुद आया होता किन्तु मुझे नही आना चाहिए। सामान्य दिलचस्पी की सब बातो पर तुम मुझे साफ-साफ अपनी राय देना। यदि कोई अलध्य अवरोध न हो तो अगले वर्ष तुम्हे काग्रेस-जलयान को अपने हाथ मे लेना चाहिए। वहा पहुचने पर तुम कमला की दशा का तार मुझे दोगे। तुम्हारी रिहाई की खबर से ही उसे काफी आराम पहुचा होगा।

मुझे आशा है, तुम अच्छे होगे।

प्रेम

वर्धा ४-९-३५ बापू

[अंग्रेजी। वर्धा, ४।९।१९३५। नेहरू संग्रहालय में सुरक्षित पत्रावली से।]
सौजन्य : श्रीमती इन्दिरा गांधी तथा नेहरू संग्रहालय।

३९०. पत्र : जवाहरलाल नेहरू को

मेरे प्रिय जवाहरलाल,

कैसा अच्छा हुआ, तुम कमला के पास पहुच गये। उसके लिए यही सर्वोत्तम 'टानिक' (बल्य औषधि) है। इसके साथ मैं उसके लिए (भी) एक रुक्का रक्खूगा। तुम्हारे सदेश यहा बाकायदा पहुच रहे हैं। जो कुछ सरूप के पास आता है वह उसे दोहरा देती है। हमे आशा करनी चाहिए, अन्त मे सब अच्छा ही होगा। कृपया डा० अटल को उनके सन्देशो और पत्रो के लिए धन्यवाद दो, जो बडे उपयोगी साबित हुए हैं। जबतक खतरा बना है मैं तुमसे बराबर पत्र की आशा करता हू। टाइप किये हुए पन्ने मेरे पास हैं। जितनी जल्दी सम्भव होगा, मैं उन्हें पढ़ जाऊगा।

किसी जाच-कार्य मे वल्लभभाई को मदद देने के लिए महादेव को बम्बई जाना पडा। वह अब भी वही है। राजगोपालाचारी[1] लक्ष्मी[2] और उसके शिशु-

---

१. चक्रवर्ती राजगोपालाचार्य, गाधी जी के प्रमुख सहयोगी, समधी, स्वतन्त्र भारत के प्रथम गवर्नर-जेनरल, अब स्वतन्त्र दल के सस्थापक।
२. राजगोपालाचार्य की छोटी लड़की जिनका विवाह गाधी जी के सबसे छोटे पुत्र देवदास के साथ हुआ था।

पुत्र अभी-अभी आये हैं। देवदास बुरी तरह बीमार था। अंसारी ने उसे शिमला भेज दिया है। मीरा मेरे पास है किन्तु दूषित ज्वर में चित्त पड़ी हुई है।

मैं चाहता हूं कि अगले साल के लिए तुम अपने को अध्यक्ष निर्वाचित होने देने की अनुमति दोगे। तुम्हारी स्वीकृति से अनेक कठिनाइयां हल हो जायंगी। यदि तुम ठीक समझो तो मुझे एक तार भेज दो।

क्या इन्दु का तय हो गया ?

खुर्शेद यहां है। वह तुम्हें मामूली डाक से (पत्र) लिखेगी।

हम सब से प्रेम

वर्धा बापू

१२।६।३५

—अंग्रेजी। वर्धा, १२।९।१९३५। नेहरू संग्रहालय में सुरक्षित पत्रावली से।]

सौजन्य : श्रीमती इन्दिरा गांधी तथा नेहरू संग्रहालय।

३९१. पत्र : जवाहरलाल नेहरू को

मेरे प्रिय जवाहरलाल,

तुम्हारे तीन स्वागत (सु-आगत) पत्रों ने हम सब को कमला के विषय में सही खबर दी। कुछ समय के लिए तुमसे इसी व्यवहार का अनुसरण करने की आशा करता हूं। मैंने नित्य तार देने के लिए तार किया है क्योंकि जनता की वैसी मांग है। किन्तु जब परिवर्तन नहीं था तब कोई (तार) न भेजकर तुमने ठीक ही किया। प्रेषक का नाम निकालकर भी तुमने ठीक किया। वहां तुम्हारी उपस्थिति से यहां के तुम्हारे मित्रों को बड़ा सन्तोष मिला है, क्योंकि वह कमला के लिए अमृत का काम करेगी। इस हवाई डाक से मैं उसके लिए कोई अलग पत्र नहीं लिख रहा हूं।

अब मैं तुम्हारी पाण्डुलिपि को लेता हूं। जहां तक सिद्धान्तों की स्थापना का सवाल है, तुम्हारे साथ सहमत होने में मुझे कोई कठिनाई नहीं है। किन्तु जब हम ठोस ज़मीन पर उतरते हैं, तो आमतौर पर हम उसी भाषा का इस्तेमाल करते हैं जिसे मैंने किया है। कांग्रेस ने जिस विराट संस्था का रूप ग्रहण कर लिया है, उसमें कोई एक आदमी तमाशे को जारी रखने की उम्मीद नहीं रख सकता। किन्तु किसी-न-किसी को तो कन्धे पर बोझ उठाना ही पड़ेगा और लोग कुछ पथ-दर्शन चाहते हैं। मेरे पूछने का यही कारण है। यदि तुम चुने जाते हो तो तुम

जिन नीतियो और सिद्धान्तो का प्रतिपादन करते हो उन्ही के लिए चुने जाओगे। इसलिए मैं चाहता हू कि तुम मुझे वता दो कि क्या काटो के ताज के लिए तुम अपने नाम का प्रस्ताव किये जाने की अनुमति देते हो ?

मेरा खयाल है कि अव इन्दु कमला की हालत सुधरने का इन्तजार करेगी।

मैं काग्रेस का विधान भेज रहा हू। यदि तुम इसपर अपना ध्यान केन्द्रित कर सको तो मैं चाहूगा कि तुम इस पर अपनी सुविचारित आलोचना मुझे भेज दो।

जहा तक काग्रेस की वर्तमान नीति का सम्बन्ध है, यद्यपि मैं किसी तरह भी इसके व्यौरेवार अमल के लिए जिम्मेदार नही हो सकता किन्तु प्रधानत' उसका यह रूप मेरा ही दिया हुआ है। वह कोई विचलन की नीति नही है। वह इस केन्द्रीय धारणा पर निर्मित है कि शान्तिपूर्ण कार्रवाई के लिए जन-शक्ति को कैसे सगठित किया जाय। किन्तु तुम्हारी अनुपस्थिति मे हम लोग वॅधे-वॅधे चल रहे थे। अब जव तुम मुक्त हो तव तुम्हें रास्ता दिखाना है और अपने साथ अपने ऐसे साथियो को लेना है जो पूरे दिल से तुम्हारे साथ चल सकें। जहा तक मैं जानता हू, वे तुम्हारे रास्ते मे रुकावट नही डालेंगे—वहा भी नही, जहा वे तुम्हारा अनुगमन करने मे असमर्थ होंगे। जव तुम वहा कमला की शुश्रूषा मे लगे हुए हो तव इस प्रकार की और वातें लिखकर मैं तुम्हे थकाऊगा नही।

प्रेम

२२।९।३५ वर्धा बापू

ज० नेहरू महोदय

वेडेनविला (स्वीजरलैण्ड)

—अंग्रेजी। वर्धा, २२।९।१९३५। नेहरू संग्रहालय मे सुरक्षित पत्रावली से।]

सौजन्य : श्रीमती इन्दिरा गांधी तथा नेहरू सग्रहालय।

३९२. पत्र : जवाहरलाल नेहरू को

[१९३५ ई० मे कमला जी का स्वास्थ्य फिर वहुत खराव हो जाने के कारण उन्हे जर्मनी के ब्लैक फारेस्ट आरोग्याश्रम मे रक्खा गया था। जव उनकी हालत विगड़ने लगी तो जवाहरलाल जी को अल्मोड़ा जिला जेल से मुक्त कर दिया गया और वह तुरन्त उनके पास जर्मनी चले गये। गाधीजी के पत्र वहीं भेजे गये थे।—सम्पा०]

वर्धा
३ अक्तूबर, १९३५

प्रिय जवाहरलाल,

तुम्हारे पत्र घड़ी की-सी नियमितता से आते हैं और एक देन-जैसे लगते हैं। देखता हूं कि कमला बड़ी बहादुरी से प्रयत्न कर रही है। इसका फल मिलेगा। प्राकृतिक चिकित्सा के लिए मेरा पक्षपात तुम्हें मालूम है। स्वयं जर्मनी में अनेक प्राकृतिक चिकित्सालय हैं। सम्भव है, कमला का मामला उस मंजिल से गुजर गया हो। परन्तु कौन जाने कब क्या होता है। मुझे ऐसे मामले मालूम हैं जो चीर-फाड़ के योग्य बताये जाते थे, किन्तु प्राकृतिक चिकित्सा से अच्छे हो गये। जैसा भी है, मैं अपना अनुभव तुम्हें लिख रहा हूं। अगले वर्ष के लिए ताज पहिनने के बारे में तुम्हारा पत्र हर्षदायक था। तुम्हारी स्वीकृति पाकर मुझे प्रसन्नता हुई। मुझे विश्वास है कि इससे बहुत-सी कठिनाइयां हल हो जायंगी और देश के लिए यही सबसे ज्यादा सही चीज हो सकती थी।

लाहौर में तुम्हारी अध्यक्षता लखनऊ की अध्यक्षता से बिल्कुल भिन्न वस्तु थी। मेरी राय में लाहौर में हर बात में रास्ता साफ़ था। लखनऊ में किसी भी बात में ऐसा नही होगा। परन्तु मेरे खयाल से उस परिस्थिति का सामना जितनी अच्छी तरह तुम कर सकोगे, और कोई नही कर सकेगा। भगवान तुम्हें यह भार उठाने की पूरी शक्ति दे।

मैं तुम्हारे अध्यायों को अधिक-से-अधिक तेजी से पढ़ रहा हूं। वे मेरे लिए बड़े दिलचस्प है। इससे अधिक अभी नहीं कहूंगा।

इस पत्र के साथ तुम सबके लिए हम सबका प्रेम।

बापू

—अंग्रेजी। वर्धा, ३।१०।१९३५। 'ए बंच' आफ ओल्ड लेटर्स' से।]
सौजन्य : श्रीमती इन्दिरा गांधी

३९३. पत्र : जवाहरलाल नेहरू को

मेरे प्रिय जवाहरलाल,

मैं तुरन्त तुमको वह पत्र नही भेज सकता जिसे तुम मुझसे लिखवाना चाहते हो। यदि तुम पसन्द करते हो तो इसे अग्रसर कर देना। तुम 'हरिजन' में मेरा लेख देखोगे जिसमें स्पेन का भी सन्दर्भ आया है।

मुझे आशा है, इन्दु तेजी से प्रगति कर रही है, और सरूप परिवर्तन का पूरा लाभ उठा रही है।

सम्मान की कीमत पर यह कैसी शान्ति है।

काश, विस्तार से लिखने का समय मेरे पास होता।

महादेव पीछे विश्राम के लिए ठहर गया है। मैं सीमाप्रान्त जा रहा हूं।

तुम तीनो को प्रेम

दिल्ली
बापू

४।१०।३५

[अंग्रेजी। दिल्ली, ४।१०।१९३५। नेहरू सग्रहालय मे सुरक्षित पत्रावली से।]

सौजन्य : श्रीमती इन्दिरा गाधी तथा नेहरू संग्रहालय।

३९४. पत्र : जवाहरलाल नेहरू को

[निम्नलिखित पत्र की टाइप की हुई प्रति ही उपलब्ध है। पता नहीं, मूल का क्या हुआ।—सम्पा०]

मेरे प्रिय जवाहरलाल,

मैं तुम्हें रविवार को लिखना चाहता था किन्तु मैं इतना व्यस्त था कि वैसा कर नही पाया। मैं तुम्हारे उस पत्र का जवाव लिखना चाहता था जिसके साथ तुमने अगाथा को लिखे अपने पत्र की प्रतिलिपि नत्थी की थी। तुमने अगाथा को जो कुछ लिखा उससे मुझे तुम्हारी मन क्रिया की एक आन्तरिक झाकी मिली। मैं उसके लिए किसी तरह वुरा नही मानता। वह पूरी तरह इस स्पष्टता के योग्य थी। मैं तुम्हारी अधिकाश भावनाओ का अनुमोदन कर सकता हू। तुम नही जानते कि मैं उसे एक से अधिक वार इसी लय मे, यद्यपि अपने ढग पर और अपनी भाषा मे, लिख चुका हू। फिर भी अगर कमला मे निश्चित सुधार के लक्षण प्रकट होते हैं और तुम लन्दन जाने को मुक्त हो जाते हो और रास्ता खुल जाता है, तो मैं पसन्द करूगा कि तुम वहा वडो-वडो से मिलो और अपना हृदय उसके सामने भी खोल दो, जैसा कि तुमने अगाथा के प्रति किया है।

किन्तु कल तुम्हारा जो पत्र मिला है उससे मालूम पडता है कि अभी तुम कमला की शय्या के पास से हट नही सकते। आखिर तुम उसी अभिप्राय के लिए तो छोडे ही गये हो और यदि प्रभु तुम्हे कमला की शय्या के साथ वांध रखना चाहते हैं, तो हमे कुढना नही चाहिए। तुम वहा इसीलिए गये हो कि उसे भयानक कष्ट

से बाहर निकलते देखो। मैं कितना चाहता हूं कि मैं तुम्हारा बोझ बँटाने और कमला को प्रसन्न करने के लिए वहां होता। रवाना होने के पहिले मैंने दो दिनों तक उसे बम्बई में देखा था। मैंने देखा कि उसके मन में ऐसी शान्ति थी जैसी कि पहिले मैंने कभी नहीं देखी थी। उसने कहा कि ईश्वर की दया में उसका विश्वास कभी इतना ज्योतिर्मय नहीं था जैसा कि उस समय था। उसकी मानसिक अशान्ति लुप्त हो चुकी थी और उसे यह पर्वा नहीं थी कि उसका क्या होता है। वह यूरोप इसलिए गई कि तुम सब वैसा चाहते थे, और वैसा करना उसे अपना स्पष्ट कर्त्तव्य प्रतीत हुआ। यदि वह जीवित रहती है तो अभी तक जो सेवा उसने की है उससे कहीं बड़ी सेवा के लिए जियेगी, यदि वह मरती है तो इसलिए मरेगी कि आज जो देह उसके पास है उससे अधिक समर्थ देह लेकर पुनः पृथ्वी पर आये।

यह भी अच्छा ही है कि इन्दु का साहित्यिक अध्ययन कुछ समय के लिए स्थगित हो गया है, क्योंकि वह इस समय जो प्रशिक्षण प्राप्त कर रही है वह उससे कहीं ज्यादा मूल्यवान है जो वह किसी कालेज में प्राप्त करती। वह अपना प्रशिक्षण प्रकृति के विश्वविद्यालय में पा रही है। अपना साहित्यिक अध्ययन पूरा करके वह उसका अन्तिम शृंगार कर सकेगी।

मैं बड़ी दिलचस्पी के साथ तुम्हारा ग्रन्थ पढ़ रहा हूं। मैं एक ही बैठक में उसे पूरा पढ़ना चाहता हूं, जैसा कि महादेव ने किया था, या जैसा कि खुर्शेद करीब-करीब कर चुकी है। किन्तु मेरी किस्मत वैसी अच्छी नहीं है। अन्तिम अध्याय पढ़ने तक मैं अपनी सम्मति सुरक्षित रखता हूं। मैं धन्यवाद करता हूं कि तुमने उन्हें मेरे पास भेजा।

मैं तुमसे राजनीति के विषय में बात नहीं करूंगा। मेरे मतलब के लिए इतना ही बस है कि यदि बोझ तुम पर आ पड़ेगा, तो तुम उसे उठाओगे। वह तुम पर पड़ेगा, इस निष्कर्ष पर मैं पहिले से ही पहुंच चुका हूं।

अगर तुम ठीक समझो तो साथ की पंक्तियां कमला को पढ़कर सुना देना। जब तुम वहां नहीं थे, तब इन्दु चन्द लाइनें मुझे लिखा करती थी। अब शायद वह समझती है कि उस श्रम से उसे मुक्ति मिल गई है।

प्रेम

वर्धा १५-१०-३५

बापू

तुम (यह पत्र) ग्राम्य कागद पर ग्रामीण कलम और ग्रामीण रोशनाई से यह पत्र लिखने की मेरी ढिठाई क्षमा करोगे।

—अंग्रेजी। वर्धा, १५।१०।१९३५। नेहरू संग्रहालय में सुरक्षित पत्रावली से।]

सौजन्य : श्रीमती इन्दिरा गांधी तथा नेहरू संग्रहालय।

३९५. पत्र : जवाहरलाल नेहरू को

[निम्नलिखित पत्र की जीरोग्राफ और टाइप की हुई प्रति ही नेहरू संग्रहालय में है। मूल का पता नहीं लग सका।—सम्पा०]

मेरे प्रिय जवाहरलाल,

तुम्हारा अत्यन्त महत्वपूर्ण पत्र मिला। स्वराज भवन के बारे मे मैंने राजेन्द्र बाबू को तार दिया है। मुझे नही मालूम कि क्या हो रहा है। मैं बिल्कुल तुम्हारे इस मत का हू कि कमेटी की नीति की स्पष्ट व्याख्या होनी चाहिए।

जहा तक वर्तमान विश्व-परिस्थिति के विषय मे हमारे रूख का सवाल है, मैं यह नही समझता कि उसकी समझ का अभाव है। किन्तु यह हमारी बेबसी है जिसके कारण हमे चुप रहना पड़ता है। कोई दुर्बलता भी नही है। अगर तुम कहना चाहो, तो इसे अपने सर्वोत्तम अर्थ मे व्यूह-कौशल कह सकते हो। कुछ भी हो, मैं अपने अन्दर किसी प्रकार की दुर्बलता की भावना नही पाता। किन्तु मैं जानता हू कि इस समय मैं प्रभावपूर्वक कुछ कह नही सकता। यह जाने बिना कि लोग क्या कर सकते हैं, मैं नेतृत्व नही प्रदान कर सकता। मैं यह जानता हू कि उन्हें क्या करना चाहिए। और जो कुछ मेरे बारे मे सत्य है वही शायद हमारे कार्यकर्त्ताओ मे से अधिकाश के बारे मे भी सत्य है। किन्तु इन सब मामलो मे मुझे तुम्हारे अन्दर बड़ा विश्वास है। निश्चय ही तुमको स्थिति पर उससे कही ज्यादा अधिकार प्राप्त है जितना हममे से किसी को है—बिलाशक जितना मैं कभी पाने की आशा कर सकता हू। इस बात को मानते हुए कि वर्तमान समय मे सीधी कारंवाई की कोई गुजाइश नही है, वाणी और कार्य मे राष्ट्रीय आत्माभिव्यक्ति का कोई सम्मानपूर्ण सूत्र निकालने मे तुम समर्थ हो सकते हो।

कमला-विषयक तुम्हारा अनुच्छेद कुछ चिन्ताजनक है। किन्तु इस प्रकार के ऊंच-नीच के लिए हम तैयार हैं।

कुछ कहने के पहिले विधान पर मैं तुम्हारे और विचार जानने की प्रतीक्षा करूंगा। मुझे खुशी है कि विधान को जितनी जल्द सम्भव था तुम तक पहुचाने के लिए मैंने पैसे खर्च किये। तुम सबको प्यार।

बापू

१७।१०।३५
वर्धा

[अंग्रेजी। वर्धा, १७।१०।१९३५। नेहरू संग्रहालय में सुरक्षित पत्रावली से।]

सौजन्य : श्रीमती इन्दिरा गाधी तथा नेहरू संग्रहालय।

३९६. पत्र : हीरालाल शर्मा को

[यह पत्र लिखा किसी दूसरे के हाथ का है। हस्ताक्षर गांधी जी के हैं।
—सम्पा०]

चि० शर्मा,

तुम्हारा खत बहुत इन्तजारी के बाद मिला। ताज्जुबी की बात है कि मेरी तरफ से एक भी खत अमेरिका में तुमको नहीं मिला है। कम से कम दो तीन खत मिलने चाहिए थे ही। मेरे पास पोस्ट करने की तारीख है। इस खत के अन्त में तारीख दी जायगी[1] क्योंकि रोजनिशी[2] में से ढूंढना होगा। लेकिन मैं लिखूं या न लिखूं तुम्हारे तो हर हफ्ताह लिखना ही था ऐसा हमारा करार था। यहां से मुझको कुछ ज्यादा लिखने का भी नही हो सकता है लेकिन तुम्हारे तो हमेशा नई-नई बात लिखने की होनी ही चाहिये। खैर, जो हुआ सो हुआ, अब तो प्रति सप्ताह तुम्हारे खत की इन्तजारी में रहूंगा। मैंने तुम्हारे खत द्रौपदी को और रामदास को भेजने का सिलसिला भी जारी कर दिया है। रामदास ने खसुस (न) मांगा था। द्रौपदी को ऐसे ही भेजने का आरम्भ कर दिया था। इसका एक नतीजा यह हुआ है कि द्रौपदी उसके उत्तर में कुछ न कुछ भेजने के लिए मजबूर हो जाती है, अन्यथा वह कहां से मुझको लिखने वाली थी ?

अमेरिका में जल्दी से स्वावलम्बी बन जाओगे, ऐसी तो मैं कोई आशा नहीं रखता था, लेकिन ऐसा जरूर माना था कि कम खर्च में रहना मुश्किल नहीं होगा। कैसे भी हो, अब तो अमेरिका में हो, जबतक तुमको सन्तोष न मिले तबतक रहो। जब ऐसी प्रतीती हो जाय कि तुमको नैसर्गिक दृष्टि से कुछ भी अधिक नही मिलनेवाला है तब ही वहां से छूटना। जो अनुभव अमेरिका में होते हैं, वही करीब-करीब इंग्लैण्ड में भी होने वाले है। वहां भी नैसर्गिक दृष्टि से ज्यादा नही पाओगे। लेकिन तुमको पश्चिम में जाना आवश्यक था ही। कई प्रकार के भ्रम रहते हैं जो अनुभव बिना दूर होते ही नहीं, इस दृष्टि से तुम्हारा जाना बेकार नहीं समझता हूं।

तुमने शेल्टन का स्थान नही देखा होगा तो अवश्य देखो.। गोविल उसकी बड़ी तारीफ करता था। उसकी हेल्थ स्कूल सेन ऐनटोनियो टेक्सास (में) है।

१: यह यहां नहीं दिया गया है।

२: रोजनिशी अर्थात् रोजनामचा या डायरी।

तुमने इगलैण्ड के लिए एक खत मागा था तो मैंने भेज दिया था। मिल गया होगा।

अमेरिका जाकर तुम खुल जाओगे ऐसा मैंने कहा था। उसका अर्थ तुमने मागा है। इसका अर्थ यह था कि जो एक प्रकार की अस्वाभाविकता याने एक प्रकार का टेढापन कहो कि जो कुछ था वह दूर हो जायगा और सबके साथ मिलजुलकर रहने की आदत बन जायगी। तुम्हारा हिसाब मिला है। भाई ब्रजमोहन[1] को खत लिखा करो। उनको हिसाब भेजने की आवश्यकता नही है। तुमारे 'हरिजन' मिलता होगा। मेरे खत और 'हरिजन' डा० होम्स के ठिकाने से आज तक तो गये हैं। अब तुमने जो ठिकाना डा० कैलोग का भेजा है उस ठिकाने पर यह खत भेजता हू। डा० कैलोग का जो खत मेरे पास आया था वह तो मैंने तुमको भेज ही दिया था। तुम्हारे शरीर के बारे मे यहा से मैं क्या लिखू? इतना तो है कि ठण्डी से बचो, नित्य कम से कम दस मील घूमो। दूध और फल अच्छी तरह खाओ। सेलाड (Salad) भाजिया भी खाओ। इतना करने से अवश्य शरीर अच्छा रहेगा। प्राणायाम का अभ्यास रखा जाय।

बापू के आशीर्वाद

मगनवाडी, ७-११-३५

--हिन्दी। मगनवाड़ी (वर्धा), ७।११।१९३५। 'बापू की छाया मे मेरे जीवन के सोलह वर्ष' से।]

सौजन्य : श्री हीरालाल शर्मा

३९७. पत्र : रमेशचन्द्र को

२७-११-३५ वर्धा

भाई रमेशचन्द्र जी,

कृत्रिम उपाय साधित सतति-निरोध हानिकर है। ऐसा तो मैंने कहा ही है और अभी भी मानता हू। यदि कोई अपवाद शक्य है तो उसका ख्याल तक करना अनुचित समझा जाय। ठीक इसी तरह बीमा की बात समजी जाय। फरक इतना है कि बीमा में ज्यादा मात्रा मे अपवाद हो सकते हैं। जो आत्मिक हानि सततिनिरोध मे कृत्रिम उपाय से होती है उतनी हानि बीमा से नही होती है।

मो० क० गाधी

---

१. श्री ब्रिजमोहन बिरला।

[टिप्पणी—पत्र किसी दूसरे के हाथ का लिखा है। हस्ताक्षर-मात्र गांधीजी के हैं।—सम्पा०]

—हिन्दी। वर्धा, २७।११।१९३५। श्री रमेशचन्द्र, इलाहाबाद के पत्र को फोटो-नकल (जी० एन० ६०९४) से]

३९८. पत्र : जवाहरलाल नेहरू को

मेरे प्रिय जवाहरलाल,

काश, मैं तुम्हारे साथ अजन्ता गया होता।

तुम्हारा पत्र प्राप्त होने के पहिले ही मैं जोरदार ढंग पर खां साहब से कह चुका था और उनसे मेहर ताज को वकील के स्कूल[1] में भेजने का अनुरोध किया था। किन्तु वह अडिग थे। वह नही चाहते थे कि वह किसी मिश्रित[2] स्कूल में जाय। मैंने मेहर ताज से भी बात की। निस्सन्देह वह बेचैन है। किन्तु खां साहब कठोर हैं और उनका विश्वास है कि मेहरताज अपनी सामान्य उत्फुल्लता पुनः प्राप्त कर लेगी।

मैं आशा करता हूं कि तुम अपनी हिफाजत रक्खोगे और अपने को थका नहीं दोगे।

स्मारक के विषय में मैंने सरूप से संक्षिप्त वार्ता की थी। मैं इस विषय में निश्चिन्त हूं कि और कुछ करने के पहिले कम-से-कम ज़मीन प्राप्त कर लेनी चाहिए। जिस प्लाट के बारे में तुमने मुझे बताया था उस पर या आनन्द-भवन के पास के किसी दूसरे प्लाट पर अड़े रहने की जरूरत नहीं है।

प्रेम

३-२-३६, वर्धा

बापू

—अंग्रेजी। सेगांव (सेवाग्राम), वर्धा ३।२।१९३६। नेहरू संग्रहालय में सुरक्षित पत्रावली से।]

सौजन्य : श्रीमती इन्दिरा गांधी तथा नेहरू संग्रहालय।

---

१. वकील का स्कूल, बम्बई।

२. जहां लड़के-लड़कियां साथ पढ़ते हों।

३९९. पत्र : बनारसीदास चतुर्वेदी को

भाई बनारसीदास,

परभुदयाल ने तुमारे भाई के देहान्त की खबर दी तुमारे मे ज्ञान है इसलिये आश्वासन की आवश्यकता कम है जो रास्ते रामनारायण गये वही रास्ते हमको सबको जाना होगा समय का ही फरक है उसमे शोक क्या? लेकिन हा, प्रेमीओ के मुत्यृ से हमारी जिम्मेदारी बढती है और तुमारी तो बहूत ही बढ गई. ईश्वर ही ऐसे मौके पर सच्चा मददगार है वही तुमको मार्ग बतायगा।

बापु के आशीर्वाद

सेगाव-वर्धा, १६-२-३६

—हिन्दी। सेगांव (वर्धा), १९।२।१९३६। पत्र की फोटो-नकल (जी० एन० २५१६) से]

४००. पत्र : जवाहरलाल नेहरू को

[श्रीमती कमला नेहरू का युरोप मे चिकित्सा-काल में ही देहान्त हो गया था। यह पत्र उसके सन्दर्भ मे लिखा गया है।—सम्पा०]

दिल्ली

६ मार्च १६३६

प्रिय जवाहरलाल,

तो तुम कमला को सदा के लिए युरोप मे छोडकर लौट आये! फिर भी उसकी आत्मा कभी भारत से बाहर नही थी और हममे से अनेक की भाति सदा तुम्हारा रत्न-भाण्डार बनकर रहेगी। मैं उस अन्तिम वार्तालाप को कभी नही भूलूगा, जिसने हमारी चार आखो को गीला कर दिया था।

यहा भारी जिम्मेदारी तुम्हारी प्रतीक्षा कर रही है। वह तुम पर डाली गई है, क्योंकि तुम उसे उठाने की क्षमता रखते हो। तुम्हारे पास आने का मेरा साहस नही होता। मेरे शरीर मे मूल लचक वापिस आ गई होती तो साहस करता। मुझमे कोई तीसरी खराबी नही है। शरीर का वजन तो बढा ही है। परन्तु तीन ही महीने पहिले जो जीवन-शक्ति इसमे थी वह जाती रही। आश्चर्य की बात यह है कि मुझे कभी बीमारी महसूस नही हुई। फिर भी शरीर कमजोर हो गया था और यन्त्र ऊचा रक्तचाप बतलाता था। मुझे सावधान रहना पडेगा।

मैं आराम लेने के लिए कुछ दिन दिल्ली में हूं। अगर तुम्हारी मूल योजना कार्यान्वित हो जाती तो मैं अपनी मुलाकात के लिए वर्धा में रह जाता। तुम्हारे लिए वहां अधिक शान्ति होती। किन्तु तुम्हारे लिए एक सी ही बात हो तो हम दिल्ली में मिल सकते है। यहां मैं कम-से-कम इस महीने की २३ तारीख तक रहूंगा। किन्तु यदि तुम्हें वर्धा ज्यादा पसन्द हो तो मैं वहां इससे पहिले लौट सकता हूं। यदि तुम दिल्ली आओ तो किंग्सवे में नये बनाये गये हरिजन-निवास में मेरे साथ ठहर सकते हो। यह काफी अच्छी जगह है। जब बता सको मुझे बता देना कि हमारे मिलने की कौन-सी तारीख रहेगी। राजेन्द्रबाबू और जमनालालजी तुम्हारे साथ हैं, या होंगे। वल्लभभाई भी होते, परन्तु हम सबने सोचा कि वह दूर रहें तो ज्यादा अच्छा होगा। दूसरे दोनों वहां राजनीतिक चर्चा के लिए नहीं, मातमपुर्सी के लिए गये हैं। राजनीतिक चर्चा तब होगी जब हम सब मिलेंगे और तुम घरू काम-काज निपटा लोगे।

आशा है, इन्दु ने कमला के निधन का और तुम्हारे तुरन्त के वियोग का दुःख भली प्रकार सहन कर लिया होगा। उसका पता क्या है?

तुम सब प्रकार सकुशल होगे।

सप्रेम,
बापू

--अंग्रेजी। दिल्ली, ९।३।१९३६। 'ए बंच आफ ओल्ड लेटर्स' से।]
सौजन्य : श्रीमती इन्दिरा गांधी

४०१. पत्र : हीरालाल शर्मा को

चि० शर्मा,

तुमारा खत मिला है. उस पर से मैंने द्रौपदी को यहां बुलाई. परिणाम में यह खत मिला. मैंने फिर भी उसे आने का लिखा है.

तुम अनुभव ठीक ले रहे हो. यहां आने पर कुछ कालेजों में सीखने का बाकी न रहे तो अच्छा होगा वहां जबतक कुछ ज्ञान पाने का बाकी रहे तबतक रहो. बाकी मेरे विचार तो है ही कि नैसर्गिक उपचार के लिए भिन्न साधना ही है. हां शरीर के प्रत्येक अवयवों का ज्ञान और रसायणशास्त्र का अत्यावश्यक है सही.

बापु के
आशीर्वाद

१४।३।३६

—हिन्दी। १४।३।१९३६। 'वापू की छाया में मेरे जीवन के सोलह वर्ष' से।]
सौजन्य : श्री हीरालाल शर्मा

४०२. पत्र : इन्दिरा को

लखनऊ
३०।३।३६

चि० इंदु,

कमला के जाने से तुमारी जिम्मेदारी कुछ वढ जाती है लेकिन तुमारे लिए मुझ को कोई चिंता नही है। ऐसी शाणी हो गई है कि अपना धर्म अच्छी तरह समझती है। कमला मे ऐसे गुण थे जो सामान्यतया अन्य स्त्रियो मे नही पाये जाते है। मैं ऐसी आशा वाध वैठा हू कि यह सव गुण तुमारे मे इतनी ही मात्रा मे प्रदर्शित होंगे जैसे कमला मे थे। ईश्वर तुमे दीर्घायु करे और कमला के गुणो का अनुकरण करने की शक्ति दे।

जवाहरलाल से इस वक्त खूव वार्ते कर सका हू। ३ अपरैल को यहा से इलाहावाद जाऊगा। काग्रेस तक रहने का निश्चय हो गया है। मुझे वर्वा ही उत्तर भेजो।

वापू के आशीर्वाद

—हिन्दी। गाधी जी के स्वाक्षरों में मूल प्रति। लखनऊ, ३०।३।१९३६।
नेहरू संग्रहालय में सुरक्षित पत्रावली से।]
सौजन्य : श्रीमती इन्दिरा गाधी तथा नेहरू संग्रहालय।

४०३. पत्र : जवाहरलाल नेहरू को

२१ अप्रैल, १९३६

प्रिय जवाहरलाल,

टिप्पणिया अच्छी लिखी गई हैं। तुम्हारे उत्तर काफी पूर्ण हैं और सीवे तो हैं ही।

आगामी वैठक के वारे मे चिन्तित क्यो होते हो? यदि चर्चा हुई तो वह

एक दूसरे को अपने विचारों के ठीक होने का विश्वास कराने को ही तो होगी। जब तुम समझो कि किसी प्रस्ताव पर पूरी तरह बहस हो चुकी तब चर्चा बन्द कर देना। आखिर तो तुम्हें एकता के साथ काम करना चाहिए और मुझे ऐसा होने की बड़ी आशा है।

मै २३ तारीख की शाम को नागपुर पहुँच रहा हूं।

मैं चाहता हूं कि रनजीत अपनी देखरेख स्वयं कर लें। मुझे खुशी है कि वह खाली[1] चले गये। आशा है, सरूप तुम्हारे साथ रहेगी।

सरदार[2] अभी तक बीमार है और अभी तो सिर्फ छाछ पर हैं। ८ मई के बाद मैं उन्हें नन्दी पर्वत पर ले जा रहा हूं। काश, तुम भी आ सकते।

सस्नेह

बापू

—अंग्रेजी। २१।४।१९३६। 'ए बंच आफ ओल्ड लेटर्स' से।]
सौजन्य : श्रीमती इन्दिरा गांधी।

४०४. पत्र : चन्द्रत्यागी को

भाई चन्द त्यागी,

पिता का मुत्यृ तो सब पुत्र को चुभता है. लेकिन ऐसा होना तो नही चाहीये. क्योंकी हम सब को भी किसी न किसी रोज वही राह जाना है. जो चीज जन्म के साथ ही लेकर हम इस जगत् में प्रवेश करते है इसका शोक क्यों? शोक हो तो जन्म का हो.

मैंने तो समजा था कि राजकिशोरी को वहां नही आना है. हम गरीब हैं. गरीब के जैसे रहना चाहते है. ऐसी हालत में हम रेलगाड़ी में पैसे खामखा क्यों खर्च करें. ऐसा मानने में मैंने कुछ गलती की है क्या? अथवा तुमने विचार बदल दिया है? कैसा भी हो मेरे तरफ से राजकिशोरी को कोई रुकावट नही होगी. जब चाहे तब जा सकेगी.

बापु के आशीर्वाद

—हिन्दी। वर्धा, २१।४।१९३६। पत्र की फोटो-नकल (जी०एन० ६०९८) से]

१. रणजीत पण्डित ने अल्मोड़ा के खाली नामक स्थान पर 'ऋतुसंहार' नाम के फार्म-हाउस का निर्माण किया था।
२. सरदार वल्लभभाई पटेल।

४०५. पत्र : जवाहरलाल नेहरू को

मेरे प्रिय जवाहरलाल,

मेरा दाहिना हाथ आराम चाहता है। तुम शायद सलग्न (पत्र) पढना पसन्द करोगे। इसे लौटाने की जरूरत नही है।

कमला स्मारक की मर्यादा-विषयक अपने नये सुझाव के बारे मे खुर्शेद ने मुझे लिखा है। यदि वह अस्पताल का विकल्प है तो मेरी राय मे अविचारणीय है। और वह तीन लाख मे हो भी नही सकता।

प्रेम

वर्धा
३-५-३६

बापू

[अंग्रेजी। वर्धा, ३।५।१९३६। नेहरू संग्रहालय मे सुरक्षित पत्रावली से।]
सौजन्य : श्रीमती इन्दिरा गाधी तथा नेहरू संग्रहालय।

४०६. पत्र : जवाहरलाल नेहरू को

नन्दी पर्वत
१२ मई १९३६

प्रिय जवाहरलाल,

अगाथा[1] के नाम मेरा उत्तर मैंने तुम्हारे पास इस कारण भेजा कि मैं जान लू कि मैंने तुम्हारा रवैया ठीक-ठीक बयान किया है या नही।

किन्तु मुझे खुशी है कि तुम मुझी से निपट रहे हो। मैं किसी ऐसी प्रणाली का समर्थन करने का, जिसमे सतत और विनाशकारी वर्ग-युद्ध निहित है या ऐसी प्रणालियो को पसन्द करने का, जिसका वास्तविक आधार हिंसा पर है या कुछ लोगो के छोटे-मोटे अपराधो के लिए आलोचना और निन्दा करने का और जो दूसरे लोग कही अधिक महत्वपूर्ण दुर्बलताओ के अपराधी हैं, उनकी प्रशसा करने का दोषी नही हू।

सम्भव है, अनजाने मुझसे तुम्हारे बताये हुए अपराध होते हो। ऐसा है

---

१. कुमारी अगाथा हैरिसन क्वेकर समुदाय की अंग्रेज महिला। गांधी जी एवं भारत के प्रति अगाध प्रेम रखनेवाली।

तो तुमको मुझे ठोस उदाहरण देने चाहिए। मैं पहिले ही स्वीकार कर चुका हूं कि तुम्हारा काम करने का जो तरीका मुझे दिखाई देता है उससे मेरा ढंग भिन्न है। किन्तु वर्तमान प्रणाली-सम्बन्धी दृष्टिकोण में कुछ भी अन्तर नहीं है।

डा० अंसारी की मृत्यु एक कठोर चोट है। मेरे लिए उनकी मित्रता राजनीतिक मैत्री से कहीं अधिक थी।

आशा है, तुम थोड़ी-सी ठण्डी हवा खाने के लिए खाली[1] जा रहे हो या मेरे पास आ रहे हो।

सरूप से कह देना कि उसके दो पत्र मिले हैं। सर तेजबहादुर को मैं लिखूंगा।

सस्नेह,
बापू

—अंग्रेजी। नन्दी पर्वत, १२।५।१९३६। 'ए बंच आफ ओल्ड लेटर्स' से।]
सौजन्य : श्रीमती इन्दिरा गांधी।

४०७. पत्र : जवाहरलाल नेहरू को

नन्दी पर्वत
२१ मई १९३६

प्रिय जवाहरलाल,

'हिन्दू'[2] की दो कतरनें भेज रहा हूं। मैने यह नही माना है कि संवाददाता ने तुम्हारे विचार ठीक-ठीक व्यक्त किये हैं। किन्तु दोनों विषयों पर तुम सही विवरण भेज सको तो मैं देखना चाहूंगा। स्त्रियों को न रखने का काम पूरी तरह तुम्हारा अपना ही था। सचमुच किसी और ने सोचा तक नही था कि मन्त्रिमण्डल में किसी स्त्री को न रखना सम्भव भी है। खादी के बारे में मैंने तुम्हारा कथन सही समझा है कि देश की वर्तमान अर्थ-व्यवस्था में वह अपरिहार्य है और जब

---

१. खाली अल्मोड़ा जिले का एक रमणीक स्थान, जहां श्री रणजीत पण्डित ने एक सुन्दर उद्यानगृह बनवाया था।

२. मद्रास का एक प्रसिद्ध अंग्रेजी दैनिक।

राष्ट्र अपने स्वरूप मे आयेगा तब मिल के कपडे का स्थान हाथ के बने कपड़े को देना पड सकता है।

सस्नेह
बापू

[—अंग्रेजी। नन्दी पर्वत, २१।५।१९३६। 'ए बच आफ ओल्ड लेटर्स' से।]
सौजन्य : श्रीमती इन्दिरा गांधी

४०८. पत्र : मुहम्मद अशरफ को

[श्री अशरफ उस समय भारतीय कांग्रेस कमेटी इलाहाबाद के राजनीति एवं अर्थ-विभाग का कार्य देखते थे।—सम्पा०]

प्रिय अशरफ,

तुम मुझसे क्या उम्मीद रख सकते हो? निस्सन्देह, तुमने कुमारप्पा और शकरलाल बैंकर को लिखा होगा। इन दोनो सस्थाओ से थोडा-सा साहित्य निकला है उसे वे तुम्हे भेज सकते हैं। मुझे विश्वास है, तुमको 'हरिजन' नहीं चाहिए, जो मुख्यत. अस्पृश्यता से सम्बन्धित है।

तुम्हारा निश्छल
मो० क० गाधी

वर्धा
२७।५।३६

[—अंग्रेजी। वर्धा, २७।५।१९३६। नेहरू संग्रहालय मे सुरक्षित ए० आई० सी० सी० की फाइल ३-१ से।]

४०९. पत्र : जवाहरलाल नेहरू को

बगलौर
२६ मई १९३६

प्रिय जवाहरलाल,

तुम्हारा २५ तारीख का पत्र मिला। भगवान तुम्हें आवश्यक शक्ति दें। खाली मे एक सप्ताह रहना भी नियामत होगा।

मेरा इरादा खादी पर तुम्हारे बयान का सार्वजनिक उपयोग करने का है।

मुझसे बहुत लोग पूछ-ताछ कर रहे है। हमारे जो लोग खादी में विश्वास रखते है, उनमे तोड़-मरोड़ कर भेजे गये सार मे घबराहट फैल गई है। तुम्हारे बयान से स्थिति में कुछ सुधार होगा।

कार्य-समिति में किसी स्त्री के न लेने के बारे में तुम्हारे स्पष्टीकरण से मेरा समाधान नही होता। यदि समिति में किसी स्त्री को रखने की तुमने जरा भी इच्छा प्रकट की होती तो बड़ों में से किसी को छोड़ देने के बारे में कुछ भी कठिनाई न होती। दबाव कहें तो केवल भूलाभाई के लिए था। और जब उनका नाम पहिली बार लिया गया तब तुम्हे कोई आपत्ति नही थी। और किसी सदस्य के लिए कोई दबाव नही था। फिर किसी समाजवादी का नाम छोड़कर किसी स्त्री को चुन लेने का अधिकार तो तुम्हारे हाथ में अबाधित ही था। परन्तु जहां तक मुझे याद है, तुम्हें स्वयं सरोजिनी देवी के स्थान पर किसी को चुनने में कठिनाई थी और सरोजिनी देवी को तुम रखना नही चाहते थे; तुमने तो यहां तक कहा था कि कार्य-समिति में सदा किसी-न-किसी स्त्री को और मुसलमानो को एक निश्चित संख्या में रखने की परम्परा में तुम्हारा विश्वास नही है। इसलिए जहां तक किसी स्त्री को न लाने का सम्बन्ध है, मेरे विचार से, यह तुम्हारा अबाधित निर्णय था। इस परम्परा को तोड़ने की इच्छा या साहस और कोई सदस्य न करता। मैं तुम्हे यह भी बता दूं कि कुछ कांग्रेसी हल्कों में सारा दोष मुझ पर थोपा जा रहा है, क्योंकि यह कहा जाता है कि मैंने सरोजिनी नायडू को नहीं रखने दिया और यह आग्रह किया कि कोई स्त्री न रक्खी जाय। यह बात, जैसा मैंने तुमसे कहा, ऐसी है जिसका मैं साहस भी नही कर सकता। किसी भी स्त्री की बात तो क्या, मैं श्रीमती नायडू को भी अलग नही कर सकता।

दूसरे सदस्यों के विषय में भी मेरा यह खयाल रहा है कि तुमने उन्हें इसीलिए चूना कि कार्य की दृष्टि से ऐसा करना ठीक था। "बेहया" या "हयादार" का कोई सवाल नही था, जब सभी अपने-अपने अन्तःकरण के अनुसार सेवा की उच्च भावनाओं से प्रेरित होकर काम कर रहे थे। मैं बता दू कि तुम्हारे बयान से, जिसका समर्थन तुम्हारे पत्र से भी होता है, राजेन्द्रबाबू, राजा जी और वल्लभभाई को बड़ा दुःख हुआ। उनका खयाल है, और मैं उनसे सहमत हूं कि उन्होंने तुम्हारे साथी के रूप में सम्मान और पूर्ण निष्ठापूर्वक तुम्हारे साथ चलने की कोशिश की। तुम्हारे बयान से ऐसा प्रकट होता है कि तुम पीड़ित पक्ष हो। मैं चाहता हूं कि तुम इस दृष्टिकोण को समझ लो और किसी भी तरह सम्भव हो तो इस समाचार में सुधार कर लो।

तीसरी बात के बारे मे मैं उत्सुक हूं कि सफाई हो जाय। मैं अनुमान नही कर

सकता कि तुम क्या कहते हो, परन्तु उसे हमारे मिलने तक रहने दिया जाय। तुम जिस दवाव को सहन कर रहे हो, मैं उसे बढाना नही चाहता।

डा० अन्सारी-स्मारक के विषय मे मैंने आसफ अली को अपनी स्पष्ट राय दे दी है कि पिताजी की तरह डाक्टर के स्मारक को भी राजनीतिक दृष्टि से अच्छे दिनो की प्रतीक्षा करनी चाहिए। तुम्हारा कुछ और खयाल है?

कमला-स्मारक धीरे-धीरे प्रगति कर रहा है। राजकुमारी[1] का पत्र साथ मे है। इसमे इन्दु का उल्लेख है।

सस्नेह,
बापू

१० तारीख तक बगलौर शहर मे

—अंग्रेजी। बगलौर, २९।५।१९३६। 'ए बंच आफ ओल्ड लेटर्स' से।]
सौजन्य : श्रीमती इन्दिरा गाधी

४१०. पत्र : जवाहरलाल नेहरू को

[यदि लिखावट इतनी धुंधली हो कि पढी न जा सके तो इस पत्र को फेंक देना।]

सेगाव
१६ जून १६३६

प्रिय जवाहरलाल,

मैं तुम्हारी जानकारी के लिए साथ का पत्र भेजने वाला था कि कल तुम्हारा पत्र मिला।

मुझे खुशी है कि रनजीत[2] पहिले से अच्छे हैं। उन्हें स्वय अपनी देख-रेख रखनी चाहिए।

मैं नही चाहता कि तुम अपनी कार्यसमिति मे किसी स्त्री को न रखने के बारे मे कोई विशेष वक्तव्य निकालो। मेरे खयाल से स्त्री को न रखने की बात का वही महत्त्व नही है, जो दूसरो को रखने या न रखने का है। हममे से किसी को भी कार्यसमिति मे से स्त्री मात्र को अलग रखने का न साहस था, और न इच्छा। यदि

---

१. राजकुमारी अमृत कौर।
२. स्व० रणजीत पण्डित, सरूप कुमारी (बाद की श्रीमती विजयलक्ष्मी) के पति।

तुम्हारे रवैये का यह ठीक-ठीक अर्थ है तो अवसर उपस्थित होने पर इसका स्पष्टीकरण हो जाना चाहिए।

दूसरों के बारे में मुझे अफसोस है कि तुम अभी तक जो हुआ, उसपर खिन्न हो। ध्येय के हित मे भूलाभाईवाली गोली तुमने निगल ली, और पहिली चर्चा में, तुम्हारे जिक्र करने के पहिले, मैंने निश्चित रूप से कह दिया था कि कार्यसमिति में समाजवादी होने ही चाहिए। मैंने नामों का भी जिक्र किया था। किन्तु मैं जिस बात पर जोर देना चाहता हूं, वह यह नही है कि किसने किसका नाम लिया बल्कि मेरा जोर इस बात पर है कि सब समान ध्येय की सेवा से प्रेरित होकर ही काम कर रहे है।

जहां तक मुझे याद है, तुम्हारा भेजा हुआ बयान वह नही है, जो मैंने देखा था। तुम्हारी भेजी हुई चीज तो शायद मैं पहिली ही बार देख रहा हूं। डा० हार्डीकर से पूछ लो कि उन्होंने कोई और बयान जारी किया था क्या? तुमने जो मेरे पास भेजा है वह भी उससे भिन्न है जो डाक्टर मुझे बताया करते थे। उनके विचार मेरी राय में दोषपूर्ण तो है किन्तु उनके प्रकट करने पर मुझे कोई एतराज नही है। मेरी शिकायत यह है कि उन्होंने मुझसे एक बात कही और प्रकाशित दूसरी बात कराई। तुम यह पत्र डा० हार्डीकर को बता सकते हो।

आशा है, तुम अच्छे होगे। तुम्हारे पंजाब के तूफानी दौरे का हाल मैं में चिन्तित होकर पढ़ता रहा।

सस्नेह
बापू

—अंग्रेजी। सेगांव (वर्धा), १९।६।१९३६। 'ए बंच आफ ओल्ड लेटर्स' से।]
सौजन्य : श्रीमती इन्दिरा गांधी

४११. पत्र : जवाहरलाल नेहरू को

सेगांव, वर्धा
८ जुलाई, १९३६

प्रिय जवाहरलाल,

तुम्हारा पत्र अभी मिला। वर्धा की घटनाओं को तुम्हें लिख सकने के लिए मैं समय ढूंढ़ रहा था। तुम्हारे पत्र ने इसे कठिन बना दिया। परन्तु मैं इतना ही

कहना चाहूगा कि हट जाने के पत्र का वह अर्थ नही है जो तुमने इसे लेते समय लगाया। वह मेरे देख लेने के बाद तुम्हे भेजा गया था। त्यागपत्र के स्थान पर इस तरह का पत्र भेजने का सुझाव मेरा था। मैं चाहता हू कि तुम इस पत्र के विषय मे अधिक न्यायपूर्ण विचार करोगे। हर हालत मे मेरा यह दृढ मत है कि वर्ष के शेष समय मे सारी खीचतान बन्द रहे और कोई त्यागपत्र न दिये जाय। सकट का सामना करने मे महासमिति का सब काम ठप्प हो जायगा और वह सामना कर भी नही सकेगी। वह दो भावनाओ के बीच छिन्न-भिन्न हो जायगी। लोकतन्त्र के नाम पर उस पर एक ऐसा सकट अचानक लाद देना अत्यन्त अन्यायपूर्ण होगा, जो पहिले कभी उसके सामने नही आया। तुम उस पत्र के गूढार्थ को बढा-चढा कर समझ रहे हो। मैं बहस नही करूँगा, परन्तु यह आग्रह अवश्य करूगा कि स्थिति पर गम्भीरतापूर्वक विचार करो और अपनी शान के सामने उदासी की घड़ी मे हथियार न डाल दो। कार्यसमिति की बैठको मे अपने विनोद को खुलकर क्यो न खेलने दो ? जिन लोगो के साथ तुमने वर्षों तक बेखटके काम किया है, उनका साथ निभाना तुम्हारे लिए इतना कठिन क्यो होना चाहिए। यदि वे असहिष्णुता के अपराधी हैं तो उनमे तुम्हारा हिस्सा अधिक है। तुम्हारी पारस्परिक असहिष्णुता के कारण देश की हानि नही होनी चाहिए।

आशा है, तुमने जर्मन डाक्टर की बहुत विवेकपूर्ण सलाह मान ली है।

सस्नेह,

बापू

—अंग्रेजी। सेगाव (वर्धा), ८।७।१९३६। 'ए बंच आफ ओल्ड लेटर्स' से।]
सौजन्य : श्रीमती इन्दिरा गाधी

४१२. पत्र: साहेबजी महाराज को

सेगाव, वर्धा
११वी जुलाई, ३६

प्रिय साहेब जी महाराज,

मैं जानता हू कि आपने कराची-हरिजन चर्मालय को जूते बनाने के लिए एक कुशल शिक्षक दिया है और ऐसा ही हरिजन निवास, दिल्ली के लिए भी किया है। हमारे पास वर्धा मे भी एक चर्मालय है जिसमे कुछ नवयुवक, प्रधानत

हरिजनों के प्रति अपने प्रेम के कारण, समय दे रहे हैं। किन्तु हम सब जूता बनाने तथा चमड़े के अन्य पदार्थों के निर्माण के लिए एक कुशल शिक्षक के अभाव का अनुभव कर रहे हैं। यदि हम हरिजनों को जूता बनाने तथा अन्य लोगों को ग्रामीण चर्मकला की शिक्षा दे सकते है तो उनको कमाई की एक अतिरिक्त क्षमता प्राप्त हो जायगी और यदि हम उत्तम कोटि की चर्मकलायुक्त वस्तुओं के निर्माण की व्यवस्था कर दें तो हम और अधिक आदमी रख सकते हैं। यदि आपके पास ऐसा कोई शिक्षक हो, जिसे हमें दिया जा सकता हो तो क्या ऐसे एक शिक्षक को आप हमें कुछ महीनों के लिए दे सकेंगे? विचार यह है कि वह शिक्षक छात्रों में से ही किसी होनहार नवयुवक को शिक्षक के रूप में तैयार कर देगा। यदि आप ऐसा कोई आदमी भेज सकते हों तो कृपया मुझे बतायें कि वह कब आ सकेगा और वह कितना (वेतन) पाने की आशा करेगा?

मैं हूं

आपका निश्छल

मो० क० गांधी

—अंग्रेजी। सेगांव (वर्धा), ११।७।१९३६। जी० एन० २१६३ की फोटो-नकल से]

४१३. पत्र : जवाहरलाल नेहरू को

दुवारा मैंने नही देखा है

सेगांव,

१५ जुलाई, १९३६

प्रिय जवाहरलाल,

१. आशा है तुमको 'टाइम्स आव इण्डिया' के पत्र के बारे में मेरा तार मिला होगा। मैंने कल प्राप्त करके उसे पढ़ा। इसके विषय में मुझे कभी किसी ने नहीं लिखा। पत्र को पढ़ कर मेरी राय पक्की हुई कि तुम्हे इस पर मान-हानि की कानूनी कार्रवाई करनी चाहिए।

२. यदि तुम मुझे गलत न समझो तो मैं चाहूंगा कि तुम मुझे नागरिक स्वातन्त्र्य-संघ से मुक्त रक्खो। फिलहाल मैं किसी राजनीतिक संस्था में शामिल होना पसन्द नहीं करता और किसी पक्के सत्याग्रही के उसमें शरीक होने का कोई अर्थ

भी नही। परन्तु इस संघ मे मेरे सम्मिलित होने-न-होने के परिपक्व विचार के वाद मेरी यह राय पक्की हुई कि सरोजिनी को या यो कहो कि किसी भी सत्याग्रही को अध्यक्ष वनाने मे भूल होगी। मेरा अव यह मत है कि अध्यक्ष कोई प्रसिद्ध वैधानिक कानूनी वकील होना चाहिए। यदि यह वात तुम्हे न जचती हो तो तुम्हे एक टिप्पणी-लेखक को, जो कानून-भग करनेवाला न हो, रखना चाहिए। मैं यह भी कहूगा कि सदस्यो की सख्या सीमित रखखो। तुम्हे सख्या के वजाय गुणो की आवश्यकता है।

३. तुम्हारा पत्र मर्मस्पर्शी है। तुम ऐसा अनुभव करते हो कि तुम सवसे अधिक पीडित पक्ष हो। किन्तु हकीकत यह है कि तुम्हारे साथियो मे तुम्हारे-समान साहस और स्पष्टतावादिता नही है। परिणाम विनाशकारी हुआ है। मैंने सदा उन्हे समझाया है कि वे तुमसे साफ-साफ और निडर होकर वात कर लें। परन्तु साहस न होने के कारण जव कभी वे वोले, भद्दी तरह से वोले और तुम्हे उत्तेजना हुई। मैं तुम्हे वताता हू कि वे तुमसे डरते रहे, क्योकि तुम्हें उनसे चिड-चिडाहट और अधीरता हो जाती है। वे तुम्हारी झिडकियो और तुम्हारे हाकिमाना ढग पर कुढते रहे और सवसे अधिक इस वात से कि उनके खयाल से तुम अपने-आपको अचूक और ज्ञानवाला समझते हो। वे महसूस करते हैं कि तुम उनके साथ शिष्टता से पेश नही आये और समाजवादियो के उपहास और गलत अर्थ लगाने मे तुमने उनकी कभी रक्षा नही की।

तुम्हे शिकायत है कि उन्होंने तुम्हारी प्रवृत्तियो को हानिकारक वताया। इसका यह अर्थ नही था कि तुम हानिकारी हो। उनके पत्र मे तुम्हारे गुणो या तुम्हारी सेवाओ की प्रशसा करने का कोई अवसर नही था। वे पूरी तरह जानते हैं कि तुममे जीवट है और आम जनता तथा देश के युवको पर तुम्हारा कावू है। वे जानते हैं कि तुम्हे छोडा नही जा सकता और इसलिए वे झुक जाना चाहते हैं।

मुझे यह सारा मामला दु खद लगता है। साथ ही हास्यजनक भी। इसलिए मैं चाहता हू कि तुम सारी वात विनोदवृत्ति के साथ देखो। मुझे इस वात की चिन्ता नही कि तुम ए० आई० सी० को अपने विश्वास मे लो, परन्तु मैं नही चाहता कि उस पर तुम्हारे घरेलू झगडे ठीक करने का या तुममे और उनमे चुनाव करने का असह्य भार डाला जाय। तुम कुछ भी करो, उनके सामने वनी-वनाई सी वातें रखनी चाहिए।

तुम इस वात पर रोप क्यो करते हो कि तमाम समितियो मे उनका वहुमत प्रकट हो। क्या यह अत्यन्त स्वाभाविक चीज नही है? तुम उनके सर्वसम्मत

चुनाव से पदारूढ़ हो, किन्तु अभी तक सत्ता तुम्हारे पास नही है। तुम्हें पदारूढ करना तुम्हें शीघ्र सत्तारूढ़ करने का प्रयत्न था। और किसी तरह ऐसा न होता। जो हो, मेरे दिमाग में यही वात थी, जव मैंने कांटों के ताज के लिए तुम्हारा नाम सुझाया था। सिर पर घाव हो जाय तो भी इसे पहिने रहो। समिति की वैठकों में फिर से अपनी विनोद-प्रियता दिखाओ। तुम्हारा यही अत्यन्त सामान्य स्वरूप होना चाहिए। न कि एक चिन्तामग्न क्षुब्ध व्यक्ति का, जो जरा-जरा सी वात पर उबल पड़ने को तैयार हो।

काश तुम मुझे तार से खबर दो कि मेरा पत्र पढ़ लेने के वाद तुम्हें उतनी ही प्रफुल्लता अनुभव हुई जितनी लाहौर में नववर्ष के दिन हुई थी, जव तुम तिरंगे झण्डे के चारों ओर नाचते वताये गये थे! अपने गले को भी तो तुम्हें अवसर देना ही चाहिए।

मै अपना बयान फिर से देख रहा हूं। मैंने निश्चय किया है कि जवतक तुम इसे देख न लो, मै इसे प्रकाशित न करूँ।

मैंने यह भी निर्णय किया है कि हमारे पत्र-व्यवहार को महादेव[1] के सिवा कोई और न देखे।

सस्नेह

बापू

—अंग्रेजी। सेगांव (वर्धा), १५।७।१९३६। नेहरू संग्रहालय में प्राप्त पत्रावली से।]

सौजन्य : श्रीमती इन्दिरा गांधी

४१४. पत्र : चन्द्रत्यागी को

भाई त्यागी,

तुमारा खत पूरा पढ़ा नही जाता बलवीर को क्षय होना दुःखद बात है. अव कैसे है?

बापु के
आशीर्वाद

२१।७।३६, सेगांव

—हिन्दी। सेगांव (वर्धा), २१।७।१९३६। पत्र की फोटो-नक़ल (जी० एन० ६०९७) से]

१. महादेव देसाई, गांधी जी के वैयक्तिक सचिव।

४१५. पत्र : राजकिशोरी को

चि० राजकिशोरी,

तेरा खत मिला. जिस जगह तुमको शाति मिले वही रहो

बापु के
आशीर्वाद

सेगाव
२१-७-३६

—हिन्दी। सेगाव (वर्धा), २१।७।१९३६। पत्र की फोटो-नक़ल (जी० एन० ६६३८) से]

४१६. पत्र : साहेबजी महाराज को

प्रिय साहेबजी महाराज,

मेरे पत्र पर आपके तुरन्त ध्यान देने के लिए बहुत-बहुत धन्यवाद। मिस्त्री जितनी जल्द आ सके कृपया उसे भेज दीजिए। मैं यह भी बता दू कि नौ कास्ट, एक सादी सर्विग मशीन तथा ग्रामीण निहाई के सिवा हमारे पास औजार भी नही हैं। जिन औजारो की जरूरत हो उन्हे मिस्त्री को साथ लाना चाहिए। यदि वे हमारे खर्च की क्षमता के अन्दर होगे तो हम उन्हें खरीद लेंगे। यदि वे हमारे साधन के बाहर होगे तो जब उसके लौटने का समय आ जायगा तो वे सब मिस्त्री के साथ चले जायगे। जिस दिन वह वर्धा पहुचेगा, उसी दिन से उसे ६० रुपये माहवार दिये जायगे या अगर आप ज्यादा अच्छा समझेंगे तो यह वेतन उसके आगरा छोडने के दिन से भी दिया जा सकता है। क्या आप कृपापूर्वक हमे यह भी बतायेंगे कि उसके निवासादि के लिए हमसे क्या उम्मीद की जायगी ? चर्मालय खुली जगह मे स्थित है और डाकघर से लगभग १॥ मील दूर है। हम उसके उपयोग के लिए चर्मालय मे दो कमरे दे सकेंगे।

मैं आपकी इस कृपापूर्ण आकाक्षा की कदर करता हू कि चाहे आपकी नई दुग्धशाला को देखने के लिए ही हो, मुझे एक बार फिर दयालबाग आना चाहिए। मुझे ऐसा करने मे खुशी होगी। किन्तु मेरी वर्तमान साधना सेगाव न छोडने मे ही स्थित है। मैं इस लघु ग्राम मे अपने चरण (स्थिति) का अनुभव करना चाहता हू और उसमे निरन्तर तीनो ऋतुओ मे रहना चाहता हू। मैं जानता हू कि इस अवधि मे भी मुझे इसके तीन उल्लघन करने होगे। इस सूची को मैं बढाना नही

चाहता परन्तु मैं इतना कह सकता हूं कि दयालबाग जाने के लिए मुझे किसी प्रलोभन या सिफारिश की जरूरत नहीं है।

आपका निश्छल
मो० क० गांधी

सेगांव
वर्धा २२-७-३६

—अंग्रेजी। सेगांव (वर्धा), २२।७।१९३६। साहेबजी महाराज, आगरा को लिखे पत्र की फोटो-नक़ल (जी० एन० २१६४) से]

४१७. पत्र : जवाहरलाल नेहरू को

३० जुलाई १९३६

प्रिय जवाहरलाल,

मैं कितना चाहता हूं कि तुम 'पागलपन' के कामों को बन्द कर दो और आम भलाई के लिए अपनी शक्ति को बचाओ।

अगर तुम अपना विनोद कभी न छोड़ो और अपना पूरा कार्यकाल पूरा करो तथा अपनी नीति वर्तमान साथियों के द्वारा ही अधिक-से-अधिक चलाने का प्रयत्न करो तो सब ठीक हो जायगा। समय आ पहुंचा है कि भविष्य का अर्थात् अगले वर्ष की योजनाओं का विचार किया जाय। कुछ भी हो, तुम्हें विरोध में नही होना चाहिए। यह मेरी पक्की राय है। जब पिताजी की तरह तुम महसूस करो कि तुम कांग्रेस को अकेले ही संभालने को तैयार हो तब मेरे खयाल से वर्तमान साथियों की ओर से कोई विरोध नही पाओगे। आशा है, बम्बई में तुम्हारा मार्ग साफ रहेगा।

कमला-स्मारक से मुझे बेचैनी हो रही है। मुझे मालूम नहीं कि चन्दे या योजना के विषय में क्या हो रहा है। अगर खुरशेद[1] या सरूप या दोनों इस चीज पर पूरा ध्यान लगा रही है तो अच्छा है। सरूप से कहना है कि मै आशा रखता हूं कि इस सम्बन्ध मे वह जो कुछ करेगी उससे मुझे परिचित रक्खेगी।

---

१. खुरशेद कैप्टेन, बम्बई की प्रसिद्ध पारसी महिला, जिन्होंने असहयोग और सत्याग्रह-युग में वहां अपने रचनात्मक कार्यों से काफी जागरण पैदा किया था।

मैं यहा समाजवाद के प्रश्न की चर्चा नही करूगा। ज्योही मैं अपनी टिप्पणी को दुबारा देख लेना समाप्त कर दूगा, उसका मस्विदा तुम्हारे पास पहुच जायगा, और अखबारो को बाद मे भेजा जायगा। मेरी कठिनाई सुदूर भविष्य के विषय मे नही है। मैं तो सदा वर्तमान पर ही पूरा ध्यान लगा सकता हू। और उसी की मुझे कभी-कभी चिन्ता होती है। यदि वर्तमान को सँभाल लिया जाय तो भविष्य अपने-आप सँभल जायगा। किन्तु मुझे आगे की बात नही सोचनी चाहिए।

आशा है, तुम्हारा स्वास्थ्य सचमुच अच्छा रह रहा होगा।

सस्नेह,

बापू

मेरे और जेनकिस के बीच का पत्र-व्यवहार तुम देख लेना। मुझे भी कानूनी कार्रवाई से घृणा है। परन्तु यह मामला मुझे ऐसा लगता है, जिसमे कार्रवाई जरूरी है।

—अंग्रेजी। सेगाव (वर्धा), ३०।७।१९३६। नेहरू सग्रहालय से।]

सौजन्य : श्रीमती इन्दिरा गाधी

४१८. पत्र : हनुमानप्रसाद पोद्दार को

भाई हनुमान प्रसाद,

तुमारा वर्णन हृदयद्रावक है बाबा राघवदास का वर्णन भी आ गया है. तुम सब पारमार्थिक काम कर रहे हैं अच्छा है, ईश्वर तुम्हे सराहेगा और हजारो गरीबो की रक्षा होगी.

बापु के आशीर्वाद

४-८-३६

—हिन्दी। ४।८।१९३६। गाधी जी के स्वाक्षरो मे लिखे मूल पत्र से।]

सौजन्य : श्री हनुमानप्रसाद पोद्दार।

४१९. पत्र : साहेबजी महाराज को

[यह पत्र महादेव भाई के हाथ का लिखा जान पड़ता है। हस्ताक्षर मात्र गांधीजी ने अपने हाथ से किये हैं।—सम्पा०]

प्रिय साहेवजी महाराज,

आपके पत्र के लिये अनेक धन्यवाद। हम १२ वीं को मिस्त्री की प्रतीक्षा करेंगे, उसे आने का यात्रा-व्यय दिया जायगा और उसकी तनख्वाह आगरा से उसके रवाना होने के दिन से शुरू होगी।

इस प्रयोग से मैं वहुत प्राप्त होने की आशा करता हूं।

आपका निश्छल

सेगांव-वर्धा मो० क० गांधी

५-८-३६

—अंग्रेजी। सेगांव, वर्धा, ५।८।१९३६। जी० एन० २१६५ की फोटो-नकल से]

४२०. पत्र : हनुमानप्रसाद पोद्दार को

भाई हनुमान प्रसाद,

मनुष्य वहुत कमजोर प्राणी है. वह जितना दूसरों के छोटे पाप को वड़ा करके मानता है, वैसा अपने पाप को भी नही मानता. ऐसा कोई आदमी नही जो यह दावा करे कि जिदगी में मैंने कोई पाप नहीं किया. लेकिन जो अपने को सदाय देखता रहता है, ईश्वर की खोज में लगा है उसे तो अपने थोड़े पाप भी पहाड़ लगेंगे और वह उनसे छूटने के लिए द्रौपदी की तरह ईश्वर को पुकारेगा. ईश्वर ऐसे की पुकार सुनता है. और उसको पापमुक्त कर देता है.

वर्धा ११।८।३६

वापु के आशीर्वाद

—हिन्दी। वर्धा, ११।८।१९३६ गांधीजी के मूल पत्र से।]
सौजन्य : श्री हनुमानप्रसाद पोद्दार।

४२१. पत्र : जवाहरलाल नेहरू को

सेगांव
२८ अगस्त १९३६

प्रिय जवाहरलाल,

कल की हमारी वात-चीत ने मुझे विचार में डाल दिया है। क्या कारण है कि पूरी इच्छा होते हुए भी मैं उस चीज को नही समझ सकता, जो तुम्हारे लिए

इतनी स्पष्ट है? जहा तक मैं जानता हू, मुझे वौद्धिक ह्रास का मर्ज नही लगा है। तो फिर तुम्हे कम-से-कम मुझे यह समझाने के लिए कि तुम चाहते क्या हो पूरा दिल क्यो न लगा देना चाहिए? सम्भव है, मैं तुमसे सहमत न होऊ किन्तु मेरी स्थिति तो ऐसा कहने की होनी चाहिए। कल की वात-चीत से इसपर प्रकाश नही पडता कि तुम्हारे जी मे क्या है? और शायद जो वात मेरे लिए सही है वही और भी कुछ लोगो के लिए हो। मैं इस समय इसकी चर्चा राजा से कर रहा हू। तुम भी समय निकाल सको तो मैं चाहूगा कि अपने कार्यक्रम की चर्चा उनसे कर लो। मेरे पास समय नही है, इसलिए विस्तार से नही लिखूगा। तुम जानते हो, मेरा क्या मतलव है।

सस्नेह
वापू

—अंग्रेजी। सेगांव (वर्धा), २८।८।१९३६। 'ए वच आफ ओल्ड लेटर्स' से।]
सौजन्य : श्रीमती इन्दिरा गाधी

४२२. पत्र : चन्द्रत्यागी को

(पोस्टकार्ड)

सेगाव, वर्धा
१४-६-३६

भाई चन्द त्यागी,

तुम्हारा पत्र कई दिनों से मेरे सामने पडा है लेकिन आजतक मैं उसको पहूच नही सका। वलवीर के वारे मे तुमने खवर अच्छी दी है। मैं उसे मेरे पास नही वुला सकता हू क्योंकि देहाती जीवन व्यतीत करने की वडी कोशिश कर रहा हू। इस देहात मे मेरे पास रहने की जगह भी नही है। न मैं यहां का कुटुम्व वढाना चाहता हू, जो मैं सावरमती इत्यादि जगह मे कर सकता था वह करने की न शक्ति रही है, न इच्छा रही है। देहात की मेरी साधना परिमित कुटुम्व को रखकर ही हो सकती है। यदि जीवनदोरी आगे चलनेवाली है तो भविष्य मे क्या हो सकता है यह तो ईश्वर ही जाने। राजकिशोरी तो मुझको विलकुल भूल गई ही है न? कभी लिखती भी नही है। क्या करती है कितना खर्च करती है?

वापू के आशीर्वाद

[टिप्पणी—पत्र लिखा दूसरे का है। हस्ताक्षर-मात्र गांधी जी के हैं।]
—हिन्दी। सेगांव (वर्धा), १४।९।१९३६। जी० एन० ६६३३ तथा सी० डबल्यू० ४२८० की फोटो-नक़ल से]

४२३. पत्र : साहेबजी महाराज को

प्रिय साहेबजी महाराज,

जिस मिस्त्री को आपने कृपापूर्वक मेरे पास भेजा था, वह हमें पूर्ण सन्तोष देता रहा है। वह सब असामान्य समयों में भी इस हेतु से काम करता रहा है कि यदि सम्भव हो तो उसे अपने समय के पहिले ही मुक्त किया जा सके। वह १२ तारीख तक काम चलाने के लिए काफी-कुछ सिखा देगा। वह १३वीं को विदा होना चाहता है। यदि मैनेजर ज़ोर देते तो वह पूरे छः महीने रह सकता था। किन्तु उतने समय तक उसे रोक रखना आवश्यक नहीं था।

अप मैं चाहता हूं कि मैनेजर श्री वालूंजकर दयालवाग जायं और वहां कुछ दिन रहकर देखें।...[1]

सेगांव-वर्धा
७।१०।३६

—अंग्रेजी। सेगांव (वर्धा), ७।१०।१९३६। जी० एन० २१६६ की फोटो-नक़ल से]

४२४. पत्र : जवाहरलाल नेहरू को

प्रिय जवाहरलाल,

जैसी मुझे आशा है, तुम आज खत्म कर लो तो शायद मुझे कल दोपहर के बाद चले जाने दोगे।

यदि भविष्य में कांग्रेस अधिवेशन गांवों मे करने के विषय में मेरा सुझाव तुम्हें पसन्द आ गया हो तो मैं चाहूंगा कि तुम कांग्रेस से फरवरी और मार्च के बीच में अधिवेशन करने के पुराने नियम को फिर से चालू कर देने के लिए कहो। सम्भव

---

१. यहां पत्र के अक्षर बहुत धूमिल पड़ गये है और पढ़े नहीं जाते।

हो तो हजारो को जाड़े के मौसम के कष्टो से बचाना चाहिए। ससदीय लोगो को इस व्यवस्था के अनुकूल वन जाना चाहिए। यदि विधान-मण्डलो मे काग्रेस को वहुमत प्राप्त हो जाय तो कोई कारण नही कि वडे दिन, ईस्टर आदि की तरह उन्हे छुट्टी क्यो नही रखनी चाहिए। मैंने सरूप से कहा है कि कमला-स्मारक के लिए कही-न-कही जल्दी जमीन जुटा लेनी चाहिए और फिर उसके लिए घर-घर चन्दा इकट्ठा करने का काम शुरू कर देना चाहिए।

सस्नेह
वापू

—अंग्रेजी। २८।१२।१९३६। नेहरू संग्रहालय में प्राप्त पत्रावली से।]
सौजन्य : श्रीमती इन्दिरा गाधी

४२५. पत्र : हनुमानप्रसाद पोद्दार को[1]

भाई हनुमान प्रसाद,

तुम्हारा पत्र तुम्हारे प्रेम का प्रतीक है. वाकी मृत्यु तो जन्म का साथी ही है और है वडा वफादार कभी धोखा नही देता

भगवद्भजन, मृत्यु के नजदीक ही होने से क्यो ? जिसे मैं भगवद्भजन मानता हू वह तो प्रतिक्षण चलता ही है भगवान की सृष्टि की भगवत्प्रीत्यर्थ सेवा उसका भजन है आजकल उसमे सूर देता है तेनत्यक्तेन भुजीथा

तुमारा स्वप्ना झूठा क्यो हो ?- १०० वर्ष तक जीऊगा तो भी मित्रो को मृत्यु जल्दी जचेगा. तव आज या कल की वात क्या ? और भजन तो सदाय करते रहें—तुम जवान भी और मैं वृद्ध भी

वापू के आशीर्वाद

सेगाव
१०-२-३७

—हिन्दी। सेगांव (वर्धा), १०।२।१९३७। गाधी जी के स्वाक्षरो मे लिखित मूल प्रति से।]
सौजन्य : श्रीहनुमानप्रसाद पोद्दार।

---

१. देखिए श्री पोद्दार का स्वप्नवाला आशंकापूर्ण पत्र।

४२६. पत्र : सुरेश सिंह को

भाई सुरेश सिंह

तुम्हारा खत मिला. दिल चाहे तब आजाना. सब काम अच्छी तरह से चलना होगा कौटुम्बिक कलह कुछ नहिं होगा.

१२-२-३७ वापू के आशीर्वाद

सेगांव-वर्धा

—हिन्दी। सेवाग्राम, वर्धा, १२।२।१९३७।]

सौजन्य : श्री सुरेश सिंह, कालाकांकर।

४२७. पत्र : जवाहरलाल नेहरू को

सेगांव, वर्धा

५ अप्रैल, १९३७

पति को राजा जी अलग क्यो रख रहे हैं, अनुसूया वाई को क्यो वाहर रखा गया ? तव मैंने उन्हें वताया कि अलग रखने के मामले मे मैंने क्या भाग लिया और उस दिन मौनवार को मैंने तुम्हारे लिए जो नोट लिखा था उसका जितना भाग मुझे याद था, लगभग सारा उन्हें कह सुनाया। अवश्य ही मैंने उन्हें वताया कि शुरु मे सरोजिनी को न लेने और वाद मे ले लेने मे मेरा कोई हाथ नही था। मैंने उनसे यह भी कहा कि जहातक मुझे मालूम है, लक्ष्मीपति को न लेने से राजा जी का कोई वास्ता नही था। मैंने सोचा तुम्हें यह सब मालूम होना चाहिए।

आशा है, इस पत्र के पहुचने तक तुम फिर पूरी तरह तन्दुरुस्त हो जाओगे। माताजी के विषय मे तुमने कुछ नही लिखा।

सस्नेह

वापू

—अंग्रेजी। वर्धा, ५।४।१९३७। नेहरू संग्रहालय मे प्राप्त पत्रावली से।]
सौजन्य : श्रीमती इन्दिरा गांधी

४२८. पत्र : बनारसीदास चतुर्वेदी को

भाई वनारसीदास,

सुमात्रा ईत्यादि की यात्रा का जो कारण है उसके साथ मारिशियस ई० की यात्रा किसी तरह नही मिलती है। ब्रह्मदेश, सुमात्रा, जावा, सायाम इ० पूर्व की सस्कृति से सवध रखनेवाले देश हैं। उनका हिंदुस्तानी भाषाओ के साथ संवध होना स्वाभाविक प्रतीत होता है। इसमे मतलव यह नही कि वे लोग सवके सव हिंदी सीखेंगे, लेकिन उनमे से कोई हिन्दी का अभ्यास करे तो आश्चर्यजनक न माना जाय।

वापु के आशीर्वाद

५-५-३७
सेगांव, वर्धा

[टिप्पणी—यह पत्र लिखा किसी और के हाथ का है। हस्ताक्षर मात्र गाधी जी के हैं।]

—हिन्दी। सेगांव (वर्धा), ५।५।१९३७। जी० एन० २५५९ की फोटो-नक़ल से]

४२९. तार : जवाहरलाल नेहरू को

[यह तार वर्धागंज तारघर से १४।६।३७ को दिया गया था और कलकत्ता में १५।६।३७ को प्राप्त हुआ था।—सम्पा०]

जवाहरलाल मार्फत डाक्टर विधान राय वेलिंगटन स्ट्रीट, कलकत्ता

मुझे आशा है तुम (और) इन्दु अच्छे हो। उसके और मौलाना[1] के साथ आखरी हफ्ते में आओ, मोसिम ठण्डा होने लगा है।

प्रेम

वापू

—अंग्रेजी। वर्धा, १४।६।१९३७। नेहरू संग्रहालय में सुरक्षित पत्रावली से।]
सौजन्य : श्रीमती इन्दिरा गांधी
तथा नेहरू संग्रहालय।

४३०. पत्र : जवाहरलाल नेहरू को

मेरे प्रिय जवाहरलाल,

तुम्हारा पत्र मुझे अभी-अभी मिला है। यद्यपि तीन दिन बहुत थोड़े सिद्ध हो सकते हैं, फिर भी वे कुछ न होने से तो अच्छे ही रहेंगे। यह अफसोस की वात है कि इन्दु तुम्हारे साथ नही आ सकती। मैंने तो सोचा था कि उसने कई साल पहिले टांसिल का जो आपरेशन करवाया था वह आखरी था। मै माने लेता हूं कि यह भी पहिले की भांति ही सरल होगा।

तुम सबको प्रेम

२२-६-३७

वापू

—अंग्रेजी। सेगांव (वर्धा), २२।६।१९३७। नेहरू संग्रहालय में सुरक्षित पत्रावली से।]
सौजन्य : श्रीमती इन्दिरा गांधी
तथा नेहरू संग्रहालय।

---

१. मौलाना अबुलकलाम आजाद।

४३१. पत्र : जवाहरलाल नेहरू को

सेगाव, वर्धा
२५ जून, १९३७

प्रिय जवाहरलाल,

सीमा-नीति पर तुम्हारा वक्तव्य अभी मिला। खानसाहव ने और मैंने उसे पढ लिया। मुझे वह वहुत पसन्द आया। पता नही स्पेनवालो और अग्रेजो की वमवारी विल्कुल एक-सी है या नही। क्या अग्रेजो-द्वारा की हुई हानि की मात्रा मालूम कर ली गई है? अग्रेजो की वमवारी का प्रकट कारण क्या वताया गया है? इस वात पर हँसना भी मत और क्रोव भी न करना कि मैं इन चीजो को उतनी अच्छी तरह नही जानता जितना तुम जानते हो। अखवारो को जितना कम मैं देखता हू उससे मुझे वहुत कम ही जानकारी हो सकती है। किन्तु मेरे प्रश्नो का उत्तर देने का कष्ट मत उठाना। तुम्हारे वयान पर होनेवाली प्रतिक्रियाओ का मैं ध्यान रखूगा। शायद उनसे कुछ प्रकाश पडे और जो कमी रह जाय वह जव हम मिलेंगे तव तुम पूरी कर ही दोगे। आशा है, मौलाना आयगे। लेकिन वह न आ सकें तो भी मैं चाहूंगा कि तुम तो उस तारीख पर अवश्य पहुच जाओ। इन तीनों शान्त दिनो मे हम साथ रहेगे।

आशा है, इन्दु अच्छी तरह होगी।

सस्नेह
वापू

—अंग्रेजी। सेगांव (वर्धा), २५।६।१९३७। नेहरू सग्रहालय में प्राप्त पत्रा-वली से।]
सौजन्य : श्रीमती इन्दिरा गाधी तथा नेहरू संग्रहालय।

४३२. पत्र : जवाहरलाल नेहरू को

सेगाव, वर्धा
१० जुलाई, १९३७

प्रिय जवाहरलाल,

कल मौलाना साहव[1] से मेरी लम्बी वाते हुई। यदि प्रान्तो मे मुस्लिम मन्त्रियो

---

१. मौलाना अवुल कलाम आजाद।

का चुनाव उनकी सलाह से करना है तो मेरे विचार से इस आशय की सार्वजनिक घोषणा कर देना बेहतर होगा। मौलाना सहमत हैं। यदि तुम्हारे खयाल में कार्य-समिति से परामर्श लेना चाहिए तो मेरा सुझाव है कि तार से ले लिया जाय।

मैं आशा करता हूं कि तुम हिन्दी-उर्दू के विषय में जल्दी ही लिखोगे।

सनेह

बापू

—अंग्रेजी। सेगांव (वर्धा), १०।७।१९३७। 'ए बंच आफ ओल्ड लेटर्स' से।]
सौजन्य : श्रीमती इन्दिरा गांधी

४३३. पत्र : जवाहरलाल नेहरू को

सेगांव, वर्धा

१५ जुलाई, १९३७

[illegible],

[illegible] का दिन है। मैं निगाह रख रहा हूं।

[illegible] मे तुम्हें यह बताने के लिए लिख रहा हूं कि मैंने कांग्रेसी मन्त्रि-[illegible] और सम्बन्धित विषयों पर लिखना शुरू कर दिया है। मुझे [illegible] देखा कि जब मेरी भावनाएं इतनी तीव्र हो गई है तो [illegible]। [illegible] मे कुछ 'हरिजन' के लिए आने लेख की अन्तिम [illegible]। यदि उसकी भाषा नापसन्द होगी तो भेज [illegible] कि मैं इस तरह लिखता क्यों गया? सारी स्थिति [illegible] करना चाहिए, क्योंकि देश के लिए [illegible] रहा हूं। यदि मेरे लिए मैं मुझे अशान्ति [illegible]।

[illegible] नहीं मिल सकेगा।

सस्नेह

४३४. पत्र : जवाहरलाल नेहरू को

सेगाव, वर्धा
२२ जुलाई १९३७

प्रिय जवाहरलाल,

मौलाना साहब एक दिन वर्धा ठहर गये थे और हमारी लम्बी बात-चीत हुई। उन्होंने मुझे विधान-सभा के मुस्लिम लीगी और काग्रेसी सदस्यो के समझौते का मस्विदा दिखाया। मेरे विचार से यह अच्छा दस्तावेज है। परन्तु उन्होंने मुझे बताया कि तुम्हें तो यह पसन्द है, टण्डनजी को नही है। मौलाना के सुझाव के अनुसार मैंने इसके विषय मे टण्डनजी को लिखा है। आपत्ति क्या है?

पाच सौ रुपया वेतन, बडी-सी कोठी और मोटर पर कड़ी आलोचनाए हो रही हैं। मैं जितना ही सोचता हू उतना आरम्भ मे ही इतनी फिजूलखर्ची बुरी मालूम होती है। इसके विषय मे मैंने मौलाना से भी बातचीत की थी।

इन्दु कैसी है?

सस्नेह
बापू

—अंग्रेजी। सेगांव (वर्धा), २२।७।१९३७। नेहरू संग्रहालय मे प्राप्त पत्रावली से।]
सौजन्य : श्रीमती इन्दिरा गांधी तथा नेहरू संग्रहालय।

४३५. पत्र : जवाहरलाल नेहरू को

सेगाव, वर्धा
३०।७।१९३७

प्रिय जवाहरलाल,

आशा है कि महादेव ने तुम्हारे हिन्दी-सम्बन्धी निबन्ध की पहुँच के अतिरिक्त कल यह भी बता दिया होगा कि वाइसराय ने मुझे ४ तारीख को दिल्ली बुलाया है—किसी विशेष कारण नही, केवल मिलने की खातिर। मैंने उत्तर दिया कि उन्होंने मेरी इच्छा का पहिले से ही अनुमान कर लिया क्योकि खा साहब पर लगे प्रतिबन्ध और सीमाप्रान्त की अपनी यात्रा के विषय मे उनसे मुलाकात मागने की मेरी इच्छा थी ही। तदनुसार मैं ४ तारीख को दिल्ली पहुंच रहा हू। मुलाकात

का निर्धारित समय ११-३० बजे है। इसलिए मुझे इसी दिन लौटकर ५ को सेगांव पहुंच जाने की आशा है।

परन्तु यह पत्र तो तुम्हें जाकिर के पत्र की नकल भेजने के उद्देश्य से है जो बम्बई के हाल के दंगे और हिन्दी-उर्दू के दुर्भाग्यपूर्ण विवाद पर अपनी प्रतिक्रिया व्यक्त करते हुए मैंने लिखा था। मैंने सोचा कि इस सुविचारित पत्र को मैं तुम पर भी प्रकट कर दूं।

मैं झांसी के चुनाव को भयंकर पराजय नहीं मानता। यह एक सम्मानपूर्ण पराजय है और उससे यह आशा होती है कि यदि हम परिश्रम करते रहें तो मुसलमानों तक कांग्रेस का सन्देश कारगर ढंग पर पहुंचा सकते हैं। परन्तु मेरी यह राय अब भी कायम है कि केवल सन्देश ही पहुंचाया जाय और साथ-साथ देहात में ठोस काम न किया जाय तो अन्ततः हमारा उद्देश्य पूरा नहीं होगा। परन्तु यह सब इस पर निर्भर है कि हम शक्ति किस ढंग से पैदा करना चाहते हैं।

मेहरअली का मद्रास का भाषण मेरे लिए आंखें खोलने वाला है। पता नहीं, वह सामान्य समाजवादी विचार को कहां तक व्यक्त करते हैं। राजाजी ने मुझे उनके भाषणवाली एक कतरन भेजी थी। आशा है, उन्होंने तुम्हें भी एक नकल भेजी होगी। मैं इसे बुरा भाषण कहता हूं। तुम्हें इस पर ध्यान देना चाहिए। कांग्रेस की नीति के, जैसी मैं समझता हूं, यह विरुद्ध पड़ता है।

मद्रास में राय का भाषण भी हुआ है। मैं मान लेता हूं कि तुम्हें ऐसी सब कतरनें मिलती होंगी। फिर भी तुरन्त तुम्हारे देखने के लिए कतरनें साथ में हैं, जो प्यारेलाल[1] ने मेरे लिए तैयार की है। राय मुझे भी लिखते रहे हैं। तुम्हें उनका ताजा पत्र देखना चाहिए। मैंने फाड़ न दिया हो तो वह इस पत्र के साथ होगा। उनके रवैये पर तुम्हारी क्या प्रतिक्रिया है? जैसा मैं तुम्हें पहिले ही बता चुका हूं, उन्हें समझना मेरे लिए कठिन हो रहा है।

खादी के लिए तुम्हारा दिया हुआ नाम 'आजादी की वर्दी' जबतक हिन्दुस्तान में अंग्रेजी भाषा बोली जायगी तबतक जिन्दा रहेगा। इस मनोहर शब्द-प्रयोग के पीछे जो विचार है उसका पूरी तरह हिन्दी में अनुवाद करने के लिए किसी प्रथम श्रेणी के कवि की आवश्यकता होगी। मेरे लिए वह केवल काव्य ही नहीं, परन्तु एक ऐसा महान सत्य का प्रतिपादन करता है जिसका पूरा अर्थ समझना अभी शेष है।

सस्नेह

बापू

---

१. प्यारेलाल, गांधी जी के एक निजी सचिव।

यद्यपि राय के भाषण से सम्बन्धित अंश मेहरअली वाले अश के बाद ही आता है फिर भी इसका यह अर्थ नही है कि वह मेहरअली के अश के मुकाबले का है।
—अंग्रेजी। सेगांव (वर्धा), ३०।७।१९३७। नेहरू संग्रहालय से।]

सौजन्य : श्रीमती इन्दिरा गाधी तथा नेहरू सग्रहालय।

४३६. पत्र : जवाहरलाल नेहरू को

रेल मे
३ अगस्त १९३७

प्रिय जवाहरलाल,

यह मैं दिल्ली ले जानेवाली गाडी मे लिख रहा हू। मेरा प्राक्कथन, या जो कुछ भी इसे कहो, साथ मे है। मैं तुम्हें कोई लम्बी-चौडी चीज नही दे सका।

तुमने 'पश्तो' और पजाबी के पहिले 'शायद' रखा है। मेरा सुझाव है कि तुम यह क्रियाविशेषण हटा दो। मिसाल के लिए खानसाहब 'पश्तो' को कभी नही छोडेंगे। मेरा ख्याल है, यह किसी लिपि मे लिखी जाती है, यद्यपि मैं भूल गया हूं कि किस लिपि मे। और पजाबी? गुरुमुखी मे लिखी हुई पजाबी के लिए सिख तो मर मिटेंगे। उस लिपि मे कोई शोभा नही है। किन्तु मुझे मालूम हुआ है कि सिन्धी की तरह वह भी सिखो को हिन्दुओ से अलग करने के लिए खासतौर पर ईजाद की गई थी। यह बात हो या न हो। फिलहाल तो सिखो को गुरुमुखी छोडने को राजी करना मुझे असम्भव लगता है।

तुमने चारो दक्षिणी भाषाओ मे से कोई सामान्य लिपि तैयार करने का सुझाव दिया है। मुझे उनके लिए चारो की मिली-जुली लिपि की तरह ही देवनागरी भी उतनी ही आसान मालूम होती है। व्यावहारिक दृष्टि से उन चारो मे से मिली-जुली लिपि का आविष्कार हो नही सकता। इसलिए मेरा सुझाव है कि तुम केवल इतनी ही सामान्य सिफारिश करो कि जहा कही सम्भव हो, जिन प्रान्तीय भाषाओ का सस्कृत से सजीव सम्बन्ध है, वे यदि उसकी शाखाए नही हैं तो उन्हें सशोधित देवनागरी अपना लेनी चाहिए। तुम्हें मालूम होगा कि यह प्रचार जारी है।

बस अगर तुम मेरी तरह सोचते हो तो तुम्हें यह आशा प्रकट करने मे सकोच नही होना चाहिए कि चूकि किसी-न-किसी दिन हिन्दुओ और मुसलमानो को दिल से एक होना ही है, इसलिए जो हिन्दुस्तानी बोलते हैं उन्हें भी एक देवनागरी

लिपि ही अपना लेनी चाहिए, क्योंकि वह अधिक वैज्ञानिक है और संस्कृत से निकली हुई भाषाओं की महती प्रान्तीय लिपियों के निकट है।

अगर तुम मेरे सुझाव आंशिक या पूरे स्वीकार कर लेते हो तो तुम्हें आवश्यक परिवर्तन मंजूर करते हुए स्थानों को खोज निकालने में कोई कठिनाई नही होगी। तुम्हारा समय बचाने की खातिर मैंने स्वयं ही ऐसा करने का इरादा किया था, परन्तु अभी मुझे अपने शरीर पर इतना भार नहीं डालना चाहिए।

मैं यह मान लेता हूं कि तुम्हारे सुझाव के मेरे समर्थन का यह अर्थ नहीं है कि मैं हिन्दी सम्मेलन वालों से हिन्दी शब्द का प्रयोग छोड़ देने के लिए कहूं। मुझे विश्वास है कि तुम्हारा यह मतलब नहीं हो सकता। मै जहां तक सोच सकता हूं, उस मतलब को अन्तिम सीमा तक ले गया हूं।

यदि तुम मेरे सुझावों को स्वीकार नहीं कर सकते तो ठीक-ठीक बात बताने की खातिर 'प्राक्कथन' में यह वाक्य जोड़ देना बेहतर होगा। "बहर हाल मुझे उनका सामान्य ढंग पर समर्थन करने में कोई संकोच नही है।"

आशा है, इन्दु का आपरेशन अच्छी तरह हो जायगा।

सस्नेह
बापू

—अंग्रेजी। ३।८।१९३७। 'ए बंच आफ ओल्ड लेटर्स' से।]
सौजन्य : श्रीमती इन्दिरा गांधी

४३७. पत्र : जवाहरलाल नेहरू को

रेल में
४ अगस्त १९३७

प्रिय जवाहरलाल,

मैं मूर्ख हूं। तुम्हारा पत्र मिलने पर मैंने अपनी फाइल देखी तो मेहरअली के भाषणवाली कतरन मिल गई। मैंने उनके भाषण का, न कि मसानी के भाषण का, हवाला दिया था।

यह पत्र मुझे वर्धा ले जानेवाली गाड़ी में लिखा जा रहा है। अब रात के १०-

२० बज गये हैं। मैं नीद से जग उठा, भाषण का खयाल आया और ढूढने लगा। कलवाला डिब्बा ज्यादा अच्छा था।

मैं वाइसराय से मिला। तुमने सरकारी विज्ञप्ति देखी होगी। उसमे मुलाकात का सार सही-सही दिया गया है। कुछ और प्रासगिक वातें भी थी, जिनका जिक्र कृपलानी तुमसे मिलने पर करेंगे। एक वात का उल्लेख यहा कर दू। जैसे मुझे वुलाया वैसे शायद वह तुम्हें भी वुलाये। मैंने उनसे कहा कि अगर निमन्त्रण भेजा जायगा, तो शायद तुम इन्कार नही करोगे। क्या मैंने ठीक कहा?

मुझे अफसोस है कि मैंने राय के भाषण तुम पर थोपे। मैंने सोचा कि तुम उन्हें पढ़ोगे तो अवश्य ही। उन पर तुम्हारी राय जानने की जल्दी मुझे नही है। यदि तुम पहिले ही पढ न चुके हो तो सुविधा से पढ लेना।

मैंने जान लिया कि तुम इन्दु का आपरेशन वम्बई मे करा रहे हो।

सस्नेह

वापू

—अग्रेजी। ४।८।१९३७। 'ए बंच आफ ओल्ड लेटर्स से।]
सौजन्य : श्रीमती इन्दिरा गांधी

४३८. पत्र : जवाहरलाल नेहरू को

सेगाव, वर्धा
८ अगस्त १९३७

प्रिय जवाहरलाल,

मेहरअली के भाषण-सम्वन्वी तुम्हारे पत्र के एक मुद्दे पर लिखना मैं भूल गया था। मेरा मतलब ग्रीष्म-विद्यालय के कैदियो को छोडने के वारे मे राजाजी की विज्ञप्ति से है। तुम्हारा पत्र प्राप्त होने से पहले मैं उसे पढ चुका था, परन्तु उस पर मैंने वुरा नही माना। मेरा विचार है कि चूकि तुमने तो ग्रीष्म-विद्यालय के छात्रो की कार्रवाई को पसन्द किया था और मैं किसी भी तरह से उसका समर्थन नही कर सकता था, इसलिए मेरे विचार से इस वात की ओर ध्यान दिलाना आवश्यक था कि रिहाई का अर्थ इस कानून-भग का समर्थन करना नही है, और कानून-भग तो था ही। मुझे अन्देशा है कि जव काग्रेस सत्ता मे होगी तव वह अक्सर वही भाषा काम मे लेगी, जो उसके पहिले शासन इस्तेमाल किया करते थे। फिर भी उसका हेतु दूसरा ही होगा।

आशा है बम्बई में आपरेशन के सिलसिले में तुम्हारी अच्छी गुजर रही होगी। जब वह हो जाय, तो तार देना।

सस्नेह,

बापू

यदि नरीमान[1] तुम्हारे पास आयें तो उन्हें जांच की आज्ञा दे देना। मुझे खेद है कि बम्बई में तुम्हें इस मामले की झंझट रहेगी। महादेव[2] तुम्हें बतायेंगे कि मैं क्या करता रहा हूं।

बापू

—अंग्रेजी। सेगांव (वर्धा), ८।८।१९३७। नेहरू संग्रहालय से।]
सौजन्य : श्रीमती इन्दिरा गांधी तथा नेहरू संग्रहालय।

४३९. पत्र : सम्पूर्णानन्द को

भाई संपूर्णानन्द,

मैंने तो सोचा था कि आपकी तबियत हमेशा अच्छी ही रहति है और आपका शरीर खूब मजबूत है. नरेंद्र देव बहूत बिमार है, जयप्रकाश जैसा वैसा और आपको कमल और हृदय-कंपन ?

गूजरात में दिनकर हमेशा का बिमार. मेहरअली तो दूर्बल ही है. मसानी के हाल नही जानता हूं. मुझे कुछ ऐसे ही लगता है कि आप सब लोगो के लिए मैं एक नैसर्गिक आवासगृह खोलुं, दूसरी प्रवृत्ति छोड़ दूं. आपतो जानते है कि मै नैसर्गिक उपचार-दिवाना हूं इसलिए मेरा दीवानापन को उत्तेजित न करने के निमित्त से भी अच्छे हो जाओ.

आपका खत मेरे प्रश्नों पर अच्छा प्रकाश डालता है मेरे प्रश्नों के वारे में अब कुछ पूछना हमको नहिं है लेकिन आपके पत्र से और कई प्रश्न पैदा होते है उस वारे में तो हम जब मिल सकते है तब ही कुछ वार्तालाप करेंगे. एक बात कह दूं. ऐसा कहना कि 'समझौते से हम अपने आदर्श के नजदीक कभी नही जा सकते

---

१. के० एफ० नरीमान, बम्बई के प्रसिद्ध पारसी राष्ट्रीय नेता।

२. महादेव देसाई, गांधी जी के अवैतनिक निजी मन्त्री।

हैं ठीक नही जचता है. हा, इतना है (कि) समझौता का कारण दुर्वलता नही होना चाहिये।

दूसरी किताव जो लिखना चाहते हैं, अवश्य लिखे मुझे तो आपकी शैली अच्छी लगती है.

आपका

सेगाव मो० क० गाधी

वर्धा १७-८-३७

—हिन्दी। सेगाव (वर्धा), १७।८।१९३७।]

सौजन्य : श्री सर्वदानन्द।

४४०. पत्र : जवाहरलाल नेहरू को

सेगाव, वर्धा
१ अक्तूवर, १९३७

प्रिय जवाहरलाल,

जहातक मेरा सम्वन्ध है, पट्टाभि भी अच्छा चुनाव है। परन्तु मेरे खयाल से, समिति के सदस्यो की राय ले लेनी चाहिए।

पता नही, वर्धा मे होनेवाले शिक्षा-सम्मेलन मे शरीक होने का समय तुम निकाल सकोगे या नही। इसके लिए तुम्हे निमन्त्रण गया है, समय निकाल सको तो मैं चाहता हू कि आ जाओ। परन्तु मै यह नही चाहता कि अधिक महत्व-पूर्ण कार्य के कारण तुम्हारी कही और आवश्यकता हो तो भी तुम सम्मेलन के लिए समय निकालो। वेशक दो दिन तक ज़ोर पड़ेगा, परन्तु तुम आ सको तो तुम्हारे रहने से शान्ति मिलेगी।

सस्नेह

वापू

पुनश्च—

इस पत्र के साथ सय्यद हवीव से मेरे पत्र-व्यवहार का परिणाम एक चेक और पत्र के रूप मे भेजा जा रहा है। मैंने तुम्हारे साथ हुई वातचीत का जिक्र किये विना उन्हे इधर-उधर से रुपया ले लेने के लिए खूब झिड़क दिया है।

—अंग्रेजी। सेगाव (वर्धा), १।१०।१९३७। नेहरू सग्रहालय से।]

सौजन्य : श्रीमती इन्दिरा गाधी तथा नेहरू सग्रहालय।

---

१. यह शब्द ठीक पढा नहीं जाता।

४४१. पत्र : जवाहरलाल नेहरू को

सेगांव, वर्धा
१२ अक्तूबर, १९३७

प्रिय जवाहरलाल,

तुम्हारा पत्र मिला। २५ तारीख को यहां से चलकर कलकत्ता आने की कोशिश कर रहा हूं। तब मुझे कांग्रेसी प्रान्तों में मन्त्रि-मण्डलों के कार्य-कलाप का सब हाल बताना। आशा है गले की खराबी और जुकाम थोड़े ही दिन रहे होंगे और तुमने पंजाब का श्रम बर्दाश्त कर लिया होगा। सरहद की जलवायु तो बहुत ही सुखद होगी। मैं कितना चाहता हूं कि कम-से-कम कुछ ही समय के लिए तुम आराम कर लो।

सस्नेह,
बापू

—अंग्रेजी। सेगांव (वर्धा), १२।१०।१९३७। नेहरू संग्रहालय से।]
सौजन्य : श्रीमती इन्दिरा गांधी तथा नेहरू संग्रहालय।

४४२. पत्र : जवाहरलाल नेहरू को

वर्धा जाते हुए
१८ नवम्बर, १९३७

प्रिय जवाहरलाल,

मेरा खयाल है कि उस भयंकर रविवार की रात में और सोमवार के मौन मे जब तुम मेरे आस-पास मँडरा रहे थे, तब तुम्हारी आंखों में मै वह खानगी पत्र पढ़ सकता था। कमजोरी ने अभी मुझे छोड़ा नही है। सारे मानसिक श्रम से मुझे लम्बे विश्राम की आवश्यकता है, परन्तु शायद वह मिल नही सकता। यह पत्र तुम्हें यह खबर देने को लिख रहा हूं कि मैंने बंगाल के कैदियों के बारे में क्या किया है; मैं यह भी जानना चाहता हूं कि मेरा काम तुम्हें पसन्द आया है या नही। समझौते की बात-चीत का दिमाग पर काफी बोझ रहा है। उसे शुरू करने से पहिले मैंने दोनों भाइयो से परामर्श कर लिया था कि बातचीत के द्वारा राहत प्राप्त करना वाञ्छनीय है या नही। परिणाम के बारे में उदासीन रहना और रिहाई के लिए जब

भी हो जाय, लोकमत के विकास पर निर्भर रहना सम्भव था। जबकि सार्वजनिक आन्दोलन चल रहा है उसी समय दोनो भाई[1] स्पष्ट बातचीत के पक्ष मे थे। मैंने अपनी योजना भी बताई। वह उसी ढग की थी जैसी अण्डमान के कैदियो के नाम मेरे तार मे बताई गई थी। तदनुसार मैं देवली से वापस लाये गये नजरबन्दो से और कल रात को हिजली के कैदियो से मिला। मन्त्रियो ने उन नजरबन्दो को, जिन्हे वे 'गाव और घर मे' 'नजरबन्द' करते हैं, लगभग तुरन्त छोड़ देना स्वीकार कर लिया है और नजरबन्दो की छावनियो मे, जिन्हे छोडना वे सुरक्षित समझेंगे उन्हे भी, चार महीने के भीतर रिहा कर दिया जायगा। बाकी के लिए, यदि वे पहिले ही न छोड दिये गये हो तो मेरी सिफारिश मान ली जायगी।मेरी सिफारिश नजरबन्दो के वर्तमान विश्वास का पता लगा लेने पर निर्भर रहेगी। यदि मैं सरकार से कह सकूगा कि लोग स्वाधीनता की प्राप्ति के लिए हिंसक उपायो मे विश्वास नही रखते और समय-समय पर काग्रेस-द्वारा पसन्द की गई काग्रेस की प्रवृत्तियो मे लगे रहेगे तो उन्हें छोड दिया जायगा। नीति की घोषणा किसी भी समय की जा सकती है। कई जेलखानो मे और हिजली की छावनी मे कैदियो के साथ जो बातचीत हुई, उसका ब्यौरा देने की मुझे आवश्यकता नही है। मुझे पता नही कि यह सब तुम्हें पसन्द है या नहीं। यदि बहुत नापसन्द हो तो मैं चाहूगा कि तुम मुझे तार कर दो। नही तो मैं तुम्हारे पत्र की प्रतीक्षा करूगा।

अहमदाबाद की हडतालो से मुझे अशान्ति हुई। अखबारो से जो कुछ जानकारी होती है उसके सिवा उनके बारे मे मैं कुछ नही जानता। शोलापुर के विषय मे भी यही बात है। यदि हम स्थिति पर काबू नही रख सकते, या तो इसलिए कि कुछ काग्रेसी लोग काग्रेस के अनुशासन को नहीं मानना चाहते, या इसलिए कि जो लोग काग्रेस के प्रभाव से बाहर हैं, उनकी प्रवृत्तियो का नियन्त्रण काग्रेस नही कर सकती तो हमारा पदारूढ़ रहना काग्रेस के हित मे बाधक सिद्ध हुए बिना नही रहेगा।

'वन्देमातरम'[2] का विवाद अभी तक शान्त नही हुआ है। कार्यसमिति के निश्चय पर अनेक बगालियो को हार्दिक दुःख है। सुभाष ने मुझे बताया कि वह वातावरण को शान्त करने की कोशिश कर रहे हैं।

---

१. सम्भवतः शरत और सुभाषबोस से आशय है।

२. कांग्रेस कार्यसमिति ने निर्णय किया था कि राष्ट्रीय अवसरो पर वन्देमातरम गान की आरम्भिक पक्तिया ही गाई जायं। उसी पर कुछ विवाद उठ खड़ा हुआ था।

आने वाले गवर्नर के पद संभाल लेने के बाद शायद मुझे बंगाल लौट जाना होगा।

आशा है, तुम्हारा स्वास्थ्य अच्छा होगा। सरूप के बारे में अखबारों की खबर चिन्ताजनक थी। उस पर जो जोर पड़ रहा है, क्या उसका स्वास्थ्य उसे सहन नही कर सकता ?

यह पत्र नागपुर के निकट आते-आते लिखा जा रहा है। हम आज शाम को वर्धा पहुंच रहे है।

सस्नेह

बापू

—अंग्रेजी। १८।११।१९३७। 'ए बंच आफ ओल्ड लेटर्स' से।]
सौजन्य : श्रीमती इन्दिरा गांधी

४४३. पत्र : जवाहरलाल नेहरू को

सेगांव, वर्धा
७ दिसम्बर, १९३७

प्रिय जवाहरलाल,

मैंने मथुरा के प्रस्तावों या तुम्हारे भाषण को नही पढ़ा। मैं दोनों देखना चाहता हूं।

महादेव के पत्र में तुम्हारी कोमल शिकायत पढ़ी। मैं क्या कर सकता हूं ? मैं जैसा हूं तैसा ही तुम्हे मुझको स्वीकार करना होगा। मैं जानता हूं, तुम कर रहे हो। मैं यह भी जानता हूं कि मेरे प्रति तुम कितने कोमल हो।

क्रिप्स को जब चाहो अपने साथ ला सकते हो।

सस्नेह

बापू

—अंग्रेजी। सेगांव (वर्धा), ७।१२।१९३७। 'ए बंच आफ ओल्ड लेटर्स' से।]
सौजन्य : श्रीमती इन्दिरा गांधी

४४४. पत्र : जवाहरलाल नेहरू को

मेरे प्रिय जवाहरलाल,

यह अन्तिम मस्विदा नही है। मैं चाहता हूं कि तुम इसे सहानुभूतिपूर्वक पढ़ो।

मैं महसूस करता हू कि जबतक हम ऐसा कोई काम नही करेंगे, तनातनी जारी रहेगी। खैर, मैं कैसे भी एक बजे रात तुम सबको आश्चर्य मे डाल दूगा। मैंने मौलाना के साथ इस विषय पर कुछ विस्तार से विचार-विमर्श किया है।

तुम्हारा सच्चा

४-४-३८ बापू

—अंग्रेजी। ४।४।१९३८। नेहरू संग्रहालय मे सुरक्षित पत्रावली से।]

सौजन्य : श्रीमती इन्दिरा गांधी तथा नेहरू संग्रहालय।

४४५. पत्र : जवाहरलाल नेहरू को

सेगाव

२५ अप्रैल, १९३८

प्रिय जवाहरलाल,

महादेव के सीमाप्रान्त के दौरे के विवरण की प्रतिलिपि साथ मे है। चूकि मैं नही जा सकता था और हमें अशान्तिप्रद समाचार मिल रहे थे, इसलिए मुझे लगा कि उन्हे भेज दिया जाय। मैं यह विवरण सब सदस्यो मे नही घुमा रहा हू। मैं मौलाना[1] और सुभाष[2] को नकलें भेज रहा हू। विवरण से मैं बेचैन हो गया हू। महादेव को अधिक कहना है। अवश्य ही एक प्रति भाइयो[3] को भेज रहा हू। आशा है, तुमको भाइयो पर अपना बड़ा असर इस्तेमाल करने की प्रेरणा होगी। मैं तो तार-द्वारा उनके सम्पर्क मे हू ही। मुझे जो आघात लगा है, उसके बावजूद अगर खान साहब चाहेंगे तो मैं कुछ दिनो के लिए उस प्रान्त मे जा भी सकता हू। मालूम होता है, हम भीतर से कमजोर होते जा रहे हैं। इससे मुझे चोट लगती है कि हमारे इतिहास के इस बहुत नाजुक अवसर पर हम महत्वपूर्ण मामले मे सहमत दिखाई नही देते। मैं तुम्हे बता नही सकता कि यह जानकर मुझे कितना घोर अकेलापन होता है कि आजकल मैं तुम्हें अपने विचार का नही बना सकता। मैं

---

१. मौलाना अबुल कलाम आजाद।

२. सुभाषचन्द्र बोस।

३. अब्दुलगफ्फार खां और खान साहब।

जानता हूं कि तुम प्रेमवश बहुत-कुछ करोगे। परन्तु राजनीतिक मामलों में स्नेह के आगे आत्मसमर्पण नहीं हो सकता, जब बुद्धि विद्रोह करती हो। तुम्हारी बगावत के कारण तुम्हारे प्रति मेरा आदर और भी गहरा है। परन्तु इससे अकेलेपन का दुःख और भी तीव्र हो जाता है, लेकिन अब मुझे अपनी कलम रोकनी चाहिए।

प्यार,

बापू

—अंग्रेजी। सेगांव (वर्धा), २५।४।१९३८। नेहरु संग्रहालय से।]
सौजन्य : श्रीमती इन्दिरा गांधी तथा नेहरू संग्रहालय।

४४६. पत्र : जवाहरलाल नेहरू को

पेशावर जाते हुए, रेल में
३० अप्रैल, १९३८

प्रिय जवाहरलाल,

जिन्ना के साथ ३।। घण्टे की बातचीत का जो संक्षिप्त विवरण लिख डाला है, उसकी नकल साथ में है। सम्भव है, तुम्हें और दूसरे सदस्यों को बातचीत का आधार पसन्द न आये। स्वयं मुझे तो कोई चारा नहीं दीखता। आज मेरी कठिनाई यह है कि मैं तुम्हारी तरह देश में इधर-उधर घूमता नहीं और इससे भी गंभीर बाधा वह भीतरी निराशा है, जो मुझ पर छा गई है। मैं काम चला रहा हूं, परन्तु यह सोचकर आत्म-ग्लानि होती है कि मेरा वह आत्म-विश्वास जाता रहा, जो मुझमें एक महीने पहिले था। मुझे आशा है कि मेरे जीवन में यह सिर्फ एक अस्थायी घटना है। मैंने यह जिक्र इसलिए कर दिया कि तुम्हें प्रस्तावों को उनके गुणों के आधार पर जाँचने में मदद मिले। मैं नहीं समझता कि पहले प्रस्ताव के बारे में कठिनाई पेश आयेगी। दूसरा प्रस्ताव अपने सारे गूढ़ार्थों-सहित अनोखा है। अगर वह तुम्हें न जंचे तो उसे योंही अस्वीकार कर देने में संकोच न करना। इस मामले में तुम्हें आगे होना पड़ेगा।

मैं ११ तारीख को लौट आने की आशा रखता हूं। मेरे इस तार के उत्तर में कि फिर सुभाष को जिन्ना के साथ जल्दी से समझौते की बातचीत शुरू करनी चाहिए, उनका तार है कि वह १० तारीख को बम्बई में होंगे। मैं चाहता हूं कि

तुम भी वहा जल्दी जा सको। मै मौलाना साहव को इसी ढग से लिख रहा हू और इस पत्र की नकल उन्हे भेज रहा हू।

प्यार,

वापू

—अंग्रेजी। ३०।४।१९३८। नेहरू संग्रहालय से।]

सौजन्य : श्रीमती इन्दिरा गांधी तथा नेहरू सग्रहालय

४४७. पत्र : जवाहरलाल नेहरू को

७ मई, १९३८

प्रिय जवाहरलाल,

गाधी-सेवा-सघ[1] के नये स्वरूप मे ऐसी कौन सी वात है, जिसने तुम्हें अशान्त वना दिया? मैं स्वीकार करता हू कि उसकी जिम्मेदारी मेरी है। मैं चाहता हू कि तुम मुझे नि सकोच वताओ कि तुम्हे किस चीज से अशान्ति हुई है? अगर मेरी भूल हुई है तो तुम जानते हो कि भूल मालूम होते ही मैं अपने कदम पीछे हटा लूगा।

आम हालत खराव होने के वारे मे मैं तुमसे सहमत हू, भले ही दुर्वल स्थानो के सम्वन्ध मे हमारा मतभेद हो।

शेष मिलने पर।

प्यार,

वापू

—अंग्रेजी। ७।५।१९३८। 'ए बंच आफ ओल्ड लेटर्स' से।]

सौजन्य : श्रीमती इन्दिरा गांधी

४४८. पत्र : जवाहरलाल नेहरू को

सेगाव, वर्धा

२६ मई, १९३८

प्रिय जवाहरलाल,

तुम कितने काम से काम रखनेवाले और मुस्तैद हो। मुझे खुशी है कि तुमने

---

१. देखिए जवाहरलाल का पत्र दिनांक २८।४।१९३८।

गुड़गांव जिला कांग्रेस कमेटी के मामले की जांच कर ली है। आशा है, दोनों पक्ष तुम्हारी सलाह मान लेंगे। ऐसा ही होना चाहिए।

आज तुम्हारा पत्र मेरी और जिन्ना की वातचीत के मेरे विवरण के वारे में मिला और मेरा खयाल है कि उनसे मेरी दूसरी वातचीत अनिवार्य थी। मुझे आशा है कि इससे कोई हानि नही होगी। तुम्हें समय मिल जाय तो जाल[1] से मिलने के वाद मैं चाहूंगा कि तुम मुझे दो शब्द लिख भेजो। क्या अच्छा हो, यदि तुम अपने युरोप के दौरे के दिनों थोड़ा सा आराम ले लो और यहां की तरह सारा समय भाग-दौड़ में ही न विता दो।

प्यार,

वापू

—अंग्रेजी। सेगांव (वर्धा), २६।५।१९३८। नेहरू संग्रहालय से।]
सौजन्य : श्रीमती इन्दिरा गांधी तथा नेहरू संग्रहालय

४४९. पत्र : जवाहरलाल नेहरू को

सेगांव, वर्धा
३१ अगस्त १६३८

प्रिय जवाहरलाल,

अपनी सीमित शक्ति के कारण मुझे मजवूर होकर तुम्हें लिखने की इच्छा को दवा देना पड़ा था।

इन्दू के वारे में मेरे तार के तुम्हारे जवाब की प्रतीक्षा है।

संघ[2] के सम्वन्ध में तुम्हारी चेतावनी मैंने समझ ली है। मैं इस खबर पर विश्वास नही करता यानी अगर वह अफवाह से कुछ अधिक है तो। पहले कांग्रेस की अनुमति लिये विना वे उसे आमन्त्रित नही करेंगे। अनुमति उन्हें मिल नही सकती।

फिर रही वात यहूदियों की, सो मेरा बिल्कुल तुम्हारे जैसा ही खयाल है। मैं विदेशी माल का वहिष्कार करता हूं; विदेशी योग्यता का नही। और पीड़ित

---

१. वम्बई के जाल नौरोजी।

२. गांधी-सेवा-संघ, जिसका जिक्र जवाहरलाल ने अपने २८।५।१९३८ के पत्र में किया है।

यहूदियो के लिए तो मेरी भावना तीव्र है। एक ठोस प्रस्ताव के रूप मे मेरा सुझाव है कि तुम सवसे योग्य व्यक्तियो के नाम इकट्ठे कर लो और उन्हें साफ वता दो कि उन्हें हमारे भाग्य के साथ अपना भाग्य मिला देने और हमारा जीवन-स्तर स्वीकार करने को तैयार होना पडेगा। वाकी महादेव लिखेंगे।

प्यार,

वापू

—अंग्रेजी। सेगांव (वर्धा), ३१।८।१९३८। 'ए वच आफ ओल्ड लेटर्स' से।]
सौजन्य : श्रीमती इन्दिरा गांधी

४५०. पत्र : जवाहरलाल नेहरू को

मेरे प्रिय जवाहरलाल,

मुझे आशा है कि तुम और इन्दु दोनो को समुद्री यात्रा से लाभ पहुचा होगा। मैं आशा करता हू कि तुम २० के लगभग वर्धा मे होगे। किन्तु निश्चय ही तुम जितनी जल्दी तुम्हारी इच्छा होगी आ जाओगे। जटिल समस्याए हल के लिए तुम्हारा इन्तजार कर रही हैं।

तुम दोनो को प्रेम

सेगाव
१६-११-३८

वापू

—अंग्रेजी। सेगाव (वर्धा), १६।११।१९३८। नेहरू संग्रहालय मे सुरक्षित पत्रावली से।]
सौजन्य : श्रीमती इन्दिरा गाधी तथा नेहरू संग्रहालय।

४५१. पत्र : जवाहरलाल नेहरू को

मेरे प्रिय जवाहरलाल,

मैं आशा करता हू कि वम्वई मे तुम्हे मेरी टीप मिली होगी। मैं दो वजे के पहिले मौन नही ले सका। मुझे आशा है कि तवतक तुम्हे थोड़ी शान्ति मिल

४५५. पत्र : हरिशरण वर्मा को

सेगांव, वर्धा
१२-१२-३८

भाई हरसरन वर्मा,

तुमारा खत मिला है. अच्छा किया मुझको लिखा. जो कुछ लिखा है वह कांग्रेस कमिटी के पास भी रखना चाहिये.

मो० क० गांधी

—हिन्दी। सेगांव (वर्धा), १२।१२।१९३८। हरिशरण वर्मा, लखनऊ को लिखे पत्र की फोटो-नक़ल (जी० एन० ९०) से]

४५६. पत्र : जवाहरलाल नेहरू को

सेगांव वर्धा
२१।१२।३८

मेरे प्रिय जवाहरलाल,

मौलाना साहब काँटों का मुकुट नहीं चाहते। अगर तुम फिर उसे (पहनना) चाहते हो तो कृपया वैसा करो। अगर तुम न पहनोगे या वह न सुनेंगे, तब फिर चुनने को पट्टाभि[1] ही एकमात्र व्यक्ति रह जाते है।

प्रेम
बापू

—अंग्रेजी। सेगांव (वर्धा), २१।१२।१९३८। नेहरू संग्रहालय में सुरक्षित पत्रावली से।]
सौजन्य : श्रीमती इन्दिरा गांधी
तथा नेहरू संग्रहालय।

---

१. पट्टाभिसीतारामैया, आन्ध्र के प्रसिद्ध राष्ट्रीय नेता।

४५७. पत्र[1] : हीरालाल शर्मा को

२-२-३९
सेगाव, वर्धा

चि० शर्मा,

वारडोली मे इतनी काम मे फस गया था की वीमार होकर आज आया यही कारण है तुम्हारे खत का देर से उत्तर भेजने का. चिन्ता की वात नही है ठीक हो जायगा.

३-२-३९

लेकिन मैं किसी को एक लाइन भेजने का कह सकता था कि उत्तर जल्दी नही भेजा जायगा. यह नही किया क्योकि शीघ्र उत्तर भेजने की आशा वनी रही.

डिस्ट्रकशन कनेस्ट्रक्शन साथ चलनेवाली चीज है. तुमारा डिस्ट्रक्शन कुछ ऐसा लगता है कि उसकी तुम वर्दाश्त न कर सको आज एक करें और कल दूसरा ऐसे न वनने पाय.

पत्रिका मैं नही लिख सकता हूं तुमने ठीक ही लिखा है कि जवतक कनस्ट्रक्शन शुरू नही हुआ तवतक सब वात वेकार है. जो चल रहा उसमे पत्रिका को शायद स्थान नही है.

तुमारे अगले खत मे कुछ सिद्धात की वात थी कि समाज और कुटुव अलग वात है और होनी चाहिये अगर दोनो एक समजते हो लेकिन आज वहा तक नही पहोचते हो तो कहना क्या

मेरे साथ रहनेवाले और तुममे भेद नही है यह वात अमल मे वता दोगे तव मेरा काम हो गया समजुगा.

कुत्ता की मिसाल तो कठोर है लेकिन वात सही है यो तो हम सव कुत्ते के जैसे हैं. सहिष्णुता नही है. लेकिन समाज मे रहना और असहिष्णु रहना वडी विपरीत वात है.

वापु के
आशीर्वाद

—हिन्दी। सेगांव, वर्धा २-३।२।१९३९। 'बापू की छाया मे मेरे जीवन के सोलह वर्ष' से।]
सौजन्य : श्री हीरालाल शर्मा

---

१. बापू ने इस खत को दो दिन में पूरा किया मालूम होता है।

जायगी और वम्वई में गुजरे कठोर समय के वाद तुम उसका आनन्द लोगे। इन्दु अच्छी है।

प्रेम

वापू

२१-११-३८

—अंग्रेजी। २१।११।१९३८। नेहरू संग्रहालय में सुरक्षित पत्रावली से।]
सौजन्य : श्रीमती इन्दिरा गांधी तथा नेहरू संग्रहालय।

४५२. पत्र : जवाहरलाल नेहरू को

सेगांव, वर्धा

२४ नवम्बर, १९३८

प्रिय जवाहरलाल,

तुम्हारा खत मिला। मैं जानता था कि जहां घोड़े पर सवार हुए वहां फिर तुम अपने समय के मालिक नही रहोगे। मुझे जो कुछ मिल जायगा उसी से सन्तोष कर लूंगा।

पत्र-वाहक द्वारा गुरुदेव से मिला हुआ एक खत भेज रहा हूं। मैंने उत्तर दे दिया है कि मेरी अपनी राय यह है कि अगर उन्हें वंगाल को भ्रष्टाचार से मुक्त करना है तो अध्यक्ष के काम से छुटकारा पा लेने की जरूरत है। मुझे सन्देह नही कि गुरुदेव या तो तुम्हें सीधा लिखेंगे या तुमसे वात करेंगे। तुम अपनी ही राय देना।

आशा है, इन्दु को यात्रा से कोई हानि नहीं हुई होगी।

प्यार।

वापू

—अंग्रेजी। सेगांव (वर्धा), २४।११।१९३८। 'ए वंच आफ ओल्ड लेटर्स' से।]
सौजन्य : श्रीमती इन्दिरा गांधी

४५३. पत्र : जवाहरलाल नेहरू को

सेगांव, वर्धा

३० नवम्बर, १९३८

प्रिय जवाहरलाल,

चीनी मित्र आये और पांच के वजाय पैंतीस मिनट ले लिये। अन्त में मुझे कोमलता से कहना पड़ा कि वे अपने समय से सात गुना अधिक ठहर गये।

अगाथा की वाइसराय से जो मुलाकात हुई उसके विवरण की तुम्हारी प्रति साथ मे है। मेरा सन्देश इतना ही कहने को था कि वे मुझे अग्रेज जाति का मित्र समझें और उसका राजनीति से कोई सरोकार नही।

आशा है, तुमको मेरा वह पत्र ठीक तरह मिल गया होगा, जिसमे मैंने सुभाप-सम्बन्धी गुरुदेव का पत्र भेजा था।

मैं आशा रखता हू कि तुम काम से अपने आपको मार नही रहे हो और इन्दु के हालचाल अच्छे हैं।

सरूप जो भारी काम कर रही हैं उससे उसे छुडा देना चाहिए। उसे अपना जर्जर शरीर फिर से वना लेना चाहिए।

प्यार।

वापू

—अंग्रेजी। सेगाव (वर्धा), ३०।११।१९३८। नेहरू संग्रहालय से।]
सौजन्य : श्रीमती इन्दिरा गाधी
तथा नेहरू संग्रहालय।

४५४. पत्र : हरिशरण वर्मा को

भाई हरसरन वर्मा,

क्या आप चाहते हैं कि मैं आपका खत श्री रनजित[1] पडित को भेजु ?

मो० क० गाधी

सेगाव, वर्धा
५-१२-३८

—हिन्दी। सेगाव (वर्धा), ५।१२।१९३८। श्री हरिशरण वर्मा, लखनऊ को लिखे पत्र की फोटो-नक़ल (जी० एन० ९१) से]

---

१. रणजित पण्डित (जवाहरलाल नेहरू के वहनोई) उस समय भारतीय कांग्रेस कमेटी का काम-काज देखते थे।

४५५. पत्र : हरिशरण वर्मा को

सेगांव, वर्धा
१२-१२-३८

भाई हरसरन वर्मा,

तुमारा खत मिला है. अच्छा किया मुझको लिखा. जो कुछ लिखा है वह कांग्रेस कमिटी के पास भी रखना चाहिये.

मो० क० गांधी

—हिन्दी। सेगांव (वर्धा), १२।१२।१९३८। हरिशरण वर्मा, लखनऊ को लिखे पत्र की फोटो-नक़ल (जी० एन० ९०) से]

४५६. पत्र : जवाहरलाल नेहरू को

सेगांव वर्धा
२१।१२।३८

मेरे प्रिय जवाहरलाल,

मौलाना साहब काँटों का मुकुट नहीं चाहते। अगर तुम फिर उसे (पहनना) चाहते हो तो कृपया वैसा करो। अगर तुम न पहनोगे या वह न सुनेंगे, तब फिर चुनने को पट्टाभि[1] ही एकमात्र व्यक्ति रह जाते हैं।

प्रेम
बापू

—अंग्रेजी। सेगांव (वर्धा), २१।१२।१९३८। नेहरू संग्रहालय में सुरक्षित पत्रावली से।]
सौजन्य : श्रीमती इन्दिरा गांधी
तथा नेहरू संग्रहालय।

---

१. पट्टाभिसीतारामैया, आन्ध्र के प्रसिद्ध राष्ट्रीय नेता।

४५७. पत्र[1] : हीरालाल शर्मा को

२-२-३६
सेगांव, वर्धा

चि० शर्मा,

बारडोली मे इतनी काम मे फस गया था की बीमार होकर आज आया यही कारण है तुम्हारे खत का देर से उत्तर भेजने का. चिन्ता की बात नही है ठीक हो जायगा.

३-२-३६

लेकिन मैं किसी को एक लाइन भेजने का कह सकता था कि उत्तर जल्दी नही भेजा जायगा यह नही किया क्योकि शीघ्र उत्तर भेजने की आशा बनी रही.

डिस्ट्रकशन कनेस्ट्रक्शन साथ चलनेवाली चीज है. तुमारा डिस्ट्रक्शन कुछ ऐसा लगता है कि उसकी तुम बर्दाश्त न कर सको आज एक करें और कल दूसरा ऐसे न बनने पाय.

पत्रिका मैं नही लिख सकता हू तुमने ठीक ही लिखा है कि जबतक कनस्ट्रक्शन शुरू नही हुआ तबतक सब बात बेकार है जो चल रहा उसमे पत्रिका को शायद स्थान नही है.

तुमारे अगले खत मे कुछ सिद्धात की बात थी कि समाज और कुटुब अलग बात है और होनी चाहिये अगर दोनो एक समजते हो लेकिन आज वहा तक नही पहोचते हो तो कहना क्या

मेरे साथ रहनेवाले और तुममे भेद नही है यह बात अमल मे बता दोगे तब मेरा काम हो गया समजुगा.

कुत्ता की मिसाल तो कठोर है लेकिन बात सही है यो तो हम सब कुत्ते के जैसे हैं. सहिष्णुता नही है लेकिन समाज मे रहना और असहिष्णु रहना बडी विपरीत बात है.

बापु के
आशीर्वाद

—हिन्दी। सेगाव, वर्धा २-३।२।१९३९। 'बापू की छाया मे मेरे जीवन के सोलह वर्ष' से।]
सौजन्य : श्री हीरालाल शर्मा

---

१. बापू ने इस खत को दो दिन मे पूरा किया मालूम होता है।

४५८. पत्र : जवाहरलाल नेहरू को

सेगांव, वर्धा
३ फरवरी, १९३९

प्रिय जवाहरलाल,

चुनाव के बाद और जिस ढंग से वह लड़ा गया उसे देखते हुए मैं महसूस करता हूं कि मैं कांग्रेस के अगले अधिवेशन में अनुपस्थित रहकर देश की सेवा करूंगा। इसके अलावा मेरा स्वास्थ्य भी बहुत अच्छा नहीं है। मैं चाहता हूं, तुम मेरी मदद करो, मुझे शरीक होने को दबाना नहीं।

आशा है, तुम्हें और इन्दु को खाली[1] में आराम लेने से लाभ हुआ। होगा इन्दु को मुझे लिखना चाहिए।

प्यार,

बापू

—अंग्रेजी। सेगांव (वर्धा), ३।२।१९३९। 'ए बंच आफ ओल्ड लेटर्स' से।]
सौजन्य : श्रीमती इन्दिरा गांधी

४५९. पत्र : जवाहरलाल नेहरू को

९-२-३९

मेरे प्रिय जवाहरलाल,

मुझे तुम्हारा पत्र मिल गया है। मैं तुम्हारे विश्लेषण को समझता हूं। सुभाष ने तार दिया है कि वह वर्धा आना चाहता है। देखें, क्या होता है। निस्सन्देह, मैं जल्दबाजी में कोई निर्णय नहीं करूंगा। मुझे खुशी है कि सरूप जल्दी आ रही है। मैं आशा कर रहा हूं कि सेगांव की शान्ति उसके अनुकूल सिद्ध होगी।

प्रेम

बापू

—अंग्रेजी। सेगांव (वर्धा), ९।२।१९३९। नेहरू संग्रहालय में सुरक्षित पत्रावली से।]
सौजन्य : श्रीमती इन्दिरा गांधी तथा नेहरू संग्रहालय।

---

१. अलमोड़ा जिले का एक स्थान, जहां रणजित पण्डित ने एक सुन्दर कुटीर 'ऋतु संहार' का निर्माण कराया था।

४६०. तार : जवाहरलाल नेहरू को

[यह तार वर्धागंज से ९।२।३९ को दिया गया था और इलाहावाद कचहरी तारघर में दूसरे दिन रविवार को प्राप्त हुआ था।—सम्पा०]

जवाहरलाल नेहरू
आनन्दभवन, इलाहावाद

मैं समझता हू कि सब वातो का विचार करके लुधियाना सम्मेलन को काग्रेस के वाद के लिए स्थगित कर देना बुद्धिमत्ता का काम होगा। प्रमुख कार्यकर्त्ता विविध राज्यो मे चल रही लडाई मे लगे हुए हैं।

वापू

—अग्रेजी। वर्धागंज, ९।२।१९३९। नेहरू संग्रहालय मे सुरक्षित पत्रावली से।]

४६१. पत्र : जवाहरलाल नेहरू को

सेगाव, वर्धा
११-२-३९

मेरे प्रिय जवाहरलाल,

मुझे तुम्हारा तार और पत्र मिल गया। मैं सम्मेलन और व० क० (वर्किंग कमेटी-कार्य समिति) के विपय मे तुम्हारी स्थिति को समझता हू। मैं किसी कार्य के विपय मे उनको चलानेवाले आदमियो के विना सोच ही नही सकता। मैंने तो जो कुछ वलवन्तराय मेहता से सुना था उसी के वल पर स्थगन के विपय मे लिख दिया था। वह काठियावाड की लडाई मे लगे हुए हैं। अचिन्तराम विना उनके कुछ कर नही सकता। इसीलिए मैंने तुम्हे तार दिया। मैं लुधियाना की परिस्थिति के विपय मे कुछ नही जानता।

सरूप के लिए मुझे अफसोस है। मैं तो उसके कुछ दिन अपने साथ विताने की प्रतीक्षा कर रहा था।

प्रेम
वापू

—अंग्रेजी। सेगांव (वर्धा), ११।२।३९। नेहरू संग्रहालय मे सुरक्षित पत्रावली से।]

सौजन्य : श्रीमती इन्दिरा गाधी तथा नेहरू सग्रहालय।

४६२. पत्र : सुरेश सिंह को

[श्री सुरेश सिंह ने व्यक्तिगत सत्याग्रह आन्दोलन के पहिले गांधीजी से पूछा था कि क्या वह शीघ्र ही कोई नया आन्दोलन चलाने जा रहे हैं? इस पत्र में उसी का सन्दर्भ है।—सम्पा०]

सेगांव, वर्धा
१४-२-३६

भाई सुरेश,

मैंने, कानून भंग का तो अब तक कुछ नहि सोचा है, न मैं ऐसी आबोहवा पाता हूं.

बापू के आशीर्वाद

—हिन्दी। सेगांव, वर्धा, १४।२।१९३९]
सौजन्य : श्री सुरेश सिंह, कालाकांकर।

४६३. पत्र : बालकृष्ण शर्मा नवीन को

सेगांव, वर्धा
२०।२।३६

भाई बालकृष्ण शर्मा,

कानपुर में क्या किया? क्यों इतनी अशांति? कोई गणेशशंकर विद्यार्थी ने बलीदान दिया?

बापु के
आशीर्वाद

—हिन्दी। सेगांव (वर्धा), २०।२।१९३९। पत्र की फोटो-नक़ल (जी० एन० ७५१६) से]

४६४. तार : जवाहरलाल नेहरू को

राजकोट ६-३-३६

जवाहरलाल नेहरू
त्रिपुरी कांग्रेस

यदि आन्तरिक भ्रष्टाचार से कांग्रेस को निकालने का प्रस्ताव नही लिया गया तो यह प्रथम श्रेणी की गलती होगी। कांग्रेस के सामने आवश्यक रूप से लाये विना

विधान में जरूरी परिवर्तन करने का अधिकार भारतीय कांग्रेस कमेटी को दिया जाना चाहिए। मैं अच्छा हूं।

बापू

— अंग्रेजी। राजकोट, ९।३।१९३९। नेहरू संग्रहालय में सुरक्षित पत्रावली से।]
सौजन्य : श्रीमती इन्दिरा गांधी तथा नेहरू संग्रहालय।

४६५. पत्र : जवाहरलाल नेहरू को

मेरे प्रिय जवाहरलाल,

शौकत अभी-अभी तुम्हारा रुक्का ले आया है। जो खबर तुमने दी है वह हतबुद्धि कर देनेवाली है। मैं तो सिर्फ इतनी ही आशा करता हूं कि इसमें कोई गलतफहमी है। क्या तुमको उस कांग्रेसी का नाम मालूम हुआ? मैं दरियाफ्त करता हूं।

मुझे आशा है कि मौलाना साहब पहिले से बहुत अच्छे हैं। कृपया मेरा प्रेम उनको दें और उनसे कहें कि मैं उन्हें देखने को उत्कण्ठित हूं। जितनी जल्द मैं सुरक्षापूर्वक रवाना हो सकूंगा, ऐसा करूंगा।

प्रेम

बापू

नई दिल्ली २०-३-३९

— अंग्रेजी। नई दिल्ली, २०।३।१९३९। नेहरू संग्रहालय में सुरक्षित पत्रावली से।]
सौजन्य : श्रीमती इन्दिरा गांधी तथा नेहरू संग्रहालय।

४६६. पत्र : जवाहरलाल नेहरू को

नई दिल्ली
३० मार्च, १९३९

प्रिय जवाहरलाल,

तुम्हारे दो पत्र मिले। दोनों अच्छे थे। तुम्हें पत्र-व्यवहार की नकलें भेज रहा हूं। यू० पी० की घटनाओं से मुझे अशान्ति होती है। मेरा हल यह है कि या तो तुम्हें प्रधान मन्त्री बन जाना चाहिए या मन्त्रि-मण्डल को तोड़ देना चाहिए। तुम्हें उच्छृंखल तत्वों पर काबू पाना चाहिए।

जो समाजवादी यहां आये थे, उनसे मेरी तीन दिन दिल खोलकर बातें हुईं। नरेन्द्रदेव तुम्हें खबर देंगे। वह अपने आप न दें तो तुम मंगा लेना।

प्यार,

बापू

—अंग्रेजी। नई दिल्ली, ३०।३।१९३९' 'ए बंच आफ ओल्ड लेटर्स' से।]

सौजन्य : श्रीमती इन्दिरा गांधी

४६७. पत्र : जवाहरलाल नेहरू को

नई दिल्ली

६-४-३९

मेरे प्यारे जवाहरलाल,

आज घटनाएं जो रूप ले रही हैं उन पर व्यथित होने से कौन रह सकता है? हमें आशा करनी चाहिए कि शीघ्र ही बादल छंट जायंगे।

राजकोट-निर्णय लक्ष्य की ओर एक कदम भर है। मैं अगले कदम की प्रतीक्षा करूंगा। मैंने आज डाक्टर खान साहब[1] को टेलीफोन किया है। उन्होंने टेलीफोन करने और यदि उन्हें मेरी जरूरत है तो वैसा करने का वादा किया है। वायसराय से मिलना है। कमेटी के सिलसिले में मुझे राजकोट जाना पड़ सकता है।

इन्दु को मेरा प्यार। मैं समझता हूं कि कृष्णा भी जा रही है। इसका मतलब यह होता है कि तुम १५ को बम्बई में होगे?

प्रेम

बापू

तुमने झगड़ों के विषय में जो कुछ कहा है उसे मैंने नोट किया है।

—अंग्रेजी। नई दिल्ली, ६।४।१९३९। नेहरू संग्रहालय में सुरक्षित पत्रावली से।]

सौजन्य : श्रीमती इन्दिरा गांधी तथा नेहरू संग्रहालय।

---

१. सीमाप्रान्त के कांग्रेसी शासन में मुख्य मन्त्री तथा अब्दुलगफ्फार खां, सरहदी गांधी, के बड़े भाई।

४६८. पत्र : दिनेशसिंह को

नयी दिल्ली
७-४-३६

चि० दिनेश,

तुमारा ख़त मिला था. माता जी ही आ गई. मेरे साथ दो दिन रही मेरी कोशीश चल रही है तुमारे निश्चित होकर अभ्यास करना मुझे लिखा करो.

बापु के
आशीर्वाद

(पीछली ओर)

माता जी की तबीयत कुछ अच्छी हो रही थी यहा से दवा भी ले गई है

—हिन्दी । नई दिल्ली, ७।४।१९३९ । पत्र की फोटो-नक़ल (जी० एन० ८६७३) से]

४६९. तार : जवाहरलाल नेहरू को

२७-७-३६
दिल्ली

जवाहरलाल नेहरू
द्वारा कांग्रेस
गिरगाव, बम्बई

तुमने बहादुरी तथा उत्साह के साथ अपना काम किया है।

बापू

—अंग्रेजी। दिल्ली, २७।७।१९३९। नेहरू संग्रहालय में सुरक्षित पत्रावली से।]
सौजन्य : श्रीमती इन्दिरा गांधी तथा नेहरू संग्रहालय।

४७०. पत्र : जवाहरलाल नेहरू को

सेगांव, वर्धा
२६ जुलाई १६३६

प्रिय जवाहरलाल,

धामी के लोगों का पथप्रदर्शन करने के बजाय मैंने उन्हें तुम्हें सौंप दिया है।

मेरे खयाल से मेरी तरफ से किसी हस्तक्षेप के विना तुम्हीं को यह भार वहन करना चाहिए। राज्यों का यह विचार दिखाई देता है कि कांग्रेस को अलग रखा जाय और उसकी तथा देश राज्य-परिषद की उपेक्षा की जाय। मैं 'हरिजन' में पहिले ही सुझाव दे चुका हूं कि तुम्हारी समिति से पूछे विना किसी रियासती संघ या मण्डल को अपने आप कार्रवाई नहीं करनी चाहिए। मुझे खुद करना ही हो तो तुम्हारे मार्फत करना चाहिए अर्थात् जब तुम मुझसे पूछो तो जैसे कार्यसमिति को अपनी राय दे देता हूं वैसे ही तुम्हें दे दूं। कल ग्वालियर वालों को भी मैंने ऐसा ही कहा है। तुम्हारी समिति को ठीक ढंग से काम करना है तो उसे थोड़ा सा पुनर्गठित करना होगा।

आखिर मेरा काश्मीर जाना नही हुआ। शेख अब्दुल्ला और उनके मित्रों को मेरा सरकारी मेहमान बनने का विचार सहन नहीं होता। अपने पिछले अनुभव के आधार पर मैंने शेख अब्दुल्ला की अनुमति की आशा से राज्य का प्रस्ताव मंजूर कर लिया था। परन्तु मैंने देखा कि मेरी भूल हुई। इसलिए राज्य के आतिथ्य की स्वीकृति रद्द करके मैंने शेख का आतिथ्य स्वीकार किया। इससे राज्य को परेशानी हुई। इसलिए मैंने वहां जाने का विचार ही छोड़ दिया। मुझसे दोहरी मूर्खता का अपराध हुआ। एक तो तुम्हारे बिना वहां जाने का विचार करने का दुःसाहस किया और दूसरे राज्य का प्रस्ताव मान लेने से पहले शेख की इजाजत नही ली। मैंने सोचा था कि राज्य का प्रस्ताव मंजूर करके मैं प्रजा की सेवा करूँगा। मुझे स्वीकार करना चाहिए कि शेख और उनके मित्रों से मुझे खुशी नही हुई। वे हम सबको वहुत ही वेतुके मालूम हुए। खान साहब ने उन्हें समझाया मगर कोई नतीजा नही निकला।

तुम्हारी लंका-यात्रा शानदार रही। मुझे इसकी पर्वा नही कि तात्कालिक परिणाम क्या हुआ। सालेह तैयव जी मुझसे अनुरोध कर रहे है कि तुम्हें बर्मा भेजूं और एण्डरूज तुम्हारा विचार दक्षिण अफ़्रीका के सम्वन्ध में कर रहे है। लंका के लिए तो कांग्रेस के शिष्टमण्डल की कल्पना मुझे स्वयं स्फूर्ति से हुई। इन दो स्थानों की प्रेरणा उकसाने पर भी नही होती। लेकिन ये वाते जव मिलेंगे, तव करेंगे। आशा है, तुम ताजे हो और कृष्णा मजे में है।

प्यार।

बापू

—अंग्रेजी। सेगांव (वर्धा), २९।७।१९३९। नेहरू संग्रहालय से।]

सौजन्य : श्रीमती इन्दिरा गांधी तथा नेहरू संग्रहालय।

४७१. पत्र : जवाहरलाल नेहरू को

सेगाव, वर्धा
११ अगस्त १६३६

प्रिय जवाहरलाल,

योजना-समिति के वारे मे (और समय न होने के कारण) कार्यसमिति की मौजूदगी मे तुमसे वात करने को आवा ही मन था। शकरलाल आज सुवह तुमसे वात करके आये थे। साथ मे इस मामले पर कृपलानी को उन्होंने जो पत्र लिखा था उसकी नकल भी लाये थे। उनकी आपत्ति से मेरी सहानुभूति थी। इस समिति के काम-काज को न तो मैं कभी समझ सका हू और न उसकी कद्र कर सका हूं। पता नही, वह समिति को वनाने वाले प्रस्ताव की चहारदीवारी के भीतर ही काम कर रही है या नही। मैं नही जानता कि उसके कार्यकलाप से कार्यसमिति को परिचित रक्खा जा रहा है या नही। उसकी अनेक उप-समितियो का हेतु भी मेरी समझ मे नही आया है। मुझे ऐसा लगा है कि एक ऐसे प्रयत्न मे जिसका कोई फल नही निकलेगा, वहुत-सा रुपया और परिश्रम वर्वाद किया जा रहा है। ये मेरी शकाए हैं। मैं प्रकाश चाहता हू। मैं जानता हू। तुम्हारा मन चीन मे है। अगर तुम्हारे खयाल से शाह तुम्हारे विचार प्रकट कर सकते हैं तो मैं उनसे जान लेने की कोशिश करूगा या तुम अपने महान मिशन से लौट आओ तव तक प्रतीक्षा करूँगा। ईश्वर तुम्हारी रक्षा करे और तुम्हे मातृभूमि मे सुरक्षित लौटा लाये।

प्यार।

वापू

—अग्रेजी। सेगांव (वर्धा), ११।८।१९३९। 'ए वंच आफ ओल्ड लेटर्स' से।]
सौजन्य : श्रीमती इन्दिरा गाधी

४७२. पत्र : जवाहरलाल नेहरू को

सेगाव, वर्धा
१८ सितम्बर, १६३६

प्रिय जवाहरलाल,

च्याग काई शेक के नाम मेरा पत्र साथ मे है। पत्र मैं चाहता था उससे लम्बा

हो गया। शायद मूल के साथ टाइप की हुई प्रति भेजना अच्छा रहेगा। महादेव कल मद्रास गये।

प्यार।

बापू

—अंग्रेजी। सेगांव (वर्धा), १८।९।१९३९]
सौजन्य : श्रीमती इन्दिरा गांधी

४७३. पत्र : जवाहरलाल नेहरू को

सेगांव, वर्धा
२४।९।३९

मेरे प्यारे जवाहरलाल,

संलग्न तार तुम्हारे द्वारा कार्रवाई के लिए भेजता हूं। यह तुम्हारा खास विभाग है।

मैं फिर शिमला जा रहा हूं। मैं केवल माध्यम के रूप में काम करनेवाला हूं। यदि तुम्हें कोई आदेश देना हो तो मुझे भेज देना। मुझे उम्मीद है कि यदि निमन्त्रण तुम्हारे पास आता है तो उसका उत्तर देने को तैयार रहोगे।

प्रेम
बापू

—अंग्रेजी। सेगांव (वर्धा), २४।९।१९३९। नेहरू संग्रहालय में सुरक्षित पत्रावली से।]
सौजन्य : श्रीमती इन्दिरा गांधी तथा नेहरू संग्रहालय।

४७४. पत्र : जवाहरलाल नेहरू को

सेगांव, वर्धा (सी० पी०)
२५।१०।३९

मेरे प्यारे जवाहरलाल,

मैं अमरीकी चीज को देख चुका। यह बड़ी व्ययसाध्य है। दूसरी दृष्टियों से भी यह मुझे आकर्षित नहीं करती।

मुझे आशा है, इन्दु के बारे मे तुम्हे खुशखबरी मिली होगी।

प्रेम

बापू

—अंग्रेजी। सेगांव (वर्धा), २५।१०।१९३९। नेहरू संग्रहालय में सुरक्षित पत्रावली से।]

सौजन्य : श्रीमती इन्दिरा गाधी तथा नेहरू संग्रहालय।

४७५. पत्र : जवाहरलाल नेहरू को

सेगाव, वर्धा
२६ अक्तूबर, १९३९

प्रिय जवाहरलाल,

मैंने देख लिया है कि यद्यपि मेरे प्रति तुम्हारा स्नेह और आदर कायम है, फिर भी हमारे बीच दृष्टिकोण का अन्तर दिन-दिन तीव्र होता जा रहा है। शायद हमारे इतिहास मे यह सबसे नाजुक काल है। जिन अत्यन्त महत्वपूर्ण प्रश्नो पर हमारा ध्यान लगा हुआ है उनपर मेरे बहुत प्रबल विचार हैं। मैं जानता हू कि उनपर तुम्हारे भी प्रबल विचार है, परन्तु वे मुझसे भिन्न हैं। प्रकट करने का तुम्हारा तरीका मुझसे अलग है। मुझे भरोसा नही कि जिन विचारो को मैं बहुत प्रबल रूप मे रखता हूं उनमे दूसरे सदस्य मेरे साथ हैं या नही। मैं इधर-उधर घूम नही सकता। मैं आम लोगो के, कांग्रेस के कार्यकर्त्ताओं के भी, सीधे सम्पर्क मे नही आ सकता। मुझे लगता है कि तुम सबको मैं अपने साथ नही रख सकता तो मुझे नेतृत्व नही करना चाहिए। मैं महसूस करता हू कि तुम्हे पूरी तरह काम समाल कर देश का नेतृत्व करना चाहिए और मुझे राय प्रकट करने को स्वतन्त्र छोड देना चाहिए। अगर तुम सबका यह खयाल हो कि मुझे पूरी तरह से मौन रखना चाहिए तो मुझे आशा है कि मुझे उसी के अनुसार करने मे कोई कठिनाई नही होगी। अगर जरूरी समझो तो आकर तुम्हे सारी चीज पर चर्चा कर लेनी चाहिए।

प्यार।

बापू

—अंग्रेजी। सेगांव (वर्धा), २६।१०।१९३९। 'ए बंच आफ ओल्ड लैटर्स' से।]

सौजन्य : श्रीमती इन्दिरा गाधी।

४७६. पत्र : जवाहरलाल नेहरू को

सेगांव
वर्धा (सी० पी०)
२६-१०-३६

मेरे प्यारे जवाहरलाल,

कल मैंने तुम्हें लिखा था। यह पत्र मेरठ से प्राप्त एक शिकायत तुम्हारे पास भेजने के लिए लिख रहा हूं। कृपया पता लगाकर पत्र-लेखक को सीधे जवाब दे देना। मैंने उन्हें कह दिया है कि पत्र मैं तुम्हारे पास भेज रहा हूं।

प्रेम
बापू

—अंग्रेजी। सेगांव (वर्धा), २९।१०।१९३९। नेहरू संग्रहालय में सुरक्षित पत्रावली से।]
सौजन्य : श्रीमती इन्दिरा गांधी तथा नेहरू संग्रहालय।

४७७. पत्र : जवाहरलाल नेहरू को

रेलवे स्टेशन, दिल्ली
४ नवम्बर, १६३६

प्रिय जवाहरलाल,

तुम्हारे चले जाने के बाद ही कृपलानी ने मुझे बताया कि उत्तर प्रदेश में सविनय भंग के लिए बड़ा जोर और तैयारी है। उन्होंने यह भी कहा कि गुमनाम कागज घुमाये गये हैं और लोगों से तार काटने और रेलें उखाड़ने के लिए कहा गया है। मेरी राय यह है कि अभी सविनय भंग के लिए वातावरण नहीं है। यदि लोग कानून अपने ही हाथ में ले लेते हैं तो मुझे सविनय भंग की कमान छोड़ देनी होगी। मैं चाहता हूं कि तुम इस सप्ताह का 'हरिजन' पढ़ो। उसमें इस सम्बन्ध में मेरी स्थिति बताई गई है। तुमसे इसकी चर्चा करने का मेरा इरादा था। परन्तु वह होना नहीं था। हमारे इतिहास के इस नाजुक वक्त में हममें कोई गलतफहमी नहीं होनी चाहिए और सम्भव हो तो एक विचार होना चाहिए।

प्यार।

बापू

—अंग्रेजी। दिल्ली, ४।११।१९३९। 'ए बंच आफ ओल्ड लेटर्स' से।]
सौजन्य : श्रीमती इन्दिरा गांधी

४७८. पत्र : जवाहरलाल नेहरू को

सेगाव, वर्धा
१४ नवम्बर, १९३९

प्रिय जवाहरलाल,

तुम्हारे पत्र नियमित आते रहते हैं। राजेन्द्रबाबू के नाम तुम्हारा खत मैंने देख लिया। उसे देखने से पहले उस पर मैं 'हरिजन' के लिए एक टिप्पणी लिख चुका था। मैं तुम्हारे पास पेशगी नकल भेजने की कोशिश करूगा।

अगर इलाहाबाद मे तुम्हे मेरी ज्यादा जरूरत हो तो रख लेना। हमारे यहा के बयानो के लन्दन मे होने वाले स्वार्थपूर्ण सम्पादन की मुझे चिन्ता नही होती। समय मिला तो 'न्यूज क्रानिकल' के लिए एक सक्षिप्त सन्देश लिख डालूगा। उस पत्र की ओर से मुझे समूल्य अधिकार प्राप्त है।

शेष मिलने पर। प्यार,

बापू

महादेव ने मुझे अभी याद दिलाया है कि आज तुम्हे ५० वर्ष पूरे होते हैं। आशा है तुम ५० भी पूरे करोगे और वही शक्ति, स्पष्टतावादिता और प्रबल प्रामाणिकता कायम रखोगे।

—अग्रेजी। सेगांव (वर्धा), १४।११।१९३९। 'ए बच आफ ओल्ड लेटर्स' से।]
सौजन्य : श्रीमती इन्दिरा गाधी

४७९. पत्र : जवाहरलाल नेहरू को

सेगाव, वर्धा
२८ दिसम्बर, १९३९

प्रिय जवाहरलाल,

तुम्हारा पत्र मिला। मैं चीनी पत्र सुरक्षित रखूगा।

मुक्ति-दिवस को 'टाइम्स आव इण्डिया' मे पूरे पृष्ठ का विज्ञापन मिला है। परन्तु यह सच है कि सब जगह उसका कोई असर नही हुआ दीखता।

फजलुल हक का अभियोग-पत्र तुमने पढा है? इसके बारे मे कुछ भी कहना या करना नही चाहिए?

तुमने मुझे कुमारप्पा के पत्र नही भेजे, जिन पर तुमने सख्त एतराज किया

था। वह यहां हैं। मैंने उनसे पूछा तो वह कहते है कि हाल में तो उन्होंने कुछ नही भेजा। तुम्हारे पास जो कुछ हो, जरूर मेरे पास भेज दो।

प्यार।

बापू

—अंग्रेजी। सेगांव (वर्धा), २८।१२।१९३९। नेहरू संग्रहालय से।]

सौजन्य : श्रीमती इन्दिरा गांधी तथा नेहरू संग्रहालय

४८०. पत्र : जवाहरलाल नेहरू को

मेरे प्यारे जवाहरलाल,

तुम्हारा पत्र मुझे दुःखित करता है। तुमने नापसन्दगी के स्वर में कहा है कि कु० (कुमारप्पा) एक वाहियात आदमी है। और वह भी तुमने नगण्य प्रमाण पर ही किया है। मैंने तुमसे वह पत्र-व्यवहार मांगा था; तुमने कहा कि वह तुम्हारे पास नही है किन्तु (प्राप्त कर) मेरे पास भेज दोगे। अव मैं देखता हूं कि तुमने दूसरों की व्याख्या मंजूर करली है। मेरा आशय यह नही है कि वह व्याख्या गलत थी किन्तु एक साथी कार्यकर्त्ता के बारे में ऐसी सुनी-सुनाई वातो से निर्णय करना गलत था। मेरा सुझाव है कि तुम पत्र-व्यवहार प्राप्त करके मेरे पास भेज दो।

यह रहा जेनरलिज्मो (प्रधान सेनापति, च्यांग-काई-शेक) के नाम मेरा पत्र। मैंने उनका पत्र अखबारों को छपने के लिए नही दिया है। यदि तुम इसे जरूरी समझो तो वैसा कर सकते हो।

प्रेम

सेगांव ५-१-४० बापू

—अंग्रेजी। सेगांव (वर्धा), ५।१।१९४०। नेहरू संग्रहालय में सुरक्षित पत्रावली से।]

सौजन्य : श्रीमती इन्दिरा गांधी तथा नेहरू संग्रहालय।

४८१. पत्र : जवाहरलाल नेहरू को

सेगांव, वर्धा
३०-१-४०

मेरे प्यारे जवाहरलाल,

कानपुर के पद्मपन्त ने तुम्हें लिखे पत्र की प्रतिलिपि मेरे पास भेजी है। मुझे आशा है कि तुम इस मामले की छानवीन करोगे।

क्या तुमने जमैयत-उल्मा-ए-हिन्द की सबसे ताजी पुस्तिका देखी है? वे लोग खतरनाक मित्र हैं। पता नही कि कार्यसमिति ने मौलवी किफायत उल्ला साहब से पूरी बातें की या नही।

प्रेम

बापू

—अंग्रेजी। सेगांव (वर्धा), ३०।१।१९४०। नेहरू संग्रहालय मे सुरक्षित पत्रावली से।]

सौजन्य : श्रीमती इन्दिरा गाधी तथा नेहरू संग्रहालय।

४८२. पत्र : जवाहरलाल नेहरू को

[श्री कुमारप्पा के सम्बन्ध में गांधी जी ने जो पहिला पत्र जवाहरलाल जी को लिखा था उसकी तिथि ५।१।१९४० है। निश्चित रूप से यह पत्र उसके बाद का होगा जब जवाहरलाल जी के मन से श्री कुमारप्पा-विषयक गलत छाप दूर हो गई होगी और उन्होंने क्षमा मागते हुए गांधीजी को इस सम्बन्ध मे पत्र लिखा होगा जिसकी प्राप्ति का उल्लेख इस पत्र में है।—सम्पा०]

मेरे प्यारे जवाहरलाल,

मुझे तुम्हारा पत्र मिल गया। मैं गलतफहमियो की सम्भावना को जानता हू। इन्होंने तथा अज्ञान या स्वार्थपूर्ण आलोचना ने कभी मुझे प्रभावित नहीं किया। मैं जानता हू कि यदि हम अन्दर से शक्तिमान हैं तो सब कुछ अच्छा होगा। जहा तक बाह्य मामलो का सम्बन्ध है, तुम मेरे पथ-दर्शक हो। इसलिए तुम्हारा पत्र मुझे मदद देता है।

कुमारप्पा के बारे मे तुमने अपने मे काफी से ज्यादा सशोधन कर लिया है। तुम उनका पत्र देखना पसन्द करोगे। पढने के बाद इसे नष्ट कर सकते हो। हा, हमारे पास उनके-जैसे बहुत ही कम कार्यकर्त्ता हैं।

प्रेम

बापू

—अंग्रेजी जनवरी, १९४०। नेहरू संग्रहालय में सुरक्षित पत्रावली से।]

सौजन्य : श्रीमती इन्दिरा गांधी तथा नेहरू संग्रहालय।

४८३. पत्र : श्रीप्रकाश को

(मूल हिन्दी : पोस्टकार्ड)

भाई श्रीप्रकाश,

तुमारे लिखने पर वह जजमेंट पर मैंने टीका हरिजन मे भेजी थी. बाद में पता चला कि जजों ने ऐसा नही कहा था और तुमने अपनी टीका खींच ली थी यह सब मैंने देखा तो नही है. लेकिन मैंने मेरी टीका रोक ली है. क्या कुछ लीडर[1] की गलती थी ?

बापु के
आशीर्वाद

सेवाग्राम
वर्धा ११।४।४०

—हिन्दी। सेवाग्राम (वर्धा), ११।४।१९४०। नेहरू संग्रहालय में सुरक्षित-पत्रावली से।]

सौजन्य : श्री श्रीप्रकाश तथा नेहरू संग्रहालय।

[टिप्पणी : उपर्युक्त पोस्टकार्ड बनारस में १४।४।१९४० को प्राप्त हुआ था, जैसा कि डाक की मुहर से जान, पड़ता है।—सम्पा०।]

४८४. पत्र : दिनेश सिंह को

सेवाग्राम, वर्धा
११।४।४०

चि० दिनेश,

तुमारा खत मिला था. दादू का खत मेरे पास कुछ दिनों के पहले था कि उसका दिल मां के पास रहने का है मैने मां पर खत लिखकर भी भेज दिया था. बाद में क्या हूआ मुझे पता नहि है. यों तो दादू को कोई हटायगा नही. मुझे लिखा करो क्या होता है. दादू की इच्छा मां के पास रहने की हूई है क्या ?

वापु के आशीर्वाद

---

१. इलाहाबाद से प्रकाशित होनेवाला अंग्रेजी दैनिक, जो अब बन्द हो गया है।

श्री दिनेश सिंह, कालाकाकर
दून स्कूल
देहरादून (सं० प्रा०)

—हिन्दी। सेवाग्राम (वर्धा), ११।४।१९४०। पत्र की फोटो-नकल (जी० एन० ८६७४) से]

४८५. पत्र : जवाहरलाल नेहरू को

मेरे प्यारे जवाहरलाल,

संलग्न को पढो और मुझे रास्ता बताओ। मैंने लेखक से कहा है कि उसका सुझाव[1] मुझे आकर्षित करता है। और अगर मुझे अपना रास्ता साफ दिखाई देगा तो मैं अंशतः या पूर्णतः उस पर अमल करूंगा।

प्रेम
तुम्हारा
बापू

सेवाग्राम
वर्धा २३-५-४०

—अंग्रेजी। सेवाग्राम (वर्धा), २३।५।१९४०। नेहरू संग्रहालय मे सुरक्षित पत्रावली से।]
सौजन्य : श्रीमती इन्दिरा गांधी तथा नेहरू संग्रहालय।

४८६. पत्र : जवाहरलाल नेहरू को

सेवाग्राम
वर्धा
२९-५-४०

मेरे प्यारे जवाहरलाल,

मुझे श्री स्पाल्डिंग के संलग्न पत्र के साथ तुम्हारा पत्र मिला। थामसन

---

१. देखिए गांधी जी के नाम लखनऊ से श्री अब्दुल हई अब्बासी का पत्र।

का (पत्र) उसमें नहीं था। मैं स० (स्पालिडग?) को सा.ान्यत: तुम्हारे उत्तर की पुष्टि करते हुए पत्र लिख रहा हूं।

सर सिकन्दर को दिये हुए उत्तर की तथा मौलाना को लिखे पत्रों की जो प्रतियां तुमने संलग्न की हैं, वे भी मुझे मिल गई हैं। तुम्हारे वक्तव्य अच्छे और पूर्ण है। मैं किसी तात्पर्य से ही वक्तव्य देने से बच रहा हूं। किन्तु जब मैं देखूंगा कि आवश्यक है तब तो दूंगा ही।

मुझे आशा है, कश्मीर में तुम्हारा समय मजे में बीत रहा होगा।

प्रेम

बापू

—अंग्रेजी। सेवाग्राम (वर्धा), २९।५।१९४०। नेहरू संग्रहालय में सुरक्षित पत्रावली से।]

सौजन्य : श्रीमती इन्दिरा गांधी तथा नेहरू संग्रहालय।

४८७. पत्र : भगवानदीन मिश्र को

भाई भगवान दिन,

मुझको जो कहा गया है सो तो कोई मसलीम देहात में मसलीम घर[1] में रहने का. कुछ निर्णय हूआ नहि है.

आपका

मो० क० गांधी

सेवाग्राम,

वर्धा २२-६-४०

—हिन्दी। सेवाग्राम (वर्धा), २२।६।१९४०। श्री भगवानदीन मिश्र को लिखे पत्र की फोटो-नक़ल (जी० एन० ७३७) से]

---

१. लखनऊ के एक मुसलमान एडवोकेट ने गांधी जी को सलाह दी थी कि यदि वह हिन्दू-मुस्लिम समस्या को हल करना चाहते हैं तो उत्तर प्रदेश के किसी मुस्लिम गांव में मुसलमान के घर में रहें और उनकी मनोवृत्तियों का अध्ययन करें। श्री मिश्र ने खबर सुन कर गांधीजी को अपने गांव में आकर रहने को लिखा होगा। इसमें उसी की ओर संकेत है। लखनऊ के मुस्लिम एडवोकेट के पत्र के लिए देखिए परिशिष्ट भाग।

४८८. पोस्टकार्ड : जवाहरलाल नेहरू

मेरे प्यारे जवाहरलाल,

उर्दू के बारे मे विचार अच्छा है। तुम्हें हिन्दुओ-द्वारा लिखी उर्दू रचनाओ की तथा उर्दू की पत्रिकाओ एव पुस्तकों की एक समीक्षा करानी चाहिए। इन झूठी बातो का निरुद्वेग-उत्तर देनेवाला एक उर्दू साप्ताहिक होना चाहिए। जानबूझकर फैलाई जानेवाली झूठी बातो का नियन्त्रण दुष्कर कार्य है किन्तु करने योग्य है।

प्रेम
बापू

सेवाग्राम
वर्धा १५-७-४०

— अंग्रेजी। सेवाग्राम (वर्धा), १५।७।१९४०। नेहरू संग्रहालय मे सुरक्षित पत्रावली से।]

सौजन्य : श्रीमती इन्दिरा गांधी तथा नेहरू संग्रहालय।

४८९. पत्र : जवाहरलाल नेहरू को

सेवाग्राम
वर्धा
८-८-४०

मेरे प्यारे जवाहरलाल,

मौलाना साहब[1] ने मुझे हैदराबाद की प्रारम्भिक रिपोर्ट दी है। पढने मे यह भयावह लगती है। मेरे लिए इसमे कुछ नया नही है किन्तु कोई बुरे-से-बुरे भय की पुष्टि नही चाहता। मैं खुद इसका उपाय ढूढता रहा हू। कल मैं कार्यकर्त्ताओ से मिलूगा। अगर तुम्हारे पास कोई विचार हो तो मुझ तक पहुचा देना।

प्रेम
बापू

जबर्दस्ती युद्ध के लिए चन्दा वसूल करने का कोई प्रामाणिक साक्ष्य तुम्हारे पास हो तो क्या वह मुझे भेज दोगे ?

— अंग्रेजी। सेवाग्राम (वर्धा), ८।८।१९४०। नेहरू संग्रहालय में सुरक्षित पत्रावली से।]

सौजन्य : श्रीमती इन्दिरा गांधी तथा नेहरू संग्रहालय।

---

१. मौलाना अबुल कलाम आजाद।

४९०. पत्र : जवाहरलाल नेहरू को

सेवाग्राम, वर्धा
६-१०-४०

मेरे प्यारे जवाहरलाल,

मुझे तुम्हारे दो पत्र मिले हैं। जब हम मिलें तो तुम रजनी पटेल के विषय में मुझे और बातें बताओगे। नेपियर के बारे में, संलग्न कागज के साथ, तुम्हारा पत्र मैं वाइसराय को भेज रहा हूं। यह करुणाजनक मामला है।

मैं ऊपर से नीचे तक काम से दबा हुआ हूं। इसलिए और कुछ नही लिखता।

प्रेम
बापू

—अंग्रेजी। सेवाग्राम (वर्धा) ६।१०।१९४०। नेहरू संग्रहालय में सुरक्षित पत्रावली से।]
सौजन्य : श्रीमती इन्दिरा गांधी तथा नेहरू संग्रहालय।

४९१. पत्र : हीरालाल शर्मा को

सेवाग्राम, वर्धा
६-१०-६४०

चि० शर्मा, तुमारा खत मिला, मैं तुमको लड़ाई में शीघ्र बुलाना चाहता हूं. अब तो तबीयत अच्छी करो।

बापु के
आशीर्वाद

—हिन्दी। सेवाग्राम, वर्धा, ७।१०।१९४०। 'बापू की छाया में मेरे जीवन के सोलह वर्ष' से।]
सौजन्य : श्री हीरालाल शर्मा।

४९२. पत्र : हीरालाल शर्मा को

सेवाग्राम, वर्धा
१६-१०-४०

चि० शर्मा,

आज का सी० डी०[1] और पुराने मे वहृत फर्क है शायद ही और किसी को वुलाना पडे तुमारा नाम तो मेरे पास है ही लेकिन कोई खास तैयारी न की जाय ऐसा समझो कि किसी को वुलाया नहि जायेगा सव रचनात्मक[2] काम करते हैं।

वापु के आशीर्वाद

—हिन्दी। सेवाग्राम, वर्धा, १९।१०।१९४०। 'वापू की छाया में मेरे जीवन के सोलह वर्ष' से।]

सौजन्य : श्री हीरालाल शर्मा

४९३ पत्र : जवाहरलाल नेहरू को

वर्धा
२१ अक्तूबर, १६४०

[१९४० में गांधी जी ने अपने सविनय अवज्ञा-आन्दोलन को पूर्ण अहिंसात्मक रखने के लिए कुछ चुने हुए आदमियों तक उसे सीमित रक्खा था। प्रथम सत्याग्रही थे विनोबा, दूसरे थे जवाहरलाल। इस पत्र में इसी की ओर इशारा है।

—सम्पा०]

प्रिय जवाहरलाल,

तो विनोवा का निश्चय कर दिया गया। उनकी चार दिन की वजारत मेरी दृष्टि से विल्कुल सफल रही।

मैं एक टिप्पणी जारी कर रहा हू, जिसे तुम देखोगे। प्रोफेसर ने टेलीफोन पर कहा कि तुम तैयार हो। मैंने तुम्हारा वयान भी देख लिया। मैं अव भी तुमसे पूछना चाहूगा कि मैं जो कुछ लिख और कर रहा हू, उसमे तुम्हे कोई भी

---

१. सिविल डिसओवीडिएन्स।

२. शिमले से लौटती वार ही वापू को यह खयाल आया मालूम हुआ था कि वह अपने रचनात्मक कार्यकर्त्ताओ को 'व्यक्तिगत आन्दोलन' से अलग रक्खें।

चीज पसन्द आ रही है या नहीं। मैं नही चाहता कि केवल अनुशासन-प्रेमी की तरह चलो। मेरी वर्तमान कल्पना में उन लोगों की जरूरत है, जो योजना में उसकी सब बातों में नहीं, परन्तु मुख्य वस्तु में विश्वास रखते हों। अक्लमन्द को इशारा काफी है।

सम्भव हो तो तार दे देना।

प्यार।

बापू

—अंग्रेजी। वर्धा, २१।१०।१९४०। 'ए बंच आफ ओल्ड लेटर्स' से।]
सौजन्य : श्रीमती इन्दिरा गांधी

४९४. तार : जवाहरलाल नेहरू को

वर्धागंज
२१-१०-४०

जवाहरलाल नेहरू
फैजाबाद

विनोबा तड़के गिरफ्तार हो गये। आज ही उनका मुकदमा है। आगे के कदम के बारे में सोच रहा हूं।

बापू

—अंग्रेजी। वर्धागंज, २१।१०।१९४०। नेहरू संग्रहालय में सुरक्षित पत्रावली से।]
सौजन्य : श्रीमती इन्दिरा गांधी तथा नेहरू संग्रहालय।

४९५. पत्र : जवाहरलाल नेहरू को

वर्धा
२४ अक्तूबर, १९४०

प्रिय जवाहरलाल,

तुम्हारा तार पाकर खुशी हुई। यदि मेरा बयान जाने दिया गया है तो तुमने इससे पहले देख लिया होगा।

अगर तुम तैयार हो तो अब अपना सविनय भग बाकायदा घोषित कर सकते हो। मेरा सुझाव है कि तुम अपने श्रोताओ के लिए कोई गाव चुन लो। मै नहीं समझता कि ये लोग तुम्हे अपना भाषण दोहराने देंगे। जहा तक विनोबा का सम्बन्ध है वह अपनी योजनाओ के साथ तैयार नही थे। परन्तु उन्हे वे आजाद रहने दें तो मेरा सुझाव है कि तुम विनोबा के लिए निश्चित की गई योजना पर चलो। परन्तु तुम्हारा और कुछ खयाल हो तो तुम अपने ही मार्ग का अनुसरण करो। मैं इतना ही चाहता हू कि मुझे अपना कार्य-क्रम दे दो। अपनी तारीख आप ही तय कर लो, लेकिन इस तरह से कि तारीख और जगह का एलान करने का मुझे समय मिल जाय। सम्भव है, वे लोग तुम्हे अपना पहला कार्य-क्रम भी पूरा न करने दें। सरकार की तरफ से ऐसे हरेक कदम के लिए मैं तैयार हूं। हमारे कार्य-क्रम को प्रकाश मे लानेवाले हर उचित उपाय का तो मैं उपयोग कर लूगा, मगर मेरा आधार इसी पर रहेगा कि नियमित विचार अपना असर आप पैदा करता है। यदि यह मानना तुम्हारे के लिए कठिन हो तो मैं तुमसे कहूगा कि निर्णय स्थगित रक्खो और परिणाम देखते रहो। मैं जानता हू कि तुम खुद धीरज रक्खोगे। और अपनी तरफ के लोगो को भी धीरज रखने को कहोगे। मुझे मालूम है, मेरे प्रति वफादारी रखकर तुम कितना जोर बर्दाश्त कर रहे हो। मेरे लिए वह अमूल्य है। आशा है, वह उचित साबित होगी, क्योकि अब तो 'करने या मरने' की बातें हैं। पीछे तो लौटना नही है। हमारा पक्ष अकाट्य है। झुकने का सवाल नही। इतना ही है कि मुझे प्रत्यक्ष रूप मे यह दिखा देने के लिए कि अहिंसा जब विशुद्ध होती है तब उसमे क्या ताकत है, अपने ढग से चलने दिया जाय।

मौलाना साहब ने फोन से कहा कि दूसरी वार सत्याग्रह के लिए मुझे दूसरा आदमी चुनना चाहिए। मैंने उन्हे बताया कि तुम जाने को राजी हो तो मैं ऐसा नही कर सकता। 'हरिजन' के सम्बन्ध मे मैंने जो कदम उठाया है, उस पर तुम्हारी प्रतिक्रिया जानना चाहूगा।

प्यार।

बापू

—अंग्रेजी। वर्धा, २४।१०।१९४०। नेहरू संग्रहालय से।]

सौजन्य : श्रीमती इन्दिरा गांधी तथा नेहरू संग्रहालय।

४९६. तार : जवाहरलाल को

वर्धा
२५-१०-४०

जवाहरलाल नेहरू
आनन्द भवन, इलाहाबाद

आज पत्र डाक से भेजा है।

बापू

—अंग्रेजी। वर्धा, २५।१०।१९४०। नेहरू संग्रहालय में सुरक्षित पत्रावली से।]
सौजन्य : श्रीमती इन्दिरा गांधी तथा नेहरू संग्रहालय।

४९७. पत्र : हीरालाल शर्मा को

सेवाग्राम, वर्धा
२७-१०-४०

चि० शर्मा,

तुम्हारा सुंदर खत मिला. चूंकि इस वक्त संपूर्ण अहिंसा का दर्शन कराना चाहता हूं—जैसी मैं जानता हूं—सिवाय दो-तीन के किसी को भेजना नहिं चाहता हूं और किसी को न भेजूं ऐसा भी हो सकता है.

बापु के आशीर्वाद

—हिन्दी। सेवाग्राम वर्धा, २७।१०।१९४०। 'बापू की छाया में मेरे जीवन के सोलह वर्ष' से।]
सौजन्य : श्री हीरालाल शर्मा

४९८. पत्र : हीरालाल शर्मा को

सेवाग्राम, वर्धा
४-११-४०

चि० शर्मा,

तुम्हारी बात समझता हूं. सब ईश्वर के हाथों में है: उसी के हाथ में हम सब

हैं वह चाहे तो मेरे से करायेगा तुमारे अपने काम मे ध्यानावस्थित हो जाना है.

बापु के आशीर्वाद

—हिन्दी। सेवाग्राम, वर्धा, ४।११।१९४०। 'बापू की छाया में मेरे जीवन के सोलह वर्ष' से।]
सौजन्य : श्री हीरालाल शर्मा

४९९. पत्र : जवाहरलाल नेहरू को

सेवाग्राम,
वर्धा (मध्यप्रान्त)
२०-१-४१

मेरे प्यारे जवाहरलाल,

मुझे अभी पता चला है कि तुम दोनो और मौलाना साहब[1] आ गये हैं। मैंने मौलाना साहब से कहा था कि मैं दो बजे से मौन लूगा। जब मैंने ऐसा कहा तब मैं भूल गया था कि मैंने ४-३० बजे तीसरे पहर प्रो० कोपलैण्ड को मिलने का समय दे रक्खा है। मैं उसे खतम नही कर सकता था। इसलिए मैंने ५-२५ बजे शाम को मौन लिया। मैं तुम्हारे और उनके लिए उस समय के बाद खाली रहूँगा। कृपया इसे मौलाना को भी पढकर सुना दें।

इन्दु को कल आना चाहिए।

प्रेम
बापू

—अंग्रेजी। सेवाग्राम (वर्धा), २०।१।१९४१। नेहरू संग्रहालय में सुरक्षित पत्रावली से।]
सौजन्य : श्रीमती इन्दिरा गांधी तथा नेहरू सग्रहालय।

---

१. मौलाना अबुलकलाम आजाद।

५००. पत्र : जवाहरलाल को

सेवाग्राम, वर्धा
२६।१।४१

यह काम-काजी पत्र है। आवयक।

मेरे प्यारे जवाहरलाल,

मुझे अस्पताल के बारे में तुम्हारा सन्देश मिला था। डा० मेहता[1] इलाहाबाद गये थे और उनकी राय है कि उसका उद्‌घाटन मेरे द्वारा २८ फरवरी को होना चाहिए। सब बातों का विचार करने के बाद मैं उनसे सहमत हूं कि मुझे उसका उद्‌घाटन करना चाहिए और जल्दी-से-जल्दी वह तिथि २८ फरवरी हो सकती है। अगर मैं जाता हूं तो सोची हुई रकम की बाकी राशि के एकत्र हो जाने की सम्भावना है और तब भविष्य की बहुत ज्यादा चिन्ता न करते हुए अस्पताल का आरम्भ किया जा सकता है। मैं जानता हूं कि तुम सब आत्मा से मेरे साथ होगे। मैं समझता हूं कि हमें सरूप तथा इन्दु के लिए प्रतीक्षा करने की आवश्यकता नही है।

यदि तुम्हें अपनी राय को तार देने से की छूट हो तो कृपया वैसा करना। तब मैं इलाहाबाद हल्के हृदय से जाऊंगा।

प्रेम
बापू
(मो० क० गांधी)

[टिप्पणी : यह पत्र देहरादून जेल में नजरबन्दी की स्थिति में रहते हुए जवाहरलाल जी को भेजा गया था। इसे २८।१।४१ को सेंसर ने पढ़ा है और ३०।१।४१ के दिन इस टिप्पणी के साथ जवाहरलाल जी को दिया गया—

"रिसीव्ड ऐण्ड रिटर्नड आफ्टर सेंसर" (प्राप्त तथा सेंसर के बाद लौटाया)"]
३०।१।४१

——अंग्रेजी। सेवाग्राम (वर्धा) २६।१।१९४१। नेहरू संग्रहालय में सुरक्षित पत्रावली से।]
सौजन्य : श्रीमती इन्दिरा गांधी
तथा नेहरू संग्रहालय।

---

१. डा० जीवराज मेहता।

५०१. पत्र : जवाहरलाल को

(मूल हिन्दी)

सेवाग्राम
वर्धा, मध्यप्रान्त
११-२-४१

चि० जवाहरलाल,

काशी के भाषण के बाद तो मैं तुमको भी राष्ट्रभाषा मे क्यो न लिखु ? सरूप को तो रा० भा० मे लिखता हू . रणजीत[1] को गुजराती मे, तुमको क्यो इंग्रेजी मे ?

यह है दो खत, अगर पसद पडे तो दे देना मैं सभापति को तार भी भेजुगा यह खत तो रात को स्मशान भूमी से आकर लिख रहा हू ताकि कल सवेरे चला जाय.

जमनालाल जी का तो क्या लिखु ?

चन्द्र सिंह यहा जम गये हैं खुश रहते हैं खादी का काम अच्छी तरह से सीख रहे हैं उनकी पत्नी विलासगृह मे शात नही रह सकती हैं चन्द्रसिंह को खत लिखती है. मृदु को लिखा है कि दिल चाहे तब भेज देवे

स्टेट्स पीपल[2] की ओफिस तो आ रही है जमनालाल जी के जाने से कुछ फरक होता है क्या ? अमृत[3] की मदद से यहा चल तो सकता है, लेकिन तुमारे सोच लेना है. अब तो देर हो गई, ज्यादा नहि लिखुगा.

बापू के आशीर्वाद

—हिन्दी। सेवाग्राम (वर्धा), ११।२।१९४१। नेहरू सग्रहालय में सुरक्षित पत्रावली से।]
सौजन्य : श्रीमती इन्दिरा गांधी तथा नेहरू संग्रहालय।

---

१. रणजित पण्डित, विजयलक्ष्मी (सरूप कुमारी) के पति।
२. देशी राज्य परिषद से अभिप्राय है।
३. अमृतलाल सेठ, देशी राज्यों के प्रमुख कार्यकर्त्ता और लेखक।

५०२. पत्र : अद्वैतकुमार गोस्वामी को

(पोस्टकार्ड)

सेवाग्राम,
वर्धा होकर (मध्यप्रान्त)

१४-२-४१

भाई अद्वैत कुमार—तुमारा खत अभी मिला. मेरा अभिप्राय है कि साम्-दायिक प्रार्थना के लिए लड़ाई न करें. व्यक्तिगत में वावा करें तो दूसरी वात है. कमरे में भी चीखकर नहि होनी चाहिये.

वापु के आशीर्वाद

—हिन्दी। सेवाग्राम (वर्धा), १४।२।१९४१। श्री अद्वैतकुमार गोस्वामी, वृन्दावन को लिखे पत्र की फोटो-नक़ल (जी० एन० १५०) से]

५०३. पत्र : सुरेश सिंह

[व्यक्तिगत सत्याग्रह-आन्दोलन के आरम्भ होने पर श्री सुरेशसिंह ने उसमें सम्मिलित होने की आज्ञा गांधी जी से मांगी थी। इस पत्र में उसी का उत्तर है। श्री सुरेश सिंह वाद में गांधी जी द्वारा कोई तिथि नियत करने के पूर्व ही, बड़े भाई स्व० ब्रजेश सिंह जी के साथ भारत-रक्षा कानून के अन्तर्गत गिरफ्तार कर लिये गये थे। पत्र सम्भवतः फरवरी १९४१ का है—सम्पा०]

सेवाग्राम, वर्धा सी० पी०

भाई सुरेश

तुम्हारा पत्र मिला नाम भेजा तो ठीक किया. नियमपूर्वक कातते होगे? तीनों दल के चले जाने के वाद में तुमारे जाना होगा. नये दलों के लिये मैं तारीख निश्चित करूंगा.

वापू के आशीर्वाद

—हिन्दी। सेवाग्राम, वर्धा। सम्भवतः फरवरी १९४१।]
सौजन्य : श्री सुरेशसिंह, कालाकांकर।

५०४. पत्र : शान्तिस्वरूप को

ट्रेन मे
२-३-४१

भाई शाति स्वरूप,

तुमारा खत मिला है. तुमारी दलील बिलकुल ठीक है और तुमारे रिश्तेदारो को मान्य होनी चाहिये

मो० क० गाधी के
आशीर्वाद

—हिन्दी। २।३।१९४१ । श्री शान्तिस्वरूप श्रीवास्तव, किरावली, आगरा उ० प्र० को लिखे पत्र की फोटो-नक़ल (जी० एन० ५६७७) से]

५०५. पत्र : रघुवंश गौड़ को

सेवाग्राम, वर्धा
६-३-४१

भाई रघुवंश,

तुमारे पास राजकुमारी बहन मेरे कहने से गई और जो कुछ कहा वह मेरी वात .. १ बहन को जो खत तुमने लिखा है ठीक है तुमारे घर जाना यहा से जो कुछ हो सकता है किया जायगा तुमारे लिये रेल किराया दिया जायगा जो कानपुर पहूच कर वापिस करोगे

वापु के .[1]

—हिन्दी। सेवाग्राम (वर्धा), ९।३।१९४१। श्री रघुवशरत्न गौड़, एटा को लिखे पत्र की फोटो-नक़ल (जी० एन० १३९) से]

५०६. पत्र : अद्वैतकुमार गोस्वामी को

(पोस्टकार्ड)

सेवाग्राम
वर्धा होकर (मध्य प्रान्त)
२४-३-४१

भाई अद्वैतकुमार—तुमारे खत का उत्तर वहूत देर से देता हू समय नहि

१. यहां लेखन अस्पष्ट है।

मिलता, वहां की हालत के बारे में मै क्या लिख सकता हूं. वावा राघवदास, मोहनलाल जी इ० को मै लिख तो नहिं सकता. इसलिये जो हो सके वही अच्छा करने की चेष्टा करो.

आपका

मो० क० गांधी

(अंग्रेजी में पता)

श्री अद्वैतकुमार गोस्वामी

बी क्लास

सेण्ट्रल जेल, बनारस , यू० पी०

—हिन्दी। सेवाग्राम (वर्धा), २४।३।१९४१। श्री अद्वैतकुमार गोस्वामी को लिखे पत्र की फोटो-नक़ल (जी० एन० १५१) से]

५०७. पत्र : दिनेश सिंह को

सेवाग्राम, वर्धा

३१।३।४१

चि० दिनेश,

तुमारा खत मिलने से आनंद हूआ. हो सके तो दीनबंधु एन्डरूज स्मारक के लिये विद्यार्थियों से चंदा इकट्ठा करो और भेजो.

बापु के आशीर्वाद

कुमार श्री दिनेश सिंह

कालाकांकर

३६५ कश्मीर हाउस

दून स्कुल

देहरादून (सं० प्रा०)

—हिन्दी। सेवाग्राम (वर्धा), ३१।३।१९४१। पत्र की फोटो-नक़ल (जी० एन० ८६७५) से]

५०८. पत्र : चन्द्र त्यागी को

[यह कार्ड बापूजी की ओर से श्री किशोरलाल मशरूवाला ने लिखा है। —सम्पा०]

सेवाग्राम
वर्धा होकर (मध्यप्रान्त)

श्री चन्द त्यागी जी,

पू० वापू जी ने आपका पत्र देखा। उनके उत्तर नीचे मुताविक हैं—

१. परेड दी जाय २. जेल टीकट जिस तरह अधिकारी सूचना करें, उस तरह पकडा चाय, ३ लोहे के तस्लो मे खाने मे दोष नही है, ४ जेल मे झण्डावन्दन और वन्देमातरम का आग्रह नही रखा जा सकता।

श्री राजकिशोरी वहन का पत्र भी देखा। आशीर्वाद भेजा है। वहन मनु का पता—

मनुवहन मशरूवाला
साउथ ऐवेन्य
जुहू (वम्वई)

५।४।४१

आपका
किशोरलाल मशरूवाला

श्री चन्दत्यागी जी
चर्खभवन, अछेना
पो० हापुड
(जिला मेरठ) स० प्रा०

—हिन्दी। सेवाग्राम (वर्धा), ५।४।१९४१। जी० एन० ३२६३ की फोटो-नक़ल से]

५०९. पत्र : रघुवंश गौड़ को

सेवाग्राम, वर्धा

१५-४-४१

चि० रघुवंश,

तुमारा खत मिला. मुझे शक नहि है, मैजीस्ट्रेटको लिखा है सो गलती है . [१]का यह केश हरगीज नहि है. किसी कालेज को हम मजवूर कैसे करें? जो ज्ञान पाया है उसका उपयोग करो और आजीविका पैदा करो. मुझे अच्छा

---

१. यहां साधन-सूत्र अस्पष्ट है।

लगेगा. अगर हठ छोड़ दो तो रा० कु० वहन ने तो तुमारे लिये वहुत कष्ट उठाया.

वापु के आशीर्वाद

—हिन्दी। सेवाग्राम (वर्धा), १५।४।१९४१। श्री रघुवंश गौड़, खैर, अलीगढ़ को लिखे पत्र की फोटो-नक़ल (जी० एन० १४१) से]

५१०. पत्र : रघुवंश गौड़ को

सेवाग्राम, वर्धा होकर
(मध्यप्रान्त)
२४-५-४१

प्रिय रघुवंश,

राजकुमारी वहन ने प्रयत्न किया पर असफल हुई। इस परिस्थिति में, फिलहाल, तुम ऐसे किसी अर्जनशील काम में अपने को लगाओ कि तुमारा ज्ञान खतम न हो जाय और अहिंसा का विकास करो।

तुम्हारा
वापू

—अंग्रेजी। सेवाग्राम (वर्धा), २४।५।१९४१। श्री रघुवंशरत्न गौड़, एटा को लिखे पत्र की फोटो-नक़ल (जी० एन० १४०) से]

५११. पत्र : जीवनकृष्ण शर्मा को

सेवाग्राम, वर्धा
२८-६-४१

भाई जीवकृष्ण शर्मा,

खादी और ग्राम उद्योग की वस्तुओं की नुमाइश करना और उसमें जो लाभ होगा वह सव कमला नेहरू अस्पताल में देने का तुमारा इरादा स्तुत्य है. मैं आशा करता हूं कि उसमे सफलता मिलेगी.

वापु के आशीर्वाद

—हिन्दी। सेवाग्राम, २८।६।१९४१। श्री जीवनकृष्ण शर्मा, इलाहाबाद को लिखे गये पत्र (जी० एन० ८९) की फोटो-नक़ल से]

५१२. पत्र : हीरालाल शर्मा को

सेवाग्राम
१२-८-४१

चि० शर्म्मा,

तुमारा खत मिला मेरी गलतफहमी नही है तुमने तो कहा है कि आखिर तो मैं कहू सो सही होगा. यह काफी नही है तुमारा अभिप्राय स्पष्ट नहि है तो मेरा निर्णय निकम्मा माना जाय द्रौपदी की भी हार्दिक सम्मति नही है तो भी यह दान दूषित समझा जाय. कोई त्याग वगैर वैराग्य के अचल नहि रहता है मैंने तो नैतिक वात उठाई है.

वापु के आशीर्वाद

—हिन्दी। सेवाग्राम, १२।८।१९४१। 'बापू की छाया में मेरे जीवन के सोलह वर्ष' से।]
सौजन्य : श्री हीरालाल शर्मा

५१३. पत्र : अद्वैतकुमार को

सेवाग्राम,
वर्धा होकर (मध्यप्रान्त)
२४-८-४१

भाई अद्वैत कुमार,

तुमारा खत मिला है तुमको सलाह देना कठिन है वगैर परिचय के क्या कह सकता हूं ? फिर भी इतना तो स्पष्ट है कि तुम्हारे निश्चयवान वनने के लिये सव छोडकर कुछ अरसे के लिये कुछ ऐसा उद्यम करना चाहिये जिससे तुम्हारा खर्च अच्छी तरह निकल सके जो मनुष्य अपना वोज अपने आप उठाता है और किसी को कष्ट नहि देता है वह भी एक प्रकार की देशसेवा करता है

वापु के आशीर्वाद

—हिन्दी। सेवाग्राम (वर्धा), २४।८।१९४१। श्री अद्वैतकुमार गोस्वामी, वृन्दावन को लिखे पत्र की फोटो-नक़ल (जी० एन० १४९) से]

५१४. पत्र : सुरेश सिंह को

१७-९-४१

भाई सुरेश,

तुमने प्रश्न ठीक पूछा है. मुझे कुछ भी कहने का उत्साह नहिं होता है. ऐसे काम में मैने जवाहरलाल को प्रधानपद दिया है. वह तो हैं नहिं, जो उनकी नीति वह कांग्रेस की नीति थी. वह जेल में होने से मेरी बुद्धि इसमें नहिं चलती है. रूस स्पेन, चीन जैसा देश नहिं है. इंग्रेज तो मदद दे हि रहे हैं. स्टेलीन और लेनिन में मैं बड़ा फरक पाता हूं. लेनिन का रूस आज नहिं रहा है. लेकिन यह तो गुण दोष देखने की वात हूइ. यह निरीक्षण में मेरी गलती भी हो सकती है। जबतक मैं हृदय से कुछ न कह सकुं तवतक मौन रखना हि मेरे स्वभाव को अनुकूल है. अल्सर दुरुस्त हो गया होगा.

बापु के आशीर्वाद

—हिन्दी। १७।९।१९४१।]
सौजन्य : श्री सुरेश सिंह, कालाकांकर।

५१५. पत्र : रघुवीर सहाय को

सेवाग्राम,
वर्धा
१०-१०-४१

प्रिय रघुवीर सहाय,

मैं तुम्हारे अत्यन्त पूर्ण एवं ज्ञानवर्द्धक पत्र के लिए धन्यवाद करता हूं। जो कुछ मैं अपने विविध पत्रलेखकों के द्वारा जान पाया था, तुम्हारे इस परिपूर्ण पत्र से उसकी पुष्टि हो गई। मैं नजर रख रहा हूं। आशा है, तुम अच्छे हो।

तुम्हारा
बापू

श्री रघुवीर सहाय,
बदायूं (सं० प्रा०)

—अंग्रेजी। सेवाग्राम (वर्धा), १०।१०।१९४१। पत्र की फोटो-नक़ल (जी० एन० १०२०६) से]

५१६. पत्र : रघुवंश गौड़ को

सेवाग्राम, वर्धा
२६।१०।४१

भाई रघुवश,

तुमको प्रभावती वहन ने लिखा वह भूल थी. मुझे तो तुमारा खत मिला ही नहि था. मैंने रा० कुमारी को खत का उत्तर देने का कहा था कि वे मदद नहि दे सकेगी. तुम्हारे ऐसी भिक्षा मागना भी नहि चाहिये कही मित्र वर्ग से पैसे न मिले तो पढना छोडो और उद्योग करो

वापु के आशीर्वाद

— हिन्दी। सेवाग्राम (वर्धा), २९।१०।१९४१। श्री रघुवंशरत्न गौड़, एटा को लिखे पत्र की फोटो-नकल (जी० एन० १४२) से

५१७. पत्र : जवाहरलाल नेहरू को

सेवाग्राम
वर्धा, मध्यप्रान्त
५-१२-४१

मेरे प्यारे जवाहरलाल,

जेल के बाहर तुम्हे लिखने योग्य होना अच्छा है। किन्तु यह खुशी केवल क्षणिक है। क्योकि मैं इस प्रकार की रिहाइयो के प्रति अपने को अनुकूल नही कर पाता हूं। खैर, हम इस नये सकट का सामना करते हैं।

यह सिर्फ तुम्हे जताने के लिए लिख रहा हू कि चूकि तुम्हारी रिहाई की अफवाह से वातावरण पूर्ण था, मैंने तुम्हारे सवाल का जवाव देने मे विलम्व किया।

मैंने तुम्हारे पत्रो को वडे मनोयोग से पढा है। मैं तुम्हारे निष्कर्षों से सहमत हू और मैं उस अत्यन्त उदार ढग को पसन्द करता हू जिसके साथ तुमने सारी वात को ग्रहण किया है। मेरी एफ (फ०)[1] से एक, केवल एक, ही वार वात हुई है और उसने मेरे इस प्रस्ताव को स्वीकार किया है कि वह तुम्हारी सहमति एव आशीर्वाद

---

१. फीरोज गांधी।

के विना इन्दु से शादी करने की वात नहीं सोचेगा। इन्दु ने फ० को लिखा; वह आकर मुझसे मिल भी रही है। अव जव कि तुम वाहर आ गये हो, और ज्यादा नहीं तो सम्भवत. कुछ दिन तो रहोगे, तुम इस चीज को जैसी शक्ल देना चाहोगे, दोगे।

मुझे आशा है कि तुमने मेरे द्वारा जारी किये हुए हाल के वक्तव्यों को पसन्द किया होगा। तुम मुझे वताओगे कि कव आ रहे हो। आज मौलाना ने टेलीफोन किया और कहा कि वह दो या तीन दिनों वाद आने की सोच रहे हैं। मैं यहां से ६ को एक महीने के लिए वारडोली जाना चाहता हूं। सरदार मुझसे चाहते हैं कि मैं गुजरात को एक महीना दूं। वह चिकित्सा में हैं—मुख्यत. आहार-सम्वन्धी। मैंने ही उनके आहार का निश्चय किया है। मैं समझता हूं कि इसके कारण उनकी वेदना सह्य हो गई है। जहां तक सम्भव है, हमारी वार्ताएं और वैठकें वारडोली में होंगी। रिहाइयां एक चुनौती हैं। मैं महसूस करता हूं कि हमें जितनी जल्द हो सके, कार्यसमिति तथा भारतीय कांग्रेस कमेटी की वैठकें करनी चाहिए। किन्तु इस विषय के सर्वोत्तम निर्णयकर्ता तो तुम और मौलाना हैं। मैं यह समयाभाव के वीच लिख रहा हूं

प्रेम

वापू

—अंग्रेजी। सेवाग्राम (वर्धा), ५।१२।१९४१। नेहरू संग्रहालय में सुरक्षित पत्रावली से।]
सौजन्य : श्रीमती इन्दिरा गांधी तथा नेहरू संग्रहालय।

५१८. तार : जवाहरलाल नेहरू को

वर्धा
६-१२-४१

जवाहरलाल नेहरू
लखनऊ

कल लिखा था (कि) तुम्हारा तार (मिला)। जव भी आ सको आओ। सरदार ने बहुत पहले वारडोली कार्यक्रम तय कर दिया था। उनका शरीर टूट गया है। उनके शरीर की सेवा-शुश्रूषा में मैं ही उनका एकमात्र पथप्रदर्शक हूं।

उनको अशान्त करना नही चाहूगा किन्तु तुम्हारी और मौलाना की राय ही चलेगी।

प्रेम

बापू

—अंग्रेजी। वर्धा, ६।१२।१९४१। नेहरू संग्रहालय में सुरक्षित पत्रावली से।]
सौजन्य : श्रीमती इन्दिरा गाधी तथा नेहरू संग्रहालय।

५१९. पत्र : जवाहरलाल नेहरू को

सेवाग्राम,
वर्धा (मध्यप्रान्त) ९-१२-४१

मेरे प्यारे जवाहरलाल,

तुम्हारा पत्र।

आज रात मैं राजेन्द्र बाबू के साथ बारडोली जा रहा हू।

जितनी जल्दी आ सको, आओ।

मौलाना साहब ने तार दिया है कि कार्यसमिति १८ को बारडोली मे होगी। अगर उन्होने अभी सूचना न प्रसारित की हो तो मैंने उन्हे २३ का सुझाव दिया है क्योंकि १७, १८, १९ को मेरी भारी बैठकें हैं। किन्तु मैंने निर्णय मौलाना साहब पर ही छोड दिया है।

आशा है तुम्हें मेरा पत्र मिल गया होगा।

प्रेम

बापू

—अंग्रेजी। सेवाग्राम (वर्धा), ९।१२।१९४१। नेहरू सग्रहालय मे सुरक्षित पत्रावली से।]
सौजन्य : श्रीमती इन्दिरा गाधी तथा नेहरू संग्रहालय।

५२०. पत्र : जवाहरलाल नेहरू को

बारडोली, १३-१२-४१

मेरे प्यारे जवाहरलाल,

मुझे तुम्हारा पत्र मिला है। मुझे खुशी है कि इन्दु तुम्हारे साथ आयेगी। यहा जाडा अपने नाम के लायक नही है। रातें ठण्डी हैं, दिन गरम हैं।

जिन प्रश्नों पर हमें विचार करना है, वे अनेक हैं। मुझे विश्वास है कि तुम और मौलाना साहब कार्यसमिति की तिथि के पूर्व ही यहां आ जायंगे।

१७ से आल इण्डिया स्पिनर्स एसोसियेशन (भारतीय सूत्रकार संघ या चर्खा संघ) तथा गां० से० सं० की भारी बैठकें शुरू हो रही हैं। मैं २० को सब खत्म करने की आशा करता हूं।

सरदार अपने को अच्छी तरह सहन कर रहे हैं।

प्रेम
बापू

—अंग्रेजी। बारडोली, १३।१२।१९४१। नेहरू संग्रहालय में सुरक्षित पत्रावली से।]

सौजन्य : श्रीमती इन्दिरा गांधी तथा नेहरू संग्रहालय।

५२१. पत्र : नरेन्द्रदेव को

(मूल हिन्दी)

बारडोली
१६-१२-४१

भाई नरेन्द्रदेव,

आपके पत्र का उत्तर मैंने जानबूझकर रोक रक्खा। इनकार करने की हिचकिचाहट होती थी। लेकिन दूसरी मांगें भी आने लगी। मैंने देखा कि निमंत्रणों के स्वीकार का मेरा समय गया। काशी के बहुत तो मैंने रोके लेकिन सबका इनकार नही कर सकता था। मालवीय जी का आग्रह का इनकार कहां तक करूं? इसलिए लखनऊ से मुझे मुक्ति दें।

प्रकृति अच्छी होगी। यहां आओगे?

आपका
मो० क० गांधी

—हिन्दी। बारडोली, १६।१२।१९४१। नेहरू संग्रहालय में सुरक्षित पत्रावली से।]

सौजन्य : नेहरू संग्रहालय।

५२२. पत्र : मालवीयजी महाराज को

(पोस्टकार्ड)[1]

सेवाग्राम
वर्धा होकर (मध्यप्रान्त)
२६-१-४२

भाई साहेब,

आपसे मिलने पर मुझे जो आनद हूआ मैं कैसे बताउ ? मेरी उमीद है कि आपने कहा है वह शुरु कर दिया होगा. तार भेजवा दें

आपका,
मो० क० गाधी

(पोस्टकार्ड पर पता)
भा० भु० मदनमोहन मालवीय जी,
(अग्रेजी मे) पो० बनारस हिन्दू युनिर्वसिटी

—हिन्दी। सेवाग्राम (वर्धा), २६।१।१९४२। जी० एन० २२०२ की फोटो-नक़ल से]

५२३. पत्र : श्यामलाल[2] को

सेवाग्राम
वर्धा, १४-२-४२

भाई शामलाल,

यह खत तुमारे लिये, बापा[3] के लिये और वियोगी[4] जी के लिये समझो. बालकोबा[5] साधु पुरुष है भोजु भाई सब सेवा तो करेंगे हि लेकिन जो चाहिये

---

१. कार्ड पर बनारस हिन्दू यूनिर्वसिटी पोस्ट आफिस की डिलीवरी-मुहर २८ जनवरी ४२, १२ बजे दिन की पड़ी है।

२. श्री श्यामलाल, काशी-निवासी, प्रधान सम्पादक श्री सुमनजी के छोटे भाई।। पहिले हरिजन-सेवक-संघ और अब कस्तूर बा-स्मारक निधि मे हैं।

३. श्री ठक्कर बापा।

४. श्री वियोगी हरि।

५. विनोबा के छोटे भाई।

सो सुचिता कर देना. उसको खर्च के लिये जो चाहिये सो देना. मेरे खाते में लिखना.

वापु के आशीर्वाद

—हिन्दी। सेवाग्राम (वर्धा), १४।२।१९४२। जी० एन० ११९० की फोटो-नकल से]

५२४. पत्र : जवाहरलाल नेहरू को

सेवाग्राम
वर्धा (सी० पी०)
२३-२-४२

चि० जवाहरलाल,

अब तो मुझको कुछ फुरसत होगी। स्टेट्स पीपल के दफ्तर का क्या करना है, अखबार का क्या करना है, पट्टाभी[1] लिखते हैं वे मछलीपट्टम से अखबार निकाल सकते हैं, उनका खत इसके साथ है। दा० मेनन यहां है। मंत्री पद वलवंत[2] राय नहीं ले सकते हैं। न जयनारायण[3] व्यास ले सकते हैं। रंगीलदास[4] है। बापा[5] पसंद नहीं करते हैं। अगर यहां ही दफ्तर रखना है तो चल तो सकता है। पैसे की बात सोचना होगा।

वापु के
आशीर्वाद

—हिन्दी। सेवाग्राम (वर्धा), २३।२।१९४२। नेहरू संग्रहालय में सुरक्षित पत्रावली से।]

सौजन्य : श्रीमती इन्दिरा गांधी तथा नेहरू संग्रहालय।

---

१. पट्टाभि सीतारामैया, प्रसिद्ध गांधीवादी विचारक तथा कांग्रेस-इतिहास के लेखक।
२. वलवंतराय मेहता, देशीराज्यों के एक प्रमुख कार्यकर्त्ता, वाद में सौराष्ट्र के मुख्य मन्त्री।
३. जयनारायण व्यास, राजस्थान के प्रमुख कार्यकर्त्ता, पत्रकार। वाद में मुख्यमन्त्री।
४. रंगीलदास कापड़िया : देशी राज्यों एवं पीड़ित वर्गों के एक जन-सेवक।
५. पीड़ित, शोषित तथा अछूतों के प्रसिद्ध नेता अमृतलाल ठक्कर।

५२५. पत्र : जवाहरलाल नेहरू को

सेवाग्राम
वर्धा सी० पी०
१-३-४२

चि० जवाहरलाल,

तुम्हारा खत कल मिला मैं उत्तर नही देना चाहता था न अब देना चाहता हू आज जो गरमी पड रही है उसका खयाल देता हू बहूत सख्त है मैंने भीगा कपड़ा सर से लपेटा है ऐसी गरमी मे इन्दु को इस ओर नहि आना चाहिये. मेरी तो सलाह है कि दोनो खाल (खाली?) जाय या काश्मीर जब बारिश शुरू होवे तब सेवाग्राम इ० जगह जाय लेकिन इन्दु की हिम्मत अगर यहा की गरमी की बरदाश्त करने की है तो मैं तो दोनो को देखकर खुश ही हूगा

एक और बात खुरशेद बहन ने तुमको लिखा था वह लिखती है उसके जवाब मे तुमने लिखा है "मैं तो महात्मा के निमत्रण की राह देख रहा हू". मेरा निमत्रण क्यो? मेरा निमत्रण तो हमेशा है ही खास तो कुछ नही था कि मैं यहा तक आने की तकलीफ दू। ओपन सिटी की बात मैं नही समजता हू इसलिये मैंने कहा अगर मैं कुछ कहू तो भी पहले तो जवाहरलाल की राय जानना होगा. ऐसी बातो मे मैं जवाहरलाल पर निर्भर रहता हू अब तो जल्दी मिलेंगे ही

बापु के आशीर्वाद

— हिन्दी। सेवाग्राम (वर्धा) १।३।१९४२। नेहरू सग्रहालय मे सुरक्षित पत्रावली से।]

सौजन्य : श्रीमती इन्दिरा गांधी तथा नेहरू संग्रहालय।

५२६. पत्र : जवाहरलाल नेहरू को

(मूल हिन्दी)

सेवाग्राम
४-३-४२

चि० जवाहरलाल,

तुम्हारा खत कल मिला आशा है कि इस खत के अक्षर पढ़ने मे मुस्केली नही होगी

इंदु की शादी के बारे में मेरी तो पक्की राय है कि वाहर से किसी को न वुलाया जाय. इलाहावाद में जो हैं उनमें से साक्षी के रूप में भले ही कुछ लोग को वुलाये जाय. लग्नपत्रिका दिल चाहे इतनी भेजो. सवसे आशीर्वाद मंगाओ लेकिन पत्रिका में साफ लिखना कि खासकर किसी को आने की तकलीफ़ नही दी गई है. अगर एक को भी बुलावे तो किसी को छोड़ नही सकेंगे. इंदु इतनी सादगी तक जाना चाहती है या नही यह सोचना होगा. तुम भी शायद इतनी सादगी तक जाना पसन्द न करो तो मेरी राय फेंक देना.

इंदु के बारे में तुम्हारा निवेदन मैंने देखा. अच्छा लगा. मेरे पर रोज खत आते है. कई तो विषाक्त हैं. सब फाड़ डाले. इन सवके उत्तर में मैने एक नोंध[1] हरिजन के लिये भेजी है. उसकी नकल इसके साथ रखता हूं. नोंध लिखी गई सोमवार को. कल से मुसलमानों के खत शुरू हुए है. हमले का मुद्दा सरूपवाला किस्सा है. ऐसा तो चलता ही रहेगा.

देशी राज्य के बारे में मैं हो सके वह करूंगा पैसे की मुश्केली वरावर पड़ेगी. जमनालाल जी ने सब बोज उठा लिया था. किस तरह वह निश्चित नही हूआ था. अव मैं सोच रहा हूं कि कैसे पैसे पैदा किया जाय. अखबार के वारे में पट्टाभी से मश्विरा कर रहा हूं. बलवन्त राय नहीं आ सकेंगे. उससे वहूत फरक नहीं पड़ेगा. यहां से मदद मिलती रहेगी. यहां आओगे तब दूसरी वातें करेंगे. मेनन आज मुंवई जाते हैं—वहां का काम पूरा करने के लिए.

च्यांग काई शेक का बयान देखा था. अच्छा था. तुम्हारी इजाजत तो आई लेकिन मैंने सोचा, अव इस खत (को) प्रकट करने की आवश्यकता नही रही. वात पुरानी हो गई.

भागीरथी आ गई है. चन्द्रसिंह को रखना कठिन तो है. बहूत तामसी है. जहन कमजोर है. थोड़ी सी वात में लड़ बैठते हैं. किसी को पीटे तो मुझे आश्चर्य नही होगा. महेनती तो है देखता हूं तुम्हारे चिंता नहिं करना. मेरे खत पढ़ने में कठिनाई आवे तो मैं और भी साफ अक्षर लिखने की कोशिश करूंगा. लेकिन हमारा धर्म है कि हम एक दूसरों (दूसरे) से राष्ट्रभाषा में लिखते हो जायें (लिखने लगें) कुछ अर्से में इस तरह लिखने में हम ज्यादा आसानी महसुस करेंगे. गरीवों को वहूत लाभ होगा.

वापु के
आशीर्वाद

---

१. टिप्पणी।

—हिन्दी। सेवाग्राम, ४।३।१९४२। नेहरू संग्रहालय में सुरक्षित पत्रावली से।]
सौजन्य : श्रीमती इन्दिरा गांधी तथा नेहरू संग्रहालय।

● हमारा धर्म है कि हम एक दूसरों से राष्ट्रभाषा में लिखते हो जायं (एक दूसरे से राष्ट्रभाषा में लिखनेवाले बन जायं)।

५२७. पत्र : जवाहरलाल नेहरू को

सेवाग्राम
वर्धा सी० पी०
६-३-४२

चि० जवाहरलाल,

तुम्हारा खत मिला अगले खत का उत्तर मैंने तुरन्त दे दिया था. मिल गया होगा

मुकरजी हमारा अच्छा और नेक कामदार हैं उसके पास जमीन है. उसको मैंने पूछा था उसने कहा मैं दान हरगीज नही चाहता हू मुझे तो कुछ शक नही है कि वह पूरा रुपया वापस करेगा सूद देने की भी उसकी तैयारी थी हमने दूसरे कामदारो को काफी मदद दी है. मेरा तो निश्चित मत है कि हम भाई मुकरजी को रु० ३००० छे मास के लिये दे

बापु के
आशीर्वाद

—हिन्दी। सेवाग्राम (वर्धा), ६।३।१९४२। नेहरू संग्रहालय मे सुरक्षित पत्रावली से।]
सौजन्य : श्रीमती इन्दिरा गांधी तथा नेहरू संग्रहालय।

५२८. पत्र : जवाहरलाल नेहरू को

[यह पत्र मूलतः हिन्दी मे लिखा गया था। —सम्पा०]

सेवाग्राम
वर्धा, सी० पी० १५ अप्रैल, १९४२

चि० जवाहरलाल,

प्रोफेसर यहा आये हैं उनसे सब सुना। तुम्हारा प्रेस-इन्टरव्यू भी सुना।

मैं देखता हूं कि हमारे विचारों में तो भेद था ही लेकिन अब अमल में हो रहा है। इस हालत में वल्लभ भाई वगैरा क्या करें? तुम्हारी नीति को स्वीकार किया जाय तो कमिटी जैसी आज है ऐसे नही रहनी चाहिए।

ज्यों-ज्यों मैं सोचता हूं मुझे लगता है कि तुम कुछ गलती कर रहे हो। अमरीकी लश्कर, चीनी लश्कर हिन्दुस्तान में आवे और हम गुरिल्ला लड़ाई में पड़ें, इसमें मैं कुछ भी भला नही पाता हूं।

मेरा धर्म है, मैं तुम्हें सावधान करूं।

इन्दू फीरोज ठीक होंगे। मैंने कल सुना कि उत्कल में फारवर्ड ब्लाक वाले हथियारबन्द हैं और कम्युनिस्ट गुरिल्ला लड़ाई के लिए। सत्य कितना है, मैं नहीं जानता।

बापु के आशीर्वाद

—हिन्दी। सेवाग्राम (वर्धा), १५।४।१९४२। 'ए बंच आफ ओल्ड लेटर्स' से।]
सौजन्य : श्रीमती इन्दिरा गांधी

५२९. पत्र : जवाहरलाल नेहरू को

(मूल हिन्दी)

सेगांव
वर्धा होकर (मध्यप्रान्त)
१६-४-४२

चि० जवाहरलाल,

मौलाना का खत आज आया. वे मुझे लिखते है मुझे इलाहाबाद जाना है. मैं कैसे जाऊं? मैंने वही कह दिया था मैं अब मुसाफरी के लायक नही रहा हूं. और मैं आकर भी क्या करुंगा. मेरे पास वही चीज है और मैने यहां तीन मीटीग बुलाई है. एक तो कब से बुलाई गई थी. एक भी मैं छोड़ नही सकता हूं. इसलिए तुम्हारे (तुम्हें) मुझे बचा लेना है. मौलाना से (को) लिखो कि मुझे रिहाई दे दें।

बापु के आशीर्वाद

जानकी बहन ने तुमको कल खत लिखा की (कि) दोनो मीटीग वर्धा में

करो मैंने उसे रोक लिया. जब मेरी हाजरी की जरूरत मानी जाय तब मीटीग वर्धा मे ही करना चाहिए.

— हिन्दी। सेगांव (वर्धा), १९।४।१९४२। नेहरू सग्रहालय मे सुरक्षित पत्रावली से।]
सौजन्य : श्रीमती इन्दिरा गांधी तथा नेहरू सग्रहालय।

५३०. पत्र : जवाहरलाल नेहरू को

(मूल हिन्दी)

सेवाग्राम, वर्धा सी० पी०
२४।४।४२

चि० जवाहरलाल,

मीरा बहन ने मान लिया कि मुझे कुछ न कुछ कदम उठाना होगा, और उसे कुरबानी करना (करनी) होगा। मैं इलाहाबाद न जाउ तो भी वह जाना चाहती थी। इसलिये मैंने उसे यहा बुला ली (लिया)। उसके साथ मैं अपने ख्याल प्रस्ताव के रूप मे भेजता हू। मौलाना साहब का आग्रह था कि मैं इलाहाबाद जाउ। मैंने लाचारी बताई। इन दिनो मे मुसाफिरी करना मेरे लिए कठिन बात है। इतना ही नही, लेकिन मैंने उसी अरसे मे तीन मीटिंग बुलाई है। इसलिये मैंने मौलाना से माफी माग ली और लिखा कि मैं अपने विचार प्रस्ताव के रूप मे भेजुगा।

प्रस्ताव के समर्थन मे दलील देने की आवश्यकता मैं नही समझता हू। अगर मेरा प्रस्ताव आप लोगो को अच्छा न लगे तो मेरा आग्रह हो नही सकता है। हमारे लिये मौका ऐसा आया है कि हरेक को अपना मार्ग सोच लेना है।

फंनी वगैरह मे सल्तनत का बर्ताव ऐसा चल रहा है कि वह बर्दाश्त के काबिल नहीं है। ऐसी सल्तनत बचकर भी क्या करेगी? और आज तो वह बचने की कोशिश कर रही है। मेरा विश्वास हो गया है कि सल्तनत उठ जाने से हम जपान के साथ अच्छी तरह से हिसाब कर सकते हैं। यह दूसरी बात है कि सल्तनत उठ जाने पर हम आपस मे लड मरेंगे। भले ऐसा भी हो। हम थोडे सल्तनत की महेरबानी से आपस आपस के झगडो से बचना चाहते हैं?

आचार्य नरेन्द्रदेव ने प्रस्ताव देखा है, और पसद किया है।

बापु के आशीर्वाद

—हिन्दी। सेवाग्राम (वर्धा), २४।४।१९४२। नेहरू सग्रहालय मे सुरक्षित पत्रावली से]
सौजन्यः श्रीमती इन्दिरा गाधी तथा नेहरू संग्रहालय

५३१. पत्र : जवाहरलाल नेहरू को

(मूल हिन्दी)

सेवाग्राम

वर्धा सी० पी०, ९-५-४२

चि० जवाहरलाल,

तुमारे खत की मैं रोज आशा रखता था. आज आया. तुमारे थोड़ा तो आराम चाहिये ही. इंदु के काम का बयान मुझे वहोतों से मिला. हमेशा अच्छी तबीयत रहे तो इंदु बिलकुल अच्छी हो जायगी.

फिरोज भी बहूत काम कर रहा है, ऐसा सबने सुनाया.

चंद्रसिंह के लिए जो कुछ शक्य है, सो होता है. माधी को बड़ी खांसी हो गई है. मै रोज देखने जाता हूं. चंद्रसिंह और भागीरथी खुश देखने में आते है. गरमी की भी अब तो बहूत शिकायत नही करते हैं. चंद्रसिंह की पढ़ाई की समस्या कठिन है. मैं दीनबंधु स्मारक के लिये आठ दिन के लिये मुंबई जा रहा हूं. वापस आने के बाद जो हो सके करूंगा. चिंता न करे.

मौलाना के खत आते रहते हैं. वे भी बीमार है. लिखते हैं इस महीने की आखरी में वर्धा आवेगे. शायद उन्ही के साथ तुम भी आओगे.

बा अच्छी है.

दोनों को

बापु के आशीर्वाद

[— हिन्दी। सेवाग्राम (वर्धा), ९।५।१९४२। नेहरू संग्रहालय में सुरक्षित पत्रावली से।]

सौजन्य : श्रीमती इन्दिरा गांधी तथा नेहरू संग्राहालय।

५३२. पत्र : जवाहरलाल नेहरू को

(मूल हिन्दी)

सेवाग्राम

वर्धा सी० पी०, ५-६-४२

चि० जवाहरलाल,

तुम्हारा खत मिला. मौलाना से कुछ नहीं है. एक खत था जिसमें लिखा था तुम्हारे साथ आवेंगे.

फिशर[1] आ गये हैं. रोज एक घटा तो देता हू. आश्रम मे ही रहता है यहा तो गरम पवन फूक रहा है.

वापु के
आशीर्वाद

—हिन्दी। सेवाग्राम (वर्धा), ५।६।१९४२। नेहरू संग्रहालय मे सुरक्षित पत्रावली से।]
सौजन्य : श्रीमती इन्दिरा गाधी तथा नेहरू संग्रहालय।

५३३. पत्र : जवाहरलाल नेहरू को

(मूल हिन्दी)

सेवाग्राम वर्धा सी० पी०
१३-७-४२

चि० जवाहरलाल,

मैं प्रस्ताव पढ गया हू मैं देखता हू कि तुमने मेरी वात मे से कुछ लेने की कोशीश की है मैं कोई परिवर्तन नही चाहता हू.

हा मैं इतना जरूर चाहता हू कि हम सव जहा तक हो सके एक ही मानी इस दरख्वास्त के करें अलग अलग आवाज से वोलें तो अच्छा नही होगा।

जो चीज तुमने अपने वारे मे कही और जिसमे मैंने १६ आना साथ दिया उस पर मैं कायम हू वहूत विचार करने पर भी मुझे लगता है कि तुम्हारे निकलने से तुम्हारी सेवाशक्ति वढेगी और इतना तुमको भी सतोप मिलेगा जैसे मौके पर मैं कमिटी मे आता रहा हू, नरेन्द्रदेव आते रहे हैं ऐसे तुम भी करोगे और तुमारी भरसक मदद मिलेगी और तुम्हारी आझादी बिलकुल सुरक्षित रहेगी

मोलाना साहव के वारे मे मेरी यह दरख्वास्त है मैं पाता हू कि हम दो एक दूसरे से दूर गये हैं मैं उनको नही समझता हू न वे मुझको समझते हैं हिंदु मुस्लीम मस्ले के वारे मे भी हम दूर जा रहे हैं ऐसे ही वाकी ख्यालो मे मुझे कुछ ऐसा भी डर है कि मोलाना साहव को अव की कार्रवाई पसद नही है इसमे दोप किसी का नही है हकीकत हम पहचाने इसलिए मेरी दरख्वास्त है कि मौलाना सिदारत छोड दें, कमिटी मे रहे, हगामी सदर कमेटी चुन ले, वे और सव एक वन कर चले यह भारी जग एकमत के सिवाय और सोलह आना साथ देने वाले सदर सिवाय काम ठीक नही चलेगा.

---

१. लुई फिशर।

यह खत मौलाना साहब को भी पढ़ा दो. इस खत तो तुम दोनों के लिये ही है. मेरी एक भी बात और दोनों (को) ठीक न लगे तो उसे फेंक देना. मैंने तो सिर्फ खिदमत के भाव से ही लिखा है. कबूल होवे न होवे. उसमें रंज की बात है ही नहीं.

तुमारे मुस्वीह में ए० आई० सी० सी० की तारीख और जगह नहीं दी गई है. जहां तक मेरा तालुक है दरख्वास्त प्रेस में भेज सकते हो.

प्रस्ताव की बहस के लिए तो यहां आने की भी जरूरत नहीं है लेकिन जैसा मौलाना साहब का हुक्म.

बापु के
आशीर्वाद

—हिन्दी। सेवाग्राम (वर्धा), १३।७।१९४२। नेहरू संग्रहालय में सुरक्षित पत्रावली से।]

सौजन्य : श्रीमती इन्दिरा गांधी तथा नेहरू संग्रहालय।

५३४. पत्र : मिश्रजी महाराज, दयालबाग को

सेवाग्राम, वर्धा (मध्यप्रान्त)
७-९-४४

मीसीरजी महाराज,

कस्तुर बा स्मारक निधि के लिये आपने जो चेक भेजा है उस लिये आपको धन्यवाद. कोई रोज आपके दर्शन की आशा रखता हूं.

आपका
मो० क० गांधी

—हिन्दी। सेवाग्राम (वर्धा), ७।९।१९४४। जी० एन० २१६७ की फोटो-नक़ल से]

५३५. पत्र : मदनमोहन मालवीयजी को

सेवाग्राम १८-११-४४

भाई साहब,

भाई सुन्दरम् ने महादेव-मन्दिर के बारे में आपका ख़त मुझे बताया. मेरा तो आपसे विनत है कि मन्दिर बहुत सादा बनने दीजिए. बड़े मकान में महादेव

की प्रतिष्ठा होगी कि सादे मे ? उच्चतम विचार सादे मन्दिर मे रहते हैं ऐसी मेरी नम्र मान्यता है. चौक तो अच्छा है ही, सादी छटा करने से हजारो लोग महादेव का ध्यान कर सकेंगे. इस समय तो मन्दिर बनाने की आवश्यकता नही है. सब वस्तु नेधी[1] है दृढ सकल्प किया जाय और उसकी पूर्ति के लिए प्रतिज्ञा की जाय तो आपका चित्त प्रसन्न होना चाहिये.

आपका कनिष्ठ बन्धु
मो० क० गाधी

—हिन्दी। सेवाग्राम, १८।११।१९४४।]
सौजन्य : श्री वी० ए० सुन्दरम

५३६. पत्र : बनारसीदास चतुर्वेदी को

(पोस्टकार्ड)

सेवाग्राम २७-१२-४४

भाई बनारसीदास,

पिता जी के स्वर्गवास से कुछ दु ख होना स्वाभाविक तो है लेकिन क्षण भर विचार करें तो हमे पता चलता है कि जो बिल्कुल अनिवार्य है उसका खेद क्यों? और मरता है कौन ? जीव तो हरगीज नही जिसके साथ हमारा सबंध था और रहेगा.

पिताजी के अतीम वचन मुझे बहूत मीठे लगते हैं मैं उसे आशीर्वाद रूपसे मानूगा

बापु के आशीर्वाद

पडित बनारसीदास चतुर्वेदी
फीरोजाबाद, जिला आगरा

—हिन्दी। सेवाग्राम (वर्धा), २७।१२।१९४४। जी० एन० २५७५ की फोटो-नक़ल से]

५३७. पत्र : तेजबहादुर सप्रू को

सेवाग्राम, ८।२।४५

प्रिय डा० सप्रू

यद्यपि समझा यह जाता है कि मैं विश्राम कर रहा हू और ८-१५ प्रात से ८-१५ रात तक मौन रखता हू, किन्तु मैं अन्दर से बहुत अधिक काम कर रहा हू। इसीलिए आपको उत्तर देने मे देर हुई।

---

१. मंहगी।

अगर आपको ज्यादा तकलीफ न हो तो मैं चाहूंगा कि आप कायदे आजम (जिन्ना) से मेरी वार्त्ता के विषय में कुछ निश्चित प्रश्न करें। मैं अपने को उन्हीं प्रश्नों तक सीमित रखूंगा।

मैं देखता हूं कि आप एक वहुत वड़े कार्यक्रम में प्रवेश कर रहे हैं। मैं सव तरह से आपकी सफलता चाहता हूं और उस कार्य के लिए आपको पूर्ण शक्ति पाने की प्रार्थना करता हूं।

मुझे आशा है कि रोगी खतरे में वाहर निकल चुका होगा।

आपका निश्छल
मो० क० गांधी

—अंग्रेजी। सेवाग्राम (वर्धा), ८।२।१९४५। जी० एन० ७५७१ की फोटो-नक़ल से]

५३८. पत्र : तेजबहादुर सप्रू को

सेवाग्राम, ९।३।४५

प्रिय डा० सप्रू

आज पी० (प्यारेलाल ?) शिमला में, सम्भवतः राजकुमारी के साथ, हैं। यह शुभाकांक्षा का पत्र आपको श्री नरहरि परीख देंगे जो प्राचीनतम आश्रम-वासियों में से एक हैं। आप इन्हें जो भी सन्देश देना चाहें, दे सकते है। मुझे आशा है, आपका स्वास्थ्य अच्छा होगा।

कृपया हिन्दुस्तानी के विषय में अपना वादा न भूलिएगा, यद्यपि आप कह चुके हैं कि आप सदस्य नहीं बन सकेंगे।

आपका निश्छल
मो० क० गांधी

—अंग्रेजी। सेवाग्राम (वर्धा), ९।३।१९४५। जी० एन० ७५६९ की फोटो-नक़ल से]

५३९. पत्र : तेजबहादुर सप्रू को

सेवाग्राम, १८।३।४५

प्रिय डा० सप्रू,

मैंने आपकी प्रस्तावित सिफारिशों के वारे में सुना है। मैं आशा करता हूं कि रिपोर्ट किसी भी जगह कमजोर नही होगी।

आपका
मो० क० गांधी

—अंग्रेजी। सेवाग्राम (वर्धा), १८।३।१९४५। पत्र की फोटो-नक़ल (जी० एन० ७५६८) से]

५४०. पत्र : रमेशचन्द्र को

१-५-४५, न० दि०

भाई रमेशचद्र,

तुमको न मिल सका उसका खेद है प्रश्नों का जवाव हरिजन सेवक मे भेजता हू वहा देखोगे.

वापु के
आशीर्वाद

—हिन्दी। नई दिल्ली, १।५।१९४५, जी० एन० ६०९५ की फोटो-नक़ल से]

५४१. पत्र : पुरुषोत्तमदास टण्डन को

२, महावलेश्वर २८।५।४५

भाई टण्डन जी,

मेरे पास उर्दू खत आते हैं, हिन्दी आते हैं और गुजराती। सव पूछते हैं, मैं कैसे हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन मे रह सकता हू और हिन्दुस्तानी सभाओ मे भी? वे कहते हैं, सम्मेलन की दृष्टि से हिन्दी ही राष्ट्रभाषा हो सकती है, जिसमे नागरी लिपि को ही राष्ट्रीय स्थान दिया जाता है, जब कि मेरी दृष्टि मे नागरी और उर्दू लिपि को यह स्थान दिया जाता है और उस भाषा को जो न फारसीमयी है, न सस्कृतमयी। जव मैं सम्मेलन की भाषा और नागरी लिपि को पूरा राष्ट्रीय स्थान नही देता हू, तव मुझे सम्मेलन में से हट जाना चाहिए। ऐसी दलील मुझे योग्य लगती है। इस हालत मे क्या सम्मेलन से हटना मेरा फर्ज नही होता है? ऐसा करने से लोगो को दुविधा न रहेगी, और मुझे पता चलेगा कि मैं कहा हू।

कृपया शीघ्र उत्तर दें। मौन के कारण मैंने ही लिखा है। लेकिन मेरे अक्षर पढने मे सवको मुसीवत होती है, इसलिये इसे लिखवाकर भेजता हू। आप अच्छे होंगे।

आपका,
मो० क० गाधी

—हिन्दी। महावलेश्वर, २८।५।१९४५।]

५४२. पत्र : बनारसीदास चतुर्वेदी को

(कार्ड)

११-६-४५, पंचगनी

भाई बनारसीदास,

दा. जाकर साहेब का निबंध कल पढ़ पाया. इतना काम में फंसा हूं. उनको आज लिखा है. निबंध रसिक है, अच्छा है. अगर पत्रिका रूप में छपवाया हो तो कुछ प्रतियां भेजो. सेहत अच्छी होगी.

बापु के आशीर्वाद

—हिन्दी। पंचगनी, ११।६।१९४५। जी० एन० २५१९ की फोटो-नक़ल से]

५४३. पत्र : पुरुषोत्तमदास टण्डन को

पंचगनी,
१३-६-४५

भाई पुरुषोत्तमदास टण्डन जी,

आपका पत्र मिला। आप जो लिखते है, उसे मैं बराबर समझता हूं, तो नतीजा यह होना चाहिए कि आप और सब हिन्दी प्रेमी मेरे नये दृष्टिकोण का स्वागत करें और मुझे मदद करें। ऐसा होता नही है। और गुजरात में लोगों के मन में दुविधा पैदा हो गई है। और मुझसे पूछ रहे है कि क्या करना? मेरे ही भतीजे का लड़का और दूसरे हिन्दी का काम कर रहे है, और हिन्दुस्तानी का भी। इससे मुसीबत पैदा होती है। पेरीन बहिन को आप जानते है। वे दोनों काम करना चाहती है लेकिन अब मौका आ गया है कि एक या दूसरे को छोड़ें। आप जो कहते है, वह सही है, तो ऐसा मौक़ा आना ही न चाहिए। मेरी दृष्टि से एक ही आदमी हिन्दुस्तानी-प्रचार-सभा का और हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन का मन्त्री या प्रमुख बन सकता है। बहुत काम होने के कारण न हो सके, वह दूसरी बात है। और जो मैं कहता हूं वही अर्थ आपके पत्र का है, और होना चाहिए, तब तो कोई मतभेद का कारण ही नही रहता और उससे मुझे बड़ा आनन्द होगा। आपका वक्तव्य जो आपने भेजा था, मैं पढ़ गया हूं। मेरी दृष्टि से हिन्दुस्तानी-प्रचार-सभा बिल्कुल आप ही का काम कर रही है, इसलिए वह आपके धन्यवाद की पात्र है। और कम-से-कम उसमें आपको सदस्य होना चाहिये, मैंने तो आपसे विनय भी किया कि आप उसके सदस्य बनें, लेकिन आपने इन्कार किया है, ऐसा कहकर कि जबतक डाक्टर

अब्दुलहक न बने, तबतक आप भी बाहर रहेगे। अब मेरी दरखास्त यह है कि अगर मैं ठीक लिखता हू, और हम दोनो एक ही विचार के हैं, तो हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन की ओर से यह बात स्पष्ट हो जानी चाहिए। अगर इसकी आवश्यकता नही हो, तो मेरा कुछ आग्रह नही है। कम-से-कम दोनो मे तो इस बारे मे मतभेद नही है, इतना स्पष्ट होना चाहिए। हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन मे से निकलना मेरे लिए कोई मज़ाक की बात नही है। लेकिन जैसे मैं काग्रेस मे से निकला तो काग्रेस की ज्यादा सेवा करने के लिए, उसी तरह अगर मैं सम्मेलन से भी निकला तो सम्मेलन की अर्थात् हिन्दी की ज्यादा सेवा करने के लिए निकलूगा।

जिनको आप मेरे नये विचार कहते हैं, वे सचमुच तो नये नही हैं। लेकिन जब मैं सम्मेलन का प्रथम सभापति हुआ, तब जो कहा था और दुबारा सभापति हुआ तब अधिक स्पष्ट हुआ था, उसी विचार-प्रवाह का मैं अभी स्पष्ट रूप से अमल कर रहा हू, ऐसा कहा जाय। आपका उत्तर आने पर मैं आखिर निर्णय कर लूगा।

आपका,

मो० क० गाधी

—हिन्दी। पंचगनी, १३।६।१९४५।]

५४४. पत्र : जवाहरलाल नेहरू को

[यह पत्र किसी और से बोल कर गांधीजी ने लिखवाया है। केवल 'चि० जवाहरलाल' तथा पत्र का अन्तिम पैरा 'तुम्हारी ..है' एव 'बापू के आशीर्वाद' गाधीजी ने अपने हाथ से लिखा है।—सम्पा०]

मेनर विल सिमला

२५-६-४६

चि० जवाहरलाल,

कस्तूरबा स्मारक ट्रस्ट मे कई नाम हैं, ट्रस्ट बनवाया गया तब तुम्हारा और सरदार का नाम उसमे दाखल करने की इच्छा मैंने प्रकट की थी सब ट्रस्टी राजी थे कि जब तुम बाहिर आओगे तब मैं दोनो के नाम दाखल कर दू तुमको पूछना भूल गया था आज प्रात काल ख्याल आया इसमे आना पसन्द करोगे ? बिल्कुल देहाती औरतो और उनके बच्चो का काम करना है और वह मेरे ढग से इसमे दिलचस्पी ले सको तो मै तुम्हारे देखने के लिए कागजात भेजू यही बात मैंने सरदार को सुनाई है वह विचार कर रहे हैं मैंने कहा है कि इसमे मान की कोई बात नही है काम की ही है

ऐसे ही हिन्दोस्तानी प्रचार का है. अगर आ सकते हो तो उसमें मुझे तुम्हारे नाम की वहुत दरकार है. उस वारे में भी कहो तो देखने कायदा कागजात भेजूं. तुम्हारे सिर पर वहुत काम पड़ा है. इसलिए और बोझ डालने से डरता हूं. लेकिन क्या करूं?

तुमारी गैरहाजिरी यहां सवको चुभती है.

वापु के आशीर्वाद

—हिन्दी। सिमला, २५।६।१९४५। नेहरू संग्रहालय में सुरक्षित पत्रावली से।]

सौजन्य : श्रीमती इन्दिरा गांधी तथा नेहरू संग्रहालय।

५४५. पत्र : पुरुषोत्तमदास टण्डन को

सेवाग्राम १५-७-४५

भाई टण्डन जी,

आपका ता० ११-७-४५ का पत्र मिला. मैंने दो वार पढ़ा. वाद में भाई किशोरलाल को दिया, वे स्वतन्त्र विचारक हैं, आप जानते होंगे. उन्होंने लिखा है, सो भी भेजता हूं. मैं तो इतना ही कहूंगा कि जहां तक हो सका मैं आपके प्रेम के अधीन रहा हूं. अव समय आया है कि वही प्रेम मुझे आपसे वियोग करायेगा. मैं अपनी वात नहीं समझा सका हूं. यही पत्र आप सम्मेलन की स्थायी समिति के सामने रखें. मेरा खयाल है कि सम्मेलन ने हिन्दी की मेरी व्याख्या अपनाई नहीं है. अव तो मेरे विचार इसी दिशा में आगे वढ़े हैं. राष्ट्रभाषा की मेरी व्याख्या में हिन्दी और उर्दू लिपि और दोनों शैली का ज्ञान आता है. ऐसा होने से ही दोनों का समन्वय होने का है, तो हो जायगा. मुझे डर है कि मेरी यह वात सम्मेलन को चुभेगी. इसलिए मेरा इस्तीफा कवूल किया जाय. हिन्दुस्तानी प्रचार का कठिन काम करते हुए मैं हिन्दी की सेवा करूंगा और उर्दू की भी।

आपका,

मो० क० गांधी

—हिन्दी। सेवाग्राम, १५।७।१९४५।]

५४६. पत्र : जवाहरलाल नेहरू को

(मूल हिन्दी)

पुना १-६-४५

चि० जवाहरलाल,

तुमारा खत मिला. मेनन ने ठीक खवर दी है. सरदार ने वह खत पढ़ा है।

तुमने वहुत काम सरहद वगैरा मे किया है.

सरदार १२ तारीख को पुना से नही जा सकेंगे चार हफ्तो मे तो पुना छूट ही नही सकता है. डाक्टर दीनशा को और उनके उपचार को इनसाफ करना है यहा की हवा भी उनके लिए अच्छी है आराम तो ठीकर है उनका दरवार भरा रहता है

वापु के आशीर्वाद

— हिन्दी। पूना, १।९।१९४५। नेहरू संग्रहालय मे सुरक्षित पत्रावली से।]
सौजन्य : श्रीमती इन्दिरा गाधी तथा नेहरू सग्रहालय।

५४७. पत्र : बनारसीदास चतुर्वेदी को

भाई वनारसीदास,

तुम्हारा खत पाकर दु.ख हूआ. लेकिन उस कारण इस्तीफा देना अच्छा नही है. शक्कर इ० के त्याग से ही काम नही चलता है मन पर कावु पाना भिन्न विषय है.

वापु के आशीर्वाद

पुना १६-९-४५

— हिन्दी। पूना, १६।९।१९४५। पत्र की फोटो-नक़ल (जी० एन० २५१७) से]

५४८. पत्र : जवाहरलाल नेहरू को

(मूल हिन्दी)

[यह लम्बा पत्र दूसरे के हाथ का लिखा है। केवल आरम्भ मे 'चि० जवाहर-लाल' तथा अन्त मे 'वापु के आशीर्वाद' गांधी जी के अपने हाथ से लिखा है।—सम्पा०]

पुना ५-१०-४५

चि० जवाहरलाल,

तुमको लिखने का तो कई दिनो से इरादा किया था, लेकिन आज ही उसका अमल कर सकता हू। अग्रेजी मे लिखू या हिन्दुस्तानी मे, यह भी मेरे सामने सवाल रहा था। आखर मैंने हिन्दुस्तानी मे ही लिखने का पसद किया।

पहली वात तो हमारे वीच मे जो वडा मतभेद हुआ है, उसकी है। अगर वह भेद सचमुच है तो लोगो को भी जानना चाहिए। क्योकि उनको अधेरे मे रखने से हमारा स्वराज्य का काम रुकता है।

मैंने कहा है कि 'हिन्द स्वराज' में मैंने लिखा है उस राज्य पद्धति पर मैं विल्कुल कायम हूं। यह सिर्फ कहने की वात नही है, लेकिन जो चीज मैंने १६०८ साल मे लिखी है उसी चीज का सत्य मैंने अनुभव से आज तक पाया है। आखर में मैं एक ही उसे मानने वाला रह जाऊं उसका मुझको जरा सा भी दुःख न होगा। क्योंकि मैं जैसे सत्य पाता हूं उसका मैं साक्षी वन सकता हूं। हिन्द 'स्वराज' मेरे सामने नही है। अच्छा है कि मैं उसी चित्र को आज अपनी भापा में खेंचुं। पीछे वह चित्र १६०८ जैसा ही है या नही, उसकी मुझे दरकार न रहेगी, न तुम्हें रहनी चाहिये। आखर मे तो मैने पहले क्या कहा था, उसे सिद्ध करना नही है, आज मैं क्या कहता हूं वही जानना आवश्यक है। मैं यह मानता हूं कि अगर हिन्दुस्तान को सच्ची आझादी पानी है और हिन्दुस्तान के मार्फत दुनिया को भी, तव आज नही तो कल देहातो में ही रहना होगा—झोपड़ियों में, महलों में नही। कई अरव आदमी शहरो में और महलों मे सुख से और शान्ति से कभी नही रह सकते, न एक दूसरे का खून करके—मायने हिंसा से, न झूठ से—यानी असत्य से। सिवाय इस जोड़ी (यानी सत्य और अहिसा) के मनुष्य जाती का नाश ही है उसमे मुझे जरा भी शक नही है। उस सत्य और अहिसा का दर्शन हम देहातो की सादगी में ही कर सकते हैं। वह सादगी चर्चा में और चर्खा में जो चीज भरी है, उसी पर निर्भर है। मुझे कोई डर नही है कि दुनिया उलटी ओर ही रही दिखती है। यों तो पतंग जव अपने नाश की ओर जाता है तव सवसे ज्यादा चक्कर खाता है और चक्कर खाते-खाते जल जाता है। हो सकता है कि हिन्दोस्तान इस पतगे के चक्कर से न वच सके। मेरा फर्ज है कि आखर दम तक उसमें से उसे और उसके मारफत जगत् को वचाने की कोशिश करूं। मेरे कहने का निचोड़ यह है कि मनुष्य जीवन के लिए जितनी जरुरत की चीज है उस पर निजी कावू रहना ही चाहिए—यदि न रहे तो व्यक्ति वच ही नहीं सकती (सकता) है। आखर से जगत व्यक्तियों का ही वना है। विन्दु नहीं है तो समुद्र नही है। यह तो मैने मोटी वात ही कही—कोई नई वात नही की।

लेकिन 'हिन्दस्वराज' मे भी मैंने यह वात नही की है। आधुनिक शास्त्र की कदर करते हुए पुरानी वात नये लिवास में मुझे वहुत मीठी लगती है। अगर ऐसा समझोगे कि मैं आज की (के) देहातों की वात करता हूं तो मेरी बात नही समझोगे। मेरी (मेरा) देहात आज मेरी कल्पना में ही है। आखर में तो हर एक मनुष्य अपनी कल्पना की दुनिया में ही रहता है। इस काल्पनिक देहात मे देहाती जड़ नहीं होगा—शुद्ध चैतन्य होगा। वह गन्दगी में, अंधेरे में जानवर की जिन्दगी वसर नही करेगा, मरद और औरत दोनों आजादी से रहेगे और सारे

जगत् के साथ मुकावला करने को तैयार रहेगे। वहा न हैजा होगा, न मरकी होगी, न चेचक होंगे। कोई आलस्य मे रह नही सकता है, न कोई ऐश-आराम मे रहेगा। सवको शारीरिक मेहनत करनी होगी। इतनी चीज होते हुए मैं ऐसी वहुत सी चीज का ख्याल कर सकता हू जो वडे पैमाने पर वनेगी। शायद रेलवे भी होगी, डाक-घर तार-घर भी होगे। क्या होगा, क्या नही, उसका मुझे पता नही। न मुझको उसकी कुछ फिकर है। असली वात को मैं कायम कर सकू तो वाकी आने की और रहने की खूवी रहेगी। और असल वात को छोड दू तो सव छोड देता हू।

उस रोज जव हम आखर के दिन वर्किग कमेटी मे वैठे थे तो ऐसा कुछ फैसला हुआ था कि इस चीज को साफ करने के लिए वर्किग कमेटी २-३ दिन के लिए वैठेगी। वैठेगी तो मुझे अच्छा लगेगा, लेकिन न वैठे तव भी मैं चाहता हू कि हम दोनो एक-दूसरे को अच्छी तरह समझ ले। उसके दो सवव है। हमारा सम्वन्ध सिर्फ राजकरण का ही नही है। उससे कई दर्जे गहरा है। उस गहराई का मेरे पास कोई माप नही है। वह सम्वन्ध टूट भी नही सकता। इसलिए मैं चाहूगा कि हम एक दूसरे को राजकारण मे भी भलीभाति समझें। दूसरा कारण यह है कि हम दोनो मे से एक भी अपने को निकम्मा नही समझते हैं। हम दोनो हिन्दुस्तान की आज़ादी के लिए ही जिन्दा रहते हैं और उसकी आज़ादी के लिए हमको मरना भी अच्छा लगेगा। हमे किसी की तारीफ की दरकार नही है। तारीफ हो या गालिया—एक ही चीज है। खिदमत मे उसे कोई जगह ही नही है। अगरचे मैं १२५ वर्ष तक सेवा करते-करते ज़िन्दा रहने की इच्छा करता हू तव भी मैं आखर मे वूढा हू और तुम मुकावले मे जवान हो। इसी कारण मैंने कहा है कि मेरे वारस तुम हो। कम से कम उस वारस को मैं समझ लू और मैं क्या कहू वह वारस भी समझ ले तो अच्छा ही है और मुझे चैन रहेगा।

और एक वात। मैंने तुमको कस्तूरवा ट्रस्ट के वारे मे और हिन्दुस्तानी के वारे मे लिखा था। तुमने सोच कर लिखने का कहा था। मैं पाता हू कि हिन्दुस्तानी सभा मे तो तुम्हारा नाम है ही। नाणावटी ने मुझको याद दिलाया कि तुम्हारे पास और मौलाना के पास वह पहुच गया था और तुमने अपने दस्तखत दे दिये हैं। वह तो सन् १९४२ मे था। वह जमाना गुजर गया। आज हिन्दुस्तानी कहा हैं, उसे जानते हो। उसी दस्तखत पर कायम हो तो मैं उस वारे मे तुमसे काम लेना चाहता हू। दौड-धूप की जरूरत नही रहेगी, लेकिन थोडा काम करने की जरूरत रहेगी।

कस्तुरवा का काम पेंचीला है। ऊपर मैंने जो लिखा है वह अगर तुमको

चुभेगा या चुभता है तो कस्तुरवा स्मारक में भी आकर तुमको चैन नहीं रह सकेगा, यह मैं समझता हूं।

आखर की वात शरत वावू के साथ जो कुछ चिनगारियां फूटी है वह है। इससे मुझे दर्द हुआ है; उसकी जड़ मैं नही समझ सका। तुमने जो कहा है इतना ही है और वाकी कुछ नही रहा है तो मुझे कुछ पूछना नहीं है। लेकिन कुछ समझने जैसा है तो मुझको समझने की दरकार है।

इस सवके वारे में अगर हमें मिलना ही चाहिए तो हमारे मिलने का वक्त निकालना चाहिए।

तुम वहुत काम कर रहे हो, स्वास्थ्य अच्छा रहता होगा। इन्दु ठीक होगी।

वापु के आशीर्वाद

—हिन्दी। पूना, ५।१०।१९४५। नेहरू संग्रहालय में सुरक्षित पत्रावली से]
सौजन्य : श्रीमती इन्दिरा गांधी तथा नेहरू संग्रहालय।

५४९. पत्र : दिनेश सिंह को

पुना, ११-१०-४५

चि० दिनेश,

तुम्हारा खत पाकर राजी हूआ. सव साथ हैं सो अच्छा लगता है. अभ्यास पूरा करो और लोकसेवा पेट भर के करो.

वापू के आशीर्वाद

श्री दिनेशकुमार
कालाकांकर कोठी
लखनऊ (सं० प्रा०)

—हिन्दी। पूना, ११।१०।१९४५। पत्र की फोटो-नक़ल (जी० एन० ७६७६) से]

५५०. पत्र : वनारसीदास चतुर्वेदी को

(पोस्टकार्ड)

[टिप्पणी—पत्र किसी और के द्वारा लिखा गया है। हस्ताक्षर-मात्र गांधी जी के हैं।]

२३-१०-४५ पुना

भाई वनारसीदास,

तुम्हारा पोस्टकार्ड मिला। उसे मैं श्रीमन जी[1] को भेजता हू।

न करो हिन्दी का प्रचार या न करो उर्दू का प्रचार, रोकनेवाले हम कौन हैं? ऐसा प्रयत्न भी करें तो निष्फल ही हो सकता है। हमारा कर्त्तव्य तो दोनो प्रथा का—हिन्दी और उर्दू जहा तक हो सके एक करने का है और यह तो तब ही हो सकता है जब दोनो लिपि और दोनों प्रथा का जाननेवाला एक वर्ग पैदा हो।

राष्ट्रभाषा का तुम क्या अर्थ करते हो वह कुछ समझने मे नही आया है। मेरा अर्थ तो अब स्पष्ट ही है कि वही मनुष्य राष्ट्रभाषा जानता है जो दोनो लिपियो को समझता है और दोनो मे लिख सकता है।

वापु के
आशीर्वाद

श्री वनारसीदास चतुर्वेदी
टीकमगढ (वुन्देलखण्ड)

— हिन्दी। पूना, २३।१०।१९४५। जी० एन० २५१८ फोटो-नकल से]

५५१. पत्र : हीरालाल शर्मा को

[यह पत्र बोल कर दूसरे से लिखाया गया है। हस्ताक्षर बापू जी ने किये हैं।—सम्पा०]

२७-१०-४५, पुना

चि० शर्मा,

तुम्हारा रात्रि को वारह वजे लिखा हुआ पत्र मिला। तुम्हारे भाई चले गये इसका व्यवहार में तो शोक होना ही चाहिए लेकिन पारमार्थिक दृष्टि से अथवा नैसर्गिक दृष्टि से मृत्यु का शोक क्या, जन्म का हर्ष क्या? दोनों की जोडी है और एक के पीछे दूसरा रहता ही है ऐसी दोनो की अविच्छिन्न मित्रता है। इसलिए कम से कम तुम्हारे मे तो इस मृत्यु की ग्लानि होनी नही चाहिये। तुम्हारे सामने धर्म-पालन का एक विशेष कारण उत्पन्न हुआ।

---

१. श्री मन्नारायण अग्रवाल, जो उस समय हिन्दुस्तानी-प्रचार सभा, वर्धा के मन्त्री थे और अब गुजरात के राज्यपाल हैं।

एसेम्बली में जाने का विचार स्वर्गस्थ भाई के कहने से हुआ यह और भी दुःखद बात है।

गाडोदिया जी के बारे में। अगर तुम सब चीजों पर कायम हो तो १, २, ३, ऐसा करके मुझको लिखो, मैं उनके पास भेजने को तैयार हूं और पंच के सामने उन चीजों को रखने की सूचना भी करूंगा। इसमें जो शिकायत तुमने मेरे सामने रखी थी वह सब आनी चाहिये।

दूसरी चीजों का फैसला भले इस बात पर निर्भर रहे। आज तो मेरे मन में शक पैदा हो गया है इतना मुझे कबूल करना होगा।

सरदार का तो अब कुछ नहीं लिख सकता हूं, क्योंकि सरदार और दिनशा जी मुंबई में हैं। १ली तारीख को वापिस आयेंगे।

बड़े भाई के जाने से घर का कारोबार किसको संभालना हुआ। तुम कितने भाई हो?

बापु के आशीर्वाद

—हिन्दी। पूना, २७।१०।१९४५। 'बापू की छाया में मेरे जीवन के सोलह वर्ष' से।]

सौजन्य : श्री हीरालाल शर्मा

५५२. पत्र : जवाहरलाल नेहरू को

(मूल हिन्दी)

पुना
१३-११-४५

चि० जवाहरलाल,

हमारी कल की बात से मुझे तो बड़ा आनंद हुआ। उससे अधिक बात कल तो कर नहीं सकते थे और मेरा ख्याल है कि हम एक ही वक्त मिलकर सब काम पूरा नहीं कर सकेंगे। समय समय पर हमें अवश्य मिलना चाहिए। मैं तो ऐसे बना हूं कि अगर मेरी शक्ति इधर-उधर जाने की रहे तो मैं तुमको ढूंढ़ लूं, एक दो दिन साथ रह लूं, कुछ वार्तालाप कर लूं और भाग जाउं। ऐसी आज मेरी स्थिति नहीं रही है लेकिन ऐसा मैंने किया है इतना समझो. मैं चाहता हूं कि हम एक दूसरे को समझें। ऐसे ही लोग भी हमको समझें। अन्त में ऐसा हो सकता है कि हमारा

मार्ग ही अलग है तो अलग सही। हमारा हृदय तो एक ही रहेगा, क्योकि एक है। कल की वात से मैं यह समझा हू कि हम दोनो मे विचार श्रेणी मे या तो वस्तु समझने मे वडा अन्तर नही है। तुमको किस तरह से समझा हू यह वताना चाहता हू जिससे अगर फरक है तो मुझे वता दोगे।

(१) तुम्हारी दृष्टि से हर एक इन्सान की वौद्धिक, आर्थिक , राजकीय और नैतिक शक्ति कैसे वढे, वही सच्चा प्रश्न है। मेरा भी वही है।

(२) और उसमे भी हरेक इन्सान को ऊचे चढने का एक सा हक और मौका होना चाहिए।

(३) इस दृष्टि से देखते हुए देहात की और शहर की एक ही हालत होनी चाहिए। इसलिए खाना, पीना, रहना, पहनना और रमत-गमत एक ही होनी चाहिए। आज जो यह स्थिति पैदा करने के लिए अपने कपडे, खोराक और मकान अपने आप पैदा करना और वनाना चाहिए। और ऐसे ही अपना पानी या वत्ती भी अपने आप पैदा करना चाहिए।

(४) इन्सान जगल मे रहने के लिए पैदा नही हुआ है, लेकिन समाज मे रहने के लिए पैदा हुआ है। एक पर दूसरा सवारी न कर सके, यह विचार करते हुए पता चलता है कि युनिट एक काल्पनिक देहात या ग्रूप होना चाहिए, जो स्वावलवी रह सके और उस ग्रुप मे एक दूसरे पर अवलवन तो होना ही होगा। इस तरह से सोचने से सारी दुनिया के इन्सानो के सम्वन्ध का नक्शा वन जाता है।

यहा तक अगर मैं ठीक समझा हू तो दूसरा हिस्सा मैं शुरू करूगा। जो खत मैंने तुमको पहले लिखा था उसका अग्रेजी राजकुमारी[1] से करवा लिया था। वह मेरे पास पडा है। इनकी अग्रेजी भी करवा लेता हू और उसे साथ मे ही भेजता हू। अग्रेजी करवाकर मैं दो काम कर लेता हू। एक तो मैं अपना कहना तुमको अग्रेजी मे ज्यादा समझा सकता हू तो समझाऊ और दूसरा मैं तुम्हारी वात पूरी समझा हू कि नही, उसका भी अग्रेजी करने से मुझे ज्यादा पता चलेगा।

इदु को आशीर्वाद

वापु के आशीर्वाद

साथ मे २

—हिन्दी। पूना, १३।११।१९४५। नेहरू सग्रहालय मे सुरक्षित पत्रावली से।]
सौजन्य : श्रीमती इन्दिरा गाघी तथा नेहरू संग्रहालय।

---

१. राजकुमारी अमृत कौर से अभिप्राय है।

५५३. पत्र : जवाहरलाल नेहरू को

(मूल हिन्दी)

कैम्प महिषादल
पो० सोदपुर
२८-१२-४५

चि० जवाहरलाल,

इसके साथ एक पत्र भेज रहा हूं क्योंकि लेखक ने लिखा है कि मैं भेजूं. दक्षिण आफ्रिका में मिला होगा, लेकिन मुझे कुछ ख्याल नहीं है. मैंने तो उसे लिख दिया है कि उसके एड्रेस में वहुत वड़ा दावा किया है. आदमी दीवाना-सा लगता है।

विहार में विद्यार्थियों के सामने तुमने जो कहा, उसे पढ़ने की यहां कुछ फुर्सत मिली; मुझे वहुत अच्छा लगा.

तुम्हें थोड़ा आराम लेने की आवश्यकता है. लिया जाय तो अच्छा होगा.

कम्युनिस्टों के वारे में तुम्हें लिखने को मैंने राजकुमारी से कहा था. आज अखवार में दूसरा किस्सा पाता हूं. कतरन इसके साथ है. यह क्या है? इस पर कुछ प्रकाश डाल सकते हैं?

वापु के आशीर्वाद

—हिन्दी। महिषादल (वंगाल), २८।१२।१९४५। नेहरू संग्रहालय में सुरक्षित पत्रावली से।]

सौजन्य : श्रीमती इन्दिरा गांधी तथा नेहरू संग्रहालय।

५५४. पत्र : अद्वैतकुमार गोस्वामी को

[गांधीजी की ओर से अमृत कौर ने उत्तर दिया है]

सेवाग्राम
वर्धा सी० पी०

१०-८-४६

भाई श्री अद्वैतकुमार गोस्वामी,

आपके दोनों पत्र पू० गांधी जी को मिले. संदेश तो वे कहीं भी नहीं भेजते।

राजा महेन्द्रप्रताप वापिस आ रहे हैं सो अच्छा हुआ। आप लोगो को हर्ष तो होगा ही।

दक्षिण अ० (अफ्रीका) के बारे मे गाधी जी राय है कि वहा हममे से किसी को नही जाना चाहिए। वहा तो जत्था को उतरने ही नही देंगे।

आपकी

अमृत कौर

—हिन्दी। सेवाग्राम (वर्धा), १०।८।१९४६। जी० एन० ८०५ की फोटो-नक़ल से]

५५५. पत्र : हीरालाल शर्मा को

न० दि० १६-१०-४६

चि० शर्म्मा,

तुम्हारा खत मिला मैं यहा २३ तारीख तक हू ऐसा आज तो लगता है. लेकिन ऐसा मानो कि मैं क्षणजीवी हू

वापु के आशीर्वाद

—हिन्दी। नई दिल्ली, १६।१०।१९४६। 'वापू की छाया मे मेरे जीवन के सोलह वर्ष' से।]

सौजन्य : श्री हीरालाल शर्मा

५५६. पत्र : अद्वैतकुमार गोस्वामी को

सेवाग्राम १ •११•४६

भाई अद्वितीय कुमार,

मेरा अभिप्राय है कि कोई भी काग्रेसमैन व्यक्तिगत रूप मे कुछ भी कर सकता है जो काग्रेस की दर्शित नीति के विरोध में न हो. याद रक्खो मैं काग्रेस रजीस्टर पर नहि हू।

वापु के

आशीर्वाद

—हिन्दी। सेवाग्राम (वर्धा), १३।११।१९४६। श्री अद्वैतकुमार गोस्वामी, वृन्दावन को लिखे पत्र की फोटो-नक़ल (जी० एन० ८०४) से]

५५७. पत्र : दिनेशसिंह को

श्रीरामपुर २०-१२-४६

चि० दिनेश,

नवखोली कष्ट निवारण के लिए तुमारे तरफ से भाइ फिरोज गांधी ने रु० १००० का चेक भेजा है सो भी मीला. भाई फिरोज को खबर भेज दीजीये.

तुमको लीखने का मुझे याद नहीं रहेगा. मुझे यहां से मुक्त पाओ तो लिखो और मिलो. सब ठीक चल रहा होगा.

बापु के
आशीर्वाद

राजासाहब कालाकांकर
कालाकांकर हाउस
परतापगढ (सं० प्रां०)

[हिन्दी। श्रीरामपुर (बंगाल), २०।१२।१९४६। पत्र की फोटो-नक़ल (जी० एन० ८६७७) से]

५५८. पत्र : जवाहरलाल नेहरू को

[नीचे गांधी जी का वह पत्र दिया जा रहा है, जो उन्होंने जवाहरलाल को उस दिन लिखा था, जिस दिन उन्होंने उपवास तोड़ा था। उनका उपवास कई दिन चला। उपवास उन्होंने दिल्ली में साम्प्रदायिक झगड़ों के लिए अपना दुःख जाहिर करने के लिए किया था।

दिल्ली में जो घटनाएं हो रही थीं, उनसे और गांधी जी के उपवास से जवाहरलाल जी बहुत बेचैन थे, यहां तक कि एक-दो दिन उन्होंने कुछ भी नहीं खाया। यह बाक़ायदा उपवास नहीं था, बल्कि घटनाओं के प्रति उनकी निजी प्रतिक्रिया थी, जिसे कोई नहीं जानता था। गांधीजी को किसी तरह पता चल गया और इसलिए उन्होंने जवाहरलालजी को सलाह दी कि वह उसे खत्म कर दें।

यह आखिरी खत था जो उन्होंने जवाहरलालजी को लिखा था; बारह दिन बाद, ३० जनवरी १९४८ को एक हत्यारे के हाथों उनकी मौत हो गई।—सम्पा०]

चि० जवाहरलाल,

उपवास छोड़ो. साथ में पंजाब के स्पीकर के तार की नकल भेजता हूं. सैयद

हुसन ने मैंने तुमसे कहा वही कहा था बहुत वर्ष जीयो और हिन्द के जवाहर बने रहो.

१८-१-४८

बापु के आशीर्वाद

— हिन्दी। दिल्ली, १८।१।१९४८। 'कुछ पुरानी चिट्ठियां' से।]

सौजन्य : श्रीमती इन्दिरा गांधी।

तिथि-विहीन चिट्ठियां

५५९. पत्र : जवाहरलाल नेहरू को

(मूल हिन्दी)

[इस कार्ड पर कोई तिथि नहीं है। उद्गमस्थान के डाकखाने की मुहर स्पष्ट नहीं है। जनवरी ३ जान पड़ता है परन्तु सन बिल्कुल अस्पष्ट है। इलाहाबाद की डिलीवरी की मुहर मे ५ तारीख है, सुबह ८-३० परन्तु उसमें भी सन स्पष्ट नहीं है। मा० शु० ६ तिथि कार्ड के अन्त मे गाधी जी ने दी है, इससे तो जनवरी का ही अनुमान होता है। १९२४ में गांधी जी ने 'पाठ्यपुस्तको की जब्ती' पर लिखा था। पर यह लेख जुलाई २५ में छपा था। सम्भवतः यह जनवरी २५ में लिखा गया होगा।—सम्पा०]

भाई जवाहरलाल

प्रो० रामदास गौड के पाठ्य पुस्तको के लीये मैंने कुछ य० इ० मे लीखा है. इस लीये अलग उत्तर नहि देता—अ० सौ० कमला की तबीयत अच्छी होगी मैं पंजाब जा रहा हू

मोहनदास गाधी के
आशीर्वाद

मा० शु० ६

— हिन्दी। तिथि अज्ञात। नेहरू संग्रहालय मे सुरक्षित पत्रावली से।]

सौजन्य : श्रीमती इन्दिरा गाधी तथा नेहरू संग्रहालय।

५६०. पत्र : जवाहरलाल नेहरू को

सेगाव

प्रिय जवाहरलाल,

तुम्हारे खत मुझे अच्छे लगते है। उनसे जो जानकारी मुझे होती है वह

मुझे अन्यथा नहीं मिलती। इस्लाम-पक्षी आन्दोलन का मुझे कुछ भी पता नहीं था। उस पर मुझे आश्चर्य नही होता। मुलाकात पर तुमने मेरा बयान देखा होगा।

मेरा तरीका तुम्हें मालूम है। मुझे इन मुलाकातों से वल मिलता है। यह देखना तुम्हारा और दूसरे साथियों का काम है कि देश को, मैं जो कुछ करता हूं उसका, ठीक-ठीक अर्थ प्राप्त हो। मैं चाहता हूं कि तुम राजाजी के वारे में कोई चिन्ता नहीं करोगे। वह विल्कुल ठीक है। फिर भी मैं चाहूंगा कि तुम अपनी शंकाएं उन पर प्रकट कर दो। मैं १५ तारीख की शाम को शान्ति-निकेतन के लिए और उसके वाद १६ तारीख को मलिकन्दा के लिए रवाना हो रहा हूं।

सस्नेह

बापू

—अंग्रेजी। तिथि-विहीन। नेहरू संग्रहालय में सुरक्षित पत्रावली से।]
सौजन्य : श्रीमती इन्दिरा गांधी तथा नेहरू संग्रहालय।

५६१. पत्र : जवाहरलाल नेहरू को

(मूल हिन्दी)

[जिस कागज की पीठ पर पेंसिल से यह पत्र बापू जी ने लिखा है वह श्री एन० एल० वर्मा, डेण्टल सर्जन ७।९० कनाट सर्कस, नई दिल्ली का २७।३।१९४२ का विल है, जिसमें 'ब्लेसिंग' (आशीर्वाद) की रकम चार्ज की गई है। इससे जान पड़ता है कि इसके १-२ दिन वाद ही यह पत्र लिखा गया होगा। पत्र में 'आफ़र' का भी जिक्र है जो सर स्टैफर्ड क्रिप्स का 'आफर' जान पड़ता है। सर क्रिप्स मार्च १९४२ में यहां आये थे। इससे अनुमानतः यह पत्र मार्च १९४२ का जान पड़ता है।—सम्पा०]

मालीश के समय लिखा

चि० जवाहरलाल,

खुरशेद बहन बहूत दुखी है. उसे लगता है उसके प्रति तुम्हारा दिल सुख गया है. उसे बुलाओ, प्यार करो. तुम्हें मालूम है, तुमको पूजती है.

आज दो बजे जागा. तुम्हारा और राजा जी का ही ख्याल रहा. मेरी राय निश्चित है कि हम इस 'आफर' का स्वीकार नहीं कर सकते हैं. उसमें मुलक

का नाश है. अगर तुम्हारी भी यही राय है तो राजाजी से वात करो और आखरी निर्णय कर लो अगर तुम्हारी राय राजा जी की सी है तो सोचने जैसा रहता है.

वापु के आशीर्वाद

— हिन्दी। नेहरू सग्रहालय में सुरक्षित पत्रावली से।]
सौजन्य : श्रीमती इन्दिरा गांधी तथा नेहरू सग्रहालय।

५६२. पत्र : जवाहरलाल नेहरू को

मेरे प्यारे जवाहरलाल,

तुम्हारा पत्र मिलने पर मैंने तुम्हे प्रकाशन स्थगित करने की सलाह देते हुए तार किया है। देखो, नवाव मु० इ० खा क्या कहते हैं। इन्हे इस वात से चोट पहुची है कि तुम पत्र-व्यवहार प्रकाशित करना चाहते हो। इस स्थिति मे सवसे अच्छा यही होगा कि जवतक मैं इ० से मिल नही लेता तवतक प्रकाशन पर तुम्हे जोर नही देना चाहिए। उनके मुझे लिखने का भी यही अर्थ है। यदि पत्र-व्यवहार छापने से विरोधभाव वढ़ता है तो उसे छापना निरर्थक है। क्या तुम नही सोचते कि प्रतीक्षा करना ज्यादा बुद्धिमत्तापूर्ण होगा ?

प्रेम

वापू

— अंग्रेजी। नेहरू संग्रहालय मे सुरक्षित पत्रावली से।]
सौजन्य : श्रीमती इन्दिरा गांधी तथा नेहरू संग्रहालय।

५६३. पत्र : जवाहरलाल नेहरू को

मेरे प्यारे जवाहरलाल,

जे० (जिन्ना ?) से अपनी वार्ताओ के विषय मे मैं उद्विग्न होता जा रहा हू। क्या तुम मामले मे शीघ्रता कर रहे हो ? मैं अपनी कुछ कार्रवाइया उसी के लिए रोके हुए हू।

मुझे आशा है कि इन्दिरा के विषय मे खुशखवरी का क्रम जारी होगा।

प्रेम

वापू

— अंग्रेजी। नेहरू संग्रहालय मे सुरक्षित पत्रावली से।]
सौजन्य : श्रीमती इन्दिरा गाधी तथा नेहरू सग्रहालय।

५६४. पत्र : जवाहरलाल नेहरू को

मेरे प्यारे जवाहरलाल,

तुम्हारा पत्र। तनख्वाहों के विपय में तुम्हारा वक्तव्य मुझे पसन्द आया। मेरी सुविधा की बात छोड़ दें तो भी मैं समझता हूं कि कार्य-समिति की बैठकों के लिए वर्धा सबसे अच्छी और सबसे शान्तिपूर्ण जगह है।

नरीमन से मेरा निरन्तर पत्रव्यवहार जारी है। उसका पत्र अविवेक का एक अद्भुत नमूना है। मैंने जो अन्तिम दो पत्र उसे लिखे हैं उन्हे देखना। म० (महादेव) उनकी प्रतियां तुम्हारे पास भेजेगा। यदि वह मेरा प्रस्ताव स्वीकार नही करता, तो मैं अपना बयान प्रकाशित करूंगा। उसमें मैं उससे कहना चाहता हूं कि तुम्हें कार्यसमिति और उसके बीच हुए पूरे पत्रव्यवहार को प्रकाशित करने में कोई आपत्ति नही है। तुम्हें भी एक वक्तव्य देना होगा। यदि मेरा वक्तव्य देना अनिवार्य हो जाता है तो तुम्हारा वक्तव्य मेरे वक्तव्य के वाद आयेगा। तुमने हिन्दी मे जो निबन्ध लिखा है उसके बारे में लिखने के लिए मैं समय निकालने की कोशिश कर रहा हूं।

प्रेम

बापू

—अंग्रेजी। नेहरू संग्रहालय में सुरक्षित पत्रावली से।]
सौजन्य : श्रीमती इन्दिरा गांधी तथा नेहरू संग्रहालय।

५६५. पत्र : बनारसीदास चतुर्वेदी को

सत्याग्रह आश्रम
साबरमती

भाई बनारसीदास,

आपका खत मिला है. अंग्रेजी लेख छप जायगा. यंग इन्डिया के वाचक वर्ग सिर्फ़ अंग्रेजी हि पढ लेते हैं. अंग्रेजो के लिये और जिनको अंग्रेजी हि पढ़ने का महावरा हो गया है उन लोगों के लिये यं० इ० छपता है. उसमें हिंदी लेख छाप कर न मैं हिंदी की उन्नति कर सकता हूं, न मैं उसमें लिखा हुआ विषय को कुछ जोर दे सकता. यं० इ० का ध्येय को समझना चाहिये.

फिजी से जो तार आया है उसका मायना ठीक हि है. क्योंकि गिरमीट बंद

करने की योजना हो रही थी और वाइसराय साहेव ने तो स्पष्टतया कह भी दिया था कि थोडे समय मे गिरमीटीयो का बंधन छूट जायगा. यदि मेरा फिजी का तार का वैसा हि अर्थ है तो भी आपका पत्र छापने मे कोइ हानि नही है. उसको मैं एक मार्मिक वचन बाण समझता हू

तोताराम जी कहा है? उनके हस्ताक्षर से लिखा हुआ लेख ज्यादे जोर दे सकेगा. भले हिंदी मे हि हो उसका तर्जुमा कर के मैं असल के साथ छपवा लूगा लेख विशेपणो से रहित सिर्फ हकीकत, दृष्टात व दलील से हि भुषित होना चाहिये

आपना

मोहनदास गाधी

(टिप्पणी—पत्र लिखा किसी और का है। हस्ताक्षर गाधी जी के हैं।)

—हिन्दी। सत्याग्रह आश्रम, साबरमती। जी० एन० २५५४ की फोटो-नकल से]

५६६. पत्र : मदनमोहन मालवीयजी को

भाई साहब,

आपके तार का उत्तर मैंने दीया था अब मुझे आपकी सम्मति जामीया फड के लीये चाहीये

विदेसी कपडो के बहिष्कार की बात आपने उठाइ है परतु उसी के साथ आपने मीलो के कपडे की बात भी कही है. मैं आपको कीस तरह समझा दु कि जब तक मीलवाले हमारे साथ कुछ सधि न करें और उनके दामो पर हम अकुश न रख सके तबतक मीलो की मदद निरर्थक ही नहि परतु हानिकर है उसमें जैसे पूर्वकाल मे बगाल मे हुआ इसी तरह अब भी होगा और लोगो का विश्वास बहिष्कार की शक्यता पर से उठ जायगा.

यदी मेरी भापा या मेरे अक्षर समजने मे कठिनाइ है तो आप मुझे कह देंगे मैं अग्रेजी मे विवस होकर लीखुगा मुझको तो यही टूटी-फूटी राष्ट्रभापा ज्यादा प्रिय है

आपका

मोहनदास

सावरमती
भा० कृ० १३
—हिन्दी। सावरमती, सन-संवत् अज्ञात, सम्भवतः १९३०-३२। पत्र की फोटो-नक़ल (जी० एन० ८६८२) से]

५६७. पत्र : अवधेशदत्त को

चि० अवधेश,

वहुत दिनों के वाद तुम्हारा पत्र आया. क्या अव तक निश्चित कार्य नही लिया है? भययुक्त होने के लिये हमारे सवसे प्रेम करना और सत्य के राह पर रहना. पुण्यात्मा वनना सरल है. यह कहने का मतलव यह है कि सवको ऐसे अपने को मनवाना प्रिय है और कोई अपने को पापी मनवाना नही चाहता है इसलिये पापी वनना कठीन है ऐसा कहा जाय।

वापु के आशीर्वाद

—हिन्दी। अवधेशदत्त को लिखे पत्र की फोटो-नक़ल (जी० एन० ३२१४) से]

५६८. पत्र : राजकिशोरी परशुराम को

तुम्हारे साथ वहोत वातें करने का मेरा दिल था परंतु मुझे समय न मीला. परसराम के कहने पर मुझे पता मीला कि तुम्हारा चित्त आश्रम में शांत नहि रहता है। तुमको आश्रम में वलात्कार से रखने का परसराम का इरादा नहि है. यदि तुमारा दिल किसी और जगह रहना है तो तुम रह सकती है. परसराम को आश्रम से हटने के लीये मजवूर नहि करना चाहिये. परसराम तुमारी आजीविका के लीये वद्ध है तुमारे ही साथ रहने के लीये नहि. यदि तुमारा दिल जहां वह रहे वहां रहने का न हो तो पत्नि पति के पीछे जाती है पति पत्नि के पीछे नहि जा सकता है क्योंकि पति आजीविका या आत्मोन्नति के कारण और जगह जाने के लीये कोई वार मजवूर हो जाता है।

तुमारी और लड़कों की तवीयत अच्छी होगी. तुमारे सव ख्याल मुझे वगैर संकोच के लीखो.

वापु के
आशीर्वाद

वर्धा—सोमवार

—हिन्दी। वर्धा, तिथि अज्ञात। पत्र की फोटो-नक़ल (जी० एन० ७४६७ तथा सी० डब्ल्यू० ४९५३) से]

५६९. पत्र : राजकिशोरी परशुराम को

चि० राजकिशोरी,

तुमारा खत मीला तुमको किसी जगह शिक्षा के लीये भेजना तो मुझको वहोत प्रिय है परतु इसका यह अर्थ है कि तुमने और प्रजोत्पत्ति का मोह छोड दीया है, ब्रह्मचर्य का पालन करने का निश्चय कीया है, सेवा मे हि अपना जीवन व्यतीत करने की प्रतिज्ञा की है, तुमारे माता पिता और ससुर सास का आश्रय छोड दीया है. उनकी आज्ञा ली है? स्वाश्रयी वनने मे नोकर इ० की सेवा का त्याग करना पडता है. मेरा अवलोकन यह है की अब तक तुमने स्वादेंद्रि का सयम नहि कीया है और न तुमने दूसरे भोगो का त्याग कीया है इन सब बातो को सोच कर मुझे निश्चयपूर्वक लीखो. दरम्यान आश्रम मे होते हुए भी तो वहोत अभ्यास हो सकता है सो करो।

वापु के

वुधवार आशीर्वाद

—हिन्दी। पत्र की फोटो-नक़ल (जी० एन० ७४०७९ तथा सी० डब्ल्यू० ४९५४) से]

५७०. पत्र : चन्द्र त्यागी को

मगनवाडी, वर्धा

१६—

चि० चन्द्र त्यागी,

राजकिशोरी आ रही है। कोई ऐसी वात नही है लेकिन वह भी थोडी चिन्तित रहती थी। ९९ टेम्परेचर हो जाता है। यो भी वहा आने का इरादा रखती थी। एक मास की छुट्टी लेकर जाती है। ऐसी अच्छी लडकी है कि सबको प्रिय लगती है। सादी, भोली, निर्मल हम सबको लगती है। मेरे सामने प्रतिज्ञा करके जाती है कि मुझको वस्तन वस्तन खत लिखती रहेगी—इस प्रतिज्ञा पालन मे उसको प्रोत्साहन दिया जाय। कैसा चलता है मझको लिखा करो।

वापु के आशीर्वाद

(टिप्पणी—पत्र दूसरे के हाथ का लिखा है। हस्ताक्षर मात्र गाधी जी के हैं।—सम्पादक

—हिन्दी। वर्ष, मास, सन-सम्वत् अज्ञात। जी० एन० ६६३४ की फोटो-नक़ल से]

५७१. पत्र : अम्बिकाप्रसाद को

भाई अम्विका प्रसाद जी,

आपका पत्र मीला है. हिंदु मुस्लीम बारे में कुछ भी मार्गदर्शक बात कहने की योग्यता मेरे में अब नहि है. इस वारे में मेरा मौन ही मेरी सेवा है ऐसा मुझे प्रतीत होता है. इसलीये आप मुझे क्षमा प्रदान करें.

आपका

मोहनदास गांधी

आ० गु० २

—हिन्दी। स्थान-तिथि अज्ञात। जी० एन० ७४८३ की फोटो-नक़ल से]

५७२. पत्र : चन्द्र त्यागी को

भाई त्यागी जी,

वलवीर और वायुमंडल के वारे में पं० देव शर्मा जी से पूछो. नारीयल न मीले तो तिल का या अलसी का प्रयोग कीया जाय.

मेरा स्वास्थ अच्छा रहता है.

बापु के आशीर्वाद

प्रयाग

मौनवार

—हिन्दी। इलाहाबाद। पत्र की फोटो-नक़ल (जी० एन० ६०९६) से]

: पाँच :

निवेदन

[उत्तर प्रदेश-वासियों के तार-पत्र : गांधीजी के नाम]

१. रेवरेण्ड वेल्स ब्रांच का पत्र : गांधीजी के नाम

रेवरेण्ड एम० वेल्स ब्राच
मैनेजर
लखनऊ क्रिश्चियन स्कूल आफ कामर्स
लखनऊ, भारत
२ मई, १९१९

श्री मो० क० गाधी
वम्बई

प्रिय श्री गांधी,

प्रेम और सत्य मे मनुष्य को सामाजिक तथा राजनीतिक दृष्टि से विल्कुल वदल देने की कितनी शक्ति है, इस विषय मे आपके वक्तव्य मैंने अत्यन्त दिलचस्पी के साथ पढ़े। यह शिक्षा वाइविल की शिक्षा से इतनी अधिक मिलती-जुलती है और ईसामसीह के जीवन तथा व्यक्तित्व मे इस शिक्षा की इतनी पूर्ण अभिव्यक्ति हुई है कि मुझे आपको यह पत्र लिखकर निम्नलिखित प्रश्न पूछने ही पड रहे हैं :—

१. आपके विचार से भारत के भावी विकास मे ईसाइयत (यह आवश्यक नहीं कि इसका पाश्चात्य रूप ही) का क्या हाथ रहेगा ?

२. क्या भारत की आधुनिक जागृति ईसाई शिक्षा का परिणाम है या यह किसी और धर्म से उद्भूत हुई है ?

३. (१) शिक्षक (२) अवतार तथा (३) ससार के त्राता के रूप मे ईसामसीह के प्रति आपकी व्यक्तिगत भावना क्या है ?

मैं ये प्रश्न आपसे इसलिए नही पूछ रहा हू कि इन्हें प्रकाशित करूगा। मैं तो सिर्फ अपनी इस जिज्ञासा को शान्त करना चाहता हू कि इनके सम्बन्ध मे सचमुच आपका दृष्टिकोण क्या है। मैं भारत को प्यार करता हू और भारत के लोगो को प्यार करता हू और मेरा यह व्यक्तिगत विचार है कि भारत एक दिन दुनिया को यह दिखलायेगा कि ईसाइयत का प्रवर्तन जिस रूप मे हमारे त्राता ईसामसीह ने किया उस असली रूप मे उसका क्या अर्थ है। मुझे लगता है कि समय की मांग

यह है कि उनके प्रच्छन्न अनुयायी, जिनमें से हजारों भारत में भी हैं, सामने आकर उनके प्रति अपनी आस्था की घोषणा करें।

आपका एक ईसाई वन्धु
एम० वेल्स ब्रांच

—अंग्रेजी २।५।१९१९। एस० एन० ६६०८ की फोटो-नकल से]

२. मोतीलाल नेहरू का पत्र : गांधीजी के नाम

चेस्टनट लाज, अल्मोड़ा
३ जून, १९२१

प्रिय महात्मा जी,

मैंने, अखबारों को दिये अली-भाइयों[1] के वयान के वारे में, परसों आपको लिखा था। ऐसा मैंने ३१ मई के 'इण्डिपेण्डेण्ट'[2] में छपे एक संक्षिप्त विवरण के आधार पर किया था। अभी-कभी मैंने पूरा बयान और उससे सम्वन्धित भारत-सरकार की घोषणा को देखा और चेम्सफोर्ड क्लव में दिये गये वाइसराय के भाषण को भी पढ़ा है। वड़े दुःख के साथ कहूंगा कि इन सबको पढ़कर मुझे कोई तसल्ली नही हुई है।

अलीभाइयों का वयान अपने-आप में, और अगर उसे आगे-पीछे की घटनाओं के हवाले से न पढ़ा जाय तो, एक काफ़ी मर्दानगी की चीज है। अगर तैश में आकर उन्होने कुछ ऐसी वातें कह दी हैं, जिनसे उन्हें अब यह लगता है कि शायद वे हिंसा को भड़कायें, तो दुःख प्रकट करके उन्होंने सम्मान के उसी मार्ग को अपनाया है, जो उन जैसे जनता के सेवक को अपनाना चाहिए था। आगे के लिए जो वचन उन्होने दिया है उसे भी मैं उचित मान लेने को तैयार होता, वशर्ते कि यह वचन अपने उन साथियों को दिया गया होता, जो उनके जैसे न होकर हिंसा

---

१. मौलाना शौकत अली एवं मुहम्मद अली, जो उस काल में ब्रिटिश सरकार के विरुद्ध खिलाफत आन्दोलन में गांधीजी के प्रधान सहयोगी थे किन्तु जिनपर हिंसात्मक होने का आरोप लगाया गया था।

२. पं० मोतीलाल एवं पं० जवाहरलाल द्वारा प्रकाशित अंग्रेजी दैनिक पत्र जो इलाहावाद से प्रकाशित होता था।

मे किसी भी दशा मे विश्वास नही रखते। किन्तु इस प्रकार के सामान्य शब्द जैसे "सार्वजनिक भरोसा और वादा उन लोगो के प्रति, जिनके लिए वह आवश्यक हो", आज की स्थिति मे किसी को सशय मे नही रख सकते कि यह "भरोसा और वादा" किसी विशेष जमात ने मांगा है और किसके कहने पर यह दिया गया है। वाइसराय के भाषण ने अब उसे बिल्कुल स्पष्ट कर दिया है और हमारे सामने यह बात पक्की शकल मे आती है कि असहयोग-आन्दोलन के नेता ने भारत-सरकार से सुलह कर ली है और अली-भाइयो से खुलेआम माफी और वचन दिलवाकर उन पर मुकदमा चलाना रुकवा दिया है।

मामले को इस दृष्टि से देखते हुए, और मैं नही जानता कि और किस दृष्टि से इसे देखा जा सकता है, पूरे आन्दोलन के विषय मे विचार करने योग्य बडे गम्भीर प्रश्न उठ खडे होते है। वस्तुत मुझे तो लगता है कि असहयोग के सारे सिद्धान्त का ही त्याग कर दिया गया है।

मैं उन लोगो मे नही हू जो सरकार के नाम से ही बिदकते हैं। न मैं उन लोगो मे से हू, जो समझते हैं कि अन्त मे सरकार से समझौता करना ही अकेला ऐसा साधन है जिससे हम अपने ऊपर अत्याचारो को खतम कर सकते हैं और स्वराज्य की स्थापना कर सकते हैं। मेरा भरोसा तो उस बात मे है, जो आप बराबर सिखाते रहे हैं, अर्थात् स्वराज्य प्राप्त करना एकदम हमारे ही हाथ मे है। साथ ही मैं इस बात की सम्भावना को अलग नही करता, और जहा तक मैं जानता हू आप भी नही करते कि उचित स्थितियो मे सरकार से समझौता हो सकता है। किन्तु ऐसे समझौते का सम्बन्ध केवल सिद्धान्तो से हो सकता है, न कि व्यक्तियो की सुविधा और सुरक्षा से। साथ काम करने वालो मे आप आदमी-आदमी के बीच भेद नही कर सकते और छोटे-से-छोटा आदमी भी नेताओ से वही सुरक्षा पाने का अधिकारी है जो बडे-से-बडा आदमी। हमारे सैकडो नही तो बीसियो लोग अली-भाइयो से कही कम कडी बात कहने पर खुशी-खुशी जेल गये है। इनमे से कम-से-कम कुछ इसी तरह से माफी मागकर या वचन देकर आसानी से बचाये जा सकते थे। किन्तु ऐसा करने की सलाह देने की किसी को नही सूझी, बल्कि नेताओ ने और सभी असहयोगी समाचारपत्रो ने उनके कदम की तारीफ की। एक उदाहरण, जो विशेषत: औरो की अपेक्षा कही ज़ोर के साथ इस समय मेरे मन मे उठ रहा है, वह हमीद अहमद का है जिसे हाल ही मे आजीवन कालेपानी और जायदाद की ज़ब्ती की सजा मिली है। मैं उस आदमी को निजी तौर पर जानता हू। वह बडा ही सीधा-सादा है, बुद्धि मे औसत से भी कम है और कुछ

यह है कि उनके प्रच्छन्न अनुयायी, जिनमें से हजारों भारत में भी हैं, सामने आकर उनके प्रति अपनी आस्था की घोषणा करें।

आपका एक ईसाई वन्धु
एम० वेल्स ब्रांच

—अंग्रेजी २१५।१९१९। एस० एन० ६६०८ की फोटो-नकल से]

२. मोतीलाल नेहरू का पत्र : गांधीजी के नाम

चेस्टनट लाज, अलमोड़ा
३ जून, १९२१

प्रिय महात्मा जी,

मैंने, अखबारों को दिये अली-भाइयों[1] के वयान के वारे में, परसों आपको लिखा था। ऐसा मैंने ३१ मई के 'इण्डिपेण्डेण्ट'[2] में छपे एक संक्षिप्त विवरण के आधार पर किया था। अभी-कभी मैंने पूरा वयान और उससे सम्वन्धित भारत-सरकार की घोषणा को देखा और चेम्सफोर्ड क्लव में दिये गये वाइसराय के भाषण को भी पढ़ा है। वड़े दुःख के साथ कहूंगा कि इन सबको पढ़कर मुझे कोई तसल्ली नहीं हुई है।

अलीभाइयों का वयान अपने-आप में, और अगर उसे आगे-पीछे की घटनाओं के हवाले से न पढ़ा जाय तो, एक काफ़ी मर्दानगी की चीज है। अगर तैश में आकर उन्होंने कुछ ऐसी वातें कह दी हैं, जिनसे उन्हें अव यह लगता है कि शायद वे हिंसा को भड़कायें, तो दुःख प्रकट करके उन्होंने सम्मान के उसी मार्ग को अपनाया है, जो उन जैसे जनता के सेवक को अपनाना चाहिए था। आगे के लिए जो वचन उन्होंने दिया है उसे भी मैं उचित मान लेने को तैयार होता, वशर्ते कि यह वचन अपने उन साथियों को दिया गया होता, जो उनके जैसे न होकर हिंसा

---

१. मौलाना शौकत अली एवं मुहम्मद अली, जो उस काल में ब्रिटिश सरकार के विरुद्ध खिलाफत आन्दोलन में गांधीजी के प्रधान सहयोगी थे किन्तु जिनपर हिंसात्मक होने का आरोप लगाया गया था।

२. पं० मोतीलाल एवं पं० जवाहरलाल द्वारा प्रकाशित अंग्रेजी दैनिक पत्र जो इलाहावाद से प्रकाशित होता था।

हूं कि मुझे उनकी विशेष मैत्री प्राप्त है। जो वात मेरे मन पर कुछ समय से भार डाल रही है, वह यह है कि हम लोग, जो अपने वहुत-से कार्यकर्त्ताओ के जेल जाने और दूसरे कष्टो के भुगतने के लिए सीधे-सीधे जिम्मेद.र हैं, स्वय उन कष्टो से सर्वथा वचे हुए हैं। उदाहरण के लिए सरकार मुझे तकलीफ और दिमागी परीशानी पहुचाने के लिए इससे ज्यादा सजा का कोई तरीका नही निकाल सकती थी कि मेरे लिखे पर्चे वाटने पर वह निरपराध लडको को जेल मे डाले। मैं समझता हूं कि अव वह समय आ गया है जव नेताओ को कष्ट भोगने के अवसरो का स्वागत करना चाहिए और वचाव के फुसलावो से विल्कुल इन्कार कर देना चाहिए। मामले को इस दृष्टि से देखते हुए मैंने अली-भाइयो के काम पर आपत्ति की है। निजी रूप से मैं उन्हे प्यार करता हू।

अव मैं विल्कुल थक गया हू। आपसे जल्दी मिल पाता तो अच्छा होता। वात करने के लिए वहुत-कुछ है। यहा रहते हुए मुझे चार दिन हो गये हैं और स्वास्थ्य मे कुछ सुधार हुआ है, किन्तु दमा विल्कुल गया नही है और दुर्वलता तो इतनी कभी नही जान पडती थी। १४ तारीख की वैठक के लिए वम्वई पहुच पाऊगा, इसमे वडा सन्देह है।

आपका,
मोतीलाल नेहरू

—अंग्रेजी। अल्मोड़ा, ३।६।१९२१]

३. रामानन्द संन्यासी का पत्र : गांधीजी के नाम

वलदेव आश्रम
खुर्जा (सयुक्त प्रान्त)
१ अप्रैल, १६२४

श्रीमान् महात्माजी,

आपका २८ ता० का पत्र मिला। मुझे खेद है कि पहले पत्र मे मैंने आप को कोई व्यौरा नही लिखा।

(१) १६२१ के घटना के वाद भरती विल्कुल वन्द हो गई थी। व्यापार मन्दी पर था। और इग्लैण्ड तथा भारत दोनो ही जगह भारत की चाय काफी जमा थी। इस समय वाजार के भाव चढने सेऔर जमा चाय के खप जाने से चाय-

अच्छा वक्ता भी नहीं है। किन्तु उसने दूसरों के भाषण सुन और पढ़ रक्खे थे और अपने ढंग पर उनकी नकल करने की कोशिश करता था। ऐसा करने में वह शायद निशाना चूक गया। किन्तु मुझे विश्वास है कि वस्तुतः हिंसा का प्रचार करने का कभी उसका इरादा नहीं था। क्या कोई कारण है कि इस आदमी का बचाव न किया जाय? मुझे पता लगा है कि मुहम्मद अली ने ३० मई की अपनी बम्बई की वक्तृता में उसकी बड़ी तारीफ की है। मैं नहीं कह सकता कि हमीद अहमद को एक ऐसे आदमी की इस प्रशंसा से क्या दिलासा मिलेगा. जिसने वैसी ही परि-स्थितियों में माफ़ी मांगकर और आश्वासन देकर अपने को बचा लिया है। फिर न जाने कितने और लोग हैं जो जेलों में सड़ रहे हैं, जिन्होंने कोई अपराध नहीं किया और कितने ही औरों को इसी के लिए छांट दिया गया है। क्या हमारे लिए इतना ही काफी होगा कि हम सुरक्षित स्थिति में रहते हुए इन लोगों को अपनी शुभ कामनाएं भेजते रहें ?

वाइसराय ने अपने भाषण में यह बात साफ कर दी है कि आपने उनसे जो कई मुलाकातें की, उनका एक ही पक्का नतीजा हुआ है और वह है अली-भाइयों का माफ़ी मांगना और वचन देना। आपने अपनी बाद की वक्तृता में यह बिल्कुल साफ़ कर दिया है कि हमारा आन्दोलन बेरोक चलते रहना चाहिए। ऐसा जान पड़ता है कि इस प्रकार की कोई समस्या तय नहीं हुई जिसमें सिद्धान्त की बात हो, सिवाय इसके कि हिंसा को कोई उत्तेजना न मिले और वह ऐसी बात थी जिसके लिए दोनों में से किसी ओर कोई समझौते की जरूरत नहीं थी। मैं यह नहीं कहता कि इस स्थिति में सरकार से बातचीत करने की कोई जरूरत नहीं थी, यद्यपि इस दृष्टिकोण के समर्थन में भी बहुत-कुछ कहा जा सकता है। जब यह मालूम हो गया था कि खेल तो आखिर खेला जायगा, तो आप और लार्ड रीडिंग-जैसे सम्मान्य प्रतिपक्षी के लिए यह सर्वथा उचित होता कि खेल के कायदे तय करते, जिससे किसी तरफ से बेईमानी न हो। ये कायदे निश्चय ही खेल में सभी हिस्सा लेनेवालों पर लागू होते, न कि कुछ इने-गिने प्रिय लोगों पर। सबसे बड़ी आवश्यकता इस बात की थी कि कौन-कौन से हथियार काम में लाये जायं, इस पर समझौता हो जाता। कुछ स्थानीय सरकारें कहने को तो यह कह देती हैं कि वे प्रचार का जवाब प्रचार से दे रही हैं, किन्तु वस्तुतः वे बुरे-से-बुरे ढंग पर दमन कर रही हैं। इसी तरह के बहुत से और मुद्दे, मेरी राय में, बातचीत के उचित मुद्दे बन सकते थे, चाहे खास मुद्दे पर कोई समझौता न हुआ होता।

मैं आशा करता हूं कि आप मुझे गलत न समझेंगे। अली-भाइयों के बलिदान की प्रशंसा में मैं किसी से पीछे न रहूंगा, और इसे मैं अपना बड़ा सौभाग्य मानता

हूं कि मुझे उनकी विशेष मैत्री प्राप्त है। जो बात मेरे मन पर कुछ समय से भार डाल रही है, वह यह है कि हम लोग, जो अपने बहुत-से कार्यकर्त्ताओ के जेल जाने और दूसरे कष्टो के भुगतने के लिए सीधे-सीधे जिम्मेद.र हैं, स्वय उन कष्टो से सर्वथा बचे हुए हैं। उदाहरण के लिए सरकार मुझे तकलीफ और दिमागी परीशानी पहुचाने के लिए इससे ज्यादा सजा का कोई तरीका नही निकाल सकती थी कि मेरे लिखे पर्चे बाटने पर वह निरपराध लडको को जेल मे डाले। मैं समझता हू कि अब वह समय आ गया है जब नेताओ को कष्ट भोगने के अवसरो का स्वागत करना चाहिए और बचाव के फुसलावो से बिल्कुल इन्कार कर देना चाहिए। मामले को इस दृष्टि से देखते हुए मैंने अली-भाइयो के काम पर आपत्ति की है। निजी रूप से मैं उन्हे प्यार करता हू।

अब मैं बिल्कुल थक गया हू। आपसे जल्दी मिल पाता तो अच्छा होता। बात करने के लिए बहुत-कुछ है। यहा रहते हुए मुझे चार दिन हो गये हैं और स्वास्थ्य मे कुछ सुधार हुआ है, किन्तु दमा बिल्कुल गया नही है और दुर्बलता तो इतनी कभी नही जान पडती थी। १४ तारीख की बैठक के लिए बम्बई पहुच पाऊगा, इसमे बडा सन्देह है।

आपका,
मोतीलाल नेहरू

—अंग्रेजी। अल्मोडा, ३।६।१९२१]

३. रामानन्द संन्यासी का पत्र : गांधीजी के नाम

बलदेव आश्रम
खुर्जा (सयुक्त प्रान्त)
१ अप्रैल, १९२४

श्रीमान् महात्माजी,

आपका २८ ता० का पत्र मिला। मुझे खेद है कि पहले पत्र मे मैंने आप को कोई ब्यौरा नही लिखा।

(१) १९२१ के घटना के बाद भरती बिल्कुल बन्द हो गई थी। व्यापार मन्दी पर था। और इग्लैण्ड तथा भारत दोनो ही जगह भारत की चाय काफी जमा थी। इस समय बाजार के भाव चढने से और जमा चाय के खप जाने से चाय-

वागान के मालिकों को और ज्यादा मजदूरों की जरूरत महसूस हुई ताकि १६२१ मे छोड़े हुए वगानों में फिर चाय की खेती की जा सके। इस समय भरती पिछले नवम्बर में शुरू हुई थी। मुझे सूचना अपने एक दोस्त से मिली थी। वे जिला गुड़गांव (पंजाव) में डिस्ट्रिक्ट इंजीनियर हैं। उसके वाद मुझे संयुक्त प्रान्त के लगभग छः जिलों से और पंजाव के दो जिलों से सूचना मिली। मैंने जनवरी में समाचारपत्रों के नाम एक वक्तव्य जारी किया था जिसमें मैंने लोगों को भरती के परिणामों से आगाह किया था। वागानों के आंग्ल-भारतीय एजेण्टों ने सावधानी से उन जिलों को छोड़ दिया था जिनसे वे १६२१ की घटना से पहले मजदूर भरती किया करते थे।

(२) उपर्युक्त विवरण में आपके दूसरे और तीसरे प्रश्नों के उत्तर भी आ जाते है।

(३) मैं चाय के वगानों में यही जांच-पड़ताल करना चाहता हूं कि वहां इस समय वास्तव में कैसी स्थिति है, क्या मजदूरों की नैतिक और आर्थिक स्थिति में पहले से सुधार हुआ है। और यदि किसी भी दिशा में कोई भी सुधार नही हुआ हो तो क्या उन क्षेत्रों में मजदूरों का जाना वन्द करना देश के सामान्य हित में नही होगा, ताकि और अधिक लोगों का चारित्रिक और नैतिक पतन न हो?

(४) जहां तक मुझे पता लगा है भरती किये जानेवाले मजदूरों को काम की कोई शर्ते नही वताई गईं। लेकिन मुख्यतः उनकी शर्तें इस प्रकार थी:

(१) पति और पत्नी दोनों को ३० रु० मासिक मजदूरी (२) मकान, ईंधन और डाक्टरी देखभाल मुफ्त। (३) यदि नये मजदूर को जगह पसन्द न हो तो रेल का वापसी टिकट मुफ्त। लेकिन आप स्वयं अन्दाज लगा सकते है कि यदि एक वार कोई चाय वगान के जिलों में मजदूर के रूप में चला जाता है तो उसके लिए वहां से लौटना कितना कठिन होता है। मैं आपके इस सुझाव को विल्कुल स्वीकार करता हूं कि वहां जाने से पहले असम कांग्रेस कमेटी की मार्फत जाँच-पड़ताल करा ली जाय, और मैं तदनुसार कमेटी को एक पत्र लिख रहा हूं जिसकी नकल इस पत्र के साथ संलग्न है। कुछ दिन पहले मुझे विसवां कांग्रेस कमेटी का एक पत्र मिला था। मैं इसके साथ वह मूल पत्र भी भेज रहा हूं।

हृदय से आपका
रामानन्द संन्यासी

—अंग्रेजी। खुर्जा, १।४।१९२४। सावरमती संग्रहालय में सुरक्षित पत्रावली से]

४. मोतीलाल नेहरू का पत्र : गांधीजी के नाम

'सुनीता'
रिज रोड, मलावार हिल, बम्बई
२५ जुलाई, १९२४

प्रिय महात्माजी,

मैंने मौलाना मुहम्मद अली को हाल ही मे उनके इलाहावाद आने पर लिखित उत्तर पाने की दृष्टि से एक प्रश्न-सूची दी थी। उसकी एक प्रति मैं पत्र के साथ भेज रहा हू। मौलाना हमारे घर पर ही ठहरे थे और प्रश्न-सूची दिये जाने के वाद वह पूरा दिन इलाहाबाद मे रुके थे। जाते समय मैंने उनको प्रश्नो की याद दिलाई थी। इस पर उन्होंने इतना ही कहा कि कुछ कुशकाए पैदा हो गई हैं। उन्होंने अविक जानकारी के लिए मुझे मौलवी रफी अहमद से मिलने को कहा। मौलवी साहव भी वही मौजूद थे। उन्होंने उसी वक्त कहा कि उनको कोई जानकारी नही। लेकिन मौलाना ने मजाकिया लहजे मे कुछ कहकर वात टाल दी और चले गये। इसके वाद मैंने जवाहरलाल से पूछा कि क्या उसे कुछ अन्दाज है कि मौलाना साहव जवाव देंगे भी या नही। उसने कहा कि उसे कुछ अन्दाज नहीं है। यह ठीक है कि मौलाना साहव को इन या अन्य किसी भी प्रश्न का उत्तर देने पर कोई आपत्ति नही है, लेकिन इन प्रश्नो के स्पष्ट उत्तर न मिलने पर मुझे अपने ही निष्कर्ष निकालने की छूट है, फिर मेरे निष्कर्ष भले ही सही न हो।

मैं आपको वतला दू कि तीसरे और चौथे प्रश्न मे जिन तथ्यो का उल्लेख है मैंने विश्वस्त प्रमाण के आवार पर उनके विल्कुल सही होने की तसल्ली कर ली है। इनके सम्वन्व मे आपके विचार जानने की भी मेरी वडी इच्छा है। यदि शेष प्रश्नो के वारे मे भी आपके विचार मुझे मालूम हो जाय तो मुझे आगे की कार्रवाई के वारे मे फैसला करने मे वडी मदद मिलेगी।

मैं वम्वई मे चार या पाँच दिन रुकूगा। कृपया लिखें कि आप कवतक वम्वई पहुच रहे हैं?

सादर,

हृदय से आपका,
मोतीलाल नेहरू

भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस के अध्यक्ष, मौलाना मुहम्मद अली को पण्डित मोती-लाल नेहरू द्वारा उत्तर पाने की दृष्टि से दिये गये प्रश्न।[1]

(१) कांग्रेस-द्वारा दिल्ली और कोकोनाडा में पास किये गये प्रस्तावों को देखते हुए क्या अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटी-द्वारा अहमदाबाद की पिछली बैठक में पास किये प्रस्तावों का आप यह अर्थ लगाते हैं कि अपरिवर्तनवादी लोग कौंसिल-प्रवेश के विरुद्ध देश में सक्रिय रूप से प्रचार कर सकते हैं ?

(२) यदि हां, तो क्या आप मानते हैं कि स्वराज्यवादी भी इस प्रकार की काट के लिए प्रचार करने को स्वतन्त्र हैं ?

(३) क्या यह सच है कि आपने और मौलाना शौकत अली ने कौंसिल-प्रवेश के विरुद्ध सक्रियरूप से प्रचार शुरू भी कर दिया है, और आपने लखनऊ में अपने प्रभाव का इस्तेमाल करते हुए विधान परिषदों के स्वराज्यवादी सदस्यों को परिषदों से बाहर आ जाने के लिए राजी करने की कोशिश भी की थी ?

(४) क्या यह सच है कि आपने, मौलाना शौकत अली ने या दोनों ने ही स्वराज्यवादियों और अन्य कांग्रेसियों के सामने समस्या को इस रूप में पेश किया था कि मुख्य प्रश्न तो यह है कि वे महात्मा गांधी को नेता स्वीकार करते हैं या पण्डित मोतीलाल नेहरू को ?

(५) क्या आप कांग्रेस के आगामी अधिवेशन में सदस्यों का बहुमत निम्न-लिखित बातों के पक्ष में लाने के लिए प्रयत्नशील हैं ?

(१) आमतौर पर ऐसे हर प्रस्ताव के पक्ष में जो महात्मा गांधी के सामने पेश करें ?—

(२) और खासतौर पर—

(क) कौंसिल-प्रवेश के बारे में दिल्ली और कोकोनाडा अधिवेशनों-द्वारा स्वीकृत समझौते के प्रस्तावों को रद्द कराने के पक्ष में ?

(ख) अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटी द्वारा अहमदाबाद में पास किये गये हाथ-कताई सम्बन्धी प्रस्ताव में सम्मिलित दण्ड की व्यवस्था को पुनः लागू करने, और

(ग) अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटी और विभिन्न प्रान्तीय जिला तथा तहसील कांग्रेस कमेटियों की सदस्यता से सभी स्वराज्यवादियों को अलग करने के पक्ष में ?

---

१. गांधीजी ने प्रश्न-सूची के प्रश्न १, २, ५, ६ और ७ वें प्रश्नों के उत्तर दिये थे। [देखिए पत्र : मोतीलाल नेहरू को, २६।७।१९२४]

६ यदि उपर्युक्त प्रश्नो के किसी भी भाग का उत्तर आप 'हा' में देते हैं तो क्या आप इस बात से सहमत हैं कि स्वराज्यवादियों को इसकी काट के लिए प्रचार करने की पूरी छूट है ?

७ (क) क्या आप इन बातो से सहमत हैं कि अखिल भारतीय काग्रेस कमेटी और विभिन्न प्रान्तीय जिला तथा तहसील कमेटिया हाला कि मोटे तौर पर काग्रेस की कार्यकारिणी समितिया मानी जाती हैं पर वे वास्तव मे विचार-विमर्श करनेवाली ऐसी समितिया ही हैं जिनमे सैकडो सदस्य होते हैं और फिर प्रत्येक समिति की एक अपनी परिषद होती है, जो ठीक कार्यकारिणी समिति के रूप मे कार्य करती है ?

(ख) यदि हा, तो क्या आपका मशा स्वराज्यवादियो को केवल केन्द्रीय और प्रान्तीय सगठनो को शुद्ध कार्यकारिणी समिति से अलग करने का ही है या ऊपर बताई गई ज्यादा बडी विमर्शकारी समितियो से भी उनको अलग किया जायगा ?

मौलाना मुहम्मद अली को इलाहाबाद मे १८-७-१९२४ को दस्ती दिया गया।

मो० ला० ने०

—टाइप की हुई अंग्रेजी प्रति (एस० एन० ९००२) की फोटो-नकल से। २५।७।१९२४। सं० गां० वा० खण्ड २४, पृष्ठ ६०७-८-९ मे भी]

५. मोतीलाल नेहरू का पत्र : गांधीजी के नाम

"सुनीता"
रिज रोड, मलाबार हिल, बम्बई
२८ जुलाई, १९२४

प्रिय महात्मा जी,

आपका पत्र मिला। मौलाना मुहम्मद अली के सामने रक्खे गये प्रश्नो मे से कुछ प्रश्नो के उत्तर देने के लिए धन्यवाद।

प्रश्न-सूची की एक प्रति के साथ अपना पिछला पत्र भेज चुकने के बाद, मैंने समाचारपत्रो मे देखा कि आप सिर-दर्द और बुखार मे जब-तब पीडित रहते हैं और आपका वजन भी काफी घट गया है। ऐसी हालत मे मैंने प्रश्न भेजकर आपको

परेशान किया, इसके लिए क्षमा-प्रार्थी हूं। यदि पत्र लिखने से पहले मैंने ऐसे समाचार पढ़े होते तो मैं कदापि वैसा न करता।

मैं अब आपके बारे में काफी चिन्तित हूं। ऐसी हालत में सबसे पहला काम यही हो जाता है कि आप तुरन्त सारा काम बन्द कर दें और पूर्णतया विश्राम करें परन्तु दुर्भाग्य की बात तो यह है कि आप ऐसा नही करेंगे। सभी महान व्यक्तियों की अपनी कुछ कमजोरियां होती हैं और कभी-कभी वे कमजोरियां साधारण व्यक्तियों में पाई जाने वाली कमजोरियों की अपेक्षा बड़ी मात्रा में होती है। अपनी सेहत की ओर ध्यान न देने की कमजोरी ऐसे लोगों में विशेष तौर पर पाई जाती हैं। आप मानते हैं कि आपने जिस काम का बीड़ा उठाया है उसे सम्पन्न करने लायक शक्ति आप के शरीर में नही है, फिर भी आप सिर्फ वही एक काम नही करेंगे जिसे कि हर आदमी और खुद आप भी जानते-समझते है कि आपके स्वास्थ्यलाभ के लिए अत्यावश्यक है। इसे मैं राष्ट्रीय विपत्ति के अतिरिक्त अन्य कोई संज्ञा नही दे सकता।

मैं आपके साथ पूरी स्पष्टवादिता से काम लूंगा चाहे आप नाराज ही क्यों न हो जायँ। मैं आप से बिल्कुल खरी बात कह देना चाहता हूं कि आप इस समय जो काम कर रहे है वह अभी कुछ दिनों तक रुका रह सकता है और यदि वह बिल्कुल किया ही न जाय और यदि उसके बदले एक या दो महीने में भी हमें अपना गांधी पूर्णतः स्वस्थ होकर मिल जाय तो राष्ट्र की जरा भी हानि नही होगी। मेरा बस चले तो मैं कुछ समय के लिए भारत से आपका सारा सम्पर्क तुड़वा दूं, बिल्कुल पूरी तरह से और आप को ऐसी लम्बी समुद्री-यात्रा पर भेज दूं जहां आपको छः सप्ताह तक कही भी भूमि का दर्शन ही न होने पाये। आप कम-से-कम लंका की यात्रा तो कर ही सकते है। वहां आपका सारा वातावरण बदल जायगा। आपकी अनुपस्थिति में आपकी सारी चिट्ठी-पत्रियां आश्रम में ही रख ली जायं। लेकिन इस लहजे में लिखते जाने से कोई लाभ नही। मुझे तो लगता है कि मैं आपसे अपनी बात मनवा ही नही सकता और हम सिवाय इसके कुछ कर ही नही सकते कि हाथ पर हाथ धर कर देखते रहें कि भविष्य क्या दिखाता-दिखलाता है। लेकिन मैंने एक बात अपने तईं तय कर ली है। वह यह कि आप इस समय जो आत्मघाती काम कर रहे हैं मैं उसमें सहभागी नही बनूंगा। जबतक आप काफी स्वास्थ्य-लाभ नही कर लेते तबतक और अधिक पत्र-व्यवहार या बातचीत करके आपकी परीशानी नही बढ़ाऊंगा। भले ही काम कितना ही फौरी क्यों न हो।

आपका पोस्टकार्ड[1] मुझे शायद इलाहाबाद पहुंचने पर मिलेगा। मै परसों

---

१. उपलब्ध नहीं है।

रात वापस जा रहा हू। यदि मैं समझता कि मेरे मिलने का कुछ उपयोग होगा तो मैं एक दिन के लिए साबरमती भी पहुंच जाता लेकिन मुझे अपनी यात्रा से कोई लाभ नही दिखाई देता और इसलिए मैंने उसका विचार छोड दिया है। फिर भी मैं आपसे एक प्रश्न पूछता हू। यदि मैं आप से कहू कि आप इलाहाबाद से पाच मील की दूरी पर गगा तट पर स्थित मेरे एक मित्र की वाटिका मे आकर चन्द सप्ताह रहें तो क्या आप मुझे पागल करार देंगे? वाटिका पूरी तरह से मेरे ही हाथ मे है। आपके स्वास्थ्य-लाभ के लिए समुद्री यात्रा का एक यही विकल्प मुझे सूझ रहा है।

हृदय से आपका,
मोतीलाल नेहरू

—हस्तलिखित अंग्रेजी प्रति (एस० एन० ९००४) की फोटो-नकल से, २८।७। १९२४]

६. मोतीलाल नेहरू का पत्र : गांधीजी के नाम

कलकत्ता
२१ जुलाई, १९२५

प्रिय महात्मा जी,

स्वराज्य-दल के महान नेता देशबन्धु चित्तरजन दास की असामयिक मृत्यु से होने वाली हानि पर, जिसकी कि पूर्ति नही हो सकती, आपने जो सहायता उसे उदारतापूर्वक दी है उसके लिए स्वराज्यदल आपका अत्यन्त ऋणी है। और अब तो आपने अपने १९ जुलाई के पत्र मे जिस शिष्ट देन का जिक्र किया है, उसके द्वारा उस ऋण को और दुगुना कर दिया है। मैं समझता हू कि आपके इस ऋण को अदा करने का यही एकमात्र रास्ता है कि आपकी उस देन को विनय-पूर्वक स्वीकार कर लू और आपकी सहायता से उस स्थिति का मुकाबला, फरीदपुर वाले देशबन्धु के आखिरी ऐलान को सामने रखकर, करने का यत्न करू जो कि लार्ड बरकनहेड के भाषण से उत्पन्न हुई है।

ऐसा जान पडता है कि लार्ड बरकनहेड ने देशबन्धु दास के सम्मानपूर्ण सहयोग को दुरदुरा दिया है, और यह बात स्पष्ट कर दी है कि हमारी इस आजादी के सग्राम में हमे अभी और कितने ही अनावश्यक विघ्नो और बहुतेरे गलत खबरें

पानेवाले विरोधियों का सामना करना बाकी है। इसलिए इस मौके पर हमारा यही स्पष्ट कर्त्तव्य है कि हम अपने लिए निश्चित मार्ग पर आगे बढ़ते चले जायं और इस गैर-जिम्मेदारी और गुस्ताख हुकूमत को खासी कारगर चुनौती देने के लिए देश को तैयार करें। फरीदपुरवाले उस भाषण के शब्दों में हमारी लड़ाई जारी रहेगी, पर होगी वह स्वच्छ-शुद्ध। हम इस बात को न भूलेंगे कि जब निपटारे का समय आवेगा और जो आये बिना रह नहीं सकता, हम सन्धि-परिषद में उद्धत बनकर नहीं बल्कि समुचित नम्रता के साथ प्रवेश करेंगे जिससे कि लोग कहें कि विफलता के दिनों की अपेक्षा सफलता के समय में हमने अधिक बड़प्पन दिखाया। अब आपने महासभा की सारी संयुक्त शक्ति हमारे हाथ में देकर देशबन्धु के उस सन्देश को पूरा करने का अवसर दे दिया है। ऐसे मंगलाचरण को देख कर हमें इसके परिणाम के विषय में कोई सन्देह नहीं रह सकता अर्थात् वही जो कि प्रायः हर देश और हर समय मे ऐसे मौको पर हुआ है—पशु-बल पर न्याय और स्वत्व की विजय।

जिस ठहराव के बन्धनों से आपने स्वराज्य-दल को उदारता-पूर्वक मुक्त कर दिया है उसके सम्बन्ध में मैं दो शब्द कहना चाहता हूं। आप जानते ही हैं कि देशबन्धु और मैं दोनों यह नहीं चाहते थे कि इस साल के भीतर वह बदला जाय। हम चाहते थे कि इसकी परीक्षा के लिए आपको पूरा और अच्छा मौका दिया जाय और हम खुद भी इसे हर तरह से सफल बनाने के लिए आपको सहायता देना चाहते थे। परन्तु अस्वास्थ्य तथा दूसरे पहले से निश्चित जरूरी कामों ने हम दोनों को उतनी सहायता न करने दी जितनी कि हमने चाही थी, पर हां, मैं आपकी इस बात से पूर्णतः सहमत हूं कि इन हाल की घटनाओं के कारण ऐसी नई स्थिति उत्पन्न हो गई है कि इस हालत में महासभा अपने को मुख्यतः राजनीतिक संस्था घोषित कर तुरन्त स्थिति के अनुकूल बना ले। इसलिए मैं आपकी इस देन का स्वागत करता हूं। पर इसका यह अर्थ नहीं है कि महासभा रचनात्मक कार्यक्रम को किसी भी तरह से छोड़ दे। हमारी तमाम कोशिशें बेकार होंगी यदि उनके पीछे देश की सुसंगठित शक्ति न होगी।

अब हम धारासभाओं के अन्दर तथा बाहर देश में अपना काम करने के लिए पूरे विश्वास के साथ आगे बढ़ेंगे और यदि देश की संगठित शक्ति को लेकर लड़ने का मौका किसी समय आया, तो मुझे आपको यह यकीन दिलाने की आवश्यकता नहीं है कि स्वराज्य-दल उस कार्य में आपको हृदय से मदद देगा।

आपका स्नेहांकित

मोतीलाल नेहरू

—अंग्रेजी। कलकत्ता, २१।७।१९२५। य० इ०। हि० न० जी०, २३।७।
१९२५]

७. मोतीलालजी का तार : गांधीजी के नाम

इलाहाबाद
१६-८-१६२६

महात्मा गाधी
आश्रम साबरमती

घनश्यामदास बिडला के कार्यकर्त्ता कह रहे हैं कि आप बनारस-गोरखपुर कमिश्नरी से उनकी उम्मीदवारी का समर्थन करते हैं, जबकि वहा से श्रीप्रकाश काग्रेस उम्मीदवार के रूप मे नामाकित है और कार्य समिति इसकी पुष्टि भी कर चुकी है। कृपया खण्डन करने का अधिकार दीजिए।

मोतीलाल नेहरू

—अंग्रेजी। इलाहाबाद, १९।८।१९२६। नेहरू सग्रहालय मे सुरक्षित अखिल भारतीय काग्रेस समिति की पत्रावली से]
सौजन्य : नेहरू संग्रहालय तथा कांग्रेस महासमिति।

८. (बाबा) राघवदास का तार : गांधीजी के नाम

गोरखपुर २३-६-१६२६

महात्मा गाधी
साबरमती, अहमदाबाद

रघुपति सहाय के भाषण के अनुसार गोरखपुर की जनता जानना चाहती कि क्या आपने पच्चीस हजार रुपये चुनाव के लिए मजूर किये हैं?

राघवदास

—अंग्रेजी। गोरखपुर, २३।९।१९२६। साबरमती संग्रहालय मे सुरक्षित पत्रावली से]

९. चन्द्र त्यागी का पत्र : गांधीजी के नाम

२१।३।२७

प्यारे बापू,

अंग्रेजी दफ्तरों की तरह गुरुकुल के दफ्तर में भी बीस रुपये से अधिक लेनेवाले से एक आने के टिकट पर दस्तखत लेते है. न समझने से मैंने इस पर अमल नहीं किया. क्या यह ठीक है?

आपका

चन्द

(टिप्पणी : उत्तर में गांधी जी ने लिखा है :

"आज्ञा लेकर टीकट न देने में कोई हर्ज नहि है. अविनय न होना चाहिये.)"

—हिन्दी। २१।३।१९२७। जी० एन० ६६२९ तथा सी० डबल्यू ४२७७ की फोटो-नकल से]

१०. मोतीलाल नेहरू का पत्र : गांधीजी के नाम

११ जुलाई, १९२८

प्रिय महात्मा जी,

आखिरकार अब मैं यह कह सकता हूं कि कमेटी[1] की रिपोर्ट के बारे में एक प्रकार की सहमति हो पाई है। न तो यह पक्की है, न खरी ही, किन्तु कुछ हो गया है, जिसका समर्थन हम सर्व-दल-सम्मेलन और सामान्यत: देश में कर सकते है। अन्तिम अवधि में जो कार्रवाइयां हो रही हैं, उनकी नकल भेज रहा हूं, जिससे आपको मालूम हो सकेगा कि किस तरह से हम लोगों ने बहस के मुद्दों को निबटाया है। सभी सदस्य अपने-अपने घर चले गये हैं और जवाहर तथा मुझे रिपोर्ट तैयार करने का काम सौंप गये हैं और अब हम उन पर जुटे हैं।

आपने समाचारपत्रों में देखा होगा कि कनाडियन डेलीगेशन की सदस्यता से मैंने अपना स्तीफा भेज दिया है, क्योंकि मैंने महसूस किया कि सर्वदल-सम्मेलन

---

१. सर्वदल-सम्मेलन द्वारा भारतीय संविधान का ढाँचा तैयार करने के लिए नियुक्त समिति जिसके अध्यक्ष मोतीलाल जी थे, और जिसे इसी कारण नेहरू कमिटी भी कहा जाता था।

के द्वारा हमारी रिपोर्ट स्वीकार किये जाने की जो भी सम्भावना है वह मेरे देश से बाहर रहने से कम हो जायगी।

अब ताजपोशी[1] का सवाल आता है। मेरे मन मे यह बात साफ है कि आज के नायक वल्लभभाई हैं और उनकी सेवाओ की प्रशसा के लिए हम कम-से-कम जो कर सकते हैं, वह यह है कि ताज उन्ही को दें। वह राज़ी न हो तो, मेरी समझ मे, परिस्थिति को देखते हुए, दूसरा सबसे अच्छा चुनाव जवाहर का होगा। यह ठीक है कि उसने हमारे अनेक नाजुकमिजाज लोगो को अपनी स्पष्टवादिता से डरा दिया है। किन्तु अब समय आ गया है कि ज्यादा फुर्ती रखनेवाले और दृढ कार्य-कर्त्ताओ को देश के राजनीतिक कामो को अपने ढग से चलाने का अवसर मिलना चाहिए। मैं मानता हू कि इस दर्जे मे और उस दर्जे मे जिसमे कि आप और मैं हू, अन्तर की बातें हैं किन्तु कोई कारण नही कि अपने विचारो को हम उन पर लादते रहें। हमारी पीढी तो अब तेजी से समाप्त हो रही है। जल्दी या देर से लडाई को जवाहर-जैसे लोग ही चालू रख सकेंगे। जितनी जल्दी शुरू करें उतना ही अच्छा है।

जहा तक मेरी बात है, मैं महसूस करता हू कि अपने मे जो भरोसा मुझे रहा है, उसे मैं बहुत-कुछ खो चुका हू और मेरी शक्ति प्राय समाप्त हो गई है। महत्व ताज का उतना नही होता, जितना ताज के पीछे की शक्ति का होता है, और वह शक्ति जिस पर मैं भरोसा कर सकता हू, मुझे नही दिखाई देती। बेशक आपकी बात दूसरी है। आपके ज़ोर देने पर मैंने अपने विचार आपके सामने रख दिये हैं। फैसला करना आपके हाथ मे है।

आपका,

मोतीलाल नेहरू

—अंग्रेजी। ११।७।१९२८]

सौजन्य : श्रीमती इन्दिरा गांधी

११. मोतीलाल नेहरू का पत्र : गांधीजी के नाम

आनन्दभवन, इलाहाबाद

१९ जुलाई, १९२८

प्रिय महात्मा जी,

साथ का पत्र-व्यवहार अपने-आप मे स्पष्ट है। जवाहरलाल कमला और

---

१. कांग्रेस की अध्यक्षता से अभिप्राय है।

इन्दु का प्रवन्ध करने मसूरी गया है, किन्तु सेनगुप्त[1] के नाम मेरे पत्र की प्रतिलिपि से आपको यह सव पता लगेगा कि उसे कुछ न वोलने का कडा हुक्म है। सेनगुप्त का आपसे किया गया हठ कि आप जवाहर से कहे कि वह अलग हो जाय, मुझे पसन्द है। मेरा खयाल है कि ऐसा करने से रोकने के लिए उसे काफ़ी समझाना होगा।

मैं कमेटी की रिपोर्ट तैयार करने में जुटा हुआ हूं। मेरे लिए जवाहर लम्बे-चौड़े नोट छोड़ गया है और जव मैं रिपोर्ट लिखता हूं तो कदम-कदम पर ऐसे मुद्दे उठते है जो न उसके दिमाग में आये थे न मेरे। यह कमेटी के निर्णयों की असावधानीपूर्वक लिखी हुई भाषा के कारण है। वे निर्णय लम्बी वैठकों के अन्त में लिखे गये थे, जवकि प्रत्येक आदमी इतना थका हुआ था कि भापा की पर्वा नही कर सकता था। मुझे वार-वार सदस्यों से पूछना पड़ता है (जो सभी अपने-अपने घर जा चुके है), जिससे उनका अभिप्राय ठीक तरह जान सकूं, या ज्यादा सही यह कहना होगा कि जिससे उनसे अपना अभिप्राय मनवा सकूं, जैसा कि वे अव तक विना किसी हिचकिचाहट के करते आये हैं। मैं अपनी अन्तिम पूछ-ताछ के उत्तरों की प्रतीक्षा मे हूं और जैसे ही वे मिल जायंगे, रिपोर्ट का मस्विदा सदस्यों के पास भेज दिया जायगा।

वारडोली में या उसके आस-पास जो घटनाएं हो रही है उन्हें मैं चिन्ता के साथ देख रहा हूं। किन्तु फिलहाल समझ नहीं पा रहा हूं कि मै उनके लिए किस प्रकार अपने को उपयोगी वना सकता हूं।

साथ के पत्र-व्यवहार पर और उन दूसरी खवरों पर, जो आपको मिली हों, गौर करके, 'ताज' के वारे में अपना फैसला तार से भेजने की कृपा कीजिए।

आपका,
मोतीलाल नेहरू

—अंग्रेजी। इलाहावाद, १९।७।१९२८]
[सौजन्य : श्रीमती इन्दिरा गांधी

१२. राजा महेन्द्रप्रताप का पत्र : गांधीजी के नाम

[राजा महेन्द्रप्रताप एक वड़े भारी देशभक्त हैं। इन भले मानस ने निर्वासित रहना ही पसन्द कर लिया है। इन्होंने वृन्दावन की अपनी सुन्दर जागीर शिक्षा-

१. जे० एम० सेनगुप्त, वंगाल के तत्कालीन एक प्रसिद्ध लोकनायक।

कार्य के लिए समर्पित कर दी है। वृन्दावन का प्रेम-महाविद्यालय, जो आजकल आचार्य जुगलकिशोर जी की अध्यक्षता मे चल रहा है, इन्हीं की सृष्टि है। राजा साहब का अवसर मेरे साथ पत्र-व्यवहार रहा है। पर उन पत्रों को मैंने प्रकाशित नहीं किया है। परन्तु अभी-अभी उनका जो पत्र मिला है, उसे रोकने को मेरा हृदय तैयार नहीं है। पत्र यो है।—मो० क० गांधी]

अहिंसा क्या है ?

मैं अपने को अहिंसा का सच्चा अनुयायी मानता हू। मगर अपने पक्ष को स्पष्ट करने के लिए इस शब्द की व्याख्या कर देना जरूरी है। जब मैं यह कहता हू और जोर देकर कहता हू कि कई लोग, जो अपने आप को इस पवित्र शब्द का पुजारी मानते हैं, इसका भाव तनिक भी नही समझे हैं, तब तो इसकी व्याख्या कर देना और भी जरूरी हो पड़ता है।

अहिंसा का अर्थ, जैसा मैं समझता हू, यही है कि मन, वचन और कर्म से किसी के दिल या शरीर को चोट न पहुचाई जाय। फिर भी इस सिद्धान्त के लिए इतना ही काफी नही है। अहिंसा के अनुयायी को उन सभी परिस्थितियो को बदलना पडता है, जिनमे हिंसा होती हो, या उसका होना सम्भव हो। जब कोई आदमी किसी की हिंसा को सह लेता है, या उसमे सहायता देता है, तब मैं उसके कार्य को अहिंसा के बदले बुरी-से-बुरी हिंसा कहता हू।

आज भारत मे ऐसे बहुत-से लोग हैं, जो अहिंसा के नाम पर सुन्दर-सुन्दर व्याख्यान दे डालते हैं, मगर अंग्रेजो की हिंसा का अन्त करने के लिए कुछ नही करते। मैं कहता हू कि ऐसे सभी व्यक्ति उस अपराध को कराने तथा उसे सहायता पहुचाने के अपराधी है, जिसे अंग्रेज भारत मे भूखो, निर्बलो और असहायो पर किया करते हैं।]

इस बात से कोई इन्कार नही कर सकता कि हमारे महान् नेता गाधीजी मे भारतीय राष्ट्र की सेवा करने की आन्तरिक अभिलाषा है। फिर भी मुझे भय है कि बिना किसी जोशीले और सक्रिय कार्यक्रम के समर्थन के सिर्फ उन्ही के ढग मे काम करने से लोग सुखी नही हो सकते।

मैं गाधीजी के खादी-आन्दोलन की बडी सराहना करता तथा उसका हृदय से समर्थन करता हू। हमारे जनसमाज की आर्थिक दशा मे वह किसी अच्छी हद तक सुधार करे या न करे—क्योकि इस समय समाज मे कई नई-नई शक्तिया काम कर रही हैं—, यह तो हर हालत मे मानना ही पडेगा कि मानसशास्त्र की दृष्टि मे खादी-आन्दोलन का विचार प्रशमनीय है। वह लोगो को सादगी की दिशा बतलाता और उनमे एक हद तक एकता की भावना जागृत करता है।

के आगमन का फायदा उठा रहा हूं और यह पत्र मैं आपको देने के लिए उन्हें दे रहा हूं।

नमक कानूनों के खिलाफ आन्दोलन उतनी तेजी से चल रहा है जितना इस प्रान्त की परिस्थिति को देखते हुए चल सकता है। हमारे यहां नमक के भण्डार नही है और मुश्किल से आधा दर्जन ऐसे स्थान होंगे, जो दूर-दूर तक के क्षेत्र में फैले हुए है, जहा नमकीन मिट्टी प्राप्त है। अभी तक नमक-कानूनों का भंग इस अर्थ में केवल प्राविधिक रहा है कि नमक वनाने का खर्च उसके मूल्य के अनुपात में ज्यादा है। नमकीन मिट्टी वहुत दूरियों से लाई जाती है, और कुछ लोगों ने एक रुपया मन के लगभग वेच कर इसमें व्यापार करना शुरू कर दिया है। यहां चन्द ही ऐसे केन्द्र है, जहां नमक का व्यापारिक आधार पर निर्माण करना सम्भव समझा जाता है। इसलिए मै इस नतीजे पर पहुंचा हूं, निश्चय ही जव आपकी स्वीकृति हो, कि हमारा ध्यान यह देखने के लिए इन्ही केन्द्रो में सीमित होना चाहिए कि क्या इससे हम संयुक्तप्रान्त की सरकार को अपना वर्तमान आलस्य छोड़कर लड़ाई करने के लिए उत्तेजित कर सकते है। जिसे मैंने कानून का प्राविधिक या तकनीकी भंग कहा है, उसका वे लोग कोई ख्याल नही कर रहे हैं। पुलीस सिपाही खुद ही भीड में शामिल होकर नमक वनाना देखते और तमाशे का मजा लेते है। खास इलाहावाद में तो सिर्फ जवाहर की गिरफ्तारी हुई है और एक तहसील में तीन और आदमी पकड़े गये है। संयुक्त प्रान्त के दूसरे जिलो मे भी चन्द गिरफ्तारियां करने के वाद उन्होंने अपना हाथ रोक लिया है। प्रतिवन्धित नमक तो अव भी करीव करीब सभी जगहों में वनाया जा रहा है, किन्तु उत्तेजना के अभाव में लोगों की दिलचस्पी खतम होती जा रही है।

अन्य अन्तर्वर्ती प्रान्तों, विशेषत: विहार और मध्य प्रान्त में आन्दोलन जोरदार ढंग पर चल रहा है। मध्यप्रान्त मे अभी तक कोई गिरफ्तारी नही हुई है और विहार मे भी, पुलिस की गुण्डागर्दी के प्रथम अध्याय के वाद सत्याग्रहियों के काम में कोई हस्तक्षेप नही किया जा रहा है। नमक वनाने के काम में पंजाब ने कुछ ज्यादा नहीं किया है किन्तु दिल्ली प्रदेश ने जेलवासियों की संख्या का अपना अश पूरा कर दिया है। यह जनता की निश्चित विजय है, क्योंकि इसका एक मात्र अर्थ यही है कि नमक-कानूनों के खुले भंग के आगे सरकार ने घुटने टेक दिये है। मेरी सम्मति में, इस प्रक्रिया को आगे चलाने से, जो सफलता मिल चुकी है, उसमें कुछ ज्यादा इजाफा नही किया जा सकेगा। इसके खिलाफ इससे लोगों के उत्साह का शिथिल पड़ जाना निश्चित है। इसलिए अन्तर्वर्ती प्रान्तों में नमक-कानूनों के विरुद्ध कोई सच्चा सामूहिक आन्दोलन, मुझे असम्भव जान पड़ता है। इसलिए]

मैं चुने हुए क्षेत्रो मे इसे चलाता रहूगा और शेप देश की शक्ति विदेशी वस्त्र तथा शराव की दुकानो की पिकेटिंग की ओर मोडना चाहूगा।

जहा तक विदेशी वस्त्र-विक्रेताओ की पिकेटिंग का सवाल है, वे इस समय पहिले के किसी भी समय की अपेक्षा अधिक सुधरी हुई मानसिक स्थिति मे हैं। मुझे वताया गया है कि दिल्ली और अमृतसर मे वे न केवल आगे कोई माल मागने का आर्डर न देने के लिए वल्कि जो आर्डर दिये जा चुके हैं उनको भी मन्सूख करने तथा उसके परिणाम भोगने के लिए तैयार हैं, वशर्ते कि उनको वर्तमान स्टाक वेंच लेने की आज्ञा दी जाय। मैं स्वय कानपुर के आयातकर्त्ताओं से मिल चुका हू और मैंने उन्हे काफी समझदार पाया। दिल्ली और अमृतसर के व्यापारियो से जो समझौता हो, उसे मानने को वे भी तैयार हैं। उनके वर्तमान रुख के प्रति हम, ज्यादा-से-ज्यादा इतनी छूट दे सकते हैं कि उनके वर्तमान स्टाक को खतम करने के लिए एक अवधि निर्धारित कर दें। यह वात भी उन आयात-कर्त्ताओ के लिए ही लागू होती है जिन्हें दिये गये आर्डरो को मन्सूख करने मे वहुत ज्यादा पैसो की हानि होगी। यदि हम फुटकर विक्रेताओ को भी यह सुविधा देते हैं तो इसका मतलव पिकेटिंग के सारे आन्दोलन को तबतक के लिए स्थगित कर देना होगा जवतक कि निर्धारित अवधि समाप्त न हो जाय किन्तु जनता की वर्तमान मनोभावना को देखते, ऐसी सलाह नही दी जा सकती। यदि एक वार लोगो के उत्साह को ठण्डा हो जाने दिया गया तो फिर वर्तमान मन स्थिति तक उन्हें लाने मे वडा समय लगेगा। इसलिए मैं फुटकर विक्रेताओ के विरुद्ध गहरी पिकेटिंग करने के पक्ष मे हू।

किन्तु इससे ज्यादा गम्भीर सवाल जो सामने आता है वह यह है कि खादी की माग की पूर्ति कैसे की जाय। खादी भण्डारो पर भीड अत्यधिक है और अधि-काश इच्छुक खरीददारों की सेवा नही की जा सकती। आपके इस विश्वास पर एतराज किये विना कि अन्त मे केवल खादी के द्वारा ही पूर्ण विदेशी वस्त्र-वहिष्कार हो सकता है, इस समय तो विदेशी वस्त्र के वहिष्कार को चलाने के लिए भारतीय मिलो के वने वस्त्र की सहायता लेने के सिवा और कोई चारा नही है।

इसमे यह खतरा जरूर है कि भारतीय मिलो के मालिक कही अपने दाम न वढा दें। यदि मैं गलती पर नही हू तो उनमे वहुतेरे ऐसे है जो इस वात पर राजी है कि वे अपने दाम नही वढायेंगे, परन्तु यदि उनकी अपेक्षा ज्यादा नही तो उतने ही ऐसे भी हैं जो ऐसा कोई वादा करने को तैयार नही हैं। इस सम्बन्ध मे मैं आपको अम्वालाल के प्रस्ताव की याद दिलाना चाहता हू कि हम केवल उन्ही मिलो को स्वीकार करें जो यह शर्त मानने को तैयार हो और खादी की कमी की पूर्ति के लिए

मगर मुझे कहना चाहिए कि हमें तो इससे कहीं ज्यादा की जरूरत है। अहिंसा की सच्ची भावना से प्रेरित होकर हमें हिंसा की प्रतिमूर्ति-रूप तमाम ब्रिटिश संस्थाओं का सत्यानाश करना है।

सारे राष्ट्र को एक होकर इस ध्येय के लिए कोशिश करनी चाहिए। आओ, हम सब मिलकर शीघ्र ही ब्रिटिशों की भारत में, न केवल भारत में बल्कि सारे विश्व में, व्यापी हुई पशुता का अन्त कर दें। हर एक भारतीय अपनी अपनी शक्ति के अनुसार अपना कर्त्तव्य पालन करे। अहिंसा की सच्ची भावना की रूप से मैं अपने विचार जबरन किसी पर लाद नहीं सकता। हां, हरएक खुद होकर अपना कर्त्तव्य निश्चित कर ले। मैं तो सिर्फ उस शाश्वत सत्य की ओर इशारा मात्र कर सकता हूं और वह यह है कि विधाता निस्सन्देह प्राणिमात्र का हित चाहता है—प्रत्येक स्त्री और पुरुष का—प्रत्येक मानव का। अगर कोई मनुष्य या जाति स्वार्थ से प्रेरित होकर काम करती है, दूसरों को सताती है, तो अवश्य ही वह अपने गुणों का दुरुपयोग करती है और विधाता की इच्छा के विरुद्ध जा रही है। मैं सिर्फ यह कहता हूं कि आओ, हम सब व्यक्तिशः हिंसा का नाश करने की भरसक कोशिश करें। यही सच्ची अहिंसा है।

—हि० न० जी०, २५।७।१९२९]

१३. जवाहरलाल का पत्र : गांधीजी के नाम

[अक्तूबर १९२९ में दिल्ली में एक नेता-सम्मेलन हुआ था। उसके बाद नेताओं के हस्ताक्षर से भारतीय राजनीतिक परिस्थिति के विषय में एक वक्तव्य प्रकाशित किया गया। उस समय जवाहरलाल जी भारतीय राष्ट्रीय महासभा के प्रधान मन्त्री थे। उन्होंने भी उस पर हस्ताक्षर कर दिया था, यद्यपि सुभाष बाबू ने हस्ताक्षर करने से इन्कार कर दिया। बाद में जवाहरलाल जी के मन में द्वन्द्व उत्पन्न हुआ कि उन्होंने हस्ताक्षर क्यों किये। इसी क्षुब्ध मनःस्थिति में उन्होंने यह पत्र गांधी जी को लिखा था।—सम्पा०]

आल इण्डिया कांग्रेस कमेटी
५२ हीवेट रोड, इलाहाबाद
४ नवम्बर, १९२९

प्रिय बापू,

मैंने दो दिन भलीभांति विचार किया है। मेरा खयाल है, अब मैं स्थिति

पर दो दिन पहिले की अपेक्षा कुछ ज्यादा शान्त चित्त से विचार कर सकता हू, किन्तु मेरा मानसिक ताप अभी दूर नही हुआ है। अनुशासन के आधार पर आपने मुझसे जो अपील की है, उसे मैं दर-गुजर नही कर सकता था। मैं स्वय अनुशासन का भक्त हू। फिर भी मेरा खयाल है कि अनुशासन की ज्यादती भी हो सकती है। परसो शाम को मेरे अन्दर कुछ ऐसी वातें उठी, जिनको मैं एक सूत्र मे नही वाध सकता। प्रधान मन्त्री होने के नाते काग्रेस के प्रति मेरी निष्ठा होनी चाहिए और उसके अनुशासन मे मुझे रहना चाहिए। मेरी और हैसियतें और वफादारिया भी हैं। मैं इण्डियन ट्रेड यूनियन काग्रेस का सभापति हू और 'इण्डिपेण्डेंस फार इण्डिया लीग' का सेक्रेटरी हू, और युवक आन्दोलन से मेरा गहरा सम्वन्ध है। इन दूसरी सस्थाओ के प्रति, जिनसे मेरा सम्वन्ध है, अपनी निष्ठा के लिए मैं क्या करू? मैं इस वात को पहिले से ज्यादा अव अनुभव करता हू कि कई घोडो पर एक साथ सवारी करना काफी मुश्किल है। जव जिम्मेदारियो और वफादारियो की आपस मे टकराहट हो तो इसके अतिरिक्त कोई क्या कर सकता है कि अपनी सहज प्रवृत्ति और वुद्धि पर भरोसा करे?

इसलिए सभी वाहरी लगावो और वफादारियो से अलग रहकर मैंने हालत पर गौर किया है और मेरा यह विश्वास अधिक दृढ हो गया है कि परसो मैंने जो किया, वह गलत किया। मैं वक्तव्य की अच्छाइयो या उसकी नीति के विषय मे कुछ न कहूगा। मुझे भय है कि उस प्रश्न पर हमारा मौलिक मतभेद है और यह सम्भव नही कि मैं आपकी राय वदल दू। मैं केवल इतना ही कहूगा कि मेरा विश्वास है कि वह वक्तव्य हानिकारक है और मजदूर सरकार[1] की घोपणा का विल्कुल अपर्याप्त उत्तर है। मेरे खयाल से कुछ प्रतिष्ठित लोगों को खुश करने और अपने साथ वनाये रखने के प्रयत्न मे हमने अपने दल के वहुत-से उन दूसरे लोगो को परी-शानी मे डाल दिया है और उन्हें प्राय: दल के वाहर कर दिया है, जिनको साथ रखना कही अच्छा था। मेरा खयाल है कि हम लोग एक खतरनाक जाल मे उलझ गये हैं, जिससे निकल सकना सरल नही, और मैं समझता हू कि हमने दुनिया को दिखला दिया है कि यद्यपि हम लोग वातें तो ऊची करते है, किन्तु सौदावाजी छोटी-मोटी चीजो के लिए कर रहे हैं।

मैं नही जानता कि ब्रिटिश सरकार अव क्या करेगी। सम्भव है वह आपकी वातो को नही मानेगी। किन्तु मुझे इसमे तनिक भी सशय नही कि अधिकाश

---

१. इंग्लैण्ड की मजदूर सरकार, जिसने भारत के सम्वन्ध मे अनिश्चित भापा मे अपनी नीति की घोषणा की थी।

हस्ताक्षरकर्त्ता—निश्चय ही आपको छोड़कर—उन शर्तों में ब्रिटिश सरकार जो भी परिवर्तन सुझायेगी उसे स्वीकार कर लेंगे। हर हालत में मुझे यह जान पड़ता है कि कांग्रेस के भीतर मेरी स्थिति दिन-दिन अधिक कठिन होती जायगी। मैंने कांग्रेस की अध्यक्षता बड़े संशय-सन्देह के साथ स्वीकार की थी, किन्तु इस आशा से कि अगले साल हम एक निश्चित मस्ले को लेकर लड़ लेंगे। उस मस्ले पर पहले से ही बादल छा गये हैं, और इस पद को स्वीकार करने का जो एकमात्र कारण था, वह अब नहीं रह गया है। 'इन "नेताओं के सम्मेलनों" से मुझे क्या सरोकार? मैं अपने को अनधिकार-चेष्टा करनेवाला समझने लगा हूं और इसके कारण मुझे परीशानी है। मैं अपनी बात खुलकर इसलिए नही कह पाता कि सम्मेलन के बिगड़ने का मुझे डर है। मैं अपने को दबाता हूं और यह दबाना कभी-कभी मेरे लिए भारी पड़ता है। मैं भभक उठता हूं और ऐसी चीजें भी कह जाता हूं जिनको कहने का मेरा अभिप्राय नही होता।

मैं अनुभव करता हूं कि मुझे ए० आई० सी० सी०[१] के मन्त्री के पद से इस्तीफा देना चाहिए। मैंने पिताजी के पास एक जाब्ते का पत्र भेज दिया है, जिसकी नकल साथ में भेज रहा हूं।

अध्यक्ष का प्रश्न इससे अधिक कठिन है। मैं नहीं समझता कि ऐन मौके पर मैं क्या कर सकता हूं। मुझे इस बात का विश्वास हो गया है कि मेरा चुनाव गलत था। इस अवसर पर और इस साल के लिए केवल आपको ही चुना जाना चाहिए था। यदि कांग्रेस की नीति वही है, जिसे मालवीयजी की नीति कह सकें तो मैं सभापति नही रह सकता। अब भी यदि आप राजी हों तो बिना ए० आई० सी० सी० की बैठक बुलाये एक रास्ता निकल सकता है। ए० आई० सी० सी० के सदस्यों के नाम एक गश्ती चिट्ठी भेजी जा सकती है कि आप सभापति बनने के लिए रजामन्द हैं। मैं उनसे क्षमा मांग लूंगा। यह सिर्फ जाब्ते की कार्रवाई होगी, क्योंकि सभी या प्रायः सभी सदस्य आपके निर्णय को प्रसन्नतापूर्वक मान लेंगे।

एक दूसरा रास्ता यह है कि मैं यह घोषणा कर दूं कि वर्तमान स्थिति में और इस विचार से कि इस समय दूसरा अध्यक्ष चुनने में कठिनाई होगी, अभी अध्यक्षता न छोड़ूंगा किन्तु कांग्रेस के फौरन बाद छोड़ दूंगा। मै चेयरमैन के रूप में काम करूंगा और मेरी कोई भी पर्वा किये बिना कांग्रेस चाहे जैसा निर्णय कर सकती है।

---

१. आल इण्डिया कांग्रेस कमेटी।

यदि मैं अपना शारीरिक और मानसिक स्वास्थ्य बनाये रखना चाहू तो इन दो मे से एक रास्ता मेरी समझ से जरूरी है।

जैसा कि मैंने दिल्ली से आपको लिखा था, मैं कोई सार्वजनिक वक्तव्य नही दे रहा हू। दूसरे लोग क्या कहते है क्या नही, इसकी मुझे ज्यादा चिन्ता नही है। किन्तु स्वय मुझे शान्ति होनी चाहिए।

सप्रेम आपका,
जवाहरलाल

पुनश्च :

इस पत्र की एक नकल मैं पिताजी के पास भेज रहा हू। यह पत्र लिखकर मैं कुछ हल्कापन अनुभव कर रहा हू। मुझे भय है कि इससे आपको कुछ परीशानी होगी। ऐसा मैं करना नही चाहता। आधा मन कर रहा है कि इसे आपके पास न भेजू, बल्कि आपके यहा आने की प्रतीक्षा करू। दस दिन और बीतने पर निश्चित रूप से मेरी उत्तेजना कम हो जायगी और मेरी दृष्टि अधिक स्पष्ट हो जायगी। किन्तु यह अच्छा है कि आप जान लें कि मेरा दिमाग किस प्रकार काम कर रहा है।

—अंग्रेजी। इलाहाबाद, ४।११।१९२९]
सौजन्य : श्रीमती इन्दिरा गाधी

१४. मोतीलाल नेहरू का पत्र : गांधीजी के नाम

आनन्द भवन
इलाहाबाद, एप्रिल २५, १९३०

प्रिय गाधीजी,

घटनाए इतनी तेजी से प्रयाण कर रही हैं कि कोई नही जानता कि कहा से शुरू किया जाय और कहा खत्म किया जाय। आप और मैं अब भी बाहर छूटे हुए हैं, यह एक आश्चर्य है किन्तु जिस तेजी से बातें हो रही हैं, हमारी कार्य की स्वतन्त्रता ज्यादा दिनो के क्रय के योग्य नही है।

मुझे ताज्जुब है कि आपको मेरा पिछला पत्र मिला या नही। सेंसर ने अपनी गिरफ्त मुझ पर कडी कर दी है और मेरे पास निश्चित सूचना है कि मेरे नाम आये पत्रो और तारो मे से आधे भी मुझे नही मिलते। इसलिए मैं आपके पास कृपलानी

के आगमन का फायदा उठा रहा हूं और यह पत्र मैं आपको देने के लिए उन्हें दे रहा हूं।

नमक कानूनों के खिलाफ आन्दोलन उतनी तेजी से चल रहा है जितना इस प्रान्त की परिस्थिति को देखते हुए चल सकता है। हमारे यहां नमक के भण्डार नहीं है और मुश्किल से आधा दर्जन ऐसे स्थान होंगे, जो दूर-दूर तक के क्षेत्र में फैले हुए है, जहां नमकीन मिट्टी प्राप्त है। अभी तक नमक-कानूनों का भंग इस अर्थ में केवल प्राविधिक रहा है कि नमक बनाने का खर्च उसके मूल्य के अनुपात में ज्यादा है। नमकीन मिट्टी बहुत दूरियों से लाई जाती है, और कुछ लोगों ने एक रुपया मन के लगभग बेच कर इसमें व्यापार करना शुरू कर दिया है। यहां चन्द ही ऐसे केन्द्र है, जहां नमक का व्यापारिक आधार पर निर्माण करना सम्भव समझा जाता है। इसलिए मैं इस नतीजे पर पहुंचा हूं, निश्चय ही जब आपकी स्वीकृति हो, कि हमारा ध्यान यह देखने के लिए इन्ही केन्द्रों में सीमित होना चाहिए कि क्या इससे हम संयुक्तप्रान्त की सरकार को अपना वर्तमान आलस्य छोड़कर लड़ाई करने के लिए उत्तेजित कर सकते है। जिसे मैने कानून का प्राविधिक या तकनीकी भंग कहा है, उसका वे लोग कोई ख्याल नही कर रहे हैं। पुलीस सिपाही खुद ही भीड़ में शामिल होकर नमक बनाना देखते और तमाशे का मजा लेते है। खास इलाहाबाद मे तो सिर्फ जवाहर की गिरफ्तारी हुई है और एक तहसील मे तीन और आदमी पकड़े गये है। संयुक्त प्रान्त के दूसरे जिलों में भी चन्द गिरफ्तारियां करने के बाद उन्होंने अपना हाथ रोक लिया है। प्रतिबन्धित नमक तो अब भी करीब करीब सभी जगहों में बनाया जा रहा है, किन्तु उत्तेजना के अभाव में लोगों की दिलचस्पी खतम होती जा रही है।

अन्य अन्तर्वर्ती प्रान्तों, विशेषतः बिहार और मध्य प्रान्त में आन्दोलन जोरदार ढग पर चल रहा है। मध्यप्रान्त में अभी तक कोई गिरफ्तारी नही हुई है और बिहार में भी, पुलिस की गुण्डागर्दी के प्रथम अध्याय के बाद सत्याग्रहियों के काम में कोई हस्तक्षेप नही किया जा रहा है। नमक बनाने के काम में पजाब ने कुछ ज्यादा नही किया है किन्तु दिल्ली प्रदेश ने जेलवासियों की संख्या का अपना अग पूरा कर दिया है। यह जनता की निश्चित विजय है, क्योकि इसका एक मात्र अर्थ यही है कि नमक-कानूनों के खुले भंग के आगे सरकार ने घुटने टेक दिये हैं। मेरी सम्मति में, इस प्रक्रिया को आगे चलाने से, जो सफलता मिल चुकी है, उसमें कुछ ज्यादा इजाफा नही किया जा सकेगा। इसके खिलाफ इससे लोगों के उत्साह का शिथिल पड जाना निश्चित है। इसलिए अन्तर्वर्ती प्रान्तों में नमक-कानूनों के विरुद्ध कोई सच्चा सामूहिक आन्दोलन, मुझे असम्भव जान पड़ता है। इसलिए

मैं चुने हुए क्षेत्रो मे इसे चलाता रहूगा और शेप देश की शक्ति विदेशी वस्त्र तथा शराव की दुकानो की पिकेटिंग की ओर मोडना चाहूगा।

जहा तक विदेशी वस्त्र-विक्रेताओ की पिकेटिंग का सवाल है, वे इस समय पहिले के किसी भी समय की अपेक्षा अधिक सुधरी हुई मानसिक स्थिति मे हैं। मुझे वताया गया है कि दिल्ली और अमृतसर मे वे न केवल आगे कोई माल मागने का आर्डर न देने के लिए वल्कि जो आर्डर दिये जा चुके हैं उनको भी मन्सूख करने तथा उसके परिणाम भोगने के लिए तैयार हैं, वशर्ते कि उनको वर्तमान स्टाक वेंच लेने की आज्ञा दी जाय। मैं स्वय कानपुर के आयातकर्त्ताओ से मिल चुका हू और मैंने उन्हे काफी समझदार पाया। दिल्ली और अमृतसर के व्यापारियो से जो समझौता हो, उसे मानने को वे भी तैयार हैं। उनके वर्तमान रुख के प्रति हम, ज्यादा-से-ज्यादा इतनी छूट दे सकते हैं कि उनके वर्तमान स्टाक को खतम करने के लिए एक अवधि निर्धारित कर दें। यह वात भी उन आयात-कर्त्ताओ के लिए ही लागू होती है जिन्हे दिये गये आर्डरो को मन्सूख करने मे वहुत ज्यादा पैसो की हानि होगी। यदि हम फुटकर विक्रेताओ को भी यह सुविधा देते हैं तो इसका मतलव पिकेटिंग के सारे आन्दोलन को तवतक के लिए स्थगित कर देना होगा जवतक कि निर्धारित अवधि समाप्त न हो जाय किन्तु जनता की वर्तमान मनोभावना को देखते, ऐसी सलाह नही दी जा सकती। यदि एक वार लोगो के उत्साह को ठण्डा हो जाने दिया गया तो फिर वर्तमान मन स्थिति तक उन्हे लाने मे वडा समय लगेगा। इसलिए मैं फुटकर विक्रेताओ के विरुद्ध गहरी पिकेटिंग करने के पक्ष मे हू।

किन्तु इससे ज्यादा गम्भीर सवाल जो सामने आता है वह यह है कि खादी की माग की पूर्ति कैसे की जाय। खादी भण्डारो पर भीड अत्यधिक है और अधिकाश इच्छुक खरीददारो की सेवा नही की जा सकती। आपके इस विश्वास पर एतराज किये विना कि अन्त मे केवल खादी के द्वारा ही पूर्ण विदेशी वस्त्र-वहिष्कार हो सकता है, इस समय तो विदेशी वस्त्र के वहिष्कार को चलाने के लिए भारतीय मिलो के वने वस्त्र की सहायता लेने के सिवा और कोई चारा नही है।

इसमे यह खतरा जरूर है कि भारतीय मिलो के मालिक कहीं अपने दाम न वढा दें। यदि मैं गलती पर नही हू तो उनमे वहुतेरे ऐसे है जो इस वात पर राजी हैं कि वे अपने दाम नही वढायेंगे, परन्तु यदि उनकी अपेक्षा ज्यादा नही तो उतने ही ऐसे भी हैं जो ऐसा कोई वादा करने को तैयार नही है। इस सम्वन्ध मे मैं आपको अम्वालाल के प्रस्ताव की याद दिलाना चाहता हू कि हम केवल उन्ही मिलो को स्वीकार करें जो यह शर्त मानने को तैयार हो और खादी की कमी की पूर्ति के लिए

उनके उत्पादनों की अनुज्ञा प्रदान करें। क्या आप कृपापूर्वक इस बात पर विचार करेंगे और आवश्यक आदेश जारी करेंगे? पिछले साल विदेशी वस्त्र-बहिष्कार के लिए जो समिति बनाई गई थी वह इस साल की शुरूआत से काम नहीं कर रही है। आप ही समिति के अध्यक्ष है तथा जयरामदास मन्त्री हैं तथा सदस्यों में से एक मैं भी हूं। दूसरे सदस्य है : मौलाना अबुल कलाम आजाद, डा० अंसारी, राजगोपालाचारी तथा जमनालाल जी। जयरामदास अभी तक अस्पताल से बाहर नही आये है। और वहां से निकलने के बाद भी शायद कुछ समय तक कोई क्रियात्मक भाग लेने योग्य न होगे। मैं समझता हूं कि उनकी जगह तुरन्त ही किसी को नियुक्त किया जाना चाहिए और सम्पूर्ण समिति का फिर से निर्माण होना चाहिए।

शराब की दुकानों की पिकेटिंग में ऐसी कठिनाइयां नही हैं। यहां की तथा अन्य स्थानों की महिलाए बा के उदाहरण का अनुसरण कर रही हैं और अपने को पिकेटिंग करनेवालियों के रूप में संगठित कर रही हैं।

१९वी को मैंने जवाहरलाल से भेंट की थी। वह काफ़ी खुश है, गोकि कुछ उकताया हुआ है। वे लोग उसके साथ बहुत अच्छा सलूक कर रहे हैं जो उसके लिए सन्तोषप्रद होने से ज्यादा खीझ का कारण हो रहा है। वह जो कुछ चाहे बाहर से मंगा सकता है। किन्तु चन्द फलों के सिवा वह और सब चीज़ों का साफ इन्कार करता है। उसने अपनी पसन्द की किताबों का एक पूरा पुस्तकालय बना रक्खा है, और परिवर्तन की शकल में, बच्चों के लिए एक किताब लिखने मे अपना समय लगा रहा है। कसरत के लिए भी उसके पास काफी खुली जमीन है। किन्तु जो बैरक उसे रहने के लिए दी गई है, उसमें बस अकेला वही है।

पेशावर की घटनाएं कुछ परीशानी पैदा करती है। उनसे यह तथ्य प्रकट होता है कि पेशावर के पठान अलीबन्धुओं के अनुयायी नहीं है। अहिंसात्मक सत्याग्रहियों के रूप मे उनका वयान नहीं किया जा सकता, और बख्तरबन्द गाड़ियों का, जिनके अन्दर सैनिक बैठे थे, जलाना ऐसी बात नही है जिससे एक पठान के दिमाग़ की किसी पश्चात्तापपूर्ण भावना का पता लगता हो। सब मिलाकर हमारे स्वयंसेवकों और कार्यकर्त्ताओं ने, बल्कि शहरों और गांवों मे बड़ी-बड़ी भीड़ ने भी, जो सामान्य अहिसात्मक वातावरण बना रक्खा है, मैं समझता हूं कि उसके लिए हमारे पास अपने को बधाई देने के अच्छे कारण है। पेशावर की बात अपवाद रूप है और उसे उसी रूप मे लिया जाना चाहिए।

पुलीस और जेल की बर्बरताओं के इतिहास में अलीपुर जेल की नृशंसताओं

की तुलना नही है। इस क्षण तक, जब मैं यह पत्र लिखवा रहा हू, सेनगुप्त तथा सुभाष की यथार्थ दशा के विषय मे कोई निश्चित समाचार नही मिले हैं।

आपका सच्चा

मोतीलाल नेहरू

— अंग्रेजी। इलाहाबाद, २५।४।१९३०। नेहरू संग्रहालय में सुरक्षित पत्रावली से]
सौजन्य : श्रीमती इन्दिरा गांधी तथा नेहरू संग्रहालय।

१५. बनारसीदास चतुर्वेदी का पत्र : गांधीजी के नाम

विशाल भारत
१२०।२।अपर सर्कूलर रोड,
कलकत्ता
२४।१२।३०

पूज्य बापू जी,

मैं चिट्ठी आपको नही भेज सका। मुझे यह लिखते हुए शरम आती है कि मेरा हृदय कमजोर हो गया है। परमात्मा ने मुझे जो सजा दी है वह मेरे असयम, कुदृष्टि तथा मानसिक पापाचार के लिए है यह बात मुझे अब ठीक तरह दीख पड़ती है। मुझे पत्नी की मृत्यु से जो दु ख है उसमे मुख्य भाग इस कारण से है कि मैंने उसके प्रति अपना कर्त्तव्य पालन नही किया—उसके प्रति अपने को सत्य सिद्ध नही किया। मैं लज्जापूर्वक आपके सामने यह स्वीकार करूगा कि मैं फेल हो गया। कमजोरी से मुझे अब यह आशका होने लगी कि मैं अपने (अपनी ?) वृद्ध माता के प्रति तथा बच्चो के प्रति भी अपना कर्त्तव्य पालन नही कर सकूगा, देश के प्रति तथा प्रवासी भाइयो के प्रति कर्त्तव्य पालन करना तो दूर रहा। मेरे मन मे और भी आत्मग्लानि होती है जब मैं ख्याल करता हू कि मैं, जिस पर आपने इतना समय दिया, जिसकी ट्रेनिंग पर आपने सहस्रो रुपये व्यय किये और इतनी कृपा की, ऐसा कुपात्र सिद्ध हुआ।

पुरुष की तरह इस दु:ख को सहन करने की बजाय मैं रो-रो कर उल्टा कमजोर और बन गया। मेरी इच्छा है कि शेष जीवन प्रायश्चित्त-स्वरूप सयमपूर्वक बिताऊँ। आपके नियमो के महत्व को अब कुछ कुछ समझने लगा हूं। इसलिए

आपको चिट्ठी में 'बापू' शायद पहली बार लिख रहा हूं। मुझे दिखता है कि मुझको अयोग्य और कमजोर जानकर भी आपकी कृपा मुझ पर कम नहीं होगी।

तीन महीने का बच्चा अच्छी तरह है। मेरी मां उसे पालती हैं।

(टिप्पणी : नीचे हस्ताक्षर नहीं हैं।)

—हिन्दी। कलकत्ता, २४।१२।१९३०। जी० एन० २५२४ की फोटो-नकल से]

१६. जवाहरलाल का पत्र : गांधीजी के नाम

जुलाई २८, १९३१

मेरे प्यारे बापू,

मुझे खतौली-विषयक आपका पत्र मिल गया है। मैंने इस स्थान के बारे में पहिले कभी नहीं सुना किन्तु मुझे पता लगा है कि वह मुजफ्फरनगर जिले में है, जो दिल्ली प्रान्त[1] में है। मैं वहां की कांग्रेस कमेटी को जांच और रिपोर्ट करने के लिए लिख रहा हूं। मैंने रेवरेण्ड के० एम० मैथ्यू को जो पत्र लिखा है, उसकी एक प्रतिलिपि भेज रहा हूं। दूसरे पत्रों की प्रतिलिपियां भी।

जे० एल०

महात्मा गांधी
बोरसद (गुजरात)

--अंग्रेजी। इलाहाबाद, २८।७।१९३१। नेहरू संग्रहालय में सुरक्षित पत्रावली से]
सौजन्य : श्रीमती इन्दिरा गांधी तथा नेहरू संग्रहालय।

१७. जवाहरलाल का पत्र : गांधीजी के नाम

[यह पत्र हवाई डाक से भेजा गया था। इसकी एक प्रतिलिपि मामूली डाक से भेजी गई थी। उस समय गांधी जी लन्दन जाते हुए मार्ग में जहाज पर थे। यह पत्र जहाज से महादेव भाई-द्वारा भेजे पत्र के बाद जवाहरलाल जी ने लिखा था।—सम्पा०]

---

१. कांग्रेस के अपने प्रान्त-क्षेत्र के अनुसार।

सितम्बर १ ली, १९३१

मेरे प्यारे बापू,

आखिरकार आप गये, और बहुत से क्षेत्रो मे बडी खुशिया मनाई गई और अखबारो मे ५-५ कालम की सुर्खिया छपी। किन्तु आपके बिना भारत ज्यादा रिक्त और ज्यादा जड दिखाई पडता है और मुझे भय है कि बहुत से लोग धर्मिष्ठ मुसलमान के पाच बार प्रतिदिन काबा की ओर देखने की अपेक्षा भी ज्याद मर्त्तबे पश्चिम की ओर ताकेंगे और घर के काम पर बहुत कम ध्यान देंगे। बेतार-के-तार की रिपोर्ट हमे बताती है कि जहाज पर आप खूब मौज मे हैं और अरब सागर की दुष्टताओ के बीच भी अनुद्विग्न हैं, यद्यपि दूसरे कई लोग बिस्तर पकड चुके हैं। मैं भी कम-से-कम एक कारण से खुश हू कि आप गये। आपको एक पखवारे तक, अपने ढग पर, आराम मिलेगा और समुद्री हवा आपको ताजा कर देगी।

मैं बम्बई से इलाहाबाद लौटा तो देखा कि कमला बीमार है। उसे तेज बुखार आ गया था—शायद मलेरिया ज्वर रहा होगा। अब वह पहिले से अच्छी है—किन्तु असाधारण रूप से नाजुक और दुर्बल हो गई है।

मैं कुल कागजात नत्थी कर रहा हू। इसमे वाइसराय के प्राइवेट सेक्रेटरी को लिखे गये और उनके पास से आनेवाले पत्रो की प्रतिलिपिया हैं। अखबार की एक कतरन है जिसमे किसी मिस्री अखबार का एक लेख दिया गया है। मुझे आशा है, आप इसे पढेंगे, खासतौर से इसलिए कि शौकतअली पोर्ट सईद मे आप पर धावा करनेवाले हैं। इस लेख मे कुछ हितकारी सलाह दी गई है, जिसे ग्रहण करके शौकत भला करेंगे, किन्तु मुझे भय है कि वह ऐसा नही करेंगे। हम पर अक्सर मिश्र का उदाहरण थोपा गया है। यह अच्छा ही है कि हम जान लें कि वह क्या था।

मैं 'पायनियर' की एक कतरन भी नत्थी कर रहा हू—सिर्फ आपको यह दिखाने के लिए कि आपके मित्र न्यूनहैम—यदि यही उनका नाम है—क्या-कुछ कर सकते हैं। यह एक निर्लज्ज लेख-खण्ड और प्रचार है। मैंने कल इसके विषय मे पत्र-प्रतिनिधियो से कुछ कहा था किन्तु भेंट के उस अश को छोड देने मे 'लीडर' ने खासतौर की तवज्जुह रक्खी। पर सब होने पर भी मेरे लिए उसका खण्डन करना ठीक नही था। यह अब्दुल गफ्फार का काम था, और मैंने उनका ध्यान इस ओर आकर्षित कर दिया है।

मैंने कमला के भाई, कैलाश कौल को, खा साहब के पास भेजने का निश्चय किया है। मैंने उन्हे यहा बुलाया था और समझा दिया कि उनका काम क्या होगा।

उन्हें जाने का विचार पसन्द आया। मैं समझता हूं खान उन्हें पसन्द करेंगे और उनसे कुछ काम ले लेंगे।

मैंने वल्लभ भाई को सुझाव दिया है कि वह ८ को कार्य-समिति की बैठक में अब्दुल गफ्फार को निमन्त्रित करें। मुझे आशा है कि वह आयेंगे।

दूसरा संलग्न पत्र उस पत्र की प्रतिलिपि है जो मैंने स्लोकाम्ब को भेजा है।

संयुक्तप्रान्त में परिस्थितियां खराब हैं किन्तु उनमे कोई लाल बब्बे नहीं है। लोग अपने भाग्य को पकड़कर बैठ गये दिखते है। इलाहाबाद जिले में हैजा फैला हुआ है और ध्यान फेरने में मदद कर रहा है। बेदखलियां जारी है और हमारे अच्छे कार्यकर्त्ता जहां-तहां फौजदारी कानून के दफा १०८ के जाल में फँसाये जा रहे हैं। किन्तु यह सब बड़ी शान्ति के साथ बिना शोर-गुल के हो रहा है। शिकायतों के विषय में मुख्य-सचिव—जगदीश प्रसाद मुझे लम्बे-लम्बे खत लिखते हैं, जो शिष्ट और तफसील से भरे होते हैं। मैं असामियों का पक्ष पेश करता हूं; वह दूसरा पक्ष पेश करते हैं और बिना पूरी जांच किये यह कहना जरा मुश्किल है कि सचाई क्या है। सम्भवतः मुबालगे दोनों तरफ से होते है। किन्तु यह ठोस तथ्य तो तब भी रह ही जाता है कि हजारों पट्टेदार, और खासतौर मे दखिल-कारी पट्टेदार बेदखल कर दिये गये हैं और वे बड़े संकट में हैं। इस सवाल को हल करने का कोई स्पष्ट रास्ता मुझे दिखाई नहीं पड़ता। बेशक, मैं जगदीश प्रसाद को तो लिखना जारी ही रक्खूंगा।

संयुक्तप्रान्त की सरकार द्वारा नियुक्त भूमिधारी समिति (एग्रेरियन कमेटी) की रिपोर्ट किसी कदर भी सन्तोषजनक नहीं है। अभी तक हमें सारे ब्योरे मालूम नहीं हुए हैं किन्तु मुझे भय यह है कि इसने एक जटिल योजना पैदा की है और कमी की मिकदार काफ़ी नहीं है। बहुत कुछ तो छोटे राजस्व-अधिकारियों पर निर्भर करेगा और इसका मतलब होगा संकट।

इस बीच वर्षा भी पिछड़ रही है और खराब फसल होने की सम्भावना है।

आपने मुझे लिखा था कि हवाई जहाज से भेजे गये सब पत्रों की प्रतिलिपियां मामूली डाक से भी भेजी जायं। यह ज़रा मुश्किल मालूम पड़ता है। सब कतरनों एवं संलग्न पत्रों की दूसरी नकलें मुझे आसानी से प्राप्त नहीं हो सकती। इस पत्र की प्रतिलिपि कराना भी सरल नहीं है, जब तक कि कृष्णा अपना टाइप-राइटर न सँभाल ले। भारतीय कांग्रेस कमेटी का जो कार्यालय यहां है उसमें भी कर्मचारियों की कमी है और कोई जरा भी बीमार पड़ा तो काम चलाना भी

मुश्किल हो जाता है। जो हो, यदि मेरा पत्र गडवड हो जाता है तो उसमे कुछ ज्यादा फर्क नही पडता।

प्रेम और सम्पूर्ण शुभाकाक्षाओ-सहित

मैं हू आपका प्रिय

जे० एन०

--अंग्रेजी। इलाहाबाद, १।९।१९३१। नेहरू सग्रहालय में सुरक्षित पत्रावली से]

सौजन्य : श्रीमती इन्दिरा गांधी तथा नेहरू सग्रहालय।

१८. जवाहरलाल का पत्र : गांधीजी के नाम

विद्यापीठ,

अहमदावाद, सितम्वर ११वी, १९३१

मेरे प्यारे वापू,

तीन दिनो से कार्य समिति की वैठकें होती रही हैं। उसने काम अव भी खतम नही किया है। सम्भवत आज खतम हो जायगा। जैसा कि आप चाहते थे, हमने इस पर विचार किया कि हमारी लघुत्तम मांग क्या होनी चाहिए, और इसी तरह का एक 'नोट' तैयार किया गया है। जाब्ते से यह कोई प्रस्ताव नही है। निस्सन्देह हमने इसे 'विश्वसनीय' रखखा है। वल्लभ भाई आपको इसकी एक प्रतिलिपि भेजेंगे। मैं भी इसे सलग्न कर रहा हू।

इस 'नोट' मे वे सव मुद्दे आ जाते हैं जो आपने लिखे हैं—सिवाय एक सघ के इच्छित प्रकार तथा विपयो के विभाजन के। अलग होने के पहिले हम इस पर भी विचार कर सकते हैं।

आपके सुझाव के अनुसार मैंने सेना के मामले मे रामानन्द[1] वावू को लिखा था। अभी तक उन्होंने जवाव नही दिया है। किन्तु उनके सहायक सम्पादक ने जवाव भेजा है और चूकि जवाव दिलचस्प है, मैं उसे इस पत्र के साथ आपके पास भेज रहा हू।

हम लोगो को जो नोट आपके पास भेजना था, उस पर चर्चा करते समय असारी[2] इसके लिए वहुत जोर दे रहे थे कि इसमे राजाओ को कुछ आश्वासन जोड़

१. स्व० रामानन्द चटर्जी, 'माडर्न रिव्यू' तथा 'प्रवासी' (वगला) के सम्पादक।

२. स्व० डा० मुख्तार अहमद असारी, दिल्ली के प्रमुख चिकित्सक, काग्रेस के अध्यक्ष।

दिया जाय। हममें से अधिकांश इसके लिए राजी नहीं थे। वह मुझसे कह रहे हैं कि वह इस विषय पर आपको लिख रहे हैं।

बंगाल हमें बहुत ज्यादा परीशान कर रहा है। सेनगुप्त[१] आक्रामक ढंग पर काम कर रहे हैं और हमको बहुत गलत स्थिति में डाल रहे हैं। सीमाप्रान्त भी कुछ खराब जान पड़ता है। मथुरा जिले में अगस्त में २००० से ज्यादा बेदखलियां हुई हैं। हमारे कुछ विशेष कार्यकर्त्ता पकड़ लिये गये हैं (मथुरा में नहीं)।

मैं 'भारत की सुरक्षा' पर एक लेख की प्रतिलिपि नत्थी कर रहा हूं जिसे मैंने 'यंग इंडिया' के लिए कुमारप्पा को दिया है।

हम सरकार के प्रति अपना प्रत्युत्तर शीघ्र ही प्रकाशित करना चाहते हैं।

यह पत्र आज जाने वाली मामूली डाक से जा रहा है। एक-दो दिन में मैं हवाई डाक से पत्र लिखूंगा।

विदा होने के पहिले जिन्ना ने साम्प्रदायिक सवाल पर एक भेंट दी है जिसे शौकत अली मुश्किल से पीट सकते हैं। यह बेहूदगी और संकुचित मानस की साम्प्रदायिकता की एक आश्चर्यजनक खिचड़ी थी।

आपका स्नेहपात्र
ज० ला०

—अंग्रेजी। अहमदाबाद, ११।९।१९३१ [नेहरू संग्रहालय में सुरक्षित पत्रावली से]

सौजन्य : श्रीमती इन्दिरा गांधी तथा नेहरू संग्रहालय।

१९. जवाहरलाल का पत्र : गांधीजी के नाम

आनन्द भवन,
इलाहाबाद, १७-९-३१

मेरे प्रिय बापू,

अदन से (लिखा) महादेव का एक पत्र मुझे मिला है। उन्होंने जहाज पर की कुछ घटनाओं के बारे में बताया है। हमें आपके समाचारों का कोई अभाव नहीं है। हमें आपके भोजन तथा प्रार्थनाओं तथा आप कब उठते हैं तथा आपके

---

१. श्री जे० एम० सेनगुप्त, कलकत्ता के एक कांग्रेस नेता।

घूमने और सबके ऊपर आपकी प्रसिद्ध लगोटी के विषय में ज़रा-ज़रा सा व्यौरा मिलता रहता है।

काफ़ी लम्बे अर्से तक टिकने के बाद मैं अहमदाबाद से कल ही इलाहाबाद लौटा हू। कार्य समिति मेरा ज्यादा और ज्यादा वक्त लेती जा रही है। हम २४ अक्तूबर को फिर, शायद दिल्ली मे, मिल रहे हैं।

मैं अपनी यहा की कठिनाइयो के बारे मे आपको परीशान नही करना चाहता, केवल इस बात की सूचना देना चाहता हू कि मेरे अनुरोध से वल्लभभाई ने इमर्सन को सयुक्त प्रान्त की सकटापन्न स्थिति के बारे मे लिखा है। मैं खुद भी सक्षेप मे वाइसराय के सचिव को लिखने की सोच रहा हू।

अगले हफ्ते मैं अपनी 'एग्रेरियन इनक्वायरी कमेटी' (भू-जाच-समिति) की रिपोर्ट आपको भेजूगा।

मैंने महाराज पटियाला को जो पत्र भेजा है, उसकी एक प्रतिलिपि नत्थी कर रहा हू।

आखिरकार डब्लू० सी० (कार्य समिति) ने सघ (फेडरेशन) और कार्य-विभाजन के प्रश्न पर विचार नही किया। किन्तु इस विषय पर समिति के विचार काफी स्पष्ट हैं। एक सुदृढ केन्द्रीय शासन मे उसका विश्वास है। नेहरू रिपोर्ट मे केन्द्रीय विषयो की जो सूची दी हुई है, उनको चर्चा का एक अच्छा आधार बनाया जा सकता है।फेडरल स्ट्रक्चर कमेटी (सघ-विधान समिति) मे शफात अहमद[1] खा की वक्तृता की रिपोर्ट मे मैं देखता हू कि उन्होंने प्रान्तो की सर्वस्वायत्तता की माग की है। यह एक दिलचस्प बात पैदा हुई है। शफात अहमद आधे से ज्यादा पागल हैं और उन्हे गम्भीरता से नही ग्रहण किया जा सकता किन्तु यह मुमकिन है कि कुछ और बडे मुसलमान उनका समर्थन करें। मैं समझता हू कि इस विषय पर कुछ साफ बाते हो जानी चाहिए।

आपने चटगाव के विषय मे तो जरूर ही सुना होगा। काफी बुरी बात हुई, किन्तु जो रिपोर्टें आपको मिली होगी, वे निस्सन्देह अत्युक्तिपूर्ण हैं। सेनगुप्त खुलेआम कहते रहे हैं कि यह सारा मामला सरकारी और गैर-सरकारी युरोपीयो द्वारा खडा किया हुआ है। यह बात दूसरो ने भी कही है, और इन आरोप मे सच्चाई जान पडती है।

---

१. सर शफात अहमद खां—इलाहाबाद विश्वविद्यालय के इतिहास-विभाग के अध्यक्ष। बाद में प्रसिद्ध लीगी नेता, गोलमेज सम्मेलन के एक प्रतिनिधि।

पिछले दिनों 'पंच'[1] में एक वढ़िया कार्टून 'इल्यूजिव महात्मा' (परिहारी महात्मा) के विषय में निकला था—शायद आपने देखा हो। मैं तो उससे इतना प्रभावित हुआ कि तुरन्त 'पंच' तथा दूसरे भी आंग्ल पत्रों का ग्राहक वन गया जिससे पढ़ सकूं कि वे आपके विषय में क्या कहते है।

मैं आशा करता हूं, आप रोगर वाल्डविन से मिले होंगे। उनके एक पत्र में, जो अभी-अभी मुझे मिला है, एक अनुच्छेद है जो सम्भवतः आपके लिए दिलचस्प होगा—"...नवीन ब्रिटिश 'अधिनायकत्व' (डिक्टेटरशिप) अमरीकी साहूकारों का सृजन है। अव से आपको दो शत्रुओं से लड़ना होगा, वाल स्ट्रीट[2] का छिपा दुश्मन, जिसकी पीठ पर अमरीकी सरकार है, तथा ब्रिटेन। ब्रिटेन के लिए भारत को, आर्थिक दृष्टि से ह्रासशील साम्राज्य के व्यापार के अर्थ आय के मुख्य स्रोत के रूप में सुरक्षित रखने के लिए वालस्ट्रीट अपनी सारी ताकत लगायेगा।"

आपका स्नेहपात्र

ज० ने०

—अंग्रेजी। इलाहावाद, १७।९।१९३१। नेहरू संग्रहालय में सुरक्षित पत्रावली से]

सौजन्य : श्रीमती इन्दिरा गांधी तथा नेहरू संग्रहालय।

२०. जवाहरलाल का पत्र : गांधीजी के नाम

स्वराज भवन

इलाहावाद, सितम्वर १९वीं, १९३१

मेरे प्यारे वापू,

जो पत्र मैं हवाई जहाज से भेजता हूं उनकी दूसरी प्रति भी भेजने की अपनी इच्छा के कारण मैं गड़वड़ी में पड़ता जा रहा हूं। और मुझे भय है कि मैंने आपको भी जरूर परीशानी में डाल दिया होगा। कभी-कभी प्रतिलिपि आपके पास मूल प्रति के पहिले पहुंच गयी होगी। मूल के साथ जो संलग्न कागज होते है वे

---

१. इंग्लैण्ड का प्रसिद्ध हास्य-व्यंग-प्रधान पत्र।

२. वाल स्ट्रीट प्रमुख अमरीकी वैंकों का केन्द्र है, इसलिए यह शब्द अमरीकी वित्तशक्ति के प्रतीक के रूप में इस्तेमाल किया जाता है।

प्रतिलिपि के साथ फिर से भेजे नही जा सके। जो भी हो, मैं इसी अस्तव्यस्त ढंग पर इस आशा के साथ आगे भी काम करता रहूगा कि कुछ तो आपके पास पहुंचता है।

मैं इसके साथ स्वराज भवन के न्यासपत्र का एक प्रारूप भेज रहा हू। यदि आप इस पर अपनी स्वीकृति देंगे तो मुझे प्रसन्नता होगी। जमनालालजी ने जो सवाल उठाया है और जिसका हवाला मैंने अपने 'नोट' मे दिया है, उस पर मैं खासतौर से आपकी राय चाहूगा हू।

मथुरा जिले पर एक लेख भी, जो मैंने य० इ० के लिए कुमारप्पा के पास भेजा है, आपकी सूचना के लिए नत्थी है। हमारे जिलाधिकारी गण, निस्सन्देह जिनकी तनख्वाहो और भावी प्राप्तियो को सदा-सदा के लिए गारण्टी करने की वात आपसे कही जायगी, मौज मे अपने काम कर रहे हैं। अभी दो ही घण्टे पहिले इलाहावाद के निकट के किसानो का एक दल मुझसे मिल गया है। उनके शरीरो पर चोट के निशान हैं, यहा तक कि उनकी औरतो पर भी खरोच और खून के चिह्न हैं और उनके दांत तक टूट गये हैं। जो गम्भीर रूप से घायल हुए है, वे तो हमारे पास आ ही न पाये। यह सव शेष लगान चुका देने के लिए नम्रतापूर्ण समझावन का परिणाम था! और जव मैं इन भद्रतापूर्ण उपायो के वारे में सोच रहा था, तव मेरा दिमाग एक सुस्मृत धारा की ओर चला गया—"ऐसी पिकेटिंग अनाक्रामक होगी, और उसमे जवरदस्ती, धमकी, रोक, शत्रुतापूर्ण प्रदर्शन तया जनता का मार्गविरोव नही होगा।" इत्यादि इत्यादि।

यह एक अद्भुत दुनिया है जिसमे हम रह रहे हैं और नित्य हमारे अनुभव में वृद्धि होती जा रही है। लन्दन नगर मे शान्ति और सामञ्जस्य है—कम-से-कम मैं ऐसी कल्पना करता हू—तथा भारत के भविष्य पर वहस करके उसे रूप दिया जा रहा है। (पर) यहा, वह भविष्य कितना दूर मालूम होता है! वर्तमान ही हमारा ध्यान तल्लीन कर लेता है। आज (वर्तमान) के लिए तो उसकी वुराइया ही काफी हैं और जिन वैधानिक समस्याओ पर गोलमेज सम्मेलन मे वहस हो रही है—प्रत्यक्ष वा अप्रत्यक्ष निर्वाचन, द्वितीय सभाए इत्यादि—उनमे ज्यादा दिलचस्पी लेना जरा कठिन लगता है। मैं ताज्जुव करता हू कि कव असली सवालों से आपकी मुठभेड़ होगी।

मैं अलग, हवाई डाक से, एक एग्रेरियन रिपोर्ट भेज रहा हू। इसमे वहुत-सी छपाई की गलतिया हैं। अभी तक मैं इसे पूरा पढ नही पाया हू, क्योंकि अभी हो यह प्रेस से निकली है।

मैं कल चिन्तामणि[1] को देखने गया था। उनकी स्थिति काफ़ी खराब है और वह इतने अच्छे हो जायं कि गोलमेज सम्मेलन में जा सकें, इसकी सम्भावना कम ही है। न जा सकने का उनको बड़ा रंज है क्योंकि उन्होंने सप्रू के विरोध में सुदृढ़ मोर्चा लेने का निश्चय कर लिया था।

प्रेम

आपका स्नेहपात्र
ज० ने०

—अंग्रेजी। इलाहाबाद, १९।९।१९३१। नेहरू संग्रहालय में सुरक्षित पत्रावली से]

सौजन्य : श्रीमती इन्दिरा गांधी तथा नेहरू संग्रहालय।

२१. जवाहरलाल का पत्र : गांधीजी के नाम

दिल्ली
२४।९।३१

मेरे प्यारे बापू,

झंग में होनेवाले पंजाब प्रान्तीय सम्मेलन में शामिल होने के लिए मै पंजाब जाने के मार्ग में हूं।

बंगाल में हिजली नजरबन्द छावनी में गोलियां चलने की घटनाएं हुई है। यदि सेंसर ने रोका न होगा तो उनके विषय में आपको समुद्री तार मिले होंगे। मैं अखबारों की कुछ कतरनें भेज रहा हूं। बंगाल की हालत बुरी है और गैर-सरकारी तथा सरकारी युरोपीयों ने एक ओर कांग्रेस कार्यों के विरुद्ध और दूसरी ओर नजरबन्दों तथा उनके साथियों के खिलाफ़ कड़ा मोर्चा लगा रक्खा है। मैं महसूस करता हूं कि हम लोग बंगाल की उपेक्षा करते रहे हैं और हम ऐसा कर नही सकते। सुभाष ने बी० पी० सी०[2] से इस्तीफ़ा दे दिया है—दूसरे कइयों ने भी ऐसा ही किया है। किन्तु सेनगुप्त का दल कुछ अधिक भव्यतापूर्वक काम नही कर रहा है।

---

१. सर सी० यज्ञेश्वर चिन्तामणि, प्रयाग के दैनिक 'लीडर' के सम्पादक, जो उस समय बीमार थे।

२. बंगाल प्रान्तीय कांग्रेस।

आखिरकार मैं आपको सयुक्तप्रान्त की एग्रेरियन रिपोर्ट हवाई डाक से नही भेज सका, मामूली डाक से ही भेज पाया। हवाई डाक का महसूल १२ रुपये था और वह मुझे भयानक जान पडा। मैंने महसूस किया कि आप इस फिजूल-खर्ची को मजूर नही करेंगे।

प्रेम

आपका स्नेहपात्र

जवाहरलाल

जान पडता है कि लन्दन मे आप अपना प्रधान कार्यालय बदल रहे हैं किन्तु मैं अपना पत्र 'वो' के पते ही भेज रहा हूं।

अखबारी कतरनें अलग भेजी जा रही हैं।

——अंग्रेजी। दिल्ली, २४।९।१९३१। नेहरू सग्रहालय मे सुरक्षित पत्रावली से]

सौजन्य : श्रीमती इन्दिरा गाधी तथा नेहरू सग्रहालय।

२२. जवाहरलाल का पत्र : गांधीजी के नाम

इलाहाबाद

अक्तूबर पहली, १९३१

मेरे प्यारे बापू,

आज मैं पजाब से लौटा हू, रास्ते मे तीन सयुक्तप्रान्तीय जिलो मे भी हो आया यहा आने पर विस्तीर्ण सागर से लिखा हुआ आपका पत्र मेरी प्रतीक्षा करता मिला। आग्ल अखबारो की कतरनें पढने मे दिलचस्प थी। आपकी इच्छानुसार मैं उन्हे आगे वल्लभभाई के पास भेज रहा हू।

सयुक्तप्रान्त के विषय मे लिखने लायक कोई उल्लेखनीय परिवर्तन नही हुआ है। बीच-बीच मे मुझे सयुक्तप्रान्त के चीफ सेक्रेटरी (मुख्य सचिव) जगदीश प्रसाद के पत्र मिलते रहते हैं, और वे सदा ही शिष्ट होते हैं तथा की गई शिकायतो की जाच का आश्वासन देते हैं। कभी-कभी छोटी-मोटी राहत मिल भी जाती है। उदाहरण के लिए, आपको याद होगा कि मैंने आपका ध्यान इस ओर आकर्षित किया था कि मेरठ का ज्वाइण्ट मैजिस्ट्रेट एक धरना-विरोधी सघ मे शामिल हो गया है। उसे उससे इस्तीफा देने को कहा गया है। मुख्य सवाल भूमि से बेदखली का—अभी तक हल नही हुआ है। सरकारी अधिकारियो ने मुझे बताया है कि बेदखल किसानो की काफ़ी अच्छी तादाद को, उनके जमीदारो के साथ की गई निजी व्यवस्था के अनुसार, भूमि पर काबिज रहने दिया गया है, किन्तु

मैं इसकी जांच नही कर सका हूं। मथुरा की और कोई खवर मुझे नही है। अगले तीन दिनों में मैं वारावंकी, गोंड़ा, वहराइच और रायवरेली के एक छोटे से दौरे पर जाऊंगा और वहां पता लगाऊंगा कि क्या हो रहा है। इस वीच मुझे लगता है कि स्थानीय सरकार अपने जिलाधिकारियों को अंकुश में रखने का यत्न कर रही है, किन्तु इसमे उसे पूरी तौर पर सफलता नहीं मिली है। स्वभावतः वर्षा ने कार्रवाइयों में वाधा डाली है—किसानों की तरफ़ भी और जमीदारों की ओर भी। पिछले दस दिनों में जो गहरी वर्षा हुई है उसके कारण फसल को काफी नुकसान पहुंचा है। वेदखल किसानों की मुख्य कठिनाई है—अपनी फसल खो देने का भय। इस भय के कारण वे वेचने और उधार लेने या अपनी फसल को अपने लिए वचा रखने के लिए कोई भी काम करने को प्रेरित होते हैं।

मैं कुछ अखवारों की कुछ कतरनें नत्थी कर रहा हूं। इनमें से दो हिजली के सम्वन्ध में है। टागोर की वक्तृता से आप देखेंगे कि वंगाल ने इस मामले पर कितनी गहराई से महसूस किया है। सचमुच यह एक भयानक काण्ड हो गया है। वंगाल में यह भावना है कि चटगांव और हिजली दोनों में उनकी तकलीफ़ों की कांग्रेस कार्यसमिति ने निर्दयतापूर्वक उपेक्षा की है। मुझे मालूम हुआ है कि हिजली-काण्ड के विषय में निष्पक्ष जांच करने के लिए वल्लभभाई ने इमर्सन को लिखा है।

दूसरी कतरनों मे वंगाल कांग्रेस के झगड़े पर आगे का पंचनिर्णय है। एक समझौता हो गया है, जो उचित और विवेकसम्मत लगता है। फिर भी 'एडवांस'[1] दल में इसे लेकर हल्ला मचाने की दुर्भाग्यपूर्ण प्रवृत्ति है।

मैंने अब्दुलगफ्फार खां से सम्पर्क रखने की पूरी चेष्टा की है। कमला के भाई, कैलास, दो हफ्ते पहिले, उनके पास भेजे गये थे। मुझे उनकी या उनके काम की कोई खवर नही मिली है। मैं नही जानता कि पत्र लिखे ही नही जाते या वे रास्ते में रोक लिये जाते हैं। खुर्शेद वेशक वहां है। मैं प्रायः अब्दुलगफ्फार तथा उनके भाई डाक्टर खां साहव को लिखता रहा हूं किन्तु उनकी तरफ से एक या दो संक्षिप्त पहुंच भर प्राप्त हुई है। जहा तक सरकार का सम्वन्ध है, मै नही जानता कि वर्तमान स्थिति क्या है। किन्तु पुराने जिर्गा वालों और पेशावर के कांग्रेसियों के बीच का संघर्ष जारी है। मैंने पिछले वर्ग के एक आदमी से लाहौर में लम्वी वार्ता की; उसके पास शिकायतें थीं। मैंने उसे शान्त किया और कई सुझाव दिये। फिर भी मैं अनुभव करता हूं कि हममें से किसी को वहा अवश्य जाना चाहिए और इस झगड़े

---

१. वंगाल के एक गुट के कांग्रेस नेता श्री जे० एम० सेनगुप्त का अंग्रेजी दैनिक।

को दूर करने मे निजी तौर पर मदद देनी चाहिए। सीमाप्रान्तीय कांग्रेस कमेटी और अफगान जिर्गा तथा खुदाई खिदमतगारो के विषय मे हमारा जो प्रस्ताव था, वह कार्यरूप मे परिणत करने मे कठिन था ही। वह तव दुगना मुश्किल हो जाता है जव सम्वन्धित जनो को विधानो तथा ऐसी दूसरी चीजो का वहुत कम खयाल हो और वे पत्र लिखने के शौकीन भी न हो। अब्दुल गफ्फार खा को भी जिर्गा के अपने आदमियो से कुछ कठिनाई पेश आ रही है। अहमद शाह-जैसे कुछ लोगो ने कार्य-समिति के प्रस्ताव की कडी आलोचना की है। किन्तु जिर्गा मे अब्दुल गफ्फार की स्थिति वहुत मजवूत है और वह सचमुच ही इसमे सफल हो सकते हैं। मैं रफी अहमद किदवई को उनके पास भेजने की कोशिश कर रहा हू। मैं समझता हू कि इस काम के लिए रफी अच्छा आदमी है।

जय प्रकाश यही हैं। इधर उनके कुटुम्ब मे वडी मुसीबतें रही हैं—मौत और वीमारिया—और वह वहुत गैरहाजिर रहे हैं। वह दुखी हैं और अपने को अस्थिर तथा वेजीव अनुभव करते हैं। मैं नही समझता कि विरला के साथ अपने कार्य की ओर उनका आकर्षण है।

कमला मेरे साथ पजाव गई थी किन्तु अधिकाश समय अस्वस्थ रही। ऐसा लगता है कि उसे एक अवधि तक पूर्ण विश्राम की आवश्यकता है। वह वहुत कमजोर हो गई है और यह सिर्फ उसका उत्साह और सकल्प है जो उसे चलाये जा रहा है।

हमारे शासको के देश मे आप जो नई विजयें और अधिकार प्राप्त कर रहे हैं उनके वारे मे हम रोज़ पढा करते हैं। जो भी हो, इतना तो वहुत स्पष्ट है कि आपके प्रवास से लाभ-ही-लाभ हुआ है और इसका पर्याप्त फल निकलेगा. कल आपका जन्मदिवस है, और हम सव नगरो और गावो मे एकत्र होंगे, आपका ध्यान करेंगे तथा अपनी प्रेमपूर्ण श्रद्धाञ्जलि एव शुभाकाक्षाए आपको भेजेंगे। किन्तु आपको याद करने के लिए हमे जन्मदिवस की आवश्यकता नही है। मन को पूरित कर देने तथा भावनाओ को उभार देने का एक विचित्र ही ढग आपका है, और मेरे-जैसा एक निष्ठुर व्यक्ति भी आपके वारे मे सोचते समय अपने को कुछ कम निष्ठुर अनुभव करने लगता है।

मैंने इमर्सन को जो पत्र भेजा है, उसकी एक प्रति सलग्न है। इसे मेरे पिछले हवाई डाकवाले पत्र के साथ ही जाना चाहिए था, किन्तु उस समय मैं इस पर अपने हाथ नही डाल पाया।

मुझे आशा है कि आपको स्वराज्य भवन-न्यास पत्र का मसविदा मिल गया होगा, जिसे मैंने कुछ समय पहिले भेजा था। इस मामले मे मैं आपके आदेशो

की प्रतीक्षा करूंगा। अंसारी और पेरिन[1] न्यासपत्र में सम्पत्ति-विक्रय का कोई जिक्र किये जाने के सख्त खिलाफ़ हैं। उनका कहना है कि किसी भी हालत में इसकी अनुमति नही दी जानी चाहिए। अभी तक विधान[2] और जमनालाल जी की राय मेरे पास नही आई है। किन्तु जमनालाल जी के विचार तो मैं पहिले से ही जानता हू।

जब से आप (भारत से) गये है काफी नियमितता के साथ आपको लिखता रहा हूं—हफ्ते में दो बार, हवाई डाक से और मामूली डाक से। मुझे आशा है कि मेरे पत्र आपको मिल गये है। कभी-कभी मैंने महसूस किया है कि मेरे पत्र आपके लिए त्रास का कारण हो रहे होंगे। जबतक आपको कोई खास बात कहनी न हो, मुझे लिखने का कष्ट मत कीजिएगा।

वल्लभभाई ने मुझे लिखा है कि उन्होने आपको एक समुद्री तार भेजा है किन्तु वह मुझे उसकी प्रतिलिपि भेजना भूल गये हैं। जाहिर है कि समुद्री तार पौण्ड तथा रूपये के अपवित्र परिणय की तथा उसके कारण भारत से सोना खीच लिये जाने की जो सम्भावना है उसकी बात कहता है। मैं चल-मुद्रा तथा वित्त की गुत्थियो को समझने का दावा नही करता किन्तु हाल की घटनाओं ने मुझे बहुत चिन्तित कर दिया है। मैं महसूस करता हूं कि अंग्रेज लोग, बल्कि उनके साहुकार जबतक स्वराज आयेगा तबतक हमें कंगाल और दीवालिया राष्ट्र बना देने का निश्चय कर चुके हैं। आपने यह तो देखा ही होगा कि पीपुल्स बैंक फेल हो गया है। मुझे लगता है कि कही दूसरे भारतीय बैंक भी इसका अनुसरण न करें।

मदाम जगलोल पाशा तथा नहसपाशा के सन्देश पढ़ कर मुझे खुशी हुई। मेरी कामना है कि लौटते वक्त आप मिस्र भी होते आते।

आपका स्नेहपात्र
जवाहरलाल

संलग्न: अखबारों की कतरनें
इमर्सन के नाम पत्र की प्रतिलिपि

मैं अपने पिछले हवाई डाक वाले पत्र की प्रतिलिपि आपको नही भेज रहा हूं क्योकि मैं उसकी प्रतिलिपियां नही करा सका।

—अंग्रेजी। इलाहाबाद, १।१०।१९३१। नेहरू संग्रहालय में सुरक्षित पत्रावली से]
सौजन्य : श्रीमती इन्दिरा गांधी तथा नेहरू संग्रहालय।

---

१. पेरिन बहन कैप्टेन, बम्बई की प्रसिद्ध समाज-सेविका।
२. डा० विधानचन्द्र राय, बंगाल के प्रसिद्ध नेता।

२३. जवाहरलाल का पत्र : गांधीजी के नाम

स्वराज्य भवन

इलाहाबाद, अक्तूबर १६वी, १६३१

मेरे प्यारे बापू,

आज मैंने आपको एक समुद्रीतार भेजा है, जो, मुझे भय है, आपकी परीशानियो मे वृद्धि करेगा। इस समुद्री तार मे इलाहाबाद जिला काग्रेस कमेटी के उस निर्णय की बात कही गई है जो इस बात की अनुमति मागती है कि चालू वर्ष का लगान न देने के लिए वह किसानो को राय दे सके। मैं इस समुद्रीतार की, और जो पत्र मैंने वायसराय के वैयक्तिक सचिव तथा कुवर जगदीश प्रसाद को लिखे हैं, उनकी प्रतिलिपिया भी नत्थी कर रहा हू। आपके लिए इन पत्रो को, विशेषत उस पत्र को जिसमे सख्याए ही सख्याए हैं, पढ़ने का कष्ट करने की आवश्यकता नही है। फिर भी मैंने सोचा कि सन्दर्भ की सुविधा के लिए उन्हें आपके पास होना चाहिए। मैंने ये सब कार्रवाइया, खुद अपने आप, कामोवेश, निजी रूप से, की हैं। किन्तु अन्तिम सूचना तो हमारी प्रान्तीय और इलाहाबाद जिला काग्रेस कमेटी द्वारा ही भेजी जायगी। यह सचमुच खेदजनक है कि हमने जो सलाह किसानो को दी थी बहुत कुछ उसके कारण किसान कैसी सकट की स्थिति मे आ गये हैं। उन्होंने कुछ समय तक उस सलाह का अनुसरण किया और ८ आना (आधा) तथा १२ आना (तीन चौथाई) देकर भरपाई की रसीदें ले लेने की बातें की, किन्तु (उनकी) इस बात का किसी पर विशेष प्रभाव नही पड़ा, और उनके खिलाफ कानूनी कार्रवाई की गई और वे बेदखल कर दिये गये। इस अवधि मे भी हर तरह का उत्पीडन जारी रहा। अपनी बेदखलियों के बाद भी उनको आशा बनी रही कि उनकी जमीनो की रक्षा के लिए काग्रेस कुछ करेगी। किन्तु अपराधिक अनधिकारप्रवेश के बहुसंख्यक मामलो के सिवा कुछ नही हुआ। वे न केवल अपनी जमीनो से बेदखल कर दिये गये, बल्कि उन्हें जेल भेजा गया और अनधिकार-प्रवेश के लिए उन पर जुर्माने किये गये। अन्त मे वे काग्रेस की ओर से कोई मदद मिलने के बारे मे निराश हो गये। और कही से सहायता आने की उम्मीद उन्हें नही रह गई। इतने पर भी उन्होंने हमे दोष नही दिया, न हमारी ईमानदारी मे ही अपने विश्वास को डिगने दिया, किन्तु इतना उन्होंने अवश्य अनुभव कर लिया कि उनके लिए कुछ करने की स्थिति मे हम नहीं हैं। अन्त मे, पूरी तरह नाउम्मीदी से भरे हुए और किसी भी कीमत पर अपनी जमीनें बचा लेने की एक मात्र इच्छा ने, उन्होंने अपने चौपायो को बेच दिया, और जहा वे रुपये कर्ज ले सकते थे, फिर चाहे जिस्सी

भी दर पर हो, वहां परिणाम की बात सोचे बिना ही, कर्ज लिया। सिर्फ एक ही विचार उन्हें परीशान कर रहा था—अपनी जमीनों को बचा लेने का विचार। इसलिए उन्होंने चालू साल की पूरी रकम ही नही अदा की, बल्कि अक्सर कुछ बक़ाया तथा भारी खर्चे भी दिये। इस तरह, आखिरकार उन्हें अपनी जमीनें प्राप्त करने के लिए उससे कहीं ज्यादा देना पड़ा, जितनी रक़म बिना कुछ छूट के भी उन्हें शुरू में देनी पड़ती। उनका स्थायी अधिकार भी चला गया और वे जीवन भर के लिए ही दखिल्कार रह गये।

अब नये मौसम की मांगों की धमकी उनके सामने है और सम्भवतः वही सब ढंग फिर इख्तियार किये जायंगे। उनके लिए और हमारे लिए यह एक मुश्किल सवाल है। बहुत सावधानी के साथ विचार करने के बाद हमारी जिला कांग्रेस कमेटी ने अनुभव किया कि लगान रोक लेने की सलाह देने के अलावा अब कोई रास्ता नही रह गया है। अगर समयोचित और प्रभावकारी बनानी हो तो यह सलाह अगले दो या तीन सप्ताहों के अन्दर ही दी जानी चाहिए। इसलिए यह मामला तुरन्त ध्यान देने का है। निस्सन्देह हमारा जिला और प्रान्त कार्यसमिति की अनुमति के बिना कोई क़दम नही उठायेगा। कार्यसमिति इस महीने की २७ तारीख को दिल्ली में मिल रही है। हमारी प्रान्तीय समिति की बैठक उसके बाद तुरन्त होगी।

यह स्पष्ट है कि इलाहाबाद जिला जो भी कदम उठायेगा उसका असर पास-पड़ोस के ज़िलों पर भी होगा, जो समान रूप से पीड़ित हैं। मामला प्रान्तव्यापी हो सकता है। आप इसके दूरगामी परिणामों की खुद ही कल्पना कर सकते हैं।

मैं नही जानता कि यह आपके लन्दन के काम को किस रूप में प्रभावित करेगा। जहां तक मुझे दिखाई पड़ता है, गोलमेज सम्मेलन दरवाजे की कील की तरह मर चुका है। और इससे कुछ ज्यादा फरक नही पड़ता कि उसके ऊपर क्या प्रभाव पड़ता है।

मैं इस पत्र को हवाई डाक की तारीख के चन्द दिनों पहिले भेज रहा हूं। अगर जरूरी होगा तो आगे और ब्योरा देते हुए मैं दूसरा पत्र भी लिखने की कोशिश करूंगा।

आपका स्नेहपात्र
जवाहरलाल

—[इलाहाबाद, १६।१०।१९३१। नेहरू संग्रहालय में सुरक्षित पत्रावली से]
सौजन्य : श्रीमती इन्दिरा गांधी तथा नेहरू संग्रहालय।

२४. जवाहरलाल का तार : गांधीजी के नाम

२५।९।३२

एक्सप्रेस

गाधी जी

यरवदा जेल, पूना

आपके तार और सक्षिप्त समाचार ने कि कुछ समझौता हो गया है, मुझे राहत (और) आनन्द से भर दिया। आपके उपवास के प्रथम समाचार से मानसिक वेदना (और) भ्रान्ति हुई थी किन्तु अन्त मे आशावादिता विजयिनी हुई और पुन मन को शान्ति मिली। दलित पददलित वर्गों के लिए (किया) कोई भी बलिदान अधिक नही है। स्वतन्त्रता की कसौटी निम्नतम की स्वतन्त्रता ही होनी चाहिए किन्तु (मुझे) खतरा लगता है कि अन्य प्रश्न एक मात्र लक्ष्य को ओझल न कर दें। धार्मिक दृष्टिकोण से निर्णय करने मे (मैं) असमर्थ हू। खतरा है कि आपके साधनो का दूसरे लोग दुरुपयोग न करे किन्तु मैं जादूगर को सलाह देने की कल्पना कैसे कर सकता हू।

प्रेम

जवाहर

—अंग्रेजी। देहरादून जेल, २५।९।१९३२। नेहरू संग्रहालय में सुरक्षित पत्रावली से]

सौजन्य : श्रीमती इन्दिरा गांधी तथा नेहरू संग्रहालय।

२५. चिन्तामणि का पत्र : गांधीजी के नाम

[महादेवभाई ने अपनी डायरी मे चिन्तामणिजी के पत्र का जिक्र ८।१०।३२ की तिथि मे किया है। स्पष्ट है कि यह पत्र चिन्तामणि ने अक्तूबर ३२ के प्रथम सप्ताह मे किसी दिन लिखा होगा।—सम्पा०]

मैं यह पत्र आपको एक उदारदली के नाते नही लिख रहा हू, मगर एक हिन्दुस्तानी की हैसियत से, जिसे काग्रेस की प्रतिष्ठा को धक्का पहुचने पर दुःख हुए विना नही रह सकता, लिख रहा हू। फिर भी कहता हू कि सविनय भग की लडाई समेट लीजिए। और कुछ नही तो इस लडाई को मुलतवी रखने का विचार कीजिए।

—अंग्रेजी। ८।१०।१९३२ के आस-पास। महादेव भाई की डायरी भाग २ पृ० ९९]

२६. प्रो० हबीबुर्रहमान[1] का पत्र : गांधीजी के नाम

हिन्दू धर्म में अस्पृश्यता तो जरूर है। आपके शास्त्र तो शूद्र वेदोच्चार सुन लें तो उनके कानों मे सीसा भर देने की सलाह देते है। पहले इन शास्त्रों पर पाबन्दी लगवाइए, फिर अस्पृश्यता-निवारण की बात कीजिए। भगवद्गीता के उपोद्घात में कृष्णार्जुन की बात को काल्पनिक बताया है, यह भी हकीकत के खिलाफ़ है। करार आपने हिन्दुओं की मत-संख्या बढ़ाने के लिए किया है, दुनिया से अस्पृश्यता मिटाने के लिए करने की बात ग़लत है। ऐसा होता तो दुनिया में अस्पृश्यता के रहते हुए भी आपने उपवास कैसे तोड़ दिया ?

—अक्तूबर, १९३२। महादेव भाई की डायरी, भाग २, पृ० १७३]

२७. राधाकान्त मालवीय का पत्रांश : गांधीजी के नाम

[श्री राधाकान्त मालवीय ने गांधीजी के उपवास का विरोध करते हुए एक लम्बा पत्र लिखा था। पत्र की चर्चा गांधीजी ने ८।११।१९३२ के अपने उत्तर में की है। वह पत्र प्राप्त नहीं है किन्तु श्री महादेव भाई ने अपनी डायरी में उसका निम्न अंश दिया है।—सम्पा०]

उपवास बुरा-से-बुरा बलात्कार है। आपका समझौता किसी को पसन्द नहीं आया। चिन्तामणि और कुंजरू तक को। और लोग भी यों ही हांजी-हांजी करते हैं।

—प्रथम सप्ताह, नवम्बर १९३२। म० भा० डा० भाग २ पृ० १८२]

२८. राधाकान्त का पत्रांश : गांधीजी के नाम

आपके साथ लोकमत नही है।

१. आपको मन्दिर में नियमित जानेवालों की मतगणना करानी चाहिए।

२. इस मन्दिर में दूर दूर से आनेवालों का मत लेना चाहिए।

---

१. अलीगढ़ विश्वविद्यालय के संस्कृत विभाग के अध्यापक। यह पत्र अक्तूबर १९३२ के अन्त या नवम्बर ३२ के आरम्भ में लिखा गया होगा।

[राधाकान्त को जब बापू ने समझाया कि ऐसे मन्दिर मे जानेवालो की ही राय ली जाती है, तब उसने कहा "मुझ पर गलत असर था। मैंने ऐसी खबरें पढ़ी थीं कि हर किसी हिन्दू का मत लिया जा रहा है।"]
—९।१२।१९३२[1], म० भा० डा० भाग २, न० जी० प्र० म० पृष्ठ २६६।]

२९. शिवप्रसाद गुप्त[2] का पत्रांश : गांधीजी के नाम

"जो चीज सदियो से किसी की सम्पत्ति के रूप मे चली आरही है, क्या वह उससे ले ली जा सकती है? और वह बलात्कार न होगा? गोमास खानेवाले आदमी को मन्दिर मे प्रवेश करने से रोकने का हिन्दू समाज को हक नही है? आपको अपना शरीर छोड देने का क्या अधिकार है? वह तो समर्पित ही है?

गांधी जी ने इन्हें उत्तर दिया था—"मन्दिर किसी की निजी सम्पत्ति हो और उसे खुलवाने की इच्छा की जाय तो यह सही है कि वह बलात्कार है।"
—म० भा० डा० भाग २, प० २८६, १४।१२।१९३२।[3]]

३०. जवाहरलाल का पत्र : गांधीजी के नाम

[डाक की मुहर से मालूम होता है कि यह पत्र ६।१।१९३३ को 'सर्टिफिकेट आफ पोस्टिंग' के अन्तर्गत भेजा गया था।—सम्पा०]

देहरादून जेल
५-१-३३

मेरे प्यारे बापू,

आपका पत्र सदैव 'टानिक' (बलकारी) होता है, और जब वह लम्बे अन्तरा-

---

१. यह पत्र कुछ दिन पूर्व लिखा गया होगा। महादेव भाई ने ९।१२।३२ के दिन इसे उद्धृत किया है।
२. वाराणसी के प्रसिद्ध राष्ट्रीय नेता; 'आज' एवं काशी-विद्यापीठ के स्थापनकर्त्ता। कुछ समय तक कांग्रेस के कोषाध्यक्ष।
३ यह पत्र कुछ दिन पूर्व लिखा गया होगा। १४।१२।३२ की डायरी मे महादेव भाई ने इसका उल्लेख किया है।

वकाश के वाद आता है, तो वह अपने साथ एक पुलक लेकर आता है एवं तव उसका प्रभाव और भी उल्लासकारी होता है। मैं तो लिफ़ाफे पर महादेव की हस्तलिपि (देखते ही) पहिचान गया। आपकी (हस्तलिपि) पहिले जैसी नही लगती। शायद आपका वायां हाथ काम कर रहा था, और मैं उससे इतना परिचित नही हूं।

निस्सन्देह, जहां तक 'स्टेट्समैन' और 'पायनियर' से मालूम हो सकता है मैं अस्पृश्यता के विरुद्ध आपके आन्दोलन को वड़ी दिलचस्पी के साथ देख रहा हूं। जो कुछ आप करेंगे, वह निश्चय ही मेरी दिलचस्पी और आकर्षण का कारण होगा। (इस) विषय मे खुद ही विराट सम्भावनाएं है। धार्मिक आदमी न होने के कारण मेरी दिलचस्पी मुख्यतः सामाजिक पक्ष और अन्तर्हित व्यापक प्रश्नों तक ही सीमित है।

निस्सन्देह सरूप को अस्पृश्यता का काम करना चाहिए—यदि वह वैसा महसूस करती है। सीलोन (लंका) में एक संक्षिप्त अवकाश का मेरा सुझाव मुख्यतः कृष्णा के भले के लिए था। उसके लिए मै कुछ परीशान हूं। साल भर तक जेल मे रहने तथा हमारा घर व्यवहारतः टूट जाने के वाद, वह अपने को एक अस-म्बद्ध किनारे पर अनुभव करती है और नही जानती कि क्या करना चाहिए। फिर अपने वचपन से ही यह गरीव लड़की यथार्थ गृह-जीवन और उचित शिक्षण से वञ्चित रही है—हमारी व्यस्तता और वार-वार जेल जाने के कारण। वह एक एकाकिनी कन्या के रूप में वड़ी हुई—उसे उतनी मैत्री और सहानुभूति नही मिली जितनी की हकदार वह थी।

पिता की मृत्यु ने उसे वुरी तरह हिला दिया। मैंने उसे सान्त्वना देने और उसका विश्वास प्राप्त करने की चेष्टा की और मुझे यह कहते खुशी है कि मुझे कुछ दूर तक इसमे सफलता हुई। किन्तु १९३१ हम सवके लिए कार्य और परीशानी तथा चिन्ता मे पूर्ण था। तदनन्तर उसके लिए जेल का लम्वा व्यववान आ गया और किशोरिका के लिए यह उससे कही ज्यादा परीक्षा की घड़ी सावित हुआ जितना यह हममे से अधिकांश के लिए हो सकता था। जव उसकी रिहाई नजदीक आई, मैं कल्पना करने लगा कि वह कैसा महसूस करती होगी, और किस प्रकार आनन्द भवन का जीवन, जैसा कि आज वह है, उसके लिए आनन्द का कारण न होगा। वह विरागता का अनुभव करेगी। वह कुछ करना चाहेगी, और फिर भी न जान पायेगी कि क्या करना चाहिए—और इससे उसके मन की शान्ति छिन जायगी। मैं स्वयं इस विषय में स्पष्ट नही था कि उसे क्या सुझाऊ। पिछले दिनो वह मेरी ओर कुछ इस तरह देखने लगी है जैसे एक मित्र-रहित जगत् में मैं ही उसका आश्रय

हूं, शरणस्थल हू। अगर मैं वाहर होता तो शायद उसकी मदद कर सकता किन्तु देहरादून जेल से मैं वहुत कम ही कर सकता हू।

मैंने महसूस किया कि निरपेक्ष वातावरण मे एक सक्षिप्त अवकाश विताने से उसके मन को शान्ति मिलेगी और द्वन्द्व मिट जायगा। इसीलिए सीलोन-विषयक मेरा प्रस्ताव था। सीलोन मे तीन हफ्ते विताने से कोई समस्या तो हल न हो जाती किन्तु उसमे एक ताजगी आ जाती और वह जीवन का ज्यादा प्रकाशमान दृष्टिकोण लेकर लौटती। ये थे मेरे कारण। मैं शारीरिक स्वास्थ्य से ज्यादा मानसिक स्वास्थ्य के विषय मे सोच रहा था। किन्तु प्रस्ताव गिर गया प्रतीत होता है, क्योकि कोई इसके वारे मे उत्साहित नही जान पडता। इसलिए फिलहाल तो सीलोन दूर रह गया है।

शायद कृष्णा आपसे मिलने के लिए पूना जाय और उसके काम के विषय मे आप उसे सलाह दे सकें। सम्भव है, मेरी भी उससे भेंट हो। छोटे-छोटे कार्य-खण्डो का सुझाव देना तो काफी आसान है किन्तु सम्वन्धित जन को वह 'अपील' तो करे।

जहा तक मेरी मुलाकातो का सवाल है, करीव-करीव सात महीने होते हैं जव मेरी एक मुलाकात हुई थी। उनका अभाव मुझे वहुत खला है किन्तु सयुक्त प्रान्तीय सरकार ने मा तथा कमला के प्रति शिष्टतारहित व्यवहार किया और मैंने महसूस किया कि मेरे लिए और कोई विकल्प नही है, इसके सिवा अभी तक मैं अपने जिद्दीपन को छोड नही पाया हू—जिद्दीपन जो मेरी खानदानी कमजोरी है और जिसके वारे मे आप अनभिज्ञ नही हो सकते। सरकार ने कुछ आशिक सुधार किये और होम मेम्वर, छतारी के नवाब आये और उन्होंने अपनी चिन्ता प्रकट की पर यह सव, कमोवेश मुद्दे के वाहर की वातें थी, और भव्यतापूर्ण वात तथा ठीक वात नही की गई, किन्तु ठीक वात तो क्वचित् ही की जाती है। मैंने फिर सरकार को लिखा। फिर भी अपने मन मे मैंने निश्चय कर लिया था कि अगर कोई खास जरूरत पैदा हुई तो मैं अपनी मनाही को वापिस ले लूगा और किसी भेंट के लिए स्वीकृति दे दूगा। यह मामला पिछले कुछ हफ्तो से इसी रूप मे रहा है। मैंने शीघ्र किसी मुलाकात का सुझाव नही दिया, क्योकि मेरा तवादला फिर नैनी जेल मे किये जाने की कुछ वात उठी थी।

अव जव आपने भी इसके विषय मे लिखा है तो मैं क्या कर सकता हू, सिवाय इसके कि तुरन्त आपके आगे कन्धे डाल दू? इसलिए अव मे, और जवतक कोई अनुचित वात वाधक नही होती, मैं अपनी सामान्य मुलाकातें लूगा। अभी कई और हफ्ते कमला तो मुझसे भेंट नही कर पायेगी। वह वियान के इलाज मे कलकत्ता

में है। लेकिन मैं मां और इन्दु और सरूप और कृष्णा, या इनमें से जो मुझे खोज पायें, उनसे भेट करूंगा।

मुलाकाते बन्द करने से मै अपने ही अन्दर कुछ और एकान्त में चला गया। किन्तु मुझे एक आमोदकारी और मैत्रीपूर्ण पड़ोसी मिल गया—हिमालय। आकाश के पार्श्व पर उसकी रूपरेखा का दृश्य, और इस समय ताजी वर्फ से आवृत्त उसकी चोटियो और घाटियों, का मेरे लिए विशेष अर्थ रहा है। ऐसा लगता है कि वे उन सुदूर युगों की पुरातन स्मृतियां मेरे अन्दर जगा रही है जब शायद मेरे पूर्वज कश्मीर के पर्वतों मे घूमते फिरते थे और उनकी हिमराशियों और हिम-नदियों में खेला करते थे। मुझे यहां साथी तो मिलते रहे हैं, किन्तु अधिकतः मुझे खुद अपने तक ही छोड़ दिया गया है, और मैं आनुवंशिक तथा कौटुम्बिक परम्पराओं तथा अपनी निजी आदत की भी अवज्ञा करके कुछ चिन्तनशील वन गया हूं। किन्तु यह पतला छिलका है, जो मुझे भय है कि क्षुद्र उत्तेजना या छेड़छाड़ में गिर जायगा। भला इथोपियन (हब्शी) अपना रंग कैसे वदल सकता है?

मैंने खूव पढा है, और यदि किताबो से मनीषा प्राप्त हो सकती हो तो मै मनीषी हो सकता हूं। किन्तु मनीषा मुझसे दूर भागती है और मैं जिधर निगाह डालता हूं वही एक वड़ा प्रश्न-चिह्न मेरे सामने आकर खड़ा हो जाता है। कभी-कभी मैं राजकुमार सिद्धार्थ के पुराने सवाल की वात सोचता हूं और कोई उत्तर नहीं सुझाई देता।

"यह कैसे हो सकता है कि ब्रह्म एक जगत् की रचना करे और उसे इस प्रकार आर्त्त-दुखी रक्खे ? क्योंकि यदि वह सर्वशक्तिमान है और फिर भी इसे ऐसा रखता है तो वह भला नहीं है, और यदि वह शक्तिमान नहीं है तो वह ईश्वर नहीं है।"

अखवारों में जितने भी विवरण निकले है उनके अनुसार सदा की भांति आप अव्यवसाय के दास है, और जेल में भी खुद से शक्ति से अधिक काम ले रहे हैं। पश्चिम की नवीन औद्योगिक प्रणाली की प्रायः इसलिए आलोचना तथा निन्दा की जाती है, कि वह निरन्तर काम के लिए मनुष्य को मशीन वना देती है और उससे उसका समस्त अवकाश छीन लेती है। आपके बारे में कल्पना की जाती है कि आप इस प्रणाली के प्रेमी नही है, फिर भी मेरे लिए आप अक्सर इसी औद्योगिक प्रणाली को अपने में मूर्त्त करते दिखते है।

मैं आपकी इस वात से उलझन में पड़ गया हूं कि प्रत्यक्षदर्शी गवाहो ने आपसे कहा कि मेरी तन्दुरुस्ती ठीक है। सूचना तो सही है किन्तु वे कौन से प्रत्यक्षदर्शी गवाह हो सकते है जो आप तक पहुचने में सफल हो गये? काफी अर्से से मैंने कोई मुलाकात नहीं की है, और सिवाय एक साथी के, जो महीना भर पहिले रिहा हो

गया, मैं हाल के किसी चश्मदीद गवाह की बात नही सोच सकता। यह सच है कि मैं चार दातो से गरीब हो गया हू। शारीरिक स्वास्थ्य की देवी को प्रसन्न करने के लिए आधुनिक विज्ञान की वेदी पर मैंने उनकी बलि दे दी है।

यह सदा से लम्बा पत्र है। किन्तु यह मैं आपको एक साल से भी ज्यादा समय के बाद लिख रहा हू—और मैंने सोलह महीने से भी ज्यादा समय तक आपके दर्शन नही किये हैं। मुझे आपकी आखरी झलक तब मिली थी जब आप सुदूर पश्चिम की समुद्री यात्रा पर रवाना हो रहे थे और ज्यो-ज्यो जहाज आपको हमसे दूर लेता गया आपकी आकृति लघुतर, और लघुतर होती गई, और हम सब पोतघाट पर अपने को ज्यादा एकाकी और निरवलम्ब अनुभव करते हुए रह गये।

यरवदा के सुखी परिवार मे सबको मेरा प्रेम।

आपका स्नेहपात्र
ज० ने०

—अंग्रेजी। देहरादून, ५।१।१९३३। नेहरू सग्रहालय मे सुरक्षित पत्रावली से।]
सौजन्य : श्रीमती इन्दिरा गाधी तथा नेहरू सग्रहालय।

३१. जवाहरलाल का पत्र : गांधीजी के नाम

दे० दू० जेल
७।३।३३

मेरे प्यारे बापू,

आपके पत्र तथा 'हरिजन' के प्रथम दो अको के लिए धन्यवाद। निस्सन्देह 'हरिजन' को मैंने दिलचस्पी के साथ पढा, और अत्यधिक कृपा तथा अक्षयशील धैर्य का वह पुराना कटार की धारवाला स्पर्श देखकर खुश हुआ, जो विरोधी को समाप्त, या जैसा आप कहते हैं निष्प्रभाव, कर देता है। गरीब सनातनियो पर मुझे दया आती है। अपने क्रोध और गालियो तथा उन्मत्त शापो के साथ वे उस प्रकार के सूक्ष्म आक्रमण का सामना करने लायक नही है। इतने पर भी मूढता और पुरावादिता तथा इस ससार मे परिखाबद्ध सुविधा की शक्ति अद्भुत है। महात्मा और सन्तगण भी इनके सघात को तबतक सरलता से छिन्नभिन्न नही कर सकते, जब तक कि परिस्थितियो ने उसके लिए जमीन न तैयार कर दी हो। क्या आपने बर्नार्डशा का 'सेण्ट जान'—जोन आफ आर्क-विषयक नाटक पढा है? यदि नही तो मैं चाहता हू कि आप उसे पढे, विशेषत नाटक की भूमिका को। यह बहुत

नन्ही-सी चीज़ है और ज्यादा समय न लेगी। कुछ समय पहिले मैंने इस किताब की एक प्रति इन्दु को भेजी थी और आप आसानी के साथ उससे मंगवा सकते है।

सनातनियों का कबीला, निश्चय ही नष्ट हो जायगा, क्योंकि वे बीते हुए युग के भग्नावशेष है। उनका क्रोध ही उस खतरे के विस्तार को प्रदर्शित करता है जो उनके सामने खड़ा है। दबाव पड़ते ही सम्पूर्ण सहिष्णुता लुप्त हो जाती है और इस समय की उनकी असहिष्णुता उस महत् दबाव का लक्षण है जो आप उन पर डाल रहे हैं। सप्रू और मेरे-जैसों (एक अद्भुत समवाय है !) के लिए उस समय धर्म के मामले में आडम्बरपूर्वक और अपनी सहनशीलता के महत्तर ढंग पर बातें करना बहुत अच्छा है, जब हममे से किसी में कहने लायक कोई धर्म बाकी नहीं रह गया है—इसी प्रकार हम लोगों के लिए उस समय मन्दिर प्रवेश-आन्दोलन को आशीर्वाद देने की भी बात है, जब हममें से किसी के मन में भी मन्दिर से १०० मील दूर तक जाने की न्यूनतम इच्छा भी नही है—सिवाय इसके कि जहां तक मेरा ताल्लुक है, स्थापत्य या मूर्तिकला देखने को भले चला जाऊं। किन्तु हम दोनों में से किसी को किसी विषय-विशेष पर छू दीजिए और आपको हमारा कच्चा पहलू दिखाई पड़ जायगा, जहां शायद ही कोई सहिष्णुता हो। कुछ मामलों में आपसे बढकर और कौन असहिष्णु होगा ? सचाई यह है कि वास्तविक सहिष्णुता का शायद ही कही अस्तित्व होगा; सहिष्णुता के नाम पर जो चीज चलती है, वह उदासीनता है। जिसकी हम कोई कीमत नही आंकते, उसे दूसरों मे सहन करने को गुण बना लेते हैं। जो आदमी, इस या उस किसी वस्तु के बारे में आक्रामक रूप से असहिष्णु नही है, बड़ा निरर्थक प्राणी है। इस रूप में सनातनियों के प्रति कुछ सहानुभूति का, कुछ उलटे प्रकार की सहानुभूति का—अनुभव करता हूं। वे किसी चीज की कदर तो करते है, जिसके लिए कि वे लड़ने को तैयार है। सवाल बहुत जकड़ा हुआ है। खतरनाक लोग तो सदा वे होते है जो कठिनाइयों को झांसापट्टी देते या उनसे कतराते रहते है—या तो उनको भुला देने के यत्न में रहते हैं या फिर उनको सिर्फ एक आंख से ही देखते है।

निस्सन्देह यदि आप बँधे हुए पानी का विलोड़न करेंगे तो बदबू निकलेगी ही, और हिन्दू सामाजिक ढांचा सब तरह से पर्याप्त रूप मे बँधकर रह गया है। किसी बंधे हुए स्थिर जलाशय के लिए मेरी दवा यह होगी कि उसका पानी पूरी तरह से निकाल दिया जाय और तब उसे सूर्य-द्वारा सुखाये जाने और पेंदे तक उसे शुद्ध किये जाने के लिए छोड दिया जाय। उसके बाद उसमें शीतल ताजा जल छोड़ा जा सकता है और ऐसी व्यवस्था की जा सकती है कि वह बराबर प्रवाहित होता रहे, जिनमे फिर उसमें अटकाव न आने पावे। दिखाऊ या ऊपरी नालियां बना

देने से पेंदे मे एकत्र मल-भण्डार साफ नही किया जा सकता। किन्तु आप कुछ सीमा तक जलाशय को रिक्त कर रहे हैं और हो सकता है कि हम उसके पेंदे को देख पायें।

मैं माने लेता हू कि 'हरिजन' एक भी कट्टर सनातनी का विचार परिवर्तन न कर पायेगा। किन्तु वह निस्सन्देह दूसरे ऐसे बहुसख्यको को प्रभावित करेगा जिनकी आखें हमारी सामाजिक बुराइयो की ओर अभी तक, बन्द रही हैं। हम बहुत जल्द अपने चतुर्दिक की गन्दगी के अभ्यस्त हो जाते हैं। मेरी कामना है कि 'हरिजन' दलित वर्गों के विषय मे ब्यौरेवार तथ्य देगा—देश के विविध भागो मे उनके साथ कैसा सलूक किया जाता है, उनकी निर्योग्यताए, और विशेष रूप मे उनकी आर्थिक अवस्था, जहा तक कि उसका सम्बन्ध सामाजिक दशा के कारण है। तथ्यो का यह भण्डार निरपेक्ष मानव को प्रभावित करेगा और सनातनियों पर चढ बैठेगा। आपकी सही युक्तियुक्तता के बावजूद सनातनियो के विचार मे कोई प्रदर्शनीय परिवर्तन नही होगा। अगर मैं आपको विक्टोरिया काल के एक अति समादरणीय व्यक्ति—जान स्टुअर्ट मिल का उद्धरण दू तो—

"नैतिक विश्वासों की शक्ति का मूल्य कम आंकने मे हम अन्तिम होंगे। किन्तु मानव जाति के समूह के विश्वास अपने हितो या वर्गगत भावनाओ के साथ जुड़े हुए चलते हैं। मनुष्य के मन पर विवेक और सदाचरण के प्रभाव के रूप में हमारे पास एक प्रबल वस्तु है—उससे प्रबलतर जितनी राजनीतिज्ञों या दार्शनिको के पास सामान्यतः पाई जाती है। किन्तु इस विवेक और सदाचरण मे समस्या का एक ही पहलू आता है। विवेक के बल पर एक से दूसरे पक्ष मे हम चन्द ही मतपरिवर्तनो की आशा करते हैं।"

आपके एक लेख को लेकर एक पुराने स्कूल मास्टर ने 'हरिजन' मे ही आपकी आलोचना की थी। चूकि आप आलोचना पसन्द करते हैं, यह रही दूसरी—बाहरी-सी। 'हरिजन' के सम्बन्ध मे मेरा प्रथम दर्शन अनुकूल नही था। उसके छैले रूप'—आकार-सज्जा, टाइप आदि-को देखकर मेरे मनश्चक्षु के सामने आडम्बरयुक्त व्यर्थता का वह पुराना और अत्यन्त सम्मानास्पद पत्र, 'इण्डियन सोशल रिफार्मर', आ गया। मैं नही जानता कि यह योग्य परन्तु अन्तत निरर्थक एव परिहास-रहित पत्र जड और गम्भीर लोगो की ज्ञानवृद्धि के लिए अपने नीरस ढग पर अब भी निकल रहा है या नही। यदि वह हमसे दूर हटा रहे तो मुझे उसके खिलाफ कोई शिकायत नही है। उसके बाहरी रूप मे हरिजन को समानना ही

---

१. यह श द व्यग मे प्रयुक्त हुआ पे।

उसके पक्ष में एक वात नही। निस्सन्देह, यह मिलती-जुलती शक्ल-सूरत उसी समय लुप्त हो गई जव मैंने पत्र को पढ़ना शुरु किया।

किन्तु जिस लिफाफे में आपका पत्र आया उसके ख़िलाफ मैं अपना विरोध जरूर प्रकट करूंगा। यदि इसके लिए वल्लभभाई जिम्मेदार है, जो यद्यपि मैं उन्हें वहुत प्यार करता हूं, मुझे साफ़ कहना होगा कि लिफाफा वनाना उनकी कोई खुसूसियत नहीं जान पड़ती। या शायद दोष सव उनका ही न होगा—जवकि जो कच्ची सामग्री उन्हें दी जाती है वह रद्दी की टोकरी से आती हो।

कृपया मेरे सतहीपन को क्षमा करें। मै अपने हीरो को चिकना और चमकता हुआ रखना पसन्द करता हूं। आपने हमें विराट रूप में जीवन जीने की कला और शैली वताई है। असल चीज वही है, किन्तु हम जीवन की छोटी छोटी वातों मे भी शैली और कला की उपेक्षा क्यों करें? हममे से अधिकांश हिमधवल ऊंचाइयों तक नहीं पहुंच सकते। क्या आप हमें घाटियों के फूलों से वञ्चित करेंगे?

मैं काफ़ी लम्बा पत्र लिख चुका हूं, फिर भी वहुत सी वातें जो मैं कहना चाहता था, अनकही ही रह गई हैं। हरिजन आन्दोलन के विषय में मेरे लिखने का क्या उपयोग है? आपने इस विषय पर पर्याप्त से अधिक लिखा है। आपका मन वदलने और उसमें ताज़गी लाने के लिए मैं अपनी कुछ दिलचस्पियों के वारे में आपको लिखना पसन्द करूंगा। वर्तमान में कर्म से दूर हटा दिये जाने के कारण मैं कुछ-कुछ भविष्य में किन्तु प्रधानतः अतीत में रहता हूं। मैं तो आपसे गोवी मरुस्थल की उस आनन्ददायिनी सभ्यता की वात करना चाहूंगा जो तेरह सौ से भी अधिक वर्षो पहिले वहां फैली हुई थी—जिसमें भारतीय, चीनी और रूसी संस्कृतियों का विचित्र संगम हुआ था, यहां तक कि उसमें रोमन संस्कृति का भी कुछ अंश था, और संस्कृत ज्ञान की भाषा थी तथा वौद्ध गाथा वह स्वर्ण-सूत्र थी, जिसमें ये देश एक में वंधे हुए थे। मैं आपसे गांधार, अफगानिस्तान और रूस में गाथिक स्थापत्य के जन्म की कहानी कहना चाहूंगा जो यूरोप के मध्ययुग के भी लगभग हजार साल पहिले शुरु हुई—उस मध्ययुगीन युरोप के, जिसने धर्म-विश्वास की उद्वेगपूर्ण स्फूर्ति मे उन अद्भुत गिर्जाघरों का निर्माण किया जो गगन को मूर्त्त प्रार्थनाओ की भांति छूते हैं। इसी प्रकार मैं अपने उन पुराने दिनों में मध्य एशिया के ओजपूर्ण जीवन और वहुरंगी उन कारखानों की कहानी कहना पसन्द करूंगा जो वहुमूल्य और सुन्दर वाणिज्य को लेकर अनेक विद्वज्जनों एवं तीर्थयात्रियों के साथ पश्चिमी एशिया एवं भारत तथा सुदूर पूर्व के वीच आया-जाया करते थे। इनके वाद मैं उसी क्षेत्र की एक दूसरी दुनिया, अरव दुनिया, की भी वात करना चाहूंगा क्योंकि वह भी जीवन से स्पन्दित था। इन्दोनेशिया समुद्र में मैं श्री विजय

के साम्राज्य की वात करना चाहूगा, जो विदेश मे भारत का एक यथार्थ खण्ड था और जहा भारतीय सस्कृति की प्रधानता थी तथा जहा भारतीय कला अपने शिखर पर पहुची वताई जाती है। मैं विचार मे आपके साथ मध्य एशिया के इन विशाल क्षेत्रो के पार चल सकता और उन परिवर्तनो को देख सकता हू जो काल ने कर दिये हैं, तथा मरुस्थलो के उत्तप्त वालुकाकणो के नीचे से प्राचीन युगो के उन भग्नावशेषो को वाहर निकाल सकता हू जो वहुत पहिले के मृत लोगो, सस्कृतियो और सभ्यताओ की वातें हमसे कह सकते हैं। इस तरह मैं अपनी दमित शक्ति को अभिव्यक्त करने के लिए आगे और आगे तवतक लिखता चला जा सकता हू जव तक मेरा लम्वा पत्र आपको परीशान और जेल-अधिकारियो को उससे भी ज्यादा कुछ न कर दे।

मा ने पूना जाने का निश्चय किया है। मैंने उन्हे एक पखवारे पूर्व देखा था। मुझे वह पहिले से ज्यादा वूढी दिखाई पडी। मैं आशा करता हू कि आप उन्हे इधर-उधर ज्यादा यात्रा न करने देंगे। वह आराम चाहती है। पिछली वार पूना मे जहा ठहरी थी उससे कुछ ज्यादा खुश नही थी। यदि सम्भव होगा तो शायद वह कही दूसरी जगह ठहरेंगी।

साढे तीन महीनो तक वहा इलाज कराने के वाद कमला आखिरश कलकत्ता से विदा हो गई है—इतने पर भी वह कमोवेश छुट्टी के टिकट पर ही है। इस समय वह पटना मे है जहा कुछ दिनो के लिए अपने भाई के साथ टिकी हुई है। महीने के अन्त तक वह यहा पहुचने का जुगाड कर पायेगी। अव वह देहरादून मे दो या तीन महीने रहने की इच्छा रखती है और अपने अवकाश की अवधि मे इन्दु भी उसके साथ रह सकती है। हम एक गृहहीन और विच्छिन्न कुटुम्व हैं!

चूकि मैं न जन्म से, न स्वीकृति से 'हरिजन' हू, स्पष्टत मैं इस पत्र की नि शुल्क प्रति पाने का अधिकारी नही हू। इसलिए मैं सरूप से कह रहा हू कि एक साल का चन्दा भेज दे और पत्र सीधे मुझे यहा भेजने का प्रवन्ध कर दे। मैं समझता हू कि यह एक अनुमतिप्राप्त चीज है।

यहा जाडे के महीने मे मैं सूर्य-पूजक वन गया था और मेरे शरीर ने सूर्य की ऊर्जा ग्रहण कर ली है। किन्तु अव वसन्त आ गया है और सूर्य असुखद रूप से गर्म होता जा रहा है। और वसन्त के साथ वृक्षो पर केवल नई कोपलें ही नही आई है वल्कि मक्खियो के झुण्ड भी आ गये हैं और इनके आगमन से मेरी निष्ठा डगमगा रही है।

असारी मुझसे मिल गये। उन्हे फिर से देखना वडा अच्छा लगा।

ऐसा लम्बा पत्र लिखने में मैंने जेल-अधिकारियों की उदारता की बहुत-ज्यादा कल्पना कर ली है। किन्तु परिकल्पना मेरी एक पुरानी दुर्बलता है।

आपको और आपके साथियों को प्रेम

आपका स्नेहपात्र

ज० ला०

७।३।३३

महात्मा गांधी

यरवदा सेण्ट्रल प्रिजन

पूना।

—अंग्रेजी। देहरादून, ७।३।१९३३। नेहरू संग्रहालय में सुरक्षित पत्रावली से।]

सौजन्य : श्रीमती इन्दिरा गांधी तथा नेहरू संग्रहालय।

३२. हीरालाल शर्मा का पत्र : गांधीजी के नाम

करोलबाग, दिल्ली

७ अप्रैल, १९३३

मम प्रिय गांधी जी,

आपके तीन तारीख के कृपापूर्ण तथा स्फूर्तिप्रद पत्र के लिए धन्यवाद। मेरे आश्रम-निवास के इतने थोड़े समय में जो शिक्षाप्रद कार्यक्रम आपने मेरे लिए निर्धारित किया है समझ मे नही आता कि उसमें मैं कैसे उत्तीर्ण हो सकूंगा, फिर भी यथाशक्ति सफल होने का प्रयत्न तो करूंगा ही।

मेरा भी यही विश्वास है कि मनुष्य कैसी भी जलवायु में क्यों न हो अपना स्वास्थ्य बनाये रख सकता है यदि वह केवल प्रकृति के साधारण नियमों का पालन करता रहे। किन्तु ऐसे व्यक्ति के लिए जिसने उसके नियमों का उल्लंघन करके अपना स्वास्थ्य खो दिया है या शरीर को रुग्ण बना लिया है तो फिर उसके लिए मुझे जल्दी विश्वास नही होता कि अपनी अवहेलना के लिए किसी भी तरह का भारी दण्ड चुकाये बिना वह आसानी से अपना खोया हुआ स्वास्थ्य फिर सदा ही प्राप्त कर सके।

प्रकृति तो धनी अथवा निर्धन सभी के लिए निष्पक्ष है। यदि आदरपूर्वक उससे परामर्श लिया जाय तो वह एक सच्चा उपकारी मित्र सिद्ध होगी, किन्तु

उसकी अवहेलना की जाय तो एक दु साध्य अनुशासक से भी वह कम नही। मैं नही समझता कि प्रकृति कभी धोखा दे सकती है। जो लोग उसकी चेतावनियो पर ध्यान देते हैं और उसके आदेशो पर चलते हैं वे ही उसके असीम वरदानो से अपने जीवन-पर्यन्त लाभ उठाते है। मनुष्य को तो केवल प्रकृति को समझना और उससे सहयोग करना ही है। क्योकि प्रकृति तो बडी उदारतापूर्वक अपने विशाल तथा परिपूर्ण कार्यालय से प्रत्येक प्रकार के उपचार स्वय ही देती है और वह भी इतने प्रचुर रूप मे कि जिसकी कोई सीमा नही।

अभी तो मैंने एक महीने के लिए ११ अप्रैल को आश्रम जाने का निश्चय किया है। मैं अपने छ वर्षीय बच्चे को अपने साथ आश्रम ले जाना चाहता हू किन्तु उसके और उसकी चार वर्षीय वहिन के बीच एक विवाद-सा खडा हो गया है। दोनो ही साथ रहना चाहते हैं। इसलिए यदि दोनो के बीच १० अप्रैल की सयकाल तक कोई समझौता न हो सका तो या तो लडके को यहा छोडना होगा और फिर उसकी वहिन को भी अपने साथ लाऊगा।

वीवी अम्तुल सलाम गत मास की ३१ ता० को पटियाला चली गई है। अच्छा हो यदि उसी दिन वह भी आश्रम आना पसन्द कर लें।

भवदीय

एच० एल० शर्मा

—अंग्रेजी। दिल्ली, ७।४।१९३३। 'वापू की छाया मे मेरे जीवन के सोलह वर्ष से']
सौजन्य : श्री हीरालाल शर्मा।

३३. जवाहरलाल का तार : गांधीजी के नाम

देहरादून जेल
५।५।३३

गाधी जी,
यरवदा प्रिज़न (कारागार)
पूना।

आपका पत्र। जिनको मैं समझता नही, उन मामलो के विषय मे क्या कह सकता हू। मैं ऐसे विचित्र देश मे अपने को खोया हुआ महसूस करता हू, जहा आप

ही एक परिचित सीमाचिह्न हैं, और मैं अन्धकार में अपनी राह टटोलने की कोशिश करता हूं, किन्तु लड़खड़ा जाता हूं। जो कुछ भी हो, मेरा प्यार और विचार आपके साथ रहेंगे।

जवाहर

—अंग्रेजी। देहरादून, ५।५।१९३३। नेहरू संग्रहालय में सुरक्षित पत्रावली से।]
सौजन्य : श्रीमती इन्दिरा गांधी तथा नेहरू संग्रहालय।

३४. जवाहरलाल का पत्र : गांधीजी के नाम

दे० दू० जेल
५।५।३३

मेरे प्यारे बापू,

आपका पत्र आज आया। मैं कुछ-कुछ इसकी प्रतीक्षा ही कर रहा था, क्योंकि आपका महत् हृदय, आपको अनुमति नहीं देता कि किसी को भी भूलें। मैं आपको एक तार इसके पहिले ही भेज चुका हूं।

जैसा कि मेरा तार बतायेगा, मैं अपने को बिल्कुल असमर्थ अनुभव करता हूं, और नही जानता कि मैं आपको क्या कह सकता हूं। धर्म मेरे लिए परिचित भूमि नहीं है, और ज्यों-ज्यों मेरी उम्र बढ़ी है, मैं निश्चित रूप से इससे दूर भटक गया हूं। मैं खयाल करता हूं कि मेरे पास इसकी जगह कुछ दूसरी ही चीज है, केवल बुद्धि और युक्ति से अलग कोई चीज़, जो मुझे शक्ति और आशा प्रदान करती है। इस अपरिभाषेय तथा अनिश्चित प्रेरणा, जिसके अन्दर धर्म की हलकी-सी आभा हो सकती है पर जो उससे बिल्कुल भिन्न है, के सिवा मैंने सेवा की क्रिया-शीलता पर ही पूरी तरह विश्वास रखना सीखा है। शायद ये विश्वास करने के लिए कमज़ोर आधार हैं, किन्तु यद्यपि मैं खोजूंगा अवश्य, मुझे उनसे अच्छे दूसरे (आधार) तो दिखाई नही पड़ते। मुझे लगता है कि धर्म मनोवेग तथा भाव-प्रवणता की ओर ले जाता है और ये उनसे भी ज्यादा अविश्वसनीय पथ-दर्शक हैं। अन्तःप्रेरणा (इनट्यूशन) निश्चय ही ऐसी कोई चीज़ है, यद्यपि मैं कह नही सकता कि वह आती कहां से है, शायद मन के पार्श्व में संचित अनुभूतियां—अवचेतन आत्मा।

हरिजन-समस्या बुरी (टेढ़ी) है, बहुत बुरी किन्तु यह कहना मुझे गलत

मालूम पडता है कि सारी दुनिया मे इतनी वुरी कोई और चीज नही है। मेरा खयाल है कि मैं वहुतेरी ऐसी वातें वता सकता हू जो इतनी ही वुरी हैं, वल्कि इससे भी ज्यादा खराव हैं। सारी दुनिया मे यही हरिजन सवाल विविध रूपो मे पाया जाता है। क्या यह विशेप कारणो का परिणाम नही है? विला शुवहे केवल अज्ञान तथा दुर्भावना की अपेक्षा कुछ और चीज़ ही इसका कारण है। इस मामले की जड तक पहुचकर उसे सुधारने का एक मात्र मार्ग उन कारणो को दूर करना अथवा उनके प्रभाव को निष्फल कर देना ही जान पडता है। किन्तु इस समय मे इन मामलो पर क्यो लिख रहा हू। मैं इस पत्र मे तर्क नहीं करना चाहता क्योकि तर्क की स्थिति वीत चुकी है।

आपसे इतनी दूर रहना कठिन है, किन्तु आपके पास रहना और भी कठिन होगा। यह जनाकीर्ण जगत् वडा ही एकान्त-सूना-स्थान है, और आप इसे और एकान्त वना देना चाहते हैं। जीवन और मृत्यु का तो विशेप महत्व नही है, या विशेष महत्व होना नही चाहिए। जो चीज़ महत्वपूर्ण है, वह है वह प्रयोजन, वह उद्देश्य जिसके लिए आदमी काम करता है, और यदि किसी को निश्चय हो जाय कि उसके लिए मरने से ही उसके प्रति अन्तिम सेवा हो सकती है, तो मृत्यु सरलतर अनुभव होगी। मैंने जीवन को प्यार किया है—पर्वतो और समुद्रो को, घूप और वर्पा को, तूफान और वर्फ को, तथा पशुओ और कितावो को, और कला, तथा मानव प्राणियो को भी—, और जीवन ने मेरे साथ भला ही सलूक किया है। किन्तु मृत्यु के विचार ने मुझे कभी भयभीत नही किया है, दूर से वह एक प्राणी के प्रयास के मुकुट-स्वरूप सुन्दर है। किन्तु निकट मे उसका ध्यान करना सुखद नही है।

पिछले चौदह या पन्द्रह वर्प का समय जव से विविध कार्यो मे मैं आपके साथ रहा हू, मेरे लिए अद्भुत रहा है। जीवन ज्यादा पूर्ण और ज्यादा समृद्ध एव और जीवनीय हो गया, और यह एक प्यारी और मूल्यवान स्मृति है जिसे कोई भी चीज़ मुझसे छीन नही सकती। और जव भी भविप्य अधेरा होगा, अतीत का यह दृश्य अधियारी को दूर कर देगा और मुझे शक्ति देगा।

आपको मेरा समस्त प्रेम

आपका स्नेहपात्र

ज० ला०

कमला देहरादून मे ठहरी हुई है। आपका सन्देश मैं उस तक पहुचा दूगा।

—अंग्रेजी। देहरादून, ५।५।१९३३। नेहरू संग्रहालय मे सुरक्षित पत्रावली से।]

सौजन्य : श्रीमती इन्दिरा गांधी तथा नेहरू संग्रहालय।

३५. जवाहरलाल का तार : गांधीजी के नाम

देहरादून जेल
८।५।३३

महात्मा गांधी
पूना।

अब जब कि आप अपने महत् प्रयास का आरम्भ कर चुके हैं, क्या मैं पुनः अपना प्रेम और बधाइयां भेज सकता हूं और आपको विश्वास दिला सकता हूं कि अब मैं ज्यादा स्पष्टता से महसूस करता हूं कि जो कुछ होगा, अच्छा ही होगा और चाहे जो भी हो, विजय आपकी होगी।

जवाहर

—अंग्रेजी। देहरादून, ८।५।१९३३। नेहरू संग्रहालय में सुरक्षित पत्रावली से।]
सौजन्य : श्रीमती इन्दिरा गांधी तथा नेहरू संग्रहालय।

३६. जवाहरलाल का पत्र : गांधीजी के नाम

देहरादून जेल
२५।७।३३

मेरे प्यारे बापू,

आपका रुक्का मुझे कल मिला। कृष्णा के विषय में मां की, विशेषतः एक हिन्दू मां की चिन्ता स्वाभाविक है, और वह मुख्यतः इस बात में है कि उसकी बेटी का विवाह कहीं योग्य रीति पर हो जाय। उनकी पसन्द तो यही हो सकती थी कि वह उसे कश्मीरियों में विवाहित होते देखती और वैसा न हो सकता तो कम-से-कम विवाह ब्राह्मणों में तो होता। यह विचार कि कृष्णा किसी ऐसे आदमी से शादी करे, जो ब्राह्मण भी नहीं है, ऐसी बात है जिसे वह पूरी तरह निगल नहीं पातीं। जहां तक मेरा सम्बन्ध है, उसके विवाह का सवाल मुझे इतना परीशान नहीं करता, यद्यपि मैं उसके बारे मे सोचता जरूर हूं। इसके विषय में मेरे विचार मां के विचारों के ठीक उल्टे हैं। पुरानी परम्परा में जितनी चौड़ी दरार सम्भव हो, मैं उसका स्वागत करूंगा। सब मिलाकर कश्मीरी समाज (निश्चय ही इसमें अपवाद भी हैं) मुझमें अरुचि पैदा करता है, यह मध्यवर्गीय क्षुद्र दुर्गुणों का प्रतिरूप है—ऐसे

दुर्गुणो का, जिन्हे मैं घृणा करता हू। किसी आदमी के ब्राह्मण, अ-ब्राह्मण या कुछ और होने मे कोई खास दिलचस्पी नही रखता। तथ्य की बात तो यह है कि इन सबका औचित्य समझने मे मैं असमर्थ हू। कोई शादी किसी व्यक्ति से करता है, पूरी जाति से नही। फिर ये सब बातें तो विचारविन्दु से अलग हैं क्योकि निर्णय तो कृष्णा को, न मा को न मुझे, करना है, और एक वय:प्राप्त कन्या के साथ किसी और तरह का व्यवहार करना बिल्कुल असम्भव है।

मैं ठीक नही जानता कि हममे से कोई इस मामले मे क्या कर सकता है। कुछ दिन पहिले कृष्णा का जो पत्र मुझे मिला था, उससे मैं इतना समझ सका कि इस विषय पर मुझसे कुछ कहने के लिए वह मेरे बाहर आने की प्रतीक्षा कर रही है। जबतक मैं जान न लू कि उसके मन मे क्या है तबतक मैं कोई निश्चित अनुमान लगाने मे असमर्थ हू। किन्तु इस बारे मे वह खुश जान पडती है। यदि उसके मन मे किसी के लिए स्पष्ट तर्जीह है और उसमे कोई अलघ्य आपत्ति नही है (और मैं ऐसी किसी आपत्ति की कल्पना नही कर पाता) तो मैं मानता हू कि मामला उसी रूप मे तय हो जायगा। ज्योही मुझे कुछ और मालूम होगा, मैं आपको लिखूगा।

मैं नही जानता कि आपने मेरे परिवार मे एक प्रस्तावित विवाह की बात सुनी है या नही। मेरे चचेरे भाई ब्रजलाल के लडके ने, जो लन्दन के अर्थशास्त्र विद्यालय मे पढ़ता रहा है, अपनी सहपाठिनी एक हगेरियन लडकी से विवाह तय कर लिया है। उसके पिता और माता इस समाचार से कुछ उखड से गये और वे हडबडाकर लन्दन भगे और बाद मे लडकी के माता-पिता से मिलने बुदापेस्त भी गये। लेकिन लडकी ने उन पर विजय प्राप्प की और वे उसकी प्रशसा मे भरे हुए वापिस लौट आये है।

ऐसी मिश्रित शादियो मे कुछ कानूनी कठिनाइया हैं। ब्रजलाल का विचार हगेरियन लडकी को जाब्ते से हिन्दू धर्म मे परिवर्तित करने और तब हिन्दू या आर्य पद्धति से उसके साथ शादी करने का है। व्यक्तिगत रूप से किसी दूसरे अभिप्राय की पूर्ति के लिए मैं धर्म-परिवर्तन करने या दूसरा धर्म ग्रहण करने को नापसन्द करता हू।

मैं धार्मिक विचार का अधिकाधिक विरोधी होता जा रहा हू। अपवादो को छोडकर (और उनमे से कुछ महत् अपवाद हैं) वह मुझे वास्तविक आध्यात्मिकता का निषेध और केवल सवेग तथा भावोत्तेजना का जनक प्रतीत होता है। जहा तक मुमकिन हो, मैं अपने को सब धार्मिक रीतियो और अनुष्ठानो से—धर्म के सब ऊपरी चिह्नो से, दूर रखना चाहूगा—पूर्णत धर्मनिरपेक्ष। मा के प्रति सम्मान के कारण और उसकी जिन्दगी के इस समय मे उसकी भावनाओ को चोट न पहुचाने

के खयाल के कारण कभी-कभी मैं किसी समारोह या संस्कार में शरीक होने को राज़ी हो जाता हूं। पर तब भी यह एक अनिच्छुक या असौम्य सम्मिलन ही होता है और मैं निःश्चत नही कर पाता कि इसके विना ही काम चला लेना क्या ज्यादा अच्छा न होगा।

आज ही सुवह मैंने सेनगुप्त की आकस्मिक मृत्यु की खवर पढ़ी है। वह एक आघात के रूप में आई। यद्यपि कभी उनके साथ घनिष्ठता नहीं रही, मैं उन्हें लगभग २६ साल से जानता हूं। वह मुझसे कही ज्यादा वड़े थे किन्तु कैम्ब्रिज में उनका अन्तिम वर्ष मेरे प्रथम वर्प के साथ पड़ा था, और हम पहिली वार १९०७ में मिले थे। जीवन हमारे पास से किस प्रकार भागता है, और जव हम अपने विचारों से घिरे हुए वैठे होते हैं तो दृश्य वदल जाता है।

कमला अभी देहरादून में ठहरेगी। शायद मेरी रिहाई तक वह यही रहेगी। मामूली तौर पर यह रिहाई सितम्वर के दूसरे हफ्ते में होनी चाहिए। मुझे आशा है कि आप शीघ्र ही पूर्णतः स्वस्थ हो जायंगे।

प्रेम

आपका स्नेहमात्र
ज० ल०

महात्मा गांधी
अहमदावाद।

—अंग्रेजी। देहरादून, २५।७।१९३३। नेहरू संग्रहालय में सुरक्षित पत्रावली से।]
सौजन्य : श्रीमती इन्दिरा गांधी तथा नेहरू संग्रहालय।

३७. जवाहरलाल का पत्र : गांधीजी के नाम

आनन्द भवन
इलाहावाद, अक्तूबर २७, १९३३

मेरे प्यारे वापू,

मैं इलाहावाद कांग्रेस-अस्पताल के मामले मे आपकी सलाह लेना चाहूंगा। यह अस्पताल स्वराज भवन में स्थित था, और १९३१ के अन्त तक, जव स्वराज भवन को पुलीस ने जव्त कर लिया, सफलतापूर्वक चलता रहा। हमारे सव कीमती सामान और दवाइयों—जिनमें दो हजार रुपये की कीमत के ताज़ी दवाइयों के ६ अनखुले वक्से भी थे—पर पुलीस ने क़व्जा कर लिया। एक रोगिवाहक गाड़ी (एमवुलेंस कार) का भी यही हाल हुआ। कुछ दिनों के वाद, व्रिटिश अधिकारियो

ने, दूसरी किसी वात की अपेक्षा केवल दिखलाने के लिए, घोषणा की कि वे जनता के लिए स्वराज भवन मे एक औषधालय जारी रक्खेंगे। ऐसा समझा जाता है कि पिछले दो-एक वर्ष से यह औषधालय चलता रहा है। लेकिन इसका कोई प्रमाण नही कि जनता के एक भी आदमी ने कभी इसका लाभ उठाया हो। इलाज के लिए कभी-कभी कुछ पुलीस वाले वहा जाते हैं। आनन्द भवन से स्वराज भवन दिखाई देता है, और यहा से किसी ने कभी उसमे किसी रोगी को प्रवेश करते या वाहर निकलते नही देखा है, फिर भी मुझे वताया गया है कि उनकी कितावो मे यह दिखाने के लिए झूठे इन्दराज कर लिये जाते हैं कि वहुत से मरीजो का वहा इलाज किया जा रहा है। जो भी हो, मुझे इस वात मे कोई दिलचस्पी नही है।

स्वराज भवन से निकाल वाहर किये जाने के वाद काग्रेस अस्पताल के पास कोई घर नही रह गया और कई हफ्तो तक वह पास के एक सार्वजनिक उद्यान मे एक वडे वृक्ष के नीचे चलता रहा। इस खुली जगह से दवाइया वाटी जाती रही, और दो महीनो के अन्दर उस पेड के नीचे उसने दवा ले जानेवाले २५०० मरीजो का इलाज किया।

अप्रैल १९३२ मे मेरी मिल्कियत के एक कुटीर मे यह अस्पताल खोला गया। यह क्षुद्र गृह आनन्द भवन से कुछ हटकर स्वराज भवन से लगा हुआ है। पहिले यह मकान किराये पर दिया गया था। जितनी जल्द हम इसे खाली करा सके, खाली कराके उसमे अस्पताल खोला गया। और तव से वह इसी मे चल रहा है। अधिकारियो ने कुछ धमकिया दी किन्तु उसकी पर्वा नही की गई। उनकी ओर से यह सुझाव भी दिया गया कि अगर उसके नाम मे से काग्रेस शब्द हटा दिया जाय तो वे कोई दस्तन्दाजी न करेंगे। इस प्रस्ताव को अमान्य कर दिया गया और अस्पताल को उसके साइन वोर्ड पर काग्रेस अस्पताल ही कहा जाता रहा, और उस पर राष्ट्रीय झण्डे का फहराना भी जारी रहा। तव सरकार ने उसमे कोई हस्तक्षेप नही किया।

यद्यपि अन्तर्वासी रोगी नही लिये जाते थे, फिर भी मार्च ३१ को समाप्त होने वाले वर्ष में ५८००० वाहरी रोगियो का इलाज किया गया। ३० सितम्वर १९३३ को समाप्त होनेवाली छमाही मे ३७०३५ वाहरी रोगियो का इलाज किया गया है। हमने अपने खर्चे वहुत घटा दिये हैं और पिछले अट्ठारह महीनो मे अस्पताल पर कुल ८३६० रुपये ख़र्च किया है, जो लगभग ४६५ रुपये माहवार पड़ता है। इस कोष का वहुत वडा हिस्सा इलाहावाद स्वदेशी प्रदर्शनी के मुनाफे मे प्राप्त हुआ है। हमे सीधे जनता से कुछ ज्यादा नही मिला है—सिवाय इसके कि वम्वई की कुछ फर्मो ने दवाइयां और शल्यचिकित्सा के औजार प्रदान किये हैं, जिनका ज्यादातर

हिस्सा सरकार के हाथ में चला गया।अब हमारे साधन-स्रोत प्रायः खतम हो गये है। थोड़ा रुपया अगली स्वदेशी प्रदर्शनी से आ सकता है किन्तु ऐसा अस्तित्व बहुत संकटपूर्ण है और मैं अस्पताल के लिए—कम से कम अगले दो साल के लिए कुछ इन्तजाम करना चाहता था। यह अच्छा काम कर रहा है और काफ़ी संकट के बीच भी इसने झण्डा ऊंचा रक्खा है।

क्या आप हमें यह सलाह देंगे कि हम इन सब तथ्यों को देते हुए सहायता के लिए सार्वजनिक अपील करें? मुझे भय है कि बहुत से लोग जो मदद करते, वर्तमान परिस्थिति में खुले तौर पर मदद करना पसन्द न करेंगे, यद्यपि अस्पताल का राजनीति से किसी तरह का सम्बन्ध नहीं है। यदि सार्वजनिक अपील की जाय तो कौन करे? अस्पताल से सबसे अधिक सम्बद्ध व्यक्ति तो मेरे चचेरे भाई मोहनलाल नेहरू है। कमला भी इसमें बहुत दिलचस्पी लेती रही है। स्थानीय समिति में कोई महत्व का आदमी नहीं है और तूफान तथा संकट के पिछले दो सालों में उनमें से कुछ तो अमली तौर पर अलग ही हो गये हैं।

मैं यह बात भी बता दूं कि अस्पताल के खर्च का हिसाब लगाने मे मैंने मकान के किराये को नही जोड़ा है। मकान का किराया जो पहिले ७५ रुपये मासिक था, अस्पताल के खर्च में मेरी अपनी सहायता है।

आपका स्नेहपात्र
ज० ला०

महात्मा गांधी
वर्धा

—अंग्रेजी। इलाहाबाद, २७।१०।१९३३। नेहरू संग्रहालय में सुरक्षित पत्रावली से।]

३८. श्रीप्रकाश का पत्र : गांधीजी के नाम

[घटनाक्रम से जान पड़ता है कि यह पत्र १९३३ के अन्त या १९३४ के आरम्भ में लिखा गया होगा।—सम्पा०]

मेरे प्यारे बापू जी,

मुझे आपका प्यारा पोस्टकार्ड मिला है और मै केवल प्रार्थना कर सकता हूं

कि मैं आपके स्नेह, विश्वास और आशा के योग्य बनू। इससे अधिक मैं कुछ कहने का साहस नही कर सकता।

१. मुझे वाल जी भाई देसाई का एक पोस्टकार्ड मिला था कि आप हमारे जिले के एक गाव मे हुए मार्कण्डेय मन्दिर सत्याग्रह का ब्यौरा चाहते हैं। मैं नही जानता कि आपको वह स्थान याद आयेगा, किन्तु मैं आपको याद दिलाना चाहूगा कि आपने जब अपनी इकसठवी वर्षगाठ के दिन दूसरे तट पर एक सभा मे बोलने के लिए गगा पार किया था तब आप उस स्थान मे स्थित मन्दिर के पास से गुजर चुके हैं और अपने १९२९ के उस दौरे मे लौटती बार गाज़ीपुर जाते हुए आपने पुन गोमती पार किया था।

२ ज्यो ही मुझे वाल जी भाई का पत्र मिला मैंने तफतीश शुरू कर दी। कल ही मुझे आखरी दस्तावेज़ मिले हैं। विलम्ब का यही कारण है, जिसके लिए मुझे बडा दुख है।

नीचे मैं इस मामले के सब तथ्य, जहा तक मैं उन्हे एकत्र कर सका, देता हू। मैं कह सकता हू कि मैंने इस काम को उतनी ही नि स्वार्थ और निष्पक्ष भावना से किया है जितना मेरे जैसे किसी भी सामान्य मानव के लिए सम्भव है। मैंने सरकारी और काग्रेस दोनो स्रोतो से सूचनाए प्राप्त की हैं। मेरा विश्वास है कि सूचना सही है।

३ आपके मई १९३३ के उपवास की घोषणा के तुरन्त बाद ही मार्कण्डेय मन्दिर के, जो स्वय कैथी गाव मे, बनारस से लगभग १७ मील की दूरी पर है, निकटवर्ती गावो के काग्रेसी तथा हरिजन कार्यकर्त्ताओ ने सार्वजनिक सभाए करके हरिजनो को मन्दिरो मे प्रवेश दिलाने के औचित्य और उनकी सामान्य स्थिति सुधारने के बारे मे जनता को प्रशिक्षित करना तथा उसका मत-सग्रह करना शुरू किया।

४ इन सार्वजनिक सभाओ मे हुए अनुभव के परिणाम-स्वरूप कार्यकर्त्ताओ ने ईमानदारी से समझा कि सामान्यत जनता हरिजनो के मन्दिरप्रवेश को पसन्द करती है और वह मार्कण्डेय मन्दिर में भी उनके प्रवेश का समर्थन करेगी। इसलिए उन्होंने एक तारीख तय की और उस दिन प० राममूरत मिश्र, श्री त्रिभुवननारायण सिंह, श्री आद्याप्रसाद सिंह जैसे प्रमुख स्थानीय काग्रेसियो के नेतृत्व मे, कुछ हरिजन मित्रो के साथ १५ कार्यकर्त्ता इस कामना के साथ मार्कण्डेय मन्दिर तक गये कि यदि अनुमति मिल जाय तो उसमे प्रवेश करे। उन्होंने सब सम्बद्ध जनो को विश्वास दिलाया कि वे बलात् मन्दिर मे प्रवेश न करेंगे और तभी प्रवेश करेंगे जब जनता उनका समर्थन करेगी। रात को उन्होंने मन्दिर के पास डेरा डाला और दूसरे दिन प्रात काल गगा स्नान करने के बाद, वे मन्दिर की ओर रवाना हुए।

५. मन्दिर में कुछ गुसाईं पुजारी का काम करते हैं। पुजारियों ने जब लोगों को उस ओर आते देखा तो मुख्य मन्दिर-द्वार को बन्द कर दिया। पर उन्होंने एक पृष्ठ द्वार को खुला रक्खा जिससे चुने हुए यात्रियों को प्रवेश करने दिया जाता था और जिनसे ये गुसाईं सामान्य पूजासामग्री और दक्षिणा ग्रहण करते थे। आपके लिए यह जानना मनोरंजक होगा कि ये गुसाईं जन्म या जाति से ब्राह्मण नहीं हैं किन्तु कुछ विचित्र परिस्थितियों के कारण ये मन्दिर के पुजारी बन गये थे। कुछ साल पहिले उनके और निकटवर्ती ठाकुरों (क्षत्रिय ज़मींदारों) के बीच, गुसाइयों द्वारा बहुत दिनों से परम्परागत रूप से की जानेवाली सेवाओं के मामले को लेकर झगड़ा खड़ा हो गया था। उस समय भारत धर्म-महामण्डल ने निर्णय दिया था कि गुसाइयों को यज्ञोपवीत धारण करने का भी अधिकार नहीं है। पर यह तो एक बात हुई।

६. जब मन्दिर बन्द हो गया तो स्वयंसेवकों का दल, अपने हरिजन मित्रों के साथ एक वृक्ष के नीचे बैठ गया। उन्होंने बार-बार गुसाइयों से अनुरोध किया कि वे द्वार खोल दें। उन्होंने उन्हें यह भी विश्वास दिलाया कि वे बलात् मन्दिर में प्रवेश न करेंगे। उन्होंने प्रार्थना की कि जिन्हें अधिकार है उन्हें दर्शन से वञ्चित न किया जाना चाहिए। जब गुसाइयों ने ऐसा करने से इन्कार कर दिया, तब विरोध-स्वरूप उन्होंने भोजन त्याग दिया। यह सारी घटना ७ जुलाई, १९३३ को हुई।

जब लोग उनके पास गये और उनसे भोजन करने को कहा तो उन्होंने उत्तर दिया कि वे अनशन नहीं कर रहे है; वे चाहते है कि सामान्य जनता की पंचायत यहां बैठे और यदि पंचायत उनके विरुद्ध निर्णय देगी तो भी वे उपवास भंग कर देगे।

७. ८ जुलाई, १९३३ को गुसाइयों की ओर से जिला मजिस्ट्रेट, बनारस को एक प्रार्थनापत्र दिया गया जिसमें स्वयंसेवकों की शिकायत थी और उनके विरुद्ध कानूनी संरक्षण की मांग की गई थी। जब जिले के सदर स्थान मे मजिस्ट्रेटी जांच-पड़ताल चल रही थी, तभी चूंकि शान्ति भंग होने का खतरा था, ९ जुलाई के दिन तीसरे पहर मार्कण्डेय मन्दिर में एक पंचायत हुई जिसमें झगड़ा तय हो गया। स्थानीय ठाकुरों और गुसाइयों के सामने, सब सम्बन्धित लोगों की स्वीकृति से, समझौता हो गया। इसलिए स्वयंसेवकों के उपवास का भी अन्त हो गया।

यहां मैं यह जिक्र कर दूं कि, इसके कुछ समय पहिले से गुसाईं चाह रहे थे कि वे मन्दिर के महन्त के रूप में कार्य करें। ठाकुरों का विरोध था कि उनकी वैसी कोई स्थिति नहीं है। मन्दिर उनके पुरखों का है। गोसाइयों और ठाकुरों के बीच अच्छी भावना न थी।

८. ऊपर जिस समझौते का उल्लेख किया गया है वह यह था कि हरिजनो

को एक स्थान तक, जहां से शिवलिंग दिखाई पड़ता है, जाने का अधिकार दिया गया। उसके अनुसार शिवशकर सिंह, एक भूतपूर्व एम० एल० सी०, जिनमे काग्रेस के प्रति बिल्कुल सहानुभूति नही है, सबकी उपस्थिति मे, स्वयसेवको एव हरिजनो के साथ मन्दिर के अन्दर नियत स्थान तक गये, और लौट आये।

९. अगला दिन १० जुलाई श्रावणमास का सोमवार था, जब इस मन्दिर पर (दर्शनार्थियो की) बडी भीड होती है। उस दिन सवेरे वर्णाश्रम-स्वराज्य-सघ वालो ने जिला मजिस्ट्रेट को सूचित किया कि मन्दिर के पास दगा हो जाने की सम्भावना है। जिला मजिस्ट्रेट ने एस० डी० ओ० (सब-डिवीजनल अफसर) को भेजा। वह गये और उन्होने वहा सब कुछ शान्त पाया। तेईस गुसाइयो ने उन्हे एक वक्तव्य दिया कि हरिजनो का प्रवेश परस्पर रजामन्दी से हुआ है और वे एक विशेष स्थान तक आये और दर्शन करके लौट गये।

१०. झूठी अफवाहे फैल गई कि हरिजनो ने जबर्दस्ती मन्दिर मे प्रवेश किया है और उन्होंने शिवलिंग का स्पर्श तक किया है। १२ जुलाई को भारत धर्म महा-मण्डल की ओर से स्वामी लालनाथ, जिन्हे मेरा विश्वास है, आप खूब जानते हैं, तथा दूसरे लोग वहा पहुचे और शुद्धि के हेतु मन्दिर को दो दिनो के लिए बन्द कर दिया। मन्दिर फिर से १४ जुलाई को खोला गया।

११. इसके बाद ६७ स्थानीय ठाकुरो ने अदालत से प्रार्थना की कि बिना किसी औचित्य के दो बार मन्दिर को बन्द कर देने और इस प्रकार उस पर अपना स्वामित्व जिसके वे पात्र नही हैं, स्थापित करने के कारण, शान्ति-भग होने का खतरा है इसलिए गुसाइयों के खिलाफ फौजदारी कानून की ११७ धारा के अनुसार मामला चलाया जाय। इस मुकदमे के सिलसिले मे सम्बन्धित मजिस्ट्रेट ने गुसाइयों से जमानत मागी जिसे वे समय पर न दे पाये। उन्हे चन्द दिनो तक जेल मे रहना पडा। किन्तु वस्तुत इसका नामाकित सत्याग्रह से कोई सम्बन्ध नही है क्योंकि यह घटना सत्याग्रह के बहुत दिनो बाद हुई और इसका कोई सम्बन्ध मन्दिर-प्रवेश से नही था, बल्कि वह गुसाइयो और ठाकुरो के बीच शान्ति-भग न होने देने के लिए की गई कानूनी कार्रवाई घटित हुई थी।

१२ यह मुकदमा परस्पर समझौते मे खत्म हुआ जिसमें निम्नलिखित बाते तय हो गई।

१. (मन्दिर के) भवन व्यक्तिगत जनों द्वारा निर्मित किये गये थे किन्तु वे थे जनता के लिए, २ पहिले की भाति कैंथी गाव के सनातनी ठाकुर मन्दिर का सब प्रबन्ध देखेंगे, ३. केवल गुसाइयों को पूजा करने और दान-दक्षिणा लेने का अधिकार है, ४ गुसाई अपनी पारी मे पूजा और चढावा लेने का अधिकार केवल

गुसाई को ही हस्तान्तरित कर सकते हैं, किसी अजनवी को नहीं। ५. गुसाइयों को मन्दिर स्वच्छ रखना पड़ेगा। ६. मन्दिर में चढ़ाये वर्तनों को एक निश्चित संख्या तक मन्दिर में ही अच्छी हालत में रखना पड़ेगा; वे उन्हें निजी व्यवहार में तभी ला सकते हैं जव वे निश्चित संख्या के अतिरिक्त हों, ७. गुसाईं मन्दिर के आस-पास के किसी भवन को अपने आवास के लिए नहीं इस्तेमाल कर सकते, क्योंकि वे यात्रियों की सुविधा के लिए हैं।

१३. इस समझौते के लगभग दो महीने वाद गुसाइयों ने दीवानी अदालत में मामला चलाया कि उन्हें मन्दिर के चतुर्दिक की भूमि पर कव्जा दिलाया जाय। मेले के समय स्थानीय जमींदार इस भूमि पर लगी दुकानों से पैसा वसूल करते हैं। गुसाइयों का दावा है कि वे इस आय को लेने के अधिकारी नहीं हैं। हाल में एक खटिक-द्वारा कुछ गुसाइयों के खिलाफ फौजदारी मुकदमा चलाया गया है, जिसमें कहा गया है कि उस (खटिक) ने ठाकुरों से दो पेड़ पट्टे पर ले रक्खे है जिसके फल गुसाई चुरा लेते हैं। ये पेड़ उसी झगड़ेवाली ज़मीन पर हैं।

ये मुकदमे चल रहे हैं।

१४. मामला अव तक यही है। उस एक प्रवेश के वाद हरिजन मन्दिर में नही जाते और यह वात स्पष्ट नही है कि जो समझौता उस समय हुआ था उसके द्वारा सिर्फ़ एक प्रवेश की या हरिजनों को सदा के लिए प्रवेश की अनुमति दी गई थी।

१५. इतनी ही वात है जिसका मैं पता लगा सका हूं। यदि आप मुझे किसी विशेष भाग के सम्वन्ध में कोई और जांच-पड़ताल करने को कहेंगे तो वैसा करूंगा।

...मैं सदा आपकी सेवा के लिए प्रस्तुत हूं। मैं आशा करता हूं कि आपका स्वास्थ्य अच्छा है और वर्तमान कार्य का भार आपके लिए वहुत ज्यादा नही सावित हो रहा है।...

आपका कृपापात्र
श्रीप्रकाश

३९. चन्द्र त्यागी का पत्र : गांधीजी के नाम

ॐ

[टिप्पणी—केवल ऊपर के ॐ को छोड़ सारा पत्र उर्दू में है।—सम्पा०]

१६ मार्च सन् ३४

प्यारे वापू,

वगैर नमक मिठाई घी हमेशा अच्छा लगता है।

आपकी इजाजत से जेल मे दूध लेने लगा। लेकिन अभी तक इस्तेमाल कर रहा हू। इससे मेरे दिल और सब्र मे कभी-कभी खलल मालूम हुआ है। अगर यह जरूरी न हो तो न लेने की इजाजत फर्माई जाय।

आपका
चन्द्र त्यागी

बापू जी ने उर्दू अक्षरो मे ही उस पर लिख दिया है —

"तुम्हारे उर्दू हरफ पढकर मैं हैरान होता हूं। दूध न छोड़ा जाय, लेकिन मिठाई घी छोड़ दिया जाय। बापू के आशीर्वाद।"

—हिन्दी। १६।३।१९३४। जी० एन० ३२६५ की फोटो-नकल से।]

४०. जवाहरलाल का पत्र : गांधीजी के नाम

[कमला नेहरू के अत्यधिक अस्वस्थ होने तथा उनकी दशा खराब होने के कारण जवाहरलाल जी दस दिन के लिए अकस्मात् जेल से रिहा कर दिये गये थे। जेल से बाहर जाने के बाद उन्होंने अपने अन्तर्द्वन्द्व के विषय मे गाधीजी को निम्न-लिखित लम्बा पत्र लिखा था। इसमें जिस स्वाराज भवन का उल्लेख है वह नेहरू परिवार का निवास था, जिसे पिता की मृत्यु के बाद, उनकी इच्छानुसार जवाहर-लाल जी ने राष्ट्र को अर्पित कर दिया था तथा उसका एक ट्रस्ट बना दिया था। —सम्पा०]

आनन्द-भवन,
इलाहाबाद
१३ अगस्त, १९३४

प्रिय बापू,

छ महीने बिल्कुल अकेले रहने और कुछ भी न करने के बाद पिछले २७ घण्टो की चिन्ता, उत्तेजना और भाग-दौड मे मैं खो-सा गया हू। मैं बहुत थकान महसूस कर रहा हू। अर्धनिशीथ मे यह पत्र आपको लिख रहा हू। सारे दिन लोगो की भीड आती रही है। मौका मिला तो आपको फिर लिखूगा, किन्तु कई महीने तक ऐसा कर भी सकूगा, इसमे मुझे सन्देह है। इसलिए मैं थोडे मे बताना चाहूगा कि पिछले कोई पाच महीनो मे कांग्रेस के जो महत् निर्णय हुए हैं, उनके प्रति मेरी क्या प्रतिक्रिया रही है। मेरी जानकारी के साधन, स्वभावत, बहुत सीमित रहे हैं

किन्तु मैं समझता हूं कि वे इतने पर्याप्त हैं कि मैं घटनाओं की सामान्य धारा का वहुत कुछ सही अनुमान कर सकता हूं।

जब मैंने सुना कि आपने सत्याग्रह-आन्दोलन वन्द कर दिया है, तो मुझे दुःख हुआ। पहिले छोटी-सी घोषणा मुझे मिली। उसके वहुत वाद मैंने आपका वयान पढ़ा और उससे मुझे इतना जवर्दस्त धक्का लगा, जितना शायद पहिले कभी नही लगा होगा। सत्याग्रह-आन्दोलन को वन्द कर देने पर मैं अपने मन को तैयार कर सकता था, किन्तु ऐसा करने के जो कारण आपने वताये और आगे के काम के लिए जो सुझाव आपने दिये, उसने मुझे हैरत में डाल दिया। मैंने अकस्मात् और जोरों के साथ, महसूस किया, मानों मेरे भीतर की कोई चीज टूट गई, ऐसा कोई वन्धन टूट गया, जिसकी मेरे लिए वड़ी कीमत थी। मैंने अपने को इस लम्वी-चौड़ी दुनिया में भयानक रूप से अकेला महसूस किया। मैंने प्रायः वचपन से ही अपने को सदैव कुछ अकेला ही अनुभव किया है। किन्तु कुछ लगाव मुझे शक्ति देते रहे हैं, कुछ मजवूत सहारे मुझे थामे रहे हैं। वह अकेलापन कभी गया तो नही किन्तु कम हो गया था। परन्तु अव मैंने अपने को विल्कुल अकेला समझा, ऐसा जैसे किसी मरुस्थलीय द्वीप पर पटक दिया गया हूं।

लोगों में परिस्थितियों के अनुसार अपने को ढालने की प्रवल शक्ति होती है और मैंने भी कुछ सीमा तक नई परिस्थिति के अनुसार अपने को वना लिया। इस विपय में मेरी भावनाओं की तीव्रता, जो बहुत-कुछ शारीरिक पीड़ा वन गई थी, ठण्डी पड़ गई; उसकी धार भोथरी हो गई। किन्तु धक्के-पर-धक्के लगने और एक-के-वाद-एक घटनाओ के होने से वह तेज हो गई और मेरे मन एवं भावनाओं को उसने चैन और आराम न लेने दिया। फिर मुझे आध्यात्मिक एकाकीपन अनुभव हुआ, मानो मैंने केवल अपने सामने से गुजरती भीड़ से, वल्कि जिन्हें मैं अपना प्यारा और नजदीकी साथी मानता था, उनसे भी विल्कुल अजनवी हूं, और उनके साथ मेरा कोई मेल नहीं है। इस वार का मेरा जेल में रहना मेरे तन्तुओं के लिए जितना अधिक कष्टप्रद रहा, उतना पहिले किसी वार का जेल-गमन नहीं हुआ था। मैं करीव-करीव यह चाहने लगा कि सभी समाचारपत्र मुझसे दूर रक्खे आयं, जिससे कि मैं इन वार-वार लगनेवाले धक्कों से वच सकूं।

शरीर से मैं ठीक ही रहा। जेल में मैं सदैव ऐसा ही रहता हूं। मेरे शरीर ने मेरा अच्छा साथ दिया है और वह वहुत दुर्व्यवहार तथा वोझ सह सकता है। यह सोचने की ढिटाई करके कि शायद मैं उस भूमि के लिए, जिससे कि मेरा भाग्य वंधा हुआ है, अव भी कुछ विशेप कार्य कर सकू, मै अपने शरीर की सदा अच्छी तरह देखभाल करता रहा हूं।

किन्तु मैंने प्रायः यह सोचा है कि कही गोल छिद्र मे चौकोर खूटी के जैसा तो नही हू, या अहकार के बुलबुले के समान तो मैं नही हूं, जो मेरा तिरस्कार करते हुए समुद्र मे जहा-तहा उठ रहे थे। किन्तु घमण्ड और गर्व की विजय हुई और उस बौद्धिक यन्त्र ने, जो मेरे भीतर चलता रहता है, हार मानने से इन्कार कर दिया। यदि वे आदर्श, जिन्होंने मुझे काम करने को उकसाया और तूफानी ऋतु मे भी उमग मे रक्खा, ठीक थे—और उनके ठीक होने का विश्वास मुझमे सदैव बढ़ता रहा है—तो उनकी अवश्य विजय होगी, चाहे हमारी पीढी उस विजय को देखने के लिए जीवित न रहे।

किन्तु इस साल के इन लम्बे और थकानेवाले महीनो मे उन आदर्शों का क्या हुआ, जबकि मैं एक मौन और दूर के दर्शक की तरह, अपनी लाचारी पर बेचैन था? रुकावटो का आगमन और अल्पकालिक पराजय सभी बड़े सघर्षों मे बहुत सामान्य बातें हैं। उनसे दु ख तो होता है, किन्तु आदमी जल्दी ही सभल जाता है। यदि उन आदर्शों की ज्योति को फीकी होने से बचाया जाय और सिद्धान्तो का लगर सुदृढ रहे तो यह सभाल शीघ्र चरितार्थ हो जाती है। किन्तु मैंने जो देखा वह रुकावट और हार नही थी, बल्कि आध्यात्मिक हार थी, जो सबसे-अधिक भयकर है। ऐसा न समझिए कि मेरा सकेत कौंसिल-प्रवेश के सवाल की ओर है। उसे मैं बहुत महत्व नही देता। किन्ही परिस्थितियो मे इन व्यवस्थापिका सभाओ मे स्वय जाने की कल्पना कर सकता हू। किन्तु मैं चाहे व्यवस्थापिका-सभा मे प्रवेश करके काम करूं चाहे बाहर से, मैं केवल एक क्रान्तिकारी के रूप मे काम कर सकता हू, जिसका अभिप्राय ऐसे इसान से है, जो मौलिक और क्रान्तिकारी परिवर्तन चाहता है, फिर वह चाहे राजनीतिक हो या सामाजिक क्योकि मुझे विश्वास हो गया है कि किन्ही अन्य प्रकार के परिवर्तनो से हिन्दुस्तान और दुनिया को न शान्ति मिल सकती है, न सन्तोष।

ऐसा मैंने सोचा। प्रकट है कि जो नेता बाहर काम कर रहे थे, वे कुछ और ही ढग से सोचते थे। उन्होंने ऐसे युग की भाषा बोलना आरम्भ किया, जो बीत चुका था और जो असहयोग तथा सत्याग्रह के हम पर चढे नशे से पहिले का था। कभी-कभी वे उन्ही शब्दों और मुहाविरो का इस्तेमाल करते थे, किन्तु वे निष्प्राण और अर्थहीन होते थे। काग्रेस के मुखिया अचानक वे ही लोग बन बैठे, जिन्होंने हमारे आगे रोडे अटकाये थे, हमे रोका था, सघर्ष से दूर रक्खा था, बल्कि हमारी बड़ी आवश्यकता के समय विरोधी दल के साथ सहयोग किया था। अब वे हमारे स्वतन्त्रता-मन्दिर के बडे पुजारी बन बैठे, और बहुत-से वीर सिपाही, जिन्होंने युद्ध की गर्मी और धूल मे बोझ को कन्धा लगाया था, मन्दिर के अहाते मे घुस भी नही

पाते। वे और उन-जैसे लोग अछूत और पास न आने लायक हो गये थे और वे यदि अपनी आवाज़ बुलन्द करते और उन नये पुजारियों की टीका-टिप्पणी करते तो चीख कर उन्हें बैठा दिया जाता और कहा जाता कि वे लक्ष्य के प्रति विद्रोही हैं, क्योंकि वे मन्दिर के पवित्र अहाते की एकरसता को भंग करते है।

और इस तरह भारतीय स्वतन्त्रता का झण्डा बड़े आडम्बर और घटाटोप के साथ उन्हें सौंप दिया गया, जिन्होंने दरअसल दुश्मन के कहने पर उसे तब नीचे झुकाया था, जबकि हमारा राष्ट्रीय संग्राम बड़े जोरों पर था,—उन लोगों को, जिन्होने घर के मुंडेरों पर चढ़कर यह एलान किया था कि वे राजनीति से नाता तोड़ बैठे हैं—क्योंकि राजनीति उस समय खतरे से खाली नही थी—कि जो अब कूद कर आगे की पंक्ति में आ गये थे क्योंकि अब राजनीति में खतरा नही था।

और उनके सामने आदर्श क्या थे, जब कि वे कांग्रेस और राष्ट्र की ओर से बोल रहे थे? आदर्श के नाम पर उनके यहां एक बड़ी ही बेहिसाब हालत थी, जिसमें असली मुद्दों से कतराना होता, कांग्रेस के राजनीतिक उद्देश्यों तक को, जहां तक उनकी हिम्मत पड़ती, नरम करना होता, प्रत्येक निहित स्वार्थ के प्रति कोमल चिन्ता प्रकट करना होता, स्वतन्त्रता के माने हुए बहुत से दुश्मनों के आगे झुकना होता, किन्तु कांग्रेसी सेना के प्राणोत्सर्ग करने वाले अगुआ सिपाहियों के सामने साहस और मर्दानगी दिखाना होता। क्या कांग्रेस तेजी से गिरकर कलकत्ता कार्पोरेशन के पिछले कई सालों के लज्जाजनक दृश्य का एक बड़ा संस्करण नही बनती जा रही है? बंगाल-कांग्रेस का शक्तिशाली भाग क्या आज 'श्री नलिनीरंजन[1] सरकार संवर्धन समाज' नही कहा जा सकता? और यह वही सज्जन हैं, जो सरकारी कर्मचारियों, गृह-सदस्यों और इसी तरह के लोगों को दावतें देकर प्रसन्न हुआ करते थे, जबकि हममे से बहुत से जेलों में थे, और सविनय अवज्ञा आन्दोलन धूमधाम से चलता हुआ समझा जाता था। क्या दूसरे भाग को कुछ वैसे ही ऊंचे उद्देश्य के संवर्धन के लिए एक वैसा ही समाज नही माना जा सकता? किन्तु दोष बंगाल तक सीमित नही है। करीब-करीब सभी जगह ऐसी ही दृष्टि है। कांग्रेस ऊपर से नीचे तक दलबन्दी में पड़ गई है और अवसरवादिता का बोलबाला है।

इस परिस्थिति की सीधी जिम्मेदारी कार्यसमिति पर नही है। फिर भी कांग्रेस-समिति को यह जिम्मेदारी उठानी चाहिए। नेताओं और उनकी नीति के आधार पर ही अनुयायी अपना कार्यक्रम बनाते है। अनुयायियों पर दोष डालना न

१. कलकत्ता के एक बड़े व्यवसायी और नेता।

उचित है, न ठीक है। प्रत्येक भाषा मे कोई-न-कोई कहावत है, जिसमे काम करने वाले अपने औजारो को दोष देते हैं। कार्य-समिति ने जानबूझ कर हमारे आदर्शों और ध्येयो की परिभाषा को गोलमोल रखने को बढावा दिया है और इसका नतीजा यही नही होगा कि गडबड फैले, बल्कि यह भी कि प्रतिक्रिया के अवसरो पर गिरावट होगी, और ढोल पीटनेवाले और प्रतिक्रियावादी आगे आवेंगे।

मेरा सकेत विशेषत राजनीतिक लक्ष्यो की ओर है, जो कि काग्रेस का विशेष क्षेत्र है। मैं समझता हू कि बहुत पहिले ही काग्रेस को सामाजिक और आर्थिक मुद्दो पर साफ-साफ ध्यान देना चाहिए था, किन्तु मैं यह भी मानता हू कि इन मुद्दो की शिक्षा के लिए समय की आवश्यकता है और हो सकता है कि कुल मिलाकर काग्रेस फिलहाल उतनी आगे न जा सके, जितनी मैं चाहूगा कि वह जाय। किन्तु ऐसा जान पडता है कि कार्यसमिति किसी विषय को जानती हो, चाहे न जानती हो, वह सदा उन लोगो पर इलजाम लगाने और उन्हे निकाल बाहर करने के लिए तैयार रहती है, जिन्होंने इन विषयो का खास अध्ययन किया है और जो अपने कुछ विचार रखते हैं। उन विचारो को समझने की कोई कोशिश नही की जाती, जिनके बारे मे यह कुख्यात है कि ये आज की दुनिया के कुछ सबसे योग्य और सबसे ज्यादा त्यागी लोगो के विचार हैं। ये विचार सही हो या गलत, किन्तु इसके पहिले कि कार्यसमिति उनकी निन्दा करे, उसे कम-से-कम उन्हे समझ तो लेना चाहिए। एक सधे-सधाये तर्क का उत्तर भावुकताभरी अपीलो से नही दिया जा सकता, न इस प्रकार के हल्की उक्तियो से कि हिन्दुस्तान मे परिस्थितिया कुछ दूसरे प्रकार की हैं और जो आर्थिक नियम दूसरी जगह लागू होते है, वे हमने यहा चालू नही किये हैं। कार्य-समिति के इस विषय के प्रस्ताव मे समाजवाद की मोटी बातो की इतनी आश्चर्य-पूर्ण अज्ञानता दिखाई दी कि उसे पढकर दु ख हुआ और यह जानकर भी कि उसे हिन्दुस्तान से बाहर भी लोग पढ़ेंगे। ऐसा जान पडता है कि समिति की सबसे बडी इच्छा यह रही है कि निहित स्वार्थों को, जैसे भी हो, आश्वासन दिलाये, फिर ऐसा करने मे भले ही उसका वक्तव्य बकवास ही क्यो न जान पडे।

समाजवाद विषय के व्यवहार का एक अजीब ढग यह है कि इस शब्द को, जिसका अग्रेजी भाषा मे एक निश्चित अर्थ है, एक बिल्कुल ही दूसरा अर्थ दिया जाय। यदि लोग शब्दो को अपने-अपने अलग अर्थ देने लगें तो विचारो के आदान-प्रदान मे मदद नही मिलती। कोई अपने को इजिन-चालक कहे और फिर यह जोड दे कि उसका इजिन लकडी का है और उसे बैल खीचते है तो वह इजिन-चालक शब्द का दुरुपयोग करता है।

यह पत्र आशा से अधिक लम्बा हो गया है और अब रात भी काफी हो गई है।

शायद मैंने जो कुछ लिखा है, एक उलझे हुए ढंग से और बिना किसी तरतीब के लिखा है, क्योंकि मेरा दिमाग़ थका हुआ है। फिर भी उसमें मेरे मन की एक तस्वीर मिलेगी। पिछले कुछ महीने मेरे लिए बड़ी तकलीफ़ के रहे हैं और मैं समझता हूं कि बहुत से और लोगों के लिए भी वे वैसे ही रहे होंगे। कभी-कभी मैने महसूस किया है कि आज की दुनिया में, और शायद पुराने जमाने की दुनिया मे भी, यह प्रायः पसन्द किया गया है कि कुछ लोगों के दिलों को तोड़ना, औरो की जेबों को छूने की अपेक्षा अच्छा है। दिलों, दिमागों, देहों, मानवीय न्याय और सम्मान की तुलना में सचमुच जेबों की कीमत और कद्र ज्यादा बढ़ रही है।

एक और विषय है, जिसका जिक्र मैं करना चाहूंगा: स्वराज-भवन-ट्रस्ट। मालूम हुआ है कि कार्यसमिति ने हाल में स्वराज-भवन की देखभाल के सवाल पर विचार किया था और इस नतीजे पर पहुंची थी कि यह उनकी जिम्मेदारी नही है। उसने पहिले, लगभग तीन साल हुए, इसके लिए एक ग्राण्ट देना मंजूर किया था किन्तु वह अभी तक मिली नही है, यद्यपि उसके आधार पर खर्चे तो हो गये। अब फिर से नई ग्राण्ट मंजूर हुई है। यह शायद कुछ महीनों के लिए काफ़ी होगी। भविष्य के लिए, कार्यसमिति, ज़ाहिरा तौर पर, चिन्तित रही है कि मकान और साथ की जमीन पर होनेवाले खर्च का बोझ उसे न उठाना पड़े। यह बोझ सौ रुपये महीने का है, जिसमें टैक्स इत्यादि शामिल है। मै समझता हूं कि ट्रस्टियों को भी इस बोझ से कुछ डर हो रहा था और उन्होंने सुझाव दिया कि मकान के कुछ हिस्से को मामूली तौर पर किराये पर उठा दिया जाय, जिसमें कि उसकी देख-रेख और सार-संभाल का खर्च निकाला जा सके। एक दूसरा सुझाव यह था कि इस काम के लिए जमीन का कुछ हिस्सा बेच दिया जाय। इन सुझावों की बात सुनकर मुझे हैरत हुई। क्योंकि इनमें से कुछ मुझे ट्रस्ट की शर्तों के विरुद्ध लगे और उसकी भावना के तो सभी विरुद्ध थे। ट्रस्ट के एक सदस्य की हैसियत से मेरा इस विषय मे एक ही मत है, बल्कि मैं कहना चाहूंगा कि ट्रस्ट की जायदाद के इस दुरुपयोग के विरुद्ध मुझे कटोर आपत्ति है। मेरे पिता की इच्छाओं के इस तरह निरादर की कल्पना ही मुझे सह्य नही है। ट्रस्ट न केवल उनकी इच्छाओं का प्रतिनिधित्व करता है, बल्कि एक प्रकार से उनकी स्मृति की भी। और उनकी इच्छाएं एवं स्मृतियां मुझे सौ रुपये महीने से ज्यादा प्यारी हैं। इसलिए मै कार्यसमिति और ट्रस्टियों को यह विश्वास दिलाना चाहूंगा कि इस जायदाद की देखरेख के लिए जितने धन की आवश्यकता है उसकी चिन्ता उन्हें करने की जरूरत नही। कार्यसमिति ने जो रकम कुछ महीने के लिए मंजूर की है उसके समाप्त होते ही मैं उसकी देख-रेख की जिम्मेदारी अपने ऊपर ले लूगा और कार्यसमिति को आगे ग्राण्ट देने की

जरूरत न होगी। मैं ट्रस्टियो से यह अनुरोध करूगा कि इस विषय मे वे मेरी भावनाओ का आदर करेंगे और जायदाद के न तो टुकडे करेंगे और न उसे किराये पर उठावेंगे। मैं स्वराज-भवन जायदाद की देखरेख तवतक करूगा जवतक कि वह किसी सत्कार्य के उपयोग मे नही आती।

मेरे पास आकडे नही हैं किन्तु मेरा विश्वास है कि इस समय तक भी स्वराज-भवन, किसी अर्थ मे, पैसे के खयाल से कार्यसमिति पर बोझ नही रहा है। जो ग्राण्ट उसके लिए दी गई है, वह ए० आई० सी० सी० के आफिस के लिए काम मे आनेवाली जगह के उचित किराये से किसी कदर भी ज्यादा न होगी। यह किराया छोटे और सस्ते मकान में दफ्तर के चले जाने से कम हो सकता था। साथ ही यह भी है कि पहिले मद्रास मे एक मकान के केवल ऊपर तल्ले के लिए ए० आई० सी० सी० ने १५० रुपये महीना किराया दिया है।

शायद इस पत्र के कुछ अशो से आपको तकलीफ पहुचे, किन्तु आप यह भी न पसन्द करते कि मैं अपने दिल की बात आपसे छिपाऊ।

सप्रेम आपका,
जवाहर

—अंग्रेजी। इलाहाबाद, १३।८।१९३४। 'ए बच आफ़ ओल्ड लेटर्स' से।]
सौजन्य : श्रीमती इन्दिरा गांधी।

४१. हीरालाल शर्मा का पत्र : गांधीजी के नाम

खुर्जा
ता० १५-१२-३४

पूज्य बापू जी,

कल १४-१२-३४ का लिखा हुआ पत्र मेरी भीरुता की निशानी समझा जाय। आपके पत्रो से मुझे लगा है कि मैं आपसे बहुत दूर हू अत मेरे हृदय की आवाज़ आप तक पहुच नही पाती। 'पुत्र, पिता के अधिक समीप आकर अपने हृदय की आवाज़ सुना सके' केवल इस हेतु मैंने कल सुबह १६ ता० से १४ दिन का उपवास आत्म-शुद्धि के लिए करना निश्चय किया है। यह मेरा पहला दण्ड समझा जाय। सम्भव है, आगे आवश्यकतानुसार और भी ऐसे दण्ड हो। यह मेरा उपवास आध्यात्मिक है। केवल आपको ही सूचना दी है। आप इसे अपने तक ही सीमित

रक्खें। मुझे इस अग्नि-परीक्षा से आशा है कि (१) चि० कृष्णा अच्छी होगी (२) आश्रम के बारे में मेरी विनम्र, सरल और सीधी प्रार्थना पर आप विचार करेंगे तथा (३) पश्चिमी देशों में जाने का मेरा असल अभिप्राय जान पायेंगे। ईश्वर मेरी सहायता करे, यही प्रार्थना है। आपके कागज़ात मिले क्या? 'हरिजन' का नोटिस क्या दूसरे अखबारों में छपा है? रामदास भाई का क्या हाल है?

आपका आज्ञाकारी पुत्र,
शर्मा का प्रणाम

—हिन्दी। खुर्जा, १५।१२।१९३४। 'बापू की छाया में मेरे जीवन के सोलह वर्ष' से।]

४२. अवधेशदत्त का पत्र : गांधीजी के नाम

पूज्य बापू जी,

१. मुझे दो तीन आवश्यक प्रश्न पूछने हैं। यदि आज्ञा हो तो अभी सेवा में उपस्थित करूं, अथवा इन्दौर से लौटने के पश्चात्।

आपके इतने अधिक कार्य तथा मौन को देखकर ही अभी तक इन प्रश्नों को छिपाये बैठा हूं।

२. क्या मैं आशा कर सकता हूं कि मुझे आपके साथ किसी भी सेवाकार्य-वश चलने का अवसर मिलेगा? यदि ऐसा सम्भव हुआ तो मेरे लिए परम सौभाग्य की बात होगी।

दयापात्र
अवधेश अवस्थी
(वर्धा)
१६-४-३५

टिप्पणी—इस पर गांधी जी ने लिखा है—"मौका आने पर हो सकता है।"

—हिन्दी। वर्धा, १६।४।३५। अवधेशदत्त अवस्थी के पत्र (जी० एन० ३२२०) की फोटो-नकल से।]

४३. अवधेशदत्त का पत्र : गांधीजी के नाम

॥ ओ३म् ॥

पूज्य बापू जी,

१. किसी आदर्श गाव के लिए सफाई तथा आटा, चावल, गुड, तेल आदि खाने-पीने के सुधारो के अतिरिक्त और कौन कौन सी बातें आवश्यक हैं ?

२. यदि मुझे ठीक पता हो कि माता-पिता आदि सम्बन्धी केवल मोह के कारण ही मुझे किसी सर्वहितकारी कार्य मे सम्मिलित होने से रोकते हैं तो क्या मुझको उनकी इस आज्ञा को मानकर बैठ रहना चाहिए ?

३. अपने गुरुजनो (माता, पिता, गुरु तथा शासक वर्ग) की ऐसी आज्ञा का मानना जिससे सत्य, अहिंसा आदि व्रतो मे से किसी एक व्रत का विरोध पाया जाता हो, ठीक होगा अथवा नही ?

४ आर्य समाज के १० नियमो मे एक नियम यह भी है प्रत्येक हितकारी नियम-पालन मे परतन्त्र रहना चाहिए। क्या यह ठीक है ? यदि ठीक है तो क्या इसका यह अर्थ नही होगा कि किसी समाज मे कोई बुरी प्रथा है उसका मिटाना आवश्यक है लेकिन जबतक कुल समाज अथवा बहुमत मिटाने के पक्ष मे न हो तबतक उस प्रथा को मानना ही चाहिए अर्थात् अकेले ही उस प्रथा का सक्रिय विरोध न करना चाहिए। हा, दूसरे प्रयत्न भले ही करता रहे।

नोट—एक साधारण व्यक्ति के लिए क्या उचित होगा, यही बताया जाय। महान् पुरुष जो भी करेगा उसके पीछे तो बहुमत हो ही जाता है।

५ आपने यह बताया है कि जेल के उसी नियम को न मानना चाहिए जो सचमुच स्वाभिमान के विरुद्ध हो। इसलिए यह बताया जाय कि जोडे-जोड़े से गिनती देना, मार तथा गाली खाते हुए काम करते रहना, हथकडी पहिनकर बाल बनवाना, प्रार्थना न करना, टिकट लेकर परेड पर खडे होना, परेड लगाना, सायं प्रात: अनुचित ढग से तलाशी देना, इन सब बातो मे सचमुच कौन बातें स्वाभिमान के विरुद्ध हैं। क्योकि इन्ही बातो पर प्राय: जेलो मे हर जगह झझट पैदा होती थी।

६ आपने यह बतलाया है कि पत्नी का पालन करना और जहा तक वह सहधर्मिणी रह सकती है उसका साथ देना पति का धर्म है। सो यदि पत्नी सहधर्मिणी न हो, विरोधी विचारवाली हो तो पति का पत्नी के प्रति क्या कर्तव्य होना चाहिए और ठीक ऐसी ही दशा मे पति के प्रति पत्नी का क्या होगा।

७ यदि मेरी मौजूदगी मे किसी मौके पर किसी भाई को (विशेषकर दरिद्र-नारायण तथा हरिजन) रियासत का पुलिस का सिपाही अथवा कोई मिथ्याभि-

मानी (विशेपकर सवर्ण) मनुष्य किसी कारण से गाली देने अथवा मारने लगे, जैसा कि प्राय: हुआ ही करता है, तो ऐसे मौके पर मेरा क्या कर्त्तव्य होगा?

८. एक पागल हाथी (अथवा कुत्ता) जो किसी प्रकार काबू में नही आता है और अनेक जानें ले चुका है तो क्या उसको मार देना उचित न होगा? यदि उचित है तो ऐसे ही स्वार्थ तथा काम-क्रोध आदि से पागल मनुष्यों के लिए ऐसी ही अथवा इससे मिलती-जुलती व्यवस्था (राज्य से) करना उचित ही होगा।

९. क्या स्त्री से पुरुप में प्राकृतिक रूप से कुछ श्रेप्ठता मानी जा सकती है?

१०. प्राय: स्त्रियां पुरुपों की पोशाक पहिनने में संकोच नहीं करती हैं जबकि पुरुप स्त्री की पोशाक पहिनना ग्लानि की बात समझता है। इसका क्या कारण है?

नोट—मेरी समझ से तो स्त्रियां पुरुपत्व को कुछ श्रेप्ठ समझती हैं।

११. आपके अंगार से पके हुए अन्न न लेने का क्या कारण है?

१२. कुछ कारणों से मेरी यह धारणा हो गई है कि जबतक विद्योपार्जन करना अभीष्ट हो तबतक राष्ट्रीय अथवा सामाजिक आन्दोलन से सर्वथा पृथक् ही रहे। क्या यह धारणा ठीक है?

दयापात्र
अवधेश

वर्धा,
२५-७-३५ ई०

[टिप्पणी : गांधी जी ने प्रश्नों के सामने हाशिये पर इन प्रश्नों के निम्नलिखित उत्तर दिये हैं:

१. हर एक में देखना चाहिए.

२. तब नहीं मानना धर्म हो सकता है.

३. नहीं.

४. ठीक समज में नहीं आता.

४. नोट—व्यक्ति को कर्त्तव्य पर डटे रहना चाहिए.

५. जिसमें हम धर्महानि मानें सो नहीं करना.

६. दोनों का अलग रहना और पति का आजीविका देना.

७. अन्यायी से रुक जाने का विनय करना. मजलुम को अहिंसक सहारा देना.

८. पागल हाथी पर भी यदि सच्चा प्रेम है तो संभव है वश में आवे. पागल मनुष्य के लिए ऐसा करना अधर्म है.

९. नहीं.

१०. क्योंकी पुरुष स्त्री को दुर्बल मानता है.

११. हिंसा, खर्च, समय का बचाव, आरोग्य.

१२. इसका निर्णय तुमारे करना है.

२७-७-३५ बापु

—हिन्दी। वर्धा, २५।७।१९३५। जी० एन० ३२२१ की फोटो-नकल से।]

४४. अवधेशदत्त शर्मा का पत्र : गांधीजी के नाम

॥ ओ३म् ॥

पूज्य बापू जी,

परिस्थिति की विवशता के कारण ५ मास और १ सप्ताह के पश्चात् इस तीर्थ से खेद के साथ विलग होना पड रहा है। जिस तीर्थभूमि को प्राप्त होकर यद्यपि मेरी पशुता बिल्कुल नष्ट नही होने पाई है फिर भी पशुता से मुक्त हो जाने का मार्ग तो मिल ही गया है। यहा से विलग होने से मुझे इस बात का भय अवश्य है कि अज्ञान-तिमिर मे पडकर शायद मुक्ति मार्ग मुझसे छूट न जाय। अतएव—

मेरे धैर्य और सन्तोष के लिए निम्नलिखित दो आवश्यक आश्वासन प्रदान किये जाय।

१ यहा ही की भाति मैं अपनी अज्ञानजनित आन्तरिक व्याकुलता को तथा जीवन सग्राम की कठिनाइयो को आपकी सेवा मे (पत्र-द्वारा) अर्पित करके आपके उत्तरो से आत्म-शान्ति-लाभ करता हू।

२. जब कभी मैं ऐसी व्याकुलता को प्राप्त हो जाऊ जो केवल आपकी समीपता ही से दूर हो सकती हो, तब मैं आपकी शरण मे उसी प्रकार आश्रय पा सकू जिस प्रकार एक बालक को अपनी माता का आश्रय प्राप्त होता है।

इति

दयापात्र

अवधेश

वर्धा १-८-३५ ई०

नोट—स्वीकृति इसी पत्र पर।

(टिप्पणी—गाधी जी ने २।८।३५ को इस पत्र के नीचे अपने हाथ मे लिखा है

"लिखा करो और उत्तर देने की चेष्टा करूंगा. जब आने का दिल हो तब लिखो. मै यहीं हूंगा तो सम्मति भेजने का प्रयत्न करूंगा".

बापू के आशीर्वाद

२-८-३५

—हिन्दी। वर्धा, १।८।१९३५। जी० एन० २३३४ की फोटो-नकल से।]

४५. जवाहरलाल का पत्र : गांधीजी के नाम

इलाहाबाद

५ जुलाई १९३६

प्रिय बापू,

मैं यहां कल रात पहुंचा। जब से मैने वर्धा छोड़ा तब से मेरे जिस्म मे कमजोरी और दिमाग में परेशानी मालूम होती है। इसका कुछ कारण बेशक शारीरिक है। ठण्ड लग जाने से मेरे गले की खराबी बढ़ गई है। कुछ और कारण भी हैं जो सीधे मन और आत्मा से सम्बन्ध रखते है। यूरोप से लौटने के बाद मैंने देखा है कि कार्यसमिति की बैठकों में मैं बहुत थक जाता हूं। मुझपर उनका निष्प्राण करनेवाला असर होता है और हर नये अनुभव के बाद मुझे लगभग ऐसा महसूस होता है कि मैं बूढ़ा हो गया हूं। मुझे आश्चर्य नही होगा, यदि समिति के मेरे साथियों को भी ऐसा ही महसूस होता हो। यह अच्छा अनुभव नही है और इससे प्रभावशाली कार्य के रास्ते में रुकावट होती है।

जब मै यूरोप से लौटा तब मुझसे कहा गया कि देश गिर गया है, और इसलिए हमें धीरे चलना पड़ता है। किन्तु चार महीने के मेरे थोड़े-से अनुभव से इस खयाल की पुष्टि नही होती। सच तो यह है कि मैं जहां कहीं गया हूं वहां मैंने उभरती हुई प्राण.शक्ति पाई है और जनता की सहायता की भावना पर मुझे आश्चर्य हुआ। इसका क्या कारण है, यह तो मैं निश्चित रूप से नही कह सकता। मैं केवल कई तरह की अटकलें ही लगा सकता हूं। जनता के उत्साह ने स्वाभाविक रूप से, मेरा दिल बढ़ा दिया है और मुझमें नई शक्ति भर दी है। परन्तु जान पड़ता है कि यह शक्ति कार्यसमिति की हर बैठक मे बाहर निकल जाती है, और मैं बहुत-कुछ ऐसा महसूस करता हुआ लौटता हूं, जैसे किसी बैटरी की बिजली खतम हो गई हो। इस बार यह प्रतिक्रिया सबसे अधिक हुई है, क्योंकि मेरी शारीरिक हालत गिरी हुई है।

किन्तु मैं आपको अपनी शारीरिक या मानसिक अवस्था के विषय मे लिखना नही चाहता था। इससे अधिक महत्वपूर्ण मामले ऐसे हैं जिनकी मुझे चिन्ता है और अभी तक मुझे कोई साफ रास्ता नजर नही आया। मैं जल्दबाजी मे या मामले पर पूरा विचार किये बिना काम नही करना चाहता। परन्तु मेरे अपने मन मे निश्चय होने से पहिले मैं आपको बता देना चाहता हु कि मैं किधर देख रहा हू। आपने मामले को ठीक-ठाक करने के लिए और सकट को टालने मे सहायता देने के लिए जो कष्ट उठाया उस सबके लिए मैं आपका कृतज्ञ हू। मुझे तब भी पक्का विश्वास था और अब भी पक्का विश्वास है कि जिस तरह कि अलहदगी की बात सुझाई गई, उसका हमारे सारे काम पर, जिनमे चुनाव शामिल है, गभीर असर होता। बहरहाल इस समय हम कहा हैं और भविष्य मे हमारे लिए क्या बदा है ? मैंने अपने नाम राजेन्द्रबाबू का पत्र (दूसरा) और मुझपर लगाये गये जबर्दस्त आरोपो को फिर से पढा। यह अभियोगपत्र जबर्दस्त तो है परन्तु निश्चित नही है। केवल स्त्रियो की सभा मे मेरे भाषण की बात निश्चित है किन्तु वास्तव मे उसका किसी व्यापक प्रश्न से सम्बन्ध नही है। खास बात यह है कि मेरी प्रवृत्तिया काग्रेस के लक्ष्य को हानि पहुचानेवाली हैं, उनसे काग्रेस का नुकसान हो रहा है और चुनावो में सफलता की सम्भावना घट रही है। यदि मेरा यही हाल रहा तो हालत और बिगड सकती है और मेरे साथी इस जबर्दस्त मामले मे कोई जोखिम नही उठाना चाहते।

अब जाहिर है कि यदि इस आरोप मे कोई सचाई है तो उसका मुकाबला होना चाहिए। मामला इतना गम्भीर है कि उसपर लीपापोती नही की जा सकती। इसमे कुछ काले और सफेद रग नही हैं और न कोई भले और बुरे का सन्तुलन करने वाली बातें है। यह तो सब काला-ही-काला है और इससे निर्णय करना सचमुच आसान हो गया है। कारण तथ्य को कितनी ही कोमलता के साथ बयान किया जाय वह यह है कि मैं एक असह्य कण्टक हू और मुझमे जो गुण है—यानी थोडी-सी योग्यता, शक्ति, लगन, थोडा व्यक्तित्व जिसका कुछ असर होता है—वे ही खतरनाक बन जाते है, क्योकि वे गलत आदमी के साथ लगे हुए हैं। इस सबसे जो नतीजा निकलता है, वह साफ है।

लखनऊ से पहिले और किसी हद तक लखनऊ मे भी खुद मुझपर यह असर पडा कि इस साल हम सबके लिए साथ-साथ चलने मे कठिनाई नही होनी चाहिए। अब यह साफ है कि मेरा खयाल गलत था हालाकि दोनो तरफ से यत्न मे कोई कमर नही रही। सम्भव है, दोष मेरा ही हो। मुझे इसका पता नही है, किन्तु आदमी को अपनी आख का शहतीर शायद ही दिखाई देता है। वास्तविकता यही है कि

आज वह आत्मिक निष्ठा—वफादारी—नही है, जो हमारे दल को बांधकर रखती है। यह एक मशीन-जैसा दल है और दोनो ओर एक निस्तेज रोष और दमन की-सी भावना है और जैसा मनोविज्ञान का प्रत्येक विद्यार्थी जानता है इससे सब प्रकार की अनुचित निजी और सामाजिक उलझनें पैदा होती हैं।

इस बार जब मै बम्बई पहुंचा तो बहुत लोग मेरे मुह की ओर देखते रहे, क्योंकि उनके लिए यह मानना कठिन हो गया था कि मैं बच कैसे गया। वहां सबको मालूम था (जैसा 'टाइम्स आव इण्डिया' में पहिले समाचार आया था) कि मेरी शान्तिपूर्वक समाप्ति होनेवाली है—अवश्य राजनीतिक समाप्ति ही। दाह-क्रिया के सिवा और सब कुछ तय हो चुका था, इसीलिए उन्हें आश्चर्य था। मुझे यह विचित्र-सी बात मालूम हुई कि जब बाजार में बहुत लोगों को ये सब विश्वासपूर्ण अफवाहें मालूम थी, तब मुझे इनका कुछ भी पता नही था। लेकिन हालांकि मुझे उनकी जानकारी नही थी तो भी अफवाहों का होना बिल्कुल वाजिब था। इसी से मेरी वर्तमान अलहदगी का अन्दाज लगाया जा सकता है।

मैं अपने वर्तमान विचारों के विषय में अपनी पुस्तक में और बाद में भी विस्तार से लिख चुका हूं। मेरे बारे में राय बनाने के लिए मसाले की कमी नहीं है। ये मेरा अंग है, और यद्यपि भविष्य में मैं उन्हें बदल सकता हूं, फिर भी जबतक वे मेरे विचार है, तबतक मुझे उनको प्रकट करना ही चाहिए। चूंकि मैं एक बड़ी एकता को महत्व देता था, इसलिए मै उन्हें नरम-से-नरम ढंग से प्रकट करने की कोशिश करता था। इसका एक बड़ा कारण यह भी था कि निश्चित निर्णयों की अपेक्षा मैं विचार को निमन्त्रण देता था। मुझे इस दृष्टिकोण में और कांग्रेस कुछ भी कर रही हो उसमें कोई संघर्ष दिखाई नही दिया। जहांतक चुनावों का सम्बन्ध था, मैं निश्चित रूप से अनुभव करता था कि मेरा निश्चित दृष्टिकोण हमारे लिए लाभ की चीज है, क्योंकि उससे आम लोगों में उत्साह पैदा होता है। परन्तु मेरे दृष्टिकोण के नरम और अस्पष्ट होते हुए भी मेरे साथी उसे खतरनाक और हानिकारक समझते है। मुझसे तो यहां तक कहा गया कि हिन्दुस्तान की गरीबी और बेकारी पर मेरा सदैव जोर देना बुद्धिमानी की बात नही थी। कम-से-कम जिस ढंग से मैं जोर देता था, वह बेजा था।

आपको याद होगा कि दिल्ली और लखनऊ दोनो जगह मैंने स्पष्ट कर दिया था कि सामाजिक मामलो पर मुझे अपने विचार प्रकट करने की आजादी होनी चाहिए। मैंने यह समझा था कि आप और समिति के सदस्य इससे सहमत है। अब प्रश्न स्वय उन विचारों की अपेक्षा उनको प्रकट करने की स्वतन्त्रता का अधिक

हो जाता है और इससे भी बडा प्रश्न जीवन के मूल्यो का है। यदि हम किसी चीज का बडा मूल्य समझते हैं तो हम उसका वलिदान नही कर सकते।

यह सघर्ष है जिससे इन्कार नही किया जा सकता। कौन सही है और कौन गलत, इसकी वहस करना व्यर्थ है। परन्तु पिछले सप्ताह की घटनाओ के वाद मुझे यह सन्देह होने लगा है कि क्या हम सचमुच सही रास्ते पर चल रहे हैं। मेरा यह विचार होता है कि हमारे लिए ठीक वात यह होगी कि मामला महासमिति की अगली वैठक मे सक्षेप मे रख दिया जाय और उसका आदेश ले लिया जाय। यह किस प्रकार अच्छी तरह किया जाय, इसके वारे मे मेरा दिमाग अभी साफ नही है, परन्तु वह होना चाहिए सादे-से-सादे ढग पर और विना वहुत वहस-मुवाहिसे के। जहा तक मेरा सम्वन्ध है, मेरी ओर से वहुत कम तर्क होगा।

शायद इसका परिणाम यह होगा कि मैं हट जाऊगा और एक जैसे विचार के अधिक लोगो की समिति वन जायगी।

आपने मुझसे कहा था कि किसी-न-किसी प्रकार का वयान जारी करने का आपका इरादा है। मैं इसका स्वागत करूगा, क्योकि मैं मानता हू कि प्रत्येक दृष्टिकोण देश के सामने स्पष्ट रख दिया जाय।

मैं अभी इस मामले का जिक्र किसी से नही कर रहा हू। हा, भेद लेने वाली और अशिष्ट आखें इसे आपके पास पहुचने से पहिले रास्ते मे ही देख लेंगी। उन्हें वरदाश्त करना पडेगा।

वम्वई मे मृदुला[1] से वात हुई थी। वह अहमदावाद से कुछ घण्टो के लिए खास तौर से मेरे अनुरोध पर आई थी। उसने मुझे वताया कि जहा तक तथ्यो का सम्वन्ध था, जो कुछ आपने उससे कहा था, और जो कुछ मैंने लिखा या कहा था, उसमे कोई अन्तर नही दिखाई पडा था (और न वताया था)। सच तो यह है कि उसने आपके नाम अपने पत्र मे यह स्पष्ट कर दिया था, किन्तु शायद एक-दो वाक्य आपके देखने से रह गये। उसका इरादा है कि अपने पिछले पत्र की नकल आपके पास भेज दे, ताकि आप स्वय इस वात को देख लें।

वर्धा मे मुझसे कहा गया कि गुजरात की स्त्रिया यह कह रही हैं कि आप या वल्लभभाई दोनो स्त्रियो को कार्यसमिति से अलग रखने के लिए जिम्मेदार हैं। मैंने मृदुला से पूछा था। उसने मुझसे कहा कि जहा तक उसे मालूम है, किसी ने ऐसा कहा या सोचा नही।

---

१. मृदुला साराभाई, अहमदावाद के प्रसिद्ध उद्योगपति स्व० अम्वालाल साराभाई की कन्या।

मैंने इस विषय में सरोजिनी से भी बात की थी। मैं डा० जीवराज मेहता और खुरशेद से मिला। जीवराज खर्च वगैरह के बारे में विधान से पूरी तरह सहमत नहीं हैं, परन्तु उन्होंने पहिले के अपने आकड़ों को कुछ कम कर दिया। अब वह कहते है कि अस्पताल की इमारत और सामान इत्यादि के लिए दो लाख काफ़ी होने चाहिए।

और दो लाख वह सुरक्षित कोष के लिए चाहते हैं। उनकी यह भी राय है कि इमारत स्वराज-भवन की जमीन पर नही बनानी चाहिए, जैसी कि शुरू में योजना थी, बल्कि आनन्द-भवन के पूर्व मे खेतों पर बनानी चाहिए। मैं इसके बारे में म्युनिसपलिटी से पूछताछ करूंगा।

मेरा इरादा महासमिति के अधिवेशन के आसपास बम्बई में कमला-स्मारक के ट्रस्टियों की बैठक बुलाने का है। स्वराज-भवन के ट्रस्टियों की बैठक भी।

बम्बई में नरगिस ने आग्रह करके मुझे गले के एक जर्मन विशेषज्ञ के पास भेज दिया। इस आदमी ने मुझसे कहा है कि अपने गले को आराम देने के लिए मैं एक हफ्ता बिल्कुल चुप रहूं। यह तो मुश्किल काम है।

सस्नेह आपका

जवाहरलाल

—अंग्रेजी। इलाहाबाद, ५।७।१९३६। 'ए बंच आफ़ ओल्ड लेटर्स' से।]

४६. हनुमानप्रसाद पोद्दार का पत्र : गांधीजी के नाम

[इस पत्र पर सन या सम्वत नहीं है। किन्तु विचार करने पर जान पड़ता है कि यह १९३७ की जनवरी में या फरवरी मास के आरम्भ में लिखा गया होगा, बहुत करके जनवरी में, क्योंकि माघ कृष्ण ९ की तिथि सम्भवतः जनवरी में ही पड़ी होगी। गांधीजी ने इस पत्र का उत्तर अपने १०।२।१९३७ के पत्र-द्वारा दिया है।—सम्पा०]

श्रीहरि:

गोरखपुर

माघकृष्ण ९

पूज्यपाद बापू जी,

चरणों में सादर प्रणाम

गत माघ वदी ६ सोमवार रात को करीब ३ बजे स्वप्न मे मुझे ऐसा प्रतीत

हुआ मानो मुझसे कोई कह रहा है—"गाधी का शरीर अव वहुत दिन नही रहेगा। उनसे कहो वाकी जीवन केवल भगवान के भजन मे ही वितावें।" स्पष्ट यही वाक्य थे।

मुझे स्वप्न वहुत कम आते हैं। भगवान करे, वह सपना झूठा हो। तीन दिन तक इसी असमजस मे रहा कि आपको लिखू या नही, आखिर लिख देना ही उचित समझा। अवश्य मेरा यह लडकपन ही है। चरणो मे निवेदन है, इस ढिठाई के लिए क्षमा करें। इस परचे को पढकर आप कृपया फाड डालें, जिससे मेरी यह ढिठाई किन्ही भी महानुभाव के उद्वेग का कारण न हो।

आपका वालक

हनुमानप्रसाद पोद्दार

—हिन्दी। सम्भवत. जनवरी १९३७। पोद्दार जी के स्वाक्षरों मे लिखी प्रतिलिपि से।]

सौजन्य : श्री हनुमानप्रसाद पोद्दार

४७. जवाहरलाल का पत्र : गांधीजी के नाम

१४ नवम्बर १९३७

प्रिय वापू,

महासमिति के अधिवेशन पर आपका लेख मैंने अभी पढा। मैसूर के प्रस्ताव के विषय मे आपने कहा है कि महासमिति के लिए वह अनियमित था। यदि ऐसी वात थी तव तो उस पर चर्चा होने देना मेरा काम नही था और मुझे उस पर रोक लगा देनी चाहिए थी। मुझे किसी ऐसे सवैधानिक नियम की जानकारी नही है, जिससे यह नतीजा निकलता हो, और इस तरह का कोई नियम हो तभी ऐसे प्रस्ताव को रोका जा सकता है जो सामान्य रीति से रक्खा जाय और महासमिति का वहुमत जिसका समर्थन करे। सविधान को छोड दें तो भी मुझे काग्रेस या महासमिति के पहिले के किसी ऐसे फैसले का पता नही है, जिसमे यह कहा गया हो कि ऐसे मामलो पर विचार नही होना चाहिए। ऐसा कोई प्रस्ताव होता तो भी मेरी समझ मे नही आता कि वह महासमिति को किसी मामले पर विचार करने से, यदि वह विचार करना चाहे तो कैसे रोक सकता है, जवतक कि उस प्रस्ताव मे कोई नियम न वना लिया जाय। महासमिति को किसी ऐसे प्रस्ताव पर विचार करने की पूरी आजादी

है, जो खुद उसके पास किये हुए किसी पिछले प्रस्ताव के खिलाफ जाता हो। किन्तु यदि कोई अमल या कार्य-विधि का नियम है तो जबतक महासमिति उसे बदल नहीं देती तबतक उसपर अमल करना पड़ता है। ऐसे किसी नियम का तो सवाल नहीं है, परन्तु मुझे तो किसी ऐसे प्रस्ताव का भी पता नही है, जिसमें ऐसी नीति तय की गई हो, जिसका मैसूर के प्रस्ताव से उल्लंघन होता है। हमारे जारी किये हुए पहिले के वक्तव्यों में उल्लेख किया गया है कि कांग्रेस रियासतों में हस्तक्षेप न करने की नीति का अनुसरण करना चाहती है। वे वक्तव्य, स्वयं महासमिति को हस्तक्षेप करने से, यदि वह हस्तक्षेप करना चाहती हो, रोक नही सकते। मेरी समझ में नहीं आता कि कानूनी शब्द 'अनियमित' कैसे लागू किया जा सकता है?

एक और सवाल उठता है कि हस्तक्षेप क्या है। क्या किसी प्रस्ताव में किसी राज्य का जिक्र करना ही हस्तक्षेप है? क्या नागरिक स्वतन्त्रताओ की मांग अथवा दमन की निन्दा हस्तक्षेप है? यदि ऐसा है तो कांग्रेस स्वयं पिछले दो वर्षो में निश्चित और असन्दिग्ध शब्दों में उसकी दोषी रही है।

महासमिति के मैसूरवाले प्रस्ताव की भाषा बहुत खराब है और मैं किसी भी सूरत में नहीं चाहता था कि महासमिति उसे पास करे। किन्तु इस मामले का मेरी भावनाओं से सम्बन्ध नही है। मुझे तो एक लोकतन्त्री सम्मेलन के अध्यक्ष की हैसियत से काम करना पड़ता है। प्रस्ताव मैसूर में दमन की निन्दा का था। यह दमन कैसा भी हो तो क्या भविष्य में राज्य के दमन की निन्दा करने से भी हमें परहेज़ रखना है? यदि इस दमन में खुद कांग्रेस पर हमला करना, हमारे झण्डे का अपमान करना या हमारे संगठन पर रोक लगा देना आदि बातें होती हैं तो क्या हम चुप रहें? इन बातों की सफाई हो जानी चाहिए ताकि हमारे दफ्तर और हमारे संगठन को निश्चित रूप से मालूम हो जाय कि हमें क्या ढंग अपनाना है।

आपने कहा है कि महासमिति को कम-से-कम दूसरे पक्ष की बात सुने बिना यह प्रस्ताव पास नही करना चाहिए था। क्या आपके खयाल से हमारे लिए यह सम्भव है कि हम राज्यों में जाकर जांच करने के लिए समितियां नियुक्त करें? क्या रियासतें रज़ामन्द होंगी? मैंने रियासतों को कई मौकों पर यह सुझाव दिया है—जांच-समिति का नही, वरं इतना ही कि कोई व्यक्ति वहां जाकर दोनों ओर से जांच कर ले। इसको उन्होंने हमेशा ठुकराया है।

यह मैसूरवाला मामला लम्बे समय से चला आ रहा है। कर्नाटक-प्रदेश कांग्रेस कमिटी ने इस मामले में कुछ क़दम उठाये हैं। उसके मन्त्री ने मैसूर के दीवान से लम्बी मुलाकात की है। मैंने दीवान को बार-बार लिखा है और उनके सामने बहुत से निश्चित मामले रक्खे हैं। उन्होंने लम्बे जवाब दिये हैं और मेरी

राय मे राज्य की नीति को मुनासिव सावित नही कर सके हैं। महीनो से मैं मैसूर के काग्रेसियो को आज्ञा भग करने से रोकता हू और हाल ही मे नरीमान के सिवा और किसी ने आज्ञा भंग की भी नही। अन्त मे कर्नाटक प्रान्तीय काग्रेस समिति ने स्थिति पर विचार किया और मैसूर की दमन-नीति की निन्दा की और आगे के लिए हमसे निर्देश मागे कि उन्हे क्या करना चाहिए। इसलिए यह कहना सही नही है कि महासमिति ने किसी को, उसकी वात सुने विना या एक पक्ष की वात सुनकर किसी की निन्दा की हो। हमारे लिए जितने मामूली रास्ते खुले हुए थे, उन सवको हमने आजमाया।

यह सव मैं आपको लिख रहा हू, क्योकि मैं स्वय अपने दिमाग मे साफ रहना चाहता हू कि हमारी नीति क्या है। महासमिति ने और मैंने जो राह अपनाई उसपर आपने आपत्ति उठाई है। मैं अभीतक समझ नही पाया कि मैंने कैसे और कहां भूल की है और जवतक मैं यह समझ नही लेता तवतक दूसरी तरह काम नही कर सकता।

सप्रेम आपका,
जवाहरलाल

महात्मा गाधी,
वर्धा (मध्य प्रदेश)

—अंग्रेजी। इलाहावाद, १४।११।१९३७। 'ए वंच आफ ओल्ड लेटर्स' से।]
सौजन्य : श्रीमती इन्दिरा गांधी

४८. जवाहरलाल का पत्र : गांधीजी के नाम[1]

इलाहावाद
२८ अप्रैल, १९३८

प्रिय वापू,

मैं आज सुवह लखनऊ से इलाहावाद लौटा। आपका पत्र और साथ मे महादेव की सरहदी यात्रा पर उनके नोट की नकल मिली। मैंने इस नोट को पढ़ लिया है और मैं खान साहव और अब्दुलगफ्फार खा को लिखूगा। महादेव ने जो कुछ लिखा है, उस पर मुझे अचरज नही है। मैंने स्वय जो कुछ देखा, यह उनका

१. देखिए गांधीजी का पत्र दिनांक २५।४।१९३८।

स्वाभाविक विकास है, किन्तु मैंने यह आशा रक्खी थी कि वहां उस समय जो वृत्तियां देखने में आईं, उनपर कुछ रोक लगाई जायगी। आपके सिवा यह काम कारगर तरीके पर कोई आदमी कर सकता है तो वह मौलाना अब्दुल कलाम ही हैं। मेरे खयाल से यह बहुत आवश्यक है कि वह सरहद जायं। इस बीच मुझे यह आशा जरूर है कि दोनों खानबन्धु मन्त्रियों की सभा और कार्यसमिति के लिए आयेंगे।

जैसा आपको मालूम है, पिछले छ. महीनों में कांग्रेस की राजनीति मे घटनाओं ने जो रुख इख्तियार किया है, उससे मुझे बड़ा दु:ख हुआ है। जिन मामलों ने मुझे अशान्त किया है, उनमें से गांधी-सेवा-संघ का नया रूप भी है। हम बहुत तेजी से टैमनी हाल[1] का ढंग अपना रहे है और यह देखकर तकलीफ होती है कि गांधी-सेवा-संघ भी मामूली सतह पर उतर आया है। वह तो दूसरों के लिए नमूना कायम कर सकता था और किसी-न-किसी तरह चुनाव जीतने पर उतारू एक दलगत संगठन बन जाने से इन्कार कर सकता था। मुझे बहुत दु:ख होता है कि कांग्रेस-मन्त्रिमण्डल क्षमता के साथ काम नही कर रहे है और जो वे कर सकते थे वह भी बहुत नहीं कर रहे हैं। वे पुरानी व्यवस्था के बहुत ज्यादा अनुकूल बन रहे है और उसे उचित साबित करने की कोशिश कर रहे हैं। परन्तु बुरी होते हुए भी ये सब बातें बर्दाश्त की जा सकती थी। इससे कही बुरी बात यह है कि हमने जो ऊंची प्रतिष्ठा इतनी मेहनत करके लोगों के दिलों में बना ली है, उसे खो रहे है। हम मामूली राजनीतिज्ञों की सतह पर उतरते जा रहे हैं, जिनके कोई उसूल नही होते और जिनका काम रोजमर्रा के अवसरवाद के असर से होता है।

इसका कुछ कारण तो अलबत्ता दुनिया भर भी आम खराबी है और कुछ जिस संक्रमण-काल से हम गुजर रहे है वह है। फिर भी इससे हमारी खामियां सामने आती हैं और यह देखकर दु:ख होता है। मेरे खयाल से कांग्रेस में काफी सदभावनावाले लोग हैं, जो ठीक ढंग से काम में जुट जायं तो स्थिति का सामना कर सकते हैं। परन्तु उनके दिमाग दलगत संघर्षो से और इस व्यक्ति या उस गुट को कुचलने की इच्छा से भरे हैं। जाहिर है कि भले आदमियों की अपेक्षा बुरे ज्यादा पसन्द किये जाते हैं, क्योंकि बुरे दलबन्दी में साथ देने का वचन देते हैं। जब ऐसा होता है तब बिगाड़ तो होगा ही।

महीनों से मैं महसूस करता हू कि जिस तरह से चीजें चल रही थी उसमें मैं

---

१. अठारहवीं शताब्दी के उत्तरार्द्ध में समाजोपयोगी कार्यों के लिए न्यूयार्क में स्थापित संस्था, जो आगे चलकर अपने उद्देश्यों की पूर्ति के लिए सभी तरीके अपनाने के कारण भ्रष्टाचार का प्रतीक बन गई।—सम्पा०

हिन्दुस्तान मे कारगर तौर से काम नही कर सकता था। जैसे हमेशा काम चलाया जा सकता है, वैसे अलबत्ता मैंने भी चलाया, परन्तु मुझे यह महसूस हुआ है कि मैं ठीक जगह पर नही हू और अयोग्य हू। (कारण तो और भी थे) परन्तु यह एक कारण था जिससे मैंने युरोप जाने का निश्चय किया। मैंने महसूस किया कि मैं वहा अधिक उपयोगी हो सकता हू और हर हालत मे मैं अपने थके हुए और चक्कर मे पडे हुए दिमाग को तो ताजा कर ही लूगा। मुझे आपके साथ विस्तार से किसी मामले की चर्चा करने मे कठिनाई मालूम हुई, क्योकि आपके स्वास्थ्य की मौजूदा हालत मे मैं आपको थकान और चिन्ता मे डालना नही चाहता, और फिर मुझे यह भी अनुभव हुआ कि ऐसी चर्चाओ से कोई ठोस नतीजे नही निकलते।

मैंने २ जून को बम्बई से जहाज पर रवाना होने का फैसला किया है। पता नही, मैं कितने अर्से दूर रहूगा। परन्तु सम्भव है, मैं सितम्बर के अन्त तक लौट आऊ।

पहली मई को मैं एक सप्ताह के लिए गढवाल जा रहा हू। स्वरूप[1] मेरे साथ जायगी और हम बदरीनाथ और बर्फ पर थोडी-सी हवाई उडान करेंगे। गढवाल से लौट कर मैं मन्त्रियो की सभा और कार्यसमिति के लिए बम्बई जाऊगा।

सप्रेम आपका
जवाहरलाल

महात्मा गाधी, जुहू (बम्बई)

—अग्रेजी। इलाहाबाद, २८।४।१९३८। 'ए बंच आफ ओल्ड लेटर्स' से।]
सौजन्य : श्रीमती इन्दिरा गांधी

४९. जवाहरलाल का पत्र : गांधीजी के नाम

मार्च २२, १९३९

मेरे प्यारे बापू,

आपके पत्र के लिए धन्यवाद। मैं उन काग्रेसियो के नाम नही जानता, जिनके बारे मे दिल्ली मे एक सरकारी अधिकारी तक पहुचने का अनुमान है। मुझसे नाम नही बताये गये।

---

१. श्रीमती विजयलक्ष्मी पण्डित।

आज मुझे झरिया से सुभाष का निम्नलिखित तार मिला है:

"तुम्हारा तार कल ही मिला है। वह तुम्हारी अपनी निजी राय बताता है या दूसरों की भी? और यदि ऐसा है तो किनकी?"

इसका मैंने निम्नलिखित जवाब दिया:

"तुम्हारा तार। मेरा पिछला सन्देश मेरी अपनी ओर से, किन्तु गांधीजी से वात करने के बाद, भेजा गया था, जो तीव्रता से अनुभव करते हैं कि कांग्रेस कार्य को, और कार्यालय (सम्बन्धी) व्यवस्था को भी, नुकसान पहुंच रहा है। राष्ट्रीय (और) अन्तर्राष्ट्रीय परिस्थिति निरन्तर सजगता की मांग करती है। मैंने बाद में उन्हें (गांधी जी को) अपने सन्देश की सूचना दे दी है।"

मौलाना वहुत कुछ वैसे ही हैं। उनका दर्द आमतौर पर कम है और सूजन भी अंशत: कम हो गई है। वह आपके यहां आने की राह देख रहे हैं और उसके वाद कलकत्ता जाने का इरादा रखते हैं।

आपका स्नेहपात्र
ज० ला०

म० गांधी, विड़ला हाउस, अलवुकर्क रोड, न० दि०

—अंग्रेजी। २२।३।१९३९। नेहरू संग्रहालय में सुरक्षित पत्रावली से।]

सौजन्य: श्रीमती इन्दिरा गांधी तथा नेहरू संग्रहालय।

५०. जवाहरलाल का पत्र : गांधीजी के नाम

मार्च २४, १९३९

मेरे प्यारे बापू,

मैं सुभाष को जो पत्र भेज रहा हूं, उसकी एक नकल इसके साथ नत्थी है। जैसा कि आप इसमें देखेंगे, मुझे टेलीफोन पर एक दूसरा सन्देश, इस वार कलकत्ता से सुनील बोस का, मिला। यह भी कुछ उसी तरह का था, जैसा झरिया वाला सन्देश था। यह जान कर कि आप दिल्ली लौट गये हैं जाहिरा वह कुछ उसी आशय का तार आपको भी भेजना चाहते थे।

आपका स्नेहपात्र
ज० ल०

महात्मा गांधी, बिरला भवन, नई दिल्ली

—अंग्रेजी। २४।३।१९३९। नेहरू संग्रहालय में सुरक्षित पत्रावली से।]

सौजन्य: श्रीमती इन्दिरा गांधी तथा नेहरू संग्रहालय।

५१. जवाहरलाल का पत्र : गांधीजी के नाम

एप्रिल १, १९३९

मेरे प्यारे वापू,

मुझे आपका ३० मार्च का पत्र, जिसके साथ सुभाष से हुए पत्र-व्यवहार की प्रतिलिपिया भी हैं, मिला। पटना जाते हुए जयप्रकाश कल थोडी देर के लिए मिले थे। मैं समझता हूं कि जो कुछ आपने सुभाष को लिखा है उससे ज्यादा कुछ विशेष नहीं कहा जा सकता।

लखनऊ वारादरी की घटना वडी दुर्भाग्यपूर्ण थी। फिर भी मुझे आशा है कि आप इसे वहुत ज्यादा महत्व नही देंगे। मैं आपके पास इस घटना की 'नेशनल हेराल्ड' वाली रिपोर्ट भेज रहा हू। यह एक कुशल प्रत्यक्षदर्शी की सच्ची रिपोर्ट है। दूसरे ही दिन मैंने घटना के सम्वन्व मे एक वक्तव्य प्रकाशित किया था, उसकी भी प्रतिलिपि सलग्न है। गौतम का जो पत्र अखवारो मे छपा है उससे भी (घटना की) पार्श्वभूमि को समझने मे मदद मिलती है।

साम्प्रदायिक परिस्थिति वडी चिन्ताजनक है। इसमे अव कुछ नई वातें पैदा हो गई हैं। वीते हुए वर्षों मे जव इस तरह के दगे होते थे तो लोगों मे वडी भावना और आवेग होता था। उदाहरण के लिए पिछले साल के इलाहावादी दगो का उद्गम स्पष्टत राजनीतिक था, फिर भी जनता की वहुत वडी तादाद उसमे प्रभा-वित और उत्तेजित थी। इस साल तो यह पहिले से भी ज्यादा राजनीतिक है और स्पष्टत ऊपरी है। मेरा कहने का मतलव यह है कि नगर मे कोई उत्तेजना, उद्वेग या भावना नही दिखाई पडती। हां, भय काफी मात्रा मे है और कुछ नाराजी भी है। जाहिर है कि दगे सिर्फ किसी तरह का राजनीतिक दवाव डालने के लिए कराये जाते हैं। यह भी लगता है कि लोग उसके कुछ-कुछ अभ्यस्त होते जाते है और उनके कारण पहिले जितना आतंकित हुआ करते थे, अव नही होते। आज इलाहावाद मे सामान्य भीति या दवी भावना नही है। काफी मात्रा मे व्यापार भी चलता है। ज्यादातर दुकानें खुली हैं, फिर भी सूनी राहो पर छुरेवाजी की इक्की-दुक्की घटनाए हो ही जाती हैं। लोगो की वडी भीड या सामूहिक स्तर पर सघर्ष होते नही दिखाई पड़ते। जो कुछ हो रहा है उससे आम तौर पर लोग नाराज और ऊवे हुए है। कोई स्थानीय या धार्मिक समस्या भी नही है जिनके समाधान की आवश्यकता हो। आज दोपहर के पहिले मैं शहर के कुछ हिस्सों मे मोटर मे गया और तीन छुरेवाजी के मामले देखे जो मेरे जाने के पाच मिनट पहिले ही हुए

होंगे। हर मामले में जिस आदमी ने यह काम किया, वह उसे करने के बाद गायब हो गया।

मेरे खयाल से जो कुछ हो रहा है उसमें से अधिकांश के लिए मुस्लिम लीग के स्थानीय नेताओं को निश्चित रूप से जिम्मेदार ठहराना चाहिए।

मुझे भय है कि इस तरह की वैयक्तिक हिंसा, छोटे पैमाने पर, हमारे कुछ शहरों में, कुछ दिनों तक चलती रहेगी। क्रमशः वह मिट जायगी। कांग्रेस कर्मियों या पुलीस के लिए इनसे निबटना सरल नहीं है।

मन्त्रिपरिषद के लिए आपका जो सुझाव है, मैं नही समझता कि वह सम्भवनीय है। किसी आकस्मिक परिवर्तन से ज्यादा अन्तर नही पड़ेगा, बल्कि उससे अतिरिक्त समस्याएं उठ खड़ी होंगी। निस्सन्देह, जहां तक मेरा सम्बन्ध है, मैं संयुक्त प्रान्तीय मन्त्रिपरिषद को हर तरह से मदद देने को तैयार हूं।

आपका स्नेहपात्र

ज० ला०

महात्मा गांधी, बिरला भवन, नई दिल्ली

—अंग्रेजी। १।४।१९३९। नेहरू संग्रहालय में सुरक्षित पत्रावली से।]

सौजन्य : श्रीमती इन्दिरा गांधी तथा नेहरू संग्रहालय।

५२. जवाहरलाल का पत्र : गांधीजी के नाम

इलाहाबाद

१७ अप्रैल, १९३९

प्रिय बापू,

प्यारेलाल सुभाष के साथ आपके पत्र-व्यवहार की नकलें मेरे पास भेजते रहे हैं। मुझे अन्देशा है कि उस चिट्ठी-पत्री से अड़चन की स्थिति आ गई है और मुझे कोई रास्ता इससे निकलने का दिखाई नही देता। मैं उस आदमी की जैसी बद-किस्मती की हालत में हूं, जो दोनों में से एक भी दृष्टिकोण से सहमत नहीं है। इस कारण मैंने यही उत्तम समझा कि चुप रहूं और किसी को कुछ न लिखूं और न जनता में कुछ कहूं। लेकिन मुझे ऐसा लगता है कि हमारे लिए इस तरह लाचारी में बहते चले जाना बहुत अच्छा नही है। मामले इतने गम्भीर और नतीजे इतने दुःखदायी हैं कि उनकी कल्पना नही की जा सकती।

मुझे लगता है कि कोई रास्ता नही निकलेगा, जबतक कि आप बहुत हद तक

खुद जिम्मेदारी उठाने को तैयार नही होंगे। आपको अगुआ बनना होगा और आप घटनाओ के होते रहने के लिए ही इन्तजार नही कर सकते। सुभाष मे अनेक कमजोरिया हैं, परन्तु प्रेम से उन्हे समझाया जा सकता है। मुझे विश्वास है कि आप निश्चय कर लेंगे तो कोई रास्ता निकाल सकेंगे।

राजकोट का महत्व मैं खूब समझता हू, परन्तु आप मेरे इस विचार से सहमत होंगे कि काग्रेस का बडा सवाल उससे कही अधिक महत्वपूर्ण है और वह हमारी सारी प्रवृत्तियो का नियमन करेगा। इसलिए मेरी आप से प्रार्थना है कि थोडे दिन राजकोट के मामलो पर ध्यान न देकर भी आप काग्रेस की तरफ ध्यान दे। इस विचार से घबराहट होती है कि शायद आप महासमिति की बैठक मे शरीक न हो। इसका तो यही मतलब है कि हालात बिगडते जाय और काग्रेस चूर-चूर हो जाय। सही तरीका यह है कि महासमिति की बैठक से पहले कोई निपटारा कर लिया जाय। महासमिति पर इस मामले को छोड देना तो और भी गडबड पैदा करना होगा। काश आप सुभाष से मिल लेते। इस मुलाकात का कोई अच्छा नतीजा निकलने के अलावा भी इससे कई तरह की मदद मिलती।

कार्यसमिति के बनने मे देर लगना बुरा हुआ। परन्तु हम झगडने के लिए मिलें तो यह और भी बुरा होगा। हालाकि यह मुझे बहुत ही नापसन्द है, फिर भी एक-दो सप्ताह के लिए महासमिति का अधिवेशन मुल्तवी कर देना बेहतर होगा, ताकि आपको सुभीता रहे और निपटारे का ज्यादा मौका मिले।

मुझे अभी ही सुभाष का एक पत्र मिला है। उनका कहना है कि मैं उनसे स्थिति की चर्चा करने के लिए कुछ घण्टो के लिए मिल लू। मुझे अन्देशा है कि हमारी बातचीत का कोई निश्चित परिणाम नही निकल सकेगा, क्योकि मेरे हाथ मे कुछ है नही। फिर भी मैं उन्हे इन्कार नही कर सकता और एक-दो दिन मे जाने का विचार है। मैं उनसे क्या कहूगा, इसका मेरे मन मे स्पष्ट विचार नही है। मेरे खयाल से मैं उन्हें यही सलाह दे सकता हू कि वह आपसे यह कह दें कि कार्यसमिति के नाम सुझाने का काम वह पूरी तरह आप पर छोडते है। वह अपने सुझाव आपको दे सकते हैं, परन्तु साफ तौर पर यह समझकर कि आप उन्हे स्वीकार या अस्वीकार कर सकते हैं। कार्यक्रम की बात यह है कि वह त्रिपुरी-काग्रेस के प्रस्तावो के अनुसार होगा जिनमे और बातो के साथ-साथ निश्चित रूप मे यह बात बता दी गई है कि पिछले कार्यक्रम मे कोई भग नही होगा।

अगर सुभाष इसमे सहमत हो जाते हैं तब जिम्मेदारी आप पर रहती है और आप उससे बच नही सकते। मेरा दिल्ली मे भी यह खयाल था और अब भी है कि आप सुभाष को अध्यक्ष मान लें। उन्हे निकाल देने का प्रयत्न करना मुझे निहायत

गलत कदम मालूम होता है। रही बात कार्य-समिति की, सो इसका फैसला करना आपका काम है। लेकिन मैं यह जरूर समझता हूं कि एक जैसे विचारोंवाली कल्पना का संकीर्ण अर्थ किया गया तो उससे शान्ति अथवा कारगर काम नहीं हो सकेगा। कुछ-न-कुछ तो एक जैसे विचार जरूर होने ही चाहिए, नहीं तो हम काम नही कर सकते। मैं नही समझता कि कार्यसमिति में चन्द लोगों के होने से नीति में कोई बुनियादी फर्क हो जायगा। अवश्य ही जिन आदमियों की नेकनीयती पर हमें जरा भी विश्वास न हो उन्हें स्वीकार करना कठिन होता है। परन्तु समान विचारों के सिद्धान्त का विस्तार राजनीतिक दृष्टिकोण के भेद तक नहीं करना चाहिए, बशर्ते कि काम की सामान्य पृष्ठभूमि स्वीकार कर ली जाय। आखिर तो हमें याद रखना होगा कि समान विचारों की कार्यकारिणी बना देने से हम समान विचारों की कांग्रेस तो नही बना लेते। दूसरी बात ज्यादा आसान हो जाती है, यदि हममें विचारों की व्यापक समानता हो।

आपको पिछले कई महीनों से कांग्रेस की घटनाओं से बड़ा कष्ट हुआ है और आपने भ्रष्टाचार आदि की निन्दा की है। मैं समझता हूं कि कांग्रेस में हरेक सयाना तत्व, चाहे उसके राजनीतिक विचार कुछ भी हों, इस समस्या को हल करने के लिए उत्सुक है। मैं कांग्रेस के बाहर की बहुत सी बातों पर काफी ध्यान देता रहा हूं और मुझे कहना पड़ता है कि घटना-चक्र और नई शक्तियों के पैदा होने से मुझे घबराहट होती है। मैं केवल साम्प्रदायिक प्रश्न का ही जिक्र नहीं कर रहा हूं। उससे भी गहरी शक्तियां काम कर रही हैं। अगर इस नाजुक अवसर पर कांग्रेस कमजोर और छिन्न-भिन्न हो जाती है तो परिणाम विनाशकारी हो सकते हैं। हमें एक होकर रहना ही चाहिए। इसलिए मैं आपसे प्रार्थना करता हूं कि इस मामले को निपटाने का आप निश्चय कर लें, भले ही निपटाने का तरीका हम सबको पसन्द न हो। हम इसी तरह अपनी पसन्द की दिशा में जा सकते हैं, नहीं तो हमारे पैर रुक जाते हैं।

एक वात अपने वारे में भी। यह मेरा दुर्भाग्य है कि मैं अत्यधिक व्यक्तिवादी हूं। पिछले दिनों कार्यसमिति की वैठकों मे मुझे अपना निभाव बहुत कठिन मालूम हुआ और शायद मैं अपने साथियों के लिए भी एक आफत हो गया था। इसका कारण दोनों तरफ सद्भाव की कमी नही थी। इसलिए मुझे महसूस हुआ कि मुझे कमेटी में नही रहना चाहिए। इससे भी अधिक प्रबल कारणों से सुभाष की वनाई हुई भिन्न प्रकार की कमेटी में शरीक होने का विचार मुझे कठिन लगा। मेरे भाव अव भी वे ही हैं, लेकिन जो रुकावट पैदा हो गई है उसे देखते हुए कोई रास्ता निकल आना और कमेटी मे मेरा रहना सहायक समझा जाता है तो मैं

रहना मंजूर कर लूगा। मुझे यह चीज कोई बहुत प्रिय नही है, परन्तु मैं यह जरूर महसूस करता हू कि मौजूदा गैरमामूली हालात मे अगर यह जिम्मेदारी मुझे दी गई तो मैं उससे बच नही सकता।

सप्रेम, आपका
जवाहरलाल

महात्मा गाधी,
राजकोट।

—अंग्रेजी। इलाहाबाद, १७।४।१९३९। 'ए बंच आफ़ ओल्ड लेटर्स' से।]
सौजन्य : श्रीमती इन्दिरा गांधी।

५३. जवाहरलाल का पत्र : गांधीजी के नाम

लखनऊ
सितम्बर २३, १६३६

मेरे प्यारे बापू,

मैं चन्द लेख, जो मैंने लिखे हैं, सलग्न कर रहा हू। पहिला 'भारत तथा युद्ध' मेरे नाम से भारत के विविध पत्रो को भेजा गया था। तीन लेखो का एक सेट— 'युद्ध के उद्देश्य तथा शान्ति के उद्देश्य'—मैंने 'नेशनल हेरल्ड' के सम्पादकीय स्तम्भो में प्रकाशित कराया था। इसमे मेरा नाम नही दिया गया है। मैं अनुभव करता हू कि इस विषय पर निर्वैयक्तिक रूप से विचार करना ही ज्यादा अच्छा होगा।

मैं यहा अभी दो या तीन दिन और ठहरूगा। उसके बाद के बारे मे मैं ठीक से नही जानता। एक-दो बड़े शहरो मे जा सकता हू।

आपका स्नेहपात्र
ज० ला०

महात्मा गाधी,
वर्धा

—अंग्रेजी। लखनऊ, २३।९।१९३९। नेहरू संग्रहालय मे सुरक्षित पत्रावली से।]
सौजन्य : श्रीमती इन्दिरा गांधी तथा नेहरू संग्रहालय।

५४. जवाहरलाल का पत्र : गांधीजी के नाम

लखनऊ
नवम्बर ८, १९३९

मेरे प्यारे बापू,

कल संयुक्त प्रान्तीय कांग्रेस कमेटी की परिषद ने जो प्रस्ताव पारित किया है उसकी एक प्रतिलिपि मैं आपकी सूचना के लिए संलग्न कर रहा हूं।

सब सदस्यों की आकांक्षा थी कि यदि सम्भव हो और आपको असुविधा न हो तो इलाहाबाद में आपके ठहरने की अवधि में उन्हें आपसे भेंट करने का एक अवसर मिल जाता। मैंने कल आपको इसके विषय में लिखा है।

सम्भावना है कि कार्यसमिति २१ तक या शायद २२ तक समाप्त हो। क्या मैं आपके और संयुक्त प्रान्त के अपने कुछ प्रमुख कार्यकर्त्ताओं—समझिए कि लगभग ३० या ऐसे ही कुछ—के बीच एक अनौपचारिक भेंट के लिए २३ का सुझाव दे सकता हूं? यदि आप समझते हों कि यह सम्भव है तो मेरे पास इलाहाबाद कृपया एक तार भेजवा दीजिएगा।

जेटलैण्ड के भाषण ने कांग्रेस और ब्रिटिश सरकार के बीच चलनेवाली सब बातों पर डाट लगा दी है।

आपका स्नेहपात्र
ज० ला०

महात्मा गांधी, सेगांव, वर्धा।

—अंग्रेजी। लखनऊ, ८।११।१९३९। नेहरू संग्रहालय में सुरक्षित पत्रावली से।]
सौजन्य : श्रीमती इन्दिरा गांधी तथा नेहरू संग्रहालय।

५५. जवाहरलाल का पत्र : गांधीजी के नाम

लखनऊ
नवम्बर, ९, १९३९

मेरे प्यारे बापू,

मैं लन्दन से आये हुए एक स्मृतिपत्र को नत्थी कर रहा हू जो वहां की स्थिति पर प्रकाश डालता है। शायद इसमे आपको दिलचस्पी हो।

आपका स्नेहपात्र
ज० ला०

महात्मा गांधी, सेगांव, वर्धा

—अंग्रेजी। लखनऊ, ९।११।१९३९। नेहरू संग्रहालय में सुरक्षित पत्रावली से।]
सौजन्य : श्रीमती इन्दिरा गांधी तथा नेहरू संग्रहालय।

५६. जवाहरलाल का पत्र : गांधीजी के नाम

दिसम्बर २, १९३९

मेरे प्यारे बापू,

सर स्टैफर्ड के हवाई मार्ग से ८ दिसम्बर को इलाहाबाद पहुचने की सम्भावना है, किन्तु अभी तक तारीख के बारे मे मैं बिल्कुल निश्चित नही हू। वह भारत मे दो या तीन सप्ताह तक बिताना चाहते हैं और तब बर्मा और चीन जाना चाहते है। मैं समझता हू कि इस अल्प अवधि मे वह वर्धा, बम्बई, दिल्ली, लाहौर और कलकत्ता की यात्रा करना चाहते है। यहा आ जाने के बाद वह मुझसे परामर्श कर अपना कार्यक्रम बनायेंगे। मेरी कल्पना है कि उनके लिए यह अधिक सुविधापूर्ण और उपयोगी होगा कि कार्यसमति की बैठक के ठीक पहिले या बाद वह वर्धा मे हो जिससे वह आपसे तथा दूसरो से मिल सकें। क्या आप सोचते हैं कि यह सही रास्ता होगा ?

मैं स० व० ल० भटनागर से पत्रव्यवहार की प्रतिलिपिया सलग्न कर रहा हू।

आपका स्नेहपात्र
ज० ला०

मैंने पुनः जिन्ना को लिखा है।

महात्मा गाधी, सेगाव, वर्धा

—अंग्रेजी। २।१२।१९३९। नेहरू संग्रहालय मे सुरक्षित पत्रावली से।]
सौजन्य : श्रीमती इन्दिरा गाधी तथा नेहरू सग्रहालय।

५७. जवाहरलाल का पत्र : गांधीजी के नाम

दिसम्बर २५, १९३९

मेरे प्यारे बापू,

मैं आपके लिए च्याग-काई-शेक[1] का पत्र भेज रहा हू। मूल पत्र चीनी भाषा मे है, किन्तु उन्होंने अग्रेजी मे उसका अनुवाद भी भेजा है। मैं आशा करता हू कि आप इस चीनी पत्र को नष्ट नही करेंगे। यह सगरवाडी मे सुरक्षित रखने लायक

---

१. चीन के राष्ट्रपति जिन्होंने भारतीय आकाक्षाओं का समर्थन किया था।

है। यदि आप इसका उत्तर देना चाहें तो अपना जवाब मेरे पास भेज देंगे और मैं उसे चीनी वाणिज्य-दूत के जरिये आगे भेज दूंगा।

"मुक्ति दिवस"[१] की ओर संयुक्त प्रान्त में कोई विशेप आकर्षण नही दिखाई पड़ा। हकीक़त की बात तो यह है कि सब मिलाकर वह असफल ही रहा। वहुतेरी सभाएं थोड़े लोगों को लेकर शुरू हुईं, किन्तु वाद में उत्सुक दृश्य-दर्शनार्थी जिसमें अधिकांश हिन्दू थे, यह जानने के लिए शामिल हो गये कि वात क्या है। उस दिन मुसलमानों ने कुछ सभाएं, मस्जिदों में तथा वाहर भी कीं जिनमें मुस्लिम लीग के प्रस्ताव की निन्दा की गई। मैं ऐसे एक उदाहरण के लिए एक पत्र संलग्न कर रहा हूं। आप पढ़ने के बाद इस पत्र को नष्ट कर सकते हैं क्योंकि मैं इसे अपने पास लौटाना नहीं चाहता।

आपका स्नेहपात्र
ज० ला०

महात्मा गांधी, सेगांव, वर्धा होकर

—अंग्रेजी। २५।१२।१९३९। नेहरू संग्रहालय में सुरक्षित पत्रावली से।]

सौजन्य : श्रीमती इन्दिरा गांधी तथा नेहरू संग्रहालय।

५८. जवाहरलाल का पत्र : गांधीजी के नाम

जनवरी ३, १९४०

मेरे प्यारे वापू,

मैं अभी-अभी इलाहावाद लौटा हूं, तव मुझे आपका २८ का पत्र मिला है। मैं ठीक-ठीक नही समझ पाता कि फजलुलहक के आरोप के विषय में किसी को क्य करना चाहिए। किसी भूतपूर्व कांग्रेसी मन्त्री के लिए इस मामले का उत्तर देना सम्भव हो सकता है।

जहां तक योजना-समिति के साथ कुमारप्पा के पत्र-व्यवहार का सवाल है, मुझे अम्वालाल तथा डा० नज़ीर अहमद ने वताया है कि उन लोगों ने गृहोद्योगों के विषय में कुछ सूचनाएं प्राप्त करने के लिए उनसे सम्पर्क किया था तथा उनसे सम्वद्ध कुछ और मामलों में भी उनका सहयोग चाहा था। कुमारप्पा के उत्तर दोनों वड़े दुखित थे जिसमें किसी प्रकार का सहयोग या सहायता देने से इन्कार

---

१. जो मुस्लिम लीग-द्वारा कांग्रेस-नीति के विरुद्ध मनाया गया था।

किया गया था। अम्बालाल और नजीर अहमद दोनो ने वडे उत्तेजित ढग पर मुझ से बातें की और कहा कि यदि ऐसा रुख ग्रहण किया गया तो वह दुर्भाग्यपूर्ण होगा क्योकि ग्रामोद्योग-संघ (विलेज-इण्डस्ट्रीज असोसियेशन) द्वारा सञ्चित सूचनाए उनके निर्णयो पर पहुचने के लिए उनको प्रभावित न कर सकेंगी।

आपका स्नेहपात्र

ज० ला०

महत्मा गाधी, सेगाव, वर्धा होकर (मध्य प्रान्त)

—अंग्रेजी। ३।१।१९४०। नेहरू संग्रहालय में सुरक्षित पत्रावली से।]

सौजन्य : श्रीमती इन्दिरा गांधी तथा नेहरू संग्रहालय।

५९. जवाहरलाल का पत्र : गांधीजी के नाम

२४ जनवरी, १९४०

प्रिय बापू,

आपने मुझसे मोलोतोब के युद्ध-सम्बन्धी भाषण के बारे मे सेगाव मे पूछा था और मैंने जवाब में कुछ कहा था, जो अस्पष्ट-सा था। मोलोतोव के भाषण के बाद बहुत सी घटनाए हुई हैं और स्थिति बहुत कठिन हो गई है। मेरे अपने मन में कोई शका नही है कि फिनलैण्ड के मामले मे रूस ने बहुत बेजा कार्रवाई की और इसके लिए उसे भुगतना पडेगा। परन्तु इससे भी अधिक चिन्ता की बात हमारे लिए यह है कि इग्लैण्ड, फ्रांस और जर्मनी की लड़ाई के पीछे वास्तव में जो कुछ हो रहा है, वह यह है कि रूस से लडने के लिए साम्राज्यवादी और फासिस्ट शक्ति मजबूत हो। अब यह पहले से भी अधिक स्पष्ट हो गया है कि लडाई दोनों तरफ से विशुद्ध साम्राज्यवादी दुस्साहस है। १९१४ की तरह राजनीतिज्ञ सुन्दर भाषा का प्रयोग कर रहे हैं। मुझे यह बहुत महत्वपूर्ण और जरूरी मालूम होता है कि इस भाषा से और नेक बातो से हमे धोखे मे नही आना चाहिए। इन सब बातो का हिन्दुस्तान मे हमारी अपनी स्थिति और ब्रिटिश सरकार के साथ की बातचीत से गहरा ताल्लुक है। सरकार का उद्देश्य उनकी लड़ाई के लिए हमारा सद्भाव प्राप्त करना है। मौजूदा हालात मे हिन्दुस्तान का सवाल छोड दें तो भी मेरी समझ मे नही आता कि हम एक साम्राज्यवादी युद्ध को अपना नैतिक समर्थन क्यो दें? अलबत्ता अगर ब्रिटेन हिन्दुस्तान के प्रति अपना रवैया बुनियादी तौर पर बदल ले और हमारी आजादी को मान ले तो इसका ही मतलब यह हो जायगा

कि उसके साम्राज्यवाद में अत्यन्त महत्वपूर्ण परिवर्तन हो गया है। परन्तु अधिक सम्भावना यह मालूम होती है कि बुनियादी तौर पर यह साम्राज्यवाद बना रहेगा और इसकी खातिर लड़ाई जारी रहेगी हालांकि हालत से मजबूर होकर हिन्दुस्तान के बारे में कुछ अस्पष्ट घोषणाएं की जाती है। यह कहा जायगा कि इन घोषणाओं पर भी युद्ध के अन्त में अमल किया जायगा। मुझे हमारे लिए यह स्थिति बहुत खतरनाक दिखाई देती है, क्योंकि हम चाहे या न चाहे, हम अंग्रेजों की साम्राज्यवादी नीति का समर्थन करने के लिए फंस जायंगे और कई तरह के बुरे कामों में शरीक हो जायंगे। इसलिए मेरा खयाल है कि हमें बहुत सावधान और सतर्क रहना चाहिए और बिल्कुल साफ कर देना चाहिए कि हम युद्ध के इन साम्राज्यवादी उद्देश्यों का समर्थन नही करेंगे।

जैसा मैंने ऊपर बताया है कि स्थिति जल्दी ही बहुत ज्यादा पेचीदा हो सकती है, अगर पश्चिमी शक्तियां रूस के विरुद्ध गतिमान हो जायं और इटली के साथ उनका षड्यन्त्र सफल हो जाय। वे इसे सामाज्य के विरुद्ध धर्मयुद्ध बतायेंगे और उसकी आड़ में न केवल अपने साम्राज्य को मजबूत करने की कोशिश करेंगे बल्कि सोवियत रूस के समाजवादी राज्य को भी छिन्न-भिन्न कर देंगे। रूसी नीति के साथ हम सहमत हों या न हों, यह हर दृष्टि-बिन्दु से एक विपत्ति होगी। मेरी आपसे प्रार्थना है कि इस बात को ध्यान में रक्खें और हिन्दुस्तानी वार्ताओं को इस दृष्टि से देखें।

आप देखेंगे कि आप के लेखों में एक-दो आशावादी शब्दों के प्रयोग और उत्तर-प्रदेश के गवर्नर के आनन्द भवन में आने-जैसी छोटी घटनाओं से हर जगह यह असाधारण असर पड़ा कि ब्रिटेन के साथ किसी-न-किसी तरह का निपटारा हो रहा है और कांग्रेसी मन्त्रिमण्डल जल्दी ही फिर पदारूढ़ हो जायंगे। जिन्ना हमारी आजादी का मजाक उड़ाकर इससे फायदा उठा रहे हैं। मुस्लिम लीग को अपना सिर उठाने का मौका मिल जाता है। और हमारे पत्र-सम्पादक तो हमेशा की तरह गलत व्यवहार करते ही है। इन सब बातों से हिन्दुस्तान और इंग्लैण्ड दोनों में जनता के मन पर गलत असर होता है। इससे समझौते की सम्भावना भी बहुत कम हो जाती है। फिर भी यही होगा कि वाइसराय शिकायत करेगा कि उसे गुमराह किया गया। 'पायनियर' ने यह शीर्षक लगाया है—"कांग्रेस मन्त्रिमण्डल के त्यागपत्र, एक धोखा-धड़ी" इत्यादि। हर जगह पूछा जा रहा है कि पर्दे के पीछे क्या हो रहा है? हर जगह किसी बड़ी और आकस्मिक घटना की आशा लगी हुई है।

इन सब बातों का हकीकत से और वर्तमान परिस्थिति से मेल नही बैठता।

इतना ही नही, किसी भी तरह की दिमागी या दूसरी तैयारियो के लिए गलत वातावरण पैदा होता है।

मुझे खुद को तो यकीन है कि निपटारे की कोई वास्तविक सम्भावना नही है, हालाकि ब्रिटिश सरकार बेशक उसे पसन्द करेगी। लेकिन जो हमारी कम-से-कम माग है, उसे वे मानने वाले नही हैं। आज ब्रिटिश सरकार पहले से कही ज्यादा प्रतिक्रियावादी और साम्राज्यवादी है और उससे हमारी बात मान लेने की आशा रखना ऐसी बात की आशा रखना है जो इस स्थिति मे हो नही सकती। झूठी आशाए पैदा करना इन्साफ और मसलहत दोनो के खिलाफ है और उससे हमारी स्थिति कमजोर भी हो सकती है। मेरा सुझाव है कि दूसरे पहलू पर जोर देना अधिक न्यायपूर्ण है ताकि दूसरा पक्ष ठीक-ठीक जान सके कि क्या मामला है और वह उसके अनुसार अपने को बना ले।

सप्रेम आपका
जवाहरलाल

—अंग्रेजी। इलाहाबाद, २४।१।१९४०। 'ए बंच आफ ओल्ड लेटर्स' से]
सौजन्य : श्रीमती इन्दिरा गांधी।

६०. जवाहरलाल का पत्र : गांधीजी के नाम

निजी

इलाहाबाद
४ फरवरी, १९४०

प्रिय बापू,

आप कल दिल्ली पहुचेंगे और ऐसा मालूम होता है कि आप एक सप्ताह या अधिक वहा ठहरने वाले हैं। मुझे पता नही कि वहा क्या घटनाए होगी और हममे से किसी को बुलाने की आपको जरूरत हो सकती है या नही। मैं खुद तो नहीं समझता कि ऐसा होने की जरा भी सम्भावना है, क्योकि मुझे सरकारी रवैये मे रत्तीभर भी फर्क दिखाई नही देता। जो हो, मैं आपको खबर देना चाहता था कि अगले दो सप्ताहो मे दिल्ली जाने का विचार करना मेरे लिए बहुत ही कठिन है। मेरा यह सारा समय पूरी तरह भरा हुआ है। आज रात को मैं दो दिन के लिए लखनऊ जा रहा हू। ७ ता० को एक दिन के लिए इलाहाबाद आऊगा और ८ की सुबह बम्बई के लिए रवाना हो जाऊगा। वहा मुझे योजना-समिति की

महत्वपूर्ण वैठकों में शरीक होना है, जो मैंने कुछ मामलों पर विचार करने के लिए खास तौर पर वुलाई है। अगर मैं वहां नहीं गया तो सारी वैठक का काम विल्कुल गड़वड़ और वेकार हो जायगा। वम्वई में मैं ६ तारीख की सुवह से १२ तारीख की रात तक रहूंगा। १२ की रात को लखनऊ के लिए रवाना हो जाऊंगा। १४, १५ और १६ को प्रान्तीय कांग्रेस और प्रतिनिधियों की सभाओं के लिए लखनऊ में रहूंगा। बाद के दो दिन, मुझे आशा है, वड़ी सभाओं के लिए गोरखपुर में होऊंगा। अगले दो सप्ताह के लिए फिलहाल मेरा यह कार्यक्रम है।

पिछले महीने में जो घटनाएं हुई है, उन सवसे मेरा यह विश्वास पक्का हुआ है कि इस आशा के लिए जरा-सा भी कारण नहीं है कि ब्रिटिश सरकार हमारी स्थिति को स्वीकार कर लेगी। असल में बहुत-सी घटनाएं ऐसी हुई हैं, जिनसे साफ जाहिर होता है कि वे लोग एक वहुत निश्चित साम्राज्यवादी नीति पर चल रहे हैं। आपने देखा होगा कि ब्रिटिश संसद ने अभी एक विल पास किया है, जिसमें "गवर्नमेण्ट ऑव इण्डिया ऐक्ट" में सुधार करके कर लगाने के वारे में प्रान्तीय सरकारों के अधिकार सीमित कर दिये हैं। यह खास तौर पर उत्तर प्रदेश के सम्पत्तिकर को ध्यान में रखकर किया गया है। इस तरह वह कर उठा दिया गया। ऐसे फैसलों में यह दोष तो है ही कि वह प्रान्तीय विधान सभा के अधिकारों को कम कर देता है। इसके अलावा उसके लिए जो समय और तरीका चुना गया वह ब्रिटिश सरकार के साम्राज्यवादी दृष्टिकोण का प्रमाण है और इससे जाहिर होता है कि उस दृष्टिकोण मे कोई परिवर्तन नही हुआ।

पता नही, आपका ध्यान रायल सेण्ट्रल एशियन सोसायटी-द्वारा संगठित लन्दन के हाल के एक सामाजिक समारोह की तरफ आकर्षित किया गया है या नहीं। लार्ड जेटलैण्ड सभापति थे और कई मन्त्रिमण्डल के मन्त्री मौजूद थे। वाह्य उद्देश्य तो लन्दन में मुस्लिम संस्कृति और धर्म का एक केन्द्र स्थापित करना था, पर असली उद्देश्य इस्लामवाद के प्रचार को बढ़ावा देना और हिन्दुस्तान में इस भावना का दुरुपयोग करना और इस्लामी देशों में युद्ध के मित्र राष्ट्रों को लाभ पहुंचाना था। यह असाधारण वात है कि किस तरह लड़ाई सच्चे साम्राज्यवादी ढंग पर वढ़ रही है और किस तरह घटनाएं दोहरायी जा रही है।

इन सव वातों का इस धारणा के साथ मेल नही वैठता कि इंग्लैण्ड अपने साम्राज्य को समेटने की तैयारी कर रहा है, न यह देखकर तनिक भी प्रोत्साहन मिलता है कि वाइसराय से मुलाकात करने के लिए आपके नेतृत्व में फिर लोगों का एक जुलूस वनाया जा रहा है। वही पुराना खेल फिर खेला जा रहा है; पृष्ठभूमि वही है; विविध उद्देश्य वे ही हैं; पात्र भी वे ही हैं और परिणाम भी वही होना चाहिए।

किन्तु कुछ दुर्भाग्यपूर्ण अप्रत्यक्ष परिणाम भी हैं। देश मे आनेवाले समझौते का वातावरण फैला हुआ है, जबकि वास्तव मे उसके लिए कोई कारण नही है। वह कमजोर करनेवाला और हिम्मत तोडनेवाला है, क्योकि वह ताकत से पैदा नही हुआ है। कई आदमियो के मामले मे तो किसी भी तरह सघर्ष से बचने और सत्ता के जो छिछडे हमारे पास पहले थे, उन्हे फिर से प्राप्त करने की अत्यधिक लालसा से पैदा हो रहा है। सघर्ष अवाञ्छनीय तो है, परन्तु जाहिर है कि वह हर कीमत पर नही टाला जा सकता, क्योकि कभी-कभी टालना खुद ही एक निहायत महगा और हानिकारक मामला होता है। लेकिन अभी तो सघर्ष का कोई तात्कालिक प्रश्न नही है। सवाल है हमारी अपनी स्थिति को शान के साथ कायम रखने का और उसे किसी तरह कमजोर न करने का। मुझे अन्देशा है कि इग्लैण्ड और हिन्दुस्तान दोनो मे यह असर व्यापक रूप मे फैला हुआ है कि हम किमी भी हालत मे कोई सघर्ष नही करेंगे और इसलिए हम जो भी शर्तें हमे प्राप्त हो जायगी उन्हें स्वीकार कर लेंगे। इस प्रकार का खयाल हमे साहसहीन बनाता है। मैंने पिछले पखवारे मे देखा है कि हमारे काग्रेस के प्रतिनिधियों के चुनाव पर भी इसका असर पडा है। बहुत लोग, जो सघर्ष की सम्भावना के डर से पीछे-पीछे रह रहे थे अब फिर आगे आ गये हैं। क्योंकि पद और सत्ता के आनन्द भोगने की सम्भावना उन्हे फिर सामने दिखाई दे रही है। अवाञ्छनीय लोगो को काग्रेस के बाहर रखने का कई महीने का प्रयत्न कुछ असफल हो गया, क्योकि हिन्दुस्तान के वातावरण मे इस आकस्मिक परिवर्तन के कारण उन्हे विश्वास हो गया कि समझौता होनेवाला है।

ब्रिटिश सरकार भाषा चाहे नरम काम मे ले, परन्तु उसकी प्रतिक्रिया भी हमारे प्रतिकूल हो रही है। अवश्य ही वह हमारे साथ समझौता करना चाहती है, क्योकि उसे युद्ध मे हमारा समर्थन चाहिए लेकिन यह बहुत निश्चित है कि वह जरा-सी वास्तविक सत्ता छोडना और हमसे समझौता करने के लिए अपनी बुनियादी साम्राज्यवादी नीति को बदलना नही चाहती। साम्प्रदायिक सवाल पर वह अपना पुराना षड्यन्त्र जारी रख रही है और रक्खेगी, भले ही कभी-कभी वह काग्रेस को तसल्ली देने के लिए मुस्लिम लीग के विरुद्ध कुछ आलोचना के शब्द इस्तेमाल करती है। जहा तक उसका सम्बन्ध है, वह अपनी वर्तमान स्थिति को ज्यों-की-त्यो रखते हुए हमें अपने पक्ष मे करने की कोशिश करेगी। यह सम्भव हो तो उसके लिए बहुत अच्छा है। यह नही होता है, जैसा कि उसे भी दीखता है तब वह समय-समय पर हिन्दुस्तानी नेताओ से बात-चीत करती रहेगी, मामले को अधिक वक्त तक खीचेगी, यह दिखेयेगी कि हम समझौते के किनारे पर आ गये हैं और इस प्रकार ससार और हिन्दुस्तान दोनो के लोकमत को शान्त रखेगी।

उनके दृष्टिकोण से इस दूसरी नीति में यह लाभ और है कि वह हमारी शक्ति को थका देगी और हमें ठण्डा कर देगी, ताकि यदि अन्त में संघर्ष आ ही जाय तो उसके लिए जरूरी वातावरण न रहे। इंग्लैण्ड के सरकारी हलकों में यह आम विश्वास है कि बात-चीत करने और उन्हें स्थगित कर देने की उनकी नीति का यह परिणाम हुआ है और कांग्रेस-मन्त्रिमण्डलों के इस्तीफे के समय हिन्दुस्तान में जो स्थिति खतरनाक मालूम होती थी, वह अब बहुत आसान हो गई है और खतरों का कोई अन्देशा नहीं रहा।

मुझे ऐसा मालूम होता है कि जहां हम संघर्ष को जल्दी नहीं ला सकते और नहीं लाना चाहिए और जहां हमें किसी सम्भव और सम्मानपूर्ण समझौते के लिए दरवाजा बन्द कर देने की आवश्यकता नहीं, क्योंकि आपके तरीके में दरवाजा कभी बन्द नहीं किया जाता, वहां हमें यह भी बहुत साफ कर देना चाहिए कि हमारी पहले बताई हुई शर्तों के अलावा और किसी तरह न समझौता हो सकता है, न होगा। सच तो यह है कि इन हालात का भी लड़ाई की घटनाओं के दृष्टिकोण से थोड़ा-सा सिंहावलोकन करना पड़ेगा। जैसा हमने पहले कहा था, वैसा अब नहीं कह सकते कि हम यह जानना चाहते हैं कि यह युद्ध साम्राज्यवादी है या नहीं। हमें ब्रिटिश सरकार ने जो उत्तर दिया है वह और लड़ाई में और विदेशी मामलों में उसकी नीति बराबर पूरी साम्राज्यवादी रही है। इसलिए हमें जरूर इस माने हुए तथ्य के आधार पर चलना पड़ेगा कि यह एक सामाज्यवादी युद्ध है। चाहे दावा इसके विरुद्ध कुछ भी किया जाय, युद्ध और ब्रिटिश-नीति दिन-दिन अधिकाधिक अपशकुनवाली होती जा रही है, और मैं हर्गिज नहीं कहूंगा कि हिन्दुस्तान किसी भी तरह उस साम्राज्यवादी दुस्साहस में फँसे, क्योंकि इससे हिन्दुस्तान को न केवल भौतिक बल्कि आध्यात्मिक दृष्टि से भी हानि ही हो सकती है। आज मुझे यह मुद्दा बहुत ज्यादा महत्वपूर्ण दिखाई देता है।

हर तरह मुझे मालूम होता है कि हमें सबसे महत्वपूर्ण काम यह करना है कि हम संसार के, ब्रिटिश सरकार के और हिन्दुस्तानी जनता के सामने अपनी स्थिति बिल्कुल साफ कर दें। समझौते के इस मुद्दे पर बहुत ज्यादा गलतफहमी है और यह गलतफहमी बिल्कुल हमारे विपरीत और ब्रिटिश साम्राज्यवाद के अनुकूल है, क्योंकि वह हमारे साधनों का युद्ध के लिए दुरुपयोग कर रहा है और यह बहाना भी कर रहा है कि उसे हमारा बहुत सद्भाव प्राप्त है। ब्रिटिश सरकार या वाइसराय के पास हमारे जाने से ये गलतफहमियां बढ़ती हैं और ब्रिटिश सरकार समझौते से और भी दूर हटती है।

राजगोपालाचारी के कुछ हाल के भाषणों से मुझे दुःख हुआ है, क्योंकि उनमें

औपनिवेशिक दर्जे और इसी तरह की बहुत सी ही समझौते की सी बातें हैं। कांग्रेस बहुत-सी आवाजो मे बोलती है और आश्चर्य नही कि इसका नतीजा गडबड और परेशानी हो। कम-से-कम आजादी के सवाल पर तो एक ही आवाज निकलनी चाहिए।

मैंने आज आप पर दो लम्बे पत्र थोप दिये हैं, जिसके लिए मैं आपसे क्षमा चाहता हू।

सप्रेम आपका,
जवाहरलाल

महात्मा गाधी,
नई दल्ली

—अंग्रेजी। इलाहाबाद, ४।२।१९४०। 'ए बंच आफ ओल्ड लेटर्स' से।]
सौजन्य : श्रीमती इन्दिरा गाधी।

६१. अब्दुल हई अब्बासी का पत्र : गांधीजी के नाम

[१३।५।१९४० को गांधीजी ने जो पत्र जवाहरलाल जी को लिखा था उसी के साथ श्री हुई का यह पत्र भी उनके अवलोकनार्थ भेजा था, जैसा कि उस पत्र में स्पष्ट उल्लेख है। पत्र टाइप किया हुआ है जिस पर पुन. हाथ से लिखा गया है —

"Suggest youı shıftıng to a Muslım Vıllage ın U P, ıf you really want to solve H M. questıon"

अर्थात् "यदि आप सचमुच हिन्दू-मुस्लिम सवाल को हल करना चाहते हैं तो मैं आपको सुझाव देता हूं कि सयुक्त प्रान्त के किसी मुस्लिम गाव मे आप अपना डेरा डालें।" गाधीजी ने २३।५।४० को इसका उत्तर दिया था पर क्या उत्तर दिया, यह ज्ञात नहीं है।—सम्पा०]

नजरबाग, लखनऊ
अप्रैल ८, १९४०

आदरणीय महात्मा जी,

'हरिजन' के हाल के अक मे आपने हिन्दू-मुस्लिम-ऐक्य मे अपने विश्वास की पुन पुष्टि की है और कहा है कि हिन्दू-मुस्लिम ऐक्य की सिद्धि आपके जीवन का 'मिशन' है। इसके पहिले कि आप भारतीय राजनीति की इस जटिल समस्या को हल करने के लिए कोई दूसरा गम्भीर प्रयत्न करें, मैं आपसे अनुरोध करना

चाहता हूं कि इस प्रश्न का समीप से अध्ययन करें। हिन्दू-मुस्लिम प्रश्न से सम्वन्वित झगड़े सदा ही उत्तर भारत के किसी ऐसे भाग से शुरू होते हैं जहां ये दो जातियां पास-पास रहती हैं। आप अहमदावाद या सेवाग्राम में रहते हुए इस प्रश्न का अध्ययन पूरे तौर पर नही कर सकते। आदरपूर्वक मेरा सुझाव है कि आप उत्तर भारत के किसी भाग में अपने को स्थानान्तरित कर लें और किसी निकट ग्रामीण क्षेत्र में वस जायं। और स्पष्ट होने की खातिर मैं सुझाव देना चाहता हूं कि आप संयुक्त-प्रान्त के वहराइच या सीतापुर जिले में कोई गांव चुन लें। राजा साहव जहांगीरावाद या महमूदावाद के ताल्लुकेदारी-क्षेत्र में कोई गांव चुनना और भी अच्छा होगा और वह गांव मुख्यतः मुसलमानों की वस्ती का होना चाहिए। इस प्रकार आप एक ही समय में दो समस्याओं का अध्ययन कर सकेंगे। आप इस स्थिति में होंगे कि मुस्लिम समाज की प्रवृत्तियों और आवश्यकताओं को समझ सकें और अपने असामियों के प्रति उन मुस्लिम ताल्लुकेदारों का वर्ताव भी देख सकें, जो साम्प्रदायिक आन्दोलनों के मुख्य कर्णधार होते है।

संयुक्तप्रान्त में चुने जाने वाले स्थान का काशी, इलाहावाद या अयोघ्या, जो हिन्दू संस्कृति के केन्द्र हैं, होना आवश्यक नहीं क्योंकि वहां आप मुस्लिम मनोदशा का अध्ययन न कर पायेंगे।

आगे मैं सच्चाई के साथ आपसे अनुरोव करता हूं कि सेवाग्राम का त्याग करें और संयुक्तप्रान्त के किसी भाग में वस जायं। मुझे विश्वास है कि आपकी यह 'हिजरत' उस खाई को भरने में काफी दूर तक कामयाव होगी जिसे स्वार्थी लोगों ने जान-बूझ कर चौड़ा कर दिया है।

आशा है, आप मेरे सुझाव पर गम्भीर विचार करके मुझे अनुग्रहीत करेंगे।

आपका वन्धुतायुक्त
हई अव्वासी

—अंग्रेजी। लखनऊ, ८।४।१९४०। नेहरू संग्रहालय में सुरक्षित पत्रावली से।]
सौजन्य : श्रीमती इन्दिरा गांधी तथा नेहरू संग्रहालय।

६२. जवाहरलाल का पत्र : गांधीजी के नाम

लखनऊ
जुलाई, १७, १९४०

मेरे प्यारे वापू,

मुझे आपका पोस्टकार्ड अभी मिला है। आपने जो राह वताई है उसके अनु-

सार वहुत-कुछ किया जा सकता है और जैसा कि होता है, इसे करने के लिए हमारे पास अच्छे-योग्य आदमी भी हैं। (पर) दुर्भाग्यवश काफी वडे पैमाने पर ऐसा कोई काम करने के लिए हमारे पास काफी रकम नही है।

हकीकत की वात तो यह है कि पिछले दो सालो से हम एक उर्दू साप्ताहिक निकालते भी रहे हैं। यह जाब्ते से काग्रेस की ओर से तो नही शुरू किया गया था किन्तु प्रान्त के प्रमुख काग्रेसजनो द्वारा प्रेरित था। इसका नाम है—"हिन्दुस्तान।" जहा तक साहित्यिक और राजनीतिक रचनाओ का सवाल है, मेरे खयाल से यह भारत का सर्वोत्तम उर्दू साप्ताहिक है। किन्तु, जैसा कि अक्सर होता है, व्यवस्था-विभाग निराशाजनक रूप से अयोग्य था, और सब प्रकार के प्रयत्न के वावजूद, यह साप्ताहिक हम पर एक वढता हुआ भार है। युद्ध के कारण कागज की कीमतें वढ गई हैं और इसे आगे चलाना लगभग असम्भव हो गया है। वहुत मुमकिन है कि इसका आखरी अक इस हफ्ते निकले। यह एक करुणाजनक वात होगी।

एक साप्ताहिक पर वहुत ज्यादा खर्च नही पडता और वह वहुत भला कर सकता है किन्तु उसके लिए पैसे आते रहना चाहिए। जिस प्रकार के साप्ताहिक का उल्लेख आपने किया है उससे तथा सरल उर्दू मे निकाली गई वहुसख्यक लघु पुस्तिकाओ द्वारा मुझे विश्वास है, हम मुसलमानो पर उल्लेखनीय प्रभाव डाल सकते हैं। इस समय उनका झुकाव वातो को समझने की तरफ है और मुस्लिम लीग के नेतृत्व के विरुद्ध भावना वढी है। सब कुछ होते हुए भी, संयुक्तप्रान्त मे हमें सदा से मुसलमानो का कुछ समर्थन मिलता रहा है तथा कुछ अच्छे मुसलमान कार्यकर्ता प्राप्त होते रहे हैं। दिल्ली मे तो मुस्लिम लीग-विरोधी भावना तगडी है।

आपका स्नेहपात्र
ज० ला०

महात्मा गाधी,
सेवाग्राम
वर्धा होकर (सी० पी०)

—अंग्रेजी। लखनऊ, १७।७।१९४०। नेहरू संग्रहालय में सुरक्षित पत्रावली मे।]
सौजन्य : श्रीमती इन्दिरा गांधी तथा नेहरू सग्रहालय।

६३. जवाहरलाल का पत्र : गांधीजी के नाम

अगस्त १०, १९४०

मेरे प्यारे बापू,

मुझे अभी-अभी आपका ८ तारीख का पत्र मिला है। हैदराबाद के विषय में मैं कोई सुझाव नहीं दे सकता। लोगों की अपनी शक्ति और उनके संगठन पर बहुत-कुछ निर्भर करता है। फिर भी मैं सोचता हूं कि उनके लिए ऐसे ग्रामीण अंचलों में अपने को केन्द्रित करना ज्यादा अच्छा होगा, जहां साम्प्रदायिक झगड़े होने के मौके सम्भवतः कम होंगे। मैं समझ नहीं पाता कि ऐसी परिस्थिति में वे निष्क्रिय कैसे रह सकते हैं। फिर भी सब मिलाकर भारत की राजनीतिक स्थिति में होनेवाले तीव्र परिवर्तनों को देखते हुए शायद तुरन्त कोई बड़ा संकट पैदा न करना ही ज्यादा अच्छा होगा। जब यह अखिल भारतीय परिस्थिति और आगे गतिशील होगी तो हैदराबाद की जनता अपने अधिकारों को सिद्ध करने के लिए ज्यादा अच्छी हालत में होगी।

एक दृष्टि से मैं हैदराबाद की घटनाओं के लिए दुखी नहीं हूं। बहादुर यार खां और दूसरों ने जो असम्भव रुख ग्रहण किया है उसकी प्रतिक्रिया उन्हीं के खिलाफ होगी। बिलाशक इसके कारण झगड़े-फसाद होंगे। खून-खच्चर होगा। हर हालत में राज्य के कांग्रेस-कर्मियों को यह बात पूर्णतः स्पष्ट कर देनी चाहिए कि वे उत्तरदायी शासन की अपनी मांग को जरा भी कम नहीं कर पायेंगे।

मैं समझता हूं कि आठ-नौ दिनों के अन्दर ही कार्यसमिति के वर्धा में बैठने की सम्भावना है। तब वहां मैं आपसे मिलने की आशा करता हूं।

जहां तक युद्ध-कोष के लिए बलात् चन्दा वसूल करने की बात है मैंने संयुक्त-प्रान्तीय कांग्रेस कमेटी के सेक्रेटरी को लिखा है कि वह आपके पास कुछ विवरण भेज दें। कुछ तो अखबारों में भी प्रकाशित हुए हैं और काफी स्पष्ट हैं। कुछ दूसरे यद्यपि समान रूप से स्पष्ट हैं, किन्तु उनकी सफाई दूसरे रूप में दी जा सकती है। उदाहरणार्थ, एक आम ढंग यह है कि एक आदमी से चन्दा देने को कहा जाता है। वह इन्कार करता है या जितनी रकम की मांग है उससे कुछ कम देना चाहता है। तुरन्त ही या एक-दो दिन बाद वह इस आरोप में गिरफ्तार कर लिया जाता है कि दूसरों को युद्ध-कोष में चन्दा देने से रोक रहा था और इस प्रकार युद्ध-प्रयत्नों में बाधा डाल रहा था।

मुझे हाल में ही इलाहाबाद जिले के एक ऐसे ही मामले की जानकारी हुई है। एक गरीब ग्रामीण दुकानदार से १५ या २० रुपये देने को कहा गया। उसने कहा कि

अधिक से अधिक वह पाच रुपए दे सकता है। उसे अपशब्द कहे गये और धमकी दी गई तथा तुरन्त ही उस पर एक नोटिस तामील की गई कि क्यो न भारत-रक्षा कानून के अनुसार उस पर मुकदमा चलाया जाय। आज यहा एक अदालत मे उसका मुकदमा है। सामान्यत ऐसी बात खालिस काग्रेस कार्यकर्त्ताओ के साथ नही की जाती क्योकि उनसे तो उम्मीद ही की जाती है कि वे इन्कार करेंगे। एक दूसरा मामला हमारे पास आज एटा जिले के कासगज से आया है। २ अगस्त को एक नायब-तहसीलदार एक कांग्रेसी की दुकान पर गये और उससे युद्ध-कोष के लिए रुपया मागा। इसके लिए इन्कार किया गया और उसने कहा कि काग्रेसी होने के कारण वह ऐसा नही कर सकता। इस पर नायब-तहसीलदार ने उसके खिलाफ कार्रवाई करने की धमकी दी और उसका नाम दर्ज करा दिया। दूसरे ही दिन, यह आदमी, जो जिले के एक सुप्रतिष्ठित काग्रेसी का भतीजा है, अचानक एक दण्डात्मक पुलिस टैक्स न देने के अपराध मे गिरफ्तार कर लिया गया। वह हवालात मे डाल दिया गया और ३० घण्टे तक उसे खाने या नहाने आदि की भी सुविधाए नही दी गईं। यह गिरफ्तारी पूर्णत गैरकानूनी थी क्योकि दण्डात्मक टैक्स सिर्फ जायदाद की जब्ती-द्वारा ही वसूल किया जा सकता है, और सम्बन्धित आदमी के पास, जिसका नाम ओमप्रकाश है, बहुत काफी चल और अचल सम्पत्ति है। दण्डात्मक टैक्स की रकम सिर्फ छ रुपये थी, जो बडी आसानी से जब्ती द्वारा वसूल की जा सकती थी। इस पर ओमप्रकाश के चचा मानपाल गुप्त ने बडा हो-हल्ला मचाया और अन्त मे ओमप्रकाश रिहा कर दिया गया। इस समय मामला इसी अवस्था मे है।

दूसरा दिलचस्प मामला रायबरेली जिले मे सिमरी के ताल्लुकेदार ठाकुर सुरेन्द्र बहादुर सिंह का है। वह एक काग्रेसी एम० एल० ए० हैं। उनके ताल्लुकेदार पिता की हाल में ही मृत्यु हुई है और उनके अपने ही अनुरोध पर उनका ताल्लुका कोर्ट आफ वार्ड्स के प्रबन्ध मे ले लिया गया। डिपुटी कमिश्नर ने उन्हे सूचित किया कि उन्हें युद्ध-कोष मे १५०० रुपये चन्दा देना चाहिए। एक काग्रेसी की हैसियत से उन्होने ऐसा करने से इन्कार किया। तब उनसे कहा गया कि ताल्लुका उन्हे वफादारी और अच्छी सेवा की शर्तो पर दिया गया है और कोर्ट आफ वार्ड्स का पूरा अधिकार है कि ताल्लुका की आमदनी मे से वह यह दान दे दे। इस पर उन्होंने डिपुटी-कमिश्नर को रजिस्ट्रीशुदा नोटिस दी जिसमे इस बलात् चन्दा लगाने का विरोध किया गया और इस कार्य को सर्वथा गैर-कानूनी बताया गया। उनका केस यह है कि वफादारी के अभाव मे उनके ताल्लुके को जब्त करना या न करना सरकार के अधिकार के अन्तर्गत हो सकता है, किन्तु यह उनके अधिकार

की वात नही है कि मेरी इच्छा के खिलाफ मेरी ओर से चन्दा दे दें। इसके वावजूद डिपुटी-कमिश्नर ने यह रकम या तो शुद्ध कोप में दे दी है या देने जा रहे हैं। सुरेन्द्र-वहादुर सिह किसी अदालत में उन पर दावा करने की सोच रहे हैं।

मुझे विभिन्न जिलों से शिकायतें मिल रही हैं कि किसान से प्रति हल आठ आने या एक रुपया देने के लिए दवाव डाला जा रहा है। यह तो साफ है कि वे देना नही चाहते परन्तु वैसा करने को मजवूर किये जा रहे हैं।

छोटे सरकारी नौकर और लघु अधिकारी तो चन्दा मांगने पर नही कह ही नहीं सकते। हाल का एक मामला वेजाव्ते, किन्तु सही तौर पर मेरी दृष्टि में लाया गया है। यह एक जिला मजिस्ट्रेट के स्टीनोटाइपिस्ट का मामला है। उससे दो सौ रुपए देने को कहा गया। उसकी तनख्वाह सवा सौ रुपये महीना थी। उसने हिचकिचाते हुए वताया कि उस पर एक वड़े कुटुम्व का भार है और यह रकम देना उसके वूते के विल्कुल वाहर है। तव उससे कहा गया कि यदि अंग्रेज लड़ाई हार गये तो भी उसके कुटुम्व को फाके करने पड़ेंगे। इसलिए उसके लिए यह चन्दा देना एक वीमे के समान है। अन्त में यह तय पाया कि युद्धकोप में वह १५० रुपये देगा। एक अचम्भे की वात यह है कि उच्चाधिकारियों से चन्दे की वात ज्यादा सुनाई नहीं पड़ती। वे अपने लिए इतना काफ़ी समझते हैं कि वड़ी तनख्वाह लेकर वे वड़ी कुशल सेवा प्रदान कर देते हैं।

उच्च वेतन पर नई-नई नियुक्तियों की संख्या दिन-दिन वढ़ती जाती है। जो कोष एकत्र किया जा रहा है सम्भवतः उसका एक वड़ा भाग इन्ही उच्च वेतनों का भुगतान करने में लग जाता है। मुझे पता चला है कि इस प्रकार के अधिकारियों से, जो जरा से या किसी भी काम के लिए नहीं मोटी-मोटी तनखाह ले रहे है, शिमला भरा हुआ है। अभी हाल की ही वात है कि एक अंग्रेज अधिकारी, जिन्हें अव तक ७५० रुपये मासिक मिल रहा था, किसी युद्धकार्य में भिड़ा दिये गये और अव उनको २५०० रुपये मासिक दिया जा रहा है। कहा तो यह गया कि उन्होंने अपने तईं वड़ा भारी त्याग करके इस नये काम को स्वीकार किया है।

आपका प्यारा
जवाहरलाल

महात्मा गांधी

—अंग्रेजी। इलाहावाद, १०।८।१९४०। नेहरू संग्रहालय में सुरक्षित पत्रावली से।]

सौजन्य : श्रीमती इन्दिरा गांधी तथा नेहरू संग्रहालय।

६४. जवाहरलाल का पत्र : गांधीजी के नाम

सितम्बर, २१, १९४०

मेरे प्यारे वापू,

एक मामला ऐसा था, जिसे मैं आपसे कहना भूल गया। १७ सितवर को, जव हम लोग वम्वई मे थे, एक तरुण लडका, रजनी पटेल नाम का, वम्वई मे (जहाज से) उतरते ही गिरफ्तार कर लिया गया। इस तरुण व्यक्ति मे मेरी खासतौर से दिलचस्पी है, और मैं उसे वडा वुद्धिमान और योग्य व्यक्ति मानता हू। विदेश मे ५-६ साल विताने के वाद वह भारत को लौट रहा था और अपने घर पहुचने को वडा उत्सुक था, खास तौर से वह मुझे पत्र लिखा करता था कि पहुचते ही वह मुझसे भेंट करने आयेगा, जिससे वह काग्रेस का या इसी प्रकार का कोई सम्वन्वित उचित कार्य तुरन्त अपने हाथ मे ले सके। उसके लिए यह एक विचित्र गृहागमन था कि धरती पर पाव रखते ही भारत-रक्षा कानून के अन्तर्गत गिरफ्तार कर लिया जाय! जव वह भूमि पर उतरा उसके घर का कोई आदमी वहा मौजूद नही था, क्योकि पहिले से आने के समय का किसी को पता न था। तथ्य की वात तो यह है कि उसकी गिरफ्तारी की खवर पहिली वार मुझे वम्वई के सन्ध्याकालीन समाचारपत्र से मालूम हुई। मैंने तुरन्त ही पुलीस हवालात मे उससे भेंट करने की कोशिश की किन्तु मुझे इन्कार कर दिया गया और मुझे सूचना दी गई कि जवतक वम्वई सरकार का विशेष अनुमतिपत्र न हो कोई मुलाकात नही दी जा सकती। दूसरे दिन सुवह उसे नासिक जेल भेज दिया गया।

रजनी पटेल गुजरात मे आनन्द के पास सर्सा का रहनेवाला है। उसे लगभग ५-६ साल पूर्व—मैं ठीक तिथि नही जानता—सिविल सर्विस की परीक्षा के लिए इगलैण्ड भेजा गया था। उसने परीक्षा की तैयारी की, यहा तक कि परीक्षा-भवन मे भी गया। जव वह परीक्षा-भवन मे वैठा हुआ था तव उससे कहा गया कि चूकि इण्डिया आफिस उसके राजनीतिक विचारो को उचित नही समझता इसलिए उसे वाहर निकल जाना चाहिए। वह सभाओ मे तथा अन्यत्र ये विचार प्रकट करता रहा था। मुझे याद है कि यह मामला प्रश्नों-द्वारा उस समय केन्द्रीय धारा सभा मे उठाया गया था।

उसके वाद विभिन्न स्थानो मे उसने अपना अध्ययन जारी रखा और अन्त मे वैरिस्टर वन गया, यद्यपि उसे वकालत करने की कोई विशेष इच्छा नही थी। अपनी इग्लैण्ड की यात्राओ मे मैं उसके घनिष्ठ सम्पर्क मे आया, मैंने देखा कि वह वहुत वुद्धिमान और प्यारा आदमी है। तथ्य तो यह है कि वह इग्लैण्ड मे सव तरह

के आदमियो, विशेषत. अंग्रेज छात्रों में, बडा लोकप्रिय था। वह वहां छात्र-आन्दोलन, तरुण संघों, मजूर-आन्दोलन और इण्डिया लीग के साथ काम करता रहा। यहा तक कि इन कामों से उसके अध्ययन में भी कुछ बाधा हो पड़ी।

जब मै पिछली वार इंग्लैण्ड मे था तब मैंने उससे वादा किया था कि भारत में लौटने के बाद हम किसी मुनासिब काम में उसका उपयोग करने की चेष्टा करेंगे। मै उससे पत्र-व्यवहार कर रहा था और अपने प्रत्येक पत्र मे वह मुझे यही कहता था कि वह मेरे निदेशों के अनुसार कार्य करने की प्रतीक्षा में है।

पिछले नवम्बर में किसी समय, अर्थात् युद्ध छिड़ने के बाद उसने इंग्लैण्ड को अन्तिम रूप से छोड दिया और अमेरिका चला गया कि एक-दो माह वहां बिताने के बाद चीन होते हुए भारत लौटेगा। चूंकि वह ब्रिटिश तरुण-आन्दोलन में सुविख्यात था, अमरीकी तरुण-आन्दोलन ने उसका लाभ उठाया और सारे देश में उसका दौरा कराया। उसने नौ या दस महीने अमरीका मे बिताये और तरुणो के प्रतिनिधि रूप मे संयुक्त राज्य के समस्त भागों का दौरा किया। ऐसा लगता है कि वहां वह काफ़ी लोकप्रिय रहा। मेरा ख्याल है कि वहां उसने ब्रिटिश साम्राज्यवाद के विरुद्ध कड़े व्याख्यान दिये। जब वह वहां था तो श्रीमती रूज़वेल्ट ने उसे ह्वाइट हाउस[1] में चाय पर बुलाया।

अन्त मे वह अमरीका से चीनी तरुण-आन्दोलन के लिए विभिन्न चिट्ठियां और सन्देश लेकर विदा हो गया। उसे यह देखकर आश्चर्य और अपमान का अनुभव हुआ कि ब्रिटिश अधिकारियो ने उसे हांगकांग मे जमीन पर उतरने नही दिया और सीधे भारत जाने के लिए विवश किया। सिगापुर मे दूसरे यात्रियों को दी जानेवाली सुविधा उसे नही दी गई। और उसे थोड़ी देर के लिए भी भूमि पर उतरने नही दिया गया। शायद यही बात कोलम्बो में भी हुई होगी। बम्बई आने पर उसे इस अभियान में गिरफ्तार कर लिया गया कि उसके पास बहुत-सी आपत्तिजनक पुस्तके और कागज है। तथ्य तो यह है कि पुलीसवालो ने हमसे कहा कि वे बहुत दिनों से उसकी खोज में थे और किसी-न-किसी तरह उसे गिरफ्तार करना चाहते थे।

मुझे नही मालूम कि उसके खिलाफ यथार्थ आरोप क्या है, या उसके पास कौन-सी पुस्तकें या कागज थे। बहुत दिनों की अनुपस्थिति के बाद घर लौटते हुए, उसके पास बहुत-सी किताबे इकट्ठी हो गई होंगी। जहां तक मैने उसकी वक्तृताओं की रिपोर्टें पढ़ी है, निश्चय ही वे कड़ी थी, परन्तु उनसे ज्यादा भिन्न न

---

१. अमरीकी राष्ट्रपति का निवास-स्थान।

थीं, जो हममे से बहुतेरे यहा दिया करते हैं। वह एक स्पष्टतावादी, ईमानदार आदमी है और छिपाकर कोई काम करने का अभ्यस्त नही है। वह साम्यवादी नही है, यद्यपि इसमे सन्देह नही कि वह इग्लैण्ड और सम्भवत अमेरिका मे भी, साम्यवादियो के सम्पर्क मे आया होगा। उसका सामान्य दृष्टिकोण ऐसा है कि उसे समाजवादी कहा जा सकता है।

बम्बई छोडने के कुछ पहले मैंने वल्लभभाई से रजनी के बारे मे कहा था और भूलाभाई से भी जिक्र किया था। मैंने उनसे, यथासम्भव उसकी मदद करने और उसके घर के लोगो से सम्पर्क स्थापित करने का अनुरोध किया था। रजनी पटेल के पिता का पता निम्नलिखित है—

मोतीभाई बेनीभाई पटेल,

सर्सा

आनन्द होकर (गुजरात)

मुझे एक हलका-सा खयाल है, किन्तु मैं इसके विषय मे निश्चित नही हू, कि रजनी ने १६३० के सविनय अवज्ञा आन्दोलन मे भाग लिया था और जेल भी गया था।

मैं यह सब आपको इसलिए लिख रहा हू कि आपको मालूम रहे और यह भी आशा रखता हू कि सम्भवत आप उसके लिए कुछ कर सकें।

आपका स्नेहपात्र

जवाहरलाल

महात्मा गाधी

सेवाग्राम, वर्धा होकर (म० प्र०)

—अंग्रेजी। इलाहाबाद, २१।९।१९४०। नेहरू सग्रहालय मे सुरक्षित पत्रावली से।]

सौजन्य : श्रीमती इन्दिरा गांधी तथा नेहरू सग्रहालय।

६५. जवाहरलाल का पत्र : गांधीजी के नाम

सितम्बर, २३, १९४०

मेरे प्यारे बापू,

मैं 'नेशनल हेरल्ड' से एक पृष्ठ लेकर सलग्न कर रहा हू, जिसमे नंदुरबागज

अमेरिका के सर्वोच्च न्यायालय (सुप्रीम कोर्ट) के दो बड़े ही दिलचस्प फैसले प्रकाशित हुए है। ये फैसले न केवल स्वयं में दिलचस्प और अत्यन्त सु-लिखित है, वल्कि एक ऐसा विचार भी खड़ा करते हैं जो निर्णय के लिए भारत में भी उठ सकता है। नि:सन्देह इस मामले में कोई तुरन्त की जरूरत नही है, और यदि आप वहुत व्यस्त हों तो आपके इन फैसलों को पढ़ने की आवश्यकता नही है। किन्तु मैंने सोचा कि शायद आप उनमें दिलचस्पी लें।

आपने शायद सुना होगा कि मुकुन्दराव जयकर चन्द दिनों पूर्व इंग्लैण्ड से लौट आये हैं। मुझे बताया गया कि आपके बम्बई से रवाना होने के ठीक पहिले वह आपसे भेंट करना चाहते थे किन्तु चूंकि वह वहां आपका आखरी दिन था, वैसा करने में उन्हें हिचकिचाहट हुई। मैं भी उनसे भेंट नही कर सका। ऐसा मालूम पड़ता है कि भारत के प्रति ब्रिटिश सरकार के व्यवहार से वह बिल्कुल निराश हो गये हैं और उनको विश्वास हो गया है कि यह सरकार कांग्रेस को दवा देने पर तुली हुई है। कहा जाता है कि भारतीय कांग्रेस कमेटी के निर्णय के विषय में उन्होंने एक अद्भुत आलोचना की है। उन्होंने कहा है कि वैयक्तिक नही, सामूहिक सविनय अवज्ञा चलाई जानी चाहिए, क्योंकि मेरा ख्याल है कि वह ब्रिटिश सरकार के आक्रमण का हमारे द्वारा जहां तक सम्भव हो बड़े-से-बड़े ढंग पर उत्तर दिया जाना पसन्द करते हैं।

आपको यह जानने में दिलचस्पी होगी कि सुप्रसिद्ध कांग्रेसियों के निजी वैक-खातों की जिला अधिकारियों के आदेशों पर पुलिस-द्वारा विस्तृत जांच-पड़ताल की जा रही है।

पिछले दिनों लखनऊ में एक दिलचस्प घटना घटी जब एक कांग्रेसी को ऐसे भापण के लिए सजा दी गई जिसकी कोई मुनासिव रिपोर्ट नहीं थी। एक लम्बे भापण में से एक कांस्टेवल ने कुछ वाक्य लिख लिये थे। जब इस तरह की रिपोर्ट पर एतराज किया गया तो मैजिस्ट्रेट ने कहा कि "हम पुलीस से यह आशा नही कर सकते कि वह किये जानेवाले भापणों की रिपोर्ट लिखने की व्यवस्था करेगी", और उन्होंने उसी अत्यन्त अपर्याप्त आधार पर कार्रवाई चालू कर दी। यह दिलचस्प सिद्धान्त रहा।

मुझे अभी-अभी होरेस-अलेक्जेण्डर का एक पत्र मिला है जिसमें उन्होने लिखा है कि चूंकि एंग्लो-इण्डियन अविकारी-वृन्द ने ब्रिटिश सरकार को विश्वास दिलाया है कि कांग्रेस कमजोर है और गांवीजी का प्रभाव मिट रहा है इसलिए भारत के विपय मे वह कठोर हो गई है।

मैं २६ की रात को लखनऊ जा रहा हूं और वहा चार दिन ठहरने की

आशा करता हूं। वहा हमारी प्रान्तीय काग्रेस कमेटी तथा कुछ अन्य कमेटियो की बैठकें हैं।

आपका स्नेहपात्र
ज० ला०

महात्मा गाधी
सेवाग्राम, वर्धा (सी० पी०)

—अंग्रेजी। इलाहाबाद, २३।९।१९४०। नेहरू संग्रहालय में सुरक्षित पत्रावली से।]

सौजन्य : श्रीमती इन्दिरा गांधी तथा नेहरू संग्रहालय।

६६. जवाहरलाल का पत्र : गांधीजी के नाम

आनन्द भवन,
इलाहावाद
२।१०।४०

मेरे प्यारे वापू,

जव छ हफ्ते पहले नियोजन समिति (प्लैनिंग कमेटी) के लिए मैं वम्बई में था, तव मुझे एक उल्लेखनीय अनुभव हुआ, जो तव मे मुझे प्राय: व्यथित करता रहा है। अव आप पिछली वार वम्बई मे थे तभी यह वात मुझे आप से कह देनी चाहिए थी किन्तु कार्य-समिति तथा भारतीय काग्रेस कमेटी मेरे दिमाग पर इस तरह छा गई थी कि मैं भूल गया। मैं डाक के जरिये इसके वारे मे लिखना नही चाहता था।

जव दोपहर को मध्यान्तर हुआ तो मैं नियोजन-समिति से घर खाना खाने को लौटा। मुझे जल्दी ही लौट जाना था और समय की वडी खीचातानी थी। ठीक उसी समय एक तरुण अग्रेज युवक मेरी वहिन के आवास पर आया। वह खादी के परिधान में था—कमीज, ढीला पायजामा और टोपी मे। उसने मुझे वताया कि वह सेना मे एक अफसर—सेकेण्ड लेफ्टिनेण्ट—है और सेना की नौकरी छोड देने का निश्चय कर लिया है तथा इसके जो परिणाम हो उन्हें भुगतने को तैयार है। उसने एक कागज निकालकर दिखाया और कहा कि उसने इसे अपने कमाण्डिग अफसर को दे दिया है और जिसे विचारार्थ सेना के प्रधान कार्यालय शिमला भेज दिया गया है। मैंने उसे पढा और चकित हो गया। वह यथा ही

सुन्दर वक्तव्य था। मैं उसकी एक प्रतिलिपि संलग्न कर रहा हुं और आप खुद इसे पढ़ सकते है।

उसका नाम नेपियर था। वह उस नेपियर का पड़पोता (प्रपौत्र) था जिसको सिन्ध का विजेता कहा जाता है। इस परिवार का सेना से घनिष्ठ सम्बन्ध रहा है। जाहिर है कि वह बाद में जमीन पर आ गया। युद्ध आरम्भ होने के चन्द साल पहिले किशोर नेपियर एक 'प्राइवेट' के रूप में आया। किन्तु चूंकि वह तेज लड़का था, और सम्भवतः अपने परिवार के कारण भी, उसे सैण्डहर्स्ट के लिए छात्रवृत्ति मिल गई और बाद में कमीशनप्राप्त अफसर बन गया। युद्ध शुरू होने के महीने दो महीने बाद अपनी टुकड़ी (रेजीमेण्ट) के साथ उसे भारत भेज दिया गया। वह मध्यभारत के महू में रक्खा गया किन्तु स्पष्ट है कि अपने बन्धु-अफसरों से उसका मेल नही बैठा। वह अधिक गम्भीर तथा बौद्धिक व्यक्ति था और उसमें भारत, विशेषतः दीन वर्गो, के प्रति आकर्षण था। वह अफ़सरों के 'मेस' में जाने से बचता और दूसरी जगह बाजार में अपना समय बिताता जहां वह छोटे-छोटे दुकानदारों और मजदूरों से बातचीत करता। उसने हिन्दुस्तानी सीखने की कोशिश की। मै समझता हूं कि अपनी तनख्वाह का काफी अच्छा हिस्सा वह गरीबों में बांट देता था

अफसर-बन्धुओं ने इसे पसन्द नही किया। कमाण्डिग अफसर ने इसके बारे में उससे कहा और उन दोनों में काफी बहस हुई। वह अपने पेट की ओर से विशेषतः भारत मे नौकरी करने की ओर से, अधिकाधिक विरक्त रहने लगा। वह उसे छोड़ देना चाहता था किन्तु युद्धकाल में यह सम्भव न था। अन्त में उसने संलग्न रुक्का अपने सी० ओ० (कमाण्डिग अफसर) को दिया।

उसकी रेजीमेण्ट महू से झांसी को स्थानान्तरित कर दी गई। तब उसने अन्तिम निश्चय करने की सोची—फिर परिणाम कुछ ही क्यों न हो। उसने जाकर अपना यूनीफार्म—परिधान—बेच दिया। मुख्यतः तो यह अपने सैनिक जीवन को निश्चित रूप से समाप्त करने के लिए, और उससे कुछ पैसा भी खड़ा कर लेने के लिए, किया गया था। खास तौर से वह इसे पसन्द नही करता था कि उसे भारत से इंगलैण्ड भेज दिया जाय।

तब मुझसे सम्पर्क स्थापित करने के लिए उसने इलाहाबाद टेलीफोन किया। उसे मालूम हुआ कि मै बम्बई मे हूं। वहा से उसने मेरा पता भी ले लिया। सीधे बम्बई गया और स्टेशन से मेरी बहिन के घर पहुंच गया।

मेरे लिए यह एक नई स्थिति थी, और मैं पूर्णतः चकित रह गया। २५ साल के उस भयानक रूप मे सच्चे तरुण के प्रति मेरा हृदय उमड़ पडा किन्तु मैं यह समझ

नहीं सका कि मुझे क्या करना चाहिए। वम्वई आकर वह सेना से भाग खडा हुआ था—और वह भी युद्धकाल में। सैनिक कानून मे यह गम्भीरतम अपराध है और इसमे कोई सन्देह नही था कि एक-दो दिन मे वह गिरफ्तार कर लिया जायगा और उसका कोर्ट-मार्शल (फौजी न्यायालय के सामने मुकदमा) होगा। उससे मुझे पता चला कि दूसरे दिन उसे झासी पहुचकर अपनी उपस्थिति की रिपोर्ट देनी है। यदि वह अगली ट्रेन पकड ले, जो थोडी देर वाद ही छूटती थी, तो समय पर उसके झासी पहुचने की सम्भावना की जा सकती थी।

मैं नेपियर से और लम्बी वातचीत करना चाहता था किन्तु अव भी मैं नियोजन-समिति को काफी इन्तजार करवा चुका था। यदि उसे अगली ट्रेन से झासी जाना है तो दूसरा अवसर उसे नही मिलेगा। मैंने महसूस किया कि उसे वहा जाना ही चाहिए। भगोडेपन का आरोप लगाये जाने से अन्य परिणामो के अलावा मुख्य प्रश्न भी उलझ जाता। उसने सैनिक अधिकारियो पर अपनी स्थिति पूरेतौर पर स्पष्ट कर दी थी और उस सवाल पर वह उनका सामना कर सकता था तथा उनसे लड सकता था। अपनी निष्ठा और विश्वास की घोषणा के वाद, मैं मुश्किल से ही उसके ब्रिटिश सेना मे वने रहने की कल्पना कर सकता था किन्तु मैं यह भी नहीं देख पाता था कि वह उससे कैसे निकल सकता है। सेनाधिकारी ऐसी वातो की अनुमति नही देते। मैं इसका अनुमान नही कर सकता था कि उसका क्या होनेवाला है, किन्तु इतनी वात मेरे सामने साफ थी कि आगे उसके सामने कठिन समय आनेवाला है। कुछ भी हो मैंने महसूस किया कि इस सवाल को भगोडेपन के साथ मिश्रित नहीं करना चाहिए। इसलिए मैंने उसे सलाह दी कि दूसरी ट्रेन से उसे झासी चला जाना चाहिए और वहा अपने कमाण्डिग अफसर को आगमन की सूचना देनी चाहिए। मैंने उसे यह भी सुझाव दिया कि वहा उसे खादी कुर्त्ता और पायजामे मे अफसर के सामने नही जाना चाहिए। उसने कहा कि उसके पास शार्ट्स इत्यादि हैं और वह उन्हे पहन लेगा। मैंने पूछा कि क्या उसके पास काफी रकम है। उसने कहा, अपने मतलव भर के लिए उसके पास काफी है।

उसने मेरी सलाह मान ली और कहा कि वह लौटकर जा रहा है। मैंने उससे कहा कि यदि सम्भव हो तो मुझको या मेरी वहिन को पत्र भेजता रहे और मुझे सूचित करे कि आगे क्या हुआ। तव से मुझे उसकी कोई खवर नही मिली है। अव मुझे वताया गया है कि जो भी रेजीमेण्ट झासी भेजी जाती है, वह शीघ्र ही विदेश चली जाती है। अव मैं पता लगाने की कोशिश कर रहा हू कि नेपियर की रेजीमेण्ट का क्या हश्र हुआ। वहुत सम्भव है कि उसके विचारो के कारण और उसके भाग-कर चले जाने के कारण उसे गिरफ्तार करके रखा गया हो और वाहर समाचार

भेजने का मौका ही उसे न दिया गया हो और वाद में उसे भारत के वाहर भेज दिया गया हो।

उसका चेहरा मेरे सामने उभर आता है और मैं अक्सर सोचा करता हूं कि क्या मैंने उसे ठीक सलाह दी।

आपका स्नेहपात्र
जवाहरलाल

—अंग्रेजी। इलाहावाद, २।१०।१९४०। नेहरू संग्रहालय में सुरक्षित पत्रावली से।]
सौजन्य : श्रीमती इन्दिरा गांधी तथा नेहरू संग्रहालय।

६७. जवाहरलाल का तार : गांधीजी के नाम

१८।१०।४०

महात्मा गांधी
सेवाग्राम
वर्धा

प्रतापगढ़ को रवाना हो रहा हूं। वाद का कार्यक्रम—कल रायवरेली, २० सुलतानपुर, २१ फैजावाद, २२ वारावंकी, २३ लखनऊ, फिर इलाहावाद।

जवाहरलाल

—अंग्रेजी। इलाहावाद, १८।१०।१९४०। नेहरू संग्रहालय में सुरक्षित पत्रावली से।]
सौजन्य : श्रीमती इन्दिरा गांधी तथा नेहरू संग्रहालय।

६८. जवाहरलाल का तार : गांधीजी के नाम

२४।१०।४०

महात्मा गांधी
सेवाग्राम
वर्धा

आपका पत्र (मिला) सामान्यतः सहमत हूं।

जवाहरलाल

—अंग्रेजी। २४।१०।१९४०। नेहरू संग्रहालय में सुरक्षित पत्रावली से।]
सौजन्य : श्रीमती इन्दिरा गांधी तथा नेहरू संग्रहालय।

६९. जवाहरलाल का पत्र : गांधीजी के नाम

अक्तूबर २४, १९४०

मेरे प्यारे बापू,

मैं एक पत्र, जो मैं मौलाना को भेज रहा हूं, का प्रतिलिपि संलग्न करता हू। आपको याद होगा कि एक दिन आपने महमूद का हवाला दिया था। मैं नही जानता कि आपकी सूचना का स्रोत क्या था किन्तु कम-से-कम इस मामले मे तो मैं सोचता हू कि महमूद निन्दा के योग्य नही है।

आज यहां आने पर मुझे आपका दिनाक २१ अक्तूबर का पत्र मिला। उसके उत्तर मे मैंने आपको एक सक्षिप्त तार भेजा है। निश्चय ही एक तार मे कोई बात साफ व्यक्त करना कठिन ही है। मेरा दिमाग इस बात मे किसी तरह साफ नही है कि भविष्य क्या होने वाला है। मैं भारत की समस्या को उसके वृहद् विश्व-पार्श्व-भूमि पर रखकर अधिकाधिक देखने लगा हू। स्वभावत. राजनीति की दृष्टि से मैं उसके बारे मे सोचता हू। मैं सोचता हू कि आपकी योजना मे महती सम्भावनाए हैं इसलिए मैं पसन्द करता हू कि वह आगे बढ़े और जहा तक मैं कर सकता हू, उसमे मदद करू। किन्तु ठीक-ठीक यह न जानने के कारण कि आप उसे किस प्रकार विकसित करना चाहते हैं, मैं कुछ उलझन का अनुभव करता हू।

मैं नही जानता कि आप ससार के आध्यात्मिक नेता (यही पद आपने प्रयोग किया है) किन्हे समझते हैं किन्तु यदि वे सगठित धर्मो या धार्मिक समूहो के नेता हैं, तो मुझे पूरा यकीन है कि वे निराशाजनक वर्ग हैं। वह सामान्य मानव ही है जो अन्त मे कुछ अन्तर डाल सकेगा और उस तक पहुच ऐसी होनी चाहिए कि वह उसे समझ सके। यदि वह पहुच या राह उसकी शक्ति या समझ के बिल्कुल परे है तो वह निष्फल हो जायगी। मैं समझता हू कि युद्ध की विभीषिका एक प्रबल प्रतिक्रिया उत्पन्न करने को विवश है। किन्तु यह प्रतिक्रिया आयेगी तभी, जब उससे निकलने का कोई रास्ता, जो वैयक्तिक एवं राष्ट्रीय स्वाधीनता की सुरक्षा का आश्वासन (गारण्टी) दे, खोज लिया जायगा। इस गारण्टी के बिना अहिंसा लोगो के दिमाग मे गुलामी और भाग्य के प्रति कन्धा डालने के अर्थ मे आती है। यह तर्क भारत पर भी लागू होता है। हमे अपने देशवासियो मे एक छलना-पूर्ण वातावरण मिला है, इसके साथ उनमे भविष्य तथा इसके बारे मे उलझन भी है कि उन्हें क्या करना चाहिए।

मुझे मगल सिह का पत्र मिल गया है। मैं नही जानता कि आप इसके सम्बन्ध मे मुझसे क्या करने की आशा रखते है। वह जो कुछ कहता है उसके सच फलि-

तार्थों को मैं समझता हूं। मंगलसिंह बहुत ज्यादा विश्वसनीय आदमी नहीं है, फिर भी मैं समझता हूं कि इस मामले के बारे में मुख्य रूप में उसकी बात सही है। मैं सिखों और कांग्रेस विषय पर अखबारों के लिए एक लेख लिख रहा हूं। यह काफ़ी साफ वक्तव्य होगा।

सुलतानपुर जिले के अपने दौरे में मुझे युद्ध-कोष के लिए बलात् चन्दा वसूल करने की बहुसंख्यक शिकायतें प्राप्त हुईं। इसके बारे में मैं एक पत्र संलग्न करता हूं। जांच करने पर मैंने इसे पूर्णतः ठीक पाया। मेरे पास कोढ़ियों ने आकर शिकायत की कि स्कूल के अधिकारियों द्वारा उनमें से हर एक से युद्धकोष के लिए पाठ्य-शुल्क के साथ जबर्दस्ती एक आना मासिक वसूल किया गया—उनके विरोध के बावजूद। इन बच्चों को इस प्रकार चन्दा देने को मजबूर करना मुझे खास तौर से नीच कृत्य लगता है।

आपका स्नेहपात्र

ज० ला०

महात्मा गांधी

सेवाग्राम

वर्धा (सी० पी०)

—अंग्रेजी। इलाहाबाद, २४।१०।१९४०। नेहरू संग्रहालय में सुरक्षित पत्रावली से।]

सौजन्य : श्रीमती इन्दिरा गांधी तथा नेहरू संग्रहालय।

७०. जवाहरलाल का तार : गांधीजी के नाम

४ दिसम्बर, १९४१

महात्मा गांधी

वर्धा

अभी पहुंचा हूं। कल सुबह दो दिन के लिए लखनऊ लौट रहा हूं। फिर इलाहाबाद। भविष्य मौलाना और आपके आदेश पर निर्भर है। समझता हूं आपका बारडोली जाना लम्बी यात्रा का कारण नहीं होगा।

मौलाना तथा दूसरों को प्यार।

जवाहर

—अंग्रेजी। ४।१२।१९४१। नेहरू संग्रहालय में सुरक्षित पत्रावली से।]

सौजन्य : श्रीमती इन्दिरा गांधी तथा नेहरू संग्रहालय।

७१. जवाहरलाल का पत्र : गांधीजी के नाम

आनन्द भवन,
इलाहाबाद, दिसम्बर १०।१९४१

मेरे प्यारे बापू,

मुझे लखनऊ मे विलम्ब हो गया और आज सुबह ही मैं यहा लौटा हू, तब आपका ५ दिसम्बर का पत्र मिला है।

जैसा कि मैंने आपको लिखा था, मौलाना से मिलने एक दिन के लिए मैं कलकत्ता जाना चाहता था किन्तु उन्होंने मुझे कह दिया कि वह बारडोली जाते हुए खुद ही यहा आना और मेरे साथ एक दिन बिताना चाहते हैं। इसलिए मैं कलकत्ता नही जाऊगा। मैं नही जानता कि वह यहा कब आ रहे हैं, मैं तो चाहता हू कि वह जल्दी आयें जिसमे हम दोनो कार्यसमिति की बैठक की वास्तविक तिथि से दो दिन पूर्व बारडोली पहुच सकें। सम्भवत हम बम्बई होते हुए जायगे। ज्योही मौलाना से मुझे निश्चित खबर मिली मैं आपको सूचित करूगा। सम्भावना है कि इन्दु भी मेरे साथ बारडोली आये।

आपका स्नेहपात्र
ज० ला०

महात्मा गाधी, बारडोली (जिला सूरत)

—अंग्रेजी। इलाहाबाद, १०।१२।१९४१। नेहरू संग्रहालय में सुरक्षित पत्रावली से।]

सौजन्य : श्रीमती इन्दिरा गांधी तथा नेहरू संग्रहालय।

७२. जवाहरलाल का पत्र : गांधीजी के नाम

जनवरी ५, १९४२

मेरे प्यारे बापू,

मैं पिछली रात यहा पहुच गया। बारडोली मे हुई घटनाओ ने दूसरो की भाति मुझे भी स्वभावत. उग्रतापूर्वक सोचने को विवश किया है। मैं सच्चाई के साथ यह आशा करता हू कि हमारे वर्धा मे मिलने तक ऐसा सन्तोषजनक रास्ता निकल आयेगा जिससे आपको और दूसरो को भी खुशी हो। यह बड़ा दुर्भाग्य होगा कि इस खतरनाक अवसर पर कोई ऐसी बात हो, जिससे जन-मानस मे कोई उलझन या भ्रान्ति पैदा हो। मैं ११ की सध्या को वर्धा पहुचने और दूसरे दिन आश्रम मे उपस्थित होने की आशा करता हू।

मैं चाहता हूं कि वर्धा से वनारस की अपनी यात्रा का कार्यक्रम वनाने में आप चन्द घण्टे के लिए इलाहावाद में अपनी यात्रा भंग करने और वहां से ज्यादा सुविधा-जनक ट्रेन पकड़ने के औचित्य पर विचार करें। इससे आप एक रात के कष्ट और रात के बड़े ही असुविधाजनक समय पर वनारस पहुंचने से वच जायेंगे। यह इलाहा-वाद में आपको किसी प्रकार का कष्ट देने के विचार से नहीं कह रहा हूं,—वहां चन्द आदमियों को ही यह वात जानने की जरूरत है,—वल्कि पूर्णतः आपके आराम और सुविधा की दृष्टि से कह रहा हूं। सम्भवतः मैं भी आपके साथ ही वर्धा से यात्रा करूंगा क्योंकि मेरा भी वनारस जाने का विचार है।

इन्दु बम्बई में है और सम्भवतः वह भी लगभग उसी समय वर्धा पहुंचेगी जव मैं पहुंचूगा।

आपका स्नेहपात्र
ज० ला०

महात्मा गांधी
स्वराज्य आश्रम, वारडोली

[—अंग्रेजी। इलाहावाद, ५।१।१९४२। नेहरू संग्रहालय में सुरक्षित पत्रावली से।]
सौजन्य : श्रीमती इन्दिरा गांधी तथा नेहरू संग्रहालय।

७३. पुरुषोत्तमदास टण्डन का पत्र : गांधीजी के नाम

१० क्रास्थवेट रोड, इलाहावाद
८-६-४५

पूज्य बापू जी, प्रणाम।

आपका २८ मई का पत्र मुझे मिला। हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन और हिन्दुस्थानी-प्रचार-सभा के कामों में कोई मौलिक विरोध मेरे विचार में नहीं है। आपको स्वयं हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन का सदस्य रहते हुए लगभग २७ वर्ष हो गये। इस वीच आपने 'हिन्दी-प्रचार का काम राष्ट्रीयता की दृष्टि से किया। वह सव काम गलत था, ऐसा तो आप नहीं मानते होंगे। राष्ट्रीय दृष्टि से हिन्दी का प्रचार वाञ्छनीय है, यह तो आपका सिद्धान्त है ही। आपके नये दृष्टिकोण के अनुसार उर्दू-शिक्षण का भी प्रचार होना चाहिए। यह पहले काम से भिन्न एक नया काम है, जिसका पिछले काम से कोई विरोध नहीं है।

सम्मेलन हिन्दी को राष्ट्रभाषा मानता है। उर्दू को वह हिन्दी की एक शैली मानता है, जो विशिष्ट जनों में प्रचलित है।

वह स्वयं हिन्दी की साधारण शैली का काम करता है, उर्दू शैली का नही। आप हिन्दी के साथ उर्दू को भी चलाते हैं। सम्मेलन उसका तनिक भी विरोध नही करता। किन्तु राष्ट्रीय कामो मे अंग्रेजी को हटाने मे वह उसकी सहायता का स्वागत करता है। भेद केवल इतना है कि आप दोनो चलाना चाहते हैं। सम्मेलन आरम्भ से केवल हिन्दी चलाता आया है। हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन के सदस्यो को हिन्दुस्तानी प्रचार-सभा के सदस्य होने मे रोक नही है। हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन की ओर से निर्वाचित प्रतिनिधि हिन्दुस्तानी एकेडेमी के सदस्य हैं, और हिन्दुस्तानी एकेडेमी हिन्दी और उर्दू दोनो शैलिया और लिपिया चलाती हैं। इस दृष्टि से मेरा निवेदन है कि मुझे इस वात का कोई अवसर नही लगता कि आप सम्मेलन छोडें।

एक वात इस सम्बन्ध मे और भी है। यदि आप हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन के अव तक सदस्य न होते, तो सम्भवत. आपके लिए यह ठीक होता कि आप हिन्दुस्तानी-प्रचार-सभा का काम करते हुए हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन मे आने की आवश्यकता न देखते। परन्तु जव आप इतने समय से सम्मेलन मे है, तव उसे छोडना उसी दशा मे उचित हो सकता है, जव निश्चित रीति से उसका काम आपके नये कामो के प्रतिकूल हो। यदि आपने अपने पहले काम को रखते हुए उसमे एक शाखा वढाई है, तो विरोध की कोई वात नही है।

मुझे जो वात उचित लगी, ऊपर निवेदन की। किन्तु यदि आप मेरे दृष्टिकोण से सहमत नही हैं, और आपका आत्मा यही कहता है कि सम्मेलन से अलग हो जाऊ, तो आपके अलग होने की वात पर वहुत दु:ख होते भी नतमस्तक हो आपके निर्णय को स्वीकार करूगा।

हाल मे हिन्दी और उर्दू के विषय मे एक वक्तव्य मैंने दिया था उसकी एक प्रतिलिपि सेवा मे भेजता हू। निवेदन है कि उसे पढ लीजियेगा।

विनीत,

पुरुषोत्तमदास टण्डन

पुन :—इस समय न केवल आप किन्तु हिन्दुस्तानी-प्रचार-सभा के मन्त्री श्रीमन्नारायण जी तथा कई अन्य सदस्य सम्मेलन की राष्ट्रभाषा-प्रचार-समिति के सदस्य हैं। एक स्पष्ट लाभ इसमे यह है कि राष्ट्रभाषा-प्रचार-समिति और हिन्दुस्तानी-प्रचार-सभा के कामो मे विरोध न हो सकेगा। कुछ मतभेद होते हुए भी साथ काम करना हमारे नियन्त्रण का अग होना उचित है।

पु० दा० टण्डन

—हिन्दी। इलाहावाद, ८।६।१९४५।]

७४. पुरुषोत्तमदास टण्डन का पत्र : गांधीजी के नाम

१०, क्रास्थवेट रोड, इलाहावाद
११-७-४५

पूज्य वापूजी, प्रणाम।

आपका पंचगनी से लिखा हुआ १३ जून का पत्र मिला था। उसके तुरन्त वाद ही राजनीतिक परिवर्तनों और पंचगनी से हटने की वात सामने आई। मेरे मन में यह आया कि राजनीतिक कामों की भीड़ से थोड़ी सुविधा जव आपके पास देखूं तव मैं लिखूं। आज ही सवेरे मेरे मन में आया कि इस समय आपको कुछ सुविधा होगी। उसके वाद श्री प्यारेलाल जी का ६ तारीख का पत्र आज ही मिला, जिसमें उन्होंने सूचना दी है कि आप मेरे उत्तर की राह देख रहे है।

आपने अपने २८ मई के पत्र में मुझसे पूछा था कि मैं कैसे हिन्दी-सहित्य-सम्मेलन में रह सकता हूं, और हिन्दुस्तानी-प्रचार-सभा में भी ? इस प्रश्न का उत्तर मैंने अपने ८ जून के पत्र में आपको दिया है। मेरी वुद्धि में जो काम हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन कर रहा है, उससे आपके अगले काम का कोई विरोध नही होता। इस १३ जून के पत्र में आपने एक दूसरे विषय की चर्चा की है; आपने लिखा है कि आप और सव हिन्दी-प्रेमी मेरे नये दृष्टिकोण का स्वागत करें और मुझे मदद करें। मैंने मौखिक रीति से आपको स्पष्ट करने का यत्न किया था, और जिस वक्तव्य की नकल मैंने आपको भेजी थी, उसमें भी मैंने स्पष्ट किया है कि मैं आपके इस विचार से कि प्रत्येक देशवासी हिन्दी और उर्दू दोनों सीखें, सहमत नही हो पाता। मेरी वुद्धि स्वीकार नही करती कि आपका यह नया कार्यक्रम व्यावहारिक है। मुझे तो दिखाई देता है कि वंगाली, मराठी, उड़िया आदि वोलनेवाले इस कार्यक्रम को स्वीकार नही करेंगे।

हिन्दी और उर्दू का सम्मेलन हो, इस सिद्धान्त में पूरी तरह से मैं आपके साथ हूं। किन्तु यह समन्वय, जैसा मैंने आपसे वम्वई में निवेदन किया था और जैसा मैंने वक्तव्य मे लिखा है, तव ही सम्भव है, जव हिन्दी और उर्दू के लेखक और उनकी सस्थाएं इस प्रश्न में श्रद्धा दिखायें। मैंने इस प्रश्न को प्रयाग में प्रान्तीय हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन के सामने, थोड़े दिन हुए रक्खा था। मेरे अनुरोध से वहां यह निश्चय हुआ है कि इस प्रकार के समन्वय का हिन्दी वाले स्वागत करेंगे। आवश्यकता इस वात की है कि उर्दू की सस्थाएं भी इस समन्वय के सिद्धान्त को स्वीकार करें। उर्दू के लेखक न चाहें और आप हम समन्वय कर लें, यह असम्भव है। इस काम के करने का क्रम यही हो सकता है कि हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन, नागरी-प्रचा-

रिणीसभा, काशी विद्यापीठ, अजुमन-ए-तरक्की-ए-उर्दू, जामिया मिल्लिया तथा इस प्रकार की दो-एक अन्य सस्थाओ के प्रतिनिधियो से निजी वात की जाय, और यदि उनके संचालको का रुझान समन्वय की ओर हो, तो उनके प्रतिनिधियो की एक वैठक की जाय और इस प्रश्न के विविध पहलुओ पर विचार हो। भापा और लिपि दोनो ही के समन्वय का प्रश्न है, क्योकि अनुभव से दिखाई पड रहा है कि साधारण कामो मे तो हम एक भाषा चलाकर दो लिपि मे उसे लिख लें, किन्तु गहरे और साहित्यिक कामो में एक भाषा और दो लिपि का सिद्धान्त चलेगा नही। भापा का स्थायी समन्वय तभी होगा, जव हम देश के लिए एक साधारण लिपि का विकास कर सके। काम वहुत वडा अवश्य है, किन्तु राष्ट्रीयता की दृष्टि से स्पष्ट ही वहुत महत्व का है।

मेरे सामने यह प्रश्न १९२० से रहा है, किन्तु यह देखकर कि उसके उठाने के लिए जो राजनीतिक वायुमण्डल होना चाहिये, वह नही है, मैं उसमे नही पडा, और केवल राष्ट्रभाषा के हिन्दी रूप की ओर मैंने ध्यान दिया—यह समझकर कि इसके द्वारा प्रान्तीय भापाओ को हम एक राष्ट्रभाषा की ओर लगा सकेंगे। मैं स्वीकार करता हू कि पूर्ण काम तभी कहा जा सकता है कि जव हम उर्दूवालो को भी अपने साथ ले सकें। किन्तु उस काम को व्यावहारिक न देखकर देश की अन्य भापा-भाषी बडी जनता को हिन्दी के पक्ष मे करना, एक वहुत वडा काम राष्ट्रीयता के उत्थान मे कर लेना है। अस्तु, इस दृष्टि से मैंने काम किया है। उर्दू के विरोध का तो मेरे सामने प्रश्न हो ही नही सकता। मैं तो उर्दूवालो को भी उसी भापा की ओर खीचना चाहूगा, जिसे मैं राष्ट्रभापा कहू। और उसे खीचने की प्रक्रिया मे स्वभावत उर्दूवालों का मत लेकर भापा के स्वरूप-परिवर्तन मे भी वहुत दूर तक निश्चित सिद्धान्तो के आधार पर जाने को तैयार हू। किन्तु जवतक वह काम नही होता, तवतक इसी से सन्तोप करता हू कि हिन्दी-द्वारा राष्ट्र के वहुत वडे अशो मे एकता स्थापित हो।

आपने जिस प्रकार से काम उठाया है, वह ऊपर मेरे निवेदन किये हुए क्रम मे विल्कुल अलग है। मैं उसका विरोध नही करता, किन्तु उसे अपना काम नही वना सकता।

आपने गुजरात के लोगो के मन मे दुविधा पैदा होने की वात लिखी है। यदि ऐसा है तो आप कृपया विचार करें कि इसका कारण क्या है? मुझे तो यह दिखाई देता है कि गुजरात के लोगो (तथा अन्य प्रान्तो के लोगो) के दिमाग मे दोनो लिपियो के सीखने का सिद्धान्त घुस नही रहा है। किन्तु आपका व्यक्तित्व इस प्रकार का है कि जव आप कोई वात कहते है, तो स्वभावत इच्छा होती है कि उसकी पूर्ति की जाय। मेरी भी तो ऐसी ही इच्छा होती है किन्तु वुद्धि आपके वताये मार्ग का निरीक्षण करती है, और उसे स्वीकार नही करती।

आपने पेरीन बहिन के बारे में लिखा है। यह सच है कि वे दोनों काम करना चाहती हैं। उसमें तो कोई बाधा नही है। राष्ट्रभाषा-प्रचार-समिति और हिन्दुस्तानी-प्रचार-सभा के कार्यकर्ताओं में विरोध न हो और वे एक-दूसरे के कामों को उदारता से देखें, इसमे एक बात सहायक होगी कि हिन्दुस्तानी-प्रचार-सभा और राष्ट्रभाषा-प्रचार-समिति का काम अलग-अलग संस्थाओं द्वारा हो, एक ही संस्था द्वारा न चले। एक के सदस्य दूसरे के सदस्य हों, किन्तु एक ही पदाधिकारी दोनों संस्थाओ के होने से व्यावहारिक कठिनाइयां और बुद्धिभेद होगा। इसलिए पदाधिकारी अलग-अलग हों। आपको याद दिलाता हूं कि इस सिद्धान्त पर आपसे सन् ४२ में मेरी बातें हुई थीं। जब हिन्दुस्तानी-प्रचार-सभा बनने लगी, उसी समय मैंने निवेदन किया था कि राष्ट्रभाषा-प्रचार-समिति का मन्त्री और हिन्दुस्तानी-प्रचार-सभा का मन्त्री एक होना उचित नही। आपने इसे स्वीकार भी किया था। और जब आपने श्रीमन्नारायण जी के लिए हिन्दुस्तानी-प्रचार सभा का मन्त्री बनना आवश्यक बताया, तब ही आपकी सम्मति से यह निश्चय हुआ था कि कोई दूसरा व्यक्ति राष्ट्रभाषा-प्रचार-समिति के मन्त्रिपद के लिए भेजा जाय। और उसके कुछ दिन बाद आनन्द कौसल्यायनजी भेजे गये थे। यही सिद्धान्त पैरीन बहिन के लिए लागू है। जिस प्रकार श्रीमन्नारायणजी हिन्दुस्तानी-प्रचार-सभा के मन्त्री होते हुए राष्ट्रभाषा-प्रचार-समिति के स्तम्भ रहे हैं, उसी प्रकार पैरीन बहन दोनों संस्थाओ मे से एक की मन्त्रिणी हों, और दूसरी में खुलकर काम करें। इसमें तो कोई कठिनाई नही है। यही सिद्धान्त सब प्रान्तों के सम्बन्ध में लगेगा। सम्भवतः श्रीमन्नारायणजी उन सब स्थानों में, जहां राष्ट्रभाषा-प्रचार-समिति का काम हो रहा है, हिन्दुस्तानी-प्रचार-सभा की शाखाएं खोलने का प्रयत्न करेंगे। उन्होंने राष्ट्रभाषा-प्रचार-समिति के कुछ पदाधिकारियों से हिन्दुस्तानी-प्रचार-सभा का काम करने के लिए पत्र-व्यवहार भी किया है। आपस में विरोध न हो, इसके लिए यह मार्ग उचित है कि दोनों संस्थाओं की शाखाएं अलग-अलग हों, और उनके मुख्य पदाधिकारी अलग हों। साथ ही, मेल और समझौता रखने के लिए दोनों की सदस्यता सबके लिए खुली रहे। यह तो मेरी बुद्धि में ऐसा काम है जिसका स्वागत होना चाहिए।

आपने मेरे वक्तव्य को पढ़ने की कृपा की, और उससे आपने यह परिणाम निकाला कि हिन्दुस्तानी-प्रचार-सभा बिलकुल मेरा ही काम करेगी, और मुझे उसका सदस्य होना चाहिए। आपने यह भी लिखा कि आपने मुझे सदस्य होने के लिए कहा था। किन्तु मैंने यह कह कर इन्कार किया कि जबतक अब्दुलहक साहब उसके सदस्य न बनेंगे, मैं भी बाहर रहूंगा। यह सच है कि मैं हिन्दुस्तानी-प्रचार-

सभा का सदस्य नही वना हू। इस सम्वन्ध मे सन् ४२ मे काका कालेलकर जी ने मुझसे कहा था और हाल मे डा० ताराचन्द ने। आपने बम्वई पचगनी जाने से पहले एक लिफाफा मे दो पत्र मुझे भेजे थे। उनमे से एक मे आपने इस विषय मे लिखा था। किन्तु मुझे विल्कुल स्मरण नही है कि कभी आपने मौखिक रीति से मुझको हिन्दुस्तानी-प्रचार-सभा का सदस्य वनने के लिए कहा हो, और मैंने अव्दुलहक साहव का हवाला देकर इनकार किया हो। मुझे लगता है कि आपने एक सुनी हुई वात को अपने सामने हुई वात मे, स्मृतिभ्रम से, परिणत कर दिया है। सन् ४२ मे काका जी ने जव चर्चा की उस समय मैंने उनसे मौलवी अव्दुलहक तथा उर्दूवालो को लाने की वात अवश्य कही थी। तात्पर्य वही था जो आज भी है, अर्थात् यह कि जवतक उर्दू और हिन्दी के लेखक हिन्दी और उर्दू के समन्वय मे शरीक नही होते तवतक यह प्रश्न हल नही हो सकता। हिन्दुस्तानी-प्रचार-सभा यदि उस काम मे कुछ भी सफलता प्राप्त करेगी, तो वह अवश्य मेरे धन्यवाद की पात्री होगी। आज तो हिन्दुस्तानी-प्रचार-सभा मे शामिल होने मे मेरी कठिनता इसलिए वढ गई है कि वह हिन्दी और उर्दू को मिलाने के अतिरिक्त हिन्दी और उर्दू दोनो शैलियो और लिपियो को अलग-अलग प्रत्येक देशवासी को सिखाने की वात करती है।

यह तो मैंने आपके पत्र की वातो का उत्तर दिया। मेरा निवेदन है कि इन वातो से यह परिणाम नही निकलता कि आप अथवा हिन्दुस्तानी-प्रचार-सभा के अन्य सदस्य सम्मेलन से अलग हो। सम्मेलन हृदय से आप सवो को अपने भीतर रखना चाहता है। आपके रहने से वह अपना गौरव समझता है। आप आज जो काम करना चाहते हैं, वह सम्मेलन का अपना काम नही है। किन्तु सम्मेलन जितना करता है, वह आपका काम है। आप उससे अलग जो करना चाहते हैं, उसे सम्मेलन मे रहते हुए भी स्वतन्त्रतापूर्वक कर सकते हैं।

विनीत

पुरुषोत्तमदास टण्डन

—हिन्दी। इलाहावाद, ११।७।१९४५]

७५. पुरुषोत्तमदास टण्डन का पत्र : गांधीजी के नाम

१०, क्रास्थवेटरोड, इलाहावाद
२।८।४५

पूज्य वापू जी, प्रणाम,

आपका १५ जुलाई का पत्र मिला। मैं आपकी आज्ञा के अनुसार खेद के साथ आपका पत्र स्थायी समिति के सामने रख दूंगा। मुझे तो जो निवेदन करना था, अपने पिछले दो पत्रो मे कर चुका।

आपके पत्र के साथ भाई किशोरलाल मशरूवाला जी का पत्र मिला है। उनको मैं अलग उत्तर लिख रहा हूं। वह इसके साथ है। कृपया उन्हें दे दीजिएगा।

विनीत

पुरुषोत्तमदास टण्डन

—हिन्दी। इलाहाबाद, २।८।१९४५]

७६. जवाहरलाल का पत्र : गांधीजी के नाम

२१ एकमान रोड

लाहौर

अगस्त २७, १९४५

मेरे प्यारे बापू,

मैं कृष्ण मेनन के पास से आये हुए पत्र की प्रतिलिपि संलग्न कर रहा हूं जिसमें आपको दिलचस्पी हो सकती है। मैं इसे वल्लभ भाई को भेजना चाहता था किन्तु मुझे ठीक पता नहीं कि वह कहां हैं। शायद आप इसे उनको दिखा सकें।

मैं कुछ दिनों से सीमाप्रान्त और पंजाब के मामलों में फँसा रहा हूं और मुझे काफ़ी समय तक कोई समाचारपत्र देखने का भी अवसर नहीं मिला है। इस तरह मैं वक्त से बहुत पिछड़ गया हूं। क्या मैं आपको सुझाव दे सकता हूं कि आप बादशाह खां[1] को एक पंक्ति लिखकर कहें कि वह भारतीय कांग्रेस कमिटी की अगली बैठक में उपस्थित हों। मैं विश्वास करता हूं कि मौलाना[2] उन्हें निमन्त्रित कर रहे हैं।

आपका स्नेहपात्र

ज० ला०

महात्मा गांधी

पूना

—अंग्रेजी। लाहौर, २७।८।१९४५। नेहरू संग्रहालय में सुरक्षित पत्रावली से।]
सौजन्य : श्रीमती इन्दिरा गांधी तथा नेहरू संग्रहालय।

---

१. खां अब्दुलगफ्फार खां।

२. मौलाना अबुलकलाम आजाद।

७७. जवाहरलाल का पत्र : गांधीजी के नाम

आनन्द भवन
इलाहाबाद, अक्तूबर ९, १९४५

मेरे प्यारे बापू,

लखनऊ से लौटने के बाद, आज मुझे आपका पांचवी अक्तूबर का पत्र मिला। मुझे खुशी है कि आपने मुझे पूरी तौर पर लिखा और मैं कुछ विस्तार के साथ जवाब देने की कोशिश करूगा, किन्तु मैं आशा करता हूं कि यदि इसमे कुछ देर होगी, तो आप मुझे क्षमा कर देंगे, क्योकि इस समय मैं चुस्ती के साथ फिट होनेवाले कार्यो मे बँधा हुआ हू। मैं यहा सिर्फ डेढ दिन के लिए हू। अनौपचारिक वार्ता करना सचमुच ज्यादा अच्छा है किन्तु इस समय मैं नही जानता कि कब उसके लायक हो सकूगा। मैं कोशिश करूगा।

यदि सक्षेप मे कहू तो मेरा विचार यह है कि हमारे सामने जो सवाल है वह सत्य बनाम असत्य या हिंसा बनाम अहिंसा का नही है। एक आदमी मान लेता है, जैसा कि उसे मानना ही चाहिए कि सच्चे सहयोग और शान्तिपूर्ण साधन को ही लक्ष्य बनाना चाहिए और ऐसा समाज निश्चित रूप से साध्य होना चाहिए जो इन चीजो को प्रोत्साहित करे। सारा सवाल यह है कि ऐसा समाज कैसे सिद्ध किया जाय और उसके विषय क्या होने चाहिए। मैं यह नही समझ पाता कि क्यो एक ग्राम मे आवश्यक रूप से सत्य एव अहिंसा मूर्त्त होनी चाहिए। औसत रूप से कहा जाय तो गाव बौद्धिक एव सास्कृतिक दृष्टि से पिछडा होता है और पिछडे हुए वातावरण मे कोई प्रगति नही की जा सकती। सकुचित मानसवाले लोगो के कहीं अधिक असत्यमय एव हिंसक होने की सम्भावना की जाती है।

फिर हमे कुछ और भी लक्ष्य रखने होंगे—जैसे भोजन की पर्याप्तता, वस्त्र, आवास, शिक्षण, सफाई इत्यादि जो देश तथा प्रत्येक व्यक्ति के लिए लघुत्तम आवश्यकता की चीजें होनी चाहिए। इन लक्ष्यो को सामने रखकर ही हमे खास तौर से पता लगाना चाहिए कि उन्हे शीघ्रतापूर्वक कैसे प्राप्त किया जा सकता है। फिर मुझे यह भी अपरिहार्य मालूम पडता है कि यातायात के आधुनिक साधन तथा और भी कितने ही आधुनिक विकास-प्रक्रियाए जारी रहनी तथा विकसित की जानी चाहिए। यदि ऐसी बात है तो अनिवार्य रूप से भारी उद्योगो की आवश्यकता रहती है। विशुद्ध ग्राम-समाज मे वह कहा तक फिट होगा? व्यक्तिगत रूप से मेरी आशा है कि जहा तक सम्भव हो भारी तथा हलके दोनो प्रकार के उद्योगो का विकेन्द्रीकरण होना चाहिए और विद्युत्-शक्ति के विकास के कारण अब ऐसा करना सम्भव है।

यदि देश में दो प्रकार की अर्थ-व्यवस्था रहती है तो या तो दोनों के बीच संघर्ष होगा या एक दूसरे पर सवार हो जायगी।

स्वतन्त्रता तथा विदेशी आक्रमण से सुरक्षा, राजनीतिक तथा आर्थिक दोनों, पर भी इस पृष्ठभूमि को सामने रखकर विचार करना होगा। मैं नही समझता कि भारत के लिए तबतक यथार्थ रूप से स्वतन्त्र होना सम्भव है जबतक कि वह यन्त्र-प्रविधि की दृष्टि से प्रगतिशील देश न बन जाय। इस क्षण मैं केवल सेनाओं के अर्थ में यह बात नही सोच रहा हूं, बल्कि वैज्ञानिक विकास के अर्थ में सोच रहा हूं। संसार की वर्तमान परिस्थिति में हम तबतक सांस्कृतिक दृष्टि से भी प्रगति नही कर सकते जबतक कि प्रत्येक क्षेत्र में वैज्ञानिक अन्वेषण की एक शक्तिमती पृष्ठभूमि न हो। आज दुनिया में व्यक्तियों तथा समूहों और राष्ट्रों में एक प्रबल ग्रहणशील, अधिकारशील प्रवृत्ति है जो संघर्ष और युद्ध को जन्म देती है। न्यूनाधिक हमारा सम्पूर्ण समाज इस पर आधारित है। इस आधार को जाना ही होगा और इकलेपन की जगह जो असम्भव है, उसे सहयोग में रूपान्तरित होना होगा। यदि इसे मान लिया जाता है और ठीक पाया जाता है, तो उसे एक ऐसी अर्थ-व्यवस्था के अर्थ में सिद्ध करने का प्रयत्न करना होगा जो शेष दुनिया से कटकर न रह गई हो बल्कि ऐसी हो जो सहकार करती हो। आर्थिक या राजनीतिक दृष्टिकोण से अलग-अलग भारत एक ऐसा शून्य या रिक्त स्थान बन जायगा जो दूसरों की अधिकार करने की प्रवृत्तियों को बढ़ाता है और इस प्रकार संघर्ष पैदा करता है।

लक्ष-लक्ष आदमियों के लिए महलों का तो कोई सवाल नही है किन्तु कोई कारण नही दिखाई पड़ता कि लाखों-करोड़ों के पास आरामदेह आधुनिक गृह क्यों न हों जहां रहकर वे एक सांस्कृतिक जीवन बिता सकें। आज जरूरत से ज्यादा बढ़ गये वर्त्तमान नगरों में ऐसी बुराइयां बढ़ गई है जो निन्दनीय हैं। सम्भवतः हमें इस अतिवृद्धि को निरुत्साहित करना होगा और साथ ही गांव को नगर की संस्कृति के निकट पहुंचने को प्रोत्साहित करना होगा।

इस बात को बहुत साल हो गये हैं जब मैने "हिन्द स्वराज' पढा था और मेरे दिमाग़ में उसका सिर्फ़ एक धुंधला अस्पष्ट-चित्र है। किन्तु जब मैंने उसे २० या उससे भी ज्यादा साल पहिले पढ़ा था तो मुझे वह पूर्णतः अवास्तविक लगा था। तब से आपकी रचनाओं और भाषणों मे मैंने ऐसा बहुत कुछ पाया जो मुझे पुरानी स्थिति से आगे बढ़ना और आधुनिक धाराओं की प्रशंसा-सा लगा। इसलिए जब आपने हमसे कहा कि आपके दिमाग़ में पुरानी तस्वीर अब भी ज्यों-की-त्यों है तो मुझे आश्चर्य हुआ। जैसा कि आप जानते है कांग्रेस ने ग्रहण करना तो दूर उस तस्वीर पर कभी विचार नही किया। आपने खुद भी उससे इसके अपेक्षाकृत चन्द

मामूली पहलुओ के अलावा इसे ग्रहण करने को नही कहा। इसका फैसला तो आप ही कर सकते हैं कि विविध जीवन-दर्शनो से सम्बद्ध इन आधारभूत प्रश्नो पर विचार करना काग्रेस के लिए कहा तक वाञ्छनीय है। मैं तो यही कल्पना करता हू कि काग्रेस जैसी सस्था को ऐसी बातो पर तर्क और बहस मे अपने को नही खोना चाहिए क्योकि इससे लोगो के दिमाग मे बडी भ्रान्ति और उलझन पैदा होगी जिसका परिणाम वर्तमान समय मे काम करने की अक्षमता होगा। इससे देश मे काग्रेस तथा दूसरो के बीच भी बाडे और खाइया पैदा हो सकती हैं। आखिरकार तो इस तथा दूसरे प्रश्नो का निर्णय स्वतन्त्र भारत के प्रतिनिधि करेंगे ही। मुझे ऐसा महसूस होता है इनमे से अधिकाश प्रश्नो पर सुदूर अतीत के अर्थ मे विचार और बहस की जाती है, और पिछली पीढी मे या उससे अधिक पीढियो मे सारी दुनिया मे जो व्यापक परिवर्तन हुए हैं उनको भुला दिया जाता है। ३८ साल हो गये जब 'हिन्द स्वराज' लिखा गया था। तब से दुनिया बिल्कुल बदल गई है—सम्भवत. गलत दिशा मे बदली है। किन्तु किसी भी हालत मे, इन सवालो पर कोई विचार करते समय हमे वर्तमान तथ्यो, शक्तियो तथा हमारे पास आज जो मानवीय सामग्री है, उसका ध्यान रखना ही पडेगा, नही तो वह यथार्थ से, वास्तविकता से रहित होगा। आपका यह कहना सत्य है कि विश्व या उसका बडा भाग आत्महत्या करने पर तुला दीख रहा है। यह पल्लवित सभ्यता मे बुरे बीज का अनिवार्य विकास हो सकता है। मैं समझता हू कि ऐसा ही है। इस बुराई का निराकरण कैसे किया जाय कि वर्तमान और भूत मे जो अच्छाइया हैं वे भी बनी रहे, यही है हमारी समस्या। स्पष्ट है कि वर्तमान मे भलाइया भी हैं।

जल्दी जल्दी मे लिखे गये ये मेरे कुछ स्फुट विचार हैं और मुझे भय है कि वे उठाये गये प्रश्नो के गम्भीर आशय के प्रति अन्याय करते हैं। मुझे आशा है कि इस जोडे हुए विचारो के लिए आप मुझे क्षमा करेंगे। बाद मे मैं इस विषय पर अधिक स्पष्टता से लिखने की कोशिश करूगा।

जहा तक हिन्दुस्तानी-प्रचार सभा और कस्तूरबा निधि की बात है, इतना तो
स्पष्ट है कि दोनो के प्रति मेरी सहानुभूति है और मैं समझता हू कि वे अच्छा काम
कर रही हैं। किन्तु मैं उनकी कार्य-प्रणाली के विषय मे बिल्कुल विश्वास से कुछ
नही कह सकता, पर मुझमे यह भावना है कि वे सदैव मेरी पसन्दगी की नही होती।
वस्तुत मुझे उनके बारे मे इतनी काफी जानकारी नही है कि निश्चयपूर्वक कुछ कह
सकू। किन्तु इस समय तो अपनी जिम्मेदारियो का बोझ बढाने के प्रति मुझे अरुचि
हो गई है, क्योकि मैं महसूस करता हू कि समयाभाव-वश मैं उनको उठा नही सकता।
ये अगले कुछ महीने शायद और ज्यादा समय, मेरे और दूसरो के लिए सम्भवत.

बड़े व्यस्ततापूर्ण होंगे। अतः मेरे लिए यह वाञ्छनीय नहीं लगता कि सिर्फ़ अनुकूलता दिखाने के लिए किसी जिम्मेदार कमेटी में शामिल हूं।

जहां तक शरत बोस की बात है, मैं पूर्णतः अन्धकार में हूं कि सिवाय इसके कि वैदेशिक सम्बन्धों-विषयक मेरे सामान्य रुख के बारे में उन्हें कोई अतीत काल की शिकायत हो, वह मुझसे क्यों इतने नाराज हैं। मैं गलत रहा हूं या नहीं, मुझे ऐसा लगता है कि शरत ने बचपने और गैरजिम्मेदारी के ढंग पर काम किया है। शायद आपको याद होगा कि पुराने दिनों में सुभाष स्पेन, जेकोस्लोवाकिया, म्यूनिख तथा चीन के प्रति कांग्रेस के रुख को पसन्द नहीं करते थे। शायद यह उस पुराने विचार-भेद की छाया हो। मैं दूसरी कोई बात नहीं जानता, जो घटी हो।

मैं देखता हूं नवम्बर के शुरू मे आप बंगाल जा रहे हैं। शायद उस समय मैं ३-४ दिनों के लिए कलकत्ता जाऊं। अगर ऐसा हुआ तो आपसे मिलने की आशा रखता हूं।

शायद आपने अखबारों में देखा होगा कि नवनिर्मित इन्दोनेशियन प्रजातन्त्र के राष्ट्रपति ने मुझे और कुछ दूसरों को जावा की यात्रा करने को निमन्त्रित किया है। इस मामले की विशेष परिस्थिति के कारण मैंने तुरन्त इस निमन्त्रण को स्वीकार करने का निर्णय किया है—निश्चय ही वहां जाने की आवश्यक सुविधाएं मिल जाने की शर्त्त पर। यह बहुत सन्देहास्पद है कि मुझे ये सुविधाएं मिलेंगी, इसलिए सम्भवत मैं न जा पाऊंगा। जावा भारत से सिर्फ़ दो दिन के हवाई मार्ग पर है, या कलकत्ता से तो एक ही दिन लगता है। इन्दोनेशियाई प्रजातन्त्र के उपराष्ट्रपति मुहम्मद हट्टा मेरे एक बड़े पुराने मित्र हैं। मै समझता हूं कि आप यह जानते हैं कि जावा की आबादी लगभग पूर्णत: मुस्लिम है।

मुझे आशा है, आप की सेहत ठीक है और इन्फ्लुएंजा के आक्रमण से आप पूर्णतः स्वस्थ हो गये हैं।

आपका स्नेहपात्र
जवाहर

महात्मा गांधी, पूना

—अंग्रेजी। इलाहाबाद, ९।१०।१९४५। नेहरू संग्रहालय में सुरक्षित पत्रावली से।]

सौजन्य : श्रीमती इन्दिरा गांधी तथा नेहरू संग्रहालय ।

७८. विचित्रनारायण शर्मा का पत्र : गांधीजी के नाम

मेरठ
जनवरी ४, १९४६

पूज्य बापू,

सादर प्रणाम। गाडोदिया जी और डा० शर्मा के बीच जो झगडा चल रहा है उसमे आपने मेरी जानकारी और मत भी मागा है। इधर गाडोदियाजी से मेरी कोई भेंट नही हुई। चिकित्सालय के ट्रस्टी के नाते भी हम नही मिल सके। जो मीटिंग चिकित्सालय मे रक्खी उनमे वह न आ सके। कुछ दिन मैं बीच मे जेल मे ही रहा, उस बीच जो मीटिंग हुई उसमे मैं न रह सका। बाद में जो मीटिंग हुई उनमे गाडोदियाजी नही आये। उनकी सहूलियत का ख्याल रखकर मीटिंग दिल्ली ही रक्खी पर उसमे भी वह शरीक न हुए।

पहिला परिचय गाडोदियाजी का और मेरा अवश्य है पर बदकिस्मती से उसके आधार पर मैं कोई भी अच्छी धारणा उनके विषय मे नही बना सका। दूसरो से भी जो सुना वह उनके अनुकूल नही सुना। पर ऐसी धारणाओ के आधार पर किसी व्यक्ति को दोषी नही करार दिया जा सकता। ट्रस्टी के नाते जो जानकारी हुई वह बहुत कुछ शर्माजी और उनके बीच हुए पत्र-व्यवहार पर। यह सारा पत्र-व्यवहार आपके सामने रहेगा ही, फिर भी मैं अपना मत देने मे कोई हानि नही देखता हू।

खजानची के नाते जो धन गाडोदियाजी के पास जमा रहता था उसे देने मे उनकी ओर से निरर्थक देरी की गई। और उससे असुविधा भी हुई। मुझे ऐसा लगता है यह उन्होंने चिढकर ही किया और शर्माजी पर नाजायज़ दबाव डालने की कोशिश भी की। शर्माजी मुर्गी पालते हैं या शायद अण्डे खाते हैं यह कारण न तो यथेष्ट है और न शुरु मे सम्भवत थे ही।

अपना तथा पत्नी का इलाज कराने मे शर्माजी तथा सस्था के साधनो का तो उपयोग किया, पर उसके एवज़ मे सस्था को पारितोषिक देते समय सरल और सत्य व्यवहार नही कायम रख सके।

यह सही है, शर्माजी ने कोई निश्चित बात तय नही की थी और आज कोई खास रकम गाडोदियाजी से मागी नही जा सकती है फिर भी एक समझौता सा बीच मे जरूर था और उसका जिक्र बार-बार पत्रो मे हुआ है लेकिन गाडोदियाजी ने उसे सीधे तरह से "ना" न करके कभी एक बात कहकर कभी दूसरी बात कहकर देने से इन्कार किया। कभी कहा इलाज ही नही हुआ, कभी कहा फीस दे दी जानी थी

जवकि पहिले आने जाने का किराया भी नहीं दिया गया। वाद में आडिटर की शिकायत पर ही १० रुपया वास्ते खर्च दिये गये।

शर्माजी की वावत भी मैं इतना जरूर कहूंगा और वह इसलिए कि वह शिकायत करनेवाले हैं कि वह और भी सहिष्णुता दिखलाते और निभाने की कोशिश करते तो अच्छा होता। पर शर्माजी का दृष्टिकोण यह था कि गाडोदियाजी जव झूठ से काम लेते हैं और संस्था का कोई हित-सावन भी नही करते हैं तो वह ऐसा कुछ क्यों करें जो चापलूसी जैसा मालूम हो।

खादी के सम्वन्व में मेरी जानकारी यों है। जव मैं जेल में ही था तो जो भाई पीछे रह गये थे उन्होंने गाडोदियाजी के हाथ रेशमी माल जरूर वेचा था और गाडोदियाजी का यह सोच लेना कि रेशम लेकर वह एक खतरा उठा रहे हैं और भला काम कर रहे हैं यह स्वाभाविक ही है। साघारणतः रेशम उनके हाथ वेचा ही नहीं जा सकता था पर यह बात ठहरी थी कि वह दाम नही बढ़ायेंगे इसलिए उन्हें १० प्रतिशत विक्री दरों पर कमीशन भी दिया गया था। पर इन भाइयों का यह कहना है कि उन्होंने बाद में दाम वढ़ाये और खूव बढ़ाये। उनके कार्यकर्त्ता स्वयं आकर इन लोगों से कहते थे। मैंने पक्की जांच नहीं की, पर लोग तो हिसाव आदि दुवारा प्रमाणित करने की वात भी कहते हैं। आवश्यक होने पर जांच हो सकती है।

उनका खादी कार्य परोपकार वृत्ति से है, ऐसी छाप मेरे ऊपर नहीं पड़ी। ऐसे काम की जरुरत तव रही भी हो जव हमारा काम नष्ट कर दिया गया था पर हमारे पुनः क्षेत्र में आ जाने पर उन्हें उसे छोड़ देना चाहिए था। कम से कम हमारी प्रतियोगिता नहीं करनी चाहिए थी। हमारे पास तो शिकायतें आती रही है कि वह हमारे कारीगर और हमारे कार्यकर्त्ता एवं हमारे क्षेत्र को भी ले लेते थे। पर मैंने इसे उपेक्षा की दृष्टि से देखा।

उन्होंने प्रमाणपत्र के लिए भी मुझे लिखा था और एक ट्रस्ट जैसी चीज़ खड़ी की थी। मैंने यह कहकर प्रमाणपत्र देने से इन्कार कर दिया था कि ट्रस्ट के व्यक्तियों और नियमों को देखते हुए उसे सार्वजनिक ट्रस्ट नही कहा जा सकता। प्रायः सव ट्रस्टी घर के थे और गाडोदिया जी ने सव शक्तियां अपने हाथ में रख छोड़ी थीं। सार्वजनिक ट्रस्ट मे लोक-सेवा के नाते ट्रस्टी वनाये जायं, यही उचित है। दाता एक दो व्यक्ति अपने रक्खे पर उससे ट्रस्ट का सार्वजनिक रूप नष्ट न होना चाहिए।

मुझे इस विषय में इतना ही कहना है।

आज्ञाकारी पुत्र,

विचित्र

—हिन्दी। मेरठ, ४।१।१९४६। 'वापू की छाया में मेरे जीवन के सोलह वर्ष' से।]
सौजन्य : श्री विचित्रनारायण शर्मा।

: छः :

संवेदन

उत्तर प्रदेश के व्यक्तियों, समस्याओं, घटनाओं एवं समाचारपत्रों पर गांधीजी की टिप्पणियाँ

१. श्रीमती बेसेण्ट को उत्तर

[बनारस की घटना]

श्री मो० क० गाधी ने हमे लिखा है

" 'न्यू इण्डिया' मे श्रीमती बेसेण्ट ने बनारस की घटना का जो उल्लेख किया है तथा अन्यत्र भी उसकी जो चर्चा की गई है, उसके कारण, चाहे मैं कितना ही अनिच्छुक क्यो न होऊ, मेरे लिए उस सम्बन्ध मे फिर से कुछ कहना आवश्यक हो गया है। श्रीमती बेसेण्ट मेरे इस कथन से इनकार करती हैं कि उन्होने राजाओ के कान मे कुछ कहा था।[1] मैं केवल इतना ही कह सकता हू कि यदि मैं अपने कानो और अपनी आखो पर भरोसा कर सकता हू तो मुझे, जो-कुछ मैंने पहले कहा है, उस पर अडे रहना चाहिए। सभापति महाराजा दरभगा के दूसरी ओर कुछ लोग अर्धवृत्त बनाकर बैठे हुए थे, और श्रीमती बेसेण्ट उस अर्धवृत्त की बाई ओर बैठी हुई थी। उनकी बगल मे कम-से-कम एक, या शायद दो, राजे बैठे हुए थे। जब मैं बोल रहा था, उस समय श्रीमती बेसेण्ट मेरे पीछे थी। जब महाराजा उठे तब श्रीमती बेसेण्ट भी उठ खडी हुई। राजाओ के मच छोडने से पहले ही मैंने बोलना बन्द कर दिया था। श्रीमती बेसेण्ट मच पर आसपास के लोगो से इस घटना के सम्बन्ध मे बातें कर रही थी। मैंने बहुत धीरे से उनसे कहा कि आप बीच मे बिना कुछ बोले चुपचाप बैठी रह सकती थी और यदि मेरा व्याख्यान आपको पसन्द नही था तो उसकी समाप्ति पर कह सकती थी कि मैं इन विचारो से सहमत नही हू। लेकिन उन्होने कुछ गरम होकर कहा, "जब आप अपने भाषण के द्वारा श्रोताओ पर ऐसी छाप डाल रहे थे, मानो मच पर उपस्थित हम सब लोग आपके विचारो से सहमत हो, तब हम चुपचाप कैसे बैठे रह सकते थे? जो बातें आपने कही थी वे आपको नही कहनी चाहिए थी।" इस घटना का जो विवरण वह देती है, उसके अनुसार तो वह मेरे प्रति चिन्ता भाव से प्रेरित होकर ही मेरे भाषण के बीच मे बोल पडी थी। किन्तु, श्रीमती बेसेण्ट का उक्त उत्तर इस बात से मेल नही खाता है। मैं सिर्फ इतना कहू कि यदि उनका उद्देश्य केवल मुझे बचाना ही था तो वे चुपचाप

---

१ देखिए परिशिष्ट।

एक पुर्जा पहुँचा दे सकती थीं अथवा धीरे से मेरे कान में अपनी सम्मति कह दे सकती थीं। और फिर यदि मेरा बचाव करना ही उनका अभीष्ट था तो उन्हें राजाओं के साथ उठकर हाल से बाहर चले जाने की क्या पड़ी थी? और उनके हाल से उठकर चले जाने के सम्बन्ध में मैं तो कहता हूं कि वे राजाओं के साथ ही चली गई थी।

अपने भाषणों में मैंने जो-कुछ कहा, उसे लें तो मैं अभी यह नही जान पाया हू कि उसमें ऐसी कौन-सी बात थी, जो इतनी आपत्तिजनक मालूम हुई कि वे बीच में ही बोल पड़ी। वाइसराय महोदय के आगमन तथा उनकी सुरक्षा के लिए किये गये आवश्यक प्रबन्ध के सम्बन्ध में बोलने के बाद मैंने यह दिखलाया कि किसी हत्यारे की मृत्यु श्रेयस्कर कदापि नहीं होती और कहा कि अराजकता के विचार हमारे शास्त्रों के विरुद्ध है और भारत में उनके लिए कोई स्थान नही है। फिर मैंने कहा कि श्रेयस्कर मृत्यु इससे बिल्कुल अलग चीज है। ऐसी मृत्यु का आलिंगन करनेवाले लोग इतिहास में अपने विश्वास के लिए प्राण देनेवाले लोगों के रूप में समादृत होते है। लेकिन जब कोई बम फेकनेवाला अनेक प्रकार के षड्यंत्र रचकर मरता है, तब उसे क्या मिल सकता है? उसके उपरान्त मैने लोगों की इस भ्रमपूर्ण धारणा पर विचार आरम्भ किया कि यदि बम फेंकनेवालों ने बम न फेंके होते तो वंग-भंग आन्दोलन के सिलसिले में हमें जो कुछ मिला, वह न मिलता। लगभग इसी समय श्रीमती बेसेण्ट ने सभापति महोदय से मेरा भाषण बन्द करा देने का अनुरोध किया। व्यक्तिशः मैं यह चाहता हूं कि मेरा सारा भाषण प्रकाशित कर दिया जाय, जिसके विचार-प्रवाह की दिशा से यह बात पर्याप्त रूप से स्पष्ट हो जाती है कि मैं विद्यार्थियों को हिंसात्मक कार्रवाई करने के लिए भड़का ही नही सकता। ऐसा करना मेरे लिए सम्भव ही नहीं है। वास्तव में उसमें मेरा अभिप्राय यह था कि हम कठोर आत्म-निरीक्षण करें।

मैंने अपना भाषण इस बात से आरम्भ किया कि मैं अंग्रेजी में बोलूं, यह श्रोताओं के लिए भी और मेरे लिए भी लज्जाजनक है। मैने कहा कि अंग्रेजी भाषा शिक्षा का माध्यम बन गई है, जिससे देश को बडी भारी हानि पहुँची है और मैं समझता हूं, मैंने सफलतापूर्वक यह समझाया कि यदि गत पचास वर्षों से हम लोगों को उच्चतर ज्ञान की शिक्षा देशी भाषाओं मे ही मिलती तो इस समय तक हम लोग अपने लक्ष्य के बिल्कुल निकट पहुँच गये होते। इसके बाद मैने स्वशासन-सम्बन्धी उस प्रस्ताव का जिक्र किया जो कांग्रेस में पास हुआ था और दिखलाया कि अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटी तथा भारतीय मुस्लिम लीग जिस समय अपने भावी-शासन विधान का मस्विदा तैयार करे उस समय उनका यह कर्त्तव्य भी है कि वे अपने

कार्यों से अपने-आपको स्वराज्य के योग्य बनायें। और यह दिखलाने के लिए कि हम लोग अपने कर्त्तव्य से कितना पीछे रहते हैं, मैंने लोगो का ध्यान काशी-विश्वनाथ के मध्य, मन्दिर के आसपास भूलभुलैया की तरह बनी गलियो की गन्दगी तथा हाल ही मे बने उन राजसी भवनो की ओर आकृष्ट किया, जिनका निर्माण करते समय गलियो की चौडाई या सिधाई का कोई विचार नही रक्खा गया है। इसके बाद मैंने श्रोताओ को शिलान्यास के दिन के चाकचिक्यपूर्ण दृश्य का स्मरण दिलाया, और कहा कि यदि उस दृश्य को किसी ऐसे अजनबी ने देखा होता, जिसे भारत के बारे मे कोई जानकारी नही हो, तो वह मन पर यह गलत छाप लेकर जाता कि भारत ससार के सर्वाधिक सम्पन्न देशो मे से एक है। क्योकि उस दिन हमारे सरदार-सामन्तो ने ऐसे ही बहुमूल्य आभूषण धारण कर रक्खे थे। और मैंने महाराजाओ तथा राजाओ की ओर मुडकर विनोदपूर्वक कहा कि आप लोगो के लिए यह आवश्यक है कि जबतक हम लोग अपने आदर्शों को सिद्ध न कर लें तबतक आप लोग इस सम्पत्ति को जाति की थाती समझ कर अपने पास रखें, और मैंने उन जपानी सामन्तो के कार्य का उदाहरण दिया, जिन्होंने आवश्यकता न होने पर भी अपनी सम्पत्ति और उन जमीदारियो का परित्याग कर देने मे अपना परम सौभाग्य माना, जो उनके वश मे पीढ़ी-दर-पीढी चली आ रही थी। इसके उपरान्त मैंने श्रोताओ से अनुरोध किया कि आप जरा इस प्रतिष्ठाजनक बात पर विचार कीजिए कि जब वाइसराय महोदय हमारे पूज्य अतिथि हो, तब हम लोगो से ही उनकी सुरक्षा का प्रबन्ध किया जाय। और मैं यह दिखाने का प्रयत्न कर रहा था कि इस इहतियाती कार्रवाई के लिए भी दोषी हम ही हैं, क्योकि इसकी आवश्यकता इसीलिए हुई कि भारत मे सगठित रूप से राज-पुरुषो की हत्यायो की प्रणाली शुरू हो गई है। इस प्रकार एक ओर मैं यह दिखलाने का प्रयत्न कर रहा था कि विद्यार्थी किस प्रकार समाज को उसके जाने-माने दोषो से मुक्त कराने के लाभदायक कार्य मे सहायक सिद्ध हो सकते हैं और दूसरी ओर उन्हे हिंसात्मक तरीको के विचार तक से दूर रहने के लिए समझा रहा था।

मुझे बीस वर्ष के सार्वजनिक जीवन का अनुभव है और इस बीच मैंने बीसियो बार बडे ही अशान्त और क्षुब्ध श्रोताओ के सामने व्याख्यान दिये हैं। अत मैं दावा कर सकता हू कि मुझे अपने श्रोताओ की नब्ज पहचानने का कुछ अनुभव है। मैं ध्यान-पूर्वक यह देखता जा रहा था कि मेरे व्याख्यान के प्रति लोगो की क्या प्रतिक्रिया है, और निश्चय ही मैंने यह नही देखा कि विद्यार्थियो पर उनका कोई प्रतिकूल प्रभाव रहा है। सच तो यह है कि दूसरे दिन सवेरे उनमे से कुछ लोगो ने मुझसे आकर कहा कि वे मेरी बातो को पूरी तरह समझ गये थे और उनका उन पर काफी प्रभाव पडा था

उनमें से एक बड़ा तार्किक था। उसने तो मुझसे जिरह ही कर डाली। किन्तु जब मैंने अपने भाषण के दौरान जो तर्क पेश किये थे, उन तर्कों पर और भी प्रकाश डाला तो वह उनसे कायल प्रतीत हुआ। मैंने समस्त दक्षिण-अफ़्रीका, इंग्लैण्ड तथा भारतवर्ष में हजारों विद्यार्थियों और अपने अन्य देशभाइयों के सामने भाषण किये हैं, और मैं दावा करता हूं कि उस दिन सन्ध्या के समय लोगों के सामने मैंने जो तर्क उपस्थित किये थे उन्ही तर्कों के आधार पर मैंने बहुत-से लोगों को अराजकतावादी तरीकों के समर्थन से विमुख किया है।

और अब अन्त में बम्बई के श्री एस० एस० सेटलूर की बात लीजिए। उन्होंने भी 'हिन्दू' में उस घटना के सम्बन्ध में लिखा है और उनका रुख भी मेरे प्रति कोई मैत्रीपूर्ण नही है। मेरा खयाल है, उन्होंने कई बातों में अनुचित रूप में, मेरी धज्जियां उड़ा देने का प्रयत्न किया है। श्री सेटलूर ने सभा की पूरी कार्रवाई अपनी आँखों से देखी थी। किन्तु मैं देखता हूं कि उसका जो विवरण वह देते हैं, वह श्रीमती बेसेण्ट के विवरण से भिन्न है। उनका खयाल है कि मेरे भाषण की लोगों पर जो आम छाप पड़ी, वह यह नही थी कि उन्हें मैं अराजकता के लिए उत्तेजित कर रहा था, बल्कि यह कि मैं गैर-सैनिक नौकरशाहों का पक्ष-पोषण कर रहा था। श्री सेटलूर ने मेरी जो आलोचना की है, वह यही सिद्ध करती है कि यदि वह सही है तो निश्चय ही मैंने किसी प्रकार हिंसात्मक कार्रवाई को उत्तेजन देने का अपराध नही किया, बल्कि मेरा अपराध यह था कि मैंने राजाओं के हीरे-जवाहरात के आभूषणों आदि का उल्लेख किया।

श्रीमती बेसेण्ट के साथ तथा मेरे साथ भी पूरा-पूरा न्याय हो, इस उद्देश्य से मैं नीचे लिखा सुझाव देना चाहूंगा। वह कहती है कि मेरे जिस वाक्य ने राजाओं को उठ कर चल देने को बाध्य कर दिया, उसे उद्धृत करके वह अपना बचाव नहीं करना चाहती क्योकि उससे तो शत्रुओं का ही हित होगा। उनके इससे पहले के कथन के अनुसार मेरा व्याख्यान खुफिया पुलिस के हाथ में पहुँच चुका है, इसलिए जहां तक मेरे बचाव का सवाल है, उनकी यह क्षमाशीलता किसी काम की नही है। अतः क्या यह अधिक अच्छा न होगा कि यदि उनके पास मेरा व्याख्यान हो तो वह या तो उसे शब्दशः प्रकाशित करवा दें अथवा व्यक्त किये गये ऐसे विचारों को ही प्रकाशित करवा दें, जिनके कारण, उनकी राय में, उन्हे हस्तक्षेप करने तथा महाराजाओं को उठकर चले जाने के लिए बाध्य होना पड़ा।

तो मैं अपने इस वक्तव्य को अपनी पहलेवाली बात दोहरा कर ही समाप्त करता हूं, वह यह कि यदि श्रीमती बेसेण्ट बीच में ही बाधा न उपस्थित करती तो

मैं कुछ ही मिनटो मे अपना व्याख्यान समाप्त कर देता और तब अराजकता-सम्बन्धी मेरे विचारो के विषय मे किसी प्रकार का भ्रम उत्पन्न न होता।

——अंग्रेजी से। 'हिन्दू', १७।२।१९१६। सं० गा० वां० खण्ड १३ पृ० २४१-४४।]

२. पत्र: 'न्यू इण्डिया' को, बनारस की घटना के सम्बन्ध में

आज के अपने सम्पादकीय लेख मे आपने कहा है कि मैंने ईसाई धर्म-प्रचारकों के कहने से वनारसवाली घटना का उल्लेख फिर से किया है। मैं निवेदन करना चाहता हू कि मेरे वक्तव्य के प्रकाशन मे ईसाई-प्रचारको का जरा भी हाथ न था और न मैंने किसी मिशनरी से उस सम्बन्ध मे वातचीत ही की है।

——मद्रास, १७।२।१९१६। 'न्यू इण्डिया' १८।२।१९१६। सं० गा० वां० भाग १३, पृ० २४४।]

३. खिलाफत

इलाहावाद के 'लीडर' और 'यग इण्डिया' मे स्पष्ट मतभेद हो गया है। मैं 'लीडर' का इतना आदर करता हू कि वह जो भी विचार प्रकट करता है उसे स्वीकार करने के लिए मैं वहुत प्रयत्न करता हू। किन्तु पिछले कुछ समय से कितनी ही कोशिश के वावजूद मैं उसके विचारो को स्वीकार करने मे असफल रहा हू। इसका सबसे ताजा उदाहरण है वहिष्कार और असहयोग के मामले मे वह उलझन, जिसमे 'लीडर' पड गया है। मैंने सोचा था कि मेरा अर्थ स्पष्ट है और उसमे कोई असगति नही है। वहिष्कार एक दण्ड है और उसकी कल्पना वदले की भावना मे की जाती है। अग्रेजी माल के वहिष्कार के पीछे विचार ऐसा है कि अग्रेजी माल दूसरे माल से, जैसे कि जपानी माल से, चाहे अच्छा ही क्यो न हो, लेकिन मुझे उसे न खरीदना चाहिए क्योकि ब्रिटिश मन्त्रियो ने हमारे साथ जो अन्याय किया है या कुछ अग्रेजो ने खिलाफत के वारे मे जो अत्यन्त दायित्वहीन और अशिष्ट भाषा का प्रयोग किया है उनका वदला मैं अग्रेज जनता से लेना चाहता हू। मैं यह मानता हू कि वहिष्कार इन स्थितियो मे हिंसा का ही एक रूप है।

असहयोग का आधार भिन्न है। यदि सरकार अन्याय करती है तो उनसे

सहयोग करने का मतलब यह है कि मैं भी उसके इस अन्याय में सहभागी हूं और इस प्रकार उसके लिए अन्याय करना सम्भव बनाता हूं। इस हालत में उस सरकार को सहयोग न देना मेरा कर्त्तव्य है, किन्तु ऐसा दण्ड के रूप में बदला लेने की भावना से नहीं बल्कि इसलिए करना है कि उस अन्याय का दायित्व मुझ पर न आ सके। दरअसल अगर मैं उस सरकार की गाडी बिल्कुल रोक भी दूं तो यह उचित ही होगा। इसलिए इस सम्बन्ध में मेरा विचार बिल्कुल स्पष्ट है कि असहयोग बहिष्कार से उतना ही भिन्न है, जितना हाथी गधे से।

मैं जो हिंसा को अस्वीकार करता हूं और हड़ताल को स्वीकार करता हूं, उसमें 'लीडर' को असंगति दिखाई देती है। किन्तु मुझे उसमें कोई असंगति नहीं दिखाई देती क्योंकि मुझे लगता है कि यह आवश्यक नहीं है कि हड़ताल से हिंसा हो ही। कोई भी व्यक्ति उचित कार्य करने से बराबर इसीलिए कतराता नहीं रह सकता कि उसमें खतरे की भी आशंका होती है। कदाचित् 'लीडर' की कठिनाई का कारण उसका यह विश्वास है कि जोरदार और निश्चित कार्रवाई करना जरूरी नहीं है और मित्र-राष्ट्रों-द्वारा विपरीत निर्णय[1] किये जाने पर भी भारत के मुसलमानों के लिए शान्त रहना सम्भव है। मेरी राय में यदि कोई ऐसी अहिंसात्मक कार्य-पद्धति नहीं निकाली गई जिससे इस प्रश्न का उचित समाधान हो जाय तो वह आन्दोलन[2] अवश्य ही हिंसा का समर्थन करेगा। पूरी जोरदार कार्रवाई करने में भी हिंसा का खतरा है, किन्तु हमें मात्र इसी भय के कारण उचित कार्य करने से डरना नहीं चाहिए कि कहीं उसका गलत अर्थ न लगा लिया जाय और उसके फलस्वरूप अनर्थ न हो जाय। मानवीय दृष्टि से कहें तो जो सम्भव है वह इतना ही कि गलतियों और गलतफहमी से बचते हुए, ईश्वर में विश्वास रखकर हम आगे बढ़ते जायें। मैं जानता हूं कि यदि खिलाफत के प्रश्नके उचित हल से कम कोई चीज इस प्रश्न पर हिंसा को टाल सकती है तो वह यही चीज, यही रास्ता है। इसलिए मैं विश्वास करता हूं कि सब विचारोंके भारतीय इस आन्दोलन में शरीक होकर कोई दृढ़ रुख अपनायेंगे तो उससे मुसलमानों के हृदय में साहस और आशा का संचार होगा। किसी भी तरह की ढिलाई या उपेक्षा का परिणाम होगा निराशा और निरुत्साह।

बहुत कुछ यही बात सत्याग्रह के विरुद्ध उठाई जानेवाली आपत्ति के बारे में भी कही जा सकती है। मैं अब भी यही मानता हूं कि फिलहाल विशुद्ध और उत्कृष्ट ढंग का सत्याग्रह करने में तो अकेला मैं ही समर्थ हूं। लेकिन अगर इस विश्वास के कारण

---

१ तुर्की के सुलतान की राजनीतिक और आध्यात्मिक सत्ता के सम्बन्ध में।

२. खिलाफत आन्दोलन।

मैं सत्याग्रह का प्रयोग ही न करू तब तो उसका कभी प्रसार ही नही होगा। किन्तु यहा इसके अतिरिक्त एक अन्य तर्क-दोष भी है। अगर सत्याग्रह सविनय प्रतिरोधके रूप मे किया जाय तो उसमे अशोभन बाते होनेकी सम्भावना तो है ही। किन्तु हडताल कोई नया शस्त्र नही है और वह सत्याग्रह के अन्तर्गत आ भी सकता है, नही भी आ सकता। और न असहयोग के लिए ही सत्याग्रह का होना कोई आवश्यक है। जब माननीय प० मदनमोहन मालवीय ने इम्पीरियल कौंसिल से त्यागपत्र दिया था[1] या जब सर रवीन्द्रनाथ ठाकुर ने अपनी उपाधि से मुक्त कर दिये जाने का अनुरोध किया था[2] तो उन्होंने ये कदम सत्याग्रही के रूप मे नही उठाये थे। बेशक व्यापक असहयोग करने मे खतरा है, किन्तु यह तो केवल एक सामान्य सत्य ही बताना है। याद रखने की बात यह है कि खिलाफत मुसलमानोके लिए जीवन और मरण का प्रश्न है। उनके लिए इसका उचित समाधान प्राप्त करना अत्यन्त आवश्यक है। इधर हिन्दुओ का पुनीत कर्त्तव्य है कि जबतक उनके मुसलमान भाई अहिंसा के मार्ग पर दृढ रहकर काम कर रहे हो तबतक वे उनके लिए अपना सब कुछ दे दें। और मैं तो नही मानता कि उन्हे उस मार्ग पर दृढ रखने के लिए इससे कोई अच्छा उपाय भी है कि समस्त हिन्दू, ईसाई, पारसी और यहूदी, जिन्होंने भारत को अपना देश बना लिया है, पूरे मन से उनका समर्थन करें और उन्हे हिंसा का आश्रय लिये बिना अपनी शिकायत दूर करवाने के प्रभावकारी उपाय सुझावें।

—अंग्रेजी। यं० इं०, १७।३।१९२०।]

४. पागलपन

मैं कह चुका हू कि असहकार आदि उग्र शस्त्र का प्रयोग करते समय हमे धैर्य से काम लेना सीखना चाहिए। यदि हम उसका उपयोग करते हुए क्रोध से काम लें तो बडा नुकसान हो जाय। सरकार गुस्से मे आ जाय तो हम उसे भी सहन करें, यही उचित है। जब जब राजसत्ता के हाथो अन्याय होता है तब-तब लगभग वह यही चाहती है कि जनता उत्तेजित हो जाय और खून-खराबी हो। यदि जनता उस फन्दे मे फँस जाती है तो उसका ध्यान उपर्युक्त अन्याय से हटकर अशान्ति मचाने की ओर चला जाता है। फिर खून-खराबी करनेवालो को दबाने के लिए राजा और प्रजा एक

१. ६ अप्रैल १९१९ को।
२. उन्होंने अपनी नाइटहुड ('सर') की उपाधि १ जून १९१९ को त्यागी थी।

हो जाते है और मूल बात अन्याय को भुला दिया जाता है। अथवा जिस समय जनता अन्याय के विरुद्ध आन्दोलन करती है, उस समय राज्याधिकारी उस आन्दोलन को दवाने का भारी प्रयत्न करते है और किये गये अन्याय को छिपाने में विवेक-बुद्धि का अतिक्रमण कर जाते हैं। परिणामस्वरूप अन्याय के विरुद्ध किये जानेवाले आन्दोलन को दवाने की कोशिश मे वे पागल हो जाते हैं।

मुझे लगता है कि हमारी सरकार ऐसे पागलपन का शिकार हो गई है। पं० मोतीलाल नेहरू को संयुक्त प्रान्त[1] में सब लोग जानते हैं। वहां के गवर्नर उन्हें तीस साल से पहिचानते है। उनके एक मात्र पुत्र जवाहरलाल नेहरू बैरिस्टर हैं और वह भी सुप्रसिद्ध है। वह अपने पिता की, उनके धन्धे तथा सार्वजनिक जीवन मे पूरी-पूरी मदद करते है। संयुक्त प्रान्त में सभी को मालूम है कि श्री जवाहरलाल नेहरू की माता हमेशा अस्वस्थ रहती है। उनकी धर्मपत्नी की तवीयत भी इस समय वहुत खराव है। नेहरू परिवार समय-समय पर गर्मियों मे वायु-परिवर्तन के लिए मसूरी जाता है। इस बार ऊपर वताई गई वीमारी के कारण मसूरी जाने की विशेष आवश्यकता थी। जब यह निश्चय हुआ तव यह वात उनके ध्यान में भी न थी कि अफगानी-शिष्ट-मण्डल के प्रतिनिधि भी मसूरी जानेवाले है और जिस स्थान पर उन्हे ठहरना था उसी स्थान पर ये लोग भी ठहरने वाले है। तथापि मसूरी में ठहरने की अधिक व्यवस्था न होने के कारण नेहरू परिवार तथा अफगानी शिष्ट-मण्डल के प्रतिनिधियों को एक ही स्थान पर जगह मिली। दोनों एक ही जगह रहे, यह सरकारी अधिकारी को बरदाश्त नही हुआ। इतना होने पर भी स्थिति कुछ ऐसी थी कि श्री जवाहरलाल नेहरू पर एकदम दबाव डाला जा सकता था, इससे पुलिस सुपरिण्टेण्डेण्ट ने उन्हे वुलाकर कहा कि यदि आप यह आश्वासन देंगे कि आप इन प्रतिनिधियों के साथ वोलचाल भी नही रक्खेंगे तो आपको मसूरी में रहने दिया जायगा। जिस व्यक्ति को आत्म-सम्मान प्रिय है वह व्यक्ति ऐसी जमानत क्यों दे? भले ही प्रतिनिधियो के साथ कोई व्यवहार न हो, श्री जवाहरलाल पन्द्रह दिन तक मसूरी में रहकर भी इन प्रतिनिधियों के साथ एक शब्द भी नही वोले, लेकिन स्वेच्छया विना किसी प्रसंग के किसी के साथ न वोलना एक वात है और किसी के दवाव में आकर अमुक व्यक्ति के साथ न वोलने की प्रतिज्ञा करना दूसरी वात है। इसी से श्री जवाहरलाल ने ऐसा आश्वासन देने से इन्कार कर दिया। इस पर उन्हें तुरन्त ही मसूरी छोड़ देने का आदेश दिया गया। श्री जवाहरलाल ने अधिकारी को सही स्थिति से अवगत करा दिया था, अपनी कठिनाइयो की चर्चा

---

१. अब उत्तर प्रदेश।

भी की थी लेकिन (उनकी) मुश्किलो से अधिकारियो को क्या लेनादेना हो सकता है?

यदि राजा अपनी रैयत के कमजोर-से-कमजोर अग की मुश्किलो का ध्यान रक्खे तो वह रामराज्य कहलाये, प्रजातन्त्र कहलाये। आधुनिक युग मे किसी भी प्रजातन्त्र राज्य से—फिर चाहे वह अग्रेजी हो चाहे भारतीय, ईसाई-मुसलमान अथवा हिन्दू—ऐसी आशा नही की जा सकती। जिस यूरोप का अनुकरण करने के लिए हम अधीर हो गये दीख पडते हैं, वह यूरोप भी पशुबल की अथवा पशुबल के मुकाबले बहुमत की पूजा करता है और बहुमत वाले भी हमेशा अल्पसख्यको की रक्षा करते हो सो बात नही। सामान्यतया आम विषयो मे बहुमत के न्याय को लौकिक न्याय कहा जा सकता है, लेकिन शुद्ध न्याय तो सब लोगो के कल्याण मे ही हो सकता है। इसलिए जहा दुर्बल-से-दुर्बल व्यक्ति की भी पूरी-पूरी रक्षा की जाती हो और उसके अधिकारो को भी पूरा-पूरा सरक्षण दिया जाता हो वह शुद्ध प्रजातन्त्र कहा जा सकता है। प्रजातन्त्र का अर्थ बहुमत द्वारा शासन नही बल्कि उसका अर्थ है कि उससे जनता के छोटे-से-छोटे अग का भी पोषण हो। इस समय हम अपनी सरकार से ऐसे न्याय और ऐसे पोषण की अपेक्षा नही कर सकते। लेकिन सरकार ने जो कदम[1] उठाया है वह तो निरा पागलपन है। ऐसा कदम उठाने के पहले उसके पास किसी भी ठोस कारण के होने की कल्पना नही की जा सकती।

—गुजराती। न० जी०, ३०।५।१९२०।]

५. मुसलमानों का निर्णय : इलाहाबाद की खिलाफत-सभा में

इलाहाबाद की खिलाफत सभा[2] ने सर्व-सम्मति से असहयोग के सिद्धान्त को स्वीकार कर लिया है और विस्तृत कार्यक्रम निश्चित और कार्यान्वित करने के लिए एक समिति नियुक्त की है। इस सभा के पहले हिन्दू-मुसलमानो की एक सयुक्त सभा भी की गई थी जिसमे हिन्दू नेताओ से अपना अपना मत प्रकट करने के लिए कहा गया। उस सभा मे श्रीमती बेसेण्ट, माननीय प० मालवीय जी, माननीय

१. जवाहरलाल नेहरू को मसूरी से चले जाने का जो आदेश दिया गया था, वह जून १९२० मे वापस ले लिया गया था।

२. खिलाफत समिति के तत्वावधान मे ९ जून १९२० को यह सभा हुई।

डा० सप्रू,[1] मोतीलाल नेहरू, श्री चिन्तामणि[2] आदि प्रमुख नेता उपस्थित थे। भिन्न-भिन्न मतों के हिन्दू नेताओं को उनकी राय जानने के लिए निमन्त्रित करके खिलाफत समिति ने बुद्धिमानी का काम किया। श्रीमती बेसेण्ट तथा डा० तेजबहादुर सप्रू ने मुसलमानों को जोरदार शब्दों में असहयोग की वर्तमान नीति को मानने की सलाह दी। अन्य हिन्दू नेताओं ने पहलू बचाकर भाषण दिये। इन नेताओं ने अपने भाषणो मे सिद्धान्ततः तो असहयोग आन्दोलन को स्वीकार किया पर उसके संचालन में अनेक तरह की व्यावहारिक कठिनाइयां बताई। उन्हे इस बात का भी भय था कि यदि मुसलमानो ने अफगानों को भारतवर्ष पर आक्रमण करने के लिए निमन्त्रित किया तो बखेड़ा मच सकता है। इस पर मुसलमान वक्ताओं ने स्पष्ट शब्दों में कहा कि यदि कोई भी विदेशी शक्ति भारत पर आक्रमण कर उसे अपने अधीन करने की चेष्टा करेगी तो उसके प्रतिरोध में एक-एक मुसलमान बलिदान हो जायगा। किन्तु उन्होने यह बात भी स्पष्ट रूप से कही कि यदि कोई बाहरी शक्ति इस्लाम की प्रतिष्ठा की रक्षा और न्याय दिलाने के लिए भारत पर आक्रमण करेगी तो वे उसे वास्तविक सहायता न भी दे पर उसके साथ उनकी पूरी सहानुभूति होगी। हिन्दुओ की आशंका समझ में आती है और वह उचित भी है। पर मुसलमानों की स्थिति का विरोध करना भी कठिन है। तब मेरे विचार से अगर भारत को इस्लाम की शक्तियों और अंग्रेजी ताकत के बीच संघर्ष नही होने देना है तो उसका सबसे अच्छा तरीका यह है कि हिन्दू लोग असहयोग को पूरी तरह सफल बनाये और वह भी जितनी जल्दी हो सके उतनी जल्दी। और मुझे पूर्ण विश्वास है कि यदि मुसलमान लोग अपने घोषित इरादों पर डटे रहे, आत्म-संयम से काम ले सके और बलिदान कर सके तो हिन्दू लोग भी अपने वादे के अनुसार अवश्य ही उनक साथ देगे और असहयोग आन्दोलन में शरीक होगे। लेकिन साथ ही मुझे इस बात का भी उतना ही अधिक भरोसा है कि हिन्दू लोग ब्रिटिश सरकार तथा उनके मित्र देश और अफगानिस्तान के बीच युद्ध की स्थिति पैदा करने में मुसलमानो की सहायता नही करेगे। इसके अतिरिक्त ब्रिटिश सेना इतनी संगठित है कि कोई भी विदेशी शक्ति सहज ही भारत पर सफल आक्रमण नही कर सकती। इसलिए मुसलमानों के लिए इस्लाम की सम्मान-रक्षा के लिए प्रभावशाली ढंग से संघर्ष चलाने का एक उपाय यही है कि पूरी लगन

---

१ सर तेज बहादुर सप्रू (१८७५-१९४९) प्रसिद्ध वकील; १९२०-२२ में वाइसराय की कार्यकारिणी में कानून-सदस्य, १९२३ और १९२७ में लिबरल फेडरेशन के अध्यक्ष। २. सर चि० य० चिन्तामणि (१८८०-१९४१), 'लीडर' के सम्पादक, लिबरल फेडरेशन के अध्यक्ष (१९२०, १९३७)।

से असहयोग का रास्ता अपनाये। यदि लोगो ने व्यापक पैमाने पर इसे अपनाया तो वह केवल प्रभावकारी ही नही होगा, बल्कि प्रत्येक व्यक्ति को इसमे अपनी सद्-असद् बुद्धि का प्रयोग करने की भी पूरी छूट रहेगी। यदि मैं किसी व्यक्ति-विशेष या सस्था के अन्याययुक्त आचरण को नही सहन कर सकता और यदि मैं प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से उस व्यक्ति या सस्था का समर्थन करता हू, तो इसके लिए मुझे ईश्वर के सामने जवाबदेह होना पडेगा। किन्तु अगर मैं ऊपर बताये गये तरीके से अन्यायाचरण का समर्थन नही करता तो इसका मतलब होगा कि अन्यायी तक के अहित करने का वर्जन करनेवाले नैतिक नियम के अनुरूप मुझसे जो कुछ बन सकता था, मैंने किया इसलिए ऐसे महान अस्त्र का प्रयोग करने मे जल्दबाजी अथवा क्रोध से काम नही लेना चाहिए। असहयोग आन्दोलन हर तरह से आत्मप्रेरित होना चाहिए। इसलिए सब कुछ मुसलमानो पर ही निर्भर करता है। यदि उन्होने अपनी सहायता आप की तो हिन्दुओ की सहायता उन्हे अवश्य प्राप्त होगी और सरकार को, चाहे वह कितनी ही शक्तिशाली क्यो न हो, अवश्य ही इस दुर्निवार शक्ति के सामने झुकना पडेगा। किसी राष्ट्र की समस्त जनता के रक्तपातविहीन विरोध का सामना सम्भवत कोई भी सरकार नही कर सकती।

—अंग्रेजी। य० इं०, ९।६।१९२०।]

६. असहयोग समिति

३ जून को इलाहाबाद मे खिलाफत समिति ने जिस असहयोग समिति की नियुक्ति की, उसके विषय मे तरह-तरह के भ्रम और गलत अनुमान फैले दिखते हैं।[1] उस सभा मे उपस्थित एक मित्र लिखते हैं कि यह समिति असहयोग को पूरी तरह से कार्यरूप देने के उद्देश्य से गठित की गई है और इसे असहयोग से सम्बन्धित सारे मामलो मे जो चाहे करने का अधिकार दे दिया गया है—मानो यह अधिकारियों के पास निवेदन आदि भेजने के मामले मे भी भारत की सारी मुसलमान आबादी का प्रतिनिधित्व करती हो। समिति का अधिकार-क्षेत्र इतना व्यापक नहीं है, यही दिखाना इस लेख का उद्देश्य है।

इस समिति की स्थापना का सुझाव देते हुए जैसा मैंने बताया था, उसका उद्देश्य असहयोग के सम्बन्ध मे देश की इच्छा जानना और उसे कार्यान्वित करना था।

---

१. देखिए: 'भाषण : खिलाफत समिति की बैठक मे', ३।६।१९२०।

यद्यपि यह एक प्रतिनिधि-संस्था है और इसे जो उचित लगे वह करने का पूरा अधिकार है फिर भी यह नहीं कहा जा सकता कि यह भारत के सभी अच्छे और प्रभावशाली मुसलमानों की प्रतिनिधि-संस्था है, और न इसे ऐसा रूप देने का कोई इरादा ही रहा है। उदाहरण के लिए, यह नवाब-जमीदार आदि वर्गों के मुसलमानों का प्रतिनिधित्व नहीं करती। इसे जानबूझ कर उन्ही तक सीमित रक्खा गया है जो अपना सारा समय और ध्यान असहयोग-आन्दोलन का संगठन करने में और ऐसा करते हुए यह सुनिश्चित करने में लगा सकें कि कैसे लोग विभिन्न हिदायतों, अनुशासन तथा अहिंसा का पालन कर सकते हैं। सो दरअसल वह कार्यकर्त्ताओं की समिति है। यह आशा नही की जा सकती कि भारत के सभी मुसलमान असहयोग के सम्बन्ध में एक-सी तत्परता दिखायेंगे। कुछ को इसकी प्रभावकारिता में सन्देह है, तो कुछ इसे बहुत हलका इलाज मानते हैं। इसी तरह कुछ को भय है कि यह इलाज भारत के लिए बहुत सख्त है; उनका कहना है कि भारत में अभी बलिदान की भावना इतनी जाग्रत नही हुई है जिससे यहां असहयोग की सफलता निश्चित मानी जा सके। इस प्रकार की शंकाएं उठानेवाले लोग, हो सकता है, इस समिति मे शामिल कई मुसलमानो से अन्यथा अधिक प्रभावशाली हों, लेकिन समिति न तो उनका प्रतिनिधित्व करती है और न उन्हें इसमें शामिल ही किया गया है। इसमें केवल ऐसे लोग ही शामिल किये गये हैं जिनका असहयोग में अधिक-से-अधिक विश्वास है और जो असहयोग में अपनी पूरी निष्ठा घोषित करने के बावजूद इसकी गति इतनी तीव्र करने की कोशिश नही करेंगे कि औरों से इसका सम्बन्ध ही न रह जाय, बल्कि इसके विपरीत, जहां तक सम्भव हो समस्त राष्ट्र को असहयोग के कार्यक्रम में साथ लेकर चलने की कोशिश करेंगे। दूसरी ओर ऐसा करते हुए वे स्वयं अधिक-से-अधिक साहसपूर्ण कदम उठाने में नहीं हिचकेंगे और ऐसे लोगों को भी साथ लेते जायंगे जिनमें ऐसी निष्ठा और साहस हो। अतएव इस समिति को, जिसकी आज कोई ख्याति नही है, अपने सुपरिणामो के बल पर ख्याति प्राप्त करनी है, नाम कमाना है। अगर यह समिति काम करके नही दिखाती, या अपने काम के बावजूद कुछ परिणाम नही दिखाती तो इसका अस्तित्व ही नही रह जायगा। बाहरवालों की दृष्टि में यह किसी तरह प्रतिनिधि-संस्था नहीं है। उनके विचार से शौकत अली स्वभाव से सरल तो है, लेकिन बिलकुल धर्मान्ध है और उनका किसी पर कोई प्रभाव नही है; हसरत मोहानी बेकार के आदमी है और उन्हें तो हमेशा स्वदेशी की ही धुन लगी रहती है; डा० किचलू अभी कल के छोकरे है और उन्हें अमृतसर से बाहर की दुनिया का कोई अनुभव नही है। दूसरों के बारे में भी ऐसी ही बहुत-सी बाते कही जा सकती हैं। मैं उनके विचार में औरों से श्रेष्ठ तो हूं,

लेकिन आखिरकार एक सनकी आदमी हू और इस मामले से कोई सीधा सम्बन्ध न होते हुए भी इसमे जबरजस्ती टाँग अडाने को आ गया हू। उनके खयाल से इसके सदस्यो के हस्ताक्षर से जो भी आवेदन जायगा उसका जहा तक इन हस्ताक्षर-कर्त्ताओ के निजी प्रभाव का सम्बन्ध है, कोई असर नही होगा। इसका यह मतलब नही कि यह अभी आवेदन देगी ही नही। जब फौरन किसी कार्रवाई की जरूरत होगी या जब अन्य लोग नीतिवश या किसी दूसरे कारण से आवेदनो पर हस्ताक्षर करने को तैयार नही होगे तो यह अपने सदस्यो के हस्ताक्षरो से आवेदन अवश्य भेजेगी। हा, यह तो है ही कि महत्वपूर्ण आवेदनो पर लोगो से हस्ताक्षर कराने के प्रयत्न के सिलसिले मे लोकमत का अन्दाजा भी हो जायगा और वह इस बात की भी कसौटी होगा कि देश के गण्यमान्य लोग बलिदान के लिए कहा तक तैयार हैं। लेकिन आम जनता के लिए और आन्तरिक कार्यों के लिए यह समिति पूर्ण-रूप से प्रतिनिधि-सस्था है। मुस्लिम लोकमत का शौकत अली और हसरत मोहानी से बढकर कोई दूसरा प्रतिनिधि मिल पाना मुश्किल ही है। दूसरे लोग यद्यपि इन-जैसे प्रसिद्ध नही है, लेकिन ऐसा माना जाता है कि उनमे उद्यमशीलता है, धैर्य है, शान्ति और सचाई है, कठिनाइयो के बीच साहस कायम रखने की क्षमता है, और बलिदान की भावना है, और उन्ही गुणो के कारण उन्हे चुना गया है।

यह भी कहा गया है कि इस आन्दोलन का नेतृत्व मैं करूगा। लेकिन यह बात अशत ही सच है, और मैं ऐसा सिर्फ विनयवश नही कह रहा हू बल्कि इसलिए कह रहा हू कि यह अक्षरश. सत्य है। अगर विश्वास जोर पकड गया कि इस आन्दोलन का नेतृत्व मैं कर रहा हू तो वह इसके लिए घातक सिद्ध हो सकता है। मैं इस आन्दोलन का नेतृत्व इस अर्थ मे तो कर रहा हू कि मैं एक ऐसा सलाहकार हू जिसकी सलाह आज सबसे अधिक स्वीकार की जाती है और असहयोग के कार्यक्रम को कार्यान्वित करने के लिए जिसके सकल्प का कोई मुकाबला नही कर सकता। लेकिन मैं मुस्लिम लोक-मत का प्रतिनिधित्व करने का झूठा दावा नही करता। मैं तो सिर्फ उसकी व्याख्या ही कर सकता हूं। मैं अकेले खडा होकर मुसलमान जनता को अपने साथ ले चलने की आशा नही कर सकता। अगर किसी मिले-जुले मुस्लिम श्रोता-समूह के सामने मैं धार्मिक मामलो मे गण्यमान्य मुसलमानो के खिलाफ कुछ कहना चाहू तो लोग शायद मुझे बोलने भी नही देगे और वह ठीक ही होगा। लेकिन अगर मैं मुसलमान होता तो मैं मुसलमानो की किसी सभा मे प्रतिकूल-से-प्रतिकूल परिस्थितियो मे भी अपनी बात कहने मे नही हिचकता। मैं अपने को एक बुद्धिमान कार्यकर्ता मानता हू और मेरी बुद्धिमत्ता का मतलब इसके सिवाय और कुछ नही है कि मैं अपनी सीमाओ से भली-भाति परिचित हू। मेरा खयाल

है, मैं इन सीमाओं का अतिक्रमण कभी नही करता। कम-से-कम जान-बूझ कर तो मैंने ऐसा कभी नही किया है। हर समझदार मुसलमान को मेरी इन सीमाओं और मेरे कार्यक्षेत्र की मर्यादाओं का ध्यान रखना चाहिए। किसी तरह का अज्ञान इस आन्दोलन की सफलता के मार्ग में घातक सिद्ध हो सकता है। मैं इस आन्दोलन से सम्वद्ध हूं, इस कारण कार्यकर्त्ताओं को सुस्ती अथवा लापरवाही नही वरतनी चाहिए। अगर इस आन्दोलन के साथ मेरे सम्वन्ध से कुछ अच्छे परिणाम निकलते है तो इस सम्वन्ध का मतलव इतना ही समझना चाहिए कि लोगों को अधिक सर्तक रहना है, दायित्वभाव का अधिक अनुभव करना है, काम करने की अधिक क्षमता और इच्छा रखनी है तथा ज्यादा कुशलता दिखानी है। मैं योजनाएं वना सकता हूं, लेकिन उन्हें कार्यरूप देना सदैव मुसलमान कार्यकर्त्ताओं के हाथों में ही रहेगा। मेरे-जैसे मित्रों की सहायता से, और जरुरत हो तो उनकी सहायता के विना भी, यह आन्दोलन उन्हे ही चलाना है; इसका नेतृत्व उन्हें ही करना है। मुझसे ऐसी आशा नही करनी चाहिए कि मैं असहयोग करनेवाले लोग तैयार करुंगा, यह तो मुसलमान नेता ही कर सकते है। मै चाहे कितना ही वलिदान करूं, यानी (मुसलमानों के) इस धार्मिक मामले में कितना ही वलिदान करूं, उससे मुस्लिम संसार मे असहयोग की भावना नही आ सकती। जव मुसलमान नेता अपने आचरण में यह चीज दिखायेंगे तभी जन-साधारण में यह भावना विकसित होगी।

और अव इस प्रश्न का उत्तर देना वहुत आसान हो गया है कि समिति में हिन्दू नेता क्यों नही शामिल किये गये हैं। सर्वोच्च समिति तो विशुद्ध रूप से मुसलमानों से वनी होनी चाहिए। उसमें मेरा शामिल रहना भी एक वुराई ही है, लेकिन मेरी योग्यताओं को देखते मेरा उसमें रहना एक ऐसी वुराई है जिसे टाला नही जा सकता। मैंने असहयोग का विशेष ज्ञान प्राप्त किया है। मैंने सफलता-पूर्वक इसका प्रयोग करके देखा है। इस असहयोग-विषयक प्रस्ताव की कल्पना दिल्ली सम्मेलन[1] में मैंने ही की थी। अतएव मैं इस समिति में विशेषज्ञ की हैसियत से शामिल हूं, हिन्दू की हैसियत से नहीं। अतः मेरा काम भी सिर्फ सलाहकार का काम है। हां, यह वात निस्सन्देह समिति के लिए लाभदायक है कि मैं एक ऐसा कट्टर हिन्दू हूं जो असहयोग में अपने मुसलमान भाइयों का पूरी हदतक साथ

---

१. जो जनवरी १९२० के तीसरे सप्ताह में हुआ था। वह १९ जनवरी को दिल्ली में वाइसराय से मुलाकात करनेवाले भारतीय खिलाफत शिष्टमण्डल के सदस्यों का सम्मेलन था।

देना प्रत्येक हिन्दू का कर्त्तव्य मानता हू। लेकिन यह लाभ तो, मैं समिति मे होता या न होता, उसे यो भी प्राप्त ही रहता।

जब खिलाफत से हिन्दुओ के सम्बन्ध पर विचार करते समय किंचित् पुनरावृत्ति का खतरा उठाकर भी मैं अपनी स्थिति स्पष्ट कर देना चाहूगा। चूकि मैं मुसलमानो की माँगो को (धार्मिक दृष्टि की बात अलग रक्खें तो भी) वास्तविक दृष्टि से उचित मानता हू इसलिए मैं उनके साथ असहयोग मे पूरी हदतक चलने को तैयार हू। और मैं इस चीज को भारत के साथ ब्रिटेन के सम्बन्धो के प्रति मेरी जो निष्ठा है, उससे भी सर्वथा सगत मानता हू। लेकिन मैं किसी हिंसात्मक लडाई मे मुसलमानो के साथ नही जाऊगा। उदाहरण के लिए, अगर शान्ति-सन्धि की शर्तों को मुसलमानो के लिए अधिक अनुकूल बनवाने के उद्देश्य मे अफगानिस्तान की ओर से या किसी और रास्ते भारत पर किसी आक्रमण को बढावा देने का प्रयत्न किया जाय तो मैं उसमे सहायता नही दे सकता।[1] मेरे विचार से उपर्युक्त उद्देश्य से किये गये किसी आक्रमण का विरोध करना भी उसी तरह प्रत्येक हिन्दू का कर्त्तव्य है जिस तरह यह कि वह असहयोग या कष्ट-सहन के किसी और तरीके से लाख मुसीबतें झेलकर भी अपने मुसलमान भाइयो की उचित और न्यायसगत मागो को सरकार से स्वीकार करवाने के प्रयास मे तबतक हाथ बँटाता रहे, जबतक कि उससे भारत की स्वतन्त्रता को कोई खतरा न हो। किसी के साथ हिंसा न की जाये। मैं पूरे मन से असहयोग आन्दोलन मे कूद पडा हू, और किसी कारण से नही तो कम-से-कम इसी कारण से कि मैं ऐसे किसी सशस्त्र सघर्ष को रोकना चाहता हू।

—अंग्रेजी। य० इं० २३।६।१९२०। सं० गां० वा० खण्ड १७ अप्रैल १९६४ संस्करण पृ० ५४९, ५०, ५१, ५२।]

---

१. १ और २ जून, १९२० को इलाहाबाद मे आयोजित हिन्दुओ और मुसलमानो के संयुक्त सम्मेलन मे हिन्दू प्रतिनिधियो ने यह आशका व्यक्त की थी कि अगर भारतीय मुसलमान अफगानिस्तान को भारत पर आक्रमण के लिए बढावा देंगे तो उलझन पैदा हो सकती है। मुसलमान वक्ताओ ने आश्वासन दिया कि अगर विशुद्ध रूप से भारत को जीतने के लिए इसपर कोई आक्रमण किया गया तो उसका प्रतिरोध करेंगे, लेकिन साथ ही यह भी कहा कि इस्लाम की प्रतिष्ठा और न्याय के हक मे किये गये किसी भी आक्रमण के साथ पूरी सहानुभूति होगी, भले ही वे उसमे वास्तविक सहायता न दें।

७. हिन्दू-मुस्लिम एकता : आगरा की घटना के सन्दर्भ में

इसमें सन्देह नही कि असहयोग की सफलता जितनी अहिंसा पर निर्भर करती है उतनी ही हिन्दू-मुस्लिम एकता पर। इस संघर्ष में इन दोनों की वड़ी कड़ी कसौटी होगी और अगर वह उसमें टिकी रही तो विजय निश्चित है।

आगरा में उसकी कठिन परीक्षा हुई और कहा जाता है कि जब दोनों दल न्याय के लिए अधिकारियों के पास गये तो उन्होंने उनसे शौकत अली और मेरे पास आने को कहा। सौभाग्य से उन्हें पास ही में इस काम के लिए हम दोनों से भी ज्यादा उपयुक्त आदमी मिल गया। हकीम अजमल खां धार्मिक मुसलमान है और उनपर दोनों ही पक्षों का विश्वास है। हिन्दू और मुसलमान, दोनों ही उनका आदर करते हैं। वह अपने सहायक कार्यकर्ताओं के साथ शीघ्र ही आगरा पहुँचे। उन्होने झगड़ा निपटा दिया और दोनों पक्षों में फिर पहले से भी प्रगाढ़ मैत्री हो गई। ऐसी घटना, जो वढ़कर भयंकर उत्पात का कारण हो सकती थी, वही शान्त हो गई।

लेकिन हकीम अजमल खां साहब शान्ति के देवदूत की तरह ठीक समय पर हर जगह तो नहीं पहुँच सकते। न शौकत अली या मैं ही। और इस वात की जरूरत तो है कि इन दोनों में फूट डालने की जो भी कोशिशें की जायँ, उसके बावजूद उनके वीच पूरी शान्ति रहे।

सवाल यह है कि आगरा में अधिकारियों से सहायता की प्रार्थना की ही क्यों गई? अगर हम लोग असहयोग को तनिक भी सफल वनाना चाहते हैं तो जब हम आपस मे लड़ते है उस समय हमें इस वात की जरूरत नही होनी चाहिए कि हम सरकार से रक्षा करने के लिए कहे। यदि हम अपने झगड़ो के निपटाने के लिए या अपराधियों को दण्डित करने के लिए अन्त में ब्रिटिश सरकार पर ही भरोसा रखते है तो असहयोग की यह सारी योजना ही विफल हो जायगी। हर एक गांव में, छोटे-से-छोटे गांव में भी, कम-से-कम एक हिन्दू और एक मुसलमान ऐसा अवश्य होना चाहिए जिसका मुख्य कार्य हिन्दू-मुसलमानों में झगड़ा न होने देना हो। लेकिन कभी-कभी तो सगे भाइयों मे भी मारपीट की नौवत आ जाती है। प्रारम्भिक अवस्था में जहां-तहाँ हम भी ऐसा ही करेंगे। दुर्भाग्यवश सार्वजनिक सेवा का कार्य करने वाले हम लोगो ने अपनी जनता के मानस को समझने और उस पर अभीष्ट प्रभाव डालने का वहुत कम प्रयत्न किया है। उनमे भी जो ज्यादा झगड़ालू किस्म के हैं उन पर तो ध्यान ही नही दिया है। जवतक हम लोग जनता का आदर नहीं प्राप्त कर लेते और जवतक उद्दण्डों को अपने वश में नही कर लेते

तबतक इस तरह की बदमिजाची की घटनाएँ कभी-कभी अवश्य हुआ करेंगी। पर ऐसी घटनाओ के हो जाने पर हमे सरकार का मुह ताकना छोड देना चाहिए। हकीम जी ने हमे प्रत्यक्ष दिखला दिया कि यह कैसे किया जा सकता है। जिस एकता के लिए हम लोग चेष्टा कर रहे हैं, वह एकता बनावटी नही, दिली होनी चाहिए; उन्हे यह बात अच्छी तरह समझ लेनी चाहिए कि जबतक हिन्दू और मुसलमान एक ग्रन्थि मे सदा के लिए बँध नही जाते, तबतक जिस स्वराज्य का सुखस्वप्न देखा जा रहा है वह प्रत्यक्ष दृष्टिगोचर नही हो सकता। अस्थायी सन्धि से यह काम नही सिद्ध हो सकता। पारस्परिक भय भी उसका आधार नही हो सकता। यह मेल दो बराबर की हैसियत रखनेवालो का मेल होना चाहिए जिसमे दोनो बराबरी की हैसियत से मिलते हैं और एक-दूसरे के धार्मिक भावो का समुचित आदर करते हैं।

यदि कुरान मे मुसलमानो से कही यह कहा गया होता कि वे हिन्दुओ को अपना सहज वैरी समझें या हिन्दुओ के धर्मशास्त्र मे ऐसी कोई बात होती जिसके कारण हिन्दू लोग मुसलमान को अपना चिरकालिक दुश्मन मानते तो मैं इस तरह के मेल को सर्वथा असम्भव समझता और इस ओर से सर्वथा निराश हो जाता।

यदि हम लोगो की यही धारणा है कि हम तो अतीत काल से आपस मे लडते आये हैं, इसलिए भविष्य मे भी लडते रहेंगे और हमारी यह लडाई तभी बन्द हो सकती है जब ब्रिटेन-जैसी कोई शक्तिशाली सत्ता हमारे बीच मे पडे और हमे बलपूर्वक एक-दूसरे का गला काटने से रोके तो हमे यही कहना पडेगा कि हम लोगो ने अपने इतिहास का ठीक तरह से मनन नही किया है। किन्तु हिन्दू या मुसलमान धर्म मे ऐसी कोई बात नही जिसके आधार पर हम इस तरह की धारणा बना लें। यह सच है कि स्वार्थी पुरोहितो या मुसलमानो ने उन्हे एक दूसरे से लडने के लिए उभारा है। यह भी सच है कि ईसाई राजाओ की तरह मुसलमान बादशाहो ने भी इस्लाम धर्म के प्रचार के लिए तलवार की सहायता ली थी पर अब यह समय नही रहा। यद्यपि वर्तमान युग के माथे पर तरह-तरह की बुराइयो का टीका लगा है तो भी जैसे वह आज जबरदस्ती लादी गई गुलामी सहन करने के लिए तैयार नही होगा उसी प्रकार धर्म-प्रचार मे इस तरह का बलात्कार सहन करने के लिए भी तैयार नही होगा। आज का युग विज्ञान का युग है और इस वैज्ञानिक दृष्टि से हमने जो कुछ पाया है उसका शायद सबसे प्रभावकारी लाभ यही है।

विज्ञान की इस भावना ने ईसाई तथा इस्लाम धर्म की अनेक भ्रामक धारणाओ को बिल्कुल ही बदल डाला है। इस युग मे एक भी ऐसा मुसलमान नही दिखाई देता जो धर्म-प्रचार के हेतु किसी तरह की ज्यादती या बलात्कार का समर्थन करता

हो। इस समय जिन बातों का प्रभाव मनुष्य-हृदय पर पड़ सकता है उनके मुकावले तलवार का प्रभाव कुछ नही है।

यद्यपि पश्चिम मे लोग रक्तपात, धोखेबाजी, दगाबाजी, आदि के प्रयोग में अब भी प्रवीण है और उसका धड़ाधड़ प्रयोग करते हैं तो भी समस्त मानव-समाज धीरे-धीरे उन्नति के पथ पर आगे बढ़ता जा रहा है। और यदि भारत आज हिन्दू-मुस्लिम एकता का प्रश्न हल करके अहिसात्मक असहयोग-द्वारा यानी विशुद्ध आत्म-त्याग के सहारे अपनी स्वतन्त्रता स्थापित कर लेगा तो वह संसार को वर्तमान अंधेरे से एक नया मार्ग दिखला देगा।

—अंग्रेजी। यं० इं०, ६।१०।१९२०]

८. अलीगढ़ के एक आलोचक को उत्तर[1]

यह काम डिस्ट्रक्शन (खण्डन) का अवश्य है लेकिन फिलहाल जो खराव घास उग आई है उसे जड़ मूल से उखाड़ने की ही जरूरत है जिससे कि अच्छे अनाज की बुवाई की जा सके।

० ० ०

जहां आपको घड़ी भर के लिए भी यूनियन जैक को स्वीकार करना पड़ता है, जहां किसी भी गवर्नर अथवा किसी अन्य उच्चाधिकारी के आने पर आपको यह कहने के लिए विवश होना पड़ता है कि आप उसके प्रति वफादार है, जब कि आप वफादार नही है, वहां आप पल भर के लिए भी कैसे रुक सकते है?

० ० ०

जो कालेज स्वतन्त्र हो गया है उसके लिए तो ज्यादा-से-ज्यादा पैसा आयेगा। और फिर जहां मुहम्मद अली और शौकत अली जैसे श्रीमन्त है वहां पैसे की क्या चिन्ता हो सकती है?

—अलीगढ़। १२।१०।१९२०। हिन्दी। श्री महादेव देसाई के गुजराती यात्रा-विवरण से संकलित। न० जी० २४।१०।१९२०।]

---

१. शौकत अली और मुहम्मद अली के साथ गांधी जी यूनियन हाल में विद्यार्थियों से मिले। उपर्युक्त बातें उन्होंने किसी व्यक्ति-द्वारा की हुई आलोचना के प्रत्युत्तर में कही थीं।

१. पत्र : अलीगढ़ कालेज के ट्रस्टियों को

२४-१०-१९२०

सज्जनो,

आप भारत के सभी मुसलमान, विश्व के एक अत्यन्त नाजुक विषय पर अपना निर्णय देने के लिए इकट्ठे होने जा रहे है। मैंने सुना है कि आपने अपनी बैठक के अवसर पर सरकार और पुलिस की मदद माँगी है। यह अफवाह सच हो तो आप निश्चित समझिए कि ऐसा करके आप बहुत बडी भूल करेंगे। अपने सर्वथा घरेलू मामले मे आपको न तो सरकारी हस्तक्षेप की आवश्यकता है और न पुलिस के सरक्षण की। अली भाई या मैं, दोनो मे से कोई भी पशु-बल की लडाई मे थोडे ही लगे हैं। हमारी छेडी गई लडाई मे एक मात्र हथियार जनमत है और हम जनता को अपने पक्ष मे न रख सके, तो हम अपनी हार स्वीकार कर लेंगे। (हमारे बीच के) इस झगडे मे भी लोकमत की परीक्षा आपको बहुमत मिलने से ही होगी।इसीलिए इस मामले की पूरी चर्चा कर लेने के बाद भी आप बहुमत से इस नतीजे पर पहुँचें कि यदि कालेज या स्कूल के छात्र सस्था को सरकार से असम्बद्ध करने और सरकारी सहायता अस्वीकृत करने के विषय मे अपना आग्रह नही छोड देते तो उन्हें छात्रावास मे रहने या केवल कालेज मे जाकर पढते रहने का अधिकार नही है तो वे शान्तिपूर्वक चले जायगे। उस हालत मे यथा-सम्भव अलीगढ मे और न हो सके तो अन्यत्र हमने उनकी शिक्षा जारी रखने का विचार किया है। इच्छा तो यह है कि उनका धर्म-निरपेक्ष शिक्षण जितना बिल्कुल जरूरी है उससे अधिक एक क्षण के लिए भी न रुके परन्तु यह शिक्षा इस्लाम के कानून और भारत की इज्जत के अनुसार देने की हमारी दिली ख्वाहिश है। मैंने इस बारे मे मशहूर उलेमाओ की राय ले ली है और उनका यह मत है कि जिस सरकार ने पवित्र खिलाफत को नष्ट करने या जजीरत-अल-अरब[1] के इस्लामी अधिकार मे हस्तक्षेप करने के प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष प्रयत्न किये हैं, उससे कोई धर्मनिष्ठ मुसलमान सहायता नही ले सकता। यह तो आप भी हमारे जितना ही जानते हैं कि इस हुकूमत ने भारत की इज्जत को किस प्रकार इरादतन मिट्टी मे मिलाया है। इन कारणो से लोगों का जोश काबू मे रखने की सावधानी के साथ जनता सरकार के साथ का सारा स्वेच्छा-पूर्ण सम्बन्ध तोड रही है। ऐसी हालत मे मेरा खयाल है कि आपको कम-से-कम इतना तो करना ही चाहिए कि आइन्दा सरकारी मदद लेने से इन्कार कर दें, अपनी महान सस्था को सरकार से स्वतन्त्र बनालें और मुस्लिम विश्वविद्यालय के लिए

---

१. हेजाज के पवित्र स्थान।

मिला हुआ चार्टर (अधिकार-पत्र) लौटा दें। और यदि आप इस्लाम और भारत की पुकार अनसुनी कर दें, तो अलीगढ़-संस्था के छात्रों को, जिस सरकार ने इस्लाम और भारत की वफादारी का सारा हक्क खो दिया है, उसकी छत्रछाया स्वीकार करनेवाली, आपकी संस्था की परछाईं तक छोड़ देनी चाहिए। तब उन्हें इस अलीगढ़ के स्थान पर अधिक विशाल, अधिक उदात्त और अधिक निर्मल अलीगढ़, उसके महान संस्थापक के हृदय की आकांक्षाओं को पूरा करनेवाला अलीगढ़, खड़ा करना चाहिए। मेरी तो कल्पना में भी नही आ सकता कि स्वनामधन्य स्वर्गवासी सर सैयद अहमद खां[1] अपनी महान संस्था को मौजूदा सरकार के अधिकार या प्रभाव में एक क्षण भी रहने देते।

चूंकि अलीगढ़ संस्था को सरकारी नियन्त्रण और सरकारी सहायता से अलग कराने के विचार का मैं जन्मदाता हूं इसलिए मेरा खयाल है कि आपकी चर्चाओं के समय यदि मैं आपकी बैठक में उपस्थित रहूं तो शायद सहायक सिद्ध हो सकता हूं। इसलिए यदि मुझे उपस्थित रहने की आज्ञा देंगे तो मैं आनन्द से अपनी सेवाएं अर्पण करने को तयार हूं। इस समय मैं बम्बई जा रहा हूं और वहां आपके उत्तर की प्रतीक्षा करूंगा।

परन्तु आप मुझे सभा में बुलायें या न बुलायें, फिर भी कृपा करके साफ घरेलू मामलों के बीच सरकार को हर्गिज न डालिए।

और आपकी मार्फत मुझे इस सरकार को भी थोड़ा-सा कह लेने दीजिए। आजकल मेरे और अली भाइयों के बारे में सरकार के इरादों के सम्बन्ध में अफवाहें उड़ती रहती हैं। मैं आशा रखता हूं कि सरकार लड़ाई को अपने मार्ग पर शान्तिपूर्वक अग्रसर होने देगी और ऐसा हो सके इसलिए हमारी स्वतन्त्रता पर अंकुश नहीं लगायेगी। हम अपनी बात का प्रचार अत्यन्त वैधानिक रीति से करने की कोशिश कर रहे हैं। हम प्रयत्न कर रहे हैं कि सरकार को लोगों की इच्छा के सामने झुकायें और ऐसा करने को तैयार न हो तो पशुबल का आश्रय नही परन्तु शुद्ध लोकमत के जोर से उसे उलट दें। हम मानते है कि सरकार की शैतानियत का पर्दा फाश करना और लोगों से अपनी इच्छा शब्दों में नही बल्कि कार्यों के द्वारा यानी सरकार से अपना सारा सम्बन्ध तोड़ कर, व्यक्त करने के लिए कहना सर्वथा वैध, न्यायपूर्ण और अच्छा काम है। और लोगो से सरकार के साथ असहयोग की बात हम उनकी पशु-वृत्तियों को उकसाकर नही बल्कि उनकी बुद्धि और उनके हृदय को जगाकर ही करते हैं। फिर भी यदि

---

१. शिक्षाशास्त्री (१८१७-१८९८), सुधारवादी, मोहम्मडन ऍंग्लो ओरिएण्टल कालेज के संस्थापक।

सरकार का इरादा विचार-स्वातन्त्र्य और शान्तिपूर्ण कार्य तक को दबा देने का हो तो मैं आशा रखूंगा कि वह हमारे विरुद्ध नजरबन्दी या किसी खास प्रान्त मे ही रहने या किसी विशेष स्थान पर न जाने आदि का कोई हुक्म जारी न करके हमे सीधा कैद ही कर लेगी। कारण, हमारी हार्दिक इच्छा है कि इस घडी हमारे अपने ही हाथो कानून का सविनय भंग न हो। परन्तु यदि हमारी घूमने-फिरने की आज़ादी पर प्रत्यक्ष अकुश रखने का कोई हुक्म हम पर लगाया जायगा, तो लाचार होकर उसका सविनय अनादर करना हमारा फर्ज हो जायगा। क्योकि जबतक हमारी घूमने-फिरने की आज़ादी पर प्रत्यक्ष बन्धन न लगा दिये जायें, तबतक अपने कार्य के हित मे उसका उपयोग करते रहने के लिए हम कृतसकल्प हैं।

कष्ट के लिए सविनय क्षमाप्रार्थी।

आपका सच्चा सेवक
मो० क० गाधी

—अंग्रेजी। २४।१०।१९२०। यं० इं० २७।१०।१९२०]

१०. अलीगढ

अलीगढ विश्वविद्यालय एक पुरानी—पैंतालीस साल पुरानी—सस्था है। इसकी अपनी विशिष्ट परम्पराए हैं। इसकी उपलब्धियो का इतिहास बडा गौरवमय है। इसने भारत को अली बन्धुओ-जैसी विभूतियाँ दी। यह भारत मे इस्लामी संस्कृति का बहुत ही जाना-माना केन्द्र है।

फिर मैं इसके वर्तमान स्वरूप को ध्वस्त क्यो करना चाहता हू? कुछ मुसलमान बहुत आसानी से ऐसा सोच लेते हैं कि मैं अलीगढ के कल्याण के बहाने वास्तव मे इसका अकल्याण ही चाहता हू। उन्हे शायद यह मालूम नही कि मैं अलीगढ विश्व-विद्यालय मे जो-कुछ करने की माग उसके न्यासियो से कर रहा हू वही सब हिन्दू विश्वविद्यालय के सम्बन्ध मे करने का अनुरोध मैं पण्डितजी[1] से भी कर रहा हू। और मैं निश्चय ही बनारस के विद्यार्थियो को भी वही बातें समझानेवाला हू जो बातें मैंने अलीगढ के विद्यार्थियो को समझाने की कोशिश की है। मैंने खालसा कालेज के सम्बन्ध मे भी यही किया है। यह कालेज सिख संस्कृति का प्रधान केन्द्र है।

---

१. पण्डित मदनमोहन मालवीय।

मेरी यह उत्कट इच्छा है कि इन स्वतन्त्र संस्थाओं के वर्तमान स्वरूप को नष्ट कर दूं, और फिर मैं इनके स्थान पर आज की अपेक्षा कही शुद्ध और सच्ची सस्थाएं खड़ी करने का प्रयत्न करूंगा।

मै यह मानने से इन्कार करता हूं कि ये संस्थाएं किसी भी तरह से अपनी-अपनी संस्कृतियों की सच्ची प्रतिनिधि है। और अंग्रेजों के हाथ से आज जितना खतरा इस्लाम को है उतना ही खतरा हिन्दुओं और सिखों को भी। मैंने अलीगढ़ के एक प्राध्यापक से पूछा कि क्या जरूरत पड़ने पर आप ऐसा प्रचार कर सकते हैं कि पूर्ण स्वतन्त्रता भारत का अन्तिम लक्ष्य है, अथवा क्या विश्वविद्यालय गवर्नर का ब्रिटिश शासक की हैसियत से अपने यहां स्वागत करने से इन्कार कर सकता है? उन्होंने स्पष्ट रूप से स्वीकार किया कि ऐसा सम्भव नहीं। और फिर भी मैं कहूंगा कि भारत के अधिकाश विद्यार्थियों के मन में ब्रिटिश शासन के लिए प्रतिष्ठा या सम्मान का कोई भाव नही है। इस शासन से वे बिल्कुल ऊब चुके है। निश्चय ही इसके प्रति उनके मन में कोई सद्भाव नही रह गया है। मैं तो कहूंगा कि लड़कों को इस कृत्रिम वातावरण में रखना उन्हें अपने धर्म से विमुख होने की सीख देना है, और उन्हें वहां रखकर उनकी अपनी-अपनी संस्कृति का बहुत बड़ा अपकार कर रहे हैं। हम यह नही चाहेगे कि हमारा राष्ट्र दम्भियों और मिथ्याचारियों का राष्ट्र बन जाय।

ब्रिटिश सरकार के क्या इरादे है, हम जानते है। इस हालत में अगर हम जलियावाला के निर्दोष रक्त से रंगे हाथों-द्वारा दिये गये पैसों में से छोटी-सी रकम भी स्वीकार करते हैं, जो पैसा दरअसल हमारा ही है, तो यह हमारी पुसत्वहीनता और अभारतीयता का सूचक होगा। अगर हम ऐसा करते हैं तब तो जिस डाकू ने हमारी सारी सम्पत्ति लूट ली हो, हम उसके हाथों से भी निश्चय ही दान स्वीकार कर सकते है। इस सरकार ने हमसे हमारा सम्मान छीना है और हमारे एक धर्म को खतरे मे डाल दिया है। मेरी नम्र सम्मति में ऐसे स्कूलों में शिक्षा प्राप्त करना पाप है, जिनका खर्च सरकार उठाती हो या जो सरकार के प्रभाव में हों।

इसलिए मैं बेहिचक यह सलाह दे रहा हूं कि इन सारी संस्थाओं को, किसी भी कीमत पर, शीघ्र ही नष्ट कर देना चाहिए। लेकिन अगर इन संस्थाओं के न्यासी, शिक्षक और माता-पिता या बच्चे एक होकर काम करेंगे तो हमें कुछ भी गँवाना नही पड़ेगा बल्कि प्राप्त बहुत-कुछ होगा।

मैं तो इन संस्थाओं का ढाँचा बदलने को कह रहा हूं, आत्मा नष्ट करने की कोशिश नहीं कर रहा हूं। जिस प्रकार हम पुराने पड़ गये शरीर का त्याग कर देते हैं उसी प्रकार जो संस्थाएं पुरानी पड़ गई है, हमारी आवश्यकता पूरी करने लायक नहीं रह गई हैं, अतः इन संस्थाओं को भी छोड़ देना चाहिए, और उनके बदले ऐसी नई

सस्थाए स्थापित करनी चाहिए जो हमारी आवश्यकताए पूरी करने की दृष्टि से ज्यादा उपयुक्त हो। जब राष्ट्र अपना कदम बढा रहा है तब अध्ययन व अध्यापन का काम करनेवाली सस्थाए, जो राष्ट्र के युवक-समुदाय का प्रतिनिधित्व करती हैं, पीछे कैसे रह सकती हैं? गुजरात मे ऐसे बहुत-से हाई स्कूलो ने, जिनकी उपलब्धियो का इतिहास न्यूनाधिक गौरवमय ही है, सरकारी अनुदान और सरकारी शिक्षा-व्यवस्था से जुडे रहने के मोह से छुटकारा पा लिया है। और इससे उनका कुछ घाटा नही हुआ, बल्कि उनका स्वरूप हर दृष्टिसे अधिक निर्मल हो गया है। अब वहा के न्यासी और प्रधानाध्यापक अपने स्कूलो के विद्यार्थियो को अपेक्षाकृत अधिक स्वतन्त्र वातावरण मे शिक्षा दे सकते हैं।

आर्थिक कारण तो उन्ही लोगो के मार्ग मे बाधक होता है जो काम नही करना चाहते। हमारी संस्थाए उस हालत मे नही चल सकेंगी, जब शिक्षक और न्यासी लोग अपने न्यास के प्रति ईमानदार नही होंगे या अगर राष्ट्र सचमुच ऐसी सस्था को नही चाहेगा। असहयोग का कार्यक्रम इस विश्वास पर आधारित है कि राष्ट्र वर्तमान सरकार से ऊब गया है और इसे हिंसा का सहारा लिये बिना बदलना चाहता है। अबतक का अनुभव यही बताता है कि राष्ट्र निश्चित रूप से परिवर्तन चाहता है। अगर इसमे असफलता मिलती है या विलम्ब होता है तो उसका कारण कार्यकर्त्ताओ का अभाव होगा।

—अंग्रेजी। यं० इ०, २७।१०।१९२०।]

११. लखनऊ के भाषण

अली-बन्धुओ के मेरे साथ लखनऊ पहुचने पर अभी जो सभा हुई थी बहुत लोगो का ध्यान उस ओर आकृष्ट हुआ है, क्योकि उसके परिणामस्वरूप श्री डगलस ने, जो एक भारतीय ईसाई बैरिस्टर हैं, असहयोग आन्दोलन से अपना सम्बन्ध तोड लिया है। श्री डगलस के इस निर्णय का कारण है उस अवसर पर मौलाना अब्दुल बारी द्वारा दिया गया भाषण। श्री डगलस का आरोप है कि मौलाना साहब ने ईसाइयो को काफिर कहा और श्री विलोबी की हत्या की लगभग उपेक्षा ही कर दी।

मैं उस सभा मे मौजूद था और मौलाना साहब का एक-एक शब्द ध्यान से सुन रहा था। इसलिए मैं कहना चाहता हू कि उस भाषण मे श्री डगलस के आन्दोलन से अलग होने की कोई गुजाइश ही नही थी। यह कहना भी सही नही है कि मौलाना

साहब ने हत्यारे को क्षम्य कहा या विलोबी को काफिर कहने में उनका मंशा ईसाइयत का अपमान करना था। श्री डगलस के पास इस सम्बन्ध-विच्छेद का कोई भी औचित्य नही है। उन्होंने सभा में कोई विरोध प्रगट नही किया, मुझसे कोई शिकायत नहीं की। वह जानते हैं कि मौलाना साहब का मैं बड़ा सम्मान करता हूं, अगर उनके भाषण में उस अपराध को क्षम्य मानने या ईसाइयत का किसी तरह से अपमान करने की कोई बात होती तो मैं खुद ही उसका प्रतिवाद करता। दुनिया के महान धर्मों में से कोई व्यक्ति किसी धर्म का अपमान करे तो मैं उसमे भागी नहीं बन सकता। इसके अतिरिक्त श्री डगलस अपनी वकालत छोड़कर असहयोग में सिर्फ खिलाफत के सवाल को लेकर ही शामिल नही हुए थे, पंजाब में किये गये अन्याय का भी उन्हें उतना ही ध्यान था, और उनका संकल्प स्वराज्य मिलने तक असहयोग की प्रगति के साथ कदम मिलाकर चलते रहने का था। क्या अब श्री डगलस पंजाब के अन्याय का निराकरण या स्वराज्य नही चाहते? और क्या सिर्फ इसी कारण खिलाफत आन्दोलन से उनका अलग हो जाना ठीक है कि एक मौलवी ने, चाहे वह कितना भी प्रतिष्ठित क्यों न हो, अपने भाषण से उनके मन को चोट पहुंचाई? निश्चय ही, श्री डगलस के इस रवैये में कहीं कोई भ्रम है और समझ में न आने जैसी कोई ऐसी बात भी है। खैर, मैं इतना कहकर इस बात को यही समाप्त करता हूं कि श्री डगलस अगर ठीक समझे तो अपनी बात को और स्पष्ट करके समझायें[१] और आन्दोलन से अलग होने के अधिक संगत कारण बताकर उसका औचित्य सिद्ध करें।

अब उन भाषणों और विशेषकर मौलाना अब्दुल बारी साहब के भाषण पर विचार करना जरुरी है। रिपोर्टर का काम यों भी बड़ा कठिन होता है। लेकिन जब उसे किसी भाषण का विवरण आशुलिपि में न लिखकर साधारण लिपि में अनुवाद करते हुए पूरा-पूरा लिखना पड़े और साथ ही जब वह उस भाषा का अच्छा जानकार भी न हो, जिसमें भाषण किया जा रहा है तो यह काम और भी कठिन हो जाता है। मेरे सहयोगी श्री महादेव देसाई को मौलाना साहब का भाषण नोट करते समय इसी कठिनाई का सामना करना पड़ा था। 'नवजीवन' में प्रकाशित हो जाने के बाद मैंने यह विवरण देखा और देखकर चिन्तित हुआ। मैंने सोचा कि वह बिल्कुल अनजाने एक बहुत बड़ी भूल कर गये है। रिपोर्ट में मौलाना साहब के साथ न्याय नही हुआ है। उनके मुह से ऐसा कहलाया गया है कि श्री विलोबी का हत्यारा शहीद है, और मैं (मौलाना साहब) गांधीजी-द्वारा कही गई बातों के

१. देखिए परिशिष्ट : श्री डगलस का उत्तर, १७।११।१९२०।

मुकावले मे अलकुरान की वातो को तरजीह देता हू। मैं श्री महादेव देसाई को अपने उत्तम और सर्वाधिक सावधान सहयोगियो मे से मानता हू। लेकिन ऐसे लोगो से भी, पूरी सदाशयता के वावजूद, कभी-कभी गलती हो सकती है।

जहा तक मुझे स्मरण है, मौलाना अब्दुल वारी साहव ने यह कहा था कि "दूसरो की तरह मुझे भी श्री विलोवी की हत्या बुरी लगी है। मैं जानता हू कि इसमे खिलाफत के उद्देश्य की वहुत क्षति हुई है। मैं भलीभाति जानता हू कि अगर इस हत्या के सम्बन्ध मे मुझे पहले से कोई खवर होती तो मैं उसे रोकने की कोशिश करता। अगर दूसरे लोग भी मालूम हो जाने पर उसके आडे आते तो मै उसे ठीक मानता। लेकिन मुझसे कुछ मित्रो ने हत्यारे के लिए जहन्नुम की वद्दुआ करने को कहा। यह विल्कुल दूसरी वात है। एक धार्मिक व्यक्ति के नाते मुझे ऐसा करना असम्भव लगा। मैं नही जानता कि यह हत्या कैसे हुई और इसके पीछे क्या उद्देश्य थे। इसलिए मृत्यु के वाद हत्यारे का क्या होगा, यह स्पष्टत उसके और खुदा के वीच की चीज है, और अगर कोई पहले से ही खुदा के फैसले के वारे में अन्दाजा लगाये तो यह गुस्ताखी ही होगी। श्री विलोवी काफिर जाति के थे और अगर जिहाद की घोषणा की गई होती तो शत्रु-जाति के किसी भी व्यक्ति को इस्लाम की तलवार के घाट उतारना उचित ही होता। लेकिन हमने तलवार न उठाने का निश्चय कर लिया है, इसलिए (अव) शत्रु-जाति के किसी भी व्यक्ति की जान लेना किसी मुसलमान के लिए उचित नही है। हमने श्री गाधी की असहयोग करने की सलाह मान ली है। क्योकि इसकी पुष्टि मे कुरान और स्वय हजरत मुहम्मद के जीवन मे काफी प्रमाण मिलते हैं। और जवतक असहयोग चल रहा है, मैं पूरी तरह श्री गाधी के मार्गदर्शन मे चलूगा। मुझे मूर्तिपूजक हिन्दुओ से मैत्री करने के कारण फटकारा जाता है। लेकिन मेरी यह निश्चित मान्यता है कि जिन काफिरो ने इस्लाम को सकट मे डालने के लिए कुछ भी उठा नही रखा, उन काफिरो के मुकावले हिन्दुओ से मैत्री करने और यहा तक कि गोवध से भी अलग रहने का मुसलमानो को पूरा अधिकार है।"

यह है मौलाना साहव के भापण का सार। निश्चय ही, भापण मे कड़वाहट वहुत थी। मौलाना अब्दुल वारी-जैसे धार्मिक आस्थावाले किसी व्यक्ति को अगर अपने धार्मिक सम्मान पर आच आती दिखे तो भला उसके भापण मे कड़वाहट होने पर शिकायत कौन कर सकता है? व्यक्तिगत मुझे तो किसी के लिए भी काफिर शब्द का प्रयोग करना उतना ही बुरा लगता है जितना किसी हिन्दू द्वारा किसी के लिए म्लेच्छ या अनार्य शब्द का प्रयोग बुरा लगता है। लेकिन जिन शब्दो

के प्रयोग की मुसलमानों और हिन्दुओं को बचपन से ही इतनी लत लग गई है, उसके लिए मैं किसी मुसलमान या हिन्दू से झगड़ने को तैयार नहीं हूं। जैसे-जैसे अलग-अलग धर्मों और मजहबों के लोगों के बीच मैत्री बढ़ती जायगी, वैसे-वैसे निश्चय ही ऐसे शब्दों का प्रयोग बन्द होता जायगा। क्या सिर्फ इस कारण से पादरी हेवर[1]-जैसे व्यक्ति की विद्वत्ता और नेकी से इन्कार किया जा सकता है कि उन्होने हिन्दुओं को हीदन[2] कहा और इसलिए उन्हें दयनीय तक बताया है? "मनुष्य ही क्रूर है"—ये शब्द पूरे मानव-समाज के लिए कहे गये थे, और आज भी प्रार्थना के समय कई ईसाई गिरजों में इन शब्दों का उच्चार किया जाता है। इसलिए मुझे तो उक्त भाषण में श्री डगलस के इस निर्णय का कोई कारण दिखाई नहीं पड़ता।

मौलाना शौकत अली का भाषण तो और भी निर्दोप था। उन्होंने कहा था कि "श्री विलोवी की हत्या का जितना दुःख मुझे है, उतना और किसी को नहीं हो सकता। अगर खिलाफत समितियों ने हिंसा को रोकने के लिए निरन्तर और यथासम्भव अधिक-से-अधिक प्रयास न किया होता तो ऐसी एक नहीं, अनेक हत्याएं हो चुकी होतीं। लेकिन अपने ही धर्म और सम्मान की खातिर हमारा यह कर्त्तव्य हो जाता है कि जबतक हमने असहयोग को अपना रक्खा है तबतक हिंसा को रोके रहें। किन्तु हत्यारे की भर्त्सना करनेवाले इस चाटुकारिता-भरे प्रस्ताव से मैं सहमत नहीं हूं।"

मैं देखता हूं, मेरे भाषण की रिपोर्ट तैयार करने में भी गलती की गई है। मैंने यह कभी नहीं कहा कि जब हम तलवार उठाना चाहेंगे तो उसकी पूर्वसूचना दे देंगे। मैंने जितने जोरदार शब्दों में हो सकता था, इस हत्या की भर्त्सना की और कहा कि "आज जब इस्लाम की अनेक मानी हुई धार्मिक संस्थाओं ने लोगों को सुरक्षा का आश्वासन दे रक्खा है, ऐसी हालत में एक निर्दोष व्यक्ति की हत्या के अपराध को किसी भी तरह क्षमा करने से इस्लाम की प्रतिष्ठा को बट्टा लगेगा। मैंने यह भी कहा कि स्वयं मेरा व्यक्तिगत धर्म तो अपने शत्रु के प्राण लेने की अनुमति कभी नहीं देता। लेकिन साथ ही मैंने यह भी कहा कि इस्लाम बल्कि लाखो हिन्दुओं की भी ऐसी मान्यता है कि कुछ विशेप परिस्थितियों में शत्रु को मारना उचित हो सकता है। और मैंने कहा कि जब भारत के मुसलमान तलवार उठाना चाहेंगे तो स्पष्ट शब्दों में उचित पूर्व-सूचना देने की ईमानदारी वे अवश्य दिखायेंगे।"

---

१. रेजीनाल्ड हेबर (१७८२-१८२६), कलकत्ता के बिशप।

२. गैर-ईसाईयों के लिए प्रयुक्त घृणासूचक शब्द।

और जो वात मैं अक्सर कहता रहा हूं, उसे एक वार फिर दोहराता हूं कि मुसलमानो मे जो लोग सवसे नेक और निर्भीक (मौलाना अब्दुल वारी और अली वन्धुओ को मैं ऐसा ही मानता हू) हैं, वे हिंसा को रोकने के लिए अपने तईं पूरा प्रयास कर रहे हैं। मैं सचमुच ऐसा मानता हू कि ऐसे लोगो ने इतना कठिन प्रयास न किया होता तो इस देश मे हिंसा के विस्फोट को नही रोका जा सकता था। मैं यह भी स्वीकार करता हू कि अगर ऐसा होता तो वह न इस्लाम के लिए हितकर होता और न भारत के लिए। उसका यही परिणाम होता कि इस्लाम और भारत को कोई सम्मान दिये विना सरकार को निर्मयतापूर्ण दमन का अवसर मिल जाता।
—अंग्रेजी। यं० इ०, ३।११।१९२०।]

१२. अलीगढ़ के छात्रों के माता-पिताओं के नाम

मैं जानता हू कि मेरे कुछ कामो से इस समय मेरे तमाम अच्छे-से-अच्छे मित्र हैरान हो उठे हैं, देश के नौजवानो को दी गई मेरी सलाह उन कामो मे से एक है। मुझे मित्रो की इस हैरानी पर आश्चर्य नही होता। हम आज जिस शासन-प्रणाली का भार ढो रहे हैं, उसके सम्वन्ध मे मेरा रुख विलकुल वदल गया है। हमारे धर्मग्रन्थो मे रावण के आसुरी शासन का वर्णन है। मेरे लेखे वर्तमान शासन-प्रणाली उसी प्रकार के आसुरी तत्वो से परिपूर्ण है। मेरी निश्चित मान्यता है कि अगर इस प्रणाली मे आमूल परिवर्तन नही किया जाता और शासक लोग निश्चित रूप से पश्चात्ताप नही करते तो इस शासन को समाप्त कर देना चाहिए। किन्तु इस सम्वन्ध मे मेरे मित्रो की मान्यता इतनी दृढ नही है।

अलीगढ मे पढनेवाले अपने वच्चो के लिए आप चिन्तित हैं। आपकी चिन्ता मेरी भी चिन्ता है। आप विश्वास कीजिए कि मैं आपकी भावनाओ को चोट नही पहुचाना चाहता। मैं स्वय चार लडको का पिता हू, और उनका लालन-पालन अपनी समझ से मैंने अच्छे-से-अच्छे ढग से किया है। मैं सदा अपने माता-पिता के प्रति आज्ञाकारी रहा हू और उसी तरह अपने शिक्षको के प्रति भी। मैं माता-पिता के प्रति पुत्र के कर्त्तव्य का मूल्य भी जानता हू। लेकिन ईश्वर के प्रति अपने कर्त्तव्य को सर्वोपरि मानता हू। और मेरे विचार मे इस देश के युवको और युवतियो के सामने वह घडी आ पहुची है जब उन्हे चुनाव करना है कि ईश्वर के प्रति अपना कर्त्तव्य निभावे या अन्य लोगो के प्रति। मेरा दावा है कि अपने देश के युवा-समुदाय को मैं काफी निकट से जानता हू। मैं जानता हू कि हमारे देश मे अपने उच्चतर

शिक्षण का स्वरूप तय करना-कराना ज्यादातर तो नौजवानों के ही हाथ में है। मैं बहुत से ऐसे उदाहरण भी जानता हूं जिनमें माता-पिताओं को उच्चतर शिक्षा के प्रति अपने बच्चों का आकर्षण एक झूठा मोह जैसा लगता है, लेकिन तब भी वे उन्हें उस ओर से विमुख नहीं कर पाते। इसलिए मेरी यह निश्चित मान्यता है कि अगर मैं नौजवानों से, अपने माता-पिता की इच्छा के विरुद्ध भी, अपने स्कूल और कालेज छोड़ देने को कहता हूं तो उससे माता-पिता की भावना को कोई चोट नही पहुंचती। आपको यह जानकर आश्चर्य होगा कि जिन सैकड़ों बच्चों ने अपने स्कूल या कालेज छोड़ दिये है उनके माता-पिताओं में से केवल एक ने आपत्ति करते हुए मुझे पत्र लिखा है और ये सज्जन भी सरकारी नौकर है। आपत्ति का आधार यह है कि उनके बच्चों ने स्कूल और कालेज छोड़ते समय उनसे सलाह तक नहीं ली। दरअसल मैंने तो लड़कों को यही सला दी थी कि उन्हें किसी निर्णय पर पहुंचने से पूर्व स्कूल या कालेज छोड़ने के सवाल पर अपने माता-पिता से बात-चीत कर लेनी चाहिए।

स्वयं मैंने बीसियों सभाओं में हजारों माता-पिताओं से अनुरोध किया है, लेकिन तब किसी माता-पिता ने सरकारी नियन्त्रण में चलनेवाले स्कूल छोड़ने के सुझाव का प्रतिवाद नहीं किया। सच तो यह है कि उन्होंने आश्चर्यजनक रूप से एक मत होकर असहयोग का प्रस्ताव पास किया, जिसमें स्कूलों से सम्बन्धित बात भी थी। इसलिए मैं मानता हूं कि दूसरों की तरह अलीगढ़ के बच्चों के माता-पिता भी इस बात को जानते है कि उनके बच्चों को सरकार के नियन्त्रण में चलने-वाले स्कूलों और कालेजों को छोड़ देना चाहिए, क्योंकि नियन्त्रण वही सरकार कर रही है जो भारत के मुसलमानों के साथ छल करने में शामिल रही है और जिसने पंजाब में बर्बरतापूर्ण व्यवहार करके बड़ी हृदयहीनता से इस राष्ट्र का अपमान किया है।

आशा है, आप यह भी जानते होगे कि हमारे बच्चों की शिक्षा की उपेक्षा न हो, इस बात की चिन्ता मुझे भी उतनी ही है जितनी कि किसी और को हो सकती है। लेकिन बेशक मुझे औरों से अधिक इस बात की चिन्ता ज़रूर है कि उन्हें शिक्षा का यह दान पवित्र हाथों से मिले। जिस सरकार को हम हृदय से नापसन्द करते हैं उससे शिक्षा के लिए अनुदान प्राप्त करना मुझे तो हम सबकी पौरुषहीनता लगती है। मेरी नम्र सम्मति में तो यह चीज़ बेईमानी और ग़ैर-वफादारी से भी भरी हुई है।

क्या यह बेहतर नही कि हमारे बच्चे, भले ही झोपड़ियों या पेड़ की छाया में किन्तु स्वतन्त्र वातावरण में ऐसे शिक्षकों से शिक्षा प्राप्त करें जो स्वयं स्वतन्त्र

विचार रखते हो और हमारे बच्चों में भी स्वतन्त्रता की भावना भर सकते हो? अगर आप लोग यह अनुभव कर लेते कि हमारी प्यारी मातृभूमि के भाग्य-विधाता हम माता-पिता नही बल्कि हमारे बच्चे हैं, तो कितना अच्छा होता? जिस दासता के अभिशाप ने हमे पेट के बल रेंगने को मजबूर किया, क्या हम उन्हे उसके अभिशाप से मुक्त नही करायेंगे? हम कमजोर हैं, इसलिए हो सकता है, हममे यह जुआ उतार फेंकने की शक्ति या इच्छा न हो। लेकिन क्या हम इतनी बुद्धिमानी नही दिखायेंगे कि अपने बच्चो के लिए यह अभिशापपूर्ण विरासत न छोड़ें।

स्वतन्त्र युवा और युवतियो के रूप मे अपना अध्ययन जारी रखने से बच्चों का कुछ नुकसान नही होगा। निश्चय ही, उन्हें सरकारी विश्वविद्यालयो की डिग्रियो की जरूरत नही है। और अगर हम अपने बच्चो के प्रति मोह को छोड दें तो उनकी शिक्षा के लिए पैसा जुटाने की समस्या, दर असल बहुत आसान हो जाय। अगर राष्ट्र एक हफ्ते तक आत्मत्याग से काम ले तो उससे उसके स्कूली बच्चो के लिए एक साल का खर्च निकल आये। बल्कि हिन्दुओं और मुसलमानो के जो धर्मार्थ और परमार्थ कोष चल रहे हैं, उनके सहारे हफ्ते-भर के आत्म-त्याग के बिना भी हम अपने बच्चो की शिक्षा की व्यवस्था कर सकते हैं। वर्तमान प्रयास और कुछ नही, यह निश्चित करने के लिए लोकमत जानने का एक तरीका भर है कि हममे स्वशासन और अपने धर्मों तथा सम्मान की रक्षा करने की क्षमता है या नही।

भारतीय युवा-समुदाय का हितचिन्तक
मो० क० गाधी

—अंग्रेजी। यं० इं० ३।११।१९२०।]

१३. संयुक्तप्रान्त में दमन

यदि अभिव्यक्ति की स्वतन्त्रता को दबाने मे पजाब सरकार सक्रिय हो उठी है तो सयुक्त प्रान्त की सरकार भी इस बात मे उससे पीछे नही है। मौलाना जफरुल मुल्क को दो वर्ष का कारावास और ७५० रुपये जुर्माना अथवा जुर्माना न देने पर ६ महीने की अतिरिक्त सजा सुनाई गई है। और भी लोगो के गिरफ्तार होने की सम्भावना है। इतना ही नही यह भी सुझाव दिया गया है कि मेरी गति-विधिया अबाध नही रखी जानी चाहिए। मेरी गतिविधि का परिणाम थोड़े ही समय मे स्वराज्य की प्राप्ति है और अगर इस दिन को दूर रखना है तो मेरी बातें सुनने और तदनुसार सोचने से जनता को वञ्चित रखा जाना चाहिए। यदि सरकार

की ऐसी ही राय हो कि मेरी गतिविधियां हानिकारक हैं तो उसे मेरी स्वतन्त्रता का अपहरण करने का अधिकार है। सच कहूं तो मेरे सहयोगियों को सजा देने के वजाय मुझसे निपट लेना ज्यादा ठीक है। मेरी और मेरे सहयोगियों की गतिविधियों में अन्तर करना ठीक नही है। हम सभी पूर्ण रूप से अहिंसक हैं। हम केवल कुछ ऐसे विचारों के प्रचार की चिन्ता कर रहे हैं जिनका यदि पालन किया जाय तो उसका परिणाम हिंसा तो हो ही नहीं सकता। जो सरकार शान्तिपूर्ण प्रचार का दमन करने की कोशिश करती है वह तो केवल एक अत्याचारी सरकार ही हो सकती है। इसलिए जवतक यह सरकार खिलाफत और पंजाव को न्याय देने से इन्कार करती चली जाती है, तवतक उसे दमन का सहारा लेना ही पड़ेगा। दमन ही उस अत्याचारी सरकार का एक मात्र साथी है जो अपने उद्देश्य की सफलता में वाधा का अनुभव करती है।

—अंग्रेजी। यं० इं०, ३।११।१९२०।]

१४. टिप्पणियां

चाय के प्याले में तूफान

एक जिला मजिस्ट्रेट का चाय-पान का निमन्त्रण स्वीकार कर लेने पर 'लीडर' ने श्री मुहम्मद अली पर जो आक्षेप किया है वह मुझे ऐसा ही दिखाई दिया है। अखवारों की टिप्पणियां पढ़ने का मुझे वहुत ही कम अवसर मिल पाता है। किन्तु मैंने संयोग से २५ नवम्वर का 'लीडर' पढ़ा। उसमें यह पढ़कर मुझे निश्चय ही दुःख हुआ। यह अखवार सुलझी हुई, चुस्त और तीखी टिप्पणियां लिखने के लिए प्रसिद्ध है। फिर भी उसका प्रहार (प्रायः) अनुचित नहीं होता। किन्तु मेरी समझ में मौलाना मुहम्मद अली-सम्वन्वी उसकी टिप्पणी एक अनुचित प्रहार ही है। असहयोग-सम्वन्वी प्रस्ताव में सरकारी समारोहों का वहिष्कार किया गया है। उसमें किसी चाय पार्टी के अवसर पर अधिकारियों और सार्वजनिक लोगों के वीच व्यक्तिगत वातचीत को निषिद्ध नहीं माना गया है। जहां 'लीडर' को मौलाना मुहम्मद अली के इस कार्य में विसंगति दिखाई देती है वहां वह मुझे एक सज्जनोचित कार्य ही लगता है। वह इस वात का प्रमाण प्रस्तुत करता है कि यह आन्दोलन न तो घृणा पर आधारित है और न वह व्यक्तिशः अंग्रेजों को लक्ष्य में रखकर चलाया गया है। उसके द्वारा केवल एक ऐसी प्रणाली को नष्ट करने का प्रयत्न किया जा रहा है जिसे अच्छे-से-अच्छा अंग्रेज भी सहज नही वना सकता।

उसका उद्देश्य शुद्धीकरण है, प्रतिशोधात्मक या दण्डात्मक विनाश नही। मेरी राय मे यदि श्री मुहम्मद अली जिला मजिस्ट्रेट के चाय पीने और बातचीत करने के निमन्त्रण को ठुकरा देते तो वह एक लोक-सेवक के रूप मे अपने कर्त्तव्य के पालन मे च्युत माने जाते। हा, यदि जिला मजिस्ट्रेट अपनी प्रतिष्ठा की रक्षा या वृद्धि करने के उद्देश्य से कोई सार्वजनिक समारोह करते तो दूसरी बात होती।

कुरुचि

मेरी विनम्र सम्मति मे ऐसी ही कुरुचि का उदाहरण 'लीडर' की वह रोषपूर्ण टिप्पणी भी है जो उसने प० मोतीलाल नेहरू पर होमरूल लीग की होनेवाली बैठक के ऊपर पजाब सरकार-द्वारा रोक लगाई जाने की कार्रवाई के सम्बन्ध मे भेजे गये उनके तार को लेकर लिखी है। कहते है प० मोतीलाल नेहरू ने तार मे यह कहा कि इस निषेधाज्ञा का पालन किया जाना चाहिए क्योकि (यहा) सविनय अवज्ञा अवाञ्छनीय है। इस तार के पीछे जो सराहनीय आत्म-सयम है उसको देखने के बजाय 'लीडर' ने यह कह कर प० मोतीलाल नेहरू की हँसी उडाई है कि वे तात्कालिक उपयोगिता की नीति का यहा आश्रय लेने पर उतर आये हैं। यदि पण्डितजी ने सविनय अवज्ञा की सलाह दी होती, यदि सरकार हिंसा करती और लोग उसका उत्तर हिंसा से देते तो 'लीडर' का नाराज होना ठीक होता। मैं तो 'लीडर' से 'लीडर'-विरोधियो के प्रति भी न्याय करने की आशा करता हू। असहयोग का ध्येय सार्वजनिक जीवन को शुद्ध बना कर और अहिंसात्मक अर्थात् शिष्टतापूर्ण या विनम्र साधनो से लोकमत को प्रेरित करके स्वराज्य प्राप्त करना है। मैं मानता हु कि असहयोगी सामूहिक रूप से अपने व्यवहार मे नम्रता का समावेश नहीं कर पाये हैं। लेकिन उनकी प्रवृत्ति निश्चय ही उसी ओर है। अब हम पण्डितजी की सलाह की अच्छाई-बुराई पर विचार करें। पुराने शब्दो को नये मूल्य मिल रहे हैं। 'तात्कालिक उपयोगिता' की नीति शब्दो मे एक हीक आती है किन्तु वह शब्द समूह अपने आप मे बुरा नही है। सविनय अवज्ञा वैध है किन्तु वह तबतक वाञ्छनीय या उपयुक्त नही है जबतक समस्त राष्ट्र मे पूरा आत्मसयम नही आ जाता और जबतक वह यह नही सीख लेता कि उचित कानूनो का पालन स्वेच्छापूर्वक किया जाना चाहिए। उनका पालन उनकी अवहेलना करने की दिशा मे मिलनेवाले तत्सम्बन्धी दण्ड का भय छोडकर करना आवश्यक है। कर देना बन्द करना वैध है, किन्तु जबतक राष्ट्र समष्टि की हैसियत से अहिंसा को अपने मे पूरी तौर पर पचा नही लेता तबतक यह अनुपयुक्त है। दूसरे शब्दो मे कहा जाय तो अहिंसा असहयोग का केवल उपसर्ग या प्रत्यय भर नही है, वह उसका अविभाज्य

और मुख्य भाग है। उसके अपेक्षाकृत रौद्र, अधिक उग्र और शक्तिशाली रूपों पर तवतक अमल नहीं किया जा सकता जवतक पर्याप्त भरोसे के साथ यह न कहा जा सके कि राष्ट्र ने स्थिति समझ ली है और वह शान्तचित्त रहकर प्रतिवन्ध, कैद और उससे भी कठोर यन्त्रणा को सहन कर सकता है।

--अंग्रेजी। यं० इं०, १।१२।१९२०।]

- **अहिंसा असहयोग का केवल उपसर्ग या प्रत्यय भर नहीं है; वह उसका अविभाज्य और मुख्य भाग है।**

१५. दो टिप्पणियां

१. पत्रकारों का अज्ञान : 'लीडर' की भ्रान्तियाँ

तीस वर्षों के व्यस्त जीवन में मेरा यही दुर्भाग्य रहा है कि जिन सरकारों से मेरा सावका पड़ा है उन्होने अक्सर मेरे वारे में गलत बातें कहीं और मुझे गलत समझा है। और जिन लोगों की मैंने सेवा की कभी-कभी उनके हाथों में भी मुझे यही व्यवहार मिला है। पत्रकार होने के नाते भी, तथा एक लोक-सेवी व्यक्ति होने के नाते भी, समाचारपत्रों से मेरा सम्बन्ध रहा है। लेकिन मुझे उनके अज्ञान का भी शिकार वनना पड़ा है। फिर भी समाचारपत्रों द्वारा प्रदर्शित अज्ञान का ऐसा अनुभव मुझे कभी नहीं हुआ जैसा इस समय हो रहा है। इंग्लैण्ड और अमेरिका से मेरे मित्र समय-समय पर समाचारपत्रों की जो कतरनें मेरे पास भेजते रहते हैं उनसे तो अज्ञान के साथ-साथ अविवेक भी प्रकट होता है। घोर अज्ञान और किसी चीज को लापरवाही से पढ़ने का जो उदाहरण सबसे हाल में मेरे सामने आया है, वह है 'लीडर' का। उसमें कताई पर एक लेख है, जिसमें उस लेख का ही गलत अर्थ लगाया है जिसे उसने उद्धृत किया है। मेरे साथ सफर कर रहे एक युवक ने मुझे वह लेख दिखाया। मुझे लेखक द्वारा प्रदर्शित अज्ञान एवं असवाधानी पर दुःख हुआ। मैंने उक्त युवक से कहा कि यदि 'लीडर' की भ्रान्तियां उसकी समझ मे आ गई हैं तो वह स्वयं ही उनका जवाव लिखे। उसका जवाव इतना जोरदार है कि स्वयं जवाव देने का प्रयत्न करने के वजाय मैं वही जवाव अन्यत्र दे रहा हूं।[1]

---

१. नहीं दिया जा रहा है।

२ रघुपतिसहाय

गोरखपुर के श्री रघुपति सहाय[1] होना चाहते तो डिप्टी कलक्टर हो सकते थे। वह एक सुसस्कृत शिक्षा-शास्त्री हैं किन्तु उनका यह दुर्भाग्य है कि उनमे सगठन की योग्यता है और गोरखपुर के नागरिको पर उनका प्रभाव है। मुझे अभी अखबारो से मालूम हुआ कि उनकी भी वाणी की स्वतन्त्रता पर रोक लगा दी गई है। देश मे कोई हिंसा का प्रचार नही करता—श्री रघुपति सहाय से तो ऐसी आशा ही नही की जा सकती। किन्तु इस 'अपनी' सरकार के अधीन एक मैजिस्ट्रेट को ऐसी सत्ता प्राप्त थी कि उसने उनके सार्वजनिक सभाओ मे बोलने पर रोक लगा दी है।

—अंग्रेजी। यं० इं०, ९।३।१९२१।]

१६. संयुक्तप्रान्त से सम्बन्धित कुछ टिप्पणियां

पण्डित मालवीयजी

प० मदनमोहन मालवीय के साथ जो दुर्व्यवहार किया गया वह जनता की मन स्थिति को सूचित करता है। भारत मे यदि कोई ऐसा व्यक्ति है जिसका कदापि अपमान नही किया जाना चाहिए, तो वह पण्डितजी ही हैं। पजाब के प्रति की गई उनकी सेवाए आज भी हमारी स्मृति मे ताजी[2] हैं। एक मात्र उन्ही के परिश्रम से बनारस के महान विश्वविद्यालय का निर्माण हुआ। वह देशभक्ति में किसी से कम नही है। आवश्यकता से अधिक सज्जन हैं। यह भारत का दुर्भाग्य है, उनका दोष नही कि वह कुछ समय के लिए अपनी प्यारी चीज छोड़ने की जोखिम उठाने पर खुद को लाचार पाते हैं। उनका इस प्रकार अपमान किया जाना भारी दुख की बात है। यदि सस्कृत के विद्यार्थियो ने अथवा तथा-कथित सन्यासियो ने विद्यार्थियो का मार्ग रोक लिया था तो निश्चय ही पण्डितजी को अधिकार था, बल्कि उनका कर्त्तव्य था कि वह बीच मे पडकर सहयोगी विद्यार्थियो को रास्ता दिलवाते। मेरे विचार से पुलिस ने सरगना लोगो को या जिन्हे उसने अगुआ समझा उन पर

१. रघुपति सहाय फिराक, बाद मे प्रयाग विश्वविद्यालय मे अंग्रेजी के प्राध्यापक, उर्दू के प्रसिद्ध कवि।
२. जलियावाला बाग की घटना के बाद १९१९ मे मालवीयजी ने पंजाब का दौरा किया था।

मुकदमा चलाकर बिल्कुल ठीक किया। गिरफ्तार किये गये लोगों के साथ दुर्व्यवहार किया गया होगा, यह मै मानता हूं। किन्तु पुलीस से सौम्य व्यवहार की आशा हमें स्वराज्य प्राप्त करने के वाद भी नही करनी चाहिए। अतः मैं उन लोगों के प्रति जरा भी सहानुभूति नही दिखा सकता, जिन्होने इतने स्पष्ट रूप से उस उद्देश्य के नाम में वट्टा लगाया है, अज्ञानवश जिसके हामी होने का दावा वे करते हैं।

सच्चे और झूठे

किन्तु आन्दोलन में होनेवाली ज्यादतियों की आलोचना करना एक वात है और स्वयं आन्दोलन की ही निन्दा करना बिल्कुल दूसरी बात है। सच्चे असहयोगियों और झूठे असहयोगियों मे भेद करना जरूरी है। नासमझ विद्यार्थियो और अज्ञानी संन्यासियों का व्यवहार निःसन्देह लज्जाजनक तथा निन्दनीय था। किन्तु जनता का विशाल समुदाय असहयोग की सीमाओं को जानता है और उसका अतिक्रमण नही करता। मैं साहसपूर्वक यह दावा करता हूं कि भारत आज जितना शान्त है उतना पहले कभी नही रहा, लेकिन यह शान्ति कमजोरों और अज्ञानियों की जड़ता, नहीं है, वरन् यह उन लोगो की प्रवुद्ध शान्ति है जिन्हे अपनी दिन-प्रति-दिन वढ़ती हुई शक्ति का भान हो रहा है। भारत उस रोग को जानता है, जिससे वह पीड़ित है और आन्तरिक शुद्धीकरण की प्रक्रिया से उस रोग से मुक्त होने की तैयारी कर रहा है।

सदा सावधान रहिए

लेकिन साथ ही हम क्या कहते और करते है इस विषय में हमें सावधान रहना चाहिए। भारत के कुछ सर्वश्रेष्ठ व्यक्ति इसीलिए अलग खड़े है कि उन्हें यह विश्वास नही है कि उत्तेजनाओं के वावजूद जनता अहिंसक बनी रहेगी। असहयोगियो की छोटी-से-छोटी गलती, यहां तक कि उनका अशिष्ट व्यवहार भी हमारे उद्देश्य की प्राप्ति में वाधा पहुंचाता है। हम एक ही समय एक ओर समझदार तथा संयमी और दूसरी ओर क्रुद्ध नही हो सकते। एक वार में या तो हम हिंसक हो सकते है या अहिंसक; दोनो नही। हमने अपने लिए एक रास्ता चुन लिया है, और अव उसमे जो भी कठिनाइयां झेलनी पड़े, उन्हे सहन करना चाहिए। अहिसा पर दृढ़ रहने का निश्चय कर लेने के वाद, हमें हिंसा की ओर किसी प्रकार का झुकाव नही दिखाना चाहिए। अत. हमे सावधान रहना है कि किसी भी रूप मे हम हिंसा का समर्थन नही करेगे। यदि हम अपने आन्दोलन को अहिसा के सुदृढ़ आवार पर स्थित नही करते तो वह

ताश के मकान की तरह किसी दिन एक फूक मे ही भरभरा पड़ेगा। हम एक ही साथ खुदा और शैतान दोनो की भक्ति नही कर सकते।

—अंग्रेजी। य० इं०, १६।३।१९२१। सं० गां० वां०, खण्ड १९ पृ० ४३६-३७।]

१७. खादी की महिमा

खादी के प्रचार का इतना ज्यादा असर हुआ है कि बुलन्दशहर मे एक भिश्ती युवक के मर जाने पर उसके कफन के लिए उसके सगे-सम्बन्धियो ने खादी का कपड़ा खरीदा और जाति के पचो ने निश्चय किया कि कफन के लिए आगे से खादी का ही इस्तेमाल किया जायगा। खादी के सम्बन्ध मे यदि लोगो मे ऐसी पवित्र भावना फैल जाय तो हिन्दुस्तान को स्वराज्य मिलने मे कितनी देर लग सकती है? जो समय नष्ट हो रहा है वह हमारी दुर्बलता अथवा हमारी अश्रद्धा के कारण ही हो रहा है। दुर्बलता अथवा अश्रद्धा के कारण हम अपना कर्त्तव्य पूरा नही करते।

—गुजराती। न० जी०, ३।४।१९२१]

१८. एक मजिस्ट्रेट की सनक

देहरादून छावनी के मजिस्ट्रेट ने सत्याग्रह दिवस पर यह हुक्म निकाला कि उस दिन उनकी छावनी मे दुकानें अवश्य खोली जायं और यदि दुकानदारो ने उनकी आज्ञा का उल्लघन किया तो वे छावनी से निर्वासित कर दिये जायगे। इस आज्ञा ने यह दिखला दिया है कि भारत मे ओ-डायरशाही[1] अभी तक मरी नही है। ज्यादातर लोगो को इस बात की जानकारी नही है कि छावनियो मे मजिस्ट्रेटो को वे अधिकार प्राप्त रहते हैं, जिनका अन्य स्थानो मे केवल 'मार्शल ला' के अधीन ही प्रयोग किया जा सकता है। छावनियो के निवासी मजिस्ट्रेटो की दया पर निर्भर रहते हैं। आश्चर्य की बात तो यह है कि लोगो ने एक ऐसी शासन-पद्धति को इतनी लम्बी अवधि तक

---

१. सर माइकल ओ' डायर, पजाब के लेफ्टिनेण्ट-गवर्नर (१९१३-१९१९), जिसके शासन मे किये गये अत्याचारो के कारण भारतीय इतिहास मे यह 'डायरशाही' के नाम से प्रसिद्ध हुआ।

और इतने धैर्य के साथ बरदाश्त कर लिया, जिसका निर्माण ही इस दृष्टि से किया गया था कि उनकी स्वतन्त्रता को इतना नियन्त्रित किया जाय जिससे वे गुलामों-जैसे बन जायं।

—अंग्रेजी। यं० इं०, २०।४।१९२१।]

१९. टिप्पणियां

मैं ये टिप्पणियां आनन्द भवन में बैठकर लिख रहा हूं। मुझे अभी-अभी एक पर्चा दिखाया गया जिसे किसानों के बीच बांटने के अपराध में पांच नौजवानों को सजा दी गई है। इस पर्चे में कहा गया है कि मैंने एक साल के अन्दर स्वराज्य दिलाने का बिना शर्त्त वायदा किया है। इस बात को पढ़कर मुझे चोट लगी और थोड़ी झुंझलाहट भी हुई लेकिन यह तो ऐसी कोई आपत्तिजनक बात नही है। उलटे, पर्चे में किसानों को उत्तेजित किये जाने पर भी शान्ति से काम लेने की सलाह दी गई है। मजिस्ट्रेट ने इन पर्चों को राजद्रोहात्मक करार देकर उन नौजवानों से इस बात के लिए जमानत तलब की कि वे इन पर्चों को नहीं बांटेंगे। जमानत देने के बदले उन्होंने जेल जाना पसन्द किया। सरकार का विरोध करने का यह एक अच्छा और सुथरा तरीका है।

इलाहाबाद जिले के कलक्टर-द्वारा जारी की हुई एक नोटिस भी मैंने देखी जिसमें सरकारी नौकरों को गांधी टोपी पहनने से मना किया गया है। मैं हर एक सरकारी कर्मचारी को सलाह देता हूं कि वह इन सुन्दर, हलकी-फुलकी और कोई आपत्ति न करने योग्य टोपियों को पहनें और बरखास्त हो जायं और ज़रूरत पड़े तो जेल भी जायं। इलाहाबाद में मुझे यह बात भी बतलाई गई कि सरकार के कुछ ही खैरख्वाह कर्मचारी किसानों को धमकियां दे रहे हैं कि अगर उनके घरों में चर्खे पाये गये तो वे जेल भेज दिये जायंगे। अगर चर्खे को रखना राजद्रोह में शुमार किया जाय, तो उसे घर में रखना जेल जाने का बड़ा ही सम्माननीय ढंग हो जायगा।

जमींदार और रैयत

यह सच है कि संयुक्त प्रान्त की सरकार ने लोगों को आतंकित करने के मामले में औचित्य की सभी सीमाएं पार कर डाली हैं। लेकिन साथ ही यह भी निस्सन्देह सच है कि किसान अपनी नई मिली ताकत का इस्तेमाल कुछ बहुत समझदारी से

नहीं कर रहे हैं। कहा जाता है कि कई जमीदारियो मे उन्होंने ज्यादतिया की हैं, कानून को वालाए ताक रख दिया है, मनमानी करने लगे हैं और जो उनकी मर्जी के मुताविक चलने को तैयार नही उसे एक मिनट भी वरदाश्त नही कर सकते। वे सामाजिक वहिष्कार का गलत ढग से इस्तेमाल कर रहे हैं और उन्होंने कई जगह अपने जमीदारो का पानी, नाई और धोवी तक वन्द कर दिया है। और किसी भी खिदमतगार को उनके यहा काम करने के लिए नही जाने देते। कहीं-कही तो उन्होंने लगान देना भी वन्द कर दिया है। असहयोग से किसान-आन्दोलन को प्रेरणा और गति तो जरूर मिली लेकिन उनका यह आन्दोलन असहयोग के पहले से चल रहा है और उससे स्वतन्त्र है। समय आने पर हमे किसानो से यह कहने मे जरा भी हिचकिचाहट न होगी कि वे सरकार को लगान देना मुल्तवी कर दें, लेकिन असहयोग के किसी भी दौर मे हम जमीदारो को उनके लगान से वञ्चित करने की तो कोई भी वात नही सोचते। इसलिए किसान-आन्दोलन को किसानो की दशा सुधारने और किसान-जमीदार सम्वन्धो को वेहतर वनाने तक ही सीमित रखना चाहिए। किसानो को यह वात समझाई जानी चाहिए कि जमीदारों के साथ किये गये अपने इकरारनामे की शर्तों का वे ईमानदारी के साथ पूरा-पूरा पालन करें, चाहे वे इकरारनामे लिखित हो या रस्मी। अगर कोई रस्मी या लिखित इकरारनामा भी वुरा हो और उसे भग करना जरूरी हो जाय तो पहले जमीदार को सूचना देकर केवल शान्तिपूर्ण तरीके से ही वैसा करना उचित है, हिंसा का सहारा तो कभी नही लेना चाहिए। हर हालत मे जमीदारो के साथ दोस्ताना ढग से वातचीत करके समझौते की कोई सूरत निकालनी चाहिए। हमारा राष्ट्र दुनिया के सवसे वडे और प्राचीनतम राष्ट्रो मे से है, इसलिए इसके जीवन मे एक साथ कई जटिल समस्याओ का उठ खड़ा होना स्वाभाविक ही है। उन सभी समस्याओ को सरकार की सहायता या उसके हस्तक्षेप के विना हल करने की हमारी सामर्थ्य पर ही स्वराज्य प्राप्त करने की हमारी सामर्थ्य निर्भर करती है।

अनुशासन

अव वह समय आ गया है जव हमे अवश्य ही अनुशासन का पालन करना सीख लेना चाहिए। अव यह वात टाली नही जानी चाहिए। स्टेशनो पर जो प्रदर्शन किये जाते हैं, वे यात्रियो के लिए काफी तकलीफदेह वनते जा रहे है। मुझे वताया गया कि जो रेल यात्री स्टेशन पर प्रदर्शन होने के कुछ समय पहले मेरी गाड़ी पर चढ़े थे वे ही अगले कुछ स्टेशनो पर दो एक प्रदर्शनो के वाद मुझे कोसने लगे। मुझे उनसे [illegible]

पूरी सहानुभूति है। इलाहाबाद जाते हुए मेरे एक सहयात्री को भीड़ के कारण बड़ी तकलीफ हुई। प्लेटफार्म पर भीड़ इस तरह टूट पड़ी कि उन्हें एक प्याली चाय भी न मिल सकी; वह जलपान के लिए बाहर तो जा ही नही सके। अगर उन्होंने मुझे एक बवाल समझ लिया तो कोई ताज्जुब नही। इलाहाबाद से लौटते हुए कानपुर के प्लेटफार्म पर तो भीड़ बिल्कुल काबू से बाहर हो गई। हजारों आदमी शोर मचाते, राष्ट्रीय नारे लगाते हुए मेरे डिब्बे पर टूटे पड़ रहे थे। इससे सभी को खासी असुविधा हुई। नेताओं ने किसी तरह भीड़ को बिठा तो दिया, पर शोर और नारे बन्द न किये जा सके। अन्त तक गुलगपाड़ा मचता ही रहा। फिर मुझसे कहा गया कि मैं दरवाजे पर आकर लोगों को दर्शन दूं। लेकिन मैंने साफ कह दिया कि जबतक शोर-गुल बिल्कुल थम नही जाता मैं अपनी जगह से हिलूंगा नही। दर्शन देने का आग्रह करनेवाले दोस्तों को इससे जरूर निराशा हुई होगी।

इस सारे शोरगुल और धक्का-मुक्की की खास वजह यह है कि पहले से सारी बातें सोच-विचार कर ठीक से इन्तजाम नही किया जाता और फिर संगठन की कमजोरी भी है। अच्छा तो यही होगा कि स्टेशनों पर प्रदर्शन कतई न किये जायें। रेल के यात्रियों की सुविधा का खयाल हमें करना ही होगा। अगर स्टेशनों पर स्वागत करना ही हो तो राष्ट्रीय नारे कम से कम और समझबूझ कर लगाये जायं और ऐसा इन्तजाम रहे जिससे मुसाफिरों को चढ़ने-उतरने और प्लेटफार्म पर आने-जाने में किसी तरह की दिक्कत न हो। वक्त आ गया है कि जन-आन्दोलन को पूरी गम्भीरता और बाकायदा चलाने की तमीज और अनुशासन हमारे राष्ट्र में पैदा हो। इसका मतलब यह हुआ कि स्वयंसेवकों को पहले से इसकी तालीम दी जाय और जनता को भी अनुशासन का पालन करने की बात पहले से ही सिखा-समझा दी जाय। मोटी-मोटी बातें सिखलाने में ज्यादा दिन भी नही लगते। जहां-जहां लोगों को पहले समझा दिया गया था, वहां उनका बरताव काफी अच्छा रहा। अनुशासन की तालीम के बिना पता नहीं कब कैसी दुर्घटना हो जाय। अभी तक कोई अनर्थ नही हुआ, इसका कारण लोगों की सहज भलमनसाहत ही है, नही तो ऐसे भीड़-भड़क्के में उपद्रव होते क्या देर लगती है। अगर ठीक तरीके से तालीम दी जाय तो बड़े-बड़े प्रदर्शनों के बावजूद हम सर्वथा निश्चिन्त और सुरक्षित रह सकते हैं, उससे किसी खतरे का अन्देशा नहीं रह जाता। सभा और जुलूसो में पागलों की तरह धक्का-मुक्की और शोरगुल करना हमारे लिए नुकसानदेह है।

—अंग्रेजी। इलाहाबाद (आनन्द भवन), ९।५।१९२१। यं० इं०, १८।५। १९२१।]

२०. मार्ग की कठिनाइयां

किन्तु हमारे मार्ग मे जो कठिनाइया है उनके प्रति मैं आखे नही मूदे हू। अलीगढ मे प्राप्त समाचार चिन्ताजनक[1] है, घटना का सरकारी विवरण और दूसरा विवरण मैंने "इण्डिपेण्डेण्ट"[2] मे देखा है। यदि मैं गलती पर हुआ तो मैं अलीगढ की जनता से क्षमा-याचना कर लूगा, किन्तु 'इण्डिपेण्डेण्ट' के सवाददाता का विवरण तथ्यो से मेल नही खाता और तथ्यो से जितना निष्कर्ष निकल सकता है उससे कही अधिक निष्कर्ष निकालने की कोशिश करता है। वह इस बात से इन्कार नही करता कि भीड ने आगजनी की, और फिर भी भीड को दोषी न मानने का प्रयत्न करता है। यह विश्वास करने के लिए कि अलीगढ मे अधिकारियो ने क्षोभ का कोई कारण उत्पन्न हुए बिना ही द्वेषपूर्ण ढग से ज्यादती की है, मुझे बहुत स्पष्ट प्रमाण की जरूरत होगी। मुझे यह सम्भव लगता है कि पुलिस भीड-द्वारा एक आक्रामक प्रदर्शन को रोकना चाहती थी और ऐसा करते हुए वह आत्म-सयम खो बैठी और उसने गोली चला दी। मेरा कहना यह है कि हमारी ओर से कोई आक्रामक कार्रवाई होनी ही नही चाहिए। असहयोगियो को किसी को सताना या धमकाना नही चाहिए। हमारे अन्दर एक अदम्य उत्साह बढ रहा है जो केवल भगवान पर भरोसा रखने, यानी अपने लक्ष्य की न्यायपूर्णता पर विश्वास का परिणाम है। यदि हम चाहते हैं कि अपने कार्यक्रमको सफल बनायें—और वह भी इसी साल के अन्दर—तो हमारे लिए धमकी देने या शक्ति प्रदर्शन करने का अवसर ही नहीं है। हमे अपने सकल्प के प्रति पूरी दृढता के साथ सच्चे रहना चाहिए। हम आशातीत रूप से तभी सफल हो सकते हैं जब हम विचार, वाणी और कर्म मे अहिसा बरतें। अहिसा चाहे हमारा सर्वोपरि जीवन-सिद्धान्त न हो, किन्तु अपने लक्ष्य तक पहुचने के लिए हमारा वर्त्तमानकालिक सिद्धान्त तो होना ही चाहिए। इसमे कोई कठिनाई नही होनी चाहिए कि हमने जिस तरह अपने प्रतिद्वन्द्वियो के प्रति बुरा बर्ताव न करना तय किया है उसी प्रकार हम उनके प्रति बुरा न सोचें, बुरा न कहे। अहिसा और सत्य की प्रतिज्ञा का उपयोग हमें हिंसा और असत्य-अतिशयोक्ति को छिपाने के लिए भी नही करना चाहिए, न हमें अपने अच्छे-से-अच्छे साथियो के जेल चले जाने से डरना चाहिए। मैं इस विश्वास पर कायम हू—जो मैंने अक्सर प्रगट किया है—कि पण्डित सुन्दरलाल[3] और पण्डित

---

१. देखिए 'सन्देश : अलीगढ की जनता को' १६-७-१९२१।

२. इलाहाबाद से प्रकाशित अग्रेजी राष्ट्रीय दैनिक।

३. 'भारत मे अग्रेजी राज्य' के लेखक, हिन्दी के पुराने पत्रकार।

माखनलाल[1] अपनी आत्मा की शान्ति के लिए जेल जाकर वहां राष्ट्र की उससे अच्छी सेवा कर रहे हैं जितनी वे स्वतन्त्र रहने पर करते। जो ऐसा नही सोचते, वे असहयोग को नहीं समझते इस महान आन्दोलन की प्रेरक शक्ति मौखिक प्रचार नही, वल्कि मौन प्रचार है जो इस पागल सरकार के शिकार वननेवाले निर्दोष लोगों को यातना देता है।

—अंग्रेजी। यं० इं०, १३।७।१९२१।]

● हमारी ओर से कोई आक्रामक कार्रवाई होनी ही नहीं चाहिए।

२१. टिप्पणी (शस्त्र-अधिनियम)

स्वामी श्रद्धानन्द एक घटना प्रकाश में लाये हैं कि विजनौर जिले के एक मजिस्ट्रेट ने गुरुकुल कांगड़ी के सहायक प्रवन्धक की वन्दूक के लाइसेंस का नवीकरण करनेसे इन्कार कर दिया। यह सुधारों की निरर्थकता का खुला प्रदर्शन है। यदि स्वामी श्रद्धानन्द का यह अनुमान ठीक है कि लाइसेंस का नवीकरण न किये जाने का कारण असहयोग आन्दोलन से इसका सम्वन्ध है तो इससे यह जाहिर होता है कि जनता के दैनिक जीवन से सम्वन्ध रखनेवाली वातों के प्रति सरकार का रवैया और शासन का तरीका विल्कुल नही वदला है; जो कुछ थोडा परिवर्तन हुआ है वह असहयोग के प्रभाव के कारण लेकिन स्वामी श्रद्धानन्द जैसे जाने-माने नागरिक के प्रति विजनौर के जिला मजिस्ट्रेट के ऐसे हृदयहीन व्यवहार के लिए जनता तैयार नही थी। मैंने इस व्यवहार को हृदयहीन कहा है, क्योकि जिस वन्दूक के लिए लाइसेन्स लेना था उसकी जरूरत शिकार के लिए नही वल्कि एक घने जगल में जंगली जानवरों से वचाव के लिए थी।

—अंग्रेजी। यं० इं०, १३।७।१९२१।]

२२. एक पीड़ित का पत्र

अपनी गिरफ्तारी के कुछ ही दिन पूर्व पण्डित सुन्दरलाल[2] ने एक लम्बा पत्र

---

१. माखनलाल चतुर्वेदी, हिन्दी के जाने-माने कवि और देशभक्त, जो 'कर्मवीर' के सम्पादक हुए।

२. इलाहावाद के निवासी, दैनिक 'भविष्य' के सम्पादक और प्रवर्त्तक, 'भारत में अंग्रेजी राज्य' के लेखक।

लिखा था। मैं उसके सम्बन्धित भाग का भावानुवाद दे रहा हू। पूरा पत्र मुझे स्वाभाविक और साफ लगा। यह कहना आवश्यक नही कि वह केवल मेरी सूचना के लिए लिखा गया था :—

"स्वराज्य-प्राप्ति के लिए अहिंसा पर मेरा विश्वास दृढ़ हो गया है; मेरी बुद्धि ने यह सिद्धान्त पक्की तरह से ग्रहण कर लिया है। मैं अब उसे केवल निर्बल अस्त्र ही नहीं, अपितु बलवान का अस्त्र भी मानने लगा हूं। किन्तु मैं यह स्वीकार करना चाहता हूं कि कई वर्षों तक मेरा विश्वास इसके विरोधी और गलत सिद्धान्त, हिंसा, पर रहा है, इसलिए मैं बड़ी लगन के साथ इस नये सिद्धान्त के अनुसार अपने जीवन को ढाल रहा हूं। यदि मैं अपने जेल भेजे जाने के बारे मे, जो सम्भावित लगता है, चिन्तित हूं तो यह चिन्ता उस काम को लेकर ही है जो मैंने यहां शुरू किया है। यदि लापरवाही से मेरे मुह से निकली किसी बात से इस काम मे बाधा पड़ेगी, तो मुझे दुःख होगा। किन्तु जो प्रसन्नता और सन्तोष मुझे इस समय है वह इस विचार से है कि शायद ब्रिटिश जेल के कठोर अनुशासन से मेरा जीवन अधिक अच्छी तरह गठित हो सकेगा। जेल मे प्राण दे देना मुझे उतना ही प्रिय है जितना (नये ढंग से) ठोक-पीटकर मानवता की सेवा के लिए ठीक तरह गढ़ा जाना। इसलिए मैं आगामी गिरफ्तारी के लिए पूरी तरह तैयार हूं।"

मुझे विश्वास है कि सैकड़ो असहयोगी जो जेल की सजा भोग रहे हैं इसी भावना से प्रेरित हैं जो पण्डित सुन्दरलाल ने दिखाई है। अलीगढ के लोगो को प्रसन्नता से अपने साथी को पकडे जाने देना चाहिए था और उसका स्थान लेकर उसका काम करना चाहिए था। हमे सिर्फ इतना ही करना है कि हम अपने साथियों के जेल जाने से खाली होने वाली जगहो को भरते चले जाय। हमारा कार्यक्रम बिल्कुल स्पष्ट है। उसे पूरा करने का अर्थ वह-सब प्राप्त कर लेना है जिसकी हमे कामना है।

—अंग्रेजी। यं० इं०, १३।७।१९२१।]

२३. कितना सुन्दर !

प० मोतीलाल नेहरू की अनुमति से मै रामगढ मे, जहा वह इन दिनों स्वास्थ्य-लाभ कर रहे हैं, व्यतीत किये हुए उनके जीवन का निम्नलिखित चित्ताकर्षक और मनोरञ्जक वर्णन शब्दश उद्धृत कर रहा हू —

"जिस छोटी पहाड़ी पर अकेला केवल अपने एक नौकर के साथ आराम कर रहा हूं, वहां का जलवायु और वातावरण मेरे लिए बहुत अनुकूल सिद्ध हो रहा है। कुछ दमा और खांसी अब भी शेष है पर स्वास्थ्य और शक्ति प्राप्त होने के साथ-साथ वह अवश्य ही दूर हो जायगी। दुःख की बात केवल यही है कि बीमारी के बाद की देख-भाल के लिए मेरे पास पर्याप्त समय नहीं है, और यह व्यावसायिक जीवन की पिछली बुराइयों के कारण है जो अब भी मेरे पीछे पड़ी हुई हैं। जब मैंने वकालत छोड़ी तब मेरे पास जो सैकड़ों मुकदमे थे उनमें से दो को मैं छोड़ नहीं सका था। इनमें से एक मामला सरूप के विवाह के ठीक पहले आया था और कुछ सीमा तक मेरे स्वास्थ्य के खराब होने का कारण वह भी था और अब यह दूसरा मामला मेरे स्वास्थ्य के लिए आवश्यक आराम में आड़े आ रहा है। यह एक लम्बा और नया मुकदमा है और ५ जुलाई को शुरू होगा जिसके लिए पहले से तीन या चार दिन का अध्ययन आवश्यक होगा। मैं इसे लखनऊ में होनेवाली अखिल भारतीय बैठक के बाद लेने का प्रयत्न कर रहा हूं, पर मैंने फिलहाल रामगढ़ से रवाना होने की तारीख ३० जून निश्चित कर ली है। यदि मुझे केवल कुछ ही सप्ताहों का समय और मिल जाय तो मैं आपको विश्वास दिला सकता हूं कि मेरे अन्दर एक बैल-जितनी शक्ति आ जायगी। पर अहिंसावादी असहयोगी व्यक्ति के लिए शारीरिक दृष्टि से इतना अधिक शक्तिशाली होना शायद निरापद नहीं है।

"मैं जिस प्रकार का जीवन यहां व्यतीत कर रहा हूं आप उसके बारे में जानना चाहेंगे। अतीत के उन सुखद (?) दिनों में, जब मैं पहाड़ों पर आया करता था तब मेरे साथ दो प्रकार का भोजन बनाने की व्यवस्था रहा करती थी—एक अंग्रेजी और दूसरी भारतीय। शिविर में छोटी हाजिरी के बाद हम जंगल की ओर रवाना होते और हमारे साथ रायफलों, छोटी बन्दूकों और और कारतूसों का पूरा इन्तजाम रहता और कभी-कभी तो हमारे साथ हांका करनेवालों की एक छोटी-सी फौज ही रहती थी। हम दिन ढले तक अपने रास्ते में आनेवाले भोले-भाले जानवरों को मारते रहते थे। इस बीच हमें जंगल में घर के समान ही बिल्कुल समय पर बाकायदा खाना और चाय मिल जाती थी। शिविर में लौटने पर हमारे लिए बढ़िया भोजन तैयार मिलता था, हम डट कर भोजन करते और निश्चिन्तता से गाढ़ी नींद सोते थे। शान्त रूप से चलनेवाले जीवन-क्रम में अव्यवस्था उत्पन्न करनेवाली कोई बात नहीं होती थी। हां, असावधानी से निशाना चूक जाने पर किसी गरीब जानवर की जान बच जाती थी तो जरूर नाराज होने का प्रसंग उपस्थित हो जाता था। और अब पीतल के कुकरने (जिसे हमने तिब्बिया

कालेज के उद्घाटन के समय खरीदा था, उक्त दो भोजन-व्यवस्थाओं की जगह ले ली है; परिचारको के दल के वदले अव केवल एक ही नौकर रह गया है जिसे वहुत होशियार नहीं कहा जा सकता। पहले हम अपना सामान जहां खच्चरो पर लाद कर ले जाते थे वहां अव चावल, दाल और मसाले के तीन छोटे-छोटे थैले, जिन्हें खादी के बदले विदेशी कपड़े का बनाने के लिए मैं कमला[1] को कभी क्षमा नहीं करूंगा, ही रह गये हैं। जहां पहले अंग्रेजोंकी तरह नाश्ता, दोपहर का और रात का भोजन करते और साथ ही सुवह-शाम की चाय के साथ वहुत सारे फल लेते और कभी-कभी उपलब्ध होने पर एक या दो अण्डे मिल जाते थे, वहां अव दोपहर मे मुख्य भोजन के रूप में केवल चावल, दाल और सब्जी ही लेते हैं, अलवत्ता कभी-कभी खीर भी होती है। शिकार की जगह लम्बे सैर-सपाटो ने ले ली है और राइफलों की जगह पुस्तकों, पत्रिकाओ और समाचार-पत्रों ने (पुस्तको में मेरी प्रिय पुस्तक है एडविन अर्नाल्ड की सांग शिलेश्चियल[2], जिसे अव मैं तीसरी वार पढ़ रहा हूं)। जव जोर की वर्षा होती है, जैसी कि इस समय हो रही है, तव इस प्रकार के ऊल-जलूल पत्र लिखने के अतिरिक्त और कोई काम नहीं रह जाता। (शेक्सपियर के शब्दो में कहूं तो) क्या से क्या हो गया? पर वास्तव मे जीवन का जितना रस मुझे इसमे मिल रहा है उतना पहले कभी नहीं मिला। केवल चावल समाप्त हो गये हैं और मैंने ब्राह्मण के समान इस समय पास में विद्यमान जगतनारायण[3] के राजसी भण्डार से चावल के धर्मार्थ दान के लिए प्रार्थना की है।"

—अंग्रेजी से। यं० इं०, २१।७।१९२१।]

२४. अहिंसा

[सयुक्तप्रान्त की घटनाओ पर गाधीजी की प्रतिक्रिया]

मेरा विश्वास है कि हम अपने उद्देश्य के निकट पहुच गये हैं, परन्तु जव विजय वहुत निकट दिखाई देती है तभी अधिकतम जोखम रहता है। किसी को जव भी कोई उल्लेखनीय विजय मिलती है उसे उससे पहिले समस्त पूर्व प्रयत्नों से

---

१. जवाहरलाल नेहरू की पत्नी।

२. भगवद्गीता का अंग्रेजी अनुवाद।

३. प्रमुख वकील, हण्टर कमेटी के सदस्य।

वड़ा एक अन्तिम प्रयत्न और करना पड़ता है। ईश्वर जो अन्तिम परीक्षा लेता है वह सदा कठिनतम होती है। शैतान का अन्तिम प्रलोभन सर्वाधिक मोहक प्रलोभन होता है। यदि हम स्वतन्त्र होना चाहते हैं तो हमें ईश्वर की अन्तिम परीक्षा में उत्तीर्ण होना पड़ेगा और शैतान के अन्तिम प्रलोभन को अमान्य करना पड़ेगा।

अहिंसा असहयोग का सवसे अधिक महत्वपूर्ण और अभिन्न अंग है। यदि हम अहिंसक वने रहे तो हम अन्य सव वातों को छोड़ देने पर भी अपना स्वातन्त्र्य-संग्राम चलाते रह सकते हैं। परन्तु यदि हम अहिंसा पर कायम नहीं रहेंगे तो हम वुरी तरह हारेंगे। हमें यह याद रखना चाहिए कि हिंसा तो वह आधारशिला है जिस पर सत्ता की इमारत टिकी है। चूंकि हिंसा सरकार का अन्तिम सहारा है, और उसका अन्तिम आश्रय है, इसलिए उसने लोगों के सभी प्रकार के हिंसात्मक प्रयत्नों को व्यर्थ करने की तैयारी कर ली है और इस प्रकार यदि हम हिंसा करें तो उसने अपने-आपको उससे पूर्ण सुरक्षित रखने का प्रवन्ध कर लिया है। इसलिए हिंसा का आश्रय लेना अत्यन्त सक्रिय रूप से सरकार के साथ सहयोग करना है। यदि हमने किसी भी प्रकार की हिंसा की तो वह हमारी मूर्खता और दुर्वलताभरी नाराजी की निशानी होगी। गम्भीरतम उत्तेजना के वीच भी संयम वनाये रखना योद्धापन की सवसे सच्ची निशानी है। युद्ध-कला में सर्वथा नौसिखुआ मनुष्य भी यह जानता है कि उसे उन स्थानों से वचना चाहिए जहां शत्रु घात लगाये हों। क्योंकि खरे सैनिक की तो यह कसौटी ही है कि वह हर तरह की उत्तेजना से अपने को वचाये रखने की सावधानी वरते।

अलीगढ़ की घटना इस वात का उदाहरण है। यह वात वहुत साफ दिखाई देती है कि वहां पुलिस ने लोगों को उत्तेजना का काफी कारण दिया था। हम यह वात वहुत पहिले जान चुके हैं कि ऐसा करना उनका काम है। अलीगढ़ के लोग अपने लिए विछाये गये जाल में फंसकर उत्तेजित हो गये और उन्होंने आगजनी की। अभी तक यह ठीक-ठीक मालूम नहीं हुआ है कि विना वर्दी के सिपाही को मारा किसने। यह सावित करने की जिम्मेदारी लोगों की है कि यह काम उन्होंने नहीं किया है।

हमें अपने प्रति कठोर होना चाहिए। यदि हम सीधे और तंग रास्ते से जाना चाहते हैं (जो अवश्य ही सवसे छोटा रास्ता है) तो हमें अपने प्रति दयालु नहीं होना चाहिए। हम किसी भी दुर्घटना का दोष वदमाशों पर नहीं डाल सकते। उनके कामों के लिए हमें जिम्मेदार होना चाहिए। यदि यह असम्भव हो तो हमें कह देना चाहिए कि हम स्वराज्य के अयोग्य हैं। हमें उन पर भी नियन्त्रण रख सकना

चाहिए और उनको भी अनुभव कराना चाहिए कि जिस राष्ट्रीय और धार्मिक कार्य मे हम लोग लगे हैं उसमे उनका हस्तक्षेप न करना आवश्यक है। शुद्धीकरण के आन्दोलन मे पूरा देश ही ऊपर उठता है और उसमे दुष्ट और पतित लोग भी आ जाते हैं। यह हमारा समझ-बूझकर किया गया दावा है; इसके सम्बन्ध मे किसी को कोई भ्रम नही रहना चाहिए। यदि हमारा यह दावा सिर्फ जवानी दावा ही हो तो हम जिस तन्त्र को शैतानी तन्त्र कहकर बुरा बताते हैं उससे भी अधिक शैतानी तन्त्र की स्थापना करने के दोषी सिद्ध होगे।

इसलिए जब हम अहिंसात्मक असहयोग के मार्ग पर चल रहे हैं तो हम नैतिक दृष्टि से कर्त्तव्यबद्ध हो जाते हैं कि हम उस पर मन, वचन और कर्म से आचरण करें। यदि हम इतने कमजोर या सन्देहशील हैं कि अपने सिद्धान्त पर नही चल सकते तो हमे यह बात साफ-साफ स्वीकार कर लेनी चाहिए।

पाठको को इससे यह विचार न बना लेना चाहिए कि मुझे लगता है हम परीक्षा मे खरे नही उतर रहे हैं। इसके विपरीत मेरा यह विश्वास है कि हमने लोगो पर अपूर्व नियन्त्रण प्राप्त कर लिया है, और उन्होंने अहिंसा की आवश्यकता इतनी पहले कभी नही समझी थी जितनी अब समझ ली है।

परन्तु जिस रास्ते को हमने सोच-समझकर चुना है उससे जरा-सा भी हटने से हमे जो उचित चेतावनी मिलती है उसको न समझना हमारे लिए अनुचित होगा।

मुझे सावधानी के तौर पर कुछ कहना भी आवश्यक मालूम होता है, क्योंकि सरकार की ओर से दी जाने वाली उत्तेजना बढ़ती जा रही है। ऐसा सयुक्त प्रान्त मे सबसे अधिक हो रहा है। श्री शेरवानी का सवेरे पाच बजे गिरफ्तार किया जाना, उन पर शीघ्रता से मुकदमा चलाया जाना, उनका अपराधी ठहराया जाना, उनको सजा का दिया जाना और उसी दिन वहा मे अन्यत्र ले जाया जाना—ये सब बातें अत्यन्त विचारशील मनुष्य को भी चिढा देने के लिए काफी हैं। मुकदमे के ब्यौरे से यह पता लगता है कि न्यायाधीश को कानून का ज्ञान नही था और उनको इसकी अधिक परवाह भी नही थी। यदि उनके सामने सिर्फ वे ही सबूत थे जो समाचारपत्रो मे प्रकाशित हुए हैं तो वे सजा देने के लिए काफी नही थे। यह मालूम होता है कि उनको अपराधी ठहराने और दण्ड देने के बारे मे सब बातें पहिले ही तय कर ली गई थी। इस मामले मे गवाही लेने की कार्रवाई एक बहुत बडा झूठ-मूठ का दिखावा थी। हमारे यहा सर्वसाधारण कानून के अधीन मुकदमो के नाटक की तालीम चल रही है। प्रशासन मे आदेश और अदालती अभियोग मे अन्तर ही कहा है? अदालती अभियोग तो और भी खराब होता है क्योंकि

उसकी आलोचना करना अधिक कठिन होता है। "मुकदमा झूठा दिखावा था", कहने की अपेक्षा 'मुकदमा चलाया ही नहीं गया', यह कहने में अन्याय की अधिक प्रतीति होती है। दमनकारी कानून रद किये जा सकते है, परन्तु इससे यह निष्कर्ष तो नही निकलता कि दमन समाप्त हो जायगा। स्वरूप बदल जाने पर भी वस्तु तो वही रहेगी। हम चाहते हैं कि वस्तु, आत्मा अथवा हृदय बदल जाय।

और यदि हम ऐसा परिवर्तन चाहते है तो हमें पहिले अपने आप में परिवर्तन करना चाहिए, अर्थात् हमारे ऊपर दमन का कोई प्रभाव नही पड़ना चाहिए। जिस प्रकार हम हिंसात्मक प्रतिकार नहीं कर सकते, उसी प्रकार हम दमन किये जाने पर कमजोर न हों, भले ही वह दमन कितना ही कठोर या कष्टकर क्यों न हो।

संयुक्तप्रान्त की एक विश्वसनीय अफवाह है कि तीन या चार प्रसिद्ध कार्य-कर्त्ताओं ने जेल-जीवन को बहुत अधिक कष्टप्रद पाया, अतः कुछ कामों को न करने का वचन दे दिया और जेल से छूट गये। यदि यह बात सच है तो यह खेदजनक है। हमें चट्टान की तरह दृढ़ होना चाहिए। हमें पीछे नही हटना चाहिए। भारत की जेलों में हमें जो भी कष्ट उठाने पड़ें हममें उनको खुशी से सहन करने की सामर्थ्य होनी चाहिए। हमें सरकार से कोई आशा नही करनी चाहिए। हमें उससे यही आशा करनी चाहिए कि वह बुरा-से-बुरा जितना कर सकती है करेगी, फिर चाहे वह कानून के अनुसार हो, चाहे उसके खिलाफ़। उसका एक मात्र उद्देश्य हमको झुकाना है, क्योंकि वह अपने आप में सुधार करना नही चाहती।

मैं सरकार के बारे में कठोर मत नही दे रहा हूं। धारवाड़ और अलीगढ़ की घटनाएं सरकार द्वारा शिष्टता का उल्लंघन किये जाने की सबसे ताजी मिसालें हैं। यदि मैं विश्वास करूं तो एक दूसरी अफवाह यह है कि संयुक्तप्रान्त की एक जेल में एक बहादुर मुसलमान कैदी को एक अंधेरी कोठरी में बन्द कर दिया गया और तीन दिन तक तेज बदबू में रखा गया। जिस मनुष्य ने मुझे यह सूचना दी उसने मुझसे पूछा कि जो व्यक्ति इस तेज बदबू को सहन न कर सके उसे क्या करना चाहिए। मैंने कठोरता से किन्तु विचारपूर्वक उत्तर दिया कि फिर भी उसे क्षमा नहीं मागनी चाहिए; उसे अत्याचारी की इच्छा के सामने झुक जाने की अपेक्षा अपना सिर जेल की दीवारों से मार कर फोड़ लेना चाहिए। यह मेरा कोई ऐसा मत नही कि जिसे मैं व्यर्थ ही प्रकट कर रहा हूं, बल्कि ये मेरे दक्षिण अफ़्रीका के दिलचस्प छुटफुट अनुभव है। दक्षिण अफ़्रीका में जेल का जीवन सुख-सुविधापूर्ण नही था। बहुत से कैदियों को तनहाई की सजा भुगतनी पड़ती थी। सैकड़ों को

सफाई का काम करना पडता था। अनेक लोगो ने उपवास किये। एक स्त्री जब जेल से छोडी गई तब वह हड्डियो का ढाचा ही रह गई थी, क्योकि जो कुछ भी वह खा सकती थी वह जेल के अधिकारी उसे देते नही थे। परन्तु वह स्वाभिमानिनी और दृढ थी। दक्षिण अफ्रीका मे जिन हजारो लोगो ने सजा भोगी, उसमे से शुरू मे एक या दो अपवादो को छोड कर मुझे ऐसे एक भी कैदी का उदाहरण याद नही आता जिसने जेल से छूटने के लिए किसी प्रकार की कमजोरी दिखाकर माफी मागी हो। पारसी रुस्तम जी, इमाम अब्दुल कादिर बावजीर, थम्बी नायडू और अन्य बहुत से लोगो ने जिनके नाम मैं बता सकता हू, कभी पीछे पाव नहीं हटाया। बल्कि वे बार-बार जेल गये। तपस्वियो के रक्तदान के बिना स्वतन्त्रता के मन्दिर का निर्माण नही हो सकता। अहिंसा की पद्धति सबसे त्वरित, निश्चित और सर्वोत्तम है। हमे काग्रेस के और खिलाफत के सम्मेलनो मे की गई अपनी प्रतिज्ञा के प्रति सच्चे बने रहना चाहिए, और विजय बिल्कुल पास है।
—अंग्रेजी। यं० इं०, २८।७।१९२१। सं० गा० वा० खण्ड २०, पृष्ठ ४५८।]

- **शैतान का अन्तिम प्रलोभन सबसे मोहक प्रलोभन होता है।**
- **अहिंसा असहयोग का सबसे अधिक महत्वपूर्ण और अभिन्न अग है।**
- **हिंसा तो वह आधारशिला है जिस पर सत्ता की इमारत टिकी है।**
- **हमे अपने प्रति कठोर होना चाहिए।**
- **शुद्धीकरण के आन्दोलन मे पूरा देश ही ऊपर उठता है।**
- **हमें चट्टान की तरह दृढ़ होना चाहिए।**
- **तपस्वियो के रक्तदान के बिना स्वतन्त्रता के मन्दिर का निर्माण नहीं हो सकता।**

२५. अनुशासनहीनता

[संयुक्तप्रान्त के दौरे पर गाधीजी की प्रतिक्रिया]

मैने दुबारा जो दौरा शुरू किया है उसका अनुभव पहले के मुकाबले अच्छा नही रहा है। मैंने तो सोचा था कि मैं अनुशासन के बारे मे इतना लिख और बोल चुका हू और चूकि हम अनुशासन के एक दौर से गुजर चुके है, इसलिए अब इस दौरे मे मुझे काफी अनुशासित और सन्तुलित किस्म के प्रदर्शन देखने को मिलेंगे। लेकिन मुझे यह देखकर आश्चर्य ही हुआ कि स्टेशनो पर लोगो की भीड़ ठेलाठेली और शोरगुल करते हुए मिलती है। आगरा और टूण्डला मे भीड़ उत्तेजित

थी और लोग किसी की वात सुनने को तैयार नही थे। टूंडला में तो भीड़ के कारण स्टेशन से वाहर निकलना तक कठिन हो गया था। जाहिर है कि उनसे जो भी कुछ कहा जा रहा था, वह उनको सुनाई नहीं देता था। उनमे कोई चुप रहने को कहता तो वे जोर-जोर से चीखने लगते थे। और मुझे जैसे-तैसे जव भोजन-कक्ष में पहुंचाया गया तो भीड़ वहां भी घिर आई। अन्दर झांकने के लिए उत्सुक लोगों ने दरवाजे के कांच तोड़-फोड़ डाले। लोग तवतक सन्तुष्ट नही हुए जव-तक मैं उन्हें लेकर स्टेशन के वाहर नही निकल आया। लेकिन मेरे भाषण के वाद काफी फर्क पडा। लोग हिदायतों पर कान देने लगे। शोर-गुल भी पहिले से कम हो गया। फिर लोग मेरे डिव्वे की ओर वेतहाशा नही भागे और हम लोगों को गुजरने के लिए रास्ता भी दे दिया। मैं टूंडला से कई वार गुजर चुका हूं, पर मैंने पहिले कभी इतनी भीड़ वहां नही देखी थी। पूछ-ताछ करने पर मुझे पता चला कि इस वार आस-पास के गांवों के लोग सिर्फ दर्शनों के लिए सिमट आये थे। यह 'दर्शन' तो एक परेशानी वन गई है, और इसमें काफी कीमती समय वेकार चला जाता है। इससे मुझे सचमुच वड़ी परेशानी होती है और यात्रा के दौरान अपने लेखन-कार्य के लिए मुझे जिस शान्ति की जरूरत है, वह भी नहीं मिल पाती। इस सारी कठिनाई की जड़ में यही वात है कि हम पहिले से कोई योजना नही वनाते और हम अच्छी तरह से संगठित भी नही हैं। कार्यकर्त्ताओं को या तो उन प्रदर्शनों को सर्वथा व्यवस्थित ढग से संगठित करना चाहिए या फिर इनका विचार ही त्याग देना चाहिए। गनीमत समझिए कि ये प्रदर्शन मैत्रीपूर्ण प्रदर्शन हैं और इसलिए कोई झंझट खड़ी नही होती। किन्तु सोचिए अगर हम विरोध में कोई प्रदर्शन करें तो कैसी अन्धा-धुन्धी मच जाय। अगर हमें गोलावारी के समय या लोगों के उत्तेजित रहते हुए भीड़ की व्यवस्था करनी पड़े तो क्या हो? मैंने टूंडला में देख लिया है कि ऐसी भीड़ को लेकर सार्वजनिक सविनय अवज्ञा-आन्दोलन चलाना असम्भव है। जवतक हम भीड़ के लोगों को आदेश देने और उनका पालन कराने की स्थिति में नहीं आ जाते, तवतक हम किसी भी काम को कारगर ढंग से अंजाम नहीं दे सकते। इसलिए हमारे स्वयंसेवकों को भीड़ को नियन्त्रित रखने का प्रशिक्षण दिया जाना चाहिए। भारतीय लोगों की भीड़ को नियन्त्रण में रखना और व्यवस्थित वनाना अत्यन्त ही सरल कार्य है। यह संसार के अन्य सभी देशों के लोगों को नियन्त्रण में रखने से कहीं आसान है। हां, इसके लिए पहले से तैयारी की जानी चाहिए। और यदि पहिले से तैयारी न हो तो समझदारी इसी में होगी कि भीड़ का जमाव ही न होने दिया जाय।

—अंग्रेजी। यं० इं०, ११।८।१९२१।]

२६. संयुक्तप्रान्त में दमन

पण्डित जवाहरलाल नेहरू ने मेरे लिए आज से दो मास पूर्व निम्नलिखित टिप्पणी[1] तैयार की थी। इसमे उन्होंने ३० मई तक सयुक्त प्रान्त मे होनेवाले दमन के तरीको की समीक्षा की है। दूसरे मामलो मे व्यस्त रहने के कारण मैं पण्डित जवाहरलाल नेहरू की इन टिप्पणियो पर ध्यान नही दे सका। किन्तु वे आज भी उतनी ही ताजी लगती हैं, जितनी जून मे थी। सरकार की ओर से उत्पीडन के आरोप का जो निराकरण किया गया है उसका लगभग पूरा जवाव पाठक को इन टिप्पणियो मे पढने को मिलेगा।

—अंग्रेजी। यं० इं०, १८।८।१९२१।]

२७. मुसलमानों की बेचैनी

मैंने लखनऊ मे मुसलमानो को खिलाफत के मामले मे वेचैन पाया। उनकी वेचैनी स्वाभाविक है। मौलवी सलामतुल्ला ने कहा कि अग्रेजो का रुख तो अब असह्य होता जाता है। यह कहकर उन्होंने सौम्य भाषा मे अकारा सरकार की स्थिति के विषय मे लोगो की जो भावनाए हैं उन्ही को व्यक्त किया है। इसमे कोई शक नही कि तुर्कों के साथ मित्र-भाव रखने के सम्वन्ध मे अग्रेजो ने जो आश्वासन दिये हैं उनके प्रति अविश्वास बढता जा रहा है। अब इन दो मे से किसी बात पर कोई विश्वास नही करता कि अग्रेजो के आश्वासन बिल्कुल सच्चे हैं या ब्रिटिश सरकार तुर्कों की मदद करने मे असमर्थ है, अतएव अधीर और क्रोधित होकर मुसलमान तुरन्त काग्रेस और खिलाफत कमेटी की ओर से कोई कडी और जोरदार कार्रवाई की माग करते है। मुसलमान तो स्वराज्य का अर्थ यह समझते हैं, और उनका ऐसा समझना ठीक है कि हिन्दुस्तान खिलाफत के मामले का निपटारा पक्के तौर पर करने लायक हो जाय। इसलिए वे कहते हैं कि अगर स्वराज्य के मिलने मे काफी देरी है या उसके लिए प्रयत्न करते हुए मुसलमानो को कायरो की तरह लाचार भूमध्य सागर मे तुर्कों की बरबादी देखते रहना पडे तो मुसलमान उसके लिए तैयार नही हैं।

यह नामुमकिन बात है कि ऐसी हालत मे मुसलमानो के लिए [illegible] न पैदा

१. टिप्पणी के पाठ के लिए परिशिष्ट देखिए।

हो। यदि कोई कारगर इलाज मेरे खयाल में आया होता तो मैं जरूर खुशी से कोई फौजी कार्रवाई करने की सिफारिश करता। अगर मैं देखता कि स्वराज्य की हलचल को मुल्तवी कर देने से हम खिलाफत को ज्यादा फायदा पहुंचा सकेंगे तो मैं खुशी से ऐसी सलाह देता। करोड़ों मुसलमानों का दिल हलका करने के लिए अगर असहयोग के अलावा भी मुझे कोई उपाय नजर आता तो मैं खुशी से उसमें लग जाता।

मगर मेरी नाकिस राय में तो खिलाफत के अन्याय को जल्दी-से-जल्दी मिटाने का अगर कोई साधन है तो वह स्वराज्य ही है। और यही कारण है कि मेरे लिए तो स्वराज्य का पाना ही खिलाफत के सवाल का हल होना है और खिलाफत के सवाल का हल होना ही स्वराज्य पाना है। मुसीबत के मारे हुए तुर्कों को मदद पहुंचाने का सिर्फ एक ही उपाय हिन्दुस्तान के लिए है और वह है खुद अपने अन्दर इतनी ताकत पैदा कर लेना, जिससे वह अपने स्वत्व को प्रदर्शित कर सके। यदि वह एक मियाद के भीतर इतनी शक्ति नही बढा सकता तो फिर हिन्दुस्तान के लिए दैवाधीन होने के सिवा बाहर निकलने का दूसरा कोई रास्ता नही है। जिसे खुद लकवा मार गया है वह अगर दूसरे की मदद के लिए हाथ बढ़ाना चाहे तो वह पहिले खुद लकवे से अपना पीछा छुड़ाने के सिवा और क्या कर सकता है? इसके बजाय अगर हम केवल नासमझी, नादानी और गुस्से में आकर खून-खराबी कर बैठे तो इससे अन्दर की आग भले ही बाहर आकर धधक उठे, तुर्की का दुःख दूर नही हो सकता। और न इससे हिन्दुस्तान में ऐसी ताकत ही आ सकती है कि वह अपने स्वत्व को प्रदर्शित कर सके और इसके अलावा उस दंगे-फसाद को दबाने के लिए जो उपाय काम में लाये जायंगे उनसे सम्भव है हमारा वह वेग, जिसके साथ आज हम अपने लक्ष्य की ओर दौड़े चले जा रहे है, बहुत मन्द पड़ जाय।

तो भी हमें किसी तरह निराश होने का कोई कारण नहीं। कांग्रेस का सारा कार्यक्रम ऐसा ही बनाया गया है और ऐसे ही उपाय किये जा रहे हैं जिनसे ख़िलाफत के संकट का सामना किया जा सके। स्वदेशी को पूरा करने की मियाद दो मास की रक्खी गई है। यह निस्सन्देह एक ऐसा तीव्र और प्रबल उपाय है जिसके द्वारा देश का सम्पूर्ण सत्व प्रकट हो सकेगा। और यदि भारत ने सितम्बर तक पूरा बहिष्कार कर दिखाया और अक्तूबर में वह अपने पांवों पर खड़ा हो गया तो निश्चय ही इससे बड़े-बड़े तेजमिजाज लोगों और मुझे-जैसे अधीर तथा जोशीले खिलाफतियों की आत्मा को भी सन्तोष होगा।

पर बात यह है कि अभी हमारे काम करने वाले सभी लोगों को न तो इस

वात का यकीन हो पाया है कि वताई हुई मियाद के भीतर स्वदेशी का कार्यक्रम पूरा हो जायगा और जो करामात इसमे वताई जाती है न वे उसके कायल हो पाये हैं। ऐसे सशयात्मा लोगो को जवतक कि वे इससे वेहतर और जल्दी असर करनेवाला दूसरा उपाय नही वता सकते और उसे देश से स्वीकृत नही करा सकते, इससे अलग ही रहना लाजिम है। अथवा शकालु होते हुए भी उन्हे शुद्ध हृदय से स्वदेशी के काम मे जुट जाना चाहिए और इस प्रयोग को सचाई के साथ आजमाना चाहिए। सन्देह करना ठीक हो तो भी क्या यह सन्देह करना कि भारत स्वदेशी के कार्यक्रम के अनुसार काम करने मे समर्थ नही है, यह नही वतलाता कि खिलाफत के काम मे भारत का वास्तव मे कोई अनुराग नही है और वह उसके लिए कुछ भी काम करना नही चाहता? क्या हर हिन्दू और मुसलमान के लिए विदेशी वस्त्र-मात्र को छोड कर सिर्फ खादी पहनना, कोई वडा भारी स्वार्थ-त्याग है? यदि भारतवर्ष ऐसी क्षमता प्राप्त नही करता तो क्या इस वात का सवूत नही होगा कि वह इससे अधिक स्वार्थ-त्याग के लायक नही है और इसलिए तुर्की की सहायता के योग्य भी नही है। आइए हम सव मिलकर विदेशी कपडो का पूरा वहिष्कार करे और जितनी जरूरत है उतनी खादी वनायें। इतना करने पर हमे अपना लक्ष्य समीप आता दिखाई देने लगेगा।

लखनऊ मे यह मसला वडी सजीदगी के साथ पेश किया गया था कि हम राली व्रदर्स का, जो कि एक यूनानी कम्पनी है, वहिष्कार करके यूनानियो से वदला चुका लें तथा उन मजदूरो से जो वन्दरगाहो पर काम करते हैं, कहे कि वे विदेशी जहाजो पर माल न चढ़ायें। मैं तो समझता हू कि ये दोनो सुझाव अस्वाभाविक है और उनको कार्यरूप मे परिणत करना भी असम्भव है। जरा देर के लिए मान लीजिए कि हम एक क्षण मे राली व्रदर्स का कारोवार चौपट कर सकते हैं, पर इसका असर यूनान पर क्या पड सकता है? राली व्रदर्स सारा या ज्यादातर माल यूनान नही भेजते। उनका व्यापार तो सारी दुनिया मे फैला हुआ है। अतएव स्वदेशी का काम उठाने की अपेक्षा उनके व्यापार के साथ झगडना ज्यादा कठिन होगा। ऐसा करना गलत है, इस वात को जाने दे तो भी इस तरह से काम करके हम अपनी हँसी करायेंगे, जो ठीक ही होगी। विदेश जानेवाले जहाजो पर काम करने वाले मजदूरो के काम मे वाधा डालना भी उतना ही असगत है। यदि जनता पर हमारा इतना पूर्ण नियन्त्रण होता तो हम इस समर मे अव तक कभी के जीत गये होते। माल का वाहर जाना वन्द कर देने के लिए हमे आज काम करनेवाले सारे मजदूरो का काम हमेशा के लिए या एक अनिश्चित समय तक वन्द रखना होगा। यही नही वल्कि ऐसा करने समय या पहिले ही मान लिया

जाता है कि जो मजदूर वन्द कर देंगे उनकी जगह दूसरे मजदूरों को काम पर न आने देने की सामर्थ्य हममें है। मेरा तो खयाल है कि अभी हम इतने संगठित नहीं हैं। ऐसी कोशिश में नाकामयाव होने के सिवा और कुछ हासिल नहीं होगा। और भी वुरा नतीजा न निकले तो गनीमत समझिए।

इसका एक ही सम्भव उपाय है कि हम तुरन्त सविनय अवज्ञा शुरू कर दें। परन्तु मुझे इत्मीनान हो गया है कि देश अभी वड़े पैमाने पर इसे करने के लिए तैयार नहीं है। पर यदि देश इस वात को दिखा दे कि उसमें संगठन की इतनी काफी क्षमता है, उसके पास इतने विभिन्न साधन हैं और उसमें इतनी नियमवद्धता है जितनी कि स्वदेशी-जैसे सर्वथा व्यवहार्य कार्य को पूर्णतः सफल वनाने के लिए आवश्यक है, तो कानून का सविनय भंग विना जोखिम के सफलतापूर्वक शुरू किया जा सकता है। आइए, हम यह आशा और प्रभु से प्रार्थना करें कि देश ऐसा कर दिखाये।

—अंग्रेजी। यं० इं०, १८।८।१९२१।]

- **मेरे लिए तो स्वराज्य का पाना ही खिलाफत के सवाल का हल होना है और खिलाफत के सवाल का हल होना ही स्वराज्य पाना है।**

२८. द्वेषपूर्ण अभियोग

संयुक्त-प्रान्त के दौरे में दमन की अजीव कहानियां मेरे सुनने में आई। अभी तो मैं केवल उन दो अभियोगों की चर्चा करना चाहता हूं जिनको द्वेषपूर्ण कहने में मुझे कोई हिचक नहीं है। सीतापुर के जमींदार मोहनसिंह दरमल और भूतपूर्व तहसीलदार शम्भुनाथ को सम्मन भेजे गये हैं और पूछा गया है कि उनसे जमानत क्यों न माँगी जाय। उनका अपराध सम्मन में यह वताया गया है:

"चूंकि रामगढ़ के पटवारी की सूचना से यह प्रकट होता है कि

(१) ठा० मोहनसिंह रामगढ़ वाले

(२) वा० शम्भुनाथ, भूतपूर्व नायव तहसीलदार, जो अव भुवाली और भुन्यावर में हैं, सरकार के विरुद्ध आन्दोलन में भाग ले रहे हैं और तिलक स्वराज्य कोष की हुण्डियां वेच रहे हैं। चूंकि कानून-द्वारा संस्थापित सरकार के विरुद्ध ऐसे आन्दोलन से आम लोगों के अमन-चैन में विघ्न पड़ने और शान्ति के भंग होने का अन्देशा है अतः इन लोगों से स्पष्टीकरण मांगा जाता है कि उनमें से हर एक से साल भर तक शान्ति कायम रखने के लिए १००० रुपये के मुचलके और ५००-५०० रुपये की दो जमानतें क्यों न ली जानी चाहिए?"

ऊपरी तौर पर सम्मान से कोई अपराध प्रकट नही होता। परन्तु पटवारी का बयान पढकर स्थिति की दुःखजनक हास्यास्पदता बढ जाती है। इसमे कहा गया है कि अभियुक्त ने पण्डित मोतीलाल नेहरू को चन्दा दिया है और उसे रामगढ-जैसी हवाखोरी की जगह मे पण्डित (मोतीलाल) नेहरू जैसे पक्के असहयोगी के साथ देखा गया है। यह सच है कि न्यायाधीश मे ऐसे प्रसगोचित तथ्य का जिक्र करने का साहस नही है, परन्तु जैसा कि दूसरे अभियुक्त के बयान से सुस्पष्ट हो जाता है, उसका एक मात्र अपराध पण्डितजी के साथ रहना और उनकी सेवा करना ही है। अभियुक्त अपने जिले का एक प्रसिद्ध व्यक्ति है। यह भी सभी जानते हैं कि वह क्षयरोग से पीड़ित है और अब उसका रोग चरम अवस्था मे है। उसका दाहिना फेफड़ा समाप्तप्राय है। उसका बाया फेफडा और उसकी आतें भी बहुत खराब हैं। उसने महीनो से किसी राजनीतिक काम मे भाग नही लिया है। उसने भाषण भी नही दिये हैं। वह रामगढ मे पण्डितजी की तरह स्वास्थ्य सुधार रहा है। अतः न्यायाधीश के लिए उसे गिरफ्तार करने का या गिरफ्तारी के बाद उस पर मुकदमा चालू रखने का कोई कारण ही नही है। तथ्य यह है कि न्यायाधीश असहयोग से तनिक भी सम्बद्ध लोगो को स्पष्टतः आतकित करना चाहता है। इसमे वे लोग भी आ जाते हैं जो गाव मे चन्दा इकट्ठा करते हैं या असहयोगियो की सहायता करते हैं। कहा जा सकता है कि ऐसी घटनाए वास्तव मे अपवादस्वरूप हैं और उनके महत्व की अतिरजना की कोई जरूरत नहीं। मैं इस सिद्धान्त को मानने मे असमर्थ हू। इस दृष्टान्त मे न्यायाधीश ने सम्भवतः एक मौलिक तरीका अपनाया है, परन्तु सयुक्त-प्रान्त मे मैंने जो कुछ देखा उससे मैं इस निष्कर्ष पर पहुचा हू कि वहा एक ऐसा परोक्ष आतकवाद चालू है जैसा शायद सिन्ध को छोड कर अन्यत्र कही नही है। इसका एकमात्र उद्देश्य असहयोग की समस्त प्रवृत्तियो को कुचल डालना है, चाहे वे कितनी ही अहिंसात्मक और सब प्रकार से निर्दोष क्यो न हो। अली भाइयो के क्षमा-याचना के वक्तव्य का भी अत्यन्त बेईमानी भरा उपयोग किया जा रहा है। उसका उपयोग करने वाले अली भाइयो की क्षमा-याचना की रीति और विधि से परिचित हैं। परन्तु अली भाइयो के इस वीरतापूर्ण कार्य को विकृत रूप मे प्रस्तुत करना इन लोगो की इन-धूर्तताओ की तुलना मे कुछ नही है जिन्हें ये असहयोगियो को झुकाने और दूसरों को उनके मार्ग से हटाने के उद्देश्य से प्रयोग मे लाते हैं। मुझे पक्का पता है कि असहयोग का झण्डा उठाने की हिम्मत करने वाले निर्धनो को इसलिए सताया जाता है कि वे काग्रेस कमेटी मे शामिल न हो और उनको वैसे ही आपत्तिजनक तरीको से उन शान्ति-सभाओ मे शामिल होने के लिए बाध्य किया जाता है जो

वस्तुतः गैर-कानूनी है, क्योंकि उनके बनाने और चलाने में अवैध और अनैतिक विधियां अपनाई जाती है। संयुक्त प्रान्त की सरकार कूट और भीरु ढंग से वही कर रही है जो सर माइकेल ओडायर की सरकार ने लट्ठमार तरीके मे किया था। उन्होंने अपनी नीति के अनुरूप अमल किया और सब नेताओं को गिरफ्तार कर खुले-आम जलियांवाला का वातावरण बनाने का साहस दिखाया था। मैं इस तथ्य की ओर दूसरे स्थानों पर पाठकों का ध्यान आकृष्ट कर चुका हूं कि पंजाब में सैनिक भरती के दिनों में जलियांवाला से भी भीषण घटनाएं हो चुकी है, किन्तु उनकी ओर किसी का ध्यान नही गया, क्योंकि नेता गिरफ्तार नही किये गये थे। संयुक्त-प्रान्त की सरकार श्री शेरवानी के जैसे इक्के-दुक्के उदाहरणों को छोड़ कर बड़े नेताओं को गिरफ्तार नही करेगी। सरकार ने श्री रंगा अय्यर को गिरफ्तार किया है। उसने अभी तक पण्डित जवाहरलाल नेहरू या श्री जोजेफ को हाथ भी नही लगाया है, हालांकि चुनौती तीनों ने साथ-ही-साथ दी थी। मैंने संयुक्त-प्रान्त के अपने निरीक्षण को लेखबद्ध करने का झंझट इसलिए उठाया है कि मैंने श्री चिन्तामणि का वह भाषण पढ़ा है जिसमें उन्होंने सरकार की कार्रवाई का जोरदार समर्थन किया है और मुझपर यह जोर भी डाला गया है कि मैं पूर्ण उत्तरदायी सरकार की तरह सुधारों को कार्यान्वित करने वाले उन मन्त्रियों को प्रोत्साहन दू। मेरे तुच्छ विचार में जहां भी सम्भव है वहां सुधारों को और सुधारों के अन्तर्गत बनाये गये मन्त्रियों का उपयोग चतुर परन्तु बेईमान नौकरशाही को सहारा देने के लिए किया जा रहा है। मन्त्री इस बात को नही जानते और वे अनचाहे उनके हाथों की कठपुतली बन रहे है, किन्तु इससे नीति की सदोषता में कोई कमी नही आती। हां, इस स्थिति में मन्त्रियों का दोष कुछ हल्का जरूर मालूम पड़ता है। मुझे यह विश्वास करने में हिचक है कि राजा साहब महमूदाबाद और श्री चिन्तामणि यह जानते हैं कि वे क्या कर रहे हैं। मेरा ख्याल तो यही होता है कि वे नौकरशाही के जाल में मजबूरन गये हैं और उनके सन्मुख जो प्रत्यक्ष उचित दिखने वाली दलीलें रक्खी गई है उनके कारण वे उन बातों को क्षम्य मान लेते है जिन्हे वे अन्यथा बेहिचक निन्दित ठहराते। 'इण्डिपेण्डेण्ट' ने लिखा है कि राजा महमूदाबाद ने उस जिला न्यायाधीश के कार्य का समर्थन किया है जिसने पूर्वी बदायू के एक मुन्सरिम को अपने बेटे का, जिसे दफ़ा १४४ के अन्तर्गत नोटिस दिया गया था, राज-भक्ति का शपथ-पत्र दाखिल न करने पर मुअत्तिल कर दिया था। वह जबतक आवश्यक शपथ-पत्र दाखिल न करे तबतक के लिए १० मई को मुअत्तल किया गया। यह बात सच है कि पुत्र पिता के साथ रहता था। फल यह हुआ कि मुन्सरिम ने ६ जून को अपने बेटे की ओर से अमन सभा मे शामिल

होने की अर्जी पेश कर दी और अपने वेटे की इच्छानुसार काम करने की स्वतन्त्रता को वेचकर नौकरी पर अपनी वहाली हासिल कर ली। यदि हम पर्दे के पीछे झाक कर देख सकते तो सम्भवत हमे वेचारे मुन्सरिम की मुअत्तिली के समर्थक गुप्त खरीते मिल जाते। खैर, जो भी हो यह दुखजनक तथ्य है कि सरकारी नौकरो पर यह दवाव डाला जा रहा है कि वे अपने लडको को असहयोग आन्दोलन से हटा लें। मुझे कोई शक नही कि तीन साल पहिले राजा साहव स्वय सरकारी नौकरो और उनके परिवारो के ऐसे भयकर पतन के विरुद्ध मुझसे कही अधिक सशक्त रूप से लिखते और भाषण देते थे। मन्त्रिगण वेईमान लोगो के हाथो कठपुतली वनाये जा रहे हैं, इस सत्य की ओर लोगो का ध्यान आकृष्ट करने से भी अधिक मतलव की वात यह है कि असहयोगियो को सरकार के यहा उल्लिखित अवैध और अनैतिक कार्यों से हतोत्साह न होना चाहिए प्रत्युत यह समझ लेना चाहिए कि हमे ऐसे और इससे भी वडे दमन की आशा रखने और उसे यह मानकर कि विश्व के सव सुधारको के भाग्य मे यही वदा है, प्रसन्नतापूर्वक स्वीकार करने की जरूरत है। आततायी सचमुच यही विश्वास रखते हैं कि हम गलती कर रहे हैं और देश को हानि पहुचा रहे हैं और जिस आन्दोलन के हम समर्थक हैं वह कुचला जाता हो तो उसको कुचलने मे कैसे साधन प्रयुक्त किये जाते हैं यह वात कोई महत्व नही रखती। अत हमे दमन को विजय की प्रस्तावना समझना चाहिए और इस कारण उसका स्वागत करना चाहिए और उससे अपने निश्चय को दृढतर वनाना चाहिए।

—अंग्रेजी। यं० इ०, १८।८।१९२१। स० गा० वा० खण्ड २०, पृ० ५४५।]

● हमे दमन को विजय की प्रस्तावना समझना चाहिए।

२९. हिन्दू-मुस्लिम एकता

उन्नाव खिलाफत समिति के सभापति श्री सैयद मुहम्मद लिखते हैं —

"आपके पत्रो में मुसलमानो के कांग्रेस मे शामिल न होने के वारे मे जब-तब छिट-पुट कुछ निकलता ही रहता है। मुझे इससे दुःख और चिन्ता होती है। खेद की वात है कि जिलो मे हिन्दू नेता आम तौर पर अपने मुसलमान पड़ोसियो मे कुछ परायापन महसूस करते हैं और छोटे जिलों मे हिन्दू और मुसलमान कार्यकर्ता व्यक्तिगत विज्ञापन की महत्वाकांक्षा रखते हैं और अपनी श्रेष्ठता का दावा करते हैं, जो कि सच्ची एकता के लिए घातक है। फल यह है कि हिन्दू कार्यकर्ता निकम्मा

आन्दोलन में शायद ही कोई सक्रिय भाग लेते हैं और इस तरह बीच की खांई चौड़ी होती जाती है। जहां तक प्रचार के काम का सम्बन्ध है, कांग्रेस कमेटियों ने कुछ भी नहीं किया है, और वे समझती हैं कि उनका काम खिलाफत समितियों से बिल्कुल भिन्न है। छोटे जिलों में यह दूषण बहुत शोचनीय है और पूरी एकता के लिए मेरे नितान्त सच्चे प्रयत्नों के बावजूद हम सतही एकता से अधिक कुछ नहीं पा सके हैं। हिन्दू एक बार एकता की इस शक्ति को समझ लें और महसूस करें तो मैं दावे के साथ कह सकता हूं कि इस जिले में गोबलि नगण्य रह जायगी। उनका अलग रहना ही हमारे लिए सबसे बड़ी रुकावट है।"

यदि उन्नाव के हिन्दू खिलाफत के सवाल के प्रति उदासीन हों, तो मुझे सचमुच बड़ा दुःख होगा। मुझे कोई सन्देह नही कि खिलाफत में हिन्दू जितनी ज्यादा दिलचस्पी लेंगे उतना ही स्वराज्य निकट आयेगा। हमें याद रखना चाहिए कि अभी यह सम्भव नही कि हम खिलाफत के सिवा किसी अन्य रूप में मुसलमानों को स्वराज्य में दिलचस्पी लेने के लिए प्रेरित कर सकें। यह दुःख की बात है, पर है सत्य। दोनों जातिया एक दूसरे से इतने समय तक विमुख रही हैं कि मुसलमान अनजाने लगभग यही समझने लगे थे कि भारत उनका घर नही। खिलाफत के खतरे ने उनकी आँखे खोल दी है। हिन्दू इस तथ्य को ध्यान में रखें और अपने मुसलमान भाइयों की मदद करके अपनी भी मदद करें और हमेशा के लिए हिन्दू-मुस्लिम एकता को पक्का करें। दोनों के लिए सौभाग्य की बात है कि उन्नाव में जैसा भी हो दूसरी अनेक जगहों में निश्चय ही ऐसा नहीं है। वहां हिन्दू खिलाफत आन्दोलन के लिए भरसक पूरी सहायता कर रहे है।

—अंग्रेजी। यं० इं०, २५।८।१९२१। 'टिप्पणियां' से।]

३०. टिप्पणी : हृषीकेश (ऋषिकेश)

हृषीकेश हरद्वार से गंगोत्री के मार्ग पर एक बड़ा तीर्थ है। यहां से यात्री धीरे-धीरे पहाड़ों में प्रवेश करते हैं। इसे प्रकृति ने सुन्दर बनाने में कोई कमी नही रखी है। पहाड़, उछलती-कूदती गंगा, निर्मल जल और ऐसी ही अन्य बातों को देखकर हमे ऋषियों की दूर दृष्टि, कला की परख और सरलता का पूर्ण भान होता है। किन्तु उनके उत्तराधिकारियों ने उसकी कैसी दुर्दशा की है, इसका कुछ-कुछ दुःखद अनुभव मुझे कुम्भ मेले के अवसर पर हुआ था। हृदय के मलिन और नाम के साधु श्रद्धालु यात्रियो को ठगते थे। मलिन-शरीर और आलसी

यात्री चाहे जहा शौचादि करके इस पवित्र स्थान को गन्दा करते थे। यह देखकर मेरा हृदय रोता था। पुराने ऋषि (शौचादि के लिए) जगल जाते थे तो मीलों दूर एकान्त मे चले जाते थे। आज तो ऋषिकेश मे वहुत वडी आवादी है। वहा लोग गगा के किनारे वेशर्मी से शौच के लिए वैठ जाते हैं और 'जगल गये' ऐसी कल्पना कर लेते हैं। यह तो आलस्य, अज्ञान और गन्देपन की हद हो गई। ये सव वातें मैंने वहा पाच वर्ष पहले अपनी आखो से देखी थी, किन्तु अव एक लेखक ने तीन महीने वहा रहने के वाद अपने व्यक्तिगत अनुभव के आधार पर एक हृदयविदारक विवरण भेजा है। इसे पढकर मेरा हृदय रो उठता है। और मुझे लज्जा लगती है। इस पुण्य-क्षेत्र मे पापकर्मों की सीमा नही।

इस विवरण को जिसने भेजा है उसने अपना नाम-धाम भी दिया है और उसको छापने से मना भी नही किया है, किन्तु उसका नाम-धाम देकर इसे छापने की मेरी हिम्मत नही होती। उसकी कुछ वातें तो छापने योग्य ही नही हैं। इसमे वहा रहनेवाले साधुओ की स्वेच्छाचारिता का, उनके वैभव का और उनकी व्यभिचार-लीलाओ का यथार्थ चित्र दिया गया है। उसमे यह भी वताया गया है कि इससे उन्हें कैसे-कैसे रोग हो जाते हैं। और यह भी वताया है कि गरीव यात्री कैसे लुटते हैं, तथा साधुवेश मे अनेक दम्भी लोग कैसी मौज करते हैं। इस गन्दगी को कौन दूर कर सकता है? पत्र मे कहा गया है कि इस सम्वन्ध मे मुझे और शकराचार्य को प्रयत्न करना चाहिए। मैं जानता हू कि मुझमे अभी तो इस गन्दगी को दूर करने की शक्ति नही है। मुझमे तो केवल इस वर्णन का सार छाप देने की शक्ति है। जो लोग वहा रहते हैं उनमे से कोई इसे देखकर कुछ कर सकें तो अवश्य करना चाहिए। हिन्दुओ के तीर्थस्थानो की गन्दगी इतनी भयकर है कि उसे अधिकाश हिन्दुओ के मन को वदले विना दूर नही किया जा सकता। इस समय जो यह धर्मयज्ञ चल रहा है, इसमें हिन्दुओ का मन कितना वदलता है, इसी पर इन पाप-क्षेत्रो को पुन पुण्यक्षेत्र वनाना निर्भर है। इन स्थानो की शुद्धि करना हिन्दू धर्म का पुनरुद्धार करने के समान है। इस कार्य को करने के लिए वहुत वडी तपस्या की आवश्यकता है। उसके लिए स्थानीय लोगो का प्रभाव भी चाहिए।

—गुजराती। न० जी०, ६।१०।१९२१।]

३१. टिप्पणी : मजिस्ट्रेट-द्वारा क्षमा-याचना

पाठकों को स्मरण होगा कि वुलन्दशहर के एक मजिस्ट्रेट के इजलास मे

श्री त्यागी के मुकदमे की सुनवाई हो रही थी और इस प्रकार वह मैजिस्ट्रेट के संरक्षण में थे। तब भी मैजिस्ट्रेट ने उन्हें एक झापड़ लगवाया था। बाद को मैजिस्ट्रेट ने मुजरिम से क्षमा-याचना की। अब मुझे उसका पाठ प्राप्त हो गया है। जो इस प्रकार है:—

अदालत में हाजिर मुजरिम,

आज की कार्रवाई कुछ आगे बढ़े, इससे पूर्व मैं कुछ कहना चाहता हूं। ऐसा मैं दो कारणों से करना चाहता हूं। एक तो यह है कि मैं तुम्हारे मामले की सुनवाई कर रहा हूं ऐसी स्थिति में यह ठीक नहीं होगा कि तुम अथवा कोई अन्य व्यक्ति इस बात की शंका करे कि तुम्हारे मुकदमे की सुनवाई उचित ढंग से न्यायपूर्वक नहीं होगी। दूसरी बात यह है कि कोई भी सरकारी अधिकारी यह नहीं चाहेगा कि ऐसी कोई घटना घट जाय जिससे समाज के किसी वर्ग को शिकायत का कोई उचित अवसर मिले, विशेष रूप से ऐसे समय जब कि सिद्धान्त और मौके का नाजायज फायदा उठानेवाले लोग ऐसी घटनाओं को नमक-मिर्च लगाकर पेश करने की ताक में बैठे हुए हैं।

जब पहली सुनवाई शुरू हुई तब मैं अधीर हो रहा था और तुम उद्धत थे। मैंने तुम्हें थप्पड़ लगवाकर गलती की थी। उसके लिए मुझे खेद है।

अब मैं तुम्हें बता दूं कि यदि तुम अदालत के प्रति आदर दिखाओगे तब मैं भी तुम्हारे प्रति शिष्टता दिखाऊंगा। यदि तुम्हारा आचरण ठीक नहीं रहा तो उसके निराकरण के लिए मुझे कोई उचित तरीका ही ढूंढ़ना होगा।

जो भी हो, अब तुम्हारे मुकदमे की सुनवाई धैर्यपूर्वक भलीभांति की जायगी और ठीक अवसर आने पर अगर तुम्हें कोई संगत बात कहनी होगी तो उसे कह डालने का तुम्हें पूरा-पूरा मौका दिया जायगा। यहां मैं इतना और बता दूं कि तुम पर जो अभियोग है उससे इस अदालत में या किसी अन्य अदालत में यदि तुम निर्दोष साबित हुए तो तुम्हारे समाज के लोग इस जिले में जो अच्छा काम कर रहे हैं उसका खयाल रखते हुए मैं मालाबार सहायता कोष में पचास रुपए दूंगा।

डब्ल्यू० ई० जे० डाब्स

यह तो स्पष्ट ही है कि क्षमा-याचना दबाव में पड़कर की गई है। पिछली कौंसिल में सर माइकेल ओ'डायर से भी क्षमा-याचना कराई गई थी क्योंकि उन्होंने पिछली कौंसिल में चोट पहुंचानेवाले वक्तव्य दिये थे। मैजिस्ट्रेट ने जो क्षमा-याचना की उसकी शब्दावली अविश्वसनीय एवं यान्त्रिक है। अभियुक्त के वक्तव्य की जो पंक्तियां उसे अच्छी नहीं लगी उन्हें निकाल कर मैजिस्ट्रेट ने अपनी वह प्रतिज्ञा भंग कर डाली जिसके अन्तर्गत उसने धैर्यपूर्वक सुनवाई करने

का आश्वासन दिया था। अभियुक्त के निर्दोष सिद्ध हो जाने पर राजभक्तो के प्रति आदर प्रदर्शित करने के लिए मलाबार सहायता कोप मे पचास रुपए भेंट करने की बात से तो ऐसा लगता है कि मैजिस्ट्रेट सुधार के योग्य है ही नही। मैजिस्ट्रेट ने जो अपराध किया है उसे धो डालने के लिए ही वह दान देना चाहता है। अभियुक्त के अपराधी होने अथवा निर्दोष होने से वफादार लोगो का क्या सम्बन्ध बैठता है? फिर अभियुक्त की निर्दोषता के प्रमाण के साथ दान की शर्त क्यो बाधी गई? मैजिस्ट्रेट ने अभियुक्त को थप्पड लगवा करके एक बहुत ही गम्भीर प्रश्न खडा कर दिया है। क्या ऐसा व्यक्ति किसी भी सभ्य सरकार के अन्तर्गत एक दिन के लिए भी मैजिस्ट्रेट के महत्वपूर्ण पद पर बना रह सकता है? उदाहरण के लिए इग्लैण्ड के मुख्य न्यायाधीश उस व्यक्ति को थप्पड लगवा कर अपने पद पर बने रह सकते हैं, जिस कैदी के मामले की सुनवाई उनके ही इजलास मे हो रही हो? अगर भारत-सरकार बिल्कुल नियम-विधानरहित और सर्वथा गैर-जिम्मेदार सरकार नही होती तो मैजिस्ट्रेट को तुरन्त मुअत्तल करके उस पर एक जरायमपेशा आदमी की तरह मुकदमा चलाया जाता। एक न्यायाधीश-द्वारा किसी अभियुक्त के मुकदमे की सुनवाई के दौरान उस अभियुक्त को पिटवाना कोई मामूली बात नही है और उसे यो ही टाला नही जा सकता।

सहयोग करते जाने मे भी धीरज की कोई हद होती है। क्या सम्बन्धित भारतीय मन्त्रियो की आत्मा, मैजिस्ट्रेट ने राष्ट्र के प्रति जो अपराध किया है उसके लिए उन्हे धिक्कार नही देती? या वे ऐसा मानते हैं कि चूकि मैजिस्ट्रेट उनके विभाग मे नही है, इसलिए उन पर उसकी कोई जिम्मेदारी नही है?

असहयोगी का कर्त्तव्य सीधा-सादा है। सरकारी अधिकारियो-द्वारा कानून और नैतिकता को भग करने के ऐसे एक-एक मामले से हमे अपने काम मे और भी सकल्प के साथ जुड जाने की प्रेरणा मिलनी चाहिए। जिस प्रणाली के अन्तर्गत ऐसा बर्बरतापूर्ण आचरण सम्भव है, वह प्रणाली जबतक जडमूल से नष्ट नही हो जाती तबतक हम सन्तुष्ट नही हो सकते।

अभियुक्त का बयान

अपने मामले की दूसरी सुनवाई मे दो दिन पूर्व श्री त्यागी ने मैजिस्ट्रेट को निम्नलिखित बयान भेजा—

वन्देमातरम्

बुलन्दशहर के जिला मजिस्ट्रेट के न्यायालय मे। भारतीय दण्ड सहिता के खण्ड १२४ और १५२ के अधीन अभियुक्त महावीर त्यागी की ओर से:—

मैं, महावीर त्यागी, एक निर्दोष अभियुक्त निम्नलिखित बयान देने पर मजबूर हो गया हूं। इस बयान में मैं कहना चाहता हूं कि उक्त मैजिस्ट्रेट ने अपने अत्याचार एवं अयोग्यता का परिचय देते हुए इसी ३ तारीख को खुली अदालत में मेरे साथ ऐसा व्यवहार किया जो मेरे आत्म-सम्मान, धर्म और राष्ट्रीयता को चोट पहुंचानेवाला था। उसने मुझे सावधान मुद्रा में खड़े रहने को मजबूर किया और मुझे धमकी दी कि तुम्हें पुलिस से ठोकरें लगवाऊंगा और सचमुच मुझे थप्पड़ लगवाये भी। मैजिस्ट्रेट का यह कार्य सर्वथा गैर-कानूनी और बर्बरतापूर्ण था। इसलिए अपने राष्ट्रीय, धार्मिक और व्यक्तिगत सम्मान तथा स्वाभिमान की रक्षा करने के लिए मैंने विरोध के तौर पर मौन-व्रत धारण करने का निश्चय किया है और यह तय किया है कि जिस अदालत ने सारे कानून-कायदे ताक में रख दिये हैं उसमें मैं अपना मुंह नहीं खोलूंगा।

(टिप्पणी—यहां बयान में से अदालत ने अभियुक्त की इच्छा के खिलाफ़ निम्नलिखित शब्द निकाल दिये और उस पर हस्ताक्षर और तारीख दिलवा दी: "जैसी कि पंजाब में मेरी बहनों की बेहुरमती की गई और वह बेहुरमती इन्साफ के लिए दरबार-ए-इलाही में पेश है", वैसे ही) मैं अपनी बेहुरमती को भी जो, उन बहनों की बेहुरमती के मुकाबले कुछ नहीं है, दरबार-ए-इलाही के इन्साफ पर छोड़ता हूं। यह सम्भव है कि मेरे साथ जो दुर्व्यवहार किया गया, उसका उद्देश्य जनता को भड़काना रहा हो, लेकिन मैं अपने अनुभव से यही कहूंगा कि अब भारत की जनता काफी समझदार हो गई है। वह हर अत्याचार बरदाश्त कर सकती है, लेकिन महात्मा (गांधी) ने उसके लिए जो अहिंसात्मक कार्यक्रम निर्धारित कर दिया है, उससे वह एक पग भी पीछे नहीं हटेगी।

अपने देश की आजादी के लिए ईश्वर से प्रार्थना करता हुआ:—

मैं हूं,

मौनव्रती

महावीर त्यागी

बुलन्दशहर जेल। ४ अक्तूबर, १९२१

यह बड़ा साहसपूर्ण और निर्भीक बयान है और अगर इसमें कही गई बातें श्री त्यागी की अपनी ही भावनाएं व्यक्त करती हैं तो जिस समय उनको थप्पड़ लगाये गये थे उस समय के उनके आचरण में साहस का अभाव देखने वालों को अपना विचार बदलने की जरूरत है। मामला बहुत-ज्यादा महत्वपूर्ण है, क्योंकि इससे कैदियों की शारीरिक सुरक्षा का सवाल जुड़ा हुआ है। इसलिए इससे उठनेवाले सवाल पर कुछ विस्तारपूर्वक विचार करना जरूरी है।

मेरे विचार से तो मुह बन्द रखने और मौनव्रती का खिताब लेने से कोई फायदा नही है। जिस दिन कैदी को पीटा गया उस दिन उसका स्पष्ट कर्त्तव्य था कि वह स्वेच्छा से अदालत मे रहने से इन्कार कर देता। उसे तत्काल उसी स्थान पर उस तथाकथित जज द्वारा अपने मुकदमेकी सुनवाई की कार्रवाई मे शरीक होने से इन्कार कर देना चाहिए था। उसे इतना तो करना ही चाहिए था कि वह वहा बैठ जाता और इस तरह जाहिर कर देता कि वह उस न्यायालय के अधिकार-क्षेत्र को स्वीकार नही करता। इस सवका मतलब शायद यह होता कि उसे और भी मारा जाता और सजा तो ज्यादा दी ही जाती। लेकिन वलवान के अस्त्र के रूप मे अहिसा के प्रयोग का मर्म ही यह है कि अत्याचार के निवारण के लिए खुशी-खुशी कष्ट उठाया जाय और शारीरिक चोट सहने के लिए तैयार रहा जाय। सामान्यतया इस आन्दोलन मे वारण्ट आने पर अदालत मे हाजिर होने की अपेक्षा की जाती है या उसकी छूट दी गई है क्योकि उसमे ऐसे आचरण की पूर्वकल्पना नही की गई थी जैसी कि वुलन्दशहर के मैजिस्ट्रेट ने किया। लेकिन मजिस्ट्रेट के इस असामान्य आचरण का तकाजा है कि उसके निराकरण के लिए आसामान्य उपाय भी अपनाया जाय।

वयान मे अहिसा पर जोर दिया गया है और यह ठीक ही किया गया है। लेकिन कोई मुझे गलत न समझे। अहिसा की प्रतिज्ञा हम पर यह वन्धन नही डालती कि कोई हमारा अपमान करे और हम उसमे सहयोग करें। इसलिए अहिसा की प्रतिज्ञा हमसे यह अपेक्षा नही रखती कि हम अधिकारियो का आदेश मिलते ही चुपचाप पेट के वल रेंगने लगें, या नाक से लकीरें खीचे, या ब्रिटिश झण्डे को सलामी देने जाय या ऐसा कुछ करें जो हमारे लिए अपमानजनक हो। इसके विपरीत, हमने जिस धर्म और सिद्धान्त को अपनाया है, उसका तकाजा यह है कि भले ही हमे गोली से उडा दिया जाय, किन्तु हम ऐसा कोई काम नही करें, तो उदाहरण के तौर पर कह सकते हैं कि जव जलियावाला वाग मे लोगो पर गोलिया चलने लगी तो उस समय वहा से भाग खडे होना या कि पीठ दिखाना उनका कर्त्तव्य नही था। अगर उन तक अहिसा का सन्देश पहुचा होता तो उनसे अपेक्षा यही की जाती कि जव उन पर गोलिया चलने लगी, उस समय वे सीना खोल कर आगे वढते और इस विश्वास के साथ अपने प्राण उत्सर्ग कर देते कि उनका यह प्राणोत्सर्ग उनके देश को मुक्त दिलायेगा। जो अहिसा का व्रती है वह अत्याचारी की शक्ति पर हसता है और उसके वार का जवाव न देकर तथा अपने स्थान पर डटा रह-कर उसे निष्प्रभ वना देता है। हम लोग जनरल डायर के हाथो मे [illegible] वन गये क्योकि हमने वैसा ही आचरण किया जैसे आचरण की वह आशा करता था। वह

चाहते थे कि उनकी गोलियों की बौछार से डरकर हम भाग जायं; वह चाहते थे हम अपने पेट के बल रेंगें, अपनी नाक से लकीर खींचे। यह उनके 'आतंक' के खेल का हिस्सा था। जब हम आमने-सामने डटकर आतंक का सामना करते हैं तो वह ऐसे विलीन हो जाता है मानो कोई परछाई हो। यह हो सकता है कि हम सभी अपने भीतर वैसा साहस विकसित नही कर पायें, लेकिन मेरा निश्चित विश्वास है कि अगर हममें से कुछ में भी ऐसा साहस न जगे कि हम प्रतिकार के लिए अपना हाथ उठाये बिना चट्टान की तरह अडिग रह सकें तो इस वर्ष स्वराज्य मिलना असम्भव है। जब अत्याचारी के प्रहार का कोई उत्तर नही मिलता, कोई उस पर उलट कर प्रहार नही करता, तो वह स्वयं ही उस प्रहार का शिकार होता है—ठीक वैसे ही जैसे कोई हवा में जोर से अपना हाथ मारे तो उसका हाथ उखड़ जाता है और किसी का कुछ नही बिगड़ता।

—अंग्रेजी। यं० इं०, २०।१०।१९२१। सं० गां० वा० खण्ड २१, पृष्ठ ३२४-३२८।]

३२. संयुक्त प्रान्त में स्वदेशी-आन्दोलन

संयुक्त प्रान्त में स्वदेशी आन्दोलन की प्रगति से, जिसके सम्बन्ध में संयुक्त प्रान्त की प्रान्तीय कांग्रेस कमेटी ने एक रिपोर्ट तैयार की है,भारत के अन्य प्रान्तों में संगठन कार्य की कई दिशाओं मे मिली सफलताओं के बारे मे और सामने आनेवाली कठिनाइयों के बारे में भी, कई बातें सीख सकते है। इस कार्य पर निम्नलिखित शीर्पकों के अन्तर्गत विचार किया गया था (१) चर्खो का वितरण (२) एक खादी-भण्डार की व्यवस्था करना (३) जुलाहों के हाथ का कता सूत देना और उन्हें केवल इसी तरह के सूत से कपड़ा बुनने के लिए प्रेरित करना और बहिष्कार आन्दोलन का प्रचार-प्रसार करना।

संयुक्त प्रान्त की प्रान्तीय कांग्रेस कमेटी को स्वदेशी के कार्य की उसकी प्रगति पर बधाई दी जानी चाहिए। परन्तु, मुझे आशा है कि जबतक वहा सारी खादी हाथ के कते सूत से नही बनने लगेगी, तबतक वह चैन से नही बैठेगी। भारत की दरिद्रता को दूर करने का गुर हाथ की कताई का विकास ही है। हाथ के कते सूत की किस्म को सुधारने और सुस्थिर बनाने के लिए विशेषज्ञों की आवश्यकता है।

—अंग्रेजी। यं० इं०, ८।१२।१९२१।]

३३. घृणा नहीं, प्रेम

साबरमती

८ दिसम्बर, १६२१

इलाहाबाद से तार प्राप्त हुआ है कि प० मोतीलाल नेहरू, प० जवाहरलाल नेहरू, प० श्यामलाल नेहरू तथा 'इण्डिपेण्डेण्ट' के सम्पादक जार्ज जोजफ महोदय गिरफ्तार कर लिये गये हैं। तार गत रात्रि ११ बजे प्राप्त हुआ था। इससे निस्सन्देह ही मुझे बडी प्रसन्नता हुई। मैंने इसके लिए ईश्वर को धन्यवाद दिया।

मुझे पण्डितजी की गिरफ्तारी की आशा नही थी। अपनी चर्चाओ मे पण्डित जी से कहा करता था कि उन्हे यदि सरकार गिरफ्तार करेगी भी तो सबसे बाद मे। सर हारकोर्ट बटलर उन पर हाथ डालने का साहस नही करेंगे। यदि उन्हे गिरफ्तार किया गया तो उनके मित्र महमूदाबाद के राजा साहब अपने पद पर रहना स्वीकार न करेंगे। सर हरकोर्ट बटलर ने जिस निश्चित भाव से यह कदम उठाया है, उस पर मुझे हैरानी होती है। पण्डित जी अत्यन्त ही विषम परिस्थितियो मे भी कार्य करते रहे हैं। उन्हे अपने पुराने शत्रु दमे से भी जूझते रहना पडता है। मैं जानता हू कि उन्होंने कभी भी अपने धनी-मानी मुवक्किलो के लिए इतना परिश्रम नही किया और न उन्होंने आपदग्रस्त पजाब के लिए ही इतनी लगन से काम किया था जितना कि वे इस निर्धन भारत के लिए करते रहे हैं। मैंने उनसे आराम करने का अनुरोध किया था, किन्तु उन्होंने इसे अस्वीकार कर दिया। मुझे इस विचार से प्रसन्नता ही होती है कि अब वे शरीर को दिन-दिन जर्जर बनानेवाले कठोर परिश्रम से छुट्टी पा जायगे। पर मुझे और भी अधिक प्रसन्नता यह सोच कर हुई है कि बम्बई के हमारे अपराध के कारण मैं समझ रहा था कि जो चीज इस वर्ष के खतम होने से पहले नही हो पायेगी वही अब देश के सर्वोच्च और बडे-से-बडे नेताओ के निरपराध कष्ट-सहन के कारण अभी इसी समय पूरी होने जा रही है। सर्वथा निरपराध व्यक्तियो की ये गिरफ्तारिया ही सच्चा स्वराज्य है। अब अलीबन्धु तथा उनके साथियो का जेल मे रहना कोई शर्म की बात नही। भारत उनके बलिदान के प्रति सदैव सचेत रहा है।

किन्तु मेरी प्रसन्नता, जिससे मुझे आशा है कि और भी हजारो लोग साथ देंगे, तभी कायम रह सकेगी जब हमारे नेताओ के चुन-चुन कर जेल भेज दिये जाने पर भी जनता पूर्णत शान्तिपूर्ण बनी रहे। गिरफ्तारियो के बावजूद यदि हम पूरी तरह अहिंसक बने रहे तो विजय बिलकुल निश्चित है। पर यदि हम सभी लोगो को नियन्त्रण मे रख कर भी शान्ति बनाये रखने मे असफल हुए तो पराजय

निश्चित है। हम किसी की जान लिये बिना जान देने के लिए तैयार हैं। क्रोध अथवा दुःख अनुभव किये बिना जेल जाने का हमने निश्चय किया है। हमने स्वयं ही जो बन्दिश अपने ऊपर लगाई है, उसे हमें तोड़ना नहीं चाहिए।

बल्कि इसके विपरीत हमारी अहिंसा तो हमें अपने शत्रुओं से भी प्रेम करना सिखाती है। हम अहिंसात्मक असहयोग-द्वारा अंग्रेज प्रशासकों तथा उनके समर्थकों के क्रोध पर विजय प्राप्त करना चाहते हैं। हमें उनसे प्रेम करना चाहिए तथा ईश्वर से यह प्रार्थना कि वह उनको इतनी सद्बुद्धि दे कि वे भी अपनी उन भूलों को समझ सकें जिनको हम भूलें मानते हैं। यह प्रार्थना सबल की होनी चाहिए, निर्बल की नहीं। हमें सशक्त होकर अपने ईश्वर के प्रति विनम्र होना चाहिए।

अपनी इस परीक्षा तथा विजय की घड़ी में मैं अपनी आस्था फिर व्यक्त कर देना चाहता हूं कि मैं अपने शत्रुओं को भी प्रेम करने में विश्वास करता हूं। मेरा विश्वास है कि केवल अहिंसा ही भारत के हिन्दू, मुसलमान, सिख, पारसी, ईसाई और यहूदियों के लिए एक मात्र उपाय है। मेरा विश्शास है कि कष्ट-सहन में कठोरतम हृदयों को भी पिघला देने की शक्ति है। युद्ध का प्रहार प्रथम तीन, अर्थात् हिन्दू, मुसलमान और सिखों को ही झेलना चाहिए। अन्तिम तीन, पारसी, ईसाई और यहूदी तो प्रथम तीन के सम्मिलित बल से भयभीत हैं। हमें अपने सत्यनिष्ठ आचरण से स्पष्ट कर देना चाहिए कि वे हमारे ही अपने बन्धु हैं। हमें अपने व्यवहार से प्रत्येक अंग्रेज को यह दिखा देना चाहिए कि वह भारत के किसी कोने में उतना ही निरापद है जितना कि मशीनगन के पीछे वह अपने-आपको अनुभव करता है।

इस्लाम, हिन्दू, सिख, जरतुश्त, तथा यहूदी प्रत्येक धर्म की वास्तव में यह परीक्षा है।हम ईश्वर पर तथा उसकी सत्यप्रियता पर विश्वास रखते है या नहीं रखते। भले-से-भले मुसलमानों के सम्पर्क में आकर मैंने यही सीखा है कि इस्लाम तलवार के बल पर नही अपितु उसके फकीरों और सन्तों के भक्तिपूर्ण प्रेम के बल पर फैला है। इस्लाम में तलवार के प्रयोग की आज्ञा है किन्तु इसकी शर्ते इतनी कठोर है कि उनका पालन प्रत्येक के वश की बात नहीं। ऐसा दोष-रहित सेनापति है कहां जो जिहाद का आदेश दे सके? कहां है वह कष्ट-सहन, प्रेम और पवित्रता जो तलवार के प्रयोग की एक अनिवार्य शर्त है? हिन्दू भी अपने धर्म के इसी प्रकार के प्रतिबन्धों-से-कम से कम इतने तो बँधे हैं जितने कि भारतीय मुसलमान। सिखों का अपना ही हाल का गौरवमय इतिहास उनको बल-प्रयोग के विरुद्ध आगाह करता है। हम इतने अपूर्ण, इतने दोषपूर्ण तथा इतने स्वार्थी है कि शौकत अली

के कथनानुसार ईश्वर के काम मे भी सशस्त्र युद्ध करने को तैयार रहते हैं। क्या सब प्रकार से दोष-रहित भारत को कभी तलवार उठाने की आवश्यकता पडेगी ? गत वर्ष कलकत्ता मे उसने दोष-रहित बनाने की, आत्म-शुद्धीकरण की इसी प्रक्रिया का सूत्रपात किया था।

तब हम क्या करें ? निश्चित रूप से हम अहिंसावादी बने रहे तथा अपने अन्दर इतना सामर्थ्य रक्खें कि सरकार जितने भी व्यक्तियो को गिरफ्तार करना चाहे उतने ही व्यक्तियो को हम स्वेच्छापूर्वक प्रस्तुत करते जाय। हमारा कार्य घडी के काटे की तरह नियमितता से चलता हो। प्रत्येक प्रान्त अपने यहा के उत्तराधिकारी नेताओ का चुनाव स्वय करे। लालाजी ने सभी आवश्यक प्रबन्ध करके एक शानदार उदाहरण प्रस्तुत किया है। प्रत्येक प्रान्त मे काग्रेस के अध्यक्ष तथा मन्त्री को आपत्कालीन अधिकार दिये जाने चाहिए। कार्यकारिणी समिति यथा-सम्भव छोटी-से-छोटी हो। प्रत्येक काग्रेसी को स्वयसेवक बनना चाहिए।

हमे गिरफ्तारियो से बचना नही चाहिए, पर अनावश्यक ढग से उसका अवसर भी नही पैदा करना चाहिए।

जबतक हम अपनी आवश्यकतानुरूप पूर्णरूपेण हाथ की कती खादी का उत्पादन करने मे पूरी तौर पर सगठित न हो जाय तथा विदेशी वस्त्रो का पूर्ण बहिष्कार न कर दें, हमे स्वदेशी आन्दोलन मे पूरी शक्ति से जुटे रहना चाहिए।

एक एक करके हमारे सभी नेताओ के गिरफ्तार हो जाने पर भी हमे हर कीमत पर काग्रेस का अधिवेशन करना चाहिए, जबतक कि सरकार ही उसे बलात् भग न कर दे। और यदि हम हतोत्साह हुए बिना और उत्तेजित होकर हिंसा को अपनाये बिना अपना राष्ट्रीय कार्य जारी रखने मे समर्थ रहे, तो हम निश्चय ही स्वराज्य प्राप्त कर लेंगे। इसलिए कि ससार की कोई भी शक्ति शान्तिपूर्ण, दृढ़प्रतिज्ञ, तथा ईश्वर-भक्त लोगो को आगे बढने से नही रोक सकती।

—अंग्रेजी। साबरमती। यं० इं०, ८।१२।१९२१।

- मेरा विश्वास है कि कष्टसहन मे कठोरतम हृदयो को भी पिघला देने की शक्ति है।

३४. कुछ प्रमाण

हम नीचे सयुक्त प्रान्तीय काग्रेस कमेटी के वर्तमान मन्त्री श्री [illegible] सक्सेना का पत्र दे रहे हैं, वह किसी टिप्पणी की अपेक्षा नहीं रखता।

"संयुक्त-प्रान्त की प्रान्तीय कांग्रेस कमेटी के सभी स्थानीय पदाधिकारियों में से मैं ही एक अभागा अभी तक जेल से बाहर हूँ। इसलिए यहां हाल में जो कुछ हुआ है वह बताना मेरा काम है।

"आधी रात के लगभग, प्रान्तीय कांग्रेस के कार्यालय की तलाशी ली गई और प्रान्तीय कांग्रेस कमेटी, कार्य-समिति तथा अन्य उप-समितियों के रजिस्टर पुलिस-अधीक्षक, जिन्होंने तलाशी ली, उठा ले गये। इसके अतिरिक्त गिरफ्तार हुए सज्जनों के घरों और खिलाफत समिति के कार्यालय की भी तलाशी ली गई।

"हमने अब इलाहाबाद में भी सुनियोजित तथा संयत ढंग से सविनय अवज्ञा आन्दोलन प्रारम्भ कर दिया है। राष्ट्रीय स्वयंसेवक बड़ी तेजी से भरती हो रहे हैं। कल १२ स्वयंसेवकों की एक टोली ने अपनी बाहों पर राष्ट्रीय बिल्ले लगाकर देशभक्तिपूर्ण गीत गाते हुए नगर में चक्कर लगाया—किन्तु किसी को भी गिरफ्तार नहीं किया गया।—आज पुनः वही टोली अन्य १२ स्वयंसेवकों-सहित नगर के विभिन्न भागों में घूमती रही।—आज भी कोई गिरफ्तारी नहीं हुई।"

—अंग्रेजी। यं० इं०, १५।१२।१९२१।]

३५. कृपालानी और उनके साथी

बनारस से एक तार मिला है जिससे मालूम होता है कि आचार्य कृपालानी[1] और उनके आश्रम के १५ सदस्य गिरफ्तार कर लिये गये हैं। अपराधियों का बलिदान बढ़ता ही जा रहा है। आचार्य कृपालानी एक शिक्षा-शास्त्री है और उन्होंने अपने को छात्रों के साथ एकाकार कर दिया है। उनके अनेक निष्ठावान विद्यार्थी हैं जिनका जीवन उनके सम्पर्क में आकर एकदम बदल गया है। वह अहिंसा के पथ पर घूम-फिर कर आये हैं और अब बिल्कुल पूरी तरह उसमें विश्वास करते है। वह अपनी और अपने छात्रों की सारी शक्ति स्वदेशी के रचनात्मक पक्ष के विकास में लगा रहे है और बनारस में एक आदर्श संस्था का संचालन कर रहे है। उन्होंने अपनी जरूरत जितनी कम की जा सकती है, उतनी कम कर ली है और अपने विद्यार्थियों के साथ संस्था के रोजमर्रा के काम और सुविधा में हाथ बंटाते हैं। सुविधा के नाम पर वहां विद्यार्थियों को मिलनेवाला आचार्य

---

१. जीवतराम बी० कृपालानी (जन्म १८८८), शिक्षाविद्, राजनीतिज्ञ और १९४६ में कांग्रेस के अध्यक्ष, इस समय स्वतन्त्र संसद-सदस्य।

कृपालानी का प्रेरक सम्पर्क ही समझिए। अभी तक यह नही मालूम हो पाया है कि आचार्य कृपालानी और उनके १५ छात्र किसलिए गिरफ्तार किये गये हैं। मेरा खयाल है कि यह स्वयसेवक की तरह काम करने का परिणाम ही होगा क्योंकि वह ऐसे व्यक्ति नही हैं, जो जोखिम को देखकर डर जाय। कुछ भी हो, इस तरह उन्होंने ऐसी अन्य सस्थाओ के लिए मार्गदर्शन ही किया है। अधिक-से-अधिक पवित्र मन के व्यक्ति स्वयसेवक बनें और जेल जाय। इस सम्बन्ध में कार्यकारिणी की हिदायतो का अक्षरश. पालन किया जाना चाहिए। जिनके मन बिल्कुल स्वच्छ है, सविनय अवज्ञाकारियो के रूप मे वे ही जेल जाने के योग्य हैं और कोई नही। यदि हमसे इस सम्बन्ध मे भूल हुई हो तो अब हम स्वयसेवक भरती करते हुए अधिक-से-अधिक बारीकी और सख्ती से काम ले। मैं पूरी तरह यह आशा करता हू कि जिन लोगो के मन साफ नही हैं अथवा जो स्वदेशी, अहिंसा या असहयोग के किसी ऐसे ही मार्मिक तत्व मे विश्वास नही करते, वे स्वयसेवक की तरह भरती होने के लिए प्रार्थनापत्र भी नही देगे। स्वयसेवक न बनकर वे सेवा ही करेंगे।

——अंग्रेजी। यं० इं०, १५।१२।१९२१।]

३६. धन्य है यह नारी!

ख्वाजा साहब[1] राष्ट्रीय मुस्लिम विश्वविद्यालय (अलीगढ़) के मुख्य व्यवस्थापक थे। मैं उनकी गिनती अत्यन्त शुद्ध-हृदय मुसलमानो मे करता हू। वे जितने धर्माभिमानी हैं उतने ही देशाभिमानी भी हैं। वे स्वय एक रईस खानदान के हैं। बैरिस्टर के रूप मे उनका वैभव विपुल था। आज वह धर्म और देश की खातिर फकीर बन गये हैं। उनको भी सरकार ने जेल भेज दिया है। इसका तार मुझे अभी-अभी उनकी बेगम की ओर से मिला है। उनका नाम रशीद बेगम है। वह लिखती है—"आपको यह जान कर प्रसन्नता होगी कि मेरे पति को सरकार ने गिरफ्तार कर लिया है। अब विश्वविद्यालय को मैं चलाऊंगी।" मुझे जब यह तार मिला तब मेरा खून सवा सेर बढ़ गया क्योंकि जहा एक ओर ख्वाजा साहब की पाक कुर्बानी है, वहा दूसरी ओर उनकी बेगम की बहादुरी और धीरज है। जहा ऐसी बात हो वहा स्वराज्य को कौन रोक सकता है? रशीद बेगम को

---

१. ख्वाजा अब्दुल मजीद।

अपना काम चलाने में तनिक भी अड़चन नहीं होगी। विश्वविद्यालय के वीर और शुद्ध-हृदय विद्यार्थी खुर्शीद बेगम के आसपास इकट्ठे हो जायंगे और सम्भव है कि जो काम वे ख्वाजा साहब की खातिर न करते, उसे अब उनकी बेगम की खातिर करेंगे। इसके अतिरिक्त खुर्शीद बेगम ख्वाजा साहब की अपेक्षा इन विद्यार्थियों को चर्खे की अधिक अच्छी तालीम देंगी। जब हिन्दुस्तान की बहुत सी स्त्रियों में ऐसी ही हिम्मत आ जायगी तब हमारी विजय अवश्य होगी। इस महाजागृति के समय बहिनों से मेरी इतनी प्रार्थना है कि वे अपने भीतर संगठन-शक्ति भली-भांति विकसित करें। उन्हें भी एक साथ मिल कर काम करना चाहिए। और ऐसा करने का सरल मार्ग यह है कि वे परस्पर एक दूसरे की टीका करने की बजाय अपने-अपने कार्यों में जुट जायं। जो सेवा को ही सर्वस्व समझता है उसे टीका करने का अवकाश ही नही मिलता।

--गुजराती। न० जी०, १८।१२।१९२१।]

० जो सेवा को ही सर्वस्व समझता है, उसे टीका करने का अवकाश ही नहीं मिलता।

३७. योग्य पति की योग्य पत्नी

"सूचित करते हुए हर्ष है कि मेरे पति आज सुबह गिरफ्तार हो गये। जाते हुए उनका दिल खुशी से भरा था, यह बात आपको तार से बताने को कह गये। उम्मीद है उनका काम अपनी बिसात भर जारी रखूंगी। अलीगढ़ पुरअमन लेकिन पूरी तौर पर तैयार है। खुर्शीद ख्वाजा।"

पति के जेल जाने के समय इतना शानदार सन्देश भेजने के लिए मैं खुर्शीद बेगम को मुबारकबाद भेजता हूं। ख्वाजा साहब[1] एक बैरिस्टर हैं जो सुख-वैभव की गोद में पले और बड़े हुए। मैंने उनके दोनों रूप देखे हैं। एक समय था जब वह बड़ी शौकीन तबीयत के आदमी थे। उन्हें अपनी सुन्दरता की अनुभूति थी जिसे वह अच्छे-से-अच्छे यूरोपीय ढंग के कपड़ों से और भी निखारने की कोशिश किया करते थे। और आज मैं उन्हें लगभग फकीरी के बाने में देखता हूं। सबसे बहादुर और सबसे सच्चे मुसलमानों में उनकी गिनती है। वह भारत को भी उतना ही प्यार करते हैं जितना इस्लाम को। मौलाना मुहम्मद अली ने जब देखा कि वह

---

१. ख्वाजा अब्दुल मजीद, उन दिनों अलीगढ़ राष्ट्रीय विश्वविद्यालय के उपकुलपति

स्थायी तौर पर नेशनल मुस्लिम युनिवर्सिटी मे नही रह पायेंगे, तव उनको ख्वाजा साहव ही एक ऐसे आदमी दिखे जो उनकी जगह ले सकते थे। ख्वाजा साहव ने विश्वविद्यालय की सेवा करने के लिए पटना मे अपनी दिन-दिन और ज्यादा चमकती वकालत पर लात मार दी। मैं जानता हू कि ख्वाजा साहव अपने ढग से अहिंसा मे विश्वास रखते हैं, लेकिन वह कभी न टूटनेवाली हिम्मत मे भी विश्वास रखते है और जान देने की कला भी जानते है। रौलट अधिनियम लागू होने से पहले के दिनो मे जव अली-भाइयो की रिहाई के लिए मैं अपने कुछ मुसलमान दोस्तो के साथ सत्याग्रह आरम्भ करने का विचार कर रहा था तव मैंने ख्वाजा साहव से पूछा था कि सत्याग्रह मे कितने ऐसे मुसलमानो के सम्मिलित होने की आशा की जाय जो किसी की जान लिये विना अपनी जान देने को तैयार हो जायगे। उन्होने उसी दम कहा था:

"शुएव[1] यकीनन उनमे से एक है। वह हमारा हीरो है। और शायद मैं भी आधा शुएव हूं। अफसोस कि इससे ज्यादा के नाम मैं आपको नही गिना सकता।"

वात है १९१७ या १९१९ की, लेकिन ये कुछ वाक्य कहते समय उनके सुन्दर मुख पर मैंने जिस ईमानदारी, सच्चाई और विनय की छाप देखी थी वह आज भी ताजा है। समय काफी वदल चुका है। मुझे इसमे कोई सन्देह नही है कि ख्वाजा साहव के व्यक्तित्व मे कही कोई कोर-कसर नही। उनकी आशा के अनुसार वहुत सारे मुसलमान अपनी वहादुरी का सवूत दे चुके हैं। और हमे कुछ भी आश्चर्य नही लगता जव उनकी पत्नी गर्व के साथ कहती हैं. "उम्मीद है मैं उनका काम अपनी विसात-भर जारी रक्खूगी।" पाठको को इस पर अविश्वास नही करना चाहिए। अलीगढ के विद्यार्थियो को मैं जानता हू। वे लोग खुर्शीद वेगम के इशारे पर चलने के लिए पूरे उत्साह से तैयार रहेगे जैसा कि शायद उन्होंने ख्वाजा साहव के लिए नही किया। जव एक पाकदिल औरत अपनी पवित्रता मे वहादुरी और मातृत्व के गुण मिला देती है, तव उसमे एक ऐसी चुम्बक-शक्ति पैदा हो जाती है जैसी कि किसी पुरुष मे सम्भव नही है। डा० मुहम्मद आलम विद्यार्थियो के दिमागो का ख्याल रक्खेंगे पर वेगम साहिबा उनके दिलो को प्रभावित करके उन्हे खरे सोने मे ढाल देंगी। और इतना ही नही, चूकि इन विद्यार्थियो को लडाई मे विशिष्टता प्राप्त करनी है, इसलिए मुझे पूरा विश्वास है कि खुर्शीद वेगम इस कला को सिखाने मे अपने पति और डा० मुहम्मद आलम दोनो से कही ज्यादा सफल सिद्ध होगी। वेगम मुहम्मद अली ने जितना रुपया इकट्ठा कर लिया है

---

१. शुएव कुरैशी

उतना शायद उनके शौहर न कर पाते। मैं अपनी राय प्रकट कर ही चुका हूं कि वह मौलाना से अच्छा भाषण करती हैं। मैं पाठकों को रहस्य की एक वात वतलाता हूं। वंगाल को सक्रिय वनाने में सवसे वड़ा हाथ श्रीमती वासन्ती देवी और उर्मिला देवी का ही है। मेरे सामने एक पत्र पड़ा है जिससे पता चलता है कि इन तीनों महिलाओं के वंगाल जाने और उनके गिरफ्तार होने की वात ने वंगाल की जनता को जितना आन्दोलित किया है उतना देशवन्धु दास के महान् वलिदान ने भी नहीं किया। और कुछ हो भी नही सकता था। इसलिए कि स्त्री तो एक मूर्तिमान वलिदान है। वह जव सच्ची भावना से किसी काम का वीड़ा उठाती है तो पहाड़ों को भी हिला देती है। हमने अपने देश में स्त्रियों के साथ दुर्व्यवहार किया है। जितनी वन सकी हमने उनकी उपेक्षा ही की है। लेकिन ईश्वर की कृपा से अव चर्खा उनकी काया-पलट कर रहा है। और मुझे भरोसा है कि जव सभी नेता और सरकार के सभी विश्वासपात्र लोग जेलों में डाल दिये जायंगे, तव भारतीय महिलाएं पुरुषों का वाकी वचा हुआ काम पुरुषों से कहीं अधिक शालीनता के साथ पूरा कर दिखायेंगी।

—अंग्रेजी। यं० इं०, २२।१२।१९२१।]

● **स्त्री तो एक मूर्तिमान वलिदान है। वह जव सच्ची भावना से किसी काम का वीड़ा उठाती है तो पहाड़ों को भी हिला देती है।**

३८. बाबू भगवानदास[1]

जव आचार्य और उनके विद्यार्थी पकड़े गये, तव मैंने अपने मित्रों से कहा "क्या ही अच्छा हो यदि वावू भगवानदास गिरफ्तार हो जायं। आखिर आचार्य कृपलानी तो वनारस के रहनेवाले नही हैं। लेकिन वावू भगवानदास नहीं पकड़े जायंगे।" उस समय मुझे पता नहीं था कि वावू भगवानदास ही उस पुस्तिका के रचयिता थे जिसे आचार्य कृपलानी वेच रहे थे। पुस्तक लिखने में लेखक ने वड़ी सावधानी से काम लिया था। दूसरे ही दिन उनके पुत्र का शुभ संवाद मुझे मिला कि वावूजी पकड़े गये।[2] गिरफ्तारी पर वह वड़े प्रसन्न थे। वावू भगवानदास

---

१. १९६९-१९५९, वाराणसी के प्रसिद्ध विचारक, दार्शनिक और लेखक, भारत-रत्न। उन्होंने काशी विद्यापीठ की स्थापना में प्रमुख भाग लिया था।

२. देखिए "तार : श्री प्रकाश को", १५-१२-१९२१ या उसके पश्चात् की पाद-टिप्पणी।

असहयोगी हैं। ऐसे असहयोगी जो मनसा-वाचा-कर्मणा हमेशा हिंसा से दूर रहते हैं। वह सस्कृत साहित्य के अच्छे पण्डित हैं। बडे ही धर्मनिष्ठ हैं, जमीदार हैं। श्रीमती बेसेण्ट यदि सेण्ट्रल हिन्दू कालेज की जन्मदात्री है तो बाबू भगवानदास उसके निर्माता हैं। अतएव उनकी गिरफ्तारी एक ऐसा बलिदान है जो ईश्वर को रुचिकर हुए बिना नही रह सकता। और वह पतित-पावनी विश्वनाथपुरी इससे अच्छा बलिदान और क्या करती? अखबार पढनेवाले लोग जानते ही होंगे कि बाबू भगवानदास काग्रेस-द्वारा स्वराज्य-योजना तैयार कराने का प्रयत्न कर रहे थे। उसके लिए वह स्वय भी घोर परिश्रम कर रहे थे। उन्होंने मुझे कितने ही सूचक प्रश्नो की एक लम्बी सूची भेजी थी, जिस पर मैं वर्तमान घटनाओ के कारण अभी तक कोई ध्यान नहीं दे पाया। हिंसा न होने देने की वह बडी चिन्ता रखते थे। यदि उनकी गिरफ्तारी से भी सरकार की हिंसा-काण्ड को न्यौता देने की उत्सुकता का पता न चलता हो तो मैं नही कह सकता कि किस बात से चलेगा। मनुष्य के लिए यह बडे भाग्य की बात है जो ईश्वर उसकी योजनाओ को अक्सर उलट-पलट देता है। और आजकल जो नितनई घटनाए हो रही हैं उनमे तो यह अधिकाधिक निश्चित होता जाता है कि भगवान इस सरकार की तमाम योजनाओं को उलट रहा है। इतना होते हुए भी लोग शान्त बने हुए हैं।

— अंग्रेजी। यं० इ०, २२।१२।१९२१।]

३९. 'इण्डिपेण्डेण्ट' का दमन

पाठको को याद होगा कि श्री जार्ज जोजफ की गिरफ्तारी के फौरन बाद जब प्रकाशक और मुद्रक के रूप मे श्री महादेव देसाई ने नया डिक्लेरेशन दाखिल किया था, उस समय उनसे २,००० रू० की जमानत मागी गई थी। पण्डितजी की सलाह पर जमानत जमा कर दी गई थी और एक दिन बन्द रहने के बाद यह अखबार फिर निकलने लगा था। जमानत इस महीने की ७ तारीख को जमा की गई थी। २० तारीख को वह जब्त कर ली गई। नीति या लहजे मे कोई परिवर्तन नही हुआ था। क्योकि उसमे बदलने के लिए कुछ था भी नहीं। 'इण्डिपेण्डेण्ट' का सम्पादन एक बैरिस्टर द्वारा किया जाता था जो लिखने मे सदा सयम और मर्यादा का ध्यान रखते थे। श्री जोजफ के बन्दी बनाये जाने के बाद यह काम श्री महादेव देसाई ने अपने हाथ मे ले लिया था और उनकी शैली से 'यग इन्डिया' के पाठक अपरिचित नही हैं। जमानत 'हमे यह काम पूरा करना है' और 'श्रीमती

नेहरू का सन्देश' शीर्षक से उसमे प्रकाशित दो लेखो के कारण जब्त की गई। पहले लेख मे स्वयं-सेवकों की सूची दी गई है और दूसरे में दस्यु-स्थिति के बारे मे बड़े सन्तुलित विचार व्यक्त किये गये थे। लेकिन स्थानीय सरकार का कथन है कि इन लेखो में "ऐसे शब्दो का समावेश है जो कानून और व्यवस्था कायम रखने के काम मे हस्तक्षेप करते है।" कानून क्या है, यह हमे मालूम है। यह अधिसूचना निकाली गई है कि स्वयसेवक-दल को भंग कर दिया जाय। व्यवस्था क्या है, यह भी हम जानते है, क्योकि सार्वजनिक सभाओ पर रोक लगा दी गई है। और यह निश्चित है कि समस्त राष्ट्रवादी अखबारों की तरह ही 'इण्डिपेण्डेण्ड' ने भी ऐसे कानून और ऐसी व्यवस्था मे हस्तक्षेप करने के लिए प्रोत्साहन दिया है।

लेकिन सरकार को जल्दी ही अपनी गलती मालूम पड़ जायगी। 'इण्डि-पेण्डेण्ट' मर सकता है, किन्तु जनता मे जो भावना उसने जागरित कर दी है वह कभी नही मर सकती। 'इण्डिपेण्डेण्ट' भले ही न छपे, उसे लिखा तो जा ही सकता है। सम्पादक को जहां मालिकों के हितों की रक्षा करनी पडती है वहां अपने व्यक्तित्व को भी अक्षुण्ण रखना पडता है। महादेव देसाई सम्पादक के रूप में अब भी जीवित हैं, भले ही उनका मुद्रक वाला रूप थोड़ी देर के लिए सो गया हो। और मुझे आशा है कि अब वह छापने के स्थान पर अपना अखबार लिखना शुरू कर देंगे। खबरों और सम्पादकीय टिप्पणियो को मजबूरी के कारण और भी सार-रूप मे प्रस्तुत करने से पाठकों का ही लाभ होगा। अधिक संख्या में प्रतियां तैयार करने के लिए मेरा सुझाव है कि रोनियो, साइक्लोस्टाइल अथवा कोमोग्राफ से काम लेना चाहिए। और यदि कानून और उसकी मनमानी व्याख्या सरकार को साइक्लो-स्टाइल अथवा रोनियो मशीन तक जब्त कर लेने की अनुमति देती हो, तब भी श्री देसाई की लेखनी तबतक देश की सेवा करती रह सकती है जबतक खुद उनको पकड़ कर इलाहाबाद की सेण्ट्रल जेल मे न डाल दिया जाय। राष्ट्रवादी अखबारों के मालिक खबरदार रहें। उन्हें आखिरी पाई खर्च होने तक अपना संकल्प नही छोड़ना चाहिए।

—अंग्रेजी। यं० इं०, २२।१२।१९२१।]

४०. 'इण्डिपेण्डेण्ट' के साथ दुर्व्यवहार

मुझे 'इण्डिपेण्डेण्ट' पत्र के सम्पादक महादेव देसाई के साथ किये जा रहे व्यवहार का विस्तृत विवरण प्राप्त हुआ है, जिसे मैं उद्धृत करता हूं। 'यंग इण्डिया'

के पाठक जानते हैं कि इस पत्र से उनका क्या सम्बन्ध है।[1] वह सब से ज्यादा सजीदा कार्यकर्ताओ मे हैं और बहुत सवेदनशील हैं। श्री देसाई के एक मित्र श्रीमती देसाई के साथ उनसे मिलने गये। लेखक इस सम्बन्ध मे कहते है —

"हमे जबरदस्त दमन सहना होगा, हम उसके लिए तैयार हो रहे हैं। मैंने आपको महादेव भाई के कारावास के बारे में तार भेजा है। उन्हें अदालत में हाजिर होने के लिए सम्मन मिला था। वह जेल जाते समय बहुत खुश थे। हम कल उनसे मिलने गये मगर हमें मिलने नहीं दिया गया। मैं खाना, कपड़े और कुछ किताबें ले गया था लेकिन जेलर ने लेने से इन्कार कर दिया। आज सवेरे हम उनसे मिल सके। उन्हें साधारण अपराधियो के साथ रखा गया था और जेल के सभी नियम उन पर लागू किये गये हैं। वह जेल के कपड़े एक काली कमीज, जिसकी बाहें कोहनी तक थीं और एक हाफ पैण्ट पहने हुए थे। उनके कपड़े गन्दे और बदबूदार थे और उनमे जुएं भी थीं। उनके पास दो कम्बल थे जो शायद महीनो से नहीं धोये गये थे और जिनमे निश्चय ही जुओं की भरमार रही होगी। पानी पीने के लिए एक जंग लगा लोहे का बर्तन था। जंग इतना ज्यादा था कि अगर उसमे पानी थोड़ी देर भी रखा रह जाय तो वह पीने योग्य न रहे। इसलिए रात को उसमे से पानी नहीं पिया जा सकता था। उस पानी का रंग बिल्कुल पीला हो जाता था। वहा एक गन्दी टंकी है जहां से पीने का पानी लिया जाता है और यही पानी नहाने-धोने के लिए भी इस्तेमाल किया जाता है। मुझे यह नहीं मालूम कि उन्हें बाल्टियां भी दी जाती हैं या नहीं। नहाने के लिए एक लंगोट दिया जाता है। लेकिन बदन पोछने के लिए कोई तौलिया नहीं दिया जाता। जब धूप में बदन सूख जाय तो वही गन्दे कपड़े फिर पहनने पड़ते हैं। इस जगह की ठंडी जलवायु में महादेव भाई जैसे कमजोर आदमी के लिए कपड़े धोना असम्भव है क्योंकि जबतक धोये हुए सूख न जायं तबतक उन्हें नंगे बदन रहना पड़ता है। उन्हें सिर्फ जेल का ही खाना दिया जाता है। कल रात तो उन्होंने कुछ खाया ही नहीं; आज सुबह उन्होंने दलिया जैसी कोई चीज ली। इस खाने में कंकड़ और धूल थी। शौच के लिए कैदियों को बाहर जाना पड़ता है और शौच के लिए पानी उसी बर्तन मे ले जाना पड़ता है जो उन्हें पानी पीने के लिए दिया जाता है। रात के लिए उन्हें बगैर ढक्कन का बर्तन दिया जाता है। हां, अभी सिर्फ एक कसर बाकी है और वह यह कि उनको हथकड़ियां नहीं डाली गईं।"

मुझे एक दूसरे सूत्र से मालूम हुआ कि उनके साथ दुर्व्यवहार करने के लिए

१. महादेव देसाई 'यंग इण्डिया' के प्रकाशक थे।

विशेष आदेश जारी किये गये है और उसका कारण यह बताया जाता है कि महादेव देसाई ने जान-बूझकर शासन की आज्ञा का उल्लंघन किया है। अधिकारियों को यह बात बहुत खटकी है कि 'इण्डिपेण्डेण्ट' को छपाई और छपाई के लिए आवश्यक डिक्लेरेशन दाखिल किये बिना ही निकाल पाना सम्भव हो गया है।

मुझे इसमें कोई सन्देह नही है कि जेल के सीकचों में बन्द रहकर भी महादेव देसाई अपनी सम्पादकीय दक्षता को सिद्ध करेंगे और शारीरिक यातनाओं के वावजूद अपनी स्वतन्त्रता सुरक्षित रक्खेंगे। मै यह सूचना देकर पाठकों को सान्त्वना देना चाहता हू कि महादेव देसाई के पास प्रेम से ओतप्रोत ऐसा हृदय है जिसमें यातना पहुंचाने वाले के लिए भी स्थान है। पवित्र भजनो के रूप में उनके पास एक ऐसी आत्म-शक्ति भी है जिस पर यातनाओं का असर नही होता। वह भजन गाकर इन सारे कष्टों की पीड़ा को दूर कर सकेंगे। मेरा पूरा विश्वास है कि मीरावाई पर उनके पति द्वारा दी गई यातनाओं का कोई असर नही हुआ था। ईश्वर के प्रति प्रेम और उसके अमूल्य नाम का निरन्तर स्मरण उन्हें नित्य प्रसन्न बनाये रखता था। जब मैं उन राजपूत वीरांगनाओं की याद करता हूं जो ईश्वर का नाम लेकर जलती हुई चिता मे कूद जाती थी तव मेरे मन में उनका जो चित्र उभरता है मैं उसमें उनके चेहरे पर आनन्द का ही भाव देखता हूं। लेटीमर[१] ने जव शान के साथ अपना हाथ फैलाकर आग में डाल दिया तो उन्हें तनिक भी कष्ट नहीं हुआ। उन्हें अगर किसी चीज ने वचाया तो वह थी ईश्वर में उनका विश्वास और उनकी सत्यनिष्ठा। चमत्कारों का युग आज भी समाप्त नहीं हुआ है। यदि हम ईश्वर की सत्ता और उसकी रक्षा करने की क्षमता में थोड़ा भी विश्वास करे तो हमें ऐसा कवच मिल जाता है जिसके बलपर हम उन सब पीड़ाओं को सह सकते है जिन्हें असह्य कहा जाता है। किसी भी सत्याग्रही को, जिसे अपने उद्देश्य में विश्वास है, इस सत्य में तनिक भी सन्देह नही करना चाहिए कि सकट के समय ईश्वर उसकी रक्षा करेगा।

मुझे पूरा विश्वास है कि महादेव देसाई अपने विनम्र किन्तु गरिमापूर्ण व्यक्तित्व से दुर्व्यवहार करनेवाले पाषाण-हृदय व्यक्तियों का भी दिल पिघला सकेंगे।

लेकिन हम सरकार के दुर्व्यवहार के उदाहरणों की अपनी चर्चा पर वापिस आयें। लखनऊ का उदाहरण लीजिए। वहां सव ठीक चल रहा था। पण्डित नेहरू और उनके साथियो को आवश्यक सुविधाएं दी गई थी। मैं तो यह सोचने

---

१. ह्यू लेटीमर (१४८५-१५५५), अंग्रेज समाज-सुधारक जिन पर धर्म-विरोधी होने का आरोप लगा कर जीवित जला दिया गया था।

लगा था कि यद्यपि सयुक्त-प्रान्त की सरकार अपनी आज्ञा का उल्लघन करनेवालो को बराबर जेल मे डाल रही है फिर भी वह राजनीतिक बन्दियो के साथ शालीनता और नम्रता का व्यवहार कर रही है। लेकिन अब ऐसा मालूम होता है कि लखनऊ मे भी कुछ परिवर्तन आ गया है। मुझे अभी-अभी खबर मिली कि शेख खली-कुज्जमा और उनके दस साथियो को जिला जेल से केन्द्रीय जेल मे भेज दिया गया है और उन्हे जो सुविधाए दी गई थी उनसे उन्हे वञ्चित किया जायगा और शायद उनसे किसी को मिलने की इजाजत भी नही मिलेगी। पण्डित नेहरू और बाकी कैदियो ने इस प्रकार के भेदभाव के विरुद्ध एक कडा विरोध-पत्र भेजा है और इस बात की माग की है कि उनके साथ भी वैसा ही व्यवहार किया जाना चाहिए जैसा कि दूसरे राजनीतिक कैदियो के साथ किया जाता है। हर भारतवासी के लिए यह गर्व की बात होनी चाहिए कि भारत के कुछ बेहतरीन आदमी आज अपना सारा बडप्पन भूलकर आम आदमी के साथ कन्धे-से-कन्धा भिडाकर काम कर रहे हैं और अपने लिए किन्ही विशेष अधिकारो की माग नही कर रहे हैं।[1] उपर्युक्त टिप्पणिया लिखने के बाद मुझे एक तार मिला। इस तार मे कहा गया कि श्री देसाई से दुबारा मिलने दिया गया और वे बिल्कुल स्वस्थ हैं और उनके साथ अब अच्छा व्यवहार किया जा रहा है। अधिकारियो की खातिर मुझे इस बात की खुशी है कि श्री देसाई के साथ किये जा रहे व्यवहार मे सुधार किया गया है। खैर, यह तो ठीक है लेकिन ऊपर जिस अस्वच्छता का वर्णन हुआ है वह तो शुरू मे ही नही होनी चाहिए थी। महादेव देसाई सरीखे किसी एक व्यक्ति के साथ मजबूरन अच्छा व्यवहार किया गया, यह बात खास महत्व नही रखती। सवाल एक का नही बल्कि बहुत से लोगो का है। सामान्य कैदियो की क्या हालत होगी? क्या उन्हे कोई अधिकार है? सुसस्कृत लोगो का कैद मे डाला जाना उस दृष्टि मे एक अनायास प्राप्त सौभाग्य है। जेल मे राजनीतिक कैदियो की उपस्थिति का एक आनुषगिक लाभ यह होगा कि मानव-अधिकारो का यह सवाल हल हो जायगा। —अग्रेजी। यं० इं०, ५।१।१९२२।]

● चमत्कारों का युग आज भी समाप्त नहीं हुआ है।

४१. 'इण्डिपेण्डेण्ट' का नया रूप

श्री महादेव देसाई ने दो हजार रुपये की जमानत जब्त हो जाने पर 'इण्डि-

---

१. इस अनुच्छेद के अन्त मे लेखन-तिथि, १ जनवरी का उल्लेख है।

पेण्डेण्ट' का जो हस्तलिखित संस्करण निकाला था वह कठिनाइयों के बावजूद अब भी निकल रहा है। वह अपने नये रूप में नियमित रूप से प्रकाशित हो रहा है। अगर वर्तमान सम्पादक गिरफ्तार कर लिया गया तो उसके बाद क्रमशः यह पद कौन-कौन लोग सँभालेंगे, इसकी व्यवस्था कर ली गई है। पत्र के मुख-पृष्ठ पर उन सम्पादकों और सहायक सम्पादकों के नाम हैं जो कि इस थोड़ी सी अवधि मे गिरफ्तार कर लिये गये हैं। वे है: रंगाअय्यर,[1] जार्ज जोजेफ, कबाड़ी और महादेव देसाई। मेरा खयाल है कि लाहौर के 'जमींदार' पत्र को छोड़कर कोई ऐसा दूसरा पत्र नही है, जिसका ऐसा गौरवपूर्ण रेकार्ड हो। मैं एक दूसरे कालम में पिछले सात अंकों से कुछ चुनी हुई सामग्री प्रकाशित कर रहा हूं। पहला अंक तो मै पूरा प्रकाशित कर ही चुका हूं। पत्र की यह विशेषता पाठकों के ध्यान में अवश्य आयेगी कि समाचार कितनी सावधानी से संकलित किये गये हैं, कैसे एक दूसरे से उनका ताल-मेल वैठाया गया है और उन्हें संक्षिप्त रूप में पेश किया गया है। पाठक यह भी देखेंगे कि सम्पादकीय में कैसे ठोस विचार हैं। मैं पूरी आशा करता हूं कि इलाहाबाद की जनता इस प्रयोग के प्रति सहानुभूति जतायेगी और उसके युवा सम्पादक-द्वारा की गई अपील का समर्थन करेगी। यह एक साहसपूर्ण प्रयोग है और उसमें महत्वपूर्ण सम्भावनाएँ निहित हैं। मुमकिन है कि सरकार पत्र के खिलाफ अपनी कार्रवाई की कोई सीमा ही न बाँधे और प्रत्येक नये सम्पादक को गिरफ्तार करती चली जाय। इस नये प्रयोग का उद्देश्य यह दिखाना है कि जब सजा भुगतने के लिए काफी आदमी मौजूद हों तो कोई भी सरकार जनता की मर्जी के खिलाफ जबरदस्ती अपनी इच्छा नहीं लाद सकती। अपने को स्वतन्त्र अनुभव करने और स्वतन्त्र होने से पहले यह जरूरी है कि हम सभी सरकारी रियायतों को ठुकरा सकें। हमें यह मानना पड़ेगा कि हमारे असहयोग आन्दोलन के बावजूद बहुत-सी ऐसी चीजें हैं जिनका लाभ हम सरकार की कृपा से उठाते हैं। अगर सरकार चाहे तो हम सबको बिल्कुल अलग-अलग कर सकती है और रेलगाड़ी, डाकतार आदि की सुविधाओं से हमें वञ्चित कर सकती है। हां, एक चीज ऐसी है जिसे सरकार हमारी मर्जी के बगैर नहीं दबा सकती और वह है हमारी आत्मा। इसलिए यदि हम भारत की आत्मा को स्वतन्त्र बनाये रखना चाहते हैं तो सरकार हमारे रास्ते में, जो भी रुकावटें डाले उनका मुकाबला करने और उन पर विजय पाने के लिए हमें तैयार रहना चाहिए।

यदि सम्पादक को अच्छे प्रतिलिपिक मिल जायं तो वह आसानी से एक हजार

---

१. सी० एस० रंगा अय्यर।

प्रतिलिपियां तैयार करा सकता है। मेरी सलाह है कि सम्पादक अपनी बात और भी कम शब्दो मे कहना सीखें। अगर वह थोडा-सा अभ्यास करें तो अपनी पूरी बात सिर्फ एक फूलस्केप कागज के दोनो तरफ लिख कर कह सकता है। रोजाना जनता जिन छपे हुए पत्रो को पढती है और जिन्हें पढने मे उन्हे इतनी तकलीफ उठानी पडती है उनकी अपेक्षा यह सक्षिप्त समाचारपत्र कही ज्यादा पढने योग्य होगा। अगर समाचारपत्र मे से भरती की सामग्री, सुर्खिया और विज्ञापन हटा दिये जाय तो बाकी सामग्री एक फूलस्केप कागज मे आ सकती है। सम्पादक को चाहिए कि वह ऐसे समाचार और विचार प्रकाशित करें जिन्हे पाठक और कही नही पा सकता। ऐसा करने से उसके पत्र की प्रचार-सख्या बिना प्रयत्न के हजार गुनी हो जायगी। साथ ही सम्पादक को यह याद रखना चाहिए कि लिखित दैनिक पत्र के लिए एक और तरह के सगठन की जरूरत है। इसके एजेण्टो को वितरको का कार्य कम और प्रतिलिपिको का कार्य ज्यादा करना होगा। लिखित दैनिक पत्र के प्रबन्धक को एजेण्टो की और उन ग्राहको की सूची रखनी होगी जो इन एजेण्टो से पत्र खरीदते हैं। इन एजेण्टो को अपने-अपने क्षेत्रो के लिए स्थानीय प्रतिलिपिक रखने होगे जो अपने क्षेत्रो के लिए काफी प्रतिलिपिया तैयार करेंगे। इस प्रकार लिखित दैनिक पत्र के कर्मचारियो और पाठको के बीच निकटतर और सजीव सम्पर्क स्थापित हो जायगा। इसके अलावा जब यह योजना ठीक तरह चल पडेगी तो आप देखेंगे कि परेशानी कम हो जायगी, समय शक्ति और पैसा भी कम खर्च होगा और इसके परिणाम अधिक टिकाऊ और शीघ्र फलदायी होगे।
——अंग्रेजी। यं० इं०, ५।१।१९२२।]

- **एक ऐसी चीज है जिसे सरकार हमारी मर्जी के बगैर नहीं दबा सकती, और वह है हमारी आत्मा।**

४२. एक बैरिस्टर को नोटिस

अलीगढ मे दगो के तुरन्त बाद जब टी० ए० के० शेरवानी को गिरफ्तार किया गया, उस समय वह राष्ट्रीय मुस्लिम विश्वविद्यालय के व्यवस्थापक थे। इस समय श्री शेरवानी इलाहाबाद की नैनी सेण्ट्रल जेल मे सजा काट रहे है। अभी उन्हे उच्च न्यायालय से यह नोटिस दिया गया है कि उन्हे भारतीय दण्ड सहिता की धारा १५३-ए के अन्तर्गत सजा हुई है। अत वह बतायें कि उनका नाम एडवोकेटो की सूची से क्यों न हटा दिया जाय या उन्हे वकालत करने से

मुअत्तल क्यों न कर दिया जाय, उन्हें अपनी सफाई इसी माह की २३ तारीख को देनी है। दो साल पहले बड़े-से-बड़ा वकील ऐसा नोटिस पाकर सिहर उठता! उस समय इस तरह की कार्रवाई को भावी बर्बादी का सूचक समझा जाता। लेकिन खुशकिस्मती से स्थिति बदल गई है। मुझे पता है कि इस नोटिस से श्री शेरवानी की एक रात भी बेचैनी से नहीं कटी। उन्होंने असहयोगी की हैसियत से वकालत पहले ही छोड़ दी है। उन्हें अपने ऊपर और देश पर इतना विश्वास तो है ही कि वह यह विश्वास रक्खें कि जब स्वराज्य मिलेगा और वह निकट भविष्य में मिलनेवाला ही है, तब उनका नाम सूची में सम्मान के साथ पुनः शामिल कर लिया जायगा, भले ही २३ तारीख को उच्च न्यायालय उसे हटाना चाहे तो हटा दे।

--अंग्रेजी। यं० इं०, ५।१।१९२२।]

४३. दूसरी मिसाल

श्री महादेव देसाई की धर्मपत्नी प्रयाग में हैं। वह स्वयं भी स्वयंसेविका बन गई हैं; वह सेवा करने के लिए जगह-जगह जाती हैं; दूसरे स्वयंसेवकों को खाना पकाकर खिलाती हैं और अन्य प्रकार से सहायता करती हैं एवं नित्य चर्खा चलाती हैं। श्री महादेवभाई के गिरफ्तार होते ही उन्होंने मुझे एक पत्र भेजा, जिसे पढ़कर पाठक प्रसन्न होंगे। मैं इसी खयाल से उसे यहां दे रहा हूं।[1]

उन्हें मेरा आशीर्वाद तो प्राप्त है ही। परन्तु मैं आशीर्वाद देनेवाला हूं कौन? भारत की स्त्रियों को तो अपने ही तपोबल से साहस मिल रहा है। कोई एक-दो मनुष्य जेल नहीं गये हैं, कितने ही गये हैं और कितनों ही की धर्मपत्नियां साहस दिखा रही हैं। वे खुशी-खुशी अपने पतियों को और दूसरे रिश्तेदारों को जेल भेज रही हैं और खुद भी जेल जाने के लिए तैयार हो रही हैं। मुझे तार से यह खबर मिल गई है कि देसाई के साथ जो निष्ठुर व्यवहार किया जा रहा था वह अब बन्द कर दिया गया है। जेल में कष्ट तो होते ही हैं। किन्तु धीरज और अपने विनययुक्त बर्ताव से अनुचित कष्टों का निवारण अवश्य ही होता है। ऐसा हो चाहे न हो, जेल के भयानक-से-भयानक कष्ट तो हमें सहन करने ही होंगे। इसके अतिरिक्त कोई दूसरी गति ही नहीं है।

--गुजराती। न० जी०, ८।१।१९२२।]

---

१. यह पत्र यहां नहीं दिया गया है। इसमें दुर्गाबहन ने गांधीजी से आशीर्वाद मांगा था।

४४. मालवीय जी का पुत्र

पण्डित मदनमोहन मालवीय के सबसे छोटे पुत्र गोविन्द तथा उनके भतीजे कृष्णाकान्त मालवीय पहले एक बार पकडे जाकर सजा भोगकर रिहा हो चुके हैं। उन्हे व्याख्यान देने के कारण अब दुबारा गिरफ्तार किया गया है और डेढ-डेढ वर्ष की कडी कैद की सजा देकर जेल भेज दिया गया है। इसे मैं भारतवर्ष का सौभाग्य मानता हू। श्री मालवीयजी के पुत्र का असहयोग के कारण जेल जाना ही हमे अपनी प्राचीन धर्म-कथाओ की याद दिलाता है। भाई गोविन्द ने मालवीयजी से अनुमति प्राप्त करने की पूरी कोशिश की। उन्होंने जहा तक बना अपने पूज्य पिता की इच्छा का मान रक्खा। पिता ने भी पुत्र को पूरी स्वतन्त्रता दी। जब पण्डित जवाहरलाल नेहरू और अन्य लोगो के पकडे जाने पर श्री गोविन्द से न रहा गया तब उन्होने अपने पिता को एक बहुत ही विनययुक्त पत्र लिखा और रणागण मे कूद पडे। मैं जानता हू कि इससे श्री गोविन्द की पितृभक्ति मे रत्ती-भर भी कमी नही हुई है। मुझे दृढ विश्वास है कि पण्डितजी के मन मे श्री गोविन्द के प्रति इस काम के कारण तनिक भी रोष नही है। इन पिता और पुत्र का सम्बन्ध ऐसा ही मीठा रहा है और रहेगा। इस प्रकार इस स्वराज्य-यज्ञ मे सब लोग अपनी-अपनी अन्तरात्मा के आह्वान को मानने लग गये हैं और हम पिता और पुत्र को जुदा-जुदा मैदानो मे देख रहे हैं। ये सब धर्म जागृति—स्वराज्य—के ही चिह्न हैं।

—गुजराती। न० जी०, ८।१।१९२२।]

४५. मालवीय परिवार

इस निराले असहयोग-सग्राम की एक अत्यन्त निराली बात यह है कि इसके कारण कितने ही परिवारो मे मतभेद उत्पन्न हो गया है। और उनमे भी मालवीय-परिवार मे जो मतभेद उत्पन्न हुआ है वह तो विशेषरूप से उल्लेखनीय है। मेरी राय मे तो यह घटना भारतवासियो के लिए सहिष्णुता और सविनय अवज्ञा का अच्छा-खासा पाठ प्रस्तुत करती है। श्री मालवीयजी की सहिष्णुता तो अगाध है ही। मुझे यह मालूम है कि वह जेल जाने के खिलाफ है। मैं यह भी मानता हू कि यदि वह उसके कायल होते तो ऐसे आदमी नहीं हैं जो उससे बचने की कोशिश करते और जब उनका सन्ताप हद दर्जे तक पहुच जायगा और जब मेरी ही तरह

ही तैयार किया था और उन्होंने ही उसे छपवाया था। प्रोफेसर कृपलानी को नोटिस बाँटने के लिए उन्होंने ही उकसाया था। इस तमाम शरारत के सरगना की रिहाई कैद के समय से पहले भला क्यों होनी चाहिए? बाबू भगवानदास ने इस तरह के अकाट्य तर्क दिये है। परन्तु मुझे इसमें सन्देह नही कि उन्हें अधिकारियों का ध्यान आकर्षित करने के बहुत से मौके मिलेंगे। बंगाल, पंजाब और अन्य स्थानों पर सार्वजनिक सभाओं का जबरदस्ती भंग किया जाना यदि अधिकारियों के मन का सूचक है, तो हमें उससे कहीं अधिक ताप सहन करना होगा जितना हमने अब तक सहा है। हमारे साथ जो बर्ताव हो रहा है वह तुर्की हमाम के ढंग का है। हम उसे सह सकें, इसलिए सरकार हमें उत्तरोत्तर अधिक गर्म कमरों में ले जा रही है।

—अंग्रेजी। यं० इं०, २६।१।१९२२।]

४८. मेरठ में आतंक

जिला खिलाफत समिति के मन्त्री, काजी बशीरुद्दीन अहमद लिखते है:[१]

इसे तथा इससे अगले पत्र को उद्धृत करते हुए मुझे हार्दिक दुःख हो रहा है। यह देखकर कि मानव-स्वभाव इतना नीचे गिर सकता है, मुझे अपमान और लज्जा का अनुभव हो रहा है। पत्र भेजनेवालों के बयानों की सचाई पर शक करने का तो कोई कारण ही नहीं है।

इस तमाम बहादुर साथियों को मेरी यही सलाह है कि अहिंसा की अपनी प्रतिज्ञा पर दृढ़ रहो; अत्याचारियों को क्षमा करते रहो। जाहिर है कि वे पागल है। वे नही जानते कि क्या कर रहे है। गालियों की परवाह मत करो। जो गालियां देता है, वे उसी को दूषित करती है। जो सुनना नही चाहता उसका वे कुछ नही बिगाड़ती। मारपीट से तो हमारे जिस्म को चोट लगती है, लेकिन यदि हम उन्हें बिना क्रोध के बहादुरी से झेल सकें तो गालियों से हमें लाभ ही होगा। पुलिस का कानून के खिलाफ यह पौरुषविहीन आचरण इस प्रणाली की भ्रष्टता का एक और उदाहरण है। इस प्रणाली के अन्तर्गत बर्बरता का पोषण किया गया है और मानव-स्वभाव को पतन के गर्त मे ढकेल दिया गया है। और यह सब सिर्फ

[१]. ... नहीं दिया जा रहा है। उसमें मेरठ सविनय अवज्ञा की हलचल ...धिक व्यवहार का वर्णन किया गया था।

इसलिए किया गया है कि इस गरीब देश का, जिसके बारे मे मेरी इच्छा ऐसा मानने की होती है कि वह किसी समय मानव-शक्ति तथा धन-धान्य से भरा-पूरा था, शोषण करने और इसकी सम्पत्ति लूटकर अपना घर भरने पर कटिबद्ध एक अल्प-सख्यक समुदाय के व्यापारिक हितो के लिए बलात् छीनी गई सत्ता को कायम रक्खा जाय।

—अंग्रेजी। यं० इं०, २।२।१९२२]

४९. बनारस में बर्बरता

यहा मैं एक तार का सार दे रहा हू, जो बनारस से भेजा जानेवाला था, पर जिसे तारघर ने आपत्तिजनक बताकर लौटा दिया:

"अधिकारी लोगो को पीटते हैं और आधी रात को जाड़े मे उन्हें नंगा घर भेज देते हैं। स्वयसेवक लड़कों को गन्दी गालियां दी जाती हैं और उनके साथ गन्दे मजाक किये जाते हैं। देशभक्तो को सम्मेलन या समझौते की बात करने से पहले इस दिशा मे राहत दिलानी चाहिए।"

जब बराबर इस प्रकार का अमानुषिक व्यवहार किया जा रहा हो तब सम्मेलनो और समझौतो की बात सोचने के लिए देशभक्तो को जो कड़ी फटकार बताई गई है, पाठको का ध्यान उस पर जरूर जायगा। तार मे जो तथ्य सक्षेप मे रक्खे गये हैं, उनका विस्तृत विवरण उसके साथ के पत्र मे दिया गया है। परन्तु मैं अभी उन्हें यहा देने के लिए स्वतन्त्र नही हू। इस तार के प्रेषक प्रोफेसर कृपलानी खुद जेल मे ऐसे कदम उठा रहे है जिनसे तार मे वर्णित अपमानजनक अमानुषिकताओ की समाप्ति सम्भव है।

जो लोग जेल से बाहर हैं, उन्हे क्या करना चाहिए यह बिल्कुल स्पष्ट है। क्षुब्ध और उत्तेजित होने से हमे कोई लाभ नही होगा। हमे समस्या की गम्भीरता को समझना चाहिए। गन्दगी जितनी ज्यादा हो, आत्मशुद्धि और आत्म-त्याग की आवश्यकता उतनी ही अधिक होती है। पुलिस को बुरा भला कहने से हमें कोई लाभ नही हो सकता। पुलिसवाले परिस्थितियो की उपज है। उनके प्रशिक्षण से उनका सहज स्वभाव सुधरा नही है, वह शायद बिगड़ा ही है।

पहली ही बार उनका वास्ता अपने ऐसे देशवासियों से पड़ रहा है जो सुसंस्कृत हैं और उच्च उद्देश्य रखते हैं। हमें यह आशा नहीं करनी चाहिए कि पुलिस मे एकाएक परिवर्तन आ जायगा। यदि हम उनके साथ धैर्य और नम्रता का व्यवहार

उनका भी विश्वास ब्रिटिश न्याय पर से पूरी तरह उठ जायगा तब यदि वह जेल जाने के लिए सबसे आगे बढ जायँ तो मुझे जरा भी आश्चर्य न होगा। परन्तु यद्यपि वह आज स्वयं सविनय कानून-भंग के खिलाफ है, तथापि उन्होंने कभी उन लोगों तक के किये गये निश्चयों में हस्तक्षेप नही किया जो उनके निकट सम्बन्धी है और जिन पर अपने प्रेम अथवा बुजुर्ग होने के नाते उनकी निर्विवाद सत्ता है। बल्कि इसके विपरीत उन्होंने अपने पुत्रों को अपनी-अपनी इच्छा के अनुसार बरतने की पूरी आजादी दी है। गोविन्द की सविनय अवज्ञा का उदाहरण मेरी दृष्टि में संजोकर रखने लायक है। पण्डितजी ने अपने मृदुल और सौजन्यपूर्ण ढंग से उस वीर नवयुवक को अपने मार्ग से दूर रखने का भरसक प्रयत्न किया। गोविन्द ने भी अन्त तक अपने पूज्य पिता की इच्छा के अनुसार चलने का भरसक प्रयत्न किया। उसने ईश्वर से प्रार्थना की कि मुझे मार्ग दिखा। वह परस्पर-विपरीत कर्त्तव्य को सामने देखकर गहरे असमंजस में पड़ गया। गोविन्द पर नेहरुओं की गिरफ्तारी का बड़ा असर हुआ। और उसने अपने विशालहृदय पिता का आशीष प्राप्त करके संघर्ष में कूद पड़ने का निश्चय कर लिया। जेलों को भी गोविन्द से बढ़कर उल्लासपूर्ण हृदयवाला युवक शायद ही मिला होगा। यह साहस के साथ कहा जा सकता है कि सविनय अवज्ञा करके गोविन्द ने अपने देश और पूज्य पिता के प्रति अपनी कर्त्तव्य-परायणता प्रमाणित की है। बालकों-द्वारा कर्त्तव्य-भाव से सविनय अवज्ञा करने के मामले में गोविन्द का यह कार्य हमारे जमाने के सामने एक उदाहरण उपस्थित करता है। मुझे विश्वास है कि इसके कारण पिता और पुत्र के बीच कोई दरार पैदा नही हुई है। शायद मालवीयजी को आज गोविन्द पर पहिले की अपेक्षा अधिक गर्व होगा। ऐसे ही सत्य-युक्त कार्य इस युद्ध के धार्मिक स्वरूप को प्रमाणित करते है। गोविन्द ने अदालत में जो साहसपूर्ण बयान दिया है उससे पाठकों के सामने उपस्थित करने के मोह को मैं नही रोक सकता।'[1]

मैं पिता-पुत्र दोनों को बधाई देता हूं। मैं पाठकों को भी आमन्त्रित करता हुं कि वे इसमे मेरा साथ दें। देश को दोनों पर गर्व करना चाहिए। जहां के युवकगण गोविन्द की तरह साहस दिखाते है वहां युद्ध का वाञ्छित फल मिले बिना रह ही नही सकता।

—अंग्रेजी। यं० इं०, १२।१।१९२२।]

---

१. यहां उद्धृत नहीं किया गया है।

४६. क्षमा-याचना

इलाहाबाद से खबर मिली है कि क्रिमिनल लॉ एमेण्डमेण्ट ऐक्ट (फौजदारी कानून सशोधन अधिनियम) के अन्तर्गत गिरफ्तार आठ अभियुक्तो को छोड दिया गया क्योकि उन्होंने माफी मॉग ली और गैर-कानूनी सभाओ, तथा मूर्खता-पूर्ण एव अशोभनीय आन्दोलनो मे भाग लेने पर अफसोस जाहिर किया है। चूकि मथुरा मे कुछ ही महीनो पहिले जो कुछ हुआ था उसे मैं भूला नही हू इसलिए मुझे इस खबर पर विश्वास नही होता। मथुरा मे कुछ नामधारी असहयोगी सत्याग्रही गिरफ्तार किये गये थे और फिर उनसे माफी मँगवाई गई थी। बाद मे अधिकारियो की तरफ से यह दावा किया गया कि असहयोगियो ने माफी मॉगी है। मैं इस समाचार को सत्य तो नही मानता लेकिन मैं यहा जरूर चाहता हू कि कार्यकर्त्ता इससे फायदा उठायें। अगर उन बहुत से नौजवानो मे से, जो कि रोजाना गिरफ्तार किये जा रहे हैं, कुछ लोग कमजोर पड जाते हैं और पीछे कदम उठाते हैं, खासतौर से उस हालत मे जबकि लोगो के साथ भले ही कुछ समय के लिए ही ऐसा बरताव किया जाता है जैसा कि महादेव देसाई के साथ किया गया है, तो हमे आश्चर्य नही करना चाहिए। हम लोगो को थोडे-से ही आदमियो के गिरफ्तार होने पर सन्तोष मानना चाहिए, बजाय इसके कि हममे कुछ लोग दिल के कमजोर हो और किसी खास मौके पर आवेश मे आकर गिरफ्तार तो हो जायं पर बाद मे घुटने टेक दें।

—अंग्रेजी। य० इ०, १२।१।१९२२।]

४७. उलझन में डालने वाली रिहाई

बाबू भगवान दास को अचानक और बिना शर्त कैद के समय से बहुत पहले छोड दिया गया है। उनके साथ मेरी हार्दिक सहानुभूति है। मैं जन-साधारण को यह सूचित करना चाह रहा था कि बाबू भगवानदास साहित्यिक शोध मे लगे है और अपने एकान्तवास मे परम प्रसन्न हैं। ऊपर मे उनके पक्ष मे लेकिन अमल मे उनके विरुद्ध जो भेदभाव बरता गया है, वह उन्हे स्वभावत बहुत अखर रहा है। जैसा कि उन्होंने अपने एक खुले पत्र मे कहा है, यदि वह रिहाई के अधिकारी थे तो उसी तरह बहुत से अन्य लोग भी थे। बनारस मे जो लोग पकडे गये थे उनमे वह निश्चय ही मुख्य अपराधी थे। हडताल-सम्बन्धी नोटिस का मसविदा उन्हो

ही तैयार किया था और उन्होंने ही उसे छपवाया था। प्रोफेसर कृपलानी को नोटिस बाँटने के लिए उन्होंने ही उकसाया था। इस तमाम [illegible] की रिहाई कैद के समय से पहले भला क्यों होनी चाहिए? बाबू भगवानदास ने इस तरह के अकाट्य तर्क दिये है। परन्तु मुझे इसमें सन्देह नही कि उन्हें अधिकारियों का ध्यान आकर्षित करने के बहुत से मौके मिलेंगे। बंगाल, पंजाब और अन्य स्थानों पर सार्वजनिक सभाओ का जबरदस्ती भंग किया जाना यदि अधिकारियों के मन का सूचक है, तो हमे उससे कही अधिक ताप सहन करना होगा जितना हमने अब तक सहा है। हमारे साथ जो बर्ताव हो रहा है वह तुर्की हमाम के ढंग का है। हम उसे सह सकें, इसलिए सरकार हमें उत्तरोत्तर अधिक गर्म कमरों में ले जा रही है।

—अंग्रेजी। यं० इं०, २६।१।१९२२।]

४८. मेरठ में आतंक

जिला खिलाफत समिति के मन्त्री, काजी बशीरुद्दीन अहमद लिखते हैं:[१]

इसे तथा इससे अगले पत्र को उद्धृत करते हुए मुझे हार्दिक दुःख हो रहा है। यह देखकर कि मानव-स्वभाव इतना नीचे गिर सकता है, मुझे अपमान और लज्जा का अनुभव हो रहा है। पत्र भेजनेवालो के बयानों की सचाई पर शक करने का तो कोई कारण ही नही है।

इस तमाम बहादुर साथियो को मेरी यही सलाह है कि अहिंसा की अपनी प्रतिज्ञा पर दृढ़ रहो; अत्याचारियों को क्षमा करते रहो। जाहिर है कि वे पागल हैं। वे नही जानते कि क्या कर रहे है। गालियों की परवाह मत करो। जो गालियां देता है, वे उसी को दूषित करती है। जो सुनना नही चाहता उसका वे कुछ नही बिगाड़तीं। मारपीट से तो हमारे जिस्म को चोट लगती है, लेकिन यदि हम उन्हें बिना क्रोध के बहादुरी से झेल सके तो गालियों से हमें लाभ ही होगा। पुलिस का कानून के खिलाफ यह पौरुषविहीन आचरण इस प्रणाली की भ्रष्टता का एक और उदाहरण है। इस प्रणाली के अन्तर्गत बर्बरता का पोषण किया गया है और मानव-स्वभाव को पतन के गर्त में ढकेल दिया गया है। और यह सब सिर्फ

१. उनका पत्र यहां नहीं दिया जा रहा है। उसमें मेरठ सविनय अवज्ञा की हलचल और पुलिस के अमानुषिक व्यवहार का वर्णन किया गया था।

इसलिए किया गया है कि इस गरीब देश का, जिसके बारे मे मेरी इच्छा ऐसा मानने की होती है कि वह किसी समय मानव-शक्ति तथा धन-धान्य से भरा-पूरा था, शोषण करने और इसकी सम्पत्ति लूटकर अपना घर भरने पर कटिबद्ध एक अल्प-संख्यक समुदाय के व्यापारिक हितो के लिए बलात् छीनी गई सत्ता को कायम रक्खा जाय।

—अंग्रेजी। यं० इं०, २।२।१९२२]

४९. बनारस में बर्बरता

यहा मैं एक तार का सार दे रहा हू, जो बनारस से भेजा जानेवाला था, पर जिसे तारघर ने आपत्तिजनक बताकर लौटा दिया:

"अधिकारी लोगो को पीटते हैं और आधी रात को जाड़े मे उन्हें नंगा घर भेज देते हैं। स्वयंसेवक लड़को को गन्दी गालियां दी जाती हैं और उनके साथ गन्दे मजाक किये जाते हैं। देशभक्तो को सम्मेलन या समझौते की बात करने से पहले इस दिशा में राहत दिलानी चाहिए।"

जब बराबर इस प्रकार का अमानुषिक व्यवहार किया जा रहा हो तब सम्मेलनो और समझौतो की बात सोचने के लिए देशभक्तो को जो कड़ी फटकार बताई गई है, पाठको का ध्यान उस पर जरूर जायगा। तार में जो तथ्य सक्षेप मे रक्खे गये हैं, उनका विस्तृत विवरण उसके साथ के पत्र मे दिया गया है। परन्तु मैं अभी उन्हे यहा देने के लिए स्वतन्त्र नही हू। इस तार के प्रेषक प्रोफेसर कृपलानी खुद जेल मे ऐसे कदम उठा रहे है जिनसे तार मे वर्णित अपमानजनक अमानुषिकताओ की समाप्ति सम्भव है।

जो लोग जेल से बाहर हैं, उन्हे क्या करना चाहिए यह बिल्कुल स्पष्ट है। क्षुब्ध और उत्तेजित होने से हमे कोई लाभ नही होगा। हमे समस्या की गम्भीरता को समझना चाहिए। गन्दगी जितनी ज्यादा हो, आत्मशुद्धि और आत्म-त्याग की आवश्यकता उतनी ही अधिक होती है। पुलिस को बुरा भला कहने से हमे कोई लाभ नही हो सकता। पुलिसवाले परिस्थितियो की उपज है। उनके प्रशिक्षण से उनका सहज स्वभाव सुधरा नही है, वह शायद बिगड़ा ही है।

पहली ही बार उनका वास्ता अपने ऐसे देशवासियो से पड़ रहा है जो सुसंस्कृत हैं और उच्च उद्देश्य रखते है। हमें यह आशा नही करनी चाहिए कि पुलिस मे एकाएक परिवर्तन आ जायगा। यदि हम उनके साथ धैर्य और नम्रता का व्यवहार

करेंगे तो वे भी शिष्ट मनुष्य वन जायंगे और हमारे दुःख-दर्द को समझने लगेंगे। जिस दिन हमारे सर्वश्रेष्ठ व्यक्ति जेल की दीवारों के अन्दर पहुंचे, मेरे लिए तो स्वराज्य उसी दिन आरम्भ हो गया। तबसे निरन्तर शक्ति की अभिवृद्धि और सुधार का क्रम चल रहा है। सुधार झगड़े के निपटारे के बाद शुरु नहीं होना है बल्कि निपटारा वास्तविक और उत्तरोत्तर बढ़ते हुए सुधार का फल होगा। और पुलिस की क्रूरता के लिए क्या हम स्वयं भी दोषी नहीं हैं? क्या हम बहुत काल तक उनकी उपेक्षा नहीं करते रहे हैं। बहुत काल तक उनसे डरते नहीं रहे हैं, उनका बुरा नहीं चाहते रहे हैं और यह नहीं मानते रहे हैं कि अब उनका उद्धार सम्भव नहीं है? यदि हमारी यही मनोवृत्ति रही तो हम बहुत-से समुदायों के बारे में मान बैठेंगे कि उनमें किसी प्रकार के सुधार की आशा नहीं रखनी चाहिए और तब अन्त में हम केवल मुट्ठी-भर लोग ही पूर्णता के प्रतिरूप और श्रेष्ठता के आदर्श रह जायंगे। दूसरे शब्दों में, यदि हम सिर्फ अपने को ही गुणी व्यक्ति मानेंगे तो अन्त में स्वराज्य से वञ्चित रह जायंगे। इसलिए हमें पुलिस के दुर्गुणों और अपनी आम परिस्थितियों की दुर्बलता के लिए कुछ दोष अपने ऊपर भी लेना चाहिए। किन्तु हमारा धैर्य केवल तभी सिद्ध होगा जब हम सहूलियत और आराम से प्यार करने की बजाय दर्द और कष्ट से प्यार करें। यदि हम इस उद्देश्य की प्राप्ति के लिए अपनी-अपनी लघु भूमिका अच्छे-अच्छे ढंग से अदा करते जायं तो दिन-प्रतिदिन मिल रहे भयानक समाचारों के बावजूद हम प्रसन्न रह सकते हैं। फल तो हमें हर हालत में ईश्वर पर ही छोड़ देना चाहिए।

—अंग्रेजी। यं० इं०, २।२।१९२२।]

५०. और लिखे हुए समाचारपत्र

इलाहाबाद का 'स्वराज्य' जिसकी जमानत जब्त हो गई थी, एक लिखित समाचारपत्र के रूप में निकलने लगा है। इसके सम्पादक बाबू रामकृष्ण लघाटे हैं। इसे बहुत साफ-सुन्दर अक्षरों में लिखा जा रहा है। छपाई और टाइपिंग के चलन से सुलेखन की कला का चलन उठता जा रहा है। हस्तलिखित पत्रों का निकलना यदि दीर्घकाल तक चलता रहा, तो इसके फलस्वरूप निश्चय ही इस सुन्दर कला का पुनरुत्थान होगा। कुछ प्राचीन पाण्डुलिपियां सौन्दर्य और आनन्द की अमर कृतियां हैं। गौहाटी से भी एक हस्तलिखित समाचार-पत्र निकला है। यह हिन्दी और असमिया दोनों में लिखा जाता है और हर पखवाड़े निकलता है।

मूल्य तीन घेले हैं। तीनो लिखित पत्रो मे सवसे साफ लिखावट गौहाटीवाले पत्र की है: इसका नाम 'काग्रेस' है। सुलेख की दृष्टि से 'स्वराज्य' सवसे अच्छा है। 'इण्डिपेण्डेण्ट' की छाप साफ नही है या तो रोनिओ या फिर साइक्लो पर ट्रेसिंग खराव होती होगी। तीनो पत्रो को स्वयसेवको या वेतन पर काम करने वाले खास कार्यकर्त्ताओ को प्रशिक्षण देना होगा, जिससे वे ऐसी प्रतिया निकाल सके जो छपे कागज की तरह आसानी से पढी जा सकें। साथ ही उन्हे सक्षिप्त अभिव्यक्ति की शैली भी विकसित करनी होगी। ये तीनो पत्र चुस्त शैली मे लिखे जाते हैं, फिर भी मुझे विश्वास है कि विचार को अस्पष्ट किये विना सक्षिप्तीकरण की कला को अभी आगे बढाया जा सकता है। उद्देश्य यह होना चाहिए कि विचार या तथ्यो के रूप मे पाठक को कुछ ऐसा दिया जाय जो उसे और कही न मिल सकता हो। व्यवस्थापको को प्रत्येक प्रति देखनी चाहिए और जिन-जिन पर छाप हल्की हो और पढी न जा सके उन सवको नष्ट कर देना चाहिए जैसा कि मुद्रक भी करते हैं। इन सराहनीय पत्रो के सचालको को मैं यह वात याद दिलाना चाहता हू कि 'सत्याग्रही' जो थोडे ही समय चला था एक फुलस्केप कागज के सिर्फ एक ओर ही लिखा होता था।

—अंग्रेजी। यं० इं०, २।२।१९२२।]

- छपाई और टाइपिंग के चलन से सुलेखन की कला का चलन उठता जा रहा है।

५१. शेरवानी वकालत करने से वञ्चित

इलाहावाद उच्च न्यायालय ने श्री शेरवानी को, जो अदालत का हुक्म जारी होने के वहुत पहले ही खुद वकालत छोड चुके थे, वकालत करने के अधिकार से वञ्चित करके कोई अपनी प्रतिष्ठा नही वढाई। स्पष्ट है कि किसी ने अदालत को ऐसा कदम उठाने के लिए उकसाया होगा। जिसने भी सरकार को यह सुझाया उसने इलाहावाद उच्च न्यायालय के साथ वदी ही की है। श्री शेरवानी के विरुद्ध की गई कार्रवाई से एक भी वकील भयभीत होनेवाला नही है। इन कार्रवाइयो से कुछ वकील इस वात पर शर्मिन्दा हुए होंगे कि हम एक ऐसे न्यायालय मे वकालत कर रहे हैं जो एक व्यक्ति को उसके राजनीतिक सिद्धान्त के कारण दण्डित करता है। मेरी राय मे अदालत सार्वजनिक रूप मे इस वात पर ध्यान देने के लिए मजबूर थी कि असहयोग आन्दोलन एक वस्तुस्थिति है और इसलिए श्री शेरवानी जैसे

सिद्धान्तों के कारण नीचे की अदालत में अपना वचाव करने के लिए जाने वाले नहीं है।

—अंग्रेजी। यं० इं०, ९।२।१९२२।]

५२. झूठे आरोप

दमन-नीति का पक्ष वनाये रखने के लिए नियुक्त अधिकारियों ने उस नीति का समर्थन करने की तीव्र उत्कण्ठा में निराधार बातें कहने में संकोच नही किया है। मौलाना अब्दुलवारी साहव मुझे लिखते है कि असहयोग आन्दोलन के सिल-सिले में जब से उन्होंने शुद्धतम अहिंसा-पालन करने के राष्ट्रीय संकल्प को स्वीकार किया है तब से उन्होंने न तो हिंसा की बात सोची, न उसका समर्थन किया और न हिंसा के लिए किसी को उत्तेजित ही किया। वह कहते हैं कि उन्होंने अहिंसा-नीति का प्रतिपादन भी किया और पूरी ईमानदारी तथा हार्दिक रूप से उसका पालन भी किया। अपंजीयत 'इण्डिपेण्डेण्ट' समाचारपत्र लिखता हैं:—

"मौलाना अब्दुल बारी ने 'हमदम' दैनिक में लेख लिखकर सर विलियम विन्सेण्ट[1] के उस वक्तव्य के उन शब्दों का खण्डन किया है जो उन्होंने निन्दा प्रस्ताव पर हुई वहस के दौरान कहे थे—मानो कि मौलाना हिंसा के हामी है। मौलाना का कहना है कि उन्होंने पिछले चार महीनों में एक भी भाषण नहीं दिया। उन्होंने अपने सबसे अन्तिम लिखित भाषण में, जो उन्होंने मुसलमानों की एक सभा के समक्ष पढ़ा था, अहिंसात्मक असहयोग की जोरदार वकालत करते हुए कहा कि भारतीय मुसलमानों के पास खिलाफत-सम्बन्धी अन्याय दूर कराने के लिए एक मात्र सुलभ उपाय यही है। वह कहते हैं कि मेरे दिल में यह आशा हुई है कि अहिंसात्मक कांग्रेस और खिलाफत कार्यक्रम ब्रिटिश सरकार को अन्त में खिलाफत ओर पंजाब-सम्बन्धो अत्याचारों का निराकरण करने और भारत को स्वशासित राष्ट्रों के ब्रिटिश कामनवेल्थ में स्वतन्त्र साझेदार की तरह स्थान देने पर विवश करेंगे।"

अपने खिलाफ लगाये गये आरोप के सम्बन्व में पण्डित जवाहरलाल नेहरू इस प्रकार लिखते हैं:—

"कहा जाता है कि संयुक्त प्रान्त की सरकार के वित-सदस्य सर लुडविक पोर्टर

---

१. भारत-सरकार के तत्कालीन गृह-सदस्य।

ने २३ जनवरी को संयुक्त-प्रान्त की कौंसिल में भाषण देते हुए निम्नलिखित बातें कहीं—"अब मैं श्री जवाहरलाल नेहरू के बारे मे कुछ कहना चाहता हू। उनका अन्तिम वार प्रान्त के पश्चिमी भाग में कहीं दिये गये एक भाषण के रूप मे था। उन्होंने उसमें राजद्रोह-सम्बन्धी खण्ड को अर्थात् वैध सरकार के प्रति विरति जगानेवाले तथा उस खण्ड को जो महामहिम की प्रजा के वर्गों के बीच घृणा बढाने से सम्बन्ध रखता है, शब्दशः दुहराया। उन्होंने यह भी कहा था कि उनके जीवन का उद्देश्य इस विद्रोह-भावना को तथा सरकार के प्रति नफरत को बढ़ाना है।"

"यह गलत है। किसी भी अवसर पर और अपने किसी भी भाषण मे मैंने दण्ड-संहिता (पेनल कोड) के राजद्रोह-सम्बन्धी खण्ड या किसी भी अन्य खण्ड को शब्दशः या अन्य प्रकार से उद्धृत नहीं किया। मैं अपने साथ भारतीय दण्ड संहिता की कोई प्रतिलिपि नहीं लिये फिरता और न मैंने उसका कोई भी खण्ड रट डालना उपयोगी समझा है। फिर भी मैंने जो बात कई बार कही है, वह यह है कि मैं इसे अपना और हर भारतीय का कर्त्तव्य मानता हू कि वह भारत की वर्तमान शासन-प्रणाली के प्रति विरति या नफरत बढाये। और इस अर्थ मे मैं लगातार भारतीय दण्ड-संहिता के खण्ड १२४ अ के खिलाफ जुर्म करता रहा हू। मुझे यकीन है कि मैंने कभी ऐसा कुछ नहीं कहा जिससे लोग यह समझें कि मैं 'महामहिम की प्रजा के विभिन्न वर्गों में घृणा' फैलाना चाहता हू। जब भी मौका मिला उसके ठीक विपरीत कहने की भरसक कोशिश की है और यदि ऐसा न होता तो निःसन्देह मैं एक खराब असहयोगी और उस महान नेता का विनम्र अनुयायी होने के सर्वथा अयोग्य होता जिसका काम ससार को प्रेम और अहिंसा की अपरिमित शक्ति फिर से दिखा देना है।"

इन दोनो सम्माननीय सार्वजनिक नेताओ के चरित्र पर धब्बा लगाने वाले अफसरो के दिमाग मे यह कभी नही आया कि उनके विरुद्ध हिंसा का उपदेश देने या उसके वारे मे अपनी सहमति प्रकट करने के आरोप पूरी तरह प्रमाणित किये जाने चाहिए। सर विलियम विन्सेण्ट को मौलाना वारी से और सर लुड-विक पोर्टर को पण्डित जवाहरलाल से माफी मागनी चाहिए।

—अंग्रेजी। यं० इ०, ९।२।१९२२।]

५३. वलिया में दमन

वलिया से चि० देवदास गांधी ने एक पत्र भेजा है। इसमें उसने वलिया

के दमन का सजीव चित्र खीचा है। मैं उसे नीचे देता हूं।[1] वलिया संयुक्त-प्रान्त का एक गरीव जिला है। वहां के लोग उत्साही, सीधे-सादे और भोले है। वे देशभक्त है। मैंने कई वार वहां जाने का प्रयत्न किया, परन्तु जा नहीं सका। वह विहार की सरहद पर है, इससे वहां के लोग विहारियों से अधिक मिलते-जुलते हैं। दमन से उनकी जो दशा हुई होगी मैं उसकी कल्पना कर सकता हूं। इस कल्पना से मेरा दिल हिल उठता है। मै वहां न जा सका, इससे मुझे दुःख होता है। यदि मैं इस वेदना से पार पा गया तो वलिया को तीर्थ मानकर वहां की यात्रा करने की इच्छा रखता हूं। मै चाहता हूं कि इससे वलिया के लोगों को कुछ सान्त्वना मिले। वलिया-जैसे शहरो के वलिदान इस देश को अवश्य मुक्त करेंगे। परमात्मा वलिया के लोगों को कष्ट सहने की और अधिक शक्ति प्रदान करें। मेरी कामना है कि वलिया के उदाहरण से गुजरात के लोगों मे कष्ट-सहन करने की और भी अधिक उत्सुकता पैदा हो।

—गुजराती। न० जी०, ९।२।१९२२।]

५४. गोरखपुर का अपराध

गोरखपुर जिला शायद सवसे वड़ा जिला है। उसमे प्रखर स्वभाव के लोग रहते है। अखवारों मे जो खवरें छपी है उनसे मालूम होता है कि उन्होंने अपने स्वभाव की प्रखरता का उपयोग विपरीत दिशा मे किया है। उन्होंने पुलिस का एक थाना जला दिया;[2] उन्होने इक्कीस निर्दोष सिपाहियों को मार डाला और उनकी लाशे जला दी। इन मरे हुए लोगों में वहां के थानेदार का एक जवान लड़का भी है। अखवारों में जो विवरण छपा है उनके अनुसार ये लोग एक जगह लगी हुई पैंठ या हाट को रोकने के लिए गये थे। पहले थोड़े से लोग गये थे, किन्तु उनको वहां से भगा दिया गया। इसलिए वाद में एक वड़ा दल गया। इस दल में स्वयंसेवक भी थे। मेरे लिए और प्रत्येक समझदार असहयोगी के लिए यह घटना नीचा दिखानेवाली है। वहां से जो खवरे आई है उनसे भी हमारे अहिंसक रहने के सम्वन्ध में शंका होती है।

वारडोली में आन्दोलन का जो श्रीगणेश किया जाने वाला है उसके लिए

---

१. यह यहां नहीं दिया जा रहा है।

२. ४ फरवरी, १९२२ को

यह घटना एक अपशकुन है। शान्ति का और अशान्ति का प्रयोग साथ-साथ नही हो सकता। यदि लोगो को अशान्ति का प्रयोग करना हो तो शान्ति का प्रयोग करनेवाले लोगो को अलग मार्ग ग्रहण करना होगा। जो लोग शान्ति के पुजारी हैं उन्हे अशान्ति को माननेवाली सरकार और जनता दोनो से ही असहयोग करना होगा।

यदि गोरखपुर जिले के इन लोगो का सम्बन्ध असहयोग की लडाई से नही है तो हमे यह स्वीकार करना होगा कि वहा असहयोगियो का प्रभाव जितना अपेक्षित था, उससे बहुत कम हुआ है। प्रत्येक शुभ कार्य मे ऐसे विघ्न तो आ ही जाते हैं। जब अपने लोग मरते हैं तब मेरा हृदय दु खित नही होता अथवा होता भी है तो मैं उसे अपने वश मे रख सकता हू। किन्तु जब एक भी सहयोगी का खून किया जाता है तब मुझे शर्म मालूम होती है और आन्दोलन की प्रगति के सम्बन्ध मे भय पैदा होता है। शान्ति मे विश्वास रखनेवाले प्रत्येक मनुष्य की स्थिति ऐसी ही होनी चाहिए।

यह लेख मैं बम्बई जाते समय लिख रहा हू।[1] भारत-भूषण पण्डित मदन-मोहन मालवीय ने मुझे वहा बुलाया है। कांग्रेस कार्य समिति की बैठक बारडोली मे बुलाई गई है और वह शनिवार को[2] होगी। यह लेख पाठकों के हाथो मे रविवार को पहुचेगा। मैं स्वय सामूहिक सविनय अवज्ञा को मुल्तवी करने की जिम्मेदारी अपने ऊपर लेना नही चाहता, इसलिए मैं इस सम्बन्ध मे कार्य-समिति से सलाह करना चाहता हू। मेरा धर्म अडिग है। उसकी कसौटी ऐसे समय मे हो ही सकती है। मैं जबतक अहिंसा की भावना मे वृद्धि होते देखता हू तबतक तो अनेक जोखिमें उठाने के लिए तैयार हूँ। किन्तु जब मैं यह देखता हू कि कोई दूसरा मेरी प्रवृत्ति का अनुचित उपयोग कर रहा है तब मैं एक पग भी आगे नही उठा सकता।

मैं गोरखपुर से और ज्यादा खबर मिलने की राह देख रहा हू। मैं अपने विचार पाठकों के सम्मुख इसलिए रखता हू कि मैं, इस सम्बन्ध मे, प्रत्येक पाठक की सहायता लेना चाहता हू। यह लडाई नये ढग की है। जो लोग शान्तिमय उपायो मे विश्वास करते हैं उन्हे आत्म-निरीक्षण करना चाहिए। उनको केवल शान्ति का, अहिंसा का ही प्रसार करना होगा। यह लडाई वैर बढाने की नही बल्कि वैर को मिटाने की है, लोगो मे भेदभाव बढाने की नही, बल्कि उनको एक करने की है। यह लडाई ऐसी नही है जिनमे मिश्रित साधन काम मे लाये जा

---

१. ८ फरवरी, १९२२ को

२. ११ फरवरी, १९२२ को

सकें वल्कि ऐसी है जिसमें हमें विवेक से काम लेकर उचित और अनुचित का भेद जानना है और उसको अलग-अलग करना है।

गोरखपुर जिले के लोगों के पाप के लिए मैं सबसे अधिक उत्तरदायी हूं। किन्तु इसके लिए प्रत्येक शुद्ध असहयोगी भी उत्तरदायी है। उनका दुःख हम सबको होना चाहिए। किन्तु इस सम्बन्ध में अधिक विचार तो ज्यादा ख़बर मिलने पर ही किया जा सकता है। ईश्वर भारत की और असहयोगियों की लाज की रक्षा करे।

--गुजराती। न० जी०, १२।२।१९२२।]

० यह लड़ाई नये ढंग की है।

● यह लड़ाई वैर बढ़ाने की नहीं वल्कि वैर को मिटाने की है!

५५. चौरीचौरा का हत्याकाण्ड

ईश्वर की मुझ पर असीम कृपा रही है। उसने तीसरी वार मुझे चेतावनी दी है, कि अभी भारत में वैसी सत्यपरायणता और अहिसा का वातावरण स्थापित नही हो पाया है जैसा कि आवश्यक है। ऐसे और केवल ऐसे ही वातवारण में सविनय कही जा सके, ऐसी सामूहिक अवज्ञा करना उचित माना जा सकता है। उसे सविनय अर्थात् नम्रतापूर्ण, सत्यमूलक, विनीत, सजग तथा स्वेच्छाकृत फिर भी प्रिय, कहा जा सकता है और वह अपराधपूर्ण तथा घृणित कभी भी नही हो सकती।

उसने मुझे १९१९ में जव रौलट अधिनियम-विरोधी आन्दोलन प्रारम्भ किया गया था, चेतावनी दी। अहमदावाद वीरमगाव और खेड़ा में गलतियां हुईं। अमृतसर और कसूर में भी गलतियां हुईं। मैंने अपने कदम वापस ले लिये; इसे अपनी हिमालय-जैसी भारी भूल कहा; ईश्वर और मानव के सामने अपनी पराजय स्वीकार की तथा न केवल सामूहिक सविनय अवज्ञा को वल्कि अपनी वैयक्तिक सविनय अवज्ञा को भी, जिसे मैं जानता हूं कि विनयपूर्ण एवं अहिंसात्मक ही रखने का इरादा था, स्थगित कर दिया।

दूसरी वार वम्वई की घटनाओं के जरिये ईश्वर ने मुझे भयानक चेतावनी दी। उसने १७ नवम्वर को वम्वई की भीड़ की करतूतें मुझे प्रत्यक्ष दिखाईं। भीड़ ने सोचा कि वह असहयोग की भलाई कर रही है। वारडोली में सामूहिक सविनय अवज्ञा तुरन्त प्रारम्भ होनेवाली थी। मैंने उसे वन्द करने का अपना इरादा घोषित किया। इस वार १९१९ से कही अधिक अपमान सहना पड़ा। किन्तु इससे मेरा

भला ही हुआ। मेरा विश्वास है कि आन्दोलन स्थगित करने से राष्ट्र को लाभ ही हुआ। इससे ज्ञात हुआ कि भारत सत्य और अहिसा का पोषक है।

किन्तु अभी मेरे लिए अपमान का सबसे कडवा घूट पीना शेष था। मद्रास ने मुझे चेतावनी भी दी किन्तु मैंने उधर ध्यान नही दिया। पर ईश्वर ने चौरी-चौरा के जरिये मुझे स्पष्ट बताया। मुझे मालूम है कि पुलिस के जिन सिपाहियों की बर्बरतापूर्वक बोटी काट डाली गई, उन्होंने बहुत उत्तेजनात्मक कार्रवाई की थी। उन्होंने इन्स्पेक्टर-द्वारा जनता को दिया गया यह वचन भी भग किया कि उसे तग नही किया जाय। जब जुलूस निकल गया तब पुलिस के सिपाहियो ने पीछे छूटे हुए लोगो को तग किया और उन्हें गालिया दी। लोग सहायता के लिए चिल्लाये। भीड वापस आ गई। पुलिस के सिपाहियो ने गोलिया दागी। उनके पास जो थोडी-सी गोलिया थी वे समाप्त हो गईं। वे सुरक्षा के लिए थाने मे वापस चले गये। इस पर भीड़ ने, जैसा कि मेरे सवाददाता का कहना है, थाने मे आग लगा दी। अब सिपाहियो को, जिन्होंने अपने को अन्दर बन्द कर रक्खा था, अपना जीवन बचाने के लिए बाहर आना पडा और जब वे बाहर आये उन्हे मारकर टुकडे-टुकड़े कर दिया गया और उनके खण्ड-खण्ड शरीरावशेष को आग की प्रचण्ड लपटों मे डाल दिया गया।

यह दावा किया जाता है कि इस पाशविक कृत्य मे किसी असहयोगी का कोई हाथ नही है और न केवल उस समय भीड को उत्तेजित करनेवाली कार्रवाई की गई थी, बल्कि उसे जिले मे पुलिस-द्वारा किये गये भीषण अत्याचारो का भी पता था। किन्तु किसी प्रकार की भी उत्तेजना ऐसे व्यक्तियो की पाशविक हत्या का औचित्य सिद्ध नही कर सकती, जो बिल्कुल असहाय हो गये थे और जिन्होंने दरअसल अपने को भीड की दया पर छोड दिया था। और जब भारत अहिंसक होने का दावा करता है और अहिंसक तरीको से स्वतन्त्रता का सिंहासन प्राप्त करने की आशा रखता है तब भयकर उत्तेजना के बावजूद भीड-द्वारा हिंसा को अपनाना अशुभ बात ही है। मान लीजिए, ईश्वर बारडोली की 'अहिंसक' अवज्ञा को सफल बना देता और सरकार विजेताओ के पक्ष मे गद्दी छोड देती, उस दशा मे उन उपद्रवी तत्वो पर कौन नियन्त्रण रखता जो पर्याप्त उत्तेजना के कारण प्रस्तुत होने पर पाशविक कृत्य करते हों? अहिंसक तरीको से स्वराज्य प्राप्त करने मे यह बात पहले से ही शामिल है कि देश के हिंसक तत्वो पर अहिंसा-द्वारा काबू पा लिया गया है। अहिंसक असहयोगी तभी सफलता प्राप्त कर सकते हैं जब वे भारत के हुल्लडबाजो पर काबू पा लें; दूसरे शब्दो मे जब हुल्लडबाज लोग भी देशप्रेम या धर्म के कारण मन से मन तबतक के लिए हिंसा से दूर रहना सीख लें जबतक कि असहयोग आन्दोलन

चल रहा है। इसलिए चौरीचौरा की दुर्घटना ने मुझे पूर्ण रूप से सजग कर दिया है।

किन्तु शैतान की आवाज बोली—"वाइसराय को भेजे गये आपके घोषणापत्र तथा उनके उत्तर में लिखे गये प्रत्युत्तर का क्या होगा ?" अपमान की यह घूंट सबसे अधिक कड़वी थी। 'बड़े जोश-खरोश के साथ सरकार को धमकी देकर तथा बारडोली के लोगों को वचन देकर दूसरे ही क्षण पीछे हट जाना निश्चित रूप से कायरता है।' इस प्रकार शैतान आमन्त्रित कर रहा था कि सत्य से इन्कार कर दो, इस तरह धर्म तथा स्वयं ईश्वर को अस्वीकार कर दो। मैंने अपनी शंकाएं तथा कठिनाइयां कार्यसमिति तथा उन अन्य साथियों के सामने रक्खीं, जिन्हें मैंने अपने नजदीक पाया। पहले तो वे मुझसे सहमत नही हुए। उनमें से कुछ तो शायद अब भी मुझसे सहमत नही है, किन्तु जैसे विचारशील और क्षमाशील साथी प्राप्त करने का सौभाग्य मुझे प्राप्त हुआ है वैसा शायद ही कभी किसी को हुआ हो। उन्होंने मेरी कठिनाई समझ ली और मेरे तर्कों को धैर्य के साथ सुना। उसका परिणाम कार्य-समिति के प्रस्तावों[1] के रूप में जनता के सामने है। प्रायः सम्पूर्ण आक्रामक कार्यक्रम से बिल्कुल पीछे हट जाना राजनीतिक दृष्टि से भले ही गलत और अबुद्धिमत्ता का काम हो, किन्तु इसमें कोई सन्देह नही कि यह धार्मिक दृष्टि से बिल्कुल सही है, और मै सन्देह करनेवालों को विश्वास दिलाने का साहस करता हूं कि मेरे अपमान से तथा मेरे द्वारा भूल स्वीकार किये जाने से देश को लाभ ही होगा।

मैं यदि किसी सद्गुण का दावा करना चाहता हूं तो वह सत्य और अहिंसा है। मैं यह दावा नही करता कि मुझमें अतिमानवीय शक्ति है। मैं वैसी शक्ति पाना भी नही चाहता। मुझमें भी वैसा ही कलुषित हाड़-मांस है, जैसा कि मेरे किसी कमजोर-से-कमजोर मानव बन्धु में। इसलिए मुझसे भी गलतियां होने की उतनी ही सम्भावना है जितनी किसी और से। सेवा के क्षेत्र में भी मेरी बहुत-सी मजबूरियां हैं, किन्तु उनके अपूर्ण होने पर भी ईश्वर ने उन्हें अब तक सफल बनाया है।

गलती स्वीकार करना झाड़ू के समान है, जो गन्दगी को हटाकर सतह को साफ कर देती है। गलती स्वीकार कर लेने से मैं अपने को अधिक शक्तिशाली अनुभव करता हूं और पीछे हटने पर भी हमारे उद्देश्य में अवश्यमेव प्रगति होगी। हठपूर्वक सीधी राह छोड़कर चलने से मनुष्य कभी अपने उद्दिष्ट स्थान तक नही पहुंचा है।

---

१. कार्य-समिति की बैठक बारडोली में ११ और १२ फरवरी, १९२२ को हुई थी। उसमें ये प्रस्ताव पास हुए थे।

यह कहा गया है कि चौरीचौरा का असर वारडोली पर नहीं पड सकता। यह तर्क दिया जाता है कि वारडोली यदि कमजोर है और यदि वह चौरीचौरा से प्रभावित होकर हिंसा पर उतर आये तभी खतरे की वात है। इस वारे मे मुझे जरा भी सन्देह नही है। मेरे विचार मे वारडोली के लोग भारत मे सबसे अधिक शान्तिप्रिय हैं। किन्तु वारडोली भारत का एक अत्यन्त छोटा भाग है। उसके प्रयत्न तवतक सफल नही हो सकते जवतक कि उसे अन्य भागो से पूरा सहयोग नही मिलता। वारडोली की अवज्ञा तभी सविनय होगी जव कि भारत के अन्य भाग अहिसक रहे। जिस प्रकार दूध से भरे वर्तन मे संखिये का एक छोटा सा कण भी दूध को पीने लायक नही रहने देता, इसी प्रकार चौरीचौरा का घातक विष मिलने से वारडोली की विनय भी अस्वीकार्य हो जायगी। चौरीचौरा भी उसी प्रकार भारत का प्रतिनिधित्व करता है, जिस प्रकार कि वारडोली करता है।

आखिरकार चौरीचौरा भी तो हिंसावृत्ति का एक उग्र लक्षण ही है। मेरे मन मे कभी खयाल नही आया कि जिन स्थानो मे दमनचक्र चल रहा है वहा मानसिक या शारीरिक हिंसा नही होती। जो खयाल आया है वह यह कि दमनग्रस्त क्षेत्रो मे जो भयकर दमन किया जा रहा है, उसके मुकावले जनता द्वारा की जानेवाली हिंसा नगण्य है। मैं अव भी ऐसा मानता हू और 'यग इण्डिया' के पृष्ठो से भी यह वात भलीभाति सिद्ध हो जाती है। निषिद्ध क्षेत्रो मे दृढ निश्चय के साथ सभा करने को मैं हिंसा नही कहता। जिस हिंसा का मैं उल्लेख कर रहा हू, उसका मतलव यदाकदा ईंट-पत्थर फेंकने या धमकिया देने और वल-प्रयोग से है। वस्तुत सविनय अवज्ञा मे उत्तेजना होनी ही नही चाहिए। सविनय अवज्ञा तो चुपचाप कष्ट-सहन की तैयारी मात्र है। उसका प्रभाव आश्चर्यजनक होता है, यद्यपि वह दिखाई नही देता और धीरे-धीरे होता है। किन्तु मेरा विचार था कि थोडी मात्रा मे उत्तेजना तो अपरिहार्य है, अनिच्छा से की गई कुछ हिंसा भी क्षम्य है, अर्थात् किसी हद तक अपूर्ण परिस्थितियो मे भी सविनय अवज्ञा को मैं असम्भव नही मानता था। पूर्ण परिस्थितियो मे तो यदि अवज्ञा सविनय हो तो वह खतरनाक भी नही होती। किन्तु काफी कुछ प्रतिकूल परिस्थितियो के अन्तर्गत वर्तमान आन्दोलन को चलाना वस्तुतः एक खतरनाक प्रयोग है।

चौरीचौरा की दु खद घटना दरअसल वस्तुस्थिति की ओर संकेत करनेवाली घटना है। यह वताती है कि यदि कडी सावधानी न वरती गई तो भारत आसानी से किस ओर जा सकता है। यदि हम हिंसा मे से अहिंसा का विकास नही कर सकते तो यह स्पष्ट है कि हमे जल्दी से अपने कदम पीछे हटा लेने चाहिए और

शान्ति का वातावरण पुनः स्थापित करना चाहिए, अपने कार्यक्रम को पुनर्गठित करना चाहिए और तबतक सामूहिक सविनय अवज्ञा प्रारम्भ करने का विचार छोड़ देना चाहिए ज तक कि हमें यह विश्वास न हो जाय कि सामूहिक सविनय अवज्ञा प्रारम्भ करने पर तथा सरकार के उकसाने पर भी शान्ति कायम रहेगी। हमें इस तरफ से भी आश्वस्त होना चाहिए कि अनधिकृत लोग सामूहिक सविनय अवज्ञा आरम्भ न करें।

अभी तो स्थिति यह है कि कांग्रेस का संगठन ही अपूर्ण है और उसकी हिदायतों का पालन अब भी वेदिली से किया जाता है। हमने अभी तक प्रत्येक गांव में कांग्रेस कमेटियां स्थापित नहीं की हैं। जहां हमने स्थापित की है वहां वे हमारी हिदायतों का पालन पूर्ण रूप से नही करती। हमारी सूची में शायद एक करोड़ से अधिक सदस्य नहीं हैं। फरवरी का आधा मास बीत गया है, लेकिन बहुत से लोगों ने चालू वर्ष का चार आने चन्दा अभी तक अदा नहीं किया है। स्वयंसेवकों के नाम दर्ज करते समय पूरा ध्यान नही दिया जाता। वे अपनी प्रतिज्ञा की सभी शर्तों का पालन नही करते। वे हाथ से कता-बुना खद्दर तक नही पहनते। सभी हिन्दू स्वयंसेवकों ने अभीतक अपने को अस्पृश्यता के पाप से मुक्त नही किया है। उनमें से सभी अब तक हिंसा के दोष से मुक्त नहीं हुए है। उनके जेल जाने से हम न तो स्वराज्य ही प्राप्त कर सकेंगे, न खिलाफत के पवित्र उद्देश्य को सफल बना सकेंगे और न बेईमान सरकारी नौकरों का वेतन बन्द करने की ही योग्यता प्राप्त कर सकेंगे। हममें से कुछ लोग न चाहते हुए भी गलती कर बैठते हैं, किन्तु कुछ दूसरे लोग तो जान-बूझकर पाप करते हैं। यह जानते हुए भी कि वे न तो अहिंसक रहना चाहते हैं और न रह ही सकते है, वे स्वयंसेवक दल में भरती हो जाते हैं। इस तरह हम जिस प्रकार सरकार को झूठा समझते हैं उसी प्रकार हम भी झूठे हैं। सत्य और अहिंसा के प्रति केवल मौखिक सम्मान दिखाकर हमें स्वतन्त्रता के साम्राज्य में प्रवेश करने का साहस नहीं करना चाहिए।

आगे प्रगति के लिए यह आवश्यक है कि सामूहिक सविनय अवज्ञा को स्थगित कर दिया जाय और उत्तेजना को रोका जाय। सच तो यह है कि और अधिक अधःपतन रोकने के लिए भी ऐसा करना अनिवार्य है। इसलिए मैं आशा करता हूं कि आन्दोलन को स्थगित करने से प्रत्येक कांग्रेसी स्त्री-पुरुष न केवल अपने को निराश अनुभव नही करेगा, वलिक यह अनुभव करेगा कि वह अयथार्थता तथा राष्ट्रीय पाप के भार से मुक्त हो गया है।

हमारे अपमान और कथित पराजय पर प्रतिपक्षी गर्व करते रहें। अपनी प्रतिज्ञा भंग करके ईश्वर के प्रति पाप करने की अपेक्षा कायर और कमजोर होने

का दोषी होना कही अच्छा है। अपने प्रति झूठा सिद्ध होने की अपेक्षा ससार की आखो के सामने झूठा सिद्ध होना लाख गुना अच्छा है।

इसलिए सामूहिक सविनय अवज्ञा तथा उन अन्य छोटी-मोटी गति-विधियो को, जिनसे उत्साह कायम रह सकता है, स्थगित करना ही मेरे प्रायश्चित्त के लिए काफी नही है, क्योकि चौरीचौरा मे लोगो ने जो पाशविक हिंसा की है, उसका मै अनैच्छिक रूप मे ही सही, एक उपकरण रहा हू।

मुझे वैयक्तिक रूप से प्रायश्चित्त करना होगा। मुझे एक ऐसा सवेदनशील उपकरण बनना है जो आसपास के नैतिक वातावरण मे होनेवाले सूक्ष्मतम परिवर्तन को स्पष्ट रूप से प्रकट कर सके। मेरी प्रार्थनाओ मे उससे कही अधिक गहरी सचाई तथा नम्रता होनी चाहिए, जितनी कि उनसे अभी प्रकट होती है। और मेरे लिए तो उपवास तथा उसके साथ आवश्यक मानसिक सहयोग के समान सहायक एव शुद्ध करनेवाला कोई उपाय नही है।

मैं जानता हू कि मानसिक प्रवृत्ति ही सब कुछ है। जिस प्रकार प्रार्थना पक्षी की चहचहाहट के समान केवल यान्त्रिक स्वर-विन्यास हो सकती है, उसी प्रकार उपवास भी शरीर को दिया जानेवाला केवल यान्त्रिक कष्ट हो सकता है। इस प्रकार के यान्त्रिक उपाय का वाञ्छित उद्देश्य की सिद्धि के लिए कोई महत्व नही है। फिर, जिस प्रकार यान्त्रिक गायन से कण्ठ सुरीला हो सकता है उसी प्रकार यान्त्रिक उपवास केवल शरीर को शुद्ध कर सकता है किन्तु दोनो मे से अन्तरात्मा को कोई भी स्पर्श नही करेगा।

किन्तु जब पूर्णतर आत्म-प्रकाशन के लिए, शरीर पर आत्मा का प्रभुत्व स्थापित करने के लिए उपवास किया जाता है तब वह सम्बन्धित व्यक्ति के विकास मे अत्यधिक शक्तिशाली सिद्ध होता है। इसलिए गम्भीर चिन्तन के बाद मैंने पाच दिन के सतत उपवास का व्रत लेने का निश्चय किया है। इस बीच मैं जल के अतिरिक्त और कुछ नही लूगा। यह रविवार[1] की शाम को प्रारम्भ हुआ है और शुक्रवार की शाम को समाप्त हो जायगा। कम-से-कम इतना तो मुझे करना ही होगा।

शीघ्र ही अखिल भारतीय काग्रेस की जो बैठक[2] होनेवाली है उसपर मैंने विचार कर लिया है। मैं यह जानता हू कि मेरे पाच दिन के उपवास से भी मेरे बहुत से मित्रो को कितनी अधिक वेदना होगी किन्तु मैं इस प्रायश्चित्त को और स्थगित नही कर सकता और न मैं इसे कम कर सकता हू।

---

१. १२ फरवरी १९२२।

२. यह २४ और २५ फरवरी को दिल्ली मे हुई थी।

मैं अपने सहयोगियों से आग्रह करता हूं कि वे मेरा अनुकरण न करें। उनके मामले में उपवास का कोई कारण नही होगा। वे सविनय अवज्ञा के प्रवर्तक नहीं है। मै उस शल्य-चिकित्सक (सर्जन) की अवाञ्छनीय स्थिति में हूं जो निश्चित रूप से खतरनाक चीर-फाड़ के लिए अनाड़ी सावित हुआ हो। मुझे या तो इसे छोड़ देना होगा या अधिक दक्षता प्राप्त करनी होगी। जहां व्यक्तिगत प्रायश्चित्त मेरे लिए न केवल आवश्यक, बल्कि अनिवार्य भी है वहां कार्य-समिति-द्वारा निर्धारित अनुकरणीय आत्मसंयम धारण करना ही अन्य सभी लोगों के लिए निश्चित रूप से काफी प्रायश्चित्त है। यह कोई छोटा प्रायश्चित्त नहीं है। यदि इसे सच्चे हृदय से किया जाय तो यह उपवास से कई गुना सच्चा और उपयोगी सिद्ध हो सकता है। मन, कर्म और वचन से अहिसा की प्रतिज्ञा को अधिकाधिक पूरा करने या उस भावना का व्यापक रूप से प्रसार करने से अधिक मूल्यवान तथा अधिक फलदायक और क्या हो सकता है? यदि मेरे सभी सहयोगी इस सप्ताह व्यर्थ वाद-विवाद न कर चुपचाप कार्य समिति-द्वारा तैयार किये गये रचनात्मक कार्यक्रम को पूरा करने, जिनके बारे में स्वराज्य-प्राप्ति के लिए कांग्रेस के सत्य और अहिंसा के सिद्धान्त को समझने का भरोसा हो ऐसे लोगों के नाम कांग्रेस की सदस्य-सूची मे दर्ज करने, प्रतिदिन धर्म समझकर निर्धारित समय तक चर्खा चलाने, समृद्धि और स्वतन्त्रता के प्रतीक रूप चर्खे का प्रत्येक घर में प्रचार करने, अछूतों के अभावों के बारे में जानने के लिए उनके घरो मे जाने, राष्ट्रीय पाठशालाओं मे अछूत बच्चे दाखिल करने के लिए प्रोत्साहित करने, हर वर्ग के स्त्री-पुरुषों के लिए सामान्य मंच ढूढ़ने के विशेष उद्देश्य से सामाजिक संगठन करने, मद्य के अभिशाप से बर्बाद घरों में जाने तथा राष्ट्रीय पाठशालाओं और वास्तविक पंचायतों को समुचित आधार पर स्थापित करने मे व्यस्त रहे तो यह देखकर मुझे भोजन से भी अधिक तृप्ति उपलब्ध होगी। कार्यकर्त्ता उपवास करने की अपेक्षा इन गति-विधियों में अपने को व्यस्त रक्खें तो ज्यादा अच्छा होगा। इसलिए मैं आशा करता हूं कि कोई भी व्यक्ति झूठी हमदर्दी दिखाने के लिए अथवा उपवास के आध्यात्मिक मूल्य की गलत धारणा-वश उपवास करने में मेरा अनुकरण नही करेगा।

जहां तक हो सके सभी तरह के उपवास तथा प्रायश्चित्त गुप्त ही रहने चाहिए। किन्तु मेरा उपवास, प्रायश्चित्त और दण्ड दोनों ही है, और दण्ड तो सार्वजनिक रूप मे ही दिया जाता है। यह मेरे लिए तो प्रायश्चित्त है और उन लोगों के लिए, जिनकी मैं सेवा करने की कोशिश करता हूं तथा जिनके लिए मै जीना और मरना भी पसन्द करता हूं, एक दण्ड है। उन्होंने कांग्रेस के कानून के विरुद्ध अनिच्छा-पूर्वक पाप किया है, यद्यपि वे केवल हमदर्दी दिखानेवाले थे, कांग्रेस से उनका कोई

वास्तविक सम्बन्ध नही था। शायद उन्होने पुलिस के सिपाहियो को अपने देशवासियो तथा साथी मानवो को मेरा नाम लेकर ही बोटी-बोटी काटकर मारा है। अपने प्रियजनो को प्रेमपूर्वक दण्ड देने का एकमात्र उपाय स्वय कष्ट सहन करना है। मैं यह भी नही चाहता कि वे गिरफ्तार किये जाय। यह मैं चाह भी नही सकता। किन्तु मैं उन्हे यह वताना चाहूगा कि उनके काग्रेस सिद्धान्त को भग करने के कारण मुझे कष्ट उठाना होगा। जो लोग अपने को दोपी अनुभव करते हैं और अव पश्चात्ताप कर रहे हैं, उन्हें मेरी सलाह है कि वे दण्ड प्राप्त करने के लिए अपने को स्वेच्छया सरकार को सौंप दें और स्पष्ट रूप से अपना अपराव स्वीकार कर लें। मुझे आशा है कि गोरखपुर जिले के कार्यकर्त्ता अपरावियो को ढूढने तथा उन्हे स्वयमेव अपनी गिरफ्तारी कराने को मजवूर करने के लिए कुछ भी उठा नही रखखेंगे। किन्तु चाहे हत्यारे मेरी सलाह को स्वीकार करें या न करें, मैं उन्हे यह वताना चाहूगा कि उन्होंने स्वराज्य के आन्दोलन मे वहुत वडा रोडा अटकाया है। वारडोली मे आन्दोलन को स्थगित करने का कारण वनकर उन्होंने उसी उद्देश्य को हानि पहुचाई है जिसकी वे शायद सेवा करना चाहते थे। मैं उन्हे यह भी वताना चाहूगा कि यह आन्दोलन न तो हिंसा को छिपाने के लिए कोई आवरण है और न उसकी पूर्व तैयारी ही। मैं आन्दोलन को हिंसक होने या हिंसा का अग्रदूत वनने से वचाने के लिए हर हालत मे हर प्रकार का अपमान, हर प्रकार की यन्त्रणा, पूर्ण वहिष्कार, यहा तक कि मृत्यु को भी सहन करूगा। मैं अपना प्रायश्चित्त सार्वजनिकरूप से इसलिए भी कर रहा हू कि इस तरह अपने-आपको वन्दियो के साथ वन्दीगृह मे रहने के सौभाग्य से भी वञ्चित कर रहा हू। हमारा प्रमुख प्रश्न एक वार फिर से दूसरा हो गया है। अव हम सरकारी विज्ञप्तियो के वापस लिये जाने तथा वन्दियो के मुक्त किये जाने पर जोर नही दे सकते। चौरीचौरा के अपराव के लिए उन्हे और हमे कष्ट सहन करना ही होगा। चाहे हम उसे चाहे या नही, यह घटना जीवन की एकता को सिद्ध करती है। सभी लोगो को, जिनमे शासक-वर्ग भी शामिल हैं, इसका फल भोगना होगा। चौरीचौरा काण्ड से सरकार का रवैया निश्चित रूप मे और भी सख्त हो जायगा और पुलिस और भी भ्रष्ट हो जायगी, और अव जो प्रतिशोध लिया जायगा उससे लोगो का हौसला और भी टूटेगा। आन्दोलन को स्थगित करने तथा प्रायश्चित्त करने से हम वापस उसी स्थिति मे आ जायगे जिस स्थिति मे चौरीचौरा की दुर्घटना से पहले थे। सख्ती के साथ अनुशासन का पालन करने तथा आत्मशुद्धि से हम उन नैतिक सिद्धान्तो को पुनः प्राप्त कर लेंगे जो सरकारी विज्ञप्तियो को वापस लेने तथा वन्दियो को मुक्त करने की माग करने के लिए आवश्यक है।

मैं अपने सहयोगियों से आग्रह करता हूं कि वे मेरा अनुकरण न करें। उनके मामले में उपवास का कोई कारण नहीं होगा। वे सविनय अवज्ञा के प्रवर्तक नहीं है। मैं उस शल्य-चिकित्सक (सर्जन) की अवाञ्छनीय स्थिति में हूं जो निश्चित रूप से खतरनाक चीर-फाड़ के लिए अनाड़ी सावित हुआ हो। मुझे या तो इसे छोड़ देना होगा या अधिक दक्षता प्राप्त करनी होगी। जहां व्यक्तिगत प्रायश्चित्त मेरे लिए न केवल आवश्यक, वल्कि अनिवार्य भी है वहां कार्य-समिति-द्वारा निर्धारित अनुकरणीय आत्मसंयम धारण करना ही अन्य सभी लोगों के लिए निश्चित रूप से काफी प्रायश्चित्त है। यह कोई छोटा प्रायश्चित्त नही है। यदि इसे सच्चे हृदय से किया जाय तो यह उपवास से कई गुना सच्चा और उपयोगी सिद्ध हो सकता है। मन, कर्म और वचन से अहिंसा की प्रतिज्ञा को अधिकाधिक पूरा करने या उस भावना का व्यापक रूप से प्रसार करने से अधिक मूल्यवान तथा अधिक फलदायक और क्या हो सकता है? यदि मेरे सभी सहयोगी इस सप्ताह व्यर्थ वाद-विवाद न कर चुपचाप कार्य समिति-द्वारा तैयार किये गये रचनात्मक कार्यक्रम को पूरा करने, जिनके वारे में स्वराज्य-प्राप्ति के लिए कांग्रेस के सत्य और अहिंसा के सिद्धान्त को समझने का भरोसा हो ऐसे लोगों के नाम कांग्रेस की सदस्य-सूची में दर्ज करने, प्रतिदिन धर्म समझकर निर्धारित समय तक चर्खा चलाने, समृद्धि और स्वतन्त्रता के प्रतीक रूप चर्खे का प्रत्येक घर में प्रचार करने, अछूतों के अभावों के वारे में जानने के लिए उनके घरों में जाने, राष्ट्रीय पाठशालाओं में अछूत बच्चे दाखिल करने के लिए प्रोत्साहित करने, हर वर्ग के स्त्री-पुरुषों के लिए सामान्य मंच ढूढने के विशेप उद्देश्य से सामाजिक संगठन करने, मद्य के अभिशाप से वर्बाद घरों में जाने तथा राष्ट्रीय पाठशालाओं और वास्तविक पंचायतों को समुचित आधार पर स्थापित करने में व्यस्त रहें तो यह देखकर मुझे भोजन से भी अधिक तृप्ति उपलव्ध होगी। कार्यकर्त्ता उपवास करने की अपेक्षा इन गति-विधियों में अपने को व्यस्त रक्खें तो ज्यादा अच्छा होगा। इसलिए मैं आशा करता हूं कि कोई भी व्यक्ति झूठी हमदर्दी दिखाने के लिए अथवा उपवास के आध्यात्मिक मूल्य की गलत धारणा-वश उपवास करने में मेरा अनुकरण नहीं करेगा।

जहां तक हो सके सभी तरह के उपवास तथा प्रायश्चित्त गुप्त ही रहने चाहिए। किन्तु मेरा उपवास, प्रायश्चित्त और दण्ड दोनों ही है, और दण्ड तो सार्वजनिक रूप से ही दिया जाता है। यह मेरे लिए तो प्रायश्चित्त है और उन लोगों के लिए, जिनकी मैं सेवा करने की कोशिश करता हू तथा जिनके लिए मैं जीना और मरना भी पसन्द करता हूं, एक दण्ड है। उन्होने कांग्रेस के कानून के विरुद्ध अनिच्छा-पूर्वक पाप किया है, यद्यपि वे केवल हमदर्दी दिखानेवाले थे, कांग्रेस से उनका कोई

पत्र की एक प्रति भेजी है, जो उन्होंने गोविन्द के नाम भेजा था। पाठको के लिए उसका अनुवाद प्रस्तुत है। मूल पत्र हिन्दी मे ही है

"गोविन्द को आशीर्वाद। ईश्वर तुम्हे चिरायु करे। तुम्हारा पत्र मिला। अन्यथा व्यस्त होने के कारण मैं इससे पहले उसका उत्तर नहीं दे पाया। मैं तुमसे नाराज नहीं हूं। मन मे ऐसी कोई आशंका रखकर दुःखी मत हो। हां, माडर्न हाई स्कूल पर धरना देना मुझे पसन्द नहीं आया। स्कूल कोई ऐसा स्थान तो है नहीं जहां पाप पलता हो, या जो सामाजिक जीवन मे विष घोलता हो कि बच्चो को वहां जाने से रोकने के लिए धरना देना पड़े। परन्तु तुम्हारा और कृष्ण का सार्वजनिक सभा मे जाना और उपस्थित जनो को कांग्रेस का सन्देश सुनाना सर्वथा उचित था। सरकार ने जो नीति अपनाई है वह बिल्कुल बेजा है। आशा है, वह नीति बदली जायगी। तुम बिल्कुल प्रसन्न रहो। तुमने अपनी गिरफ्तारी के बारे में श्री गांधी को जो पत्र लिखा था वह उन्होंने मेरे पास भेज दिया।'

उपर्युक्त पत्र १३ जनवरी का है।

पण्डितजी ने इसी तारीख को एक पत्र कृष्णकान्त मालवीय को भेजा था, जो इस प्रकार है.

"खेद है कि इधर कुछ दिनों मे इतना अधिक व्यस्त रहा कि तुम्हे और गोविन्द को पत्र लिख ही नहीं सका। इस समय मैं रात को ग्यारह बजे पत्र लिखने बैठा हूं।

सभा में तुम्हारा बोलना बिल्कुल ठीक था। ऐसी किसी आशंका से दुःखी मत रहना कि मैंने तुम्हारे उस काम को पसन्द नहीं किया। मैंने अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटी (बल्कि कहना चाहिए विषय-निर्धारिणी समिति) की अहमदाबाद की बैठक में कहा था कि यदि सरकार कांग्रेस स्वय सेवक-संस्थाओ को 'गैर कानूनी' करार देने की अधिसूचना वापस नहीं लेती तो ऐसे स्वयसेवको का उसका उल्लघन करके जेल जाना बिल्कुल उचित होगा।

मैंने अन्य कुछ लोगो के साथ मिलकर जो सम्मेलन बुलाया है उसकी बैठक कल होगी। साथ के पत्र से तुम्हें सम्मेलन के उद्देश्य का पता चल जायगा। श्री गांधी और शंकरन् नायर, सर विश्वेश्वरैया और अन्य कई लोग आ पहुंचे हैं। आज कई घण्टे तक आरम्भिक ढंग की चर्चा चलती रही। आशा है, उसका कुछ अच्छा ही परिणाम निकलेगा।

पूर्णतया प्रसन्नचित्त रहना। जेल मे अपने किसी भी सहयोगी को ऐसा कोई खयाल न होने देना कि तुम्हारी सजा ६ महीने की सख्त कैद से बदलवाकर सादी कैद कराने मे मेरा कोई हाथ है। मैंने तुम लोगो की सजाओ के बारे मे किसी से भी कोई शिकायत नहीं की, हालांकि इनकी क्रूरता देखकर मुझे दुःख अवश्य हुआ है।

यदि हम इस दुःखद घटना से पूरी शिक्षा ग्रहण करें तो हम अभिशाप को वरदान में बदल सकते है। मन और कर्म दोनों से सत्यपरायण और अहिंसक वनकर तथा स्वदेशी अर्थात् खद्दर के कार्यक्रम को पूरा करके हम पूर्ण स्वराज्य की स्थापना और पंजाब तथा खिलाफत के साथ किये गये अन्यायों का प्रतिकार कर सकते है। फिर तो इसके लिए किसी व्यक्ति को सविनय अवज्ञा भी नही करनी पड़ेगी।

—अंग्रेजी। यं० इं०, १६।२।१९२२।]

- मैं यदि किसी सद्गुण का दावा करना चाहता हूं तो वह सत्य और अहिंसा है।
- गलती स्वीकार करना झाड़ू के समान है, जो गन्दगी को हटाकर सतह को साफ कर देती है।
- वस्तुतः सविनय अवज्ञा में उत्तेजना होनी ही नहीं चाहिए। सविनय अवज्ञा तो चुपचाप कष्ट-सहन की तैयारी मात्र है।
- मानसिक प्रवृत्ति ही सब कुछ है।
- जिस प्रकार प्रार्थना पक्षी की चहचहाहट के समान केवल यान्त्रिक स्वर-विन्यास हो सकती है, उसी प्रकार उपवास भी शरीर को दिया जानेवाला केवल यान्त्रिक कष्ट हो सकता है।
- जब पूर्णतर आत्म-प्रकाशन के लिए तथा शरीर पर आत्मा का प्रभुत्व स्थापित करने के लिए उपवास किया जाता है तब वह सम्बन्धित व्यक्ति के विकास में अत्यधिक शक्तिशाली सिद्ध होता है।
- मन, कर्म और वचन से अहिंसा की प्रतिज्ञा को अधिकाधिक पूरा करने से अधिक मूल्यवान तथा फलदायक और क्या हो सकता है?
- सभी तरह के उपवास तथा प्रायश्चित्त गुप्त ही रहने चाहिए।
- प्रेमपूर्वक दण्ड देने का एक मात्र उपाय स्वयं कष्ट सहन करना है।

५६. आदर्श पिता और आदर्श पुत्र

कुछ सप्ताह पहले मैंने तीनों मालवीयों के जेल जाने के सम्बन्ध में कुछ लिखा था और वतलाया था कि गोविन्द मालवीय ने अपने अन्तःकरण की आवाज अनसुनी न कर पाने पर किस विनम्रता और अपने पिता के प्रति किस भक्ति भाव से, पण्डित-जी के न चाहने पर भी, जेल-यात्रा की थी। अव गोविन्द ने मुझे पण्डितजी के उस

अपनी ओर कर सकेंगे जो आज हमारी असहिष्णुता की वदौलत हमारे खिलाफ खड़े हैं। जब बहुसख्यक लोग असहिष्णु हो जाते हैं तब लोग उनको डरते हैं, उनका अविश्वास करते हैं, और अन्त मे उनसे घृणा करने लगते हैं, और यह ठीक भी है। यदि असहयोगियो के पक्ष मे जनता का बहुत बडा भाग हो, जैसा कि मुझे विश्वास है कि है, तो अवश्य ही उनके लिए यही उचित है कि अपने मतो पर पूरी दृढता से डटे रहने के साथ-साथ अल्पसख्यक लोगो के साथ सहनशीलता, दया और आदर का वर्ताव रक्खें। असहिष्णुता एक प्रकार की कमजोरी है और उसके द्वारा इस आरोप की पुष्टि होती है कि यद्यपि इस आन्दोलन का उद्देश्य द्वेष पैदा करना नही है पर उससे द्वेष फैलता अवश्य है। मुझे आशा है कि ऊपर उद्धृत दोनो पत्र असहयोगियो को अपने तईं सावधान कर देंगे।

गोरखपुर की दुर्घटना असहिष्णुता के सवल उदाहरण के सिवा और क्या थी? हम अक्सर इस वात को भूल जाते हैं कि हमारा एक कर्त्तव्य यह भी है कि हम पुलिस और फौजवालो को भी अपने मत का वना लें। हम आतक के वल पर ऐसा कभी नही कर सकते। लोगो-द्वारा सामूहिक तौर पर किये गये उन अमानुषिक कार्यों ने पुलिस मे व्याप्त अन्धेरगर्दी और भ्रष्टाचार को और भी वढा दिया है, अब उसने वदले की कार्रवाई शुरू कर दी है जिससे हमे सदमा पहुचा है। हमें यह वात सदैव ध्यान मे रखनी चाहिए कि भ्रष्ट सरकार और भ्रष्ट पुलिस का होना सूचित करता है कि सरकार और पुलिस के भ्रष्टाचार के सामने सिर झुकानेवाले लोगो मे भी भ्रष्टाचार मौजूद है। आखिरकार इस कथन मे भी वहुत-कुछ सत्य है कि "यथा राजा तथा प्रजा"। इस वात को समझने के लिए यह जरूरी नही कि हम धार्मिक दृष्टि से अहिंसा के सिद्धान्त के कायल ही हो पर हमे पुलिस और फौज को, जिनमें ज्यादातर हमारे ही देश-भाई हैं, दया और सहनशीलता के द्वारा, वल्कि उनकी पाशविकता को भी सहकर अपनी तरफ करना है। निश्चय ही अधिकाश मामलो मे वे वेचारे जानते ही नही हैं कि वे कर क्या रहे हैं।

—अंग्रेजी। य० इ०, २३।२।१९२२।]

- असहिष्णुता एक प्रकार की कमजोरी है।
- भ्रष्ट सरकार और भ्रष्ट पुलिस का होना सूचित करता है कि सरकार और पुलिस के भ्रष्टाचार के सामने सिर झुकानेवाले लोगो मे भी भ्रष्टाचार मौजूद है।

"मैं इलाहाबाद लौटने पर तुम दोनों से जेल में मुलाकात करने की सोच रहा था। अब तो तुम्हें आगरा जेल भेज दिया गया है, इसलिए अभी कुछ दिनों तक मुलाकात शायद न हो पाये। पर इससे कोई विशेष अन्तर नहीं पड़ता। तुम्हें यह जानकर दिली खुशी होगी कि अगले कुछ महीनों के लिए मेरे हाथ में बहुत काफी काम है। शेष अगले पत्र में।"

गोविन्द ने पत्र की एक प्रति मेरे पास भेजते हुए लिखा है कि सम्मेलन बुलाने के सिलसिले में भेजा गया परिपत्र कृष्णकान्त को नहीं दिया गया था। उसने यह भी लिखा था कि मैं पण्डितजी की अनुमति लिये विना दोनों पत्रों को प्रकाशित न करूं। इन दोनों पत्रों को मैंने सार्वजनिक दृष्टि से महत्वपूर्ण समझा, और इसलिए मुझे लगा कि इन्हें प्रकाशित कर देना चाहिए। सो आवश्यक अनुमति लेकर मैंने दोनों पत्र जनता के लाभ के लिए प्रकाशित कर दिये हैं। मेरी दृष्टि में ये दोनों पत्र वड़े कीमती हैं। ये इस वात के उदाहरण हैं कि कौटुम्बिक जीवन कैसा होना चाहिए। मालवीय परिवार के भिन्न-भिन्न व्यक्तियों में परस्पर कितनी सहिष्णुता है तथा तरुण लोग किस प्रकार अपनी स्वतन्त्रता को कायम रखते हैं और किस प्रकार वुजुर्ग लोग उन्हें पूर्ण स्वतन्त्रता प्रदान करते हैं। इसके अतिरिक्त इन पत्रों से पण्डितजी के चरित्र की उदात्तता प्रकट होती है। यदि आज वह जेल में नहीं है, तो इसका कारण यह नहीं कि वह जेल से डरते हैं, वल्कि यह है कि अभी उन्हें जेल का मार्ग ठीक नहीं दिखाई दिया है। उनके निकट सम्पर्क में रहनेवाला ऐसा कौन है जो यह नहीं जानता कि वह आजकल परस्पर-विरोधी कर्त्तव्यों को लेकर उठे मानसिक द्वन्द्व से कितने अधिक पीड़ित रहते हैं और कितने चिन्ताग्रस्त रहते हैं? मुझे अक्सर यह लगा करता है कि यदि उन्हें जेल भेज दिया जाय तो इन लगातार चिन्ताओं और झंझटों से, जो कि उनके जैसा सार्वजनिक जीवन व्यतीत करनेवाले के पीछे लगी रहती है, उन्हें निश्चय ही छुटकारा मिल जायगा।

मैंने इन दोनों पत्रों को इसलिए प्रकाशित किया है कि असहयोगी लोग आम तौर पर सहिष्णुता का महत्व समझें। मेरा यह विश्वास है, और मैं चाहता हूं कि पाठक भी इसे स्वीकार करें कि पण्डितजी के सदृश देश की सेवा करनेवाला कोई भारतीय आज मौजूद नहीं है, तथापि "इण्डिपेण्डण्टों" में तथा नरम दल में ऐसे भी लोग हैं जो हमसे सहमत नहीं हो पाते इसलिए नहीं कि वे कमजोर हैं, वल्कि इसलिए कि उनकी दृढ़ कर्तव्य-भावना का यही तकाजा है। यदि हम अपने प्रतिपक्षियों के प्रति आवश्यक विनम्रता, उदारता और सहनशीलता के भाव ही अपने हृदय में रक्खें और उनकी ईमानदारी पर सन्देह न करें, तो मैं जानता हूं कि हम कितने ही ऐसे सज्जनों को

अपनी ओर कर सकेंगे जो आज हमारी असहिष्णुता की बदौलत हमारे खिलाफ खड़े हैं। जब बहुसख्यक लोग असहिष्णु हो जाते हैं तब लोग उनको डरते हैं, उनका अविश्वास करते हैं, और अन्त मे उनसे घृणा करने लगते हैं, और यह ठीक भी है। यदि असहयोगियो के पक्ष मे जनता का बहुत बडा भाग हो, जैसा कि मुझे विश्वास है कि है, तो अवश्य ही उनके लिए यही उचित है कि अपने मतो पर पूरी दृढता से डटे रहने के साथ-साथ अल्पसख्यक लोगो के साथ सहनशीलता, दया और आदर का बर्ताव रक्खें। असहिष्णुता एक प्रकार की कमजोरी है और उसके द्वारा इस आरोप की पुष्टि होती है कि यद्यपि इस आन्दोलन का उद्देश्य द्वेष पैदा करना नही है पर उससे द्वेप फैलता अवश्य है। मुझे आशा है कि ऊपर उद्धृत दोनो पत्र असहयोगियो को अपने तईं सावधान कर देंगे।

गोरखपुर की दुर्घटना असहिष्णुता के सबल उदाहरण के सिवा और क्या थी? हम अक्सर इस बात को भूल जाते हैं कि हमारा एक कर्त्तव्य यह भी है कि हम पुलिस और फौजवालो को भी अपने मत का बना लें। हम आतक के बल पर ऐसा कभी नही कर सकते। लोगो-द्वारा सामूहिक तौर पर किये गये उन अमानुपिक कार्यों ने पुलिस मे व्याप्त अन्धेरगर्दी और भ्रष्टाचार को और भी बढा दिया है, अब उसने बदले की कार्रवाई शुरू कर दी है जिससे हमे सदमा पहुचा है। हमे यह बात सदैव ध्यान मे रखनी चाहिए कि भ्रष्ट सरकार और भ्रष्ट पुलिस का होना सूचित करता है कि सरकार और पुलिस के भ्रष्टाचार के सामने सिर झुकानेवाले लोगो मे भी भ्रष्टाचार मौजूद है। आखिरकार इस कथन मे भी बहुत-कुछ सत्य है कि "यथा राजा तथा प्रजा"। इस बात को समझने के लिए यह जरूरी नही कि हम धार्मिक दृष्टि से अहिंसा के सिद्धान्त के कायल ही हो पर हमे पुलिस और फौज को, जिनमे ज्यादातर हमारे ही देश-भाई हैं, दया और सहनशीलता के द्वारा, बल्कि उनकी पाशविकता को भी सहकर अपनी तरफ करना है। निश्चय ही अधिकाश मामलो मे वे बेचारे जानते ही नहीं हैं कि वे कर क्या रहे हैं।

—अंग्रेजी। य० इं०, २३।२।१९२२।]

- असहिष्णुता एक प्रकार की कमजोरी है।
- भ्रष्ट सरकार और भ्रष्ट पुलिस का होना सूचित करता है कि सरकार और पुलिस के भ्रष्टाचार के सामने सिर झुकानेवाले लोगो मे भी भ्रष्टाचार मौजूद है।

५७. खादी टोपी पर रोक

लखनऊ के मौलवी जफरुलमुल्क अलवी से, जो इस समय फतेहगढ़ जेल में कैद की सजा काट रहे हैं, निम्नलिखित पत्र पाकर मुझे बड़ी खुशी हुई। पाठकों को शायद याद भी न हो कि वह उन लोगों में से हैं जो दमन के सबसे पहले शिकार हुए थे। उनकी गिरफ्तारी की आशा नही की जाती थी, इसलिए उससे बड़ी सनसनी फैली थी। वह साहित्यिक रुचि के व्यक्ति है और बिल्कुल निवृत्त जीवन बिता रहे थे। अपनी रचनाओं में वह बड़े निडर और सत्यवादी रहे हैं। इसीलिए उन्हे गिरफ्तार किया गया। उनके पत्र से पाठकों को ज्ञात हो सकेगा कि वह जेल मे कितनी सावधानी से[1] अपना कर्त्तव्य निभा रहे हैं। दूसरे बहुत से असहयोगी कैदियों की भांति वे भी जेल में अनुशासन बनाये रखने मे अधिकारियों की सहायता कर रहे हैं। पत्र से स्वयं ही सारी बात स्पष्ट हो जायगी:

"मैंने यहां बिताये पिछले पन्द्रह-महीनों के दौरान आपको पत्र लिखने से जान-बूझ कर अपने-आप को रोके रखा, क्योंकि मैं अपनी स्थिति से पूरी तरह सन्तुष्ट था।...

"लेकिन असहयोगी बन्दियों के जेल-जीवन से सम्बन्धित कुछ ऐसी बात पैदा हो गई हैं जिन्हें मै आपके ध्यान में लाना चाहता हूं।...

"दूसरी बात कुछ ज्यादा गम्भीर है। दो असहयोगियों को, जिन्हें हाल में ही सादी कैद को सजा दी गई है और इसलिए उन्हें अपने निजी कपड़े पहनने की इजाजत है, गांधी टोपी पहनने से मना कर दिया गया।...

"मैंने सम्बन्धित अधिकारी से बात की और उसने मुझे विश्वास दिलाया कि व्यक्तिगत रूप से इस सम्बन्ध में उसका विशेष आग्रह नहीं है। वास्तव में उसने जिला मजिस्ट्रेट की इच्छा का पालन किया है।...

"जेल के नियमों के अनुसार सभी साधारण कैदी अपने निजी कपड़े ही पहनते है।...इस प्रकार यह स्पष्ट है कि नई रोक का अभी हाल में ही आविष्कार किया गया है, तथा यह बिल्कुल आपत्तिजनक और अपमानकारी है।...

"संयुक्त-प्रान्त के जेलों के इंस्पेक्टर-जनरल जल्दी ही इस जेल के मुआइने पर आने वाले हैं और यह मामला उनके सामने पेश किया जायगा। आशा है, वह इसे सन्तोषजनक रूप से हल कर देंगे, बशर्ते कि स्थानीय सरकार के किसी आदेश ने उनके विवेक को पहले ही न जकड़ लिया हो। यदि ऐसा हुआ तो निश्चय ही हमारा

---

१. यहां केवल कुछ अंश ही दिये जा रहे हैं।

यह कर्त्तव्य होगा कि हम इस आदेश को न मानें, चाहे इसका जो भी परिणाम हो।"

खद्दर की टोपी के साथ मुश्किल असल मे सिद्धान्त की है, जिस पर किसी प्रकार का आत्म-समर्पण नही किया जा सकता। सादी कैद की सजा वाले कैदियो को अपनी पोशाक पहनने का अधिकार है। इसलिए उन्हे अपनी टोपियो मे वञ्चित करना उनका अपमान करना है। मुझे आशा है कि मौलवी साहब की आशा के अनुरूप इन्स्पेक्टर जनरल ने इस समस्या को निपटा दिया होगा।

जेलो मे सरकार से लडाई लडनी पडे, यह कोई खुशी की बात नही है। उन्हें तो ऐसे तटस्थ क्षेत्र की तरह माना जाना चाहिए जहा हर प्रकार की शत्रुता समाप्त हो जाती है। मृत्यु अनेक प्रकार के विवादो को समाप्त कर देती है। कैद भी एक प्रकार की मृत्यु है—नागरिक स्वतन्त्रता की। क्या यह सम्भव नही कि राजनीतिक वैर को जेल की दीवार के बाहर ही रहने दिया जाय? परन्तु मैं जानता हू कि इस सरकार से जो भद्रता का केवल स्वाग भरती है, लोहे के सीखचो के पीछे भी सभ्य व्यवहार की आशा करना दुराशा मात्र है। हमसे स्वतन्त्रता का जो इतना बडा मूल्य लिया जा रहा है, उसके कारण यह हमे और भी अधिक प्रिय होगी।

इन कटु वाक्यो को लिखते समय मेरी अन्तरात्मा मुझसे पूछती है कि क्या मैं सरकार के साथ न्याय कर रहा हू। क्या मैं नही जानता कि आगरा जेल मे बन्दीगण खासा मजे का जीवन बिता रहे हैं,? लेकिन तुरन्त ही मेरा मन उत्तर देता है—सभी जेल आगरा जेल नही हैं। जो कुछ दिया जाता है, वह छीन भी लिया जाता है। जिसे आसानी से रोका जा सकता है, उसे तो दबा ही लिया जाता है। पण्डित मोतीलाल जी मानो मुझसे कह रहे है, "मेरे आराम का महत्व ही क्या है, जब कि मेरे पडोसी को, सिर्फ इसलिए कि वह एक नामी बैरिस्टर नही है, वे मामूली सुविधाए भी प्राप्त नही जो मुझे प्राप्त हैं।"

—अंग्रेजी। य० इ०, २३।२।१९२२।]

● जेल भी एक प्रकार की मृत्यु है—नागरिक स्वतन्त्रता की।

५८. हमारी ढील

एक विश्वसनीय व्यक्ति ने मुझे लिखा है कि इलाहाबाद और बनारस मे स्वयसेवको की भरती के मामले मे उनकी योग्यताओ का कोई ख्याल नही रखा गया है। मुश्किल से पचास स्वयसेवक ऐसे दिखाई पडते हैं जो सिर से पैर तक

हाथ-कते खद्दर के वस्त्र पहने हों। कुछ ऊपर से खद्दर पहने रहते है, पर अन्दर विदेशी वस्त्र ही पहनते हैं। उसी पत्र-लेखक का कहना है कि कुछ स्वयंसेवक जब-तब शराब भी पी लेते है और अहिंसा में उनके विश्वास की कोई जांच नहीं की गई है और बहुत-से मामलों में तो स्थानीय कांग्रेस के पदाधिकारियो का उन पर कोई नियन्त्रण ही नही रहा है। अधिकृत रिपोर्ट के अनुसार संयुक्त प्रान्त में ६६,००० स्वयंसेवकों की भरती हुई है। यदि यह सच है कि वहां इतने सारे स्वयंसेवक भरती किये गये है और उनमें से अधिकांश कांग्रेस की शर्तों का पालन नही करते तो उनका न होना ही ज्यादा अच्छा था। मैने जो शिकायतें की है, वे अपने-आप में बहुत भयंकर हैं किन्तु ऐसा न समझना चाहिए कि मेरी कुल शिकायतें उतनी ही हैं, जितनी का मैने उल्लेख किया। कलकत्ता से भी ऐसा ही समाचार मिला है और वह भी एक विश्वस्त सूत्र से ही। उसका कहना है कि जेल जाने वालों मे सैकड़ों ऐसे है जो कांग्रेस की प्रतिज्ञा के बारे में कुछ भी नही जानते, खद्दर नही पहनते, और इतना ही नही, वे भारतीय मिलों का ही नही बल्कि विदेशी वस्त्र पहिने हुए जेल गये है और अहिंसा की उन्हें तनिक भी शिक्षा नही मिली है। रोहतक से एक व्यक्ति ने लिखा है कि उस जिले में कई जगह के स्वयंसेवक कांग्रेस पदाधिकारियों के आदेश नही मानते और उनको बड़ी मुश्किल में डाल देते है।

यदि पूर्वोक्त शिकायतों में दस प्रतिशत भी ठीक हों तो मुझे डर है कि शायद हम देश में आई इस आश्चर्यजनक जागृति के साथ कदम मिलाकर नही चल पाये हैं, और कांग्रेस में आनेवाले इन नये लोगों को भलीभाति संभाल नही पाये हैं। हो सकता है कि इसमें दोष किसी का भी न हो। आम सभाओं और स्वयंसेवकों के बारे में सरकार ने धड़ाधड़ अधिसूचनाएं जारी करके हमारे लिए कठिन अवसर उपस्थित कर दिया था। उसकी चुनौती को स्वीकार करना था और वह की गई। नये और अनुभवहीन लोगों के सिर काम की जिम्मेदारी आती गई और उन्हें ऐसी कठिन परिस्थिति का सामना करना पड़ा जिसमें जनता से दूर, जेल चले जाने वाले उन अनुभवी लोगों को भी काम करने मे कठिनाई महसूस होती।

इस दलील के पक्ष मे तो बहुत-कुछ कहा जा सकता है। इसके लिए किसी पर दोषारोपण करने की आवश्यकता नही। लेकिन हमें वस्तुस्थिति की ओर से आंख न मूद लेनी चाहिए, बल्कि दृढ़ता और साहस के साथ उसका सामना करना चाहिए और हमें अपनी कमियां दूर करनी चाहिए। संसार में ऐसी किसी सेना को आज तक विजय नही प्राप्त हुई है जिसके सैनिको में सैनिकों के आवश्यक गुण न हों। शान्ति-सेना में तो उसके सैनिकों के लिए निर्धारित गुणों की और भी अधिक आवश्यकता है। यह कहने मे काम नही चलेगा कि आदर्श बहुत ऊंचा है। जो

अफसर निश्चित मान से कम दर्जे के लोगो को जान-बूझकर भरती करता है वह अपने को अप्रामाणिकता का दोषी बनाता है। यदि निश्चित शर्तों पर रंगरूट न मिलें, तो उसे प्रधान दफ्तर मे सूचना दे देनी चाहिए, किन्तु उनका उल्लघन तो उसे कदापि न करना चाहिए।

मैंने स्वय ही पिछले साल दिसम्बर मे कांग्रेस पण्डाल मे मौजूद सभी श्रोताओ को कांग्रेस-द्वारा निर्धारित शर्तें पूरे विवरण के साथ पढकर सुनाई थी। अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटी और कार्यसमिति ने उन पर सविस्तार चर्चा की थी और फिर मैंने कई औपचारिक चर्चाओ मे विभिन्न प्रान्तो के प्रतिनिधियो और दर्शको को वे शर्तें समझाई थी। इसलिए यह दलील नही मानी जा सकती कि शर्तें इतनी कठिन हैं कि उनका पालन नही किया जा सकता। प्रतिनिधियो को उनकी पूरी-पूरी जानकारी थी। लगभग ६००० प्रतिनिधि मौजूद थे। वे अपने-अपने क्षेत्रो के प्रतिनिधि थे, इसलिए शर्तें पूरी करने मे कोई कठिनाई नही होनी चाहिए थी।

यदि केवल ३०० स्वयसेवक ऐसे हो जो शर्तों को खूब अच्छी तरह समझते हो और उनका पालन करते हो, तो उतने ही मेरे लिए काफी हैं, पर इसके बजाय यदि ३०,००० स्वयसेवक ऐसे हो जो न तो शर्तों को जानते हो और न उनकी परवाह ही करते हो, तो मुझे उनके भरोसे किसी लड़ाई का नेतृत्व करना स्वीकार न होगा। कारण स्पष्ट है। पहली स्थिति में मेरे पास ३०० ऐसे पक्के सिपाही होंगे जो मेरी सहायता करेंगे, जब कि दूसरी स्थिति में ३०,००० लोगो का भार मुझे वहन करना होगा। वे स्वयसेवक नही होंगे, साधारण आदमी भर होंगे, जिनका वजन मुझे ढोना होगा। पहले ३०० स्वयसेवक तो मेरी सहायता करेंगे, मेरी आज्ञा मानेंगे, लेकिन ३०,००० लोग मेरी आज्ञाओ का पालन नही करेंगे और उनका भार मेरे लिए असहनीय बन सकता है। अतएव हमे कार्यसमिति के तमाम प्रस्तावो के अनुसार पूरी तरह काम करने का निश्चय कर लेना चाहिए। ये प्रस्ताव हमारे उस त्वरित और व्यावहारिक कार्यक्रम के अभिन्न अग हैं जिनकी समुचित पूर्ति पर ही भारत का भविष्य, खिलाफत और पजाब के अन्यायो का प्रतिकार और स्वराज्य की प्राप्ति का दारोमदार है। यदि प्रस्तावो का पूरा-पूरा अमल न किया जाय तो उनका कोई मतलब ही नही होता। बीते हुए दिनो मे, जब सरकार को सम्बोधित हमारे प्रस्तावो पर वह अमल नही करती थी तब, हम शिकायत करते थे। लेकिन अब शिकायत कौन करे, जब हम अपनी ही इच्छा से सोच-समझ कर स्वीकार किये गये अपने प्रस्तावो पर स्वय ही अमल नहीं करते। इसलिए मैं कांग्रेस तथा खिलाफत से सम्बद्ध तमाम सगठनो को दृढ़तापूर्वक सलाह देता हूँ कि वे अपने-अपने क्षेत्रो मे तमाम शर्तों के पूरे-पूरे पालन पर अवश्य ध्यान दें। यदि वे ऐसा

नही करेंगे तो आन्दोलन को खतरे में डालने की जिम्मेदारी उन्हीं पर होगी, किसी और पर नहीं। अपने भविष्य को बिगाड़ना या बनाना हमारे ही हाथ में है।
—अंग्रेजी। यं० इं०, २३।२।१९२२।]

० अपने भविष्य को बिगाड़ना या बनाना हमारे ही हाथ में है।

५९. सरकार-द्वारा प्रतिवाद : जेलों में कोड़ों की मार

सम्पादक
'यंग इण्डिया'

प्रिय महोदय,

१७ फरवरी, १९२२ के अपने पत्र संख्या ४०२ सी के बाद अब मैं आपका ध्यान पत्र के रूप में लिखे गये श्री महादेव देसाई के उस लेख की ओर खींचना चाहता हूं जिसका शीर्षक आपने "जेलों की मार" दिया है और जिसे आपने गत १९ जनवरी के अपने अंक में छापा है। उस पत्र में कोड़े लगाने की छः घटनाओं का विवरण दिया गया है और भाव यह निकलता है कि उसका सम्बन्ध राजनीतिक कैदियों से था। उनमें से दो स्थानों पर कुछ व्यक्तियों के नाम दिये गये हैं। ये नाम है कैलाशनाथ और लक्ष्मीनारायण शर्मा। नैनी सेण्ट्रल जेल केसुपरिण्टेण्डेण्ट से पूछताछ की गई...मैं दावे से कह सकता हूं कि कैलाशनाथ या लक्ष्मीनारायण को, जिनके नाम आपके द्वारा प्रकाशित पत्र के लेखक ने दिये है, नैनी जेल में कभी कोड़े नही लगाये गये, और न उन्हें कोई अन्य सजा ही दी गई है। कैदी नवम्वर १४८८ कैलाशनाथ को, कठोर कारावास का दण्ड भोगते हुए भी काम से इन्कार करने पर केवल 'चेतावनी' दी गई थी।

लखनऊ
१८-२-१९२२

भवदीय
जे० ई० गोंडगे
प्रचार आयुक्त

सरकार का यह साफ इन्कार नितान्त अविश्वसनीय है। जो वक्तव्य विशुद्ध चरित्र वाले एक जन-सेवी द्वारा दिये गये हैं उनका खण्डन पूर्ण और निष्पक्ष जांच कराये बिना कदापि स्वीकार नही किया जा सकता, विशेष कर जब यह खण्डन ऐसे व्यक्तियों द्वारा प्रस्तुत किया गया हो जिनका उसमें कोई स्वार्थ निहित है। मैं

पाठकों का ध्यान इस तथ्य की ओर दिलाना चाहता हू कि इलाहाबाद के 'इण्डिपेण्डेण्ट' मे इस आशय का एक वक्तव्य छपा है कि जेल के एक अधिकारी ने श्री लक्ष्मीनारायण को कोडे लगाने की बात एक काग्रेसी के आगे स्वीकार कर ली है। सम्भव है कि जेल-अधिकारी का 'कोडे लगाने' की बात से इन्कार करना वाक्छल ही हो। 'यग इण्डिया' मे जो पत्र छपा है, वह अनुवाद है। गुजराती मे हण्टर लगाने, कोडे लगाने और बेंत लगाने के लिए एक ही शब्द है। मैं अधिकारियो की अनधिकृत शारीरिक दण्ड से इन्कार करने की आदत से वाकिफ हू। क्या सरकार यह चाहती है कि यदि जेल के रजिस्टर में शारीरिक दण्ड की बात दर्ज नही है, तो लोगो को यह मान लेना चाहिए कि वह दिया ही नही गया? इस प्रतिवाद को छापकर निश्चय ही मेरी उद्विग्नता और बढ गई है। क्योकि इससे अमानुषिकता जारी रखने और प्रतिवादो-द्वारा उस पर पर्दा डालने का इरादा जाहिर होता है। प्रचार-आयुक्त अपराधी पक्षो के ऐसे प्रतिवाद भेजकर, जिनकी प्रमाणो-द्वारा पुष्टि नही की गई है, अपने कर्तव्य का पालन ठीक तरह नही कर रहे हैं।

—अंग्रेजी। यं० इं०, २।३।१९२२।]

६०. देहरादून की घटना

सम्पादक
'यग इण्डिया'

प्रिय महोदय,

. भारत सरकार की विज्ञप्ति के अपने प्रत्युत्तर मे आपने मेरे कानूनी दमन के उदाहरण देते हुए सातवें स्थल पर इस प्रकार लिखा है—देहरादून मे एक लडके पर गोली चलाई गई और वहा एक सार्वजनिक सभा को जबरदस्ती तितर-बितर किया गया. .

. . इससे स्पष्ट ध्वनि यह निकलती है कि लडके पर गोली सरकारी अधिकारियो ने चलाई थी। शायद आपका सकेत २४ दिसम्बर १९२१ को गोली चलने की उस घटना की ओर है जिसमे मैडन नाम के एक नौजवान यूरोपीय ने एक मुसलमान युवक पर गोली चलाई थी। मैडन सरकारी कर्मचारी नही है। दुर्घटना किसी निजी झगडे के कारण हुई थी। . मैडन पर मुकदमा चलाया गया और भारतीय दण्ड सहिता की धारा ३०७, ३२६ के अधीन उसे सेशन सुपुर्द कर दिया गया . . .

सार्वजनिक सभा को क्रूरतापूर्वक और जबरदस्ती तितर-बितर करने के आरोप के सम्बन्ध में, निःसन्देह, आपको गलत सूचना मिली है। तथ्य इस प्रकार है।

(१) स्वयंसेवकों के जुलूस देहरादून में एक भारी मुसीबत बन गये थे और उनका रवैया कई मौकों पर बहुत ही भड़काने वाला होता था।

(२) मजिस्ट्रेट की अनुमति से, पुलिस अधीक्षक ने कुछ इलाकों में उन पर पाबन्दी लगा दी। ऐसा असहयोगियों के हित में ही किया गया था, क्योंकि जनता में कुछ लोग इस बारे में अधीर हो उठे थे।

(३) स्थानीय उग्रपन्थी पत्र 'गढ़वाली' ने इन प्रदर्शनों की बुद्धिहीनता और मूर्खता पर टीका-टिप्पणी की थी।

(४) स्वयंसेवकों ने पुलिस अधीक्षक के आदेश की अवज्ञा करने का निश्चय किया...।

(५) सभा को तितर-बितर करने के लिए बहुत ही थोड़ा बल प्रयोग किया गया था और किसी को चोट नहीं आई।...

भवदीय

जे० ई० गोंडगे

लखनऊ १५ फरवरी

प्रचार-आयुक्त ने गोली चलने की घटना के सम्बन्ध में निश्चय ही मेरी गलती पकड़ी है। मुझे अधिक सावधान रहना और यह बताना चाहिए था कि गोली चलाने वाला कोई सरकारी कर्मचारी नहीं था। मैं अब यह महसूस कर रहा हूं कि उसकी चर्चा ही अप्रासंगिक और सरकार के प्रति अन्यायपूर्ण थी। गोली चलने की इस घटना का गैर-कानूनी दमन से कोई सरोकार नहीं है। मैं इस गलती के लिए क्षमा माँगता हूं और अधिकारियों को यह विश्वास दिलाता हूं कि वह जान-बूझकर नही की गई थी।

परन्तु दूसरे प्रतिवाद का मुझ पर कोई प्रभाव नहीं पड़ सका। मैं पहले तो, बल-प्रयोग की आवश्यकता को अस्वीकार करता हूं, और दूसरे यदि मेरे संवाददाता को भेजे हुए बयान पर यकीन किया जाय तो जो बल-प्रयोग हुआ, वह, आवश्यकता से बहुत अधिक था। जनता इस सरकारी प्रतिवाद पर विश्वास नही कर सकती। मुझे आशा है कि गोली चलाने की घटना को लेकर मुझसे जो भूल हुई है उसका उपयोग सभा को जबरदस्ती तितर-बितर करने के विवरण को गलत या कम महत्वपूर्ण बताने में न किया जायगा। गोली चलाने की घटना के विवरण में जो भूल हुई उसका मुख्य कारण तथ्यों का ठीक-ठीक न समझा जाना था।

—अंग्रेजी। यं० इं०, २।३।१९२२।]

६१. भगवानदास के पत्र पर टिप्पणी

मुझे वावू भगवानदास[1] का पत्र[2] प्रकाशित करते हुए खुशी हो रही है। काग्रेस की स्वराज्य-सम्वन्धी योजना तो तभी वन सकती है जव काग्रेस स्वराज्य लेने की स्थिति में आ जायगी। आज कोई नही कह सकता कि तव काग्रेस क्या करेगी। पर मैंने वावू भगवानदास को वचन दिया है कि मैं स्वराज्य मे अपनी योजना निश्चित ही प्रकाशित करूगा। मैं जानता हू कि स्वराज्य-सम्वन्धी मेरी कल्पना के वारे मे लोगो के दिमाग मे तरह-तरह की धारणाए हैं। मैं सिर्फ इतना चाहता हू कि मुझे थोडा समय दिया जाय। तवतक मैं अपने सम्माननीय देशवासियो को यह यकीन दिला देना चाहता हू कि पूजीपतियो के खिलाफ मेरे मन मे कोई वात नही है। मैं हिंसा मे विश्वास नही करता इसलिए मेरे मन मे उनके विरुद्ध कोई योजना हो ही नही सकती। मैं इतना अवश्य चाहता हू कि पूजीपति और मजदूर भी पूरी तरह ईमानदारी वरतें। मैं ऐसे पूजीवाद का जरूर विरोव करूगा जो मुट्ठी-भर लोगों के लाभ के लिए देश की सम्पत्ति का शोषण करने का साधन वनाया जाता हो। फिर चाहे वे पूजीपति विदेशी हो या देश के। पर हम पहले से ही किसी योजना की कल्पना न करें।

—अग्रेजी। यं० इं०, ८।५।१९२४।]

६२. गुरुकुल कांगड़ी में चर्खा

इस गुरुकुल के विद्यार्थियो को मैंने उनके वार्षिकोत्सव के समय एक पत्र भेजा था। उसके उत्तर मे एक पत्र कई दिन हुए मिला है। गुरुकुल के वालको का प्रेम चर्खे पर कैसा है, यह प्रकट करने के लिए मैं पत्र का थोडा अश पाठको के सामने उपस्थित करता हू:

"यद्यपि आपके सन्देश के लिए यह उत्तर वहुत ही अपूर्ण है, यह हम अच्छी तरह समझते हैं—हम अपने काते हुए इस थोडे-से सूत की श्रद्धापूर्ण भेंट आपके

1. (१८६९-१९५६), लेखक, दार्शनिक व काशी विद्यापीठ के आचार्य।
2. इसमे गांधी जी से अनुरोध किया गया था कि वह 'यंग इण्डिया'-द्वारा इस वात का सकेत दें कि भारत को किस प्रकार के स्वराज्य की जरूरत है।" पत्र के पूरे भाग के लिए देखिए परिशिष्ट।

पूज्य चरणों में रखना चाहते है। यह सूत इसी राष्ट्रीय सप्ताह में (७ अप्रैल से १३ अप्रेल तक) सात दिन तक चौवीस घण्टे अखण्ड सतचक्र चलाकर हमने इसी प्रयोजन के लिए कातकर तैयार किया कि हमारी तुच्छ भेंट स्वीकार हो। इसमें (चतुर्थ श्रेणी के) हममें से छोटे बालकों का काता हुआ भी कुछ सूत अलग रखा है। यद्यपि यह अखण्ड चर्खा चलाकर नही काता गया है तथापि हम समझते हैं कि आप से प्रेम रखनेवाले ये छोटे बालक अवश्य ही आपके प्रेमपात्र हैं। अतः इनका प्रेमपूर्वक काता हुआ यह राष्ट्रीय सप्ताह का सूत भी आपके चरणार्पित होने के योग्य ही है।"

—हि० न० जी०, १।६।१९२४।]

६३. फिर बारावंकी के बारे में

वारावंकी-सम्वन्धी मेरी टिप्पणी पर मुझे दो ऐसे पत्र मिले है, जिनसे उस विपय पर वहुत प्रकाश पड़ता है। उनमें एक मुसलमान सज्जन का लिखा हुआ है और दूसरा हिन्दू सज्जन का। यद्यपि वे विल्कुल स्वतन्त्र रूप से अलग-अलग लिखे गये है तो भी उनमें जिन तथ्यों का विवेचन है उनके बारे में पत्र-लेखक एक मत है। दोनों में कुछ नई वातें है। दोनों निष्पक्ष दृष्टि से लिखे हुए दिखाई देते हैं। मैं उन चिट्ठियों को इसलिए प्रकाशित नही कर रहा हूं कि उनके प्रकाशन से कोई लाभ नही होनेवाला है। जो वातें उनमे वताई गई है, उनसे लेखकों को छोड़कर किसी की नेकनामी नही होती। फिर भी एक बात विल्कुल साफ है कि नगरपालिका पर कब्जा करना वहां के हिन्दुओं और मुसलमानों के बीच वैमनस्य का कारण बन गया है। यदि असहयोग की वात जाने दें तो भी मुझे तो विल्कुल साफ दिखाई देता है कि जहां हिन्दुओं और मुसलमानों में हार्दिक एकता नही, असहयोगी फिर वे चाहे हिन्दू हों या मुसलमान, नगरपालिका या जिला वोर्डो में प्रवेश न करे। जहां एक पक्ष उनमें जाने के लिए तैयार हो, वहां भी दूसरे पक्ष के लोग उससे दूर ही रहें। कहते हैं, नगरपालिका का यह अशोभन विवाद शुरू होने से पहले तक दोनों जातियों के लोग पूरे मेल-मिलाप के साथ रहते थे। पर अव इस चुनाव के कारण केवल नगरपालिका के प्रतिपक्षियों के वीच ही नही वल्कि सारे शहर में तनाव फैल गया है। मुझे पूरी आशा है कि वारावंकी नगर अपनी पुरानी साम्प्रदायिक सद्भावना को फिर से स्थापित करके अपने खोये हुए यश को पुनः प्राप्त कर लेगा।

—अंग्रेजी। यं० इं०, १०।७।१९२४।]

६४. पाठ्य-पुस्तकों की जब्ती

सयुक्त प्रान्त की सरकार ने इस मास की १५ तारीख को निम्नलिखित विज्ञप्ति जारी की है.

"१८९८ के पाचवें कानून के खण्ड ९९ क में दिये गये अधिकारों के अनुसार सपरिषद गवर्नर घोषित करते हैं कि पण्डित रामदास गौड़-द्वारा लिखित और बैजनाथ केड़िया हिन्दी पुस्तक एजेन्सी, १२६ हैरीसन रोड कलकत्ता—द्वारा प्रकाशित और वणिक प्रेस, कलकत्ता मे मुद्रित पाठ्य-पुस्तक स० ३, ४, ५ और ६ की तमाम प्रतिया सम्राट की ओर से जब्त कर ली गई हैं। इसके सिवा इन पाठ्य-पुस्तको की किसी अन्य स्थान पर छपी दूसरी तमाम प्रतियां या उनमे से ली गई सामग्री भी जब्त कर ली गई हैं क्योंकि स्थानिक सरकार की राय है कि इन पाठ्य-पुस्तकों में राजद्रोहात्मक सामग्री है, जिसका प्रकाशित करना भारतीय दण्ड-विधान के खण्ड १२४ क के अनुसार दण्डनीय है।"

ये पाठ्य-पुस्तकें कोई तीन साल से जनता के सामने हैं। राष्ट्रीय शालाओ मे उनका विस्तृत प्रयोग होता है। वे नगर-पालिकाओ की शालाओ मे भी चलती रही हैं। इसलिए प्रान्तीय कांग्रेस कामेटी ने उचित ही आचार्य रामदास गौड को इस पर बधाई दी है, इन पुस्तको को निर्दोष बताया है और इस सरकारी हुक्म के होते हुए भी उनको बनाये रखने की सिफारिश की है। इससे लोगो के इस भ्रम का निराकरण हो जाता है कि अब सरकार ने असहयोगियो के खिलाफ मनमानी कार्रवाई करने की नीति छोड दी है। सरकार का कथन है कि इन पुस्तको मे ऐसे पाठ हैं जिनसे भारतीय दण्ड-विधान का खण्ड १२४ क भग होता है। वह लेखक पर मुकदमा चला कर उन्हे सजा दिला सकती थी। तभी उसका इन पुस्तको को जब्त करना न्यायोचित भी कहा जा सकता था। मैंने इन पाठ्य-पुस्तकों के सभी पाठ पढ लिये है, मुझे तो वे सरकारी दृष्टिकोण से भी बिलकुल निरापद मालूम होती हैं। सरकार का लोगो के प्रति कम-से-कम इतना कर्तव्य तो था ही कि वह बता देती कि इन पुस्तको मे आपत्तिजनक सामग्री क्या है, जिससे लोग इतना मानकर भी कि सरकार मनमाने अधिकार का निस्सन्देह उपयोग कर सकती है, इस बात पर विचार कर सकते हैं कि सरकार का यह आदेश न्यायपूर्ण है या अन्यायपूर्ण। परन्तु मौजूदा हालत मे तो इस नतीजे पर पहुंचे बिना नहीं रहा जा सकता कि सरकार पाठ्य-पुस्तको की बढती हुई लोकप्रियता को पसन्द नहीं करती और अनुचित रीति से अपने उन प्रतिपालित लोगो को फायदा पहुँचाना चाहती है जिनकी पाठ्य-पुस्तकें आचार्य गौड की पाठ्य-पुस्तकों की प्रतियोगिता मे पीछे पड गई होंगी।

यदि पुस्तकें सचमुच राजद्रोहात्मक होती तो उसके लम्बे-चौड़े खुफिया विभाग की ओर से यह बात जरूर उसके सामने पेश कर दी गई होती। इतने दिनों के बाद पुस्तकों का जब्त किया जाना मेरे इस निष्कर्ष की पुष्टि करता है। मैं संयुक्तप्रान्त की सरकार को आमन्त्रित करता हूं कि वह अपने इस फैसले के सम्पूर्ण कारण सर्वसाधारण के सामने पेश करें। मुझे यह जानकर खुशी होगी कि मैंने जो निष्कर्ष निकाला है वह ठीक न था। मैं समिति के सभापति को भी सलाह देता हूं कि वह सरकार से इसके कारण पूछें और यदि समिति को सरकार का फैसला ठीक दिखाई दे तो मैं आचार्य रामदास गौड़ को सलाह दूंगा कि उन पुस्तकों में आवश्यक संशोधन कर दें या उसकी बिक्री बन्द कर दें।

——अंग्रेजी। यं० इं०, ३१।७।१९२४।]

६५. तुरन्त कार्रवाई[1]

पण्डित जवाहरलाल नेहरू ने संयुक्तप्रान्त की सरकार को प्रोफेसर रामदास गौड़ की हिन्दी पाठ्य-पुस्तक के जब्त किये जाने के बारे में नीचे लिखा पत्र भेजा है:

"संयुक्त प्रान्तीय कांग्रेस कमेटी का ध्यान संयुक्त प्रान्तीय सरकार द्वारा जारी किये गये उस नोटिस की ओर आकर्षित किया गया है जिसमें सरकार ने १८८८ के अधिनियम ५ के खण्ड ९९ क के अन्तर्गत प्रोफेसर रामदासगौड की हिन्दी पाठ्य-पुस्तकों की संख्या ३, ४, ५ और ६ की सभी प्रतियों और उनके सभी उद्धरणों को भी प्रतिबन्धित घोषित कर दिया है। ये पुस्तकें कुछ वर्षों से बहुतेरी पाठशालाओं में प्रचलित हैं। इन पुस्तकों में मुख्यतया हिन्दी के विशिष्ट लेखकों के लेख ही संकलित हैं। यह समझना कठिन है कि भारतीय दण्ड संहिता के खण्ड १२४ क के अनुसार पुस्तकों के कौन-कौन अंश या अनुच्छेद आपत्तिजनक माने गये हैं। मैं आपका बड़ा कृतज्ञ होऊंगा यदि आप यह बतलाने की कृपा करें कि इन पुस्तकों के कौन से अनुच्छेद या अंश सरकार की राय में आपत्तिजनक हैं, जिनके कारण वे किताब जब्त की गई हैं। हमारी प्रान्तीय कमेटी इस पर गौर करेगी और यदि उसे यह विश्वास हो जायगा कि ये अंश वास्तव में अनुचित हैं तो वह प्रोफसर रामदासगौड़ को निश्चित रूप से सलाह देगी कि वह अपनी पुस्तकों से उन हिस्सों को निकाल

१. देखिए 'पत्र : जवाहरलाल नेहरू को', २७।७।१९२४।

दें। मुझे बड़ी खुशी होगी, यदि आप कृपा करके इस पत्र का उत्तर जल्दी देंगे, क्योंकि ये पुस्तकें मेरी कमेटी से सम्बन्ध रखनेवाली कितनी ही पाठशालाओ में चल रही हैं।"

पण्डितजी ने एक ऐसा ही पत्र सयुक्तप्रान्त के शिक्षा-विभाग के मन्त्री के नाम भी भेजा है। जनता आगे की कार्रवाई को उत्सुकता के साथ देखेगी। इसी बीच पुस्तक-प्रकाशक ने इस हुक्म को रद्द कराने के लिए कानूनी कार्रवाई शुरू कर दी है। ये पुस्तकें हजारो की सख्या मे बिक चुकी हैं। ऐसी हालत मे इन तमाम पुस्तको को जब्त करते फिरना सरकार के लिए कठिन होगा। लडके-लडकिया अपने आप उन्हे नष्ट कर दें तो बात दूसरी है। अभी तक तो इस सिलसिले मे कोई कार्रवाई नही हो रही है। बल्कि पुस्तकें अभीतक ज्यो की त्यो पाठशालाओ मे चल रही हैं। लेकिन सरकार के पास तो बहुतेरी तरकीबें होगी, और वह मौका पाते ही लोगो को गिरफ्त मे ले लेगी जिनके पास ये जब्तशुदा पुस्तकें मिलेंगी। लोग इस बात को जानकर खुश होंगे कि पुस्तको के विद्वान लेखक ने अपना सर्वाधिकार नही रक्खा है।

—अंग्रेजी। यं० इ०, १४।८।१९२४।]

६६. काशी में कताई

अध्यापक रामदास गौड काशी की म्युनिसिपल पाठशालाओ मे चर्खे का प्रचार कर रहे है। उन्होने अपने काम की रिपोर्ट भेजी है, जिससे जाना जाता है कि उन्होंने किस प्रकार वहा लडको मे चर्खे का प्रवेश कराया। पहले तो उन्होंने ४० पुराने चर्खे और धुनकने के धुनहे आदि खरीदे। फिर उन्होंने १३ शिक्षकों को सूत कातना सिखाया। उन शिक्षको ने दूसरे साथी शिक्षको को बताया। इस तरह कुछ ऊपर एक महीने मे १७५ शिक्षक खासे कताई के उस्ताद बन गये। गौडजी की धर्मपत्नी और कन्या ने इसमे इनकी सहायता की। [illegible] अभिमान के साथ कहते हैं कि हर एक पाठशाला मे कोई चर्खा-मास्टर अलग रक्खा जाता तो कम से कम १०,०००) साल खर्च उठाना पडता [illegible] ५-६ सप्ताह तक मैंने अपना सिर्फ ४ घण्टा समय मौजूदा शिक्षको को कातना [illegible] मे लगाया और एक समस्या हल हो गई। आगे आप कहते हैं [illegible] शिक्षक नही रह गया है जो कातना या धुनाना न जानता हो [illegible] किसी स्त्री या पुरुष को शिक्षक की जगह नहीं दी जायगी, जो [illegible] और

कातना न जानता होगा।" गौड़जी अपनी आगे की तजवीज इस तरह बयान करते हैं—

"जब यह कठिनाई हल हो गई तब मैंने बोर्ड में एक ब्योरेवार तजवीज पेश की कि २६ अपर प्राइमरी स्कूलों में ३५० चर्खे दाखिल किये जायं, कम-से-कम ७०० लड़कों को धुनकना और कातना सिखाया जाय, ६ कर्घे बुनाई के लिए जारी किये जायं, एक बुनाई-शिक्षक, एक निरीक्षक, एक बढ़ई और इतना कपास दिया जाय जिससे हर विद्यार्थी आध घण्टे तक रोज काम कर सके। इसके लिए ६०००) प्रति वर्ष दरकार है। पर बोर्ड इस पर पशोपेश में पड़ गया और दो महीने तक इस सवाल को आगे टालता रहा। आखिर पिछली २६ जुलाई को बोर्ड ने एक साल के लिए ३०००) मंजूर किया। ऐसी हालत में मुझे कपास की मद प्रायः बिल्कुल निकाल देनी पड़ी और दूसरे मदों में भी इस तरह काट-छांट करनी पड़ी जिससे काम छोटे पैमाने पर मजे में चल सके। अब मैं सिर्फ ३०० चर्खे और ६०० चर्खे आश्रम के नमूने के मंगा रहा हूं। आश्रम में मैंने जो कुछ देखा उसके अनुसार कुछ थोड़ा सुधार कर देने से, मैं उम्मीद करता हूं कि एक हजार लड़के-लड़कियां कातना सीख जायंगे और रोज चर्खा कातकर अच्छा सूत निकाल सकेंगे। अब सिर्फ चर्खों के बन जाने की इन्तजारी है; वे तो बनते ही बनते बनेंगे। पर इस बीच में लड़के-लड़कियों के मां-बाप और पालकों से प्रार्थना कर रहा हूं कि वे कपास का इन्तजाम अपने घर से कर दिया करें। चर्खा वगैरह चीजें मैं दूंगा; जरूरी बात मैं बता दिया करूंगा और वे सिर्फ कपास का इन्तजाम करेंगे। सूत के मालिक वे रहेंगे और अगर वे चाहें तो हमें देकर खादी बनवा लेंगे। मैं सिलाई सिखाने का भी इन्तजाम कर रहा हूं जिससे खादी की सिलाई सस्ती हो जाय।"

लोग इस प्रयोग को दिलचस्पी और हमदर्दी के साथ देखेंगे। मुझे आशा करनी चाहिए कि अन्य शिक्षक भी प्रोफेसर रामदास गौड़ का अनुकरण करेंगे।

—अंग्रेजी। य० इं०, ४।९।१९२४। हि० न० जी० ७।९।१९२४।]

६७. दो टिप्पणियाँ

१. इलाहाबाद और...

मेरे उपवास और एकता परिषद के होते हुए भी इलाहाबाद और जबलपुर में फिसाद और मारपीट हुई है। यह खयाल तो किसी ने भी न किया था कि

मानो परिषद अथवा उपवास के जादू से तमाम दगे एकदम वन्द हो जायगे। परन्तु मैं इतनी आशा जरूर रखता हू कि पत्रकार लोग ऐसे दगो के वारे मे कलम रोक कर और पक्षपात छोडकर लिखेंगे। मैं यह भी आशा रखता हू कि दोनो जातियो के और तमाम दलो के अगुवा उनके असली कारणो को खोज निकालने में, उनका उपाय करने मे और सर्व-साधारण के सामने सही व्यौरा प्रकाशित करने मे परस्पर सहयोग करेंगे।

२ गुरुकुल कांगडी

वाढ ने तो इस साल चारो ओर सत्यानाश कर मारा है। गुरुकुल भी, जो स्वामी श्रद्धानन्द जी के धैर्य और आत्म-त्यागपूर्वक किये गये प्रयत्नो का कीर्ति-चिह्न है, गगाजी की वाढ के शिकार होने से नही वचा है। उनके तथा उस महान सस्था के व्यवस्थापक और विद्यार्थियो के साथ मेरा हृदय गहरी सहानुभूति प्रदर्शित करता है। मुझे आशा है कि चन्दे के लिए की गई अपील का उत्तर लोग तुरन्त ही उदारतापूर्वक देंगे।

६८. किसे राजविद्रोहात्मक कहें?

अध्यापक रामदास गौड की पोथियो मे जो कुछ अन्य प्रचलित पुस्तकों मे है, उसके सिवा और कुछ नही है, यह मानकर भी इलाहावाद हाईकोर्ट ने उन्हे राजद्रोहात्मक कहा है। मुद्दई को उनसे ३००) खर्च भी दिलाया जायगा। ये पोथिया छपने के ३ वर्ष वाद जव्त की गई हैं। मैं इतना तो मानता हू कि केवल समय वीत जाने के कारण सदोप वस्तु निर्दोप नही हो जाती। किन्तु यह पूछना भी तो अनुचित नही है कि सरकार ने इस दोप को इतने दिनो तक अछूता ही क्यो रहने दिया? सरकार ने ऐसा समय चुना है जव कि असहयोग घटती पर है। यह अनुमान अनुचित नही है। असल प्रश्न यह उठता है कि अध्यापक रामदास गौड अव क्या करें या वे माता-पिता व स्कूल, जो उन पोथियो का व्योहार करते हैं, क्या करें? इस प्रश्न का उत्तर देना सहज काम नही है। हम लोग असहयोग मुल्तवी करने जा रहे हैं और इस कारण सविनय भग भी। इसलिए अव इस तरह के [illegible] महासभा से नैतिक समर्थन नही पा सकते। प्रत्येक व्यक्ति या सस्था अपने दायित्व पर ही कुछ कर सकती है। फैसले मे पोथियो के उद्धृत अशो के तीन भाग किये गये हैं

१ वे अश जो सरकार के प्रति घृणा उत्पन्न करनेवाले [illegible] हैं।

२. वे अंश जो पश्चिमी सभ्यता और इसलिए यूरोपियनों के प्रति घृणा उत्पन्न करानेवाले कहे जाते हैं।

३. वे अंश जो भिन्न-भिन्न धर्मावलम्बी मनुष्यों के प्रति घृणा उत्पन्न करानेवाले कहे जाते हैं।

पहले तो मैं यह कहूंगा कि पूर्वापर सम्बन्ध तोड़ कर जहां-तहां से उद्धृत अंशों के सहारे कोई भी पुस्तक आपत्तिजनक बताई जा सकती है। जहां तक मुझे मालूम है जजों को इसके सिवा और प्रकार का मसाला नही मिला था। दूसरे यों तो प्रायः सब भारतीय समाचारपत्र राजद्रोही कहे जा सकते है, क्योंकि वे कानून के द्वारा स्थापित सरकार के प्रति (पद्धति के विरुद्ध, मनुष्यों के विरुद्ध नहीं) अप्रीति का प्रचार करते हैं। प्रत्येक भारतवासी ने इस सरकार के खिलाफ़ अपनी आवाज़ उठाई है। और वे या तो उसका सुधार करना वा मिटा ही देना चाहते है। जहां तक पश्चिमी सभ्यता से सम्बन्ध है, हिन्दू धर्मग्रन्थों में से उसके निन्दा और निषेधात्मक बड़े-बड़े भयंकर वचन पेश किये जा सकते हैं। मेरी पुस्तिका, जिसमें से पश्चिमी सभ्यता-सम्बन्धी अंश उद्धृत किये गये है, लड़कों को बेधड़क दे दी जाती है। सम्भव है कि मुझसे निन्दा करने में भूल हुई हो। यह किसी जाति के प्रति घृणा का प्रचार करने के लिए नही, बल्कि प्राणिमात्र के प्रति प्रीति पैदा करने के लिए लिखी गई थी। मैं ऐसा एक भी उदाहरण नही जानता कि एक आदमी पर भी उसके पढ़ने से बुरा असर हुआ हो। देश-विदेश सभी जगह बहुत-सी भाषाओं में उसके अनुवाद हुए हैं। बम्बई सरकार ने एक बार उसे जब्त कर लिया था। अब वह जब्ती यदि भाव में नही तो व्यवहार में हट गई है। यह तो आश्चर्यजनक है कि अध्यापक रामदास गौड़ की तो सजा हो और मै अछूता ही छोड़ दिया जाऊं? तीसरे इल्जाम के विषय में तो मैं केवल एक ही वचन पाता हूं। मुझे उसके पूर्वापर सम्बन्ध का पता नही है। मुझे यह तो स्पष्ट जंचता है कि केवल उस एक अंश के लिए पोथियां जब्त नहीं हुई है। मै यह जानता हूं कि अध्यापक महोदय की अन्तरात्मा शुद्ध है। उनका हेतु किसी व्यक्ति के प्रति घृणा उत्पन्न कराना नही है। मैं यह भी जानता हूं कि पुस्तकों की बिक्री से उन्होने कोई लाभ नही उठाया है। यदि मैं उनके स्थान में होता तो पुस्तकों की बिक्री यथावत् जारी रहने देता। सरकार ने उनकी तमाम प्रतियां तो अवश्य ही जब्त कर ली होगी किन्तु जहा वे पोथियां पहले से ही पढ़ाई जा रही हैं, वहां मैं तो उन्हें वैसे ही पढ़ाने देता, जबतक कि लड़कों के माता-पिता या पाठशालाओं के संचालक कोई दूसरा निश्चय न जाहिर करते।

—अंग्रेजी। यं० इं०, १६।१०।१९२४। हि० न० जी०, १९।१०।१९२४।]

६९. अवध के किसान

फैजाबाद के श्री मणिलाल डाक्टर ने मेरे पास प्रकाशनार्थ यह पत्र भेजा है:

"मैं हजारो किसानो के प्रार्थना करने पर गया से फैजाबाद लाया गया हूं।

"बिहार मे, चम्पारन में मेरा भ्रम टूट चुका है। खेतो मे काम करने वाले मजदूरो के लिए भारत मे कोई सुख की सेज नहीं है। कुलियो को असम, कलकत्ता, कानपुर, अहमदाबाद, बर्मा और दूर-दूर के उपनिवेश अपनी ओर खींच सकते हैं; इसमे आश्चर्य की बात नहीं है। अवध की हालत तो और भी खराब है। यहां माग है कि "हमे विदेशी शासन से मुक्त होने दो तब मजदूरो को अपना प्राप्य मिल जायगा।" मुझे विश्वास नहीं होता कि ब्रिटिश सरकार की जगह जिन लोगो के आने की सम्भावना है, वे मजदूरो और किसानों के साथ न्याय करेंगे।

"कुछ भी हो, जिस स्थिति मे मैं काम करने के लिए तैयार हुआ हू, वह इस प्रकार है: मजदूरों और किसानो को भारतीय पूजीवादियो या ब्रिटिश सरकार के हाथों का खिलौना नहीं बनना चाहिए। उन्हे अपने हितो की देखभाल स्वयं करनी चाहिए और जहां तक उनके हितो में हो केवल वहीं तक उनको 'सहयोग' या 'असहयोग' करना चाहिए। उन लोगो मे चर्खे का प्रचार अवश्य किया जाना चाहिए और यदि वे साल के खाली महीनो मे मुकदमेबाजी करने के बजाय अपने कपड़े बनाने के लिए सूत कातें तो ज्यादा अच्छा होगा क्योकि उनकी आजीविका तो वर्षा के ४ महीनो पर पूरी तरह निर्भर है; उष्ण कटिबन्ध के उपनिवेशो की तरह नहीं, जहां साल-भर वर्षा होती है।

"भारत एक अच्छा देश है, लेकिन उसे देशी और विदेशी लोगो ने मिलकर नरक बना दिया है। हे भगवान! यह दशा कबतक रहेगी?"

मुझे आशा है कि श्री मणिलाल डाक्टर को गावो मे किसानो के हर घर मे चर्खा पहुँचाने और ऐसा करते हुए उन्हे उन लोगो की आर्थिक स्थिति की पूरी-पूरी जांच करने मे सफलता मिलेगी। हमे जरूरत इस बात की है कि हम भारत के कुछ गावो को चुनकर उनका धैर्यपूर्वक और ठोस-ठोस अध्ययन करें। जैसा कि डाक्टर मैन ने[1] दक्षिण के कुछ गावों के सम्बन्ध मे कुछ साल पहले किया था और उसकी रिपोर्ट प्रकाशित की थी।

—अंग्रेजी। य० इं०, १९।३।१९२५।]

१. सर हैरल्ड एच० मन, सुप्रसिद्ध रसायनशास्त्री, तथा समाजसेवी। बम्बई प्रान्त के कृषि-संचालक।

७०. मेरठ में कताई

चौधरी रघुवीर नारायण सिंह मेरठ से लिखते है कि "मैंने वेलगांव में ५०० नये सदस्य वनाने का वादा किया था, पर मैं अपने छोटे भाई की भारी बीमारी और अन्त को मृत्यु के कारण मीयाद के अन्दर उसे पूरा न कर सका। पर अव वा० ज्योतिप्रसाद तथा दूसरे मित्रों की सहायता से ६४७ सदस्य वना पाया हूं जिनमें २०० खुद कातनेवाले है।" हां, यह तो जितना कुछ हुआ ठीक है पर मैं चौधरी जी को याद दिलाता हूं कि उन्होंने तो ५०० खुद कातनेवाले सदस्य वनाने का वादा किया था। आशा है कि वह तथा उनके साथी इस वात को ध्यान में रख कर तव-तक दम न लेंगे जवतक उनकी संख्या पूरी न हो जाय। चौधरीजी यह भी लिखते हैं कि हम यहां मर्दों-औरतों की कताई की प्रतियोगिताएं भी रखते रहते हैं और लोग उनमें खूब हिस्सा लेते हैं। सव मिला कर वह कहते है कि यद्यपि तरक्की धीरे-धीरे हो रही है पर वह मजवूत होती जा रही है। कताई और वुनाई सिखाने की भी व्यवस्था उन्होंने की है।

—हिं० न० जी०, २१।५।१९२५।]

७१. कानपुर की महासभा

कानपुर की महासभा[1] को अव वहुत दिन नही रहे हैं। स्वागत समिति के सामने वहुत-सी आकस्मिक वाधाएं उपस्थित हुई थी। समिति को महासभा के लिए भूमि प्राप्त करने में ही विघ्न का सामना करना पड़ा था। लेकिन अव वह दूर हो गया है। लेकिन अव जो समय वाकी है उसमें सम्पूर्ण तैयारी करने के लिए वहुत से स्वयंसेवकों की और धन की आवश्यकता होगी। मुझे आशा है कि स्वागत- समिति को यह मदद भी मिल जायगी और शीघ्रतापूर्वक काम हो जायगा।

मुझे आशा है कि कानपुर की स्त्रियां इसवात को ध्यान में रक्खेंगी कि महासभा के लम्बे और विविध इतिहास में पहिले-पहल भारत की एक सुपुत्री को उसका प्रमुख-पद प्राप्त होगा। मुझे आशा है कि वहुत-सी स्त्रियां भी इस समय महासभा की स्वयंसेविकाएं वनने के लिए तैयार होंगी और वे उन स्त्रियों की, जिनकी कि

---

१. इण्डियन नेशनल कांग्रेस से अभिप्राय है।

इस समय पहिले के बनिस्बत अधिक सख्या मे महासभा मे आने की आशा है, सेवा करने के लिए और उनकी आवश्यकताओ को पूरा करने के लिए तैयार रहेगी।
—न० जी०, हि० न० जी०, २९।१०।१९२५।]

७२. गुरुकुल और खादी

श्री जमनालाल जी हरद्वार से लिखते है—"दो दिन गुरुकुल कागडी मे रहा। वहा मुझे बडा सन्तोष हुआ। यहा यह ख्याल हुआ कि खादी के वायुमण्डल का अच्छा विस्तार किया जा सकता है। श्री रामदेवजी, देवशर्माजी, सत्यकेतु जी, सेठ जी आदि बहुत से महाशय खादी और चर्खे के प्रचार के पक्ष मे है। बहुत ही थोडा प्रयत्न करने से चर्खा-सघ के कुछ सभासद बना सका हू, उनके नामो की सूची इसके साथ है। मुझे आशा है कि दूसरे और भी बहुत से सभासद होगे—गुरुकुल मे आपके सिद्धान्तो के प्रति श्रद्धा और भक्ति का परिणाम अच्छा है—गुरुकुल कन्या महाविद्यालय देहली मे भी चर्खा शुरु कर दिया गया है और दिन-प्रतिदिन उसमे प्रगति होने की आशा है।"

जमनालाल जी की भेजी हुई सूची मे ४० नाम हैं। नाम तो यहा नही दिये जा सकते परन्तु उसका पृथक्करण अवश्य ध्यान देने योग्य है। उसमे प्रथम सभासद तो गुरुकुल के आचार्य हैं, पाच उपाध्याय हैं, सात नये स्नातक और वेदालकार तथा विद्यालकार उपाधिभूषित हैं। पाच चतुर्दश श्रेणी के, चार द्वादश श्रेणी के और पाच एकादश श्रेणी के ब्रह्मचारी हैं, गुरुकुल मे दो बहने सभासद हुई हैं और देहली मे तीन—श्रीमती विद्यावती सेठी (बी० ए०) आचार्या कन्यागुरुकुल और दूसरी दो अध्यापिकाए श्रीमती सीतादेवी और चन्द्रावती।
—न० जी०। हि० न० जी०, १५।४।१९२६।]

७३. पण्डित नेहरू और खादी

टाइम्स आफ इण्डिया की दृष्टि मे प० मोतीलाल जी कभी [illegible] अपराधी नहीं हुए। उनसे जो अभी-अभी अपराध हुआ है वह यह है कि उन्होंने प्रयाग मे खादी की फेरी की। वहा कुछ साल पहले तो वे अपनी मोटर के बिना बाहर भी दिखाई देते थे परन्तु लेखक की अपनी सुन्दर भाषा मे भारत मे भी [illegible] बात को स्वीकार

किया जाना चाहिए कि पण्डितजी स्वयं गधे बन रहे हैं। यह चाहने योग्य है कि बहुतेरे नेता पण्डित जी का अनुकरण करें और टाइम्स आव इण्डिया ने पण्डित-जी को जो ऐसी विनय (?) से भरी हुई उपाधि दी है, उसको प्राप्त करें। जिस समय विरोधियों की ओर से शाप मिल रहा हो उस समय तो साधारणतया आनन्द ही मानना चाहिए परन्तु यदि वे हमारी प्रशंसा करें तो हमें उनसे सचेत रहना चाहिए। ग्रीक लोग जब भेंट या पुरस्कार लाते तभी रोमन लोग उनसे डरने लगते थे।

महासभा, खादी और महासभा के ध्येय की सम्पूर्ण निष्फलता और महासभा के समर्थकों में एक भी युक्तिपूर्ण राजनीतिक विचार का अभाव इलाहाबाद से सम्पूर्ण उत्साह के साथ भेजे गये इस तार से साबित हो जाता है!

लेखक आगे चलकर कहते हैं—

"यदि ब्रिटिश जनता को यह समाचार मिले कि लार्ड बरकनहेड यूनियन जैक का जाकिट पहनकर ट्राफलगर स्क्वायर के सिंह के नीचे खड़े रह कर टोरी दल के नीले फीते या फूल बेच रहे हैं; श्री बाल्डविन पिकैडली में ब्रिटिश खिलौने बेच कर साम्राज्य के उद्योग की उन्नति कर रहे हैं; श्री रैमसे मैकडोनल्ड सन का जांघिया और मफलर पहन कर लाइम हाउस में कारीगरों को लाल झण्डे दे रहे हैं और कीडे साइड के बोल्शेविकों ने क्लीडेसाइड में उनके चिह्न हथौड़े और हंसिया को बेचने के लिए एक दूकान खोली है तो सब लोग इस पर से यही नतीजा निकालेंगे कि उनके नेता सब पागल हो गये हैं। इस पर से सहज ही यही अनुमान निकाला जा सकता है कि पण्डित मोतीलाल जी और रंगा स्वामी आयंगर जैसे खादी की फेरी करनेवाले प्रसिद्ध पुरुष पागल हो गये हैं।"

लेखक ने जिस भाषा का प्रयोग किया है वह केवल अपमानकारक ही नहीं है परन्तु धोखा देनेवाली भी है। खादी में और ब्रिटिश टोरी दल के फीते बेंचने में तुलना ही कैसे सम्भव हो सकती है? चाहे ठीक हो या गलत हो, हजारों भारतीयों की दृष्टि में खादी शिक्षित और अधिकारसम्पन्न वर्ग और समुदाय में सच्चा सम्बन्ध कराने के लिए एक चिह्न है और उससे जन-समुदाय को, जिसे ब्रिटिश सरकार की आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए चूसा जाता है, अधिकार-सम्पन्न वर्ग, जिसके जरिए करोड़ों मूक किन्तु मिहनत करनेवाले लोगों पर वे राज्य करते है, बदले में कुछ लौटा भी सकता है क्योंकि नरमदल के राजनीतिक नेताओं ने खादी और उससे सम्बन्ध रखनेवाली सब बातों का तिरस्कार करने का रिवाज डाला है इसी से तो ऐसा अपमान सम्भव हो सका है। यह किसे याद नहीं है कि जब लड़ाई

शुरू हुई, जवान-बुड्ढे स्त्री-पुरुष, बडे-छोटे अर्थात् जो लडाई के सैनिक नही हुए थे अथवा जिन्हे सैनिक नही बनाया जा सकता था, उनसे जुदे-जुदे अस्पतालो मे आये जख्मी सैनिको के लिए कपडे सीने की आशा रखखी गई थी और सत्य ही उन सब लोगो ने वे कपडे सिये भी थे ? उस समय लोग इस छोटी सी सेवा करने के लिए आपस मे स्पर्धा भी करते थे और जिसे सीना नही आता था उसे यदि उसका कोई पडोसी सीना सिखा देता तो वह उसका उपकार मानता था। ब्रिटिश प्रजा के ऊपर जो बडी भयकर आफत आई थी उसके विचार से छोटे-बडे का सब खयाल दूर कर दिया गया था। मैं बडे साहस के साथ यह कह सकता हू कि जो लोग साधारणतया सीने का या तो ऐसा ही दूसरा कोई काम नही करते हैं उनको यदि सीने का या ऐसे ही दूसरे कपडो का काम करना उस समय आवश्यक समझा जाता था और उनका देशभक्तो मे शुमार होता था तो भारतीयो के लिए विदेशी कपडो का बहिष्कार करके खादी पहनना और इस प्रकार कताई के उद्योग को, जो अकेला ही ऐसा एक है कि जिसे भारत के लाखो-करोडो लोग अपना सकते हैं, प्राप्त करना हजारगुना आवश्यक और देश-भक्ति का कार्य हो सकता है।

अंग्रेजी किताबो मे हम यह पढते है कि जब किसी हलचल की उसके विरोधी हंसी उडाते हैं तब यह कहा जा सकता है कि वह हलचल प्रगति कर रही है और जब उससे उन विरोधियो का क्रोध भडकता है तो यह कह सकते हैं कि उसका आशानुकूल परिणाम हो रहा है। यदि टाइम्स आव इण्डिया ब्रिटिश प्रजा का प्रतिनिधि कहा जा सकता है तो वह स्पष्ट है कि उसका आशानुकूल परिणाम हुआ है।

उस लेख के लेखक पाठको को इस बात का विश्वास दिलाते हैं कि प्रयाग की प्रजा को भारत के दूसरे विभागो की बनिस्वत महासभा के कफन के कपडो की कोई अधिक आवश्यकता नही है। खादी को उन्होने यह नाम दिया है। यदि यह ठीक है तो खादी के प्रति जो तिरस्कार दिखाया गया है उसे समझना बडा ही मुश्किल है। परन्तु महासभा के नेताओ का यह कर्तव्य है कि वे यह सिद्ध करके दिखावें कि खादी महासभा का कफन का कपडा नही है परन्तु महासभा को जन-समुदाय के साथ जोडने के लिए वह एक दृढ साधन है और [illegible] पहिले की बनिस्बत [illegible] उसे लोगो की अधिक प्रतिनिधि सभा बनाती है।

परन्तु यूरोपियनो के प्रति न्याय करने के लिए मुझे [illegible] कि खादी के प्रति जहर उगलने मे टाइम्स आव इण्डिया [illegible] का प्रतिनिधि नही है। मै भारत मे कुछ यूरोपियनो को जानता हू [illegible] के सन्देश के प्रति श्रद्धा रखते है और कुछ तो [illegible] भी [illegible] है।

उसका सन्देश तो यूरोप भी पहुंचा है। खद्दर के सम्बन्ध में पोलैण्ड जैसे दूर देश से एक प्रोफेसर का यह पत्र आया है :

"आपके खयाल में क्या यह अच्छी बात न होगी कि यूरोप में भारत के मित्रों को भारतीय कपड़ा बेचने का प्रयत्न किया जाय? यदि आप मुझे कुछ हिन्दुस्तान का कपड़ा अंग्रेजी सिक्कों में उस पर उसकी कीमत लिख कर भेजेंगे और रुपये भेजने के लिए कोई अंग्रेजी पता लिख भेजेंगे तो मैं कुछ थोड़ाबहुत प्रयत्न करूंगा। मेरे खयाल से यद्यपि बिक्री की कोई बड़ी रकम न होगी फिर भी प्रचार के लिए यह बड़ा उपयोगी कार्य होगा। मुझे आशा है कि पोलैण्ड में भी बहुत लोग ऐसे होंगे जो आपके कार्य के प्रति अपनी सहानुभूति दिखलाने के लिए भारतीय कपड़ा पहिनने में अभिमान का अनुभव करेंगे और वे बड़े खुश होंगे। भारत की मुक्ति के लिए संसार की सहानुभूति प्राप्त करने का शायद यह सबसे अच्छा उपाय है। मैं स्वयं कातने का भार आसानी से नहीं उठा सकता हूं, परन्तु वह अधिक खर्चीला हो तो भी, मैं घर-घर जाकर भारतीय कपड़े की बिक्री बढ़ाने का कार्य-भार अवश्य उठा सकता हूं।"

—अंग्रेजी। यं० इं०। हि० न० जी०, १५।४।१९२६।]

७४. म्युनिस्पल स्कूलों में चर्खे

लखनऊ म्युनिसिपल बोर्ड के स्कूलों में १०८ लड़कियां और ४१ लड़के चर्खा चलाते है। लड़कियों की शालाओं में ६३ और लड़कों के स्कूलों में १५ चर्खे है। प्रतिमास लड़कियां २७ तोला और लड़के ४ तोला सूत कातते है। म्युनिसिपैलिटी को फी चर्खा, २ रुपया महीना खर्च करना पड़ता है। शिक्षा विभाग के निरीक्षक का विचार है कि इतना काम, यद्यपि कुछ विशेष तो नही है, परन्तु शुरू-शुरू के लिए काफी सन्तोषजनक है। इसे सन्तोषजनक इसी अर्थ में कह सकते है कि कुछ नही से तो अच्छा ही है। परन्तु मेरी समझ में तो इतना कम सूत तैयार होता है कि सुन कर हँसी आती है और फी चर्खे पर बेहिसाब खर्च होता है। शुरू शुरू में जो कुछ लगा दिया, उससे अधिक खर्च हो तो सच पूछो तो, वह नही ही होना चाहिए। सूत कैसा होता है, इसके विषय में कुछ नही लिखा है। मैं जो बात पहले बार-बार कह आया हूं, वही फिर भी कहनी होगी—स्कूलों के लिए केवल तकली ही एक वस्तु है और इसका प्रवेश तभी होना चाहिए जब शिक्षको ने धुनकना और कातना सीख लिया हो। स्कूलो मे कताई के काम को तबतक कभी सफलता

नही मिल सकती जबतक शिक्षक इसका राष्ट्रीय महत्व न समझ लेवे, उसी मे उन्हे आनन्द न मिले और अपने उत्साह से उसे विद्यार्थियो के लिए भी मनोरंजक न बना देवें।

--अंग्रेजी। यं० इं०। हि० न० २६।८।१९२६।]

७५. कांगड़ी गुरुकुल

कागडी गुरुकुल मे ही स्वामी श्रद्धानन्द के प्राण बसते थे, भले ही उनका नाशमान शरीर किसी स्थान पर क्यो न घूमता हो। जबतक गुरुकुल जीता है, स्वामी श्रद्धानन्द भी जीते ही रहेगे। इसलिए इस स्वर्गीय शहीद का जो अच्छा से अच्छा स्मारक बन सकता है, वह है इस गुरुकुल को स्थायी बनाना। नि सन्देह सचमुच मे स्थायी स्मारक का तो आविर्भाव होगा गुरुकुल के अध्यापको और ब्रह्मचारियो के चारित्र्य के, और उसमे प्राचीन शिक्षा और संस्कृति की मुख्यता बनाये रखने के उनके दृढ आग्रह के जरिये। श्रद्धानन्द जी को यह कहने का पूरा कारण था कि उनका गुरुकुल भी, असहयोग की परिभाषा के अनुसार असहयोग के जन्म के कई साल पहले से ही राष्ट्रीय संस्था है। उनका विश्वास था कि चाहे हम चाहे या न चाहे मगर सरकारी शिक्षालयो मे जाने का अर्थ ही है, पश्चिम के प्रभावो की मुख्यता मानना। पश्चिम की जो कुछ बात वह लाभप्रद समझते उसे अपने ढग पर, अपनी सुविधानुसार लेने मे उन्हे कोई उज्र नही था। इस कारण स्वामीजी का योग्य स्मारक होने के लिए गुरुकुल को सरकार से पूरा-पूरा स्वाधीन रहना ही होगा। यह कुछ कम सन्तोष की बात नहीं है कि, सरकार की कोई सहायता न लेकर, स्वाधीन रहने पर भी, इसके सदस्यो की संख्या वैसे ही बढ रही है, जैसे कि मैं आशा करता हू कि इसके पुण्यश्लोक संस्थापक की भावना के अनुसार चारित्र्य मे इसकी उन्नति हो रही है।

मगर, अगर यह स्मारक सचमुच इसके ब्रह्मचारियो और अध्यापको के चरित्र पर निर्भर है तो वह अभी देश की आर्थिक सहायता पर भी निर्भर है। आचार्य रामदेव ने अभी तीन लाख रुपयो की प्रार्थना की है। मैं समझता हू कि कोई दो लाख तो मिल चुके है। मैने १८ तारीख को गुरुकुल-भूमि मे, उस बडे मण्डप के भीतर जो दृश्य देखा, वह कभी भूलने लायक नही है। दर्जनो के दौर, स्वय-सेवक बालटिया लेकर घूम रहे थे। उनमे रुपये और नोट डालने की मानो स्त्री, पुरुष, सभी कोई चढा-ऊपरी-सी कर रहे थे। वैसे तो शायद ही कही दिख-

लाई पड़ते थे। मै बड़ी खुशी से यह अपील जनता के सामने रखता हूं। आर्य-समाज और उसके सिद्धान्तों से अपने मतभेद मैं बतला चुका हूं। वे तो हैं ही। गुरुकुल चलाने के नियमों से भी मेरा मतभेद है। मगर आर्य-समाज की सेवाओं और गुरुकुल की आवश्यकता को मैं भूल नही सकता। अगर धर्म की बाढ़ उन्होंने सीमित कर दी है तो उसमे नई जान भी फूंक भरी है। सभी सुधारों में यह प्रवृत्ति रहती ही है। चतुर पुरुषो का काम है, नीर छोड़ क्षीर ग्रहण करना। गुरुकुल में बहुत बातें ऐसी है, जिन्हें बचाना होगा, और जो लोग यह चाहते है कि यह आज जिस स्थिति मे है, उससे अच्छा होवे, तो उन्हें पहले इसके प्रति अपना मित्र-भाव दिखलाना होगा, और तब कही वे इसमे सुधार कराने का नाम ले सकते हैं। इसलिए धन की इस अपील में योगदान करने में मुझे कोई उज्र नही है। यह छोटी रकम इकट्ठी करने में कोई देर या दिक्कत नही होनी चाहिए।

——अंग्रेजी। यं० इं०। हि० न० जी०, २४।३।१९२७।]

७६. काँगड़ी गुरुकुल से मदद

गुजरात ने संकट-निवारणार्थ जो प्रार्थना की थी उसका बहुत ही सन्तोषप्रद उत्तर मिला है। जिन्होंने आरम्भ में ही मदद भेजी थी उनमें दो संस्थाएं थी, कांगड़ी गुरुकुल और शान्ति-निकेतन। उनके इस दान से मुझे जितनी प्रसन्नता होगी, यह जानकर उन्होने दान तो सीधा श्री वल्लभभाई को भेज दिया और मुझे उसकी सूचना तार से दी। गुरुकुल की तरफ से जो दान ४ हफ्तों में मिला उसका ब्योरा भी श्री आचार्य रामदेव जी ने लिख भेजा है। वह और भी अधिक भेजने की आशा रखते है।

शिक्षकों ने अपने वेतन से कुछ हिस्सा दिया है। ब्रह्मचारियों ने अपने कपड़े हमेशा की तरह धोबियों से न धुलाकर अपने हाथों से धोये और इस तरह बचत की हैं। कन्या गुरुकुल की ब्रह्मचारिणियों ने कुछ समय के लिए घी-दूध छोड़कर बचत की है।

गुजरात मे मदद प्राप्त करनेवाले और मदद पहुंचानेवाले यह स्मरण रक्खें कि जो दान प्राप्त हुए है उनमे कितनो के पीछे कितना त्याग रहा है। स्वामी श्रद्धानन्द जब गुरुकुल के सचालक थे तब दक्षिण अफ्रीका के सत्याग्रह के युद्ध के समय उन्होंने प्रथम जो त्याग की प्रथा चलाई उसका आज गुरुकुल के इन लड़के-लड़कियों के त्याग से मुझे स्मरण होता है। अर्थात् गुरुकुल की परम्परा मे पले हुए लड़के-

लड़कियो से प्रसग आने पर ऐसे आत्म-त्याग की आशा हमेशा रखनी चाहिए।

—अंग्रेजी। यं० इं०। हि० न० जी०, २०।१०।१९२७।]

७७. प्रेम महाविद्यालय

राजा महेन्द्रप्रताप की इस कृति को अपने किये पर गर्व हो सकता है। यह उन इनी-गिनी सस्थाओ मे से है जो असहयोग से पहले खोली गई थी और बिना किसी प्रकार की सरकारी सहायता या स्वीकृति के चलती रही है। ऐसी बहुत-सी सस्थाओ के समान इसे भी भाग्य के बहुत से उलटफेर देखने पडे है किन्तु सभी सकटो को सह कर यह विद्यालय निर्विघ्न चलता आया है। हाल मे ही इसका वार्षिकोत्सव मनाया गया था। डा० असारी सभापति थे। सभा की रिपोर्ट मे लिखा है कि उत्सव के शुरू मे पहले तकली चलाने का प्रदर्शन किया गया और फिर डा० अंसारी ने राष्ट्रीय पताका फहराई तथा हिन्दुस्तान सेवादल के स्वयसेवको ने वन्दे मातरम् गाया।

फिर आचार्य गिदवाणी ने महाविद्यालय का भार आप ग्रहण करने के बाद से आज तक की रिपोर्ट पढ़ सुनाई। रिपोर्ट मे आर्थिक अवस्था बुरी ही बतलाई गई। अभी महाविद्यालय के पास ७००० रुपये हैं। हर साल घटी लगती है १०,००० रुपयो की। रिपोर्ट से यह भी जान पडता है कि आचार्य गिडवानी ने महाविद्यालय का प्रबन्ध बहुत-कुछ बदला है, खर्च की बहुत कमी कर डाली है किन्तु विद्यालय की उपयोगिता कम नही होने दी है। साथ ही साथ दर्जी विभाग, रगाई विभाग, चित्रकारी विभाग, जिल्दसाजी विभाग खोले है और विद्यालय के छापाखाने तथा 'प्रेम' मासिक पत्र को फिर से जारी किया है। और विभागो के खर्च मे खर्चा घटाकर ये सब नये काम शुरू कराये जा सकते है। इस भाति विद्यालय की उपयोगिता बढ़ गई है। जो परिवर्तन हो चुके हैं और जो करने का विचार है उनकी दृष्टि से तो यह सस्था कला, शिल्प और गृह-उद्योगो की एक सच्ची [illegible] बन जायगी।

इस रिपोर्ट मे सस्था के लिए ज्यादा [illegible] बतलाई गई है और [illegible] गई है। आचार्य गिदवाणी ने कहा कि 'प्रेम महाविद्यालय' [illegible] सरकारी सहायता के अपनी स्वतन्त्रता [illegible]। हमारा मूल मन्त्र है—[illegible]। [illegible] और [illegible]

काम हमारी योजना के अनुकूल हैं, हमारा एक-एक विद्यार्थी शुद्ध खादी पहनता है और रोज़ चर्खे या तकली पर सूत कातता है। हमने सिन्ध की बाढ़ में सहायता देने के लिए स्वयंसेवक भेजे। देशभक्ति का कर हमने भी अपने आदमियों को जेल में भेज कर चुकाया है। और सबसे बड़ी बात तो यह है कि हमारे यहां भंगी और चमार ब्राह्मण लड़कों के साथ-साथ शिक्षा पाते है। अगर हमारी ये विशेषताएं बनी रही और लड़कों के भविष्य जीवन का ध्येय सेवा रहा तो फिर मैं कोई ऐसी संस्था नही जानता जो गांधीजी के आदर्शो को इससे अधिक पालती हो या उनकी सहायता के अधिक योग्य हो।" फिर आचार्य ने विद्यार्थियों को याद दिलाया कि "प्रेम महाविद्यालय न तो सहज स्कूल है और न सहज कारखाना किन्तु यह है राजा महेन्द्रप्रताप के कल्पना-राज्य का प्रेम-मन्दिर, स्वतन्त्रता का मन्दिर।"

जिस संस्था की ओर से इतने दावे आचार्य गिडवानी पेश कर सके, उसके लिए मेरी सहायता की आशा रखनी उचित ही थी। पाठकों को शायद पता न हो कि आचार्य गिदवाणी कराची म्युनिसपैलिटी के अधीन काम करने जा रहे है। आचार्य कृपलानी के गांधी आश्रम, बनारस से युगलकिशोर जी महाविद्यालय में भेजे गये हैं। श्री युगलकिशोर आचार्य गिदवाणी की ओर से काम चलावेंगे किन्तु आचार्य-महोदय महाविद्यालय में दिलचस्पी लेते रहेंगे और जहां तक हो सकेगा उसका संचालन करते रहेंगे।

—अंग्रेजी। यं० इं०। हि० न० जी०, ८।३।१९२८।]

७८. कन्याओं का त्याग

देहरादून कन्या विद्यालय से श्री विद्यावती देवी निम्नलिखित पत्र भेजती हैं—

"बहुत दिनों से कन्या गुरुकुल की ब्रह्मचारिणियां बारडोली के दुःखी कृषकों के सत्याग्रह आन्दोलन से सहानुभूति अनुभव कर रही थीं और अब उन्होंने अपने हृदय के उद्गार को प्रकट करके मुझे प्रेरित किया है कि उनकी तुच्छ भेंट आपके श्रीचरणों में अर्पित करूं, अतः इस पत्र के साथ यह द्रव्य प्रेषित किया है, कृपया इसे स्वीकार कर अनुग्रहीत करें।

"आपको कदाचित् विदित ही है कि कन्या गुरुकुल की ब्रह्मचारिणियों को द्रव्य पास में रखने का नियम नहीं है। अतः उन्होंने अपने घी, फल, मिष्ठान्न आदि को एक मास के लिए परित्याग कर यह धन भिजवाने का आग्रह किया है। ऊंची श्रेणी की

उसका उद्देश्य शुद्धीकरण है, प्रतिशोधात्मक या दण्डात्मक विनाश नही। मेरी राय मे यदि श्री मुहम्मद अली जिला मजिस्ट्रेट के चाय पीने और बातचीत करने के निमन्त्रण को ठुकरा देते तो वह एक लोक-सेवक के रूप मे अपने कर्त्तव्य के पालन मे च्युत माने जाते। हा, यदि जिला मजिस्ट्रेट अपनी प्रतिष्ठा की रक्षा या वृद्धि करने के उद्देश्य से कोई सार्वजनिक समारोह करते तो दूसरी बात होती।

कुरुचि

मेरी विनम्र सम्मति मे ऐसी ही कुरुचि का उदाहरण 'लीडर' की वह रोपपूर्ण टिप्पणी भी है जो उसने प० मोतीलाल नेहरू पर होमरूल लीग की होनेवाली बैठक के ऊपर पजाब सरकार-द्वारा रोक लगाई जाने की कार्रवाई के सम्बन्ध मे भेजे गये उनके तार को लेकर लिखी है। कहते है प० मोतीलाल नेहरू ने तार मे यह कहा कि इस निषेधाज्ञा का पालन किया जाना चाहिए क्योकि (यहा) सविनय अवज्ञा अवाञ्छनीय है। इस तार के पीछे जो सराहनीय आत्म-सयम है उसको देखने के बजाय 'लीडर' ने यह कह कर प० मोतीलाल नेहरू की हँसी उडाई है कि वे तात्कालिक उपयोगिता की नीति का यहा आश्रय लेने पर उतर आये हैं। यदि पण्डितजी ने सविनय अवज्ञा की सलाह दी होती, यदि सरकार हिंसा करती और लोग उसका उत्तर हिंसा से देते तो 'लीडर' का नाराज होना ठीक होता। मैं तो 'लीडर' से 'लीडर'-विरोधियो के प्रति भी न्याय करने की आशा करता हू। असहयोग का ध्येय सार्वजनिक जीवन को शुद्ध बना कर और अहिंसात्मक अर्थात् शिष्टतापूर्ण या विनम्र साधनो से लोकमत को प्रेरित करके स्वराज्य प्राप्त करना है। मैं मानता हू कि असहयोगी सामूहिक रूप से अपने व्यवहार मे नम्रता का समावेश नहीं कर पाये हैं। लेकिन उनकी प्रवृत्ति निश्चय ही उसी ओर है। अब हम पण्डितजी की सलाह की अच्छाई-बुराई पर विचार करें। पुराने शब्दो को नये मूल्य मिल रहे हैं। 'तात्कालिक उपयोगिता' की नीति शब्दो मे एक हीक आती है किन्तु वह शब्द समूह अपने आप मे बुरा नही है। सविनय अवज्ञा वैध है किन्तु वह तबतक वाञ्छनीय या उपयुक्त नही है जबतक समस्त राष्ट्र मे पूरा आत्मसयम नही आ जाता और जबतक वह यह नही सीख लेता कि उचित कानूनो का पालन स्वेच्छापूर्वक किया जाना चाहिए। उनका पालन उनकी अवहेलना करने की दिशा मे मिलनेवाले तत्सम्बन्धी दण्ड का भय छोडकर करना आवश्यक है। कर देना बन्द करना वैध है, किन्तु जबतक राष्ट्र समष्टि की हैसियत से अहिंसा को अपने मे पूरी तौर पर पचा नही लेता तबतक यह अनुपयुक्त है। दूसरे शब्दो मे कहा जाय तो अहिंसा असहयोग का केवल उपसर्ग या प्रत्यय भर नही है, वह उसका अविभाज्य

शत्रुता का सवाल नही उठ सकता। लेकिन महासभा मेरठ के और दूसरी जगहों के कैदियों की मदद कैसे करे? महासभा उनके लिए ऊहापोह करे—विचार-परामर्श करे, जहां पत्र-व्यवहार से अथवा समाचारपत्रों में लेख लिखने से काम चलता हो, वहां उनका सहारा ले, और ऐसे दुःखों से तप कर वह अधिक जागृत, अधिक बाहोश बने, जल्द ही स्वराज्य प्राप्त करे और ऐसे कैदियों की कोठड़ी के ताले तोड़े। किन्तु महासभा उनके लिए वकील न करे। महासभा ने असहयोग का सर्वथा त्याग नही किया है। ऐसे कैदियों को अपना बचाव करने की जरूरत न होनी चाहिए। अगर उन्हे जेल मिले तो वे उसे भोग लें। अगर वे खुद वकील करना चाहे तो खुशी-खुशी करें। अगर उनकी हैसियत वकील करने-जितनी नहीं है, तो उनके दोस्त उनकी मदद करे या महासभा के सदस्य होते हुए भी जो ऐसे मामलों में वकील करना उचित समझते है, वे स्वयं सहायता करें। इससे मेरा मतलब यह है कि खुद महासभा वकील वगैरा करने की झंझट में न फँसे। अगर वह फँसना चाहेगी भी तो, उसकी ताकत नही कि वह हर मामले का सामना कर सके। ऐसे मामलों में तो देश को उन वकीलों की जरूरत है जो श्री मनमोहन घोष या चित्तरंजनदास की तरह अपने खर्च से सारे मामले का मुकाबला कर सकें। यही उनका धर्म भी है। महासभा को तो वकीलों या डाक्टरों की फीस चुकाने की जरूरत ही न होनी चाहिए।

—गुजराती। न० जी०। हि० न० जी०, २।५।१९२९।]

८०. हरद्वार में खादी

हरद्वार-जैसे धाम में खादी की नन्हीं-सी दूकान खुले और बन्द हो जाय और फिर वेद-विशारद एवं आचार्य के पद की योग्यता रखनेवाले पण्डित देवशर्मा के समान सज्जनों के प्रयत्न से खादी की दुकान खुले यह बात जितनी सुखद है उतनी ही दुःखद भी है। सुखद इसलिए कि खादी-काम की कद्र करनेवाले एक खास धार्मिक फिर्के के लोग है, दुःखद इसलिए कि जिसके द्वारा करोडों लोगो की आर्थिक उन्नति हो सकती है उस खादी की खपत हरद्वार-जैसे स्थान मे कोशिश करने पर हो सकती है। विदेशी कपड़े की दूकाने तो हरद्वार में चाहे जितनी मिल सकेंगी, लेकिन खादी की दूकान के लिए पण्डितो का सहारा चाहिए। पण्डित देवशर्मा ने इस भण्डार के बारे में एक पत्र हिन्दी मे भेजा है, उसमे से थोड़ी बातें नीचे देता हूं।

यह भण्डार २४ मई सन् १६२८ मे खुला था। यह तीन सज्जनो की एक समिति की देखभाल मे चलता है। उनके नाम ये हैं—

श्री पण्डित रामचन्द्र जी वैद्य

श्री अध्यापक देवराज जी सेठी

श्री पण्डित देवशर्मा विद्यालकार

इस भण्डार की पूजी ५५०) थी। इसमे पीछे से १००) और वढे। ग्यारह महीनो मे रु० १८८६-११-० की खादी विकी। अगर माल ज्यादा रक्खे तो विक्री अधिक होगी, इस विचार से पूजी वढा रहे हैं। ९५०) तक इकट्ठे हो चुके हैं। अवतक जो दान मिला है उसकी तफसील नीचे दी जाती है :—

सेठ जानकी प्रसाद	२५०)
सेठ मुरलीधर जी पोद्दार	१००)
सेठ रामचन्द्र जी वैद्य	१००)
सेठ सरदार हुकुमसिंह जी	१००)
सेठ अध्यापक देवराज जी सेठी	१००)
सेठ प० रूपचन्द्र जी (कनखल)	१००)
श्री पण्डित देवशर्मा जी के द्वारा	१००)
श्री गगाप्रसाद जी (टेहरी)	१००)
	९५०)

इस भण्डार के लिए आदमपुर, गाधी आश्रम, मेरठ और चादपुर गुरुकुल खादी-केन्द्र से खादी मगाई जाती है।

मैं आशा रखता हू कि भण्डार की वृद्धि होगी और उसे पूरा-पूरा उत्तेजन मिलेगा।

—न० जी०। हि० न० जी०, ९।५।१९२९।]

८१. काशी की पण्डित सभा

जब मैं काशी जी मे था, मेरे पास काशी-पण्डित-सभा की तरफ से तीन प्रश्न भेजे गये थे। उन प्रश्नो के उत्तर देना मैंने अपना धर्म समझा था। परन्तु उस समय मुझे अवकाश नही था। बाद मे ये प्रश्न मेरे कागजो मे पडे रहे। [illegible]

उन्हें हाथ में न ले सका। अब जबकि कागजपत्र साफ कर रहा हूं, उक्त प्रश्न मेरे सामने हैं, और ये हैं:—

१. श्रुतियों तथा श्रुति-सम्मत स्मृतियों को अभ्रान्त प्रमाण माननेवाला एक सनातनधर्मी धर्मशास्त्रज्ञ, 'देवयात्रा विवाहेषु संकटे राजविप्लवे, उत्सवेषु च सर्वेषु स्पर्शास्पर्शान दुष्यतः' इत्यादि अपवादों के सिवा अछूतों (चाण्डालादि) के स्पर्श का सर्वदा व सर्वथा किस तरह समर्थन कर सकता है कि हिन्दू-धर्म में अस्पृश्यता नहीं है?

२. 'तस्माच्छास्त्रं प्रमाणं ते कार्याकार्ये व्यवस्थितौ' इस गीता-वाक्य को अविचल श्रद्धा-भक्ति के साथ माननेवाली सनातनधर्मी जनता ही भारतवर्ष में अधिक है और उसी में आपको काम भी करना है, अतएव जबतक आप अपने अछूतोद्धारवाले कार्यक्रम को शास्त्र-सम्मत न सिद्ध कर लें तबतक उसका प्रचार कैसे हो सकता है?

३. मुसलमान उलेमाओं के हृदय में यह भाव कूट-कूट कर भरा है कि इस्लाम धर्म के सिवा दूसरे धर्म को माननेवालों की हत्या करना सवाब है, वे काफिर हैं; उनके साथ मेल तभी हो सकता है जब वे इस्लाम-धर्म कबूल कर लें। जबतक छोटे-बड़े सभी मुसलमान इन्हीं उलमाओं के अधीन हैं तबतक हिन्दू धर्म की रक्षा करते हुए हिन्दू मुसलमानों से किस प्रकार मेल कर सकते हैं?

मेरे उत्तर में पण्डित महाशय पाण्डित्य की आशा न करें। मैंने धर्म को अनुभव-द्वारा जिस रूप में जाना है, शास्त्र को अनुभव से मैं जिस तरह समझा हूं उसी के आधार पर उत्तर देने का मैं नम्र प्रयत्न करता हूं।

केवल नाम देने से श्रुति-स्मृतियां धर्मवाक्य नहीं बन सकतीं। जो कोई भी बात सत्यादि अटल सिद्धान्तों के विरुद्ध है, वह धर्म-प्रमाण नहीं हो सकती। मनुस्मृति आदि जो ग्रन्थ हमारे सामने रक्खे जाते हैं वे मूलतः जैसे थे वैसे आज प्रतीत नहीं होते, क्योंकि उनमें विरोधी वचन आते हैं। उनमें ऐसे भी वचन पाये जाते हैं जो सनातन नीति-सिद्धान्त और बुद्धि के विरोधी हैं। श्रुतिग्रन्थों के रहस्य को देखते हुए अस्पृश्यता पाप ही प्रतीत होती है। मैंने अस्पृश्यता के विषय में जो बात कही है, वह तो यों है कि आज हम जिसे अस्पृश्यता मानते हैं, उसके लिए शास्त्र में कोई प्रमाण नहीं है। इस कथन में और पण्डितों ने जिस वचन का मुझमें आरोपण किया है, उसमें बहुत अन्तर है।

आज के अछूत की व्याख्या के लिए प्रचलित स्मृति-ग्रन्थों को प्रमाण मानने से भी कोई आधार नहीं मिलेगा। पण्डितों ने जो स्मृति-वचन उद्धृत किया है, उसे प्रमाण मानने से भी हमारा तीन-चौथाई कार्य सधेगा। देवयात्रा विवाह

संकट, राजविप्लव और उत्सव, हमारे सामने आज भी मौजूद हैं। इनमे किसी को अछूत न मानने की स्मृति की सम्मति होते हुए भी लोग क्यो जनता के सामने अस्पृश्यता का समर्थन करते हैं?

अब दूसरे प्रश्न का अधिक उत्तर देने की आवश्यकता नही है। मैंने स्पष्टतया बताया है कि मेरे कार्यक्रम के लिए पण्डितो के ही वचन काफी है। परन्तु यहा इस बात पर थोडा विचार करे कि शास्त्र किसे कहा जाय? मैं ऊपर बता चुका हू कि संस्कृत भाषा मे छपे हुए हर एक ग्रन्थ को शास्त्र मानने से पुण्य पाप सिद्ध हो सकेगा और पाप पुण्य बन जायगा। इसलिए गीता की भाषा के अनुसार तो गीता के स्थितप्रज्ञ का वचन ही शास्त्र का बुद्धिग्राह्य अर्थ हो सकता है। इसपर पण्डित लोग जनता को सीधे रास्ते पर ले जाना चाहे तो पाण्डित्य के साथ प्रज्ञा को भी स्थिर करें और राग-द्वेष आदि का त्याग करें। जबतक पण्डित लोग तपश्चर्या करके गीता के ब्रह्मभूत न बनेंगे तबतक मेरे-जैसे प्राकृत मनुष्य के पास अनुभव के सहारे सेवा करने के सिवा और कोई चारा नही है।

अब रहा तीसरा प्रश्न। मेरा नम्र अभिप्राय है कि तीसरा प्रश्न करके पण्डित महाशयो ने अपना अज्ञान ही प्रकट किया है। न तो इस्लाम की ही यह शिक्षा है कि अन्य धर्मवालो की हत्या कर्त्तव्य है, न भारतवर्षीय उलेमा के हृदयों मे ही यह बात है, और न सब मुसलमान ही ऐसे उलेमा के अधीन हैं। हिन्दू धर्म की रक्षा तो हिन्दुओ की पवित्रता से ही हो सकती है, किसी और से नही। आत्मा ही आत्मा की रक्षा कर सकती है। 'आप भला तो जग भला' इस लौकिक कथन के न्याय से सबके साथ मिल कर रहना ही हमारा कर्त्तव्य है। मेरा अनुभव भी मुझे यही सिखाता है।

—हि० न० जी०, ११।७।१९२९।]

८२. संयुक्त प्रान्त का आगामी दौरा

स्थान-स्थान के प्रबन्धको ने सयुक्तप्रान्त के आगामी दौरे के लिए मुझसे [illegible] मागी है। मैं सोचता था कि आन्ध्र-यात्रा के समय मैंने जो [illegible] होगा, मगर देखता हू कि उस समय लिखी गई पक्तियो पर [illegible] कार्य-कर्त्ताओ ने ध्यान नही दिया, क्योकि उनका उनसे कोई [illegible] न था।

सयुक्तप्रान्त के दौरे के सम्बन्ध मे प्रबन्धकर्त्ता [illegible] मैं अपने अज्ञान और अपरिचय [illegible]

उस बीमारी से उठा हूं। डाक्टर और दूसरे मित्र केवल इसी शर्त पर मुझे यात्रा करने देने के लिए सहमत हुए हैं कि मैं दिन में यथासम्भव पूरा-पूरा आराम करूंगा, लम्बे-लम्बे भाषणों से बचूंगा, और दूसरे परिश्रमपूर्ण कामों से दूर रहूंगा। अतएव प्रबन्धकर्त्ता यह ध्यान में रख लें कि कार्यक्रम लम्बे या एक के बाद एक न हों। वे मुझसे लम्बे भाषणों की भी आशा न रक्खें। विशाल व्यासपीठों (प्लेटफार्म) पर चढ़ने या उन तक चल कर जाने की भी कोई मुझसे आशा न रक्खें।

चूंकि बीमारी से उठने के कारण मैं अभी कमजोर हूं, मुझे देख कर डाक्टरों ने अनेक सलाहें दी हैं, मगर उन पर विचार न भी किया जाय, तो भी कठोर व्यवहार-कुशलता की दृष्टि से—और यह यात्रा तो एकदम व्यावहारिक यात्रा ही होगी—यह आवश्यक है कि समय और धन की बचत की जाय।

मैं पैर छूकर भक्ति प्रदर्शित करनेवालों से बहुत ज्यादा घबराता हूं। प्रेम का प्रदर्शन करने के लिए इसकी तनिक भी आवश्यकता नहीं है। उलटे इससे सहज ही पतन हो सकता है। इसके कारण आजादी के साथ चलना-फिरना मुश्किल हो जाता है, और अक्सर पैर छूनेवालों के नाखूनों से मेरे पैर घायल हो चुके हैं। इस क्रिया के कारण कुछ गज की दूरी पर बनाये गये व्यासपीठ तक पहुंचने में अक्सर पाव घण्टे से ज्यादा लग जाता है।

व्यासपीठ बहुधा बहुत दाम खर्च करके बनाया जाता है—अपेक्षाकृत बहुमूल्य होता है, और कभी-कभी उसके बनाने में चतुराई से काम न लेने के कारण वह खतरनाक भी साबित हो चुका है। अतएव यह बेहतर होगा कि सभास्थल के मध्य में मेरी मोटर खड़ी करके उसी से व्यासपीठ का काम ले लिया जाय। आन्ध्र-यात्रा में यह प्रथा बड़ी ही उपयोगी और अनुकूल साबित हो चुकी है।

स्वागत-समितियों को किसी भी कारण से चन्दे की थैलियों में से सजावट या भोजन के लिए जरा भी खर्च नहीं करना चाहिए। अगर कहीं इन कामों के लिए खर्च की जरूरत पड़े ही तो उसके लिए अलग चन्दा उगाह लिया जाय। यानी, सब तरह की सजावट का त्याग किया जाना चाहिए। जहां कहीं थोड़ी-बहुत सजावट की भी जाय, वहां विदेशी कपड़े, विदेशी कागज या ऐसी अन्य चीजों का सम्पूर्ण बहिष्कार किया जाना चाहिए।

सभाओं में किसी तरह का शोर-गुल न होना चाहिए। नेताओं को चाहिए कि वे सभास्थल पर पहले ही पहुँच जायं और जनता को भलीभांति समझा दें कि लोग चुपचाप बैठे रहें, धक्कामुक्की न करें, जोर-जोर से न चिल्लायें, बीड़ी न पियें, और न ही मेरे पैर छूने वगैरा के लिए आगे बढ़ने की कोशिश करें।

मुझे और मेरे साथियों को ठहराने और खिलाने-पिलाने में कठोर मितव्ययिता

से काम लिया जाय। साथियो का भोजन सादा-से-सादा हो, न मसाले हो, न मिठाई। फसली फल, अगर मिल सकें, दिये जाय। कलकत्ता, वम्बई या दिल्ली से मँहगे फल न मँगाये जाय। मैं अपने साथ कुछ सूखा मेवा रखता हू, जहा कही वह मिल सके, नये तौर पर उसकी पूर्ति के लिए मैं आभार मानूगा। भोजन मे नीबू एक आवश्यक चीज है। दुर्भाग्यवश मुझे फिर से वकरी का दूध आवश्यक होगा, और अगर सम्भव हो सके तो बकरी के दूध का दही भी मैं ले लूगा, बशर्ते कि दही को झमाने के लिए किसी और दूध का दही काम मे न लाया गया हो। उवाल कर ठण्डा किये हुए बकरी के दूध मे नीबू की कुछ बूदे डालने से वारह घण्टो मे उसका दही जम जाता है।

मेरे रहने का स्थान ऐसा चुना जाय कि जिससे मुझे शान्ति और एकान्त मिल सके। हम अपने विस्तरे के लिए साथ मे काफी कपडे रखते हैं, फिर भी अगर कही इसकी व्यवस्था की जाय तो सब कपडे शुद्ध खादी के ही होने चाहिए। जब कभी मैं किन्ही शानदार कमरो मे ठहराया गया हू मुझे यह देखकर मर्मान्तिक दुःख हुआ है कि उनमे सब चीजें, यहा तक कि कपडे भी, विदेशी है।

सवेरे ७ बजे से पहले कार्यक्रम शुरू न किया जाय और दो घण्टे से ज्यादा का न रहे। हर हालत में १० बजे तो समाप्त हो ही जाय। फिर शाम को ५॥ से शुरू हो और ८ बजे तक रहे। १० से ३ तक का सारा समय मुझे विश्राम, सम्पादन और अन्य कार्यों के लिए चाहिए। ३ और ४ के बीच मैं कातूगा और साथ ही कार्यकर्त्ताओ से मिलूगा। छोटे-बडे हरएक स्थान मे कार्यकर्त्ताओ से मिलना मैं आवश्यक समझता हू।

जिन खेल-तमाशो से किसी न किसी तरह की शिक्षा न मिलती हो, जानकारी न बढती हो, कार्यक्रम मे उन्हे स्थान न दिया जाय।

प्रबन्धकर्त्ता याद रक्खें कि प्रस्तुत यात्रा अखिल भारत चर्खा-संघ के लिए की गई प्रधानतया एक खादी-यात्रा होगी। चर्खा-संघ एक बडी-से-बडी राष्ट्रीय संस्था है, जिसका काम व्यापारिक ढग से हो रहा है और जिसका एक मात्र ध्येय चर्खे के सन्देश को देश के सात लाख गावो मे बसी हुई जनता मे घर-घर पहुँचाना है। इस संस्था की सफलता पर ही लाखो-करोडो आधा पेट खाकर जीनेवालो की भूख से पीड़ित हुई, और उन्हे पीस डालनेवाली आपदा का नाश निर्भर है। इस काम के लिए मुझे मिलनेवाली प्रत्येक पाई का मैं संग्रह करना चाहता हू। अखिल भारत चर्खा-संघ की झोली मे पडा हुआ एक रुपया जब किसी और की जेब मे होता है तो एक दिन की शराब खरीदने, बीडी पीने या मिठाई खाने के काम आता है और कुछ तो रोगो को भी खरीद लाता है।

जनता के पास से उगाही हुई रकम किसी भी हालत में किसी दूसरे काम में न लगानी चाहिए। जनता विश्वास-भरे हृदय से दान करती है। उसकी दी हुई रकम का सहज और सर्वोत्तम सदुपयोग उसे चर्खे के प्रसार में खर्च करना है। इस तरह के सदुपयोग से दिया हुआ दान दूना होकर उसे मिलता है। सब किसी को चाहिए कि दल या स्थिति का खयाल न करते हुए वे इसमें भाग लें। मुझे तो न्यायाधीशों तक ने खादी के लिए दान दिया है।

यही नहीं, प्रबन्धकर्त्ताओं को महासभा-सम्बन्धी दूसरा काम भी दिखा देना चाहता हूं। मैं महासभा-संस्थाओं के विषय में जानना और उनकी सहायता करना चाहता हूं। अतएव जहां कही मानपत्र दिये जायं उनमें नीचे लिखी बातें होनी चाहिएं।

१. मानपत्र देनेवाले जिले या स्थान के क्षेत्रफल में बसनेवाली बस्ती का तफसीलवार वर्णन,

२. राष्ट्रीय शालाएं और उनमें पढ़नेवाले विद्यार्थियों की संख्या,

३. चालू चर्खों और कर्घों की संख्या, सूत की मासिक उत्पत्ति, खादी का परिमाण और उसकी कीमत,

४. उत्पन्न खादी की स्थानीय और बाहरी बिक्री,

५. स्वयं कातनेवालों की संख्या,

६. स्वयं-सेवकों की संख्या और उनका कार्य,

७. भिन्न-भिन्न धर्मों के अनुसार सदस्यों—स्त्री-पुरुषों—की संख्या,

८. महासभा-समिति की आर्थिक स्थिति,

९. विदेशी वस्त्र-बहिष्कार, मद्यपान-निषेध, अछूतोद्धार और हिन्दू-मुस्लिम समस्या तथा उसके लिए किये गये कार्य का विवरण।

यह तो जिन बातों को जानना चाहूंगा उनका एक नमूनामात्र है। साथ ही मैं यह भी पसन्द करूंगा कि जिन-जिन तालुकों या जिलों में मैं जाऊं उनके नक्शे मुझे दिये जायं और उनमें यह बतलाया जाय कि किन-किन गांवों में महासभा का काम हो रहा है।

जो लोग गो-सेवा और शुद्ध दूध पहुंचाने के काम में दिलचस्पी लेते हैं, वे अपने-अपने स्थान मे इस सम्बन्ध की आवश्यक बातें और हकीकतें मुझे बताने की कृपा करेंगे।

एक बात और। विद्यार्थियों से मिलने में मुझे बड़ा आनन्द होगा, भाषण करने के लिए नहीं, बल्कि उनसे मिलकर उनके हृदयों में प्रवेश करने और उनके दुःख एवं कष्टों में भाग लेने के लिए। मैं आशा करता हूं कि स्त्रियों की सभा हर जगह होगी और साथ ही उनका हाथकता सुन्दर सूत व गहने भी होंगे ही।

—अंग्रेजी। यं० इं०। हि० न० जी०, ५।९।१९२९।]

८३. युक्तप्रान्त की कुप्रथाएं

युक्तप्रान्त मे मेरा भ्रमण शुरू होता देख यु० पी० के एक अनुभवी और सुशिक्षित मित्र मुझे लिखते है —

"और और प्रान्तों मे, खासकर शिक्षित समाज में, लोग तबतक व्याह नहीं करते, जबतक उनकी आमदनी का कोई जरिया न निकल आये। स्कूल मे जानेवाले विद्यार्थियों मे थोड़े ही ऐसे होते हैं, जिनका व्याह हो चुका होता है पर यु० प्रा० मे प्रथा इसके विपरीत है। यहां शायद ही ऐसा कोई लडका मिलेगा जिसका व्याह न हुआ हो। यही नहीं कि माता-पिता अज्ञान-वश, जल्दी में व्याह कर देते हो, लडकों मे भी यह भाव नहीं है कि जबतक वे स्वय धनोपार्जन न करने लगें तबतक उनका व्याह नहीं होना चाहिए। कितने लड़के तो यह इच्छा प्रकट करते हैं कि उनका व्याह कर दिया जाय। व्याह की जिम्मेदारी का भान बहुत ही कम लड़कों में है।

"विवाह आदि के सम्बन्ध में लोग प्रायः अपनी शक्ति से कहीं ज्यादा खर्च कर डालते हैं, जिसका परिणाम यह होता है कि कई कुटुम्ब यावज्जीवन ऋणी रहते हैं। इस मामले मे शिक्षित समाज के लोग खास कर दोषी हैं। जिनके पास पैसा है वे इस बात की पर्वा ही नहीं करते कि उनके निर्धन भाई किस तरह उनकी-सी शान से व्याह कर सकेंगे। पर देखा-देखी वे भी वैसा ही करते हैं और परिणाम भयंकर होता है

"यु० प्रा० में पर्दे की प्रथा कैसी है, सो तो आप जानते हैं। जहां अकेले हिन्दुओ की बस्ती है, वहा इतना पर्दा नहीं किया जाता, जितना मुसलमानो की बस्ती मे। यु० प्रा० मे आकर बसे हुए गुजराती नागर भी पर्दा करने लगे हैं।"

"यु० प्रा० में राज्य जमींदारो का भी है, खास कर अवध मे।"

अगर मौका मिला तो मैं अवश्य ही इन प्रश्नों का अध्ययन करूंगा, और इनके बारे मे कुछ बात भी करूंगा। जैसा कि यह सज्जन लिखते हैं यदि सचमुच यु० प्रा० मे अन्य प्रान्तो के मुकाबले विद्यार्थी-वर्ग विवाह के मामलों मे ज्यादा [illegible] है और व्याह के अवसर पर खर्च भी ज्यादा होता है तो अवश्य [illegible]।

परन्तु इन मामलो मे किसी प्रान्त के साथ तुलना करने की [illegible] नहीं। यदि कुप्रथाए दूसरे प्रान्तो के बराबर या उनसे कम भी हैं तो [illegible] नहीं। [illegible] कुप्रथा मात्र का निवारण करना प्रत्येक [illegible] मनुष्य का [illegible]। [illegible] अवस्था मे विद्यार्थियो का विवाह [illegible] है, [illegible]। धर्म हमें सिखाता है कि विद्यार्थी-अवस्था मे [illegible]।

पालन नही करता है, उसे गृहस्थाश्रम में प्रवेश करने का अधिकार भी नहीं रहता। इसी तरह जो मनुष्य घर-गृहस्थी चलाने में असमर्थ है, उसे चाहिए कि वह गृहस्था-श्रम मे प्रवेश ही न करे। गृहस्थाश्रम, विषय-सेवन या भोग-विलास के लिए नहीं है। गृहस्थ यदि चाहे तो, मर्यादित मात्रा में पुत्रोत्पत्ति की इच्छा से स्वपत्नी के साथ विषय-सेवन कर सकता है। विषयभोग के लिए ही विषय-भोग करना, क्या हिन्दू वर्म और क्या अन्य वर्मों में सर्वथा त्याज्य कहा गया है।

यदि यह सच है कि यु० प्रा० के विद्यार्थियों में से बहुत ज्यादा विद्यार्थी विवाहित होते है तो मुझे एक दुःखप्रद अनुभव का कारण ज्ञात हो जाता है। हिन्दी-प्रचार यू० पी० का एक खास कर्त्तव्य है। जब इन्दौर में मैंने दक्षिण भारत में हिन्दी प्रचार की बात की थी तब मुझे आशा थी कि इस काम के लिए चरित्रवान, त्यागी, शिक्षित, राष्ट्रभाषा-विशारद और ब्रह्मचारी युवक काफी मात्रा में मिल सकेंगे। मगर पाठकों को यह जानकर दुःख होगा कि यु० प्रा० से इस काम में बहुत कम सहायता मिली। आज भी ऐसे स्वयंसेवकों के अभाव के कारण ही बंगाल, सिन्ध, उत्कल इत्यादि प्रान्तों में राष्ट्रभाषा का प्रचार बहुत कम हो रहा है। इसका कारण धन का अभाव नही, बल्कि सच्चे स्वयंसेवकों का अभाव ही है।

विवाह में किये जानेवाले खर्च की बात भी दुःखप्रद है। धनिक लोग हर जगह अपनी धनराशि के अभिमान में आकर अमर्यादित खर्च करते और गरीबों में बुद्धिभेद उपजाते हैं। इस सम्बन्ध में भी विद्यार्थियों को चाहिए कि वे प्रतिज्ञाबद्ध होकर माता-पिता को ब्याह के अवसर पर अधिक खर्च हरगिज न करने दें। जिन मित्र ने मुझे यह पत्र लिखा है वह मुझसे मिल चुके है। उन्होंने श्री जमनालालजी के उदाहरण की याद दिलाते हुए मुझे कहा है कि मैं उस उदाहरण को विद्यार्थियों और उनके माता-पिताओं के सामने रक्खूं। जब जमनालाल जी की पुत्री कमला का ब्याह हुआ तब शायद ही उन्होंने ५००) का खर्च किया हो। उन्होंने जातिभोज तो दिया ही नही। वर-वधू को अशीष देने के लिए कुछ मित्रो को बुला लिया था। विवाह-विधि केवल धार्मिक क्रिया तक ही परिसीमित रही थी। आडम्बर-पात्र का त्याग किया गया था। वर-वधू दोनों खादी के कपड़े पहने हुए थे। ठीक इसी तरह हर एक धनाढ्य का धर्म है कि वह विवाह इत्यादि अवसरों पर अपने अभिमान को रोके और समाज को हानि पहुंचाने से बाज आये।

तीसरा प्रश्न पर्दे का है। पर्दे की बुराई के बारे में मै काफी लिख चुका हूं। यह प्रथा हर तरह से अकल्याण-कारिणी है। अनुभव से यह सिद्ध हो चुका है कि स्त्री की रक्षा करने के बदले यह स्त्री के शरीर और मन को हानि पहुंचाती है।

ज़मीदारों के बारे में मै क्या लिखूं? ज़मीदार वर्ग में से शायद ही कोई 'हिन्दी

नवजीवन' पढता हो लेकिन चूकि मैं मनुष्य स्वभाव के उच्चगामित्व को मानता हूं, मेरा विश्वास है कि जमीदार लोग जपान के समुराई अमीरो की तरह लोक-सेवा का मन्त्र सीखेंगे और यथा-सम्भव त्यागमय जीवन विताकर अपना एव भारतवर्ष का कल्याण करने मे पूरा-पूरा योग देंगे। यह तो मेरी अपनी आशा है, 'हिन्दी नवजीवन' मे इसका उल्लेखमात्र करने से यह सफल नही हो सकती।

— हि० न० जी०, १२।९।१९२९।]

● यह (पर्दे की) प्रथा हर तरह से अकल्याणकारिणी है। अनुभव से यह **सिद्ध हो चुका है कि स्त्री की रक्षा करने के वदले यह स्त्री के शरीर और मन को हानि पहुंचाती है।**

८४. संयुक्त प्रान्त का धर्म

महासभा की वागडोर इस वर्ष सयुक्तप्रान्त के एक महान पुरुष के हाथो है। आगामी वर्ष के लिए भी उन्ही के नवयुवक सुपुत्र के हाथो मे रहेगी। इसलिए भारतवर्ष के प्रति सयुक्तप्रान्त का कर्त्तव्य वहुत ज्यादा वढ गया है। मुझे याद नही पडता कि कभी किसी प्रान्त के दो नेता उत्तरोत्तर एक के वाद एक सभापति हुए हो। पिता के वाद पुत्र के गद्दीनशीन होने का तो यह पहला ही दृष्टान्त है। जिन प्रान्त मे पिता के रहते हुए पुत्र इतना योग्य माना जाता हो कि उनके वाद दूसरे ही वर्ष वह एक महान राष्ट्र का नेता वने, उस प्रान्त के लिए अवश्य ही यह गौरव की वात है।

दूसरे, सयुक्तप्रान्त हिन्दुस्तान के मध्य भाग मे वसा हुआ है। सयुक्तप्रान्त मे भारत की स्वतन्त्रता का एक युद्ध हो चुका है। युक्तप्रान्त ही पूज्य मालवीयजी का सेवा-क्षेत्र है। युक्तप्रान्त मे ही हिन्दुओ के सर्वोत्तम तीर्थस्थान हैं। और सयुक्त-प्रान्त मे मुसलमानी वादशाहत के स्मारक रूप अनेक स्तम्भ, स्मृति-चिह्न भी है। इस या ऐसे सयुक्तप्रान्त के लोग अगर जी-तोड मेहनत करें, पूरा-पूरा प्रयत्न करें तो अगले साल भारतवर्ष की अभिलाषा के परिपूर्ण होने मे कुछ भी मुश्किल न हो।

सयुक्तप्रान्त वडे-वडे जमीदारो और तालुकेदारो का केन्द्र है। शायद ही यहा निर्धनता भी है। सम्भव है, सयुक्तप्रान्त की गरीबी उत्कल की गरीबी से कुछ कम न हो। कई स्थानो मे तीन-तीन साल हुए, वरावर दुर्भिक्ष [illegible] है। लोगो के पास न काम है, न धन है। भूखो मरते है। उन्हें किस तरह काम मिले ऐसा [illegible] हो सकता है जिसमे उन्हे स्थायी काम मिले और वे भूखो मरने से वचें।

अगर सयुक्तप्रान्त के [illegible]

द्वारा जनता को काम और दाम, दोनों, दे सकते हैं। साथ ही विदेशी वस्त्र-वहिष्कार का काम भी कर सकते हैं। चर्खे का जिक्र मैंने एक मिसाल के तौर पर किया है। मैं तो यही चाहता हूं कि वेकारी और उनके भुक्कड़पन का नाश करें और उनकी सेवा में लीन हो जायं। जवतक हम दूर से ही उनका ख़याल रक्खेंगे, परन्तु उनके पास जाकर उनके कष्टों को जानने और उन्हें निभाने की कोशिश नहीं करेंगे, तवतक हमें समझ रखना चाहिए कि हमने कुछ नहीं किया है, और उस दशा में स्वराज्य हमारे लिए आकाश-पुष्पवत, एक काल्पनिक वस्तु-मात्र, बना रहेगा।
—हि० न० जी०, ३।१०।१९२९।]

८५. जवाहरलाल नेहरू

जवाहरलाल हिन्द का जवाहर सिद्ध हुआ है। उनके व्याख्यान में उच्चतम विचार मधुर और नम्र भाषा में प्रकट हुए है। अनेक विषयों का प्रतिपादन होने पर भी व्याख्यान छोटा है। आत्मा का तेज प्रत्येक वाक्य में झलकता है। कई लोगों के दिल में जो भय था, भाषण के बाद वह सब मिट गया। जैसा उनका व्याख्यान था वैसा ही उनका आचरण भी था। कांग्रेस के दिनों में उन्होंने अपना सारा काम स्वतन्त्रता और सम्पूर्ण न्यायवुद्धि से किया और अपना काम सतत उद्यम से करते रहने के कारण सब कुछ ठीक समय पर निर्विघ्नता के साथ पूर्ण हुआ।

ऐसे वीर और पुण्य नवयुवक के सभापतित्व में यदि हम कुछ न कर पायेंगे तो मुझे बड़ा आश्चर्य होगा। परन्तु यदि सेना ही नालायक हो तो वीर नायक भी क्या कर सकता है? इसलिए हमें आत्म-निरीक्षण करना चाहिए। क्या हम जवाहरलाल के नेतृत्व के लायक हैं? यदि हैं, तो परिणाम शुभ ही होगा। स्वतन्त्रता की घोषणा करने-मात्र से स्वतन्त्रता नही मिल सकती। हममें स्वतन्त्रता का वायुमण्डल पैदा होना चाहिए। स्वतन्त्रता एक चीज है, स्वच्छन्दता दूसरी। कई बार हम स्वच्छन्दता को ही स्वतन्त्रता मान वैठते है और स्वतन्त्रता गँवा देते हैं। स्वच्छन्दता की पराकाष्ठा स्वार्थ है; स्वतन्त्रता की परमार्थ। स्वच्छन्दता समाज का नाश करती है, स्वतन्त्रता समाज को जीवन देती है। स्वच्छन्दता में मर्यादा का त्याग किया जाता है; स्वतन्त्रता में मर्यादा का पूर्ण पालन किया जाता है। पराधीनता में हम बहुत-सी वातें डर के मारे करते हैं; स्वाधीनता में वे ही वातें हम इच्छापूर्वक करते हैं।

पराधीन मनुष्य डर के वश होकर चोरी नही करेगा, किसी के साथ फसाद नही करेगा, झूठ नही बोलेगा, बाह्याचार मे शुद्ध-सा प्रतीत होगा, डाकू आदि मे स्वामी के बल से बचेगा। पराधीन मनुष्य जो कुछ करता है, उसमे वह अपने मन का साथ नही देता। स्वाधीन मनुष्य के जैसे आचार होते हैं, वैसे ही विचार भी। वह जो कुछ अच्छा बुरा करता है, स्वेच्छा से करता है। इसलिए स्वाधीन मनुष्य अपने सत्कार्य का पूरा फल पाता है, और ऐसा होने से समाज की नित्य वृद्धि होती है। स्वाधीन मनुष्य किसी की रक्षा की अपेक्षा नही करेगा।

इसलिए यदि हममे सच्ची स्वतन्त्रता आई है तो हम कौमी डर को छोड देंगे। हिन्दू-मुसलमान एक दूसरे से डरना भूल जायगे। दोनो साथ-साथ भूलें तो बहुत ही अच्छा है, परन्तु स्वतन्त्र मनुष्य डर छोडने के लिए साथियो के सहयोग की अपेक्षा न करे। यदि एक पक्ष न्याय की मर्यादा को छोड दे तो भी वह तीसरी ताकत का सहारा नही मागेगा। वह अपनी ताकत पर ही निर्भर रहेगा, और हार गया तो अपनी ताकत बढ़ाने की कोशिश करेगा। लडते हुए मर जाना जीत है, धर्म है। लडने से भागना पराधीनता है, दीनता है। शुद्ध क्षत्रियत्व के बिना शुद्ध स्वाधीनता असम्भव है। इसीलिए क्षत्रिय के लक्षण मे अपलायनम् को ही अद्वितीय स्थान है। इस कारण हमे अपनी हरएक बात में अपलायनम् का सेवन करना आवश्यक है।

—हिं० न० जी०, ९।१।१९३०।]

- **स्वच्छन्दता की पराकाष्ठा स्वार्थ है, स्वतन्त्रता की परमार्थ।**
- **स्वच्छन्दता समाज का नाश करती है; स्वतन्त्रता समाज को जीवन देती है।**
- **लड़ते हुए मरजाना जीत है, धर्म है। लडने से भागना पराधीनता है, दीनता है।**
- **शुद्ध क्षत्रियत्व के बिना शुद्ध स्वाधीनता असम्भव है।**

८६. गणेशशंकर विद्यार्थी

गणेशशंकर विद्यार्थी की मृत्यु हम सबको स्पर्धा के योग्य थी। उनका [illegible] वह सीमेण्ट है जो अन्ततोगत्वा दोनो कौमो को जोडेगा। कोई पैक्ट या समझौता हमारे दिलो को नही जोडेगा। पर जैसी वीरता गणेशशंकर विद्यार्थी ने दिखाई है, आखिरकार वह अवश्य ही पाषाण से पाषाण हृदयो को [illegible] और [illegible] एक करेगी। पर यह जहर किसी तरह क्यों न हो, इतना गहरा [illegible] गया है कि

गणेशशंकर विद्यार्थी के समान महान, आत्मत्यागी और नितान्त वीर पुरुष का रक्त भी, आज तो हमसे इसे धो वहाने के लिए शायद काफी न हो। अगर भविष्य में ऐसा मौका फिर आवे तो इस भव्य बलिदान से हम वैसा ही प्रयत्न करने की प्रेरणा प्राप्त करें। मैं उनकी दुःखिनी विधवा और उनके बच्चों के साथ अपनी आन्तरिक समवेदना प्रकट नही करता, पर गणेशशंकर विद्यार्थी की योग्य पत्नी और सन्तान के नाते उन्हें वधाई देता हूं। वह मरे नही है। आज वह तव से कही अधिक सच्चे रूप में जी रहे हैं, जव हम उन्हें भौतिक शरीर में जीवित देखते थे और पहचानते न थे।

कुटुम्ब को आश्वासन नहीं, धन्यवाद

हृदय खून के आंसू रोता है, पर ऐसी धन्य मृत्यु के लिए आश्वासन क्या भेजा जाय? इस पवित्र, निर्दोष खून से आज नहीं तो किसी-न-किसी दिन तो हिन्दू-मुस्लिम एकता स्थापित होगी ही। उनके कुटुम्ब को आश्वासन नहीं, पर अनेक धन्यवाद! सव उनका अनुकरण करें।

महासभा-समिति में

महासभा समिति (कराची में) गांधी जी ने कहा—"यह दुःख होता तो है, तो भी जिस तरह गणेशशंकर की मृत्यु हुई है, वह मृत्यु धन्य है। अज्ञात और पुरुषार्थहीन निर्माल्य हिन्दू तो अनेक मर गये होंगे, पर उनकी अपेक्षा एकता कायम करने की कोशिश करते-करते गणेशशंकर का मरना स्वागत की वात है। उसी प्रकार किसी निर्माल्य और अपरिचित मुसलमान की अपेक्षा डा० अंसारी के समान प्रतिष्ठित सेवक के प्राण जायँ तो एकता का कायम होना आसान हो जाय।"
—हि० न० जी०, ९।४।१९३१।]

८७. इलाहाबाद का कांग्रेस अस्पताल : एक अपील

गत वर्ष जून में पं० मोतीलाल नेहरू वम्वई गये थे। वहां उन्होने, कांग्रेस-अस्पताल, जो उम्दा काम कर रहा था, देखा। उन पर इसका अच्छा असर पड़ा, और इलाहावाद लौटकर उन्होने वैसा ही अस्पताल इलाहावाद में भी खोलने की इच्छा प्रकट की। वाद में वह जल्दी ही गिरफ्तार कर लिये गये और उन्हें कैद की सजा दी गई। उनकी गैरहाजिरी में भी उनकी इच्छा पूरी करने के प्रयास किये

गये। अधिकाश मे बम्बई के कुछ मित्रो की उदारता से इस अस्पताल के लिए कुछ रुपया और साधन इकट्ठा हुए। प० मोतीलाल जी के जेल से छूटने पर स्वराज्य भवन के एक हिस्से मे इस अस्पताल को विधिपूर्वक आरम्भ किया गया। उन्होंने इस अपील पर हस्ताक्षर करनेवालो की एक समिति द्रव्य-सग्रह करने और उसकी व्यवस्था करने के लिए नियत की और इन तीन हस्ताक्षर करनेवालो के साथ इलाहाबाद के डा० आर० एन० बैनर्जी और डा० जयराज बिहारी की एक व्यवस्थापक समिति कायम की। अस्पताल छ महीने से अधिक हुआ, काम कर रहा है, और भीतरी तथा बाहरी दोनो क्षेत्रो मे उसने सुन्दर काम किया है।

जो थोडा द्रव्य इकट्ठा किया था, वह अब खर्च हो चुका है इसलिए समिति को यह विचार करना पडा कि अस्पताल आगे चलाया जाय या नहीं। महात्मा गाधी और दूसरे मित्रो की सलाह से उसे चलाने का ही निश्चय किया गया है। ऐसा प्रतीत हुआ कि जो सत्कार्य यह अस्पताल करता था उसका बन्द होना बदनसीबी की बात होगी और मुमकिन भी है कि आगे इस अस्पताल की विशेष आवश्यकता पड जाय। समिति ने और जिन मित्रो की उसने सलाह ली, उन्होंने यह महसूस किया कि इस बारे मे उन्हे प० मोतीलाल की इच्छानुसार काम करना चाहिए।

इसलिए आर्थिक सहायता के लिए यह अपील इस आशा मे प्रकाशित की जाती है कि उदारतापूर्वक इसका जवाब दिया जायगा। स्वराज्य भवन मे स्थायी रूप से अस्पताल रखने के प्रश्न का निर्णय अभी नही हुआ है। परन्तु समिति इतना द्रव्य इकट्ठा करना चाहती है, जिससे कम से कम तीन साल तक अस्पताल चल सके। वर्तमान मर्यादित रूप मे यदि अस्पताल चलाया जाय, तो उसके खर्च का अन्दाज प्रति मास हजार रुपये का है।

एक उपयोगी काम करने के उपरान्त यह अस्पताल स्व० पण्डितजी की इच्छापूर्ति कर रहा है। इसका उद्देश्य उनकी स्मृति मे बनाये जानेवाले किसी राष्ट्रीय स्मारक का स्थान ग्रहण कर लेना नही है। स्मारक का बडा सवाल अभी उठाया नही गया है, क्योकि नेताओ ने देखा कि इस वक्त जनता की शक्ति को राष्ट्रीय युद्ध मे विषय न जाने देना चाहिए और वैसे भी यह सवाल अखिल भारत की और बहुत अधिक प्रतिनिधियो वाली समिति ही अपने हाथ मे ले सकती है।

दान की रकम प० मोतीलाल नेहरू, कोषाध्यक्ष [illegible] अस्पताल, स्वराज्य-भवन इलाहाबाद के पते से भेजी जानी चाहिए।

[illegible]

[illegible]

गांधीजी की टिप्पणी

११ मई, १६३१

मैं आशा रखता हूं कि जनता की ओर से इस अपील का तुरन्त ही जवाब मिलेगा। अस्पताल की व्यवस्था का काम करनेवालों के अतिरिक्त और किसी ने इरादतन इस पर दस्तखत नही किये है क्योकि इसे किसी भी रूप में राष्ट्रीय स्मारक नही मानना है। परन्तु इसी कारण यह अपील कुछ कम महत्व की नहीं है। पं० मोतील.ल नेहरू की एक इच्छा पूरी करने के लिए ३६ हजार की रकम न कुछ-सी है। इसलिए मैं आशा करत. हूं कि श्रीमती कमला नेहरू और उनके साथियों की इस अपील का जवाब देने में किसी भी तरह की ढिलाई या टालमटोल नहीं किया जायगा। पाठक जान लें कि अस्पताल के आरम्भ से ही कमला नेहरू उसकी आत्मा बनी हैं। इस अस्पताल को अपील में 'काम चलाऊ' क्यो कहा गया है, इस विषय में जनता को आश्चर्य होगा सही। पर विचार यह देखने का है कि संस्था कैसा काम करती है और अनुभव से उसकी सच्ची आवश्यकता कितनी मालूम पड़ती है। दूसरे जब सब कुछ भट्ठी में तप रहा हो, तब विचार के अनुसार फिलहाल तो दैनिक आवश्यकता की पूर्ति करके ही सन्तोष मानने में अधिक-से-अधिक बुद्धिमानी है।

मो० क० गांधी

—न० जी०। हि० न० जी०, २१।५।१९३१।]

८८. संयुक्तप्रान्त के किसानों से

गत सत्याग्रह में पूर्ण स्वराज्य की प्राप्ति के लिए सविनय भंग के अंगरूप कुछ जिलों मे करबन्दी आन्दोलन शुरू किया गया था। पर सरकार और कांग्रेस के वीच समझौता हो जाने के कारण सत्याग्रह और फलतः करबन्दी भी बन्द कर दी गई।

परन्तु उस समय आप लोग घोर अर्थ-कष्ट में थे। वैसे साधारण समय में ही आपकी स्थिति खराव थी परन्तु इस साल वह अत्यधिक खराब हो गई है, क्योंकि जो फसल आप हर साल वोते है, उसकी दर इस दफ़ा असाधारण रूप से घट गई है। कांग्रेस कार्यकर्त्ताओ ने मुझे लिखा कि आपमें से बहुतेरे पूरा लगान चुकाने में बिल्कुल असमर्थ हैं। कई जिलो में कुछ सौ गांवों में जांच की गई, जिससे पता चला कि स्थिति भयावह है। यह पाया गया कि आपकी कुल पैदावार के दाम इतने घट गये

हैं कि उसकी विक्री से लगान अदा करने जितनी रकम भी नही मिल सकती। इसी सिलसिले मे मैं गवर्नर को मिलने नैनीताल आया था। उन्होंने धैर्यपूर्वक मेरी बातें सुनी और हमने परिस्थिति पर पूरी तरह चर्चा की। उनकी सहानुभूति थी। मैंने उनसे कहा कि कुछ काग्रेस कार्यकर्त्ताओ ने मुझे विश्वास दिलाया है कि इधर सरकार ने किसानो के साथ रियायतें करने की जो सूचनाए निकाली हैं वे उनके वास्तविक कष्ट को दूर करने के लिए काफी नही है। मैंने उनके सामने कुछ प्रस्ताव रक्खे, जिन पर उन्होने विचार करने का वचन दिया।

इस दरम्यान मेरा यह कर्त्तव्य था कि मैं आपको अपनी शक्ति के अनुसार कुछ सलाह दू। कई साथियो के साथ स्थिति की चर्चा करते हुए मैंने घण्टो इसी चिन्ता मे विताये हैं। मुझे उन कुछ प्रमुख तालुकेदारो से नि सकोच भाव से साफ-साफ बातें करने का भी लाभ मिला, जिन्होंने मेरा निमन्त्रण पाकर आने की कृपा की थी। मुझे यह कहते हुए हर्ष होता है कि जो प्रस्ताव नीचे दिये जाते हैं, साधारणतया वे उनसे सहमत थे।

और जिलो के अलावा नीचे लिखे जिलो मे सगठित काम किया गया था — आगरा, मथुरा, इलाहाबाद, रायबरेली, गोरखपुर, कानपुर, लखनऊ, प्रतापगढ और इटावा। इन जिलो के सम्बन्ध मे यह पाया गया है कि फसली सन् १३३८ मे हयाती और गैर दखीलकार काश्तकारो को रुपये मे चार आने की माफी मिलनी चाहिए। इस साधारण नियम मे स्थानीय परिस्थिति के अनुसार आवश्यक हेर-फेर किये जा सकते है।

मुझसे कहा गया है, कुछ जिलो मे काश्तकारो की स्थिति ऐसी है कि वे कम मुआफी से भी काम चला सकते है। कुछ जिलो मे स्थानीय आपत्ति के कारण परिस्थिति और भी विगड़ गई है। इसलिए प्रस्तावित माफी की शर्तें स्वभावत उन जिलो को लागू न होगी, जो बताई हुई रकम से अधिक दे सकते हैं और न उन्ही जिलो को लागू होगी जिनकी स्थिति उपर्युक्त जिलो से भी बदतर है। अवश्य ही, जिन जिलो का ऊपर जिक्र किया है, उनमे भी आपस मे से जो अधिक चुका सकते हो उन्हे अवश्य चुकाना चाहिए। काग्रेस आशा रखती है कि हर एक काश्तकार अपनी शक्ति भर लगान जल्दी-से-जल्दी अदा कर देगा और साधारण नियमानुसार कोई भी रुपये मे अठन्नी या बारह अन्नी से, जैसी भी स्थिति हो, कम अदा न करेगा। परन्तु जिस तरह एक ही जिले मे ऐसे स्थान हो सकते है, जहा अधिक लगान चुकाया जा सकता है, उसी तरह यह भी सम्भव है कि कुछ स्थान ऐसे भी हो, जहा रुपये मे अठन्नी या चवन्नी से भी कम ही अदा किया जा सकता है। मुझे आशा है कि ऐसे मामलो मे जमीदार काश्तकारो के साथ उदारतापूर्वक व्यवहार करेंगे।

हर हालत में आप इसका ध्यान रक्खें कि जितना आप दें, चालू साल के लिए उतने की आपको चुकता रसीद मिल जाय।

मुझे पता चला है कि युद्धकाल मे कई काश्तकार वेदखल कर दिये गये थे और दूसरे वाद में भी वेदखल कर दिये गये है। यदि उन्हें उनकी जमीनें वापस न दी गईं तो परिणाम स्पष्ट ही उस वातावरण के विपरीत होगा, जो समझौते के अनुसार पैदा किया जा रहा है। अतएव मुझे पूरी आशा है कि यहां वताये हुए हिसाव से लगान अदा कर देने पर वेदखल काश्तकारों को विना किसी प्रकार के जुर्माने के उनकी जमीनें वापस दे दी जायंगी।

मुझे आशा है कि आप लोग तुरत लगान अदा करना आरम्भ कर देंगे। आप कुल आठ आना इसी समय न दे सकते हों, तो आपका लगान मुल्तवी हो जायगा, और अगली फसल तक वाकी वगैरा की वसूली के लिए आपके साथ किसी तरह की सख्ती न की जायगी।

मैं सरकार को यह सलाह देना चाहता हू कि आप लोगों से पूरा लगान न मिलने के कारण जमीदारों की आमदनी में जो कमी हो जायगी उसके विचार से वह उनकी मालगुजारी भी उसी अनुपात से घटा दे।

अन्त में मै आपको उस सलाह के वारे मे सावधान कर देना चाहता हूं, यदि वैसी सलाह आपको मिली हो, कि अब आपको जमीदार को लगान देने की जरूरत ही नही। मुझे आशा है कि चाहे कोई भी आपको यह सलाह दे, आप उस पर ध्यान न देंगे। कांग्रेस वाले तो सलाह दे ही नही सकते। हम जमीदारों को नुकसान पहुंचाना नही चाहते। सम्पत्ति का नाश हमारा उद्देश्य नही है, हम केवल यह चाहते हैं कि उसका न्याय-संगत उपभोग किया जाय।

मुझसे कहा गया है कि आप काग्रेस की वात तभी मानेंगे जव कांग्रेस वाले आपको विल्कुल लगान न देने की सलाह देंगे। परन्तु यदि कांग्रेस ने आपको अपनी शक्ति के अनुसार लगान देने की सलाह दी, तो आप उस पर ध्यान नहीं देंगे। समय आ गया है कि आप अपने सम्बन्ध के इस अपवाद को झूठा साबित कर दें।

आपने कुछ जमीदारों द्वारा या उनके वास्ते किये गये कठोर व्यवहार की शिकायत की है। कांग्रेस आपकी सव शिकायतों के वारे में जांच-पड़ताल करने की कोशिश कर रही है और वरावर करेगी और जमीदारों से आपकी वकालत भी करेगी और जहां कानूनी राहत अनिवार्य जान पड़ेगी वहां उसकी सलाह भी देगी। पर यह वात भी स्वीकार करनी होगी कि कभी-कभी कुछ किसान भी गलत रास्ते पर चले गये हैं और घातक आक्रमण कर वैठे हैं। ऐसी कार्रवाइयों से किसानों की विशुद्ध कीर्ति को कलंक लगता है, उनके कार्य को हानि पहुंचती है और सेवा के लिए

कांग्रेस की उपयोगिता कम होती है। क्योंकि अन्त में तो आप लोग ही कांग्रेस हैं। जहा तक-कांग्रेस आपकी अधूरी प्रतिनिधि है, वह अपूर्ण ही रहेगी।

कृपा कर याद रखिए कि कांग्रेस सत्य और अहिंसा-द्वारा पूर्ण स्वराज्य प्राप्त करना चाहती है। जिस हद तक किसान इन दो मुख्य सिद्धान्तो के पालन मे पीछे रहेगे उसी हद तक कांग्रेस भी असफल होगी। आप लाखो की तादाद मे हैं। जब लाखो झूठे और हिंसक बन जाते हैं, तो आत्मनाश निकट आ जाता है। अतएव आप बिना हाथ उठाये चोट सह लें। शायद अब तक आप यह तो सीख चुके होंगे कि चोट का प्रतिकार करने का सबसे अच्छा उपाय चोट करनेवाले को कभी चोट न पहुचाना है। हा, उसकी अनुचित आज्ञा का पालन करने से हमे हमेशा इन्कार करना चाहिए, फिर भले वैसा करने से हमे कितना ही कष्ट क्यो न सहना पडे।

आपका मित्र और सेवक

मोहनदास करमचन्द गाधी

नैनीताल

२३ मई १९३१

—हिन्दी। नैनीताल, २३।५।१९३१। हि० न० जी०, २८।५।१९३१।]

८९. गांधी आश्रम, मेरठ

यह-आश्रम आचार्य कृपालानी की कृति है। इस आश्रम की ओर से इसकी प्रवृत्तियों का परिचय देनेवाली एक सुन्दर छोटी पत्रिका प्रकाशित हुई है। १९२० मे जब काशी मे इसके जीवन का श्रीगणेश हुआ था, यह एक सूक्ष्म वस्तु थी। उसमे से बढकर आज अनेक शाखाओ वाली विशाल सस्था बन गई है, जिसका अपने प्रधान केन्द्र मेरठ मे निज का मकान भी है। अब यह सेवा-संस्था के रूप मे रजिस्टर्ड हो चुकी है। इसका मुख्य काम खादी पैदा करना और फैलाना है। तिगपर, यह जहा हो सकता है, मुफ्त दवाखानो, रात्रिपाठशालाओ का सचालन भी करती है। १९२० मे इस संस्था ने ४८ रुपये की खादी पैदा की थी और, ३,१०० की बिक्री थी। १९३० मे उत्पत्ति ४,२१,४९०) की थी और बिक्री ५,३२,३६१) की। इसकी ४५ इच अर्जवाली खादी का भाव १९२१ मे फी गज १) था और १९३० मे साढे पाच आने। इस सस्था मे बुनाई तक की रुई की क्रियाओं के अलावा धोने कुन्दी करने और रगने के विभाग भी हैं। इन विभागो मे उम्मीदवारों को भर्ती करके वह उन्हे शिक्षा देती है और मेरठ की गरीब स्त्रियों को गूथने, कातने में

किनारों पर वेलबूटे निकालने वगैरा का काम देकर उन्हें रोजी देती है। कौन कह सकता है कि खादी का भविष्य उज्वल नहीं है, या वह देश के दरिद्र-से-दरिद्र के लिए सहायता रूप नहीं है?

—हि० न० जी०, ११।६।१९३१।]

९०. युक्तप्रान्त में किसान-संकट

उन्नाव जिले के एक गांव के जमींदार के खिलाफ अन्यत्र जो शिकायतें छापी गई हैं, उनकी ओर पाठकों का ध्यान दिलाता हूं। इस दफ़ा मेरे पास और भी गम्भीर समाचार आये हैं, जिनसे पता चलता है कि जमींदारों और ताल्लुकेदारों को उकसाने में सरकारी अधिकारियों का हाथ है। नीचे रायबरेली के डिप्टी कमिश्नर के हस्ताक्षरों से जमींदारों के नाम जारी किये गये दो गुप्त परिपत्रकों—सरक्यूलरों की सच्ची नकल देता हूं:—

गुप्त

डिप्टी कमिश्नर्स आफिस

डी० ओ० १२।६ रायबरेली, १९-६-३१

प्रिय...........

'तजवीज़ यह है कि...पुलिस थाने के कुछ आन्दोलकों पर केस चलाया जाय। मैं एहसान मानूंगा अगर आप मेहरबानी करके...पुलिस को हर तरह की मदद करेंगे।

"क्या आप इसके मुताबिक अपने एजेण्टों, यानी मैनेजरों और जिलेदारों वगैरह के नाम फरमान जारी कीजिएगा?

जमींदारों या सरकार के खिलाफ़ कांग्रेस, किसान सभा या पंचायतों की किसी भी काबिल एतराज कार्यवाई की इत्तला...थाने में की जानी चाहिए।

"आपको चाहिए कि आप इस मामले में अपने मातहतों को फुर्ती के साथ, उत्साहपूर्वक और निडर होकर काम करने की सलाह दें।

आपका सच्चा

डी० ओ० नं० ११

डिप्टी कमिश्नर्स आफिस, रायबरेली १९-६-३१

प्रिय,

मैं देखता हूं आपके नाम खरीफ की बाकी और रबी के मुतालबे के हिसाब में

सरकार-द्वारा मंजूर की गई माफ़ी के अलावा ... रुपये निकलते हैं। इस साल की खास कठिनाइयों को मद्दनजर रखते हुए यह रकम बहुत बड़ी है और मैं आपको पहले ही काफी वक्त दे चुका हूं। मै एहसान मानूंगा, अगर आप इस बकाया रकम का कम-से-कम आधा इस महीने के अन्त तक अदा कर देंगे और बाकी उसके बाद जितनी जल्दी हो सके।

मेरे खयाल में मैं आपको पहले ही बता चुका हूं कि आप किस तरह लगान-वसूली का काम जल्दी से कर सकते हैं। मैं आपको सब तरह की कानूनी मदद देने को तैयार हूं। अगर आपकी रियासत में कुछ ऐसे गांव हैं, जहां वसूली का काम बिल्कुल बन्द है—आर्थिक कारणो से नहीं बल्कि करबन्दी आन्दोलन की वजह से, तो मैं आपको यह सलाह देता हूं कि आप कुछ ऐसे बागी काश्तकारों, उन काश्तकारो के खिलाफ, जो अपने लगान का ठीक-ठीक हिस्सा दे सकते हैं लेकिन दे नहीं रहे हैं, बकाया लगान के लिए मुकदमे दायर कीजिए और फैसला होने से पहले जब्ती के लिए लिखिए। अगर रेवेन्यू वालों को कानूनी कार्रवाई करते समय पुलिस की रक्षा की जरूरत पड़े तो पुलिस दी जायगी; आप इस मौके से और पुलीस तथा रेवेन्यू कर्मचारियों की उपस्थिति से लाभ उठा कर गावो मे वसूली का काम जोरों से आगे बढ़ा सकते हैं। जिन जमींदारों ने मेरी सलाह मानकर काम किया है उनकी रियासतो में यह प्रयोग बहुत सफल हुआ है। लेकिन आपको मुस्तैदी से काम करना पड़ेगा। यह अच्छा होगा कि वसूली के काम की देखरेख आप खुद करें, मातहतों पर न छोड़ें, जो अपनी अकर्मण्यता का एक-न-एक बहाना बताने को सदा तैयार रहते हैं। कृपा कर इस पत्र को गुप्त समझिएगा।

आपका [illegible]

इन सरक्यूलरो से कांग्रेस और किसान-सभाओ के प्रति द्वेष का भाव स्पष्ट प्रगट होता है। सरक्यूलर तालुकेदारो को किसानो के साथ सख्ती करने को कहते हैं और उनके काम मे सहायता पहुँचाने का वचन देते हैं। इन सरक्यूलरो के क्या मानी हैं, हम सब जानते है। इनका अर्थ शाब्दिक अर्थ से कहीं अधिक है। इनसे तालुकेदारो और जमीदारो को मनमानी करने का परवाना मिल जाता है।

ये परिपत्रक गुप्त क्यों हैं? किसी वजह से जिसने यू० पी० गवर्नमेण्ट को जगाया डिप्टी कमिनर को शरम आती है? या चूंकि ये सरक्यूलर पर्दे की ओट में [illegible] के लिए उकसाने वाले हैं, इसलिए गुप्त हैं? मेरी राय में इन सरक्यूलरो में कानूनों का स्पष्ट ही भंग होता है। इन सरक्यूलरो से पता चलता है कि [illegible] जिले मे कांग्रेस कार्यकर्ताओ के नाम नीचे लिखा असाधारण नोटिस जारी किया गया था—

फौजदारी दफा १४४ के मुताबिक हुक्म

"चूंकि मुझे यह बताया गया है कि जिले के किसानों की मौजूदा हालत को और किसानों तथा जमींदारों के आपसी तनाव को मद्देनजर रखते हुए, यह काबिले ख्वाहिश है कि आप किसी तरह की तकरीर न करें न कोई बात जबान से निकाल, न काश्तकारों में किसी प्रकार का प्रचार करें, क्योंकि बहुत मुमकिन है कि उससे अशान्ति पैदा हो, इसलिए मैं, एस० एस० एल० दर आई० सी० एस० जिला मैजिस्ट्रेट रायबरेली आपको...फौजदारी दफा १४४ के मुताबिक हुक्म करता हूं कि आप दो महीनों के लिए जिले के किसानों और जमींदारों के झगड़े या राजनीतिक परिस्थिति के बारे में न किसी प्रकार का भाषण करें, न कोई बात कहें, न किसी तरह की सभाओं में जायं, न किसी प्रकार की पत्रिकाएं बांटें, न चन्दा इकट्ठा करें और न किसी तरह की ऐसी लिखा-पढ़ी या प्रचार करें जिसका प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष सम्बन्ध किसानों की, मजदूरों की या राजनीति की समस्याओं से हो।

"मेरे हस्ताक्षर और कोर्ट की मुहर के साथ इस १० जून १९३१ को जारी किया गया।

जिला मजिस्ट्रेट, रायबरेली

यह लिखते हुए मुझे खबर मिली है कि यह नोटिस वापस ले लिया गया है। इस नोटिस के यह मानी थे कि कांग्रेस अपने तमाम काम कतई बन्द कर दें, मानो कांग्रेस के साथ सरकार की लड़ाई चल रही हो। समझौते को तोड़ने का यह बिल्कुल स्पष्ट और निहायत खराब ढंग था। भले के लिए या बुरे के लिए फिलहाल सरकार और महासभा के दरम्यान सुलह है। और प्रान्तीय सरकारों और जिला हाकिमों का यह फर्ज है कि वे सुलह की कदर करें। अगर उन्हें समझौता पसन्द नही है और वे समझते हैं कि कांग्रेस खेल नही खेल रही है तो उन्हें केन्द्रीय सरकार से कहना चाहिए कि वह समझौते से इन्कार कर दे। मैं पाठकों को कहना चाहता हूं कि इस हुक्म के बारे में भी, जो स्पष्ट ही समझौते के बिल्कुल खिलाफ है, मैंने यह सलाह दी है, कि जबतक मैं केन्द्रीय सरकार से निपट न लूं और कार्य समिति कोई निर्णय न कर ले कोई इस हुक्म का अनादर न करे। इसलिए मुझे इस बात की खुशी है कि संयुक्तप्रान्त की सरकार ने यह हुक्म लौटा लिया है। पं० जवाहरलाल नेहरू ने जोरदार शब्दों में संयुक्तप्रन्त की सरकार का ध्यान इस हुक्म की ओर दिलाया था।

इस वापसी के साथ ही गुप्त परिपत्रक और उनमें प्रतिपादित नीति भी लौटा ली जानी चाहिए। जब मैं नैनीताल में था, मुझे विश्वस्त रूप से पता चला था कि संयुक्तप्रान्त की सरकार की नीति किसी का पक्ष लेने की नही है। उसने

जिला हाकिमों को हिदायत दी थी कि वे जमीदारो और किसानो के दरम्यान पूरी पूरी निष्पक्षता का पालन करें। लेकिन जैसा कि नीचे लिखी रिपोर्ट के सक्षेप से पता चलता है स्पष्ट ही उक्त नीति मे परिवर्तन किया गया है—

"रायबरेली की परिस्थिति में एकाएक एक बुरा परिवर्तन हो गया है। सन्धि के दिनों में सरकार ने कांग्रेस के संगठन पर हमला किया है। फौजदारी दफा १४४ के मुताबिक उसके खास-खास कार्यकर्त्ताओं की जबान बन्द कर दी गई है। इस हुक्म की आज्ञाएं इतनी व्यापक और दूर तक पहुंचनेवाली हैं कि एक बार इस दफ़ा का शिकार होने पर कोई भी कार्यकर्त्ता आज रायबरेली मे किसी भी प्रकार की आवश्यक सेवा करने के लिए बिल्कुल निकम्मा हो जाता है। रायबरेली की जिला कांग्रेस कमेटी के सभापति, मंत्री, तहसीलों के मुख्य कार्यकर्त्ता और जिला कांग्रेस कमेटी के कार्यशील सदस्य, सब-के-सब दफा १४४ के शिकार हैं। सन्धि के दिनों में कांग्रेस के संगठन को इस तरह दबा देने के इस अप्रत्यक्ष तरीके का लोग खूब विरोध कर रहे हैं। लोकमत की और स्वयं हमारी यह इच्छा है कि हम जल्दी-से-जल्दी इस हुक्म का अनादर करें। फिर भी हमने सन्धि की शर्तों का पालन किया है, हालांकि हम यह महसूस करते हैं कि इस तरह हम जिले के किसानों की इस नाजुक ऐतिहासिक अवसर पर सेवा करने के अपने अधिकार से अन्याय-पूर्वक वञ्चित रक्खे जाते हैं।

"जिले के डिप्टी कमिश्नर जब से सर मालकम हेली की मुलाकात लेकर वापस आये हैं, तब से यानी जून के पहले सप्ताह से यह परिवर्तन स्पष्ट ही पाया गया है। इसी समय से किसानों के प्रति अधिकारियों का रुख, जो पहले सहानुभूतिपूर्ण था, अब दुर्भाव मे बदल गया है, और आज रायबरेली मे जिले के एक छोर से दूसरे छोर तक दमन का दौरदौरा पाया जाता है। सरकारी सहायता का विश्वास मिलने से ताल्लुकेदारों ने लगान-वसूली के अपने पुराने जंगली तरीको से काम लेना शुरू किया है। अत्याचारपूर्ण ग़ैर-कानूनी तरीकों का छूट से उपयोग किया जा रहा है। एक ताजा उदाहरण है, कि अभी गत परसो ही एक काश्तकार रायबरेली के सिविल अस्पताल मे भर्ती किया गया है, उसकी एक आंख फूट गई है, और नाक की हड्डी टूट गई है। यह उस संगठित हमले का नतीजा है, जो ताल्लुकेदार के लोगों ने लगान-वसूली के लिए गांववालों पर किया था। अभी उस दिन एक गर्भवती स्त्री बेहोश होने तक पीटी गई। उसका मामला अदालत में पेश है। ताल्लुकेदार आमतौर पर यह मानने लगे हैं कि सिर फोड़ने और हड्डी तोड़ने के सिवा ये बेखटके किसान को किसी भी हद तक मार सकते हैं, क्योंकि उन्हें विश्वास है कि गवर्नमेण्ट इन मामले मे सुनी-अनसुनी करेगी। श्री. . .के ओर के

तालुकेदार, जो पहिलेही कठोर थे, अब और भी अधिक कठोर हो गये हैं। ये लगान-वसूली के लिए गांवों में बराबर दस-बारह लठैतों द्वारा डाके डलवाते हैं। वे किसानों को गालियां देते, मारते और भयभीत करते हैं। मुर्गा बनाने की प्रथा, यानी बेहोश होने तक किसान को धूप में खड़ा कर सब गांव वालों के सामने जूते से पीटने का रिवाज, बिल्कुल मामूली-सा हो गया है। लेकिन यह बहुत ही अपमान-जनक है, और इससे किसानों में गम्भीर असन्तोष पैदा हो गया है। ऐसे ताल्लुकेदारों का यह भी एक आम रिवाज है कि वे लगान की मद में जमा करने के लिए किसी प्रकार की अदालती कार्रवाई के बिना किसान की जायदाद जब्त कर लेते हैं। ऐसे उदाहरण हमारी नजर में हैं, जिनमें जबरदस्ती किसान के भूसे पर कब्जा करके वह तालुकेदार के यहां पहुंचाया गया है; मवेशी के साथ भी यही कार्यवाही की गई है; बच्चों के बदन से गहने नोच लिये गये हैं और पिता को लगान की अदायगी के लिए मजबूर करने की गरज से बालक पीटे गये हैं।

"सरकार ने जमींदारों को वचन दिया है कि वह इन्साफ़ मिलने से पहले ही उन्हें किसानों की जायदाद जब्त करने देगी। अमीन के साथ कुछ पुलीसवाले इसी-लिए रहते हैं कि जरूरत पड़ने पर डिग्री की बजावरी में उसकी मदद कर सकें, लेकिन आमतौर से उनका उपयोग किसानों को भयभीत करने के लिए किया गया है। रायबरेली जिले के हरएक डिवीजन में आपको ऐसे सैकड़ों मामले मिलेंगे।

"सरकार ने जमींदारों को इस बात का भी पूरा-पूरा आश्वासन दिया है कि अगर वे देहात के कांग्रेस कार्यकर्त्ताओं के विरुद्ध दफ़ा १०७ या किसी और दफ़ा के अनुसार जाब्ते की कार्रवाई करेंगे, तो सरकार उनकी सहायता करेगी। जमींदारों से यह बात भी निश्चयपूर्वक कही गई है कि अगर उन्हें अच्छे गवाह न भी मिलें तो मौजूदा हालत में मामूली गवाहों से काम चल सकेगा। फलतः एकाएक एक बड़ी तादाद में ऐसे मामले दायर हो चुके हैं और उससे ज्यादा तादाद में अभी होने वाले हैं। इस प्रकार पन्द्रह दिन के अन्दर ही रायबरेली जिले में महासभा के संगठन के टूट पड़ने की पूरी सम्भावना है। लाठी प्रहार तो मामूली बात हो रही है।"

भग्न सन्धि की इस दुःखमय कथा की कुछ दुःखपूर्ण बातें मैंने इसमें से निकाल डाली हैं।

इस चित्र को पूरा करने के लिए मैं यह भी कह दूं कि मैंने शायद हजारों की संख्या मे, किसानों के नाम जारी की गई नोटिसों की प्रतियां देखी है, जिनमें उन्हें इस बात के लिए आगाह किया गया है कि अगर उन्होंने फलां महासभा-वादियो के साथ किसी प्रकार का सम्बन्ध रखा, तो बहुत सम्भव है कि उनपर मामला चलाया जाय।

और ये सब कार्रवाइया डिप्टी कमिश्नर के नैनीताल जाकर गवर्नर से मिल आने के बाद हुई हैं। मैं उम्मीद करता हू कि इस नैनीताल की मुलाकात का उस दमन-चक्र के साथ कोई सम्बन्ध नही है—उक्त रिपोर्ट से जिसकी मनस्विता जाहिर है। यह सब कुछ ही क्यो न हो, महासभा वालो की ओर से जल्दबाजी न होनी चाहिए और जबतक कार्यसमिति परिस्थिति पर विचार न करले, कोई ऐसे हुक्मो को भग न करे। कार्यसमिति की आगामी बैठक ७ तारीख को होनेवाली है, उसमे वह उस असाधारण परिस्थिति पर विचार करेगी, जो इधर कई प्रान्तो मे पैदा हो रही है।

—अंग्रेजी। यं० इं०। हि० न० जी०, २।७।१९३१।]

९१. संयुक्त प्रान्त में दमन

सुल्तानपुर में

स्थानीय महासभा समिति के मन्त्री लिखते हैं—

"यह खूब जानी हुई बात है कि इस प्रान्त के काश्तकार अपने लगान का आधा भी अदा करने मे समर्थ नहीं है, फिर भी इस जिले के ठिकानो के कोर्ट आव वार्ड्स के मैनेजर, तालुकेदार और दूसरे छोटे-मोटे जमींदार किसानो के साथ जोर-जबर्दस्ती करके और उन्हें दबाकर उनसे पूरा लगान वसूल करने की कोशिश कर रहे हैं। ठिकानों के कोर्ट आव वार्ड्स के मैनेजर ने फौजदारी दफा १०७ के अनुसार कई जत्थो मे कुछ गांवो के काश्तकारो पर मामला चलाने की पहल की है। और तालुकेदारो ने उनका अनुसरण किया है। इस तरह इस दफा के मुताबिक करीब ९० आदमियो पर केस चलाये गये हैं। भवन शाहपुर के तालुकेदार बनाम बेनी प्रसाद वगैरा का जो केस मुसाफिर खां एस० टी० ओ० की अदालत मे पेश है उसमे काश्तकार लगान अदा करने को तैयार थे, लेकिन उन्हें बरी करने के लिए यह पर्याप्त नहीं समझा गया और उनसे कहा गया कि वे तालुकेदारों से माफी मांगे और अपने गांव मे जो राष्ट्रीय झण्डे उन्होंने लगा रखे हैं उन्हें निकाल डालें। उनके ऐसा करने से इन्कार करने पर वे गिरफ्तार करके ता० १८ जून १९३१ के दिन इस बिना पर जेल हवालात भेज दिये गये कि वे समाज के लिए खतरनाक हैं—यह मानकर कि बहुत सम्भव है कि वे सुलह को भंग करेंगे और सार्वजनिक शान्ति मे खलल डालेंगे। इसलिए या तो उन्हें मामले की अगली सुनवाई के वक्त हाजिर होने के लिए जमानत देनी चाहिए या जेल जाना चाहिए। चूंकि इन मामलों की

सुनवाई कई बार हो चुकी थी और इस दरम्यान नतीजा कुछ भी न निकला था, काश्तकार और उनके सलाहकार ऐसे इत्तिफाक के लिए तैयार न थे, फलतः ये बेचारे जेल में सड़ रहे हैं।

"सरकारी अधिकारी ऐसे भाव से गांधी-इरविन समझौते का पालन कर रहे हैं! फौजदारी दफा १४४ का वेखटके उपयोग किया जा रहा है। जिला महासभा समिति के तमाम खास-खास लोगों को, जिनमें सभापति स्वामी नारायण देव, उपसभापति पं० रामलाल और संगमलाल वकील और मन्त्री श्री पी० टी० सत्यदेव शास्त्री भी शामिल हैं, इस तरह की नोटिसें मिली हैं। इस स्थान के स्थानापन्न डिप्टी कमिश्नर इस बात के लिए अपनी शक्ति भर कोशिश कर रहे हैं कि लन्दन में दुबारा गोलमेज परिषद के करने से बहुत पहले वह महासभा की प्रवृत्तियों को कुचल डालें।"

मथुरा में

स्थानीय महासभा के मन्त्री लिखते हैं—

"२६ जून की रात को नौझील में तेज के श्री रघुबीर सिंह के सभापतित्व में एक सार्वजनिक सभा हुई थी। एकाएक कुछ कान्स्टेबलों के साथ सब-इन्सपेक्टर पुलिस, गांव का चौकीदार और कुछ दूसरे लोग सभास्थान पर आ पहुंचे और जबर्दस्ती सभा भंग करने के लिए आगे बढ़े। खैर जिला अलीगढ़ की तहसील महासभा समिति के सभापति श्री जगन्नाथ जी को, जो उस वक्त भाषण कर रहे थे, उन्होंने गालियां दीं और धमकी देने तथा जोर-जबरदस्ती का प्रदर्शन करने पर भी श्रोताओं में से जिन लोगों ने तितरबितर होने से इन्कार किया वे या तो सभास्थान से घसीट कर बाहर निकाले गये या धक्का देकर वहां से दूर हटाये गये। जब कुछ लोगों ने सब-इन्सपेक्टर पुलिस से यह कहा कि वह पुलिस को ऐसा व्यवहार करने से रोके, तो वह उबल पड़ा और उन्हें गाली देने लगा। यही नहीं, उसने खुद लोगों को पुलिस से पिटवाया भी। लाठी की चोट के कारण नौझील के श्री घूरेलाल वेहोश हो गये और उन्हें सिर पर १ इंच गहरा तथा दो इंच चौड़ा घाव हो गया। उन्हें शरीर के दूसरे कई भागों पर, जैसे कि पैर, पीठ, छाती, चूतड़ वगैरह पर भी बहुतेरी लाठियां पड़ीं। इतने से सन्तुष्ट न होकर पुलिस ने उनके लड़के पर भी हमला किया और श्री इन्द्रमणि, खेर तहसील महासभा समिति के सभापति पण्डित जगन्नाथ और वहीं के कांग्रेस कार्यकर्त्ता श्री भूपति सिंह और दामोदर भी पुलिस के इस आक्रमण के शिकार हुए।"

इन आरोपों के रहते हुए और अखबारों में छपे हुए लखनऊ के इस संवाद

के सामने कि लगभग ७०० मुकदमे उधर पेश हैं, इस सूचना से विश्वास पैदा नही होता कि जिन गुप्त सरक्यूलरो का जिक्र पिछले सप्ताह इन स्तम्भो मे किया गया था, वे वापस ले लिये गये हैं। अगर इस वापसी के वाद सव जगह की स्थिति मे इस तरह सुधार न हुआ और मुकदमे वन्द न हुए तो इस वापसी का कोई अर्थ नही। यह तो एक पकडी हुई भूल को नाम मात्र के लिए सुधारना ही हुआ। युक्तप्रान्त मे पण्डित गोविन्दवल्लभ पन्त के मार्फत महासभा और सरकार के बीच एक सम्वन्ध स्थापित हो गया था। सरकार इस वात की शिकायत नही कर सकती कि पन्तजी मदद करने को राजी न थे या काग्रेस का प्रभुत्व उसके कार्यकर्त्ताओ पर से उठ गया था। सन्धि के इन दिनो में सभा का जवर्दस्ती तितर-वितर किया जाना कभी न्यायोचित नही हो सकता। गत २४ मई को जव मैं मथुरा से होकर गुजर रहा था, वहा के लोगो ने मुझे मथुरा से कुछ दूर स्थित विजरी गाव मे पुलिस के धावे का किस्सा सुनाया था। मैंने लोगो को सलाह दी थी कि वे उच्चाधिकारियो से इस वात की शिकायत करें। लेकिन जहा तक मुझे मलूम है उन्हे कोई राहत नही मिली। मैंने जानवूझ कर यह समाचार रोक रक्खा, हालाकि इस सम्वन्ध मे तफसीलवार लेखा मेरे पास मौजूद था।

—हि० न० जी०, ९।७।१९३१।]

९२. गणेशशंकर-स्मारक

गणेशशकर विद्यार्थी स्मारक कोष की यह अपील जनता के सामने वहुत अर्से से पेश है। इस अपील पर प० जवाहरलाल ने और दूसरो ने, जो स्वर्गीय विद्यार्थी जी के व्यक्तिगत मित्र और साथी थे, दस्तखत किये हैं।

श्री श्रीप्रकाश सेवाश्रम, वनारस छावनी, मन्त्री और कोषाध्यक्ष हैं। कोष की तमाम रकमे उन्ही को भेजनी चाहिए। इस स्मारक के उद्देश्य इस प्रकार हैं—

१ हिन्दुओ तथा मुसलमानो की रक्षा करते हुए, गणेशशकर ने जिस जगह देह छोडी वहा फव्वारा या स्तम्भ या ऐसा ही कोई स्मारक-चिह्न वनाना।

२. 'प्रताप ट्रस्ट' की सहायता करना। गणेशशकर ने यह ट्रस्ट वनाकर अपने प्रसिद्ध पत्र 'प्रताप' की व्यवस्था इसके सुपुर्द कर दी थी। उनके जीवन-काल की मुख्य सेवा इस पत्र के द्वारा हुई है। 'प्रताप' की नीव को मजबूत बनाने के लिए उसके ट्रस्ट की सहायता करनी है।

३. कानपुर जिले के नरवल गांव में स्थापित आश्रम की मदद करना। इस आश्रम के द्वारा करीब २०० गांवों का संगठन हुआ है। कताई और खादी-प्रचार इस आश्रम के कार्य के मुख्य अंग है।

४. शेष रकम संयुक्त प्रान्तीय समिति को इस शर्त पर दी जाय कि वह उस द्रव्य द्वारा गणेशशंकर राष्ट्रीय सेवा-संघ की स्थापना करे। यह संघ संयुक्त प्रान्तीय सेवा-संघ के ढंग पर ही यानी प्रान्त के पूरे समय के सेवकों की मदद करने के लिए ही, कायम किया जाय।

स्मारक समिति ने सिर्फ एक लाख रुपये के लिए अपील की है। मेरी राय में स्मारक के उद्देश्य के लिए, और स्व० विद्यार्थी जी के स्मारक के लिए यह रकम बहुत ही कम है। इसलिए मैं आशा रखता हूं कि जल्दी ही इसका जवाब मिलेगा जिससे समिति धन-संग्रह का काम बन्द करके स्मारक का काम शुरु कर सके।

मो० क० गांधी

--गुजराती। न० जी०। हि० न० जी०, ३०।७।१९३१।]

९३. युक्तप्रान्त में अत्याचार

यू० पी० में जगह-जगह कांग्रेस के कार्य में बाधा डाली जाती है। शान्तिपूर्ण सभाएं भंग कर दी जाती है और कांग्रेस कार्यकर्त्ताओ पर अत्याचार किये जाते हैं। उदाहरणार्थ मथुरा जिले के बझारी गांव में २० मई को तीन लारियों पर पुलिस वाले पहुंचे। प्रायः हर एक कांग्रेस कार्यकर्त्ता के घर पर हमला किया। राष्ट्रीय झण्डे छीन कर फाड़े और जला डाले गये। लोगों पर डकैती जैसे भयंकर झूठें अभियोग लगाये जाकर उनके खिलाफ झूठे सबूत गढ़े जा रहे हैं। नौझील में (मथुरा) में २६ जून को एक शान्तिपूर्ण सभा जबरदस्ती भंग कर दी गई। जिन लोगों ने हटने से इन्कार कर किया वे घसीट कर अलग कर दिये गये। लाठियां भी चलाई गईं। लाठी की मार से श्री गोरेलाल बेहोश हो गये। रयाल मे रहमत उल्ला नामक कांग्रेस-कार्यकर्त्ता को पुलिसवालों ने १० जुलाई को जूते से पीटा और गांव छोड़कर जाने को तरह-तरह की धमकियां दी। मथुरा जिले के ५३ कांग्रेस कार्यकर्त्ताओं पर दफा १०८ (नेकचलनी की जमानत मुचलके दाखिल करने) के और सुल्लतानपुर और बहराइच जिला कांग्रेस कमेटी के सभी प्रमुख कार्यकर्त्ताओं पर १४४ दफा के मुकदमे चल रहे है। बाराबंकी भर में १४४

दफा लगा दी गई है। रायबरेली मे ३०० मुकदमें चल रहे हैं, पचो, सरपचो और काग्रेस कार्यकर्त्ताओ को फसाने के लिए १४४ दफा का प्रयोग किया जा रहा है। समन मे साफ लिख दिया जाता है कि यदि तुम पूरा लगान अदा कर दो, जमीदार से माफी मागो, अपने घर और गाव से राष्ट्रीय झण्डा हटा दो और काग्रेस के स्वयसेवको की भर्ती करना छोड दो तो मुकदमा उठा लिया जायगा। ७ जून को बाराबकी के डिप्टी कमिश्नर ने ददरा के लोगो को काग्रेस से अलग हो जाने और गाधी टोपी उतार देने के लिए दबाया और इस प्रतिज्ञापत्र पर दस्तखत कराने की कोशिश की कि काग्रेस-कमेटी से हमारा कोई सम्बन्ध नही है। २२ जून को रामनगर थाने का दारोगा एक गाव के तीन आदमियो को गिरफ्तार कर ले गया और दूसरे लोगो को धमकाया कि काग्रेस से इस्तीफा देकर अलग न हुए तो तुम्हारे लिए अच्छा न होगा। बस्ती मे जिला मैजिस्ट्रेट ने खुले तौर पर गाधी टोपी लगाने की मनाई की और गोडा जिले मे इसी कारण एक कार्यकर्त्ता बुरी तरह पीटा गया। कु० राघवेन्द्र प्रताप सिह डिप्टी कमिश्नर से मिलने गये तो उन्हें यह धमकी दी गई कि इस जिले में काग्रेस का काम बन्द न हुआ तो आपके हक मे ठीक न होगा।

सरकारी कर्मचारियो के इशारे से नही तो उनकी उपेक्षा के कारण जमीदारों के जरिए भी लोग बुरी तरह सताये जा रहे हैं। रायबरेली जिले के ताल्लुकेदारो ने सरकार की सहायता का वचन पाकर लगान की वसूली मे लोगो पर पाशविक अत्याचार किये। उनके सघटित आक्रमण से हाल ही मे एक किसान की आख फूट गई और नाक की हड्डी टूट गई। एक गर्भवती स्त्री मारते-मारते बेहोश कर दी गई। बहराइच जिले के नानपारा मे पुलिस और जमीदारो ने मिलकर काग्रेस स्वयसेवको और किसानो को मारा और प्रमुख काग्रेस कार्यकर्त्ताओ को गिरफ्तार कर लिया और कई स्वयसेवको के घर जला दिये गये। गोडा जिले की बलरामपुर रियासत के बरईपुर गाव को मई के पहिले हफ्ते मे पुलीस और ताल्लुके-दार के आदमियो ने घेर लिया; लोगो को फौरन लगान दाखिल करने को कहा गया; उन्होंने दो दिन की मुहलत मागी, वह तक न देकर उन्हे बुरी तरह पीटा गया और फिर उनमें से २३ आदमी कई दफाए लगाकर गिरफ्तार कर लिये गये। तीसरे दिन फिर २५० आदमियो के साथ उस गाव पर चढाई की गई। स्त्रियो तक को धक्के-मुक्के खाने पडे, वे नगी और बेइज्जत की गई। मार से एक आदमी मर तक गया। लोगो के घरो से अनाज निकाल कर मिट्टी के तेल से नष्ट कर दिया गया। भिमरिया गाव मे तीन दिन तक किसी आदमी को मार के डर से कुए से पानी न भरने दिया गया; लगान चुका देने पर ही उन्हे पानी भरने दी

इजाजत मिली। स्त्रियों के साथ दुर्व्यवहार किया गया। उनके साथ एक घोर अनुचित कार्य किये जाने की भी शिकायत मिली है।

इलाहाबाद जिले में किसानों को जूतों और डण्डों से पीटा जाना, भाले और दूसरे हथियारों से काम लिया जाना और किसानों को तंग और बेइज्जत करने के लिए जितने भी उपाय हो सकते हैं, सबके काम लिया जाना आम बात रही है। गोरखपुर जिले में जमींदारों ने खूब मनमानी चला रक्खी है। नमूने के लिए सिर्फ दो घटनाएं दी जाती हैं। ३१ अप्रैल को सिसवा बाजार के जमींदार ने १५० बदमाशों के साथ खेसरों, गिदवापाल, मनसा, छपरा और अहरौली गांवों पर चढ़ाइयां की और राजबली नब्बा, लूनिया, भीमल और चौकर का माल-असबाब लुटवा लिया। राजनगर में एक जमींदार ने पुलिस की सहायता से किसानों पर गोली चलाई। एक आदमी मर गया। किसानों को घूप में खड़ा कर मुर्गा बनाना, जूतों से पीटना और बिना जाब्ते की कार्रवाई के उनके माल-मवेशी जब्त कर लेना मामूली बात हो रही है। उन्नाव में लाठी-डण्डे के अन्धाधुन्ध प्रयोग, ताले तोड़कर दरवाजा उतार कर घर में घुस जाने, स्त्रियों को अपमानित करने और उनके गहने लूट लिये जाने के अनेक उदाहरण हैं। आगरा जिले में किसानों से सरकारी कर्मचारी साफ कह रहे हैं कि कांग्रेस का साथ छोड़ो, तब छूट मिल सकती है। इसीलिए सैकड़ों गांवों को छूट नहीं मिली।

मो० क० गांधी

—अंग्रेजी। यं० इं०। हि० न० जी०, २७।८।१९३१।]

९४. हमारी असफलता

इलाहाबाद का दंगा

इलाहाबाद में—जो कि महासभा (कांग्रेस) का सदर मुकाम है—साम्प्रदायिक दंगा होने और उसके लिए पुलिस ही नहीं बल्कि फौज को भी बुलाने की जरूरत पड़ने से मालूम पड़ता है कि महासभा अभी इस योग्य नही हुई कि ब्रिटिश सत्ता का स्थान ले ले। यह बात चाहे जितनी नागवार लगे, लेकिन अच्छा यही है कि हम इस नग्न सत्य को महसूस करें और उसका मुकाबला करें।

महासभा सारे भारत के प्रतिनिधित्व का दावा करती है, न कि सिर्फ उन थोड़े से लोगों का जो कि उसके सदस्य हैं। इसलिए जो लोग उसके विरोधी हैं और जो हो सके तो इसे कुचल भी डालेंगे, उनका भी इसे प्रतिनिधित्व करना चाहिए।

जबतक हम इस दावे को इस अच्छाई के साथ सिद्ध न करें तवतक हम ऐसी स्थिति मे नही हो सकते कि ब्रिटिश सरकार को हराकर स्वाधीन राष्ट्र के रूप मे अपना काम चला सकें।

ब्रिटिश शासन को चाहे हम हिसा से हटाना चाहें या अहिसा से, यह वात तो दोनो ही सूरतो मे लागू होती है।

वहुत सम्भव है कि जव ये पक्तिया छपकर प्रकाशित होंगी तवतक इलाहावाद तथा अन्य स्थानो मे शान्ति स्थापित हो चुकी होगी। मगर एक सस्था के रूप में महासभा की सम्पूर्ण रूप से ब्रिटिश सत्ता का स्थान लेने की तैयारी है या नही, इस वात की जाच-पडताल करने मे हमे उससे कोई मदद नहीं मिलेगी।

कोई भी काग्रेसवादी गम्भीरता के साथ इस वारे मे सन्देह नही करेगा कि इस समय महासभा ऐसी स्थिति मे नही है कि वह जो चाहे सो कर सके। अगर उसमे ऐसी सामर्थ्य हो तो वह इसके लिए किसी के कहने की प्रतीक्षा नही करेगी। लेकिन हरेक काग्रेसवादी का यह विश्वास है कि महासभा तेजी के साथ ऐसी संस्था वन रही है। हरिपुरा की ज्वलन्त सफलता को इस वात के अत्यन्त ठोस सवूत के रूप मे पेश किया जायगा।

ये दगे और दूसरी चन्द वातें ऐसी हैं जिनपर हमें ठहरकर यह सोचना ही चाहिए कि क्या सचमुच महासभा का विकास हो रहा है और वह अधिकाधिक शक्ति प्राप्त करती जा रही है? मुझे यह मानना ही पड़ेगा कि यह दावा करने का अपराधी मैं ही हूं। क्या ऐसा करने मे मैंने जरूरत से ज्यादा जल्दवाजी नही की?

मेरा यह विश्वास है कि महासभा की व्यापक वृद्धि उसके द्वारा अहिसा की नीति का स्वीकार और पालन करने से हुई है। फिर वह चाहे कितनी ही अधूरी क्या न हो। लेकिन अव काग्रेसी अहिसा के रूप पर विचार करने का वक्त आ गया है। सवाल यह है कि यह अहिसा कमजोर और असहायो की अहिसा है या वलवान और सशक्तो की? अगर कमजोरो की हो तो यह हमे अपने ध्येय पर कभी नही पहुचायेगी। वल्कि देर तक इसका पालन किया गया तो हमे हमेशा के लिए स्वराज्य के अयोग्य वना देगी। क्योकि कमजोर और असहाय तो असल मे इसलिए अहिसक वनते हैं कि इसके सिवा वे कुछ कर ही नही सकते लेकिन वस्तुत उनके दिलो मे हिसा समाई रहती है और उसके प्रदर्शन के लिए वे केवल अवसर की प्रतीक्षा मे रहते हैं। अत काग्रेसवादियो के लिए यह आवश्यक है कि वे व्यक्तिगत और सामूहिक रूप से इस वात की जाच करें कि उनकी अहिसा

किस किस्म की है। अगर उसका मूल सच्ची ताकत में न हो तो महासभा के लिए सबसे अच्छी और ईमानदारी की बात यह होगी कि वह ऐसी घोषणा करके अपने व्यवहार में आवश्यक रद्दो बदल कर ले।

अब तक याने सत्रह साल तक अहिंसा पर अमल कर लेने के बाद महासभा को इतनी सामर्थ्य तो हो ही जानी चाहिए कि वह कुछ हजार नहीं बल्कि लाखों ऐसे स्वयंसेवकों की अहिंसक सेना खड़ी कर सके जो उन सब अवसरों पर काम आ सके जिनके लिए कि पुलिस और फौज की जरूरत पड़ती है। इस प्रकार हमारी स्थिति ऐसी होनी चाहिए कि शान्ति-स्थापना के लिए मरनेवाले एक वीरगुप्ता ही नहीं बल्कि सैकड़ों सामने आ सकें और अहिंसक सेना हथियारबन्द सैनिकों की तरह न केवल दंगे के वक्त बल्कि शान्ति के समय भी काम करें। ये सैनिक बराबर ऐसी रचनात्मक हलचलों में लगे रहेंगे जिनसे कि दंगों का होना ही नामुमकिन हो जाय। साथ ही जिस प्रकार उनका यह फर्ज होगा कि वे विविध जातियों को सम्मिलित करने के अवसर ढूंढ़ते रहें, शान्ति का प्रचार-कार्य करते रहें, ऐसी हलचलों में लगे रहें जिससे अपने मुहल्ले या डिवीजन के हरेक मर्द-औरत बच्चे से सम्पर्क बना रहे और भीड़ के क्रोध को शान्त करने के लिए पर्याप्त संख्या में अपने प्राणों की आहुति देने के लिए तैयार रहें। कुछ सौ या कुछ हजार ऐसी निर्दोष मृत्युएं ऐसे दंगों को हमेशा के लिए समाप्त कर देंगी। जानबूझ कर भीड़ के क्रोध का शिकार होनेवाले कुछ सौ तरुण स्त्री-पुरुषों की आहुति ऐसे पागलपन का मुकाबला करने के लिए पुलिस और फौज-प्रदर्शन की बनिस्बत निश्चय ही किसी भी दिन एक सस्ता और बहादुराना उपाय ही होगा।

यह कहा जाता है कि जब हम स्वाधीनता प्राप्त कर लेंगे तब दंगे तथा अन्य ऐसी बातें नहीं होंगी। लेकिन मुझे ऐसा लगता है कि स्वतन्त्रता की लड़ाई के दर्मियान अगर हम अहिंसात्मक कार्य के तत्व को अच्छी तरह समझ कर हरेक कल्पनीय परिस्थिति में उसका इस्तेमाल न करें तो हमारी यह आशा थोथी ही होगी। जिस हद तक कि कांग्रेसी मन्त्रियों को पुलिस या फौज का सहारा लेना पड़ा है उस हद तक मेरी राय में हमें अपनी असफलता मंजूर करनी ही चाहिए। क्योंकि दुर्भाग्य-वश यह बिल्कुल ठीक है कि मन्त्री लोग इसके सिवा कुछ कर ही नहीं सकते थे। अतः मेरी ही तरह अगर हरेक कांग्रेसवादी और कांग्रेस-कार्य-समिति भी, यह सोचती हो कि हम असफल हुए हैं तो मैं चाहूंगा कि वे इस बात पर विचार करें कि हम असफल क्यों हुए?

—अंग्रेजी। ह० ज०। ह० से०, २६।३।१९३८।]

९५. कमला नेहरू-स्मारक

गत १९ तारीख को इलाहावाद मे मुझे कमला नेहरू-अस्पताल की आधार-शिला रखने का सौभाग्य प्राप्त हुआ। यह अस्पताल एक सच्ची देश-सेविका और महान् आध्यात्मिक सौन्दर्य रखनेवाली महिला का न केवल उपयुक्त स्मारक होगा, वल्कि उन्हे दिये हुए मेरे इस वचन की पूर्ति भी उससे हो जायगी कि उनकी मृत्यु के वाद भी मैं यह देखते रहने का प्रयत्न करता रहूगा कि जिस काम की उन्होने अपने ऊपर जिम्मेवारी ले रक्खी थी वह ठीक तरह से चल रहा है या नही। वह अपने स्वास्थ्य की शोध मे यूरोप जा रही थी। उनकी वह युरोप-यात्रा मृत्यु-शोध की यात्रा सावित हुई। जाते वक्त उन्होने मुझे लिखा था कि मैं या तो उनके साथ-साथ वम्वई तक चलू या उन्हे देखने सीधे वम्वई पहुच जाऊ। मैं वम्वई गया। उन्हे जो थोडा-सा वक्त मैं दे सका उस वीच मे उन्होने मुझसे कहा—"अगर मेरा शरीर युरोप मे छूट जाये, तो जवाहरलाल जी ने स्वराज्य-भवन मे जो अस्पताल खोल रक्खा है और जिसे कायम रखने के लिए मैंने इतना तमाम परिश्रम किया है उसे देखते रहने का आप प्रयत्न करते रहेगे न कि उसकी वुनियादी स्थायी हो गई है?" मैंने उन्हे वचन दे दिया कि मुझसे जो कुछ हो सकेगा वह जरूर करूगा। इस स्मारक-कोष के लिए जो अपील निकाली गई थी उसमे मेरे शामिल होने का आधार अंशत मेरा यह वचन भी था। परिस्थितियो से विवश होकर धन-सग्रह के काम मे अधिक सक्रिय भाग नही ले सका। अपील पांच लाख के लिए की गई थी, पर आधी ही रकम आई है। स्मारक का शिलान्यास करते समय मैंने उपस्थित विराट् जन-समूह से अपील की, जिसमे धनी थे और ग़रीव भी थे कि जो कमी रह गई है उसे वे पूरा कर दें।

विज्ञ जनो के सगठन के लिए यह चीज़ आसान होनी चाहिए थी कि इतने अच्छे कार्य और एक महान् पुण्यस्मृति के लिए इतना धन एकत्र हो जाता।

ट्रस्टियो मे जीवराज मेहता और विधानचन्द्र राय जैसे भारत-विख्यात सुयोग्य डाक्टर हैं। अस्पताल को ठीक तरह से वनवाने की ओर उसके सगठन तथा प्रवन्ध की जिम्मेवारी उन्होंने ले ली है। मुझे आशा है कि न केवल यह आर्थिक कमी ही जल्द पूरी हो जायगी वल्कि अस्पताल के मामूली इस्तेमाल के लिए उपयुक्त स्टाफ जुटाने मे भी डाक्टरो को कोई कठिनाई नही होगी।

—अंग्रेजी। इलाहावाद, २०।११।१९३९। ह० ज०। [ह० से०, २५।११।१९३९]

किस किस्म की है। अगर उसका मूल सच्ची ताकत में न हो तो महासभा के लिए सबसे अच्छी और ईमानदारी की बात यह होगी कि वह ऐसी घोषणा करके अपने व्यवहार में आवश्यक रद्दो बदल कर ले।

अब तक याने सत्रह साल तक अहिंसा पर अमल कर लेने के बाद महासभा को इतनी सामर्थ्य तो हो ही जानी चाहिए कि वह कुछ हजार नहीं बल्कि लाखों ऐसे स्वयंसेवकों की अहिंसक सेना खड़ी कर सके जो उन सब अवसरों पर काम आ सके जिनके लिए कि पुलिस और फौज की जरूरत पड़ती है। इस प्रकार हमारी स्थिति ऐसी होनी चाहिए कि शान्ति-स्थापना के लिए मरनेवाले एक वीरगुप्ता ही नहीं बल्कि सैकड़ों सामने आ सकें और अहिंसक सेना हथियारबन्द सैनिकों की तरह न केवल दंगे के वक्त बल्कि शान्ति के समय भी काम करें। ये सैनिक बराबर ऐसी रचनात्मक हलचलों में लगे रहेंगे जिनसे कि दंगों का होना ही नामुमकिन हो जाय। साथ ही जिस प्रकार उनका यह फर्ज होगा कि वे विविध जातियों को सम्मिलित करने के अवसर ढूंढते रहें, शान्ति का प्रचार-कार्य करते रहें, ऐसी हलचलों में लगे रहें जिससे अपने मुहल्ले या डिवीजन के हरेक मर्द-औरत बच्चे से सम्पर्क बना रहे और भीड़ के क्रोध को शान्त करने के लिए पर्याप्त संख्या में अपने प्राणों की आहुति देने के लिए तैयार रहें। कुछ सौ या कुछ हजार ऐसी निर्दोष मृत्युएं ऐसे दंगों को हमेशा के लिए समाप्त कर देंगी। जानबूझ कर भीड़ के क्रोध का शिकार होनेवाले कुछ सौ तरुण स्त्री-पुरुषों की आहुति ऐसे पागलपन का मुकाबला करने के लिए पुलिस और फौज-प्रदर्शन की बनिस्वत निश्चय ही किसी भी दिन एक सस्ता और बहादुराना उपाय ही होगा।

यह कहा जाता है कि जब हम स्वाधीनता प्राप्त कर लेंगे तब दंगे तथा अन्य ऐसी बातें नहीं होंगी। लेकिन मुझे ऐसा लगता है कि स्वतन्त्रता की लड़ाई के दर्मियान अगर हम अहिंसात्मक कार्य के तत्व को अच्छी तरह समझ कर हरेक कल्पनीय परिस्थिति में उसका इस्तेमाल न करें तो हमारी यह आशा थोथी ही होगी। जिस हद तक कि कांग्रेसी मन्त्रियों को पुलिस या फौज का सहारा लेना पड़ा है उस हद तक मेरी राय में हमें अपनी असफलता मंजूर करनी ही चाहिए। क्योंकि दुर्भाग्य-वश यह बिल्कुल ठीक है कि मन्त्री लोग इसके सिवा कुछ कर ही नहीं सकते थे। अतः मेरी ही तरह अगर हरेक कांग्रेसवादी और कांग्रेस-कार्य-समिति भी, यह सोचती हो कि हम असफल हुए हैं तो मैं चाहूंगा कि वे इस बात पर विचार करें कि हम असफल क्यों हुए ?

—अंग्रेजी। ह० ज०। ह० से०, २६।३।१९३८।]

विद्वद्भिः सेवितः सद्भिर्नित्यमद्वेषरागिभिः
हृदयेनाभ्यनुज्ञातो यो धर्मस्त निबोधत॥

अर्थात् जिस धर्म को राग-द्वेषहीन, ज्ञानी सन्तो ने अपनाया है, और जिसे हमारा हृदय और बुद्धि भी स्वीकार करती है, वही सद्धर्म है।

अगर धर्म ऐसा न रहा, तो वह बच नही सकेगा। मैं अपने पत्र-लेखको को अलग-अलग जवाब नही दे सका हू, इसके लिए वे मुझे क्षमा करें। मैं उनसे निवेदन करता हू कि वे गुस्सा छोडे और इस व्याह को अपने आशीर्वाद दें। मुझे मिले हुए पत्रो से अज्ञान, असहिष्णुता और अरुचि के भाव टपकते हैं, उनमे एक प्रकार की ऐसी अस्पृश्यता है, जिसे कोई ठीक नाम देना मुश्किल है, लेकिन इसीलिए वह भयकर भी है।
—सेवाग्राम, २।३।१९४२। ह० से०, ८।३।१९४२।]

९७. तिहरी बेहूदगी

'नेशनल हेराल्ड' सिर्फ एक समाचारपत्र ही नही, बल्कि एक सस्था है। उसके सचालक-मण्डल के सदस्यो का उसमे कोई व्यक्तिगत स्वार्थ या आर्थिक हित नही। उसकी स्थापना पण्डित जवाहरलाल नेहरू ने की थी। केवल हिन्दुस्तान ही एक ऐसा देश है जहा ऐसे प्रतिष्ठित पत्र की जमानत जब्त हो सकती है। सचमुच तो जमानत ही क्यो, सरकार को अपने युद्ध-प्रयत्न मे उनकी अधिक-से-अधिक जितनी मदद मिल सके, उस सबकी दरकार है। उनके इक्के-दुक्के वाक्यो को वास्तविक प्रसग से अलग करके उनका नाजायज फायदा भी उसने उठाया है। बहरहाल कुछ भी हो, आखिर सरकार इस दमन-नीति मे आशा किस बात की रखती है? इस जमानत-जब्ती को युक्तप्रान्त के भूतपूर्व मन्त्री कांग्रेस के कार्यकर्ता और नेशनल हेराल्ड के डायरेक्टर रफी अहमद किदवई की गिरफ्तारी और नजरबन्दी के साथ मिलाकर देखिए। फिर इन दोनो कार्रवाइयो के साथ अखिल भारतीय कांग्रेस कमिटी के दफ्तर की बेहूदा तलाशी को देखिए, तो इन दुःखद प्रकरण की सारी तस्वीर हमारी आंखो के सामने खडी होती है। मेरी राय मे यह तिहरी कार्रवाई राष्ट्रीय युद्ध-प्रयत्न के रास्ते मे एक बडी रुकावट है। यह एक ऐसी दीवानी हरकत है कि जैसे हम जपान को यानी हिन्दुस्तान के दुश्मनों का निमन्त्रण ही देना चाहते हो। मैंने इस विदेशी सरकार को अपने हिन्दुस्तान के हक मे राजपाट छोड कर, फिर चाहे उसे कोई भी सभाले, चाहे वे मित्र हो या शत्रु, जो सलाह दी है, वह इस बात की यथार्थता को सिद्ध करती है। इसके अमल मे अलबत्ता दिलेरी की जरूरत है। इसमे खतरा तो है ही। परन्तु अंग्रेज सरकार

९६. कुमारी इन्दिरा नेहरू की सगाई

श्री फिरोज गांधी के साथ कुमारी इन्दिरा नेहरू की सगाई के सवाल को लेकर इधर मेरे पास ढेरों पत्र आये हैं। कई पत्र क्रोध और गाली से भरे हैं और कुछ में दलीलें देने की कोशिश की गई हैं। एक भी पत्र ऐसा नहीं है, जिसमें श्री फीरोज गांधी की अपनी योग्यता के बारे में कोई शिकायत हो। पत्र-लेखकों की दृष्टि में उनका एकमात्र अपराध यही कि वह पारसी हैं। मैं हमेशा से इस बात का घोर विरोधी रहा हूं कि स्त्री-पुरुष सिर्फ व्याह के लिए अपना धर्म बदलें। मेरा यह विरोध आज भी कायम है। धर्म कोई चादर या दुपट्टा नहीं, कि जब चाहा, ओढ़ लिया, जब चहा उतार दिया। इस व्याह में धर्म बदलने की कोई बात ही नहीं है। श्री फीरोज का नेहरू-परिवार के साथ बरसों पुराना घरोपा है; स्व० श्रीमती कमला नेहरू की बीमारी में श्री फीरोज़ ने अर्से तक उनकी तीमारदारी की थी। और इसीलिए कमलाजी के मन में फीरोज़ के लिए आत्मीय का-सा भाव था। युरोप में कुमारी इन्दिरा की बीमारी के वक्त भी इनकी बड़ी मदद रही थी। यहां से दोनों में मित्रता पैदा हुई। यह मित्रता संयमवाली थी। इसमें से आपसी चाह पैदा हुई। मगर दोनों में से किसी ने यह नहीं चाहा कि वे पण्डित जवाहरलाल की सम्मति और आशीर्वाद के बिना व्याह कर लें। जब जवाहरलाल जी को विश्वास हो गया कि इस आकर्षण की तह में स्थिरता है, तो उन्होंने अपनी स्वीकृति दे दी। लोग जानते है कि नेहरू परिवार के साथ मेरा कितना घना सम्बन्ध है। मैंने दोनों से बातचीत की। अगर यह सगाई स्वीकार न की जाती, तो वह क्रूरता होती। जैसे-जैसे समय बीतता जायगा, इस तरह के विवाह बढ़ेंगे, और उनसे समाज को फायदा ही होगा। फिलहाल तो हममें आपसी सहिष्णुता का माद्दा भी पैदा नही हुआ है। लेकिन जब सहिष्णुता बढ़कर सर्वधर्म-समभाव में बदल जायगी, तो ऐसे विवाह स्वागत-योग्य माने जायंगे। आनेवाले समाज की नवरचना में जो धर्म संकुचित रहेगा और बुद्धि की कसौटी पर खरा नही उतरेगा, वह टिक न सकेगा। क्योंकि उस नवनिर्माण में हरएक चीज़ का मूल्य नये ढंग से ही कूता जायगा। मनुष्य की कीमत उसके चरित्र के कारण होगी; धन, पदवी या कुल के कारण नहीं। मेरी कल्पना का हिन्दूधर्म, मात्र एक संकुचित सम्प्रदाय नहीं। वह तो एक महान् और सतत विकास का प्रतीक है, और काल की तरह ही सनातन है। उसमें जरथुस्त्र, मूसा, ईसा, मुहम्मद, नानक और ऐसे दूसरे कई धर्म-संस्थापकों के उपदेशों का समावेश हो जाता है। उसकी व्याख्या इस प्रकार है—

भारत-भूषण मालवीयजी महाराज के लिए कहा जा सकता है—मालवीयजी गये, मालवीय जी अमर हो। मालवीयजी हिन्दुस्तान के लिए पैदा हुए और हिंदुस्तान के लिए किये गये अपने कामो मे जीते हैं। उनके काम बहुत है। बहुत बडे हैं। उनमे सबसे बडा हिन्दू विश्वविद्यालय है। गलती से उसे हम बनारस हिन्दू यूनिवर्सिटी के नाम से पहचानते हैं। उस नाम के लिए दोष मालवीयजी महाराज का नही, उनके पैरोकारो का रहा है। मालवीयजी महाराज दासानुदास थे। दास लोग जैसा करते थे, वैसा वह करने देते थे। मुझे पता है कि यह अनुकूलता उनके स्वभाव मे भरी थी। यहा तक कि वाज़ दफा वह दोष का रूप ले लेती थी। लेकिन 'समरथ को नहिं दोष गोसाईं' वाली बात मालवीयजी महाराज के बारे में भी कही जा सकती है। उनका प्रिय नाम तो हिन्दू विश्वविद्यालय ही था। और यह सुधार तो अब भी करने लायक है। इस विश्वविद्यालय का हर एक पत्थर शुद्ध हिन्दू धर्म का प्रतिबिम्ब होना चाहिए। एक भी मकान पश्चिम के जडवाद की निशानी न हो, बल्कि अध्यात्म की निशानी हो। और जैसे मकान हो, वैसे ही शिक्षक और विद्यार्थी भी हो। आज है? प्रत्येक विद्यार्थी शुद्ध धर्म की जीवित प्रतिमा? नही है, तो क्यो नही है? इस विश्वविद्यालय की परीक्षा विद्यार्थियो की सख्या से नही बल्कि उनके हिन्दू धर्म की प्रतिमा होने से ही हो सकती है, फिर भले वे थोड़े ही क्यो न हो।

मैं जानता हू कि यह काम कठिन है। लेकिन यही इस विद्यालय की जड है। अगर यह ऐसा नही है, तो कुछ नही है। इसलिए स्वर्गीय मालवीयजी के पुत्रो का और उनके अनुयायियो का धर्म स्पष्ट है।

जगत् मे हिन्दू धर्म का क्या स्थान है? उसमें आज क्या दोष है? वे कैसे दूर किये जा सकते हैं? मालवीयजी महाराज के भक्तो का कर्तव्य है कि वे इन प्रश्नो को हल करें। मालवीयजी अपनी स्मृति छोड गये है। उसको स्थायी रूप देना और उसका विकास करना उनका श्रेष्ठ स्मृति-स्तम्भ होगा।

विश्वविद्यालय के लिए स्व० मालवीय जी ने काफी द्रव्य इकट्ठा किया था, लेकिन बाकी भी काफी रहा है। इस काम मे तो हरएक आदमी हाथ बँटा सकता है।

यह तो हुई उनकी बाह्य प्रवृत्ति। उनका आन्तरिक जीवन विशुद्ध था। वह दया के भण्डार थे। उनका शास्त्रीय ज्ञान बड़ा था। भागवत उनकी प्रिय पुस्तक थी। वह ज्ञानी कथाकार थे। उनकी स्मरण-शक्ति तेजस्विनी थी। जीवन शुद्ध था, सादा था।

उनकी राजनीति को और दूसरी अनेक प्रवृत्तियो को छोड देता हू। जिन्होंने अपना सारा जीवन सेवा को अर्पित किया था और जो अन्त [illegible]

उठाने का जो सामर्थ्य रखते हैं, वह और कोई बहुत कम रखते हैं। उन्हें चाहिए कि जोखिम उठाने की मेरी सूचना को वे स्वीकार करें। तब वे देखेंगे कि वही उनका बड़े-से-बड़ा युद्ध-प्रयास होगा। जहां तक हिन्दुस्तान का ताल्लुक है अगर कोई भी चीज स्थिति को बचा सकती है, तो वह यही है जो मैंने बताई। इस ओर उनका पहला कदम तो यह होना चाहिए कि जब्ती के हुक्म को रद्द करें, रफी साहब को रिहा करें और अ० भा० कां० कमेटी के दफ्तर से छीने हुए कागजात लौटा दें।
—अंग्रेजी। सेवाग्राम, ३१।५।१९४२। ह० से०, ७।६।१९४२।]

९८. डोलापालकी

गढ़वाल जिले में हिन्दू लोग इतने अज्ञान हैं कि वे हरिजन वर राजा (दूल्हा) को डोला-पालकी में या दूसरी किसी सवारी पर बैठकर मन्दिरों, चौराहों या अपने को ऊंचा माननेवाले हिन्दुओं के मोहल्ले से नहीं जाने देते। अब तो ऐसा बुरा रिवाज बरदाश्त नहीं किया जाना चाहिए। एक भाई ने मुझे कानून का मस्विदा भी भेजा है जिसे पास करने पर शायद अज्ञान लोग समझ जायं। और वैसा करना ही चाहिए। हर हालत में, जब कभी ऐसा वर घमेड़ा यानी बरात का जुलूस निकाला जाय तो उसके साथ इन गरीब लोगों की हिफाजत के लिए, एक पुलीस पार्टी रहनी चाहिए। सरकार की तरफ से इश्तहार भी बांटे जाने चाहिए कि डोला पालकी या दूसरी किसी सवारी पर बैठने से किसी को रोका न जाय, रुकावट डालनेवालों को सजा दी जायगी।
—हिन्दी। नई दिल्ली, ६।१०।१९४६। ह० से०, १३।१०।१९४६।]

९९. डोला-पालकी

कहा जाता है कि यू० पी० सरकार ने हुक्म जारी किया है कि जो लोग हरिजन दूल्हों को घोड़ों पर या दूसरी किसी सवारी पर चढ़ने से रोकें उनके खिलाफ फौरन कार्रवाई की जाय, और रिवाज की बात पेश करके इसका विरोध करनेवालों की न सुनी जाय। इस हुक्म को देखते हुए अब गढ़वाल में डोला-पालकी का झगड़ा खत्म हो जाना चाहिए।
—अंग्रेजी। कलकत्ता जाते हुए रेल में, २९।१०।१९४६। ह० से०, १०।११।१९४६।]

१००. मालवीय जी महाराज

अंग्रेजी में एक कहावत है—"राजा गया, राजा हमेशा जियो।" ठीक यही

भारत-भूषण मालवीयजी महाराज के लिए कहा जा सकता है—मालवीयजी गये, मालवीय जी अमर हो। मालवीयजी हिन्दुस्तान के लिए पैदा हुए और हिंदुस्तान के लिए किये गये अपने कामो मे जीते हैं। उनके काम बहुत है। बहुत बड़े हैं। उनमे सबसे बडा हिन्दू विश्वविद्यालय है। गलती से उसे हम बनारस हिन्दू यूनिवर्सिटी के नाम से पहचानते हैं। उस नाम के लिए दोष मालवीयजी महाराज का नही, उनके पैरोकारो का रहा है। मालवीयजी महाराज दासानुदास थे। दास लोग जैसा करते थे, वैसा वह करने देते थे। मुझे पता है कि यह अनुकूलता उनके स्वभाव मे भरी थी। यहां तक कि बाज़ दफ़ा वह दोष का रूप ले लेती थी। लेकिन 'समरथ को नहिं दोष गोसाईं' वाली बात मालवीयजी महाराज के बारे मे भी कही जा सकती है। उनका प्रिय नाम तो हिन्दू विश्वविद्यालय ही था। और यह सुधार तो अब भी करने लायक है। इस विश्वविद्यालय का हर एक पत्थर शुद्ध हिन्दू धर्म का प्रतिबिम्ब होना चाहिए। एक भी मकान पश्चिम के जड़वाद की निशानी न हो, बल्कि अध्यात्म की निशानी हो। और जैसे मकान हो, वैसे ही शिक्षक और विद्यार्थी भी हो। आज हैं? प्रत्येक विद्यार्थी शुद्ध धर्म की जीवित प्रतिमा? नहीं है, तो क्यो नही है? इस विश्वविद्यालय की परीक्षा विद्यार्थियो की सख्या से नही बल्कि उनके हिन्दू धर्म की प्रतिमा होने से ही हो सकती है, फिर भले वे थोडे ही क्यो न हो।

मैं जानता हू कि यह काम कठिन है। लेकिन यही इस विद्यालय की जड है। अगर यह ऐसा नही है, तो कुछ नही है। इसलिए स्वर्गीय मालवीयजी के पुत्रो का और उनके अनुयायियो का धर्म स्पष्ट है।

जगत् मे हिन्दू धर्म का क्या स्थान है? उसमे आज क्या दोष है? वे कैसे दूर किये जा सकते हैं? मालवीयजी महाराज के भक्तो का कर्तव्य है कि वे इन प्रश्नो को हल करें। मालवीयजी अपनी स्मृति छोड गये है। उसको स्थायी रूप देना और उसका विकास करना उनका श्रेष्ठ स्मृति-स्तम्भ होगा।

विश्वविद्यालय के लिए स्व० मालवीय जी ने काफी द्रव्य इकट्ठा किया था, लेकिन बाकी भी काफी रहा है। इस काम मे तो हरएक आदमी हाथ बँटा सकता है।

यह तो हुई उनकी बाह्य प्रवृत्ति। उनका आन्तरिक जीवन विशुद्ध था। वह दया के भण्डार थे। उनका शास्त्रीय ज्ञान बड़ा था। भागवत उनकी प्रिय पुस्तक थी। वह ज्ञानी कथाकार थे। उनकी स्मरण-शक्ति तेजस्विनी थी। जीवन शुद्ध था, सादा था।

उनकी राजनीति को और दूसरी अनेक प्रवृत्तियों को छोड़ देता हू। जिन्होंने अपना सारा जीवन सेवा को अर्पित किया था और जो अनेक [illegible]

थे, उनकी प्रवृत्ति की मर्यादा हो नहीं सकती। मैंने तो उनमें से चिरस्थायी चीज ही देने का संकल्प किया था। जो लोग विश्वविद्यालय को शुद्ध बनाने में मदद देना चाहते है, वे मालवीयजी महाराज के अन्तर्जीवन का मनन और अनुसरण करने का यत्न करें।

—श्रीरामपुर, २३।११।१९४६। ह० में०, ८।१२।१९४६।]

१०१. स्वर्गीय तोताराम सनाढ्य

वयोवृद्ध तोतारामजी किसी की सेवा लिये बगैर गये। वह साबरमती आश्रम के भूषण थे; विद्वान् नही थे, मगर ज्ञानी थे। भजनों के भण्डार होते हुए भी वह गायनाचार्य न थे। वह अपने एकतारे से और भजनों से आश्रम के लोगों को मुग्ध कर देते थे; जैसे वह थे, वैसी ही उनकी पत्नी थी। वह तो तोताराम जी से पहले ही चली गईं।

जहां बहुत से आदमी एक साथ रहते हों, वहां कई प्रकार के झगड़े होते ही है। मुझे ऐसा एक भी प्रसंग याद नही है कि जब तोतारामजी या उनकी पत्नी ने उनमें भाग लिया हो, या किसी झगड़े के कभी कारण बने हों। तोतारामजी को धरती प्यारी थी। खेती उनका प्राण थी। आश्रम में बरसों पहले वह आये और उसे कभी नही छोड़ा। छोटे-बड़े, स्त्री-पुरुष उनकी रहनुमाई के भूखे रहते और उनके पास से अचूक आश्वासन पाते।

वह पक्के हिन्दू थे। मगर उनके मन में हिन्दू, मुसलमान और दूसरे सब धर्म बराबर थे। उनमें छुआछूत की गन्ध न थी। किसी किस्म का व्यसन न था।

राजनीति में उन्होंने भाग नही लिया था, फिर भी उनका देश-प्रेम इतना उज्ज्वल था कि वह किसी के भी मुकाबले खड़ा रह सकता था। त्याग उनमें स्वाभाविक था। उसे वह सुशोभित करते थे।

यह सज्जन फिजी द्वीप में गिरमिटिये मजदूर की तरह गये थे। और दीनबन्धु एण्डरूज उन्हें ढूंढ़ लाये थे। उन्हें आश्रम में लाने का यश श्री बनारसीदास चतुर्वेदी को है।

उनकी अन्तिम घड़ी तक उनकी जो कुछ सेवा हो सकती थी, वह भाई गुलाम रसूल कुरैशी की पत्नी और इमाम साहब की लड़की अमीना बहन ने की थी।

"परोपकाराय सतां विभूतयः" सज्जन पुरुष परोपकार के लिए ही जीते है) यह उक्ति तोताराम जी के बारे में अक्षर-अक्षर सच थी।

—गुजराती। नई दिल्ली, १२।१।१९४८। ह० से०, १८।१।१९४८।]

: सात :

गंगोत्री

[उत्तर प्रदेश की भूमि पर लिखी गांधीजी की रचनाएं]

१. तार : वी० एस० श्रीनिवास शास्त्री को

लखनऊ से इलाहाबाद आते हुए गाडी मे
११ मार्च, १९१९

मैं अपनी यात्राओ मे जनता की भावनाओं को जितना जान पाया हूं, उसके आधार पर कह सकता हू कि वह बहुत तीव्र है। सार्वजनिक हित के लिए स्वार्थ-त्याग करने की आदत न होने के कारण वे अकर्मण्य भले दिखाई दें, परन्तु यदि (रौलट) विधेयक पास करने का प्रयत्न जारी रहा तो कटुता का प्याला लबालब भर जायगा। यद्यपि विरोध के तरीको पर हममे मतभेद है, फिर भी आशा है, आप इन विधेयको के पास किये जाने का विरोध करके जनता की भावना व्यक्त करेंगे।

— गांधी जी के स्वाक्षरो में अंग्रेजी मसविदे (एस० एन० ६४५१) की फोटो-नकल से। ११।३।१९१९।]

२. तार : वाइसराय के निजी सचिव को

द्वारा पं० मोतीलाल नेहरू
इलाहाबाद
११ मार्च १९१९

मैं इस अन्तिम क्षण मे फिर परमश्रेष्ठ तथा उनकी सरकार से सादर निवेदन करता हू कि वे रौलट विधेयको को पास करने के पहले थोड़ा रुक कर विचार करें। इस कानून के बारे मे जनता की राय उचित हो या अनुचित, पर उसकी प्रबलता के बारे मे सन्देह की गुंजाइश नही है। मुझे यकीन है कि सरकार वर्तमान कटुता-पूर्ण स्थिति को और अधिक कटु नही बनाना चाहती। कुछ विलम्ब होने से सरकार को कोई हानि नही होगी, बल्कि यदि वह लोकमत के सामने स्पष्ट रूप से झुक गई तो कटुता मिटेगी और उसकी वास्तविक प्रतिष्ठा बढ़ेगी। मैं रात जबलपुर मेल से बम्बई के लिए रवाना हो रहा हूं।

— अंग्रेजी। इलाहाबाद, ११।३।१९१९, नेशनल आर्काइव्ज आफ इंडिया : होम : पोलिटिकल-ए, मार्च १९१९, सं० २५०।]

३. पत्र : जे० एल० मैफी को[1]

लखनऊ से इलाहाबाद आते हुए गाड़ी में
११ मार्च, १६१६

प्रिय श्री मैफी,

मैंने अभी-अभी जो तार आपको भेजा है उसकी प्रतिलिपि साथ में नत्थी कर रहा हूं। एक बिल्कुल ही व्यक्तिगत बात के अतिरिक्त मैं उसमें कुछ और जोड़ना नहीं चाहता। दक्षिण अफ़ीका में सत्याग्रह के दौरान मैंने जनरल स्मट्स को जितने भी पत्र भेजे थे वे सब मैं उनके निजी सचिव श्री लेन की मार्फत ही लिखा करता था। जब संघर्ष ने जोर पकड़ा उस समय सरकार के प्रतिनिधि जनरल स्मट्स और विदेशी लोगों का प्रतिनिधि मैं इन दोनों के बीच श्री लेन सच्चे अर्थों में सद्भाव पैदा करनेवाले देवदूत की तरह काम करते रहे। उनके सरल स्वभाव और सौजन्य के बिना कदाचित् संघर्ष का जो सन्तोषजनक परिणाम निकला, वह न निकल पाता। क्या मैं आपसे भी वैसे ही सहयोग की आशा कर सकता हूं? इसका कारण यह है कि जिस प्रकार दक्षिण अफ़ीका में (श्री लेन को कष्ट दिया करता था) उसी प्रकार यहां भारत में भी यदि दुर्भाग्य से संघर्ष लम्बे अर्से तक चला तो मुझे आपको प्रायः कष्ट देना पड़ेगा। और मैं सरकार तथा उन लोगों को जिनका प्रतिनिधित्व मैं कर रहा हूं, परस्पर निकट लाने का कोई भी अवसर हाथ से न जाने दूंगा।

मैं इस १३ तारीख को बम्बई में होऊंगा। मेरा स्थायी पता साबरमती तो है ही परन्तु फिलहाल यदि मुझे लेबर्नम (रोड) चौपाटी, बम्बई के पते से पत्र भेजे जायं तो एक दिन पहले मिल जायंगे।

यह कहने की आवश्यकता नहीं है कि श्री शास्त्रियर से मेरी बहुत देर तक बातचीत हुई है। पर इस मामले में उनके और मेरे बीच आदर्शों का भेद है और मुझे हम दोनों के बीच मतैक्य की कोई गुंजाइश नहीं मिली।

आशा करता हूं कि अब तक लार्ड चैम्सफोर्ड का ज्वर चला गया होगा और उसके सभी प्रभावों से वह मुक्त हो चुके होंगे।

---

१. नेशनल आर्काइव्ज आफ इण्डिया में संग्रहीत इस पत्र में इलाहाबाद, १२ मार्च १९१९ लिखा है। ऐसा जान पड़ता है कि पत्र यात्रा में लिखवाया गया है किन्तु इलाहाबाद पहुंचने के बाद १२ मार्च को भेजा गया। वैसे गांधी १२ मार्च को बम्बई में थे।

इस प्रकार का व्यक्तिगत पत्र मुझे अपने हाथ से लिखना चाहिए था, परन्तु अपनी हाल की बीमारी के कारण मैं कई दृष्टियो से अशक्त बन गया हू। जब मैं लिखता हूं तब मेरा हाथ कांपने लगता है और बहुत जल्दी थक जाता है। इसलिए मुझे अत्यन्त निजी पत्र-व्यवहार के लिए भी पत्र बोलकर लिखवाने पड़ रहे हैं।[1]

हृदय से आपका

—११।३।१९१९। अंग्रेजी मस्विदे (एस० एन० ६४४९) की फोटो-नकल से। सं० गां० वा० खण्ड १५ में भी।]

४. पत्र : सी० एफ० एण्डरूज को

अलीगढ़

२३ नवम्बर, १९२०[2]

प्रिय चार्ली,[3]

मुझे तुम्हारे पत्र और तार मिले। क्या मैंने तुम्हारे साथ अन्याय किया है? मैंने तार देकर केवल यह सूचना देनी चाही थी कि मैं तुम्हे भेजने की कोशिश कर रहा हू—मैंने यह नही कहा था कि तुमने पद स्वीकार कर लिया है और मैंने जो कहा, अपनी और तुम्हारी बात-चीत[4] के आधार पर कहा। जो भी हो, किसी तरह का दबाव तुम पर नही डाला जायगा। तुम मुस्लिम विश्वविद्यालय के लिए केवल उतना ही करना, जो तुम कर सकते हो।

हां, मैं अंग्रेजो से देश के सम्बन्ध को एक शुद्ध आधार पर स्थापित करने की जरूरत महसूस करता हू। आज वह जैसा है उससे तो विरक्ति ही होती है। पर मैं

---

१. पत्र का अन्तिम अनुच्छेद गांधी जी के हाथ का लिखा हुआ है।
२. १९२० में २३ नवम्बर को गांधी जी अलीगढ़ मे थे, जहां वे खिलाफत-समिति की एक सभा मे शरीक होने गये थे।
३. चार्ल्स फ्रेयर एण्ड्रूज (१८७१-१९४०)—अंग्रेज, मिशनरी, लेखक व शिक्षा-शास्त्री, जिन्होंने विश्वभारती विश्वविद्यालय के कार्य मे बहुत दिलचस्पी ली; कई वर्षों तक भारतीयों के साथ काम किया जिससे उन्हें 'दीनबन्धु' की उपाधि मिली। यह गांधी जी के घनिष्ट मित्र थे।
४. अक्टूबर १९२० मे एण्ड्रयूज की गुजरात-यात्रा के समय जब वह गांधी जी के साथ कुछ दिन रहे थे।

अभी तक यह तय नहीं कर पाया हूं कि उसे, चाहे जो हो, समाप्त ही कर देना चाहिए। हो सकता है कि अंग्रेजों का स्वभाव काली और भूरी जातियों के साथ पूर्ण समानता का दर्जा स्वीकार नहीं कर सके। तब तो अंग्रेजों को भारत से वापस ही भेजना होगा। परन्तु एक गौरवपूर्ण समानता की सम्भावना है, यह विचार मैं त्याग नही सकता। किन्तु यदि इस बात का यथासम्भव स्पष्ट प्रमाण मिल जाय कि धर्म के प्रथम सिद्धान्त अर्थात् मानव-मानव के बीच भाईचारे के सिद्धान्त को समझने में अंग्रेज बुरी तरह असफल हो गये है, तो यह सम्बन्ध अवश्य समाप्त हो जाना चाहिए।

बड़ो दादा[1] का पत्र मुझे नही मिला। शायद आश्रम पहुंचा हो या मुझे दिल्ली पहुंचने पर मिले। मैंने तुम्हें समय पर तार दे दिया था।

मैं डा० दत्त को तार से कोई सन्देश नही भेज सकता, परन्तु यदि अभी समय हो तो मैं उन्हें कुछ लिखने की कोशिश करूंगा।

मुझे पूरी आशा है कि तुम्हारा स्वास्थ्य ठीक चल रहा है।

गुजराती बच्चों के हटा लिये जाने पर मुझे आश्चर्य नही हुआ।[2] मै समझता हूं कि इससे तुम्हारा कुछ नुकसान नही हुआ। तुम किसी भी बच्चे को रखने के लिए सिद्धान्तों में ढील नही दे सकते। मैंने तुम्हें पत्र में वह सब नही लिखा जो सीनेट-द्वारा अभी पास किये गये प्रस्ताव[3] को मंजूर कराने के कारण मुझे सहना पड़ रहा है। लोगों ने मेरा पूरी तरह से बहिष्कार करने की धमकी दी है। परन्तु मेरी स्थिति बिल्कुल स्पष्ट है। मैं दलित वर्ग या किसी भी वर्ग की क्षति स्वीकार करके स्वराज्य नही चाहता। मैं स्वराज्य शब्द का जो अभिप्राय मानता हूं वह वैसा बिल्कुल नही होगा। मेरा विश्वास है कि जिस क्षण भारत शुद्ध होगा, उसी क्षण वह स्वतन्त्र हो जायगा। उससे एक भी क्षण पहले नही। मुझे केवल इस सबसे बड़े असुर, इस सरकार से सम्पूर्ण शक्ति के साथ लड़ना होगा। और वैसा करते-करते छोटे-मोटे राक्षसों से तो मैं अपने-आप ही निपट चुकूंगा। बहिष्कार की

---

१. द्विजेन्द्रनाथ ठाकुर, रवीन्द्रनाथ ठाकुर के बड़े भाई, साधक, गांधी जी की असहयोग योजना के सिद्धान्ततः प्रशंसक।

२. सम्भवतः इसलिए कि ब्राह्मण और ब्राह्मणेतर बच्चों से शान्ति-निकेतन आश्रम में एक साथ खाना खाने को कहा गया था।

३. गुजरात विद्यापीठ की सीनेट ने ३१।१०।१९२० को यह प्रस्ताव पास किया था कि विद्यापीठ द्वारा मान्यता प्राप्त किसी भी स्कूल में अन्त्यजों का बहिष्कार नहीं किया जायगा।

धमकी मुझे बहुत ही खुशी दे रही है क्योंकि महसूस करता हूं कि वहा मैं और भी शुद्ध धरातल पर हू। सरकार से, लडने मे सहयोगियो के उद्देश्य समिश्र हो सकते हैं, लेकिन छुआछूत के राक्षस से लडने मे मेरे साथ बिल्कुल चुने हुए लोग हैं।

सप्रेम,

तुम्हारा
मोहन

—अंग्रेजी। अलीगढ़, २३।११।१९२०। गांधी स्मारक संग्रहालय में प्राप्त पत्रावली से।]

५. पत्र : डा० मुहम्मद इकबाल को

(२७ नवम्बर १९२० के पूर्व)[1]

प्रिय डा० इकबाल,[2]

मुस्लिम नेशनल युनिवर्सिटी[3] आपको पुकार रही है। यदि आप उसका उत्तरदायित्व ले लें तो मुझे विश्वास है कि वह आपके सुसस्कृत नेतृत्व मे उन्नति करेगी। हकीम अजमल[4] खा और डा० अन्सारी[5] तथा निस्सन्देह अली भाई भी यही

---

१. डा० इकबाल ने २९ नवम्बर १९२० के अपने जवाब (एस० एन० ७३३०) में लिखा था कि गाधीजी का पत्र दो दिन पूर्व मिला था।

२. १८७३-१९३८, प्रख्यात उर्दू-फारसी के कवि, कैम्ब्रिज तथा म्यूनिख विश्वविद्यालय से पी० एच० डी० किया; राष्ट्रीय नेता; १९३१-३२ मे दूसरी और तीसरी गोलमेज परिषद के प्रतिनिधि। 'सारे जहा से अच्छा हिन्दोस्तां हमारा' के रचयिता।

३. अलीगढ़ मे।

४. १८६५-१९२७, प्रसिद्ध हकीम और राजनीतिज्ञ जिन्होंने खिलाफत आन्दोलन मे प्रमुख भाग लिया; १९२१ में भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस के अध्यक्ष।

५. डा० मुख्तार अहमद अन्सारी (१८८०-१९३६) राष्ट्रवादी मुस्लिम नेता; इण्डियन मुस्लिम लीग के अध्यक्ष १९२०; अध्यक्ष, भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस, १९२७-२८।

चाहते हैं। मेरी कामना है कि आप इस आमन्त्रण को स्वीकार कर सकेंगे। आपकी आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए नवीन जागृति के अनुरूप, उपयुक्त दक्षिणा देने का आश्वासन आसानी से दिया जा सकता है। कृपया अपना जवाब मुझे मार्फत पण्डित नेहरू, इलाहाबाद के पते पर भेजिए।

हृदय से आपका

--अंग्रेजी। २७।११।१९२० या पूर्व। सं० गां० वा० खण्ड १९ पृ० ३३।]

६. पत्र : हकीम अजमल खां को

(२७ नवम्बर १९२० के पूर्व)[1]

प्रिय हकीम साहब,

पीपल सहादेव के पास की मस्जिद के बारे में क्या झगड़ा है? क्या यह सुलझाया नही जा सकता? मैंने डा० इकबाल को अलीगढ़ के बारे में लिख दिया है। मैं चाहता हूं आप भी लिख दें।

--अंग्रेजी प्रति (एस० एन० ७३६१ ए) की फोटो नकल से, २१।११।१९२० के पूर्व।]

७. पत्र : हरकिशन लाल को

इलाहाबाद

२८ नवम्बर, १९२०

प्रिय हरकिशन लाल,[2]

मैं यात्रा पर निकल गया था, इसलिए आपका पत्र मेरे पीछे-पीछे भटकता

---

१. पत्र में डा० इकबाल को पत्र लिखने का उल्लेख है। इससे लगता है, यह पत्र उसी दिन या उसके पूर्व लिखा गया होगा।

२. लाला हरकिशन लाल, पंजाब के एक प्रमुख व्यवसायी और राष्ट्रवादी नेता, जिन्होंने गांधी के असहयोग-आन्दोलन का विरोध किया था और जो बाद में

हुआ अब जाकर मिला है। आपकी भविष्यवाणी[1] सच्ची निकले तो उसमे कुछ दोष आपका भी होगा। ऐसा तो नही हो सकता कि आप चुपचाप बैठे रह कर हिंसा की जड़ो को फैलने दें और फिर कहे, देखो, मैं कहता था सो सच निकला। परन्तु आपकी भविष्यवाणी सही निकले या गलत, असहयोग तो तबतक चलता ही रहेगा जबतक वह अपनी ही हिंसा के भार से दबकर न रुक जाय। इसलिए आप से अपेक्षा यही की जाती है कि आप अपनी भविष्यवाणी गलत साबित करने के लिए जी-तोड़ कोशिश करेंगे।

खिलाफत के मामले मे हमारी माग यह है युद्ध के आरम्भ होने पर तुर्की के पास जितना इलाका था, वह सब उसे लौटा दिया जाय, साथ ही अरबो और आर्मिनिया-वासियो को आत्म-निर्णय की पूरी-पूरो गारण्टी दी जाय। जहा तक पजाब का सम्बन्ध है वहा जो कुछ हुआ, उसका पजाब की मांगो के अनुसार पूरा परिमार्जन होना चाहिए। इसके बाद जनता के चुनिन्दा नेताओ की इच्छा के अनुसार हमे पूरा स्वराज्य दिया जाना चाहिए। आप देखेंगे कि मैंने प्रत्येक अग्रेज के नाम जो खुली चिट्ठी लिखी है, उसमे यह बात स्पष्ट कर दी है।

हृदय से आपका,
मो० क० गाधी

—अग्रेजी। इलाहाबाद, २८।११।१९२०। सं० गां० वा० खण्ड १९ से।]

८. पत्र : दीपक चौधरी[2] को

२८ नवम्बर, १९२०

अब तो तुम्हें गुजराती मे ही लिखूगा। तुम्हारा पत्र मिला। तुम्हे अब अग्रेजी छोड़नी चाहिए या नही, उस बारे मे माता जी की राय पुछवाई है। तुम अध्ययन-शील बनो तो अभी अग्रेजी छोड देने मे कोई अड़चन न होगी। तुम अपने शरीर, अपने मन और अपनी आत्मा को सँभालो। शरीर के लिए कसरत, खेल-कूद,

---

माण्टेग्यु-चैम्सफोर्ड सुधारो के लागू होने पर पंजाब मन्त्रिमण्डल मे मन्त्री बने थे।

१. हरकिशनलाल ने भविष्यवाणी की थी कि गांधीजी का असहयोग आन्दोलन असफल होगा।

२. सरला देवी चौधरानी के पुत्र।

अच्छा भोजन और प्रसन्नचित्त, मन के लिए वाचन और मनन, आत्मा के लिए अन्तःशुद्धि और इसके लिए जल्दी उठना, ध्यानपूर्वक प्रार्थना में तल्लीन होना और गीताध्ययन। हमेशा इतना मनन करना, मैं सच ही बोलूंगा, सोचूंगा और करूंगा, मैं सबसे प्रेम रखूंगा, मैं अपनी सब इन्द्रियों पर काबू करूंगा, दूसरे की चीज पर बुरी नजर नहीं डालूंगा, मैं कुछ भी अपना नहीं मानूंगा, परन्तु सब कुछ ईश्वरार्पण करूंगा, ऐसे चिन्तन से हृदय-शुद्धि होगी।

—गुजराती। इलाहाबाद, २८।११।१९२०। सं० गां० वा० खण्ड १९ से।]

९. पत्रांश : बनारस के विषय में

बनारस[1] में समय बहुत अच्छा गुजरा। परिणाम क्या होगा, यह नही कह सकता। वातावरण जरूर साफ हुआ है और मालवीय जी यदि पूरी तरह नही तो पहले से अधिक शान्त अवश्य हैं।

—अंग्रजी। इलाहाबाद। २८।११।१९२० को सरला देवी चौधरानी को लिखे पत्र से। सं० गां० वा० खण्ड १९ पृष्ठ ४०।]

१०. काठियावाड़ के राजा-महाराजाओं से

लखनऊ

सोमवार, श्रावण (८ अगस्त, १९२१)

महोदय,

मैंने कई बार आपको दो शब्द लिखने का विचार किया, किन्तु लिखा नहीं। किन्तु कुछ बातें सुनकर और जानकर अब मैं अपने विचार आपके सामने रखना अपना धर्म समझता हूं।

कदाचित् आप से यह कहना कि काठियावाड़ से मेरा घनिष्ठ सम्बन्ध है, अनावश्यक है। किन्तु वहां जन्म लेने के कारण ही मैं काठियावाड़ से बँधा हुआ नहीं हूं। वहां के तीन-तीन राज्यों में मेरे पिताश्री ने मुख्य मन्त्री की तरह काम किया था। मेरे चाचा ने एक राज्य में और दूसरे में मेरे पितामह ने भी यही पद सँभाला

---

१. गांधी जी २५।११।१९२० से २७।११।१९२० तक काशी में थे।

था। गाधी-परिवार के अनेक व्यक्तियो ने काठियावाड के राज्यो मे नौकरी करके निर्वाह किया है। इसलिए मेरा आपसे विशेष नाता है। आपके प्रति मेरा विशेप कर्त्तव्य है।

अतएव मैं जब काठियावाड के किसी भी राज्य की स्वेच्छाचारिता के विषय मे कुछ सुनता हू, तब मेरे हृदय को बडा दु ख होता है। काठियावाड को मैं शूर-वीरो की भूमि समझता हू और मैं यह आशा लगाये हू कि स्वराज्य-यज्ञ मे काठियावाड अपना पूरा हिस्सा अदा कर अपना तथा भारत-भूमि का मुख उज्ज्वल करेगा।

'स्वराज्य' शब्द को सुनकर आप चौंकिये नही। मैं चाहता हू कि 'स्वराज्य' और 'असहयोग' इन नामो से आप न चौंकें। जो लोग यह कहते है कि यह आन्दोलन तो अराजकता और राजद्रोह फैलानेवाला है, इससे देश का सत्यानाश हो जायगा, उन्हें ऐसा कहने दीजिए। परन्तु यह मानकर कि वे अज्ञानवश ऐसा कहते है अपने मित्रों के सामने भी मेरी स्थिति स्पष्ट कीजिए।

हमारे शास्त्र यह सिखाते हैं कि अपने प्राणो की आहुति देकर भी अन्याय का सामना करना चाहिए। मेरे पूज्य पिताजी ने अपने चरित्र-द्वारा मुझे यही शिक्षा दी है। लोग साहस-सम्पन्न हो तो इससे देश की हानि नही होगी।

किन्तु मैंने यह पत्र स्वराज्य के विषय मे लिखने के उद्देश्य से शुरू नही किया है। मेरे स्वराज्य-विपयक विचार आपकी दृष्टि से ओझल न रह जाय, इसलिए ऊपर के वाक्य लिख दिये हैं।

आपके राज्यो के विषय मे अनेक लेख मेरे पास आये हैं। कितनी ही शिकायतें मैंने जबानी भी सुनी हैं। परन्तु अब तक मैंने उनमे से कुछ भी प्रकाशित करना उचित न समझा। मैं यही आशा लगाये रहा कि अन्त मे सब ठीक हो जायगा, और अब भी मेरा यही खयाल है। बडे साम्राज्य की स्वेच्छाचारिता जहा एक बार नष्ट हुई कि छोटे-छोटे राज्यो की मनमानी भी उसके साथ बन्द हो जायगी। आत्म-शुद्धि एक ऐसी वस्तु है जिसकी जड जमाने मे कुछ समय लगता है। परन्तु उसके जम जाने पर उसके फैलने मे विलम्ब नही लगता।

पर, अब तो मैं सुनता हू कि कोई कोई राज्य [illegible] का उपहास करता है, कोई उसे एक रोग समझ कर मिटाने की इच्छा रखता है, कोई 'स्वदेशी' [illegible] आन्दोलन को रोकने के लिए लोगो को अनुचित रीति से दबाता है, कोई खादी पहिनने के खिलाफ उठ खडा होता है और खादी की टोपी पहिनने को 'जुर्म' [illegible] है। उन बातो पर विश्वास करते हुए मुझे क्षोभ होता है। परन्तु मेरे पास ऐसे प्रमाण मौजूद हैं कि ये सारी बातें झूठ नही हो सकतीं।

काठियावाड की धरती ऐसी (उपजाऊ) है कि यहा से [illegible]

बाहर जाने की जरूरत नहीं पड़नी चाहिए। कोई व्यक्ति बड़ा व्यापार शुरू करने की हिम्मत करे, तो वह स्तुत्य है। किन्तु ऐसे सैकड़ों बल्कि हजारों काठियावाड़ी मेरे सम्पर्क में आये हैं जिन्हें केवल आजीविका के अभाव में काठियावाड़ छोड़ना पड़ा है। यह बात मुझे सालती है और चाहता हूं कि आपको भी साले। काठियावाड़ के मजबूत काठीवाले खूबसूरत ग्रामीणों के घरों में पहिले जो तेज दिखाई देता था वह तेज मुझे अपनी इस बार की यात्रा में दिखाई नही दिया। मुझे संवत् ३५ के[1] अकाल के पहिले गांवो में दूध-घी की बहुलता देखने की याद है। पत्नी से घी परसना तो कंजूसी मानी जाती थी। मुझे बचपन में काठियावाड़ी ऊंची-पूरी देहाती बहिनों के हाथों चमचम करते हुए कटोरो में गाढ़ा मठा पीने का स्मरण है।

आज मठे के नाम सफेद पानी दिखता है, घी की कुप्पियां अब नहीं दिखती; चम्मच दो चम्मच घी दिख जाये तो गनीमत है। समृद्धि के समाप्त होने से लोग दीनता का अनुभव करने लगे है और प्रान्त छोड़कर बाहर भागने लगे है।

यह निश्चय जानिए कि यदि राजा-महाराजा मदद करे तो चर्खो और कर्घो के द्वारा काठियावाड़ मे पहिले से भी अधिक जान आ जाय। काठियावाड़ की आबादी छब्बीस लाख गिनी जाती है। वहां पांच लाख चर्खे आसानी से चल सकते हैं। इससे कम-से-कम साढ़े सात लाख की (मासिक) आमदनी हो सकती है। यदि काठियावाड़ की बहिन केवल आठ ही महीने भजन गाते हुए चर्खा काते तो हर साल साठ लाख रुपये पैदा कर सकती हैं। उसके लिए आपको एक पाई भी खर्च नही करनी पड़ेगी। ऐसे आसान उपाय से यदि काठियावाड़ के लोग धन कमा सकें तो क्या आप उसको बुरा मानेंगे? क्या उसका मजाक उड़ायेंगे?

यदि शरीर पर मोटी खादी की बण्डी और सिर पर बड़ी-पगड़ी बांधने वाले काठियावाड़ की मेघवाल जाति के लोगों में से एक लाख व्यक्ति भी कर्घे चलाने लगे तो वे हर महीने कम-से-कम बीस लाख रुपया कमा सकते है। यदि इस तरह आठ महीने बने तो साल भर में एक करोड़ साठ लाख रुपया घर में आये। क्या आप दीर्घ दृष्टि से देख-समझ कर उतनी बरकत देनेवाले उद्योग को पूरा-पूरा प्रोत्साहन नही देंगे?

आपसे तो मै यह आशा करता हूं कि आप अपने दरबार में भी दीन-हीन लोगों द्वारा बुनी हुई खादी की प्रतिष्ठा करेंगे। दरबारी पोशाक खादी की हो और आप स्वयं भी अपनी प्रजा की बनाई खादी पहिनकर भूषित हों।

काठियावाड़ की प्रजा तो भूखों मरे और मैंचेस्टर अथवा जपान के लोग आपके

---

१. विक्रमाब्द १९३५ अर्थात् १८७९-८०।

पैसो पर गुलछर्रे उडायें, यह राज-न्याय नही है। आपके शास्त्रवेत्ता लोग आपको यह बात समझायेंगे। यदि आपको मलमल चाहिए तो अच्छी रूई पैदा कराइए, महीन सूत कतवाइए और कपडा बुननेवालो को प्रोत्साहन दीजिए।

काठियावाड के पहाडो मे रहनेवाले राजाओ को आमोद-प्रमोद की क्या आवश्यकता है? कुत्तो के झुण्ड वे अपने पास किसलिए रक्खें? वे तो प्रजा के लिए अपने प्राण दें। प्रजा के दुख से दुखी हो और प्रजा को खिलाकर ही आप खायें। राजा बनिया बन जाय और ब्राह्मण नाटक करते फिरे तो धर्म की शिक्षा कौन दे और रक्षा कौन करे?

मैं यह नही चाहता कि काठियावाड के लोग आपके राज्यो मे रहते हुए अंग्रेजी राज्य के खिलाफ आन्दोलन करें और आपकी स्थिति को नाजुक बनायें। आपकी नाजुक स्थिति मेरे ध्यान मे है। आपके प्रति मेरी सहानुभूति है। आप भले ही असहयोगी न हो, परन्तु मैं आपसे नम्रतापूर्वक अनुरोध करता हू कि आप स्वदेशी को एक विशेष अंग ही समझिए और प्रजा को सहायता देकर स्वतन्त्रतापूर्वक उसका उत्कर्ष कीजिए।

और भी एक निवेदन है। काठियावाड मे शराब की दुकानो का होना कैसे सहन हो सकता है? क्या आपको भी शराब के द्वारा कुछ आमदनी करने की आवश्यकता है? जब प्रजा खुद ही शराबखोरी छोडने के लिए प्रयत्न कर रही है तब मैं तो आपके दरबार से भी शराब की बोतलो के बहिष्कार की आशा रखता हू। श्री रामचन्द्र ने एक धोबी की बात सुनकर सती सीता का त्याग कर दिया था, तब अपनी प्रजा की इच्छा को जानकर क्या आप शराब को काठियावाड मे नही निकाल सकते?

और आपकी ट्रेनो मे अन्त्यजो के लिए अलग डिब्बे हो, उन्हे टिकट मिलने मे कठिनाई हो, वे धक्के खाय, यह भी कैसे सहन हो सकता है? लोगो को [illegible] करके आप उनके साथ विचार कीजिए और उन्हे समझाइए कि भंगी-चमारो के साथ जो दुर्व्यवहार हो रहा है वह दया-धर्म नही है, वह तो अत्याचार है। इस तरह आप उन बेचारो को सुखी कीजिए और उनके दिल मे [illegible] दुआ लीजिए।

और भी बहुत सी बातें सुनी है। पर उन बातो को मैं आज नही [illegible] चाहता। वे पुरानी बातें हैं। मैंने सिर्फ यही प्रार्थना करने के लिए [illegible] है कि आज कल जो शुद्ध प्राण-वायु बह रही है [illegible]। [illegible] प्रेमभाव से जो कुछ [illegible] है, आप नम्रता और प्रेमपूर्ण [illegible] विचार मुझावो को कार्यरूप मे परिणत कीजिए, बस यही निवेदन है। ईश्वर [illegible] प्रार्थना

है कि वह आपको न्यायवृत्ति दे और काठियावाड़ के राजा-प्रजा नीति-मार्ग पर चलते हुए सुखी रहें।

आपका सेवक

मोहनदास कर्मचन्द गांधी

—गुजराती। लखनऊ, ८।८।१९२१, न० जी०, १४।८।१९२१।]

- हमारे शास्त्र यह सिखाते हैं कि अपने प्राणों की आहुति देकर भी अन्याय का सामना करना चाहिए।
- आत्म-शुद्धि एक ऐसी वस्तु है जिसकी जड़ जमने में कुछ समय लगता है।

११. पत्र : मणिलाल कोठारी और फूलचन्द शाह को

कानपुर ६-८-२१

भाई श्री मणिलाल और फूलचन्द,

बढ़वान कठियावाड़ राजनीतिक सम्मेलन करने के सम्बन्ध में मेरा कहना यह है कि मै इस सम्बन्ध में अपना मत अभी व्यक्त नही कर सकता। जब सितम्बर के महीने मे मेरा दौरा होगा तब यदि आप पूछेंगे तो मैं निश्चित उत्तर दूंगा। यदि मैं उनकी अध्यक्षता करने का निर्णय करूंगा तो मैं कार्य को अधूरा नही छोड़ सकता। यह नही हो सकता कि मैं सविनय अवज्ञा करने के बारे में सलाह तो दे दू और बैठ जाऊं। इस कारण मैं सम्मेलन की अध्यक्षता करने के सम्बन्ध में पहले से कोई निश्चय नही कर सकता।

मोहनदास गांधी के बन्देमातरम्

—गुजराती। कानपुर, ९।८।१९२१।]

१२. पत्र : एक बहिन को

(२६ दिसम्बर, १९२५)[1]

चि० . . .

तुम दोनों के पत्रों से मुझे सन्तोष नहीं हुआ। पूत कपूत हो जाये पर माता

---

१. साधन-सूत्र के अनुसार।

कुमाता नही हो सकती, इस कहावत को मानने से काम नही चलेगा। यदि पुत्र ऐसा कहकर अपने दोष को कम करके आकना चाहे तो वह उन्नति नही कर सकता। सन्तान का तो यही धर्म है कि वह माता-पिता से बढ-चढ कर काम करे। (मैं) अपनी सन्तान से यह कह सकता हू कि मुझमे अमुक-अमुक दोष है, उनके लिए तुम लोग मुझे क्षमा करो पर तुम स्वय कभी इन दोषो के दोषी मत बनना, नही तो मैं कही का न रहूगा। जब कोई दम्पति सन्तान की इच्छा करता है तब उनके मन मे यही भावना रहती है कि सन्तान उनकी प्रतिष्ठा बढायेगी, खूब उन्नति करेगी और उनकी कीर्ति को चिरजीवी बनायेगी। इसीलिए रामचन्द्र ने कहा: रघुकुल रीति सदा चलि आई। प्राण जाय बरु वचन न जाई।" उन्होंने यह नही कहा कि यह रामचन्द्र की रीति है। रामचन्द्र ने रघुवश का उद्धार किया था। सो तुम भी.. के वश का और आश्रम का उद्धार करो। आश्रम मे अनेक दोष हैं, पर वे तो हम गुरुओ के दोष हैं। उनका अनुकरण तुम्हे तो नही करना है न? तुम्हारा धर्म यही है कि आश्रम मे जो-कुछ अच्छा है उसे अपनाओ। इसीलिए पत्र लिखने के अपने वादे से मुक्त होने की तुम्हारी इच्छा मुझे ठीक नही लगी। जवानी मे मनुष्य पुरुषार्थ कर सकता है। समझदार व्यक्ति के लिए जवानी उच्छृखल और स्वच्छन्द आचरण का नहीं, सयम सीखने का समय है।

सम्भव है, तुम पत्र की बात न समझ सको। चि०... मे समझना। फाड-कर फेंक मत देना। अत्यधिक काम से बोझ से दबे होने पर भी मैंने तुम दोनो को याद किया है। थोडे से शब्द लिखने की इच्छा थी, पर पत्र लम्बा और गम्भीर हो गया। इसलिए सँभाल कर रखने के लिए कहता हू।

—गुजराती। कानपुर, २६।१२।१९२५। म० भा० डा० भाग ६ स० से० स० संस्करण।]

सौजन्य: श्रीनारायण देसाई।

१३. पत्र : लक्ष्मीदास आसर को

(२६ दिसम्बर, १९२५)[1]

चि०..

तुम्हारा पत्र पाकर अब मैं निश्चिन्त हो गया हूँ। मुझे डर था कि कहीं भाई

---

१. साधन-सूत्र के अनुसार

...तुम्हें गलत रास्ते पर न ले जायं, सो डर नहीं रहा। हम सन्त-असन्त व्यक्तियों को जानते हुए भी उनपर स्नेह रक्खें, यही हमारा धर्म है। हम दूसरों में कोई बुराई देखें ही नहीं, कई वार तो प्रेम शव्द की हम यही व्याख्या करते हैं। चि०... ने जो वात छुपाई सो ठीक तो नहीं थी, पर मुझे उसका दुःख नहीं है, केवल दया आई। उसे कवूल करते समय वह घवरा गई होगी। हम घोर-से-घोर निडर होकर पाप कर डालते हैं, पर उन्हें स्वीकार करते हुए घवराते है। पर इस पृथिवी पर ऐसे लोग कितने होंगे जो अपने दोषों को पहचानकर उन्हें सवके सामने प्रकट कर दें।...क्या करती? अव ईश्वर उसकी रक्षा करें। तुमने भाई...से पिछली सारी वातें कह दीं, सो अच्छा ही किया।

वापू के आशीर्वाद

—गुजराती कानपुर, २६।१२।१९२५। म० भा० डा० भाग ६ स० से० संघ संस्करण।]
सौजन्य : श्रीनारायण देसाई।

१४. पत्र : वसुमती पण्डित को

कानपुर
मौनवार (२८ दिसम्वर, १९२५)[1]

चि० वसुमती,

पिछले चार दिनों से तुम्हारा कोई पत्र नहीं है। मुझे सप्ताह में एक पत्र मिल जाये तो भी काफी है।

मेरी तबीयत अच्छी रहती है। दही और फल मुझे अनुकूल आते है। वजन भी बढ़ा है। कमानी के काँटे से ९८ पौंड है, यह हमारी तराजू पर ९४ नहीं तो ९३ पौंड तो आयगा ही। वजन का इतना बढ़ जाना बहुत कहा जा सकता है। [illegible] हूँ।

वापू के आशीर्वाद

—गुजराती। कानपुर, २८।१२।१९२५। [illegible] २९ से।]
सौजन्य : वसुमती पण्डित

---

१. [illegible] के अनुसार २८ दिसम्वर को [illegible] सोमवार था।

१५. पत्र : वालजी गो० देसाई को

कानपुर
सोमवार (२८ दिसम्बर, १९२५)[1]

भाई श्री वाल जी,

मैं सर हैराल्ड मैन से अहमदावाद मे ही मिल सकूगा। मैं दिल्ली होकर अहमदावाद जानेवाला हू। यहा से कल रवाना होऊगा और ३१ तारीख को आश्रम पहुचूगा।

बापू के आशीर्वाद

—गुजराती। कानपुर, २८।१२।१९२५। सं० गां० वा० खण्ड २९ से।]
सौजन्य : श्री वालजी गो० देसाई।

१६. प्रमाणपत्र : तुलसी मेहर को

कानपुर
२९ दिसम्बर, १९२५

श्री तुलसी मेहर जी सत्याग्रह आश्रम मे कम-से-कम चार वर्प तक रहे हैं। उनका सयम ने मेरे दिलपर वडा प्रभाव डाला है। वे वडी सादगी से आश्रम में रहते थे। उसका उद्यम भी स्तुत्य था। उन्होंने धुनना कातना बिनना सीख लिया है। और धुनने मे उनका पहला स्थान रहा है। आज भी मैं उनको आश्रमवासी समझता हु।

मोहनदास गाधी

—हिन्दी। कानपुर, २९।१२।१९२५। गांधी स्मारकनिधि-सग्रहालय, नई दिल्ली में सुरक्षित पत्रावली से।]

१७. पत्र : आश्रम की वहिनों को

काशी १०-१-१९२७

वहिनो,

चि० राधा का लिखा हुआ पत्र मुझे [illegible] मिला। [illegible] तुम्हारी

---

१. डाक की मुहर से।

सात बजे की प्रार्थना नियम से हो रही है और उसमें सबको दिलचस्पी है। इससे खुशी होती है। काका साहब का कहना जरूर ध्यान में रखने लायक है। 'हां' या 'ना' कहकर बैठे रहने के बजाय हमें उसके कारण समझने या समझाने की शक्ति पैदा करनी चाहिए।

कल श्रद्धानन्द जी के लिए श्रद्धाञ्जलि का दिन था। पं० मालवीय जी अभी काशी में ही है। उन्होंने अन्त समय पर कहलवाया कि गंगाघाट नहाने जाना है और वहां अञ्जलि देनी है। मैं तैयार हो गया और राष्ट्रीय विद्यापीठ के विद्यार्थियों को, जो मुझसे मिलने आये थे, साथ ले लिया। दो-दो की कतार बांधकर हम निकल पड़े। मालवीय जी शामिल हो गये और हमारा जुलूस बढ़ता गया। गंगाघाट का वर्णन करने का तो मुझे समय नही है। यह दृश्य भव्य है। घाट पर मैं (जितनी) चाहता हूं, उतनी सफाई नहीं है।

स्नान करके हम काशी विश्वनाथ के दर्शनों के लिए गये। वहां का शेष वर्णन तो शायद महादेव करेगा। जर्मन बहिन हमारे साथ थी। उन्हें घुसने देंगे या नही, इस बारे में शक था। वह बहिन बौद्ध है, इसलिए हिन्दू मानी जायगी। उसे कौन रोक सकता है? उसे रोकें तो मुझे नहीं जाना है, यह मैंने सोच रखा था। मगर पण्डे को यह बताने पर कि वह हिन्दू है, वह चुप हो गया।

काशी विश्वनाथ की गली की गन्दगी की तो क्या बात लिखूं?

मौनवार

बापू के आशीर्वाद

—गुजराती। काशी, १०।१।१९२७। 'आश्रम की बहिनों को' से। पत्र संख्या ६।]

१८. पत्र : आश्रम की बहिनों को

नैनीताल

१७-६-१९२९

बहिनो,

तुम्हारी जिम्मेदारी बढ़ती जा रही है। 'आदर्श बाल-मन्दिर' के विषय में किशोरलाल[1] का जो पत्र आया है, वह साथ भेजता हूं। तुम पढना और शिक्षकों

---

१. किशोरलाल भाई : प्रमुख गांधीवादी विचारक, साधक और ग्रन्थों रचयिता। गांधी-सेवा-संघ के अध्यक्ष।

को पढने के लिए देना। मैं चाहता हू कि जिन बहनो को दिलचस्पी है वे खूब तैयार हो जाय। नारायणदास को खूब तग करके भी सीख लेना। उससे भी ज्यादा होशयार बतानेवाला होना सम्भव है। मगर "एकहि साधे सब सधे" वाली बात है।

रसोईघर को तो सुशोभित करोगी ही।

मौनवार बापू के आशीर्वाद

—गुजराती। नैनीताल, १७।६।१९२९। 'आश्रम की बहिनों को' से। पत्र-संख्या ७२।]

१९. अनासक्ति-योग : प्रस्तावना

[गीता गांधीजी के समस्त जीवन का दीपक ही नहीं है, वह उनके जीवन की शिरा-शिरा में समाई हुई है। उन्होंने उसका अध्ययन ही नहीं किया, अपने जीवन में उसे जिया है, आचरित किया है। उनके मत से अनासक्ति या कर्मफल-त्याग इस गीता का मध्यबिन्दु है। इसे ही स्पष्ट करने के लिए अवकाश के समय उन्होंने गीता की 'अनासक्तियोग' नाम की टीका लिखी थी। इस टीका की अत्यन्त महत्व-पूर्ण प्रस्तावना उन्होंने उत्तर प्रदेश के कौसानी नामक स्थान मे लिखी। वह प्रस्ता-वना यहा दी जा रही है।—सम्पा०]

जैसे स्वामी आनन्द आदि मित्रो के प्रेम के वश होकर मैंने सत्य के प्रयोगो भर के लिए आत्मकथा का लिखना आरम्भ किया था वैसे गीता का अनुवाद भी। स्वामी आनन्द ने असहयोग के जमाने मे मुझसे कहा था, 'आप गीता का जो अर्थ करते हैं, वह अर्थ तभी समझ मे आ सकता है जब आप एक बार समूची गीता का अनुवाद कर जाय और उसके ऊपर जो टीका करनी हो वह करें और हम वह सम्पूर्ण एक बार पढ जाय। फुटकर श्लोको मे से अहिंसादि का प्रतिपादन मुझे तो ठीक नही लगता है।' मुझे उनकी दलील मे सार जान पड़ा। मैंने जवाब दिया, अवकाश मिलने पर यह करूगा। फिर मैं जेल गया। वहा गीता का अध्ययन कुछ अधिक गहराई से करने का मौका मिला। लोकमान्य का ज्ञान का भण्डार पढा। उन्होने ही पहले मुझे मराठी, हिन्दी और गुजराती अनुवाद प्रेमपूर्वक भेजे थे और सिफारिश की थी कि मराठी न पढ सको, तो गुजराती अवश्य पढ़ना। जेल के बाहर तो उसे न पढ पाया, पर जेल मे गुजराती अनुवाद पढा। इसे पढने के बाद

सात वजे की प्रार्थना नियम से हो रही है और उसमें सबको दिलचस्पी है। इससे खुशी होती है। काका साहब का कहना जरूर ध्यान में रखने लायक है। 'हां' या 'ना' कहकर बैठे रहने के बजाय हमें उसके कारण समझने या समझाने की शक्ति पैदा करनी चाहिए।

कल श्रद्धानन्द जी के लिए श्रद्धाञ्जलि का दिन था। पं० मालवीय जी अभी काशी में ही हैं। उन्होंने अन्त समय पर कहलवाया कि गंगाघाट नहाने जाना है और वहां अञ्जलि देनी है। मैं तैयार हो गया और राष्ट्रीय विद्यापीठ के विद्यार्थियों को, जो मुझसे मिलने आये थे, साथ ले लिया। दो-दो की कतार बांधकर हम निकल पड़े। मालवीय जी शामिल हो गये और हमारा जुलूस वढ़ता गया। गंगाघाट का वर्णन करने का तो मुझे समय नही है। यह दृश्य भव्य है। घाट पर मैं (जितनी) चाहता हूं, उतनी सफाई नही है।

स्नान करके हम काशी विश्वनाथ के दर्शनों के लिए गये। वहां का शेष वर्णन तो शायद महादेव करेगा। जर्मन वहिन हमारे साथ थीं। उन्हें घुसने देंगे या नही, इस वारे में शक था। वह वहिन वौद्ध है, इसलिए हिन्दू मानी जायगी। उसे कौन रोक सकता है? उसे रोके तो मुझे नही जाना है, यह मैंने सोच रखा था। मगर पण्डे को यह वताने पर कि वह हिन्दू है, वह चुप हो गया।

काशी विश्वनाथ की गली की गन्दगी की तो क्या वात लिखूं?

मौनवार

बापू के आशीर्वाद

—गुजराती। काशी, १०।१।१९२७। 'आश्रम की वहिनों को' से। पत्र संख्या ६।]

१८. पत्र : आश्रम की बहिनों को

नैनीताल

१७-६-१९२९

वहिनो,

तुम्हारी जिम्मेदारी वढ़ती जा रही है। 'आदर्श वाल-मन्दिर' के विषय में किशोरलाल[1] का जो पत्र आया है, वह साथ भेजता हूं। तुम पढना और शिक्षकों

---

१. किशोरलाल भाई : प्रमुख गांधीवादी विचारक, साधक और अनेक ग्रन्थों के रचयिता। गांधी-सेवा-संघ के अध्यक्ष।

गीता के सम्वन्ध में अधिक पढ़ने की इच्छा हुई और गीता-सम्वन्धी अनेक ग्रन्थ उलटे-पलटे।

मुझे गीता का प्रथम परिचय एडविन आर्नल्ड के पद्य-अनुवाद से सन् १८८८-८९ में प्राप्त हुआ। उससे गीता का गुजराती अनुवाद पढ़ने की तीव्र इच्छा हुई और जितने अनुवाद हाथ लगे उन्हें पढ़ गया, परन्तु ऐसी पढ़ाई मुझे अपना अनुवाद जनता के सामने रखने का बिल्कुल अधिकार नही देती। इसके सिवा मेरा संस्कृत-ज्ञान अल्प है, गुजराती का ज्ञान विद्वत्ता के विचार से कुछ नही है। तब मैंने अनुवाद करने की धृष्टता क्यों की ?

गीता को मैंने जिस प्रकार समझा है उस प्रकार उसका आचरण करने का मेरा और मेरे साथ रहनेवाले कई साथियों का बराबर प्रयत्न है। गीता हमारे लिए आध्यात्मिक निदान-ग्रन्थ है। उसके अनुसार आचरण में निष्फलता रोज आती है, पर वह निष्फलता हमारा प्रयत्न रहते हुए है, इस निष्फलता में सफलता की फूटती हुई किरणों की झलक दिखाई देती है। यह नन्हा-सा जन-समुदाय जिस अर्थ को आचार मे परिणत करने का प्रयत्न करता है वह इस अनुवाद मे है।

इसके सिवा स्त्रियां, वैश्य और शूद्र-सरीखे जिन्हे अक्षरज्ञान थोड़ा ही है, जिन्हें मूल संस्कृत में गीता समझने का समय नही है, इच्छा नही है, परन्तु जिन्हें गीतारूपी सहारे की आवश्यकता है, उन्ही के लिए इस अनुवाद की कल्पना है।[1] गुजराती भाषा का मेरा ज्ञान कम होने पर भी उसके द्वारा गुजरातियों को मेरे पास जो कुछ पूजी हो वह दे जानेकी मुझे सदा भारी अभिलाषा रही है। मैं यह चाहता हूं अवश्य कि आज गन्दे साहित्य का जो प्रवाह जोरों से जारी है उस समय हिन्दू-धर्म में अद्वितीय माने जानेवाले इस ग्रन्थ का सरल अनुवाद गुजराती जनता को मिले और उसमें से वह उस प्रवाह का सामना करने की शक्ति प्राप्त करे।

इस अभिलाषा में दूसरे गुजराती अनुवादों की अवहेलना नही है। उन सबका स्थान भले ही हो—पर उनके पीछे उनके अनुवादकों का आचार-रूपी अनुभवका दावा हो, ऐसा मेरी जानकारी मे नही है। इस अनुवाद के पीछे अड़तीस वर्ष के आचार के प्रयत्न का दावा है। इसलिए मैं यह अवश्य चाहता हूं कि प्रत्येक गुजराती भाई और वहिन, जिन्हें धर्म को आचरण में लाने की इच्छा है, इसे पढ़ें, विचारें और इसमे से शक्ति प्राप्त करें।

इस अनुवाद में मेरे साथियो की मेहनत मौजूद है। मेरा सस्कृत ज्ञान बहुत अधूरा होने के कारण शब्दार्थ पर मुझे पूरा विश्वास नही हो सकता था, अतः

---

१. गांधीजी का अनुवाद गुजराती में है। यह उसी का हिन्दी अनुवाद है।

इतने भर के लिए इस अनुवाद को विनोवा, काका कालेलकर, महादेव देसाई और किशोरलाल मशरूवाला ने देख लिया है।

(२)

अव गीता के अर्थ पर आता हू।

सन् १८८८-८९ मे जव गीता का प्रथम दर्शन हुआ तभी मुझे ऐसा लगा कि यह ऐतिहासिक ग्रन्थ नही है, वरन् इसमे भौतिक युद्ध के वर्णन के वहाने प्रत्येक मनुष्य के हृदय के भीतर निरन्तर होते रहनेवाले द्वन्द्वयुद्ध का ही वर्णन है, मानुषी योद्धाओ की रचना हृदयगत युद्ध को रोचक वनाने के लिए गढी हुई कल्पना है। यह प्राथमिक स्फुरणा धर्म का और गीता का विशेष विचार करने के वाद पक्की हो गई। महाभारत पढने के वाद यह विचार और भी दृढ हो गया। महाभारत ग्रन्थ को मै आधुनिक अर्थ मे इतिहास नहीं मानता। इसके प्रवल प्रमाण आदि पर्व मे ही है। पात्रो की अमानुषी और अतिमानुषी उत्पत्ति का वर्णन करके व्यास भगवान ने राजा-प्रजा के इतिहास को मिटा दिया है।उसमे वर्णित पात्र मूल मे ऐतिहासिक भले ही हो, परन्तु महाभारत मे तो उनका उपयोग व्यास भगवान ने केवल धर्म का दर्शन कराने के लिए ही किया है।

महाभारतकार ने भौतिक युद्ध की आवश्यकता नही, उनकी निरर्थकता सिद्ध की है। विजेता से रुदन कराया है, पश्चात्ताप कराया है और दु ख के सिवा और कुछ नही रहने दिया।

इस महाग्रन्थ मे गीता शिरोमणिरूप से विराजती है। उसका दूसरा अध्याय भौतिक युद्ध-व्यवहार सिखाने के वदले स्थितप्रज्ञ के लक्षण सिखाता है। स्थितप्रज्ञ का ऐहिक युद्ध के साथ कोई सम्वन्ध नही होता, यह वात उसके लक्षणो से मे हीं मुझे प्रतीत हुई है। साधारण पारिवारिक झगडो के औचित्य-अनौचित्य का निर्णय करने के लिए गीता-जैसी पुस्तक की रचना सम्भव नहीं है।

गीता के कृष्ण मूर्तिमान् शुद्ध सम्पूर्ण ज्ञान है, परन्तु काल्पनिक है। यहा कृष्ण नाम के अवतारी पुरुष का निषेध नही है। केवल सम्पूर्ण कृष्ण काल्पनिक है, सम्पूर्णावतार का आरोपण पीछे से हुआ है।

अवतार से तात्पर्य है शरीरधारी पुरुष-विशेष। जीवमात्र ईश्वर के अवतार है, परन्तु लौकिक भाषा मे सवको हम अवतार नही कहते। जो पुरुष अपने युग मे सबसे श्रेष्ठ धर्मवान है, उसे भावी प्रजा अवतार रूप मे पूजती है। इसमे मुझे कुछ दोष नही जान पड़ता। इसमे न तो ईश्वर के बड़प्पन मे कमी आती है, न इसमे सत्य को आघात पहुचता है। आदम खुदा नही, लेकिन खुदा के नूर से आदम जुदा नही।

इतने भर के लिए इस अनुवाद को विनोबा, काका कालेलकर, महादेव देसाई और किशोरलाल मशरूवाला ने देख लिया है।

(२)

अब गीता के अर्थ पर आता हू।

सन् १८८८-८९ मे जब गीता का प्रथम दर्शन हुआ तभी मुझे ऐसा लगा कि यह ऐतिहासिक ग्रन्थ नही है, वरन् इसमे भौतिक युद्ध के वर्णन के बहाने प्रत्येक मनुष्य के हृदय के भीतर निरन्तर होते रहनेवाले द्वन्द्वयुद्ध का ही वर्णन है, मानुपी योद्धाओ की रचना हृदयगत युद्ध को रोचक बनाने के लिए गढी हुई कल्पना है। यह प्राथमिक स्फुरणा धर्म का और गीता का विशेष विचार करने के बाद पक्की हो गई। महाभारत पढने के बाद यह विचार और भी दृढ हो गया। महाभारत ग्रन्थ को मैं आधुनिक अर्थ मे इतिहास नही मानता। इसके प्रबल प्रमाण आदि पर्व मे ही हैं। पात्रो की अमानुपी और अतिमानुपी उत्पत्ति का वर्णन करके व्यास भगवान ने राजा-प्रजा के इतिहास को मिटा दिया है।उसमे वर्णित पात्र मूल मे ऐतिहासिक भले ही हो, परन्तु महाभारत मे तो उनका उपयोग व्यास भगवान ने केवल धर्म का दर्शन कराने के लिए ही किया है।

महाभारतकार ने भौतिक युद्ध की आवश्यकता नही, उनकी निरर्थकता सिद्ध की है। विजेता से रुदन कराया है, पश्चात्ताप कराया है और दु ख के सिवा और कुछ नही रहने दिया।

इस महाग्रन्थ मे गीता शिरोमणिरूप से विराजती है। उसका दूसरा अध्याय भौतिक युद्ध-व्यवहार सिखाने के बदले स्थितप्रज्ञ के लक्षण सिखाता है। स्थितप्रज्ञ का ऐहिक युद्ध के साथ कोई सम्बन्ध नही होता, यह बात उसके लक्षणों मे से ही मुझे प्रतीत हुई है। साधारण पारिवारिक झगडो के औचित्य-अनौचित्य का निर्णय करने के लिए गीता-जैसी पुस्तक की रचना सम्भव नहीं है।

गीता के कृष्ण मूर्तिमान् शुद्ध सम्पूर्ण ज्ञान हैं, परन्तु काल्पनिक हैं। यहा कृष्ण नाम के अवतारी पुरुप का निपेध नहीं है। केवल सम्पूर्ण कृष्ण काल्पनिक हैं, सम्पूर्णावतार का आरोपण पीछे मे हुआ है।

अवतार से तात्पर्य है शरीरधारी पुरुप-विशेष। जीवमात्र ईश्वर के अवतार हैं, परन्तु लौकिक भाषा मे सबको हम अवतार नहीं कहते। जो पुरुष अपने युग मे सबसे श्रेष्ठ धर्मवान है, उसे भावी प्रजा अवतार रूप मे पूजती है। इसमे मुझे कोई दोष नही जान पड़ता। इसमे न तो ईश्वर के बड़प्पन मे कमी आती है, न उसमे सत्य को आघात पहुचता है। आदम खुदा नही लेकिन खुदा के नूर से आदम जुदा नहीं।

गीता के सम्बन्ध में अधिक पढ़ने की इच्छा हुई और गीता-सम्बन्धी अनेक ग्रन्थ उलटे-पलटे।

मुझे गीता का प्रथम परिचय एडविन आर्नल्ड के पद्य-अनुवाद से सन् १८८८-८९ मे प्राप्त हुआ। उससे गीता का गुजराती अनुवाद पढने की तीव्र इच्छा हुई और जितने अनुवाद हाथ लगे उन्हें पढ़ गया, परन्तु ऐसी पढ़ाई मुझे अपना अनुवाद जनता के सामने रखने का बिल्कुल अधिकार नही देती। इसके सिवा मेरा संस्कृत-ज्ञान अल्प है, गुजराती का ज्ञान विद्वत्ता के विचार से कुछ नही है। तब मैंने अनुवाद करने की घृष्टता क्यों की?

गीता को मैने जिस प्रकार समझा है उस प्रकार उसका आचरण करने का मेरा और मेरे साथ रहनेवाले कई साथियो का बराबर प्रयत्न है। गीता हमारे लिए आध्यात्मिक निदान-ग्रन्थ है। उसके अनुसार आचरण में निष्फलता रोज आती है, पर वह निष्फलता हमारा प्रयत्न रहते हुए है, इस निष्फलता में सफलता की फूटती हुई किरणो की झलक दिखाई देती है। यह नन्हा-सा जन-समुदाय जिस अर्थ को आचार में परिणत करने का प्रयत्न करता है वह इस अनुवाद में है।

इसके सिवा स्त्रियां, वैश्य और शूद्र-सरीखे जिन्हें अक्षरज्ञान थोड़ा ही है, जिन्हे मूल संस्कृत में गीता समझने का समय नही है, इच्छा नही है, परन्तु जिन्हे गीतारूपी सहारे की आवश्यकता है, उन्ही के लिए इस अनुवाद की कल्पना है।[1] गुजराती भाषा का मेरा ज्ञान कम होने पर भी उसके द्वारा गुजरातियों को मेरे पास जो कुछ पूजी हो वह दे जानेकी मुझे सदा भारी अभिलाषा रही है। मैं यह चाहता हूं अवश्य कि आज गन्दे साहित्य का जो प्रवाह जोरों से जारी है उस समय हिन्दू-धर्म मे अद्वितीय माने जानेवाले इस ग्रन्थ का सरल अनुवाद गुजराती जनता को मिले और उसमें से वह उस प्रवाह का सामना करने की शक्ति प्राप्त करे।

इस अभिलाषा मे दूसरे गुजराती अनुवादो की अवहेलना नही है। उन सबका स्थान भले ही हो—पर उनके पीछे उनके अनुवादकों का आचार-रूपी अनुभवका दावा हो, ऐसा मेरी जानकारी मे नही है। इस अनुवाद के पीछे अड़तीस वर्ष के आचार के प्रयत्न का दावा है। इसलिए मैं यह अवश्य चाहता हूं कि प्रत्येक गुजराती भाई और बहिन, जिन्हें धर्म को आचरण में लाने की इच्छा है, इसे पढ़ें, विचारें और इसमे से शक्ति प्राप्त करे।

इस अनुवाद में मेरे साथियों की मेहनत मौजूद है। मेरा संस्कृत ज्ञान बहुत अधूरा होने के कारण शब्दार्थ पर मुझे पूरा विश्वास नही हो सकता था, अतः

---

१. गांधी जी का अनुवाद गुजराती में है। यह उसी का हिन्दी अनुवाद है।

इतने भर के लिए इस अनुवाद को विनोवा, काका कालेलकर, महादेव देसाई और किशोरलाल मशरूवाला ने देख लिया है।

(२)

अव गीता के अर्थ पर आता हू।

सन् १८८८-८९ मे जव गीता का प्रथम दर्शन हुआ तभी मुझे ऐसा लगा कि यह ऐतिहासिक ग्रन्थ नही है, वरन् इसमे भौतिक युद्ध के वर्णन के वहाने प्रत्येक मनुष्य के हृदय के भीतर निरन्तर होने रहनेवाले द्वन्द्वयुद्ध का ही वर्णन है, मानुषी योद्धाओ की रचना हृदयगत युद्ध को रोचक वनाने के लिए गढी हुई कल्पना है। यह प्राथमिक स्फुरणा धर्म का और गीता का विशेष विचार करने के वाद पक्की हो गई। महाभारत पढने के वाद यह विचार और भी दृढ हो गया। महाभारत ग्रन्थ को मैं आधुनिक अर्थ मे इतिहास नही मानता। इसके प्रवल प्रमाण आदि पर्व मे ही हैं। पात्रो की अमानुषी और अतिमानुषी उत्पत्ति का वर्णन करके व्यास भगवान ने राजा-प्रजा के इतिहास को मिटा दिया है।उसमे वर्णित पात्र मूल मे ऐतिहासिक भले ही हो, परन्तु महाभारत मे तो उनका उपयोग व्यास भगवान ने केवल धर्म का दर्शन कराने के लिए ही किया है।

महाभारतकार ने भौतिक युद्ध की आवश्यकता नही, उनकी निरर्थकता सिद्ध की है। विजेता से रुदन कराया है, पश्चात्ताप कराया है और दु ख के सिवा और कुछ नही रहने दिया।

इस महाग्रन्थ मे गीता शिरोमणिरूप से विराजती है। उसका दूसरा अध्याय भौतिक युद्ध-व्यवहार सिखाने के वदले स्थितप्रज्ञ के लक्षण सिखाता है। स्थितप्रज्ञ का ऐहिक युद्ध के साथ कोई सम्वन्ध नही होता, यह वात उसके लक्षणो से मे ही मुझे प्रतीत हुई है। साधारण पारिवारिक झगडो के औचित्य-अनौचित्य का निर्णय करने के लिए गीता-जैसी पुस्तक की रचना सम्भव नही है।

गीता के कृष्ण मूर्तिमान् शुद्ध सम्पूर्ण ज्ञान है, परन्तु काल्पनिक हैं। यहा कृष्ण नाम के अवतारी पुरुष का निषेध नही है। केवल सम्पूर्ण कृष्ण काल्पनिक है, सम्पूर्णावतार का आरोपण पीछे से हुआ है।

अवतार मे तात्पर्य है शरीरधारी पुरुष-विशेष। जीवमात्र ईश्वर के अवतार हैं, परन्तु लौकिक भाषा मे सवको हम अवतार नही कहते। जो पुरुष अपने युग मे सवसे श्रेष्ठ धर्मवान है, उसे भावी प्रजा अवतार रूप मे पूजती है। इसमे मुझे कोई दोष नही जान पडता। इसमे न तो ईश्वर के वडप्पन मे कमी आती है, न उसमे सत्य को आघात पहुचता है। आदम खुदा नही, लेकिन खुदा के नूर से आदम जुदा नही।

जिसमें धर्म-जागृति अपने युग में सबसे अधिक है वह विशेषावतार है। इस विचार-श्रेणी मे कृष्णरूपी सम्पूर्णावतार आज हिन्दू धर्म मे साम्राज्य भोग रहा है।

यह दृश्य मनुष्य की अन्तिम सदभिलाषा का सूचक है। मनुष्य को ईश्वर रूप हुए बिना चैन नही पड़ता, शान्ति नही मिलती। ईश्वर रूप होने के प्रयत्न का नाम सच्चा और एकमात्र पुरुषार्थ है और यही आत्मदर्शन है। यह आत्मदर्शन सब धर्मग्रन्थो का विषय है, वैसे ही गीता का भी है। पर गीताकार ने इस विषय का प्रतिपादन करने के लिए गीता नही रची। वरन् आत्मार्थी को आत्मदर्शन का एक अद्वितीय उपाय बतलाना गीता का आशय है। जो चीज हिन्दूधर्मग्रन्थों में छिट-पुट दिखाई देती है, उसे गीता ने अनेक रूपों, अनेक शब्दों में, पुनरुक्ति का दोष स्वीकार करके भी, अच्छी तरह स्थापित किया है।

यह अद्वितीय उपाय है 'कर्मफल-त्याग'।

इस मध्यबिन्दु के चारों ओर गीता की सारी सजावट है। भक्ति, ज्ञान इत्यादि उसके आसपास तारा-मण्डल रूप में सज गये है। जहां देह है वहां कर्म तो है ही। उससे कोई मुक्त नही है, तथापि देह को प्रभु का मन्दिर बनाकर उसके द्वारा मुक्ति प्राप्त होती है, यह सब धर्मो ने प्रतिपादन किया है। परन्तु कर्म मात्र में कुछ दोष तो है ही, मुक्ति तो निर्दोष की ही होती है। तब कर्म-बन्धन में से अर्थात् दोष-स्पर्श मे से कैसे छुटकारा हो? इसका जवाब गीताजी ने निश्चयात्मक शब्दों में दिया है—"निष्काम कर्म से, यज्ञार्थ कर्म करके, कर्मफल-त्याग करके, सब कर्मों को कृष्णार्पण करके, अर्थात् मन, वचन और काया को ईश्वर में होम करके।

पर निष्कामता, कर्मफलत्याग कहने भर से नही हो जाता। यह केवल बुद्धि का प्रयोग नही है। यह हृदयमन्थन से ही उत्पन्न होता है। यह त्याग-शक्ति पैदा करने के लिए ज्ञान चाहिए। एक प्रकार का ज्ञान तो बहुतेरे पण्डित पाते हैं। वेदादि उन्हें कण्ठ होते हैं, परन्तु उनमें से अधिकाश भोगादि में लगे-लिपटे रहते हैं। ज्ञान का अतिरेक शुष्क पाण्डित्य के रूप मे न हो जाय, इस ख्याल से गीताकार ने ज्ञान के साथ भक्ति को मिलाया और उसे प्रथम स्थान दिया। बिना भक्ति का ज्ञान हानिकर है। इसलिए कहा गया, भक्ति करो तो ज्ञान मिल ही जायगा। पर भक्ति तो सिर का सौदा है, इसलिए गीताकार ने भक्त के लक्षण स्थितप्रज्ञ के-से बतलाये हैं।

तात्पर्य, गीता की भक्ति बाह्याचारिता नही है, अन्धश्रद्धा नही है। गीता में बताये उपचार का बाह्य चेष्टा या क्रिया के साथ कम-से-कम सम्बन्ध है। माला, तिलक, अर्घ्यादि साधन भले ही भक्त बरते, पर वे भक्ति के लक्षण नही हैं। जो किसी का द्वेष नही करता, जो करुणा का भण्डार है और ममतारहित है, जो

निरहकार है, जिसे सुख-दुःख, शीत-उष्ण समान हैं, जो क्षमाशील है, जो सदा-सन्तोषी है, जिसके निश्चय कभी बदलते नही, जिसने मन और बुद्धि ईश्वर को अर्पण कर दिये हैं, जिससे लोग उद्वेग नही पाते, जो लोगों का भय नही रखता, जो हर्ष-शोक-भयादि से मुक्त है, जो पवित्र है, जो कार्यदक्ष होकर भी तटस्थ है, जो शुभाशुभ का त्याग करनेवाला है, जो शत्रु-मित्र का सम-भाव रखनेवाला है, जिसे मान-अपमान समान है, जिसे स्तुति से खुशी नही होती और निन्दा से ग्लानि नही होती, जो मौनधारी है, जिसे एकान्त प्रिय है, जो स्थिरबुद्धि है, वह भक्त है। यह भक्ति आसक्त स्त्री-पुरुषो मे सम्भव नही है।

इसमे से हम देखते हैं कि ज्ञान प्राप्त करना, भक्त होना ही आत्मदर्शन है। आत्मदर्शन उससे भिन्न वस्तु नही है। जैसे रुपये के बदले मे जहर खरीदा जा सकता है और अमृत भी लाया जा सकता है, वैसे ज्ञान या भक्ति के बदले बन्धन भी लाया जा सके और मोक्ष भी, यह सम्भव नही है। यहा तो साधन और साध्य, बिल्कुल एक नही तो लगभग एक ही वस्तु हैं, साधन की पराकाष्ठा जो है वही मोक्ष है और गीता के मोक्ष का अर्थ परमशान्ति है।

किन्तु ऐसे ज्ञान और भक्ति को कर्मफलत्याग की कसौटी पर चढाना ठहरा। लौकिक कल्पना मे शुष्क पण्डित भी ज्ञानी मान लिया जाता है। उसे कुछ काम करने को नही रहता। हाथ से लोटा तक उठाना भी उसके लिए कर्मबन्धन है। यज्ञशून्य जहा ज्ञानी गिना जाय वहा लोटा उठाने-जैसी तुच्छ लौकिक क्रिया को स्थान ही कैसे मिल सकता है?

लौकिक कल्पना मे भक्त से मतलब है बाह्याचारी,[1] माला लेकर जप करनेवाला। सेवाकर्म करते भी उसकी माला मे विक्षेप पड़ता है। इसलिए वह खाने-पीने आदि भोग भोगने के समय ही माला को हाथ से छोड़ता है, चक्की चलाने या रोगी की सेवा-शुश्रूषा करने के लिए कभी नही छोड़ता।

इन दोनो वर्गो को गीता ने साफतौर से कह दिया, कर्म बिना किसी ने सिद्धि नही पाई। जनकादि भी कर्म-द्वारा ज्ञानी हुए। यदि मैं भी आलस्यरहित होकर कर्म न करता रहू तो इन लोको का नाश हो जाय। तो फिर लोगों के लिए पूछना ही क्या रह जाता है?

परन्तु एक ओर से कर्ममात्र बन्धन रूप है, यह निर्विवाद है। दूसरी ओर से देही इच्छा-अनिच्छा से भी कर्म करता रहता है। शारीरिक या मानसिक सभी

---

१. जो बाह्याचार मे लीन रहता है और शुद्ध भाव से मानता है कि यही भक्ति है।

चेष्टाएं कर्म है। तब कर्म करते हुए भी मनुष्य बन्धनमुक्त कैसे रहे? जहां तक मुझे मालूम है, इस समस्या को गीता ने जिस तरह हल किया है वैसे दूसरे किसी भी धर्म-ग्रन्थ ने नही किया है। गीता का कहना है—फलासक्ति छोड़ो और कर्म करो, आशारहित होकर कर्म करो, निष्काम होकर कर्म करो। यह गीता की वह ध्वनि है जो भुलाई नही जा सकती। जो कर्म छोड़ता है वह गिरता है। कर्म करते हुए भी जो उसका फल छोड़ता है वह चढ़ता है। फलत्याग का यह अर्थ नही है कि परिणाम के सम्बन्ध में लापरवाही रहे। परिणाम और साधन का विचार और उसका ज्ञान अत्यावश्यक है। इतना होने के बाद जो मनुष्य परिणाम की इच्छा किये बिना साधन में तन्मय रहता है वह फलत्यागी है।

पर यहां फलत्याग का कोई यह अर्थ न करे कि त्यागी को फल मिलता नही। गीता में ऐसे अर्थ को कही स्थान नही है। फलत्याग से मतलब है फल के सम्बन्ध मे आसक्ति का अभाव। वास्तव में देखा जाय तो फलत्यागी को तो हजार गुना फल मिलता है। गीता के फलत्याग में तो अपरिमित श्रद्धा की परीक्षा है। जो मनुष्य परिणाम का ध्यान करता रहता है वह बहुत बार कर्म-कर्त्तव्यभ्रष्ट हो जाता है। उसे अधीरता घेरती है, इससे वह क्रोध के वश हो जाता है और फिर वह न करने योग्य करने लग पड़ता है, एक कर्म में से दूसरे में और दूसरे में से तीसरे में पड़ता जाता है। परिणाम की चिन्ता करनेवाले की स्थिति विषयान्ध की-सी हो जाती है और अन्त में वह विषयी की भांति सारासार का, नीति-अनीति का विवेक छोड़ देता है और फल प्राप्त करने के लिए हर किसी साधन से काम लेता है और उसे धर्म मानता है।

फलासक्ति के ऐसे कटु परिणामों में से गीताकार ने अनासक्ति का अर्थात् कर्मफलत्याग का सिद्धान्त निकाला और संसार के सामने अत्यन्त आकर्षक भाषा मे रक्खा। साधारणतः तो यह माना जाता है कि धर्म और अर्थ विरोधी वस्तु हैं, व्यापार इत्यादि लौकिक व्यवहार में धर्म नहीं बचाया जा सकता,' धर्म को जगह नही हो सकती; धर्म का उपयोग केवल मोक्ष के लिए किया जा सकता है। धर्म की जगह धर्म शोभा देता है और अर्थ की जगह अर्थ। बहुतों से ऐसा कहते हम सुनते हैं। गीताकार ने इस भ्रम को दूर किया है। उसने मोक्ष और व्यवहार के बीच ऐसा भेद नही रक्खा है, वरन् व्यवहार मे धर्म को उतारा है। जो धर्म व्यवहार मे न लाया जा सके वह धर्म नही है, मेरी समझ से यह बात गीता में है। मतलब, गीता के मतानुसार जो कर्म ऐसे है कि आसक्ति के बिना हो ही न सके वे सभी त्याज्य हैं। ऐसा सुवर्ण-नियम मनुष्य को अनेक धर्म-संकटो मे से बचाता है। इस मत के अनुसार खून, झूठ, व्यभिचार इत्यादि कर्म अपने-आप त्याज्य हो

जाते हैं। मानव-जीवन सरल बन जाता है और सरलता मे से शान्ति उत्पन्न होती है।

इस विचार-श्रेणी के अनुसार मुझे ऐसा जान पडा है कि गीता की शिक्षा को व्यवहार मे लानेवाले को अपने-आप सत्य और अहिंसा का पालन करना पडता है। फलासक्ति के बिना न तो मनुष्य को असत्य बोलने का लालच होता है, न हिंसा करने का। चाहे जिस हिंसा या असत्य के कार्य को हम लें, यह मालूम हो जायगा कि उसके पीछे परिणाम की इच्छा रहती है। गीताकाल के पहिले भी अहिंसा परमधर्म रूप मानी जाती थी। पर गीता को तो अनासक्ति के सिद्धान्त का प्रतिपादन करना था। दूसरे अध्याय मे ही यह बात स्पष्ट हो जाती है।

परन्तु यदि गीता को अहिंसा मान्य थी अथवा अनासक्ति मे अहिंसा अपने-आप आ ही जाती है तो गीताकार ने भौतिक युद्ध को उदाहरण के रूप मे भी क्यो लिया? गीतायुग मे अहिंसा धर्म मानी जाने पर भी भौतिक युद्ध सर्वमान्य वस्तु होने के कारण गीताकार को ऐसे युद्ध का उदाहरण लेते सकोच नही हुआ और न होना चाहिए था।

परन्तु फलत्याग के महत्व का अन्दाजा करते हुए गीताकार के मन मे क्या विचार थे, उसने अहिंसा की मर्यादा कहा निश्चित की थी, इस पर हमे विचार करने की आवश्यकता नही रहती। कवि महत्व के सिद्धान्तो को ससार के सम्मुख उपस्थित करता है, इसके यह मानी नही होते कि वह सदा अपने उपस्थित किये हुए सिद्धान्तो का महत्व पूर्णरूप से पहचानता है या पहचानने के बाद समूचे को भाषा मे रख सकता है। इसमे काव्य की और कवि की महिमा है। कवि के अर्थ का अन्त ही नही है। जैसे मनुष्य का, उसी प्रकार महावाक्यो के अर्थ का विकास होता ही रहता है। भाषाओ के इतिहास से हमें मालूम होता है कि अनेक महान् शब्दो के अर्थ नित्य नये होते रहे हैं। यही बात गीता के अर्थ के सम्बन्ध मे भी है। गीताकार ने स्वय महान् रूढ शब्दो के अर्थ का विस्तार किया है। गीता को ऊपरी दृष्टि से देखने पर भी यह बात मालूम हो जाती है। गीतायुग के पहले कदाचित् यज्ञ मे पशु-हिसा मान्य रही हो। गीता के यज्ञ मे उसकी गन्ध तक नही है। उसमे तो जप-यज्ञ यज्ञो का राजा है। तीसरा अध्याय बतलाता है कि यज्ञ का अर्थ है मुख्यरूप मे परोपकार के लिए शरीर का उपयोग। तीसरा और चौथा अध्याय मिलाकर दूसरी व्याख्याए भी निकाली जा सकती है, पर पशु-हिसा नही निकाली जा सकती। यही बात गीता के सन्यास के अर्थ के सम्बन्ध मे है। कर्ममात्र का त्याग गीता के सन्यास को भाता ही नही। गीता का सन्यासी अतिकर्मी तथापि अति-अकर्मी है। इस प्रकार गीताकार ने महान्

शब्दों का व्यापक अर्थ करके अपनी भाषा का भी व्यापक अर्थ करना हमें सिखाया है। गीताकार की भाषा के अक्षरों से यह बात भले ही निकलती हो कि सम्पूर्ण कर्मफलत्यागी द्वारा भौतिक युद्ध हो सकता है, परन्तु गीता की शिक्षा को पूर्णरूप से अमल में लाने का ४० वर्ष तक सतत प्रयत्न करने पर मुझे तो नम्रतापूर्वक जान पड़ा है कि सत्य और अहिंसा का पूर्णरूप से पालन किये बिना सम्पूर्ण कर्मफलत्याग मनुष्य के लिए असम्भव है।

गीता सूत्र-ग्रन्थ नहीं है। गीता एक महान् धर्मकाव्य है। उसमें जितना गहरे उतरिए उतने ही उसमें से नये और सुन्दर अर्थ लीजिए। गीता जनसमाज के लिए है; उसमें एक ही बात को अनेक प्रकार से कहा है। अतः गीता में आये हुए महाशब्दों का अर्थ युग-युग में बदलता और विस्तृत होता रहेगा। गीता का मूल-मन्त्र कभी नही बदल सकता। वह मन्त्र जिस रीति से सिद्ध किया जा सके उस रीति से जिज्ञासु चाहे जो अर्थ कर सकता है।

गीता विधिनिषेध बतलानेवाली भी नहीं है। एक के लिए जो विहित होता है, वही दूसरे के लिए निषिद्ध हो सकता है। एक काल या एक देश में जो विहित होता है, वह दूसरे काल में, दूसरे देश में निषिद्ध हो सकता है। निषिद्ध केवल फलासक्ति है, विहित है अनासक्ति।

गीता में ज्ञान की महिमा सुरक्षित है, तथापि गीता बुद्धिगम्य नहीं है, वह हृदयगम्य है। अतः वह अश्रद्धालु के लिए नही है। गीताकार ने ही कहा है—

"जो तपस्वी नही है, जो भक्त नही है, जो सुनना नही चाहता और जो मेरा द्वेष करता है, उससे यह (ज्ञान) तू कभी न कहना।" (१८-६७)

"परन्तु यह परमगुह्य ज्ञान जो मेरे भक्तों को देगा, वह मेरी परमभक्ति करने के कारण निःसन्देह मुझे ही पावेगा।" (१८-६८)

"और जो मनुष्य द्वेषरहित होकर श्रद्धापूर्वक केवल सुनेगा वह भी मुक्त होकर पुण्यवान जहां बसते हैं उस शुभ लोक को पावेगा।" (१८-७१)

—गुजराती। कौसानी, हिमालय। सोमवार, आषाढ़ कृष्ण २, १९८६।२४।६।-१९२९।]

२०. पत्र : आश्रम की बहिनों को

कानपुर, २३-९-१९२९

बहिनो,

तुम्हारी तरफ़ से गंगा बहन का लिखा हुआ पत्र मिल गया। मेरी अनु-

पस्थिति मे वाल जी भाई वर्ग लेते हैं, यह बहुत अच्छा है। सभी उनकी विद्वत्ता का पूरा लाभ लेना। उनके पास जो है, वह मैं नही दे सकता। इसलिए आजकल जव वह अधिक समय दे सकते हैं, तो उनके ज्ञान को लूटना।

लक्ष्मी वहन अव आ गई होगी। रमा वहन और डाही वहन प्रार्थना मे मौजूद न रह सकें, यह समझा जा सकता है। कर्त्तव्य-परायणता ही प्रार्थना है। प्रत्यक्ष सेवा के लिए योग्यता प्राप्त करने को हम प्रार्थना मे वैठते है। मगर जहा प्रत्यक्ष कर्त्तव्य आ पडे, वहा प्रार्थना उसमे समा जाती है। समाधि मे वैठी हुई स्त्री किसी को बिच्छू काटने पर चिल्लाते हुए सुने, तो वह समाधि छोडकर उसकी मदद के लिए दौडने को वँधी हुई है। दुखी की सेवा मे समाधि की पूर्ति है।

वापू के आशीर्वाद

मौनवार

—गुजराती। कानपुर, २३।९।१९२९। 'आश्रम की वहिनो को' से। पत्र संख्या ७५।]

- कर्त्तव्यपरायणता हो प्रार्थना है।
- दुखी की सेवा मे समाधि की पूर्ति है।

२१. पत्र : आश्रम की बहिनों को

लखनऊ
३०-९-१९२९

वहिनो,

लखनऊ तो वहिनो के पर्दे का केन्द्र माना जाता है। यहा मुसलमान वहिनें वहुत रहती हैं। उन्होंने मुझसे पूछा कि उनका दुःख कैसे मिटे। मैं तो एक ही जवाव दे सकता हू न? अपने वन्धन हम खुद ही तैयार करते हैं। कल ही इन वहिनो की सभा थी। उन्हे पर्दा रखने के लिए किसी ने मजवूर नहीं किया था, मगर उन्होंने खुद ही मान लिया कि पर्दे के विना चल ही नही सकता। ऐसी अड़चनें दूर करने के लिए आश्रम है और उसकी डोर तुम्हारे हाथ मे है। तुम वन्धन तोडकर मर्यादा-धर्म का पालन करके, ज्ञान लेकर, सेवा-परायण वन जाओ, तो दूसरी वहिनो के लिए सहज मे ही उदाहरण वन जाओगी।

वापू के आशीर्वाद

मौनवार

—गुजराती। लखनऊ, ३०।९।१९२९। 'आश्रम की वहिनो को' से। पत्र संख्या ७६।]

२२. पत्र : आश्रम की बहिनों को

गोरखपुर
७-१०-१९२९

बहिनो,

समय-समय पर तुम याद आती रहती हो। सफर में जैसे-जैसे बहिनों को देखता हूं, वैसे-वैसे तुम्हारे सामने पड़े हुए काम का विचार आया करता है और वैसे-वैसे समझता हूं कि अच्छी तालीम तो हृदय की है। अगर उनमें शुद्ध प्रेम प्रगट हो तो बाकी सब कुछ अपने-आप आ जाता है। सेवा का क्षेत्र अमर्यादित है। सेवा की शक्ति भी अमर्यादित बनाई जा सकती है, क्योंकि आत्मा की शक्ति की कोई मर्यादा है ही नही। जिसके हृदय के कपाट खुल गये है, उसके हृदय में तो सब कुछ समा सकता है। ऐसे आदमी का जरा-सा काम भी खिल उठता है। जिसके हृदय पर मुहर लगी हुई है, उसका ज्यादा काम भी नही के बराबर होगा। विदुर की भाजी और दुर्योधन के मेवे में यही अर्थ छिपा हुआ है।

बापू के आशीर्वाद

—गुजराती। गोरखपुर, ७।१०।१९२९। 'आश्रम की बहिनों को', पत्र-संख्या ७७।]

- सेवा का क्षेत्र अमर्यादित है, सेवा की शक्ति भी अमर्यादित बनाई जा सकती है।
- जिसके हृदय के कपाट खुल गये हैं, उसके हृदय में तो सब कुछ समा सकता है।

२३. पत्र : आश्रम की बहिनों को

हरद्वार
१४-१०-१९२९

बहिनो,

आज हम गंगा के उद्गम के निकट पहुंच गये हैं। यहां से बिल्कुल निकट ही गंगा का सपाट भूमि पर बहना प्रारम्भ होता है। अब आगे बढ़ने पर धीरे-धीरे पहाड़ आयेगा।

आज मौनवार होने के कारण कुसुम, प्रभावती और कान्ति देवदास के साथ

प्रसिद्ध स्थान देखने निकल गये हैं। यहा कुदरत की तो कृपा है, किन्तु इन्सान ने सब जगह विगाड दी है।

आज बस इतना ही।

वापू के आशीर्वाद

मौनवार

—गुजराती। हरद्वार, १४।१०।१९२९। 'आश्रम की वहिनो को'' पत्र-संख्या ७८।]

२४. स्वयंसेवक का कर्त्तव्य

सयुक्तप्रान्त के दौरे मे स्वयसेवको मे परिचय हो रहा है, इसमे मैं देखता हू कि उनको तालीम की वडी आवश्यकता है। स्वयसेवको की भावना शुद्ध है। उनके प्रेम मे कोई न्यूनता नहीं, परन्तु भावना और प्रेम मे से जो शक्ति पैदा होनी चाहिए वह शिक्षा के अभाव से हो नही रही है। स्वयसेवको मे प्रवन्ध-शक्ति वहुत कम है। इस कारण अक्सर उनसे सहायता मिलने के वदले नई मुसीवतें खडी हो जाती हैं। अतएव उनके लिए तालीम की वडी आवश्यकता है। दिल से भले वे स्वयसेवक वन जाते हो, मगर इस तरह कोई काम पूरा नही होता। जो आसान-से-आसान काम माने जाते हैं उनके लिए भी कुछ न कुछ तालीम की आवश्यकता मानी ही गई है। भगी का काम भी वगैर तालीम के नही हो सकता। फिर भला स्वयसेवक का काम वगैर तालीम के कैसे सफल हो सकता है।

स्वयसेवक राष्ट्र का सिपाही है। उसके द्वारा हम अन्त मे स्वराज्य पाने की आशा रखते हैं। राष्ट्रीय दल के ऐसे लोगो मे वडी योग्यता होनी चाहिए।

स्वयसेवक मे :—

१ वडी-वडी सभाओ मे शान्ति रखने की शक्ति होनी चाहिए।

२ राष्ट्रभाषा का ज्ञान होना चाहिए।

३ इशारे से अपने विचार दूसरे स्वयसेवको को समझाने की शक्ति होनी चाहिए।

४. कोलाहल को वन्द करने की शक्ति होनी चाहिए।

५ लोगो के समुदाय मे रास्ता वनाने की शक्ति होनी चाहिए।

६ एक साथ, तालवद्ध कूच करने की शक्ति होनी चाहिए।

७ किसी को चोट लगने पर उसके तात्कालिक उपचार का ज्ञान होना चाहिए।

२६. पत्र : आश्रम की वहिनों को

मेरठ
२८-१०-१९२९

वहिनो,

आज हम मेरठ मे कृपालानी जी के आश्रम मे हैं। इसलिए वहा का वातावरण यहां भी दिखाई देता है।

आज सम्मिलित भोजनालय के वारे मे लिखता हू। अब दीवाली आ पहुँची है। मेरे पास कुछ पत्र आ चुके हैं। यह पत्र मैं तुम्हे निर्भय बनाने के लिए लिख रहा हू। तुमने एक वर्ष का अनुभव लिया। सारा वोझ उठाया। मैंने तो सिर्फ भोजनालय का रस ही चखा है। इसलिए मैं अपनी राय का कोई मूल्य ही नही समझता। सच्ची कीमत तुम्हारी ही राय की है। इसलिए तुम सब वहिनें जिस निर्णय पर पहुँचोगी, उसे तो मैं मानूगा ही। मेरी सिफारिश इतनी जरूर है : वहुत चर्चा न करना। वहुत समय भी न लेना। जरूरी वातें करके झट निर्णय कर डालना और जो निर्णय करो उस पर कायम रहना। ऐसा करके ही हम आगे वढेंगे। दोनो रायो के पक्ष मे दलीलें तो हो ही सकती हैं। किसी भी राय पर पहुँचने मे कुछ-न-कुछ भूलें भी होती हैं। इसकी चिन्ता नही करनी चाहिए।

निश्चय करने की और उस पर डटे रहने की आदत डालने की वडी जरूरत है। कोई निश्चय करने के वाद यदि यह लगे कि उसमे पाप ही है, तो अलग सवाल है। पाप करने के निश्चय दुनिया मे हो ही नही सकते।

वापू के आशीर्वाद

—गुजराती। मेरठ, २८।१०।१९२९। 'आश्रम की वहिनो को' पत्र-संख्या ८०।]

२७. पत्र : आश्रम की वहिनों को

अलीगढ़
४-११-२९

वहिनो,

आजकल मुझसे लम्बे पत्रों की आशा न रखना। नया वर्ष सब के लिए सुखकर हो।

कलावती के जेवर चले गये, यह हमारे लिए शर्म की बात है। परन्तु मुझे

कलावती पर दया नहीं आती। जो भाई या वहिन अपने गहने या कीमती चीजें अपने पास रखते हैं, वे आश्रम का द्रोह करते हैं, और उनके गहने इत्यादि चोरी चले जायं, तो उन्हें रंज नहीं करना चाहिए। इस उदाहरण से हम सव चेतें और अपने पेटी-पिटारे जांच लें। आश्रम को अमानत के रूप में दी हुई चीज जव चाहिए तव वापिस मिल सकती है, यह विश्वास सवको रखना चाहिए।

रसोईघर का नियम वन गया, यह अच्छा हुआ। अव उसकी चर्चा हर्गिज़ न होनी चाहिए। जिन पुराने परिवारों को अलग भोजन वनाने की इजाजत मिल जाय, वे जरूर अलग वनायें, और उनसे कोई द्वेष न करे।

वापू के आशीर्वाद

मौनवार

— गुजराती। अलीगढ़, ४।११।१९२९।'आश्रम की वहिनों को', पत्र संख्या ८१।]

२८. पत्र : आश्रम की बहिनों को

शाहजहांपुर
११-११-२९

वहिनो,

इसके वाद तो मुझे एक ही सोमवार लिखने को रह जायगा।

हमारे यहां चोरियां होती रहती हैं, उनका कारण हमारी गफलत है। यह रोज़ सावित होता जा रहा है। गफलत दो तरह की है, हम सावधान नहीं रहते और कई वार समझाने पर भी कोई गहने रखती हैं, तो कोई रुपया रखती हैं। चोर तो दुनिया में रहेंगे ही। उनसे वचने के तीन उपाय हैं, पास में कुछ रक्खा ही न जाय, यह पूर्णता तो आ नहीं सकती। जितना रक्खें उसके लिए उतने सावधान रहें। और तीसरा उपाय, चोर को सरकार के दण्ड रूपी भय से चमकाना और खुद भी उसे दण्ड देने में शरीक होना। हमने इस तीसरे उपाय का त्याग कर दिया है। पहला उपाय हमारा आदर्श है, दूसरा उपाय हम आजकल कर रहे हैं। संग्रह जहां तक हो सके, कम किया जाय और जितना अनिवार्य है, उसकी चोरी वगैरह से रक्षा की जाय। इसमें जैसे मैंने वताई वैसी गफलत रही है।

यह पत्र सवके लिए हो गया। इसलिए शाम की प्रार्थना के समय भी पढ़ने के लिए देना।

भोजनालय के भार से घवरा न जाना। जो मदद चाहिए वह माँग लेना, परन्तु हारना मत। कोई काम हाथ में न लेना ठीक है, परन्तु ले लें तो उसके

लिए मर-मिटना चाहिए। जो इतनी दृढता से काम करता है, उसका भगवान सहायक होता ही है। गजेन्द्र-मोक्ष और कछुवा-कछवी के भजन मे यही सीख है।

मौनवार

बापू के आशीर्वाद

—गुजराती। शाहजहांपुर, ११।११।१९२९। 'आश्रम की बहिनो को', पत्र-संख्या ८३।]

- कोई काम हाथ मे न लेना ठीक है, परन्तु ले लें तो उसके लिए मर-मिटना चाहिए।

२९. पत्र : आश्रम की बहिनों को

प्रयाग जी,

१८-११-२९

बहिनो,

सतोक के आपरेशन पर से एक विचार आया सो लिख देता हू। हिन्दुस्तान मे बहिनो को अपने शरीर (पुरुष) डाक्टर को दिखलाने मे सकोच होता है। यह अच्छा नही, परन्तु खराब रिवाज है। इससे हमने बहुत नुकसान उठाया है। इस शर्म की जड मे पवित्रता नही परन्तु विकार है। मैं चाहता हू कि हम इन अन्ध-विश्वास को दूर कर दें। सतोक का आपरेशन अगर हरिभाई को न करने दिया होता, तो वह न होता और शरीर खतरे मे पड जाता। पुरुष डाक्टर को भी अपना शरीर दिखाने मे किसी स्त्री को सकोच नही रखना चाहिए। पास मे अपने सगे-सम्बन्धी तो होते ही हैं। इसलिए भय का कोई भी कारण नहीं हो सकता। तुम्हे पता नही होगा कि मैंने तो बा की आखिरी प्रसूति के समय पुरुष डाक्टर को ही रक्खा था। बा का एक आपरेशन कराया था, वह भी पुरुष डाक्टर के हाथ से। उसमे बा ने कुछ खोया नही था। ऐसी बातो मे हमे अपने मन मे सिर्फ एक अलग ढग की वृत्ति भर पैदा करनी होती है। इसलिए तुम्हारे मानने यह बात रखनी है। अब इस बारे मे मुझसे पूछना हो तो मगलवार २६ तारीख को पूछना।

मौनवार

बापू के आशीर्वाद

—गुजराती। प्रयाग, १८।११।१९२९। 'आश्रम की बहिनो को' पत्र-संख्या ८३।]

- हिन्दुस्तान मे बहिनो को अपने शरीर (पुरुष) डाक्टर को दिखलाने मे संकोच होता है। यह अच्छा नहीं परन्तु खराब रिवाज है।...इस शर्म की जड मे पवित्रता नही परन्तु विकार है।

३०. पत्र : रामेश्वरी नेहरू को

[टिप्पणी—पत्र लिखा किसी और के हाथ का है। हस्ताक्षर मात्र गांधीजी के हैं। —सम्पा०]

मसूरी, २८-५-४६

चि० रामेश्वरी,

तुम्हारे तीन खत मिले। सब बहुत अच्छे है। एजेन्सी का काम भलीभांति कर रही है। मकान के बारे में लिखा है सो मुझे अच्छा लगता है। मकान का खर्च कितना होगा? क्या, जितना खर्चा हो उतना कर्जा क० गां० निधि दें और नाम मात्रको उसका सूद लें तो अच्छा होगा? मैं तो मकान के पैसे देने में कुछ हर्ज नही पाता हू,लेकिन बड़ा संघ अपवाद नही कर सकता है इसलिए मुझे लगता है कि कर्जा के तौर पर देने से शायद काम निपट सकता है। वहां के लोगों के साथ बात करो और वे लोग क्या कहते है जानकर लिखो। कर्जा दस वर्ष में या पन्द्रह वर्ष में देने मे मुसीबत नही होनी चाहिए। जबतक सूद दिया जाय तबतक मुद्दत कायम रहे। सूद नही देने से कर्जा चुकाना होगा अथवा मकान का कब्जा ट्रस्ट को जायगा। इसका जवाब आने पर और निश्चय कर सकूंगा। दरम्यान तुम्हारा खत और मेरे जवाब की नकल बापा[1] को भेजता हूं।

अब दूसरा पत्र। असेम्बली के बारे में तुमने ठीक लिखा है कि समय बीतने पर मेरी बात समझी जायगी। मेरा अभिप्राय आजकल का नही है—शुरू से ही है। सच्चे सेवक असेम्बली में नही जाते। केर हार्डी ऐसा आदमी था। हाउस आफ कामन्स में प्रतिष्ठा रखता था। उसने कहा कि सच्चा आदमी सभासद रह नही सकता है। और बात ठीक है। मोरली को गिरना पड़ा था। दक्षिण आफ़िका में भी वही हाल है। इतनी समझने लायक बात है कि मेम्बर होने के बारे मे बहुत पड़ापड़ी हुई है और उमेदवारों ने बहुत पैसे दिये है। लेकिन इस चीज को मैं छोड़ देना चाहता हूं। अन्त में तुमने जो लिखा है वह तो सही है। मत देने में हिस्सा लेना, मतदारों के समाज मे बैठना, उनको सच्चा रास्ता बताना, इसमे जितना समय दिया जाय वह अच्छा ही है। मेरे लिए इतना काफी है कि थोड़े वर्षो के लिए तो एझेण्टों का बाहर रहकर सब समय उसमें देना। अभी तो तुमने देहातो का स्पर्श तक नहीं किया है।

अभी तीसरा पत्र। भंगियों का प्रश्न पेचीदा है। अपना काम करके और

---

१. ठक्कर बापा, ए० वी० ठक्कर।

करते-करते भूख-हड़ताल करें वह कहने मे तो अच्छा है लेकिन भूखे पेट काम हो नही सकता। मैंने तो बताया है वह तो यह है कि समाज को या कहो शहरियो को म्युनिसिपालिटियो के सामने हड़ताल करनी चाहिए, भूख हड़ताल भी करें। जो कुछ करना चाहे कर सकते हैं—शर्त इतनी कि अहिंसा से करें। उसका प्रभाव म्युनिसिपाल्टिी और भगी दोनो पर पडेगा और समाज अपनी फर्ज अदा करेगा। यह भी रास्ता है कि मकान के लिए या तनख्वाह के लिए भगी हड़ताल न करें, लेकिन धन्धा छोडने की नोटिस दें। यह भी समझो कि भगी तनख्वाह के लिए या मकान के लिए हड़ताल करे उसका नतीजा यह भी आ सकता है कि अन्त मे शहरी लोग खुद भगी का काम करें। मैं इतना कबूल करता हू कि अगर कोई कुछ न करें और भगियो को इन्साफ न मिले तो उनको हड़ताल करने का हक होना चाहिए। मैंने तो शहरी होने की हैसियत से भगियो का धर्म बताया।

यह लिखाने के समय चौथा पत्र मिलता है। रात को ८॥ बजे हैं। तार तो कल ही यहा से चलेगा। मेरा अभिप्राय है कि तुम्हारे फूड बोर्ड मे नही रहने से कुछ हानि नही होने वाली है।

बापू के आशीर्वाद

—हिन्दी। मसूरी, २८।५।१९४६। पत्र की फोटो-नकल (जी० एन० ८००९) से।]

३१. श्रम करने पर भी पेट न भरे तो?

प्रश्न—परिश्रम करने पर भी पेट भर अनाज न मिले तो क्या किया जाय?

उत्तर—जो परिश्रम करता है उसे पेट भर अनाज मिलना ही चाहिए। यह सनातन नियम है। लोगो को लाभ पहुचानेवाले सम्पूर्ण श्रम का एक ही दाम होना चाहिए। जबतक वह नही हो पाता, परिश्रम करनेवाले को कम-से-कम अपना और अपने कुटुम्ब का पेट भरने के लिए अनाज और तन ढकने के लिए कपडा तो मिलना ही चाहिए। जहा इतना भी नही हो सकता, वहा राज का इन्तजाम होते हुए भी अराजकता चलती है। अराजकता मिटाने के लिए लोग क्या करें? उन्हे शान्ति से अराजकता का सामना करना चाहिए। लोग अनाज लेकर दुकाने लूटने लगें या मारपीट करने लगें, उससे काम नही बन सकता। ऐसा करने से लोग बेमौत मरते है, और अगर डर के मारे सरकार झुक भी जाय, और लोगो की माग पूरी भी कर दे, तो भी उससे न लोगो को फायदा पहुचता है, न सरकार को। अराजकता तो मिटती ही नही। और आखिर जहा थे, वही आ जाते हैं। दुनिया पर एक सरसरी नजर डालने से भी यह चीज सब जगह साफ साफ दिखाई देगी।

अनाज पड़ा हो और फिर भी वह भूखों को न मिले तो वे सत्याग्रह कर सकते हैं। हां, स्वयं वे उस पर कब्जा न करें। डाका न डालें। भीख मांगने या डाका डालने के बदले मरने तक उपवास करें, और इस तरह अपने लिए और दूसरों के लिए न्याय प्राप्त करें। इतना धीरज न हो तो बात अलग है, किन्तु हो तो यहां बताया रास्ता जरूर सफल होगा।

—मसूरी, २९।५।१९४६। ह० ब०। ह० से०, ९।६।१९४६।]

३२. धर्म और अधर्म का विवेक

एक भाई लिखते हैं—

"५ मई के 'हरिजनबन्धु' में आपने लिखा है कि आपकी अहिंसा में भयानक प्राणियों को, मसलन, शेर, भेड़िया, सांप, बिच्छू वगैरह को मार डालने की गुंजाइश है।

"आप कुत्तों वगैरा को खाना नहीं देते। गुजराती समाज के अलावा और भी बहुत से लोग हैं, जो जानवरों को खिलाना पुण्य समझते हैं। आजकल जब कि खुराक की इतनी तंगी है, ऐसा ख्याल नामुमकिन हो सकता है। मगर इतनी बात तो है कि ये जानवर (कुत्ते वगैरा) आदमी की काफी सेवा करते हैं। इन्हें खिलाकर इनसे काम लिया जा सकता है।

आपने डरबन से स्व० श्री रायचन्द्रभाई से २७ सवाल पूछे थे। उनमें एक सवाल यह भी था कि जब सांप काटने आये, तो क्या किया जाय? उन्होंने जवाब दिया था कि आत्मार्थी सांप को नहीं मारेगा। सांप काटे, तो उसे काटने देगा। मगर अबकी तो आप दूसरी ही बात कह रहे है। ऐसा क्यों?"

इस बारे में काफी मैं लिख चुका हूं। उन दिनों सवाल पागल कुत्तों को मारने का था। काफी चर्चा हुई थी। मगर मालूम होता है कि वह सब लोग भूल गये हैं।

मैं जिस अहिंसा का पुजारी हूं, वह निरी जीव-दया ही नही है। जैनधर्म मे जीव-दया पर खूब वजन दिया गया है। वह समझ में आता है, मगर उसका यह मतलब हरगिज नही कि इनसान को छोड़ कर हैवानों पर दया की जाय। मैं मानता हूं कि जहां जानवरों पर दया करने की बात लिखी है, वहां मनुष्य पर दया करने की बात तो मान ही ली गई है। ऐसा करने में सीमा छूट गई है, और अमल मे तो जीव-दया ने टेढ़ा रूप ही लिया है। जीव-दया के नाम पर अनर्थ हो रहा है। बहुत से लोग चीटियों को आटा डालकर सन्तोष मानते है। ऐसा मालूम होता है, मानो आजकल की जीव-दया में जान ही नही रही। धर्म के नाम पर अधर्म चल रहा है; पाखण्ड फैल रहा है।

अहिंसा सबसे ऊंचा धर्म है। यह बहादुरो का धर्म है, कायरो का कभी नही। दूसरे मारें, हिंसा करें, और हम उससे फायदा उठायें, और मानें कि हमने धर्म का पालन किया है, तो यह अपने-आपको धोखा देना नही हुआ तो और क्या हुआ ?

जिस गाव मे रोज बाघ आता है, वहा नाम का अहिंसावादी नही रहेगा। वह तो वहा से भाग जायगा और जब कोई दूसरा आदमी उस बाघ को मार डालेगा, तब वापस आकर अपने घर-बार पर कब्जा करेगा। यह अहिंसा नही है। यह तो डरपोक की हिंसा है। बाघ को मारनेवाले ने कुछ बहादुरी तो दिखाई। मगर जो दूसरे की हिंसा से लाभ उठाता है, वह कायर है। वह कभी अहिंसा को पहचान नही सकता।

देहधारी को कुछ न-कुछ हिंसा तो करनी ही पडती है। असल धर्म एक होते हुए भी उसके बारे मे हरएक की समझ अलग-अलग होती है। इसलिए सब अपनी शक्ति और समझ के मुताबिक उस पर चलते हैं। एक का धर्म दूसरे के लिए अधर्म हो सकता है। मास खाना मेरे लिए अधर्म है, मगर जो मास पर ही पला है, जिसने मास खाने मे कभी बुराई नही मानी, वह मुझे देखकर मास छोड दे, तो उसके लिए वह अधर्म होगा।

मुझे खेती करनी हो, जगल मे रहना हो, तो खेती के लिए लाजिमी (अनिवार्य) हिंसा मुझको करनी ही पडेगी। बन्दरो, परिन्दो और ऐसे जन्तुओ को, जो फसल खा जाते हैं, खुद मारना होगा, या कोई ऐसा आदमी रखना होगा जो उन्हे मारे। दोनो एक ही चीज हैं। जब अकाल सामने हो, तब अहिंसा के नाम पर फसल को उजडने देना मैं तो पाप ही समझता हू। पाप और पुण्य स्वतन्त्र चीजें नही हैं। एक ही चीज एक समय पाप और दूसरे समय पुण्य हो सकती है।

आदमी को शास्त्ररूपी कुए मे डूब नही जाना है, बल्कि गोताखोर बनकर शास्त्ररूपी समुद्र मे से मोती निकालने हैं।

इसलिए कदम-कदम पर आदमी को हिंसा और अहिंसा का विवेक (तमीज) करना होता है। इसमे न शर्म की गुजाइश है, न डर की।

हरिनो मारग छे शूरानो, नहि कायरनु काम जोने

(हरि का रास्ता बहादुरो का है, डरपोको का उसमे कोई काम नही)

आखिर श्री रायचन्द भाई ने तो यह लिखा था कि अगर मुझमे शक्ति हो और मैं आत्मा को पहचानना चाहता होऊ, तो सांप के काटने आने पर मुझे चाहिए कि मैं उसे काटने दू। मैंने तो उनका मत मिलने से पहले या बाद मे आज तक कभी सांप को मारा ही नहीं। इसे मैं अपनी बहादुरी नहीं समझता। मेरा आदर्श तो यह है कि मैं सांप और बिच्छू से बेधडक खेला करू। मगर आज तो यह मेरा एक

मनोरथ ही है। मैं नही जानता कि यह मनोरथ कभी फलेगा या नहीं, और अगर फलेगा तो कब? मैने अपने आदमियों को सब जगह सांप और विच्छू मारने दिये है। मै चाहता तो उन्हें रोक सकता था। मगर रोकता कैसे? इन जानवरों को अपने हाथ मे पकड़ कर दूसरों को निडर बनाने की हिम्मत मुझमें नही थी। न होने की मुझे शर्म थी। मगर वह मेरे या उनके किस काम की? राम-नाम की कृपा होगी, तो मुझे आशा करनी चाहिए, कि किसी रोज ऐसा करने की भी हिम्मत आ जायगी। मगर तबतक मैं तो ऊपर बताया हुआ धर्म ही जानता हूं। धर्म भी तजरबे से सीखा जाता है, कोरी पण्डिताई से नही।

—गुजराती। मसूरी, २९।५।१९४६। ह० ब०। ह० से०, ९।६।१९४६।]

३३. विश्वास-चिकित्सा और रामनाम

एक मित्र शिकवा करते हुए लिखते हैं :—

"मैने १७।३।१९४७ के 'हरिजन' में आपका लेख 'जब जागो तभी सबेरा' पढ़ा है। क्या आपकी प्राकृतिक चिकित्सा और विश्वास-चिकित्सा कुछ मिलती-जुलती चीजें हैं? निश्चय ही, रोगी को चिकित्सा में श्रद्धा तो होनी ही चाहिए। किन्तु कई ऐसे इलाज हैं जो केवल विश्वास से ही रोगी को अच्छा कर देते हैं, जैसे माता (चेचक), पेट का दर्द इत्यादि बीमारियों में। शायद आप जानते हों, माता का, विशेषतः दक्षिणी प्रान्तों में, कोई इलाज नहीं किया जाता।[1] इसे केवल ईश्वर की माया मान लिया जाता है। हम मरिअम्मा देवी की पूजा करते है। बहुत से रोगी अच्छे हो जाते है। यह चीज एक करामात-सी लगती है। जहां तक पेट-दर्द की बात है, बहुत-से लोग तिरुपति में देवी की मिन्नतें मानते हैं। अच्छे होने पर उसकी मूर्ति के हाथ-पांव धोते हैं, और दूसरी मानी हुई मिन्नतों को पूरा करते हैं। मेरी ही मां की मिसाल लीजिए। उनको पेट दर्द रहता था। परन्तु तिरुपति हो जाने के बाद उनकी वह तकलीफ दूर हो गई।

"कृपया इस बात पर प्रकाश डालिए और यह भी बताइए कि प्राकृतिक चिकित्सा पर भी लोग ऐसा ही विश्वास कायम रक्खें? इससे डाक्टरों का बार-बार का खर्च बच जायगा, क्योंकि जैसा कि चासर[2] कहता है—डाक्टर का तो

---

१. ऐसा दक्षिण में ही नहीं, उत्तर में भी है।—सम्पा०

२. अंग्रेजी का एक कवि।

काम ही है कि वह दवाई बेचनेवाले से मिलकर बीमार को हमेशा बीमार बनाये रक्खे।"

जो उदाहरण ऊपर दिये गये हैं वे न तो प्राकृतिक चिकित्सा के है, और न ही रामनाम के, जिसको मैंने उसके अन्तर्गत रक्खा है। किन्तु उनसे यह पता अवश्य लगता है कि प्रकृति बहुतेरे रोगियो को बिना किसी चिकित्सा के भी अच्छा कर देती है। उदाहरण यह भी प्रदर्शित करते है कि हिन्दुस्तान मे वहम हमारी जिन्दगी का कितना बडा हिस्सा बन गया है। प्राकृतिक चिकित्सा का मध्यबिन्दु अर्थात् रामनाम तो वहम का दुश्मन है। जो बुराई करने से झिझकते नही, वे रामनाम का अनुचित लाभ उठायेंगे। परन्तु वे तो हर चीज या हर एक सिद्धान्त-उसूल के साथ ऐसा ही करेंगे। केवल जिह्वा से रामनाम रटने से चिकित्सा का कुछ लेना-देना नही। यदि मैं ठीक समझ पाया हू तो, जैसा कि लेखक ने बताया है, विश्वास-चिकित्सा मे यह माना जाता है कि रोगी अन्ध-विश्वास मे अच्छा हो जाता है। यह मानना तो जीवित ईश्वर के नाम की हँसी उडाना है। रामनाम केवल कल्पना की चीज नही, उसे तो हृदय से निकलना है। परमात्मा मे ज्ञान के साथ विश्वास हो और उसके साथ-साथ प्रकृति के नियमो का पालन किया जाय, तभी किसी दूसरी मदद के बिना रोगी बिल्कुल अच्छा हो सकता है। सिद्धान्त यह है कि शरीर का स्वास्थ्य तभी बिल्कुल अच्छा हो सकता है, जब मन का स्वास्थ्य पूर्णत. ठीक हो। और मन पूर्णत ठीक तभी होता है जब हृदय पूर्णत ठीक हो। यह वह हृदय नही, जिसे डाक्टर टोटियो से देखते हैं बल्कि वह हृदय है जो ईश्वर का निवास है। कहा जाता है कि यदि कोई अपने अन्दर परमात्मा को पहिचान ले तो एक भी गन्दा या व्यर्थ विचार मन मे नही आ सकता। जहा विचार शुद्ध हो वहा बीमारी आ ही नही सकती। ऐसी स्थिति को प्राप्त करना कदाचित् कठिन हो परन्तु इस बात को समझ लेना स्वास्थ्य की पहली सीढी है। दूसरी सीढी है, समझने के साथ-साथ यत्न भी करना। जब किसी के जीवन मे यह मौलिक परिवर्तन आता है तो उसके लिए स्वाभाविक हो जाता है कि वह उसके साथ-साथ प्रकृति के उन सब कानूनो का पालन भी करे जो आजतक मनुष्य ने ढूढ निकाले हैं। जबतक उनमे लापरवाही की जाय, तबतक कोई यह नही कह सकता कि उसका हृदय पवित्र है। यह कहना गलत न होगा कि यदि किसी का हृदय पवित्र है, तो उसका स्वास्थ्य राम-नाम न लेते हुए भी उतना ही अच्छा रह सकता है। बात केवल यह है कि सिवा रामनाम के पवित्रता पाने का और कोई उपाय मुझे ज्ञात नही। संसार मे हर जगह पुराने ऋषि तो इसी मार्ग पर चले हैं। और वे तो ईश्वर के भक्त थे, कोई वहमी या ढोंगी आदमी नही।

यदि इसी का नाम क्रिश्चिन साइंस है तो मुझे कुछ कहना नही। मैं यह थोड़े ही कहता हूं कि रामनाम मेरी ही शोध है। जहां तक मै जानता हूं, रामनाम तो ईसाई-धर्म से भी पुराना है।

एक भाई पूछते है कि क्या रामनाम में शस्त्रक्रिया-चिकित्सा की अनुमति नही? क्यों नही? एक टांग यदि दुर्घटना में कट गई है, तो रामनाम उसे थोड़े ही वापस ला सकता है। किन्तु बहुतेरी अवस्थाओं में आपरेशन जरूरी नही होता। किन्तु जहां जरूरी हो वहां करवा लेना चाहिए। केवल इतनी बात है कि यदि किसी ईश्वर के भक्त का हाथ-पांव जाता रहा तो वह इसकी चिन्ता नहीं करेगा। रामनाम कोई अटकल-पच्चू तजवीज नही है, न कोई कामचलाऊ चीज।"
—अंग्रेजी। मसूरी, ३०।५।१९४६। ह० ज०, ह० से० ९।६।१९४६।]

३४. क्या किसी भी हालत में झूठ बोलना उचित है?

[प्रश्नोत्तर]

प्रसिद्ध अंग्रज लेखक श्री बरट्रेण्ड रसल के निम्नलिखित बयान के बारे में आपकी क्या राय है? "एक बार देहात की ओर घूमते हुए मैंने देखा कि एक थकी हुई लोमड़ी लस्त-पस्त होने की हालत में भी जबर्दस्ती दौड़ी चली जा रही थी। इससे कुछ ही मिनट बाद मुझे शिकारियों की एक टोली दिखाई पड़ गई। उन्होंने मुझसे पूछा: क्या आपने लोमड़ी देखी है? और मैंने कहा—हां, देखी है। उन्होंने फिर कहा—किधर गई है? और मैं उनसे झूठ बोल गया। मैं नहीं समझता कि उनसे सच बात कहकर मैं ज्यादा भला आदमी बन गया होता।"

उत्तर—श्री बरट्रेण्ड रसल एक बड़े लेखक और फिलासफर हैं। उनकी पूरी-पूरी इज्जत करते हुए भी मुझे ऊपर दी गई उनकी राय से असहमति प्रकट करनी चाहिए। शुरू में ही उन्होने यह कहकर गलती कि कि उन्होंने लोमड़ी देखी है। पहिले सवाल का उत्तर देना उनके लिए लाजिमी नही था। अगर वह शिकारियों को जान-बूझकर गलत रास्ते चढ़ाना नहीं चाहते थे, तो वह दूसरे सवाल का जवाब देने से भी इन्कार कर सकते थे। मैं सदा से यह मानता और कहता आया हूं कि हमें पूछे जानेवाले सब सवालों का जवाब देना सदा ही लाजिमी नहीं होता। सच बात कहने में अपवाद की कोई गुंजाइश नही।

—मसूरी, ३१।५।१९४६। ह० ज०। ह० से०, ९।६।१९४६।]

३५. मानपत्र और फूलों के हार

एक भाई शिकायत करते हैं—

बहुत से सूबो मे काग्रेसी मन्त्रिमण्डल बन गये हैं, और जन-साधारण को इस तथ्य पर गर्व है। इसलिए जब कोई मन्त्री किसी जगह जाते हैं, तो वहा की स्थानीय समितिया तथा दूसरी सस्थाए उन्हें मूल्यवान मानपत्र देकर उनके प्रति अपना सम्मान प्रकट करती हैं। लगभग सभी मामलो मे इस प्रकार दी जानेवाली चीजें मन्त्री की अपनी सम्पत्ति बन जाती हैं। मेरी राय मे यह तरीका ठीक नहीं। या तो इस तरह मानपत्र लेने का यह सिलसिला बन्द कर दिया जाना चाहिए, या इस प्रकार दी गई चीजें स्थानीय काग्रेस कमेटी को मिलनी चाहिए। मन्त्रियो या काग्रेस के लीडरो को फूलो के हार इत्यादि पहिनाने के बारे मे भी कोई निर्णीत नीति होनी चाहिए। मैंने कई जगह देखा है कि मन्त्रियो का स्वागत करते समय उनको ऐसे हार पहिनाये गये हैं जिनका मूल्य ३०० या ४०० रुपयो से कम नही। यह पैसे की निरी बरबादी है।

यह एक वाजिब शिकायत है। सर्वसाधारण की सेवा करनेवाले किसी भी सेवक को अपने काम के लिए न तो कीमती मानपत्र लेने चाहिए और न बेशकीमती फूलो के हार इत्यादि। बहुत ही बुरी चीज नही तो भी यह एक अफसोसनाक चीज तो बन ही गई है। इसके बचाव मे अक्सर यह दलील दी जाती है कि मानपत्र की कीमती चौखटो और फूलो के बहुमूल्य हारो व गुल्दस्तो की बदौलत इनके कारीगरो को पैसा मिलता है। किन्तु ये कारीगर तो वजीरो और उनके-जैसे दूसरो की मदद के बिना भी अच्छी तरह अपना काम चला सकते हैं। मन्त्री इत्यादि अपने मौज-शौक के लिए दौरा नही करते। उनके दौरे काम के सिलसिले मे होते हैं। और उनके पीछे प्राय. यह विचार रहता है कि वे लोगो से स्वयं उनकी बातें सुन सकें। उनको दिये जानेवाले मानपत्रो में उनके गुणो की प्रशंसा करना जरूरी नही, क्योंकि गुण तो स्वय ही अपने पुरस्कार हैं। मानपत्रो मे तो स्थानीय आवश्यकताओ और शिकायतो का यदि वैसी कोई शिकायतें हो, जिक्र किया जाना चाहिए। मन्त्रियो एव उनके सेक्रेटरियो के सामने बडे-बडे काम पडे है।
—मसूरी, २१।५।१९४६। ह० ज०, ह० से० ९।६।१९४६।]

३६. आम रिहाइयां

सूबो मे उत्तरदायी मन्त्रिमण्डल काम करने लगे हैं। [illegible] इसका यह अर्थ होता है कि राजनीतिक बन्दियो की आम रिहाइयां हो। इसमें [illegible] करने,

आग लगाने और डाका इत्यादि डालने के सिलसिले मे सजा पाये हुए कैदी भी शामिल है। लोग मुझसे पूछते हैं कि इस तरह रिहाई पाये हुओं को जनता किस सीमा तक बहादुर और बलिदानी माने और उनका जय-जयकार करे।

इस प्रकार के अपराधो में सजा पाये हुओं को अलग-अलग कारणों से रिहा करना एक बात है। किन्तु इन कामों को हर प्रकार के सम्मानित वीरों के साथ मिलाना और उनकी वैसी ही प्रशंसा करना बिल्कुल दूसरी बात है। मुझे इसमें कोई सन्देह नही कि ऐसा करना अविवेक है और अनुचित है। अगर किसी जन-कार्य के लिए मुझे पैसे की जरूरत है और मैं उसे डाका डालकर प्राप्त करता हूं, तो केवल इसलिए कि डाका जन-कार्य के लिए डाला गया था, मैं डाकू होने से बच नही सकता। देशभक्ति के ऊँचे नाम पर किये गये ऐसे प्रत्येक अपराध की बिना सोचे-समझे की जानेवाली यह प्रशंसा एक ऐसा घातक अस्त्र है जो अपनी दूनी ताकत से लौटकर कौम पर आ गिरेगा और देश को उसका गहरा मूल्य चुकाना पड़ जायगा। वैसे आजादी मे गुनाह करने की छूट भी शामिल है, किन्तु उसके साथ अपना अपनाया हुआ कड़ा संयम न रहा तो वह सरलतापूर्वक शाप बन सकती है। सर्वसाधारण की ओर से किया जानेवाला यह स्वागत-सत्कार लोगों को गलत तालीम देगा और उस आजादी को हानि पहुंचानेवाली तैयारी सिद्ध होगी, जो हममें से कइयों की उम्मीद से कही पहले आ रही है।

—अंग्रेजी। मसूरी, ३१।५।१९४६। ह० ज०। ह० से०, ९।६।१९४६।]

३७. खादी के बारे में संवाद

एक खादी सेवक लिखते है :—

एक खादी-भण्डार के संचालक और ग्राहकों के बीच हुई हाल की एक बातचीत नीचे देता हूं। कृपया लिखें कि क्या इन ग्राहकों को खादी बेची जा सकती है?

सवाल—क्या यह सूत आपने खुद काता है?

जवाब—नहीं, मैं १० रुपये की ८ गुण्डी खरीदकर लाया हूं।

सवाल—दूसरे से पूछा—क्या आप यह सारा सूत कात लेते हैं?

जवाब—नहीं, इसे मेरी लड़की ने काता है। हम तो बारह आने की एक गुण्डी के हिसाब से बेचते हैं।

सवाल—तीसरे से कहा : यदि आपके पास सूत नहीं है, तो आपको खादी नहीं मिलेगी।

जवाब—कोई परवाह नहीं। जबतक मुझे सूत नहीं मिलता, मैं अप्रमाणित खादी ही पहनूंगा।

सवाल—चौथे से पूछा गया : आप खादी क्यो खरीदते हैं?

जवाब—क्योंकि वह आसानी से मिल जाती है।

सवाल—पांचवें से बात हुई : आपतो खादीधारी नहीं, फिर इस खादी का क्या होगा?

जवाब—आजकल कुछ खादी पहनना भी फैशन मे शरीक है।

सवाल—छठे से कहा : आप तो कातते ही नहीं, फिर यह सूत कहा से?

जवाब—मेरे एक दोस्त हमेशा सूत देते रहते हैं।

सवाल—सातवें से पूछा : आप हमेशा रेशमी या ऊनी खादी ही क्यो पहनते हैं?

जवाब—क्योंकि इसके लिए सूत नहीं देना पडता।

आठवें ने बहुत सी खादी खरीदी। उनसे पूछा गया : इतनी सारी खादी खरीदकर क्या करेंगे?

जवाब—इकट्ठा करके रक्खूंगा। दो-तीन साल चलेगी। फिर मिले या न मिले।

ये सब सवाल-जवाब बहुत सूचक हैं। अगर खादी की नई नीति सही है और सब ग्राहक इस प्रकार के हैं, तो वे खादी को कांग्रेस के विधान मे निकाल देने की आवश्यकता सिद्ध करते हैं। याद रहे कि इस सवाल-जवाब मे खादी के आठ ग्राहक आ जाते हैं। इनमे से एक के लिए भी चर्खा-संघ के खादी-भण्डार की आवश्यकता सिद्ध नही होती। चर्खा-संघ की हस्ती ही गरीबो के लिए है। जो खादी पहनते हैं, वे या तो गरीबो के लिए पहनते हैं या स्वराज्य के लिए। इन आठ महाशयो को न स्वराज्य की पडी है, न गरीबों की। खादी की जड मे जो कल्पना रक्खी गई है, यदि उसे साबित करके दिखाना है, तो चर्खा-संघवालो को अपनी नीति पर इस हद तक कायम रहना पडेगा कि वे खादी बेचने के भण्डारों को बन्द करने से भी न डरें। जो गलती हमने की है, उसके लिए सब सहने की तैयारी हममे होनी चाहिए। इन सवाल-जवाबो का एक सार यह भी है कि खादी-भण्डारो के सचालक जाग्रत रहे। वे खादी-शास्त्र का भलीभांति पठन करें और सब ग्राहकों को विनय और धीरज से खादी का रहस्य समझा दें। इसने जो थोड़ा

समय जायगा, उसकी परवाह न करें। अगर हमें खादी की शक्ति में विश्वास है, तो मुझे कोई शक नहीं कि हमारे दृढ़ रहने से सब लोग उसे समझ जायंगे। अगर हममें ही विश्वास नहीं है, तो हमारा दावा अपने-आप खतम हो जायगा।

मैंने यह मान लिया है कि संवाद जैसा हुआ है, वैसा ही खादी-सेवक ने दिया है।

—हिन्दी। मसूरी, १। ६। १९४६। ह० से०, ९। ६। १९४६]

३८. सही है लेकिन नया नहीं

लखनऊ के मौलवी हमीदुल्ला अफ़सर साहब मुझसे मसूरी में मिले और अपने दो परचे मुझे दे गये। दोनों का मतलब एक ही है कि मदरसों में हाई स्कूल तक सब लड़कों-लड़कियों के लिए हिन्दी और उर्दू बोलियां और लिपियां अनिवार्य हों। मुझे तो यह बात बहुत पसन्द है। मेरा निजी यत्न तो हमेशा से यही रहा है। एक जमाना था, जब मौलाना हसरत मोहानी और बाबू पुरुषोत्तमदास टण्डन इसकी कोशिश कर रहे थे, लेकिन हम कामयाब नहीं हुए। फिर भी मैंने न तो अपना विश्वास छोड़ा और न यत्न ही छोड़ा। नतीजा यह हुआ कि हिन्दुस्तानी-प्रचार सभा बनी। इसलिए मौलवी साहब जो दरख्वास्त करते हैं, वह मेरे लिए नई नहीं। अगर यू० पी० की सरकार सबकी राय से हिन्दी और उर्दू बोली को हाईस्कूल तक अनिवार्य कर सके, तो वह उसका एक बड़ा काम होगा। मैं तो कहूंगा कि जिस सूबे की जबान हिन्दी या उर्दू है, वहां दोनों बोलियां लाजिमी हों। मुझे इसमें कोई शक नहीं कि अगर ऐसा कदम उठाया गया, तो दोनों बोलियों के मिलन से हिन्दुस्तानी कुदरती तौर पर चल निकलेगी और हिन्दी उर्दू का झगड़ा हमेशा के लिए बन्द हो जायगा। दूसरा फायदा यह होगा कि हाईस्कूल तक की पढ़ाई हिन्दी-उर्दू में बड़ी आसानी से होगी।

—अंग्रेजी। मसूरी, ६।६।१९४६। ह० से०, १६।६।१९४६।]

३९. पत्र : रामेश्वरी नेहरू को

मसूरी, ७-६-४६

चि० रामेश्वरी,

रत्नमयी बहिन को मैं बराबर पहचानता हूं। उनको लेने में मुझे कोई आपत्ति

नही है। गाधीवादी कौन है सो तो मैं खुद नही जानता हू। गाधीवाद मेरी दृष्टि मे निरर्थक शब्द है। शास्त्रकार के पीछे शास्त्रवाद बनता है। मैं शास्त्रकार हू नही, इसलिए मेरे निमित्त कोई वाद बन नही सकता है, बनेगा तो निभ नही सकता है और निभेगा तो वह गाधीवाद नही होगा। यह समझने लायक बात है।

तुम्हारा काम मुझे अच्छा लगता है, स्वच्छ लगता है। तुमको ही बालिका आश्रम बनाना है, उसे चलाओ और रत्नमयी बहिन सब तरह सन्तोष दे सकेगी तो मुझको बहुत अच्छा लगेगा।

बापु के आशीर्वाद

—हिन्दी। मसूरी, ७।६।१९४६। पत्र की फोटो-नकल (जी० एन० ८०१०) से।]

४०. अनजाना या अज्ञात

कुछ पण्डित उसे अनजाना कहते हैं, कुछ कहते हैं, जाना नही जा सकता। दूसरे उसे नेति-नेति (यह नही, यह नही) कहते हैं। इस वक्त हमारे मतलब के लिए अनजाना काफी है।

कल (६ जून) जब प्रार्थना मे मैंने लोगो से दो शब्द कहे, तो बस यही कह सका कि जितनी शक्ति हमे वह अज्ञात दे सकता है, और जहा तक वह रास्ता दिखा सकता है, उसके लिए हम उससे प्रार्थना करें, और उसी पर भरोसा रखें। हिन्दुस्तान के सामने आज एक बडा नाटक खेला जा रहा है। उसमे हरएक पार्टी के रास्ते मे बडी मुश्किले हैं। उन्हें इसी 'अनजाने' पर भरोसा रखना चाहिए। वह इनसान की अक्ल को चक्कर मे डाल सकता है और उसकी नाचीज तजवीजो को एक पल मे उलट-पुलट कर सकता है। ब्रिटिश पार्टी इस अनजाने ईश्वर पर विश्वास रखने का दावा करती है। मुस्लिम लीग का भी यही कहना है। वह बडे जोश मे अल्ला-हो-अकबर के नारे लगाती है। कांग्रेस के पास इस किस्म का कोई एक नारा नही हो सकता। पर अगर वह सारे हिन्दुस्तान की नुमाइन्दा बनना चाहती है, तो वह ईश्वर पर विश्वास रखनेवाले करोडो की भी नुमाइन्दा है, चाहे वे खुदा के घर के किसी भी हिस्से के रहनेवाले हो।

मै हमेशा आशावादी रहा हू। फिर भी यह [illegible] नही कह सकता कि [illegible] राजनीतिक [illegible] मे [illegible] मुश्किल है। इसलिए मै यही कह सकता हू कि अगर सब पार्टियो की पूरी-पूरी और [illegible]

कोशिश के होते हुए भी ऐसी चीज हो गई जो असुरक्षित है, तो मैं उनसे कहूँगा कि वे भी मेरे साथ मिलकर कहें कि जो हुआ, सो अच्छा हुआ। इस असुरक्षित चीज में हमारी हिफ़ाजत थी। अगर हम सब ईश्वर के बच्चे है, और है, चाहे हम मानें या न मानें, तो हमारा फ़र्ज़ हो जाता है कि जो कुछ भी हो, उससे घवराहट में न पड़ें। और उत्साह और आत्म-विश्वास से अगले कदम की तैयारी करें, चाहे वह कदम कुछ भी हो। शर्त सिर्फ यह है कि हरएक पार्टी ईमानदारी के साथ सारे हिन्दुस्तान की भलाई की पूरी कोशिश करे, क्योंकि हमारी बाज़ी वही है, दूसरी नही।

—मसूरी, १०।६।१९४६। ह० ज०। ह० से०, १६।६।१९४६।]

: आठ :

मंजूषा

उत्तरप्रदेश-सम्बन्धी प्रश्नों एवं घटनाओं पर गांधीजी की
विविध रचनाएं

१. शिक्षण-पद्धति

हम लोगो में अपनी हर चीज का मुकावला पश्चिमी सम्यता के साथ करने का रिवाज हो गया है। हम कहते हैं कि हमारी पूर्वी सम्यता पश्चिमी सम्यता से काफी अच्छी है। परन्तु हमारा आचरण इससे उलटा है। इसलिए भारतीय विद्यार्थियो की शिक्षण-पद्धति शुद्ध नही रही, सकर हो गई है। हमारे विद्यालयो मे से हम अपने प्राचीन ऋषि-मुनियो के वारिस उत्पन्न नही कर पाते। यह वडे दु ख की वात है। इस वात पर मैं वहुत समय से मनन करता आ रहा हू। परिणाम-स्वरूप जो विचार मुझे सूझे हैं उनको मैं वाचक-वृन्द के सम्मुख रखता हूँ।

देश का आधार जिस धन्धे पर हो उस धन्धे का सामान्य ज्ञान सब विद्यार्थियो को देना चाहिए। इस सिद्धान्त को कोई अस्वीकार नही करेगा। इस सिद्धान्त के अनुसार हमारे सब विद्यार्थियो को खेती का और वुनने का काम सिखाना चाहिए। क्योकि भारतवर्ष के प्राय. ६५ सैकडा मनुष्य खेती के काम मे लगे हुए है। पहले इनमे से ६० फीसदी वुनने का काम भी करते थे।

जबतक शिक्षित वर्ग इन दो वातो पर ध्यान नही देगा तबतक हम अपने करोड़ो किसानो और लाखो जुलाहो के दुःख को विल्कुल नहीं समझ सकते। और न इन दोनो के धन्धो मे ही कुछ सुधार हो सकता है।

यदि हमारा शरीर तन्दुरुस्त न होगा तो हम कुछ काम नही कर सकते। इसलिए लडको को बचपन से आरोग्य-शास्त्र की शिक्षा देना आवश्यक है।

धर्म के ऊपर सब कुछ निर्भर है। और सस्कृत जाने विना धर्म-शास्त्रो का ठीक ज्ञान मिलना अशक्य है, इसलिए सस्कृत का जानना भी प्रत्येक हिन्दू लडके का कर्त्तव्य है। किन्तु हर कही गुरुकुल का प्रबन्ध, मेरे विचार से, बडा कठिन है। इसलिए सामान्य शिक्षण को सामान्य ज्ञान देकर समाप्त करना चाहिए। जिस विद्यार्थी मे असाधारण शक्ति हो उसके लिए चाहे विशेष प्रबन्ध भले किया जाय।

इतिहास व भूगोल पढाने की सरकारी पद्धति बदली जानी चाहिए। इतिहास और भूगोल मे प्राय देश के वारे मे ही ज्ञान दिया जाना चाहिए। मेरा अनुभव ऐसा है कि बहुत लडको को मिडिलसेक्स तो मालूम रहता है, लेकिन वे काठियावाड या सोरठ प्रान्त के वारे मे कुछ नही जानते। इतिहास मे विद्यार्थियो को मधुकर-

राज्य का ज्ञान पर्याप्त रहता है और हमारे अपने शिवाजी को वे एक लुटेरा समझते है।

गणित-शास्त्र में भी यही हाल है, लड़कों को वड़े-वड़े हिसाव मालूम रहते है, पर वे सामान्य व्यवहार-गणित नही जानते। देशी तालिका की जानकारी भी उन्हे पूरी-पूरी नहीं होती।

शिक्षण अलग-अलग प्रान्तों में वही की अपनी भाषा में होना चाहिए। और तदुपरान्त भारतवर्ष की दो-तीन और भाषाओं का ज्ञान होना चाहिए।

अंग्रेजी का ज्ञान केवल थोड़े से लड़कों को विदेशी भाषा के तौर से दिया जाय। मुझे विश्वास है कि जबतक हमारे मन से अंग्रेजी पढ़ने का मोह दूर नहीं होगा तव-तक हम लोगों में सच्चे स्वराज्य की भावना नहीं आ सकती। कुछ मित्र मुझे कहते हैं कि साधारण कामों में जैसे कि रेलगाड़ी की मुसाफिरी में अथवा तार पढ़ने का अवसर आ जाने पर अंग्रेजी जाने बिना हमें बड़ी परेशानी उठानी पड़ती है। पर ऐसी स्थिति के उत्तरदाता हम स्वयं हैं। यदि हमारी मन्दता के प्रभाव मे हम अपना धर्म भूल जायेंगे तो यह पराधीन दशा और भी निकृष्ट हो जायगी।

परिणाम यह होगा कि हमारे करोड़ों भाई, जो कदापि अंग्रेजी नहीं सीख सकते, गुलाम वने रह जायँगे। अंग्रेजी पढ़े हुए और उनके बीच में एक खाई उपस्थित हो जायगी।

प्रचलित शिक्षण का हमारे घरों पर कुछ असर नही होता गोकि नियम यह है कि विद्यार्थी-जीवन का प्रभाव सारे देश पर पड़ना चाहिए। थोड़े से इत्र की सुगन्ध जैसे सब जगह फैल जाती है, वैसे विद्यार्थी-जीवन होना चाहिए। मेरे खयाल से स्वराज्य की कुंजी सरकार के हाथ में उतनी नही है जितनी कि हमारी शिक्षा-प्रणाली पर है।

—हिन्दी। सद्धर्म प्रचारक, गुरुकुल अंक। २४।३।१९१७। सं० गां० वां० खण्ड १३, पृ० २६०-६१।]

२. पोशाक के बारे में 'पायनियर' (इलाहाबाद) को उत्तर

मोतीहारी
जून ३०, १९१७

महोदय,

मैं चम्पारन में जो थोड़ा-बहुत काम कर रहा हूं उसकी आपने और श्री इर्विन

ने आलोचना की और मैं अब तक इस आलोचना का उत्तर देने का लोभ सवरण करता रहा हू। आपकी हर बात का उत्तर तो मैं इस पत्र मे भी नही दूगा। किन्तु श्री इर्विन ने एक बात बिना सही जानकारी पाने का कष्ट उठाये कही है, मैं उनका उत्तर अवश्य दूगा। उन्होंने मेरे कपडे पहनने के तरीके के बारे मे जो कुछ कहा है मेरा अभिप्राय उसी से है।

पाश्चात्य सभ्यता की छोटी-छोटी सुख-सुविधाओ से परिचित न होने के कारण मैंने अपनी राष्ट्रीय पोशाक का आदर करना सीखा है। और श्री इर्विन को यह जानने मे दिलचस्पी हो सकती है कि मैं चम्पारन मे जो पोशाक पहनता हू उसे भारत मे सदा पहनता रहता हूं। केवल कुछ दिनो के लिए अपने अन्य देशवासियो की भाति मैं भी अदालतो मे और काठियावाड से बाहर अन्यत्र अर्द्ध-यूरोपीय पोशाक पहनने की कमजोरी का सहज शिकार हो गया था। मैं अब से २१ वर्ष पूर्व काठियावाड की अदालतो मे बिल्कुल इसी पोशाक को पहनकर जाता था जिसे मैं चम्पारन मे पहनता हू।

मैंने एक परिवर्तन किया है और वह यह है कि बुनाई और खेती का धन्धा अपनाने एव स्वदेशी का व्रत लेने पर मेरे कपडे अब बिल्कुल हाथ से कते और बुने होते हैं और उन्हे या तो मैं स्वय तैयार करता हू या मेरे साथी कार्यकर्ता तैयार करते हैं। श्री इर्विन के पत्र की ध्वनि यह है कि मैं काश्तकारो पर असर डालने के लिए उनके सम्मुख ऐसी पोशाक पहनकर जाता हू और इसका उपयोग मैं अन्यत्र तथा विशेष रूप से चम्पारन मे ही करता हू। तथ्य यह है, मैं राष्ट्रीय पोशाक इसलिए पहनता हू कि मैं समझता हू कि यह एक भारतीय के लिए अत्यन्त स्वाभाविक और शोभनीय पोशाक है। मेरा विश्वास है कि यूरोपीय पोशाक की नकल करना हमारे पतन, अपमान और दुर्बलता का चिह्न है और हम अपनी राष्ट्रीय पोशाक, जो भारत की जलवायु के लिए उपयुक्त है, जिसकी सादगी, कला और सस्तेपन मे पृथिवी भर की कोई पोशाक मुकाबला नही कर सकती एव जो स्वास्थ्य और सफाई की दृष्टि मे निर्दोष है, को छोडकर राष्ट्रीय पाप कर रहे है। यदि अग्रेजो मे झूठा घमण्ड और गौरव के झूठे भाव न होते तो यहा रहनेवाले अग्रेज भारतीय पोशाक को बहुत पहले ही पहनने लग जाते। मैं यहा प्रसगवश यह भी [illegible] कि मैं चम्पारन मे इधर-उधर नगे सिर नही जाता। जूते तो मैं धार्मिक कारणो से नही पहनता, किन्तु मैं यह भी देखता हू कि यथासम्भव उन्हे न पहनना अधिक स्वाभाविक और स्वास्थ्य के लिए लाभप्रद है।

श्री इर्विन और आपके पाठको को यह बताते हुए मुझे खेद होता है कि 'परिषद् के भूतपूर्व माननीय सदस्य' मेरे आत्मीय मित्र बाबू [illegible]

अब भी असंस्कृत ही हैं। वह अपने प्रान्त की टोपी पहनते है और कभी नंगे पैर नहीं चलते और जिस घर में हम रहते है उसमें भी खड़ाऊँ पहनकर भयंकर खटखट की आवाज करते रहते है। मेरे साथ उनका गहरा सम्पर्क है, फिर भी (बाहर) उन्हें अपनी अर्द्ध-अंग्रेजी पोशाक को त्यागने का साहस नहीं होता; जहाँ भी वह अधिकारियों से मिलने जाते है, अपने पैरों को दुटंगे परिधान (पतलून) में डालते है और यह मानते हुए कि अपने पैर संकुचनशील जूतों में कसने से बहुत कष्ट होता है, वैसे जूते पहनते हैं। मै उन्हें यह विश्वास नहीं दिला पाता कि यदि वह अधिक फबनेवाली और कम कीमत की धोती पहनेंगे, तो न उनके मुवक्किल उन्हें छोड़ जायगे और न अदालतें ही उन्हे सजा देंगी। मै आपसे और श्री इर्विन से भी कहता हूं कि उन कहानियों पर विश्वास न करें जिन्हें वह और आप मेरे मित्रों के बारे मे सुना करते है, बल्कि शिक्षित भारतीयों को अपने उन आचारो, आदतों और रिवाजों को, जो बुरे या हानिकर सिद्ध नही हुए है, छोड़ने के विरुद्ध किये जानेवाले पवित्र संघर्ष में मेरा साथ दें। अन्त में मै आपको और श्री इर्विन को चेतावनी देने का साहस करता हूं कि यदि आप इसी तरह असिद्ध तथ्यों के आधार पर आलोचना करते रहेंगे तो आप दोनो चम्पारन में मेरी उपस्थिति को जिस उद्देश्य के लिए खतरा समझते है, उस उद्देश्य को ही हानि पहुंचायेगे। कृपया मेरी यह बात बिल्कुल माने कि मै अपने देशवासियों के प्रति जिस तरह बरतता हूं, अगर अपने उन सैकड़ों अंग्रेज मित्रो और सहयोगियों के प्रति, जिनमें से सभी मेरी तरह सनकी नही है उससे भिन्न व्यवहार करूं तो मै अपने आपको उनके सौहार्द और विश्वास का पात्र नही मानूगा।

—अंग्रेजी। मोतीहारी, ३०।६।१९१७। 'पायनियर' ५।७।१९१७।]

३. पंजाब की चिट्ठी में झाँकता संयुक्तप्रान्त

लाहौर,
माघ सुदी ६ (२७ जनवरी, १९२०)

कानपुर

दिल्ली से मुझे प्रयाग तो जाना ही था। वहां पण्डित मोतीलाल नेहरू से मिलकर वापस लौट रहा था तभी मुझ पर कानपुर जाने के लिए जोर डाला गया। कानपुर के नागरिको का आग्रह था कि वहां मुझे मात्र कुछ घण्टे ही रुकना होगा। स्वदेशी भण्डार का उद्घाटन करके मैं दूसरी गाड़ी से वहां से विदा ले सकूगा। मैं उन्हें निराश नही कर सका।

प्रयाग से दिल्ली जाते हुए कानपुर रास्ते मे ही पडता है और वह मेल गाडी से केवल चार घण्टे का रास्ता है। कानपुर वम्बई की तरह ही व्यापार का और कपडा-मिलो का केन्द्र है। वहा की जलवायु भी वहुत अच्छी है। इस नगर मे स्वदेशी-भण्डार खोलने का यह पहला ही प्रयत्न है और उसमे मुख्य हाथ हसरत मोहानी साहव का है। इस भण्डार के उद्घाटन के समय हजारो आदमी एकत्र हुए थे; उनके उत्साह की सीमा नही थी।

एक दुखद घटना

मेरे यहा पहुचने के पहले ही अली भाई पहुच चुके थे। उनके सम्मान मे एक वहुत वडा जुलूस निकाला गया था। उनकी गाडी का घोडा भडका और लाते मारने लगा। भीड वहुत ज्यादा थी। गाडी के पास ही अव्दुलहफीज नाम का एक हृष्ट-पुष्ट युवक खडा हुआ था। पिछले कुछ दिनो से वह सार्वजनिक सेवा का काम करने लगा था। घोडे की लात से उसकी छाती पर चोट लगी और वह गिर पडा। जिसके मरने की कभी कल्पना ही नही की जा सकती थी ऐसा वह युवक क्षण-मात्र मे चल वसा। अलीभाई तुरन्त गाडी मे उतरे। उन्होने एक खाट मगवाई। उसके ऊपर युवक का शव रखा गया। और दोनो भाइयो ने उसमे अपना कन्धा दिया। कुछ दूर तक वे स्वय उसकी इस शवयात्रा मे गये। वाद मे कन्धा वदलने पर अपने काम पर गये। जो जुलूस खुशी का था वह इस घटना के वाद शोक का हो गया और शव के साथ गया। सारा दिन शोक की इस छाया से मलिन हो गया।

इस घटना को घटित हुए चार घण्टे हुए होंगे कि इतने मे मै पहुँचा। मुझे यह दुखद सवाद स्टेशन पर ही मिल गया था। मैने माग की कि मेरे लिए आयोजित जुलूस स्थगित कर दिया जाय, मुझे सीधे भण्डार ले जाया जाय, और उद्घाटन की क्रिया पूरी कराने के वाद वहा ले जाया जाय जहा अब्दुल हफीज का शव है। नगर के नेताओ ने मेरा अनुरोध स्वीकार किया। भण्डार का उद्घाटन करने के बाद हम कुछ लोग भाई अब्दुल हफीज का शव देखने के लिए जा पहुंचे। दृश्य अत्यन्त हृदय-द्रावक था। उसकी हृष्ट-पुष्ट देह और सुन्दर चेहरा देखकर मुझे गहरा दुख हुआ। आसपास खडे हुए मुसलमान भाइयो की हिम्मत ने मेरा धैर्य कायम किया। वहा मैने कोई रोना-धोना नही देखा। मानो घोर निद्रा मे सोये हुए किसी भाई के आस-पास बातचीत हो रही हो, इस प्रकार वे लोग निर्भयतापूर्वक बातचीत कर रहे थे और मुझे सुना रहे थे कि मुसलमान की मृत्यु कैसे हुई। इस दृश्य से मै बहुत प्रभावित हुआ। ऐसे अवसर पर हिन्दुओ के सिवाय रोना धोना होता

है इस वात की याद आई। मन में विचार आया कितना अच्छा होता कि यदि हम इस पाप से वचते। यदि हम मृत्यु का डर छोड़ दें तो अनेक अच्छे कार्य हो सकते है। जिस धर्म के अनुयायियो में मृत्यु का भय कम-से-कम होना चाहिए उन्ही में वह सवसे ज्यादा है। यह विचार कई वार मेरे मन में आया है और उससे वड़ी लज्जा का अनुभव हुआ है। आत्मा अमर है, देह क्षणभंगुर है, कोई ऐसा कार्य नही जिसका परिणाम न होता हो—वचपन से यह सव हम सीखते है। तो फिर मृत्यु का भय क्यों होना चाहिए ? अव्दुल हफीज का एक मात्र पुत्र मेरे पास खड़ा हुआ था; वह भी निर्भयतापूर्वक वात कर रहा था। भगवान अव्दुल हफीज की आत्मा को शान्ति प्रदान करे।

मेरठ

शाम की गाड़ी से मैंने कानपुर छोड़ा। दूसरे दिन सुवह यानी तारीख २२ को सुवह मैं मेरठ पहुंचा। जी० आई० पी० लाइन से लाहौर जाते हुए मेरठ रास्ते में पड़ता है। मैने वहां कुछ घण्टे विताने का वचन दिया था। मेरठ-वासियों ने वड़ी तैयारी कर रक्खी थी। हिन्दू-मुसलमानों के वीच वहां मेरे प्रति प्रेम-प्रदर्शन की होड़-सी चल रही थी। अली भाई वहां कुछ ही दिन पहले गये थे। उन्हे एक हिन्दू सज्जन के घर ठहराया गया था। मुझे मेरठ के प्रसिद्ध मुसलमान वैरिस्टर भाई इस्माइल खां के घर ठहराया गया। स्वागत-समारोह मे ७५० स्वयंसेवक उपस्थित थे जिसमें कई प्रतिष्ठित परिवारों के लोग थे। घोड़ों पर सवार स्वयं-सेवकों का दल भी था। तीन मील रास्ते पर झण्डों से सजाये हुए खम्भे लगा कर रस्सी वाँधी गई थी। जुलूस रस्सियों के भीतर-भीतर चल रहा था और वाहर दर्शक-समुदाय था। जुलूस में वाजे, ऊंटगाड़ियां, घुड़सवार, फैन्सी ड्रेसवाले आदि थे। मेरा अनुमान है कि वह एक मील लम्वा तो रहा होगा। आसपास के गांवों से हजारों लोग आये थे किन्तु व्यवस्था वहुत सुन्दर थी। मुझे नगरपालिका, खिलाफत कमेटी, सावारण जनसमाज, हिन्दू स्त्रियों और मुसलमान-स्त्रियों की ओर से मानपत्र दिये गये। स्त्रियो की एक अलग सभा आयोजित की गई थी। उनका हर्प और उत्साह छलका पड़ रहा था। लगभग हजार स्त्रियां आई होंगी। मै तो वहुत असमंजस में पड़ गया। यह सारा प्रेम यदि मैं स्वीकार करूँ तो उसे पचाऊँगा कैसे ? मैंने तो सव वहीं कृष्णार्पण कर दिया।

खिलाफत के सम्वन्ध मे मेरी स्पष्टवादिता मुसलमान भाइयों को वहुत प्रिय लगी है। जवतक उनकी वात को न्याय का आधार प्राप्त है और वे किसी प्रकार की हिंसा किये विना लड़ते रहते हैं तवतक मैं उनके लिए अपने प्राण अर्पित करूंगा,

मेरे ये वाक्य उनको पसन्द आये हैं। मेरे इस कथन से वे शक्ति और प्रेरणा ग्रहण कर सके हैं। हिन्दू और मुसलमान दोनो को सत्य के आग्रह की बात, फिर चाहे वे उसका पालन करें या न करें, पसन्द आई है। और इसलिए वे मेरे ऊपर प्रेम की वर्षा कर रहे हैं। सत्य का मेरा आग्रह जिस समय उनके खिलाफ होगा, तब वे मेरा तिरस्कार भी करेंगे। जो प्रेम करता है उसे तिरस्कार करने का अधिकार है ही।

मुजफ्फरनगर

मेरठ से मुझे रातोरात मोटर मे मुजफ्फरनगर ले जाया गया। यहा हिन्दू-मुसलमानो के बीच कुछ मनोमालिन्य हो गया था। मुझे वहा उसे मिटाने के लिए ही ले जाया गया था। मोटर रात को ६ बजे पहुँची। लोग उत्साह से पागल हो गये थे। कोई किसी की बात सुन ही नही रहा था। घुड़सवार तो यहा भी थे किन्तु मेरठ-जैसी सुव्यवस्था नही थी। लोगो ने मोटर को घेर लिया। लोगो ने मुझे उसमे से बडी मुश्किल से निकालकर घोडागाडी मे बिठाया। लोगो का हर्षनाद सहन करने की शक्ति मुझमे बिल्कुल नही रह गई थी। सच तो यह है कि मैंने अपने कानो मे रूई के फाहे ठूस रक्खे थे। एक भाई के पाँव मे चोट लगी। मुझे अब्दुल हफीज की याद आई। जिस भाई को चोट आ गई थी उसे मैंने गाडी मे बिठा लिया। लोगो से दूर होने की प्रार्थना की। कौन किसकी सुनता? तब मैंने अपना शस्त्र बाहर निकाला। मैंने कहा कि यदि लोग दूर नही होंगे और गाडी चलाई जायगी तो मैं नीचे कूद पडूँगा। मैं यह नही सह सकता कि किसी को भी चोट लगे। मेरे इस चमत्कारपूर्ण शस्त्र का बिजली-जैसा प्रभाव हुआ। लोग शान्त हो गये, घबडाये और हट गये। मैंने तुरन्त गाडी चलाने को कहा। अब तो नियन्त्रण मेरे हाथ मे आ गया था। इसमे काफी समय गया। रास्ते मे लोगो ने दीपावली कर रक्खी थी। उसमे से निकलते-निकलते समय बीत गया। अभी सभा होनी बाकी थी। मेरी गाडी का समय हो गया था। दूसरे दिन सुबह तो लाहौर पहुँचना ही था। लेकिन लोग समझ गये थे कि अब किसी प्रकार का शोरगुल करना या मेरे आसपास भीड करना ठीक नही होगा। रात को ११ बजे मण्डप पहुँचे। वहा सभा मे अपने आप अद्भुत व्यवस्था हो गई थी। चार हजार या उससे भी ज्यादा लोग रहे होंगे। मेरा गला कुछ बैठ गया था। किन्तु लोगो ने ऐसी शान्ति रखी कि सब लोग दूर तक मेरी आवाज सुन सके। अपने भाषण मे मैंने कहा कि यदि हम लाखो लोगो मे काम करना चाहते हैं तो हमें व्यवस्था करना सीखना चाहिए। फिर स्थानिक झगडे की चर्चा करते हुए उन्हे एक दूसरे [illegible] करने और

झगड़ा शान्त करने की सलाह दी। और फिर लोगों से विदा ली। इस तरह भाग-दौड़ करते हुए इन दोनों शहरों के दर्शन करके तारीख २३ की सुवह में लाहौर पहुँच गया।

— गुजराती। लाहौर, २७।१।१९२०। न० जी०, १।२।१९२०।]

४. काशी-यात्रा

समिति की रिपोर्ट[1] को पूरा करने का समय भी आ गया था। अतः यह प्रश्न उठा कि इस रिपोर्ट को पढने के लिए सव सदस्य किस स्थान पर एकत्र हों। पं० मोतीलाल नेहरू, श्री चित्तरंजन दास और पं० मालवीयजी के लिए काशी उपयुक्त स्थान था इसलिए यह निश्चय किया गया कि सव लोग काशी जायं। श्री जयकर लाहौर आ चुके थे, वह श्री सन्तानम् और डा० परसराम तथा लाला हरकिशन लाल १५ तारीख को लाहौर से काशी के लिए रवाना हो गये। रास्ते में लाला गिरधारीलाल उन्हें अमृतसर स्टेशन पर मिले। मेरी सार-संभाल के लिए डा० जीवराव मेहता[2] भी हमारे साथ हो लिये थे। हम १६ तारीख को काशीजी पहुंच गये। स्टेशन पर महामना पं० मालवीय जी तथा हमारे धर्मपरायण और विद्वान भाई आनन्दशंकर ध्रुव[3] के दर्शन करके मै कृतार्थ हो गया।

रिपोर्ट लिखने का कार्यभार मुझे सौपा गया था। उसे मैं लाहौर में पूरा न कर सका था। इसलिए मैं तो सारा समय उसे पूरा करने में व्यतीत करता था और दूसरे सदस्य उसे पढ़ने में। उन्होने मेरी रक्षा की। मेरे प्रति अनन्य प्रेमभाव प्रकट करके मुझे उवार लिया। मेरे मन में इसकी स्मृति सदैव वनी रहेगी: मालवीयजी के प्रेम का वर्णन तो किया ही नही जा सकता; उन्होंने मेरी पूरी तरह से चौकीदारी की। हमारे सम्वन्ध ऐसे हैं कि हम एक पल भी सेवा-धर्म की वात किये विना नही रह सकते थे, किन्तु हमने वातचीत न करके संयम का पालन किया। आनन्दशंकर जी के साथ खूव सारी वातें करने, उनसे काशी जी के अनुभव सुनने

---

१. पंजाव के अन्यायों की जांच के लिए वनी कांग्रेस जांच-समिति से अभिप्राय है।

२. एक प्रसिद्ध चिकित्सक, गुजरात के प्रथम मुख्य मंत्री, भारतीय उच्चायुक्त लन्दन।

३. प्रसिद्ध शिक्षा-शास्त्री; उस समय सह-उपकुलपति, वनारस हिन्दू विश्वविद्यालय।

का मन तो होता था लेकिन उसे पूरा रोकना पडता था। इस तरह पवित्र तथा प्रेममय वातावरण मे रिपोर्ट का काम पूरा हुआ। रिपोर्ट मार्च के प्रारम्भ में प्रकाशित होगी, ऐसी आशा की जा सकती है।

अरुणोदय

हमारे रहने का प्रवन्ध पण्डितजी के साथ ही गगा-तट पर किया गया था। अरुणोदय और सूर्योदय का दृश्य सब स्थानो पर भव्य होता है, किन्तु गगाजी के तट पर तो वह मुझे नितान्त अद्भुत जान पडा। आकाश मे जैसे-जैसे प्रकाश वढता जाता वैसे-वैसे गगा के पानी पर स्वर्णिम प्रकाश विखरता जाता है और अन्त मे जव सूर्य पूर्णत दृष्टिगोचर होता,उस समय ऐसा प्रतीत होता मानो पानी मे एक वृहदाकार स्वर्णस्तम्भ प्रतिष्ठापित कर दिया गया है। इस दृश्य को कितना भी देखें, आंखो को तृप्ति ही नही होती थी। भक्त जनो के कण्ठ से गायत्री मन्त्र अपने-आप स्फुरित हो उठता था। इस भव्य दृश्य को देखने के वाद सूर्य की उपासना, नदियो की महिमा और गायत्री मन्त्र के अर्थ को मैं अधिक अच्छी तरह समझ सका।

इस स्थान पर घूमते हुए मैंने अपने देश और अपने पूर्व-पुरखो के वारे मे गर्व का अनुभव किया लेकिन इसके साथ ही मुझे वर्तमान स्थिति का विचार करते हुए दुख भी हुआ। मैंने नदी के किनारे ही लोगो को शौचादि करते हुए देखा। 'जगल' जाना छोड कर अब हम नदी पर आते है। इस पवित्र स्थल पर तो ऐसी स्थिति होनी चाहिए कि हम आंख मूद कर नगे पांव चल-फिर सकें। लेकिन इसके वदले हमे वहुत सभल कर चलना पडता है और ऐसी जगह मे गगा-जल पीते हुए भी घिन आती है। इस गन्दगी के वारे मे मैं सोच ही रहा था कि मुझे काशी के विश्वनाथ मन्दिर की याद आ गई। मन्दिर के पास ही सकरी गली, वहा की गन्दगी, वहा देखे हुए सडे फूलो का ढेर, वहा के पुजारी ब्राह्मणो की कठोरता और मलिनता— इन सवके विचार मात्र से मैंने एक लम्वी सास ली तथा मुझे भारतीयो की अवनति के कारण की याद आ गई और तब मुझे पण्डितजी तथा उनके कार्यों का ख्याल आया। काशी विश्वविद्यालय की सफलता से ही भविष्य मे (हम) उनकी कीमत आंकेगे। इस परीक्षा मे क्या वह उत्तीर्ण होगे? उनकी धर्मनिष्ठा का, उनके त्याग का, भारतवर्ष की उन्होंने जो भव्य सेवा की है उसका, मुझे ख्याल आया। ध्रुवजी उनके दायें हाथ है, और इस तरह विश्वविद्यालय का कारोबार दो वडे धर्मात्मा पुरुषो के हाथ मे है, इस विचार से मुझे सान्त्वना मिली। मुझे ऐसा लगा कि यदि विश्वविद्यालय के विद्यार्थी धार्मिक और विद्या निष्ठ [illegible] और [illegible]-

तट की सफाई की अपेक्षा की जा सकती है। विश्वविद्यालय में वह शक्ति हो या न हो लेकिन प्रत्येक भारतीय का यह कर्त्तव्य है कि वह हिन्दू धर्म में छाई हुई आन्तरिक और वाह्य मलिनता को दूर करने के उपाय खोजे। प्रत्येक भारतीय घर बैठे-बैठे आज से ही इस दिशा में प्रयत्न कर सकता है; यदि हर कोई अपनी स्वच्छता का स्वयं ही पूरा खयाल रक्खे तो काशी विश्वनाथ मन्दिर अपने आप—हम जितना चाहते हैं उतना—स्वच्छ हो जायगा।

विश्वविद्यालय के विद्यार्थी

पण्डितजी-द्वारा विश्वविद्यालय के विद्यार्थियों से दो शब्द कहने की आज्ञा पाने पर मैंने काशी से रवाना होने के दिन सवेरे साढ़े सात वजे विद्यार्थियों के सम्मुख विद्यार्थी-जीवन-सम्वन्धी अपने विचारों को व्यक्त किया। विद्यार्थी-जीवन संन्यास की अवस्था के समान है। इसलिए उसे पवित्र और व्रह्मचारी का-सा होना चाहिए। आज दो सभ्यताएं विद्यार्थियों का ध्यान अपनी ओर आकर्षित करने के लिए परस्पर होड़ कर रही हैं—प्राचीन और अर्वाचीन। प्राचीन सभ्यता संयम-प्रधान है। प्राचीन सभ्यता हमें वताती है कि मनुष्य ज्ञानपूर्वक अपनी आवश्यकताओं को जितना कम करता जाता है वह उतना आगे वढ़ता है। आधुनिक सभ्यता हमें यह सिखाती है कि अपनी आवश्यकताओं को वढ़ाकर मनुष्य प्रगति कर सकता है। संयम और स्वच्छन्दता में उतना ही भेद है जितना धर्म और अधर्म में है। संयम में वाह्य प्रवृत्ति को आन्तरिक प्रवृत्ति की अपेक्षा गौण पद प्रदान किया जाता है। (आज) संयमशील प्राचीन सभ्यता के वदले स्वच्छन्दतामय आधुनिक सभ्यता को अपनाने का भय उपस्थित हुआ है। इस भय को दूर करने में विद्यार्थी वहुत सहायता कर सकते हैं। विश्वविद्यालय के विद्यार्थियों की परीक्षा उनके ज्ञान से नहीं वल्कि उनके धर्माचरण के आधार पर होगी। इस विश्वविद्यालय में धर्म की शिक्षा और आचरण को प्रधान पद प्रदान किया जाना चाहिए। इसमें विद्यार्थियों की पूरी मदद होनी चाहिए। पण्डितजी स्वयं धर्म का आचरण करनेवाले व्यक्ति हैं। उन्होंने एक धर्मात्मा पुरुष को अर्थात् आनन्दशंकर भाई को विश्व-विद्यालय में लाकर विद्यार्थियों को अनुकूल अवसर दिया है। इस अवसर का लाभ उठाकर विद्यार्थी अपनी विद्या को धर्म से शोभान्वित करें, ऐसी मेरी कामना है।

इस तरह के विचारों को मैं अनेक वार भिन्न-भिन्न रूपों में अनेक स्थानों पर व्यक्त कर चुका हूं। और एक वार फिर शुभ अवसर पर मिलने पर जिन्हें मैंने उस दिन काशी विश्वविद्यालय के विद्यार्थियों के सामने पेश किया उन्हीं का यह

सार 'नवजीवन' के पाठकों के सामने उनके मनन करने के लिए प्रस्तुत कर रहा हूं। मेरा विश्वास है कि हम अपने धर्म का विचार किये बिना राजनीतिक सुधारों का लाभ नहीं उठा सकते। धर्म की स्थापना इन सुधारों से नहीं हो सकती बल्कि धर्म के द्वारा ही इन सुधारों को दूर किया जा सकेगा।

काशी में गुजराती

काशी में गुजराती काफी बडी संख्या में है। इस बात की मुझे आज तक खबर न थी। आनन्दशंकर भाई ने मुझे उनसे मिलने का अवसर प्रदान किया था। पण्डितजी भी उपस्थित थे। गुजराती भाइयों ने उसी अवसर पर पण्डितजी को मानपत्र देने का विवेकपूर्ण कार्य किया। अपनी ओर से उनके प्रति धन्यवाद प्रकट करते हुए मैंने दो शब्द कहे। (मैंने उनसे कहा) गुजरातियों में जो दोष माने जाते हों वे वापस गुजरात में ही भेज देने चाहिए और जो गुण हों उनका ही विकास करना चाहिए। ऐसा करके गुजराती, गुजरात और हिन्दुस्तान दोनों की ही शोभा बढायेंगे। अपने व्यवहार में मनुष्य को अनेक धर्मसंकटों का सामना करना पडता है, उस समय सच्चे मित्र की जरूरत होती है। वैसे मित्र के रूप में (उन्हें) आनन्दशंकर भाई मिले हैं। मैंने कामना व्यक्त की कि उनकी उपस्थिति का वे पूरा लाभ उठायेंगे। काशी से दिल्ली होते हुए, वहां माननीय श्री निवास शास्त्री से मुलाकात करने के बाद श्रीमती सरला देवी[1] को लेकर २३ तारीख को आश्रम में पहुंचा हूं।

—गुजराती। न० जी०, २९।२।१९२०।]

- अरुणोदय और सूर्योदय का दृश्य सब स्थानों पर भव्य होता है। किन्तु गंगा जी के तट पर तो वह मुझे नितान्त अद्भुत जान पडा।
- प्रत्येक भारतीय का यह कर्तव्य है कि वह हिन्दू धर्म में छाई हुई आन्तरिक और बाह्य मलिनता को दूर करने के उपाय खोजे।
- विद्यार्थी-जीवन संन्यास की अवस्था के समान है।
- प्राचीन सभ्यता संयम-प्रधान है।
- संयम और स्वच्छन्दता में उतना ही भेद है जितना धर्म और अधर्म में है।

---

१. सरलादेवी चौधरानी।

५. पंजाबियों का कर्त्तव्य : 'लीडर' के सन्दर्भ में

इलाहाबाद का 'लीडर' श्री वासवर्थ स्मिथ से सम्बन्धित पत्र के छापने के लिए बधाई का पात्र है। यह श्री स्मिथ उन्ही अधिकारियों में से एक हैं जिनके खिलाफ सैनिक कानून के दौरान लोगों के साथ लगातार दुर्व्यवहार करने की सबसे ज्यादा शिकायत की गई है। इस पत्र से पता चलता है कि श्री स्मिथ को बरखास्त करने के बजाय तरक्की दे दी गई है। मालूम होता है, सैनिक कानून घोषित किये जाने से कुछ दिनों पहले उनकी तनज्जुली कर दी गई थी। 'लीडर' के नाम उक्त पत्र का लेखक कहता है:

"अब जिन्हें, जिस द्वितीय श्रेणी के डिप्टी कमिश्नर के पद से तनज्जुल कर दिया गया था, फिर उसी पद पर प्रतिष्ठित कर दिया गया है। साथ ही उन्हें प्रक्रिया संहिता के खण्ड ३० की रू से प्राप्त होनेवाली सारी सत्ता भी दे दी गई है। उनके आने के बाद से अम्बाला छावनी के बेचारे भारतीय नागरिक त्रास और अत्याचारपूर्ण शासन में रह रहे हैं।"

पत्र लेखक आगे कहता है:—

"मैंने उपर्युक्त दोनों विशेषणों का प्रयोग जान-बूझकर उसी अर्थ में किया है जो अर्थ इनसे निकलता है।"

मैं सारी स्थिति को बिल्कुल खोलकर रख देनेवाले इस पत्र के कुछ अंश उद्धृत कर रहा हूं, जिनसे त्रास और अत्याचार का मतलब स्पष्ट हो जायगा।

"निजी शिकायतों के सम्बन्ध में वह शिकायत करने वाले व्यक्ति का बयान कभी नहीं लेते। जब अदालत उठ जाती है तब पेशकार ऐसा बयान ले लेता है और फिर दूसरे दिन मजिस्ट्रेट से हस्ताक्षर करवा लेता है। (ऐसी शिकायतों के बारे में) जो रिपोर्ट की जाती है, वह चाहे शिकायत करनेवाले के अनुकूल हो या प्रतिकूल, मजिस्ट्रेट उसे कभी नहीं पढ़ता और बिना किसी उचित जांच-प्रक्रिया के शिकायत रद्द कर दी जाती है। यह तो है निजी शिकायतों का हाल। अब पुलिस चालानों का किस्सा सुनिए। ऐसे मामलों में अभियुक्तों के वकीलों को पुलिस की हिरासत में बन्द विचाराधीन व्यक्तियों से मिलने नहीं दिया जाता। उन्हें वादी पक्ष के गवाहों से जिरह नहीं करने दी जाती।... उनकी जांच उनसे ऐसे प्रश्न करके की जाती है, जिनका उत्तर वे प्रश्नकर्ता के मन के मुताबिक दे।... इस प्रकार अभियोग का सारा किस्सा पुलिस के गवाहों की जबानी कहलवाया जाता है। बचाव पक्ष के गवाहों को यद्यपि अदालत में बुलाया जाता है, किन्तु

बचाव पक्ष के वकील को उनसे पूछताछ नहीं करने दी जाती।...अगर अभियुक्त साहस करके अपने जवाब मे कुछ कहना भी चाहता है तो उसे फटकार कर चुप कर दिया जाता है। छावनी का कोई भी सरकारी कर्मचारी एक पुर्जे पर किसी भी नागरिक का नाम लिखकर दूसरे दिन उसे अदालत मे हाजिर करने को मजबूर कर सकता है। उसका इतना भर लिख देना ही सम्मन के बराबर है।... जिससे इस प्रकार अदालत में हाजिर होने को कहा जाता है वह अगर नहीं होता तो उसकी गिरफ्तारी के लिए फौजदारी वारण्ट जारी कर दिया जाता है।"

इस पत्र मे इसी तरह की और भी बहुत सी बाते कही गई हैं जो उद्धृत करने लायक है। लेकिन जितना मैंने दे दिया है, उससे लेखक का आशय स्पष्ट हो जाता है। अब सैनिक कानून के दौरान हम जरा इन अधिकारी महोदय के कारनामो को देखेंगे। यह अधिकारी वही सज्जन हैं जिन्होंने अपने इजलास मे लोगो को एक-एक करके नही, बल्कि समूहो मे हाजिर करवाकर मुकदमे का नाटक करने के बाद उन्हें सजा दी। गवाहो का कहना है कि वह लोगो को इकट्ठा करके उनसे झूठी शहादतें देने को कहते थे, औरतो के पर्दे-बुर्के उठवा देते थे, उन्हे "मक्खी, कुतिया और गधी" कहकर पुकारते थे और उन पर थूक देते थे। यही थे जिन्होंने शेखूपुरा के निरीह वकीलो पर अवर्णनीय जुल्म किये थे। श्री एण्ड्रूज इस अधिकारी के विरुद्ध की गई शिकायतो की व्यक्तिश: जाँच करके इस निष्कर्ष पर पहुँचे कि श्री स्मिथ से अधिक बुरा बरताव दूसरे किसी अधिकारी ने नहीं किया है। इन्होने शेखूपुरा के लोगो को इकट्ठा करके तरह-तरह से उनका अपमान किया, उन्हे 'सुअर लोग' और 'गन्दी मक्खी' कहा। हण्टर समिति के सामने उन्होंने जो गवाही दी उससे प्रकट होता है कि किस तरह उन्होंने सत्य का गला घोटा है। यह वही अधिकारी है जिनकी, अगर उक्त पत्र-लेखक की बातें सही हो तो, तरक्की कर दी गई है। लेकिन सवाल यह है कि वह अभीतक सरकारी सेवा मे बने हुए ही क्यो हैं और बेगुनाह औरतो और मर्दो को मारने-पीटने, उन्हे अपमानित करने के अभियोग मे अब तक उन पर मुकदमा क्यो नही चलाया गया है।

देखता हू लोगो मे यह इच्छा बहुत प्रबल है कि जनरल डायर और सर माइकेल ओडायर पर महाभियोग लगाया जाय। यह व्यवहार्य है या नहीं, इस पर मैं यहा विचार नही करूंगा। लेकिन मुझे यह देखकर दुःख हुआ कि जनरल डायर पर महाभियोग लगाने की इस चीख-पुकार मे श्री शास्त्री भी शामिल है।

---

१. वी० एस० श्रीनिवास शास्त्री। ३ अप्रैल, १९२० को आयोजित बम्बई प्रान्तीय कान्फ्रेंस मे सर ओडायर तथा अन्य लोगो पर महाभियोग लगाने और

अगर अंग्रेज लोग स्वेच्छा से ऐसा करें तो मैं इसका स्वागत करूंगा। क्योंकि यह इस बात की निशानी होगी कि उन्होंने जलियांवाला बाग की नृशंसता को भर्त्स-नीय माना है, लेकिन निश्चय ही, मैं इन दोनों को दण्डित करवाने के निरर्थक प्रयत्न पर फूटी कौडी भी खर्च नहीं करना चाहूंगा। और इस सम्बन्ध में अंग्रेजों का क्या खयाल है, जनता को तो इसका पर्याप्त अनुभव हो गया है। लगभग सारे अंग्रेजी अखबार मानवता के प्रति ऐसा घोर अपराध करनेवाले इन लोगों के कारनामो पर पर्दा डालने की साजिश में शामिल हो गये हैं। इन पर सरकारी अथवा गैर-सरकारी तौर पर मुकदमा चलाने के लिए चीख़-पुकार मचाने का मत-लब है इन्हें हीरो[१] का दर्जा दे देना और मैं ऐसे किसी प्रयास मे शामिल नही होऊंगा। अगर मैं भारत को सिर्फ इनकी पूरी बर्खास्तगी की माँग करने के लिए राजी कर सकू तो इसे काफी समझूगा। लेकिन सर माइकेल ओडायर और जनरल डायर की बरखास्तगी से ज्यादा जरूरी है कि कर्नल ओब्रायन, श्री बॉसवर्थ स्मिथ, राय (साहब) श्रीराम तथा काग्रेस उपसमिति की रिपोर्ट मे बताये गये अन्य व्यक्तियों पर अगर मुकदमा न भी चलाया जाय तो उन्हें कम-से-कम बिल्कुल बरखास्त तो कर ही दिया जाय। जनरल डायर को तो मैं बुरा मानता ही हूं, लेकिन श्री स्मिथ को तो कही ज्यादा बुरा मानता हूं और उनके अपराधों को जलियांवाला बाग के कत्लेआम से ज्यादा जघन्य समझता हू। जनरल डायर ईमानदारी के साथ ऐसा मानते थे कि एक सिपाही के नाते लोगों पर गोलियां चलाकर उन्हें भयभीत करना उनका कर्त्तव्य था। लेकिन श्री स्मिथ ने मनमाने तौर पर नृशंसता बरती, कमीनापन और नीचता दिखाई। अगर उनके खिलाफ कही गई सारी बातें सत्य है तो मानना पड़ेगा कि उनमे इन्सानियत का लेश भी नही है। जनरल डायर के विपरीत उनमें अपने किये को कबूल करने की हिम्मत नही है और जब उनसे कोई बात पूछी जाती है तो वह बगले झाँकने लगते है। लेकिन आज भी यह अधिकारी लोगो को —ऐसे लोगो को जिन्होंने कभी उनका कुछ नही बिगाड़ा—तबाह करने को स्वतन्त्र है और जिस शासन का फिलहाल वह प्रतिनिधि बना हुआ है उसे कलंकित करने की उसे पूरी छूट मिली हुई है।

और इस हालत में पंजाब क्या कर रहा है? क्या पंजाबियो का यह स्पष्ट

किसी न्यायाधिकरण द्वारा उनकी जांच करके उन्हें दण्डित करने की मांग की गई थी।

१. इंग्लैण्ड के कुछ हल्कों में डायर का बड़ा सौहार्दपूर्ण स्वागत किया गया; उनकी सहायता के लिए एक सार्वजनिक कोष भी आरम्भ किया गया।

कर्त्तव्य नही है कि जबतक वे श्री स्मिथ और उन-जैसे अन्य लोगो को बरखास्त न करवा लें तबतक चैन से न बैठें ? और अगर पजाब के नेता[1] अपनी मुक्ति का उपयोग सर्वश्री बॉसवर्थ स्मिथ और उनके गुणो के कारनामो से पजाब-प्रशासन को छुटकारा दिलाने के लिए नही करते तो वे व्यर्थ ही जेलो से छूट कर आये। मुझे पूरा विश्वास है कि यदि वे सकल्प के साथ एक आन्दोलन छेड-भर दें तो सारा भारत उनके साथ होगा। मैं उन्हे यह सलाह दूगा कि अगर जनरल डायर को कठघरे मे खडा करवाना है तो उसका सबसे अच्छा तरीका है, जिन अधिकारियो के खिलाफ इतने सारे प्रमाण एकत्र करने मे उन्होंने मदद दी है वे अधिकारी आज भी जो शरारत और शैतानी किये जा रहे हैं, उसे रोकना और मैं कहूगा यह काम अपेक्षाकृत अधिक आसान भी है और ज्यादा जरूरी भी।

—अंग्रेजी। यं० इ०, २३।६।१९२०।]

६. हमारा पिछला दौरा

हर एक यात्रा मे मुझे इतने अधिक अनुभव हो रहे हैं कि उनकी चर्चा करके पाठको को उनके परिणामो से अवगत कराना मेरे लिए कठिन हो रहा है। इसलिए मैं अबतक जो कह चुका हू, उसके साथ अनुशासन और सघटन की आवश्यकता पर अतिरिक्त जोर देकर ही मुझे सन्तुष्ट होना पडेगा। मैं कानपुर तक की अपनी यात्रा के विषय मे लिख चुका हू। मैं डर रहा था कि कानपुर—मौलाना हसरत मोहानी और डा० मुरारी लाल[2] के कानपुर—मे पहुँच कर क्या होगा ? दोनो ही बहुत बडे कार्यकर्त्ता हैं। स्टेशन पर जैसी व्यवस्था होनी चाहिए वैसी ही थी। जबरदस्त भीड हमारी प्रतीक्षा कर रही थी किन्तु वह इतनी अनुशासित थी कि हम लोग जनता की दो घनी पक्तियो के बीच से आसानी के साथ आगे बढते चले गये और जबतक मोटरगाडियो मे जाकर अपनी-अपनी जगह नहीं बैठ गये तब तक कोई व्यक्ति टस से मस नही हुआ। जिस काम मे फिजूल ही ३० मिनट लग जाते,

---

१. ये नेता सैनिक कानून के अन्तर्गत गिरफ्तार किये गये थे और बाद मे २३ दिसम्बर १९१९ को राज-घोषणा मे जो आम माफी दी गई थी उसके अन्तर्गत छोड दिये गये थे।

२. उन्होने राय साहब की उपाधि छोड दी थी और प्रान्त की सरकार को तमगा और सनद वापस कर दी थी।

उसमें पांच मिनट भी नहीं लगे। जुलूस का कार्यक्रम छोड़ दिया गया था, इससे खुशी हुई। कार्यक्रम भी स्टेशन की ही तरह व्यवस्थित और काम-से-काम रखने-वाला था। हम लोग (डेरे पर) करीब ८ बजे पहुंचे। एक ही दिन वहां रुका जा सकता था। किन्तु उतने ही समय में कार्यकर्त्ताओं के साथ बैठक, 'शिकागो ट्रिब्यून' के श्री फ्रेजरहण्ट को निजी भेंट, विधवाश्रम देखना, राष्ट्रीय गुजराती शाला का उद्घाटन, गुजराती महिलाओं की एक सभा (जिसमें महिलाएं बड़ी संख्या में उपस्थित थी), राष्ट्रीय समझौता अदालत का उद्घाटन, सार्वजनिक सभा और अन्त में मुलाकातियों से वातचीत की। ये सारे ही काम विना किसी अतिरिक्त भागदौड और परेशानी के निपट गये। सार्वजनिक सभा के समय प्रारम्भ में थोड़ी सी गड़वड़ी हुई। यह जान पड़ा कि स्वयंसेवकों को पहले से कुछ हिदायतें नही दी गई हैं, किन्तु थोड़े ही प्रयत्न के वाद वहां भी पूरी शान्ति हो गई अत: लोगों ने लम्बे-लम्बे भाषण पूरी तरह शान्त रहकर सुने। मेरा विश्वास है कि जैसे ही हम सगठित हुए और हममें अनुशासन आया वैसे ही हमें स्वराज्य मिल जायगा। यदि हम एक होकर किसी भी विदेशी शक्ति-द्वारा शासित होने से इन्कार कर दें तो हमारे जैसे देश को इससे अधिक और कुछ करने की जरूरत नही। लखनऊ में बिल्कुल इससे उलटा रहा। स्टेशन पर यहां से वहां तक गड़वड़ी-ही-गड़वड़ी थी और लोग उमड़ते चले आ रहे थे। वह अनुशासन-हीन स्नेह का प्रदर्शन ही था। सव हम लोगों तक पहुँचने के लिए एक-दूसरे को ढकेलते हुए चले आ रहे थे। और यह किसी की भी समझ मे नही आ रहा था कि इस तरह हम तक पहुँचना असम्भव है। अन्त में मैंने कह दिया कि मैं यहां से उस क्षण तक हिलूगा भी नहीं जवतक भीड़ अपने आपको संयमित नही कर लेती। भीड़ जल्दी ही मेरी वात समझ गई और उसने हमारे निकलने के लिए रास्ता छोड़ दिया। उसके वाद जुलूस निकला—परेशान कर देनेवाला जुलूस। मौलाना अब्दुल वारी के यहाँ हम लोग ठहराये गये। हमारे दल में जो हिन्दू शामिल थे, उनके लिए उन्होंने एक ब्राह्मण रसोइए का विशेष प्रवन्ध कर रखा था। पाठकों को याद होगा कि इसी जगह मौलाना जफरुल मुल्क गिरफ्तार किये गये थे। मौलाना साहव निष्कलंक चरित्र के एक सुसंस्कृत मुसलमान हैं। श्री विलोवी की हत्या भी लखनऊ से थोड़ी ही दूर पर हुई थी, इसीलिए रात की सभा में वहुत वड़ी संख्या में लोग उपस्थित हुए। व्याख्यान वहुत शान्त भाव से सुने गये। अच्छा होता, यदि मेरे पास भाषणों का सारांश देने का समय और स्थान होता। हम सबने खीरी हत्या की वात को स्पष्ट किया कि खिलाफत समिति की सतर्कता के वावजूद ऐसा किस तरह हो गया। और यह भी वताया कि इससे लोगों में अनावश्यक आतंक फैला, स्थानीय समिति पर लाञ्छन

लगा तथा इस तरह खिलाफत उद्देश्य के को हानि पहुँची। मुझे इस बात का दु:ख है कि सभा मे नेताओ मे से कोई नही आया था इसलिए सबका ध्यान इस बात की ओर गया। वे समझते हैं कि असहयोग आन्दोलन हानिकर है। यह तो समय ही बतायेगा। हमे उनके प्रति निराश नही होना चाहिए। वे राष्ट्र के हैं और जिस दिन उनके मन का अविश्वास दूर हो जायगा वे भी देश के साथ कदम मिलाकर बढेंगे।
—अंग्रेजी। यं० इं०, २७।१०।१९२०।]

७. अयोध्या में

अयोध्या मे जहा रामचन्द्र जी का जन्म हुआ, कहा जाता है उसी स्थान पर छोटा-सा मन्दिर है। जब मैं अयोध्या पहुचा तो वहा मुझे ले जाया गया। श्रद्धालु असहयोगियो ने मुझे सुझाव दिया कि मैं पुजारी से विनती करूँ—कि वह सीताराम की मूर्तिओ के लिए पवित्र खादी का उपयोग करे। मैंने विनती तो की लेकिन उस पर अमल शायद ही हुआ हो। जब दर्शन करने गया तब मैंने मूर्तियो को भौंडे मलमल और जरी के वस्त्रो मे पाया। यदि मुझमे तुलसीदासजी जितनी गाढ भक्ति की सामर्थ्य होती तो मैं भी उस समय तुलसीदासजी की ही तरह हठ पकड़ लेता। कृष्ण-मन्दिर मे तुलसीदासजी ने प्रतिज्ञा की थी कि जबतक धनुष-बाण लेकर कृष्ण राम रूप के मे प्रकट नही होते तबतक तुलसी का मस्तक नही झुकेगा। श्रद्धालु लेखको का कहना है कि जब गोस्वामीजी ने ऐसी प्रतिज्ञा की तब चारो ओर उनकी आँखो के सामने रामचन्द्रजी की मूर्ति खड़ी हो गई और तुलसी-दास जी का मस्तक सहज ही नत हो गया। अनेक बार मेरा ऐसा हठ करने का मन हो आता है कि हमारे ठाकुरजी को जब पुरानी खादी पहनाकर स्वदेशी बनायेंगे तभी हम अपना माथा झुकावेंगे। लेकिन पहले मुझे इतना तप करना होगा; तुलसीदास की की अपूर्व भक्ति को प्राप्त करना होगा। इस बीच जैसे मुसलमान भाई पवित्र कार्यो के लिए खादी का उपयोग करने लगे है वैसे ही मैं चाहता हू कि हिन्दुओ के मन्दिरो मे और अन्य पवित्र कार्यो मे खादी इस्तेमाल होने लगे। सृष्टि का नियम है कि एक महत्वपूर्ण कार्य के सुसम्पन्न होने से अन्य [illegible] सारे स्वयमेव सम्पन्न होते चले जाते है। हिन्दुस्तान मे [illegible] होता है, यद्यपि एक समय ऐसी बात न थी। [illegible] जब हम विदेशी [illegible] बहिष्कार कर देंगे तब हमे स्वराज्य मिल गया होगा, तब हमारी [illegible] जायगी कि कोई हमारी स्वतन्त्रता के आड़े आ ही नहीं सकेगा।
—गुजराती। न० जी०, २०।३।१९२१।]

८. असहयोग स्थगित कर दो !

श्री सैयद रजा अली[1] ने एक खुला पत्र लिख कर मुझे सलाह दी है कि मैं लार्ड रीडिंग को शान्त वातावरण मे परिस्थिति का अध्ययन करने का मौका देने के लिए असहयोग स्थगित कर दूं। पहली बात तो यह है कि मुझे वातावरण में ऐसा कुछ दिखाई नही देता जो परिस्थिति के अध्ययन में बाधा पहुंचाये। दूसरे जो कुछ भी अशान्ति है वह या तो अधिकारियों-द्वारा पैदा की हुई है या फिर स्थिति पर जिस बुरे ढंग से काबू पाने की कोशिश की गई उसके कारण रक्तपात हुआ है। मध्यप्रान्त में शराब का व्यापार ऐसी जनता पर थोपा जा रहा है कि जिसमें उसके विरुद्ध रोष व्याप्त है। मैने अखबार नही पढ़े और इसलिए रायबरेली के सम्बन्ध में कह सकने योग्य मेरे पास पर्याप्त तथ्य नही है। जो भी हो, श्री रजाअली को ऐसा अनुरोध स्थायी अधिकारियों से करना चाहिए जो लोगों को उभाड़ रहे हैं और देश में आतंक फैला रहे है। तीसरे, यह बात चाहने पर भी किसी एक आदमी के बस की नही है कि वह एक ऐसे आन्दोलन को स्थगित कर दे जो राष्ट्र-द्वारा अपनी प्रतिनिधि-संस्थाओं के माध्यम से अपनाया गया है। चौथे आखिर श्री रजा अली का असहयोग के स्थगन से अभिप्राय क्या है? क्या उपाधिधारी लोग कुछ समय के लिए अपनी उपाधियां पुनः धारण कर लें? या वकील फिर से वकालत करना शुरू कर दें? क्या लड़के सरकारी स्कूलों में लौट जायं? कातने-वाले अपने चर्खे एक कोने में रख दें, बढ़ई नये चर्खे बनाना बन्द कर दें? बात चाहे कितनी ही बेतुकी लगे, इतना स्पष्ट है कि श्री रजा अली असहयोग की मर्यादाओं को नही समझते हैं। वह नही समझते कि असहयोग एक सद्‌गुण के समान है जिसका आचरण इच्छा होते ही जब चाहे बन्द नही किया जा सकता। यदि अंग्रेज, जो अपने भरण-पोषण के लिए भारत पर आश्रित हैं, सचमुच भारत का भला चाहते है, हमारा नमक अदा करना चाहते है तो उन्हे शराब के धन्धे के खतम हो जाने तथा विदेशी कपड़े के धन्धे और इसके फलस्वरूप लंकाशायर के कपड़े के धन्धे के भी पूर्ण विनाश को सहन कर लेना चाहिए। खिलाफत पूरी तरह सुरक्षित हो जाय और पंजाब के घाव भर जायं, इसके बाद भी शराब की आमदनी पुनर्जीवित नही की जासकेगी, न विदेशी कपड़ो का इस्तेमाल फिर से शुरू किया जायगा। आश्चर्य की बात तो यह है कि देश में ऐसे बुद्धिमान और शिक्षित सार्व-जनिक कार्यकर्ता हैं जो इतना भी नही समझ पाते कि यह सरकार जबतक अपने

---

१. इलाहाबाद के एक प्रतिष्ठित वकील।

मूलभूत पापो को धो नही डालती तबतक उसे बराबर एक अन्याय के बाद दूसरा अन्याय करना ही होगा। इसमे सन्देह नही कि वह चाहे तो उक्त दो अन्यायो का निवारण किये बिना भी, दो बडे-बडे गतिशील आन्दोलनो मे जनता के साथ सहयोग कर सकती है अर्थात् शराब की बुरी लत के खिलाफ युद्ध मे तथा चर्खे की उस प्राचीन प्रतिष्ठा और पवित्रता की पुन स्थापना मे। इसमे उन दोनो अन्यायो से उत्पन्न कटुता हल्की पड जायगी। किन्तु जनता के साथ सरकार के ऐसे सहयोग से जनता की उन दोनो अन्यायो का निश्चित रूप से निवारण करा लेने की शक्ति बढ जायगी और इसीलिए सरकार शान्ति के साथ मद्य-निषेध अभियान की तथा चर्खे के माध्यम मे स्वदेशी वस्त्र-निर्माण की वृद्धि के फल-स्वरूप विदेशी कपडे के बहिष्कार की प्रगति नही होने देगी।

—अंग्रेजी। य० इं०, १३।४।१९२१।]

९. सवालों का सिलसिला[1]

पहले सवाल का जवाब मैं एक अलग लेख मे दे रहा हू।[2] दूसरे सवाल के बारे मे खयाल ऐसा है कि ईश्वर का भय माननेवाले लोग ही सच्चे असहयोगी बन सकते हैं। लेकिन असहयोग का कार्यक्रम अपनाने के लिए किसी को अपने धर्म या विश्वास का उल्लेख करना जरूरी नही है। जिसे अहिंसा मे विश्वास हो और जो असहयोग के कार्य को मजूर करे ऐसा हर आदमी अवश्य ही असहयोगी बन सकता है। तीसरे सवाल के बारे मे मैं ऐसा समझता हू कि पत्र-लेखक ने परिस्थिति की वास्तविकता को समझने मे भूल की है। देश ने पूर्ण असहयोग शुरू नही किया, इसका कारण विश्वास या इच्छा की कमी न होकर योग्यता अथवा तैयारी का न होना है। इसीलिए तो अभी तक सरकारी कर्मचारियो से नौकरिया छोडने की बात नही कही गई है। सरकारी कर्मचारी अब भी चाहे नौकरी छोडने के लिए स्वतन्त्र है। लेकिन उनसे सरकारी नौकरी छोडने की बात तभी कही जा सकती है जब हिंसा के न भडक सकने की पूरी और समुचित व्यवस्था कर दी गई हो।

---

१. बरेली के अहमदहुसेन ने १५ अप्रैल को गांधीजी से चार प्रश्न लिख कर पूछे थे। देखिए परिशिष्ट, 'यंग इंडिया' के सम्पादक को।

२. गांधीजी ने 'अफगानी हमले का हौआ' शीर्षक पर लेख य० इं० मे लिखा था।

अतएव जबतक देश नौकरी छोड़नेवाले प्रत्येक व्यक्ति को कोई दूसरा काम मुहैया कर देने की स्थिति में नहीं हो जाता तबतक नौकरी छोड़ने की बात नहीं उठाई जा सकती। अब तक हमारा ऐसा न करना किसी मसलहत के अन्तर्गत न माना जाय जैसा कि आमतौर पर माना जा रहा है। शुद्धतम धर्मशीलता से बढ़ कर कोई मसलहत हो ही नहीं सकती। ऐसी बहुत सी बातें हैं जो विधि-सम्मत तो हैं किन्तु उपयुक्त बिलकुल नहीं होतीं। असहयोग का आदर्श ही हमारी विधि है और वह देश के सामने है।

चौथा सवाल स्वराज्य के अर्थ के बारे में है। स्वराज्य की मेरी सीधी-सादी व्याख्या यह है कि भारत अपना काम-काज बिना किसी बाहरी दखल के कर सके। उसे अपने सेना-सम्बन्धी व्यय और राजस्व-प्राप्ति का तरीका अपने ढंग से इस्तेमाल करने की आजादी होनी चाहिए। उसमें अपने सारे सैनिकों को, वे कहीं भी क्यों न हों, वापस बुलाने की क्षमता होनी चाहिए। यह काम कैसे होगा या कैसे किया जा सकता है, यह सब देश पर, देश की जनता पर निर्भर है। जनता-द्वारा स्वतन्त्रतापूर्वक चुने हुए भारत के प्रतिनिधियों को ही इसके अमल का तरीका तय करना चाहिए। अगर एक साल के अन्दर स्वराज्य कायम नहीं किया जा सका और मेरा बस चला तो स्कूल छोड़ने वाला एक भी लड़का लौट कर मदरसे वापस नहीं जायगा और न वकालत छोड़नेवाला कोई भी वकील फिर से अदालत में लौटेगा।

—अंग्रेजी। यं० इं०, ४।५।१९२१।]

१०. रिसता हुआ घाव

संयुक्त प्रान्त के उदार संघ (लिबरल लीग) के शिष्टमण्डल को उत्तर देते हुए परमश्रेष्ठ वाइसराय ने जो भाषण दिया वह उस भाषण की अपेक्षा कहीं अधिक सतर्कतापूर्ण था जो उन्होंने अहमदिया शिष्ट मण्डल को उत्तर देते हुए दिया था। फिर भी परमश्रेष्ठ को यह याद दिलाना आवश्यक है कि उन्होंने इस भाषण में भारत से असम्भव कार्य करने को कहा है। उदारदलीय तथा राष्ट्रवादी, सहयोगी तथा असहयोगी, हिन्दू, मुसलमान, सिख, जैन, पारसी, ईसाई, यहूदी सभी, जो अपने को भारतीय कहते हैं अपने तरीके से जोर देकर कहते है कि पंजाब तथा खिलाफत के प्रति किये गये अत्याचारों का प्रतिकार होना चाहिए। परमश्रेष्ठ अब भी खिलाफत के दावे पर जोर दे रहे हैं। यह आशाजनक बात है। इस सम्बन्ध

मे वह यह नही कहते कि भारत के मुसलमान और हिन्दू तथा अन्य देशवासी खिलाफत के प्रति किये गये अत्याचारो को भूल जायें। किन्तु वह हमसे यह साफ साफ कहते हैं कि हम पजाब के प्रति किये गये अत्याचारो को भूल जायें। यह काम उतना ही असम्भव है जितना कि किसी वैद्य के कहने मात्र से रोगी का अपने कष्ट-दायक रोग को भूल जाना। केवल सज्ञाहीन करनेवाली औषध के उपयोग से वह कुछ देर के लिए कष्ट भूल सकता है। पजाब के प्रति किये गये अत्याचार तो ऐसे है जैसे कि रिसता हुआ कोई घाव। जिस प्रकार रिसता हुआ घाव सारा जहर बाहर निकाल दिये जाने तक अच्छा नही हो सकता, उसी प्रकार पजाब के प्रति किये गये अत्याचार बेईमान तथा पश्चात्तापहीन सरकारी अधिकारियो की पेंशनो तथा नौकरियो के समाप्त कर दिये जाने के पहले न तो भूले जा सकते है, न उन्हे क्षमा ही किया जा सकता है। क्या लार्ड रीडिंग का अनुमान है कि श्री थामसन को उच्चतर पद पर प्रतिष्ठित करने मे भारत की सहमति है? वह हमसे कहते हैं कि हम उद्देश्य के प्रति ईमानदारी तथा सचाई के लिए उन्हे तथा उनकी सरकार को श्रेय दें। वह चाहे तो श्रेय दे लें किन्तु श्रेय देते समय यह विचार मन मे आता है कि महत्त्वपूर्ण मामलो पर सरकार तथा जनता के दृष्टिकोण मे मौलिक भेद है। जबतक लार्ड रीडिंग और उनकी सरकार भारत से यह कहती है कि वह पेंशन तथा नौकरी की सूचियो मे उन अधिकारियो के नाम बहाल रखने पर सहमत हो जाय जो भारतीय दृष्टिकोण से अपने उत्तरदायित्व के प्रति अयोग्य सिद्ध हुए हैं तबतक सरकार और जनता मे एकमत होने का प्रश्न ही नही उठता। यदि हमे लेशमात्र भी उत्तरदायित्व दिया गया होता तो निश्चित रूप से हमे उन लोगो को बर्खास्त करने का अधिकार मिल जाता जिन्होने हम पर नृशस अत्याचार किये हैं। मेरे लेखे तो इन दोनो अत्याचारो का प्रतिकार करना उत्तरदायित्व की सबसे बडी कसौटी है। खिलाफत के प्रति जो अन्याय हुआ है उसे स्वीकार किया गया है। पजाब पर किये गये अत्याचार खून के अक्षरो मे लिखे गये हैं। हम मानते हैं कि हमने अमृतसर, कसूर, जलियावाला तथा गुजरावाला मे गलतियां की। किन्तु इसके लिए हमे भारी कीमत चुकाने के लिए मजबूर किया गया। हमारा अपमान किया गया, हमे ठोकरें मारी गई। अपराधी और निर्दोष सभी [illegible] गये। हमने स्वय कई स्थानो पर स्पष्ट एव गुप्त रूप से अपना अपराध स्वीकार किया है। हम यह नही चाहते कि अन्याय करनेवाले अधिकारियो को [illegible] किया जाय। हम तो केवल यह मांग करते है कि वे हम पर [illegible] न लादे जाय। एक अंग्रेज अधिकारी ने एक बार मुझसे स्पष्ट कहा कि [illegible] ओडायर या जनरल डायर का नाम पेंशन की सूची से [illegible]

देने के बजाय मैं नौकरी छोड़ देना अधिक अच्छा समझूंगा। मैंने उनसे कहा कि मैं आपके इस प्रकार के रुख से सहानुभूति रख सकता हूं। किन्तु आप भी मुझसे इस विचार से सहमत होने की आशा न रखें और उसने ऐसी आशा नहीं की। हजारों न सही, सैकड़ों अंग्रेज पुरुष तथा महिलाएं माइकेल ओडायर तथा जनरल डायर को साम्राज्योद्धारक और अपने गौरव का संरक्षक समझते हैं। यह भी सम्भव है कि यदि मैं भी, चाहे जिस मूल्य पर भारत को अधीन रखने के लिए कृतसंकल्प अंग्रेजों में से एक होता तो मैं भी शायद उन्हीं के जैसा महसूस करता। किन्तु मेरा विचार है, कि जबतक इस प्रकार का रुख बना रहेगा तबतक सरकार और जनता के बीच सहयोग नही हो सकता। हमारे द्वारा असहयोग होने पर अंग्रेज इस तथ्य को समझ जायेंगे कि देश के प्रशासन में उनके साथ सहयोग करने का अर्थ हम लोग उनके इस रुख के साथ सहमति प्रकट करना मानते हैं। यह मित्रों और साथियों-जैसा रुख नही है और तलवार के बल पर उनका भारत में बने रहना अब सम्भव नही है। वे यहां केवल हमारी सद्भावना के बल पर रह सकते हैं। यदि हमे अब कोई चीज जोड़े रह सकती है तो वह केवल सद्भावना की कड़ी ही हो सकती है। मुंह से समानता का दम भरना और वास्तव में अलगाव की खाइयां खोदकर अपने बड़प्पन को अक्षुण्ण रखना तो हमारा मज़ाक उड़ाना ही है। लार्ड रीडिंग संसार के बुद्धिमान व्यक्तियों में से हैं इसलिए मुझे आशा है वह इस बात को जल्दी ही समझ जायँगे कि दो विरुद्ध रुखों में संगति बनाये रखना सम्भव नही है। यदि कोई बीच का मार्ग होता तो असहयोगियों ने उसे कभी का अपना लिया होता। यह विशाल जन-समुदाय की घृणा या दुर्भावना का प्रश्न नहीं है। मैं उन्हें आमन्त्रित करता हूं कि वह गहरे पैठकर देखें तो उन्हें मालूम हो जायगा कि हम कमजोर होने पर भी गोरी जाति की श्रेष्ठता को अब किसी प्रकार भी स्वीकार करने के लिए तैयार नही हैं। जबानी जमाखर्च का चाहे कितना ही अच्छा मतलब क्यों न हो और चाहे कितनी ही सचाई से वह क्यों न किया गया हो, उससे कोई उपयोगी उद्देश्य सिद्ध नहीं हो सकता। हम भारत के लोग इतने मूर्तिपूजक तो है कि जिस समानता की बात कही जाती है हमें उसका साक्षात् प्रमाण चाहिए। गोरे सैनिकों का अस्तित्व अंग्रेज जाति की रक्षा के लिए आवश्यक हो सकता है किन्तु क्या वे नही जानते कि भारत की सीमा की रक्षा के लिए उनकी बिल्कुल आवश्यकता नही है? अंग्रेजों को सर्वथा उन्हीं शर्तो पर यहां रहने के लिए तैयार होना चाहिए जिन शर्तो पर पारसी रहते हैं। पारसी संख्या मे मुट्ठी भर होने पर भी एक हजार वर्ष से प्रतिष्ठित मित्र एवं साझीदारों की हैसियत से यहां रह रहे हैं। उन्हें विशेष सुरक्षा की आवश्यकता नही पड़ी। क्रुद्ध हिन्दुओं

तथा मुसलमानो से होनेवाले खतरे के समय उन्हे किसी किले की शरण लेने के लिए नही जाना पडा। क्या मूसा और ईसा के अनुयायियो के पास पारसियो-जैसा विश्वास नही है? वास्तविक तथ्य तो यह है कि अंग्रेज भारत मे लाखो हिन्दुओ और मुसलमानो के साथ सद्भावना के साथ रहने के लिए तैयार नही है। हिन्दू और मुसलमान भी अंग्रेजो को इस डर से कोई विशेषाधिकार देने के लिए तैयार नही हो सकते कि आदमी की बुद्धि अधिक-से-अधिक खतरनाक जिन हथियारो की खोज कर सकती है वैसे हथियार अंग्रेजो के पास हैं। हिन्दुओ-मुसलमानो के पास इसके सिवा और कोई चारा नही कि वे उनका भय छोडकर अर्थात् अप्रतिरोध के जरिए अधिक-से-अधिक प्रयत्न करके उन सब शस्त्रो के प्रभाव को बेकार कर दें। हो सकता है कि यह बात उद्दण्डतापूर्ण या काल्पनिक लगे। किन्तु मुझे आशा है कि लार्ड रीडिंग को शीघ्र ही किसी-न-किसी प्रकार यह मालूम हो जायगा कि मैंने भारत के मन की बात सही तौर पर कही है। और जितनी जल्दी इस मौलिक सत्य का ज्ञान होगा उतनी ही जल्दी अंग्रेजो और भारतीयो के बीच वास्तविक तथा हार्दिक सहयोग होगा। मैं ऐसे सहयोग की लालसा रखता हूं और यही लालसा मुझे किसी प्रकार की क्षमा-याचना स्वीकार करने से रोकती है, फिर चाहे वह सहयोग के लिए कितनी ही प्रलोभनकारी क्यो न हो। असहयोग का जन्म अज्ञान तथा दुर्भावना से नही हुआ, बल्कि इसका जन्म ज्ञान और प्रेम मे होता है और इसलिए सहयोग की ओर बढने के लिए यही प्रभावशाली कदम है।

—अंग्रेजी। य० इ०, १३।७।१९२१। सं० गां० वा०, खण्ड २०, पृ० ३७७-७९।]

११. सम्पादक के प्रश्नों के उत्तर

८-८-२१

'इण्डियन डेली टेलीग्राफ' (लखनऊ) के सम्पादक श्री मैकेंजी ने श्री गांधी को उत्तर देने के लिए पाँच प्रश्न भेजे हैं—

(१) आपके विचारो और लार्ड रीडिंग के विचारो मे जो अन्तर है वह समय बीतने के साथ-साथ बढेगा या कम होगा, इस सम्बन्ध मे आपका क्या ख्याल है?

(२) आप स्वराज्य की स्थापना कब तक करने की आशा करते हैं?

(३) क्या आप समझते हैं कि प्रधान मन्त्री का कार्य पहिले की अपेक्षा अब अधिक राक्षसी या दुष्टतापूर्ण है।

(४) आप अपने देश में उत्पन्न और शिक्षित मन्त्रियों को, जो सुधारों के अन्तर्गत बनी परिषदों के द्वारा भारत में पूर्ण उत्तरदायी शासन की स्थापना का प्रयत्न कर रहे हैं, प्रोत्साहन क्यों नहीं देते ?

(५) क्या आप जीवन में विनोद-वृत्ति को आवश्यक समझते है ?

गांधी जी ने निम्नलिखित उत्तर दिये है :

(१) यह अन्तर जितना कम होना सम्भव है उतना ही बढ़ना भी सम्भव है।

(२) मै खुद अपने ऊपर यथासम्भव शीघ्र स्वराज्य की स्थापना का यत्न कर रहा हूं। मैं भारत में स्वराज्य की स्थापना नहीं कर सकता। किन्तु मैं निश्चय ही उससे इसी वर्ष मे स्वराज्य की स्थापना करने की अपेक्षा रखता हूं।

(३) मुझे स्वीकार करना चाहिए कि प्रधान मन्त्री मेरे लिए एक समस्या हैं।

(४) ये मन्त्री जबतक इस प्रणाली से, जो इनका अनुचित उपयोग भारत को पतित बनाने के लिए कर रही है, सर्वथा मुक्त नहीं हो सकते तबतक मुझे उनको प्रोत्साहन देने से आदरपूर्वक इन्कार ही करना चाहिए। (संयुक्तप्रान्त में जो कुछ हो रहा है वह मेरे उस कथन की पुष्टि करता है।)

(५) यदि मुझमे विनोदवृत्ति न होती तो मैंने कभी की आत्महत्या कर ली होती।

—अंग्रेजी। ८।८।१९२१। 'लीडर', १०।८।१९२१ तथा यं० इं० १८।८।१९२१।]

- **यदि मुझमें विनोद-वृत्ति न होती तो मैंने कभी की आत्महत्या कर ली होती।**

१२. लखनऊ में पाप-स्थान

एक अंग्रेज मित्र ने लखनऊ से लिखा है :

"मैं यह पत्र आपसे यह अनुरोध करते हुए लिख रहा हूं कि आप यहां से जाने के पहिले लखनऊ के वेश्यागृहों के सम्बन्ध में यहां के किसी अधिकारी को, जो आपके मत का समर्थक हो, कुछ लिख दें। आज सुबह मैं अमीनाबाद में फौजी पुलिस के सिपाही से बातचीत कर रहा था। उससे मालूम होता है कि उस तरफ की बस्ती में ऐसे कोई पचास मुकाम हैं, जहां युरोपीय और एंग्लो-इण्डियन सिपाही अक्सर जाया करते हैं। (इनमें से कुछ लोग फौजी अदालतों में पेश भी किये जा चुके हैं,

क्योंकि उस बस्ती में फौजियो का जाना मना है)। उसने हिन्दुस्तानियों के विषय में कुछ नहीं कहा, परन्तु मुझे बाद में किसी ने बताया कि वे भी उन स्त्रियों के यहां जाते हैं। मनुष्य के इस अधःपतन और असयम के सम्बन्ध में आप यदि कुछ शब्द लिख देंगे तो वह इस बुराई को दूर करने में अन्य सब बातो से अधिक कारगर होगा। मैं प्रतिज्ञा करता हूं कि इस काम मे जितनी सहायता मुझसे हो सकती है मैं करूंगा।"

मैं चाहता हू कि मैं भी इन अग्रेज मित्र की तरह विश्वास कर सकता कि मेरे शब्दो मे वह प्रभाव है, जो उन्होने वताया है। इन पक्तियो को लिखते समय वार-बार मेरी आखो के सामने उन प्यारी वहिनो का चित्र आता है जो मुझसे रात के समय कोकोनाडा मे मिली थी। जब मुझे उनकी लज्जाजनक स्थिति का हाल मालूम हुआ तब वे तो मुझे और भी प्यारी लगने लगी। वे केवल सकेत मे मुझे अपने जीवन की दशा बता सकी। जो स्त्री उनकी तरफ से मुझसे बात कर रही थी उसकी आखो मे लज्जा और दु ख अकित था। मैं उन्हे दोषी कहने के लिए तैयार न हो सका। इस मुलाकात के बाद मैंने "व्यक्तिगत चरित्र-शुद्धि" की आवश्यकता पर ही भाषण दिया। इसलिए आज मेरे हृदय मे लखनऊ की इन पतित वहिनो के प्रति सहानुभूति होती है। वे ऐसा लज्जाजनक जीवन विताने के लिए मजबूर की गई हैं। मुझे यकीन हो गया है कि वे अपनी खुशी से ऐसा जीवन स्वीकार नही करती। यह तो मनुष्य की पशुवृत्ति है जिसने इस घृणित कुकर्म को एक "धन कमाने का धन्धा" बना दिया है। लखनऊ अपनी आराम-तलवी के लिए मशहूर है। परन्तु वह एक मुसलमान औलिया का भी स्थान है। इस्लाम मे जो कुछ भी उत्कृष्ट व महान् है वह सब लखनऊ मे है। हिन्दुओ के लिए तो लखनऊ उस प्रान्त का एक सदर-मुकाम है जो सती सीता और राम की पुण्य-भूमि थी। वह हिन्दुओ की पवित्रता, उदारता, शौर्य और सत्यपरायणता के श्रेष्ठ युग की याद दिलाता है। असहयोग आत्मशुद्धि है, और मैं सभी असहयोगियो तथा अन्य लोगो से भी कहता हू कि वे लखनऊ की इस नैतिक व्याधि को दूर करने का उपाय करें। मैं आशा करता हू कि लखनऊ की शोहरत का हिमायती कोई भी व्यक्ति मुझसे यह नही कहेगा कि लखनऊ भारत के दूसरे शहरो से तो बुरा नही है। लखनऊ का जिक्र तो यहा उदाहरण के तौर पर सयोग से आ गया है। हम तो सारे भारत मे स्त्री जाति की सुरक्षा और पवित्रता के लिए उत्तरदायी है। लखनऊ इसमे अगुआ क्यो न हो?

—अंग्रेजी। य० इं०, १८।८।१९२१। स० गा० वा० खण्ड २०, पृष्ठ ५४१।]

• असहयोग आत्मशुद्धि है।

१३. विचार की उलझन

बनारस-वासी का पत्र और उसपर टिप्पणी

सम्पादक,
'यंग इंडिया'

प्रिय महोदय,

घरना देने की उपयोगिता पर मैंने आपकी दलीलें पढ़ी। बंगाल के असहयोगी विद्यार्थी जब कानून के परीक्षार्थियों के परीक्षा में बैठने से रोकने के उद्देश्य से कलकत्ता विश्वविद्यालय, कालेज तथा सिनेट भवन के फाटकों पर लेट गये थे, उस समय उनके मन में यही दलीलें काम कर रही थी। उन्होंने हाथ जोड़कर अपने परीक्षार्थी भाइयों से सोने के घड़े में रक्खे इस विष का पान न करने का अनुरोध किया था। घरना देने के इस नये तरीके से कितनी सफलता मिली, यह आपको मालूम ही है। परीक्षा-भवन बिल्कुल वीरान हो गये थे और बाद में फिर से परीक्षा लेनी पड़ी थी। लेकिन तब आपने ही घरना देने से असहमति प्रकट की थी और फलतः सारा प्रयत्न छोड़ देना पड़ा था। इतने शानदार तरीके से जो सफलता प्राप्त हुई थी, सब मिट्टी में मिल गई और आज बंगाल इस बात के लिए पछताता है कि उसके नौजवानों के भाल पर विफलता की कुख्याति का टीका लगा हुआ है। जब धरना देनेवाले फाटक के सामने लेट गये थे तब उनके पीछे इस दलील का बल था कि किसी बीमार आदमी के न चाहने पर भी हमें उसका इलाज करना ही है। आधुनिक शिक्षा के बारे में आपकी सलाह को सचमुच समझकर तथा अपने कालेज छोड़ने का साहस दिखाकर उन्होंने अपने आपको कृतार्थ माना। लेकिन तब भाइयों की हैसियत से अपने भाइयों को परीक्षा मे बैठने से मना करना भी उन्हें अपना अनिवार्य कर्त्तव्य जान पड़ा। कोई आदमी गलत काम कर रहा हो तो जमीन पर लेटकर उसका रास्ता रोकना, उसे समझाने-बुझाने का पूर्व के देशों मे प्रचलित एक मान्य तरीका है, इसमें तो कोई सन्देह नही। उन्होने जो कुछ किया, वह सच्ची विनय के सिवा और क्या था ? अगर सचमुच मेरी भावना ऐसी हो कि शराबखोरी एक भयंकर बुराई है और हर व्यक्ति को इसके पंजे से बचाना है तो अगर मैं शराबखाने के सामने लेट जाऊं और पीने की इच्छा लेकर वहां आनेवाले से कहू कि आप मेरे शरीर को कुचलकर ही शराब पीने जा सकते हैं तो क्या इसका मतलब बल-प्रयोग होगा ? यह तो उसके हृदय को जगाने की कोशिश ही है। और नैतिक रूप से समझाने-बुझाने का मतलब मैं इस तरह की भावना को जगाना ही समझता हूं। सिनेट भवन के सामने लेट कर इन घरना देनेवालों ने परीक्षा-

थियो के हृदय की भावना को जगाने की कोशिश की थी। और निश्चय ही वह उन्हे समझाने-बुझाने का एक तरीका था। चूकि वगाल के ये धरना देनेवाले किसी प्रकार के शरीर-वल का उपयोग नही कर रहे थे, वल्कि परीक्षार्थियो के हृदय की भावना को जगाने की ही कोशिश कर रहे थे, इसलिए अगर आप यह वताने की कृपा करें कि आपने उनके तरीके से असहमति क्यो प्रकट की थी तो मुझे वटी प्रसन्नता होगी।

भवदीय,
एस० एन० राय

वनारस
१२ जुलाई, १६३१

उपर्युक्त पत्र लिखनेवाले सज्जन ने विना किसी कारण से यह मान लिया है कि उन्होंने जिस ढग से धरना देने की वात लिखी है, शराव की दूकानो पर उस ढग से धरना देने का समर्थन मैं करूगा ही। अगर धरना देनेवाले रास्ता रोकने का यह अशोभन कार्य आग्रहपूर्वक करते ही रहते तो देश मे इसकी इतनी प्रतिकूल प्रतिक्रिया होती कि असहयोग आन्दोलन पूरी तरह वदनाम हो जाता। इसके अतिरिक्त शिक्षा की तुलना शरावखोरी से करना दूर की कौडी भिडाना है। शिक्षा के सम्वन्ध मे वात दो विचारो के सघर्ष की है, और असहयोग इस पीढी के लिए एक नया विचार है। लेकिन मद्यपान के सम्वन्ध मे सघर्ष सयम और एक ऐसी वुराई के वीच है जिसे सभी वुराई मानते हैं। पहले उदाहरण मे जिस नौजवान को कालेज मे जाने से रोका जाता है, वह सरकारी कालेज मे जाने को एक अच्छा कार्य मानता है, लेकिन शरावखोरी को एक वुरी लत ही मानता है। पढे-लिखे नौजवान अखवार पढते हैं और उन्हें पक्ष-विपक्ष की सारी दलीलें ज्ञात रहती हैं। लेकिन शरावखाने मे जानेवाले लोग कुछ नही पढते और चूकि सभा आदि मे भी नही जाते, इसलिए उन्हें वैसी कोई वात सुनने को भी नही मिलती इसलिए कालेजो और स्कूलो पर धरना देना न केवल अनावश्यक था वल्कि जिस तरीके से धरना दिया गया वह एक तरह की हिंसा थी जिसका किसी भी हालत मे कोई औचित्य नही ठहराया जा सकता। और असहयोगियो के लिए वैसा धरना अपनी प्रतिज्ञा भग करना था। इसलिए अगर मेरी तीव्र आलोचना के कारण धरना उठा दिया गया तो मुझे इस वात के लिए खुशी है।

--अंग्रेजी। य० इं०, १५।९।१९२१।]

१४. 'इण्डियन डेली टेलीग्राफ' (लखनऊ) के सम्पादक के प्रश्नों के उत्तर

(२१ सितम्बर, १९२१)[1]

"इण्डियन डेली टेलीग्राफ" के सम्पादक श्री जे० एम० मैकेंजी द्वारा पूछेगये कुछ और प्रश्नों के उत्तर श्री गांधी ने दिये है।

प्रश्न १:—भारत अपनी एकही मांग स्वीकार कराने के खयाल से साम्राज्यीय सम्मेलन में शामिल हुआ था, लेकिन दक्षिण अफ्रीकी गणराज्य ने उसे भी अस्वीकार कर दिया। क्या आप इसके लिए गणराज्य को प्रतारणा का पात्र समझते हैं? क्या यह नहीं हो सकता कि जिस देश में आपने अपने प्रारम्भिक दिनों में सफलता पाई है, उस देश में एक बार फिर जायें ताकि सारा भारत आश्वस्त होकर बैठ सके?

उत्तर: भारत में आज जो सवाल मौजूद है, वह दक्षिण अफ्रीकी सवाल का ही बृहत्तर रूप है। अगर मैं यहां सफल हो जाता हूं तो वहां का सवाल तो अपनेआप हल हो जायगा।

प्रश्न २: स्वयं भी आप अब तक आत्म-शासन की अवस्था प्राप्त नहीं कर पाये हैं, इसलिए ऐसे घोर पतनकारी वातावरण में इधर से उधर ठोकर खानेवाले हम शेष लोगों की दयनीय स्थिति का तो आप सहज ही अनुमान लगा सकते हैं?

स्वयं मुझमें भी बहुत-सी कमियां है, इसलिए मैं आदमी की कमियों को बेशक महसूस करता हूं, और अहिंसा मे मेरे विश्वास का कारण भी यही है।

प्रश्न ३: यदि आप अपने प्यारे देश के लोगों को गरीबी और फकीरी की तकलीफ़देह जिन्दगी के अलावा और सब कुछ छोड़ देने को मजबूर कर दें तो क्या आपको ऐसा नहीं लगता कि उनका भी वही हाल होगा जो रूस की जनता का हुआ?

रूस की जनता का हाल क्या हुआ, मैं नही जानता। लेकिन भारत को मैं अच्छी तरह जानता हूं। आजतक हम लोग मजबूरन गरीबी में जीते रहे, लेकिन अब गरीबी और फकीरी की जिन्दगी को हम धीरे-धीरे अपनी खुशी से अपनाते जा रहे है।...अपने सिद्धान्त पर मैं स्वयं आचरण कर रहा हूं, इसलिए मेरा अनुमान गलत नही हो सकता।

प्रश्न ४: निराशा के गर्त में तो वह भी गिरा जो 'दुराग्रही' था और वह

---

१. यह प्रश्नोत्तर एसोसिएटेड प्रेस द्वारा उसीदिन लखनऊ से जारी किया गया था।

भी जो समझाने-बुझाने से बात मान लेनेवाला था। इसलिए क्या आप सोचते हैं कि 'रुकने को तैयार रहनेवाले' के तरीको के समर्थन मे अथवा 'दोनो ओर रुख किये रहनेवाले' के भी तरीको के पक्ष मे कुछ कहा जा सकता है? या कि आप सारा बोझ लेकर ही "दिव्य नगर के द्वार" तक पहुंचने को कृतसकल्प हैं?

आपने मुझे दो बुराइयो के ही बीच चुनाव करने को कहा है। मैं दुराग्रही और समझाने-बुझाने से मान जानेवाले को, रुकने को तैयार रहनेवाले और दोनो ओर रुख किये रहनेवाले की अपेक्षा अधिक पसन्द करता हू, लेकिन मैं समझता हू, स्वय इनमे से किसी वर्ग का नही हू। हा, मैं स्वीकार करता हू कि आपने जिन एकाकी चरित्रो का उल्लेख किया है, वैसे बहुत से लोग मेरे साथ हैं। आप अन्त मे देखेंगे कि मैं 'लाइट वेट चैम्पियन' हू। अपना सारा बोझ मैंने यात्रा के प्रारम्भ मे ही उतार कर रख दिया था।

प्रश्न ५ : अब तो आपने चन्दे से काफी पैसा इकट्ठा कर लिया है। इसलिए जिस साम्राज्ञी के भारत-प्रेम ने आपके जीवन के उष:काल मे निश्चय ही आपको बहुत ही रुचिर भावनाओ से अनुप्राणित किया होगा, उसके प्रति सम्मान प्रकट करने के खयाल से अगर आप रानी विक्टोरिया के स्मारक के लिए कुछ पैसा दे दें तो क्या आपको नहीं लगता कि आपके देशवासी यह बात बहुत पसन्द करेंगे?

मैं आपको विश्वास दिलाता हू कि आपके मन मे जिस स्मारक की बात है, स्वर्गीया महारानी के लिए मैं उससे कही अच्छा स्मारक तैयार करने मे लगा हुआ हू।

प्रश्न ६ : वर्तमान परिस्थितियो को देखते हुए, आप दक्षिण अफ्रीका की समस्या का क्या समाधान सोचते हैं?

मेरा समाधान तो यह है कि भारत जो चाहता है, वह उसे दे दिया जाय। बुनियादी दोष को दूर कीजिए, छोटे-छोटे दोष तो अपने-आप दूर हो जायेंगे।

—अंग्रेजी। हिन्दू, २२।९।१९२१।]

१५. अली-भाइयों की जीत

अली-भाई गिरफ्तार कर लिये गये, इसे मैं उनकी जीत मानता हूं। [illegible] उनकी जीत हमारी जीत है, क्योंकि मैं यह मानता हूं कि अब [illegible] के सूर्य की किरणें फूट चुकी हैं। जब बच्चा जन्म लेता है तब मां को घोर कष्ट होता है।

पौ फटने से पहले अँधेरा बढ़ जाता है। इस प्रसंग में हम "फटना" शब्द का प्रयोग करते है; उससे यही अर्थ सूचित होता है।

मै अली-भाइयों की कैद के सम्बन्ध में भी ऐसा ही मानता हूं। दूसरे बहुत से लोग भी गिरफ्तार किये गये हैं। अभी और भी अधिक लोग गिरफ्तार किये जायंगे। महत्व तो उनकी गिरफ्तारी का भी है फिर भी अली-भाइयों की गिरफ्तारी का जो महत्व है वह दूसरे लोगों की गिरफ्तारी का नही है।

अली-भाइयों ने स्वराज्य की प्राप्ति के निमित्त यथाशक्ति प्रयत्न किया है। मेरा दृढ़ विश्वास है कि उनका बलिदान पवित्र है। उन्होंने अपनी अहिंसा की प्रतिज्ञा का पूरा पालन किया है। इसका अर्थ यह नही है कि उनके भाषण में तीखापन या कड़वापन नहीं होता था, किन्तु उन्होंने अपनी हिंसा की भावना पर अंकुश रक्खा। हिंसा की भावना पर अंकुश रखने का अर्थ सच्ची बात छिपाकर लोगों को शान्त रखना नही है; यह सरकार असह्य है ऐसा ज्ञान होने पर भी अहिसक बने रहना, यह हिसा पर अंकुश रखने का सच्चा अर्थ है।

अली भाइयों ने अपना रोष प्रकट किया है। उन्होंने लोगों के सामने सरकार के काले कारनामों का नग्न चित्र खीचा सही किन्तु, इसके बावजूद लोगों को अपनी दलीलों से और अपने कार्य से अहिसक रहने की ही शिक्षा दी।

उन्होने अहिसा को समयोपयोगी मानकर अपनाया है। वह मेरे जैसे लोगों की तरह यह नही मानते कि अहिंसा सार्वकालिक धर्म है और हमे हर समय और हर प्रसंग पर अहिसक रहना चाहिए। इसके विपरीत वह मानते है कि इस समय और इस प्रसंग पर अहिसा ही उनका परम धर्म है। उन्होंने दूसरे लोगों को भी यह बात स्वीकार करने के लिए प्रेरित किया है। यदि वह चाहते तो खुद किसी का खून कर सकते थे या करा सकते थे, फिर चाहे इसमें उन्हें भी क्यों न मरना पड़ता। उन्होने मृत्यु का भय तो छोड़ ही दिया है, किन्तु व्यवहारकुशल और धर्मपरायण होने के कारण उन्होने देखा कि गुस्से मे आकर किसी को मार देना अपराध है और इस्लाम मे इसकी मनाही है। उन्होंने समझ लिया कि इस्लाम में ऐसे प्रसंगों का उल्लेख है जिनमें हिसा की जा सकती है किन्तु वर्तमान अवसर उन प्रसंगों मे नही आता और यह बात उन्होने दूसरे लोगो को अच्छी तरह समझाई।

इसीलिए मैं कहता हूं कि उन्होने अपनी अहिसा की प्रतिज्ञा का पूर्ण पालन किया है और इसके बावजूद वे वीर हैं और निर्भय है। उनकी धर्मसेवा और लोकसेवा पर कोई भी शंका नही कर सकता। जहां निर्भयता, वीरता और सेवा का संगम होता है वहां बलिदान की चरम सीमा होती है। बलिदान का परिणाम मनोवाञ्छित फल देनेवाला होता है। इस कारण मैं यह मानता हूं कि अब हमारी जीत

का, स्वराज्य पाने का, और खिलाफत एव पजाव के मामलो मे न्याय प्राप्त करने का समय आ गया है।

किन्तु इस जीत की शर्तें हैं। एक व्यक्ति के किये हुए यज्ञ का फल दूसरे व्यक्ति को तभी मिलता है जव दूसरा व्यक्ति भी उस यज्ञ को स्वीकार करता है। अली-भाइयो के यज्ञ को जव हम अपना यज्ञ वना लेंगे तभी हमारी जीत होगी। अपना बनाने का अर्थ है, जैसा उन्होंने किया वैसा हम भी करें। हम उनके साहस, उनके अभय और उनके सेवाभाव का अनुकरण करें। यदि मुसलमानो के मन मे ऐसा दुर्बल विचार आये कि वह तो जेल गये, अव खिलाफत आन्दोलन को कौन चलायेगा, तो इससे यही समझा जायगा कि वे अली-भाइयो को नही समझ सके। हिन्दू अथवा मुसलमान कायरो की तरह ऐसा सवाल नही उठायेंगे कि वह तो जेल चले गये अव स्वराज्य की गाडी को कौन खीचे। अव हमे नेताओ की, मार्गदर्शको की जरूरत कम ही रह गई है। यदि हम यह कहें कि विल्कुल नही रही है तो यह अतिशयोक्ति नही होगी। हमने मार्ग तो जान लिया है और देख लिया है। हिन्दुओ और मुसलमानो, दोनो के लिए तीन शर्तो का पालन करना अनिवार्य है। शान्ति का पालन, हिन्दुओ और मुसलमानो की एकता और स्वदेशी के कार्यक्रम का अमल। सभी धर्मों के लोगो को समान रूप से इस कर्त्तव्य का पालन करना है। हिन्दुओ को एक काम और करना है उन्हे अस्पृश्यता के मैल को धोना है।

मोपलो ने शान्ति-भग करके व्यर्थ ही आत्मनाश किया है। उन्होंने यही सिद्ध किया है कि यदि हम शान्ति नही रखेंगे तो हिन्दुओ और मुसलमानो की एकता की रक्षा नही की जा सकेगी। इसलिए सरकार हमे चाहे चिढाये तो भी हमे रोष नही करना चाहिए और अपनी स्थिरचित्तता नही छोडनी चाहिए।

जिस तरह शान्ति की रक्षा करना हमारा धर्म है उसी तरह हिन्दुओ और मुसलमानो की एकता को कायम करना हमारा धर्म है। कुछ मोपले पागल बन गये इससे सब मुसलमान तो खराब नही माने जा सकते। तीन वर्ष पहले [illegible] मे हिन्दू पागल हो गये थे, उससे सभी हिन्दू तो खराब नही माने जायगे। किन्ही दो पक्षो मे एकता होने का अर्थ ही यह है कि दोनो पक्षो मे झगडा हो जाय तो भी वे एक-दूसरे के शत्रु न बने और झगडे का निपटारा शान्तिपूर्वक करें। हम कह सकते हैं कि परिवार मे सामान्यत एकता होती है। किन्तु [illegible] नही कि परिवार के लोग आपस मे कभी लडते ही नही। [illegible] कि हम एकता कायम रखने का प्रयत्न [illegible]। किन्तु आपस मे लडने पर भी हमारे नेता [illegible]। यदि मुसलमान या मोपला नेता मोपलो के [illegible]

निन्दा न करते तो हिन्दुओं और मुसलमानों की एकता जोखिम में पड़ जाती, यह सच है। किन्तु मुझे नहीं लगता कि ऐसा एक भी मुसलमान है जिसने मोपलों के पागलपन को अच्छा वताया हो। कम-से-कम मैं तो ऐसे एक भी व्यक्ति को नहीं जानता। ऐसा हो या न हो किन्तु यह वात तो एक वालक भी समझ सकता है कि यदि हिन्दू और मुसलमान लड़ेंगे तो हमें किसी तीसरे की जरूरत पड़ेगी ही। इसलिए हिन्दुओं और मुसलमानों की एकता स्वराज्य की दूसरी जरूरी शर्त है।

इतनी ही जरूरी शर्त स्वदेशी का व्यवहार और चर्खे का प्रचार है। चर्खा हिन्दू-मुसलमान ऐक्य की, हमारी अहिंसा की, हमारे नियमपालन की, हमारी परिश्रमशीलता की, योजनाशक्ति की, हमारी व्यापारिक शक्ति की, हमारी परोपकार-वृत्ति की, निर्धनों के प्रति हमारे प्रेम की और अपने स्त्रीवर्ग की रक्षा करने की हमारी इच्छा की निशानी है। अकेले हिन्दू चर्खा चलाते हैं तो हिन्दुओं को लाभ होगा किन्तु उससे स्वराज्य नही मिलेगा। जिस समय हमें क्रोध आ रहा हो, हमारा रक्त उवल रहा हो उस समय हमें चर्खा चलाना अच्छा नहीं लगता। चर्खा अहिंसा का प्रतीक है और अपनी आजीविका कमाने के सम्वन्ध में हमारे मन में जो भय वैठ गया है उसको दूर करने का साधन है। इसलिए जवतक घर-घर में चर्खा नही चलता तवतक यह सिद्ध नही होता कि हम अहिंसक हैं और हममें एकता है।

चर्खे के अन्तर्गत कर्घा और पींजन आदि वस्तुएं भी आ जाती हैं। जव चर्खा चलेगा तव भारत में फिर चमक आयगी। यदि चर्खा नहीं चलेगा तो विदेशी कपड़े का वहिष्कार नही होगा और यदि हो जायगा तो वह टिकेगा नही। हम मिल-मालिकों से सहायता माँगते है और हमें विदेशी कपड़े के व्यापारियों के सहयोग की जरूरत भी है, किन्तु अन्त में तो हमारी सफलता का आधार हम स्वयं ही हैं। 'आप सच्चे तो जग सच्चा।' सच्चे मनुष्य को तो कोई ठग ही नही सकता, इसलिए हममें से हरएक को विदेशी कपड़े का वहिष्कार करना चाहिए और कपास की किसी भी प्रक्रिया में जुट जाना चाहिए।

अली-भाइयों की रिहाई की अनिवार्य शर्तें अव हमें मालूम हो गई है। ये शर्तें तीन होने पर भी अन्त में एक स्वदेशी में ही आ जाती हैं, क्योंकि इसमें पहली दो शर्तें छुपी हुई हैं। स्वदेशी को पूरी तरह अपनाने में ही स्वराज्य निहित है। और स्वराज्य मिलने पर स्वराज्य सभा के पहिले अधिवेशन का पहिला काम अली-भाइयों और दूसरे असहयोगी कैदियों को रिहा करना ही होगा।

ऐसी सीधी-सादी वातों में हमें मार्गदर्शक की जरूरत नहीं होती। हमें स्वराज्य तभी मिलेगा जव हम अपने मार्गदर्शक स्वयं वन जायंगे।

ये शर्ते हिन्दू और मुसलमान—दोनो के लिए हैं।

यदि हिन्दू अपने हिन्दुत्व को नही समझेंगे तो भारत को कभी स्वराज्य नही मिलेगा। अस्पृश्यता दूर न होने पर भी खिलाफत के सवाल का फैसला हो सकता है, यह मैं देख सकता हू, किन्तु अस्पृश्यता दूर न होगी तो स्वराज्य नही मिलेगा। यदि २२ करोड हिन्दू अपने समाज के पाचवें हिस्से को दवाते रहते हैं तो वह स्वराज्य नही होगा, वल्कि रावण-राज्य होगा। यह धर्म नही वल्कि अधर्म होगा। मैं यह लेख मद्रास प्रान्त के कुम्भकोणम्[1] नामक स्थान से लिख रहा हू। कुम्भकोणम् अपने मन्दिरो के लिए प्रसिद्ध है। यहा विद्वान द्रविड लोग वसते हैं, किन्तु कुम्भ-कोणम् के ब्राह्मण भगी की छाया पडने से भ्रष्ट हो जाते हैं। जिस भगी की छाया पडती है उसे मार भी खानी पडती है और गालिया तो उसपर वरसती ही है। अस्पृश्यता की डायरशाही जैसी मद्रास मे चलती है वैसी कही अन्यत्र नही चलती। अस्पृश्य लोग ब्राह्मणो की गली मे तो जा ही कैसे सकते है? अस्पृश्यो को जानवूझकर अज्ञान मे रक्खा जाता है। कोई पशु वीमार पडता है तो उसकी सार-सभाल भी कोई-न-कोई करता है, किन्तु अस्पृश्यो का रक्षक तो भगवान ही है। हमको स्वराज्य नही मिलता इसका कारण निर्दोष अस्पृश्यो की हाय भी है। मद्रास अहाते मे तो यह प्रश्न दिन-प्रति-दिन उग्र होता जा रहा है। मद्रास के अन्त्यज मजदूरो और दूसरे लोगो के वीच वडा वैमनम्य है और वे एक-दूसरे मे मारपीट भी कर लेते हैं। हमे अस्पृश्यो से प्रेम करना चाहिए। उनको हमे सगे भाई की तरह मानना चाहिए और उनसे छू जाने पर अपने आपको भ्रष्ट न समझना चाहिए। इससे हमे स्वराज्य मिलेगा इतना ही नही, इसी से हिन्दू धर्म का उद्धार भी होगा। गो-रक्षक हिन्दू अन्त्यजो का त्याग नही कर सकते। अन्त्यज चाहे मैला हो, चाहे वह मुरदार मास खाता हो, चाहे शराव पीता हो और चाहे उसमे पृथ्वीभर के सव दोष हो, फिर भी वह हमारा भाई है, ऐसा मानकर ही हमे उससे वरताव करना चाहिए। जव हम ऐसा करेंगे तभी हम स्वराज्य-मन्त्र का उच्चारण करने योग्य वनेंगे।

—गुजराती। न० जो०, २५।९।१९२१।]

१६. व्याख्या के सिद्धान्त

वनारस हिन्दू विश्वविद्यालय के प्रिन्सिपल श्री आ० वा० ध्रुव ने 'कमला'

---

१. गांधी जी १८ सितम्बर, १९२१ के दिन कुम्भकोणम् मे थे।

नामक गुजराती मासिक में शास्त्रों की व्याख्या करने के सही तरीके और उनमें अस्पृश्यता का जो स्थान है उसके बारे में उस तरीके को लागू करने के सम्वन्ध में एक बड़ा विद्वत्तापूर्ण लेख लिखा है। मेरे पास बड़े लम्बे-लम्बे पत्र आये हैं जिनमें से कुछ का रूप तो सैद्धान्तिक और पारिभाषिक है और कुछ मेरे विचार से ऐसे व्यक्तियों की मिथ्या धारणा पर आधारित है जो शास्त्रों से बिल्कुल अनभिज्ञ है। मै यह जानता हूं कि लिखनेवालों ने ये पत्र सदुद्देश्यों से प्रेरित होकर ही लिखे हैं। यं० इं० जैसे छोटे से साप्ताहिक पत्र के स्तम्भों में इन सब पत्रों को प्रकाशित करना तो सम्भव नही है परन्तु मैं इन पत्र-लेखकों को किसी प्रामाणिक विद्वान के जरिए अवश्य सन्तुष्ट करना चाहता हूं। मेरे विचार से आचार्य ध्रुव ऐसे ही प्रामाणिक विद्वान है। उनकी विद्वत्ता उतनी ही निर्विवाद है जितनी उनकी ईमानदारी और निष्पक्षता। जो लोग जल्दी-से-जल्दी अस्पृश्यता के प्रश्न का न्यायपूर्ण हल ढूंढ़ना चाहते हैं उनके लिए यह लेख निश्चित ही रुचिकर होगा। मैंने उसका अनुवाद यं० इ० के लिए करा लिया है। पं० मदनमोहन मालवीय जी और ये विद्वान प्रिन्सिपल महोदय, जो कट्टर हिन्दू होने का दावा करते है और कट्टर हिन्दू माने भी जाते हैं, दोनो ही हिन्दू धर्म पर लगे इस दाग को मिटाने के हार्दिक समर्थक है, इस बात को देख कर मुझे जितनी शान्ति मिली है उतनी और किसी बात से नही।
——अंग्रेजी। यं० इं०, ३।११।१९२१।]

१७. गाली किसे कहते हैं ?

संयुक्तप्रान्त से एक महोदय लिखते है—

"आजकल चारों तरफ बड़ी बुलन्द आवाजों में सरकार की मलामत करने की बाढ़ सी आ रही है।...ऐसा मालूम होता है कि मानो हर आदमी इस बात की कोशिश करता है कि सरकार को गालियां देने में मै दूसरे लोगों से आगे किस तरह बढ़ जाऊं। सच पूछिए तो हर एक व्याख्यान बदजबानी और गालियों से भरा रहता है।...

"मुझे तो ऐसी बुरी बात से बहुत नफरत होती है।...

"मेरी दृष्टि में हिंसा केवल दूसरों पर प्रत्यक्ष हमला करने और उन्हें मार डालने में ही नहीं है, बल्कि बुरी बात मुंह से निकालना भी हिंसा के अन्तर्गत आता है। अगर यह ठीक है तो मेरी समझ में नहीं आता कि आप खुद जो इस सरकार को शैतानी, राक्षसी और बर्बर की उपाधियां देते हैं, उसका समर्थन कैसे किया जा

सकता है। इस बात मे रत्तीभर भी शक नहीं है कि इन शब्दों का समावेश हिंसा में होता है, परन्तु इस बात का स्वप्न मे भी खयाल नहीं किया जा सकता कि आप अहिंसा के परम-प्रचारक होकर भी हिंसापूर्ण शब्दो का प्रयोग करेंगे।

"यह तो गाली-गलौज की बात हुई। अब मैं एक दूसरे सवाल को लेता हू। आप हमेशा कहते हैं कि मैं और मेरे साथी लोग तो अंग्रेजी सरकार के खिलाफ लड़ने के लिए खड़े हुए हैं, अंग्रेजो के खिलाफ नहीं। आप इस शासन-प्रणाली के तो विरोधी हैं और इसे सुधारना या मिटाना चाहते हैं परन्तु खुद अंग्रेजो के प्रति आपके दिल में किसी तरह का बुरा खयाल नहीं है। अतः इससे यह साफ ही है कि यद्यपि आप इस शासन-पद्धति को तो मटियामेट कर देना चाहते हैं परन्तु अंग्रेजो को निकालना नहीं चाहते। अगर यह बात ठीक है तो यह ऊंचा सिद्धान्त अभी उन लोगो के हृदय में भी पूरी तरह अंकित नहीं हुआ है जो आपके सच्चे अनुयायी होने का दम भरते हैं। मैं इसकी एक मिसाल देता हूं। आगरा मे अभी हाल मे राजनीतिक परिषद हुई थी। उसमे प० जवाहरलाल नेहरू का भाषण हुआ, जिसमें उन्होंने विदेशी कपड़ो के बहिष्कार पर बोलते हुए कहा : "मैं उन लोगो में हूं जो सच्चे दिल से अंग्रजो को भारत से निकालना चाहते हैं और अगर मुझे इसका कोई उपाय हाथ लगा है तो वह है स्वदेशी।" यह बात अखबारों मे भी प्रकाशित हो चुकी है और मैं समझता हू, शायद आपने भी पढी होगी। ऐसी हालत मे यह कैसे कहा जा सकता है कि प० जवाहरलाल नेहरू ने आपके उस सिद्धान्त का मर्म समझ लिया है जिसके द्वारा हम मनुष्य और उसके कार्य में भेद कर सकते हैं ताकि हम उसके कार्य की तो निन्दा कर सकें, परन्तु स्वयं उसके प्रति हमारे मन मे किसी तरह की दुर्भावना न आये ? इस मामले मे तो मैं जोर देकर यह कह सकता हूं कि नेहरू जी की बात किसी तरह भी वाजिब नहीं कही जा सकती, तथापि मैं यह जानना चाहता हू कि क्या आप उसे पसन्द करते हैं या नापसन्द ?"[1]

अगर असहयोगी लोग गालियो का व्यवहार करते है तो वे नि[illegible] हिंसा करते है और अहिंसा के व्रत का भंग करते हैं। लेकिन मैं इस बात को नहीं मान सकता कि हर एक भाषण मे महज बदजबानी और कटुभाषण ही भरा रहता है। मैं लेखक महोदय को यकीन दिलाता हू कि भाषणों मे सदा सरकार की और सदा खुद हमारी दोनो की ही निन्दा होती है और उनमे निन्दा की अपेक्षा अधिक हिन्दू-मुस्लिम एकता और स्वदेशी-समर्थन दोनों ही अधिक रहता है। [illegible]

१. जवाहरलाल नेहरू के उत्तर के लिए देखिए परिशिष्ट मे 'पण्डित नेहरू का जवाब।'

बातों का लोगो की ओर से जो इतना आश्चर्यजनक उत्तर मिलता है, वह मेरे इस कथन का शायद सबसे बड़ा सबूत है। फिर लोगों ने इतनी प्रगति बिना प्रभावपूर्ण आग्रह के ही नही की है।

लेकिन आखिर गाली किसे कहते है? अंग्रेजी के कोश में गाली के पर्यायवाची अंग्रेजी शब्द का अर्थ है—अनुचित प्रयोग, कुप्रयोग, बुरा प्रयोग। अतः अगर हम चोर को चोर अथवा बदमाश को बदमाश कहते है तो इससे हम उसे गाली नही देते। हम कोढ़ी को कोढी कहते है तो वह इसका बुरा नही मानता। हां, यह जरूर है कि ऐसे विशेषणों का प्रयोग उसी नीयत से किया जाना चाहिए और उनके प्रयोग-कर्त्ता के पास उसकी यथार्थता का प्रमाण होना चाहिए। इस दशा में मैं हर जगह और हर मौके पर किये गये इन विशेषणों के प्रयोग को निन्दनीय नहीं मान सकता। मैं यह भी नही मानता कि इन निन्दाकारी शब्दों का प्रयोग करना सदा हिंसा का लक्षण ही होता है। मै यह बात अच्छी तरह से जानता हूं कि उचित विशेषणों का प्रयोग भी हिंसा का लक्षण हो सकता है। परन्तु कब? तभी जब उनका उपयोग उस व्यक्ति के प्रति, जिसकी निन्दा की गई है हिंसा को उत्तेजना देने के लिए किया गया हो। जब किसी मनुष्य की निन्दा इसलिए की जाती है कि वह अपनी बुरी आदत को छोड़ दे या श्रोता उसका साथ छोड़ दे तो ऐसी निन्दा बिल्कुल जायज होती है। हिन्दू शास्त्र तो दुराचारियों की भर्त्सना से भरे पड़े हैं। उन्होने तो उन्हें कोसा तक है; शाप तक दिये है। तुलसीदास तो मूर्तिमान दया के अवतार थे। उन्होंने अपनी रामायण में भगवान राम के द्रोहियों के लिए ढूंढकर बुरे विशेषण प्रयुक्त किये है। असल मे उन पापाचारियों के जो नाम चुने गये है वे भी उनके गुणों के ही सूचक हैं। ईसामसीह उन लोगों पर दैवी कोप अवतरित करने में नहीं हिचके जिनको वे दुष्टों, धूर्तो और पाखण्डियों की औलाद कहते थे। बुद्ध ने इन लोगों को नही छोड़ा जो धर्म के नाम पर निरपराध बकरो की बलि देते थे। कुरान और जेंद अवेस्ता भी ऐसे प्रयोगों से बची हुई नही है। हां, उनका प्रयोग करने मे उन सब ऋषियों और पैगम्बरों की कोई बुरी नीयत नही थी। उन्हे तो लोगों और चीजो का यथार्थ वर्णन करना था और उन्हे इसके लिए ऐसी भाषा का सहारा लेना पडा जिससे हम लोग अच्छे और बुरे की पहिचान कर सकें। हा, इस बात में मैं लेखक से सहमत हूं कि हम सरकार अथवा शासकों के बारे में जितना कम कहे हमारे लिए उतना ही अच्छा है। पहले ही हममें इतने विकार और दोष भरे हुए हैं कि हमारे लिए दिल दुखानेवाली बातों का प्रयोग करना अनुचित है। हम इस सरकार का जो अच्छे-से-अच्छा उपयोग कर सकते है वह यह है कि हम इसके अस्तित्व की उपेक्षा करें और इसका सम्पर्क भ्रष्टकारी और

पतनकारी है, यह विश्वास करते हुए जहा तक हो सके इसे अपने जीवन से अलग रक्खें।

मैं वार-वार यह वात कहता जा रहा हू कि इस आन्दोलन का उद्देश्य अंग्रेजो को निकालना नही है बल्कि उस शासन-प्रणाली को सुधारना या मिटा देना है जो उन्होंने हम पर जबरदस्ती लाद रखी है। मैंने पण्डित जलवाहरलाल नेहरू का वह भाषण नही पढा है जिसका जिक्र पत्र-प्रेषक महोदय ने किया है। लेकिन मैं उन्हे अच्छी तरह जानता हू कि मुझे यह विश्वास नही हो सकता है कि उन्होंने वह वात कही होगी जिसका दोप उन पर लगाया गया है। मैं जानता हू कि वह मनमौजीपन के खातिर ही उनका चला जाना नही चाहते बल्कि वह उन अंग्रेज सज्जनो को सबसे पहले हार्दिक मित्र की तरह गले लगायेंगे जो भारत के प्रेमी हैं और जो उसके सेवक बन कर यहा रहना चाहते हैं। इतना ही नही हम यह भी खयाल नही करते कि स्वतन्त्र भारत मे भी जो अंग्रेज हमारी आशाओ की भावी राजसत्ता द्वारा तय हुई शर्तों के अनुसार रहना चाहेगे उन्हे यहा नही रहने दिया जायगा।

१८. स्वतन्त्रता की पुकार

मौलाना हसरत मोहानी[1] ने कांग्रेस के मच से तथा मुस्लिम लीग के सभापति की हैसियत से बड़ी हिम्मत के साथ आजादी के लिए लड़ाई ठानी।[2] लेकिन दोनो वार उन्होंने बड़े मजे से मुह की खाई। मौलाना साहब क्या चाहते थे, इसके विषय मे किसी को गलत खयाल नहीं हो सकता। वरावर की और हिस्सेदार की हैसियत से भी तथा खिलाफत का निपटारा अच्छी तरह हो जाने पर भी वह अंग्रेज लोगो के साथ किसी किस्म का ताल्लुक नही रखना चाहते। यह कहना ठीक नही होगा कि पूर्ण आजादी के विना खिलाफत के मसले का निपटारा सभी हो ही नही सकता। हम यहा सिद्धान्त की चर्चा कर रहे हैं। इस बात पर तो सभी एक मत है कि यदि पूर्ण आजादी के विना खिलाफत का सवाल हल नहीं हो सकता अर्थात् यदि अंग्रेज लोग मुसलमानी दुनिया पर उनका आधिपत्य न [illegible]

---

१. कानपुर के प्रसिद्ध उर्दू कवि तथा स्वातन्त्र्य-संग्राम के सेनानी।

२. दिसम्बर १९२१ में कांग्रेस और मुस्लिम लीग के अहमदाबाद में हुए अधिवेशनो मे पूर्ण स्वतन्त्रता का लक्ष्य स्वीकार कराने के लिए।

भाव ही रखते रहे तो हमारे लिए पूर्ण स्वतन्त्रता का आग्रह करने के सिवाय दूसरा उपाय ही नही है। यदि ब्रिटेन को मुसलमानों के साथ दोस्ती का वर्ताव करने के लिए राजी नही किया जा सकता तो भारत ब्रिटेन को अपनी नैतिक सहायता भी नही दे सकता और खुद उसे भी ब्रिटेन की नैतिक और भौतिक सहायता के विना अपना काम चलाना होगा।

परन्तु फर्ज कीजिए कि ब्रिटेन अपना रुख वदल दे—जैसा कि मैं जानता हूं, हिन्दुस्तान को वलवान पाकर वह वदलेगा—तव भी पूरी आजादी के लिए जोर देते रहना धार्मिक दृष्टि से अनुचित होगा। क्योंकि वह हमारी प्रतिहिंसा और झल्लाहट का सूचक होगा। ऐसा करना खुदा को न मानना होगा, क्योंकि उस अवस्था में उनसे किनाराकशी करने का आधार इस धारणा पर होगा, कि अंग्रेज लोग मनुष्य के देव-भाव को पहचानते और उसे अपनाने की क्षमता नहीं रखते। ऐसी स्थिति को न तो श्रद्धावान हिन्दू और न श्रद्धावान मुसलमान ही कवूल कर सकता है।

भारत का सवसे वड़ा गौरव इस वात में नही है कि वह अंग्रेज भाइयों को अपने खून का प्याला दुश्मन माने, जिन्हें मौका मिलते ही हमें हिन्दुस्तान से निकाल वाहर करना है। वल्कि इस वात में है कि उस साम्राज्य की जगह जिसकी भित्ति पृथिवी के कमजोर और अनुन्नत राष्ट्रों तथा जातियों की आर्थिक लूट पर और इसलिए आखिरकार पशुवल पर आधारित है एक ऐसे राष्ट्रमण्डल का निर्माण करने में है जिसमें वे और हम मित्र और हिस्सेदार की हैसियत से रहें।

जरा हम इस वात पर विचार करें, कि ऐसे स्वराज्य का, जिसमें अंग्रेजों के साथ सम्वन्ध रहे, अर्थ क्या है? इसका निःसन्देह यही अर्थ है कि भारत यदि चाहे तो स्वतन्त्रता को घोषणा कर सके। अतएव स्वराज्य कोई ब्रिटिश पार्लियामेण्ट मिलने वाला मुफ्त का दान नही होगा। वह भारत की पूर्ण आत्माभिव्यक्ति की घोषणा ही होगी। हां, यह सच है कि वह पार्लियामेण्ट के एक कानून द्वारा ही घोषित किया जायगा लेकिन वह तो भारतीय प्रजा के प्रकाशित मत की शिष्ट स्वीकृति मात्र होगी। दक्षिण अफ्रीका की यूनियन के विषय में भी ऐसा ही हुआ था। हाउस आफ कामन्स द्वारा यूनियन की योजना का एक अक्षर इधर से उधर न हो सका। हमारे मत की स्वीकृति तो सन्धि के रूप में होगी और ब्रिटेन सन्धि में सम्मिलित दो पक्षों मे से एक होगा।

एक राष्ट्र किसी दूसरे राष्ट्र को वतौर दान के स्वराज्य नही दे सकता। यह तो ऐसी निधि है जो देश के अच्छे-अच्छे पुरुषों के रक्त से ही खरीदी जा सकती है। और जब हम उसकी वहुत वड़ी कीमत दे चूके तव वह हमारे लिए दान-रूप न

रहेगी। वाइसराय ने यह कहा है कि स्वराज्य यदि तलवार-द्वारा नही मिला तो पालियमिण्ट के द्वारा ही मिल सकता है। यहा वह गडवडा गये हैं। ऐसा कहकर श्रोताओ को यह अनुभव करने का मौका देना कि इग्लैंड मे कष्ट-सहन के नैतिक दबाव को मानने की क्षमता नही है, उन्होने अपने देश की बडाई नही की है और यदि उन्होने उपस्थित जनो को यह समझाना चाहा हो कि ब्रिटिशपार्लियामेण्ट तो अब उसकी इच्छा होगी तभी स्वराज्य देगी, उसे हिन्दुस्तान की उच्चाकाक्षा और अभिलाषा से कोई गरज नही, तो उन्होने श्रोताओ की बुद्धिमत्ता का अपमान किया है। सच बात तो यह है कि स्वराज्य लगातार परिश्रम और कल्पनातीत कष्ट सहन के बल पर ही प्राप्त होगा।

परन्तु वाइसराय को यह पता नही है कि तलवार की स्थान-पूर्ति के लिए कोई दूसरा साधन भी है और इसीलिए शायद वह यह खयाल करते हैं कि धारा-सभाओ मे अपनी वाद-विवाद-कुशलता का प्रयोग करते-करते किसी-न-किसी दिन हम ब्रिटिश पालियामेण्ट को यहा तक प्रभावित कर सकेंगे कि भारत को स्वराज्य प्रदान करना कितना वाञ्छनीय है। लेकिन उन्हे जल्द ही मालूम हो जायगा कि तलवार की स्थान-पूर्ति का एक उससे भी बढिया और अक्सीर साधन है और वह है—सविनय अवज्ञा। अब वह दिन पर दिन अधिकाधिक स्पष्ट होता जाता है कि कानून की सविनय अवज्ञा से कष्ट-सहन का वह मार्ग तैयार होगा जिससे होकर भारत को अपने लक्ष्य तक पहुँचने के पहले अवश्य गुजरना होगा।

हमने अभी अपनी पूरी शक्ति प्रकट नही की है। मुसलमानो और हिन्दुओ मे अब भी अविश्वास कायम है। अछूत लोगो को अभी हिन्दुओ के स्पर्श की आच नही पहुँची है। भारत के पारसी और ईसाइयो को अभी यह निश्चय नही है कि स्वराज्य मिलने पर उनका भविष्य क्या होगा। अभी हम अपने ही बनाये कानून-कायदो की पाबन्दी करना नही सीख पाये हैं और न उनकी जरूरत ही महसूस करते हैं। चर्खा अभी हमारे घरो मे स्थायी रूप से स्थान नही पा सका है। खादी अभी तक राष्ट्रीय पोशाक नही हो पाई है। दूसरे शब्दो मे यो कहे कि अभी हम आत्मरक्षा की कला और उसकी शर्ते नही समझ पाये हैं।

अभी तक भारत मे एक ऐसा जन-समाज मौजूद है जिसकी संख्या तो कम हो रही है पर उसकी उपेक्षा नही की जा सकती, जो यह मानता है कि हिंसा के ही द्वारा स्वराज्य प्राप्त हो सकता है और इसलिए कहता है कि अहिंसा के साथ-साथ हिंसा को भी जारी रहने देना चाहिए अर्थात् हमारी यह अहिंसा तो [illegible], हिंसा की पूर्वपीठिका और तैयारी समझी जानी चाहिए। जो लोग इस विचार के कायल हैं वे शायद यह न मानते हो कि ऐसा करना सारे समाज को धोखा [illegible]

है। हमारी प्रतिज्ञा तो हमसे यह अपेक्षा करती है कि जबतक हम उससे बंधे हुए है तबतक हम इस बात पर विश्वास करें कि अहिसा ही सबसे शीघ्र स्वराज्य प्राप्त कराने का साधन है। ज्योंही हमें यह विश्वास हो जाय कि स्वराज्य तो अहिंसा के द्वारा नहीं प्राप्त हो सकता या केवल हिंसा से ही प्राप्त हो सकता है त्योंही हमें अपनी प्रतिज्ञा रद्द कर देनी चाहिए—ऐसा करने के लिए हम बाध्य है। जब-तक हमने अहिंसा की प्रतिज्ञा ले रक्खी है तबतक वह हमारे लिए धर्म है। अभी अहिंसा का परीक्षण चल रहा है इसलिए वह कार्योपयोगी भी है। परन्तु जबतक हम अपनी प्रतिज्ञा से बंधे हैं तबतक हम केवल अपने ही लिए अहिंसा को मानने और उसका पालन करने के लिए बाध्य नही है, बल्कि हम दूसरों को अहिंसा के पालन के लिए तैयार करने और हिंसा का निषेध करने के लिए भी उतने ही बाध्य हैं। मुझे तो अब और भी अधिक विश्वास हो गया है कि हम अभी अपने लक्ष्य तक नही पहुंच पाये है। इसका कारण यह है कि खुद हम सब लोगों ने ही, जिन्होंने कि कांग्रेस के सिद्धान्तों को स्वीकार किया है, हमेशा न तो वचन और कर्म के द्वारा शान्ति का पालन किया है और न विचारों और इरादों में शान्ति धारण करने का प्रयत्न किया है।

—अंग्रेजी। यं० इं०, ५।१।१९२२।]

- **एक राष्ट्र किसी दूसरे राष्ट्र को बतौर दान के स्वराज्य नहीं दे सकता। यह तो ऐसी निधि है जो देश के अच्छे-से-अच्छे पुरुषों के रक्त से ही खरीदी जा सकती है।**
- **सच बात तो यह है कि स्वराज्य लगातार परिश्रम और कल्पनातीत कष्ट-सहन के बल पर ही प्राप्त होगा।**

१९. श्री महादेव का पत्र

नीचे मैं श्री महादेव देसाई का पत्र[1] सम्बोधन और हस्ताक्षर छोड़ कर अक्षरशः दे रहा हूं। मैं इसे जेल के नियमों के विरुद्ध भेजा हुआ मानता हूं। मैंने दक्षिण अफ्रीका में ऐसे पत्रों का उपयोग करने से भी इन्कार कर दिया था। किन्तु यहां मैं देखता हूं

---

१. यह पत्र यहां नहीं दिया गया है। इसमें राजनीतिक कैदियों से दुर्व्यवहार किये जाने और दो स्वयंसेवकों, कैलाशनाथ और लक्ष्मीनारायण को बेंत लगाये जाने की बात कही गई थी।

कि महादेव देसाई ने जो निर्दोष नियम-भग किया है वह क्षम्य माना जाना चाहिए। जेल मे जो डायरशाही चल रही है उसको समय पर प्रकट करने का दूसरा कोई उपाय नही है। इस नियम-भग के फलस्वरूप कोई कष्ट भोगना पडेगा तो महादेव को ही भोगना पडेगा। यदि उन्हे भी लक्ष्मीनारायण की तरह वेंत लगे और उनकी रीढ मे घाव हो जाय तो भी कोई परवाह नही। ऐसा जोखिम उठाकर भी महादेव के लिए पत्र लिखना जरूरी था। यदि सरकार कैदियो को कुछ भी छूट देना चाहती हो तो उसे उसका ऐसा सदुपयोग अवश्य होने देना चाहिए जैसा कि महादेव ने यह पत्र लिखने मे किया है। इस पत्र मे जो बाते लिखी गई हैं उनके सम्बन्ध मे इस समय मैं अधिक लिखना नही चाहता। मै तो भारत की धीरता और शान्ति को देखकर आनन्द और आश्चर्य के समुद्र मे डूबा जा रहा हू। अवश्य ही मुझे इतनी आत्म-शुद्धि की आशा नही थी। कैदियो ने जो जयघोष किया, वह उनकी उद्धतता नही है। बल्कि वह तो उनका अधिकार है, ऐसी उनकी मान्यता थी। और जब महादेव ने लक्ष्मीनाराण का ध्यान इस भूल की ओर खीचा तब उन्होंने कितनी सरलता से तत्क्षण अपनी भूल स्वीकार करली। अवश्य ही इस लडाई मे ईश्वर का हाथ है।

—गुजराती। न० जी०, १५।१।१९२२।]

२०. मौलाना मुहम्मद अली और उनके आलोचक

मौलाना साहब के दो पत्र[1] यहा दिये जा रहे हैं। पहला पत्र स्वामी श्री श्री श्रद्धानन्द जी के नाम और दूसरा 'तेज' के सम्पादक के नाम है। इन पत्रों का अग्रलेख मे उल्लेख है।[2]

—अंग्रेजी। य० इं०, १०।४।१९२४।]

२१. मौलाना मुहम्मद अली पर इलजाम

एक सज्जन लिखते हैं, गुजराती समाचारपत्रों मे [illegible]

---

१. पत्रो के लिए देखिए परिशिष्ट।

२. 'असत्य कथन का आन्दोलन' शीर्षक अग्रलेख।

है कि मौलाना मुहम्मद अली ने अपने एक भाषण में कहा है कि गांधीजी महा-अधम मुसलमान से भी नीचे हैं। यह सज्जन अपने पत्र में आगे लिखते है —'मैं मानता हूं कि मौलाना साहब ऐसा कभी नहीं कह सकते। तथापि 'नवजीवन' में यह स्पष्ट कर दिया जाना चाहिए कि बात दरअसल क्या है, जिससे गलतफहमी दूर हो जाय।' मुझे बड़े अफसोस के साथ लिखना पड़ता है कि केवल गुजराती के ही नही बल्कि अंग्रेजी के अखबारों में भी यह खबर प्रकाशित हुई है और उसके विषय में चर्चा भी खूब हुई है।

भगवान जाने हुआ क्या है, परन्तु हिन्दुओं और मुसलमानों में आजकल गलतफहमी की हवा चल रही है और एक दूसरे के प्रति अविश्वास फैल गया है। मैं जानता हूं कि इसके कुछ कारण हैं। मुझे यहां उनकी चर्चा करने की जरूरत नहीं मालूम होती। उत्तर भारत के हिन्दी और उर्दू के अखबारों ने तो हद ही कर दी है। डा० अन्सारी ने लिखा है कि ऐसा मालूम होता है मानों इन अखबारों ने एक-दूसरे पर इलजाम लगाना, झूठी अफवाहें फैलाना, एक-दूसरे के मजहब की निन्दा करना और इस प्रकार एक दूसरे को बदनाम करना ही अपना कर्त्तव्य मान लिया है। जान पड़ता है कि यह उनके रोजगार को बढ़ाने का साधन बन गया है। इस छूत की बीमारी को किस तरह रोकें, यह एक विकट समस्या हो गई है। मेरी समझ में इसको हल करना कौंसिल-प्रवेश की बनिस्बत ज्यादा जरूरी है। मुझे निश्चय है कि राज्य-तन्त्र-संचालन की हमारी क्षमता इस प्रश्न को हल करने में ही है। यदि हम देश के सम्मुख उपस्थित कुछ प्रश्नों को हल कर सके तो आज ही स्वराज्य हमारे हाथों में आया रक्खा है। जबतक हम इन गुत्थियों को न सुलझा सके तबतक स्वराज्य असम्भव है। कौंसिलें इन उलझनों को दूर करने में असमर्थ है।

परन्तु मैं इस लेख में कठिनाइयों की छानबीन नही करना चाहता। यहां तो मै मौलाना साहब पर किये गये आरोपों की ही जाँच करना चाहता हूं।

मौलाना साहब से उनके पहले भाषण पर लखनऊ की एक सभा में एक सवाल पूछा गया। उन्होंने उसका जवाब यह दिया—"महात्मा गांधी के धर्म-सिद्धान्त की बनिस्बत एक व्यभिचारी मुसलमान के धर्म-सिद्धान्त को मैं ज्यादा अच्छा मानता हू।" इसमे मौलाना साहब ने महात्मा गांधी और व्यभिचारी मुसलमान की तुलना नही की, बल्कि दोनो के धार्मिक मत की ही तुलना की है। अब जरा यह देखें कि यह तुलना उन्हे क्यो करनी पड़ी। मुसलमानों ने मौलाना साहब पर ऐसा इलजाम लगाया कि मौलाना तो गांधीपरस्त अर्थात् गांधी-पूजक हो गये है। गांधी-परस्त होना यानी गांधी को मूर्ति मान लेना।—यह मान लेना कि दुनिया

मे उसके सिवा दूसरा कोई नही। ऐसा करना मानो गाधी का धर्म कवूल कर लेना है। तो मौलाना साहब पर यह इलजाम था। कितने ही मुसलमानो के इस इलजाम का जवाव मौलाना ने पूर्वोक्त वाक्यो मे दे दिया है। इसका अर्थ क्या यह हुआ कि मुसलमानो को सन्तुष्ट करते हुए उन्होंने हिन्दुओ का दिल दुखाया। यदि मौलाना ने पूर्वोक्त वात किसी दूसरी जगह कही होती तो उनकी विल्कुल टीका न हुई होती। हिन्दू अखवारो ने उनके भाषण का विकृत विवरण छापा। उन्होंने लिखा है कि मौलाना व्यभिचारी मुसलमानो को महात्मा गाधी से अच्छा समझते हैं। यहा हमने देखा है कि मौलाना ने ऐसी कोई वात नही कही। इतना ही नहो वल्कि उन्होने तो स्वामी श्रद्धानन्द जी के नाम भेजे अपने पत्र मे महात्मा गाधी को सारे ससार मे सर्वोत्तम मनुष्य माना है। परन्तु हा, उन्होने महात्मा के धर्म-सिद्धान्त को व्यभिचारी मुसलमान के धर्म-सिद्धान्त से भिन्न माना है। इसमे विरोध जरा भी नही, सिद्धान्त और सिद्धान्ती मे तो लगभग सारा ससार भेद मानता है।

मेरे कितने ही ईसाई मित्र मुझे वहुत अच्छा आदमी मानते हैं। फिर भी वे अपने धर्म को मेरे धर्म से श्रेष्ठ मानते हैं, इसलिए हमेशा ईश्वर मे प्रार्थना करते हैं कि मैं ईसाई हो जाऊ। दक्षिण अफ्रीका का एक ऐसे मित्र का पत्र मुझे दो-तीन सप्ताह पहले मिला है जिसमे कि उन्होंने लिखा है—

"आपकी रिहाई का समाचार जानकर मुझे वडी खुशी हुई। आपके लिए मैं ईश्वर से प्रर्थना करता हू कि वह आपको सुवुद्धि दे जिससे आप ईसा-मसीह को और मुक्ति देने की उनकी शक्ति को मानने लगे। यदि आप यह कर सकें तो आपके काम तुरन्त फलीभूत हो जायें।"

इस तरह अनेक ईसाई मित्र चाहते हैं कि मैं ईसाई हो जाऊ।

अच्छा, अधिकाश हिन्दू भी क्या करते है ? क्या वे अच्छे-से-अच्छे ईसाई या मुसलमान के धर्म-सिद्धान्त से अपने धर्म-सिद्धान्त को अच्छा नही मानते ? यदि वे ऐसा न मानते हो तो क्या वे अपनी पुत्री का विवाह एक अच्छे-से-अच्छे मुसलमान या ईसाई से करेंगे ? इतना ही नही वे हिन्दुओ मे भी किसी अच्छे-से-अच्छे पुरुष [illegible] से नही वल्कि अपने सम्प्रदाय या जाति के ही किसी पुरुष के साथ [illegible] करेंगे। इससे क्या प्रकट होता है ? यही कि वे स्वधर्म को [illegible] मानते है।

मेरी नाकिस राय मे मौलाना ने अपनी राय जाहिर करके [illegible] सफाई और अपनी धर्म-श्रद्धा को सिद्ध किया है। [illegible] है। एक तो मित्र के रूप मे और दूसरे मनुष्य के रूप मे। [illegible] मेरी इज्जत इस तरह की है कि उन्होंने यह माना है कि [illegible]

चाहे कहें, मैं उसमें अपना अपमान न मानूंगा और मैं उनके भाव को गलत न समझूंगा। उन्होंने मनुष्य के रूप में मेरी इज्जत इस तरह की है कि हम दोनों के धर्म भिन्न होते हुए और अपने धर्म को मेरे धर्म से श्रेष्ठ मानते हुए भी वह मुझे सर्वोत्कृष्ट मनुष्य मानते है। इसमें कितनी श्रद्धा है? यदि संसार मुझे अच्छा मानता है तो उसके इस वहम को मैं समझ सकता हूं। परन्तु मेरे निकट रहनेवाले मेरे मित्र, मेरी अनेक कमजोरियों को देखते हुए भी मुझे सर्वोत्तम मानें, यह कितनी अजीब बात है?

किसी भी मनुष्य को सर्वोत्कृष्ट मानना, मुझे तो बड़ा खतरनाक मालूम होता है। उसके दिल को ईश्वर के सिवा कौन जान सकता है? उस मनुष्य की बनिस्बत, जिसके दिल की गन्दगी प्रकट होती रहती है, वह मनुष्य अधिक मलिन होना चाहिए, जो अपनी गन्दगी छिपी रख सकता है। पहले मनुष्य को तो मुक्ति मिलने की सम्भावना है, क्योंकि उसकी गन्दगी प्रकट हो गई अर्थात उसके निकलने का रास्ता खुल गया, परन्तु दूसरा मनुष्य तो अपनी गन्दगी अपने दिल के डिब्बे में बन्द करके उसपर मुहर लगाकर रखता है, उसकी गन्दगी अन्दर ही अन्दर पड़ी रहेगी। और उसे जहरीले जन्तु की तरह नोच-नोच कर खायेगी। उसका छुटकारा इस जन्म में असम्भव है। इसी से शास्त्रों ने सत्य को सर्वोपरि माना है; इसी से शास्त्रों ने पाप को छिपाने का निषेध किया है। यदि हम किसी मनुष्य को सर्वोपरि मान सकते हों तो इसका निश्चय उसकी मृत्यु के बाद ही किया जा सकता सकता है।

मै खुद तो अपना विश्वास नही कर सकता। मुझे दूसरे को विश्वास करना बहुत आसान मालूम होता है। यदि ऐसा करते हुए मुझे धोखा हो तो इससे मेरी कुछ आर्थिक हानि हो सकती है और दुनिया मुझे भोला-भाला कह सकती है, परन्तु यदि मैं अपना विश्वास करके गाफिल रहूं तो मेरा नाश ही हो जाये। पाठको, इस मौके पर आपसे यह भी कह देता हूं कि एक बार तो मैं अपना विश्वास करके डूबते-डूबते ईश्वर-कृपा से ही बचा हूं। दूसरी बार मुझे मेरे एक व्यभिचारी मित्र ने बचाया। वह खुद तो बचने की हालत में नही थे परन्तु मुझे निर्मल समझते थे। अत: यह समझकर कि इसे तो इस पाप में हर्गिज न पड़ना चाहिए उन्होने मुझे मोह-निद्रा से जागृत कर दिया। हम दूसरे की चौकीदारी करने या दूसरे का काजी बनने की बनिस्बत खुद अपनी चौकीदारी करें तो खुद अपनी रक्षा कर ले और संसार को अपने अन्याय से बचालें। इसी से स्वराज्य की सच्ची व्याख्या यह है, "स्वराज्य उस राज्य को कहते है जो खुद अपने पर किया जाता है।" जिसने इसे प्राप्त कर लिया उसने सब कुछ प्राप्त कर लिया। "आप भला तो जग भला" इस कहावत में बहुत-कुछ अर्थ समाया हुआ है।

प्रस्तुत विषय को छोडकर मैं गूढ चर्चा मे नही चला गया हू। वल्कि यह वात इसी विषय से सम्वन्ध रखती है। मित्र लोग जव मुझे सर्वोत्कृष्ट मानते हैं, तव मैं काप जाता हू। यदि मैं खुद ऐसा मानने लगू तो मेरा पतन हुए विना न रहे, क्योकि मुझे तो अभी वहुत ऊचा उठना वाकी है। मेरी आकाक्षा की सीमा नही है। मुझे अभी असख्य शत्रुओ को जीतना है। ज्यो-ज्यो मै गहराई से विचार करता हू त्यो-त्यो मुझे अपनी खामिया दिखती जाती हैं। जव यह देखता हू तव मेरे मन मे विचार उठता है कि सचमुच सर्वोत्कृष्ट मनुष्य कैसा होगा? यह विचार करते हुए मेरे मन मे मोक्ष की और उसके द्वारा मिलनेवाले आत्यन्तिक आनन्द की कुछ कल्पना होती है। उस समय मुझे इस वात की झलक दिखाई देती है कि ईश-तत्व क्या हो सकता है?

अव पाठक शायद यह समझ सकें कि मौलाना साहव ने मुझे सर्वोत्कृष्ट मान कर मेरी कितनी इज्जत की है। उनके इस कथन का अर्थ क्या है, यह वात पाठको को उनका पत्र पढने पर अधिक अच्छी तरह मालूम होगी। उसका तरजुमा मैं इसी अक मे देता हू।[1]

स्वामीजी ने मौलाना के इस पत्र का स्वागत किया और उनके दिल की सफाई पर उन्हे धन्यवाद दिया है। उन्होने मौलाना को हिन्दुओ का मित्र माना है और जिन लोगो ने मौलाना पर इलजाम लगाया था और इस प्रकार प्रस्ताव की सूचना दी थी कि उन्हे काग्रेस से इस्तीफा दे देना चाहिए उनसे अपनी सूचना वापस लेने का अनुरोध किया है। परन्तु साथ ही उन्होने यह भी वताया कि उनके धर्म के अनुसार तो अकेले सिद्धान्त की कोई कीमत नही है। मनुष्य के चरित्र और आचार से ही उसकी कीमत आकी जाती है। इसका जवाब देकर मौलाना ने स्वामीजी के पत्र की शका भी दूर कर दी है। मौलाना यह वात नही मानते कि सिद्धान्ती को अपने सिद्धान्त के अनुसार आचरण करने की जरूरत नही। उन्होने तो सिर्फ दो सिद्धान्त-सरणियो की तुलना की थी और वताया था कि दोनो मे ऊचा कौन है। सिद्धान्त वहुत अच्छे हो किन्तु यदि जाननेवाला उनके अनुसार न चले तो उसे कुछ फल नही मिलता—यह वात उन्होने अपने इसी पत्र मे प्रकट की है।[2]

इसलिए मौलाना मुहम्मद अली के कथन का मतलव सिर्फ इतना निकलता है कि सवको अपना-अपना धर्म अच्छा मालूम होता है। इस [illegible]

---

१. देखिए परिशिष्ट भाग।

२. देखिए परिशिष्ट भाग।

कौन हिन्दू कर सकता है? यह राई का पर्वत किस प्रकार हुआ और इसके न होने देने का उपाय क्या है, इस पर विचार फिर कभी करेंगे।

—गुजराती। न० जी०, १३।४।१९२४।]

२२. मौ० शौकत अली की बीमारी

पाठकों को यह जानकर दुःख होगा कि मो० शौकतअली जो कुछ समय से वीमार हैं और जिनका इलाज डा० अन्सारी के यहां उन्हींके निवासस्थान पर हो रहा है, आशा के अनुरूप प्रगति नही कर रहे हैं। मौ० मुहम्मद अली और डा० अन्सारी दोनों के पत्र मुझे हाल ही मिले है। वे लिखते हैं कि रोगी को वड़ी कमजोरी महसूस हो रही है और उनकी सेवा-सुश्रूषा में वहुत सावधानी की जरूरत है। पाठकों से मेरा अनुरोध है कि वे मेरे साथ ईश्वर से यह प्रार्थना करें कि हमारा यह विख्यात देशभाई शीघ्र पूर्ण रूप से स्वस्थ हो जाय।

—अंग्रेजी। यं० इं०, १७।४।१९२४।]

२३. आचार बनाम विचार

मौलाना मुहम्मद अली के इस्लाम-विषयक भाषण की चर्चा अभी समाचार-पत्रों में चल ही रही है। मैं देखता हूं कि आचार और विचार में उन्होंने जो भेद किया है उसे कितने ही समझदार और विवेकवान सज्जन भी नही समझ पाये हैं और यदि समझे हैं तो उस विषय में और लिखते समय उसे भूल जाते हैं। इसका अर्थ यह है कि उनके दिल में उस भेद का ज्ञान गहरा नही पैठा है। अतएव मौलाना साहव के वताये भेद को वार-वार समझना जरूरी है। वह मानते हैं कि—

(१) मनुष्य के आचार और विचार में भेद होता है।

(२) श्रेष्ठ विचार वाले का आचार वुरा हो सकता है।

(३) श्रेष्ठ आचारवालों के विचार दूसरों के विचारों के मुकावले हीन हो सकते हैं।

यहां विचार का अर्थ है विश्वास, धर्म-मत, धर्म—जैसे ईसाई मत में ईसामसीह का अप्रतिम ईश्वरत्व, इस्लाम का यह विश्वास कि ईश्वर एक है और मुहम्मद

साहब उसके पैगम्बर हैं। हिन्दू धर्म मे (मेरे विचार के अनुसार) सत्य और अहिंसा की श्रेष्ठता मानी गई है।

"सत्यानास्ति परो धर्मः।" "अहिंसा परमो धर्मः"

पूर्वोक्त सिद्धान्तों के अनुसार मौलाना साहब ने कहा था :—

"मुसलमान की हैसियत से मैं मानता हूं कि श्रेष्ठ आचारवाले गांधी के विचार (धार्मिक विश्वास) की अपेक्षा व्यभिचारी मुसलमान का धर्म-विचार (धार्मिक विश्वास) ज्यादा अच्छा है।"

पाठक देखेंगे कि इसमे मौलाना ने मेरी और व्यभिचारी मुसलमान की तुलना नही की है। उन्होंने तो मेरे और उस मुसलमान भाई के धार्मिक विश्वास की तुलना की है। इसके सिवा मौलाना साहब अपनी उदारता और मेरे प्रति अपने स्नेह के कारण ऐसा कहते हैं कि यदि मनुष्य की मनुष्य से तुलना करनी हो तो गाधी जी गुण मे अर्थात आचार मे उनकी पूजनीय माताजी और पूज्य गुरुजी से भी बढ जाते हैं।

इसमे न तो मेरा अपमान है और न हिन्दू धर्म का। सच तो यह है कि सारा ससार पूर्वोक्त तीन सिद्धान्तो को मानता है। फर्ज कीजिए यूरोप का कोई सर्व-श्रेष्ठ साधु यह मानता है कि मनुष्य के शरीर की रक्षा के लिए जीवित पशुओ और पक्षियो को तरह-तरह के कष्ट देकर उनपर प्रयोग करने अथवा उन्हें मार डालने मे किसी तरह की बुराई नही है, यही नही बल्कि ऐसा न करने मे बुराई है। इसके खिलाफ फर्ज कीजिए मैं एक दुष्ट मनुष्य हू परन्तु मैं मानता हू कि मनुष्य-शरीर को बचाने के लिए भी किसी जीवधारी की हिंसा करना इन्सानियत को कम कर देना है। तब उस श्रेष्ठ साधु का किञ्चित भी अपमान किये बिना क्या मैं यह नहीं कह सकता कि केवल विचारो-विश्वासो की तुलना करें तो मेरे दुष्ट होने हुए भी मेरे विश्वास उस सर्वश्रेष्ठ साधु के विश्वासो से बहुत ऊंचे दर्जे के हैं? यदि मेरा यह कहना सदोष न हो तो मौलाना साहब के कहने मे कोई दोष नही है।

वर्तमान चर्चा मे एक बात साफ तौर पर निखर उठती है और यह मानो अँधेरे मे आशा की एक किरण है। सब लोग यह प्रतिपादित करते हुए मालूम होते हैं कि आचार-हीन विचार बेकार हैं और अकेले शुद्ध विचारो से काम नही चल सकता। मौलाना साहब ने अपना मन्तव्य बताने मे यही भी [illegible] है। मुझे इनमे आशा की किरणें दिखाई देती है, क्योंकि [illegible] चलनेवाले तथा उनके प्रति अनास्था रखनेवाले दोनो [illegible]।

परन्तु आचार की पूजा करते हुए हमे विचारो की [illegible] को न भुला देना चाहिए। जहा विचारो मे दोष होता है [illegible]

तक नहीं पहुँच सकेगा। रावण और इन्द्रजीत की तपस्या में किस बात की खामी थी? इन्द्रजित के संयम का मुकाबला करने के लिए लक्ष्मण के संयम की आवश्यकता थी, यह बताकर आदि कवि ने आचार का महत्व सिद्ध किया है। परन्तु इन्द्रजीत के विचारों में, विश्वास में आर्थिक वैभव को प्रधान पद प्राप्त था और लक्ष्मण के विश्वास में यह पद परमार्थ को प्राप्त था। अतएव अन्त में कवि ने लक्ष्मण को जयमाला पहनाई। 'यतो धर्मस्ततो जयः' का भी अर्थ यही है। यहाँ धर्म का अर्थ उच्च-से-उच्च विचार अर्थात् विश्वास और उसके अनुसार उच्च-से-उच्च आचार ही हो सकता है।

एक तीसरे प्रकार के भी लोग है। उनके लिए इस चर्चा में जगह नहीं है। वे है ढोंगी। उनके पास विचारों का, विश्वासों का कोरा दावा तो है, किन्तु उनका आधार कोरा आडम्बर है। वास्तव में उनका कोई धार्मिक विश्वास ही नही होता। तोता राम-राम रटता है तो क्या इससे लोग उसे राम-भक्त कहेंगे? फिर भी हम दो तोतों की या तोते या मैना की बोलियों की कीमत उनकी तुलना करके आँक सकते हैं।

परन्तु एक सज्जन कहते हैं:

"मौलाना साहब ने निडरता भले ही दिखाई हो...किन्तु उसका लाभ देश को कितना मिला? हिन्दू-मुसलमानों में तनाव और बढ़ गया। संयमी गांधी से अधम मुसलमान ऊंचा है, ये शब्द हिन्दुओं के दिल में बाण की तरह चुभ गये हैं। मौलाना साहब ने तो मानों देश पर बम का गोला ही फेंक दिया है।"

इन विचारों को प्रकट करनेवाले मौलाना साहब के प्रेमी है। वह धर्मान्ध हिन्दू नही हैं। वह हिन्दुओं के ऐबों को निष्पक्ष होकर देख सकते हैं। लेकिन सन्देह के वर्तमान वातावरण का असर उन पर भी हुआ है। पहले तो जैसा मैं कह चुका हूं, "संयमी गांधी से अधम मुसलमान ऊंचा है," यह मौलाना ने कहा ही नही। उन्होने तो इतना ही कहा है कि "संयमी गांधी की धार्मिक मान्यता से अधम मुसलमान की धार्मिक मान्यता बढ़कर है।" मौलाना साहब के विचार में और उन पर आरोपित विचार में हाथी-घोड़े का अन्तर है। एक में दो व्यक्तियों की तुलना है। दूसरे में दो धार्मिक विचारों की। 'संयमी गांधी' और 'अधम मुसलमान' हमारी प्रयोजन-सिद्धि के लिए निरर्थक हैं।" मुख्य तो धार्मिक मान्यताएं हैं। फिर ये मान्यताएँ भले ही 'क' या 'ख' की हों अथवा 'ग' या 'घ' की, तुलना व्यक्तियों की नही उनके धार्मिक विचारों की है। उनके आचार तथा गुण-दोषों का इस तुलना से कुछ भी सम्बन्ध नही है।

अब हम इस बात पर विचार करें कि मौलाना को धार्मिक मान्यताओं के

सम्बन्ध मे अपने ये उद्गार प्रकट करने की आवश्यकता थी भी या नही। मौलाना साहब के और मेरे बीच दो भाइयो का-सा सम्बन्ध है। इस कारण वह जहाँ-तहाँ मेरी स्तुति किया करते हैं। इन दिनो हिन्दुओ और मुसलमानो के बीच कलह उत्पन्न करने वालो की सख्या बढ गई है। उनमे से कुछ लोगो ने उनके लिए 'गाधी-परस्त' अर्थात् गाधी-पूजक विशेषण लगाया है। ऐसा करने मे उनका उद्देश्य यह था कि मुसलमानो पर मौलाना का जो प्रभाव है वह कम हो जाये। अत. मौलाना ने कहा कि मैं गाधीजी का पुजारी तो हू परन्तु गाधीजी मेरे धर्म-गुरु नही हैं। गाधीजी का धर्म मेरे धर्म से जुदा है। धार्मिक विश्वास तो एक व्यभिचारी मुसलमान के जो हैं वे ही मेरे भी हैं और मैं उन्हें गाधीजी के धार्मिक विश्वासो से अधिक अच्छा समझता हू। यह मौलाना के भाषण सार है। यदि वे ऐसी ही कुछ बात न कहे तो क्या कहकर वह अपना, मेरा और हमारे पारस्परिक सम्बन्धो का तथा साथ ही अपनी दृढ-निष्ठा का खुलासा और बचाव कर सकते हैं और किस तरह आक्षेपकर्त्ताओं के आक्षेपो का उत्तर दे सकते हैं?

—गुजराती। न० जी०, २७।४।१९२४।]

२४. आर्यसमाजी विरोध

आगरा के आर्य समाज की तरफ से मुझे निम्नलिखित तार मिला है:—

"आर्यसमाज, ऋषि दयानन्द, स्वामी श्रद्धानन्द जी, सत्यार्थ प्रकाश और शुद्धि-आन्दोलन के बारे में आपने जो कड़े शब्द कहे हैं,[1] आगरा उनके प्रति अपना विरोध प्रकट करता है। उसे विश्वास है कि आर्य-समाज के सिद्धान्तों का पूरा परिचय न होने के कारण आपने अनजाने मे वे सब बातें कही हैं। यह आपसे सादर प्रार्थना करता है कि आप अपने विचारों पर फिर से गौर करें और उनसे जो उद्वेग उत्पन्न होने की सम्भावना है उसे दूर करें।"

मैं इस तार को इसलिए प्रकाशित कर रहा हूं कि मुझे विश्वास है कि आगरा समाज का मत बहुत हद तक आर्य-समाज का ही मत है। उसके उत्तर मे इतना ही कह सकता हू कि मैंने समाज या ऋषि दयानन्द या स्वामी श्रद्धानन्द जी के विषय मे एक भी शब्द गहरा विचार किये बिना नहीं लिखा है। मैं [illegible]

---

१. तात्पर्य गांधीजी के 'हिन्दू-मुस्लिम तनाव : कारण और उपचार', २९।५।१९२४ लेख से है।

को आसानी से दवा कर भी रख सकता था। लेकिन जब कि उसका प्रस्तुत प्रकरण से सम्बन्ध है तब सत्य को देखते हुए मैं ऐसा नहीं कर सका। हिन्दू-मुस्लिम-वैमनस्य का दानव हमारे सामने खड़ा है। उसके नाश की मुल्क को सख्त जरूरत है। इसे तथ्यों को दवा कर या उनकी ओर से आँखें मूंद कर नहीं किया जा सकता। ऐसे मौकों पर जो वात सच्ची दिखाई दे उसे कहना जरूरी हो जाता है—फिर वह चाहे कितनी ही कड़वी क्यों न हो। लेकिन मैं इस वात का दावा नही करता कि मुझसे भूल नही हो सकती। अभी तक मुझे ऐसी कोई वात नही दिखाई दी है जिससे मै अपने विचार वदल लूं। मैं यह भी नही कह सकता कि इस विषय का मुझे कोई ज्ञान नही है। मैंने सत्यार्थ प्रकाश को जरूर पढ़ा है। स्वामी श्रद्धानन्द जी से मेरा गहरा परिचय है। इसलिए मैंने वे वातें सोच-समझकर ही लिखी हैं। अगर कोई आर्यसमाजी मुझे यह समझा दे कि किसी भी वात में मुझसे गलती हुई है तो मैं खुशी के साथ अपनी गलती को कबूल करूँगा, उसके लिए माफी माँगूंगा और अपने तमाम गलत वयान वापस ले लूंगा।

——अंग्रेजी। यं० इं०, ५।६।१९२४।]

२५. सूतकारों को इनाम

मेरठ से मिला यह पत्र प्रकाशित करते हुए मुझे खुशी होती है—

मेरठ जिला-समिति ने जिला वोर्ड मेरठ को ७५) इसलिए दिये थे कि उनमें से १०), ६) और ४) के तीन इनाम सर्वोत्तम हाथकते सूत पर और २५), १५) और १०) के तीन इनाम उन सूतकारों को दिये जायं जो कि नौचण्डी मेले की कताई-वाजी में सर्वोत्तम हों। तदनुसार २४ मार्च को यह वाजी मेले के दरवार-मण्डप में हुई। ३२ सज्जनों ने अपने नाम भेजे थे। उनमें से २१ हाजिर हो पाये। मण्डप चारों ओर दर्शकों से भर गया था। लाला लाजपतराय और लाला रामप्रसाद, लाहौर, भी पधारे थे। देहली के लाला शंकरलाल,—वावू कीर्ति चौधरी, श्रीनाथ सिंह और श्री महम्मद अस्लम सईफी एम० एल० ए० परीक्षक थे। नीचे-लिखे सज्जनों ने पारितोषिक पाया।

चौधरी रघुवीर नारायण सिंह, ३६६ गज, १६ अंक का सूत काता। पहला इनाम पाया।

पण्डित हरगोविन्द भार्गव, मेरठ, ३१० गज १७ अंक का काता। दूसरा इनाम मिला।

पण्डित गौरीशकर शर्मा, मेरठ, ३०० गज १६ अक का काता और तीसरा इनाम पाया।

सावरमती आश्रम के श्री दीवानचद खत्री ने ४५० गज २४ अक का काता। पर वे वाजी मे शरीक न हुए थे। चौधरी रघुवीर नारायण सिह ने उन्हे अपनी ओर से ५) का खास इनाम दिया।

—हि० न० जी०, २३।४।१९२५।]

२६. संयुक्त प्रान्त का दौरा

[१९२५ ई० मे विहार के वाद गाधीजी ने सयुक्तप्रान्त (अव उत्तर प्रदेश) की यात्रा की थी। उस यात्रा के सम्वन्ध मे उन्हें जो अनुभव हुए उनको निम्नाकित लेख मे प्रकट किया गया है।—सम्पा०।]

वलिया

इसके वाद मैंने सयुक्तप्रान्त मे प्रवेश किया। वलिया मे ही प्रथम मुकाम रहा। वलिया जाने के लिए सिर्फ चार घण्टे का ही सफर करना पडा था लेकिन इसमे मुझे वडी तकलीफ हुई। यहा की सभा मुझे वडी ही कष्टप्रद मालूम हुई थी और विहार मे मुझे जो अनुभव हुआ था उसके विपरीत ही यहा अनुभव हुआ। जिस गाडी मे हम लोग छपरा से वलिया गये वह वहुत धीरे चलती थी और कुछ मिनटो के वाद ही स्टेशन आ जाते थे। हर एक स्टेशन पर एक वडी भारी भीड होती थी और लोग वडा शोर मचाते थे। स्वयसेवक उन्हे रोकने मे असमर्थ थे। मैं यह जानता हू कि उनका मेरे प्रति अन्धा और अतिशय प्रेम था। मुझे १९२१ मे ही वलिया जाना चाहिए था लेकिन मैं उस समय नही जा सका था। इसलिए लोगो को मेरे वहा जाने के सम्वन्ध मे अविश्वास-सा हो गया था लेकिन जब मैं वहा सचमुच जा पहुचा तो वे खुशी से पागल हो गये। स्वयसेवक [illegible] काबू मे न रख सके। लेकिन ज्योही मैं उन्हे अपनी बात सुना सका और [illegible] फण्ड के लिए उनको समझा सका त्योही उन्होने [illegible] दिया। वलिया मे स्टेशन पर जो भीड थी उसमे [illegible] जा सकती थी। अमरीकी मिशन के पादरी [illegible] स्टेशन पर ले आने की कृपा की थी। [illegible] था। उस मोटर के कारण ही [illegible]

निकल सका था। स्टेशन से हम लोग सीधे वहां की सार्वजनिक सभा में गये। वहां एक बड़ा भारी और ऊंचा मंच तैयार किया गया था। उसे देखते ही मैं यह समझ गया कि किसी शौकीन ने उसकी रचना की है और जितने आदमियों की उस पर जगह रखी गयी थी उतने आदमियों का वहां पर बैठना सलामत नहीं था। वहां कुल सात अभिनन्दनपत्र दिये गये थे। जिन-जिन लोगों का इसके साथ सम्बन्ध था उन सबका वहां मंच पर होना स्वाभाविक था। उस मंच पर जाने के लिए जो सीढ़ियां बनाई गई थी वे भी हिलती थी, उस पर से फिसल जाने का डर बना रहता था और कोई सलामती न थी। कोई उस पर जरा भी चलता फिरता तो सारा मंच हिलने लगता था। १० आदमियों का वजन भी वह नहीं सम्हाल सकता था और एक आदमी के लिए भी उसके कुछ भागों पर चलना भयकारी था। प्रमुख ने फौरन ही यह समझ लिया कि किसी भी प्रकार की दुर्घटना से बचना हो तो यह आवश्यक है कि मुझे अकेले को वहां छोड़ कर और सबको वहां से हट जाना चाहिए। इस-लिए वे सब धीरे-धीरे मुझे राजेन्द्र बाबू के हाथों मे सौप कर नीचे चले गये। जिन्हें अभिनन्दनपत्र पढ़ने थे वे एक-के-बाद-एक इस प्रकार आते थे। इतना खयाल रखने पर भी यह अन्देशा बना रहता था कि क्या मालूम किस समय यह मंच सारा का सारा ढेर हो जाय। ऐसा भयप्रद और कमजोर मच देखने का यह मेरा पहला ही अनुभव न था; मुझे कम से कम दो दुर्घटनाएं याद है। लेकिन यह सबसे अधिक कमजोर था। कुशल दृष्टिवाले लोग तो उसे देखते ही उसकी कमजोरी ताड़ सकते थे। लेकिन जिन्होंने उसकी रचना की थी उन्हें कुछ भी अनुभव न था। महासभा के कार्यकर्त्ताओं को इस उदाहरण से शिक्षा ग्रहण करनी चाहिए और उन्हें बड़े बड़े मंच बनाने के लिए प्रयत्न नही करना चाहिए। यदि वे ऐसा मंच बनाना चाहें तो उन्हें कार्य-कुशल व्यक्तियो को ही यह काम सौपना चाहिए। स्वयंसेवक सभा की भी ठीक-ठीक व्यवस्था न रख सके थे। जब अभिनन्दनपत्र पढ़े जाते थे उस समय भी शोर होता रहता था। लेकिन जब मैंने उनसे बातें सुन लेने के लिए विनती की वे सब सम्पूर्ण-शान्त हो गये थे। इससे मैंने अनुमान लगाया कि बिहार की तरह यदि यहां पर भी कुछ पहले ही से तैयारी की गई होती तो उसका परिणाम भी अच्छा होता और बलिया में मै जो कुछ भी कार्य कर सका उससे कही ज्यादा और अच्छा कार्य मैं कर सकता था। शान्त और लगातार काम करने की ही आवश्यकता है। बलिया मे कुछ बड़े अच्छे कार्यकर्ता भी है और इसलिए उसे आज के बनिस्बत अधिक अच्छे कार्य का केन्द्र भी बनाया जा सकता है। मै यह जानता हूं कि बलिया के लोग बड़े धैर्यवान और कष्टसहिष्णु है। उन्होंने १९२०-२१ में कुछ कम त्याग नही किया था।

काशी विद्यापीठ

बलिया से हम लोग काशी गये। वहा सीतापुर जाते हुए हमे लखनऊ जाने के लिए गाडी बदलनी थी। बनारस मे पांच घण्टे का मुकाम रहा। बाबू भगवान दास ने काशी विद्यापीठ के विद्यार्थियो की एक सभा रक्खी थी। म्युनिसिपल्टी के अधिकार मे चलनेवाले मिडिल-स्कूलो मे कताई-बुनाई के सम्बन्ध मे जो अच्छा कार्य किया गया है उसे देखने के लिए भी वह मुझे ले गये थे। पाठको को शायद यह याद होगा कि इस कार्य का आरम्भ श्री रामदास गौड ने किया था और तब से वह बराबर होता चला आ रहा है। इन शालाओ मे चर्खे और तकली दोनो का उपयोग होता है। यह प्रयोग ठीक-ठीक सफल हुआ कहा जा सकता है। विद्यापीठ मे मुझे उसका कारखाना दिखाया गया था। उसमे बढई का काम बडा अच्छा होता है और उसमे तरक्की भी हो रही है। विद्यापीठ मे चर्खे की उन्नति अच्छी नही हुई है। मैंने अपने व्याख्यान मे विद्यार्थियो से और अध्यापको से यह कहा कि यदि चर्खे मे उनकी श्रद्धा नही है तो विद्यापीठ के पाठ्य विषयो मे से ही उसे निकाल देना चाहिए। क्योंकि चर्खे को राष्ट्रीय हलचल का एक अग मानने का रिवाज पड गया है, उसे इस प्रकार स्थान देने से कोई लाभ न होगा। वह समय अब आ गया है जब कि प्रत्येक राष्ट्रीयशाला को अपनी शिक्षा-सम्बन्धी नीति का विकास करना होगा। और उसका विरोध होने पर भी उसे सफल करने का प्रयत्न करना होगा।

लखनऊ मे

बनारस से हम लोग लखनऊ गये। वहा कोई तीन घण्टे से ज्यादा मुकाम रहा। वहा मुझे लखनऊ म्युनिसिपलटी ने अपनी तरफ से एक अभिनन्दनपत्र दिया। वह अभिनन्दनपत्र बडे ऊचे प्रकार की उर्दू मे लिखा हुआ था। मेरे-जैसे सादे मनुष्य को समझने के लिए, जो सयुक्त प्रान्त का निवासी नही है, भाषा को जितना भी कठिन बनाया जा सकता था, बनाने की चेष्टा की गई थी। उसमे अरबी और फारसी के बडे-बडे कठिन शब्दो का प्रयोग किया गया था और ऐसा मालूम होता था कि मानो हर एक मामूली बोलचाल का शब्द और जिसका [illegible] ऐसा एक भी शब्द उसमे न आने पावे, इसके लिए खास कोशिश की गई थी। इस[illegible] लिए मुझे उसका अग्रेजी अनुवाद दिया गया था। मैंने म्युनिसिपलटी से [illegible] उन्हें उनकी बडे ऊचे प्रकार की उर्दू के लिए मुबारकबाद नहीं दे सकता हूँ। मैं प्रान्तो की आपस की बोलचाल और व्यापार के लिए एक राष्ट्रीय भाषा की आवश्यकता को स्वीकार करता हू लेकिन यह भाषा [illegible] उर्दू या [illegible]

नहीं हो सकती। वह भाषा तो हिन्दुस्तानी ही हो सकती है और हिन्दी और उर्दू जाननेवाले लोग, जिन शब्दों का अमातौर पर प्रयोग करते हैं उन्ही शब्दों की वह बनी होगी। उसे हिन्दू और मुसलमान दोनों समझ सकेंगे। लखनऊ की म्युनिसिपलटी, खास करके स्वराजियों के हाथों में है। उनके पहिले के सभासदों के कार्य को देखते उनका कार्य भी कुछ कम महत्व का नही है। लेकिन मैंने अपने उन श्रोताओं से यह कहा कि सिर्फ अपने पहिले के कार्यकर्त्ताओं के समान ही काम कर सकने पर सन्तोष मान लेना ठीक नही है। महासभा के लोग जहां कही भी, जिस किसी भी संस्था को हस्तगत कर लेते हैं वहां उन्हें अधिक अच्छा काम कर दिखाना चाहिए और इसलिए लखनऊ के रास्ते ऐसे खराब हैं, यह विचारणीय वस्तु है। यदि रुपये की कमी उसका कारण है तो यह बहाना नहीं चल सकता क्योंकि महासभावालों से तो यह आशा रक्खी जाती है कि वे स्वयं कुदाली और फावड़ा लेकर स्वेच्छा से मेहनत करके रास्तों को दुरुस्त करें। मैंने म्युनिसिपलटी को उसके डेरी के प्रयोग के लिए मुबारकबादी दी और उसे यह चेतावनी भी दे दी कि जबतक वे अपने शहर को सस्ता और अच्छा दूध न पहुंचा सकें तबतक उन्हें कभी भी सन्तोष नही होना चाहिए।

म्युनिसिपलटी के अभिनन्दनपत्र में हिन्दू-मुस्लिम प्रश्न पर जानबूझकर कोई बात नही कही गई थी। फिर भी मित्रों (म्युनिसिपलटी के बहुत से हिन्दू और मुसलमान सभासद मेरे मित्र थे) के साथ बातचीत करने में मैं इस प्रश्न को छोड़ न सका और इसलिए इन दोनों दलों में जो तनाजा बढ़ता जा रहा है उस पर मुझे कुछ कहना पड़ा। मैंने उनसे कहा कि हिन्दुस्तान के दूसरे हिस्से में कुछ भी क्यो न हो कम-से-कम लखनऊ में तो दोनों दलों को अपने मतभेदों को दूर करके ऐसा ऐक्य कर लेना चाहिए कि कैसी भी स्थिति क्यों न उत्पन्न हो और हिन्दुस्तान के दूसरे भागों मे कैसे भी झगड़े क्यों न चलते रहें, उनका ऐक्य कभी टूटे ही नही।

मुझे चलते-चलते स्त्रियों के विद्यालय देखने का भी समय मिला था। यह विद्यालय अमरीकी मिशन का है और यह कहा जाता है कि सारे एशिया खण्ड के ऐसे विद्यालयों में यह सबसे पुराना है। मैंने देखा कि हिन्दुस्ताल के सभी प्रान्तों की लड़कियां वहां पढ़ती हैं। उन्होंने मुझे घेर लिया और वे अपनी हस्ताक्षरों की पुस्तक में मुझसे मेरे हस्ताक्षर करा लेना चाहती थी। मैंने अपनी शर्त सुना कर बहुतेरो को अपने हस्ताक्षर दिये हैं। और वह शर्त यह है कि जो लोग मुझसे मेरे हस्ताक्षर चाहे उन्हे खादी पहननी चाहिए और नियमपूर्वक कातना चाहिए। मैंने लड़कियों को भी यह शर्त सुनाई। उन्होने फौरन ही उसे स्वीकार कर लिया और वहां

की स्त्री शिक्षिका ने मुझे इस बात का यकीन दिलाया कि वह स्वय इस बात का ध्यान रक्खेंगी कि वे अपना वादा धर्म भाव से पूरा करती हैं या नही।

सीतापुर में

लखनऊ से हम लोग मोटर मे बैठ कर सीतापुर गये। वहा कोई दस बजे शाम को पहुचे होंगे। मैं अपने मुकाम पर पहुचू उसके पहले ही मुझे हिन्दू सभा का अभिनन्दनपत्र ग्रहण करने के लिए उसकी सभा मे जाना पडा था। मैंने उस अभिनन्दन-पत्र का उत्तर देते हुए कहा कि मैं उस अभिनन्दन-पत्र के योग्य नही हू क्योकि मैंने हिन्दू सभा के लिए अब तक कुछ भी काम नहीं किया और मैंने उनकी कुछ हलचलो के विरुद्ध, यद्यपि मित्रभाव से बहुत कुछ टीकाए भी की हैं। मैंने केवल इसलिए इस अभिनन्दन-पत्र को स्वीकार किया है कि हिन्दू धर्म के प्रति मेरी भक्ति किसी से कुछ कम नही है। मैंने उनसे यह भी कहा कि जितनी भी धार्मिक हलचलें हैं वे सच्ची सेवा तभी कर सकती हैं जब कि वे सत्य और अहिंसा को पूर्णत ग्रहण किये हुए हो। हिन्दू सभा से मैं सार्वजनिक सभा मे गया। वहा म्युनिसिपल्टी की तरफ से अभिनन्दन-पत्र दिया जाने वाला था। दूसरे दिन मैं अली-भाइयों के साथ हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन की परिषद मे गया। उसके प्रमुख ने जो व्याख्यान दिया था वह और प्रकारो से अच्छा होने पर भी उसमे फारसी और अरबी का एक भी शब्द न आने पावे, इसके लिए बडा ही ध्यान रक्खा गया था। [illegible] मुझे उन्ही बातो को फिर वहा भी दोहराना पडा जो मैंने लखनऊ की म्युनिसिपल्टी के अभिनन्दन-पत्र के समय कही थी। सस्कृतमय और [illegible] हिन्दी [illegible] प्रकार त्याज्य है जैसे कि फारसी मिली हुई कने प्रकार की उर्दू। मैंने हिन्दुस्तानी को इसलिए एक सामान्य माध्यमिक भाषा माना है कि उसे कोई [illegible] लोग समझते है। यह भाषा कृत्रिम लखनवी उर्दू नही है और न [illegible] हिन्दी है। कम-से-कम सम्मेलन से तो ऐसे ही अभिनन्दन [illegible] थी कि जिसे साधारण हिन्दू या मुसलमान कोई भी [illegible] जो "ईश्वर" का नाम लेता है लेकिन "खुदा" [illegible] मरतबा "खुदा" कहता है और "ईश्वर" का नाम [illegible] प्राणी नही हो सकता। मैंने उन श्रोताओ को [illegible] मे हिन्दी-प्रचार [illegible] हिन्दी [illegible] को उत्पन्न करने के लिए [illegible] को तो सयुक्त प्रान्त मे [illegible] हिन्दुस्तानी भाषा को [illegible] भाषाओ की पुस्तकें देवनागरी लिपि मे [illegible]

लगा लेना चाहिए। मौलाना मुहम्मद अली ने मेरी पहली बात पर जोर देकर कहा कि यदि हिन्दुस्तानी भाषा को अपने ही प्रान्त में लोकप्रिय बनाने के लिए किसी वाहरी कृत्रिम साधन की आवश्यकता है तो उसे एक सामान्य माध्यमिक भाषा वनने के प्रयत्न को छोड़ देना होगा। दोपहर को मौलाना शौकतअली के सभा-पतित्व मे एक सभा हुई थी। उन्होने हिन्दू-मुस्लिम ऐक्य पर व्याख्यान दिया था और अन्त में चर्खा और खादी के वारे मे भी कुछ कहा था। उनके बाद मुझसे व्याख्यान देने के लिए कहा गया। मैने उसी विषय पर व्याख्यान देना शुरू किया जिसका मौलाना साहब ने श्रोताओं को परिचय करा दिया था। मैने उन्हें चर्खा और खादी की आवश्यकता समझाई और यह कह कर अपनी दलीलें खतम कीं कि पटना मे जो निर्णय हुआ है उसमें उन्हें सहायता करनी चाहिए। मेरे खयाल में वह निर्णय कोई जबरदस्ती का निर्णय नही था, बल्कि महासभा में आम जनता की राय का वह एक प्रतिबिम्ब था। पण्डित मोतीलाल जी ने मेरे वाद व्याख्यान दिया। उन्होंने पटना के निर्णय को बखूबी समझाया, उसकी हर एक बात पर विवेचन किया और चर्खा और खादी में अपनी श्रद्धा प्रकट करते हुए यह कहा कि जबतक महासभा प्रधानतः राजनीतिक संस्था न बन जायगी तबतक वह लोगों की सम्पूर्णतया प्रतिनिधि-संस्था न वन सकेगी। पण्डितजी का वह प्रस्ताव, जिसमें पटना के निर्णय का समर्थन किया गया था और चर्खा संघ की स्थापना का अनुमोदन किया गया था, पास करने के वाद सव प्रतिनिधि गुजराती मण्डप में गये और वहां उन्होंने सीतापुर के गुजरातियों की दी हुई दावत का आनन्द लिया।

मेरी संयुक्तप्रान्त की यात्रा, यदि उसे यात्रा कह सकते हैं तो, लखनऊ से आये हुए हिन्दू सभा के शिष्टमण्डल के साथ लखनऊ के हिन्दू-मुसलमानों के वैमनस्य के वारे में वड़ी लम्बी और हार्दिक चर्चा के वाद खतम हुई थी। मैंने उनसे कहा कि उनके झगड़े मे पंच वनने का भार जो मैंने अपने सिर लिया है उसे मैं भूला नही हूं। मैंने गत वर्ष देहली में इसका भार अपने सिर लिया था लेकिन अब समय वदल गया है और अव एक भी दल अपना झगड़ा मेरे सामने पेश न करेगा। लेकिन यदि वे मुझे ही पंच वनाना चाहते हैं तो मैं वड़ी खुशी से लखनऊ जाने के लिए और उनका न्याय करने के लिए तैयार हूं। और जव उन्होंने मुझसे यह कहा कि वे मुझे पंच बनाने के लिए राजी हैं तो मैंने उनसे कहा कि वे मुसलमानो के पास भी जायं और फिर मुझे इस वात की सूचना दें कि दोनों दलों के नेतागण मेरे दिये हुए न्याय को स्वीकार करने के लिए तैयार हैं या नही। इस प्रकार मेरी विहार और संयुक्त प्रान्त की यात्रा समाप्त हुई।

—यं० इं०, न० जी०, हि० न० जी० ५।११।१९२५।]

२७. खद्दर नहीं मिलता

संयुक्त प्रान्त के एक सम्वाददाता लिखते हैं :—

"मैं देखता हूं कि यहां वकीलों में खद्दर की बड़ी मांग है। मैंने कुछ उन्हें बेचा भी है। उन्होंने शिकायत की कि उनके नगर में कोई खद्दर-भण्डार नहीं है। उन्होंने मुझसे कहा कि इसके लिए वे ५००० रुपये संग्रह करके एक कम्पनी बनाना चाहते हैं।"

मैं आशा करता हू कि प्रस्तावित कम्पनी बनाई जायगी। अपने बिहार के दौरे मे भी मैंने इस प्रकार की शियाकते सुनी थी। देश मे जगह-जगह खादी-भण्डार क्यो नही है इसका एक मात्र कारण है कि ऐसे भण्डारो को खोलने के लिए खादी की काफी माग नही है। अनुभव बताता है कि जब ऐसे भण्डार खोले जाते है और वे नियमित प्रचार के अभाव मे स्वावलम्बी नही हो पाते तथा कुछ समय बाद बन्द हो जाते हैं, तो उनमे लगी पूजी नष्ट हो जाती है और आन्दोलन की बदनामी होती है। इसलिए ज्यादा अच्छी बात यह है कि अखिल भारतीय चर्खा सघ के एजेण्ट खद्दर-प्रेमियो से सम्पर्क रक्खें, नमूनो और दामो का विज्ञापन करें और अनुकूल-तम स्थानो मे खादी की फेरी लगायें। जब वे देखें कि किसी स्थान मे नियमित और काफी माग है तो वे स्थानीय धनिको को वहा खद्दर भण्डार खोलने की सलाह दें, जिसका काम यह होगा कि नियमित प्रचार-कार्य करें।

इस विषय मे यदि विभिन्न स्थानो मे बीच-बीच मे प्रदर्शनिया की जाय तो वे ज्यादा प्रभावोत्पादक हो सकती हैं। बताया गया है कि हाल मे दिल्ली और बनारस मे जो प्रदर्शनिया की गई थी, वे काफी सफल हुई। उन पर ज्यादा [illegible] करने की जरूरत नही, यहा तक उन्हें स्वावलम्बी भी बनाया जा सकता है। खद्दर-सम्बन्धी कमेटियो के लिए यह कोई छोटा लाभ नही था कि दिल्ली मे [illegible] राय तथा बनारस मे आचार्य ध्रुव उन्हें इन प्रदर्शनियो के उद्घाटन मे [illegible] गये। यदि उनका प्रबन्ध ठीक ढग से हो तो उनका शैक्षणिक मूल्य भी बहुत [illegible] है। वे सब दलो एव वर्गों को एक साथ मिल-जुल कर काम करने के लिए [illegible] मच का भी काम देती हैं। मुझे अभी तक कोई [illegible] ऐसा नहीं मिला [illegible] सिद्धान्ततः खादी पर कोई एतराज हो।

—अंग्रेजी। यं० इं०, १।४।१९२६।]

२८. स्वामीजी के स्मरण

स्वामीजी से मेरा परिचय तब हुआ [illegible]

प्रसिद्ध थे। वह परिचय भी पत्रों से हुआ। उस समय वह कांगड़ी गुरुकुल के प्रधान थे जो कि उनका सबसे पहिला और बड़ा शिक्षा-क्षेत्र का काम है। वह सिर्फ पश्चिमीय शिक्षा-पद्धति से ही असन्तुष्ट न थे, लड़कों में वह वेद-शिक्षा का प्रचार करना चाहते थे और पढ़ाते थे हिन्दी के जरिए, अंग्रेजी के नहीं। शिक्षाकाल में उन्हें ब्रह्मचारी रखना चाहते थे। द० अफ़्रीका के सत्याग्रहियों के लिए उस समय जो धन इकट्ठा किया जा रहा था उसमें चन्दा देने के लिए उन्होंने लड़कों को उत्साहित किया था। वह चाहते थे कि लड़के खुद कुली बन कर, मजदूरी करके चन्दा दें, क्योंकि वह युद्ध क्या कुलियों का नही था? लड़कों ने यह सब पूरा कर दिखाया और पूरी मजदूरी कमा कर मेरे पास भेजी। इस विषय में स्वामीजी ने मुझे जो पत्र भेजा था वह हिन्दी में था। उन्होंने मुझे मेरे प्रिय भाई, कह कर लिखा था। इसने मुझे महात्मा मुशीराम का प्रिय बना दिया। इससे पहिले हम दोनों कभी मिले नही थे।

हम लोगों के बीच के सूत्र ऐण्ड्रूज थे। उनकी इच्छा थी कि जब कभी मैं देश लौटूं उनके तीनों मित्रों—कवि ठाकुर, प्रिन्सपल रुद्र और महात्मा मुशीराम—से परिचय प्राप्त करूं।

वह पत्र पाने के बाद से हम दोनों एक ही सेना के सैनिक बन गये। उनके प्रिय गुरुकुल मे हम १९१५ में मिले और उसके बाद से हर एक मुलाकात में हम दोनों परस्पर निकट आते गये और एक दूसरे को ज्यादा अच्छी तरह समझने लगे। प्राचीन भारत, संस्कृत और हिन्दी के प्रति उनका प्रेम असीम था। बेशक, असहयोग के पैदा होने के बहुत पहले से ही वह असहयोगी थे। स्वराज्य के लिए अधीर थे। अस्पृश्यता से नफरत करते थे और अस्पृश्यों की स्थिति ऊंची करना चाहते थे। उनकी स्वाधीनता पर कोई बन्धन नही सह सकते थे।

जब रौलट ऐक्ट का आन्दोलन शुरू हुआ तो उसे सबसे पहले शुरू करनेवालों में से वह थे। उन्होने मुझे बहुत ही प्रेम से भरा हुआ एक पत्र भेजा। किन्तु वीरमगांम और अमृतसर काण्ड के बाद सत्याग्रह का स्थगित किया जाना वह नही समझ सके। उस समय से हमारे बीच मतभेद शुरू हुए किन्तु उनसे हम लोगों के भाई-भाई के सम्बन्ध में कभी कोई अन्तर नही पड़ा। उस मतभेद से मुझ पर उनका बाल-सुलभ स्वभाव प्रकट हुआ। परिणाम का विचार किये बिना ही, उन्हें जैसा मालूम था, उन्होने मुझसे सच्ची बात कह दी। वह अति साहसिक थे। समय बीतने के साथ-साथ हम दोनो मे जो स्वभाव का अन्तर था उसे मैं देखता गया किन्तु उससे तो उनकी आत्मा की शुद्धता ही सिद्ध हुई। सबको सुनाकर विचार करना

कुछ पाप नहीं है। यह तो एक गुण है। यह सत्यप्रियता का सर्वप्रधान लक्षण है। स्वामीजी ने अपने विचार गुप्त रक्खे ही नही।

बारडोली के निश्चय से ही उनका दिल टूट गया। मुझसे वह निराश हो गये। उनका प्रकट विरोध बहुत जबरदस्त था। मेरे नाम उनके निजी पत्रो मे और भी विरोध होता था किन्तु मतभेद पर वह जितना ज़ोर देते थे, प्रेम पर भी उतना ही। प्रेम का विश्वास केवल पत्रो मे ही दिला देने से वह सन्तुष्ट न थे। मौका मिलने पर उन्होंने मुझे ढूढ निकाला और मुझे अपनी स्थिति समझाई और मेरी समझने की कोशिश की। मगर मुझे मालूम होता है कि मुझे ढूढने का असल कारण यह था कि जिसमे अगर इसकी जरूरत हो तो मुझे वह विश्वास दिला सकें कि एक छोटे भाई के समान मुझ पर उनकी प्रीति जैसी-की-तैसी बनी हुई है।

आर्य समाज और उसके सस्थापक पर मेरे मतो से और उनके नाम का उल्लेख करने से उन्हें बहुत कष्ट हुआ पर इस धक्के को सह लेने की शक्ति हमारी मित्रता मे थी। वह यह नही समझ सकते थे कि महर्षि के विषय मे मेरे मतो और अपने व्यक्तिगत शत्रुओ के प्रति ऋषि की असीम क्षमा का एक साथ कैसे मेल बैठ सकता है। महर्षि मे उनकी इतनी अधिक श्रद्धा थी कि उन पर या उनकी शिक्षाओं पर कोई भी टीका वह सह नही सकते थे।

शुद्धि-आन्दोलन के लिए मुसलमानी पत्रो मे उनकी बडी कडी आलोचनाएं और निन्दा की गई है। मैं स्वय उनके दृष्टि-बिन्दु को स्वीकार नही कर सका था। अब भी मैं उसे मानता नही। किन्तु मेरी नजर मे अपने दृष्टि-बिन्दु से वह अपनी स्थिति का पूरा बचाव करते थे। जबतक शुद्धि और तबलीग मर्यादा के भीतर रहें, तबतक दोनो ही बराबर छूट के अधिकारी हैं। इस महा विवाद-ग्रस्त विषय की चर्चा का अवसर यह नही है। तबलीग के और शुद्धि के, जो उनका जवाब है, मूल मे ही परिवर्तन करना होगा। ससार के धर्मों के उदार अध्ययन से उनके [illegible] होने के साथ-साथ शुद्धि या धर्म-प्रचार का वर्तमान बेढगा तरीका, जो तत्व से [illegible] रूप पर ही ध्यान देता है, बिल्कुल बदल जायगा। यह तरीका तो एक दल की [illegible]नता को छोडकर दूसरे दल मे जा मिलना है और एक दूसरे के धर्मों को गाली देना है। इसीसे परस्पर घृणा फैलती है।

अगर हम हिन्दू और मुसलमान दोनों, शुद्धि का आन्तरिक [illegible] समझ सकें तो स्वामीजी की मृत्यु से लाभ उठाया जा सकता है।

एक महान् सुधारक के जीवन के स्मरणों को मैं [illegible] महीनों पहले के आखिरी आगमन की बात के बिना खतम नहीं कर सकता। [illegible] मित्रो को मैं विश्वास दिलाता हूँ कि वह मुसलमानों के दुश्मन नहीं थे। [illegible]

मानों का विश्वास बेशक नहीं करते थे किन्तु उन लोगों से उनका कुछ द्वेष नही था। उनका खयाल था कि हिन्दू दवा दिये गये हैं और उन्हें बहादुर बन कर अपनी और अपनी इज्जत की रक्षा करने योग्य बनना चाहिए। इस बारे में उन्होंने मुझसे कहा था कि "मेरे विषय मे बड़ी गलतफहमी फैली हुई है। मेरे विरुद्ध कही जानेवाली कई बातों में मैं बिल्कुल निर्दोष हूं। मेरे पास धमकी के कितने एक पत्र आया करते है। मित्र गण उन्हे अकेले चलने मे मना करते थे। मगर यह परम आस्तिक पुरुष उनका जवाब दिया करता था—ईश्वर की रक्षा के सिवाय और किस रक्षा का मैं भरोसा करूं ? उसकी आज्ञा के बिना एक तिनका भी नही हिलता। मैं जानता हूं कि जबतक वह मुझसे इस देह के द्वारा सेवा लेना चाहता है, मेरा बाल बाँका नहीं हो सकता।"

आश्रम में रहते समय उन्होने आश्रम-पाठशाला के लड़के-लड़कियों से बातें कीं। उनका कहना था कि हिन्दू धर्म की सबसे बड़ी रक्षा आत्मशुद्धि से ही होगी, भीतर से ही होगी। चारित्र्य और शरीर के गठन के लिए, ब्रह्मचर्य पर वह बहुत ज़ोर देते थे।

—अंग्रेजी। यं० इं०। हि० न० जी०, ६।१।१९२७।]

२९. श्रद्धानन्द स्मारक

यह उचित ही है कि हिन्दू सभा की ओर से स्वामी श्रद्धानन्द के स्मारक के लिए धन की सहायता मांगी जाय। स्वामीजी संन्यास धारण के बाद जिन कामों के लिए जीते थे, उनके लिए चन्दा इकट्ठा करने का हिन्दू महासभा ने निश्चय किया है। इस निश्चय के लिए मैं उसे साधुवाद देता हूं। वे काम हैं—अस्पृश्यता-निवारण, शुद्धि और संगठन। ५ लाख की अपील की गई है अस्पृश्यता निवारण के लिए और शुद्धि और संगठन के लिए भी उतने की ही। जिसे साधारणतः शुद्धि समझा जाता है उस अर्थ में शुद्धि आन्दोलन की आवश्यकता में मेरा विश्वास अब भी नही है। पापियों की शुद्धि नैरन्तर आन्तरिक क्रिया है। उन लोगों की शुद्धि जो न तो हिन्दू न मुसलमान ही कहे जा सकते हैं या जो हाल में ही विधर्मी करार दिये गये है मगर जो यह भी नही जानते कि धर्म-परिवर्तन कहते किसे हैं और जो निश्चय रूप से हिन्दू ही रहना चाहते है धर्म-परिवर्तन नहीं है, बल्कि प्रायश्चित्त है। शुद्धि का तीसरा पहलू है असली धर्म-परिवर्तन। इस ज्ञान और सहनशीलता के युग में मैं उसकी ज़रूरत नही मानता। मैं धर्म-परिवर्तन का

विरोधी हू चाहे कोई उसे हिन्दुओ में शुद्धि, मुसलमानो मे तबलीग या क्रिस्तानो मे धर्म-परिवर्तन कहे। धर्म-परिवर्तन तो हृदय की क्रिया है और उसे केवल भगवान ही जान सकता है। उसे तो अपने आप पर ही छोड देना होगा। मगर धर्म-परिवर्तन पर मेरे मत-प्रकाश करने का यह स्थान नही है। जिनका इसमे विश्वास है उन्हे विना किसी विरोध के अपने रास्ते चलने का तवतक पूरा अधिकार है जवतक वे उचित सीमाओ के अन्दर रहते हैं यानी जवतक कोई जोर या धोखा या लालच नही दिया जाता और जवतक दोनो पक्षो को पूरी स्वतन्त्रता है और वे सयानी उम्र और परिपक्व वुद्धि के हैं। इसलिए जिनका शुद्धि मे विश्वास है उन्हे इस अपील पर सहायता देने का पूरा अधिकार है।

अगर वह अपनी हस्ती अलग रखना चाहे तो हर एक सम्प्रदाय को अपना सगठन करने का पूरा अधिकार है वल्कि उसके लिए यह परम आवश्यक है। मैं इससे इसलिए अलग रहा हू कि सगठन के विषय मे मेरे विचार कुछ अनोखे हैं। सख्या से अधिक गुण पर मेरा विश्वास है। आजकल सख्या पर वल्कि गुण के वदले भी उसी पर विश्वास रखने की चाल है। समाजशास्त्र और अर्थशास्त्र मे नि'सन्देह संख्या को स्थान है। केवल मैं ही इसका उस प्रकार संगठन करने मे असमर्थ हू जैसा कि आजकल हो रहा है। इसलिए मेरे लिए अछूतोद्धार के ही कोप की कीमत है। इसकी अपनी निराली ही शक्ति है। हिन्दू धर्म के सुधार और इसकी सच्ची रक्षा के लिए अछूतोद्धार सवसे वडी वस्तु है। इसमें सव कुछ शामिल है और इसलिए हिन्दू धर्म का यह सवसे काला दाग अगर मिट जाय तो शुद्धि और संगठन से जो कुछ मिल सकेगा वह सव हमे इससे अपने आप ही मिल जायगा। और मैं यह इसलिए नही कहता कि अछूतो की, जिन्हे हर एक हिन्दू को गले लगाना चाहिए, वहुत वड़ी सख्या है किन्तु इसलिए कि एक पुराने और असभ्य रिवाज को तोड डालने के ज्ञान और उससे होने वाली शुद्धि से इतनी ताकत मिलेगी जो रोकी न जा सकेगी। इसलिए अस्पृश्यता-निवारण एक आध्यात्मिक [illegible] है। स्वामीजी उस सुधार के जीवित मूर्ति थे क्योंकि वह इसमे आधा-आधा सुधार नही चाहते थे, वह समझौता नही कर सकते; दब नही सकते थे। अगर उनका चलता तो वात की वात मे हिन्दू धर्म से अस्पृश्यता को निकाल बाहर करते। वह हर एक मन्दिर को, हर एक कुए को सबो बराबरी [illegible] के साथ [illegible] लिए खोल देते और इसका फल भुगत लेते। स्वामी श्रद्धानन्द के [illegible] अच्छा कोई स्मारक नही सोच सकता कि [illegible] दिलो से अस्पृश्यता की अपवित्रता निकाल दे और उनके साथ [illegible] बर्ताव करे। उस आदमी की धर्म की महानता तो मेरी समझ मे [illegible]

हिन्दू-धर्म से सदा के लिए निकाल डालने के उसके दृढ़ निश्चय का चिह्न भर होगा।

स्वामीजी को सामुदायिक और धार्मिक रूप से सम्मान-प्रदर्शन करने के लिए जनवरी सोमवार का दिन निश्चय किया गया है। मुझे आशा है कि हर स्थान, हर गांव में यह होगा। मगर इस प्रदर्शन का असल मतलब ही गायब हो जायगा अगर उसमें भाग लेनेवाले अपने में से उसी के साथ अस्पृश्यता की अपवित्रता को न दूर करें। हर एक अछूत को उस सभा में शामिल होना चाहिए और क्या ही अच्छी बात होती अगर उसी दिन अछूतों के लिए सभी मन्दिर खोल दिये जाते। अगर संगठित रूप से उद्योग किया जाय तो उस दिन सूर्यास्त के पहले ही कोष भर जा सकता है।

—यं० इं०। हि० न० जी०, ६।१।१९२७।]

- पापियों की शुद्धि नैरन्तर आन्तरिक क्रिया है।
- संख्या से अधिक गुण पर मेरा विश्वास है।
- अस्पृश्यता-निवारण एक आध्यात्मिक क्रिया है।

३०. सनातन प्रश्न

अल्मोड़ा से एक संन्यासी लिखते हैं:—

"गत १५ अप्रैल के यं० इं० में किसी पत्र-प्रेषक को उत्तर देते हुए आपने लिखा है कि यदि सांप भी आप पर आक्रमण करे तो आप उसे मारने की इच्छा न करेंगे। मेरे ख्याल से यह अनुचित होगा। क्योंकि एक तो इस तरह आप मानों स्वयं आत्मघात करेंगे, और दूसरे, उस विषैले जन्तु को वैसे ही छोड़ कर आप दूसरे लोगों को हानि पहुंचाने में कारण होंगे। दूसरा उदाहरण लीजिए। किसी गृहस्थ के घर में सांप निकलता है। वह उसे मारता नहीं, बल्कि अपने घर से बाहर छोड़ देता है। फलतः वह सांप निश्चय ही दूसरे किसी के घर में घुसकर उसमें रहनेवालों को हानि पहुंचायेगा। और निश्चय ही इसकी जिम्मेदारी उस व्यक्ति के सिर पर होगी, जिसने दया की मिथ्या कल्पना के कारण ऐसे भयंकर जन्तु को जिन्दा छोड़ दिया। और भी कितने ही सरपट चलनेवाले जानवर, पशु जन्तु हैं जो मनुष्यों को हानि पहुंचाते हैं, [illegible] फैलाते हैं। स[illegible] ऐसे प्राणियों के नाश को हिंसा कहा [illegible] से कहीं कम जो इनके जिन्दा रहने से होती है। खैर, [illegible] आदमी [illegible]

जान बचाने के खयाल से ऐसे भयंकर जानवरों को मारे तो वह हिंसा कही जाय, परन्तु यदि अनेक कीमती प्राणो को बचाने के लिए उसे मारा जाय तो वह कदापि हिंसा न कही जानी चाहिए। आखिर प्रत्येक कार्य की भलाई-बुराई का निर्णय हेतु को देखकर होता है, और जब वही उच्च तथा शुद्ध हो, तब वह नाश या वध हिंसा नहीं कर्तव्य का रूप धारण कर लेता है। मैं चाहता हूं कि आप इस प्रश्न का उत्तर यं० इं० में दें तो बड़ा अच्छा हो।"

सन्यासी का प्रश्न सनातन है। इसमे शक नही कि वह बडा जोरदार भी है। अगर उसमे यह शक्ति न होती तो प्राचीन काल से जो हत्या चली आ रही है, वह जारी नही रहती। बहुत कम लोग दुष्टतापूर्वक निष्ठुरता का काम करते हैं। इतिहास मे वर्णित घोर-से-घोर और निर्घृण अपराध या तो धर्म या इसी प्रकार के अन्य उदात्त ध्येय की ओट मे किये गये है। पर मेरे खयाल से तो उस हत्या से हमारी दशा जरा भी नही सुधरी है फिर भले ही वह हत्या धर्म-जैसे सर्वोच्च आदर्श के नाम पर हुई हो। बेशक, किसी न किसी प्राणी की किसी-न-किसी रूप मे हिंसा तो अनिवार्य है। जीव जीवो पर जीते हैं। इसलिए और महज इसीलिए बडे-बडे द्रष्टाओ ने उस स्थिति को मोक्ष कहा है जिसमे जीवन शरीर से मुक्त हो— उस शरीर से, जिसका पालन, सवर्धन करने के लिए हत्या या हिंसा अनिवार्य होती है। और मनुष्य के लिए इसी शरीर मे रहते हुए उस पद की आशा करना असम्भव भी नही, यदि वह हिंसा की मात्रा घटा कर कम-से-कम कर दे, जैसा कि वह निरामिषाहारी होकर कर सकता है। वह जितना ही जानबूझ कर तथा बुद्धि-पूर्वक अपने आपको ऐसी हिंसा से दूर रक्खेगा, जिसमे अपने निर्वाह के लिए दूसरे प्राणियो की हत्या होती है, उतना ही वह सत्य और परमात्मा के अधिक नजदीक होगा। सम्भव है, मनुष्य जाति ऐसा जीवन पसन्द न करे जिसमे कुछ भी आकर्षण न दिखाई दे। परन्तु इससे मेरे कथन के सत्य मे बाधा नही पहुचती। परन्तु वे लोग, जो कि पूर्णत ऐसा नि स्वार्थ जीवन व्यतीत कर रहे है, और प्राणिमात्र के प्रति करुणामय व्यवहार करते हैं, इसे परमात्मा का [illegible] सहायता करते हैं। वे मनुष्य-जाति को ऊचा उठाते है और इसकी [illegible] को आलोकित करते हैं। उस जीवन को नष्ट करना [illegible], जिनके बनाने की शक्ति हमे न हो। मुझे यह दलील [illegible] है, कि परमात्मा ने कुछ प्राणियो को इसलिए बनाया है कि [illegible] जाय, जिन्हे मनुष्य महज आनन्द के लिए या [illegible] रहे जो कि निश्चय ही [illegible] दरबार मे उन भयकर [illegible]

द्वारा हम प्रकृति के कानूनों को कभी न समझ पायेंगे। ऐसे पुरुषों के वर्णन हमारे पास मौजूद हैं जिनकी दया मनुष्य को व्याप्त कर उसे लांघ गई थी और जो भयंकर हिंस्र पशुओं के बीच रहते थे। समस्त जीवन-सृष्टि में कोई ऐसा आन्तरिक सम्बन्ध जरूर है, जिसके कारण शेर, सिंह, बाघ और सांपों ने उन मनुष्यों को कोई हानि नहीं पहुंचाई जो निर्भय होकर, उन पशुओं के मित्र बन कर, उनके पास गये थे।

यह दलील सदोष है कि यदि मैं किसी विषैले साँप को नही मारूंगा तो वह जरूर ही अनेक आदमियों और स्त्रियों की जान का ग्राहक होगा। यह मेरे कर्त्तव्य का अंग नही है कि मैं तमाम विषैले जन्तुओं को ढूँढ़-ढूँढ़कर मारता फिरूं। और न मुझे यह मान लेने की जरूरत है कि मुझे मिलनेवाले विषैले सांप को यदि मैं नहीं मार डालूगा तो वह किसी राहगीर को जरूर ही डस लेगा। उस सांप और मेरे पड़ोसी के बीच मुझे न्यायकर्त्ता नही बन जाना चाहिए। यदि मैं अपने पड़ोसियों के साथ वैसा ही सलूक करूं जैसे सलूक की आशा मै उनसे करता हूं; यदि मैं उनको किसी ऐसे बड़े खतरे में नही डालता जिसमें कि मैं हूं और यदि उन्हें नुकसान पहुंचाकर मैं अपना भला नही कर रहा हूं, तो मैं समझूंगा कि मैंने अपने पड़ोसियों के प्रति अपने कर्त्तव्य को पूरा कर दिया। इसलिए जैसा कि अक्सर किया जाता है, मैं उस सांप को अपने पड़ोसी के अहाते में नही छोडूंगा। अधिक-से-अधिक मैं यह कर सकता हूं कि सांप को जितना एक तरफ छोड़ा जा सके उतना छोड़कर मैं अपने पड़ोसियों को इस बात की सूचना कर दूं। मैं जानता हूं कि इससे मेरे पड़ोसियों को न तो कोई आराम मिलेगा, न रक्षा ही। पर हम तो मृत्यु के मुख में खड़े रह कर सत्य की राह ढूंढ़ रहे है। शायद हमारे जीवन में कदम-कदम पर जान का खतरा है। क्योंकि इस खतरे का ज्ञान होने पर तथा हमारे जीवन की अनित्यता का खयाल होते हुए भी जीव-मात्र के स्रोत उस भूतभावन के प्रति हमारी उदासीनता आश्चर्यजनक है। हमारे अहंकार से वह कुछ ही कम है।

इस उत्तर से मुझे सन्तोप नही है, जो मैं संन्यासी को दे रहा हूं। उनके पत्र से, जो कि हिन्दी में लिखा हुआ है, मुझे ज्ञात होता है कि वह स्वयं सत्य की खोज मे है। इसीलिए मुझे उनके प्रश्न का उत्तर इस तरह प्रकाश्यरूप से देना पड़ा। स्वयं मेरी दशा तो बड़ी दयनीय है। प्राणिमात्र की किसी भी रूप मे हिंसा देख कर मेरी बुद्धि तो बलवा कर देती है। पर मेरा हृदय अभी इतना मजबूत नही हो पाया जिसने मैं उन प्राणियों को अपना मित्र बना लू जिन्हें अनुभव ने हिंस्र साबित किया है। इसीलिए प्रत्यक्ष अनुभव से पैदा होनेवाले विश्वास की निर्भ्रान्त मापा

मेरे पास नही है। यह हालत तबतक बराबर बनी रहेगी जबतक कि मैं साप, बाघ आदि प्राणियो से डरने योग्य कायर बना रहूगा।

मैं इस प्रश्न का उत्तर बडी झिझक के साथ दे रहा हू। पर मुझे मालूम हुआ कि जाति खोने के भय से यदि मैं अपना विश्वास जाहिर न कर दूगा तो वह अनुचित होगा। क्योकि दक्षिण अफ्रीका मे मेरे मित्र एक बार मुझे ऐसा ही समझने लग गये थे। एक दिन हम खाना खा रहे थे, और इसी विषय पर बातचीत छिड गई। उन्होंने मेरे पुनर्जन्म, गोरक्षा, निरामिषाहारविषयक विचारो की पर्वा नही की; यद्यपि वे उन्हें बडे विचित्र दिखाई दिये पर उन्हे यह सुन कर बडा आश्चर्य हुआ—मुझ पर अविश्वास हो गया, जो उनके चेहरो पर स्पष्ट दिखाई देने लगा—कि यदि परमात्मा मुझे बल दें तो मैं साप को भी नही मारना चाहूगा, भले ही मुझे निश्चय हो जाय कि उसके न मारने से मेरी जान का पूरा-पूरा खतरा है। शीघ्र ही अविश्वास को हसी ने दबा दिया और वह हस कर बोले—"अरे, तब तो आप बडे भारी खतरनाक आदमी हैं।"

——अंग्रेजी। यं० इं०। हि० न० जी०, २३।६।१९२७।]

३१. धर्म के नाम पर अधर्म

मथुरा से एक भाई लिखते हैं—

"मथुरा के पास और गोवर्धन के अति निकट जतीपुरा ग्राम में आगामी मास में छप्पन भोग का मेला होगा। वैष्णव सम्प्रदाय के अन्तर्गत गुसाईं लोगो के द्वारा इसका आयोजन किया जायगा। सुना है कि अनुमान से २-३ लाख रुपया इस कार्य मे व्यय होगा। गुजरात के वैष्णवो, जिनमे मुख्यतः बम्बई के व्यापारी भाटिया हैं और जिनके यहा धर्मादे की रकम जमा रहती है, का रुपया इस मेले मे व्यय किया जायगा। इस छप्पन भोग के अवसर पर १०० या इससे अधिक ब्राह्मण श्रीमद्भागवत का एक साथ पारायण करेंगे और अनेक प्रकार के भोग-व्यंजन आदि पदार्थ बनेंगे। रथयात्रा का भी यही समय होगा। सहस्रो की संख्या में गुजराती लोग इस उत्सव मे शामिल होंगे। धर्म के लिए इस दिखावे को क्या आप उपयुक्त समझते हैं?

"यह व्रजभूमि श्रीकृष्ण महाराज का क्रीडा-स्थल है। यह किसी से छिपा नहीं है कि श्रीकृष्ण महाराज की गौ मे कितनी भक्ति थी अतएव गौ की भक्ति ही इस समय सच्ची श्रीकृष्ण-उपासना है। गोवंश का इस व्रजभूमि मे जितना कारुणिक दृश्य है, उसको देखकर रोंगटे खड़े हो जाते हैं।

मथुरा-वृन्दावन में श्रावण-भाद्रपद मास में अत्यधिक मेले लगते हैं। लाखों यात्री आते हैं। बाजार में अच्छा घी, दूध देखने में नहीं आता। (वनस्पति घी) और सड़े-बुसे घी का पकवान तथा मिठाई सर्वत्र ही बिकती है।"

उत्तर में बसनेवाले शास्त्र के जाननेवाले ब्राह्मण भी गुजरात के श्रद्धालु किन्तु गलत रास्ते पर चलनेवाले वैष्णवों के बारे में क्या विचार रखते है, उसे उन्ही के शब्दों में बतलाने के लिए मैने ऊपर का पत्र लेखक की ही भाषा में दिया है। मिष्ठान्न भोजन कराने में हजारों रुपये खर्च करना और इस क्रिया को धर्म समझना तो इसी युग की बलिहारी है। वैष्णव धर्म में पराये दु:ख का दर्शन ही मध्य विन्दु है, जब कि भावुक कहे जानेवाले वैष्णवों ने उसे भोग भोगने का साधन बना डाला है। जिस तरह इस देश में दूसरे जगहों में होता है, उसी तरह गोवर्धन में गोवंश का नाश होता जा रहा है; दूध घी की कमी की जो बात इस पत्र मे लिखी है, उसका अनुभव सभी यात्रियों को होता है। गुजरात के धनिक वैष्णव इस पत्र पर ध्यान दें, चेते और धर्म के नाम पर होते हुए अधर्म से बच जायं।

——न० जी०। हि० न० जी०, २३।८।१९२८।]

● **वैष्णव धर्म में पराये दु:ख का दर्शन ही मध्यविन्दु है।**

३२. लखनऊ की ओर

सर्वदल सम्मेलन की नियत की हुई समिति ने हिन्दुस्तान के लिए जो शासन-विधान तैयार किया है, वह छप गया है। उसकी ओर सबका ध्यान आकर्षित हुआ है। सभी हिन्दुस्तानी नेताओं ने, जिन्होंने उसके बारे में कुछ भी कहा है, उसे आशीर्वाद ही दिया है। आलोचकों को उसके बारे में संयम के साथ और कभी-कभी अज्ञात रूप से प्रशंसा के साथ लिखना पड़ा है। इसने सभी को विचार में डाल दिया है।

इसलिए स्वभावत: ही सबकी आंखें लखनऊ की ओर लगी हुई है जहां कि डाक्टर अंसारी ने सर्वदल सम्मेलन की बैठक बुलाई है। इस रिपोर्ट ने लोगों का इतना ध्यान खीचा है कि उस पर विचार करने के लिए, ऐसी आशा की जाती है, अवश्य ही एक बड़ी और प्रतिनिधि सभा होगी।

मगर यह सभा करेगी क्या? इस सम्मेलन का सारा काम चौपट कर देना और नेहरू कमेटी की सारी मिहनत बेकार कर देना बहुत ही सहज है। इतने धैर्य और परिश्रम से जो विधान तैयार किया गया है, उसे मुसलमान चाहे तो यह कह

कर तोड दे सकते हैं कि हमने जितना मागा था उतना हमे नही मिला है। हिन्दू भी इस पर अड जा सकते है कि हम जौ भर भी नही हटेंगे और यो भी कुछ करना असम्भव कर दे सकते है। मगर ये सभी लोग अगर इस रिपोर्ट पर अपनी-अपनी व्यक्तिगत दृष्टि से विचार करें तो भूल करेंगे। फिर हमे सहज ही कोई ऐसी चीज नही मिल सकेगी, जैसी कि इतने प्रतिनिधिक लोगो के हस्ताक्षर के साथ इस रिपोर्ट के रूप मे मिली है।

इसलिए सभी लोग रिपोर्ट पर केवल एक ही दृष्टि से यानी राष्ट्रीय दृष्टि से विचार करे। इस समिति की रिपोर्ट मे सबको अपनी उडान भरने का पूरा अवकाश है। हर एक समुचित स्वार्थ की रक्षा की इसमे पूरी व्यवस्था है बशर्ते कि उसमे फैलने की शक्ति हो। मताधिकार तो जितने लोगो को देना सम्भव हो सकता है, दिया गया है।

हा, अधीर, अत्यन्त एक पक्षवादी लोग तो इससे असन्तुष्ट होगे ही। वे जान जाय कि इस रिपोर्ट मे प्राय विरोधी विचार रखनेवालो के बीच भी जो महत्तम समापवर्त्य है यानी जो अधिक-से-अधिक समान बाते हैं वही दी गई हैं। सभी दलो के प्रतिनिधियो की तैयार की हुई इस रिपोर्ट का इतना विरोध करना कि सारा मेल टूट जाय, अराष्ट्रीय काम होगा।

समयानुसार नीति ग्रहण करने का खयाल भूल कर भी, मैं यह कहना चाहता हू कि इस रिपोर्ट से सभी समुचित आकाक्षाओ को सन्तोष मिलता है और यह रिपोर्ट अपने ही बल पर खडी रह सकती है। इसलिए नेहरू कमिटी की रिपोर्ट को सागोपाग करने के लिए सिर्फ इतनी ही जरूरत है कि हम पारस्परिक विश्वास रक्खें, थोडा-सा अपनी ओर भी झुकें और थोडा-सा दूसरे पक्ष का भी झुकना स्वीकार करें और अपने-अपने छोटे व्यक्तित्व मे नही किन्तु इस राष्ट्र मे पूरा विश्वास रक्खें, जिसके हम सभी एक एक नम्र सभ्य हैं।

—यं० इं०। हि० न० जी०, २३।८।१९२८।]

३३. लखनऊ के बाद

बारडोली की विजय के बाद तुरन्त ही लखनऊ का भी बहुत अच्छा [illegible] घटनाओ का बडा ही सुन्दर मेल कहा जायगा। आज पण्डित मोतीलाल नेहरू के समान हिन्दुस्तान मे और [illegible] गये है और इसका [illegible] को [illegible] है। मगर यदि सब पक्षों ने इस सभा को सफल बनाने का [illegible] न किया होता तो

वह अकेले भी कुछ नही कर सकते थे। हिन्दू या मुसलमान सहज ही अड़ंगा लगा दे सकते थे। सिक्खों मे भी यह शक्ति थी। मगर नेहरू समिति के इतने घोर परिश्रम के काम को चौपट कर देने का दिल किसी मे नही था। तब इसमे आश्चर्य ही क्या है कि अदम्य आशावादी पण्डित मालवीय जी ने कहा कि सन् १९३० में स्वराज्य मिल जायगा।

इस सुखद परिणाम का श्रेय पं० मोतीलाल जी के साथ डा० अंसारी को भी है। लखनऊ की सभा को व्यवस्था-चातुरी के साथ चलाने की और दूसरी प्रत्यक्ष सहायताओं से कही बड़ी उनकी अप्रत्यक्ष सहायता थी। नेहरू समिति जब बुलाती, वह उसकी सेवा मे हाजिर होते थे। मुसलमानों पर उनका प्रभाव लासानी है। उनके विरोध को जीतने मे उन्होंने उसका पूरा-पूरा उपयोग किया। उनकी प्रत्यक्ष ईमानदारी और वैसी ही प्रत्यक्ष राष्ट्रीयता का प्रभाव हिन्दुओं पर पड़े बिना नही रह सकता था। सर तेजबहादुर सप्रू के नेतृत्व में शामिल होकर उदार दलवालों ने सभा को वह विजय दी जो उनके बिना नही मिलती। मैं डाक्टर बेसेण्ट के साथ-साथ यह चाहता हूं कि वह राष्ट्रीय संस्था (महासभा) में फिर शामिल हो जायं। जिस तरह कि हिन्दू या मुसलमान अपना व्यक्तित्व नहीं खोते है, उसी तरह उनके लिए भी अपना व्यक्तित्व खोना जरूरी नही है।

उदार दलवालों का उल्लेख हमें आगे के काम पर लाता है। अब भी बहुत से राजनीति-कुशलता के काम करने है। मगर उससे भी अधिक जरूरी है प्रजा को तैयार करना। पं० जवाहरलाल नेहरू ने ठीक ही लिखा है कि चाहे वह औपनिवेशिक स्वराज्य हो या स्वतन्त्रता हो, मगर राष्ट्रीय मांग यदि पूरी करानी है तो जनता के प्रबल लोकमत का सहारा आवश्यक होगा। अब यदि यह लोकमत अहिंसक होता है तो बारडोली ने रास्ता दिखला दिया है। अहिंसा महासभा के मन्तव्य का एक आवश्यक अंग है। इसमें कोई शक नही है कि बारडोली के पहिले अहिंसा की बात जरा ढीली पड़ गई थी। मगर जिस तरह कि नेहरू रिपोर्ट के जरिए सर्वमत से मांग करना सम्भव हो गया है, उसी तरह बारडोली ने अहिंसा पर से उठता हुआ विश्वास फिर से लौटा लिया है।

इसलिए अगर हमें जनता के सहारे का निश्चय हो तो फिर इस फेर में पड़ने की कोई जरूरत नही है कि हम स्वराज्य का नाम औपनिवेशिक स्वराज्य रखते हैं या स्वतन्त्रता। अगर हमे जनता के प्रबल लोकमत का सहारा रहा तो औपनिवेशिक स्वराज्य महज ही स्वतन्त्रता से भी बडी चीज़ हो सकती है और उसके बिना स्वतन्त्रता भी सहज ही महज तमाशा भर बन जा सकती है। अगर हमे असल चीज मिल जाय तो फिर नाम मे क्या रक्खा हुआ है। आप गुलाब को गुलाब ही कहें या और कुछ

कहें मगर इससे उसकी सुगन्ध मे कोई फर्क नही पड़ जायगा। इसलिए हम यह निश्चय कर लें कि यह लोकमत अहिंसक होगा या हिंसक और फिर सभी कार्यकर्त्ता सच्ची लगन से उसे पैदा करने मे लग जाय, जैसा कि नेताओ को भी जरूर ही शासन-विधान बनाने मे सिर खपाते रहना पड़ेगा।

—यं० इं०। हि० न० जी, ६।११।१९२८।]

३४. फन्दे

प० जवाहरलाल नेहरू लखनऊ की दुर्घटना का वर्णन करते हुए अपने खानगी खत मे मुझे लिखते है—

"कल सुबह एक घटना हुई जो आपको मजेदार मालूम होगी। मैंने अपने वक्तव्य में उसका जिक्र नहीं किया है। जब पुलीस और सवारों ने हमको स्टेशन तक पीछे खदेड़ दिया, एक नवयुवक मेरे नजदीक आया और मुझसे कहा कि अगर आप चाहें तो मैं भी अभी एक तमंचा आपको ला दे देता हूं (मैंने उसको एक विद्यार्थी समझा था)'। पुलीस के डण्डों और लाठियों की मार अभी ताजी थी और लोग गुस्से में उत्तेजित हो रहे थे। मैं समझता हूं, उसने सोचा होगा कि तमंचा देने का यह बड़ा अच्छा मौका है। मैंने उससे कहा—हटो, ऐसी वेवकूफी न करना। लेकिन थोड़ी ही देर के बाद मुझे अचानक पता चला कि वह व्यक्ति खुफिया का आदमी था।"

प० जवाहरलाल तो मजे मे सुरक्षित हैं क्योंकि वह किसी छिपी साजिश को पसन्द नही करते। यदि अपने देश की स्वतन्त्रता के लिए उन्हें अपनी तजवीजो मे तमचो की जरूरत मालूम होगी तो वह किसी भी बाहरी आदमी की मदद की राह न देखेंगे। खुद खुल्लमखुल्ला तमचा बाधेंगे और जब देखेंगे कि मौका आ गया है, धड़ाके से उसे चलावेंगे भी। इसलिए वह खुफिया पुलिस की इस सहायता के चक्कर मे नही आ सकते थे। और जो बात पण्डित जवाहरलाल के सम्बन्ध मे है, वही तमाम महासभावादियो के लिए कही जा सकती है, क्योंकि महासभा के क्षेत्र मे गुप्त षड्यन्त्रो के प्रति दुर्भाव पाया जाता है और यह खुशी की बात है। महासभावालो ने दरवाजे बन्द करके गुपचुप बातें करना बन्द कर दिया है। खुफिया पुलीस के डर को उन्होंने दूर भगा दिया है।

पर खुफिया पुलीस के पास यदि ऐसे गुप्तचर न हों जो और बातों के साथ-साथ लोगो को फुसलाते और ललचाते रहें, और अपने जाल मे फसाते रहें तो

फिर उसका नाम ही क्या रहा ? इस खुफिया पुलिस के धन्धे से बढ़कर मनुष्य को कमीना बनाने और नीचा गिरानेवाले धन्धे की कल्पना करना भी कठिन है। फिर भी हम देखते हैं कि दुनिया की मुख्य-मुख्य सरकारों ने उसे एक शास्त्र का रूप दे दिया है और उसमें दुनिया के कुछ बड़े-बड़े चतुर और बुद्धिमान लोग काम कर रहे हैं। ब्रिटेन इस धन्धे में शायद सबसे आगे है। खुफिया पुलीस में झूठ बोलना तो बतौर एक कला के सिखाया जाता है। पोन्सनबाय-लिखित 'युद्ध के समय की झूठी बातें' नामक पुस्तक में दुनिया के उन तमाम राष्ट्रों के झूठों का दुःखप्रद वर्णन मिलता है, जो कि परोपकार का झूठा बहाना बनाकर परस्पर विनाश का खेल खेल रहे थे। उन राष्ट्रों की करतूतों का वह एक संग्रह ही है, और ब्रिटेन उनमें छोटा ही नही बल्कि सबसे बड़ा अपराधी है। यदि वह कम लालची और कम स्वार्थी होता तो उस युद्ध को बन्द करा सकता था।

हिन्दुस्तान में जहां-जहां नजर जाती है, फन्दे ही फन्दे नजर आते हैं। मुझे तो इस साम्राज्य के द्वारा अथवा इसके नाम पर बनाई प्रत्येक संस्था में, फिर वह कितनी ही उपकारी क्यों न बताई जाती हो, इसकी बू बराबर आती रहती है। यह बात कि हम उन सबके या कुछ के लिए दौड़ पड़ते हैं या उनसे चिपटे रहते हैं, कोई उनके अच्छे होने का सबूत नहीं है। यह तो हमारी लाचारी, अदूरदर्शिता और स्वार्थ-साधुता का सबूत है। हममें इतनी अधिक कुर्बानी की हिम्मत और हौसला नहीं है, जो इस सल्तनत को कायम रखने में सहायता देने से अपने को बचाने के लिए आवश्यक है। हम शायद भूल जाते हैं कि इस साम्राज्य की हस्ती झूठ और पशुबल के ऊपर है और यदि एक मात्र नही तो इसका मुख्य उद्देश्य है, पृथ्वी की निर्बल जातियों को दिन-दिन अधिकाधिक लूटने की नीति को चिरंजीवि बनाना।

एक तरह से तो खुफिया पुलिस का बड़ी चतुराई से रचा हुआ फन्दा बहुत खतरनाक है। पर जिनका बाहरी रूप बहुत लुभावना होता है वही वास्तव में सबसे भयंकर होते हैं। हम अक्सर इन लुभावने किन्तु प्राणहारक जालों में फँस जाते है और सो भी उनका पता पाने के पहले ही। ऐसे ही कारणों से रोमन लोगों ने कहा है कि यूनानी लोगों से सावधान रहो, खास कर तब जब वे भेंट लेकर आये हों। जब शत्रु परोपकारी का रूप बनाकर हमारे सामने आता है, तब हमें उससे बहुत डरने की जरूरत रहती है। क्या अच्छा हो, यदि देश के नवयुवक इस सीधे सत्य को समझ लें और इन फन्दों से बचे रहें जिनमे कि वे दिन-दिन फँसते जा रहे है। इस साम्राज्य को कोसते हुए और देश को उसके असह्य जुए से मुक्त करने की आशा करते हुए भी जो कि न केवल आर्थिक दृष्टि से राष्ट्र को तबाह कर रहा

है बल्कि असीम नैतिक बुराई का भी कारण बन रहा है, वे उसके जाल में फँसते जाते है।

३५. पण्डित सुन्दरलाल की पुस्तक

युक्तप्रान्त की सरकार ने पण्डित सुन्दरलाल की 'भारत मे अग्रेजी राज्य' नामक पुस्तक को जब्त करने मे बडी सख्ती से काम लिया था। लेकिन उसे इतने से ही सन्तोष न हुआ। अब वह उन लोगो को भी सता रही है, जिनके पास जब्ती से पहले उक्त पुस्तक की प्रतिया पहुच चुकी थी, या जिनके पास उसके होने का सरकार को शक है। युक्तप्रान्त की सरकार की प्रेरणा से हो या स्वेच्छा से हो, मध्यप्रान्त की सरकार ने भी यू० पी० सरकार की नकल करते हुए अपने प्रान्त मे इस पुस्तक का प्रवेश रोक दिया है। एक सम्वाददाता पूछते हैं, अब वे लोग क्या करें जिनके पास उक्त पुस्तक है? मेरे विचार मे जिन लोगो के पास वह पुस्तक है उनके लिए यह जरूरी नही है कि वे उसकी जिल्दो को पुलिस के हवाले कर दें। पुस्तक को अपने पास रखने से किसी तरह नीति का भग नही होता। और जो लोग पुस्तक की जब्ती को दुष्टतापूर्ण लूट समझते है उनका न केवल यह कर्त्तव्य ही नही है कि वे जब्ती के काम मे सरकार की मदद न करें बल्कि उन्हें तो चाहिए कि वे हर कानूनी उपाय से अधिकारियो की उन घोर दुष्टतापूर्ण हरकतों को असफल बनावे, जिनके जरिए वे पुस्तक की उन प्रतियो को भी हड़प जाना चाहते हैं, जो प्रकाशक के हाथ मे निकलकर ग्राहको तक पहुच चुकी है। अगर मेरे पास उस पुस्तक की कोई जिल्द होती और मैं सरकारी अभियोग की जोखिम को सिर पर न लेना चाहता तो अपना कर्त्तव्य समझ कर उसे जला डालता। लेकिन अगर मैं सरकार के अभियोग को अपने सिर लेना चाहता तो तुरन्त ही पुलिस को सूचना करता कि पुस्तक मेरे पास सुरक्षित है और उसे चुनौती देता कि वह मुझे गिरफ्तार कर ले। अगरचे मैं खुद होकर अभियोग बुलाना न चाहता, मगर वह आता तो उसकी चिन्ता भी न करता और उस हालत मे भी मैं पुस्तक को अपने पास ही रखना कर्तव्य समझता और पुलिस को साफ उसका पता [illegible] देता।

मुझे मालूम हुआ है कि मध्य प्रान्त की सरकार की [illegible] उक्त पुस्तक मे से उद्धरणो का छापना भी जुर्म करार दिया गया है। [illegible]

खबर झूठी होगी। लेकिन अगर यह सच है तो समाचारपत्रों के लिए, जहां ग्रन्थकर्ता और प्रकाशक के प्रति क्रियात्मक सहानुभूति प्रकट करने का यह एक अच्छा साधन है, वहां इसी के द्वारा उस आज्ञा का प्रचार करनेवाली सरकारों के प्रयत्न विफल भी किये जा सकते हैं। यह काम इस तरह किया जा सकता है कि जिनके पास पुस्तक की प्रतियां हैं वे समाचारपत्रों के पास उसके चुने हुए अवतरण भेजें और समाचारपत्र उन्हें छापें। केन्द्रीय और स्थानीय सरकारें हमें सौम्य सविनय अवज्ञा के मौके दे रही हैं, अतः जो लोग सविनय अवज्ञा में विश्वास रखते हैं वे इन अवसरों से लाभ उठाने में न चूकें। यद्यपि इस समय देश का वातावरण अत्यन्त निराशाजनक और कायरतापूर्ण है फिर भी कार्यकर्त्ताओं को, आशा और उत्साह का सन्देश देनेवाले हर कानूनी उपाय से सरकार को चुनौती देनी चाहिए ताकि वह पूरी तरह अपनी राक्षसी ताकत की आजमाइश कर सके।

—अंग्रेजी। यं० इं०। हि० न० जी०, १६।५।१९२९।]

३६. हिमालय की अनुपम शोभा

शिमला और दार्जिलिंग भी हिमालय के प्रदेश हैं किन्तु वहां मुझे हिमालय की महिमा का भान न हो सका। वहां मैं रहा भी थोड़े समय तक, फिर भी मुझे वह प्रदेश एक अंग्रेजी वस्ती-जैसा ही लगा। अलमोड़ा आकर अलवत्ता मैं इस वात की कल्पना कर सका कि हिमालय क्या है। यदि हिमालय न हो तो गंगा, जमुना, ब्रह्मपुत्र और सिन्धु भी न हों; हिमालय न हो तो ये नदियां न हों, न वर्षा हो और वर्षा न हो तो भारत रेगिस्तान या सहारा की भूमि वन जाय। इस वात को जानने-वाले और सदैव हर वात के लिए ईश्वर का उपकार माननेवाले हमारे दीर्घदर्शी पूर्वजों ने हिमालय को यात्रा-धाम वना दिया था। इस प्रदेश में हजारों हिन्दुओं ने ईश्वर की शोध में अपनी देह का वलिदान किया है। वे पागल न थे। उनकी तपश्चर्या का ही फल है कि आज हिन्दू-धर्म और हिन्दुस्तान जीवित है।

कौसानी में सूर्य के प्रकाश में नाचती हिम-मण्डित शिखर-श्रेणी का दर्शन करते हुए मैं यह विचार कर रहा था कि हिमालय के इन धवल शिखरों को देखकर भिन्न-भिन्न कोटि के लोगों मे क्या विचार आयेगा। उस समय जो विचार एक-पर-एक आते गये, पाठकों को भी उनका भागीदार वनाकर मन को हलका कर लेता हूं।

वालक उस दृश्य को देखें तो कह उठें कि यह तो फेनों का पहाड़ है, पहाड़।

चलो, हम दौड चलें और उस पर दौडते हुए फेनी चखें। मुझ-जैसा चर्खे का दीवाना कहेगा : कपास बिनकर, लोढकर और रुई पीजकर किसी ने रेशम-जैसी रुई का अखूट पहाड खडा कर रक्खा है। इस देश के लोग कैसे पागल हैं कि इतनी रुई रहते हुए भी नगे-भूखे और मारे-मारे फिरते हैं। धर्मनिष्ठ पारसी देखेगा तो सूर्यदेव को नमस्कार करता हुआ कहेगा · अभी हाल सन्दूक मे से निकाली हुई नई, दूध-जैसी पगडी और वैसे ही इस्त्रीबन्द तह किये हुए जामे पहने पर्वत रूप दस्तूर सूर्यनारायण के दर्शन मे लीन होकर, हाथ जोडकर स्थिरचित्त खडे हैं और शोभा बढा रहे हैं। भावुक हिन्दू इन जगमगाते और साथ ही सुदूर घने बादलो मे से पानी झेलते हुए शिखरो को देखकर कहेगा . यह तो साक्षात् दया के भण्डार शिवजी अपनी उज्वल जटा मे गगाजी को रोक रहे हैं और सारे भारत को प्रलय से बचा रहे हैं।

शकराचार्य अलमोडा मे घूमे थे। उन्हें आज भी यह कहते सुन रहा हू—सचमुच यह अद्भुत दर्शन है, किन्तु सब ईश्वरीय माया है। न हिमालय है, न मैं हू, न तू है, जो कुछ है, वह है, ब्रह्म है। वही सत्य है, जगत् मिथ्या है। बोलो ब्रह्म सत्य जगन्मिथ्या।

पाठको! सच्चा हिमालय तो हमारे हृदय मे है। इस हृदय रूपी गुफा मे छिपकर उसमे शिव-दर्शन करना ही सच्ची यात्रा है, यही पुरुषार्थ है।

—गुजराती। न० जी०। हि० न० जी०, १८।७।१९२९।]

३७. भारत की सभ्यता

सन् १९२४ मे जब मैं सयुक्त प्रान्त मे भ्रमण कर रहा था, अयोध्याजी के नजदीक एक किसान ने पुकार कर मेरी गाडी मे एक पर्चा फेंका था। मैंने उस पर्चे को उठाया और देखा कि उसमे उसने तुलसीदास जी के रामचरितमानस मे से कई उपयोगी चौपाइया और दोहे उद्धृत किये हैं। यह देखकर मुझे [illegible] और भारतवर्ष की सभ्यता के प्रति मेरे मन मे आदर बढा। उस पर्चे को मैंने अपने कागजो मे इस इच्छा से रख छोडा था कि किसी-न-किसी रोज उसे '[illegible]' मे दे दूगा।

वैसे, प्रति सप्ताह मैं उसे देखकर छोड देता था। [illegible] 'नवजीवन' [illegible] था मैं हिन्दी-नवजीवन के लिए [illegible] नहीं [illegible] था, [illegible] 'हिन्दी नवजीवन' के लिए मैंने उसे उतना उपयोगी नहीं समझा था,

के लिए। पर्चे का एक हिस्सा गुजराती और हिन्दी में सन् १९२७ में दिया गया था।

अब चूंकि मैं प्रति सप्ताह कुछ-न-कुछ 'हिन्दी नवजीवन' के लिए विशेष रूप से लिखता हूं और चूंकि अब शीघ्र ही फिर से मेरा यु० प्रा० का दौरा आरम्भ होता है, उस पर्चे का दूसरा हिस्सा यहां देता हूं :

(वर्तमान स्थिति के सुधार में बाधा डालनेवालों के लक्षण)

काहु सुमति कि खल-सँग जामी,
सुभ गति पाव कि परतिय गामी।
राज कि रहै नीति विनु जाने,
अघ कि रहै हरि चरित बखाने।
अघ कि पिसुनता सम कछु आना,
धर्म कि दया सरिस हरिजाना।
यहां न पक्षपात कछु राखौ,
वेद पुराण संत मत भाखौ।
अरिवस दैव जियावत जाही,
परम नीक तेहि जियव न चाही।
सत्य वचन विश्वास न करहीं,
वायस इव सवही सन डरहीं।
मांगौ भीख त्याग निज धरमू।
आरत काह न करै कुकरमू।
क्रोध कि द्वैत वुद्धि विनु, द्वैत कि विनु अज्ञान।
माया-वस परछन्न जड़, जीव कि ईस समान।
और करै अपराध कोउ, और पाव फल भोग।
अति विचित्र भगवंत गति, को जग जाने जोग।
परद्रोही परदार रत, परधन पर अपवाद।
ते नर पामर पाप मय, देह धरे मनुजाद।
भाग छोट अभिलाख बड़, करउँ एक विश्वास।
उदासीन अरि मीत हित, सुनत जरहिं खल रीति।
भले भलाई ते लहहिं, लहहिं निचाई नीच।
संत सरल चित जगत हित, जाति सुभाव सनेह।

मैंने इसमें से स्तुति के वचन निकाल डाले हैं। इस किसान भाई के अक्षर स्पष्ट हैं और जो लिखा है, मजाकर लिखा है।

सब इतिहासकारो ने गवाही दी है कि जो सभ्यता भारत के किसानो मे पाई जाती है, दुनिया के और किन्ही किसानो मे नही पाई जाती। यह पर्चा इस बात का एक उदाहरण है। भारत की सभ्यता की रक्षा करने मे तुलसीदासजी ने बहुत अधिक भाग लिया है। तुलसीदास के चेतनमय रामचरित-मानस के अभाव मे किसानो का जीवन जड़वत् और शुष्क बन जाता। पता नही कैसे क्या हुआ, परन्तु यह तो निर्विवाद है कि तुलसीदास जी की भाषा मे जो प्राणप्रद शक्ति है वह दूसरों की भाषा मे नही पाई जाती। रामचरित-मानस विचार-रत्नो का भण्डार है। उनकी कीमत का कुछ अन्दाजा हम उपर्युक्त दोहो और चौपाइयो से लगा सकते हैं। मुझे दृढ विश्वास है कि किसान लेखक ने इन चौपाइयो और दोहो को ढूढने मे कोई खास परिश्रम नही किया है, हा, अपने कण्ठस्थ भाण्डार मे से जो याद हो आये वही दे दिये हैं।

जब हम एक किसान के मुख से—

शुभ गति पाव कि परतिय गामी।
राज कि रहै नीति बिनु जाने।
अघ कि रहै हरिचरित बखाने।
अघ कि पिसुनता सम कछु आना।
धर्म कि दया सरिस हरिजाना।

आदि वचनो को सुनते हैं, तब भारतवर्ष की नीति के सम्बन्ध मे हमे कभी निराशा हो नही सकती।

आज-कल यह कहा जाता है कि हमारे किसान अन्धकार मे पड़े हैं, हमारा देश तमस्-प्रधान है, इसलिए उसे रजस् मे प्रवेश करना होगा। पहली बात तो यह है कि मैं इस कथन मे विश्वास ही नही रखता कि तमस्, रजस् और सत्व के बीच ऐसा कोई यान्त्रिक भेद है, जिसके कारण हमें एक [illegible] जाना ही पड़े। मेरे विचार मे, प्राय हर एक मनुष्य मे तीनो गुण [illegible] अंश मे होते है। भेद केवल मात्रा का है। [illegible] देश तमस्-प्रधान नही, बल्कि सत्व-प्रधान है। और [illegible] यत्किंचित् प्रमाण है। अगर यह पर्चा [illegible] का छोटा भी प्रमाण न हो [illegible]। परन्तु [illegible] तो तुलसीदास जी के दोहे-चौपाई [illegible] है, तब हम असत्व पर [illegible]

के लिए। पर्चे का एक हिस्सा गुजराती और हिन्दी में सन् १९२७ में दिया गया था।

अब चूंकि मैं प्रति सप्ताह कुछ-न-कुछ 'हिन्दी नवजीवन' के लिए विशेष रूप से लिखता हूं और चूंकि अब शीघ्र ही फिर से मेरा यु० प्रा० का दौरा आरम्भ होता है, उस पर्चे का दूसरा हिस्सा यहां देता हूं :

(वर्तमान स्थिति के सुधार में बाधा डालनेवालों के लक्षण)

काहु सुमति कि खल-सँग जामी,
सुभ गति पाव कि परतिय गामी।
राज कि रहै नीति बिनु जाने,
अघ कि रहै हरि चरित बखाने।
अघ कि पिसुनता सम कछु आना,
धर्म कि दया सरिस हरिजाना।
यहां न पक्षपात कछु राखौ,
वेद पुराण संत मत भाखौ।
अरिबस दैव जियावत जाही,
परम नीक तेहि जियब न चाही।
सत्य वचन विश्वास न करही,
वायस इव सबही सन डरही।
मांगौ भीख त्याग निज धरमू।
आरत काह न करै कुकरमू।
क्रोध कि द्वैत बुद्धि बिनु, द्वैत कि बिनु अज्ञान।
माया-बस परछन्न जड़, जीव कि ईस समान।
और करै अपराध कोउ, और पाव फल भोग।
अति विचित्र भगवंत गति, को जग जाने जोग।
परद्रोही परदार रत, परधन पर अपवाद।
ते नर पामर पाप मय, देह धरे मनुजाद।
भाग छोट अभिलाख बड़, करउँ एक विश्वास।
उदासीन अरि मीत हित, सुनत जरिहि खल रीति।
भले भलाई ते लहहिं, लहहिं निचाई नीच।
संत सरलचित जगत हित, जाति सुभाव सनेह।

मैंने इसमें से स्तुति के वचन निकाल डाले हैं। इस किसान भाई के अक्षर स्पष्ट हैं और जो लिखा है, मजाकर लिखा है।

अव प्रश्न पर आऊ।

इस पृथ्वी भर की जनता के प्रति एक अल्पप्राणी जितना समभावी हो सकता है, उतना होने की मैं कोशिश करता हू। इसलिए भारतवर्ष पर और गुजरात पर उतना ही प्रेम करने की चेष्टा करता हू जितना पृथ्वी के अन्य प्रदेशो पर। लेकिन इस समभाव का अर्थ यह नही है कि मेरी सेवा सवको एक-सी मिलती है या मिल सकती है। मेरी आत्मा काल, स्थल और प्रसग के वन्वन से मुक्त होने के कारण उसका प्रेम तो सवके प्रति समान मात्रा मे वँट जाता है। परन्तु चूकि शरीर बहुत ही मर्यादित है, शरीर और शरीरस्थ इन्द्रियो से जो सेवा होती है वह भी मर्यादित है। इसमे मेरी भावना का कोई दोष नही है। यह दोष विधि का है। शायद, इस दोष के कारण भारतवर्ष को ऐसा अनुभव होता होगा कि मै विशेषतया उसी का हू और गुजरात का इससे भी अधिक। गुजरात मे भी उद्योग-मन्दिरवासियो का और भी अधिक। वस्तुत उद्योग मन्दिर की मार्फत मेरी सेवा सारे जगत् को मिलती है। क्योकि उद्योग मन्दिर की मेरी सेवा न गुजरात की, न भारतवर्ष की, न और जगत की सेवा की ही विरोधिनी है। और इसी को मै स्वच्छ स्वदेशाभिमान मानता हू, तथा इसी मे मेरी कर्तव्य-परायणता रही है। ऐसे ही अनुभवो पर से 'यथा पिण्डे तथा ब्रह्माण्डे' महावाक्य की घोषणा हुई है।

अव दूसरा प्रश्न।

मेरी नम्र सम्मति मे भारतवर्ष की दशा का मुझे ठीक ज्ञान हुआ है। इसका कारण मेरा भ्रमण नही, परन्तु सच्ची दशा जानने की मेरी तीव्र इच्छा है। [illegible] से वहुतेरे मुसाफिर कुतूहल-वश यहा चले आते है, वे मुझसे भी ज्यादा भ्रमण करे तो भी भारत की दशा नही जान सकते, क्योकि उनमे यह जिज्ञासा नही होती। मेरा भ्रमण देश की दशा जानने मे कारणभूत तो था, परन्तु उसकी जड इच्छा मे छिपी हुई थी। प्रान्त-प्रान्त की दशा मे कोई भारी भेद नही है, न हो सकता है। मात्रा मे कुछ न्यूनाधिक रहना सम्भव है। भारतवर्ष पराधीन है और कंगाल है। यह उसका महारोग है। इसका उपचार हुआ तो सबका हुआ। यदि इसका न हुआ तो और किसी चीज का नही हो सकता। [illegible]-नही, सब [illegible] समझेगा उसे भारतवर्ष के दुखो के निवारण के लिए जो [illegible] है उन्हे समझने मे कोई कष्ट नही हो सकता।

—हि० न० जी०, २६।९।१९२९।]

● भारतवर्ष पराधीन है और कंगाल है। यह उसका महारोग है। इसका उपचार हुआ तो सबका हुआ।

उनकी सभ्यता के सत्व-प्रधान होने का यह कुछ नहीं तो एक प्राथमिक प्रमाण भी है।

—हिं० न० जी०, ५।९।१९२९।]

- तुलसीदास जी की भाषा में जो प्राणप्रद शक्ति है, वह दूसरों की भाषा में नहीं पाई जाती।
- रामचरित मानस विचार-रत्नों का भाण्डार है।

३८. दो प्रश्न

मैं जब आगरे में था, एक सज्जन ने यह पत्र लिखा था—

"मेरे चित्त में बार-बार यह विचार उठता है कि मैं आपसे मिलूं और कुछ शंकाएं दूर करूं परन्तु मिलना कठिन है, क्योंकि लोग मिलने नहीं देते। इसलिए पत्र-द्वारा नीचे लिखे प्रश्न भेजता हूं। आशा है उत्तर पाकर शान्ति अथवा अशान्ति कुछ-न-कुछ तो अवश्य होगी।

१. आप इस पृथ्वी भर की जनता के प्रति कितना प्रेम रखते हैं?

क. सारे भारतवर्ष पर कितना प्रेम रखते हैं?

ख. गुजरात देश के प्रति कितना प्रेम रखते है?

२. क्या आपको भारत भर में भ्रमण करने पर भी भारत की दशा का ज्ञान है? यदि हां, तो भारतवर्ष की कैसी दशा है?

क. प्रान्त प्रान्त की दशा का भी बोध हो तो लिखें—किस-किस प्रान्त की कैसी, क्या दशा है?"

यदि इन महाशय को मेरे पास आने से किसी ने रोका है तो दुःख और शर्म की बात है। हां, यह होता था सही कि बेचारे स्वयंसेवक मेरे स्वास्थ्य की रक्षा की फिक्र में रहते हुए समय का खयाल अवश्य रखते थे। उनका प्रेम मुझे उनसे मिलनेवालों से बचाने में खर्च होता था। प्रश्नकारों एवं दर्शनाभिलाषियों का प्रेम उनसे समय की मर्यादा का उल्लंघन करवाता था। प्रेम की दो विरुद्ध दिशा होने के कारण कुछ खीचतान ज़रूर होती थी। मिलनेवालों को कुछ कष्ट भी होता था, परन्तु शाम की प्रार्थना के समय सब आ सकते थे। किसी को रोकटोक न थी और प्रार्थना खुले मैदान में होने के कारण सब कोई आ जाते थे। हर एक को इतना तो समझ लेना चाहिए था कि जब एक के अनेक मिलनेवाले रहते हैं तब कुछ-न-कुछ मर्यादा आवश्यक हो जाती है।

अब प्रश्न पर आऊ।

इस पृथ्वी भर की जनता के प्रति एक अल्पप्राणी जितना समभावी हो सकता है, उतना होने की मैं कोशिश करता हू। इसलिए भारतवर्ष पर और गुजरात पर उतना ही प्रेम करने की चेष्टा करता हू जितना पृथ्वी के अन्य प्रदेशो पर। लेकिन इस समभाव का अर्थ यह नही है कि मेरी सेवा सवको एक-सी मिलती है या मिल सकती है। मेरी आत्मा काल, स्थल और प्रसग के वन्धन से मुक्त होने के कारण उसका प्रेम तो सवके प्रति समान मात्रा मे वँट जाता है। परन्तु चूकि शरीर वहुत ही मर्यादित है, शरीर और शरीरस्थ इन्द्रियो से जो सेवा होती है वह भी मर्यादित है। इसमे मेरी भावना का कोई दोष नही है। यह दोष विधि का है। शायद, इस दोष के कारण भारतवर्ष को ऐसा अनुभव होता होगा कि मैं विशेषतया उसी का हू और गुजरात का इससे भी अधिक। गुजरात मे भी उद्योग-मन्दिरवासियो का और भी अधिक। वस्तुत उद्योग मन्दिर की मार्फत मेरी सेवा सारे जगत् को मिलती है। क्योकि उद्योग मन्दिर की मेरी सेवा न गुजरात की, न भारतवर्ष की, न और जगत की सेवा की ही विरोधिनी है। और इसी को मैं स्वच्छ स्वदेशाभिमान मानता हू, तथा इसी मे मेरी कर्तव्य-परायणता रही है। ऐसे ही अनुभवो पर से 'यथा पिण्डे तथा ब्रह्माण्डे' महावाक्य की घोषणा हुई है।

अब दूसरा प्रश्न।

मेरी नम्र सम्मति मे भारतवर्ष की दशा का मुझे ठीक ज्ञान हुआ है। इसका कारण मेरा भ्रमण नही, परन्तु सच्ची दशा जानने की मेरी तीव्र इच्छा है। पश्चिम से वहुतेरे मुसाफिर कुतूहल-वश यहा चले आते हैं, वे मुझसे भी ज्यादा भ्रमण करें तो भी भारत की दशा नही जान सकते, क्योकि उनमे यह जिज्ञासा नही होती। मेरा भ्रमण देश की दशा जानने मे कारणभूत तो था, परन्तु उसकी जड इच्छा मे छिपी हुई थी। प्रान्त-प्रान्त की दशा मे कोई भारी भेद नही है, न हो सकता है। मात्रा मे कुछ न्यूनाधिक रहना सम्भव है। भारतवर्ष पराधीन है और कंगाल है। यह उसका महारोग है। इसका उपचार हुआ तो सबका हुआ। यदि इसका न हुआ तो और किसी चीज का नही हो सकता। [illegible] जो समझेगा उसे भारतवर्ष के दुखो के निवारण के लिए जो उपचार हो सकते हैं, उन्हे समझने मे कोई कष्ट नही हो सकता।

—हि० न० जी०, २६।९।१९२९।]

● भारतवर्ष पराधीन है और कंगाल है। यह उसका महारोग है। इसका उपचार हुआ तो सबका हुआ।

३९. तुलसीदास जी

भिन्न-भिन्न मित्र पूछते हैं—

'रामायण को आप सर्वोत्तम ग्रन्थ मानते हैं, परन्तु समझ में नहीं आता क्यों? देखिए, तुलसीदास जी ने स्त्री-जाति की कितनी निन्दा की है। वालि-बध का कितना समर्थन किया है। विभीषण के देशद्रोह की किस कदर प्रशंसा की है। सीताजी पर घोर अन्याय करनेवाले राम को अवतार बताया है। एसे ग्रन्थ में आप कौन सौन्दर्य देख पाते हैं? तुलसीदास जी के काव्यचातुर्य के लिए तो, शायद, आप रामायण को सर्वोत्तम ग्रन्थ नहीं समझते होंगे? यदि बात ऐसी ही है तो, कहना पड़ेगा कि आपको काव्य-परीक्षा का कोई अधिकार ही नहीं।'

उपर्युक्त सब सवाल एक ही मित्र के नही हैं, परन्तु भिन्न-भिन्न मित्रों ने भिन्न-भिन्न समय पर जो कुछ कहा है और लिखा है, उसका यह सार है। यदि ऐसी एक-एक टीका को लेकर देखें तो सारी की सारी रामायण दोषमय सिद्ध की जा सकती है। सन्तोप यही है कि इस तरह प्रत्येक ग्रन्थ और प्रत्येक मनुष्य दोषमय सिद्ध किया जा सकता है। एक चित्रकार ने अपने टीकाकारों को उत्तर देने के लिए अपने चित्र को प्रदर्शिनी में रक्खा और नीचे इस तरह लिखा कि इस चित्र में जिसको जिस जगह दोष प्रतीत हो, वह उस जगह अपनी कलम से चिह्न कर दे। परिणाम यह हुआ कि चित्र के अंग-प्रत्यंग दोषपूर्ण बताये गये। मगर वस्तुस्थिति यह थी कि वह चित्र अत्यन्त कलायुक्त था। टीकाकारों ने तो वेद, बाइबिल और कुरान में भी बहुतेरे दोष बताये हैं, परन्तु उन ग्रन्थों के भक्त उनमें दोषों का अनुभव नही करते। प्रत्येक ग्रन्थ की परीक्षा पूरे ग्रन्थ के रहस्य को देख कर ही की जानी चाहिए। यह बाह्य परीक्षा है। अधिकांश ग्रन्थ की आन्तरिक परीक्षा की जाती है। किसी भी साधन से क्यों न देखा जाय रामायण की श्रेष्ठता ही सिद्ध होती है। ग्रन्थ को सर्वोत्तम कहने का यह अर्थ कदापि नहीं कि उसमें एक भी दोष नही है। परन्तु रामचरित मानस के लिए यह दावा अवश्य है कि उससे लाखों मनुष्यों को शान्ति मिली है। जो लोग ईश्वर-विमुख थे वे ईश्वर के सम्मुख गये है और आज भी जा रहे है। मानस का प्रत्येक पृष्ठ भक्ति से भरपूर है। मानस अनुभव-जन्य ज्ञान का भण्डार है।

यह बात ठीक है कि पापी अपने पाप का समर्थन करने के लिए रामचरितमानस का सहारा लेते हैं। इससे यह सिद्ध नही हो सकता कि वे लोग रामचरितमानस में से अकेले पाप का ही पाठ सीखते हैं। मैं स्वीकार करता हूं कि तुलसीदासजी ने स्त्रियों पर अनिच्छा से अन्याय किया है। इनमें और ऐसी ही अन्य बातो में तुलसी-

दास जी अपने युग की प्रचलित मान्यताओं से परे नही जा सके थे अर्थात् तुलसीदास जी सुधारक नही, बल्कि भक्त-शिरोमणि थे। इसमे हम तुलसीदास जी के दोषो का नही परन्तु उनके युग के दोषो का दर्शन अवश्य करते हैं।

ऐसी दशा में सुधारक क्या करें? क्या उनको तुलसीदास जी से कुछ सहायता नही मिल सकती? अवश्य मिल सकती है। रामचरितमानस मे स्त्री-जाति की काफी निन्दा मिलती है, परन्तु उसी ग्रन्थ-द्वारा सीताजी के पुनीत चरित्र का भी हमे परिचय मिलता है। विना सीता के राम कैसे? राम का यश सीताजी पर निर्भर है. सीताजी का रामजी पर नही। कौशल्या, सुमित्रा आदि भी मानस के पूजनीय पात्र हैं। शवरी और अहल्या की भक्ति आज भी सराहनीय है। रावण राक्षस था, मगर मन्दोदरी सती थी। ऐसे अनेक दृष्टान्त इस पवित्र भण्डार मे से मिल सकते हैं। मेरे विचार मे इन सब दृष्टान्तो से यही सिद्ध होता है कि तुलसीदास जी ज्ञान-पूर्वक स्त्री-जाति के निन्दक नही थे। ज्ञान-पूर्वक तो वह स्त्री-जाति के पुजारी ही थे। यह तो स्त्रियो की वात हुई। परन्तु वालि-वधादि के बारे मे भी दो मतो की गुजाइश है। विभीषण मे तो मैं कोई दोष नही पाता हू। विभीषण ने अपने भाई के साथ सत्याग्रह किया था। विभीषण का दृष्टान्त हमे यह सिखाता है कि अपने देश या अपने शासक के दोषो के प्रति सहानुभूति रखना या उन्हे छिपाना देशभक्ति के नाम को लजाना है। इसके विपरीत देश के दोषो का विरोध करना सच्ची देश-भक्ति है। विभीषण ने रामजी की सहायता करके देश का भला ही किया था। सीताजी के प्रति रामचन्द्र के वर्ताव मे निर्दयता नही थी, उसमे राजधर्म और पति-प्रेम का द्वन्द्व-युद्ध था।

जिसके दिल मे इस सम्बन्ध की शकाए शुद्ध भाव से उठें, उन्हे मेरी सलाह है कि वे मेरे या किसी और के अर्थ को यन्त्रवत् स्वीकार न करें। जिस विषय मे हृदय शकित है, उसे छोड दें। सत्य-अहिंसादि की विरोधिनी किसी वस्तु को स्वीकार न करें। रामचन्द्र ने छल किया था, इसलिए हम भी [illegible] करें, [illegible] औंधा पाठ पढना है। यह विश्वास रख कर कि रामादि [illegible], हम पूर्ण पुरुष का ही ध्यान करें और पूर्ण ग्रन्थ का ही [illegible] सर्वारम्भाहि दोषेण धूमेनाग्निरिवावृता न्यायानुसार [illegible] समझ कर हसवत् दोष-रूपी नीर को [illegible] करें। [illegible] तरह अपूर्ण मे सम्पूर्ण [illegible] हमेशा व्यक्तियो और युगो की [illegible] केवल ईश्वर मे ही है और वह [illegible] है।

—हि० न० जी०; १०।१०।१९२९।]

४०. बोर्डों का कर्तव्य

मुरादाबाद के जिला बोर्ड ने अपने स्कूलों के शिक्षकों के नाम एक विज्ञप्ति जारी की थी, जिसके अनुसार उन्हें राजनीति में भाग लेने से मना किया गया था और वह भी इस हद तक कि वे दरिद्रनारायण के लिए विद्यार्थियों या उनके माता-पिताओं से चन्दा भी नही माँग सकते। मुझे यह जानकर दुःख हुआ। इसी बोर्ड ने मुझे एक सुन्दर डिबिया में मानपत्र भेंट किया था। बोर्ड के सदस्यों को सम्भव है इस विज्ञप्ति का पता भी न हो। विज्ञप्ति या सरक्युलर का मस्विदा चाहे जिसने क्यों न बनाया हो, उसमें राजभक्ति की जो बाढ़ आई है वह सरकारी स्कूल और कालेजों की राजभक्ति को भी मात करती है। मुझे कई सरकारी स्कूल और कालिजों की तरफ से विद्यार्थियों को दो शब्द कहने तथा खादी के लिए थैली स्वीकार करने को बुलाया जाता है। सरकारी नौकरों ने भी खुल्लमखुल्ला इन चन्दों में रकम दी है। बहुत से लोग अब यह समझ चुके हैं कि खादी का राजनीति से कोई सरोकार नहीं है। खादी की आर्थिक शक्ति के बारे में मतभेद हो सकता है, लेकिन उसमें जो नैतिक तत्व छिपा हुआ है, कोई भी शिक्षा-शास्त्री उसका अनादर नहीं कर सकता। कुछ अंशों में खादी का राजनीति से भी सम्बन्ध है। लेकिन यों तो आज देश में जनता और सरकार विद्यमान है। हिन्दू-मुस्लिम ऐक्य और अस्पृश्यता-निवारण आमतौर पर सामाजिक समस्याएं है, लेकिन आज राजनीति के क्षेत्र में भी इन दोनों का खासा महत्व है और महासभा के रचनात्मक काम में इन्हीं को अग्रस्थान दिया गया है। मैं नही जानता कि कभी किसी ने इसके कारण सरकारी नौकरों को इन कामों में भाग लेने से रोका हो। ऐसे कई बोर्ड है जिन्होने खादी के काम में उत्साहपूर्वक हाथ बँटाकर इस एकमात्र राष्ट्रीय और सार्वजनिक उद्योग के प्रचार में चर्खा संघ की मदद की है।

—न० जी०। हि० न० जी०, ३१।१०।१९२९।]

४१. राष्ट्रभाषा

जो मानपत्र मुझे संयुक्तप्रान्त में मिल रहे हैं, उनसे मुझे बहुत-कुछ जानने को मिलता है। इस लेख में मैं उन पर भाषा की दृष्टि से ही विचार करना चाहता हूं। मेरे पास तीन नमूने है, उनमे से मैं नीचे-लिखे फिकरे चुनता हूं।

१ हमारे मदारिस[1] मे कोई इम्तियाज[2] छूत-अछूत का नही है, और हर कौम के लडके बिला तफरीक[3] तालीम पाते हैं। इस बोर्ड का हमेशा यह तर्जे अमल[4] रहा है कि अगर अछूतो के दाखले के मुताल्लिक[5] कोई सदा[6] उठती है तो उसका मजबूती से मुकाबिला किया जाता है।

जिले के बाशिन्दगान देहात[7] आम तौर पर घर रुई कतवा कर लोकल जुलाहो और कोलियो से खद्दर बुनवा कर इस्तेमाल करते हैं, लेकिन यह मानना होगा कि तालीम की कमी के बाइस[8] वे इसकी[9] पोलीटिकल अहमियत को महसूस नही करते और इसमे भी ऐसे लोग मौजूद हैं, जो इसके सयासी पहलू[10] को नजर अन्दाज[11] करते हैं। अलावा उस खद्दर के जो लोग अपने सूत से तैयार कराते हैं, बिलअमूम[12] जिले के कोली और जुलाहे जो फरोख्त[13] के लिए कपडा तैयार करते हैं उसमे या तो दोनो सूत देसी मिलो के इस्तेमाल करते हैं, या ताने मे मिल का और बाने मे चर्खे का सूत लगाते हैं, कही-कही बख्याल निफासत[14] विलायती सूत भी इस्तेमाल होता है, लेकिन इसका निजाम[15] कायम किये जाने पर उन्हे शुद्ध खद्दर तैयार करने की तरगीब[16] कामियाबी के साथ दी जा सकती है और बलिहाज पैदावार खद्दर[17] यह जिला यू० पी० के मर्कजी मुकामात[18] मे से हो सकता है।

२ हिन्दू-मुस्लिम एकता को, जो श्रीमान ने स्वराज्य-सिद्धि का मुख्य उपाय निर्धारित किया है, उसमे कौन सन्देह कर सकता है? यह कहना अनुचित न होगा कि खादी परिधान, और हिन्दू-मुस्लिम एकता, बस, इन दो आज्ञाओं को ही यदि हम भली प्रकार स्वीकार कर लें तो स्वशासन प्राप्त करने मे और किसी दूसरे साधन की आवश्यकता ही न रह जाय, अन्ततोगत्वा आज न सही तो कल विवश होकर हमको ऐक्य करना ही होगा। क्या ही अच्छा हो, अगर, जिस प्रकार हम जय-जय के नारे लगाने मे जोश दिखाते हैं उसका शतांश भी कार्य करने मे [illegible] धारण करें।

३ एक दूसरा महान कर्तव्य आपने हमारे आगे खादी के विषय मे रक्खा है। हम आपको विश्वास दिलाना चाहते हैं कि खादी के सामाजिक, [illegible] और आध्यात्मिक पहलू ने हमारे हृदयों पर गहरी [illegible] की है और हम [illegible]

---

१. विद्यालयों, २. भेदभाव। ३. अन्तर। ४. व्यवहार। ५. बारे में। ६. आवाज। ७. ग्रामवासी। ८. कारण। ९. राजनैतिक महत्व। १०. राजनीतिक पक्ष। ११. दृष्टि से ओझल। १२. साधारणतः। १३. बिक्री। १४. सुचारुता, बारीकी। १५, योजना, व्यवस्था। १६. प्रेरणा, १७. खद्दर के उत्पादन की दृष्टि से। १८. केन्द्रीय स्थानों।

भाई-बहिनों के भूख से तड़पते हुए पेटों में रोटी पहुंचाने के लिए खादी के विषय में कुछ-न-कुछ यत्न कर रहे हैं। अभी तक लगभग २० फीसदी अध्यापक और १० फीसदी विद्यार्थी कालेज में खादी पहन कर आते हैं। यह सन्तोषजनक तो किसी प्रकार नही कहा जा सकता, पर आशा है कि, आपके आशीर्वाद से खादी के विषय मे अधिक, और अधिक उन्नति होगी।

ये तीनों नमूने हिन्दी, हिन्दुस्तानी यानी राष्ट्रभाषा के हैं। एक केवल फारसी-अरबी शब्दों से भरा पड़ा है, जिसे सामान्य हिन्दू नहीं समझ सकेगा। दूसरा केवल संस्कृत शब्दों से भरा हुआ है, जिसे सामान्य मुसलमान कभी नही समझ सकता। तीसरा ऐसा है, जिसे सामान्य हिन्दू या मुसलमान, दोनों, समझ सकते है। इनमें जानबूझ कर संस्कृत या फारसी-अरबी शब्दों का त्याग या चुनाव नही पाया जाता। यदि हम हिन्दी को राष्ट्रभाषा मनवाना चाहते है, यदि हिन्दू-मुसलमान, दोनों ऐक्य सिद्ध करना चाहते है, तो हम संस्कृत या अरबी-फारसी शब्दो का इरादतन बहिष्कार नही कर सकते। अर्थात् भाषा लिखते या बोलते समय हमारे मन में एक दूसरे का या एक दूसरे की बोली का द्वेष नही होना चाहिए, बल्कि एक दूसरों के लिए प्रेम अथवा मुहब्बत होनी चाहिए। मुसल्मान जब किसी हिन्दू को फारसी-अरबी शब्दो का इस्तेमाल करते देखता है तो उसे खुशी हासिल होती है। इसी तरह उस मुसल्मान के प्रति हिन्दू का आदर बढ़ता है, जो मौके से संस्कृत शब्दों का भी उचित उपयोग कर लेता है।

दोनों भाषाओं के उचित शब्दों को अपना लेने से हिन्दी का गौरव और विस्तार बढ़ता है; भाषा की विकास मे वृद्धि होती है। बात यह है कि जब हममे भाषा-विशेष के प्रति द्वेष-भाव नही रहता तब हम उस भाषा की मदद से अपनी भाषा को संवारने में, उसे सजाने मे, संकोच नही करते।

श्री रामनरेश जी त्रिपाठी ने अपनी 'ग्राम्यगीत' नामक पुस्तक की भूमिका में लिखा है:

का प्रयोग किया है, और मिल्टन ने १०,००० का। कहा इन लोगों का नाना-भण्डार और कहा हमारी निर्धनता। इस दशा के रहते हुए भी यदि हम राष्ट्र-भाषा का मुख उज्ज्वल करना चाहते है तो और नहीं तो भाषा के खातिर ही हमें अपना ज्ञान बढाना होगा। किसी भाषा के शब्दो को अपना लेने मे शर्म की कोई बात नही है। शर्म तो तब है, जब हम अपनी भाषा के प्रचलित शब्दो को न जानने के कारण दूसरी भाषा के शब्दो का प्रयोग करे। जैसे, घर शब्द को भुलाकर हाउस कहें, माता को मदर कहें, पिता को फादर कहे, पति को हसबेण्ड और पत्नी को वाइफ कहे।

--हिं० न० जी०, ७।११।१९२९।]

४२. नवयुवक क्या करें?

आज से कुछ दिन पहले मुझे आगरा-युवक-सघ की ओर से एक पत्र मिला था, जिसमे नीचे लिखा प्रश्न पूछा गया था :—

"भविष्य मे हमारा प्रधान कार्यक्रम क्या रहेगा, कुछ सूझ नहीं पड़ता। सर्वत्र अन्धकार है। हम अपने पास-पडोस के किसानो और दूसरे पड़ोसियों में हिलमिल जाना चाहते हैं लेकिन कोई व्यावहारिक तरीका हमारे पास नहीं है। हमें आशा है, इस समस्या को सुलझाने के लिए आप कोई व्यावहारिक उपाय बताने की कृपा करेंगे। हमारे विचार से यह कठिनाई सिर्फ हमारी सभा की ही नहीं है। अतएव यह अत्यन्त वाञ्छनीय है कि आप इस समस्या का कोई निश्चित हल 'नवजीवन' या यं० इं० द्वारा सुझावें।"

गोरखपुर युवक-संघ के मानपत्र मे भी कुछ [illegible] गये थे और पूछा गया था कि युवको के सामने जीविका-निर्वाह [illegible] खड़ी है उसका सामना कैसे किया जाय? मेरे विचार [illegible] दूसरे से गुथे हुए हैं और दोनो ही हल किये जा [illegible] जीवन की अपेक्षा देहाती जीवन को अपना [illegible] सकें। हम लोग ग्रामीण सभ्यता [illegible] जनसख्या की बहुलता, [illegible] सब बातें, मेरे विचार से, [illegible] ग्रामीण सभ्यता के जो दोष हैं [illegible] नही हैं। इन सभ्यता को [illegible]

की स्थापना करना मुझे तो तबतक असम्भव प्रतीत होता है, जबतक हम देश की आबादी को किसी जबरदस्त साधन द्वारा तीस करोड़ की जगह तीस लाख या तीन करोड़ तक घटा देने को तैयार न हों। अतएव मैं तो इसी शर्त पर कोई उपाय बतला सकता हूं कि हम अपनी वर्तमान ग्रामीण सभ्यता को कायम रखना चाहते हैं और उसके जाने तथा माने हुए दोषों से उसे मुक्त करना अपना कर्तव्य समझते हैं। यह तभी किया जा सकता है, जब देश के नवयुवक गांवों में जाकर रहने लगें। और अगर वे यह करना चाहे तो उन्हें अपने जीवन को नये सांचे में ढालना पड़ेगा, अवकाश का एक-एक दिन अपने कालेजों और स्कूलों के आसपास बसे हुए गांवों में बिताना पड़ेगा और जिन लोगो की पढ़ाई हो चुकी है, या जो यहीं कुछ भी पढ-लिख नही रहे है, उन्हें गावों मे बस जाने का निश्चय कर लेना होगा। अखिल भारत-चर्खा-संघ और उसकी तमाम शाखाएं तथा संस्थाएं, जो उसकी देखरेख में काम कर रही हैं, विद्यार्थियों को सेवाक्षम बनाने की अच्छी सन्धि दे रही है, जिनसे लाभ उठा कर अगर विद्यार्थी चाहे तो ग्राम्य-जीवन के अनुकूल सादगी से रहकर सम्माननीय जीवन बिता सकते है। अभी हाल चर्खा संघ मे देश के कोई १५०० नौजवान काम कर रहे है जिन्हें १५ से १५० तक की आय होती है, और आज भी चर्खा-संघ ऐसे अनगिनत विद्यार्थियों को काम दे सकता है जिनमें लगन है, प्रामाणिकता है, उद्योगशीलता है और जो हाथ-मजदूरी करने में शर्माते नहीं। इसके अलावा राष्ट्रीय शिक्षा-संस्थाएं भी हैं, जो नवयु कों से सेवा की अपेक्षा रखती है। इसमे शक नही कि अभी इनका क्षेत्र मर्यादित है और मर्यादित इसलिए है कि इस समय देश में राष्ट्रीय शिक्षा का चलन नही है। अतएव मैं सब उत्साही या सच्ची लगनवाले नवयुवको से सिफारिश करता हूं कि अगर वे अपने वर्तमान वातावरण से और जीवन के दृष्टिकोण से असन्तुष्ट है तो इन दो महान राष्ट्रीय संस्थाओं का अनुशीलन करें। ये संस्थाए चुपचाप मगर अत्यन्त ठोस और रचनात्मक कार्य कर रही हैं और नवयुवको के लिए सेवा तथा सम्माननीय आजीविका का प्रबन्ध कर सकती है। देश के नौजवान राष्ट्र-निर्माण की इन दो महान शक्तियों से लाभ उठावें। लाभ उठायें या न उठाये, मैं उनसे अनुरोध करता हूं कि वे गांवो में अवश्य घुसें और अपने लिए सेवा, खोज एवं सच्चे ज्ञान का अनन्त क्षेत्र प्राप्त कर ले। क्या ही अच्छा हो अगर अध्यापकगण अपने छात्रो को, लड़को तथा लड़कियो को, अवकाश के दिनो साहित्यिक अभ्यास का काम न देकर उन्हे गावों की शिक्षाप्रद यात्रा करने की सलाह दे। अवकाश का उपयोग मनोविनोद और नवजीवन की प्राप्ति के लिए किया जाना चाहिए, पुस्तको को घुटाई में कदापि नही।

—अंग्रेजी। यं० इं०। हि० न० जी०, ७।११।१९२९।]

४३. भौतिक और नैतिक गन्दगी : हरद्वार

निस्सन्देह यह सच है कि हरद्वार और दूसरे प्रसिद्ध तीर्थस्थान एक समय वस्तुत पवित्र थे। स्थान के दृष्टि-सौन्दर्य, और उनकी परम्परागत लोकप्रियता से पता चलता है कि वे स्थान किसी समय हिन्दू-धर्म की सशुद्धि और सरक्षण के गढ थे। लेकिन मुझे कबूल करना पडता है कि हिन्दू धर्म के प्रति मेरे हृदय मे गम्भीर श्रद्धा और प्राचीन सभ्यता के लिए स्वाभाविक आदर होते हुए भी मैं हरद्वार मे, इच्छा रहने पर भी, मनुष्यकृत ऐसी एक भी वस्तु नही देख सका, जो मुझे मुग्ध कर सकती।

पहली बार जब सन् १९१५ मे मैं हरद्वार गया था, तब भारत-सेवा-सघ की सेवा-समिति के कप्तान पण्डित हृदयनाथ कुजरू के अधीन एक स्वयसेवक बनकर पहुचा था। इस कारण मैं सहज ही बहुतेरी बाते आखो देख सका था और कई लोगो के निकट परिचय मे आ सका था। किसी दूसरी अवस्था मे इस तरह परिचय पाना शायद कठिन होता। तब तो मैं बडी-बडी आशाए लगाकर और पूज्य-भाव से प्रेरित होकर हरद्वार गया था। लेकिन जहा एक ओर गगा की निर्मल धारा ने और हिमाचल के पवित्र पर्वतशिखरो ने मुझे मोह लिया, तहा दूसरी ओर मनुष्य की करतूतो को देख मेरे हृदय को सख्त चोट पहुची और हरद्वार की नैतिक तथा भौतिक मलीनता को देखकर मुझे अत्यन्त दुःख हुआ। इस बार की यात्रा मे भी मैंने हरद्वार की इस दशा मे कोई ज्यादा सुधार नही पाया। पहले की भाति आज भी धर्म के नाम पर गगा की भव्य और निर्मल धारा गदली की जाती है। गगा-किनारे पर, जहा ईश्वर-दर्शन के लिए ध्यान लगाकर बैठना शोभा देता है, पाखाना-पेशाब करते हुए असख्य स्त्री-पुरुष अपनी मूढता और [illegible] का परिचय देते नजर आते है। लोग अपने इन कामो से प्रकृति [illegible] तथा धर्म के नियमो का भग करते हैं। तमाम धर्मशास्त्रो मे नदियो की धारा, नदी-तट, आम सडक और आमदरफ्त के दूसरे सब मार्गो को गन्दा करने की मनाही है। [illegible] सिखाता है कि मनुष्य के मलमूत्रादि का नियमानुसार उपयोग करने से [illegible] अच्छी खाद बनती है। आरोग्यशास्त्री [illegible] है कि [illegible] स्थानो [illegible] का विसर्जन करना मानव-समाज के घोर [illegible] है। [illegible] और अज्ञान के कारण फैलनेवाली गन्दगी की बात। [illegible] बिगाडा जाता है, सो तो जुदा ही है। [illegible] मे एक नियत स्थान पर ले जाया [illegible]। [illegible] कर पीते है, उसमे फूल, सूत, [illegible], पानी, [illegible]

जब मैंने इसका विरोध किया तो उत्तर मिला कि यह तो सनातन से चली आई एक प्रथा है। इसके सिवा मैंने यह भी सुना है कि शहर की गटरों का गंदला पानी भी नदी में ही बहा दिया जाता है, जो कि एक बड़े-से-बड़ा अपराध है।

यात्रियों की इतनी अधिक भीड़ के रहते हुए भी हरद्वार का स्टेशन अबतक पूर्ववत् नन्हा-सा बना हुआ है। स्टेशन पर किसी भी बात की सुविधा नहीं है। गलियां संकरी और गन्दी है, और मालूम होता है कि रास्तों की मरम्मत की किसी को चिन्ता नही है। इस तरह अधिकारियों और जनता ने हरद्वार को गन्दा बनाने में कोई बात उठा नहीं रक्खी है।

यह तो हरद्वार की भौतिक गन्दगी की रामकहानी हुई। मुझे विश्वस्त सूत्र से पता चला है कि वहां की नैतिक गन्दगी इससे भी कही बढ़-चढ़कर है। हरद्वार में रात-दिन होने वाले व्यभिचार की जो बातें मैने सुनी हैं, उनका उल्लेख इन स्तम्भों मे नही किया जा सकता। पण्डों ने मुझे जो मान-पत्र दिया था, उसमें उन्होंने अपने भोलेपन के कारण स्पष्ट ही स्वीकार किया था कि शास्त्रों की आज्ञानुसार हरद्वार शहर में ब्रह्मचर्य से रहना आवश्यक है, अतएव वे उस स्थान को यात्रियो के लिए छोड़ कर स्वयं हरद्वार की अंकित सीमा में रहते है। इतना सब होते हुए भी कोई कारण नहीं कि हरद्वार एक आदर्श क्षेत्र न बन सके। हिन्दू धर्म की प्राचीन सस्कृति का पुनरुत्थान करने का दावा रखनेवाली तीन संस्थाएं हरद्वार में हैं, ऋषिकुल, महाविद्यालय और स्व० श्रद्धानन्द जी का गुरुकुल। इनके सिवा हरद्वार में, ज्वालापुर में और पास-पडोस में अनेक धनाढ्य महन्त भी रहते हैं। ये सब, या इनमें से कोई एक ही संस्था, अगर चाहे तो, हरद्वार को आदर्श तीर्थ-स्थान बना सकती है। जिस सार्वजनिक सभा में मैने हरद्वार की भौतिक और नैतिक गन्दगी के सम्बन्ध में अपना दुःख प्रकट किया था, उसके सभापति आचार्य रामदेव जी ने प्रतिज्ञा करके मुझे आश्वासन दिया है कि वह अपने गुरुकुल के द्वारा इन सुधारों के लिए भरसक प्रयत्न करेंगे। अनेक स्थानीय खामोश सेवक भी इस परिस्थिति को सुधारने के लिए यथाशक्ति कोशिश कर रहे हैं। जिस हरद्वार में स्वदेशी शक्कर का ही चलन है, वही हरसाल सात लाख रुपयों का विलायती कपड़ा बिक जाता है। ज्वालापुर में, जो हरद्वार का एक मुख्य अंग है, शराब और कसाई की एक-एक दूकान भी है। कोई कारण नही कि हरद्वार में सम्पूर्ण मद्यपान-निषेध सफल न हो सके और हिन्दुओं के तीर्थस्थान मे कसाई की दूकान का होना तो एक आश्चर्य की ही बात है। आचार्यजी को आशा है कि हरद्वार को स्वच्छ बना सकेंगे। और मांस, शराब तथा विदेशी वस्त्र को वहां से निकाल सकेंगे। उनकी यह आकांक्षा प्रशंसनीय है। ईश्वर करे वह पूरी हो। अगर गुरुकुल के

विद्यार्थी अपने विद्याभ्यास के साथ-साथ धर्म और देश की इस तरह सेवा भी कर सकें तो उन्हे अवश्य ही सच्ची शिक्षा का लाभ मिले।

—गुजराती। न० जी०। हि० न० जी०, ७।११।१९२९।]

४४. धर्मक्षेत्र में अधर्म

एक काशी-निवासी लिखते हैं —

"काशी परम्परा के सनातनियो का धर्मप्राण स्थान है। साल मे लाखों यात्री श्री विश्वनाथ तथा माता गगा की श्रद्धा-भक्ति से आकर पूजा-अर्चा करते हैं। यह तीनों लोको वे न्यारी शिवपुरी कहलाती है। यहा संस्कृत विद्यापीठ तथा हिन्दुओ का विश्वविद्यालय है, जिसके जन्मदाता हमारे प्रान्त के धर्मप्राण पं० मदन मोहन मालवीय जी हैं। ऐसे काशी क्षेत्र की क्या दशा है, इसी का खुलासा आपके समक्ष रखने की इच्छा से प्रेरित होकर लिख रहा हू।

"यहां पर वैष्णवों तथा शैवमतावलम्बियो का पक्का पुराना अड्डा है, जो कि सनातन धर्म की रूढ़ि पर स्थित है। यहां इन दोनो मतो के मन्दिर इतने अधिक हैं कि कदाचित् ही और कहीं हों। यहां पर बसनेवाले अधिकतर किसी प्रकार की यातना पाये बिना ही, मुक्ति प्राप्त कर लेते हैं, यह परम्परागत विश्वास बराबर चालू है, इसलिए भारतवर्ष के राजे, महाराजे, सेठ, साहूकार चतुर्थ अवस्था में यहीं आकर बसते हैं तथा प्राण त्यागते हैं। इस शहर मे केवल रेशमी कलाबत्तू के काम की साडी, दुपट्टे, हाथियो के झूल तथा अनेक प्रकार के सामान और साथ ही चांदी की कुर्सी, अम्बारी, छतरी आदि तैयार होते हैं, जो कि भारतवर्ष की जितनी रियासतें हैं, उन सबमे चौगुने दामो पर अभी तक बिका करते हैं। इनके कारबारी यहा के इने-गिने थोड़े से पूंजीपति हैं। इसके अतिरिक्त यहाँ के पीतल के बर्तन, लकड़ी के खिलौने भी बाहर जाते हैं। इन कामो में थोड़े से हिन्दू तथा अधिकतर मुसलमान जुलाहे लगे हुए हैं। बाकी आबादी के लोग साधारण नौकरी, रोजगार, गुर्वाफरोशी में गुजर करते हैं। यहाँ के [illegible] जमीनो के जमींदार तथा मकानो का किराया खानेवाले हैं। पर इन लोगो का एक दल है, जो नौसरबाजी, दलाली, मुफ्तखोरी, जुआ, चोरी, [illegible] भांग की ठीकेदारी, कारिन्दागिरी तथा काशी की नाव में [illegible] पैसा ठगता है, और मौका मिल जाने पर मार [illegible] रखता है।

"काशी में श्री गंगाजी के एक ओर से दूसरी ओर तक बरावर चन्द्राकार घाटों की कतार तथा मन्दिर हैं। इन घाटों पर प्रायः सुबह के वक्त स्नानार्थियों की खासी भीड़ बारहो महीना रहती है, जिसमें स्त्री-पुरुष दोनों होते हैं।

"समस्त भारतवर्ष में जितनी विधवाए अपने सम्वन्धियों द्वारा या अन्यों से भी व्यभिचारिणी हो जाती हैं, उन सभी के छोड़ने का स्थान काशी समस्त सनातनियों ने निर्धारित कर रक्खा है। और यहां साल में हजारों ऐसी स्त्रियां, खासकर पर्वों में छोड़ी हुई मिला करती हैं, जिनके आश्रयदाता मुसलमान भाई होते थे। पर अब श्रीमान् बी० एन० मेहता भूतपूर्व कलक्टर के उद्योग से एक अनाथालय ऐसी स्त्रियों के लिए स्थापित है तथा आर्य समाज ने भी अपनी तरफ से एक अनाथालय स्थापित कर रक्खा है। आर्यसमाज अनाथालय के मन्त्री जी ने हाल में एक लेख 'आज' में छपाकर उन स्त्रियों की चाल-चलन के सुधार का उपाय भी पूछा था। क्योंकि उन्होंने लिखा था कि जब से यह अनाथालय स्थापित है तव से जितनी स्त्रियां इसमें प्रविष्ट हुईं सभी व्यभिचारिणी होकर अपने कुटुम्वियों द्वारा निकाली हुई थीं, जो कि यहां प्रविष्ट होने के साथ ही विवाह की इच्छा प्रकट करने लगती हैं। विलम्ब होने से अपनी आदत का परिचय यहां भी देती हैं तथा इधर एक भी मनुष्य इन्हें रखने पर उद्यत नहीं होता। ऐसी स्त्रियां पंजाब भेज दी जाती हैं। वहीं के लोग इन्हें रख लेते हैं, पर जिन लोगों ने ऐसी स्त्रियां रक्खी हैं वे आंसू गिराते हैं और यही कहते हैं कि भगवान बचावे। कारण उनकी आदत ज्यों-की-त्यों बनी रहती है और मौका पाकर अपने पति को जहर इत्यादि देकर अथवा मालमता लेकर दूसरों की प्रेमिका बन जाती हैं या कहीं दूसरे अनाथालय में घुस कर पुनः व्याह की योजना कराती हैं।

"आपके समक्ष ऐसी वातों के कहने का साहस मैं कभी करने योग्य नहीं, पर मेरी समझ में जितना ही यह विषय गोपनीय और निन्द्य करके छोड़ा जा रहा है उतना ही इसका विषैला प्रभाव बढ़ रहा है जिससे वड़ों-बड़ों के नाकों दम है। हां, थोड़े दिनों से, जब से आपका प्रभाव देश पर छाया है व शिक्षा का प्रभाव बढ़ा है सम्भव है कि यह वुराई शिक्षित समाज से दूर हो गई हो। इससे निन्दनीय और गोपनीय कोई विषय दूसरा न होगा। पर जहां तक मेरा स्वतः का अनुभव है, वम्बई को छोड़ सर्वत्र है—कहीं कुछ कम कहीं कुछ ज्यादा। पर इधर विहार तथा यु० प्रा० का हाल वर्णनातीत हो रहा है। इसका सवूत ४९४ दफा ताजीरात हिन्द की रु से अदालत में पेश उन अर्जियों से किसी कदर चल सकेगा जो कि यहां की नीच जातियों ने दी हैं। पर यहां की नाममात्र को उच्च कहलानेवाली

जातियो में तथा खासकर काशीपुरी का कोई घर ऐसा नहीं बचा होगा जो व्यभिचार के संसर्ग से दूषित न हुआ हो।

"काशी के अधिकतर अमीर , मठों एवं मन्दिरो के अधिष्ठाता, अफसर सभी बाहर तो अपने को चरित्रवान बताकर अनेक संस्थाएं चलाते, आदर्श जीवन दिखलाते तथा भीतर-भीतर ऐसी कई स्त्रियो के पेट भरा करते हैं जो मध्यम श्रेणी की युवती स्त्रियों को उनके भोग के वास्ते रुपये तथा जेवर का लोभ देकर दर्शनों, पूजनो तथा अपने जाति-भाइयों के यहा जाने के बहाने घर से निकालती हैं तथा अपने प्रेमियों से मिलाकर ही रहती हैं।

"इन्हीं उद्देश्यो की पूर्ति के अर्थ यहा अधिक मेले व पर्व मनाये जाते हैं। इसके अलावा तीसरा तरीका यह निकाला गया है कि कहीं पर वेचूवीर, कहीं दरगाह, कहीं देव व देवियो की मिन्नतो के बहाने करके स्त्रियां अपने पतियों को बाध्य करके नौकरो के साथ, पड़ोसियो के साथ तथा अन्य लोगो के साथ जाती हैं व अपनी कुटिल इच्छा पूरी करती हैं। इन कुवासनाओ को पूरी करने के लिए यहा शहर मे कई अड्डे हैं जहां पर खुले आम ये हरकतें हुआ करती हैं और ऐसी जगहे बदमाशो के सहारे पर ही चलती हैं। इन बदमाशो के भय से जो लोग कि इन बातो के विरोधी हैं वे भी कानूनन कोई रास्ता न देख कर चुप्पी साधे रहते हैं तथा बहुतेरे इनमे पीछे से सहमत इस कारण हो जाते हैं कि यह समाज की इच्छा से ही चलता है, मैं अकेला क्या करूंगा? ऐसे अड्डो के पृष्ठपोषक खास करके पुलीसवाले भी गुप्त रूप से रहते हैं।

"इन बातो को दूर करने का भार आप कदाचित् काशी के नगर-पिताओ तथा म्युनिसपैलिटी पर छोडेंगे, जिसके उत्तर-स्वरूप आप यह भी जान लें कि जितनी धांधली यहां की म्युनिसिपैलिटी मे है उतनी शायद ही कहीं हो। यहां के मेम्बर दो गुटो मे विभाजित हैं, जिनमे आपस की खींचातानी इस कदर रहती है कि चाहे काशी के निवासी मर मिटें पर उनकी बातो की ओर कौन ध्यान देता है? रोज नये-नये करों से उत्पीडित करके अपनी जेब भरना इनका उद्देश्य है, कारण इन पदो को प्राप्त करने के लिए कम-से-कम प्रत्येक व्यक्ति को दो हजार खर्च करना पडता है, तिस पर तुर्रा यह कि यह रकम गुन्डे, बदमाश, [illegible] और दलालो के पेट मे जाती है। इसी को दुगना और तिगुना करने की [illegible] आकांक्षा बनी रहना कुछ अनुचित नहीं कहा जा सकता।

"आप पूछेंगे, ऐसी कुत्सित बातों के लिखने तथा [illegible] की क्या आवश्यकता है? अतः इसके उत्तर-स्वरूप निवेदन है कि [illegible] मानसिक तथा शारीरिक उन्नति इस नगर की [illegible]।

दूसरे, मैं भी इन्हीं वुराइयों से उत्पीड़ित हुआ हूं और मेरी आत्मा वारबार इसे आपके समक्ष रखने को वाध्य करती है।"

सम्भव है इस लेख में अतिशयोक्ति हो, लेकिन अशियोक्तिवाला अंश निकाल डालने पर भी जो रहेगा, वह हमारे लिए शोचनीय होगा। कोई यह कह कर इन वुराइयों की ओर दुर्लक्ष्य न करे कि ऐसी अपवित्रता अन्य धर्मों के क्षेत्रों में भी पाई जाती है या हिन्दू धर्म के दूसरे तीर्थक्षेत्रों की भी यही दशा है। हर हालत में, हर जगह ऐसी अनीति निन्दनीय है और उसे दूर करने के लिए प्रयत्न करना जरूरी है। उन वुराइयों को दूर करने का सवसे अच्छा मार्ग तो यह है कि जो इन वुराइयों को जानते है और उन्हें निन्दनीय समझते हैं, वे अपने जीवन को शुद्ध बनावें और शुद्धता में दिनोंदिन वृद्धि करते रहें। यह प्राचीन मार्ग है। जव अधर्म वढता है तव साधु पुरुष तपश्चर्या करते है और तपश्चर्या का अर्थ शुद्धि है। एक दूसरा और आधुनिक मार्ग नवयुवकों द्वारा आन्दोलन मचाने का है। आजकल युवक-संघ वढ़ रहे है। युवकों में सेवाभाव वढ़ रहा है। यदि वे इस काम को उठा लें तो वहुत कुछ कर सकते हैं। सव मन्दिरों की सूची वना कर, उनके संरक्षकों और पुजारियों से परिचय वढ़ावें और जिन मन्दिरों के खिलाफ शिकायत हो उनकी यथासम्भव जांच करें। यात्रियों और दूसरे दर्शक लोगों को इन वातों से सावधान कर दें। अनाथालय आदि संस्थाओं की जानकारी हासिल करें। इन कार्यों से वहुतेरा सुधार अपने-आप हो जायगा। क्योंकि अनीति अंधेरे में ही की जा सकती है, प्रकाश में नही।

ऐसे कार्य करनेवाले युवकों का जीवन विशुद्ध होना चाहिए। जो दूसरों की शुद्धि करना चाहते हैं, उनके खुद शुद्ध नही होने पर, उनका कोई प्रभाव नहीं पड़ता।

तीसरा मार्ग सम्भावित इज्जतदार और पवित्र लोगों की समिति वना कर उनके द्वारा तीर्थ-क्षेत्रों के सुधार की चेष्टा करना है।

ये तीनों मार्ग साथ-साथ चल सकते है, चलने चाहिए। ऐसी अनीति होते देख हम वहुधा निराश हो जाते है परन्तु निराशा का कोई कारण नही है। हमारी निराशा और मन्दता के कारण वहुतेरी अनीतियां जीवित रह सकती है। हममें यह श्रद्धा होनी चाहिए कि अनीति क्षणिक वस्तु है और कुछ ही लोगों की क्यों न हो, मगर तेजस्विनी नीति के सामने वह टिक नही सकती।

—हि० न० जी०, १२।१२।१९२९।]

- **जव अधर्म वढ़ता है, तव साधु पुरुष तपश्चर्या करते हैं और तपश्चर्या का अर्थ शुद्धि है।**

- अनीति अंधेरे में ही की जा सकती है, प्रकाश में नहीं।
- हम में यह श्रद्धा होनी चाहिए कि अनीति क्षणिक वस्तु है और कुछ हो लोगों को क्यों न हो, किन्तु तेजस्विनी नीति के सामने टिक नहीं सकती।

४५. कांग्रेस किस की ?

सयुक्तप्रान्त के दौरे मे किन्ही सज्जन ने दो-तीन प्रश्न पूछे थे और उनका उत्तर 'हिन्दी नवजीवन' द्वारा मागा था। उनमे से एक प्रश्न यह था :—

"क्या कांग्रेस हिन्दू-मुसलमानों का सम्मिलित गिरोह है। यदि इसका उत्तर हां हो तो क्या ऐसी कांग्रेस के कर्मचारी, जो हिन्दू-मुस्लिम उपद्रव के कारण होते हैं, कांग्रेसी कहलाने के अधिकारी और अनुकरणीय हैं। और यदि ऐसी समस्या उपस्थित हो तो उस दशा में सर्व-साधारण को क्या करना चाहिए?"

काग्रेस हिन्दू-मुसलमानो की तो है ही, लेकिन वह इससे भी कुछ अधिक है। काग्रेस भारतवर्ष मे रहनेवाले हर एक व्यक्ति की सस्था है—हिन्दू-मुसलमान, पारसी, सिक्ख, ईसाई, यहूदी वगैरा सब किसी की है। काग्रेस के सदस्य वे सब स्त्री-पुरुष हो सकते हैं, जो महासभा के उद्देश्यो को स्वीकार करते हैं। काग्रेस के कर्मचारियो मे से यदि कोई हिन्दू-मुसलमानो के उपद्रव का—झगड़े का कारण बने, तो काग्रेस उसका बहिष्कार कर सकती है। कांग्रेस का सदस्य बन कर जो एक-दूसरे के बीच वैमनस्य पैदा करता है, वह न केवल काग्रेस का, बल्कि देश का भी द्रोही है।

यह तो ऊपर के प्रश्न का उत्तर-भर है। परन्तु जब इतने से खुद मुझे ही सन्तोष नही होता, तो प्रश्नकर्त्ता को भला कैसे हो सकता है? [illegible] बात तो यह है कि दोनो कौमो के बीच वैमनस्य पैदा करने की किसी को आवश्यकता ही नही होती। इस हालत का असर, कुछ ही अंशो मे क्यो न हो, काग्रेस पर भी पड़ता है। इस वैमनस्य को मिटाने का तरीका क्या है। [illegible] मे तो है, लेकिन इसे यह प्रकट नही कर [illegible]।

वैमनस्य को मिटाने के लिए शुद्धि चाहिए। [illegible] होने चाहिए। आज तो हम एक दूसरे से डरते है। [illegible] मे विश्वास पैदा हो जाय तो सब वैमनस्य, [illegible] इस कमजोरी को मिटाने का सबसे अच्छा [illegible] है कि हम [illegible] मे किसी का अनुकरण न करें, बल्कि खुद ही [illegible]। [illegible]

भी आज पैदा हो जायं, तो कांग्रेस की शिकायत ही न रह पाये। हां, यह मैं जानता हूं कि ऐसा वायु-मण्डल पैदा करने की कोशिश हो रही है, और इसे जानते हुए मैं अपना निजी विश्वास नही छोड़ सकता।
—हिं० न० जी०, १९।१२।१९२९।]

४६. निश्चित परामर्श

युक्तप्रान्त के दौरे मे प्रयाग के विद्यार्थियों की ओर से मुझे नीचे लिखा पत्र मिला था:

"यं० इं० के अभी हाल के एक अंक में ग्रामीण सभ्यता पर आपका जो लेख छपा था उसके सम्बन्ध में हमारा निवेदन है कि पढ़ाई खतम कर चुकने पर गांवों में जा बसने की आपकी सलाह को हम दिल से मानते हैं, लेकिन आपका यह लेख हमारी रहनुमाई के लिए काफी नहीं है। हम चाहते हैं कि हमसे जिस काम की आशा रक्खी जाती है, उसकी कोई निश्चित रूपरेखा हमारे सामने हो। अनिश्चत और बेमतलब बातें सुन-सुन कर तो अब हमारे कान पक गये। अपने देश-भाइयों के लिए कुछ कर गुजरने के लिए हम तड़प रहे हैं। लेकिन हम नहीं जानते कि क्या करें। कैसे शुरू करें और मेहनत के फल-स्वरूप किन लाभों की भविष्य में यथासम्भव आशा रक्खें। आपने १५ से लगाकर १५० तक की आमदनी का जो जिक्र किया है, उसे पाने के लिए हम किन साधनों का सहारा लें? आशा है, विद्यार्थियों की सभा में या अपने प्रतिष्ठित अखबार में आप इन बातों पर कुछ प्रकाश डालेंगे।"

विद्यार्थियों की एक सभा में मैं इस विषय की चर्चा कर चुका हूं और यद्यपि इन स्तम्भों-द्वारा विद्यार्थियों के लिए एक निश्चित कार्यक्रम प्रकट हो चुका है, तो भी पहले बताई हुई योजना को यहां फिर से अधिक दृढ़तापूर्वक पेश कर देना अनुचित न होगा।

पत्र-लेखक जानना चाहते हैं कि अभ्यास पूरा करने के बाद वह क्या कर सकते हैं। मैं उनसे कहना चाहता हूं कि बड़ी उम्र के विद्यार्थी, यानी कालेजों के तमाम विद्यार्थी कालेजों में रहते और पढ़ते हुए भी फुरसत के वक्त गांवों में जाकर काम करना शुरु कर दे। ऐसों के लिए मैं नीचे एक योजना देता हूं।

विद्यार्थियों को अपने अवकाश का सारा समय ग्राम-सेवा में बिताना चाहिए। इस बात को ध्यान मे रखकर लकीर के फकीर बनने के बदले वे अपने मदरसों या कालेजों के पास पढ़नेवाले गांवों में चले जायं और गांववालों की हालत का अभ्यास

करके उनके साथ दोस्ती पैदा करें। इस आदत के कारण वे गाववालो के निकट सम्पर्क में आते जायगे, और वाद मे जब कभी वे कायमी तौर पर वहा बसने लगेंगे तो लोग एक मित्र की हैसियत से उनका स्वागत करेंगे, न कि अजनबी समझकर उनपर शक। लम्बी छुट्टियो के दिनो मे विद्यार्थीगण गावो मे जाकर रहे, बडी उम्र के लोगों के लिए मदरसे या कक्षाए खोलें, गाववालो को सफाई के नियम सिखायें और उनकी छोटी-मोटी बीमारियो का इलाज करें। वे उनमे चर्खे को दाखिल करे और अपने फाजिल वक्त के एक-एक मिनट को अच्छी तरह बिताने की उन्हे सिखावन दे। इस काम के लिए विद्यार्थियो और शिक्षको को अपने अवकाश के समय के सदुपयोग-सम्बन्धी विचारो को बदल डालना पड़ेगा। छुट्टी के दिनो मे अविचारी शिक्षक अक्सर विद्यार्थियो को नया-नया सबक याद कर लाने को कहते हैं। मेरी राय मे यह एक बहुत ही बुरी आदत है। छुट्टी के दिनो मे तो विद्यार्थियो के दिमाग रातदिन की दिनचर्या मे मुक्त रहने चाहिए, जिससे वे अपनी मदद आप कर सके, और मौलिक उन्नति भी कर ले। जिस ग्रामसेवा का मैंने उल्लेख किया है, वह मनोविनोद और नये-नये अनुभव प्राप्त करने का एक अच्छे-से-अच्छा साधन है। जाहिर है कि पढाई खत्म करते ही जी-जान से ग्राम-सेवा मे लग जाने के लिए इस तरह की तैयारी सबसे उम्दा है।

ग्रामसेवा की पूरी-पूरी योजना का विस्तार से उल्लेख करने की अब कोई जरूरत नही है। छुट्टियो मे जो कुछ किया था, उसी को आगे [illegible] पर चुन देना है। इस काम की सहायता के लिए गाववाले भी हर तरह तैयार मिलेंगे। गावो मे रहकर हमे ग्राम्य जीवन के हर पहलू पर विचार और [illegible] है—क्या आर्थिक, क्या आरोग्य-सम्बन्धी, क्या सामाजिक और क्या राजनीतिक। आर्थिक विपत्ति को मिटाने के लिए तो बहुत हद तक, [illegible], चर्खा ही एक राम-बाण उपाय है। चर्खे के कारण तत्काल ही गाववालो की आमदनी [illegible] है, वे बुराइयो से भी बच जाते है। आरोग्य-सम्बन्धी बातो मे [illegible] भी शामिल है। इस बारे मे विद्यार्थियो मे आशा [illegible] काम करेंगे और मैले तथा कूडे-करकट की [illegible], कुओ और तालाबो को साफ रखने की कोशिश करेंगे [illegible] दूर करेंगे और इस तरह गावो को साफ [illegible]। ग्राम-सेवक को सामाजिक समस्याएँ भी [illegible] लोगो को इस बात के लिए राजी [illegible] आदतो को छोड दें। जैसे, [illegible], नशाबाजी और [illegible]।

आखिरी बात राजनीतिक सवालों की है। इस सम्बन्ध में ग्रामसेवक गांववालों की राजनीतिक शिकायतों का अध्ययन करेगा और उन्हें इस बात में स्वतन्त्रता, स्वावलम्बन और आत्मोद्धार का महत्व सिखावेगा। मेरी राय में नौजवानों—बालिगों के लिए इतनी तालीम काफी होगी। लेकिन ग्राम-सेवक के काम का यहीं अन्त नही होता। उसे छोटे बच्चों की शिक्षा-दीक्षा और उनकी सुरक्षा का भार अपने ऊपर लेना होगा और बड़ों के लिए रात्रिशलाएं चलानी होंगी। यह साहित्यिक शिक्षा पूरे पाठ्यक्रम का एक अंगमात्र होगी और ऊपर जिन विशाल ध्येय का जिक्र किया है, उसे पाने का एक जरिया भर होगी।

मेरा दावा है कि इस सेवा के लिए हृदय की उदारता और चारित्र्य की निष्कलंकता दो जरूरी चीजें हैं। अगर ये दो गुण हों तो और सब गुण अपने आप मनुष्य में आ जाते है।

आखिरी सवाल जीविका का है। मजदूर को उसकी लियाकत के मुताबिक मजदूरी मिल ही जाती है। महासभा के वर्तमान सभापति प्रान्तों के लिए राष्ट्रीय सेवा-संघ का संघटन कर रहे है। अखिल भारत चर्खा संघ एक उन्नतिशील और स्थायी संस्था है। जीविका भर के लिए वह गैरण्टी देती है। इससे ज्यादा रकम वह दे नही सकती। अपना मतलब और देश की सेवा दोनों एक साथ नहीं हो सकते। देश की सेवा के आगे अपनी सेवा का क्षेत्र बहुत ही संकुचित है और इसी कारण हमारे गरीब देश के पास जो साधन है, उनसे बढ़कर जीविका की गुंजाइश नही है। गांवों की सेवा करना स्वराज्य कायम करना है। और तो सब सपने की सम्पत है।

—यं० इं। हि० न० जी०, ९।१।१९३०।]

● **अपना मतलब और देश की सेवा दोनों साथ नहीं हो सकते।**

४७. वर्ण और जाति

इलाहाबाद के विद्यार्थी का प्रश्न

एक विद्यार्थी अपने नाम-ठाम के साथ लिखते हैं—

"मैं जानता हूं कि आप हिन्दुस्तान के कौमी सवाल के बारे में रात-दिन उग्रता-पूर्वक विचार कर रहे हैं और आपने यह ऐलान किया है कि गोलमेज परिषद में आपके शामिल होने की दो शर्तों में इस सवाल का हल एक शर्त है। आज छोटी कौमों की समस्या का हल खास कर उन-उन कौमों के नेताओं पर निर्भर करता

है परन्तु सारे कौमी झगड़ों की जड़ को ही उखाड़ फेंकने के लिए वे लोग यदि किसी कामचलाऊ समझौते पर पहुंच भी सकें तो भी वह काफी न होगा।

"तमाम कौमी भेदभाव की जड़ें काटने के लिए बहुत अधिक गाढ़ा सामाजिक संसर्ग अनिवार्य है। आज तो हरएक कौम का सामाजिक जीवन दूसरी सब जातियों और कौमों के जीवन से एक दम अछूता-सा होता है। हिन्दू मुसलमानों को ही लीजिए। हिन्दुओं के बड़े त्योहार के मौकों पर मुसलमान भाई हिन्दुओं का सत्कार नहीं करते; यही हाल मुस्लिम त्योहारों का है। इसके फल-स्वरूप कौमी एकान्तिकता की जो भावना पैदा होती है, वह देश के हित के लिए बहुत ही हानिकारक है।

"दूसरा उपाय, जो कुछ लोगों ने बताया है वह कौमों में परस्पर ब्याह-सम्बन्ध का होना है। परन्तु जहां तक मैं जानता हूं, आप जातिपांति मे दृढ़ आस्था रखते हैं, यानी इसका मतलब यह हुआ कि आपकी राय में अन्तरजातीय ब्याह सुदूर भविष्य में भारतीयों के लिए आपत्तिरूप सिद्ध होंगे। जबतक इन कौमों में थोड़ा भी अलगाव रहेगा तबतक कौमी भेदभाव को पूरी तरह नष्ट करना बड़ी टेढ़ी खीर है। नवीन भारत के धर्मराज्य मे जुदा-जुदा कौमो के दरम्यान आप अपने मतानुसार कैसे सम्बन्ध की कल्पना करते हैं? क्या भिन्न-भिन्न कौमें आज की तरह सामाजिक व्यवहार में अलग ही रहेंगी? मैं मानता हूं कि इस सवाल के निपटारे पर भारतीय राष्ट्र का भावी कल्याण निर्भर है।

"एक बात और। यदि हम जातिपांति को मानते हैं तो अस्पृश्य कहे जाने वाले लोगों की स्थिति बहुत नाजुक हो जाती है। यदि हमें अस्पृश्यों का उद्धार करना हो, तो हम जातियों के बन्धनों को चालू रख ही नहीं सकते। जाति और धर्म का भेद पृथकता का जो वातावरण उत्पन्न करता है वह विश्व-बन्धुत्व की दृष्टि की दृष्टि से शापरूप है। जातिपांति की व्यवस्था उच्चता की मिथ्या भावना पैदा करती है जिसका नतीजा बुरा होता है। तो इन पुराने जातिपांति के बन्धनों मे अपनी श्रद्धा उचित है, यह कैसे साबित किया जाय?

"ये सवाल महीनों से मेरे दिमाग में चक्कर काट रहे हैं पर मैं आपका दृष्टिकोण समझ नहीं सका हूं। इन प्रश्नों का निपटारा करने के लिए मैं आपसे प्रार्थना करता हूं कि आप मेरी कठिनाई दूर करें।

"मैं इलाहाबाद विश्वविद्यालय में बी० ए० का विद्यार्थी हूं। चाहे जिस तरह क्यों न हो, हिन्दू मुसलमानों के दरम्यान भाईचारे का नाता [illegible] करने के लिए मैं आतुर हूं। परन्तु मेरे सामने कठिनाइयां [illegible] हो रही हैं। [illegible] जाति-पांति के बारे में है, जो मैं आपके आगे रख चुका हूं। [illegible] के बारे में है। जिस मुसलमान भाई ने [illegible]

हो सकता हूं। मेरी रहनुमाई कर सकनेवालों में आपसे बेहतर दूसरा कोई नहीं है, इसलिए इस पत्र-द्वारा मैं आपकी सेवा में उपस्थित होता हूं।"

यह कहना एक दम तो सच नहीं है कि हिन्दू मुसलमान एक दूसरे के त्यौहारों के अवसर पर परस्पर सत्कार नहीं करते। परन्तु यह अवश्य ही अभीष्ट है कि ऐसे सत्कार का आदान-प्रदान बहुत ही अधिक अवसरों पर और अधिक व्यापक रूप में हो।

जाति-पांति के बारे में मैं कई बार कह चुका हूं। आधुनिक अर्थ में मैं जाति-पांति नहीं मानता। वह विजातीय चीज है और प्रगति में विघ्नरूप है। इस तरह मैं मनुष्य-मनुष्य के बीच की असमानताओं को भी नहीं मानता। हम सब सम्पूर्णतया समान हैं। परन्तु समानता आत्माओं की है, शरीरों की नहीं। इसलिए वह एक मानसिक अवस्था है। समानता का विचार करने और जोर देकर उसे प्रकट करने की आवश्यकता रहती है, क्योंकि इस भौतिक जगत् में हम बड़ी-बडी असमानताएं देखते है। इस बाह्य असमानता के आभास में हमें समानता सिद्ध करनी है। कोई भी आदमी किसी दूसरे आदमी की अपेक्षा अपने को उच्च माने, तो वह ईश्वर और मनुष्य के समक्ष पाप है। इस प्रकार जातिपांति जिस हद तक भेद की सूचक है, बुरी चीज है।

परन्तु वर्ण मैं अवश्य मानता हूं। वर्ण की रचना वंश-परम्परागत धन्धों की बुनियाद पर है। मनुष्य के चार सर्वव्यापी धन्धों—ज्ञान देने, आर्त की रक्षा करने, कृषि और वाणिज्य तथा शारीरिक श्रम-द्वारा सेवा की समुचित व्यवस्था करने के लिए चार वर्णों का निर्माण हुआ है। ये धन्धे समस्त मानव जाति के लिए एक से हैं। परन्तु हिन्दू-धर्म ने इन्हें जीवन-धर्म के रूप में स्वीकार करके सामाजिक सम्बन्ध और आचार-व्यवहार के नियमन के लिए इनका उपयोग किया है। गुरुत्वाकर्षण के अस्तित्व को हम जानें या न जानें तो भी हम सब पर उसका असर होता है। लेकिन वैज्ञानिकों ने, जो इस नियम को जानते हैं, इसमें से जगत् को आश्चर्यचकित करनेवाले फल उत्पन्न किये हैं। इसी तरह हिन्दू धर्म ने वर्ण-धर्म की खोज और उसका प्रयोग करके जगत् को आश्चर्य में डाला है। जब हिन्दू जड़ता के शिकार हो गये, तब वर्ण के दुरुपयोग के फलस्वरूप बेशुमार जातियां बन गई और रोटी-बेटी व्यवहार के अनावश्यक बन्धन पैदा हुए। वर्ण धर्म का इन बन्धनों से कोई सम्बन्ध नहीं है। जुदा-जुदा वर्ण के लोग परस्पर रोटी-बेटी का व्यवहार रख सकते हैं। शील और आरोग्य के खातिर ये बन्धन आवश्यक हो सकते हैं। परन्तु जो ब्राह्मण शूद्र कन्या को या शूद्र ब्राह्मण कन्या को ब्याहता है वह वर्णधर्म का लोप नहीं करता।

अपने धर्म के बाहर व्याह करने का सवाल जुदा है। इसमे जबतक स्त्री पुरुष मे से हर एक को अपने-अपने धर्म का पालन करने की छूट होती है, तबतक नैतिक दृष्टि से ऐसे विवाह मे कोई आपत्ति नही समझता। परन्तु मैं नही मानता कि ऐसे विवाह-सम्बन्धो के फलस्वरूप शान्ति कायम होगी। शान्ति स्थापित होने के बाद ऐसे सम्बन्ध किये जा सकते हैं सही। जबतक हिन्दू मुसलमानो के दिल फटे हुए हैं तबतक हिन्दू-मुसलमान-विवाह-सम्बन्धो की हिमायत करने का फल मेरी दृष्टि मे सिवा आपत्ति के और कुछ न होगा। अपवाद-स्वरूप परिस्थिति मे ऐसे सम्बन्धो का सुखदायी साबित होना उन्हें सर्वव्यापक बनाने की हिमायत करने के लिए कारण रूप माने ही नही जा सकते। हिन्दू मुसलमानो मे खान-पान का व्यवहार तो आज भी बडे पैमाने पर होता है। परन्तु इसमे भी शान्ति मे वृद्धि तो नही हुई। मेरा यह दृढ विश्वास है कि रोटी-बेटी-व्यवहार का कौमी इत्तिफाक से कोई सम्बन्ध नही है। झगडे के कारण तो राजनीतिक और आर्थिक हैं और उन्ही को दूर करना है। यूरोप मे रोटी-बेटी-व्यवहार है। फिर भी जिस तरह यूरोपवाले आपस मे कट मरे हैं, वैसे तो हम हिन्दू-मुसलमान भी इतिहास मे कभी लडे नही। हमारे जन-समूह तो तटस्थ ही रहे हैं।

अस्पृश्यो का एक जुदा वर्ग है और हिन्दू धर्म के सिर कलक का टीका है। जातिया विघ्न-रूप हैं, पाप-रूप नही। अस्पृश्यता तो पाप है, और भयकर अपराध है और हिन्दू धर्म ने इस महासर्प का समय रहते नाश नही किया, तो यह हिन्दू धर्म को ही खा जायगा। 'अस्पृश्य' अब हिन्दू धर्म के बाहर कभी गिने ही न जाने चाहिए और उनके पेशे के अनुसार वे जिस वर्ण के योग्य हो, उस वर्ण के वे माने जाने चाहिए।

वर्ण की मेरी व्याख्यानुसार तो आज हिन्दू धर्म मे वर्णधर्म का पालन होता ही नही। ब्राह्मण नामधारियो ने विद्या पढाना छोड दिया है। वे दूसरे और धन्धे करने लगे हैं। यही बात कमोबेश दूसरे वर्णो के लिए भी सच है। दरअसल तो विदेशियो के जुए के नीचे होने की वजह से हम सब गुलाम हैं और इस कारण शूद्र से भी हलके पश्चिम के अस्पृश्य हैं।

इस पत्र के लेखक अन्नाहारी होने की वजह से मांसाहारी मुसलमान के साथ खाने के लिए मन को समझाने मे कठिनाई अनुभव करते हैं। [illegible] रक्खें कि मांसाहार करनेवाले तो मुसलमानो की [illegible] हिन्दू [illegible]। [illegible] अन्नाहारी को स्वच्छतापूर्वक पकाया हुआ [illegible] मे कोई बाधा न हो, तबतक उसे हिन्दू या [illegible] मुसलमानो के साथ बैठकर खाने की छूट है। फल और दूध तो उसे जरूर मिलेगा, [illegible]

—गुजराती। न० जी०। हि० न० जी०, [illegible]

४८. धार्मिक और अधार्मिक शपथ

काशी के सुप्रसिद्ध दानवीर श्री शिवप्रसाद गुप्त लिखते है :--

"पहली मई को हरिजन जब पढ़कर मुझे सुनाया गया, तभी से मैं उसकी 'धारासभाएं और गांधी सेवा-संघ' शीर्षक टिप्पणी पर विचार कर रहा हूं। आज मैंने उसे दुबारा पढ़ा। साथ ही साप्ताहिक पत्र भी पढ़ा। लेकिन मेरे दिमाग में जो विचार उथल-पुथल मचाये हुए है, वह इससे शान्त न हो सका।

टिप्पणी के आखिरी पैरा में कहा गया है कि 'यह कोई धार्मिक शपथ नहीं है और जहां तक मैं विधान को समझता हूं' वह तात्कालिक और ठोस स्वतन्त्रता की मांग में बाधक नहीं होती।' इसे पढ़कर मेरे मन में जो प्रश्न उठे वे इस प्रकार हैं:

१. क्या शपथ कई और तरह-तरह की होती हैं?

२. क्या ईश्वर के नाम पर या किसी अन्य रूप में ली गई शपथ को धार्मिक और अधार्मिक शपथ इन दो श्रेणियों में विभक्त किया जा सकता है?

३. अधार्मिक शपथ का प्रधान सिद्धान्त क्या है?

४. सम्राट के व्यक्तित्व के प्रति वफादारी की शपथ का तात्कालिक और ठोस स्वतन्त्रता की मांग से भला कैसे मेल बैठ सकता है? कम-से-कम मेरी समझ से तो इस मांग का अर्थ उस सम्राट को उसकी सार्वजनिक सत्ता से वञ्चित करना ही है।

इनमें से पहले और दूसरे प्रश्न का उत्तर 'हां' है। अन्य, दो प्रश्नों का उत्तर नीचे के विवेचन में मिलेगा।

ईश्वर के नाम पर ली हुई शपथ ऐसी भी हो सकती है जिसे हम धार्मिक नहीं कह सकते। अदालत में गवाह जो शपथ लेता है वह कानूनी शपथ है, न कि धार्मिक जिसका भंग करने पर जो दण्ड भुगतना पड़ेगा वह दुनियावी ही होगा। इसके विरुद्ध धार्मिक शपथ भंग करने पर कोई कानूनी दण्ड नही भुगतना पड़ता, लेकिन शपथ लेने वाला यह समझता है कि ऐसा किया तो ईश्वर की ओर से मुझे दैवी दण्ड ज़रूर भुगतना पड़ेगा। इसका यह अर्थ नही कि इन तीन प्रकार की शपथों में से कोई भी ऐसी है जिससे हक़परस्त आदमी दूसरी शपथों की बनिस्बत कम बँधता हो। हक़परस्त गवाह तो कानून के डर से नही बल्कि इसलिए सच ही कहेगा कि हरेक विषय में उसे सच ही बोलना चाहिए। धारा सभा के सदस्यो की शपथ उस विधान के अनुसार है जिसमें कि वह दी हुई है। उसकी परिभाषा या तो विधान में ही दी जा सकती है, या परम्परा-द्वारा निश्चित हो सकती है। मैंने

ब्रिटिश विधान को जहा तक समझा है, उसके अनुसार राजभक्ति की शपथ का सिर्फ यही अर्थ है कि धारासभा का सदस्य अपनी नीति या बात पर वैधानिक रूप मे ही जोर देगा। मैं यह मानता हू कि ब्रिटिश विधान के अन्तर्गत वफादारी की शपथ लेकर धारासभा का सदस्य धारा सभा मे पूर्ण स्वाधीनता की तजवीज मजूर कर सकता है। ब्रिटिश विधान मे जो कुछ भी अच्छाई है, मेरी समझ मे, वह यही है। मेरे खयाल मे दक्षिण अफ्रीका की यूनियन पार्लमेण्ट के सदस्य भी वस्तुत. वैसी ही शपथ लेते हैं, जैसी कि हिन्दुस्तान मे ली जाती है, लेकिन वह पार्लमेण्ट आज वफादारी की शपथ का कोई भग किये बगैर पूर्ण स्वाधीनता की घोषणा करने के लिए स्वतन्त्र है। मेरा यह पक्का विश्वास है कि सिद्धान्त रूप मे ब्रिटिश विधान हरेक व्यक्ति या राष्ट्र को अपनी बडी-से-बडी महत्वाकाक्षा की पूर्ति करने की छूट देता है, इसीलिए मैंने काग्रेस-कार्य-समिति को पदग्रहण [illegible] अपनी तजवीज मजूर करने की सलाह दी थी और इस बात की जो मै कोशिश कर रहा हू कि ब्रिटिश सरकार उसपर राजी हो जाय, वह भी अपने इसी विश्वास के कारण कर रहा हू। इस बात को मै समझता हू कि वे सीधी तरह ऐसा नहीं करेंगे। और आखिरी वक्त तक इस विपत्ति को वढाने की ही चेष्टा करेंगे। लेकिन मैं जानता हू कि हमारे अन्दर अगर श्रद्धा और चरित्रबल है तो हर हाल हम जीतेंगे और रक्त की एक बूद भी बहाये बगैर बिना किसी तरह की [illegible] के अपने ध्येय पर पहुच जायगे। ब्रिटिश लोग फुटबाल के खेल पर, जो मै समझता हू उन्ही का आविष्कार है, जो नियम लागू करते है वही नियम वे राजनीति के खेल पर भी लागू करते हैं। वे न तो अपने विरोधी को कोई जगह देते है और न किसी से जगह देने के लिए कहते हैं। हमारे और उनके बीच मौलिक भेद यह है कि हम ने शस्त्र-प्रयोग का त्याग किया है। इस बात ने उन्हें चिन्ता मे डाल दिया है। वे हमारी कडी-से-कडी विरुद्ध उक्तियों पर [illegible] नहीं करते। [illegible] स्वाधीनता के हमारे आन्दोलन को जबतक हम वैधानिक सीमा के अन्दर रखते है तबतक उन्हे उसकी पर्वा नही है। और धारासभाओ मे सदस्य [illegible] मे इसके सिवा और करते भी क्या है या क्या करेंगे? [illegible] तो वे वहा शायद ही जाय। ऐसा करना जरूर [illegible] दस्त भग होगा। [illegible] औचित्य पर परेशान होने की जरूरत नहीं है। [illegible] का इस बारे मे [illegible] मे ही इस बात का [illegible]

—अंग्रेजी। ह० ज०। हि० से०, २२.५।१९।३७]

४९. सम्मेलन राजनीतिक संस्था नहीं है (टिप्पणी)

हिन्दी-प्रेमियो को यह तो मालूम ही है कि हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन का अगला अधिवेशन शिमला में होगा। शिमला से एक सम्वाददाता ने लिखा है कि यहां कुछ ऐसा शक है कि सम्मेलन एक राजनीतिक संस्था है और उसकी प्रवृत्तियों में मुस्लिम-विरोध की बू आती है। सम्मेलन का मै दो वार सभापति हो चुका हूं और मैं वगैर किसी हिचकिचाहट से कह सकता हूं कि वह शुद्ध अराजनीतिक संस्था है। राजे-महाराजे उसके संरक्षक है। कितने ही आदमी, जिनका कांग्रेस से कोई वास्ता नही, सम्मेलन के सदस्य हैं। राजे-महाराजे अक्सर उसके अधिवेशनों में आते हैं। वड़ौदा के महाराजा गायकवाड़ उसके सभापति रह चुके है। मुझे यह अच्छी तरह मालूम है कि उसकी एक भी प्रवृत्ति मुस्लिम-विरोधिनी नही है। अगर मुझे कोई ऐसा सन्देह होता, तो मैं उसका सभापति वनना स्वीकार न करता। मैं आशा करता हूं कि मुस्लिम-विरोध का अर्थ यहां उर्दू-विरोध नही लिया गया है। उर्दू-विरोध और मुस्लिम-विरोध, इन शब्दों का उपयोग वहुत से लोग समानार्थ रूप में करते हैं। पर यह तो एक वहम है। पंजाव, दिल्ली और काश्मीर में उर्दू हजारों हिन्दुओं और मुसलमानों की आम जवान है। यह चीज भी ध्यान में रखने के काविल है कि इन्दौर के पिछले अधिवेशन में सम्मेलन ने हिन्दी की व्याख्या यह की थी कि हिन्दी वह भाषा है जिसे उत्तर हिन्दुस्तान के हिन्दू और मुसलमान वोलते हैं और जो देवनागरी मे या फारसी लिपि में लिखी जाती है। इसलिए मुझे आशा है कि उर्दू-विरोध के अर्थ में भी अगर मुस्लिम-विरोध शब्द लिया गया है, तो भी सम्वाददाता ने जिस सन्देह का जिक्र किया है वह दूर हो जायगा और शिमला में होनेवाले हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन के अधिवेशन की तैयारियों का काम उसके उद्देश्य एवं रुख के वारे में वगैर किसी तरह की कोई शंका उठाये, वैसे ही जारी रहेगा।

—अंग्रेजी। ह० ज०। ह० से०, १२।६।१९३७।]

५०. जवाहरलाल जी के निबन्ध पर अभिमत

३ अगस्त, १९३७

मैंने हिन्दी-उर्दू के प्रश्न पर जवाहरलाल नेहरू का निवन्ध वहुत ध्यान से पढ़ा है। पिछले दिनों यह प्रश्न एक दुर्भाग्यपूर्ण विवाद वन गया है। इसने जो

भद्दा मोड़ लिया है उसके लिए कोई उचित कारण नहीं है। कुछ भी हो, राष्ट्रीय और शिक्षा की शुद्ध दृष्टि से सोचा जाय तो जवाहरलाल के निबन्ध से सारे विषय के उचित निरूपण मे मूल्यवान सहायता मिलेगी। उनके प्रस्तावो को सम्बन्धित लोग व्यापक रूप मे स्वीकार कर लें तो उनसे यह विवाद, जिसने साम्प्रदायिक ढग ले लिया है, खत्म हो जाना चाहिए। सुझाव व्यापक और बहुत विवेकपूर्ण हैं।

मो० क० गांधी

—अंग्रेजी। ३।८।१९३७। 'ए बंच आफ ओल्ड लेटर्स' से।]
सौजन्य : श्रीमती इन्दिरा गांधी।

५१. कांग्रेस की अशुद्धि कैसे दूर हो ?

संयुक्तप्रान्त के एक सज्जन लिखते हैं :—

"कांग्रेसजनों और कांग्रेस कमेटियो मे फैली हुई अशुद्धि के बारे में आपने 'हरिजन' मे जो कुछ लिखा और कांग्रेस-कार्य-समिति के सदस्यों के सामने जो भाषण दिया उसे भी मैंने पढ़ा।

"खुद मैंने भी कई मौको पर ऐसी नीतिभ्रष्ट कार्रवाइयां होते देखी हैं, जैसी कार्रवाइयो का आपने 'हरिजन' में उल्लेख किया है—जैसे नकली सदस्यों की भर्ती, दूसरो की सदस्यता का शुल्क अपने पास से जमा करा देना, और अपने आप ही दूसरो के दस्तखत तक कर देना आदि। दुःख की बात तो यह है कि कांग्रेस कमेटियो के जिम्मेदार पदाधिकारी तक ऐसा करते हैं। कई बार तो ऐसा भी हुआ कि प्रान्तीय कमेटियो के सामने बाजाब्ता ऐसे मामले आये, लेकिन कांग्रेसी अधिकारियो ने उनको यों ही टाल-टूल दिया। इस सूबे के कांग्रेस-कार्य का जो थोड़ा-सा अनुभव मुझे है, उस पर से मैं कह सकता हूं कि [illegible] जिला और नगर कमेटियों का यही हाल है।

"इस स्थिति का मैंने जो अध्ययन किया है, उसपर मेरा निजी अभिमत यह है कि ऐसी कार्रवाइयां आमतौर पर उन्हीं की ओर से की जाती हैं जो कमेटियों पर कब्जा करके सत्ता को अपने हाथ में रखना चाहते हैं। और कांग्रेस-द्वारा धारा-सभाओ का कार्यक्रम अपनाये जाने के बाद तो ये और ज्यादा बढ़ गई हैं। क्योंकि कांग्रेस-द्वारा लोकल बोर्डों और ग्रामीण धारासभाओं का काम हाथ में लेने का निश्चय किये जाने के फलस्वरूप ऐसे बहुत से लोग इसमें और आकर्षित होंगे

लगे हैं जो चाहे जिस तरह इन संस्थाओं में घुस जाने के लिए उत्सुक हैं। यही लोग हैं जो सच्चे कांग्रेसियों का पूरा समर्थन न पाने पर भाड़े के टट्टू नकली सदस्यों को आगे लाते हैं, जिसका कि उनके प्रति व्यक्तिगत आकर्षण के सिवा कांग्रेस से और कोई वास्ता नहीं होता। यही नहीं, बल्कि कुछ पुराने कांग्रेसियों में भी पद-सत्ता का लोभ घुसा है, जिससे वे भी इन नये भाड़े के टट्टूओं के साथ मिल जाते हैं। यही कारण है कि किसी मूलभूत सैद्धान्तिक मतभेद के वगैर होनेवाली दल-वन्दियां और नीतिभ्रष्ट कार्रवाइयां चुनावों के समय ही अधिक सामने आती हैं।

"इसलिए नम्रतापूर्वक मेरा यह प्रस्ताव है कि कांग्रेस के धारासभाओंवाले विभाग को कांग्रेस कमेटियों से अलग रक्खा जाय और जो लोग लोकल बोर्ड या धारासभाओं में जाना चाहें उन्हें कमेटियों में कोई पद न दिया जाय या यों कहिए कि कमेटियों के पदाधिकारियों को इन किसी के चुनाव में खड़े होने की इजाजत न दी जाय। कांग्रेस के विधान में ऐसा संशोधन कर देने से बहुत करके फिर ऐसी नीतिभष्ट कार्रवाइयों की आवश्यकता नहीं रहेगी। इसके अलावा, इससे कमेटियों के सदस्यों को कांग्रेस का रचनात्मक कार्य करने के लिए अधिक समय मिलेगा जिसकी कि इस समय धारासभाओं के काम की वजह से उपेक्षा हो रही है, और उससे सर्व-साधारण में निःस्वार्थ कार्यकर्त्ताओं के रूप में उसकी प्रतिष्ठा वढ़ेगी।"

इन सज्जन ने जो बात सुझाई है वही और भी कई कांग्रेसजनों ने सुझाई है। यह है भी वहुत कुछ कार-आमद। क्योंकि धारासभाओं और लोकल बोर्डों के उम्मीदवार अगर कांग्रेस के पदाधिकारियों के अलावा चुने जायें, तो इस तरह मतलव गांठने का खतरा कम रहेगा। ऐसी हालत में हमारे लिए कांग्रेस कमेटियों में सदस्य-संख्या कम करना जरूरी होगा। उस हालत में सिर्फ वही उनके सदस्य होंगे जो अमली तौर पर पूरे समय उन्ही का काम करेंगे और उनके वाहर का कोई काम करने या पद सम्हालने के लिए न तो उनके पास वक्त होगा, न उसका ख़याल ही उन्हें होगा। लेकिन यह ऐसा परिवर्तन है जिसे कांग्रेस-विधान मे किसी तब्दीली की आवश्यकता के वगैर हरेक प्रान्तीय कांग्रेस-कमेटी खुद ही कर सकती है।

एक दूसरा उपाय जो मुझे और कार्यसमिति के सदस्यों को खुद ही सूझना चाहिए था, एक वड़े व्यापारी ने मुझे वतलाया है। उन्होने कहा—"इसके लिए बड़ी-बड़ी तदबीरें सोचने में आप क्यों पड़े है? वकिंग कमेटी को आप उन व्यापारी पेढ़ियों का अनुकरण करने की सलाह क्यों नही देते जिनकी विविध शाखाएं होती

हैं? इसके लिए चाहिए यह कि कांग्रेस कमेटियों के हिसाब की वहियों की ही नहीं वल्कि सदस्यों के नामवाले तथा दूसरे सब रजिस्टरों की भी कडाई के साथ देखभाल और जाँच कराई जाय। जाँच मे उन सब रजिस्टरों को विना किसी मुरव्वत के रद्द कर देना चाहिए, जिनमे सदस्यों-सम्बन्धी पूरी जानकारी और कैफियत न हो, और अगर वे रजिस्टर एक ही नमूने के रक्खे जाये तब तो निरीक्षण और जाच-पडताल मे आसानी भी होगी। वर्किंग कमेटी को तो सिर्फ इस बात का ध्यान रखने की जरूरत है कि ऐसे आडीटर और इन्सपेक्टर काफी तादाद मे रक्खे जाय जो अपना काम जानते हो और जिनपर यह विश्वास किया जा सके कि वे ईमानदारी के साथ मुकम्मिल तौर पर अपना काम करेंगे। और अगर आप खर्च करने को तैयार हो तो आमतौर पर ईमानदार और काविल आदमियों का इसके लिए मिल जाना मुश्किल नही है।" यह सब बातचीत के सिलसिले में मुझसे कहा गया था, उसी को मैंने स्पष्ट रूप मे यहा रखा है। यह उपाय पूर्णतः व्यावहारिक है और इस पर भी पहले की तरह विधान मे कोई तब्दीली किये बगैर अमल किया जा सकता है। जरूरत सिर्फ यह है कि कांग्रेस को ऐसी अशुद्धि से पाक करने की दिली ख्वाहिश हो। लेकिन कांग्रेस कमेटियों के मुखिया लोग अगर लापरवाही और गफलत से काम लें, तो यह अशुद्धि दूर नहीं हो सकती। क्योंकि नमक अगर अपना नमकपना खो दे तो फिर उसे नमकीन किस चीज से बनाया जायगा?

—अंग्रेजी। ह० ज०, ह० से० २२।१०।१९३८।]

५२. आर्यसमाज और गन्दा साहित्य

कन्या गुरुकुल देहरादून के श्री धर्मदेव शास्त्री ने और उनके बाद गुरुकुल कांगडी के आचार्य अभयदेव ने मुझे लिखा है कि मैंने अपने 'साहित्य में गन्दगी' शीर्षक लेख मे जो अपनी पुत्र-वधू का उल्लेख किया है—जो कि [illegible] में अध्ययन कर रही है और जिसने अपनी परीक्षा में [illegible] के विषय में लिखा था—उसका [illegible] लगाया गया है कि [illegible] के अधिकारी इस प्रकार के गन्दे साहित्य को प्रोत्साहन देते हैं। [illegible] ने इसका जोरदार खण्डन किया है। आचार्य [illegible] गुरुकुल तो इस विषय में इतना [illegible] के लिए भी उसका यह आग्रह है कि [illegible] ऐसे [illegible] उन्हें विद्यार्थी [illegible]

बिलकुल निकाल दिये गये हों। यह तो वाद की वात है कि गुरुकुल ने अपने विद्यार्थियो को साहित्य-सम्मेलन की परीक्षाओं में वैठने की अनुमति दी। सम्मेलन ऐसी पुस्तकों को अपने पाठ्यक्रम मे रखना वर्दाश्त कर रहा है, जिनमें कि गन्दे साहित्य को स्थान मिला हुआ है। मैं समझता हूं कि गुरुकुल के अधिकारियों ने, सम्मेलन के प्रवन्धकों का ध्यान इस विषय की ओर आकर्षित किया है और उनसे कहा है कि वे ऐसी पुस्तको को अपने पाठ्यक्रम में से निकाल दें जिनमे कि आपत्तिजनक अंश हों। मुझे आशा है कि जबतक वे परीक्षार्थियों की पाठ्यपुस्तकों में के गन्दे साहित्य के खिलाफ छेड़ी हुई इस लड़ाई में सफलता प्राप्त न कर लेंगे तबतक उन्हें सन्तोष नही होगा।

—अंग्रेजी। ह० ज०। ह० से०, १९।११।१९३८।]

५३. मौलाना शौकत अली का स्मारक

स्व० मौलाना शौकतअली के स्मारक के वारे में मैंने कई तजवीजें पढ़ी हैं। ज्योंही मुझे मौलाना की मृत्यु के वारे में मालूम हुआ, जिसकी कि अभी विल्कुल ही आशा नही थी, मैंने कुछ मुसलमान मित्रों को उनके साथ अपने अन्तस्तल की समवेदना प्रकट करते हुए लिखा। उनमें से एक मित्र ने लिखा है—

"सच्ची और स्थायी हिन्दू-मुस्लिम-एकता की कितनी तात्कालिक और सख्त जरूरत है, इस विषय में किसी की दो रायें हो ही नहीं सकतीं। और जितनी ही जल्दी यह एकता होगी, उतना ही सबके लिए हितकर होगा। इस मामले में देरी करने से ऐसे गम्भीर चिन्ताकारक परिणाम आ सकते हैं जिनकी कोई कल्पना भी नहीं कर सकता। आज जो हालत है उससे अत्यन्त भयानक स्थिति आ सकती है, जिसे जहां तक सम्भव हो रोकना ही चाहिए। मैं यह जानता हूं कि मौ० शौकतअली अपने खास ढंग से सच्चा हिन्दू-मुस्लिम समझौता कराने के लिए सचमुच चिन्तित थे। स्वर्ग में उनकी आत्मा को यह जानकर कि उनका एक जीवन-उद्देश्य आखिरकार पूरा हो गया, जितनी शान्ति मिलेगी उतनी किसी दूसरे काम से नहीं। ऐसे भी लोग हो सकते हैं, जिन्हें कि इसमें सन्देह हो, लेकिन मौलाना को और उनका दिमाग किस तरह काम करता था उनको अच्छी तरह जानकर जैसा कि मैं उन्हें जानता था, मैं भरोसे के साथ इस वात की ताईद कर सकता हूं।"

कभी-कभी जो वह जोश मे आकर खिलाफ बोल जाते थे, उसके बावजूद मौलाना के दिल मे एकता और शान्ति के लिए वही तमन्ना थी जिसके लिए कि वह खिलाफत के दिनो मे बडे मोहक ढग से बोलते व काम करते थे। मुझे इसमे कोई शक नही कि उनकी यादगार मे हिन्दू और मुसलमान दोनो ही कौमो का एकता के लिए किया हुआ सयुक्त निश्चय ही सबसे सच्चा स्मारक होगा—खाली कागजी एकता का निश्चय नही, बल्कि दिली एकता का, जिसका आधार सन्देह और अविश्वास नही, बल्कि आपस का विश्वास होगा। कोई दूसरी एकता हमे नही चाहिए, और वगैर इस एकता के हिन्दुस्तान के लिए सच्ची स्वतन्त्रता भी हासिल होने की नही।

—अंग्रेजी। ह० ज०। ह० से०, १७।१२।१९३८।]

५४. ग्राहक चाहिए : गांधी आश्रम, मेरठ का पत्र

गाधी-आश्रम, मेरठ के एक पत्र से निम्नलिखित लिया गया है :

"अ० भा० चर्खासंघ आज तीन लाख से अधिक आदमियों को काम दे रहा है। संघ का खादी-कार्य १३००० गावो मे फैला हुआ है। राष्ट्र-निर्माण की इस महान् प्रवृत्ति मे २५७१ कार्यकर्ता लगे हुए हैं। सयुक्त प्रान्त का हिस्सा कुछ कम नहीं है। हमारे रजिस्टरो मे ४०,००० से ऊपर कातनेवालो के नाम दर्ज हैं। कारीगरो, जुलाहो, धोबियो आदि की संख्या ४७८० है। करीब [illegible] गांवो में हमारी प्रवृत्तियां चल रही हैं, और ६०० कार्यकर्ता प्रान्त के विभिन्न भागो मे खादी का सन्देश पहुँचा रहे हैं। ये राष्ट्र के प्रत्येक उत्पादक साधन को क्रियात्मक रूप दे रहे हैं। हम लोग संगठन, संयोजन, सहयोग और निर्माण का सबक लेते हैं। सुना गया है कि पण्डितजी ने कार्य-समिति की बैठक मे कहा है कि चर्खा हमारी कपड़े की सारी जरूरतो को पूरा नहीं कर सकता। मुझे लगता है कि यह कथन चर्खे की सम्भावना का कम मूल्य आंकता है। मैं अपने अनुभव से यह कह सकता हूं कि हम इस समस्या का [illegible] भी नहीं छू सके हैं। यदि जो खादी हम बनायें उसके लिए तैयार ग्राहक मिल जायें, तो उत्पादन [illegible] थोड़े समय में ही हजारगुना बढ़ाया जा सकता है।"

मैंने यह अंश [illegible] लिया है, [illegible] मैं आशा करता हूं कि [illegible] लेकिन [illegible] जिस [illegible] पर विचार [illegible]

के साथ बिक्री का मेल नहीं वैठता। प्रचार-कार्य का भी निस्सन्देह अपना स्थान है। किन्तु प्रचार से भी ज्यादा ज़रूरत वैज्ञानिक शोध की है। इसमें सन्देह नही कि हमारे यहां प्रतिवर्ष प्रति व्यक्ति औसतन १५ गज कपड़ा इस्तेमाल में आता है। न इसमें सन्देह है कि इस कपड़े पर प्रतिवर्ष १०० करोड़ के क़रीव रुपया देश का खर्च होता है, जिसका अर्थ यह हुआ कि ३५ करोड़ की जनसंख्या में प्रति व्यक्ति ३ रुपये से कुछ कम कपड़े का खर्च आता है। यह वड़ी आसानी से कहा जा सकता है कि अगर सरकार की ओर से खादी को संरक्षण मिल जाय, तो इसका बिक्री पर प्रभाव पड़ सकता है मेरी राय में यह स्वयंसिद्ध वात है कि खादी को संरक्षण तो मिलना ही चाहिए। लेकिन क्या खादी के कार्यकर्त्ताओं ने, जिनमें योग्यता है, इस वात का पता लगाया है कि बग़ैर संरक्षण के भी बिक्री वढ़ाने के लिए अपनी शक्ति भर हमने सब प्रयत्न कर लिये हैं या नहीं? वाधाएं दो हैं। मिल का वना कपड़ा खादी से अधिक सस्ता कहा जाता है, और वह कई रंगों का, कई डिजाइनों का और खूब साफ़ होता है। यह बात खादी में नही होती। यह दूसरी कमी अधिकांश मे पूरी कर दी गई है, पर शायद अब भी बहुत-कुछ करने को बाकी है। खादी की सम्भवत: कुछ सीमा होनी ही चाहिए, जिससे आगे वह नही जा सकती। यदि कोई ऐसी सीमा है, तो हमें स्पष्टतया उसे स्वीकार कर लेना चाहिए। पर मुझे भय यह है कि दामों के सम्बन्ध में अभी पर्याप्त खोज नही की गई है। श्री कुमारप्पा ने चर्खे के विषय में आश्चर्यजनक दावा पेश किया है। लेकिन साधारण मनुष्य पूछता है—तो फिर खादी मिल के कपड़े से महंगी क्यों है? इस प्रश्न का सन्तोपजनक जवाब देना होगा। सरीह जवाबों को मैं सन्तोषजनक नही समझूंगा। जवावों को अपना पूरा-पूरा परीक्षण खुद करना होगा, और जवतक खादी को अपनी प्राकृतिक महत्ता हासिल न हो जाय, तबतक मार्ग में आनेवाली कठिनाइयों पर विजय प्राप्त करने के साधनों का आविष्कार और अनुसरण जारी रहना चाहिए। यह वड़ी शरम की वात है कि हम, जो अपनी जरूरत से ज्यादा कपास पैदा करते हैं, अपनी जरुरत के वस्त्र बनवाने के लिए, उसे वाहर भेज देते है। इसी तरह यह भी हमारे लिए शर्म की वात है कि हम जव कि हमारे गावों में वेशुमार वेकार मजदूर मिल सकते है, और हम वड़ी आसानी से गांव के औजार मुहैया कर सकते हैं, अपना कपास अपनी वस्त्रसम्वन्वी आवश्यकताएं पूरी करने के लिए शहरों की मिलों में भेजें। इस शरम का इतिहास हमे मालूम है। पर अभी तक जनता से देश-प्रेम की अपील करने के अतिरिक्त हम इस दुहरी शरम को दूर करने का कोई निश्चित मार्ग नही खोज पाये हैं। दूसरे का एक उत्साहवर्वक उत्तर मिला है। पर हाल का प्रस्ताव जाहिर करता है कि हम स्वदेश-प्रेम की सीमा तक पहुंच गये

हैं। हमें तबतक सन्तोष नही होना चाहिए, जबतक कि खादी आम जनता के पहनने की चीज न बन जाये। हो सकता है कि अपनी खोज के परिणाम मे हमे यह मालूम हो—जैसा कि कुछ लोगो का कहना है—कि खादी कभी आर्थिक दृष्टि से महत्व की वस्तु नही बन सकती। अब हमे उसे स्वीकार करने मे कोई हिचकिचाहट नही होनी चाहिए—चाहे वह स्वीकार हमारे अभिमान को कितनी ही ठेस पहुचाये, और जिन योजनाओ को इतने भरोसे के साथ अभीतक बढाया है वे भले ही ढह जाय, लेकिन तबतक उसे स्वीकार नही किया जा सकता, जबतक कि वह सब खोज न कर ली जाय, जो मनुष्य के लिए शक्य है, और मैंने जो प्रश्न रक्खे हैं उनका सही जवाब न मिल जाय।

—अंग्रेजी। ह० ज०। ह० से०, २६।८।१९३९।]

५५. मतभेद

अलीगढ के एक एम० ए० लिखते हैं :—

"बहुत से अवसरो पर आपने कहा है कि कुरान शरीफ के आपके अध्ययन ने आपको यह स्पष्ट कर दिया है कि इस्लाम अपने अनुयायियों को अहिंसा का आदेश देता है। आप यह भी कहते हैं कि पैगम्बर शरीफ के जीवन का आपका अध्ययन आपके इसी विश्वास का समर्थन करता है। मुझे आप यह कहने की इजाजत देंगे कि आपने अपने अध्ययन का जो निष्कर्ष निकाला है, उसमे केवल अपनी इच्छा का ही ध्यान रक्खा होगा। सीधी-सादी बात तो यह है कि आपका दर्शन बल-प्रयोग का एकदम परित्याग करता है। उसके विपरीत, इस्लाम में कुछ अवसरों पर बल-प्रयोग की आज्ञा है। क्या बद्र मे पैगम्बर ने बल-प्रयोग का उत्तर बल-प्रयोग से नहीं दिया? अन्य प्रमाण देने की मैं हिम्मत नहीं करूँगा, क्योंकि आप तो अपनी व्याख्या को छोड़कर अन्य व्याख्या स्वीकार नहीं करते। फिर भी मुझे आशा है कि सबसे पहले असहयोग-आन्दोलन के समय आपके सहयोगी मौलाना साहब ने ही जो कुछ कहा था, उसके प्रति कुछ ध्यान दिलाऊँगा। [illegible] के सामने अपने वक्तव्य मे उन्होंने कहा था : मैं महात्मा गांधी की इस बात से [illegible] नहीं हूँ कि किसी भी दशा मे बल का प्रयोग नहीं किया जाना चाहिए। [illegible] मुसलमान होने के नाते मैं यकीन करता हूँ कि इस्लाम [illegible] मौकों पर बल का प्रयोग करने की इजाजत है। [illegible] के दरम्यान उन्होंने अदालत के सामने [illegible]

'गैर-मुस्लिम सरकार के विरुद्ध इस्लाम केवल तलवार चलाना, लम्बा युद्ध और गला काटना ही सिखाता है।'

"मुझे निश्चय है कि मौलाना साहब आज भी इससे इन्कार नहीं कर सकते।

"यह तो रहा इस्लाम में अहिंसा के बारे में। अब मैं इस प्रश्न के बारे में कि आया मुसलमान एक पृथक राष्ट्र हैं या नहीं, यह कहूंगा कि इस्लाम के प्रारम्भ से ही मुसलमान तो एक पृथक राष्ट्र हैं। वे तो उस समय भी पृथक राष्ट्र ही थे जब मुहम्मद बिन कासिम भारतभूमि पर आया और मुगल राज्य-काल में भी वे पृथक राष्ट्र ही थे। आज भी वे पृथक राष्ट्र हैं। और अगर वे अपने धर्म के प्रति सच्चे हैं तो सदा वे पृथक राष्ट्र ही रहेंगे। अकबर ने न केवल एक सामान्य धर्म बल्कि एक सामान्य सामाजिक पद्धति भी चलाने का प्रयत्न किया, लेकिन उसका प्रयत्न असफल रहा। मुसलमान इस अर्थ में पृथक राष्ट्र हैं कि वे अपनी शनाख्त को किसी समुदाय में विलीन नहीं कर सकते। इससे एकता के समर्थकों को भयातुर होने की आवश्यकता नहीं है। किसी क्षेत्र-विशेष में किसी विशेष उद्देश्य के लिए सहयोग सर्वदा सम्भव है। एक वायु-मण्डल में सांस लेने या एक भूमि पर बसने से ही राष्ट्र नहीं बनते। विचारों के ऐक्य से राष्ट्र बनते हैं। धर्म मस्तिष्क को ढालता है। मुसलमान सिख का पड़ोसी हो सकता है। लेकिन उनके दृष्टि-बिन्दु, उनके विचार करने के ढंग और उनकी जिन्दगी के तौर-तरीके सदा एक-दूसरे से भिन्न होंगे। पृथ्वी के गोले पर हवा तो सब जगह एक ही है। क्या इंग्लैण्ड की हवा किसी प्रकार भारत की हवा से भिन्न है? प्राकृतिक अवस्थाएं तो केवल शारीरिक रूप पर प्रभाव डालती हैं। मस्तिष्क उनसे प्रभावित नहीं होता। बेशक ईसाई भी पृथक राष्ट्र हैं। और पारसी भी। भारत तो विभिन्न राष्ट्रों का देश है। जिस दिन राष्ट्रीय महासभा (कांग्रेस) भारतीय राष्ट्रों का संघ बन जायगी वह दिन भारत के इतिहास में परम सौभाग्य का दिन होगा।

"बेशक, चीन में ही मुसलमान एक पृथक राष्ट्र हैं। अगर यह कहा जाय कि उन्होंने अपने को अन्य चीनियों में विलीन कर दिया है, तो मैं केवल यही कह सकता हूं कि समस्त इस्लामी दुनिया को उनसे शिक्षा लेनी चाहिए। जो क्रिया चल रही है, वह अगर चलती रही तो मुसलमानों का भाईचारा एक तमाशा भर रह जायगा। इस्लाम ने निश्चित रूप से नियम बना दिया है कि मुसलमान अपनी पोशाक तक में कुछ अन्तर रखें। क्या मौलाना साहब कांग्रेस की कार्यसमिति के सदस्यों में फर्क नहीं समझते?"

इसमे मुझे सन्देह नही कि इस पत्र मे जो भाव है, वही बहुत से शिक्षित मुसलमानो का इस समय भाव है। कुरान की इस व्याख्या के बारे मे किसी लम्बी दलील मे पडने का मेरा विचार नही है। गैर-मुस्लिम होने के कारण मेरी स्थिति तो घाटे मे है। अगर मैं दलील देना शुरू करु तो उनका स्वभावत यही जवाब मिलेगा कि, आप तो गैर-मुस्लिम है। आप मुसलमानो की धर्म-पुस्तक की क्या व्याख्या जानें? उसका मैं फिर उत्तर दू कि इस्लाम और अन्य धर्मों के प्रति मुझे उतनी ही श्रद्धा है जितनी कि मैं अपने धर्म के प्रति रखता हू, तो इससे कोई मतलब नही निकलेगा।

अपने सम्वाददाता से मैं यह कहू कि बद्र के युद्ध और पैगम्बर के जीवन की वैसी ही दूसरी घटनाओ का भी मुझे ध्यान है। मैं यह भी जानता था कि खुद कुरान में कई ऐसी आयतें हैं जो मेरी व्याख्या से मेल नही खाती। फिर भी मेरी राय मे यह सम्भव हो सकता है कि किसी पुस्तक की शिक्षा या किसी मनुष्य का जीवन किसी धर्म-पुस्तक की जुदा आयतो या किसी महान जीवन की घटनाओं से, वे चाहे कितनी क्यो न हो, भिन्न हो सकता है। महाभारत खूनी युद्ध की कहानी है। लेकिन कट्टर हिन्दुओ के विरोध के बीच भी मैंने यही कहा है कि यह पुस्तक युद्ध और हिंसा की निष्फलता को दिखाने के लिए लिखी गई है।

मौलाना साहब के बचाव मे कुछ कहने का मुझे अधिकार नहीं है। वह तो स्वय ही अपना बचाव करने मे समर्थ हैं। अगर मौलाना साहब के बयान के जो उद्धरण दिये गये हैं, उनका निश्चय ही मुझे स्मरण नहीं है। अपने सम्वाददाता की सचाई पर मैं शक नही करता। केवल वह बयान ही पवित्र कुरान की मूल-शिक्षा के बारे मे मेरे उस मत पर प्रभाव नही डालता जिसे मैं बरसों से मानता आया हू। अनन्तकाल तक मतो मे तो भेद रहेगा ही। मैं तो पारस्परिक सहनशीलता का प्रतिपादन करता हू।

राष्ट्रो के बारे मे सम्वाददाता ने जो बात कही है, वह तो चौंका देने वाली है। यह दावा करने के लिए कि भारत मे मुसलमान पृथक राष्ट्र है, [illegible] निकल सकती हैं। लेकिन मैंने कभी भी यह नहीं माना [illegible] जितने धर्म हैं, उतने ही राष्ट्र हैं। अगर है, तो [illegible] एक आदमी अपना धर्म जब बदलेगा तो उसकी [illegible] जायगी। सम्वाददाता ने [illegible] के निवासी राष्ट्र नही है, लेकिन [illegible] बौद्ध, वे चाहे जहा पैदा हुए हो, [illegible] कमजोर आधार पर यह दावा [illegible] कि राष्ट्रो का भेद [illegible]

और होना चाहिए। अप्रतिपादनीय प्रस्ताव को साबित करने के जोश में सम्वाद-दाता अतिशयोक्ति कर गये हैं।

मुस्लिम खानदानों ने भारत को दो राष्ट्रों में बांट दिया था, इस बात से मैं इन्कार करता हूं। अकबर का उदाहरण असगत है। उसका उद्देश्य तो धर्मो का मेल करना था। वह तो एक ऐसा सपना था जो पूरा नही हो सकता था। लेकिन अन्य मुस्लिम शाहंशाह और राजाओ ने समूचे भारत को अवश्य ही अविभाज्य माना। बचपन में मैने तो इसी ढंग से इतिहास सीखा है।

अगर हम हिन्दू-मुसलमानों तथा दूसरों को जन-तन्त्र का निर्माण करना है, तो ऐसा हम तभी कर सकेंगे जब समस्त राष्ट्र अपने अधिक-से-अधिक सम्भव मताधिकार से चुने गये अपने प्रतिनिधियो के द्वारा अपनी बात कहेगा, चाहे ब्रिटेन की उसमें सदिच्छा की आशा दिखाई नही देती। ब्रिटिश साम्राज्यवाद तो अब भी मजबूत है और सर सेम्युअल होर की उसके विपरीत घोषणा के बावजूद उसका खात्मा मुश्किल से होगा। भारत के हिस्से करने का प्रस्ताव तो साम्राज्यवाद की बढोत्तरी के लिए है। क्योंकि भारत के हिस्से केवल ब्रिटिश संगीनों की मदद से या खौफनाक गृह-युद्ध से ही हो सकते हैं। मुझे आशा है कि कांग्रेस इनमें से किसी की भी सहायक न होगी। ब्रिटेन का भारत के बारे में युद्ध-सम्बन्धी उद्देश्यों की घोषणा करने से इन्कार कर देना तो शायद छिपे तौर से भारत के लिए शुभ ही हुआ है। इससे कांग्रेस मार्ग में से हट जाती है और मुस्लिम लीग को आठ प्रान्तों के कांग्रेसी-शासन के दबाव से मुक्त होकर इस बात का निर्णय करने का निश्चय अवसर मिल जाता है कि आया वह भारत के टुकड़े करके ब्रिटिश शासन को कायम रक्खेगी या अविभाज्य भारत की स्वतन्त्रता के लिए लड़ेगी।

मुझे आशा है कि लीग भारत के टुकड़े नही करना चाहते। मैं यह भी आशा करता हूं कि मेरे सम्वाददाता भारत में अधिक मुस्लिम-मत का प्रतिनिधित्व नही करते। हाल ही में जनाब जिन्ना साहब और पण्डित जवाहरलाल नेहरू में फिर बातचीत शुरु होगी। हम आशा करें कि इस बातचीत के फलस्वरूप साम्प्रदायिक झगड़े के स्थायी हल का आधार निकल आयगा।

—अंग्रेजी। सेगांव, ७।११।३९। ह० ज०। ह० से०, ११।११।१९३९।]

५६. स्व० आचार्य रामदेव जी

आचार्य रामदेव चल बसे। आप आर्य-समाज के एक प्रसिद्ध नेता और

कार्यकर्त्ता थे। स्वामी श्रद्धानन्द जी के बाद वे ही कागडी-गुरुकुल के निर्माता थे। जहा तक मैं जानता हू, वह स्वामी जी के दाहिने हाथ थे। शिक्षण-शास्त्री के तौर पर वह बडे लोकप्रिय थे। पिछले कुछ समय से वह अपने स्वाभाविक जोश के साथ देहरादून के कन्या-गुरुकुल के सचालन-कार्य मे पड गये थे और कुमारी विद्या-वती के पथ-प्रदर्शक और सहारा बन गये थे। जबतक जिये वही उनके लिए रुपया इकट्ठा करके लाते थे। इनको सस्था के आर्थिक पहलू की कुछ भी चिन्ता नही करनी पडती थी। मैं जानता हू कि उनकी मृत्यु से उन्हे और उनकी सस्था को कितनी असह्य हानि पहुची है। जो लोग स्वर्गीय आचार्यजी को जानते है, जो स्त्री-शिक्षा का महत्व समझते है और जिन्हे कुमारी विद्यावती और उनकी सस्था की कद्र मालूम है उन्हे अब चाहिए कि गुरुकुल को सदा के लिए आर्थिक कष्ट से मुक्त कर दें। परलोकवासी आचार्य जी के लिए इस तरह का धन-सग्रह अत्यन्त उपयुक्त स्मारक होगा।

—अंग्रेजी। सेगाव, २५।१२।१९३९। ह० से०, ३०।१२।१९३९।]

५७. असेम्बली के कांग्रेसी मेम्बरों का भत्ता

सयुक्त प्रान्त की असेम्बली के एक मेम्बर ने मुझे एक पत्र भेजा है। उसका खुलासा यह है —

"सयुक्त-प्रान्त में हमे ७५ रुपये महीना भत्ता मिलता है। कांग्रेस की सत्ता ढाई साल रही। इस अर्से मे असेम्बली की बैठकें कभी तो [illegible] दिन मे खत्म हो गई और कभी महीनो चलती रहीं। इसके सिवा सिलेक्ट, विशेष और नियमित कमेटियो की भी बैठकें हुईं। इनमे से कुछ कमेटिया अब भी काम कर रही है। और हमारा बहुत समय ले लेती है। साथ ही, यह भी पता नही कि असेम्बली फिर कब बुला ली जाय। अपने-अपने चुनाव के हल्को मे दौरा करने मे भी [illegible] दो-दो सौ रुपया साल खर्च हो जाता है। ऐसे भी निर्वाचन क्षेत्र है, जो [illegible] से २०० मील से भी दूर है। साल मे तीन दौरो का औसत [illegible] हर मेम्बर को इस काम में ८ सप्ताह लगाने पडते है। मेम्बर लोग जब [illegible] उन्हें अपने-अपने चुनाव के [illegible] से आनेवालों की आवभगत भी [illegible] है। हर मेम्बर को अपने दल और प्रान्तीय [illegible] देना पडता है। ऐसी दशा में [illegible] है कि किसी मेम्बर की आमदनी [illegible]

भत्ता लिये अपना सारा समय देना बिल्कुल नामुमकिन है। संयुक्तप्रान्त की असेम्बली के मेम्बरों के सामने यह प्रश्न कई बार आ चुका है। हममें से बहुतों को लगता है कि या तो भत्ता बढ़ाया जाय या हममें जो गरीब हैं उन्हें धनवानों के लिए मैदान छोड़कर निकल जाना पड़ेगा। आपको तो यह जानकर दुःख हुआ कि कुछ असेम्बली के मेम्बर भत्ता अपने ही आप में ले रहे हैं, मगर मैंने आपके सामने तस्वीर का दूसरा रुख पेश किया जिससे आप हमें रास्ता दिखा सकें। यह भी याद रखने की बात है कि कांग्रेस की आज्ञा मानकर हमने जो चुनाव लड़े उसमें बहुतों को कर्ज लेना पड़ा था।

"दूसरी बात, जिसकी तरफ मैं आपका ध्यान दिलाना चाहता हूं, वह है कांग्रेस में फैली हुई गन्दगी का सवाल। इसके और दो कारण हैं ही, साथ ही असेम्बली की मेम्बरी का लालच भी कांग्रेस के साधारण कार्यकर्त्ताओं में जबर-दस्त है। इससे लोग मौजूदा मेम्बर को हटाकर उसकी जगह खुद आने की कोशिश करते हैं और अक्सर बुरे उपाय काम में लाते हैं। अगर यह समझ लिया जाय कि जिन मेम्बरों ने अच्छा काम किया है उन्हीं को फिर खड़ा किया जायगा तो अच्छी बात होगी। ऐसी नीति से धारा-सभाओं के काम के लिए कार्यकर्त्ताओं का एक तालीम पाया हुआ समूह जरूर बना रहेगा। मेम्बरों को यह भी अच्छी तरह अनुभव हो जायगा कि धारा-सभाओं के बाहर उन्हें रचनात्मक कार्य भी करना है।

"तीसरी बात, जिस पर प्रकाश डालने की आपसे नम्र प्रार्थना है, यह है कि बड़-बड़े कांग्रेसियों का भी पश्चिमी ढंग से रहन-सहन, विचार और संस्कृति की तरफ जबरदस्त झुकाव हो रहा है। खद्दर पहनते हुए भी उनमें से बहुतेरे अपनी देशी संस्कृति से बिल्कुल दूर रहते हैं, और उन्हें जो भी प्रकाश मिलता है पश्चिम से मिलता है।"

जहां तक भत्ते का सम्बन्ध है, इस पक्ष में दी हुई दलील से मैं कायल नही हुआ। अलबत्ता, सभी मामलों में कुछ लोगों को तो कष्ट होता ही है। मगर ऐसे उदा-हरणों से नियम बनाना अच्छी बात नहीं। याद रहे कि असेम्बलियों पर कांग्रेस का ठेका नहीं है। वहां कई दलों के प्रतिनिधि होते है। इसलिए सिर्फ कांग्रेस की सुविधा का ही लिहाज नही रखा जा सकता। लेखक मान बैठे है कि हर मेम्बर धारासभा के काम को विशेष रूप से ध्यान मे रखकर अपना सारा समय राष्ट्रीय सेवा में लगाता है। इसका यह अर्थ हुआ कि धारा-सभाओ के मेम्बरो का राज-नीति ही धन्धा हो गया और धारा-सभाएं खासतौर पर उनके लिए सुरक्षित स्थान बन गई। मेरा बस चले तो मैं वे बातें दलों से ही करा लूं। मैं जानता हूं कि इस

सवाल मे कठिनाइया भरी पडी हैं और इस पर पूरी तरह और शान्ति के साथ चर्चा होने की जरूरत है। पर मैंने जो बात उठाई है वह बिल्कुल छोटी-सी है। जब असेम्बलियो का एक तरह से काम बन्द है, मेम्बर लोग कुछ भी भत्ता क्यो लें? गिनती की जाय तो पता चलेगा कि बहुत से मेम्बर असेम्बली मे चुने जाने से पहले इतना नही कमा रहे थे जितना कि अब कमा रहे हैं। धारा-सभाओं को अपनी मामूली कीमत से अधिक कमाई का साधन बना लेना नागवार बात है। प्रान्तो के जिम्मेदार लोगो को मिलकर सोचना चाहिए और कोई ऐसा निर्णय करना चाहिए जिससे काग्रेस की भी शोभा बढे और जिस काम के लिए वे गए हैं उसकी भी शोभा बढे।

लेखक ने मौजूदा मेम्बरो को स्थायी उम्मेदवार बना देने का जो सवाल उठाया है वह मेरे हाथ की बात नही। इस मामले मे मुझे कोई अनुभव नही है। इसकी गहराई मे जाना कार्यसमिति का काम है।

रही बात पश्चिम से प्रकाश लेने की आदत की, सो अगर मेरे सारे जीवन से किसी को कोई रास्ता न मिला हो तो अब और क्या रास्ता बना सकता हूं? प्रकाश तो पूर्व से निकल कर फैला करता था। अगर पूर्व का भण्डार खाली हो गया है तो यह स्वाभाविक है कि पूर्व को पश्चिम से उधार लेना पड़ेगा। मुझे तो आश्चर्य है कि प्रकाश प्रकाश ही है और कोई रोग नही है तो वह भी कहीं जन्म ले सकता है क्या? मैंने बचपन मे पढा था कि प्रकाश सारे ज्ञान देने से बढ़ता है। कुछ भी हो, मैंने तो इसी विश्वास पर अमल किया है और इसीलिए धर्म-शास्त्रों की पूजी पर ही अपना व्यापार चलाया है। मैं कभी घाटे मे नहीं रहा। लेकिन इसका यह मतलब नही कि मैं कुए का मेढक बन जाऊं। अगर प्रकाश पश्चिम से आये तो मुझे उससे फायदा उठाने मे कोई संकोच नहीं। मैं इतना-सा ध्यान जरूर रखूंगा कि पश्चिम की तड़क-भड़क से वशीभूत न हो जाऊं। मुझे भूल से इस तडक-भडक को ही सच्चा प्रकाश नही समझ लेना होगा। प्रकाश जीवन देता है और तडक-भडक मौत के मुह मे ले जाती है।

—सेगांव, ८।१।१९४०। ह० से०, १३।१।१९४०।]

५८. असली अहिंसा

डाक्टर राममनोहर लोहिया लिखते हैं —

“क्या आजादी की प्रतिज्ञा का यह अर्थ है कि स्वतन्त्र भारत के लिए हमें

सामाजिक व्यवस्था में विश्वास रखा ही जाय जिसकी बुनियाद सिर्फ चर्खे और मौजूदा रचनात्मक कार्यक्रम पर होगी? मुझे खुद को तो ऐसा लगता है कि ऐसी बात नहीं है। प्रतिज्ञा में चर्खा और गांवों में की दस्तकारियां शामिल हैं, मगर यह बात नहीं है कि प्रतिज्ञा में दूसरे उद्योगों और आर्थिक प्रवृत्तियों को गुंजाइश ही नहीं। इन उद्योगों में बिजली, जहाज बनाने, कलें तैयार करने आदि का नाम लिया जा सकता है। फिर भी यह सवाल रह जाता है कि जोर किस पर दिया जाय। इस बारे में प्रतिज्ञा से सिर्फ इस हद तक फैसला होता है कि इतना विश्वास रखना तो जरूरी है कि चर्खा और ग्रामउद्योग भावी समाज-व्यवस्था के ऐसे हिस्से होंगे जिन्हें अलग नहीं किया जा सकता और उन पर से विश्वास हटाकर दूसरे उद्योगों पर विश्वास नहीं रक्खा जा सकता।

"क्या प्रतिज्ञा से तुरन्त यह जरूरी हो जाता है कि और सब कार्रवाई करना छोड़ दिया जाय और सिर्फ वही की जाय जिसका आधार मौजूदा रचनात्मक कार्यक्रम पर हो? मुझे तो ऐसा लगता है कि यह जरूरी नहीं। लगान, कर, ब्याज और जनता की प्रगति के रास्ते में और भी जो आर्थिक रुकावटें हैं उनके विरुद्ध आन्दोलन करने में कोई बाधा नहीं दिखाई देती। मिसाल के लिए, यह नामुमकिन नहीं है कि जब आप सत्याग्रह शुरू करना पसन्द करें तब आप खुद ही लगानबन्दी और करबन्दी का आन्दोलन करने का निश्चय करें। आप सचमुच ऐसा करें या न करें, प्रतिज्ञा की दृष्टि से इसका इतना महत्व नहीं है जितना इस बात का कि, आप कर सकते हैं। कुछ भी हो, आज तो आर्थिक ढंग के आन्दोलन की छूट है।

"ये दोनों सवाल तो प्रतिज्ञा के इस पहलू से पैदा होते हैं कि क्या-क्या नहीं किया जा सकता। एक तीसरा सवाल इस बारे में खड़ा होता है कि क्या-क्या करना जरूरी है। बेशक, यह आवश्यक है कि जो कोई प्रतिज्ञा ले उसे समाज की अर्थ-व्यवस्था एक जगह केन्द्रित न करने के उसूल में अपना क्रियात्मक विश्वास जाहिर करने को तैयार रहना चाहिए। इस विश्वास का असली रूप क्या हो, यह भले ही काल-प्रवाह के साथ तय हो सकता है। प्रतिज्ञा लेनेवाले को सिर्फ चर्खे के बारे में इतना विश्वास होना चाहिए कि कपड़े का उद्योग थोड़े लोगों के हाथों से पूरी तरह निकालकर अधिक-से-अधिक लोगों के हाथों में दिया जा सकता है और इसके लिए कोशिश भी होनी चाहिए।

"मैंने आलस्य और दूसरे कारणों से होनेवाली व्यवहार की अनियमितताओं का बिल्कुल जिक्र नहीं किया है। ऐसा तो सभी प्रतिज्ञाओं और श्रद्धाओं के बारे में होता है। सिर्फ ऐसी गलतियों को दूर करने की इच्छा जरूर होनी चाहिए।

"मैं नहीं जानता कि प्रतिज्ञा का यह अर्थ सही है या नहीं और आपको स्वीकार हो सकता है या नहीं। मुझे यह भी पता नहीं कि मेरे समाजवादी साथियों को यह पसन्द आयेगा या नहीं। शायद आपकी राय जल्दी मालूम होना देश के लिए अच्छा होगा। मगर पहले ही इतनी देर हो चुकी है कि स्वाधीनता-दिवस के लिए तो यह राय काम नहीं आ सकेगी।"

जो बात मैं कई बार कह चुका हूं उसे दोहराने की जरूरत तो नहीं है, मगर बात यह है कि प्रतिज्ञा का कानूनी और अधिकारपूर्ण अर्थ तो कार्यसमिति ही बता सकती है। मेरे बताये हुए अर्थ का महत्व वहीं तक है जहां तक कि लोगों को मान्य है।

संक्षेप मे, मैं इतना कह सकता हूं कि डाक्टर लोहिया का लगाया हुआ अर्थ मजूर कर लेने में मुझे कोई आपत्ति नहीं है। कांग्रेस की कोशिश का अन्त में कुछ भी परिणाम निकले, प्रतिज्ञा के बारे मे जो चर्चा हो रही है उससे जनता को अच्छी राजनीतिक शिक्षा मिल रही है और देश मे अलग-अलग विचार के लोगों की राय स्पष्ट होती जा रही है।

हालाकि मोटे तौर पर डा० लोहिया से मेरी राय मिलती है, फिर भी यह अच्छा होगा कि प्रतिज्ञा का अपना अर्थ मैं अपनी ही भाषा मे बता दूं। प्रतिज्ञा में सारी बातें नही आ गई। इससे तो यही मालूम होता है कि कार्यसमिति [illegible] जा सकती थी। अगर देश का दृष्टिकोण मैं अपना-सा बना [illegible] व्यवस्था की बुनियाद ज्यादातर चर्खे और उससे निकलनेवाले [illegible] पर खडी की जायगी। उसमे वे सब चीजें शामिल होंगी जिनसे [illegible] भलाई हो। लेखक ने जिन उद्योगो का जिक्र किया है [illegible] देहाती जीवन का गला न घोटने लगें तबतक उन उद्योगों [illegible]। मेरी कल्पना मे यह जरूर है कि देहात की दस्तकारियों [illegible], जहाज बनाना, कलें तैयार करना और इसी तरह के दूसरे उद्योग भी [illegible] कौन मुख्य और कौन गौण रहे, इसका [illegible] कारखानों की योजना इस तरह बननी [illegible] का नाश हुआ। आनेवाली शासन-व्यवस्था मे बडे उद्योग [illegible] कारीगरी के मातहत रहेंगे। मैं समाजवादियों को [illegible] हू कि जब बडे कारखानों की योजना [illegible] जायगा तब जीवन के लिए जरूरी चीजें [illegible] का अन्त होगा। [illegible] तो पश्चिमी और पूर्वी [illegible] यानी यह कि सारे समाज को अधिक-से-अधिक [illegible]

के कारण एक तरफ करोड़ों नंगे-भूखे और दूसरी ओर मुट्ठीभर मालदार रहते है वह भेदभाव मिट जाय। मेरा विश्वास है कि यह उद्देश्य तभी सफल हो सकता है जब संसार के अच्छे और विचारशील लोग मान लें कि अहिंसा के आधार पर ही न्यायपूर्ण समाज-व्यवस्था रची जा सकती है। मेरी राय में गरीबों के हाथ में हिसा-द्वारा सत्ता लाने की कोशिश अन्त में पार नही पड़ेगी। जो चीज़ हिंसा से हासिल की जाती है वह उससे बढ़कर हिसा के सामने नहीं टिक सकती और हाथ से निकल जाती है। अगर कांग्रेसवादी अहिंसा के अपने ध्येय पर सच्चे रहें और उस पर अमल करें तो भारत का उद्देश्य पूरा हुआ ही समझना चाहिए। इस सचाई की परीक्षा है रचनात्मक कार्यक्रम को पूरा करना। जो लोग आम जनता के विचारों को भड़काते है वे जनता और देश दोनों का नुकसान करते है। उनका हेतु ऊंचा होता है, इस बात से यहां सरोकार नहीं। कांग्रेसवादी रचनात्मक कार्यक्रम पूरी तरह और सचाई के साथ अमल क्यों नही करना चाहते? जब सत्ता हमारे हाथ मे आ जायगी तब दूसरे कार्यक्रमों पर विचार करने का वक्त आयेगा। मगर हम तो शेखचिल्ली ठहरे। दन्तकथा है न कि भैस खरीदने से पहले ही उसके बँटवारे के बारे में साझीदार झगड़ बैठे। इसी तरह स्वराज तो मिला नही और हम हैं कि अपने जुदा-जुदा कार्यक्रमों के बारे में बहस और झगड़े कर रहे हैं। सुशीलता का तक़ाजा है कि जब बहुमत ने एक कार्यक्रम मंजूर कर लिया तो सभी उस पर सचाई के साथ अमल करें।

इसमे तो कुछ भी शक नही कि कांग्रेस के कार्यक्रम के जिन दूसरे अंगो से उस कार्यक्रम की अबतक शोभा बढ़ी है और जिनकी तरफ डा० लोहिया ने संकेत किया है उन्हें प्रतिज्ञा के कारण छोड़ देने की ज़रूरत नही है। हर तरह के अन्याय के विरुद्ध आन्दोलन करना तो राजनीतिक जीवन का प्राण है। मेरा जोर इसी बात पर है कि उस आन्दोलन को रचनात्मक कार्यक्रम से अलग कर देने से उसमे हिंसा की झलक आ ही जायगी। मै अपनी बात उदाहरण देकर समझाऊं। अहिंसा के प्रयोगों से मैंने यह सीखा है कि अमली अहिंसा का अर्थ सब लोगो का शरीर-श्रम है। एक रूसी दार्शनिक बोंडेरेफ़ ने इसे रोटी के लिए श्रम कहा है। इसका परिणाम यह होगा कि लोगों में आपस में गहरे से गहरा सहयोग हो। दक्षिण अफ़्रीका के पहले सत्याग्रही सबकी भलाई और सम्मिलित कोष के लिए मेहनत करते थे और उन्हें उड़ते पंछियों की-सी बेफिक्री रहती थी। उनमें हिन्दू, मुसलमान (शिया और सुन्नी) ईसाई (प्रोटेस्टेण्ट और रोमन कैथलिक) पारसी और यहूदी सभी थे। अंग्रेज और जर्मन भी थे। धन्धे के लिहाज से उनमे वकील, इमारत और बिजली की विद्या जानने वाले, इंजीनियर, छापनेवाले और व्यापारी थे। सत्य

और अहिंसा के व्यवहार से धार्मिक झगडे मिट गये थे और हमने सब धर्मों मे सत्य के दर्शन करना सीख लिया था। दक्षिण अफ्रीका मे मैंने जो आश्रम कायम किये उनमे एक भी मजहबी झगडा हुआ हो ऐसा मुझे याद नही आता। सब लोग छपाई, बढईगिरी, जूते बनाना, बागवानी, इमारत वगैरा, हाथ के काम करते थे। यह मेहनत किसी को भाररूप नही लगती थी। उसमे आनन्द आता था। [illegible] का समय पढने-लिखने मे जाता था। सत्याग्रही सेना का अग्रणी दल इन्ही स्त्री, पुरुषो और लडको का हुआ। इनसे ज्यादा वीर या सच्चे साथी मुझे नही मिल सकते थे। हिन्दुस्तान मे दक्षिण अफ्रीका का-सा ही अनुभव रहा और मुझे [illegible] है कि उसमे कुछ सुधार ही हुआ। सभी लोग मानते हैं कि अहमदाबाद का मजदूर-सगठन भारत मे सबसे बढिया है। उसका काम जिस ढग से शुरु हुआ था उसी तरह चलता रहा तो अन्त मे वहा की मिलो मे मौजूदा मालिको और मजदूरो की मालिकी होकर रहेगी। यह स्वाभाविक परिणाम न निकला तो पता चल जायगा कि सगठन की अहिंसा मे खामिया थी। बारडोली के किसानो ने वल्लभभाई को सरदार की पदवी दी और अपनी लडाई फतह की। बोरसद और खेडा के किसानो ने भी वैसा ही किया। ये सब चर्खो के रचनात्मक कार्यक्रम पर अमल कर रहे हैं। मगर इस अमल से उनके सत्याग्रही गुणो का ह्रास नही हुआ है। मुझे पूरा भरोसा है कि सविनय-भग हुआ तो अहमदाबाद के मजदूर और बारडोली और खेडा के किसान भारत के और किसी भी हिस्से के किसानो और मजदूरो से [illegible] मे पीछे नही रहेगे। चौंतीस साल के सत्य और अहिंसा के लगातार प्रयोग और अनुभव से मुझे दृढ विश्वास हो गया है कि यदि अहिंसा का [illegible] श्रम के साथ सम्बन्ध न होगा और हमारे पडोसियो के साथ [illegible] मे उसका परिचय न मिलेगा तो अहिंसा टिक नही सकेगी। [illegible] कार्यक्रम का रहस्य। यह साध्य नही है साधन है, मगर [illegible] उसे साध्य भी समझ लें तो बेजा नही। अहिंसा [illegible] कार्यक्रम पर ईमानदारी के साथ अमल करने से ही पैदा हो जाती है।

—अंग्रेजी। सेगांव, २४।१।१९४०। ह० ज०। ह० से०, २७।१।१९४०।]

५९. घी में मिलावट

डाक्टर [illegible] लिखते हैं—

"आपने २० जनवरी के 'हरिजन' मे घी मे मिलावट [illegible]

लिखा है मैंने उसे बहुत दिलचस्पी से पढ़ा। आपके लिए यह जानना शायद दिलचस्पी से खाली न होगा कि युक्त-प्रान्त में पदत्याग करने से पहले हमने इस समस्या पर बहुत बारीकी से ध्यान दिया था। मिलावट आम है और उसे अवश्य रोकना चाहिए। दुर्भाग्य की बात यह है कि केवल घी बेचनेवाले और दलाल ही मिलावट नहीं करते, बल्कि देहात में घी तैयार करनेवाले भी उसे मण्डी में लाकर बेंचने से पहले ही अपने घर में मिलावट कर देते हैं। सस्ते वनस्पति घी ने मिलावट करना और भी आसान बना दिया है। हमने यह सोचा था कि वनस्पति-तैलों में कोई रंग या बू डालना अनिवार्य बना दिया जाय। मगर अब कठिनाई यही है कि ऐसे रंग या बू को मालूम किया जाय, जो हानिकर न हों। भारत-जैसे गरम देश में ऐसा गहरा रंग देना स्वास्थ्य के लिए हानिकर हो सकता है।

"हमने अपने प्रान्त की धारासभा में इस शरारत को रोकने के लिए एक विस्तृत बिल पेश किया था। वह कमेटी के सामने था कि हमने इस्तीफे दिये। इस बिल द्वारा प्रान्तीय सरकार को यह अधिकार दिया गया है कि नकली घी या वनस्पति-तैलों में रंग या बू डालने का कायदा बनाये। लेकिन मेरी समझ में इस बिल की अधिक उपयोगी और असली महत्वपूर्ण धारा यह है कि जिन इलाकों में घी तैयार किया जाता है वहां उस नकली या वनस्पति-घी बिकने की मनाही कर दी जाय। मैं ऐसे देहाती इलाके जानता हूं जहां घी बहुत ज्यादा मिकदार में तैयार किया जाता है और वहा नकली घी कोई भी नही खाता, मगर तो भी वहां यह बनावटी घी बहुत बडी मिकदार में बिकता और खरीदा जाता है और उसे असली घी में मिला दिया जाता है। हमने यही सोचा कि उन इलाकों में, जहां बनावटी घी आमतौर पर केवल मिलावट के लिए खरीदा जाता है, उचित तरीका यही है कि वहां इस घी की बिक्री बिल्कुल ही बन्द कर दी जाय, और इस तरह घी तैयार करने के असल धन्धे की रक्षा की जाय और उसे प्रोत्साहन दिया जाय।

"मुझे आशा है कि इस बिल को आप पसन्द करेंगे। घी-दूध के व्यवसाय के बिना खेती-बाड़ी उन्नति नहीं कर सकती। युक्तप्रान्त में हमने घी-को-आपरेटिव सोसाइटियों को बहुत बड़ी संख्या में प्रोत्साहन दिया है और इस बात पर जोर दिया है कि कानूनन इन सोसाइटियों को अपने सदस्यों द्वारा मिलावट रोकने का अधिकार दिया जाय। यह भी लाभदायक साबित हुआ है।

"मैं आपको यह सब इसलिए लिख रहा हूं कि शायद यह जानकारी 'हरिजन' के पाठकों के लिए दिलचस्पी का कारण बने।"

डा० काटजू ने घी तैयार करनेवाले इलाको के बारे में विशेषतः जो नियम बताये हैं वे विचारणीय हैं। वास्तव में स्वाभाविक खुराक की एक प्रमुख चीज़ में

मिलावट करने का सवाल बहुत ही महत्वपूर्ण है और यह देशभर का सवाल है। इसे हल करने के लिए ऊंची राजनीति मे जाने की दरकार नही है।

—अंग्रेजी। नई दिल्ली, ३।२।४०। ह० ज०। ह० से०, १०।२।१९४०।]

६०. डा० लोहिया का गुनाह

अदालत के रूबरू डा० लोहिया ने जो बयान दिया था वह और मजिस्ट्रेट साहब के फैसले की नकल श्री अच्युत पटवर्धन ने मुझे भेजी है। उसे मैं पढ़ गया हू। डा० लोहिया का सारे-का-सारा बयान मुझे ठीक लगा है। उसमे से कुछ हिस्से नीचे दिये जाते हैं, क्योकि उनकी कीमत तात्कालिक ही नही, सदैव के लिए है

"हमारी सब-की-सब प्रवृत्ति अहिंसक होनी चाहिए। अहिंसा की आवश्यकता सिर्फ हमारे देश की आज की परिस्थिति के कारण ही नहीं, बल्कि जगद्व्यापी कारणो के आधार पर है। न सिर्फ व्यावहारिक दृष्टि से, बल्कि नैतिक दृष्टि से भी यह इष्ट है। अगर इस बारे मे कही शंका के लिए गुजाइश थी भी, तो यह रिपोर्टर महोदय ने खुद रफा कर दी है। उनकी रिपोर्ट के अनुसार मैंने यह लफ्ज कहे थे—'जब हम हथियार का आश्रय लेते हैं तो हमारे दिल कमजोर बन जाते हैं। जो शख्स हथियार पर भरोसा करता है, वह अपने हृदय बल का भरोसा खो देता है। अपने ही हथियार का वह खुद गुलाम बन जाता है, उसमें अपनी कोई ताकत नहीं रहती।'

"पुराने जमाने के 'लाठीवाद' और उसकी जगह आजकल की 'विमानशाही' का मैं विरोधी हूं। इनमे और मानवजाति के सामूहिक जीवन मे एक प्रकार का आन्तरिक विरोध है और वह दिन-ब-दिन अधिक प्रचण्ड बनता जाता है। आनेवाले बीस साल इस बात का फैसला करेंगे कि इनमे से किसको रहना है, किसको जाना है। क्योकि ये दोनो चीजें साथ-साथ कभी नहीं चल सकतीं। अगर मानव-समाज को जिन्दा रहना है, तो उसके लिए अकेला एक रास्ता यह है कि सारी दुनिया मे साम्राज्यवाद और पूजीवाद मिटकर उसकी जगह बालिग मताधिकार के आधार पर एक व्यापक लोकतन्त्र खड़ा हो। मैंने अपने भाषण में इसकी तरफ इशारा भी किया है और बताया है कि इसका असर हिन्दुस्तान की रियाया पर क्या होगा। इस उसूल को आगे लाने के लिए ही मैंने गांधीजी के पास, आज ही अमल मे लाई जा सके, एक ऐसी सुलह की योजना पेश की थी। उसमें दिये हुए

उत्तर—बात बिल्कुल ग़लत है। लेकिन जब एक बार कोई झूठी बात चल पड़ती है, तो उसे रोकना बहुत मुश्किल हो जाता है। मेरे बारे में ऐसी कई झूठी वातें फैलती रही है, उनके कारण क्षणिक सनसनी भी फैली है, लेकिन फिर अपनी मौत वे खुद मर गई है और मुझे उनके लिए कुछ करना नहीं पड़ा। मै जानता हूं कि इसकी भी यही गति होगी। जिस झूठ का कोई सिर-पैर ही नही, उससे कभी किसी का कोई नुकसान नही होता। मै अपनी लाज बचाने के लिए यह सब नही कह रहा। हां, अपनी बात ज़रूर समझाना चाहता हू। मुझ पर पर उपदेश-कुशलता का जो आरोप लगाया जाता है, वही इस झूठ का सच्चा जवाब है, क्योकि मैं आज नये सिरे से अंग्रेजी का यह उपयोग नहीं कर रहा। असल में तो किसी भले आदमी को इस टीका पर कोई ध्यान ही न देना चाहिए। लोग समझ ले कि मैं अंग्रेजी भाषा का और अंग्रेजों का प्रेमी हूं। लेकिन मेरा यह प्रेम चतुराई और समझदारी से खाली नही। इसलिए मै दोनों को उनके अनुरूप ही महत्व देता हूं। मैं अंग्रेजी को मातृभापा का या हमारी अपनी राष्ट्रभाषा हिन्दुस्तानी का निरादर कभी नही करने देता। और न अंग्रेजों के प्रेम के कारण मै अपने उन देशवासियों का निरादर होने देता हूं, जिनके हितों को मै किसी भी हालत में हानि नही पहुंचने दे सकता। हां, अन्तर्राष्ट्रीय काम-काज के लिए मैं अग्रेजी के महत्व को मानता हूं। जिन चुने हुए हिन्दुस्तानियों को अन्तर्राष्ट्रीय क्षेत्र मे अपने देश के हितो का प्रतिनिधित्व करना है, उनके लिए दूसरी भाषा के तौर पर मै अंग्रेजी को अनिवार्य समझता हूं। मेरी राय मे अंग्रेजी वह खुली खिड़की है, जिसकी राह हम पश्चिमवालों के विचारो और वैज्ञानिक कार्यो से परिचित रह सकते है। यह काम भी मैं कुछ चुनिन्दा लोगों को ही सौपना चाहता हूं। और उनके माध्यम से यूरोप के ज्ञान का प्रचार देश में देशी भाषाओं-द्वारा कराना चाहता हूं। मैं अपने देश के बच्चो के लिए यह जरूरी नही समझता कि वे अपनी बुद्धि के विकास के लिए एक विदेशी भापा का बोझ अपने सिर ढोये और अपनी उगती हुई शक्तियों का ह्रास होने दे। आज जिस अस्वाभाविक परिस्थिति में रहकर हमें अपनी शिक्षा ग्रहण करनी पड़ती है, उस परिस्थिति का निर्माण करनेवालों को मैं जरूर गुनहगार मानता हूं। दुनिया में और कही ऐसा नही होता। इसके कारण देश का जो नुकसान हुआ है, उसकी तो हम कल्पना तक नहीं कर सकते, क्योकि हम खुद उस सर्वनाश से घिरे हुए हैं। मैं उसकी भयंकरता का अन्दाज कर सकता हूं, क्योंकि निरन्तर देश के करोड़ों मूक, दलित और पीड़ित लोगों के सम्पर्क मे आता रहता हू।

प्रश्न—अखबारों में छपा है कि पूर्व मे जपानियो ने जिस अपूर्वता और सम्पूर्णता के साथ पश्चिमी तरीको को अपनाने में तरक्की की है, उसको आपने सराहा है। क्या जो नियम हिन्दुस्तान के लिए हैं, वे जपान के लिए नहीं?

एक और झूठ

उत्तर—यह भी वैसी ही एक झूठ है, जैसी अंग्रेजी की थी। इसी अंक में प्यारेलाल ने मेरे काशीवाले भाषण का जो ब्योरा दिया है, उससे पाठकों को मालूम हो जायगा कि जपानियो के बारे मे दरअसल मैंने क्या कहा था। अपने भाषण मे मैंने खास तौर पर अंग्रेजी का विरोध तो इसलिए किया था कि इसे शिक्षा का माध्यम बनाना या राष्ट्रभाषा की तरह काम मे लाना वास्तविक नहीं है। इसी सिलसिले मे मैंने यह कहा था कि वैसे मेरी राय मे जपानियो-द्वारा पश्चिमी तरीको का अपनाया जाना कितना ही हानिकर क्यो न हो, तो भी जिन गुणों के साथ उन्होने उन्नति की है, सो तो इसीलिए हो सकी है कि उन्होंने अपने देश मे पश्चिमी ढग की शिक्षा को कुछ चुने हुए लोगो तक ही सीमित रखा और उनके द्वारा जपानियो मे पश्चिम के नये ज्ञान का प्रचार अपनी भाषा के द्वारा ही करवाया। यह तो हर कोई आसानी से समझ सकता है कि अगर जपानियों किसी विदेशी भाषा के द्वारा यह सारा काम करते, तो वे पश्चिम के नये तरीके। को कभी अपना ही न पाते।

—सेवाग्राम, २७।१।१९४२। ह० ज०। ह० से०, १।२।१९४२।]

६२. काशी विश्वविद्यालय के भाषण के सन्दर्भ में

हिन्दी + उर्दू = हिन्दुस्तानी

नीचे लिखा खत एक भाई ने पिछली २८ जनवरी को [illegible] रजिस्ट्री से भेजा था, जो मुझे सेवाग्राम में ३१ जनवरी को मिला —

"काशी विश्वविद्यालय वाले आपके भाषण का मुझ पर [illegible] है। खास तौर पर हमारी शिक्षा-संस्थाओं मे हिन्दुस्तानी को [illegible] बनाने की बात उस मौके पर बहुत मौजूं रही। लेकिन [illegible] मानते हैं कि हिन्दुस्तानी नाम की कोई जबान आज हमारे देश [illegible] दरअसल तो ऐसी कोई जबान है ही नहीं। मुझे डर है कि [illegible] हिन्दुस्तानी की उतनी हिमायत नहीं की, जितनी हिन्दी की [illegible]

सब मेरे अपने मौलिक विचार ही हैं, यह मैं नहीं कहना चाहता। उस योजना के मुख्य अंग ये हैं :—

"(१) सब लोग स्वतन्त्र होंगे; जो लोग नये सिरे से अपनी आजादी हासिल करेंगे वे अपना विधान एक विधान-पंचायत के जरिये से गढ़ेंगे ;

"(२) सब जातियां समान हैं, इसलिए दुनिया में कहीं भी किसी को विशेष रिआयतों का हक नहीं होगा। किसी शख्स को दुनिया के किसी हिस्से में जाकर आबाद होने के लिए किसी प्रकार का राजनीतिक प्रतिबन्ध नहीं होगा;

"(३) किसी देश की रैयत के कब्जे में लेन और लगाई हुई पूंजी के सब तमस्सुक पहले तो एक अन्तर्राष्ट्रीय अदालत के सामने निष्पक्ष पड़ताल के लिए पेश किये जायंगे। उसके बाद वह किसी व्यक्ति की नहीं, बल्कि उस रैयत की सरकार की मिलकियत ठहराये जायंगे। जब जगत् की सब कौमें इन तीन उसूलों को कबूल कर लेंगी तो इनमें से निकला हुआ एक चौथा उसूल अपने-आप चल जायगा, याने सारा जगत् सम्पूर्ण शस्त्र-त्याग करेगा।

"मुझे यह जानकर खुशी है कि महात्मा गांधी ने मेरी इस सुलह की योजना की ताईद की है। अन्त में मैं यह कहना चाहता हूं कि मेरे मन में किसी कौम के प्रति द्वेषभाव नहीं है। मैं जर्मनी में रह चुका हूं और जर्मन लोगों की शोधों की पूर्णता, उनकी वैज्ञानिक बुद्धि और कार्यशक्ति पर मैं मुग्ध हूं। मुझे इस बात का दुःख है कि वे आज एक ऐसे तन्त्र के नीचे दबे हुए हैं जो उन्हें युद्ध और स्वतन्त्रताहरण के कुकर्मों में डाल रहा है। मुझे अंग्रेज कौम का इतना नजदीकी परिचय नहीं, मगर मैं यह मानने को तैयार हूं कि उनमें भी बहुत-से गुण हैं। जैसा कि मैंने अपने भाषण में कहा था, मैं ब्रिटेन का विनाश नहीं चाहता। ब्रिटिश लोगों ने हमारे साथ बुराई की है, मगर मैं इस बुराई का जवाब बुराई से नहीं देना चाहता। आगे चलकर फिर मैंने कहा था, मुझे इस बात का दुःख है कि अंग्रेज कौम आज एक ऐसे तन्त्र के वश में है कि जिसने दुनिया की तमाम कौमों को गुलाम बना रक्खा है।"

डा० लोहिया के बारे में अदालत ने फैसला देते हुए नीचे अनुसार लिखा है :—

"मुलजिम एक ऊंचे दर्जे का बुद्धिशाली और सुसंस्कृत शरीफ आदमी है। उसके पास शायद किसी युरोपियन देश की डाक्टर की डिग्री भी है। वह बुलन्द उसूलों और चरित्रवाला है। उसकी नीयत की सफाई पर कोई भी शक नहीं ला सकता। अपने उसूलों के लिए चाहे कितनी तकलीफ उठानी पड़े, इसकी उसे पर्वा नहीं और न उसे इस बात की ही पर्वा है कि उसे कितनी लम्बी और कड़ी सजा मिलेगी। हम उसे मौजूदा सरकार की नीति के बारे में स्वतन्त्र मत रखने

के लिए बिल्कुल सजा नहीं देना चाहते, क्योंकि इस सरकार का दावा है कि वह एक लोकतन्त्र है और लोकमत के अनुसार वह चलती है। यह दावा उसे इस बात पर मजबूर करता है कि जनता को कानून की मर्यादा के अन्दर रहकर जैसे ठीक लगे वैसी टीका करने की खुली छूट है। मगर हमारा यह भी फर्ज है कि हम सरकार और जनता के बीच तालुकात मे बिगाड़ न आने दें। जो तकरीर मुल्जिम ने दोस्तपुर में की उसका जरूरी नतीजा यही हो सकता है कि लोगो के दिलो में सरकार के प्रति अरुचि पैदा हो, और यह एक ऐसे मौके पर जब कि ब्रिटिश सल्तनत एक निहायत बेईमान दुश्मन के साथ लड़ रही है। इसलिए मैं इस बात को बहुत इष्ट समझता हूं कि एक लम्बे अर्से के लिए या जबतक मौजूदा बादल ब्रिटिश सरकार के सिर पर से न टल जायं तबतक मुलजिम को जेल मे रखा जाय। इसलिए मैं उसे दो साल की सख्त कैद की सजा देता हूं और बी क्लास मे [illegible] को सिफारिश करता हूं।"

तब कडी सजा क्यो? लम्बी कैद की बात तो फिर भी [illegible] है कि मुलजिम को और नुकसान करने मे रोकना चाहिए। लेकिन इस तरह उसे [illegible] कैद मे डालने से नुकसान बढेगा तो नही? उनका आखिर फैसला तो [illegible] सकती है। लोगो को तो हमेशा इतना याद रखना चाहिए कि जिस [illegible] कर्त्ता लोगो के प्रतिनिधि नही हैं, वहा देश-प्रेम और [illegible] है। मेरा तो खयाल है कि डा० लोहिया और ऐसे [illegible] बन्धन की रस्सी ढीली करती है। सरकार कांग्रेस को [illegible] बन्धन काटने का न्योता देती है। कांग्रेस ने सोचा था कि [illegible] कशमकश कम होने के बाद उठाया जाय। [illegible] दुःख है।

—अंग्रेजी। सेवाग्राम, २१।८।१९४०। ह० ज०। ह० से०, ३१।८।१९४०।]

६१. काशी के भाषण पर कुछ प्रश्नोत्तर

बिल्कुल [illegible]

प्रश्न—अखबारो [illegible] है कि [illegible] नियो के लिए अंग्रेजी पढ़ना और अंग्रेजो से [illegible] है। इस सम्बन्ध मे [illegible] के लिए इन [illegible] अंग्रेजी [illegible] देने का क्या हक है?

उत्तर—बात बिल्कुल ग़लत है। लेकिन जब एक बार कोई झूठी बात चल पड़ती है, तो उसे रोकना बहुत मुश्किल हो जाता है। मेरे बारे में ऐसी कई झूठी बातें फैलती रही है, उनके कारण क्षणिक सनसनी भी फैली है, लेकिन फिर अपनी मौत वे खुद मर गई है और मुझे उनके लिए कुछ करना नहीं पड़ा। मैं जानता हूं कि इसकी भी यही गति होगी। जिस झूठ का कोई सिर-पैर ही नही, उससे कभी किसी का कोई नुकसान नही होता। मैं अपनी लाज बचाने के लिए यह सब नहीं कह रहा। हां, अपनी बात जरूर समझाना चाहता हूं। मुझ पर पर उपदेश-कुशलता का जो आरोप लगाया जाता है, वही इस झूठ का सच्चा जवाब है, क्योंकि मैं आज नये सिरे से अंग्रेजी का यह उपयोग नही कर रहा। असल में तो किसी भले आदमी को इस टीका पर कोई ध्यान ही न देना चाहिए। लोग समझ लें कि मैं अंग्रेजी भाषा का और अंग्रेजों का प्रेमी हूं। लेकिन मेरा यह प्रेम चतुराई और समझदारी से खाली नही। इसलिए मैं दोनों को उनके अनुरूप ही महत्व देता हूं। मै अंग्रेजी को मातृभाषा का या हमारी अपनी राष्ट्रभाषा हिन्दुस्तानी का निरादर कभी नही करने देता। और न अंग्रेजों के प्रेम के कारण मैं अपने उन देशवासियों का निरादर होने देता हूं, जिनके हितों को मैं किसी भी हालत में हानि नहीं पहुंचने दे सकता। हां, अन्तर्राष्ट्रीय काम-काज के लिए मैं अंग्रेजी के महत्व को मानता हूं। जिन चुने हुए हिन्दुस्तानियों को अन्तर्राष्ट्रीय क्षेत्र में अपने देश के हितों का प्रतिनिधित्व करना है, उनके लिए दूसरी भाषा के तौर पर मै अंग्रेजी को अनिवार्य समझता हूं। मेरी राय में अंग्रेजी वह खुली खिड़की है, जिसकी राह हम पश्चिमवालों के विचारों और वैज्ञानिक कार्यों से परिचित रह सकते है। यह काम भी मैं कुछ चुनिन्दा लोगों को ही सौपना चाहता हूं। और उनके माध्यम से यूरोप के ज्ञान का प्रचार देश में देशी भाषाओं-द्वारा कराना चाहता हूं। मैं अपने देश के बच्चों के लिए यह जरूरी नही समझता कि वे अपनी बुद्धि के विकास के लिए एक विदेशी भाषा का बोझ अपने सिर ढोये और अपनी उगती हुई शक्तियों का ह्रास होने दे। आज जिस अस्वाभाविक परिस्थिति में रहकर हमें अपनी शिक्षा ग्रहण करनी पड़ती है, उस परिस्थिति का निर्माण करनेवालों को मैं जरूर गुनहगार मानता हूं। दुनिया में और कही ऐसा नही होता। इसके कारण देश का जो नुकसान हुआ है, उसकी तो हम कल्पना तक नही कर सकते, क्योंकि हम खुद उस सर्वनाश से घिरे हुए है। मै उसकी भयंकरता का अन्दाज कर सकता हूं, क्योंकि निरन्तर देश के करोड़ो मूक, दलित और पीड़ित लोगों के सम्पर्क में आता रहता हूं।

प्रश्न—अखबारों में छपा है कि पूर्व में जपानियो ने जिस अपूर्वता और सम्पूर्णता के साथ पश्चिमी तरीको को अपनाने में तरक्की की है, उसको आपने सराहा है। क्या जो नियम हिन्दुस्तान के लिए हैं, वे जपान के लिए नहीं?

एक और झूठ

उत्तर—यह भी वैसी ही एक झूठ है, जैसी अंग्रेजी की थी। इसी अंक मे प्यारेलाल ने मेरे काशीवाले भाषण का जो ब्यौरा दिया है, उससे पाठकों को मालूम हो जायगा कि जपानियो के बारे मे दरअसल मैंने क्या कहा था। अपने भाषण मे मैंने खास तौर पर अंग्रेजी का विरोध तो इसलिए किया था कि उसे शिक्षा का माध्यम बनाना या राष्ट्रभाषा की तरह काम मे लाना वाञ्छनीय नहीं है। इसी सिलसिले मे मैंने यह कहा था कि वैसे मेरी राय मे जपानियों-द्वारा पश्चिमी तरीको का अपनाया जाना कितना ही हानिकर क्यो न हो, तो भी जिस तेजी के साथ उन्होंने उन्नति की है, सो तो इसीलिए हो सकी है कि उन्होंने अपने देश मे पश्चिमी ढग की शिक्षा को कुछ चुने हुए लोगो तक ही सीमित रखा और उनके द्वारा जपानियो मे पश्चिम के नये ज्ञान का प्रचार जपानी भाषा के द्वारा ही करवाया। यह तो हर कोई आसानी से समझ सकता है कि अगर जपानी किसी विदेशी भाषा के द्वारा यह सारा काम करते, तो वे पश्चिम के नये तरीकों को कभी अपना ही न पाते।

—सेवाग्राम, २७।१।१९४२। ह० ज०। ह० से०, १।२।१९४२।]

६२. काशी विश्वविद्यालय के भाषण के सन्दर्भ में

हिन्दी + उर्दू = हिन्दुस्तानी

नीचे लिखा खत एक भाई ने दिल्ली से [illegible] जनवरी को [illegible] रजिस्ट्री से भेजा था, जो मुझे सेवाग्राम में ३१ जनवरी को मिला —

"काशी विश्वविद्यालय वाले आपके भाषण का [illegible] है। खास तौर पर हमारी शिक्षा-संस्थाओं में हिन्दुस्तानी को [illegible] बनाने की बात उस मौके पर बहुत मौजूं रही। लेकिन [illegible] मानते हैं कि हिन्दुस्तानी नाम की कोई जबान [illegible] दरअसल तो ऐसी कोई जबान है ही नहीं। मुझे डर है कि [illegible] स्तानी की उतनी हिमायत [illegible] हिन्दी की [illegible]

कांग्रेसियों का है। मुझे ताज्जुब होता है कि आप अपने मन की बात खुले तौर पर क्यों नहीं कहते? कहिए कि आप हिन्दी चाहते हैं। इस हिन्दी को आप हिन्दुस्तानी और उससे भी बदतर हिन्दी-हिन्दुस्तानी क्यों कहते हैं? कुछ साल पहले आपने उसे यह नाम देना चाहा था, लेकिन किसी ने इसे अपनाया नहीं।

"महात्मा जी, आप कहते हैं आपको उर्दू से कोई द्वेष नहीं। मगर आप तो उसे खुल्लमखुल्ला फारसी लिपि में लिखी जानेवाली मुसलमानों की भाषा कह चुके हैं। आपने यह भी फरमाया है कि अगर मुसलमान चाहें, तो भले उसकी हिफाजत करें। दूसरी तरफ, आप कई बार हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन के सभापति रह चुके हैं और हिन्दी की हिमायत करते हुए उसके लिए लाखों का चन्दा जुटा चुके हैं। क्या कभी आपने उर्दू का प्रचार करनेवाली किसी सभा की सदारत की है? अब भी आप इस तरह की सदारत मंजूर करेंगे? और क्या कभी उर्दू की तरक्की के लिए आपने एक पाई का भी चन्दा इकट्ठा किया है?

"मैं तो कांग्रेसवालों के मुंह से यह सुनते-सुनते दिक आ गया हूं कि मुस्लिम लेखकों को फारसी शब्दों का और हिन्दी लेखकों को संस्कृत शब्दों का इस्तेमाल करने से बचना चाहिए। वे कहते हैं कि इस तरह जो जबान बनेगी, वह हिन्दुस्तानी होगी।

"महात्माजी, आप खुद एक बहुत अच्छे लेखक हैं। आपको तो यह पता होना चाहिए कि मंजे हुए लेखक, जिनकी अपनी एक शैली बन चुकी है, कभी फारसी और संस्कृत के उन शब्दों को छोड़ न सकेंगे, जो उनकी अपनी भाषा के अंग बन चुके हैं, इसलिए आपकी यह सलाह बिल्कुल अव्यावहारिक है।

"मगर एक रास्ता है। यह कि यू० पी० जैसे किसी एक सूबे में हाईस्कूल तक की पढ़ाई के लिए उर्दू और हिन्दी दोनों को लाजिमी बना दीजिए। इस तरह जिस सूबे में दोनों जबानें लाजिमी तौर पर पढ़ाई जायंगी, वहां करीब पचास साल के अन्दर एक आमफहम भाषा तैयार हो जायगी, जो हमारी अपनी भाषा है, वह हमारे साथ रहेगी, और जिसे हम अपने ऊपर जबर्दस्ती लाद रहे हैं, वह हमारे जीवन से हट जायगी। स्पष्ट ही जब हम दोनों भाषाएं सीखेंगे, तो अपने आप हम उसी में अपने विचार प्रकट करना पसन्द करेंगे, जो ज्यादा विकसित, ज्यादा खूबसूरत, ज्यादा लुभावनी, ज्यादा मुख्तसर और ज्यादा अर्थसूचक यानी थोड़े में बहुत कहनेवाली होगी। इससे न सिर्फ देशी भाषाओं के प्रचार का मार्ग सरल और सुगम बनेगा, बल्कि हिन्दू-मुसलमानों के सामाजिक जीवन के बीच पड़ी हुई चौड़ी खाई को पाटने में भी बड़ी मदद मिलेगी। एक-दूसरे के साहित्य को पढ़कर हम एक-दूसरे के आदर्शों और विचारों को समझ सकेंगे और उनके

लिए मन में हमदर्दी रख सकेंगे। हो सकता है कि इस तरह हिन्दी और उर्दू के मेल से एक नई जवान सामने आ जाय और वह हिन्दुस्तानी कहलाये। चूंकि यह जवान दोनों जवानो की जानकारी का नतीजा होगी, इसलिए वह दोनो कौमों की एक कुदरती जवान बन रहेगी।

"महात्माजी, अगर आप सचमुच अपने इस मुल्क के लिए एक [illegible] कौमी जवान चाहते हैं, तो मुझे यकीन है कि आप मेरे इस सुझाव को मंजूर कर लेंगे, और अपनी सिफारिश के साथ इसे देश के सामने पेश करेंगे। मगर मैं मानता हू कि आप ऐसा नही करेंगे। क्योंकि आप बराबर हिन्दी की ही हिमायत करते आये हैं, और उसी को मुल्क पर लादने की अपने भरसक कोशिश करते रहे हैं, और आप यह भी जानते होंगे कि अगर हिन्दी और उर्दू दोनो अनिवार्य बना दी गईं, तो उर्दू हिन्दी को मैदान से खदेड़ देगी, क्योंकि हिन्दी के मुकाबले वह ज्यादा सही, ज्यादा मँजी हुई, ज्यादा अर्थसूचक और ज्यादा खूबसूरत है। अगर मेरी यह तजवीज दोनो जवानो को यकसां मौका देती है, अगर आपका खयाल है कि हिन्दी मुल्क की अपनी कुदरती भाषा है, तो आपको यह विश्वास होना चाहिए कि वह उर्दू को खदेड देगी। जैसा कि आपने पिछले साल भी [illegible] यह कहना कि दोनो जवानो को लाजिमी बनाने की कोई ताकत आपके हाथ मे नही है, बेमतलब-सा है। अगर आप इस तजवीज को अपनी सिफारिश के साथ मुल्क के सामने रखना पसन्द करेंगे, तो जरूर ही [illegible] होगा।"

इन्होंने खत के नीचे अपनी सही तो दी है, [illegible] भी लिखा है। इसलिए यहां मैं उनका नाम नहीं [illegible] महत्व भी नही। मैं जानता हू कि [illegible] बहुतेरे मुसलमानो के हैं। मेरे [illegible] पाई है।

लेकिन जहां तक मुझसे [illegible] जानी चाहिए, जो इनी [illegible] के हरिजन-सेवक में [illegible]

मैं [illegible] के हिमायती [illegible] लोगों [illegible] जायेगा और [illegible]

वनेगी। अगर लोग मेरी इस तजवीज को आमतौर पर अपना लें, तो फिर भाषा का सवाल न तो राजनीतिक सवाल रह जायगा और न यह किसी झगड़े की जड़ ही वन सकेगा।

मैं पत्र-लेखक की इस वात को मानने को तैयार नही कि उर्दू ज्यादा विकसित, ज्यादा खूवसूरत, ज्यादा लुभावनी, ज्यादा मुख्तसर, और ज्यादा अर्थसूचक यानी थोड़े में वहुत कहनेवाली ज़वान है। ये सव चीजें किसी एक भाषा की अपनी वपौती नही होती। भाषा तो जैसी हम उसे वनाना चाहें, वन जाती है। अंग्रेजी की जो खूबियां आज हमें मालूम होती हैं, वे अंग्रेजों की कोशिश से ही उसमें आई है। दूसरे शब्दों में, भाषा हमारी ही कृति है, और वह अपने सिरजनहार के रंग में रँगी रहती है। हरएक भाषा में अपना अनन्त विस्तार करने की शक्ति रहती है। आधुनिक वंगला को वनानेवाले वंकिम और रवीन्द्र ही न थे? इसलिए अगर उर्दू आज हिन्दी से हर वात में वढ़ी-चढ़ी है, तो उसकी यही वजह हो सकती है कि उसके विधाता हिन्दी के विधाताओं से ज्यादा लायक रहे हों, मगर इस पर मैं अपनी कोई राय नहीं दे सकता, क्योंकि भाषाशास्त्री की दृष्टि से मैंने दोनों में से किसी एक का भी अध्ययन नहीं किया; अपने सार्वजनिक काम के लिए जितना जरूरी है, उतना ही मैं इन्हें जानता हूं।

लेकिन क्या उर्दू हिन्दी से उतनी ही भिन्न है, जितनी वंगला मराठी से? क्या उर्दू उसी हिन्दी का नाम नहीं, जो फारसी लिपि में लिखी जाती है और संस्कृत से नये शब्द लेने के वजाय फारसी या अरवी से नये शब्द लेने की तवीयत रखती है? अगर हिन्दू और मुसलमानों के वीच किसी तरह की अनवन न होती, तो लोग इस चीज़ का खुशी से स्वागत करते। और, जव आपस की यह अदावत मिट जायगी, जैसा कि एक दिन इसे मिटना ही है, तो हमारी सन्तान हमारे इन झगड़ों पर हँसेगी और अपनी उस सर्वमान्य भाषा हिन्दुस्तानी पर गर्व करेगी, जो असंख्य लेखको और लोगों द्वारा उनकी अपनी आवश्यकता, रुचि और योग्यता के अनुसार, कई भाषाओं से खुले दिल के साथ लिये गये शब्दों के सुमेल से वनाई जायगी।

यहां मैं अपने पत्र-लेखक की एक भूल को दुरुस्त कर देना चाहता हूं। उनका कुछ ऐसा ख़याल मालूम होता है कि आखिरकार हिन्दुस्तानी तमाम प्रान्तीय भाषाओं की जगह ले वैठेगी। यह न तो कभी मेरा सपना रहा, और न ही उन लोगों का, जो देश के लिए एक राष्ट्र-भाषा की चिन्ता करते रहे हैं। हम सव सपना तो यह देख रहे हैं कि मुल्क में हिन्दुस्तानी उस अंग्रेजी की जगह ले ले, जो आज पढ़े-लिखे लोगों के वीच व्यवहार का एक माध्यम वन गई है। इसका नतीजा यह

हुआ है कि पढे-लिखो के और आम रिआया के बीच आज एक खाई-सी खुद गई है। इस दुर्भाग्य का प्रतिकार तभी हो सकता है, जब अन्तर्प्रान्तीय व्यवहार के लिए हम उस भाषा को अपनायें, जो देश की लोकभाषा हो, यानी जिसे देश में ज्यादा-से-ज्यादा लोग बोलते हो। इसलिए दरअसल झगडा उर्दू-हिन्दी का नहीं, बल्कि हिन्दी और उर्दू दोनो का अंग्रेजी से है। नतीजा इसका एक ही हो सकता है: दोनों की फतह, हालाकि आज ये दोनो बहिनें बडी भारी अडचनो के बीच आ पडी है, और फिलहाल इनमे आपसी अनबन भी है।

पत्र-लेखक को हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन के साथ के मेरे सम्बन्ध से शिकायत है। मुझे उसके साथ के अपने इस सम्बन्ध का अभिमान है। अबतक का उसका इतिहास उज्जवल रहा है। हिन्दी शब्द से हिन्दू-मुसल्मान, दोनों का, समान रूप से बोध होता था। दोनो ने हिन्दी मे लिखकर उसके भण्डार को समृद्ध बनाया है। स्पष्ट ही पत्रलेखक को यह पता नहीं है कि सम्मेलन के साथ मेरे सम्बन्ध का क्या असर हुआ है। सम्मेलन ने मेरी प्रेरणा से, न सिर्फ अपनी बुद्धिमानी का, बल्कि देशभक्ति और उदारता का परिचय देते हुए, हिन्दी की उस परिभाषा को अपनाया, जिसमे उर्दू भी शामिल है। वह पूछते हैं कि क्या मैं किसी उर्दू अंजुमन मे कभी शामिल हुआ हू? मुझसे किसी ने कभी इसके लिए [illegible] ही नही। अगर कोई कहता, तो मैं उसके साथ भी वही शर्त रखता, जो [illegible] सम्मेलन का सभापति बनने के लिए कहनेवालों के साथ [illegible]। मैं [illegible] मित्रो से, जो मुझे न्योतने आते, कहता कि वे मुझको [illegible] वह उर्दू की ऐसी व्याख्या करें, जिसमे देवनागरी लिपि मे [illegible] गिनती हो। लेकिन मुझे ऐसा कोई मौका ही न मिला।

मगर अब, जैसा कि मैं अपने पहली फरवरी वाले लेख मे [illegible] मैं चाहता हू कि किसी ऐसी सस्था या समिति का [illegible], जो [illegible] के लिए हिन्दी और उर्दू का, उनके दोनो रूपों और दोनो लिपियो के [illegible] करने की हिमायत करे, और इस उम्मीद के साथ इस [illegible] अन्त मे किसी दिन ये दोनो कुदरती तौर पर [illegible] भाषा का चोला पहन लेंगी, और हिन्दुस्तानी [illegible] इनका समीकरण हिन्दी उर्दू हिन्दुस्तानी, [illegible] उर्दू होगा।

—सेवाग्राम, २९।१।१९४२ [illegible]

६३. एक मन्त्री की परेशानी

डा० काटजू ने यह पत्र भेजा है—

"हिन्दुस्तान के कई हिस्सों में रबी की फसल इस साल और सालों के मुकाबले खराब आई है और इसलिए आम तौर पर लोगों को यह डर है कि इस बार देश में अन्न की बहुत ज्यादा तंगी रहेगी। अन्न के मामले में अमीर और गरीब सबको एक सी सहूलियतें देने के खयाल से संयुक्त प्रान्त के बहुत से शहरी इलाकों में राशन देना शुरू किया गया है। राशनिंग की वजह से सरकार पर यह जिम्मेदारी आ जाती है कि वह राशनिंग के हलकों में रहनेवाले लोगों के लिए अन्न सञ्चय करे। प्रान्त में इतनी ज्यादा तंगी का अन्देशा है कि यहां राशन की मात्रा को घटाकर कम से कम कर दिया गया है, यानी हर आदमी रोज का छः छटांक अनाज दिया जाता है। इसमें दो छटांक गेहूं, दो छटांक चावल और दो छटांक, मिलावटी आटा होता है। लोग आमतौर पर मिलावटी आटे को पसन्द नहीं करते और राशन में इससे ज्यादा कमी करना लगभग असम्भव है। स्पष्ट है कि शहरी हलकों को अन्न की पूर्ति करने के लिए देहात से उसकी आमद लगातार जारी रहनी चाहिए। हिन्दुस्तान की सरकार ने सूबों की सरकारों को यह सुझाया है कि अन्न की लगातार आमद का पक्का प्रबन्ध करने के लिए अन्न पैदा करनेवाले जिलों में यानी उन जिलों में जहां खेती की पैदावार के देहाती हलकों की जरूरतों से ज्यादा होने की आशा की जाती है, खेती की फसल पर अनिवार्य रूप से लाग बैठाना इष्ट होगा। अनिवार्य रूप से अनाज वसूल करने का यह सवाल लोगों को बहुत ही परेशान किये हुए है। कहा जाता है कि सरकार ने कण्ट्रोल की जो कीमतें तय की हैं, वे बहुत कम हैं और बढ़ाई जानी चाहिए। जवाब इसका यह है कि कीमतों का ढांचा तो समूचे हिन्दुस्तान के लिए बनाया जाता है, और उस पर असर डाले बिना किसी एक सूबे में कीमतें बढ़ाई नही जा सकतीं। इसके अलावा संयुक्तप्रान्त में कण्ट्रोल के दाम ४० सेरी मन के सवा दस रुपये रक्खे गये हैं जो कि असल में कम नहीं हैं। यह काफी अच्छी रकम है और इसमें खेती के और जिन्दगी की आम जरूरतों के बढ़े हुए खर्च का मुनासिब खयाल रक्खा गया है। लड़ाई से पहिले के दिनों में गेहूं रुपए १३ सेर बिका करते थे, आज कण्ट्रोल की दर प्रति रुपया ४ सेर की है। चूंकि आम तौर पर लोगों को यह आशंका है कि बाजार में गल्ला मांग के मुकाबिले बहुत कम आवेगा, इसलिए जहां स्वार्थी लोग अपनी निजी जरूरतों को पूरा करने के लिए ऊंचे दामों में खाद्य पदार्थ खरीद सकते हैं वहां काले बाजार खड़े हुए बिना न रहेंगे। अगर काश्तकार लोग यह अनुभव कर लें कि शहरों में रहनेवाले अपने

भाई-बहिनों और देहात में जिनकी अपनी कोई खेतीबारी नहीं है उन लोगों को अन्न पहुंचाने की ज्यादा-से-ज्यादा कोशिश करना उनका अपना सामाजिक और राष्ट्रीय धर्म है तो किसी पर कोई जबरदस्ती न करनी पड़े। किसान सचमुच हमारे अन्नदाता हैं इसलिए मैं चाहता हूं कि आप उनसे यह अपील करें कि वे इस नाजुक मौके पर न तो खुद गल्ला इकट्ठा करके रखें और न किसी चोर बाजार में उसे बेचें बल्कि जितना दे सकें सरकारी गोदामों के लिए दें ताकि अमीर-गरीब सबको उचित रूप से अन्न वितरित किया जा सके और भुखमरी और मुसीबतें टाली जा सकें। आपकी आवाज दूर-दूर तक पहुंचती है, इसलिए मैं आपसे अपील करता हूं कि आप इस काम को हाथ में लें। शहरों के लिए गल्ले का काफी इन्त-जाम करने की गरज से कई योजनाएं सोची गई हैं लेकिन कोई भी योजना क्यों न हो सार सबका यही है कि हर हालत में किसान से कहना होगा कि वह अपना गल्ला दे। अगर शहरों और गांवों में लोगों के लिए अन्न मुहय्या न किया गया तो हर तरह के दंगे और फसाद हुए बिना न रहेंगे। संयुक्तप्रान्त में हम अधिक अन्न उगाने, और अधिक साग-सब्जी उगाने के आन्दोलनों को बढ़ावा देने की पूरी-पूरी कोशिश कर रहे हैं। आपके दिये हुए तमाम सुझावों पर अमल किया जा रहा है। सरकारी इमारतों के आसपास की तमाम सरकारी जमीनों को जोतने के लिए हिदायतें जारी की गई हैं। ऐसा इन्तजाम किया गया है कि [illegible] मकानों के मालिक खेती-बारी के विशेषज्ञों की सलाह से फायदा उठा सकें। उन्हें बतौर सहूलियत के बोने के लिए और सिंचाई के लिए [illegible] भी मुफ्त दिया जा रहा है। कुएं खोदने के काम में भी मदद दी जा रही है। इन सब बातों के कहने और करने बावजूद भी जब तक जनता [illegible] देती, कुछ किया नहीं जा सकता, और जनता से [illegible] है कि अन्नदाता किसान जितना उससे बन पड़े उतना गल्ला [illegible] के लिए दे।"

डा० काटजू के इस पत्र पर [illegible] को गहराई से विचार करना चाहिए। [illegible] किया जा सकता है। उस हालत में [illegible] वर्ना शाप तो यह है ही और शाप होगा।

डा० काटजू ने जब [illegible] इसलिए लोग उन्हें क्या भी मानते हैं और [illegible] उनसे बेहतर आदमी को उससे [illegible] चुने हुए मन्त्री उनसे [illegible]

हिदायतों पर अमल करें। हर कानून या हिदायत का विरोध सत्याग्रह नही होता। सत्याग्रह की वनिस्वत वह दुराग्रह आसानी से वन सकता है।

—अंग्रेजी। नई दिल्ली, १४।४।१९४६। ह० ज०, ह० से०, २१।४।१९४६।]

६४. डा० लोहिया की ललकार

अखवारी खवरों से पता चलता है कि गोआवालों का न्योता पाकर डा० राममनोहर लोहिया पिछले दिनों गोवा गये थे। वहां उन पर यह नोटिस तामील किया गया कि गोआ में रहते हुए वह कहीं कोई भाषण या तक़रीर न करें। डा० लोहिया अपने एक वयान में कहते हैं कि पिछले १८८ सालों से पुर्तगाल सरकार ने गोआवालों का सभाएं करने या संस्थाएं कायम करने का अधिकार छीन रक्खा है। सहज ही उन्होने उस हुक्म को मानने से इन्कार किया, उसे तोड़ा। अपने इस काम से उन्होंने नागरिक अधिकारों और खास कर गोआवालों की एक खिदमत की है। पुर्तगालियों की इस छोटी सी वस्ती को, जो यहां महज अंग्रेजों की दया पर निर्भर रही है, अंग्रेजों की वुराइयों की नक़ल नही करनी चाहिए। ऐसी नक़ल उसके लिए लाभदायक नहीं हो सकती। आजाद हिन्दुस्तान में गोआ हिन्दुस्तान से विल्कुल अलग रहकर अपनी मनमानी नही कर सकेगा। गोआवाले आजाद हिन्दुस्तान की नागरिकता के हक़ों का दावा कर सकेंगे, और वे उन हक़ों को पा भी सकेंगे और इसके लिए उन्हें न तो एक गोली चलानी होगी और न एक क़तरा खून वहाना होगा। उस हालत में मौजूदा पुर्तगाल सरकार न तो अंग्रेजी वन्दूकों की मदद से गोआवालों को वाकी हिन्दुस्तान से अलग रख सकेगी और न उन्हें उनकी मर्जी के खिलाफ गुलाम वनाये रह सकेगी। इसलिए गोआ की पुर्तगाली सरकार को मैं यह सलाह दूंगा कि वह वदलते हुए जमाने की निशानियों को पहचाने और व्रिटिश सरकार के साथ की गई किसी सुलह पर भरोसा न रख कर गोआ के निवासियों के साथ सम्मानपूर्ण समझौता कर ले।

गोआवालों से मैं यह कहूंगा कि उन्हें पुर्तगाल सरकार से उसी तरह डरना छोड़ देना चाहिए, जिस तरह वाकी हिन्दुस्तान के लोगों ने महान् व्रिटिश सल्तनत से डरना छोड़ दिया है और उन्हें नागरिक स्वतन्त्रता के अपने वुनियादी अधिकारों के लिए डट कर आवाज उठानी चाहिए। गोआवालों के सवके साथ आपस में मिलजुल कर रहने में अलग अलग धर्मों या मजहवों की वजह से कोई रुकावट पेश न आनी चाहिए। मजहव या धर्म हर एक औरत या मर्द के लिए अमल करने की

चीज़ है। उसे अलग अलग पन्थों या फिरकों के बीच लड़ाई-झगड़ा करनेवाली चीज़ हर्गिज़ न बनना चाहिए।

—अंग्रेजी। नई दिल्ली, २६।६।१९४६। ह० ज०। ह० से०, ३०।६।१९४६।]

६५. खामखाह क्यों मारें?

अलीगढ से यह सूचना आई है—

“९ जून के ‘हरिजन-सेवक’ में चौथे पृष्ठ पर आप लिखते हैं कि बन्दरों, परिन्दों और ऐसे जन्तुओं को जो फसल खा जाते हैं, खुद मारना होगा, या कोई ऐसा आदमी रखना होगा जो उन्हें मारे। इस सम्बन्ध में मैं यह निवेदन करना चाहता हूं कि अगर फसल को खा जानेवाले के मारे बगैर ही फसल की रक्षा सामानों से हो सकती हो, तो उन्हें मारना जरूरी नहीं होना चाहिए। मिसाल के लिए मैं आपको सूचना देना चाहता हूं कि मेरे चाचा ने रात को बैटरी की रोशनी बन्दरों की ओर फेंक-फेंक कर उन्हें अपने खेत छोड़ने के लिए मजबूर कर दिया। इसलिए बन्दरों को मारने के बजाय उनको बैटरी के प्रयोग से भगाने का मार्ग (रास्ता) आप क्यों न स्वीकार करें और पेश करें?”

यह सूचना पहले विचार में तो अच्छी लगती है। लेकिन [illegible] विचार करने से लगता है कि बैटरी से काम नहीं चल सकेगा। उससे [illegible] रक्षा हो सकेगी मगर इर्द-गिर्द की नहीं। स्वार्थी बनकर दूसरों का [illegible] तो मेरे लिए ठीक नहीं होगा। वह भी हिंसा होगी। अहिंसा [illegible] हिंसा करने में हम झिझकते नहीं, जैसे कि हम अपने आंगन में [illegible] साप फेंकते हैं, कचरा डालते हैं। शुद्ध अहिंसा कहती है कि [illegible] से बचना और समाज को बचाना आवश्यक है तो उसमें [illegible] हो जाता है। सामान्य नियम तो यही है कि जितनी हिंसा से [illegible] में बचना हमारा धर्म है। सामाजिक अहिंसा [illegible] को जहां तक वह जा सकती है, जाना होगा। [illegible] करना सबका परम कर्तव्य है। [illegible] जाती है।

—३०।६।१९४६। ह० से०, ७।७।१९४६।]

६६. डा० लोहिया

डा० लोहिया ने गोवा [illegible]

वह काफी गौर करने लायक है। दैनिक समाचारपत्र से मैं उसकी नकल यहां देता हूं —

"जहां तक मैं जानता हूं, अपनी गिरफ्तारी के वक्त तक मैंने गोआ का कोई कानून नहीं तोड़ा था। चाहे मेरा वैसा इरादा रहा हो, लेकिन यहां उसकी चर्चा अप्रासंगिक है। कोलम्ब में वहां के पुलिस अफसर सीधे मेरे डिब्बे में घुस आये और वगैर कुछ कहे-सुने मुझे एकदम गिरफ्तार कर लिया। अपने वर्तमान रूप में अन्तर्राष्ट्रीय कानून शायद पुर्तगाल सरकार को यह अधिकार देता है कि वह जिसे परदेसी समझे और जिसको अपने यहां रहने देना पसन्द न करे, उसे गिरफ्तार करके देश-निकाला दे दे। लेकिन किसी को जेल में रखने का उसे तवतक कोई हक नहीं है जबतक वह उसका कोई कानून न तोड़े। एक वार पहले भी पुर्तगाल सरकार मुझे परदेसी मान चुकी है और मेरी तरफ के अपने इस रुख को वह अन्तर्राष्ट्रीय कानून की एक दफा की बुनियाद पर सही मानती है। मुझे गैर-कानूनी तौर पर जेल में रखने के लिए या तो वह मुझसे माफी मांगे और मुझे हरजाना दे या फिर गोआ और बाकी हिन्दुस्तान के बीच अन्तर्राष्ट्रीय कानून जारी करने की अपनी जिद छोड़ दे। यही नहीं, वल्कि उसने २९ सितम्बर से २ अक्तूबर तक मुझे एक ऐसी कोठरी में बन्द रखा जिसमें सिर्फ इतनी हवा आती थी कि इन्सान सांस लेकर जिन्दा रह सके। अपने इस वरताव के लिए भी उसे मुझसे माफी मांगनी चाहिए और मुझे हरजाना देना चाहिए।

"मुझे अभी तक तनहाई में रक्खा गया है, हालांकि कुछ सहूलियतें वढ़ा दी गई हैं। सिर्फ नहाने के वक्त ही मुझको कोठरी से बाहर निकाला जाता है। कोई मिलजुल नहीं सकता। इन वजहों से मुझे कैद में रखने का जुर्म और वढ़ जाता है।"

डा० लोहिया ने हरजाने की माँग की है, उसे कोई हँसकर टाल न दे। अगर डा० लोहिया के पीछे उनके मुल्क की ताक़त होती तो गोआ की सरकार को उनसे माफी मांगनी पड़ती और वह हरजाना देने के लिए भी तैयार हो जाती। वड़ी-वड़ी ताकतों के लिए यह कोई गैर-मामूली वात नहीं है कि वे अपने छोटे-से-छोटे नागरिकों को पहुंचाये गये नुकसान या उनकी वेइज्जती के लिए हरजाना मांगें और वसूल करें। डा० लोहिया कोई मामूली आदमी नहीं। आज हिन्दुस्तान में राष्ट्रीय सरकार राज कर रही है। मुझे यकीन है कि दूसरी किसी सरकार की तरह उसे भी ऐसी वातें अखरती होंगी। मुझे कोई आश्चर्य न होगा अगर उसने इस वारे में अपनी शिकायत गोआ सरकार के सामने रखी हो और उसे अपना तरीक़ा सुधारने की ताक़ीद की हो। सो जो भी हो, गोआ सरकार की ज्याद-तियों के शिकार डा० राममनोहर लोहिया के और राष्ट्रीय सरकार के पीछे लोक-

मत की ताकत होनी चाहिए। डा० लोहिया के साथ जो ज्यादती की गई है, [illegible] गोआ मे रहनेवाले तमाम हिन्दुस्तानियो के साथ और उनके जरिये सारे हिन्दुस्तान के साथ की गई है।

—अंग्रेजी। नई दिल्ली, १३।१०।१९४६। ह० से०, २०।१०।१९४६।]

६७. एक नया सुझाव

श्री रामनरेश त्रिपाठी लिखते हैं—

"कपडे और गल्ले के कण्ट्रोल से तकलीफें घटने के बदले बहुत बढ़ गई है। कपड़े का तो यह हाल है कि बहुत से गांववालो को साल मे एक बार भी कपड़ा नहीं मिलता और, गल्ले का यह हाल है कि सरकार ने जो दर कायम कर दी, किसान उससे कहीं ज्यादा महगा बेंचने लगे। मेरे शहर मे कण्ट्रोल वाली दूकान मे एक रुपये का तेरह पाव गेहू मिलता है। मगर गांव मे आठ नौ पाव [illegible] है। इससे वे लोग जो सरकारी दुकानो से गल्ला नहीं पाते, अपनी कमाई [illegible] सांकल लगाकर बडी मुश्किल से जी रहे हैं। शुरू मे पुरानी सरकार ने कहा था कि खाने-पहनने की चीजें सबको बराबर मिलती रहें, इसके लिए वह कण्ट्रोल का तरीका जारी कर रही है। पर यह एक ढोंग था। असल मे सरकार ने [illegible] फायदे के लिए इसे जारी किया था। लडाई के जमाने में महगाई [illegible] से लोग घर छोडछाड़ कर फौज मे भरती हो गये थे और [illegible] थी। अगर कण्ट्रोल का तरीका न चलाया गया होता, तो [illegible] मे तो खाने-पहनने की चीजों की उतनी कमी कभी न होती जितनी आज है।

"लेकिन अब इससे छुटकारा कैसे मिले? अगर कण्ट्रोल उठा लिया जाता है तो सरकार के बनाये हुए नये-नये सेठ तमाम गल्ला और कपड़ा [illegible] महगे से भी महगा करके बेचेंगे। उस हालत मे सरकार के पास [illegible] कोई चारा न रह जायगा कि वह खुद उन पर [illegible] कर ले और सस्ता करके बेचे, जो वह करेगी नहीं। पुरानी सरकार ने [illegible] के लिए जो नाग-फांस तैयार कर दिया था, नई सरकार [illegible] गई है। वह उसे महसूस हो रहा है, या नहीं, मालूम नहीं। [illegible] से गल्ला सस्ता करेंगे नहीं, उन्हें चस्का लग गया है; [illegible] देगी नहीं, क्योंकि मिलों से ही मुनाफे का एक [illegible] उसको भी लग गया है। तब फिर इस [illegible]

पढ़े-लिके लोगों को तो यह कहकर बहका लिया गया था कि गल्ला महंगा करके किसानों की खरीदने की ताकत बढ़ाई जा रही है। मगर वे खरीदते क्या हैं? विदेशी चीजें। वे गल्ले को महंगा बेच कर भी मालदार नहीं बन पाये। करीब-करीब वे जहां थे तहां ही हैं।

कण्ट्रोल से छुटकारा पाने का एक नया सुझाव मैं सामने रखना चाहता हूं। वह सुझाव यह है कि सरकार किसानों से मालगुजारी रुपये के बदले गल्ले की सूरत में ले। ऐसा कायदा हिन्दुस्तान में बहुत पुराने जमाने से अकबर के जमाने तक जारी था। शास्त्रों के जमाने में कभी उपज का छठा हिस्सा और कभी दसवां हिस्सा लिया जाने लगा था। इतिहास वाले ठीक-ठीक बता सकेंगे। गांवों में अब भी मजदूरों को गल्ले की उपज का सोलहवां भाग मजदूरी में दिया जाता है। कहा जाता है कि टोडरमल ने मालगुजारी गल्ले में न लेकर सिक्के में लेने का चलन निकाला था। इन्साफ की बात तो यह है कि मालगुजारी गल्ले ही में लेना चाहिए, क्योंकि किसान जमीन से गल्ला ही निकालता है, सिक्का नहीं। सरकार को देने के लिए गल्ले का सिक्का बनाना पड़ता है। इसका एक बुरा नतीजा यह भी होता है कि किसान और सरकार के बीच में एक बनिया पलता है, जो किसान को कर्जदार भी बनाये रखता है।

"अब इसे फैलाकर देखना चाहिए। फर्ज कीजिए सरकार एक बीघे की मालगुजारी दो रुपए लेती है, और एक बीघे में कम से कम दस मन पैदावार होती है, तो सरकार को दो रुपए के बदले में पैदावार का सोलहवां हिस्सा यानी पचीस सेर गल्ला मिलेगा, जो एक रुपये का साढ़े बारह सेर पड़ेगा। अब सरकार रुपए का कम-से-कम दस सेर तो बेच ही सकती है। बेचने के लिए उसे दूर भी नहीं जाना पड़ेगा। जिले में जहां-जहां गल्ला जमा हो, वह वहीं बेचा भी जा सकता है। इससे खरीददार खानेवालों की तकलीफ भी कम हो जायगी, और फजूल चीजें खरीदने की किसान की आदत भी सुधर जायगी।

"सरकार फौज के लिए लाखों मन गल्ला खरीदती है, वह भी इसी गल्ले में से अपनी जरूरत भर का ले सकती है, जो उसे सस्ता भी पड़ेगा।"

जैसा कि त्रिपाठीजी ने लिखा है, इसमें कोई शक नही कि पैसे के बदले गल्ला लिया जाय, तो किसानों को फायदा होगा। शर्त्त यह है कि अमला लोग लुटेरे न हों और वे हर हालत मे किसानों का ही फ़ायदा देखे। मगर ऐसा होता नहीं है। यह एक वजह है, जिससे खुद किसानो ने गल्ले के बदले पैसा देना पसन्द किया।

—हिन्दी। नई दिल्ली, १८।१०।१९४६। ह० से०, १०।११।१९४७।]

६८. हिन्दी और उर्दू का अन्तर

भाई रामनरेश त्रिपाठी को मैं काफी जानता हूं। एक रोज वह मसूरी मे मिलने आये थे। मुझे डर था कि हिन्दुस्तानी के प्रचार के लिए वह मुझे टोकेंगे। लेकिन बातें करने से मैंने उलटा ही पाया। वह मुझसे कहने लगे कि अगर मैं हिन्दी और उर्दू के मेल से सच्ची हिन्दुस्तानी की उम्मीद रखता हूं तो मुझे उर्दू से ज्यादा मदद मिलेगी। शर्त यह है कि उर्दू को नया जामा पहना कर बिगाड़ने की जो कोशिश हो रही है, उसे मैं उसी तरह समझ लूं जिस तरह हिन्दी को बिगाड़ने की कोशिश को समझता हूं। उस हालत मे हिन्दुस्तानी अपने आप फिर जिन्दा हो जायगी। इस पर मैंने उनसे कहा कि वह मुझको कुछ मिसालें दें जिससे मैं समझ सकूं कि उनके कहने का मतलब क्या है। सोचने लगे तो कुछ दिक्कत मालूम हुई। तब मैंने कहा कि मुझको कुछ लिखकर समझावें। उसका नतीजा यह है कि उन्होंने मुझे नीचे लिखा पत्र भेजा है—

"पूज्य बापू,

हिन्दी और उर्दू के ढांचे का अन्तर आपने मांगा था। पर ढांचा तो मुझे अनुभवगम्य-सा जान पड़ता है। उसकी कोई अलग रूप-रेखा खींच कर नहीं दिखा सकता हूं। 'हरिजन' के किसी एक पैराग्राफ का अनुवाद हिन्दी और उर्दू के किन्हीं दो योग्य लेखकों से कराकर देख लीजिए, ढांचों का अन्तर दिखाई पड़ने लगेगा। मैंने उस दिन कहा था कि उर्दू हिन्दी से अधिक परिमार्जित है। इसका एक उदाहरण लिखता हूं। हिन्दी के एक प्रसिद्ध लेखक का वक्तव्य है "समझ में न आने से घबराहट सी लगने लगती है।" उर्दू में घबराहट लगती नहीं होती है या पैदा होती है। उर्दू का कोई प्रसिद्ध लेखक कभी गलत मुहाविरा नहीं लिखेगा। और अगर लिख देगा तो उसको जबरदस्त मोरचा लेना पड़ेगा। हिन्दी में भाषा के संशोधन का आन्दोलन ही नहीं है। कोई आन्दोलन कायम करने की अपेक्षा उर्दू भाषा की पुस्तकें या लेख हिन्दी अक्षरों में छपने लगें, तो हिन्दी भाषा का बड़ा उपकार होगा। उर्दू भाषा के सुधारने और संवारने में शायरों और लेखकों ने पिछले कई सौ बरसों में जो हाथापाई की है उसका लाभ हिन्दी भाषा को स्वतः ही मिल जायगा। और इस प्रयोग से वह आप से आप हिन्दुस्तानी [illegible]।"

यह बात विचार करने लायक है। [illegible]
नहीं। हिन्दी का मेरा ज्ञान [illegible]
नहीं। इसके लिए समय [illegible]
से और आशीर्वाद से हिन्दी [illegible]

हिन्दी जानता है। ऐसे दूसरे भी हैं जिनके नाम मैं दे सकता हूं। उर्दू का ज्ञान मुझे हिन्दी से भी बहुत कम है। नागरी लिपि बचपन से जानता हूं। फारसी लिपि तो मेहनत करके सीखी है।

—ह० से०, १४।७।१९४७।]

६९. अविश्वास बुज़दिली की निशानी है

हाल में इलाहाबाद से मेरे पास एक खत आया है। भेजनेवाले भाई ने लिखा है कि थोड़े से भले लोगों को छोड़कर किसी मुसलमान पर यह एतबार नहीं किया जा सकता कि वह हिन्द सरकार का वफ़ादार रहेगा, खासकर अगर हिन्दुस्तान और पाकिस्तान में लड़ाई हुई। इसलिए थोड़े से नैशनलिस्ट मुसलमानों को छोड़कर और सब मुसलमानों को निकाल देना चाहिए। मैं कहता हूं कि हर आदमी को यही चाहिए कि जबतक कोई बात इसके खिलाफ साबित न हो, वह मुसलमानों की बात का एतबार करे। अभी पिछले हफ्ते करीब एक लाख मुसलमान लखनऊ में जमा हुए थे। उन्होंने साफ़ शब्दों में अपनी राष्ट्रभक्ति का ऐलान किया। अगर किसी की बेवफाई या बेईमानी साबित हो जाय, तो उसे गोली से मारा भी जा सकता है, गो कि यह मेरा तरीक़ा नहीं है। पर फिजूल का अविश्वास जहालत और बुज़दिली की निशानी है। इसी से साम्प्रदायिक नफ़रतें फैली हैं, खून बहे है, और लाखों बेघर-बार किये गये है। यह अविश्वास जारी रहा, तो देश के अलग अलग टुकड़े हमेशा के लिए बने रहेंगे। और अन्त में दोनों डोमिनियनें नष्ट हो जायंगी। भगवान न करें, अगर दोनों में लड़ाई छिड़ गई, तो मैं तो ज़िन्दा रहना पसन्द न करूंगा। पर जो मेरी तरह लोगों में भी अहिंसा में विश्वास होगा, तो लड़ाई नहीं होगी और सब ठीक ही होगा।

——बिड़ला-भवन, नई दिल्ली, २।१।१९४८। ह० से०, ११।१।१९४८।]

: नौ :

परिशिष्ट-भाग

१. खिलाफत-समिति की बैठक में पारित प्रस्ताव

इलाहाबाद
३ जून, १९२०

प्रस्ताव १

यह बैठक केन्द्रीय खिलाफत समिति द्वारा पूर्व-स्वीकृत चार अवस्थाओं के अनुरूप असहयोग आन्दोलन पर पुनः विश्वास व्यक्त करती है और आन्दोलन को अविलम्ब कार्य-रूप देने के लिए एक उपसमिति नियुक्त करती है जिसमें निम्न-लिखित सज्जन होंगे महात्मा गांधी, मौ० अबुल कलाम आजाद, मौलाना मुहम्मद अली, श्री अहमद, हाजी सिद्दीक खत्री, मौ० शौकत अली, डा० किचलू, और मौलाना हसरत मोहानी।

प्रस्ताव २

यह बैठक निश्चय करती है कि स्वदेशी आन्दोलन पूरी ईमानदारी से प्रारम्भ करना चाहिए और आन्दोलन को चलाने की एक योजना बनाने के लिए निम्नलिखित सज्जनो की एक उपसमिति नियुक्त होनी चाहिए। श्री छोटानी, म० गांधी, मौ० हसरत मोहानी, डा० किचलू, मौ० जफरअली खां, [illegible], सै० अब्दुर्रऊफ, मु० युसुफ शरीफ, ताजुद्दीन, मसीहुज्जमा, [illegible], शाह सुलेमान, मौ० शौकतअली, सर्व श्री उमर सोबानी, [illegible], हाजी सिद्दीक खत्री, जहूर अहमद, नूर मोहम्मद पेश, अबुल कलाम आजाद, [illegible] अकरम खां, मो० मुनीरुज्जमा, श्री याकूब हुसेन।

—अंग्रेजी। 'अमृत बाजार पत्रिका', ७।६।१९२०।]

२. श्री डगलस का उत्तर

[illegible]

सेवा में,
सम्पादक 'यंग इण्डिया'
महोदय,

१० तारीख के 'इण्डिपेण्डेण्ट' में [illegible]

के भाषण' शीर्षक जो लेख[1] प्रकाशित किया गया है, मैं उसके सिलसिले में आपसे अपने स्तम्भ में इस पत्र को स्थान देने का सौजन्य दिखाने की प्रार्थना करता हूं, क्योंकि उसमें श्री गांधी ने मुझे एक तरह से अपनी स्थिति स्पष्ट करने की चुनौती दी है। व्यक्तिगत रूप से मैं नही समझता कि कोई ऐसी चीज है जिसे मेरी तरफ़ से स्पष्ट करने की आवश्यकता हो। 'इण्डियन डेली टेलीग्राफ' को मेरा २३ अक्टूबर का पत्र यद्यपि जान-बूझ कर संक्षिप्त रूप से लिखा गया है, मेरे सामने है ही और जिनके आँखे है, वे उसमे क्या लिखा है सो देख सकते हैं। जो देखना नहीं चाहते, उन्हे समझा सकने की मै आशा नही रखता। मेरे मौन का गलत अर्थ निकाला जा सकता है। अन्यथा मैं अब इस मामले में कुछ और न कहना ही पसन्द करता। मैं जो लिख रहा हूं सो अनिच्छापूर्वक ही लिख रहा हूं, क्योंकि मैं जानता हूं कि मुझे इसमें धर्मो की बात का उल्लेख तो करना ही पड़ेगा, परन्तु मै पूरी कोशिश करूंगा कि किसी की भावनाओं और धार्मिक मान्यताओं को ठेस न पहुंचे।

श्री गांधी का कहना है कि मैने १५ अक्तूबर की सभा में विरोध नही किया और बाद में भी उनसे शिकायत नही की। मैंने ऊबकर सभा छोड़ दी थी इसलिए वहां विरोध करने की बात ही नही उठती, फिर आजकल राजनीतिक सभाओं मे श्रोताओं की जो मन:स्थिति होती है, उसे ध्यान में रखते हुए इसमें भी बहुत सन्देह है कि यदि मै विद्वान मौलानाओं के भाषणों का विरोध प्रकट करने को उठता भी तो मेरी बात सुनी जाती या नही। रही श्री गांधी से शिकायत करने की बात, सो इस मामले का सम्बन्ध मुझसे और मेरे भावी आचरण से केवल असहयोगी होने के नाते नही वरन् एक ईसाई होने के नाते है और मै उन्हें अपने आचरण का निर्देशक बनाने और उनकी सलाह लेने से इन्कार करता हूं।

श्री गांधी यह भी कहते हैं कि विवरण में एक बात गलत थी किन्तु उनके भाषण की प्रकाशित रिपोर्ट के लिए जिम्मेदार महादेव देसाई है, मै नही। बात जिस तरह पेश की गई है उससे मेरे प्रति अन्याय होता है, बस इतना ही मै गलतफहमी बचाने के लिए कहता हूं।

अब रही मौलानाओं के भाषण और उनके परिणाम-स्वरूप असहयोग आन्दोलन मे मेरे हटने की बात। २१ अक्तूबर के मेरे पत्र का सारांश यह है कि एक ईसाई का "काफ़िर" कहकर उल्लेख किया गया और उसके हत्यारे को शहीद बताया गया था और मेरी राय मे इस कथन का अभिप्राय उस हत्या के दोष का मार्जन करना था। "काफ़िर" शब्द के प्रयोग को स्वीकार तो किया गया किन्तु श्री गांधी

---

१. ३।११।१९२०। के 'यंग इण्डिया' में प्रकाशित।

अपने जवाब मे कहते है कि विशप हेवर ने हिन्दुओ को काफिर (हीदन) बताया था और आज अनेक ईसाई गिरजाघरो मे पूरी-की-पूरी मानव जाति के प्रति घृणा-पूर्ण बातें कही जाती हैं। इस प्रकार के तर्क से वकालत की "बू" आती है और मुझे आश्चर्य है कि गाधी-जैसा प्रख्यात व्यक्ति मूल विषय से इतनी दूर कैसे चला गया। लखनऊ मे १५ अक्तूबरके भाषण किसी मन्दिर, मस्जिद या गिरजाघर मे नही दिये गये थे। यदि मुझे बयान करने की अनुमति दी जाय तो ये भाषण एक राष्ट्रीय मच से दिये गये थे, जिस मंच से श्री गाधी अपने कई लेखो मे भारतीय ईसाइयो, और यहूदियो का आवाहन कर चुके है, और ये भाषण ऐरे-गैरे मजहब-भक्त मौलवियो के नही वरन् इस आन्दोलन के अग्रणी लोगो के थे। जिस सभा मे वे भाषण दिये गये थे, वह एक राजनीतिक सिद्धान्त के पोषणार्थ हुई थी। श्री गाधी ने मेरे पत्र के उस अश पर विचार नहीं किया जिनमे मैंने कहा कि "हत्यारे को शहीद बताया गया है और न उन्होंने अपने लेख मे यही कहा कि इस शब्द के प्रयोग का आगे-पीछे कभी किसी के द्वारा प्रतिवाद किये जाने की गुंजाइश नहीं थी। मैं जोर देकर कहता हूं कि इस शब्द का प्रयोग मौलाना शौकत अली ने किया, जिन्हें श्री गाधी जाहिरा तौर पर इस आन्दोलन मे अपना सिपहसालार [illegible] है। यदि गांधी यदि इसका महत्व नही समझ सकें तो फिर इसमे भी आश्चर्य की कोई बात नही है कि मेरा रुख उनकी समझ मे नहीं आया। परन्तु यह एक [illegible] स्थान राष्ट्रीय मच था, अवसर अहिंसात्मक असहयोग के [illegible] इस आन्दोलन के मुसलमान नेता थे और उनके भाषणो का [illegible] वे इस हत्या को पार्थिव दृष्टि से ठीक नही समझते किन्तु धार्मिक [illegible] मारा गया व्यक्ति एक ईसाई है और हत्यारा मुसलमान है [illegible] शहीद है। मैं श्री गाधी से इस सम्बन्ध मे सोचने की प्रार्थना करता [illegible] हत्यारे का वर्णन "शहीद" के रूप मे किया जाय तो [illegible] अवश्य है कि जिस हत्या के द्वारा हत्यारा "शहीद" [illegible] कार्य है और यह मानकर कि इसके विपक्ष मे [illegible] करना चाहिए, जनता को जोश दिलाने के लिए "शहीद" [illegible] ताकि समाज धर्मानुयायी यदि उनमे [illegible] ग्रहण करें। इस [illegible] मे हत्या के दोष [illegible] लिए अत्यन्त तीव्र विवेक-बुद्धि की आवश्यकता है [illegible] पर धार्मिक दृष्टि से विचार [illegible] भाषणो मे हत्या के दोष को [illegible] तो एक [illegible] मे हत्या को [illegible]

दृष्टि से सही बताना, एक हद तक न केवल कपटपूर्ण है वरन् अहिंसात्मक असहयोग के मंच से बहुत ही अनुपयुक्त है और सो भी इस आन्दोलन के नेताओं के द्वारा और जब किसी प्रकार के नेता उसके किसी महत्वपूर्ण सिद्धान्त का उल्लंघन करते हैं तो मेरी राय में विरोध करने वाले अनुयायियों के लिए दो ही रास्ते हैं—यदि वे अल्पसंख्यक हैं तो विरोध प्रदर्शित करके अलग हट जायं और यदि बहुसंख्यक हैं तो ऐसे नेताओं को उनके पद से हटा दें। मैं एक ईसाई होने के कारण पहली स्थिति में था और मैंने पहला रास्ता अपनाया। यदि वह वास्तव में इन भाषणों को अनुचित मानते है और एक बेजा स्थिति की कोरी शाब्दिक व्याख्या करके उसे कुछ समय तक बनाये नहीं रखना चाहते तो श्री गांधी और जनता को निर्णय करना चाहिए कि उनके खिलाफ क्या कदम उठाया जाय। श्री गांधी मुझसे प्रश्न करते है कि क्या मैं अब स्वराज्य या पंजाब के लिए राहत नही चाहता ? मेरा उत्तर है कि निश्चय ही चाहता हूं परन्तु यह भी अच्छी तरह समझ गया हूं कि वह ऐसे मुसलमान नेताओं के साथ रहकर प्राप्त नहीं हो सकती जो अवसरवादी हैं और जिन्होंने उस दिन धार्मिक उपदेश की आड़ में हिसा का उपदेश दिया था। मैं फिर अपनी ही बात दोहरा कर कहता हूं कि इन परिस्थितियों में मेरे लिए एक ऐसे आन्दोलन में भाग लेते रहना असम्भव है जिसके मुसलमान नेता एक ईसाई की निर्दय हत्या के बारे में ऐसे विचार रखते हों।

मेरी तरफ से इस सम्बन्ध में ये मेरे अन्तिम शब्द हैं।

एच० पी० डगलस

मुझे कहने की जरूरत नहीं कि श्री डगलस लक्ष्य से दूर भटक गये हैं। वह "अपने" असहयोग-आन्दोलन में एक या किसी भी मुसलमान का साथ भले ही न दें, परन्तु क्या वह एक अन्यायी सरकार से इसलिए सहयोग कर सकते हैं कि उनका सहयोगी भी उनकी समझ में उतना ही अन्यायी है ? जहां तक मौलाना शौकत अली का सम्बन्ध है, मैं उनसे अपनी स्थिति बयान करने को कह रहा हूं।
—अंग्रेजी। लखनऊ, १२।११।१९२०। यं० इं०, १७।११।१९२०।]

३. 'यंग इण्डिया' के सम्पादक को

सम्पादक
यंग इण्डिया

बरेली
१५ अप्रैल, (१९२१)

महोदय,

आपको ज्ञात है कि मौलाना मुहम्मद अली ने मद्रास प्रान्त में होने वाली एक

सार्वजनिक सभा मे खुले आम कहा है कि अगर अफगानिस्तान के अमीर ने उन लोगो के विरुद्ध सग्राम करने के लिए, जिन्होंने इस्लाम को [illegible] बना [illegible] है और जो इस्लाम के पवित्र स्थानो पर कब्जा किये बैठे है, भारत की ओर [illegible] बढाया तो मैं उनकी सहायता करूगा। मेरा खयाल है कि भारत मे इस प्रश्न के बारे मे भिन्न-भिन्न मत हैं। नरम दल वाले (नेतागण) इस प्रकार के [illegible] आन्दोलन को कुचल देने पर आमादा हैं। राष्ट्रीय दल वाले नेता भी, उदाहरणार्थ लाला लाजपतराय, श्री चितरजनदास और पण्डित मालवीय [illegible] हुए हैं। इतना ही नही, आपने भी श्री मुहम्मद अली के उक्त महत्वपूर्ण भाषण के सम्बन्ध कुछ नही कहा है। सम्राट् के दुश्मन के प्रति सहानुभूति दिखाना और खुले रूप मे उनकी सहायता करना बहुत बडी गद्दारी है, परन्तु आजकल जब सभा-मचो से स्पष्ट बातें कहने और बेलाग होकर भाषण करने का [illegible] सा पड गया है, लोगो के मन मे नेताओ का फैसला सुनने की उत्सुकता स्वाभाविक है। यह एक अत्यन्त महत्वपूर्ण प्रश्न है। समाचारपत्रो मे सार्वजनिक [illegible] लेख भेजनेवालो की—सौभाग्य से मैं भी उनमे से एक हू—[illegible] है कि (मौलाना मुहम्मद अली के भाषण के बारे मे) [illegible]

दूसरी बात जो आपसे कहना चाहता हू वह यह है। [illegible] यह है कि ईश्वर से डरनेवाले लोग या केवल [illegible] रखते हैं, असहयोगी हो सकते है? मेरा एक मित्र [illegible]—[illegible] कि मैं तो एक पक्का मुसलमान हू—और [illegible] (([illegible]) है। मेरा वह मित्र अपनी मातभूमि की वेदी पर [illegible] को न्याय दिलाने की खातिर अपना सब कुछ कुर्बान करने को तैयार [illegible] खुदा के नाम पर कुछ भी करने को तैयार नहीं है। [illegible] ही नहीं। मेरा यह मित्र खद्दर पहिनने को तैयार है [illegible] शुरू भी कर दिया है।

वह तिलक महाराज का प्रशसक है और [illegible] मुक्तहस्त से चन्दा दिया करता है। परन्तु [illegible] सूची मे उनका नाम है? अगर [illegible] आश्रम मे भरती हो सकता है?

तीसरी कठिनाई यह है कि [illegible] कार का सदस्य बना [illegible], परन्तु [illegible] सरकारी सस्थाओं मे अपने [illegible] करते हैं। आप उन्हें इस समय [illegible]

दे रहे है। क्या यह उचित है? यदि इस सरकार की नौकरी करना सामाजिक अथवा धार्मिक दृष्टि से अपराध है—मेरे खयाल से ऐसा ही है—तो आप उन्हें वहां क्यों रहने दे रहे हैं? क्या धर्म, आत्मशुद्धि और स्वालम्बन के क्षेत्र में सामयिक लाभ उठाने की नीति की गुंजाइश हुआ करती है?

अन्त में आप से एक बात और पूछना चाहता हूं—'एक साल के अन्दर ही स्वराज्य प्राप्त करने' से आपका क्या मतलब है? क्या उस वाक्य का मतलब यह है कि कांग्रेस के आगामी अधिवेशन के अवसर पर देश ब्रिटिश साम्राज्य से मुक्त और अलग हो जाने की घोषणा कर देगा? अगर ऐसा नही हो तो क्या फकत आजादी का अहसास, स्वदेशी को अपनाना और अदालतों तथा स्कूलों का अधूरा बहिष्कार इन तीन बातों से यही समझा जायगा कि भारत में स्वराज्य स्थापित हो गया? और अगर खुदा न खास्ता हमारा बहिष्कार आन्दोलन असफल रहा तो क्या उसका मतलब यह होगा कि जिनसे एक साल के वास्ते वकालत करना और स्कूलों में पढ़ना लिखना छोड़ देने को कहा गया है वे इन निषिद्ध मानी जानेवाली संस्थाओं में फिर जाने लगेंगे?

आपका

अहमद हुसैन

—अंग्रेजी। बरेली, १५।४।१९२१। यं० इं०, ४।५।१९२१।]

४. संयुक्त-प्रान्त के दमन पर नेहरू की टिप्पणी

संयुक्त-प्रान्त में सरकारी दमन—प्रमुख नेताओं की गिरफ्तारी इत्यादि—कुल मिलाकर दिखावटी ढंग का नहीं रहा है प्रत्युत वह दमन बहुत ही सुव्यवस्थित और जम कर किया गया है और थोड़े ही लोग होंगे जो उसकी चपेट में न आये हों। इस पर तीन भिन्न शीर्षकों के अन्तर्गत विचार किया जा सकता है:—

१. किसान आन्दोलन से सम्बन्वित दमन-कार्य
२. नौजवान कार्यकर्त्ताओ पर अभियोग और दण्ड
३. सुरक्षात्मक धाराओं तथा धारा १४४ का प्रयोग

१. किसान अन्दोलन

सरकार ने इस आन्दोलन को कुचल देने का अत्यन्त दृढ़ और अविरत प्रयत्न किया है। फरवरी के प्रारम्भ में रामचन्द्र, केदारनाथ और देवनारायण गिरफ्तार

किये गये। कही किसी प्रकार का उपद्रव नही हुआ जिससे सरकार का हौसला बढ गया और उसने किसानो को कुचलने के लिए बहुत जोरदार कदम उठाये। घुडसवारो के दस्ते, तोपें और पैदल सेना के दस्ते मुख्य-मुख्य जिलो मे घुमाये गये और सैनिको के लिए रसद इत्यादि मुहय्या करने को लोग मजबूर किये गये। एक स्थान पर स्कूली छात्रो से गोरे सैनिको को जबरदस्ती सलाम करवाया गया।

रायबरेली और फैजाबाद मे बहुत बडी सख्या मे किसान गिरफ्तार किये गये। उनकी गिरफ्तारी का कारण यही बताया गया कि उन्होंने गत जनवरी में की गई लूट-पाट मे भाग लिया था। इन गिरफ्तार किये गये किसानों में से अधिकांश निर्दोष थे। उनका अपराध केवल इतना ही था कि वे (गावों के) पच थे। सैकडो को जेल मे डाल दिया गया और बाद मे विना मुकदमा चलाये उन्हे छोड दिया गया। सैकडो व्यक्ति अभी भी जेल मे हैं और मुकदमे की प्रतीक्षा कर रहे है। कुछ सप्ताह पहिले फैजाबाद जेल मे लगभग ७०० किसान थे। वे विना किसी मुकदमे के [illegible] तीन माह से जेल मे थे। रिहा किये गये कैदियो का कथन है कि जो लोग जेलों मे हैं उनको इतने खराब किस्म का भोजन दिया जा रहा है कि इन जेलों मे [illegible] गया है और इस प्रकार पीडित कैदी बडी सख्या मे मौत के शिकार बन रहे हैं।

सुलतानपुर और प्रतापगढ जिलो मे किसी किस्म का उपद्रव नहीं हुआ था, परन्तु इन जिलो मे पचों और सरपचो को या तो जेल भेज दिया गया है या मुचलका देने को विवश किया गया है। इन लोगो के खिलाफ सामान्यतः यह आरोप लगाया जाता है कि 'तुम सभा के सरगना हो और लोगों को सभा मे [illegible] को मजबूर करते हो।' कभी-कभी यह भी कह दिया जाता है कि (तुम्हारे कहने से) 'नाई धोबी बन्द कर दिये गये हैं।' इन आरोपो मे [illegible] जनवरी का सम्बन्ध है, बहुत कुछ सचाई है परन्तु उसके बाद इन जिलो मे [illegible] बहिष्कार का एक भी वाकया नही हुआ है। इन [illegible] चलाये जाते हैं और सजा हुए विना नही रहती। इन [illegible] काश मामले स्थानीय पुलिस या जमीदार के [illegible] मुकदमो को दायर करनेवाले उन्ही इलाके के मुख्य लोग [illegible]

राजद्रोहात्मक सभा अधिनियम [illegible] रायबरेली मे लागू किया गया है। इस अधिनियम को [illegible] जिलो मे १४४ धारा के अन्तर्गत सभी प्रकार की सभाओं [illegible] ठहरा दिया गया था। इस हुक्म की [illegible] नही की गई। तिस पर भी राजद्रोहात्मक सभा अधिनियम [illegible]

इन जिलो मे काम करनेवाले [illegible]

किया जाता है। उनके पीछे खुफिया पुलिस के बहुत से आदमी तथा वर्दीधारी पुलिसमैनों का एक गिरोह चला करता है और जहां वे कार्यकर्त्ता जाने वाले होते है वहां वे पहिले से ही जा डटते हैं। गांववालों को धमकाया जाता है ताकि वे कांग्रेस में शरीक न हों और हमारी कोई सहायता न करें। उनसे जबानी तौर पर यह भी कहा गया है कि चर्खा चलाना गैरकानूनी है और 'महात्मा गांधी की जय' का नारा लगाना बहुत बड़ा अपराध है, कांग्रेस की मेम्बरी के कागज पर दस्तखत करना अवैध है इत्यादि इत्यादि। जिन लोगों ने (कांग्रेस के सदस्यता-पत्र पर) हस्ताक्षर कर दिये हैं उनको यह कह कर धमकाया जाता है कि तुम पर मुकदमा चलाया जायगा, और मामले को दबा देने की गरज से रिश्वतें मांगी जाती है।

पर्चे बांटने के अपराध में प्रतापगढ़ जिले के छः नवयुवक विद्यार्थी कार्यकर्त्ता जेल भेज दिये गये। उनसे जमानत जमा करने को कहा गया परन्तु उन्होंने ऐसा करने से इन्कार कर दिया। सुलतानपुर जिले में एक ऐसा ही मामला छः व्यक्तियों के विरुद्ध चलाया गया था, परन्तु अब वह वापस ले लिया गया है। राजद्रोहात्मक सभा अधिनियम को भंग करने के झूठे अपराध में दो कार्यकर्त्ताओं को छः महीने की सख्त कैद की सजा दी गई। इन दो कार्यकर्त्ताओं में से एक को पुलिस के एक सिपाही द्वारा ठोकरें लगाई गईं और पीटा गया।

किसानों को कुचल देने के लिए सरकार जो सैकड़ों तरीके अपनाये हुए है उसका अन्दाज लगाना कठिन है। जमींदार और कुछ स्थानीय लोग जो अपने को माडरेट कहते हैं, सरकार से मिल गये हैं। और उन लोगों ने सामान्य किसान की जिन्दगी भारी कर रक्खी है—इतनी भारी कि वह बेचारा पिसा जा रहा है।

संयुक्त प्रान्त के अन्य जिलों में भी किसान आन्दोलन को कुचलने का ठीक ऐसा ही, यद्यपि छोटे पैमाने पर, ढंग अख्तियार किया गया है।

२. कार्यकर्त्ताओं को सजा

बहुत से कांग्रेस व खिलाफत कार्यकर्त्ताओं पर मुकदमे चलाये गये हैं और उन्हें सजा दे दी गई है। आन्दोलन के किसी नेता को अभी तक नहीं पकड़ा गया है, परन्तु इन नेताओं के अनेक योग्य और कुशल सहायकों को जेल भेज दिया गया है। अपेक्षाकृत प्रख्यात व्यक्तियों में, जिनके खिलाफ राजद्रोह का मुकदमा चलाया गया है, देहरादून के पण्डित देवरत्न शर्मा का नाम उल्लेखनीय है।

इलाहाबाद के एक खिलाफत कार्यकर्त्ता को जिनका नाम हमीद अहमद है, अभी-अभी धारा १२१ क के अन्तर्गत आजीवन कालेपानी की सजा मिली है और

उनकी सब जायदाद जब्त कर ली गई है। उन पर यह अभियोग लगाया गया था कि उन्होने अपने एक भाषण मे फिलहाल अहिंसा के पालन की सलाह देते हुए कहा था कि यदि असहयोग आन्दोलन विफल हुआ तो मुसलमान लोग तलवार उठायेंगे।

जिलो के अनेक काग्रेस अधिकारियो को धारा १०८ या १२४ के अन्तर्गत सजा दी जा चुकी है।

कुछ स्वयसेवको को नशाबन्दी आन्दोलन के सिलसिले मे जेल भेज दिया गया।

३. सुरक्षा धाराएं तथा धारा १४४

इन धाराओ का असाधारण रूप से बड़े पैमाने पर प्रयोग किया गया है। [illegible] शायद ही कोई प्रख्यात कार्यकर्त्ता होगा जिसके नाम धारा १४४ का नोटिस न भेजा गया हो। मौलाना मुहम्मद अली तक को ऐसा नोटिस भेजा गया है। जिन-जिनके नाम यह नोटिस भेजा गया है उनमे से सौ से ऊपर की नामावली मेरे पास है, परन्तु यह सूची बहुत अधूरी है।

धारा १४४ को पूरे-पूरे जिलो पर लागू करके उन जिलो मे सभाएं करना निषिद्ध कर दिया गया है। इस धारा १४४ से राजद्रोहात्मक सभा अधिनियम का काम निकाला गया है।

एक मामला ऐसा भी है जिसमे धारा १४४ के अन्तर्गत जारी किये नोटिस का लिखित आदेश यह था कि खिलाफत की रसीदें न बेची जाय और [illegible] को इस प्रकार के किसी भी सगठन का सदस्य नहीं होना चाहिए।

सुरक्षा कानून के खण्ड, प्रेस ऐक्ट का काम दे रहे है। 'प्रताप' नामक [illegible] पत्र मे छापे गये कुछ लेखो के कारण उस पत्र के सम्पादक और मुद्रक [illegible] रुपये की जमानत तलब की गई है। जमानतें जमा कर दी गई है।

४. विविध

बन्दूक के अनेक लाइसेंस जब्त कर लिये गये है। [illegible] बर्खास्तगी की धमकी दी गई है क्योंकि उनके [illegible] शरीक थे। गांधी टोपियां पहिनना निषिद्ध [illegible] के लिए चन्दा मांगनेवालो तथा चन्दा देनेवालो [illegible] किया गया है।

कांग्रेस और किसान सभा के दफ्तरों [illegible] है।

बनारस में कुछ विद्यार्थी तथा अन्य लोगों को भी भिन्न भिन्न अवधि के कारावास की सजा सुनाई गई है।

--अंग्रेजी। यं० इं०, १८।८।१९२१।]

५. स्वामी श्रद्धानन्द के नाम मुहम्मद अली का पत्र

आदरणीय स्वामी जी महाराज,

अफसोस कि मैं अपने वादे के मुताबिक आपके बताये मामले पर कल आपको खत नही लिख सका, क्योंकि मैं नवाब साहब रामपुर से मिलने चला गया था और वहां मुझे दिन के ११ बजे से रात ८ बजे तक रहना पड़ा। मैंने 'तेज' में अभी-अभी पढ़ा है कि आपके चार आर्यसमाजी दोस्तों ने मुझसे कांग्रेस से इस्तीफा देने की मांग की है। इसे पढकर मुझे बरबस हंसी आ गई, हालांकि मैं कबूल करता हूं कि इससे मुझे बहुत दु:ख भी हुआ। मैं जानता हूं कि ऐसे कुछ लोग कुछ समय से इस तरह के कामों में लगे हुए है। लेकिन मैंने लखनऊ की आम सभा में इसके बारे में किये गये सवाल का जवाब देने के बाद यह मान लिया था कि वे लोग आगे इस तरह के काम नही करेंगे। उस सभा में "मौजूद एक हिन्दू साहब को मेरा जवाब इतना पसन्द आया कि वह जोश में आकर पुकार उठे थे कि २२ करोड़ हिन्दू आपके साथ लड़ने और मरने के लिए तैयार हैं"। किन्तु अब मैं महसूस करता हूं कि मेरी यह उम्मीद कितनी बेकार थी। हालांकि यह बहस इस समय जिस तरह चलाई जा रही है उसे देखते हुए जवाब में एक लफ्ज भी कहना बिल्कुल गैर-जरूरी हो जाता है। फिर भी चूंकि मैं मामले की पूरी सफाई का वादा कर चुका हूं इसलिए जैसा आप चाहते है मैं यह बयान दे रहा हूं।

हकीकत वही है जो मैने आप को जबानी बताई थी। तब भी मेरे कुछ मुसलमान दोस्त मुझपर बराबर यह इल्जाम लगा रहे है कि मैं हिन्दू-परस्त और गांधी-परस्त हूं। ये यह दिखाना चाहते है कि मैं मजहबी उसूलों के बारे में महात्मा गांधी का मुरीद हो गया हूं। इसमे इनका अलग मंशा यह है कि मुलसमान लोग, खिलाफत कमेटी और कांग्रेस मुझसे नाखुश हो जायं। इसलिए कई मौकों पर मैने साफ-साफ कहा है कि मजहबी मामलों में मेरा वही अकीदा है जो किसी भी दूसरे सच्चे मुसलमान का है। मैं इसलिए पैगम्बर मुहम्मद का (खुदा उनको राहत दे) मुरीद होने का दावा करता हूं, गांधीजी का नहीं। और चूंकि मै इस्लाम को खुदा की सबसे बड़ी देन मानता हूं इसलिए महात्माजी के लिए मेरे मन में मुहब्बत का जो जज्बा है उसी ने मुझे खुदा से यह दुआ मांगने के लिए कहा है कि उनकी रूह

को इस्लाम की सच्ची रोशनी से रोशन कर दे। फिर भी मैं जोर देकर अपने इस अकीदे का ऐलान करना चाहता हू कि इस्लाम, हिन्दू, यहूदी, ईसाई या पारसी किसी भी मजहब का आज ऐसा कोई भी नुमाइन्दा मौजूद नही जो महात्माजी की तरह नेकचलन और उसूलो का पक्का हो। इसी से मेरे दिल मे उनके लिए इतना अदब और मुहब्बत है। मैं अपनी मा का बहुत अदब करता हू और अगर इस्लाम की सच्ची नसीहत हर हाल में सब्र करना और एहसानमन्द रहना है तो मेरा दावा है कि कोई भी इनसान—चाहे वह धर्म का कितना भी बड़ा पण्डित हो—इस्लाम को मेरी मा से ज्यादा अच्छी तरह नही समझ सका है। इसी तरह मैं मौलाना अब्दुल बारी को अपना मजहबी रहनुमा मानता हू। उनकी मेहरो-मुहब्बत से बधा हुआ हू। मैं उनके हृदय की निश्छलता की बहुत तारीफ करता हू। लेकिन इसके बावजूद मैं यह कहने की हिम्मत करता हू कि मुझे आज तक ऐसा कोई भी इन्सान नहीं मिला जो अमल के नजरिये से महात्मा गाधी से ऊचे स्थान पर बैठने लायक हो।

लेकिन मजहबी अकीदे और अमल मे बड़ा फर्क है। इस्लाम को मानने वाला होने के नाते मैं यह मानने के लिए मजबूर हू कि इस्लाम के उसूल इस्लाम के अलावा किसी भी दूसरे मजहब को माननेवालो के उसूलो से ऊचे हैं। इस नजरिये से एक पस्त और गिरे हुए मुसलमान के मजहबी उसूल भी एक गैर-मुसलमान के मजहबी उसूलो के मुकाबिले ऊचा दर्जा पाने के मुस्तहक है—[illegible] मुसलमान कितना ही पाक और नेकचलन क्यो न हो और चाहे वह [illegible] गाधी ही क्यो न हो।

लखनऊ मे जब मेरी तकरीर शुरू होने से ठीक पहले किसी ने [illegible] गये सवाल की एक नकल जवाब के लिए मुझे दी और [illegible] मे भी बाटी थी, तब मैंने कहा था कि मैं ऐसे किसी सवाल का [illegible] नही, क्योकि मैं समझता हू कि किसी भी इन्सान को, [illegible] कर दे कि वह महात्माजी से मेरे मुकाबले ज्यादा [illegible] हतक का इल्जाम लगाने का हकदार नही हो सकता। [illegible] जवाब तब दिया, जब मुझे बताया गया कि [illegible] हतक की है, बल्कि यह है कि मैंने हिन्दू धर्म की [illegible] की रिपोर्ट आज से करीब एक महीने पहले [illegible] कहा था कि जहां तक सच्चे अमल से जुदा [illegible] यह जानता है कि बहुत ही पस्त गिरा हुआ ईसाई [illegible] मुसलमान या यहूदी से ज्यादा ऊचे दर्जे का मुस्तहक है। [illegible]

के माननेवाले भी ऐसा ही मानते है। जैसा कि मैं बता चुका हूं, मेरा जवाब इतना तसल्लीबख्श साबित हुआ कि एक हिन्दू दोस्त ने पुकार कर कहा कि "२२ करोड़ हिन्दू आपका साथ देने के लिए तैयार है।" सुननेवालों में से बहुत से हिन्दुओं ने उनकी बात पर खुशी जाहिर करते हुए "वन्देमातरम्" और 'अल्लाहो अकबर' के नारे आदि लगाये। दूसरी तरफ जो लोग उस सवाल की छपी हुई नकलें लाये थे, उनका मुंह बिल्कुल बन्द हो गया। मजे की बात तो यह है कि जिन लोगों ने मुझसे इस्तीफे की मांग की है, उनमें से एक साहब ने अभी हाल में मुझे देहरादून में एक आम सभा में आने के लिए बड़े तपाक से दावत दी थी।

ऐसी हालत में मैं इन साहबान के कहने या सोचने पर अपने किसी काम को नही छोड़ सकता। इसके अलावा यह बात पूरी तरह कांग्रेस के इख्तियार की है, फिर भी मैं यहां यह कहना चाहता हूं और आप भी मेरी इस बात की ताईद करेंगे कि हालांकि मैं इस्लाम का एक नाचीज बन्दा हूं, लेकिन अगर ये साहबान मुझे हिन्दू-मुस्लिम एकता का दुश्मन और महात्मा गांधी तथा उनके जानेमाने मजहबी अकीदे की हतक करने वाला मानते हों तो मेरा खयाल है कि ऐसा एक भी मुसलमान नही होगा जो उन्हें पूरी तरह से तसल्ली करा सकेगा।

एक बार फिर मैं कहना चाहता हूं कि यदि मैने आपसे वादा न किया होता तो मैं यह खत लिखता ही नही। क्योंकि मैं इस देश में आजकल जो कई बहसें छिड़ी हुई हैं उनमें इजाफा नही करना चाहता। मैं इस समय अपनी बेटी की मौत और अपने एक भाई और अपनी मां की खतरनाक बीमारी की वजह से जिस्मानी तौर पर इस बहस में पड़ने के नाकाबिल हूं। ऐसे वक्त जिन दोस्तों ने यह बदमजा बहस छेड़ी है मैं उन्हें उनकी अखलाकी तमीज पर ही छोड़ना अच्छा समझता हूं। मैं एक बार फिर आपकी हमदर्दी के लिए आपका शुक्रगुजार हूं और इन अल्फाज के साथ खत पूरा करता हूं कि अगर आप इसके बारे में अखबारों में कुछ लिखें तो इस खत को आप ज्यों-का-त्यों छाप सकते हैं।

आपका

मुहम्मद अली

--अंग्रेजी। यं० इं०, १९।४।१९२४।]

६. 'तेज' के सम्पादक के नाम मुहम्मद अली का पत्र

प्रिय महोदय,

स्वामीजी महाराज के खत मे एक ऐसा जुमला था जिसका मतलब लगाया

जा सकता है कि मैं हस्ती की कशमकश से निजात के लिए अच्छे काम करना जरूरी नहीं मानता। ऐसा न मैं मानता हूं न कोई भी मुसलमान। निजात की जरूरी शर्तें हैं अकीदा, अमल की पाकीजगी, दूसरो को नेक काम करने के लिए समझाना और उन्हे बुरे कामो मे अगाह करना तथा अपने किये का फल तहम्मुल के साथ भोगना। मैं मानता हू कि जिस तरह एक मुसलमान बुरे कामो के लिए सजा पाने के लायक है उसी तरह एक गैर-मुसलमान भी अपने नेकअमल के लिए अच्छे फल का मुस्तहक है। सवाल निजात के लिए जरूरी शर्तों का नही बल्कि मजहबी अकीदे और अमल मे फर्क का है। यही वजह है कि मैं महात्माजी को अपने जाने हुए सभी मुसलमानो से ऊंचा दर्जा देता हू। लेकिन अपने मजहब को सभी गैर-मुसलमानो के मजहब से ऊंचा मानना हर मुसलमान का फर्ज है। ऐसा कहकर मैंने अपने ऊपर लगाये गये 'गाधी-परस्ती' के इल्जाम का जवाब दिया था। मेरा मशा बिल्कुल यही था, हिन्दू भाइयो के जज्बात को चोट पहुचाना या महात्मा गाधी की हतक करना नही। इस पर अगर किसी को शिकायत हो सकती है तो मेरे अपने मजहब के लोगो को ही हो सकती है, क्योंकि मैं उनमें से किसी को भी अमल की पाकीजगी के नजरिये से महात्मा गाधी के बराबर नहीं मानता।

मुहम्मद अली

—अग्रेजी। य० इ०, १०।४।१९२४।]

७. डा० भगवानदास का पत्र

सम्पादक
'यंग इण्डिया'

महोदय,

आपने १७-४-१९२४ के 'यंग इण्डिया' में [illegible] से जो लेख लिखा है, उसमें १३० पृष्ठ पर [illegible]

"पर यदि हम जनता के लिए स्वराज्य [illegible] के बदले किसी दूसरे दल का जो शायद उनसे भी अधिक [illegible] पित करना नहीं चाहते—तो हम [illegible] ही नहीं, जान को हथेली पर [illegible] करना होगा।"

दूसरा वाक्य है —

"यदि हमें स्वराज्य में नगर-जीवन को ग्राम-जीवन के अनुरूप बनाना हो तो नगर-जीवन का रंग-ढंग बदलना ही होगा।"

मैं बड़ी संजीदगी के साथ आपका और 'यंग इण्डिया' के सभी पाठकों का ध्यान इन दो शर्तों से निकलने वाले नतीजों पर और पूरे असहयोग आन्दोलन तथा स्वराज्य-संघर्ष पर पड़ने वाले इनके अत्यन्त ही महत्वपूर्ण प्रभाव की ओर आकर्षित करना चाहता हूं। स्वराज्य के लिए विभिन्न दल अपने विभिन्न तरीकों से संघर्ष कर रहे हैं। इन दलों ने कांग्रेस के नये सिद्धान्त, जिसमें "स्वराज्य" शब्द का प्रयोग किया गया है, को स्वीकार कर लिया है। लेकिन इस नये सिद्धान्त में "स्वराज्य" शब्द की कोई निश्चित ,सुस्पष्ट परिभाषा नही दी गई है, न यही बतलाया गया है कि स्वराज्य किस प्रकार का होगा।

हममें से कुछ लोगों का पक्का विश्वास है कि असहयोग आन्दोलन की प्रगति में बाधक और उसे प्रभावहीन बनानेवाली सभी त्रुटियों में से अनेक त्रुटियों की जड़ यही अनिश्चित और अस्पष्ट शर्तें हैं। जबतक ये शर्तें अस्पष्ट रहेंगी तबतक किन्ही भी दो वर्गो, किन्हीं भी दो सिद्धान्तों, किन्ही भी दो जातियों के बीच परस्पर विश्वास पैदा हो ही नहीं सकेगा, बल्कि कहा तो यह भी जा सकता है कि तबतक स्वराज्य चाहने वालों, उसके स्वरूप के बारे में भले ही भिन्न-भिन्न मत रखनेवाले, किन्हीं दो कार्यकर्त्ताओं में भी परस्पर कोई विश्वास पैदा नहीं हो सकेगा।

कारण यह है कि किसी शब्द का सही और पूरा-पूरा अर्थ समझे बिना उस एक शब्द के आधार पर हासिल की गई एकता बड़ी ही अवास्तविक किस्म की एकता है। इसलिए वह लगातार टूटती चली जा रही है। वह राजनीतिक बहस-मुबाहिसों में भाषा और विचारगत उग्रता और हिन्दू-मुस्लिम दंगों के दौरान हिंसात्मक कार्यो का रूप धारण कर लेती है। और इसलिए आन्दोलन अनेक दिशाओं में असफल होता जा रहा है। ऐसी एकता से न तो अविचल निष्ठा पैदा हो रही है, न अनुशासन सध रहा है, न संगठन मजबूत हो रहा है और न रचनात्मक या ध्वंसकारी किसी भी प्रकार के किसी व्यवस्थित कार्य को ही बल मिल रहा है।

उद्धृत किये गये पहले वाक्य के तुरन्त बाद, आप कहते हैं :—"आज तक हजारों ग्रामीण हमें जीवित रहने के लिए मरे-खपे हैं। अब शायद उन्हें जीवित रखने के लिए हमें मरना पड़े।" लेकिन स्वराज्य जिस 'जनता' के लिए स्थापित किया जाना है, उसमें 'हम लोग' (शहरी लोग) भी तो शामिल हैं। क्या हम लोग शामिल नही ? और शहरी लोगों का एक बड़ा भाग उतना ही निर्धन है जितना कि गांवों के लोग। क्या ऐसा नही है ?

शहरी लोगो को कुछ ऐसा लगता रहा है कि असहयोग-आन्दोलन से मिलने-वाले स्वराज्य का अर्थ कोई नही जानता, पर वह शायद शहरो को मिटा देगा। (उसके विरुद्ध उठाये जानेवाले "बोल्शेविज्म" के नारो को देखिए) इसलिए स्वाभाविक ही है कि इससे उनके हृदयो मे स्वराज्य के प्रति कोई उत्साह पैदा नही होगा। तिलक स्वराज्य-कोष के लिए अधिकाश चन्दा शहरो ने ही [illegible] है, बम्बई इसमे सबसे आगे रहा है। चन्दा ऐसे लोगो ने दिया है जिनके धन्धे और जीविका के साधनो को असहयोग आन्दोलन का रचनात्मक और [illegible] कार्यक्रम प्रत्यक्ष या परोक्ष रूप से क्षीण ही बनायेगा, उनकी जड़ें हिला देगा। फिर भी शहरी लोगो की ओर से इतना चन्दा मिलने का अगर एक कारण तो यह है कि सभी वर्गों के भारतीय आपके व्यक्तित्व के प्रति श्रद्धालु है और उसका दूसरा आशिक कारण है उनकी यह आशा कि आखिरकार वह [illegible] शहरो के खिलाफ कोई जिहाद नही बोल देगा, वह शहरो की बुराइयो को ही दूर करने की कोशिश करेगा।

शहरो के लोप का अर्थ होगा लक्ष्मी और सरस्वती का लोप। और सब खलिहानो मे क्रीडा करती गौरी अन्नपूर्णा मानवीय जीवन को [illegible], विज्ञानपरक बुद्धि से सम्पन्न और इसीलिए विविधतापूर्ण बनाने मे असमर्थ होगी, फिर चाहे हमारे खलिहान कितने ही धान्यपूरित क्यो न हो। आवश्यकता इस बात की है कि सभी कालो मे सभी देशो और धर्मों के मानवो-द्वारा [illegible] इन तीनो दैवी शक्तियो को सन्तुलित अनुपात दिया जाय। और इनमे से किसी एक का भी त्याग न किया जाय। रामराज्य मे यद्यपि [illegible] से [illegible] गई थी तथापि अयोध्या फली-फूली थी।

बाद के एक अनुच्छेद मे आपका यह वाक्य पढ़कर हमारे मन को [illegible] मिली कि "नगर-जीवन का रंग-ढग बदलना ही होगा।' [illegible] मन मे जो आशकाए पैदा कर दी थी वे इतने पुष्ट [illegible] पूरी तौर पर आश्वस्त तो नही होगे।

अधिकाश मानवता सदा से "[illegible]" "[illegible]" [illegible] "आत्म-संयम" की ही सहज आकाक्षा [illegible] रही है। अब आप [illegible] हमारे [illegible] स्वराज्य की कोई ऐसी योजना नहीं [illegible] मिट जाय कि किसी भी [illegible] प्रकार की और [illegible] किसी को [illegible] तबतक किसी भी वर्ग को [illegible]

के लिए किये जानेवाले प्रयत्नों में सच्ची एकता पैदा नहीं हो सकेगी और इसीलिए सच्चा स्वराज्य कभी स्थापित नहीं किया जा सकेगा।

'यंग इण्डिया' में स्थान की मर्यादा है और यह बहुत क़ीमती है, इसीलिए मुझे उसमें बहुत अधिक स्थान नहीं घेरना चाहिए, हालांकि मेरा हार्दिक विश्वास है कि 'यंग इण्डिया' के स्तम्भों में अभी तक जितने भी विषयों के बारे में लिखा गया है, उसमें यह विषय सबसे अधिक महत्वपूर्ण या परिणाम की दृष्टि से सर्वाधिक दूरव्यापी है, अर्थात् भारत को किस प्रकार के स्वराज्य की जरूरत है, यही सर्वाधिक महत्व का विषय है।

मैं गत तीन वर्षों से इस विषय की ओर मौके-बेमौके आम जनता और (बनारस की स्थानीय कमेटी से लेकर अखिल भारतीय कमेटी तक) सभी स्तरों पर कांग्रेस कमेटियों और अलग-अलग नेताओं का ध्यान आकर्षित करता रहा हूं। आपकी गिरफ्तारी के दिन तक और फिर आपकी रिहाई के बाद से भी मैं आपके पास इस सम्बन्ध में पत्र और प्रकाशित सामग्री भेजता रहा हूं। मैं इसके सम्बन्ध में बार-बार अपनी राय व्यक्त कर चुका हूं और मैं यहां से उसे दोहराऊंगा नहीं। १६२३ के आरम्भ में थोड़े समय के लिए मुझे काफी आशा बँध गई थी कि इस विषय पर यथा-योग्य विचार किया जायगा, इसलिए कि देशबन्धु दास-जैसे प्रमुख नेता ने कुछ समय तक इस विषय में दिलचस्पी ली थी। लेकिन उनकी दिलचस्पी बहुत ही थोड़े समय तक रही। और मुझे भी ऐसा लगने लगा था कि अभी इस विषय की चर्चा के लिए "उपयुक्त समय" नहीं आया है।

परन्तु आपके लेख में उपर्युक्त दो महत्वपूर्ण शर्तों पर मेरी नजर पड़ी। उससे मुझे यह एक और प्रयास करने की प्रेरणा मिली।

हम कुछ लोगों को इस विषय में बहुत ही दिलचस्पी है। इसलिए यदि आप 'यंग इण्डिया' के स्तम्भों में इसके बारे मे कुछ लिखें—ऐसा कुछ लिखें जो निराशा के अंधेरे में प्रकाश की किरण-जैसा हो—तो "हम कुछ लोग" अत्यन्त ही कृतज्ञ होंगे।

आपका

भगवानदास

--अंग्रजी। यं० इं०, ८।५।१९२४।]

८. डा० भगवानदास का पत्र

बनारस
५ जून, १९२४

सम्पादक
'यंग इण्डिया'

प्रिय महोदय,

लाखो अन्य पाठको की भाति, मैंने भी 'यग इण्डिया' के २९।५।१९२४ के अक मे "हिन्दू मुस्लिम तनाव कारण और उपचार" शीर्षक लेख मे दिये आपके गुरु-गम्भीर तर्कों को अत्यन्त सावधानी के साथ और पूरे ध्यान से पढ़ लिया है। उसमे अनेक सुविदित सचाइयो (जिनको जनता ने अभी तक इतनी गहराई से नही समझा था) को सुबोध, सहज और सुन्दर ढग से, स्पष्टवादिता के साथ, प्रस्तुत किया गया है। अब आपकी अत्यन्त ही विश्वसनीय सत्यनिष्ठा से प्रकाशित हो जाने पर इन सच्चाइयो को (अनुवाद होने पर) लाखो लोग इनकी पूरी गहराई के साथ समझ लेंगे, जो वे अब तक नही कर पाये थे। पर मुझे लगता है कि इस समस्या का निदान अधिक गहराई से करने और इसके उपचार के लिए और भी उग्र किस्म का नुस्खा तलाश करने की जरूरत है। मैं इसीलिए पादटिप्पणी में कही गई आपकी बात के मुताबिक कुछ उक्तियो के सम्बन्ध मे कुछ प्रश्न पूछना चाहता हू। आशा है कि आप इनका और अधिक विशद निरूपण करेंगे।

(१) आपने पृष्ठ १७६ पर[1] कहा है—"मेरे निजी अनुभव से भी [illegible] की पुष्टि होती है कि मुसलमान आमतौर पर धीगाधीगी करनेवाला और [illegible] दब्बू होता है।" क्या यह बात हमेशा और हर जगह [illegible] और यदि यह बात हमेशा हो या कभी-कभी ही ऐसा है तो क्यो है?

इन प्रश्नो का ठीक-ठीक पूरा उत्तर पाये बिना, [illegible] अहिंसात्मक ढंग से वीर बनने की सलाह-भर देने से कोई [illegible]।

क्या भारत मे रहनेवाले मुसलमान और हिन्दू [illegible] दो अलग-अलग नस्लो के लोग है? बिलकुल [illegible] है—नही। ९९ प्रतिशत मुसलमानो ने पूर्व [illegible] इधर हाल ही मे धर्म-परिवर्तन किया है।

क्या हिन्दू मंदिरो, [illegible], गुरुद्वारो, [illegible]

1. यहाँ यंग इण्डिया की पृष्ठ-संख्या का हवाला दिया गया है।

के लिए किये जानेवाले प्रयत्नों में सच्ची एकता पैदा नहीं हो सकेगी और इसीलिए सच्चा स्वराज्य कभी स्थापित नही किया जा सकेगा।

'यंग इण्डिया' में स्थान की मर्यादा है और यह बहुत क़ीमती है, इसीलिए मुझे उसमें बहुत अधिक स्थान नही घेरना चाहिए, हालांकि मेरा हार्दिक विश्वास है कि 'यंग इण्डिया' के स्तम्भों में अभी तक जितने भी विषयों के बारे में लिखा गया है, उसमें यह विषय सबसे अधिक महत्वपूर्ण या परिणाम की दृष्टि से सर्वाधिक दूरव्यापी है, अर्थात् भारत को किस प्रकार के स्वराज्य की जरूरत है, यही सर्वाधिक महत्व का विषय है।

मैं गत तीन वर्षों से इस विषय की ओर मौके-बेमौके आम जनता और (बनारस की स्थानीय कमेटी से लेकर अखिल भारतीय कमेटी तक) सभी स्तरों पर कांग्रेस कमेटियों और अलग-अलग नेताओं का ध्यान आकर्षित करता रहा हूं। आपकी गिरफ्तारी के दिन तक और फिर आपकी रिहाई के बाद से भी मैं आपके पास इस सम्बन्ध में पत्र और प्रकाशित सामग्री भेजता रहा हूं। मैं इसके सम्बन्ध में बार-बार अपनी राय व्यक्त कर चुका हूं और मै यहां से उसे दोहराऊंगा नहीं। १९२३ के आरम्भ में थोड़े समय के लिए मुझे काफी आशा बँध गई थी कि इस विषय पर यथा-योग्य विचार किया जायगा, इसलिए कि देशबन्धु दास-जैसे प्रमुख नेता ने कुछ समय तक इस विषय में दिलचस्पी ली थी। लेकिन उनकी दिलचस्पी बहुत ही थोड़े समय तक रही। और मुझे भी ऐसा लगने लगा था कि अभी इस विषय की चर्चा के लिए "उपयुक्त समय" नहीं आया है।

परन्तु आपके लेख में उपर्युक्त दो महत्वपूर्ण शर्तों पर मेरी नजर पड़ी। उससे मुझे यह एक और प्रयास करने की प्रेरणा मिली।

हम कुछ लोगों को इस विषय में बहुत ही दिलचस्पी है। इसलिए यदि आप 'यंग इण्डिया' के स्तम्भों में इसके बारे में कुछ लिखें—ऐसा कुछ लिखें जो निराशा के अंधेरे में प्रकाश की किरण-जैसा हो—तो "हम कुछ लोग" अत्यन्त ही कृतज्ञ होंगे।

आपका
भगवानदास

——अंग्रेजी। यं० इं०, ८।५।१९२४।]

मे वेहतर है। यदि इस्लाम मे मारकाट कुछ कम होती और उसका दार्शनिक पक्ष अधिक सबल होता तो वह हिन्दू धर्म के सभी अधिक उन्नत स्वरूपो मे तो निश्चित रूप से अच्छा ही होता।

(२) आपने पृष्ठ १८३ पर कहा है "अगर हिन्दू अपना घर सँभाल लें तो मुझे तनिक भी सन्देह नही कि इस्लाम मे भी उसकी उदार परम्पराओ के योग्य प्रतिक्रिया अव य दिखाई देगी। हिन्दुओ को भीरुता या वुजदिली छोड देनी चाहिए।" कृपया हिन्दुओ को जरा अधिक स्पष्ट शब्दो मे वतलाइए कि वे अपने अन्दर की वुराइया कैसे दूर करें, वुजदिली को कैसे छोडे। क्या हिन्दू धर्म के व्यावहारिक स्वरूप मे उसके मर्म मे व्याप्त व्याधि ही आज उसके पतन का मूल कारण नही है, यह चौकावन्दी की मनोवृत्ति ही उसकी मूल व्याधि नही है? वनारस के कई पण्डितो ने जवरन मुसलमान वनाये गये, मलावार के हिन्दुओ को फिर से हिन्दू वनाने की मजूरी देने की व्यवस्था पर हस्ताक्षर करने से इनकार कर दिया था। उन लोगो को इस्लाम की छूत लग गई थी और इसलिए उनको सदा के लिए हिन्दू धर्म से अलग मान लिया गया था।

यदि मैं पडोसी के नौकर को अपने यहा वुलाना चाहू और अगर मेरे छू देने भर से वह मेरे पडोसी के विल्कुल काम का न रह जाता हो, और इस प्रकार मुझे मिल सकता हो तो उसे अवश्य ही छू दूगा। उसे छू देने का मुझे वडा प्रवल प्रलोभन होगा। हिन्दुओ और मुसलमानो के वीच जैसे झगडे-फसाद होते हैं, वैसे ईसाइयो और मुसलमानो के वीच क्यो नही होते? सच तो यह है कि ईसाई लोग मुसलमानो और हिन्दुओ दोनो ही को ईसाई वना लेते हैं, फिर भी मुसलमान उनसे इतने नाराज नही होते जितने कि वे हिन्दुओ के शुद्धि और सगठन-सम्वन्धी मार्गो पर नाराज होते हैं। ऐसा क्यो? आपने पृष्ठ १८० पर विल्कुल ठीक कहा है कि असल मे शुद्धि और सगठन का तरीका—उनका अपना प्रदर्शन, गाजे-वाजे और ढोल पीटना इत्यादि ही झगडे की जड हैं। यदि हिन्दुओ मे, विशेष कर [illegible] पुजारियो मे थोडी ज्यादा समझदारी हो, ईमानदारी और [illegible] पाखण्डपूर्ण दिखावे और आत्मघाती धूर्तता का [illegible] केवल इतना कह सकते है कि जो भी चाहे अपने-आपको [illegible] मिलते-जुलते खान-पान, स्वभाव और तौर-तरीको [illegible] वैठ कर भोजन कर सकता है। फिर कोई [illegible] मात्र स्पर्श से दूषित होनेवाली पवित्रता [illegible] फिर ऐसे-ऐसे हिन्दुओ का धर्म-परिवर्तन [illegible] कोई प्रेरणा रह जायगी और न कोई [illegible]

मराठों, अहीरों, नायरों, तैलंगों और असैनिक किस्म के स्ट्रेचर ढोने वाले कहारों ने भी मुसलमान सैनिकों, ईसाई सैनिकों या यूरोपीय सैनिकों से कोई कम शौर्य दिखाया है? निश्चय ही नही।

तब हम आपके इस कथन को क्या अर्थ लगायें कि "ज्यादातर झगड़ों में हिन्दू लोग ही पिटते है।" यदि हिन्दुओं और मुसलमानों के बीच होनेवाले केवल धार्मिक दंगों या भारत में होनेवाले व्यक्तिगत झगड़ों को ही लें तो सिर्फ उस परिस्थिति में हम आपके कथन को अक्षरशः सही मान सकते है। क्या यही बात नही है? आपके अगले वाक्य में यह बात बिल्कुल स्पष्ट हो जाती है— "रेलगाड़ियों में, रास्तों पर, तथा ऐसे झगड़ो का निपटारा करने के जो मौके मिले हैं उनमें मैंने यही देखा है।" अब प्रश्न उठता है—ऐसा क्यों हुआ कि दोनों में जातिगत, वंशगत कोई अन्तर न होते हुए एक में जन्मजात शौर्य (या आततायीपन जो एक बिल्कुल दूसरी ही चीज है) दूसरों में जन्मजात बुजदिली न होते हुए भी उन्होंने इन छोटे-छोटे झगड़ों और उद्दण्डतापूर्ण प्रदर्शनों में बुजदिली दिखाई जबकि मुसलमानों ने शौर्य या आततायीपन दिखाया?

क्या इन दोनों धर्मों की वर्तमान स्थिति में ही कोई ऐसी बात है कि जो हिन्दुओं को इतना बुजदिल और मुसलमानों को बहादुर बना देती है? क्या अलग चौका खीचकर रहने की बिडम्बनापूर्ण मनोवृत्ति, ऊंची और ,नीची जातियों की आनुवंशिकता की धारणा से उत्पन्न आत्मसेवी स्वार्थपरता या दम्भ और दिखावटी धर्मनिष्ठा का पाखण्ड इनका मूल हो सकता है? क्या यह हो सकता है कि इस पाखण्ड ने ही हिन्दुओं की पारस्परिक सहानुभूति की भावना नष्ट कर दी हो और ऐसे झगड़ों में एक हिन्दू दूसरे हिन्दू की मदद से हाथ खीच लेता है और इस प्रकार हिन्दू, असहायता के भान के कारण बुजदिल बन जाते है और मुसलमान का लोकतान्त्रिक धर्म पारस्परिक सहायता को सुनिश्चित बनाकर उसे बहादुर बना देता है?

तथाकथित दलित वर्गो को ही अछूत नहीं माना जाता, हिन्दुओं की तमाम जातियां और उपजातियां और उनकी उपजातियां किसी-न-किसी तरह एक दूसरी को कम या ज्यादा अछूत मानती हैं। एक दूसरे के खिलाफ इस तरह चौकाबन्दी और इसीलिए उपेक्षा और अविश्वास को जन्म देनेवाला कोई भी धर्म बुजदिलों को ही पैदा कर सकता है और ऐसे बुजदिलों का भाग्य यही हो सकता है कि बहादुर लोग उन को हड़प कर जायं क्योंकि बुजदिलों को लेकर लालच पैदा होगी और दूसरे लोग बहादुर बनने ही लगेंगे। आज इस्लाम भी पतनावस्था में है, पर पतनावस्था में पहुंचा हुआ भी वह आज के हिन्दू धर्म से स्पष्ट ही कुछ मामलों

मे बेहतर है। यदि इस्लाम मे मारकाट कुछ कम होती और उसका दार्शनिक पक्ष अधिक सबल होता तो वह हिन्दू धर्म के सभी अधिक [illegible] स्वरूप मे तो निश्चित रूप से अच्छा ही होता।

(२) आपने पृष्ठ १८३ पर कहा है "अगर हिन्दू अपना घर सँभाल ले तो मुझे तनिक भी सन्देह नही कि इस्लाम मे भी उसकी उदार परम्पराओ के [illegible] प्रतिक्रिया अवश्य दिखाई देगी। हिन्दुओ को... भीरुता या बुजदिली [illegible] देनी चाहिए।" कृपया हिन्दुओ को जरा अधिक स्पष्ट शब्दो मे बतलाइए कि वे अपने अन्दर की बुराइया कैसे दूर करें, बुजदिली को कैसे छोडे। [illegible] हिन्दू धर्म के व्यावहारिक स्वरूप मे उसके मर्म मे व्याप्त व्याधि ही आज उसके पतन का [illegible] कारण नही है, यह चौकाबन्दी की मनोवृत्ति ही उसकी मूल व्याधि नही है? बनारस के कई पण्डितो ने जबरन मुसलमान बनाये गये, मलावार मे हिन्दुओ को फिर से हिन्दू बनाने की मजूरी देने की व्यवस्था पर हस्ताक्षर करने से इनकार कर दिया था। उन लोगो को इस्लाम की छूत लग गई थी और [illegible] सदा के लिए हिन्दू धर्म से अलग मान लिया गया था।

यदि मैं पडोसी के नौकर को अपने यहा बुलाना चाहूं और अगर [illegible] भर से वह मेरे पडोसी के बिल्कुल काम का न रह जाता हो, और [illegible] मिल सकता हो तो उसे अवश्य ही छू दूगा। उसे छू देने का मुझे [illegible] होगा। हिन्दुओ और मुसलमानो के बीच जैसे झगडे [illegible] होते है, [illegible] और मुसलमानो के बीच क्यो नही होते? सच तो यह है कि ईसाई [illegible] और हिन्दुओ दोनो ही को ईसाई बना लेते है, फिर भी मुसलमान [illegible] नाराज नही होते जितने कि वे हिन्दुओ के शुद्धि और [illegible] नाराज होते है। ऐसा क्यो? आपने पृष्ठ १८० पर [illegible] असल मे शुद्धि और सगठन का तरीका—[illegible] ढोल पीटना इत्यादि ही झगडे की जड है। यदि [illegible] पुजारियो मे थोडी ज्यादा समझदारी हो, ईसाइयो [illegible] पाखण्डपूर्ण दिखावे और आक्रामक [illegible] केवल इतना पर [illegible] मिलते-जुलते खान-पान, [illegible] बैठ कर भोजन कर [illegible] मार [illegible] फिर [illegible] कोई प्रेरणा [illegible]

अपने-आप में वहुत ही अशक्त और कायरतापूर्ण है क्योंकि वह अपने स्पर्श से दूसरों को शुद्ध करने की वजाय दूसरों के स्पर्श-मात्र से अशुद्ध और नष्ट हो जाता है) इस दम्भ का त्याग कर देने पर मुसलमान और हिन्दू लोग फिर से आपस में मुक्त और मैत्रीपूर्ण मानवों की तरह वर्ताव करने लगेंगे; जव वे यह समझ लेंगे या कम से कम महसूस कर लेंगे कि सभी लोग समान हैं; वे सवसे पहले इन्सान और वाद में हिन्दू या मुसलमान हैं। मनुष्यों के रूप में वे समान हैं और उनको अपनी मर्जी के मुताविक हिन्दू या मुसलमान या ईसाई या अन्य किसी धर्म को अपनाने या छोड़ने की स्वतन्त्रता है, ठीक उसी तरह जैसे व्यक्ति को अपने कपड़े चुनने की स्वतन्त्रता रहती है। और चूंकि एक ही ईश्वर है इसलिए उनको एक दूसरे के साथ भाइयों की तरह नेकी और ईमानदारी का वर्ताव करना जरूरी है। इतना महसूस कर लेने पर वे जरा-सी वात पर एक दूसरे के सिर फोड़ने की वात नहीं सोचेंगे।

हिन्दुओं के पास ऐसा कोई समुचित कारण नहीं है कि वे ऐसा एलान न करें। शुद्ध विचार के साथ खानपान और विवाह 'पवित्रता' के मुख्य तत्व माने जाते हैं; ये सचमुच हैं भी। मद्यपान के मामले में इस्लाम हिन्दू धर्म की अपेक्षा अधिक 'शुद्ध' है, क्योंकि सैद्धान्तिक रूप से तो इस्लाम हर नशीले पेय की मनाही करता है जवकि हिन्दू धर्म हालांकि उसकी निन्दा करता है पर इतनी सख्ती से मनाही नहीं करता। आहार के मामले में दोनों ही में मांस-मछली और मुर्गा भक्ष्य हैं; इस्लाम गाय के मांस पर आग्रह करता है पर सुअर के मांस के खिलाफ है। हिन्दू धर्म में सुअर के मांस की अनुमति है, पर गाय का मांस अक्षम्य है। ईसाई धर्म के लोग दोनों का मांस खाते हैं और मद्यपान भी करते है। विवाह के मामले में हिन्दू धर्म और इस्लाम दोनों ही सैद्धान्तिक रूप से और एक हद तक व्यावहारिक रूप से भी वहुपत्नी-प्रथा की अनुमति देते हैं। तव फिर दोनों में यह हद दर्जे का असहयोग, यह स्पर्श-मात्र से धर्म नष्ट होने या कम-से-कम स्नान की आवश्यकता महसूस करने की भावना क्यों?

इन विषयों के सम्वन्ध में आप समय-समय पर विल्कुल खरी और सीधी-सीधी भाषा में वार-वार अपने विचार व्यक्त करते रहे हैं, यह हिन्दुओं के लिए वड़ा ही जरूरी जान पड़ता है।

(३) आपने पृष्ठ १७७ पर कहा है—"वीज हमने वोये थे, फसल गुण्डों ने काटी।" हमने किस तरह और क्यों वीज वोये? दोनों सम्प्रदायों के प्रतिष्ठित, सम्माननीय लोग आपस में पाखण्डपूर्ण व्यवहार क्यों करते जा रहे है? वे सच्चे हृदय से शान्ति के लिए प्रयत्न क्यों नहीं करते? इसका कारण दोनों में अन्तर्निहित महज दुःप्रवृत्ति मात्र है या फिर अभी तक दोनों को एक दूसरे को और दोनों को

समान उद्देश्यो को निकट मे समझने के लिए प्रेरणा देने का [illegible] नहीं किया गया है।

(४) आपने पृष्ठ १७७ पर कहा है "तनाव का दूसरा [illegible] यह है कि हमारे अच्छे से अच्छे लोगो के भीतर भी अविश्वास की भावना [illegible] जा रही है।" अविश्वास है ही क्यो ? और वह बढता क्यो जा रहा है ? क्या इसका एक कारण यह भी हो सकता है कि स्वराज्य और धर्म [illegible] नही समझा गया है, कि इन दो अत्यन्त ही महत्वपूर्ण और परस्पर [illegible] के ठीक-ठीक अर्थ के बारे मे परस्पर सहमति नहीं है, कि इन अत्यन्त ही [illegible] महत्व के विषय के बारे मे भी सभी कार्यकर्त्ताओ को सहमत कराने का कोई प्रयास नही किया गया है—हालाकि सभी कार्यकर्तागण यही नारा [illegible] जाते हैं कि हम सब स्वराज्य चाहते हैं, हम सब ईश्वर को पाना चाहते हैं ?

(५) आपने पृष्ठ १७९ पर लिखा है "हम सब एक दूसरे की [illegible] बातें खोजकर—काम करें।" अनुकूल बातो का आप क्या अर्थ लगाते हैं ? क्या दो व्यक्तियो के बीच स्वभाव, रुचि, आदतो इत्यादि के आधार पर [illegible] मैत्री स्थापित करने के उद्देश्य से सम्पर्क या दोनो सम्प्रदायो के आधार पर [illegible] जिक सुविधाओ के लिए सम्पर्क या राजनीतिक दलों [illegible] बन्धन के लिए सम्पर्क या आप धर्मो के बीच वात्सल्य [illegible] और सम्बद्धता के लिए सम्पर्क स्थापित करना चाहते हैं ?

(६) पृष्ठ १८२ पर आपने विभिन्न राजनीतिक मामलों [illegible] "हकीम अजमल खा के हाथ मे कलम सौंप देने" की बात कही है। [illegible] उन्ही के नाम का उल्लेख क्यो किया ? क्या [illegible] हैं, या कम-से-कम महसूस करते हैं (जैसा कि कुछ अन्य लोगो [illegible] है) कि हकीम साहब इन्सान पहले और मुसलमान बाद मे हैं, [illegible] न्यायप्रिय और उदारचरित मनुष्य हैं और [illegible] मामले मे कट्टरपन्थी नहीं हैं ? भगवान न करे, [illegible] हो जाय तो क्या आप उनके स्थान पर [illegible] क्या इन राजनीतिक समस्याओ के [illegible] रास्ता रह गया है कि [illegible] एक ऐसे मनुष्य के हाथ मे [illegible] के लोगो को नगरो मे [illegible] दूसरा अधिक [illegible] और [illegible] पुरुषो की एक कोई समस्या [illegible]

सदस्यों की संख्या को लोक-संसद के सदस्यों, विधान सभाओं के सदस्यों, पंच अदालतों और सर्वोच्च अखिल भारतीय पंचायत के सदस्यों में से लोगों का चुनाव करके एक सुसंगत स्तर पर कायम नहीं रखा जा सकता ?

(७) पृष्ठ १८२ पर आप कहते है "हिन्दू-मुस्लिम एकता का मतलब ही स्वराज्य है। जबतक इस अभागे देश में हिन्दुओं और मुसलमानों के बीच हार्दिक और स्थायी एकता कायम नही हो तो तबतक मुझे कोई रास्ता दिखाई नही देता।" और हर एक आदमी यही बात कहता है। परन्तु हम ऐसी एकता स्थापित कैसे करेंगे? क्या दोनों सम्प्रदायों के लोगों से बार-बार यही कहकर कि एक हो जाओ—एक हो जाओ, आपस में लड़ो मत, तुम गोवध पर और तुम गाजे-बाजे पर आपत्ति मत करो ? ऐसा क्यों है कि सोते-जागते ऐसी ताकीदों के बाद भी लोग एक नही होना चाहते, आपस में लड़ते रहते है और एक-दूसरे के कामो पर आपत्ति करते रहते हैं और सचमुच यह प्रवृत्ति दिन-दिन बढ़ती जा रही है? क्या आप इस बात से सहमत नही कि सम्पर्क स्थापित करने के मुद्दों या कहिए कि सभी धर्मों के समान तत्वों को सार्वजनिक तौर पर अधिक स्पष्ट शब्दो में अधिक प्रयत्नपूर्वक बार-बार बतलाना कहीं ज्यादा कारगर साबित होगा?

आपका,

भगवानदास

—अंग्रेजी। यं० इं०, १९।६।१९२४।]

९. युक्त-प्रान्त में खादी

भाई शंकरलाल बैंकर लिखते है—

"हिन्दुस्तान के अन्य प्रान्तों की तरह इस प्रान्त में भी खादी-कार्य के लिए अच्छी अनुकूलता है और यहां आज भी कितनी ही जगह कुछ-कुछ अच्छा काम हो रहा है। फिर भी प्रान्त के विस्तार पर ध्यान देते हुए काम कम ही मालूम होता है। कुछ अंश में संगठन और कुछ अंश में धन के अभाव से इस प्रान्त में सन्तोषजनक काम न हो सका। यहां के काम के विकास के लिए कुछ समय पहले यहां के खादी-मण्डल की ओर से काम देखने का निमन्त्रण मिला था। उसके अनुसार हम अभी वहां काम देखने के लिए गये थे। वहां के काम की मौजूदा हालत तथा भविष्य के लिए योजना के सम्बन्ध मे नीचे-लिखी बातें जानने लायक है।

इस प्रान्त में खादी-कार्य के लिए प्रान्तिक समिति की तरह हर साल खादी-मण्डल नियुक्त होता है। इस मण्डल के अध्यक्ष डा० मुरारी लाल तथा मन्त्री श्री

रामस्वरूप गुप्त हैं। पण्डित जवाहरलाल, श्री पुरुषोत्तमदास टण्डन तथा [illegible] महमूद आदि सभासद हैं। इस मण्डल का दफ्तर कानपुर है। इसके अधीन [illegible] दो खादी-भण्डार चल रहे हैं। एक प्रयाग मे और दूसरा कानपुर मे। प्रयाग के भण्डार मे वहा की समिति ने ५०००) से ऊपर रकम लगाई है। इसके अलावा अ० भा० खा० मण्डल ने ५०००) कर्ज दिये है। कानपुर के खादी-भण्डार की पूजी २५००) है। और वहा भी अ० भा० खादी मण्डल ने २५००) [illegible] हैं। इन भण्डारो मे अभी मासिक बिक्री इस प्रकार होती है—

कानपुर, २,४००)

प्रयाग १,३००)

इन भण्डारो के लिए जहा तक हो सके अपने ही प्रान्त की बनी खादी [illegible] का स्वागत-योग्य नियम रक्खा गया है। इससे इस प्रान्त मे उत्पन्न [illegible] को प्रोत्साहन मिलता रहता है। इन भण्डारो की मौजूदा [illegible] तथा नेताओं को सन्तोष नही है। इन दोनो शहरो के अलावा प्रान्त के तमाम [illegible] मे वे भण्डार खोलना चाहते हैं। परन्तु धन के अभाव से वे आगे [illegible] सकते। इसके लिए सेठ जमनालाल जी ने तथा पण्डित जवाहरलाल जी ने [illegible] में कुछ सहायता प्राप्त करने की चेष्टा की थी। उनके [illegible] मे कोई योजना हो जाय। अभी तो उनके तथा प० जवाहरलाल जी के [illegible] कानपुर के एक प्रसिद्ध अग्रवाल व्यापारी सेठ [illegible] व्यापारियो के साथ मिलकर १००००) की पूजी से [illegible] तजवीज की है। और इसके लिए उन्होने अ० भा० खादी-[illegible] चाही है। यदि यह योजना सफल हो तो [illegible] एक अच्छा भण्डार स्थापित हो जायगा। [illegible] हुए, ऐसी विस्तृत योजना बनाने [illegible] दूसरे शहरो मे भी भण्डार खोले जा सकें। [illegible] देखने के बाद उस पर विचार करेंगे।

खादी की उत्पत्ति के सम्बन्ध मे [illegible] खास काम नहीं होता। [illegible] मार्फत होता है। परन्तु खादी-[illegible] व्यवहार [illegible] रखते है तथा [illegible] उद्योग मे [illegible] [illegible]

वड़े पैमाने पर केवल खादी की ही उत्पत्ति तथा विक्री आदि का काम करनेवालों में वनारस आश्रम का स्थान सबसे पहला है। इस संस्था की मार्फत कोई २० विद्यार्थी काम करते हैं। उनमें कितने ही पहले हिन्दू विश्वविद्यालय में पढ़ते थे। परन्तु असहयोग करके काशी विद्यापीठ में भरती हुए और वहां आचार्य कृपलानी के समागम में आकर उनकी प्रेरणा से उन्होंने खादी कार्य शुरू किया। इनको इस काम के लिए महासभा की कार्य-समिति की ओर मे १५०००) मिले हैं। इसके अलावा इस संस्था के कार्यकर्त्ताओं के खर्च के लिए पृथक प्रवन्ध है। इस संस्था की तरफ से फिलहाल तीन जगह काम हो रहा है। एक अकबरपुर (फैजावाद), दूसरा रानीगंज (वलिया) और तीसरा सैदपुर (वलिया)।

अकबरपुर—इस जगह कातनेवालियों को रुई देकर वदले में या रुपया देकर सूत खरीद लिया जाता है। सूत का अंक साधारणतः ८ से १२ तक होता है। सूत वहीं के जुलाहों से वुनाया जाता है। इस तरह अभी वे हर माह कोई १५००) रुपये की खादी तैयार कराते हैं। धीरे-धीरे बढ़ाकर साल के अन्त में २५००) तक ले जाना चाहते हैं। खादी की वुनाई में भी पिछले दो सालों में अभिनन्दनीय परिवर्तन हुआ है। वहां लम्बे अर्ज का कपड़ा ठींक भाव में वुना जाता है। और वुनाई में भी सुधार होता हुआ दिखाई देता है। यदि वहां की उत्पत्ति २५००) तक पहुंच जायगी तो इस स्थान का खर्च इस खादी में से ही निकलने लगेगा। सेठ जमनालाल जी आचार्य कृपलानी के साथ वहां गये थे और उन्हें वहां के काम से सन्तोष हुआ था।

रानीगंज और सैदपुर—रानीगंज में काम शुरू हुए अभी थोड़ा ही समय हुआ है। वहां अभी वे सूत ही तैयार कराते हैं। प्रतिमास ६००) से ८००) का सूत आता होगा। यह सूत सैदपुर भेज कर वुनाया जाता है। रानीगंज में भी जुलाहे तो हैं, पर अभी उनके द्वारा वुनवाने की तजवीज नही हो पाई है। अपनी पैदा की हुई खादी को वेचने के लिए इस संस्था की ओर से वनारस में एक भण्डार खुला हुआ है। उसमें मासिक विक्री कोई ७०० की होती है। शेप माल आश्रम के मुख्य केन्द्र वनारस से दूसरे भण्डार तथा व्यापारी आदि ले आते है। इस संस्था की तरफ से तैयार हुई खादी के विकने में कोई दिक्कत नहीं होगी।

इस संस्था के कार्यकर्त्ताओं की संख्या देखते हुए उनका काम कम मालूम होता है। पूंजी भी उनके पास काफी है। खादी-कार्य के लिए महासभा की कार्य-समिति की तरफ से मिले १५०००) के अलावा गुजरात प्रान्तिक समिति की ओर से भी ५०००) ऋण मिला है। फिर उनके लिए कपास जमा करने की व्यवस्था भी अ० भा० खा० मण्डल ने की है। सो आर्थिक कष्ट उन्हे किसी प्रकार का नहीं है।

खोज करने पर उनके काम की कमी का कारण यह मालूम होता है कि जो जगहे उन्होंने काम करने के लिए पसन्द की हैं वहा बड़े पैमाने पर काम करने की कोई अनुकूलता नही है। अकबरपुर मे यदि वे अपनी धारणा के अनुसार काम कर सकें तो हर साल २५०००) का माल तैयार हो सकता है। रानीगज मे काम शुरू करने के पहले उन्होने बनारस के नजदीक घरौरा आदि गावो मे काम किया था। परन्तु वहा काफी सूत न मिलने से उन गावो को छोड देना पड़ा। रानीगज मे काम ... दो महीने से शुरू हुआ है। वहा सूत भी ठीक परिणाम मे मिलना ... देता है। फिर भी सूत १०००-१५००) से अधिक का नही आ पाता। ... साल भर मे २००००) की खादी उत्पत्ति मानी जा सकती है। ... पूजी तथा कार्यकर्त्ताओ की शक्ति का विचार करते हुए उनके द्वारा ... चाहिए। और उनके लिए ऐसी अनुकूल जगहें खोज निकालने की जरूरत है ... उनकी शक्ति का पूरा उपयोग हो सके। इस सिलसिले मे ... के साथ प० जवाहरलाल जी तथा आचार्य कृपलानी जी ने ... उसके फलस्वरूप विस्तृत रूप मे काम करने योग्य ... काम शुरू करने का निर्णय हुआ था। श्री कृपलानी जी के ... आ जाने के बाद विद्यार्थियो को सलाह और सहायता देने ... इससे भी कठिनाइया उपस्थित होती थी। परन्तु अब ... पूरी-पूरी सहायता देने का वचन दिया है। और विद्यार्थियो ने भी ... से पूरा लाभ उठाकर उनकी रहनुमाई मे ही काम करने का निश्चय ... यह आशा की जा सकती है कि इन गावो मे काम ...

गाधी-आश्रम के इन स्थानो के अलावा और भी ... ठीक-ठीक होता हुआ मालूम होता है। ... श्री शकरलाल जैन खादी का काम ... पहले खादी का ही काम करते थे। ... कपडो का भी काम करते है। दोनो मे ... को छोडकर सिर्फ खादी का ही काम करें। ... इसके अनुकूल निर्णय ... जा सकती है। ... समिति के ... इस मे ... मालूम ...

... मे करने की ...

की गई थी। युक्त-प्रान्त के बहुतेरे जिलों में खादी-कार्य के लिए थोड़ी-बहुत अनुकूलता हुई है। परन्तु इनमें से एक-दो ऐसे स्थान लें जहां विशेष अनुकूलता हो और जहां बड़े पैमाने पर खादी-कार्य हो सके और वहां अ० भा० खादी-मण्डल की तरफ से काम शुरु हो तो अच्छा। इस सम्बन्ध में भी चर्चा हुई थी। बुन्देलखण्ड का नाम सुझाया गया था और इसलिए बांदा जाकर वहां कुछ पूछताछ की गई थी। उससे इतना तो मालूम हुआ कि इस भाग में खादी ठीक मात्रा में उत्पन्न हो सकती है। परन्तु विशेष ब्यौरे की आवश्यकता मालूम होने से वहां के एक सज्जन श्री लक्ष्मीनारायण अग्निहोत्री के साथ गांधी-आश्रम के एक अनुभवी विद्यार्थी श्री राजाराम को वहां जाकर खोज करने का भार सौंपा गया है। इसी तरह गोरखपुर में भाटपार रानी तथा उसके आसपास के देहात में भी खादी-काम के लिए कितनी अनुकूलता है, इसकी जांच करने का काम वहां के खादी-प्रेमी श्री महावीरप्रसाद पोद्दार ने अपने जिम्मे ले लिया है। यदि वहां काम शुरु किया जाय तो इन्होंने आर्थिक सहायता देने का भी वचन दिया है। इस जांच के फलस्वरूप यदि अनुकूल क्षेत्र मिल जायगा तो वहां बड़े पैमाने पर काम करने की तजवीज हो सकेगी।

युक्त-प्रान्त की इस यात्रा मे यह आशा थी कि श्री पुरुषोत्तमदास टण्डन तथा पण्डित जवाहरलाल नेहरु दोनों का साथ होगा, परन्तु पुरुषोत्तमदास जी को हिन्दू महासभा के काम के लिए कलकत्ता जाना था, सो वह हमारे साथ न आ सके। फिर भी उन्होंने भविष्य में इसके लिए भरसक सहायता देना स्वीकार किया है। पं० जवाहरलाल तो सारे सफर मे हमारे साथ रहे और उन्होने सब तरह से खुद सहायता दी। खादी-सम्बन्धी उनके प्रभावशाली भाषणों तथा चर्चाओं से ऐसा मालूम हुआ कि वे अन्य राजनीतिक बातो के सदृश ही खादी में दिलचस्पी लेते हैं। आगे भी आपने खादी-मण्डल को पूरी-पूरी सहायता देने का वचन दिया है। इनकी सहायता से आशा है कि संयुक्त-प्रान्त में खादी-काम सन्तोष-जनक रीति से आगे बढ़ सकेगा।
—हि० न० जी०, ३०।४।१९२५।]

१०. कानपुर

कानपुर जाते हुए हम लोग भुसावल से श्रीमती सरोजनी देवी के साथ हुए। हमें यह समाचार तो पहिले ही से मिल गया था कि कानपुर में कुछ थोड़े-से मनुष्य श्रीमती के अध्यक्ष होने के विरुद्ध हैं। और वे उनके स्वागत को हानि पहुंचाने के लिए प्रयत्न कर रहे हैं। हम लोग यही सोच रहे थे कि यदि उनके प्रयत्न सफल हो

गये तो कैसा कलक लगेगा। लेकिन सरोजनी देवी तो इसके लिए तैयार [illegible] थी। उन्होने स्वय यह बात छेडी और मुस्कराते हुए कहा—"मुझे [illegible] पत्र कम्युनिस्टो (वसुधैव कुटुम्बवादियो) के मिले है। वे लिखते है कि हम लोगो को आप से कोई झगडा नही है लेकिन आप अपना धर्म भूल गई है और [illegible]लिटन बन गई हैं। यह हम लोगो को पसन्द नही है। और [illegible] हम [illegible] आपका स्वागत न करेंगे। गरीब बेचारे! उन्होंने काले झण्डे भी तैयार [illegible]। उन्हे देखने मे बडा आनन्द आयेगा। पद्मजा तो यह तमाशा देखने के लिए ही [illegible] आई है।" लेकिन सरोजनी देवी या उनकी लडकी किसी को भी, [illegible] देखने का मजा न मिला और हम लोगो को भी यह कष्टप्रद अनुभव न हुआ। लोगो की [illegible] का, शहर की सजावट का और उनके उत्साह का कोई हिसाब नही था। [illegible] इतना अवश्य कह देना चाहिए कि हमारे इतिहास की इस असाधारण घटना—महासभा का अध्यक्ष एक स्त्री का होना—देखकर भी इस प्रान्त की स्त्रियां [illegible] छोडकर बाहर न निकली। बाहर या मण्डप मे थोडी सी ही स्त्रियां थी।

० ० ०

व्यवस्था—रहने-करने की, खाने-पीने की, सफाई की—[illegible] है। रसोई-सम्बन्धी व्यवस्था तो इतनी अच्छी थी कि [illegible] सभाए देखी हैं उनमे किसी मे भी वैसी व्यवस्था न [illegible]। [illegible] की सफाई कुछ अशो मे बढकर अवश्य थी। और [illegible] का फल था। फूलचन्द जैन नामक एक व्यापारी है, [illegible] है। उनकी नम्रता की कोई सीमा नही है। [illegible] पति न समझेगा, वह सामान्य मजदूर [illegible] रसोई के मद की आय मे [illegible] स्वीकार करके उन्होंने अपनी ही [illegible] महासभा देखने के लिए [illegible] अपने ही काम मे लगे रहते थे। [illegible] सब [illegible] आग्रह के साथ भोजन [illegible] थे। परोसनेवालो ने [illegible] भूल जाने का [illegible]।

[illegible] रात [illegible]। [illegible]

जाते थे। मेहतरों का खाता भी वड़ा आकर्षक था—दूसरी महासभाओं से भी अधिक क्योंकि यहां पर संयुक्तप्रान्त का विनय और विवेक था—मैले पर धूल भी वे ही डाल आते थे। उनके बारे में इतना कहकर एक त्रुटि भी कह सुनाऊं? यह सब स्वयंसेवकों पर लागू नही होती है। शायद दो-तीन स्वयंसेवकों का ही कसूर होगा लेकिन उनके लाभ के लिए ही वह उल्लेख योग्य है। मुझे एक बीमार को प्रदर्शन मे से उठा कर दूसरी जगह पर ले जाना आवश्यक था। उसको सख्त न्युमोनिया हो गया था। डाक्टर ने फौरन ही उसे वहां से हटा कर ले जाने के लिए ताकीद की थी। रेडक्रास वाले स्वयंसेवकों का यह कार्य था। डाक्टर तो बेचारे फौरन ही बाहर निकले लेकिन रेडक्रासवाले कहीं दिखाई न देते थे। खोजने पर बहुत से मण्डप में मिले। डाक्टर ने उन्हें सूचना की कि वे फौरन ही "स्ट्रेचर" लेकर चलें। उन्होंने जबतक संगीत न हो जाय वहां से निकलने से इन्कार किया। डाक्टर ने कहा—"ये लोग यह नही समझ सकेंगे कि यह कार्य कितना आवश्यक है। ये तो संगीत सुनकर ही बाहर निकलेंगे।" यह तो केवल इने-गिने प्रसंगों में से एक है। मैं फिर यह कहता हूं कि टीका करने के लिए मैंने इस प्रसंग का यहां उल्लेख नहीं किया है। ऐसे कार्य जिन स्वयंसेवकों को सौंपे जाने हैं उन्हें तो सतत जाग्रत रहने के लिए और अच्छे-से-अच्छे संगीत को या अद्भुत भाषण होते हों तो उनका भी त्याग करने के लिए तैयार ही रहना चाहिए। स्वयंसेवक में आदर्श पुलिस की कर्त्तव्यबुद्धि और त्वरा होनी चाहिए और पुलिस में जो नहीं पाया जाता है उतना ज्ञान और प्रेम होना चाहिए।

० ० ०

लेकिन अब हम महासभा में प्रवेश करें। व्यवस्था इत्यादि को देखकर जितना आनन्द हुआ उतना आनन्द महासभा का काम देखकर भी हुआ, यह कैसे कहा जा सकता है? 'कानपुर की महासभा' यह शीर्षक इस लेख को देते समय थोड़ी देर के लिए यह खयाल हुआ कि "कानपुर का दीवाने खास" यह शीर्षक उसका रक्खा जाय तो क्या बुरा है?

इस समय महासभा मे प्रतिनिधियों की फीस एक रुपया रक्खी गई थी जिससे गरीब लोग कम आ सकते थे, फिर भी बहुत से गांवों के रहने वाले लोग आये थे। खादी-प्रदर्शन का आकर्षण भी कुछ कम न था। इसलिए आम वर्ग के लोगों की बड़ी भीड़ थी, फिर भी यही मालूम होता था कि इस वर्ष से महासभा आम वर्ग की न रहकर खास वर्ग की ही हो रही है।

इनके कारणों की परीक्षा करें। प्रथम तो अध्यक्ष के व्याख्यान ही को ले। महासभा के सभापतियों के व्याख्यानो में शायद यही सबसे छोटा व्याख्यान कहा

जा सकता है, और सरोजनी देवी ने जिन्हें अपना व्याख्यान लिखने की [illegible] नही है इतना छोटा सा भी अपना व्याख्यान किस प्रकार लिखा होगा, यही आश्चर्य होता है। इस छोटे से व्याख्यान मे भी उनका वाग्वैभव परिपूर्ण था। लेकिन यह वाग्वैभव किसके लिए था? जनता के लिए? उत्तर मे "हां" नहीं [illegible]। मेरे लिए भी उनके व्याख्यान का अनुवाद करना मुश्किल काम है और जनता के लिए तो उसका अच्छा अनुवाद भी समझना मुश्किल होगा। श्रीमती उर्दू [illegible] बोल सकती हैं—एक दो दफा तो मैंने उन्हें उर्दू बोलते हुए सुना भी है—लेकिन कानपुर में न उनके व्याख्यान की हिन्दी या अंग्रेजी नकल बांटी गई और न [illegible] उन्होने ही उर्दू मे अपना व्याख्यान दिया। यदि कोई कहे कि [illegible] के बाद उनसे उर्दू मे बोलने की आशा रखना जुल्म है तो मैं उनसे [illegible] कि अंग्रेजी मे बोलने के बदले वे उर्दू मे ही बोली होती तो यह बात [illegible] देती।

यह तो अध्यक्ष के व्याख्यान की बात हुई। अब [illegible] प्रस्तावो के सिवा ऐसे प्रस्ताव नही थे जिनमे जनता को [illegible] व्याख्यानो का ही आधिक्य था। जो प्रस्ताव चर्चा का [illegible], [illegible] भाषा मेरे जैसे को भी समझनी मुश्किल थी तो फिर [illegible] ही क्या लग सकता था? और जहा प्रस्ताव की भाषा [illegible] वहा उस पर की गई चर्चा के मुश्किल होने के बारे में [illegible]

० ० ०

ऊपर जो मैं यह कह गया हू कि आम लोग जिनमे [illegible] दो-तीन ही प्रस्ताव थे। उनमें से प्रथम तो दक्षिण [illegible] भी गांधीजी के व्याख्यान मे पेश किया गया था। [illegible] मे बदले गये मताधिकार को [illegible] और उसके अधीन [illegible] अपने प्रान्त की भाषा में ही [illegible]।

दक्षिण अफ्रीका के प्रस्ताव का [illegible] स्तानियों को वहा से [illegible] इसलिए [illegible] जी के [illegible] १८१४ [illegible] से [illegible] न [illegible], [illegible]

नही हुआ है इसलिए उसका दरअसल भंग किया गया है या नही, यह जांच करने के लिए एक पंच नियुक्त किया जाय अथवा जिसमें दक्षिण अफ़्रीका के हिन्दुस्तानियों के प्रतिनिधि भी हों ऐसा एक गोलमेज सम्मेलन किया जाय। यदि इन दो में से एक भी बात न हो सके तो ब्रिटिश सल्तनत का फर्ज है कि वह दक्षिण अफ्रीका के वायसराय के नाम यह हुक्म भेजे कि उस कानून पर वह बादशाह की तरफ से स्वीकृति के हस्ताक्षर कदापि न करें। इन तीनों बातों में से यदि कुछ भी न किया जाय तो उसके विरुद्ध जो लड़ाई लड़ी जायगी उसमें हिन्दुस्तान की तरफ से पूरी मदद की जाय। पूरी मदद करने से क्या मतलब हो सकता है, यह गांधीजी ने अपने हिन्दी में दिये गये व्याख्यान में अच्छी तरह समझाया था। "यह प्रस्ताव करके आप लोग सो न जाना। आप लोगों को यह विश्वास होना चाहिए कि जो करना चाहिए वही आप करेंगे। स्वराज्य दल को भी यह निश्चय कर लेना चाहिए कि प्रस्ताव में जो सूचनाएं की गई है उनको यदि वे सरकार से स्वीकार न करा सके तो युद्ध के लिए देश को तैयार करना होगा और महासभा भी यह निश्चय करे कि यदि दक्षिण अफ़्रीका में सत्याग्रह किया जाय तो उसकी मदद की जाय। इतना ही नहीं यहां पर हम लोग भी सत्याग्रह करें। यह नही कि केवल बोरसद के महसूल के खिलाफ, या नागपुर में किये गये राष्ट्रीय झण्डे के अपमान के लिए ही सत्याग्रह करना चाहिए, किन्तु दूर विदेशों मे पड़े हुए अपने भाइयों के लिए भी हमें सत्याग्रह करना चाहिए। आज ही यदि मैं देश का वातावरण बदला हुआ पाऊं और मुझे यकीन हो जाय कि हिन्दू-मुसलमान अपना पागलपन छोड़ कर एक हो गये हैं और यह समझने लगे है कि दक्षिण अफ़्रीका में हिन्दू-मुसलमानों दोनों का एक-सा अपमान हो रहा है और वे मुझे अपनी तरफ से यह पैगाम भेजे कि हम लोग तैयार है, सत्याग्रह करो तो मैं कहता हूं कि आज यद्यपि मै मुर्दा-सा मालूम होता हूं फिर भी यह युद्ध करने के लिए फिर जिन्दा हो जाऊंगा।"

० ० ०

दूसरा प्रस्ताव पटना के प्रस्ताव को कायम रखने का था। उसमें यह कहा गया था कि महासभा के सभ्य बनने के लिए या तो २००० गज सूत का चन्दा या या चार आना देना चाहिए और महासभा के कार्यप्रसंगो पर शुद्ध खादी ही पहननी चाहिए, यदि कोई शख्स हमेशा शुद्ध खादी न पहन सके तो उसे कम से कम विदेशी कपड़ा तो पहनना ही नही चाहिए। इस मताधिकार के प्रस्ताव मे जो खादी रक्खी गई थी वह कुछ लोगों को पसन्द न थी। इस पर बड़ी चर्चा हुई। महाराष्ट्रीय उसके विरुद्ध थे और दूसरे भी दो-चार होंगे। यह प्रस्ताव महासमिति में केवल थोड़े से

मनुष्यो का ही विरोध होने से पास हो गया था। महासमिति में इस प्रस्ताव को पेश करते हुए गाधीजी को कुछ सख्त शब्द कहने पड़े थे—

"बाबा साहेब परांजपे और श्री साम्बमूर्ति ने मुझे यह प्रस्ताव लौटा देने के लिए कहा है। मैं किस अधिकार से उसे लौटा दू? यह तो केवल एक [illegible] है कि उसे पेश करने का भार मुझ पर आ पड़ा है। वैसे यह तो कार्य-समिति का प्रस्ताव है। और मुझ से 'अपील' क्यो करते हो? यह मुझे भी शोभा नही देता और आपको भी शोभा नही देता। मैं कौन? मुझे भूल जाओ—यदि आप [illegible] लोकतन्त्र को चाहते हैं तो छोटे-बड़े का ख्याल छोड़ दो, प्रस्ताव की योग्यता [illegible] विचार करो। और मुझे आप किस बात को लौटा देने का [illegible] मेरे दिल में गहरे से गहरे बैठे हुए मेरे जीवन-सिद्धान्तो को?

"श्री जयकर और केलकर ने भी इसका विरोध किया है। [illegible] जाते हैं कि मताधिकार का आधार ध्येय पर होना है। [illegible] मुश्किल है इसलिए क्या हम लोग उससे भाग जायँगे? हम लोगो [illegible] प्राप्त करना ही मुश्किल है तो फिर उसकी बात ही क्यो नही छोड़ [illegible] मुझे इस बात का यकीन हो जाय कि महासभा के एक [illegible] स्वराज्य मिल जायगा तो मैं चार आने का चन्दा भी [illegible] छोड़ दूगा और कोई शर्त न रखूगा। जो कुछ कार्य [illegible] यदि पानी फिराना है तो यह प्रस्ताव क्यो नही [illegible] हो सकता है। लेकिन भाई, महासभा के लिए जो [illegible] तैयार नही है उसे क्या महासभावादी कहलाने में [illegible] लोगो को विदेशी कपड़े का बहिष्कार स्वीकार है तो [illegible] दो। मैं मिलो वाले प्रान्त में से ही आता हू। [illegible] अच्छा है लेकिन मैं यह जानता हू कि ये देश की [illegible] साथ नही देते हैं। ये तो साफ-साफ [illegible] धन इकट्ठा करना है। [illegible] में यन्त्रो का हिन्दुस्तान में आना [illegible] नही कि यह हमारे [illegible] [illegible]

पानी। स्वराज्य कोई खेल नही है—स्वराज्य कोई सस्ती चीज नही है। वह तो सिर देकर प्राप्त करने योग्य बड़ी मुश्किल से प्राप्तव्य वस्तु है। आज आप लोग मेरा विरोध कर सकते है लेकिन अब ऐसा समय आने ही वाला है जब आप सब लोग यही कहेंगे कि जो गांधी कहता था वही सत्य है। इसलिए जबतक इस मामले में मेरे पक्ष में बहुमत है तबतक मैं आप लोगों से यह प्रार्थना करता हूं कि इतना जरा-सा त्याग करना पड़ता है इसलिए उसे न ठुकराओ।

"और हम लोग ऐसा विश्वास क्यों न रक्खें कि लोग अपने किये हुए प्रस्तावों का पालन करेंगे? हां, यदि आपको खादी पहनने में सिद्धान्त का उज्र हो अथवा उससे आपके धर्म को हानि पहुंचती हो तो आप लोगों को महासभा छोड़ देनी चाहिए। लेकिन महासभा में रहकर आप महासभा के प्रस्ताव का अनादर नहीं कर सकते। जबतक मै महासभा में रहता हूं तबतक मेरे पक्ष में बड़ा अल्पमत हो तो भी मुझे प्रस्ताव का पालन तो करना ही चाहिए।

"और आप बहुमत के जुल्म की बातें कर रहे हैं। थोड़े से मनुष्य आप लोगों पर अपनी इच्छा के अनुसार अधिकार चला रहे हैं और उनके जुल्म का तो आपको खयाल तक नहीं; और सच्ची बात के खिलाफ जुदे-जुदे उज्र पेश करना हम लोगों को आता है। मै आप लोगों को यह जताये देता हूं कि यदि आप खादी को विदा देंगे तो लोग भी आप लोगों को विदा कर देंगे; नरमदलवालों के साथ तुलना करने पर आप लोगों में कोई विशेषता ही न रहेगी। हम सब बड़े अजीब लोग है क्योंकि हम स्वयं खादी न पहनते होंगे तो भी नेताओं से तो हम खादी पहनने की ही आशा रक्खेंगे। बाबा साहब के बराबर मैंने लोक-सेवा न की होगी लेकिन मेरी दस साल की सेवा में मैं उनकी नस-नस को अच्छी तरह समझ गया हूं और उनको जानकर ही आपसे यह कहता हूं कि खादी को छोड़ कर आप लोग कुछ भी फायदा न उठायेंगे।"

० ० ०

अब रहा हिन्दुस्तानी भाषा का तीसरा प्रस्ताव। महासभा के विधि-विधान में एक ऐसा मूल प्रस्ताव है कि हिन्दुस्तानी भाषा महासभा की भाषा रहेगी लेकिन जहां आवश्यकता मालूम हो वहां अंग्रेजी का भी इस्तेमाल किया जा सकता है, इस वाक्य से उसका महत्व कम होता था। इसमे यह सुधार करना सूचित किया गया कि महासभा का सब काम-काज हिन्दुस्तानी भाषा मे या प्रान्त की भाषा में ही किया जाय, और जो हिन्दुस्तानी न बोल सकता हो, वही लाचार होकर अंग्रेजी बोले। यह प्रस्ताव जब महासमिति में पेश किया गया उसका जिस प्रकार विरोध हुआ उससे मेरी इस टीका को कि 'महासभा दीवानेखास होती जा रही है'' अधिक

पुष्टि मिलती है। इसके विरुद्ध अनेक दलील दी गई, बहुत से लोगो ने तो इसमे जबरदस्ती भी देखी। बहुतेरे लोगो को तो यही खयाल हुआ कि महासभा के दरवाजे बन्द करके बुद्धिमान वर्ग को निकाल देने की यह तरकीब है। [illegible] मत लिये गये तो इस प्रस्ताव पर ५८ तथा विरुद्ध ५० मत मिले। [illegible] चर्चा करने का अवसर दिया गया—केवल सरोजिनी देवी की [illegible] ही यह परिणाम था। इस प्रस्ताव का विरोध करते हुए किसी ने तेलुगु मे [illegible] ने मराठी मे व्याख्यान दिये लेकिन आखिर को दुबारा मत लेने पर ८१, [illegible] ६८ मत से यह प्रस्ताव स्वीकार किया गया। इसलिए फिर महासभा मे [illegible] विरोध करने के लिए एक दो व्यक्तियो ने नोटिस दी। लेकिन श्रीमती सरोजिनी देवी ने निरर्थक बात करनेवालो को अवसर न देने के लिए [illegible] स्वय ही पेश किया था।

ये तो सामान्य वर्ग के प्रस्ताव हुए। शेष जो प्रस्ताव हुए उनमे से [illegible] विशेष वर्ग के थे। उनमे एक प्रस्ताव धारासभा के कार्यक्रम का था। [illegible] चर्चा हुई, जो सुधार पेश किये गये, जो सरल व्याख्यान हुए और [illegible] मे जो युद्ध होता रहा उसे देख यही खयाल होता था कि [illegible] को तोडना चाहते हैं और दूसरो से अपने को ही बडा [illegible] लालाजी और मालवीयजी के सिवा और नवकेलकर [illegible] हुए थे और लालाजी और मालवीयजी के व्याख्यान भी [illegible] भी सुनते-सुनते थक गये। लेकिन इतनी चर्चा हो जाने के बाद [illegible] तो बेचारे पुकार-पुकार कर यही कहते थे कि "भाई [illegible] सुधार हम लोगों को कुछ हिन्दी मे समझाओ भी तो?" [illegible] अपनी बात के समर्थन मे गांधीजी के वचनों का [illegible] उस दिन उपस्थित न थे।

एक पक्ष ने अन्य पक्ष को अप्रामाणिक [illegible] माणिक कहा। एक पक्ष ने अन्य को [illegible] सिद्ध किया—तो अब [illegible] किसको था?

इससे [illegible] पटना [illegible] नहीं किया। [illegible] स्वराज्य पक्ष मे [illegible] अपना नाम [illegible]

के साथ बँधे हुए हैं और वह आशा का तन्तु है खादी और सविनय भंग। इन दो चीजों के कारण उनकी यह श्रद्धा है कि अन्त में थक कर स्वराज्यवादी भी ठिकाने पर आ जायंगे।

० ० ०

गांधी जी ने अपने किसी भी प्रस्ताव पर अपना मत नहीं दिया था, यह ऊपर लिखा गया है लेकिन उसमें एक अपवाद है। मोतीलाल जी के प्रस्ताव के आरम्भ में यह श्रद्धा प्रकट की गई है कि सविनय भंग ही अन्तिम उपाय है और उसके बाद यह वाक्य है, लेकिन देश उसके लिए आज तैयार नहीं है यह देख कर इस वाक्य को प्रस्ताव में से निकाल देने के लिए एक सुधार पेश किया गया। उसके पक्ष में ठीक-ठीक मत मिले थे। उसके विरुद्ध थोड़े से ही मत अधिक होंगे। इसलिए सुधार पेश करनेवाले भाई ने मत फिर से गिनने के लिए दरखास्त की और श्रीमती नायडू ने उसको स्वीकार किया। उसके पक्ष में अच्छे हाथ ऊंचे किये गये—कोई ६८ होंगे। यह देख लाला जी घवड़ाये। लाला जी ने कहा कि यदि इसमें हारे तो सारा प्रस्ताव ही वेहूदा मालूम होगा। महात्माजी इस दफा तो हाथ ऊंचा करो, इस प्रार्थना को गांधीजी ने स्वीकार किया और अपनी चादर से हाथ निकाल कर ऊंचा करते हुए कहा—"देखो यह आपकी खातिर ही हाथ ऊंचा कर रहा हूं।" सब हँस पड़े। दूसरे बहुत से हाथ ऊंचे हुए और ६१ विरुद्ध मत से वह सुधार उड़ गया। 'सर्वनाशे समुत्पन्ने अर्धं त्यजति पण्डितः।'

० ० ०

महासभा के काम-काज के सम्बन्ध में एक बात तो मैं कह चुका हूं, अब दूसरी बात कहता हूं। हिन्दू-मुसलमान ऐक्य के प्रश्न को सबने आग की तरह समझ कर उसे दूर ही रक्खा था। उस पर चर्चा करने की किसी की भी हिम्मत न पड़ती थी। अभी तो हमें अपने मन के मैल धोने की आवश्यकता है। महासमिति में या महासभा में जितने भी व्याख्यान हुए उनमें से एक में भी असन्तोष के उद्गार न थे, यह नहीं कहा जा सकता। इसमें से अभ्यंकर-जैसे योद्धा के व्याख्यान को और मौलाना शौकतअली-जैसे थप्पड़ मार कर मुंह लाल रखनेवालों के व्याख्यान को हम निकाल दे सकते हैं। बाकी अन्य सबके व्याख्यानों में गहरे में असन्तोष की ध्वनि छिपी थी, निराशा की नहीं। व्यापक निराशा ही हो तो महासभा बन्द करनी चाहिए। लेकिन असन्तोष तो था ही। यदि यह असन्तोष 'डिवाइन डिस्कण्टेण्ट" अर्थात् दैवी असन्तोष हो जाय—सुधा प्राप्त किये विना सन्तोष न मानने वाली प्रयत्न-

शाली वृत्ति मे उसका परिणाम हो तो आज भी कुछ नही विगडा है। महासभा यदि "दीवाने खास" बन रही है तो उसकी जिम्मेदारी भी तो आम जनता पर ही है, यह उन्हे समझ लेना चाहिए। जनता ने—आमवर्ग ने अपना कर्तव्य पालन किया होता तो आज उसे महासभा से निकाल देने की कोई धमकी न दे सकता था। लेकिन आम लोग तो केवल "गाधी जी की जय" पुकारने लगे। उनके सामने [illegible] पड़ा हुआ है विदेशी कपडे का वहिष्कार। राजकाज छोड कर बैठे हुए गाधीजी से वे अब भी कार्य मे जितनी सलाह लेना चाहते हो ले सकते है। जिस प्रकार [illegible] वादियो को एक साल मे अपना काम कर दिखाना है उसी प्रकार वे भी [illegible] मे अपना काम दिखाकर गाधीजी को युद्ध के लिए बुला सकते है और [illegible] है कि "धनुष वाण लो हाथ।"

— महादेव हरिभाई देसाई के लेख से। न० जी०। हि० न० जी०, ७।१।१९२५।]

११. साप्ताहिक पत्र (वनारस)

प्रो० कृपलानी के गाधी आश्रम के सालाना जलसे मे [illegible] वनारस गये थे। हिन्दू विश्वविद्यालय के विद्यार्थियो ने भी गाधीजी [illegible] जी की कुछ वातचीत कराई। "गाधी आश्रम" की [illegible] चीत का सक्षेप मे उल्लेख कर दूगा। शायद [illegible] पर बहुत असर पडा था। उन्होने गाधीजी से [illegible] आवे मेरे विश्वविद्यालय के लडको को भी [illegible] गाधीजी का भाषण सुनने को [illegible] हुए थे। छ साल हुए जब गाधीजी ने [illegible] इस समय तो उन्होने खद्दर और [illegible] "कई ओर से मुझे यह सलाह [illegible] कोई सुनना नही चाहता। [illegible] मगर मै अपना [illegible] के प्रकार [illegible] मगर राम नाम [illegible] मेरे कानो मे [illegible]

गरीबों की ही कमाई है। यूरोप के विरुद्ध हमारे देश में धनिकों का धन गरीबों की गरीबी से बढ़ता है और उनमें से अधिकांश को एक जून भी भर पेट खाना मयस्सर नही होता। इस प्रकार तुम जो शिक्षा पाते हो उसका खर्च चुकाते हैं भुक्खड़ गांव-वाले और उन्हें इस शिक्षा का संयोग स्वप्न में भी नही मिल सकता। यह तुम्हारा कर्त्तव्य है कि वह शिक्षा लेने से इन्कार करो जो गरीबों को भी प्राप्य न हो मगर आज तुमसे मै यह नही मांगता। मैं तुमसे उन गरीबों का जरा सा बदला चुकाने को कहता हूं। उनके लिए थोड़ा यज्ञ करो। गीता का वचन है कि जो अपना यज्ञ किये बिना खाता है वह अपना भोजन चुराता है। महायुद्ध के जमाने में ब्रिटिश नागरिक जनता से इसकी मांग की गई थी कि हर घर के आंगन में थोड़े आलू बोये जायं और थोड़ी सिलाई हुआ करे। हमारे लिए इस युग का यज्ञ है कि चर्खा चलाना। मैं इसके विषय में दिन-रात बातें करता रहा हूं। लिखता रहा हूं। आज मैं और कुछ नही कहूंगा। अगर तुम्हारे दिलों पर गरीबों की इस करुण कहानी का कुछ भी असर पड़ा हो तो तुम कल कृपलानी जी के खादी-भण्डार पर धावा करो और उसमें एक गज भी खद्दर बाकी न छोड़ो और आज अपनी जेबें खाली कर दो। पण्डितजी ने भिक्षाकला में कमाल हासिल किया है। मैंने यह विद्या उन्हीं से सीखी है। अगर वे राजाओं महाराजाओं पर कर बैठाने में उस्ताद है तो मैं भी गरीब लोगो की जेबें उनसे भी अधिक गरीबों के लिए खाली कराने में वैसा ही बेशर्म हूं।"

यह तो हुआ उनके वार्तालाप के पहले हिस्से का संक्षेप। दूसरे में पवित्रता के लिए उन्होंने जोरदार अपील की। "तुम्हारे लिए लाखों रुपये मांगने, महलों के समान इन मकानों को उठाने में मालवीयजी का एक मात्र उद्देश्य है देश में मातृ-भूमि की सेवा के लिए खरे जवाहर भेजना जो स्वस्थ और सफल नागरिक होंगे। वह मतलब पूरा न हो सकेगा अगर तुम पच्छिम से आनेवाली हवा में बह चले। वह अपवित्रता की वायु है। यूरोप में कुछ मित्र हैं, बहुत ही कम है, जो इस जहरीली प्रवृत्ति से जबर्दस्त मोर्चा ले रहे हैं। मगर अगर तुम समय रहते चेत न जाओगे तो अनीति की बहिया, जिसका बल दिन पर दिन बढ़ता जा रहा है, तुम्हें बहा ले जायगी। मैं अपनी सारी शक्ति से तुम्हे पुकार-पुकार कर कहता हूं कि "संभलो, चेतो और जलने से पहले ही भाग चलो।"

मालवीयजी ने हृदय-स्पर्शी भाषण में गांधीजी के एक-एक शब्द का समर्थन किया और विद्यार्थियों को गांधीजी की चार मांगें पूरी करने को कहा। वे मांगें हैं: (१) धार्मिक कृत्य के समान नित्य चर्खा चलाना, (२) खद्दर पहनना, (३) कोष में चन्दा देना और (४) ब्रह्मचर्य-पालन। तीसरी मांग का पालन तो तुरन्त

ही हुआ—सभा मे वैठे-वैठे ही ८५०) रु० जमा हो गये, और [illegible] मे [illegible] भविष्य ही चल कर वतलावेगा।

६ तारीख, श्रद्धानन्द-दिवस को मालवीयजी और गाधीजी [illegible] के साथ दशाश्वमेध घाट पर पैदल गये और वहा स्नान करके स्वर्गीय आत्मा के लिए [illegible] जलाञ्जलि दी और फिर काशी विश्वनाथ के मन्दिर मे प्रार्थना की। मन्दिर से कुछ ही गज दूर यह जुलूस एक सभा वन गया और महिम्न स्तोत्र ([illegible]) का पाठ होने लगा। देवदास भाई ने 'राम धुन [illegible]' [illegible] और गाधीजी ने भाषण किया। उन्होंने स्वामीजी के वलिदान के मुख्य आशय पर जोर दिया [illegible] आत्मशुद्धि, धर्मशुद्धि, आत्म-सयम के लिए निरन्तर प्रयत्न और उनके [illegible] के प्रधान मन्त्र ब्रह्मचर्य पर। हिन्दू महासभा की परिभाषा के अनुसार हिन्दू माने जाने वाले सभी किसी ने यहा तक कि वौद्ध धर्मानुयायी एक जर्मन महिला ने भी विश्व-नाथ मन्दिर की प्रार्थना मे भाग लिया। मालवीयजी के [illegible] पर मै [illegible] कहता हू कि उसमे अछूत भी दिखाई पडते थे।

अव गाधी आश्रम की वात लीजिए। उसका जीवन [illegible] रहा है। हिन्दू-विश्वविद्यालय छोड कर निकले हुए दो सौ विद्यार्थियो [illegible] विद्यापीठ का वनना, उसके वाद लडको की [illegible] मे और भी [illegible], [illegible] उदासीनता की लहर घूमने से फिर वगैरा उजड जाना, [illegible] वीत जाने पर उनसे वचे हुए कुछ दृढ़निश्चय आत्माओ [illegible] लगा देना यही तो उसका इतिहास है। जिस [illegible] उद्दाम आशा से उन्होंने अपना काम निवाहा है, [illegible] के लिए गौरवास्पद है। कोई ४ साल हुए मै आश्रम [illegible] वासियो को विरुद्ध परिस्थिति मे [illegible] था। [illegible] लानी की अध्यक्षता मे अपना सब काम करते हुए [illegible] भी तीसरे, पाखाना भी साफ करते हुए देखा [illegible] सात रुपये महीने पर। उनकी [illegible] पढने-लिखने के [illegible] गिरी पर भी [illegible] [illegible] [illegible] पर आश्रम के कार्यकर्ता [illegible] वतलाया कि [illegible]

है। इन आँकड़ों से पिछले पांच साल के काम का थोड़े में अन्दाजा मिल जाता है:

साल	उत्पत्ति (रुपयों में)	विक्री (रुपयों में)
१९२१	४८)	३,०११)
१९२२	४,७५९)	२३,१५६)
१९२३	२३,१२३)	२३,११५)
१९२४	१६,०००)	२१,५७७)
१९२५	३६,१५७)	३२,७६९)
१९२६	६५,३१२)	७१,८०५)

१ गज कपड़े का दाम

चौड़ाई	१९२१	१९२२	१९२३	१९२४	१९२५	१९२६
३६ इंच	९ आने	८ आने	७।। आने	८ आने	७।। आने	७।। आने
४२ इंच			७।।। से ८। आने	८। से ८।।। आने	८।। से	६। से ८ आने
४५ इंच			९ से ९।। आने	८।। से ९।। आने	८।। से ९ आने	६।। से ८।। आने
४८ इंच				९। से १०।। आने	९ से ९।। आने	८।। से ९ आने

यहां यह बात याद रखनी चाहिए कि हर हालत में दाम की घटती हुई है, कपड़े में साथ-साथ उन्नति होते जाने पर भी। टाऊन हाल में एक सुन्दर, छोटा प्रदर्शन किया गया था। सालों साल की उन्नति का भारी गवाह तो वहां का प्रबन्ध ही था। विक्री के अंकों में दूसरे प्रान्तों से लाई गई खादी के भी अंक शामिल हैं। इस प्रान्त में तैयार होने वाली खादी के हिसाब से इस प्रान्त के निवासियों का खादी-प्रेम वहुत ही कम है। वनारस का दौरा तव सफल कहा जा सकेगा अगर आश्रम की खादी के लिए लोगों के दिलों में कुछ चाह उत्पन्न हो सकी।

म० दे०

—अंग्रेजी। यं० इं०। हि० न० जी०, २०।१।१९२७। महादेव देसाई का लेख।]

१२. गुरुकुल महोत्सव

स्वर्गीय स्वामी श्रद्धानन्द जी की उत्तमोत्तम कृति गुरुकुल को स्थापित हुए

२५ साल हो गये। इस अवसर पर आकर विद्यार्थियो को आशीर्वाद [illegible] प्रार्थना गाधीजी से आचार्य रामदेव ने कई महीनो से कर [illegible]। [illegible] देहान्त के बाद वहा जाने के वचन का पालन करना तो [illegible] हो पडा।

हरद्वार स्टेशन पर उतर करके कनखल मे होकर [illegible] गगा पार कर के गुरुकुल मे जाते हैं। हरद्वार से ही [illegible] नही थी। ऐसा देखने मे लगता था कि मानो किसी धार्मिक मेले मे [illegible] जा रहे हो। इस रजत महोत्सव के अवसर पर ही गुरुकुल [illegible] भी था। ऐसे पदवीदान के प्रसग पर विद्यानुरागी आदमी [illegible] मे तो कितने ही भोले-भाले आमवर्ग के लोग थे। [illegible] कि, "ये सभी स्त्रिया गाडियो मे भर-भर कर कहा जाती होगी? [illegible] को गुरुकुल की ओर खीचनेवाली शक्ति, स्वामी श्रद्धानन्द का [illegible] जी के जाने के कारण भी कितने आये होगे। जगह-जगह [illegible] और दूकानें महासभा की याद दिलाती थी। [illegible] उपस्थिति भी महासभा से कुछ कम न थी।

राजेन्द्र बाबू का भाषण

जिस दिन हम पहुचे, वह समारम्भ का तीसरा दिन था। [illegible] दान समारम्भ चल रहा था, और आचार्य आशीर्वाद दे रहे थे। [illegible] बाबू ने, अध्यक्ष-पद से अपना भाषण शुरू किया। [illegible] कि उनके आसपास के कुछ लोगो को [illegible] भाषण के आरम्भ मे, पाश्चात्य और पौर्वात्य [illegible] है, दूसरी निवृत्ति-प्रधान [illegible] उनका भाषण छपा हुआ था। [illegible] मे बैठ गये। उनके भाषण मे से [illegible]

"मैं यह नहीं कहता कि [illegible] ज्ञान-विज्ञान को लोक-हितकारी [illegible] चाहिए। किन्तु जबतक [illegible] नहीं होती, जबतक हम [illegible] जबतक त्याग और [illegible] को लोक-हितकारी [illegible] विद्यार्थियो [illegible]

चर्चा और लेन-देन के साथ-साथ, आत्म-निग्रह, त्याग और सेवा की दीक्षा दी जाय।"

राष्ट्रीय विद्यालय की व्याख्या करते हुए उन्होंने कहा :

"भारत की कोई भी संस्था भारतीय या राष्ट्रीय कहलाने का हक तभी पा सकती है जब वह अपने विद्यार्थियों को हिन्दुस्तान की मौजूदा हालत का, जरूरतों का, हीनता और दीनता का, दु.ख-दारिद्र्य का अनुभव करावे; जो इस दु:खदारिद्र्य को दूर करने, देश की दुर्बलता को हटाने, विखरी शक्ति का संचय करने का और नवजीवन का मार्ग बतावे, और उस मार्ग पर संकल्प, साहस, दृढ़ता और एकाग्रता के साथ चलने की योग्यता विद्यार्थियों में उत्पन्न करे। सन् १९२१ में हिन्दुस्तान के सैकड़े ९० आदमी गांवों के रहनेवाले थे और १८९१ से १९२१ तक शहरवाले, वस्ती के परिमाण में सैकड़े १ बढ़े हैं। जो यह हिसाव जारी रहा तो हिन्दुस्तानियों को शहराती वन जाने में तीन हजार साल चाहिए। इसलिए हमें यह बात माननी ही चाहिए कि गांव और गांवों के जीवन को ही आधार मान कर हमें अपनी शिक्षाण-शैली का निर्माण करना चाहिए।"

आजीविका के सवाल का विचार करते हुए उन्होंने कहा :—

"हम जानते हैं कि आज बीस-पचीस रुपये की मामूली नौकरी के लिए मैट्रिक्युलेटों और ग्रेजुएटों की सैकड़ों-हजारों अर्जियां पड़ती है। यह दावा तो झूठ है कि सरकारी स्कूलों में पढ़ने से नौकरी मिलती ही है। सरकारी स्कूलों के, सरकारी शिक्षा पद्धति के वड़े-से-बड़े, और कट्टर-से-कट्टर हिमायती से मैं पूछता हूं कि वहां के पढ़े हुए सभी विद्यार्थियों को नौकरी मिल ही जाती है, या उनकी रोटी का सवाल हल हो जाता है क्या? अगर बात ऐसी न हो तो यह क्यों पूछा जाता है कि राष्ट्रीय पाठशालाओं के—गुरुकुलों के—विद्यार्थियों का आगे चलकर क्या होगा? अगर दोनों जगहे रोटी का सवाल एक सा ही मुश्किल हो तो फिर किस लिए लोग राष्ट्रीय विद्यालयों को अपनाते नही है? यहां से तो निकल कर विद्यार्थियों को राष्ट्र-सेवा और समाज-सेवा का अवसर मिलेगा, उधर सरकारी विद्यालयों में रह कर तो सरकारी चक्की चलानी है, सरकार को गुलामी का राज्य बनाये रखने में मदद करनी है।"

मालवीयजी का आशीर्वाद

इसके वाद साधु वास्वानी उठे। उन्होने सभी ओर वैठे हुए श्रोताओं को प्रणाम किया, और प्रणाम करके वैठ गये। इसका भी वैसा ही असर हुआ, जैसा भाषण का होता। इसके वाद पं० मालवीय जी आशीर्वाद देने को खड़े हुए। पण्डित-

जी की बुलन्द आवाज से भला कौन शान्त नही होता ? सारा कोलाहल तुरन्त ही शान्त हो गया। यो कहकर कि, गुरुकुल को जीता रखने के लिए सदा तत्पर रहो और स्वामीजी की विरासत को बढाओ, उन्होने उपस्थित जनता मे धन-भिक्षा मागी। यह भिक्षा और कुछ नही थी, केवल विदेशी वस्त्र के त्याग, खादी-धारण और जहा खादी न मिले, वहा स्वदेशी मिल का कपडा पहनने का प्रण था। इस सम्बन्ध मे उनका भाषण स्मरणीय था। पर उसे यहा न देकर खादी-प्रदर्शनी खोलने के समय के भाषण के साथ ही मैं दूगा।

इसके बाद, पदवी-प्राप्त स्नातको को पदविया और पारितोषिक [illegible] दिये गये। स्वामीजी के खून के बाद, खूनी को बहादुरी से पकडनेवाले [illegible] को तीन तमगे मिले। और स्वामीजी को बचाने मे अपनी जान जोखिम मे डालने के लिए उनको ५०० रू० का इनाम भी मिला। पीछे से यह रकम उन्होने गुरुकुल को अर्पण कर दी।

गाधीजी का आशीर्वाद

इसके बाद गाधीजी बोलने को उठे। थोडी देर तक तो कुछ भी [illegible] करने पर उनकी आवाज लोगो तक पहुंचती ही नही थी। [illegible] जाकर आवाज कुछ सुधरी। यह भाषण कुछ विस्तार से देता हू :—

"आज तो मेरे मन मे ऐसा होता है कि साधु [illegible] करके बैठ जाऊ। पर यो हर किसी की नकल हर कोई नही कर [illegible]। [illegible] भी स्वाभाविक होना चाहिए। इससे मुझे तो जो कहना है, [illegible]।

"स्वामीजी का देहान्त हुआ ही नही है। [illegible] उनकी सच्ची देह को मिटाने की कोशिश करेगे, [illegible] हमारी कोशिश से भी उनकी देह का नाश होने को नही है—[illegible] कायम है, जबतक एक भी स्नातक गुरुकुल को [illegible] जीते ही हैं। स्वामीजी का शरीर तो [illegible] जी का सबसे बडा काम गुरुकुल है, उन्होने अपनी [illegible] इसे पैदा करने मे उन्होने अधिक-से-अधिक [illegible] ली है। अगर तुम अपने वचन पर [illegible] गुरुकुल को मिटा देवे।

"पर गुरुकुल को [illegible] की जरूरत है, जो [illegible] ब्रह्मचर्य और [illegible]

की पूरी-पूरी रक्षा कर सकोगे। मैं जानता हूं कि यह काम मुश्किल है। तुम्हारे यहां के बहुत से विद्यार्थियों के पत्र मेरे पास पड़े हुए हैं। कोई मेरी स्तुति करता है, तो कोई गाली देते हैं। स्तुति तो नाकाम चीज है। उसका असर मेरे ऊपर नहीं होता। परन्तु जब विद्यार्थी चिढ़ कर गाली देते हैं तो मुझे चिन्ता होती है क्योंकि क्रोध से वीर्य का नाश होता है। स्वामीजी के सामने मैंने ब्रह्मचर्य की अपनी व्याख्या रक्खी थी और वह मेरे साथ सम्मत थे। किसी स्त्री का मलिन स्पर्श न करने में ही ब्रह्मचर्य नहीं होता। हां, ब्रह्मचर्य वहाँ से शुरू जरूर होता है। पर क्षमा की पराकाष्ठा ब्रह्मचर्य का लक्षण है। पिछले साल स्वामीजी जब टंकारिया से पीछे लौटते समय मुझे मिलने गये थे तो उन्होंने मुझसे कहा कि 'हिन्दू धर्म की रक्षा नीति से ही सम्भव है।" अगर तुम वैदिक आचार और विचार की रक्षा करना चाहते हो तो तुम यह वस्तु याद रक्खो कि तुम्हें पग-पग पर रुपये मिल जायंगे, मगर ब्रह्मचर्य का नीति का पाया यहां पर न होगा तो तुम्ही गुरुकुल मिट्टी में मिल जायगा। इस भूमि के तो आत्मा नहीं है। इसकी आत्मा तुम्हीं हो। अगर तुम आत्म-बल खो दोगे और 'उदरनिमित्तं बहुकृतवेशः'—जैसे बन जाओगे तो तुम्हारी सारी शिक्षा बेकार जायगी।

"मैं आज तुम्हारे आगे चर्खा और खादी की बात करने नहीं आया हूं। तुम्हारा पहला काम ब्रह्मचर्य और वीरता का—क्षमा का है। उसे भूल जाओगे तो स्वामीजी का काम कायम नहीं रहेगा। रशीद की गोली से स्वामी जी का क्या हुआ? वह तो उस गोली से ही अमर हुए।

"स्वामीजी का दूसरा काम अछूतोद्धार था। जिन शब्दों में मालवीयजी ने खादी की वकालत की, मैं नहीं कर सकता। पर इतना जरूर कहूंगा कि अगर हम हमेशा गरीबों और अछूतों की फिक्र रक्खेंगे तो खादी से अलग नहीं रह सकते। अगर किसी अमली काम में वीर्य की रक्षा का उपयोग करना हो तो खादी से बढ़कर दूसरा कोई काम नहीं है। खादी के कार्य के साथ मैं स्वामीजी का नाम नहीं जोड़ना चाहता क्योंकि यह उनका मुख्य काम नहीं था। पर तुम स्नातको! विदेशी कपड़े से अपने शरीर सजाने का विचार न करोगे बल्कि अपने गरीबों और अछूतों की रक्षा के लिए केवल खादी ही धारण करोगे।

ईश्वर तुम सबके ब्रह्मचर्य, सत्य और तुम्हारी प्रतिज्ञाओं की रक्षा करे, गुरुकुल का कल्याण करे, और स्वामीजी का हर एक काम परमात्मा चालू रक्खे।"

आर्य-समाज का काम

दूसरे दिन गुरुकुल के लिए धन इकट्ठा करने का खास जलसा था। वहां भी

लोग तो उतने ही मौजूद थे। आचार्य रामदेव ने गुरुकुल के स्नातकों की [illegible] पुस्तकों और असहयोग में दिये गये कोपों वगैरह का वर्णन किया। उनकी [illegible] एक दलील देने लायक है। "गांधी जी कहते हैं कि चर्खे में ही स्वराज मिलेगा। मैं कहता हू कि स्वराज ब्रह्मचर्य से ही मिलेगा। क्योंकि सयम बिना चर्खा नही [illegible] सकता, और ब्रह्मचर्य बिना सयम नही और तपश्चर्या बिना ब्रह्मचर्य नहीं [illegible] गुरुकुल की शिक्षा-प्रणाली बिना तपश्चर्या के नही हो सकती।'

इसके बाद चन्दा इकट्ठा होने लगा। उस समय का दृश्य तो कभी भूलने [illegible] नही है। बालटियो में चन्दा इकट्ठा होता था और भीतर रुपया [illegible], मानो टकसाल चल रही थी। कितनी देर तक यों रुपये की बरसात हुई। नोट भी ढेर-के-ढेर आते थे। इसके बाद मानो इस वर्षा में तूफान लाने के लिए गांधीजी धन की अपील करने को उठे। भिक्षा मांगनेके लिए वह आनन्द से उठे। [illegible] के उनके उद्‌गार लिखने लायक हैं'

"आर्य समाज की मैं टीका करता हू, पर स्तुति भी करता हू और जो [illegible] स्तुति करता है, उसे टीका करने का अधिकार होता ही है। मैं मानता हू कि [illegible] राज्य स्थापित होने के बाद जनता के साथ शिक्षितो के आध्यात्मिक सम्बन्ध का नाश हुआ और उस सम्बन्ध का पुनरुद्धार करनेवाला आर्य समाज है।

"आज जो दृश्य यहा दिखलाई पडता है, वैसे दृश्य भारत में [illegible] जगह देखने में आते हैं। मैं आपका कुछ अनुकरण करता हू पर मुझे [illegible] पैसे नही मिलते। मैं तो रूमालो में पैसा इकट्ठा करता हू। [illegible] और आपको रुपये मिलते है। सभी-के-सभी पंजाबी [illegible] भी गरीब लोग तो हैं ही। पर आपका दिल उदार है। [illegible] करता हू, आपको झगडालू कहता हू पर आज [illegible] पंजाबियो को मैं कहता हू कि जो पैसा दे [illegible] स्वीकार करना चाहता हू कि गुरुकुल [illegible] मैं ऐसा नही मानता कि आपकी टीका [illegible] होउगा। आप में त्याग तो भरा [illegible] जो त्याग आगे दिखलाना है, [illegible] मैं आप के त्याग की स्तुति करता हू [illegible] नही है। काम तो वही है जो [illegible]

"आपकी स्तुति करता हू [illegible] यह न समझ लेना कि [illegible] दिया जाय। [illegible]

लिए जितना दे सको, दो। और कुछ परिणाम न भी निकले तो भी गुरुकुल ने संस्कृत के अभ्यास को स्थान दिया है, यह क्या कुछ छोटी बात है? जब किसी पंजाबी को मैं देवनागरी पढ़ते देखता हूं तो अटकल करता हूं कि वह गुरुकुल का पढ़ा होगा। दोष किस संस्था में नही होते? पर दोषों के होते हुए भी गुरुकुल संस्था की सेवा बहुत बड़ी है। इस गुरुकुल की आप सेवा करो और इसे जीवन्त रक्खो। स्वामी श्रद्धानन्द का कहना है कि इस संस्था के लिए उन्होने ब्रह्मचर्य और तपश्चर्या के दो दान दिये थे। आप कहो कि इस संस्था को जीती रखने के लिए हमसे जितना हो सकेगा, हम दान करेंगे।"

इसका परिणाम तो तुरन्त देखने में आया। बालटी फिर से घुमाने की लोगों ने प्रार्थना की। फिर पैसे की बरसात हुई। कितने लोग कहते थे कि गांधीजी की मांग के बाद पहिले से दुगुना धन इकट्ठा हुआ। दूसरे दिन आचार्य रामदेव जी कहते थे कि लगभग दो लाख रुपये तो मिल गये थे।

राष्ट्रीय शिक्षण परिषद

उत्सव के साथ एक राष्ट्रीय शिक्षा परिषद् भी रक्खी थी। इसे परिषद् कहना तो उचित नहीं होगा क्योंकि इसमें न तो कोई चर्चा हुई न कोई ठहराव हुए। राष्ट्रीय शिक्षा के अर्थ के विषय में जुदा-जुदा सज्जनों ने भाषण किये। इस परिषद में जामिया-मिल्लिया की ओर से मौलवी मुजीब साहेब और भाई रामचन्द्रन हाजिर थे। यही बात बड़ी थी कि इसमें मिल्लिया की तरफ से आदमी भेजे गये थे। दोनों प्रतिनिधियों के भाषण उनके और उनकी संस्था के योग्य थे। भाई मुजीब ने तो आते ही आते श्रद्धानन्द जी के खून के विषय में बहैसियत मुसलमान के शोक प्रकाश किया और इस कृत्य को सारी जाति का सिर झुकानेवाला बतलाया और कहा कि हिन्दू-मुस्लिम ऐक्य के लिए मुसलमानों को खूब आत्मशुद्धि करने की जरूरत है। अपनी संस्था और दूसरी राष्ट्रीय संस्थाओं में आदान-प्रदान चलता रहे तथा गुरुकुल इस मुस्लिम विद्यापीठ को अपना छोटा भाई गिन सके—ऐसी आशा प्रकट करके वह बैठ गये। इस भाषण का अच्छा असर पड़ा। आचार्य रामदेव ने भाई मुजीब का विशेष आभार माना और कहा कि जामिया से अधिक सम्बन्ध करने का प्रयत्न गुरुकुल करेगा। श्री रामचन्द्रन का भाषण सबसे अच्छा कहा जा सकता है। उन्होंने कहा कि राष्ट्रीय शिक्षा के दो आवश्यक अंग हैं। इसके बिना शिक्षा राष्ट्रीय नहीं कही जा सकती। वे हैं (१) संस्कृतियों और राष्ट्र के भिन्न-भिन्न अंगों को एक में मिलाना (२) दलित गरीब वर्गों की सेवा को अपना केन्द्र-बिन्दु रखना। उनका दावा था कि उनकी संस्था इस एकीकरण के लिए बहुत प्रयत्न करती है

और यह कहा कि हिन्दू के रूप मे उन्हें वहा रहना कभी अखरा नही है बल्कि आनन्द-दायक ही लगा है।

गाधीजी प्रमुख थे। पर सभा का काम शुरु करना था इसलिए उन्हें सिर्फ पाच मिनट मिले होगे। उन्होने रामचन्द्रन की बात का समर्थन किया और कहा कि जो सस्था दूसरी जातियो के प्रति द्वेष पैदा करती हो उसका तो नाश ही होना चाहिए। ऐसी सस्थाओ का लक्ष्यबिन्दु होना चाहिए 'दया धरम का मूल है पाप मूल अभिमान।' धर्म के सार्वत्रिक मूल सिद्धान्तो पर जोर देने की जरूरत है। और यह बताया कि इन मूल सिद्धान्तो को भूलने से आदमी पशु बन जाता है। अन्त मे सस्कृत और फारसी के अभ्यास पर उन्होंने चार शब्द कहे

"संस्कृत सीखना हर एक हिन्दुस्तानी विद्यार्थी का कर्त्तव्य है। हिन्दुओ का तो है ही मुसलमानो का भी है क्योकि आखिर उनके बाप-दादा भी तो राम और कृष्ण थे और उन्हे पहिचानने के लिए संस्कृत जानना चाहिए। परन्तु मुसल-मानों के साथ सम्बन्ध रखने के लिए उनकी भाषा सीखनी हिन्दुओ का भी धर्म है। आज हम एक दूसरे की भाषा से भागे फिरते हैं क्योकि हम पागल बन गये हैं। यह निश्चित मान लेना कि जो सस्था आपस मे द्वेष और भय रखना सिखाती है वह राष्ट्रीय नही है।"

महादेव देसाई

—गुजराती। न० जी०, हि० न० जी०, ३१।३।१९२७।]

१३. मालवीयजी और खादी

उस दिन गुरुकुल की रजत जयन्ती के अवसर पर मालवीयजी [illegible] माल्म तो ऐसा होता था कि मानो वह खादी-सेवा के लिए ही [illegible] को आशीर्वाद देते हुए भी उन्होंने खादी की ही [illegible] से खादी पहिनने के व्रत की भिक्षा मागी :

"इस पुण्यभूमि मे आकर [illegible]

गाधीजी खुद १२ वर्ष पहिले [illegible] गाय का दूध न खाने की प्रतिज्ञा कर गये। [illegible] भूल मालूम पडती है। [illegible] ली थी बल्कि रोज केवल पाच [illegible] भक्ति का व्रत ले चुके हो। [illegible]

मांगता हूं कि कभी विदेशी वस्त्र न पहिनोगे। और केवल खादी ही धारण करोगे। कितने लोग तो कहते है कि गांधीजी का सिर फिर गया है। मैं कहता हूं कि इन्होंने देश को सूत कातने को जो कहा है वह इनके अनुभव और ज्ञान का फल है क्योंकि सूत के धागे में ही बँधकर हिन्दुस्तान की स्वतन्त्रता गई और उसी से पीछे भी लौटेगी।"

शुद्ध कौड़ी

यह बतलाते हुए कि सूत की आमदनी सच्ची कमाई का पैसा है उन्होंने एक सुन्दर कथा कही : "एक तपस्वी ब्राह्मण था। उसको कन्या का विवाह करना था। ब्राह्मणी रोज ही कहा करती थी कि विद्या वेच कर कही से कुछ धन लाओ। अन्त में वह ब्राह्मण एक दिन राजा के पास गया और अपनी सारी कथा सुनाकर भिक्षा मांगी। राजा ने एक सौ सोने की मोहरें देने का हुक्म दिया। ब्राह्मण ने लेने से इन्कार किया। राजा ने समझा कि यह अधिक धन चाहता है और इसलिए पांच मोहरें देने का हुक्म दिया। फिर भी ब्राह्मण ने इन्कार ही किया। तव राजा ने हजार मोहरें मँगवाई। तब ब्राह्मण ने कहा—"इससे मेरा काम नहीं चलेगा।" तब राजा ने पूछा—"आखिर कहो भी तो तुम्हें कितना चाहिए।" ब्राह्मण ने जवाव दिया—"मुझे तो हराम का कुछ भी नही चाहिए। मैं तो हक की एक कौड़ी चाहता हूँ। शुद्ध कौडी लाख के वरावर है और पाप का लाख राख के वरावर।" अव राजा ने समझा। कहा कि "आठ दिनों वाद आना।" एक दिन वह स्वयं भेस वदल कर नगर देखने निकला। वड़ी रात को एक लुहार घन चला रहा था। उसके पास आकर राजा ने कहा—"भाई तू थक गया होगा मुझे घन चलाने दे। मुझे कुछ मजदूरी दे देना।" उसने एक आना देना कवूल करके राजा को काम दिया। राजा काम मे लगा। सारी रात मजदूरी की। लोहार बहुत खुश हो गया। उसने कहा—"भाई तूने मजदूरी तो खूव की। ले, चार आने ले ले।" राजा ने जवाव दिया—"भाई, मैने तो एक आने के लिए यह मजदूरी की थी। मुझे एक कौड़ी भी अधिक नही चाहिए।" लोहार ने फिर कहा—"भाई, तुमने इतनी भलमनसाई दिखाई है। अब मुझे भी कुछ सज्जनता दिखलाने दो।" राजा ने कहा—"खैर, एक कौड़ी दे दो।" एक कौड़ी और एक आना लेकर वह महल को गया और उसी को पाकर वह ब्राह्मण राजा का यश गाता हुआ घर गया। पर ब्राह्मणी का तो ब्राह्मण के इस भोलेपन पर जी जल गया। उसने वह कौड़ी और आना फेंक दिया। कथा ऐसी है कि उन चार पैसों में से चांदी के चार पौवे उगे और कौड़ी मे से सोने का एक पेड़ उगा। तुम अपनी शुद्ध कौड़ी का दान करो।

कात कर जैसी सुन्दर कौडी उत्पन्न होती है, वैसी और किसी तरह नहीं। तुम नमी वहिनो, कातने का व्रत लेकर जाओ, और भाइयो और वहिनो, तुम खादी का, और खादी न मिले तो स्वदेशी का व्रत लेकर जाओ।"

खादी-प्रदर्शन मे

इस भाषण के वाद गाधीजी ने मालवीयजी मे खादी-प्रदर्शन [illegible] आग्रह किया तो इसमे आश्चर्य ही क्या है? उन्होंने यह निवेदन तुरन्त [illegible] कर लिया। गाधीजी ने, मालवीयजी के साथ एक ही विषय पर, [illegible] इकट्ठे होने पर खुशी जाहिर की और कहा—"जब मालवीयजी ने मेरा [illegible] अपने हाथ मे ले लिया, तब मुझे अपना हाथ-पाव भी हिलाने की जरूरत न [illegible]। मेरी प्रार्थना है कि मेरे सिर का वोझ मालवीयजी उतार लेवें और आज [illegible] शुरू कर रहे हैं उसका कभी आदि-अन्त न आवे।"

मालवीयजी ने पुण्यतीर्थ मे पुण्य कार्य के लिए इकट्ठे होने पर [illegible]। यह वतलाकर कि हमारे कपडे के व्यापार का किस स्थिति मे नाश हुआ और [illegible] कपडे से क्या क्या नुकसान है, उन्होंने कहा—"पचासो साल से हम [illegible] और स्वदेशी उद्योग की वातें करते आ रहे हैं, मगर कुछ भी [illegible]। स्वदेशी का सच्चा रहस्य समझाने की वुद्धि भगवान ने मेरे भाई महात्मा [illegible] दी और उन्होंने देश के आगे यह वात पहले-पहल [illegible] वुना कपडा ही स्वदेशी है। आगे वोलते हुए उन्होंने पूछा—"[illegible] स्त्रिया हैं। मैं पूछता हू कि उनमे कितनी [illegible] आपको यह खवर देता हू कि १०० मे ८० तो घर मे वैठी [illegible] फुरसत का समय कातने मे लगाने की चाह उनके [illegible] के घरो मे लक्ष्मी का प्रवेश हो। अगर हम [illegible] के विना मिलने को नहीं। क्या आप [illegible] मेम साहिवाओ ने कितना काम किया [illegible] सूत कातने के काम के विना [illegible] मे आप कौन सा काम करोगे? [illegible] कि हम कातेंगे और खादी [illegible] एक छोटी-सी [illegible] करने आ [illegible] हैं। [illegible] चर्खा चलेगा, [illegible]

नुसार और परमात्मा की पूजा के लिए मैं यह प्रदर्शन खोलता हूं। ईश्वर से मेरी प्रार्थना है कि हमारे देश के कपड़े के व्यापार का जो स्थान पहले था वह उसे फिर मिले और इस व्यापार से देश का दारिद्रय दूर होवे।"

भाषण के अन्त में साधुओं से मालवीय जी ने आग्रहपूर्वक कहा—"इस कुम्भ के पुण्य अवसर पर आप खादी धारण करने का व्रत लो और खादी-प्रचार की प्रतिज्ञा करो।"

धन की भिक्षा का अच्छा जवाब मिला। यह कहने से भी चल सकता है कि जब से मालवीयजी ने खादी को आशीर्वाद दिया है, तब से नया ही युग शुरु हुआ है। हरद्वार में कुम्भ के अवसर पर मालवीयजी दस दिन वितानेवाले थे। उस वीच में खादी कार्य खूब बढ़ाने का वचन लेकर गांधीजी ने उनसे छुट्टी ली।

महादेव देसाई

—गुजराती। न० जी०, हि० न० जी, ७।४।१९२७।]

१४. काशी विद्यापीठ

यं० इं० के पाठक जानते है कि काशी विद्यापीठ उन इनी-गिनी राष्ट्रीय संस्थाओं में से है जो अभी जीवित है। काशी विद्यापीठ के पीठस्थविर की भेजी नीचे की विज्ञप्ति मैं सहर्ष छापता हूं।

मो० क० गांधी

गर्मी की छुट्टियों के वाद , आगामी १ श्रावण १९८४ (१७ जुलाई १९२७) को काशी विद्यापीठ खुलेगा। विद्यालय विभाग में चार साल का पाठ्यक्रम है। पहले दो वर्षों में हिन्दी, संस्कृत, दर्शन, विज्ञान, इतिहास, राजनीति, अर्थशास्त्र और अंग्रेजी का सामान्य ज्ञान कराया जायगा। वाकी दो वर्षों में, विद्यार्थी को निम्नलिखित किसी एक समूह का विशिष्ट अध्ययन करना होगा।

१. इतिहास, राजनीति और अर्थशास्त्र २. दर्शन ३. प्राचीन भारतवर्ष का इतिहास और संस्कृति। सभी शिक्षा हिन्दी भाषा और देवनागरी लिपि के द्वारा दी जायगी।

विद्यापीठ की विशारद या प्रवेशिका या किसी शिक्षा-संस्था की मैट्रिक या उनके समकक्ष परीक्षा में उत्तीर्ण होने पर ही विद्यार्थी भर्ती किया जायगा।

सभी विद्यार्थियों के लिए विद्यापीठ में ही रहने का प्रवन्ध रहेगा। प्रार्थना, कातना, व्यायाम और सहभोज में सभी विद्यार्थियों को शामिल होना होगा।

रहने या पढ़ने का कोई शुल्क नही लगेगा। इसके अलावा ५० निर्धन, सुच-

रित्र और योग्य विद्यार्थियो को अधिक-से-अधिक दस रुपयो तक की मासिक छात्रवृत्ति भी मिल सकती है। मगर किसी विद्यार्थी का खर्च १५) महीने से कम नही पड सकता। छात्रवृत्तियो के लिए सभी आवेदनपत्र १ श्रावण (१७ जुलाई) के पहले आचार्य के पास पहुच जाना चाहिए। दरखास्तो मे विद्यार्थी की योग्यता और आवश्यकता का पूरा ब्यौरा होना चाहिए। पाठ्यक्रम इत्यादि और दूसरी बातो के लिए पीठस्थविर, काशी विद्यापीठ, बनारस छावनी के पते से पत्र लिखना चाहिए।

—हि० न० जी०, ७।७।१९२७।]

१५. उत्तराखण्ड की पर्वतीय यात्रा : १९२९

गुरुवार १३ जून : बरेली थैली, रु० १,६५०-०-०, [illegible] १३-११-३, स्त्रियो की सभा, १६-७-४॥ (इस रकम मे से ५६ [illegible] के लिये अलग मिले हैं।)

शुक्रवार, १४ जून : हल्द्वानी थैली रु० ५००-००, उगाही १८ [illegible] काठगोदाम थैली, रु० २५१-००, उगाही २०-१०-६। नैनीताल [illegible] ३,१२४-१-६, उगाही ३८१-१४-६, नीलाम, २२५-००। १५ [illegible] रु० ११८८-००।

शनिवार, १५ जून : भवाली थैली रु० २,०८३-१३-०, [illegible] थैली १०१-००, उगाही १६६-५-२, नीलाम ३०-००।

सूचना :

१. भवाली की उपर्युक्त उगाही की रकम [illegible] रही है।

२ नैनीताल की स्त्री-सभा मे जो गहने [illegible] २०००-०-० है।

३ भवाली मे मिले [illegible]

गाधीजी के लिए [illegible] अखबार तो कभी बार [illegible] यात्रा के बाद [illegible] विश्राम लेना गाधीजी [illegible] बोझ खूब बना दी है।

पहाड़ों पर या तो आराम पाने के लिए आये हुए धनिक वर्ग से भेंट होती है, या यहां के उत्पन्न गरीब लोगों से। गरीब जनता में श्रद्धा है, उदारता है, देने की इच्छा है, किन्तु देने की ताकत नही है। धनिक वर्ग के पास देने की शक्ति हो सकती है, किन्तु हिम्मत कहां से हो? अतएव गांधीजी को आते समय यह आशा तो न थी कि यहां से खादी-निधि के लिए अधिक द्रव्य मिलेगा। फिर भी ऊपर के अंकों से पता चलेगा कि चन्दे की दृष्टि से भी इस यात्रा को निष्फल तो नही कहा जा सकता।

कार्यक्रम का आरम्भ वरेली से हुआ। बरेली शहर बड़ा है। सवा लाख से ज्यादा उसकी आवादी है। वांस के काम के लिए सारे भारत में मशहूर है। यहां तक कि अगर बाहर से कोई बांस यहां भेजे तो मूर्ख-शिरोमणि कहा जाय। इसी कारण औंधे व्यापार को लक्ष्य करके हिन्दी में 'उलटा वांस बरेली' कहावत प्रचलित है।

ता० १३ को सवेरे हम वरेली पहुंचे। पण्डित जवाहरलाल नेहरू और आचार्य कृपलानी यहां हमसे आ मिले। कृपलानी जी ने आचार्य का धन्धा छोड़कर अब केवल दरिद्रनारायण की सेवा को ही अपना जीवन वना लिया है, और चर्खा संघ की शाखा के मन्त्री का काम करते है।

वह अपनी खादी की गांठें लेकर वरेली आये थे। यह नहीं कह सकते कि खादी-निधि के लिए केवल १६५० रुपये की थैली भेंट कर वरेली ने अपना गौरव अक्षुण्ण रक्खा है। वात यह है कि अव तक यहां की जनता अपनी घोर नीद में से जगकर उठ नही वैठी है। गांवीजी के वरेली पहुंचने पर कार्यकर्त्ताओं की सभा बैठी। गांधीजी के साथ उन्होने दिल भर कर वातें की। इससे उनकी नीद तो खुली और उन्होने महासभा की पुनः संघटना में अपना हिस्सा भी तय कर लिया। मगर यह सव होते हुए भी ऐसा नही कहा जा सकता कि उनमें पूरी जागृति फैल गई है।

वरेली की म्युनिसिपैलिटी ने खादी पर से चुंगी उठाकर अपने साहस का परिचय दिया है। देश-नेताओं को मानपत्र देना तो आजकल म्युनिसिपलटियों के लिए सहज हो गया है। जनता और म्युनिस्पल सभाओं में गये हुए उनके प्रतिनिधियों के वीच के सम्वन्ध का यह एक चिह्न है। किन्तु वरेली म्युनिसिपलटी के सदस्यों को सार्वजनिक सभा में औरों के साथ अपना भी मानपत्र देने में मानहानि की बू आई, और उन्होने एक अलग सभा में मानपत्र दिया। इस सभा में राष्ट्रीय भजन गानेवाले वालकों के कपड़े मैले और अधिकतर विदेशी थे। गान भी वेसुरा और अव्यवस्थित था। गांधीजी ने भाषण में इन सव वातों की टीका करते हुए म्युनिसिपल सदस्यों को खूब फटकारा, और कहा कि जनता से अलग रहने में प्रतिष्ठा की वृद्धि नहीं होती; सच्ची वृद्धि तो जनता के साथ सम्वन्ध पैदा करके

उसके सच्चे सेवक बनने मे है। खादी पर से चुगी उठा देनेवाली म्युनिसिपल्टी के बहुतेरे सदस्य विदेशी कपडे पहिनकर सभा मे आये थे, इस पर टीका करते हुए गाधीजी ने कहा कि अगर उन्हे खादी के प्रति सच्चा प्रेम हो तो म्युनिसिपल शालाओ मे तकली शुरू करके सस्ते दामो ढेरो खादी तैयार की जा सकती है। गाधीजी को यह सुनकर दुःख हुआ कि बरेली मे हिन्दू-मुसलमानो का सम्बन्ध अच्छा नही है, किन्तु उन्होंने अपनी अटल श्रद्धा प्रकट करते हुए कहा कि निकट भविष्य मे ही हिन्दू और मुसलमान एक होगे, क्योकि जनता अब समझ गई [illegible] आत्मा के लिए स्वतन्त्रता उतनी ही जरूरी चीज है जितनी [illegible] मनुष्य की शरीर-रक्षा के लिए है। और स्वातन्त्र्य और ऐक्य तो एक ही [illegible] पहलू हैं।

उसी रात बरेली मे हम नैनीताल के लिए चल पडे। रास्ते मे [illegible] और काठगोदाम मे छोटी-छोटी सभाए हुई। हल्द्वानी मे पास [illegible] के स्वराज्य दल के प्रतिष्ठित नेता श्री गोविन्दवल्लभ पन्त गाधीजी [illegible] करने आये थे। नैनीताल ६,३०० फुट ऊचे पहाड पर बसा हुआ है [illegible] प्रान्तीय सरकार की गर्मी के दिनो की राजधानी है। इस प्रदेश के लोगो [illegible] और उनकी असुविधाओ का यहा निकट से परिचय हुआ। [illegible] की अपेक्षा यहा के सर्व-साधारण का भी सबसे बडा रोग तो गरीबी [illegible] के आस-पास सकरी क्यारियो मे जमीन जोतकर कठिन मेहनत से [illegible] निर्वाह-योग्य अन्न मुश्किल से पैदा कर पाते है। [illegible] है। खेती की नहरें बेकाम हो जाय तो सरकार उनकी मरम्मत [illegible] और रिआया को मरम्मत करने का अधिकार होता ही नही। [illegible] बडी परीशानी उठानी पडती है। किसी जमाने मे [illegible] का धन्धा सर्वव्यापी था, जिससे यहा के लोगो [illegible] अब तो यह धन्धा लगभग नष्ट हो चुका है, फिर भी [illegible] हर साल लगभग १२ हजार मन ऊन [illegible] जाता है। यही कारण है कि यहा के निवासियो [illegible] द्वारपाल और दूसरे [illegible] जाते हैं।

बेगार की बुरी प्रथा [illegible] ससार के हर एक देश मे [illegible] मे सभ्यता [illegible] को क्यो कर स्थान दे रही है। [illegible]

थी। तात्पर्य, जब साहब लोग पहाड़ों पर सैर करने आते थे, अथवा गर्मी के दिनों में सरकार का मुकाम यहां होता था, तब सरकारी कर्मचारी जवर्दस्ती यहां के लोगों से मुफ्त या नाम-मात्र की मजूरी देकर वेगार उठवाते थे और ये लोग इन्कार नहीं कर सकते थे। असहयोग आन्दोलन ने इन लोगों में भी नई जान डाली और अन्य कई कुप्रथाओं की तरह इस कुप्रथा का भी अन्त हुआ। इस प्रथा के नाश का इतिहास अत्यन्त बोधप्रद है और दिलचस्प है। लेकिन सांप के चले जाने पर भी जैसे वसीटन रह जाती है, उसी तरह यह प्रथा तो मिट गई परन्तु आजकल भी धनवान लोगों को अपने कन्धो पर उठाकर ले जानेवाले कुलियों का दृश्य यहां सर्वत्र दिखाई पड़ता है। इस दृश्य ने हमारी वर्तमान सामाजिक स्थिति का, जिसमें पूंजीपति धनवान लोग श्रमजीवी गरीव प्रजा को अधिक गुलाम बनाये रखते है, उनकी पीठ पर चढ़कर मौज उड़ाते हैं, इसका चित्र गांधीजी के सामने खड़ा कर दिया।

गांधीजी के आने से यहां की जनता में जो उल्लास और उत्साह की रेलठेल मची है, वह कभी भूली नही जा सकती। पहाड़ी के आस-पास जहां-जहां तक नजर पहुंचती थी, दर्शनाभिलाषी लोगों की कतारें ही दिखाई पड़ती थी। नैनीताल में दो सभाएं हुई थी। पुरुषों की सभा हरियाली से ढके विशाल पर्वतों के बीच एक निर्मल जलवाले तालाव के किनारे हुई थी। तालाब क्या था, मानो हिमालय का चमचमाता नेत्र ही था। सभा में गांधीजी को लकड़ी की दो पेटियों में मानपत्र दिये गये थे। नीलाम करने पर पेटियों से क्रमशः १०० तथा १२० रुपये मिले। स्त्रियों की सभा में गांधीजी को १,१,६६ रुपये की थैली दी गई थी। सभा में गांधीजी के सामने स्त्रियों ने खुले दिल से गहनों की वर्षा करके अपने प्रेम और श्रद्धा का परिचय दिया था। एक हजार के लगभग उपस्थितिवाली सभा में से २०० से भी ज्यादा गहनों का भेंट में मिलना कोई साधारण वात न थी।

नैनीताल से हम भवाली पहुंचे। भवाली नैनीताल के मुकाबले कुछ नीचे पर है। क्षय के रोगियों के लिए यहां की जलवायु वहुत ही सुन्दर और लाभदायी मानी जाती है। यहां भी स्त्रियों की एक छोटी-सी सभा और पुरुषों की सभा हुई थी। पुरुषों की सभा मे नागरिकों के मानपत्र के सिवा गांधीजी को यहां के शिल्पकारों—अन्त्यज भाइयों—की ओर से एक मानपत्र दिया गया था। अन्त्यज भाइयों के मानपत्र मे यहां की जनता के दुःखों की रामकहानी कही गई थी। उत्तर में गांधीजी ने उन्हें सलाह देते हुए कहा कि प्राण देकर भी अपने मनुष्यत्व की और स्वमान की रक्षा करनी चाहिए तथा किसी की वेगार उठाने की अपेक्षा मर मिटने का दृढ़ निश्चय करना अच्छा है। उनसे यह भी कहा गया कि अपना ऊन वाहर भेजकर

विदेशी कपडों पर पानी की तरह पैसे बहाना मूर्खता है, उससे बचना चाहिए और अपने घरों मे चर्खे को योग्य स्थान देना चाहिए। अकेले ईश्वर का ही हृदय मे डर रखकर और किसी से भी न डरने की प्रतिज्ञा करने की सलाह देते हुए उन्होंने कहा—"आप मुझसे कहते हैं कि सरकार ने चरागाहो के उपयोग के अधिकार आपसे छीन लिये हैं। किन्तु यदि आप सगठित हो जाय, एकता से काम लें और यह निश्चय कर लें कि चरागाह आप के है और आप के रहेंगे, तो ससार की कोई भी ताकत आपके पास से आपके चरागाह छीन नही सकती। इसी तरह यदि आप यह प्रतिज्ञा करलें कि किसी की भी वेगार न उठायेंगे, तो किसकी ताकत है जो आपसे वेगार उठवा सके? ईश्वर भी विना उद्यम के किसी की सहायता नही करता। इसी से हमारे शास्त्रकारो ने कहा है कि आत्मा ही हमारा अपना मित्र अथवा शत्रु है—आत्मैव ह्यात्मनो वन्धुरात्मैव रिपुरात्मन। आपने अपने मानपत्र मे यह आशा प्रकट की है कि मेरे यहा आने से आपके सकट टलेंगे, मगर सकट-निवारण का काम तो एक ईश्वर ही कर सकता है। अस्पृश्यता का कलक मिटाकर, आत्म-शुद्धि करके, आप अपने आपको ईश्वर की सहायता के योग्य वना सकते हैं।"

—गुजराती। न० जी०। हि० न० जी०, २७।६।१९२९ मे प्यारेलाल का साप्ताहिक पत्र।]

१६. उत्तराखण्ड की पर्वतीय यात्रा : १९२९

(२)

रविवार, ता० १६ जून : गरमपानी : ताडीखेत की थैली, [illegible] रु० ९२९-१०-३।

मंगलवार, ता० १८ जून : रानीखेत की उगाही, [illegible] स्त्रियो की थैली ११३-०-०; नीलाम और सभा मे उगाही ११८ [illegible] गहनो की अन्दाजन कीमत ५०-०-०, [illegible] रानीखेत से अल्मोडा जाते हुए, १०८-७-३। अल्मोडा [illegible] पेटी के नीलाम से १२०-०-०।

बुधवार, ता० १९ जून : अल्मोडा। [illegible] स्त्रियो की सभा मे मिले हुए गहनो (एक [illegible]) [illegible] २३८-७-००।

गुरुवार, ता० २० जून : अल्मोड़ा। सार्वजनिक सभा, मानपत्र थैली ३२१०-८-०; अलग-अलग आदमियों की तरफ से मिली रकम ८६३-८-०; नीलाम २३७-०-०; सार्वजनिक सभा का चन्दा १४४-११-३ सभा में मिले हुए गहनों की (एक मोहर समेत) अन्दाजन कीमत, ८८-७-००; गरुड़ का चन्दा ३८-११-० बेन्दी, हल्द्वानी और दूसरी जगहों से मिले गहनों की अन्दाजन कीमत ६२-८-० अब तक का कुल चन्दा रु० १७, ३०४-३-०।

मोटर द्वारा भवाली से लगभग तीस मील की यात्रा करके हम रानीखेत के निकट ताड़ीखेत पहुंचे। रास्ते में गरमपानी और गनियादोली नामक दो स्थानों में सभाएं हुईं। ताड़ीखेत भवाली से लगभग हजार फुट नीचे यानी करीब पांच हजार फुट की ऊंचाई पर बसा हुआ है। यहां हम प्रेम विद्यालय में ठहरे।—हम पहुंचे उसी दिन सांझ को उस विद्यालय का वार्षिकोत्सव था। एक हफ्ता पहिले से बड़ी धूम-धाम के साथ उत्सव की तैयारी की गई थी। खादी का प्रदर्शन इस उत्सव की एक विशेषता थी। कताई की स्पर्द्धा की भी योजना की गई थी किन्तु वह हो न सकी। प्रदर्शन में विद्यालय के विद्यार्थियों द्वारा बनाये गये सुन्दर ऊनी गलीचे, कम्बल और गर्म कपड़े खास तौर पर दर्शकों का ध्यान खींचते थे। प्रदर्शन-विभाग के बीचोंबीच भारतवर्ष के भू-भाग का नक्शा था। नक्शे में हिमालय की हिमाच्छादित पर्वत-माला चूने और चकमक पत्थर के योग से बनाई गई थी और बड़ी सुन्दर मालूम होती थी। उत्सव की दूसरी खास विशिष्टता प्रदर्शन के करने की थी। जिस मकान में गांधीजी ठहरे थे, उसका सारा बढ़ईगीरी का काम विद्यालय के छात्रों ने अपने हाथों किया था। जगह-जगह लोगों के लाभार्थ छोटी-से-छोटी सूचनाएं टांगी गई थीं। उत्सव का सारा प्रबन्ध और उसमें भी नन्हें-नन्हें छात्रों का कार्य प्रत्येक नवागत के लिए एक सुन्दरतम पदार्थ पाठ का काम देता था।

गांधीजी का भाषण अकेले विद्यार्थियों या कार्यकर्ताओं के लिए ही न था। गांधीजी के दर्शन के लिए आस-पास के और तीस-तीस मील दूर के प्रदेशों से कोई दस हजार लोग आये थे। उन सबको लक्ष्य करके गांधीजी ने भाषण किया था। भाषण में सारे प्रदेश के लिए संक्षिप्त सन्देश भी था। मानपत्र में यहां की जनता की जिस रामकहानी का उल्लेख किया गया था उसके सम्बन्ध में बोलते हुए उन्होंने चर्चा की।

(यह भाषण पुस्तक के भाषण-खण्ड में दिया गया है। इसलिए यहां छोड़ दिया गया है)

दो दिन ताड़ीखेत रहने के बाद हम लोग अल्मोड़ा पहुंचे। मार्ग में रानीखेत

स्थान पर स्त्रियो और पुरुषो की एक-एक सभा हुई थी। कोशी गांव मे कटारमल से आये हुए नायक लोग गाधीजी से मिले। इन लोगो मे एक भयकर सामाजिक कुप्रथा है। माता-पिता अपनी बालिकाओ को जन्म से वेश्या-जीवन के लिए तैयार करते हैं, और फिर उनकी बडी-से-बडी कीमत लेकर दूर जगहो मे बेंच आते हैं और इसी पर जीते हैं। किसी के सवाल करने पर धर्म की दुहाई देकर वे इस प्रथा का समर्थन करते हैं। सैनिक प्रथा और नीति-नाश दोनो एक दूसरे के सखा कहे जाते हैं। आज भी हमे इस बात के प्रमाण मिलते हैं। पुराने जमाने मे इस देश मे जो सैनिक प्रथा प्रचलित थी, कहा जाता है कि वर्तमान गदली प्रथा उसी की विरासत है। कुछ समय से इस प्रथा को मिटाने के प्रयत्न किये जा रहे हैं, किन्तु अभी बहुत-कुछ करना बाकी है। इस भयकर प्रथा का जडमूल से नाश कर देने के लिए गाधी-जी ने कुछ बहुत ही दर्द-भरी बातें कही और यह कहकर जनता को चेताया कि वह इस शर्मनाक हालत को जल्द ही खत्म कर दें।

जिस पहाड की चोटी पर अलमोडा शहर बसा हुआ है वह प्राचीन काल से प्रसिद्ध रहा है। स्कन्ध पुराण के मानस-खण्ड मे हमे उसका वर्णन भी मिलता है: कौशिकी शालमली मध्ये पुण्यकाषाय पर्वत.। अलमोडा के आस-पास का सृष्टि-सौन्दर्य और वहा की विशाल पर्वत-माला का दृश्य अतिशय भव्य है, उसमे प्रकृति के विराट स्वरूप के दर्शन होते हैं। इस प्रदेश मे मनुष्य और प्रकृति के बीच जो एक सरीखा सग्राम मचा रहता है, यह दृश्य उसकी हमे कल्पना कराता है। चीड और देवदारु के घने जगलो की हवा से लाभ उठाने के लिए श्रीमान लोग दूसरे प्रदेशो से यहा आते है, यहा के सृष्टि-सौन्दर्य का आनन्द उठाते हैं और उस पर मुग्ध होकर उसका काव्यमय वर्णन करते हैं। मगर यहा की जनता को, विशेषतः यहा के किसान-वर्ग को तो प्रकृति की प्रचण्ड शक्तियो का स्वरूप ही अधिक दर्शन देता है। फिर वह (जनता) न तो अपनी रामकहानी लिखती है, न किसी को उसकी खबर देती है। बाढ, बवण्डर, झझावात वगैरा तूफानो और जगली जानवरो के महात्रास के रहते हुए भी मनुष्य ने घने जगलो को साफ कर यहा सुन्दर बस्ती बसाई है और पर्वत फोडकर तमाम पर्वत को लहलहाते खेतो का स्वरूप दिया है। यह सब देखकर सहज ही विचार आता है कि चीटियो की सेना-जैसा मनुष्य-समूह अपने उद्योग, उन्नति और सगठन-शक्ति के बल पर क्या-क्या कर सकता है।

अलमोडा मे स्थानीय म्युनिसिपलिटी की ओर से गाधीजी को एक मानपत्र हिन्दी मे दिया गया था। म्युनिसिपलिटी के अध्यक्ष श्री ई० एम० ओकले ने उसे सुन्दर और शुद्ध उच्चारण के साथ पढा था। इस सभा से लौटते समय एक अत्यन्त दुःखद घटना हुई, जिससे गांधीजी को भयकर आघात पहुंचा। आमतौर पर मोटरो

के शोफर उतावले और तेजमिजाज होते हैं, और अपने ववण्डर-जैसे धन्धे के अनुसार ही उनका स्वभाव भी तूफानी ही होता है। जिस मोटर में गांधीजी बैठे थे उसका शोफर मामूली शोफरों से भी अधिक जल्दबाज और तेजमिजाज था। उसकी तुनुकमिजाजी और औधत्य की सीमा न थी। गांधीजी के दर्शन के लिए लोगों की विशाल भीड़ जमा हुई थी। उसमें से एक भाई पद्मसिंह दर्शन के लिए अत्यन्त उत्सुक होकर आगे बढ़े। शोफर ने मोटर न रोकी। भाई पद्मसिंह उसके नीचे आये और दब गये। गांधीजी तुरन्त मोटर में से उतर पड़े और वह भाई जल्द ही अस्पताल पहुंचाये गये। मैजिस्ट्रेट के सामने बयान देते समय पद्मसिंह ने शोफर की लापरवाही की शिकायत न कर अपनी उदारता और निरीहता का परिचय दिया था, और आखिरी दम तक हिम्मत न हारकर वह शान्त बने रहे थे। अस्पताल वालों ने बड़े ही प्रेम और लगन के साथ उनकी सेवा की, किन्तु उनकी सारी चेष्टा व्यर्थ हुई और तीसरे दिन पद्मसिंह के प्राणपखेरू उड़ गये। उसकी मृत्यु के कारण आखिरी दिन का जुलूस श्मशान-यात्रा में बदल गया। उनकी अंत्येष्टि-क्रिया के समय आस-पास के गांवों के लोग बड़ी संख्या में उपस्थित थे, साथ ही यहां के प्रसिद्ध नेता श्री गोविन्दवल्लभ पन्त अन्त समय तक हाजिर थे। श्री गोविन्द वल्लभ पन्त ने पद्मसिंह और उनके कुटुम्बियों को विश्वास दिलाया कि उन्हें हर प्रकार की आर्थिक और अन्य सहायता दी जायगी; इसमें कोई बाधा न पड़ेगी। परन्तु ये लोग यथासम्भव आर्थिक सहायता लेनेवाले नहीं हैं।

अलमोड़ा में ईसाई भाइयों की नन्हीं-सी आबादी है। उन्होंने गांधीजी को अपने गिर्जा में मानपत्र दिया। गांधीजी ने भारत और भारत के बाहर के ईसाइयों के साथ की अपनी मित्रता और घने स्नेह की बात कही और खासकर सेण्ट स्टीफेन कालेज के स्व० आचार्य रुद्र के साथ की अपनी घनी मैत्री का जिक्र करते हुए उनसे देश के लोगों के प्रति मैत्री भाव रखते हुए उनकी सेवा की अपील की।[1]

-- न० जी०। हि० न० जी०, ११-७।१०२९ श्री प्यारेलाल जी के वर्णन से।

१७. उत्तराखण्ड की पर्वतीय यात्रा : १९२९

(२ का शेषांश)

शुक्रवार, ता० २१ : अलमोड़ा और कौसानी का चन्दा : मेनन की थैली

---

१. यह भाषण भाषण-खण्ड में दिया गया है।

और चन्दा, रु० ६६-१५-६, रणवन की थैली, ५-७-०, सुनारी की थैली, १८-७-० सोमेश्वर और वरराओ की थैली, ५०-१२-३।

शनिवार, ता० २२ जून: कतुरमल्ल और वीचला, थैली और चन्दा उगाही, १२३-५-६, गागलमील की थैली २०-६-०, भौत से आई हुई थैली, २५-०-०, वागेश्वर की सार्वजनिक सभा का चन्दा, गहनो आदि के नीलाम से, ५६४-१०-६।

रविवार, ता० २३ जून : रास्ते का चन्दा ५-४-६

सोमवार ता० २४ जून : स्थानीय चन्दा ६-१२-३

अवतक का कुल चन्दा रु० १८ २६२-८-०

आखिरी दिन एक सार्वजनिक सभा मे जिला वोर्ड और दूसरी सस्थाओ की तरफ से कई मानपत्र दिये गये थे। यहा के जिलावोर्ड ने अपनी शालाओ मे ऊन की कताई दाखिल की है। इस सभा मे इस वोर्ड की शालाओ के विद्यार्थिओ मे तकली की होड (कताई-दगल) हुई थी और विजयी छात्र की शाला को क्रिकेट या दूसरे खेलो की भाँति चादी की ढाल दी गई थी।

इसी दिन पद्मसिंह का देहान्त हुआ था, अतएव गाधी जी का भापण भी इसी घटना के रग मे रँग गया था। भापण का सार नीचे दिया जाता है —

"एक घण्टे से मैंने आपकी वाते सुनी है, मगर मेरा दिल तो इस वक्त पद्मसिंह के साथ है। मोटर के नीचे दवकर मरनेवाले भाई का नाम पद्मसिंह है। डाक्टर की वात से मुझे आशा हो रही थी कि वह जी जायगे, मगर आज ३। वजे उनकी जीवन-डोर टूट गई। वरसो से मैं सफर करता रहा हू, और ऐसी-ऐसी भीडो मे भी मोटरों मे वैठ कर घूमा हू, लेकिन मेरे इस अन्तिम दिनो मे पहली वार ही यह घटना हुई है। मैं इस दु ख को कभी भूल नही सकूगा। मैं मानता हू कि मुझे मौत का डर नहीं है। एक दिन मौत आवेगी ही। पद्मसिंह तो मर कर जीये हैं। मृत्यु से उनकी कोई हानि नही हुई। दु ख तो मुझे है, और वह इस वात का कि उनकी मृत्यु का मैं निमित्त वना। मैं सदा से मानता आया हू कि मोटर की सवारी से घमण्ड वढ जाता है। मैंने यह भी अनुभव किया है कि शोफर हलकट और राजसी मिजाज के होते हैं। अतएव मेरे विचार मे मोटरो से, जिनमें ऐसे तेज-मिजाज काम करते है, वचना चाहिए। यह होते हुए भी मैं मोहवश, अधिक सेवा करने के ख्याल से, मोटर मे वैठता हू। मुझे इसका फल मिल गया। फिर भी मैं प्रतिज्ञा नहीं कर सकता कि आज से मोटर का त्याग कर ही दूगा। क्योकि मोटर मे वैठकर भारत की सेवा कर सकने के मोह को मैं छोड नही सकता। हा, इतना है कि मैं अपना दु ख प्रकट कर चुका हू और शोफरो तक अगर मेरी आवाज पहुचे तो मैं उनमे कहूगा कि वे अपने मिजाज की तेजी को कावू मे रक्खे। मुझे पूरा तजुर्वा है कि

शोफर प्रायः तेजमिजाज यानी क्रोधी होते है। मैं जानता हूं कि पद्मसिंह ने उदारतावश शोफर को क्षमा कर दिया और इसी मतलब का वयान मजिस्ट्रेट के सामने भी दिया, मगर इससे मैं अपने को या मोटरवाले को दोष-मुक्त नही समझता। होना तो यह चाहिए था कि ऐसी भीड़ में या तो मोटर का उपयोग ही न किया जाता, या फिर शोफर को मोटर तेजी से दौड़ानी न थी। यह दुःख कैसे भूला जाय? पद्मसिह बहादुर और ताकतवर थे। कल भी उन्होंने वड़े सुख से वातें की थी। मगर उनके भाग्य में अधिक जीना बदा न था और कमनसीवी मेरी थी कि मुझे अपनी आंखों उनकी मौत देखनी पड़ी।

"इस घटना से हमें सावधान बनना चाहिए। काल हमें अपने मुंह में रखकर नचा रहा है। जीवन-सूत्र सूत से भी कच्चा है, अतएव जितने दिन के लिए इस शरीर का उपयोग हमें मिला है, उतने दिन कर्त्तव्य-भ्रष्ट होकर हम राग-रंग, भोग-विलास और कामतृप्ति में क्यों बितायें, जीवन से यों ही हाथ क्यों धोयें? आपने मानपत्र मे स्वराज्य और मुक्ति पाने की इच्छा प्रकट की है। आपने विश्वासपूर्वक यह भी कहा है कि स्वराज्य केवल शान्ति से ही मिल सकता है। अगर यह बात सच है, तो उसके न मिलने की कोई वजह नही हो सकती। हमारा मार्ग बिल्कुल साफ और सीधा है। जिलाबोर्ड के मानपत्र में बालकों से कताने की बात कही गई है और बुनवाने की इच्छा प्रकट की गई है। इसके लिए मैं आपको धन्यवाद देता हू। आप कहते है कि आमदनी का साठ फीसदी भाग शिक्षा में खर्च किया जाता है और यह भी कहते है कि जो काम करना है उसके लिहाज से इतना धन नाकाफी है। आप काम करना चाहते है। मेरा अपना तजुर्वा तो यह है कि करोडों का धन मिल जाने पर भी इस तरह शिक्षा देना सर्वथा अशक्य है। गरीब देश में शिक्षा को स्वावलम्बी होना चाहिए। और शिक्षा का तरीका ऐसा होना चाहिए कि जिससे गरीव भी बिना किसी विशेष खर्च के शिक्षा पा सके। इस ढंग से धन कम खर्च होगा और वालक सच्ची शिक्षा पायेगे। हम जानते है कि हमारी सन्तान शिक्षित होते हुए भी चंचल मन, नीति-भ्रष्ट और कमजोर होती चली जा रही है। अगर हम शिक्षा को स्वावलम्बी बना दे तो बालक-बालिका अपने आप शरीर से मजबूत और मन एवं नीति से चुस्त बन जायं। सार्वजनिक सभा में इस पर और ज्यादा विचार नही कर सकता।"

—न० जी०। हि० न० जी०, ११।७।१९२९, में श्री प्यारेलाल जी के वर्णन से।]

१८. उत्तराखण्ड की पर्वतीय यात्रा : १९२९

(३)

जिलाबोर्ड के मानपत्र मे कई एक ध्यान देने योग्य बाते थी। बोर्ड की शालाओ की चर्खा-प्रवृत्ति का विवरण भी बहुत उपयोगी था।

पिछले छ वर्षों से इस बोर्ड की व्यवस्था का काम राष्ट्रवादियों के हाथ मे आया है। इस बीच, शिक्षा, अस्पृश्य-सेवा, चर्खा-प्रचार और लोक-जागृति आदि के बारे मे बोर्ड ने जो काम किया है, वह भारत के तमाम जिलाबोर्डों के लिए एक पदार्थ-पाठ का काम दे सकता है। हाथ-कताई और हाथ-बुनाई मे बोर्ड जितनी और जैसी दिलचस्पी लेता है, वह प्रशसनीय है। मानपत्र मे कहा गया था कि एक समय कुमाऊ मे पुष्कल कपास पैदा होता था, घर-घर चर्खे चलते थे, और अपनी कपडे की जरूरत के लिए प्रान्त को किसी दूसरे की मुहजोई नही करनी पडती थी। आज हालत एकदम बदल गई है। देशी-विदेशी सब तरह का कपडा मिलाकर आज कुमाऊ मे करीब १ करोड का कपडा आता है। फलस्वरूप और जगहो की तरह वहा भी हाथ-कताई अपना महत्व खो चुकी है। किसानो के पास फुर्सत का बहुत समय रहता है, जिसमे से मजदूरी वगैरा फुटकर काम करके पेट पालते हैं। समतल भूमि की खेती के समान यहा की खेती से लाभ नही होता। बहुतेरे गरीब किसान अपने निर्वाह-योग्य अनाज पैदा करके ही सन्तोष मान लेते हैं, क्योकि दूर से अनाज मंगाना उनके लिए फायदेमन्द नही हो सकता। यह भी देखा जाता है कि खेती मे से वे लगान जमा करने योग्य पैदावार भी खड़ी नही कर सकते, उलटे मजूरी करके उसकी आय से लगान भरते हैं। जिलाबोर्ड इन लोगो मे हाथ-कताई और हाथ-बुनाई जारी करने का विचार कर रहा है। बोर्ड की ओर से एक खास खादी-समिति नियुक्त की गई है, जो सारे जिले मे कताई का बन्दोबस्त करती है। शालाओ और गावो मे फिलहाल तो ऊन कतवाया जाता है। एक बुनाईशाला भी खोली गई है, जहा सारे जिले का ऊन बुना जाता है। बुनाईशाला मे बने हुए घुस्से, कोट-पतलून के योग्य कपडे वगैरा चीजें बोर्ड के कार्य-कर्त्ता और विद्यार्थियो मे ही खप जाते है। बोर्ड ने अबतक खादी-काम के लिए १०,०००) खर्च किये हैं, इससे खादी-विषयक उसके उत्साह का पता चलता है।

बोर्ड की शिक्षा-प्रवृत्ति भी कोई मामूली नही है। २१,००० से भी ज्यादा बालक और १,००० से भी ज्यादा बालिकाए बोर्ड की अधीनस्थ सस्थाओ मे तालीम पाती हैं। इस मद मे बोर्ड ४॥ लाख की अपनी सालाना आमदनी मे से ६० फीसदी

रु० खर्च करता है। फिर भी अभी शिक्षा के क्षेत्र में तरक्की की बहुत-कुछ गुंजाइश है और धन की व्यवस्था होते ही बोर्ड इसे उठा भी लेगा।

शिक्षा-प्रवृत्ति का जिक्र करते हुए बोर्ड अपने मानपत्र में अस्पृश्यों को भूला न था : अस्पृश्य कहे जानेवाले बालक दूसरे बालकों के साथ शालाओं में बिना किसी संकोच के मिलते-जुलते है। साथ ही शिक्षा-विभाग के नियमानुसार अस्पृश्य और मुस्लिम बालकों के लिए पृथक् पाठशालाओं का प्रबन्ध भी है। इस समय दो हजार से भी अधिक अस्पृश्य बालक बोर्ड की देखरेख में शिक्षा पा रहे हैं।

पण्डित हरगोविन्द पन्त इस बोर्ड के अध्यक्ष है। सारे कुमाऊं जिले में वह एक पुराने स्वार्थत्यागी और राष्ट्रीय कार्यकर्त्ता के नाम से प्रसिद्ध हैं। खुद वकालत करते है, मगर बोर्ड के कामों या अन्य राष्ट्रीय कामों के लिए समय खर्च करने में वह कभी पीछे हटते सुने नही गये। वकालत की आय का बड़ा हिस्सा वह लोगों की खानगी सहायता करने में और पाठशाला आदि में प्रति-मास खर्च करते हैं। उनकी सादगी औरों के लिए आदर्श-रूप है। बोर्ड के अध्यक्ष होते हुए भी वह बोर्ड के काम के लिए की जानेवाली यात्राओं में अपनी जेब से खर्च करते हैं। बहुत बार वह मीलों तक पहाड़ों की पैदल-यात्रा करते हैं, और इस तरह अपने मातहत कर्मचारियों के हृदयों को अपनी ओर अनुरक्त करते हैं।

कौसानी

जिस दिन गांधीजी जो यह मानपत्र दिया गया था उसके दूसरे दिन ही वह अलमोड़ा से चलकर कौसानी पहुंचे। इस स्थान से तेईस मील दूर, पहाड़ की तलेटी में सरयू नदी के किनारे बागेश्वर नामक एक गांव है। बेगार और कुलीपन की अमानुषिक प्रथा के खिलाफ जो लड़ाई इस प्रदेश में खड़ी हो गई थी, उसके इतिहास में इस स्थान का महत्व कुरुक्षेत्र के समान है। इस लड़ाई की कथा किसी समय 'हिन्दी-नवजीवन' में दी ही जायगी। ता० २२ के दिन गांधीजी ने इस गांव की यात्रा की। रास्ता बड़ा बीहड़-विषम था। चौदह मील का रास्ता तो ऐसा था कि गांधीजी उसे डोली में बैठ कर ही पार कर सकते थे। निरुपाय होकर उन्होंने यह कड़वा घूंट भी पिया। उनकी वर्तमान शारीरिक निर्बलता को देखते हुए डोली में बैठकर चौदह मील की यात्रा करना कोई हंसी-खेल न था। बागेश्वर पहुंचते-पहुंचते तो वह भलीभांति थक कर चूर हो गये थे। लौटती बार डोली की व्यवस्था में कुछ परिवर्तन करने से त्रास कुछ कम हो गया था। बागेश्वर में पहाड़ी लोगों की एक बड़ी सभा हुई थी। अलमोड़ा की यात्रा में यही एक ऐसा स्थान था, जहां आसपास की पहाड़ियों में से बड़ी संख्या में लोग गांधीजी को देखने

के लिए आ सकते थे। इस सभा मे आये हुए गरीव भाइयो ने भी खुले हाथो दरिद्र-नारायण की निधि के लिए चन्दा दिया था। इस सभा की यह एक विशेषता थी। साझ के समय आसपास के गांवो से आये हुए करीव ४० कार्यकर्त्ताओ ने गाधीजी के साथ वातें की। सारे दिन के कार्यक्रम मे यह वातचीत का समय सवसे ज्यादा अनमोल कहा जा सकता है।

वागेश्वर से लौट कर, पिछले तीन महीने की दौडधूप के वाद थोडा विश्राम पाने के हेतु से, और वहुत समय पहले से अधूरे रहे हुए गीताजी के काम को पूरा करने की इच्छा से गाधीजी कौसानी मे ही रहे थे। कौसानी अलमोडा से लगभग एक हजार फुट ज्यादा ऊचाई पर वसा हुआ स्थान है। समुद्र की सतह से यह स्थान ६,३७५ फुट ऊचा है, और हिमाचल के इस प्रदेश के अत्यन्त रमणीय स्थानो में प्रकृति की प्रदर्शनी के नाम से मशहूर है। गाधीजी यहा के एक डाक वगले मे ठहरे थे। जिस वरामदे मे वह वैठते थे वहा से उत्तर की ओर वर्फ से ढके हुए हिमालय के शिखर दिखाई पडते हैं। चारो ओर हरियाली से ढकी हुई पर्वतमालाए दृष्टि-गोचर होती हैं। ठेठ नीचे की ओर तलेटी मे हरे मखमल के गलीचे की झाईं वाले खेत और उनके वीच-बीच मे वसी हुई कृपको की सुन्दर झोपडिया किसी महान कलाकार के हाथ से खिची हुई तस्वीर की तरह शोभा देती थी। पल-पल मे वदलनेवाले रगरूप मे ही इन दृश्यो की विशेपता है। जिस समय आकाश स्वच्छ होता है, नीलाम्वर आकाश मे हिमालय के रुपहले मुकुटो के समान हीरक-जटित शिखरो की आभा आखो को चौंधिया देती है। कभी-कभी वहुत ही सूक्ष्म और महीन मखमल के शुभ्रपट की भाति कुहरा चारों ओर फैल जाता है और उसमे से हिमालय के ज्योतिर्मय शिखर जगमगाते हैं। जव सायकाल के समय सूर्य अपनी किरणो से वादलो को भेदता है तव ऐसा मालूम पडता है, मानो आकाश अनेक भव्य सुवर्ण-नगरियो का रूप धारण कर रहा हो। उसमे स्फटिक और चादी के प्रदीप्त कलशवाले मन्दिर, दिव्य रगमहल, और विराट् दुर्ग जगमगाते हैं। अस्त होते हुए सूर्य की किरणें जैसे-जैसे एक के वाद एक इन शिखरो को स्नान कराती जाती है, तैसे-तैसे ये शिखर सुवर्ण नगरी मे अनेक रगो की दीपमालिका का रूप धारण करते जाते हैं।

पूर्व, पश्चिम और दक्षिण की पर्वतमालाओ की ओर दृष्टिपात करने से, चोटी से लेकर तलेटी तक, चारो ओर वनी हुई खेतो की क्यारिया ऐसी मालूम होती हैं, मानो एक पर एक लुढ़कनेवाली समुद्र की असख्य नीलवर्ण लहरें हो। इन पर्वतो की चोटियो पर विराजमान चीड और देवदारु के विशाल वृक्षो का अनन्त समूह ऐसा मालूम होता है, मानो प्रकृति ने अपने डेरे तान दिये हो। साय-

काल के समय जब हवा इन घने जंगलों पर से सांय-सांय करती हुई बढ़ती है, तब थोड़े समय के लिए समुद्र की गंभीर ध्वनि के नाद का भ्रम हो जाता है।

इन पर्वतों की शान्ति अनुपम है। ऊंचाई पर और पूर्व में होने के कारण यहां सवेरा जल्दी ही होता है। सवेरे पांच बजे पौ फटते ही पक्षी प्रभाती गाना शुरु कर देते है, और हवा में झूमने वाले वृक्षों की शाखाओं को अपने कल-कूजन से कल्लोलित कर देते है। रात हो या दिन, बुलबुल का गाना तो सदा ही सुनाई पड़ता है। और जब मूसलाधार पानी बरसता है, उस समय का मधुरनाद तो एकदम अवर्णनीय ही होता है। ऐसा मालूम होता है, मानों प्रकृति का समस्त संगीतदल एक-साथ गरज उठा हो और उसमें अनेक रागरागिनियां गूंजने लगी हों।

इस अप्रतिम और अलौकिक सृष्टि-सौन्दर्य और शान्ति के स्थान में रहकर गांधीजी अपनी प्रियतम गीता की धुन में तल्लीन हो जाने की वर्षो पुरानी अभिलाषा पूरी कर सके थे, और उसमें से रस की घूंटें पी-पी कर पद्मसिंह के आघात की वेदना को हलकी कर सके थे। उनकी मनोदशा का परिचय नीचे दिये गये एक मित्र को लिखे पत्र से मिलेगा :—

"पद्मसिह का आघात रसिक (गांधी जी के मृत पौत्र) की मृत्यु से ज्यादा पहुचा है। इस आघात का कारण मृत्यु नही, मेरी मन्दता थी। मगर मैंने उपवास तो जानबूझ कर नहीं किया। अगर मौत स्वागत की वस्तु है तो फिर उसके लिए उपवास कैसा? इस भयंकर मृत्यु के अवसर पर भी इस तरह फिर से विचार करके उस दिन शाम को मैंने भोजन किया, यद्यपि समय प्रायः बीत चुका था। सवेरे तो खाया ही था।"

पद्मसिह की मृत्यु की कथा जितनी करुणारस-पूर्ण उतनी ही वीररस-पूर्ण भी है। मरने से एक दिन पहले उन्होंने गांधीजी के साथ अपनी मौत की बात बड़े स्वस्थ चित्त से की थी, और कहा था :—"अगर मै न बचूं, तो मेरे लड़के को आशीर्वाद दीजिएगा।" गांधीजी ने कहा—"मैं इसे आश्रम ले जाऊंगा, अन्यथा अगर कहोगे तो आपके घर बैठे इसका प्रबन्ध करूंगा।" उन्होने जवाब में कहा —"मैं यह नही चाहता। इसकी जरूरत भी नही है। सिर्फ आपकी प्रेम-दृष्टि की ही आवश्यकता है।" गांधीजी ने उनको आश्वासन दिया। मृत्यु के बाद अल्मोड़ा के प्रतिष्ठित ईसाई कार्यकर्त्ता श्री मोहन जोशी उनके रिश्तेदारो से पूछ आये। श्री गोविन्दवल्लभ पन्त ने चन्दे की सूची भी शुरू कर दी थी। परन्तु रिश्तेदारो ने एक कौड़ी भी लेना स्वीकार न किया; कहने लगे—"हमें गांधीजी की आशीष-मात्र चाहिए, और कुछ नही।" फलतः चन्दा बन्द करना पड़ा। शिमला मे एक भाई सौ रुपये की दूरबीन खरीदने जा रहे थे। श्री महादेव देसाई, जो इस

समय सरदार वल्लभभाई के साथ शिमला है, पास ही खड़े थे। उन्होंने हँसते-हँसते विनोद मे कहा—"आप दूरबीन खरीदकर क्या करेंगे? इससे तो इन रुपयों को पद्मसिंह के सम्बन्धियो को ही भेज दो न?" उन भाई ने तत्काल ही यह सूचना मजूर कर ली और चेक गाधी जी के पास भिजवा दिया। लेकिन यहा तो मामला कुछ और ही हो गया था। गाधीजी ने चेक वापस भिजवाते हुए लिखा—"पद्मसिंह के सम्बन्धी तो इस चेक को स्वीकार नही करते, फिर भी अगर आपकी इच्छा हो तो दूसरे किसी काम के लिए ये रुपये दान दे ही सकते है।" बारबार मन मे यही प्रश्न उठता है कि आया यहा के सब लोग ही इतने स्वाभिमानी और वीर हैं या अकेला पद्मसिंह का कुटुम्ब ही। पद्मसिंह की मृत्यु से यह प्रदेश सहज ही यात्रास्थल बन गया था।

अल्मोडे की यात्रा पूरी हो चुकी है। मगर अपने अनेक मीठे स्मरणो की वजह से वह हमेशा याद रहेगी। वहा की स्वागत समिति के सदस्यो ने गाधीजी की और उनके साथियो की मेहमानदारी करने मे कोई बात उठा न रक्खी थी। सारी यात्रा की योजना मे उन्होने जिस सुव्यवस्था और चोखेपन का परिचय दिया है, उससे उनकी भावना, विवेक और लगन का पता चलता है। इस गरीब प्रदेश ने दरिद्रनारायण के लिए रु० १८,२६२-८-० की जो रकम दी है, वह कोई ऐसी-वैसी नही है। इस रकम मे से एक पाई भी गाधीजी की यात्रा के लिए नही ली गई। इन सब कारणो से यह यात्रा सयुक्तप्रान्त की आगामी यात्रा के लिए एक आदर्श होने योग्य है।

इस यात्रा मे वहा के लोगो ने जिस प्रेम और श्रद्धा के दर्शन कराये है, वे कभी भूले नही जा सकते। निर्जन स्थान होते हुए भी हर दिन झुण्ड-के-झुण्ड लोग वहा आते रहते थे, और कुछ-न-कुछ गाधी जी के निकट रख कर चले जाते थे। यहा के जगलो के निवासी अपने छीने हुए अधिकार वापस मागते हैं, लेकिन कही सुनवाई ही नही होती, फलत वे सरकार के जगल-सम्बन्धी अमानुपिक और जगली कायदो से पीडित हैं। इतने से ही सन्तोप न करके सरकार ने लगान-वृद्धि का एक नया तमाशा खडा किया है। गढवाल जिले मे ६५ फीसदी लगान बढाया गया है, और नैनीताल एव अलमोडा के लिए भी इसी तरह की तैयारिया हो रही है। लोगो ने इसके खिलाफ आन्दोलन शुरू किया है।

सारे ससार मे पहाड स्वतन्त्रता के दुर्ग कहे जाते हैं। लेकिन हमारी कमनसीबी से यह जगह आज अस्पृश्यता-जैसी कुप्रथा मे भी मुक्त नही है। यहा बोरा नामक एक जाति है। अलमोडा जिले मे इन लोगो की सख्या आठ हजार है। ये लोग सन के थैले बनाने का धन्धा करते हैं। मुरदार मास या गोमास ये नही

खाते। इन्हें शराबखोरी का भी व्यसन नहीं है। वैसे इन लोगों की रहन-सहन साधारणतया यहां के सामान्य क्षत्रियों के समान ही है। तिस पर भी ये अस्पृश्य कहे जाते है, और खूबी यह है कि पड़ोस के नैपाल राज्य में यही लोग अस्पृश्य नहीं माने जाते है। किमाश्चर्यमतः परम्। जो जनता स्वयं कुचली हुई है और अपनी स्वाधीनता एवं अधिकार पाने को आतुर हो रही है, वह किसी दूसरे के साथ अन्यायपूर्ण व्यवहार कैसे कर सकती है? गुलाम से पहले गुलामो का सरदार ही बड़ा गुलाम बनता है। आठ साल पहले असहयोग आन्दोलन के फलस्वरूप बेगारी विषयक लड़ाई को लेकर यहां स्वतन्त्रता का शंख पहली बार फूंका गया था, जिसकी वजह से सरकार की घरजानी-मनमानी का आसन डगमगाने लगा था। उस पांचजन्य की ध्वनि यहां फिर से कब सुन पड़ेगी? वह दिन कब आयेगा जब लोग अस्पृश्यता का महापातक दूर कर उस शुभ अवसर के लिए अपने आपको तैयार करेंगे?

—न० जी०। हि० न० जी० ११।७।१९२९ में श्री प्यारेलाल जी के वर्णन से]

१९. उत्तराखण्ड की पर्वतीय यात्रा : १९२९

(४)

अलमोड़ा की यात्रा के चन्दे के आखिरी अंक ये हैं :—

बरेली, रु० १,६०२-१०-७।, हल्द्वानी, ५६८-७-१।।, काठगोदाम, २७१-१०-६, नैनीताल, ६,६४०-०-०, भवाली, २,४६१-२-३, गरमपानी और ताड़ीखेत, ६२६-१०-३, रानीखेत, रतनगल और रियोनी, १,३३५-१४-०, अलमोड़ा, ६,०२३-१२-६, मनन, रणवन, सुनारी, सोमेश्वर, बरराव, कटूर वगैरा, ३८१-५-६, बागेश्वर, ६०६-११-६, कौसानी, ८०-६-६, रामनगर, १,०८७-१-१०।।, काशीपुर, १,७६४-६-४।।, रामनगर रेलगाड़ी पर एकत्र चन्दा, १८-४-६, अहमदा से बरेली तक रेलगाड़ी पर एकत्र चन्दा, २६-१२-३, गहनों की अधिक आंकी हुई कीमत, २५-१३-०, ऋण हुण्डी का बट्टा, १-६-०

कुल चन्दा, रु० २४,४३६-१-३

विदा

दस दिन कौसानी में विश्राम करने के बाद हम वहां से नीचे उतरे। श्री गोविन्दवल्लभ पन्त ने बहुत आग्रह किया कि गांधीजी कम-से-कम एक सप्ताह वहां और

ठहरें, मगर प्रकृति के उस रंग महल में भी विला वजह वह कैसे रह सकते थे? दिल्ली मे ता० ५ को कार्य-समिति की सभा थी, अतएव गाधीजी को वहा से ता० २ को रवाना हो ही जाना चाहिए था। रवाना होने से पहले वहा वालो के प्रेम और आग्रह के वश होकर और पद्मसिंह के प्रदेश की पहाडी जनता के निकट सम्पर्क मे आने की गरज से गाधीजी ने वहा आश्रम की एक शाखा कायम करने की योजना कवूल की थी। इस वारे मे अभी प्रयत्न चालू है।

साझ को गाधीजी रानीखेत पहुंचे, वहा से दूसरे दिन सवेरे रवाना होकर रेलगाडी से काशीपुर पहुचनेवाले थे। मगर रामनगर से गाधीजी पर निमन्त्रण के तारो की झड़ी-सी लग गई। रामनगर हिमालय की तलेटी मे वसा हुआ एक नगर है, व्यापार-वाणिज्य का एक वडा केन्द्र है, और वदरीनाथ जाते हुए रास्ते मे आनेवाले अनेक द्वारो मे से वह एक द्वार भी है। अनेक कारणवश रेलगाडी से रामनगर न जाते हुए मोटर मे जाना ही गाधीजी ने तय किया। साठ मील की मजिल थी। मगर मोटर के लिए सड़क विल्कुल खराव थी। रामनगर के नेताओ ने विश्वास दिलाया था कि वहा जाने मे मोटर को कोई अड़चन न होगी। लेकिन वस्तुत. यह यात्रा वहुत ही जोखिमवाली सावित हुई। विना किसी दुर्घटना के यह समाप्त हो गई, यही सन्तोष है।

रामनगर जाने का अन्तिम निश्चय रात को हुआ। खुफिया पुलिस के जो लोग रातदिन गाधीजी पर सख्त निगरानी रखते थे, वे भी इस निर्णय की गन्ध तक न पा सके, और दूसरे दिन सवेरे जव उन्हें गाधीजी के कूच का पता लगा तव तो वे दिग्मूढ ही रह गये। पता चलते ही उन्होंने चारो ओर मोटरें छोड दी। जव यह निश्चय हो गया कि गाधीजी रामनगर की ओर गये हैं, तो वे उसी ओर चल पडे। इतने मे मार्ग मे गाधीजी की मोटर पचर हो गई, इससे एक घण्टे की दौडधूप के वाद वे उनके पास आ पहुचे। मगर सच्ची कसौटी तो आगे होने वाली थी। कई जगहो मे तो सडक इतनी ज्यादा टेढी-मेढी थी कि मोटर को मोड़ते हुए वड़ा भारी डर लगता था। पहाडी सडको पर खाइयो की वाजू मे कही-कहीं पाल वांध दी जाती है, यहा वह भी अधिकतर टूटी हालत मे थी। ऊपर से वारिश की झडी लग गई। पल पर पल मोटर रपटने-फिसलने लगी। शोफर की हालत वडी दयनीय हो गई, मगर यही काफी न देख, देखते-देखते एक पहाडी ढलान पडी और साथ ही मोटर का मार्ग वन्द हो गया। सव किसी को मोटर मे से उतरना पडा और पत्थरो से छाई हुई सडक को साफ करना पडा। खुफिया पुलिस वालो ने भी सहायता की। ऊंची निगाह दौडाने पर पता चलता था कि पहाड़ की अनेक पथरीली चट्टानें वारिश की वजह से जर्जर होकर अव पडी तव पडी हो

रही थीं। इनसे वचने के लिए शोफरों ने मोटरें तेज कीं, मगर फिर पहाड़ी के ढल जाने से रुकना पड़ा। खुशनसीवी से उस समय वहां मजदूरों की एक टुकड़ी मौजूद थी, जिसकी मदद से रास्ता जल्द साफ हो सका। कई वार मार्ग में इस तरह के अनुभव हुए। आखिर मजूरों की एक टुकड़ी, मदद के लिए, मोटर में साथ ही लेनी पड़ी, और ७।। घण्टों के वाद जैसे-तैसे राननगर पहुंचे। यह विपम यात्रा निर्विघ्न समाप्त हुई, जानकर सव किसी ने वेफिक्री की सांस ली।

रामनगर

रानीखेत के मुकाबले रामनगर वहुत नीचे पर वसा है। रानीखेत समुद्री सतह से ६,००० फुट ऊंचे वसा है, और रामनगर २,००० फुट। इस तरह जल्दी-जल्दी ऊंचाई के भारी परिवर्तनों से प्रकृति पर कभी-कभी वुरा अरार पड़ता है। मगर हममें से किसी पर कोई वुरा असर नहीं पड़ा। रामनगर पहुंचते ही खुले मैदान में एक सार्वजनिक सभा हुई थी। ऊपर से आग वरस रही थी। चन्दे की थैली सिर्फ ५०१) की थी। रामनगर जैसे व्यापार के केन्द्र के लिए यह रकम न कुछ-सी थी। मगर मानपत्र में गांवीजी से कहा गया था कि वहुतेरे व्यापारियों के नगर से वाहर होने के कारण, जितना चाहिए था उतना चन्दा एकत्र न हो सका। लेकिन सच वात तो यह थी कि अगर रामनगर के लोग चाहते तो विना किसी रुकावट के दी हुए थैली की दुगुनी दे सकते थे, सवूत इसका यह था कि दी हुई रकम में आवे से ज्यादा रकम रामनगर महासभा के लोकप्रिय कार्यकर्त्ता पं० लक्ष्मणदास भट्ट ने दी थी। स्त्रियों की सभा में वहनों ने खुले हाथों दान दिया, और गहनों के सिवा देखते-देखते में ३००) इकट्ठे हो गये। रामनगर के मानपत्र में एक वात मार्के की थी। वहां अछूत भाइयो के लिए एक कुआं वनाया गया था, मगर फिल-हाल सव जाति के लोग विना किसी हिचकिचाहट के उसका उपयोग करते हैं। इस कुवें का इतिहास अत्यन्त दिलचस्प और वोधप्रद है। रामनगर में पीने योग्य अच्छे पानी की तंगी तो हमेशा रहती ही है। एकवार वहां पानी की गैरमामूली तंगी हो गई। अछूत भाइयो के कुएं में खूव पानी था, अतएव तथाकथित उच्च वर्ग के लोग, इस मौके से लाभ उठा कर, अस्पृश्यता के मिथ्या भ्रम में से मुक्त हो गये। इस समय सव वर्ण एक साथ उस कुएं पर से पानी भरते हैं। इस सुन्दर उनाहरण की नकल सारा देश करे तो कैसा?

काशीपुर

ता० ४ को सवेरे १ घण्टे की रेल-यात्रा के वाद गांवीजी काशीपुर पहुंचे।

कुदरत ने यहां के व्यवस्थापकों को एक सुन्दर पदार्थ-पाठ दिया। उन्होने सार्वजनिक सभा से पहले गाधीजी का जुलूस निकालने का प्रवन्ध किया था, और वहुत कुछ समझाने पर एव मेघाच्छन्न आकाश के रहने हुए भी वे जुलूस का मोह छोड नही सकते थे। फल-स्वरूप सार्वजनिक सभा का काम हो ही रहा था कि वारिश की झडी लग गई। सभा का काम थोडे मे निपटाना पडा और जनता खूव नहाई। स्वय गांधी जी भी मुकाम पर पहुचते-पहुचते भलीभाति तर हो चुके थे। स्त्रियों की जो सभा सवेरे होने को थी वह साझ को हो सकी। काशीपुर की थैली करीव १,२००) की थी; गहनो आदि को मिला कर कुल चन्दा १,६००) का हुआ था।

ता० ४ को ही काशीपुर से चल कर दूसरे दिन गाधी जी दिल्ली पहुचे और ता० ६ को आश्रम आ गये।

२०. पत्र : गोविन्दलाल शाह को

वोरसद, ता० १०-५-३१

श्री गोविन्दलाल जी,

आशा है आप नैनीताल मे होगे। पिताजी[1] का विचार ता० १८ को नैनीताल पहुचने का है। उनकी इच्छा तो यही होगी कि आपके यहा ठहरें। आगे आप और पण्डित गोविन्दवल्लभ जी जो इन्तजाम करें। पिता जी के साथ माता जी, मीरा वहिन, महादेव देसाई, प्यारेलाल जी, एक उत्कल के विद्यार्थी, एक टाइपिस्ट, सेठ जमनावाल जी वजाज (शायद) और मैं, इतने होगे। पहुचने की ठीक तारीख वगैरा मै शिमले से फिर लिखूगा। काठगोदाम से या किस स्टेशन से किस प्रकार चलकर हम लोगों को पहुचना होगा, इसके विषय मे प० गोविन्दवल्लभ जी के साथ वातचीत करके आप कृपया निश्चित रूप से शिमला लिखियेगा। वहा का पता यह होगा :—

द्वारा रायवहादुर मोहनलाल
जोग्रोव, जक्को, शिमला

आशा है आप कुशलपूर्वक होगे।

आपका सेवक
देवदास गाधी

—हिन्दी। वोरसद, १०।५।१९३१।]
सौजन्य : श्री राजीवलोचन शाह, नैनीताल।

---

१. महात्मा गांधी।

२४. शिवप्रसाद गुप्त की सेवा

मीरा बहन का ऐसा पोस्टकार्ड आया कि वह काशी में बीमार पड़ी हैं। उनके पत्र में मिलनेवाली बेहद सेवा का जिक्र था। उन्हें पत्र लिखा :—

"...मैं जानता हूं कि शिवप्रसाद बाबू के घर में कैसी बढ़िया आवभगत होती है। तुम्हें ये भी मीठे अनुभव हो रहे हैं, इससे मुझे खुशी है। इनके कारण ऐसी बीमारी सहन ही नहीं होती, बल्कि उसमें मानव स्वभाव के अच्छे-से-अच्छे पहलू का अनुभव होने के कारण वह एक आशीर्वाद भी बन जाती है। सभी हालत में सभी को यह अनुभव समान भाव से हो, तब तो वह दिव्यता के नजदीक पहुंच जाता है।"

—अंग्रेजी। २१।७।१९३२। महादेव भाई की डायरी भाग १, पृष्ठ ३१४।]

२५. भगवानदास जी का एक चित्र

बाबू भगवानदास आज चले गये। वह बापू के प्रति तीव्र भक्ति से प्रेरित होकर आये थे। भगवानदास की भक्ति की तो बात ही क्या? हर रोज फल लाते, बापू के चरणों में रखते, साष्टांग प्रणिपात करके चरणस्पर्श करने की कोशिश करते पर बापू ऐसा नहीं करने देते। गये उस समय उनका गला भर आया। बोले—"आपकी आज्ञा हो तो ठहर जाऊं।"

—म० भा० डा०, भाग २, पृ० ३३३। ३१।१२।१९३२।]

२६. श्रीमती भट्ट और अस्पृश्यता

श्रीमती भट्ट (बनारस वाली) आईं। महाराष्ट्रीय होकर भी हिन्दी बढ़िया बोलती थीं। बनारस में डोमवर्ग में अस्पृश्यता का काम करती हैं। यह पूछने पर कि अपराधी जाति की हैसियत से जिन डोमों को हाजरी देनी पड़ती है, उनके लिए कोई काम हो सकता है या नहीं। बापू बोले—"उन्हें हाजिरी लेनी पड़ती है, इसके लिए हमसे कुछ नहीं हो सकता। उन लोगों को सफाई वगैरा सिखाने और उनकी अस्पृश्यता दूर करने का सब काम हो सकता है।" नरगिस से मिलकर उनका बम्बई का काम देखने की सलाह दी। 'बनारस के पण्डे कहते हैं कि अछूत साफ

कपडे पहन कर आयेंगे तो हम नही रोकेंगे, मगर तुम ढोल वजाकर मत आओ। तो इसका लाभ अछूत लें या नही', यह सवाल भी पूछा।

वापू कहने लगे—"इन लोगो को सलाह देना कठिन है। किन्तु सलाह पूछने आयें तो कहा जा सकता है कि तुम साफ होकर स्वच्छ वस्त्र पहन कर जाओ और तुमसे पूछा जाय कि तुम अस्पृश्य हो तो जाति न छिपाकर प्रकट कर दो।"
—२०।१।१९३३। म० भा० डा० भाग ३, (न० जी०), पृ० ७०-७१।]

२७. कानपुर की म्युनिसिपैलिटी

२२ जुलाई को म्युनिसिपैलिटी और डिस्ट्रिक्ट वोर्ड ने एक ही जगह पर अपने अपने मानपत्र गाधीजी को दिये। यह वडा अच्छा हुआ, कि दोनो ही सार्वजनिक सस्थाओ की सयुक्त सभा हुई और गाधीजी को उनके गिरते स्वास्थ्य को देखते हुए, म्युनिसिपैलिटी और डिस्ट्रिक्ट वोर्ड ने वजाय इसके कि उन्हे आफिस मे ले जाने का कष्ट दिया जाय उन्हे उनके निवास-स्थान जवाहरलाल के वगले पर जाकर ही मानपत्र दिये।

कानपुर की म्युनिसिपैलिटी ने प्रशसनीय हरिजन-सेवा की है। १९३२ के पहले ही उसने १५००० रु० खर्च करके अपने हरिजन कर्मचारियो के लिए कुछ मकान वनवा दिये थे। लेकिन वावू व्रजेन्द्रस्वरूप जी जव से चेयरमैन हुए तव से म्युनिसिपैलिटी ने खासी कर्मण्यता दिखाई है। १९३३ मे चेयरमैन ने वोर्ड के आगे यह योजना पेश की कि मेहतरो के लिए १६८००० रु० खर्च कर के दो या तीन साल मे ५५० मकान वनवा दिये जाय। इम्प्रूवमेण्ट ट्रस्ट ने फार्वस कम्पाउण्ड मे जो ६० क्वार्टर हाल मे वनवाये हैं, उन्हें म्युनिसिपैलिटी ने २६५०० रू० मे खरीद लिया है। ट्रस्ट ३ रु० मासिक किराया फी क्वार्टर वसूल करता था मगर म्युनिसिपैलिटी २ रु० ही भाडा लेती है। माल पर अपने 'केटल वैरक कम्पाउण्ड' मे म्युनिसिपैलिटी ने ४० क्वार्टर वनवाये है, जिन पर १५००० रु० खर्च हुए हैं। यहा सिर्फ १ रु० मासिक किराया लिया जाता है और हाल ही सीसामऊ घोसियाना मे १८ क्वार्टर ६५००) मे वोर्ड ने खरीद लिये हैं। इस तरह एक साल के अन्दर ही म्युनिमिपैलिटी ने ४८०००) कीमत के १८८ अच्छे, हवादार और साफ-सुथरे मकान अपने हरिजन मुलाजिमों के लिए वनवा दिये या खरीद दिये। हमे आशा है कि म्युनिसिपैलिटी की यह प्रगति दिन-दिन वढती जायगी और अन्य स्थानो की म्युनिसिपैलिटिया इस सुन्दर उदाहरण का अनुकरण करेंगी। यहा की म्युनिसिपैलिटी ने हरिजन वस्तियो मे लाल-

२१. स्वराज्य भवन अस्पताल

श्री मोहनलाल नेहरू लिखते हैं :—

"उक्त अस्पताल के लिए कुछ सप्ताह हुए, हिन्दी नवजीवन में जो अपील प्रकाशित हुई थी, उसके सिलसिले में अब तक यानी शनिवार तारीख ३० मई को समाप्त होनेवाले सप्ताह तक मुझे नीचे लिखा चन्दा मिला है। कुछ चन्दा देने वाले चाहते हैं कि 'हिन्दी नवजीवन' में उनके चन्दे का हवाला दिया जाय, पर मैं सभी के नाम भेज रहा हूं। मैं हर सप्ताह शनिवार को आपके पास दाताओं की सूची भेज दिया करूंगा।

श्रीयुत	भाईलाल सी पटेल बम्बई	रु० २५
,,	लाड़मल भण्डारी ट्रिप्लीकेन	रु० ५
,,	डी० आर० मोदी० सूरत	रु० २०
,,	रतिलाल उमियाशंकर सरस	रु० १५
,,	ई० कोचूगिरूडा मेनन कोचीन	रु० ६-१४-०
,,	एन० सी० कोतवाल दुर्ग फोर्ट	रु० २५-००
,,	हरखचन्द मोतीचन्द धारवाड़	रु० २५
,,	रामेश्वर भोलाराम धूलिया	रु० १०
,,	एस० दुराई स्वामी अम्बलंगोडाकी कोलम्बो	रु० ४५
		१७६-१४-००

तीस मई को समाप्त होने वाले सप्ताह की मीजान नैनीताल में जो रकम मिली है वह इससे अलग है, उसका हवाला यथासमय इन स्तम्भों में प्रकट किया जायगा।

—हि० न० जी०, २५।६।१९३१।]

[२२. स्वरूपरानी पर मार

स्वरूपरानी नेहरू को जो मार पड़ी, उसके बारे में वापू ने यह मानने से इन्कार ही कर दिया कि यह पुलिस का काम हो सकता है। दो तीन अनुमान लगाये थे। आज स्वरूपरानी ने खुद ही प्रकाशित किया है कि मार पुलिस की ही थी। यह जानकर वापू उबल उठे है। लाला जी पर जानबूझ कर मार पड़ी थी, तो

भी उस पर देश भर मे खलबली मच गई थी। यह मार तो जवाहरलाल की माता पर जानबूझ कर ही पड़ी होगी न। फिर भी देश मे कोई पुण्य प्रकोप नही दीख पडता। 'लीडर' ने भी कुछ नही लिखा। वल्लभ भाई कहने लगे—"खलबली मचानेवाले हम सब तो अन्दर बैठे हैं।" 'लीडर' ने जो लिखा उसमे कोई दम नही है। बापू कहने लगे—"मगर लिखा भी है?" लिखा है अगर उसे पढ़ कर क्या करेंगे? बापू ने कहा—"नही, पढकर सुनाइए।" सुनकर उन्हे काफी असन्तोष हुआ। बोले—"इसे तो समतोल मस्तिष्क वाले की पदवी मिली है न! आज ही सुबह उस पत्रकार ने कहा सो हमने पढा था न कि 'हिन्दू' और 'लीडर' के लेख पुख्ता कहला सकते हैं?"

—हिन्दी। १३।४।१९३२, महादेव भाई की डायरी भाग १, पृष्ठ ९४।]

२३. अन्याय की सीमा

आज यह पढा कि इलाहाबाद हाईकोर्ट मे एक रामचरण नाम के ब्राह्मण जमीदार को एक धोबन को मार डालने पर पाँच साल की सजा हुई। धोबन ने सामने जवाब दिया था कि मैं आज शाम को कपडे लेने आऊगी। इसलिए रामचरण ने उसे लात-मुक्के लगाये। दूसरी स्त्री मदद को आई तो उसे तमाचे लगाये और उसका पति आया तो उसके हाथ से लाठी छीन कर उसे मारा। और अन्त मे ५० वर्ष की एक और स्त्री आई तो उसको लातें जमाईं। उसकी तिल्ली फट गई और वह उसी वक्त मर गई। तब जनाब भागे। आजकल कैदियो को छोड़ा जा रहा है और हमारे आदमियो को अच्छी तरह सजा दी जाती है। उसे ध्यान मे रखकर बापू कहने लगे—"उसे पाच साल की सजा है, मगर वह पाँच महीने भी नही रहेगा। कहेगा कि मैं वफादार सभा कायम करूगा, किसानो से रुपया दिलवाऊगा, और सविनय भग की लड़ाई को दबा देने मे मदद करूगा। इस पर उसे आसानी से छोड दिया जायगा।" किसी भी कैदी को छोडने की एक शर्त यह है कि उसे कम-से-कम तीन महीने पूरे कर लेना चाहिए। इस पर वल्लभभाई कहने लगे—"उसने सफाई मे यह नही कह दिया कि यह स्त्री स्वराज्य की लडाई मे शरीक थी और खादी के सिवा दूसरे कपडे धोने को ले जाने से इन्कार करती थी, और मेरे विरुद्ध यह झूठा इलजाम लगाया गया है?"

—३०।६।१९३२। महादेव भाई की डायरी, भाग १, पृ० २५९-६०।]

२४. शिवप्रसाद गुप्त की सेवा

मीरा वहन का ऐसा पोस्टकार्ड आया कि वह काशी में वीमार पड़ी है। उनके पत्र में मिलनेवाली वेहद सेवा का जिक्र था। उन्हें पत्र लिखा :—

"...मैं जानता हूं कि शिवप्रसाद वावू के घर में कैसी वढ़िया आवभगत होती है। तुम्हें ये भी मीठे अनुभव हो रहे हैं, इससे मुझे खुशी है। इनके कारण ऐसी बीमारी सहन ही नहीं होती, बल्कि उसमें मानव स्वभाव के अच्छे-से-अच्छे पहलू का अनुभव होने के कारण वह एक आशीर्वाद भी वन जाती है। सभी हालत में सभी को यह अनुभव समान भाव से हो, तव तो वह दिव्यता के नजदीक पहुंच जाता है।"

—अंग्रेजी। २१।७।१९३२। महादेव भाई की डायरी भाग १, पृष्ठ ३१४।]

२५. भगवानदास जी का एक चित्र

वावू भगवानदास आज चले गये। वह वापू के प्रति तीव्र भक्ति से प्रेरित होकर आये थे। भगवानदास की भक्ति की तो वात ही क्या? हर रोज फल लाते, वापू के चरणों में रखते, साष्टांग प्रणिपात करके चरणस्पर्श करने की कोशिश करते पर वापू ऐसा नहीं करने देते। गये उस समय उनका गला भर आया। वोले—"आपकी आज्ञा हो तो ठहर जाऊं।"

—म० भा० डा०, भाग २, पृ० ३३३। ३१।१२।१९३२।]

२६. श्रीमती भट्ट और अस्पृश्यता

श्रीमती भट्ट (वनारस वाली) आईं। महाराष्ट्रीय होकर भी हिन्दी वढ़िया वोलती थी। वनारस में डोमवर्ग में अस्पृश्यता का काम करती हैं। यह पूछने पर कि अपराधी जाति की हैसियत से जिन डोमों को हाजरी देनी पड़ती है, उनके लिए कोई काम हो सकता है या नही। वापू वोले—"उन्हें हाजिरी लेनी पड़ती है, इसके लिए हममें कुछ नही हो सकता। उन लोगों को सफाई वगैरा सिखाने और उनकी अस्पृश्यता दूर करने का सव काम हो सकता है।" नरगिस से मिलकर उनका बम्बई का काम देखने की सलाह दी। 'वनारस के पण्डे कहते है कि अछूत साफ

कपडे पहन कर आयेंगे तो हम नही रोकेंगे, मगर तुम ढोल वजाकर मत आओ। तो इसका लाभ अछूत लें या नही', यह सवाल भी पूछा।

वापू कहने लगे—"इन लोगो को सलाह देना कठिन है। किन्तु सलाह पूछने आयें तो कहा जा सकता है कि तुम साफ होकर स्वच्छ वस्त्र पहन कर जाओ और तुमसे पूछा जाय कि तुम अस्पृश्य हो तो जाति न छिपाकर प्रकट कर दो।"

—२०।१।१९३३। म० भा० डा० भाग ३, (न० जी०), पृ० ७०-७१।]

२७. कानपुर की म्युनिसिपैलिटी

२२ जुलाई को म्युनिसिपैलिटी और डिस्ट्रिक्ट वोर्ड ने एक ही जगह पर अपने अपने मानपत्र गांधीजी को दिये। यह वडा अच्छा हुआ, कि दोनो ही सार्वजनिक सस्थाओ की संयुक्त सभा हुई और गाधीजी को उनके गिरते स्वास्थ्य को देखते हुए, म्युनिसिपैलिटी और डिस्ट्रिक्ट वोर्ड ने वजाय इसके कि उन्हें आफिस मे ले जाने का कष्ट दिया जाय उन्हें उनके निवास-स्थान जवाहरलाल के वगले पर जाकर ही मानपत्र दिये।

कानपुर की म्युनिसिपैलिटी ने प्रशसनीय हरिजन-सेवा की है। १९३२ के पहले ही उसने १५००० रु० खर्च करके अपने हरिजन कर्मचारियो के लिए कुछ मकान वनवा दिये थे। लेकिन वावू व्रजेन्द्रस्वरूप जी जव से चेयरमैन हुए तव से म्युनिसिपैलिटी ने खासी कर्मण्यता दिखाई है। १९३३ मे चेयरमैन ने वोर्ड के आगे यह योजना पेश की कि मेहतरो के लिए १६८००० रु० खर्च कर के दो या तीन साल मे ५५० मकान वनवा दिये जाय। इम्प्रूवमेण्ट ट्रस्ट ने फार्वस कम्पाउण्ड मे जो ६० क्वार्टर हाल मे वनवाये हैं, उन्हें म्युनिसिपैलिटी ने २६५०० रू० मे खरीद लिया है। ट्रस्ट ३ रु० मासिक किराया फी क्वार्टर वसूल करता था मगर म्युनिसिपैलिटी २ रु० ही भाडा लेती है। माल पर अपने 'केटल वैरक कम्पाउण्ड' मे म्युनिसिपैलिटी ने ४० क्वार्टर वनवाये हैं, जिन पर १५००० रु० खर्च हुए हैं। यहां सिर्फ १ रु० मासिक किराया लिया जाता है और हाल ही सीसामऊ घोसियाना मे १८ क्वार्टर ६५००) मे वोर्ड ने खरीद लिये हैं। इस तरह एक साल के अन्दर ही म्युनिमिपैलिटी ने ४८०००) कीमत के १८८ अच्छे, हवादार और साफ-सुथरे मकान अपने हरिजन मुलाजिमों के लिए वनवा दिये या खरीद दिये। हमे आशा है कि म्युनिसिपैलिटी की यह प्रगति दिन-दिन वढती जायगी और अन्य स्थानो की म्युनिसिपैलिटिया इस सुन्दर उदाहरण का अनुकरण करेंगी। यहा की म्युनिसिपैलिटी ने हरिजन वस्तियो मे लाल-

टेनें और नल भी लगवा दिये हैं। हरिजनों के लिए ५ गुसलखाने वनवा देने का भी विचार है जिसमें ५५००) लगेंगे। एक हरिजन वस्ती में एक अच्छा सा वाग लगवाने का भी म्युनिसिपैलिटी ने निश्चय किया है। इसके लिए १००००) की ज़मीन ले ली गई है।

पर इस सब से यह हर्गिज नहीं समझ लेना चाहिए कि कानपुर की म्युनिसिपैलिटी ने अपने हरिजन मुलाजिमों के प्रति अपना फर्ज अदा कर दिया या वह उऋण हो गई। गांधीजी ने यहां की नौ हरिजन वस्तियों का निरीक्षण किया। कुछ वस्तियों के घर क्या थे, चूहों के विल थे। न कहीं से हवा उनमें आती है न रोशनी। कुछ तो विल्कुल तहखाने-जैसे थे। म्युनिसिपैलिटी चाहे, तो जो काम वह तीन साल में पूरा करना चाहती है उसे वड़ी आसानी से ६ महीने में ही खत्म कर सकती है। फार्वस कम्पाउण्ड में क्वार्टर वहुत धीरे-धीरे वन रहे हैं; वहां के वाशिन्दों की वुरी हालत है। एक तरह से वेचारे विना घर-वार के ही वहां रह रहे हैं। और ग्वालटोली के क्वार्टर तो मनुष्य के रहने ही लायक नहीं। फिर एक और आफत है। इस वस्ती में सत्यानाशी ताड़ी की दो दूकानें हैं जिनके खिलाफ मालूम होता है, आवाज उठाई ही नही गई। लोगों की और भी अनेक शिकायतें है। उनके कुछ कष्ट तो ऐसे हैं जिनका निवारण तुरन्त होना चाहिए। म्यूनिसिपैलिटी चूंकि समाज के इन तिरस्कृत तथा उपेक्षित सेवकों के प्रति कुछ-कुछ अपना कर्त्तव्य पालन कर रही है इसलिए हम आशा करते हैं कि वह उनकी सारी ही उचित शिकायतों को यथाशीघ्र दूर कर देगी।

— २२।७।१९३४। ह० से०, ३।८।१९३४ में वालजी गोविन्दजी देसाई के साप्ताहिक पत्र से।]

२८. साप्ताहिक पत्र

निर्देशिका

२२ जुलाई

कलकत्ता से कानपुर आये। कानपुर: म्युनिसिपैलिटी और डिस्ट्रिक्टवोर्ड के मानपत्र। सार्वजनिक सभा, मानपत्र और थैली ११०००), सन्ध्या की प्रार्थना के समय धन-संग्रह ५१।।।-)

२३ जुलाई

कानपुर: मौन दिवस, सन्ध्या की प्रार्थना के समय धन-संग्रह ५७।=)।।

२४ जुलाई

कानपुर: तिलक मेमोरियल हाल का उद्घाटन, सनातनियो तथा सयुक्त प्रान्तीय हरिजन-सेवक-संघवालो से मुलाकात, विद्यार्थियो की सभा, सनातन धर्म कालेज के विद्यार्थियो का मानपत्र तथा थैली ५११=)। मेहतर सभा का मानपत्र। दिनभर का कुल धन-सग्रह ३२४२॥≡)।

२५ जुलाई

कानपुर से लखनऊ और वापसी, ६० मील रेल से। उन्नाव स्टेशन पर थैली तथा फुटकर २८२॥।)॥, लखनऊ मे महिला सभा तथा थैली इत्यादि ११७६।=)॥, बालसभा मे १०१), सार्वजनिक सभा, सनातनियो और हरिजनो के मानपत्र तथा थैली व फुटकर सग्रह ३६४५॥≡)॥। कानपुर: जिला हरिजन सेवक सघो के प्रतिनिधियो से मुलाकात: इटावा की थैली ७३२) फर्रुखाबाद की ६४५), मुरादाबाद की थैली ३२२॥), जालौन की थैली ६०१), वाल्मीकि सुधार सभा, आगरा की थैली ६।-)॥, सीतापुर की थैली ३०१॥-)।, बादा की थैली १८५), युक्तप्रातीय आर्य प्रतिनिधि सभा का मानपत्र तथा थैली ११३१), गुजराती स्कूल के बच्चो की थैली १२≡), संध्या की प्रार्थना के समय धनसग्रह ८२॥) १०॥ दिनभर का कुछ धन-संग्रह १०६४३) ७॥

२६ जुलाई

कानपुर: काग्रेस वालो तथा कानपुर जिले के हरिजन कार्य-कर्त्ताओ और यू० पी० के खादी-व्यापारियो से मुलाकात, सेठ कमलापति सिंघानिया से भेट किया १५४१), महिलाओ की सभा, मानपत्र तथा धन-सग्रह ७४३॥=)॥, हरिजन-बस्तियो का निरीक्षण, सध्या की प्रार्थना के समय धन-संग्रह २२०≡)। दिन भर का कुल धन-सग्रह ३५६२॥-) कानपुर से बनारस के लिए प्रस्थान रेल से २०१ मील।

—कानपुर २२–२६।७।१९३४। ह० से०, ३।८।१९३४।]

२९. साप्ताहिक पत्र

२७ जुलाई

काशी: सार्वजनिक कार्य, सध्या की प्रार्थना के समय धन-संग्रह १२२।=)॥

२८ जुलाई

काशी : सार्वजनिक कार्य, गोरखपुर जिले की थैली ६५१), सन्ध्या की प्रार्थना के समय २७॥=) ४॥, काशी विद्यापीठ की ओर से स्वागत तथा धनसंग्रह ४४-)

२९ जुलाई

काशी : जिलों के प्रतिनिधि मण्डलों से मुलाकात : मथुरा की थैली १०००), गाजीपुर की थैली २०१) आगरा की थैली ११६३॥।), बलिया की थैली ४७१।-), आजमगढ़ की १११) लखीमपुर की ३१२), जौनपुर की ६०) नैनीताल की २५२), हरिजनसेवक संघ के केन्द्रीय बोर्ड की बैठक, संध्या की प्रार्थना के समय धनसंग्रह ७१॥।-) ११॥, दिन भर का कुल धन-संग्रह ४०२६॥।=) ११॥

३० जुलाई

काशी : मौन दिवस, बरेली की थैली १२५) संध्या की प्रार्थना के समय ३१।=) ४॥

३१ जुलाई

काशी : हरिजन विद्यार्थियों का मानपत्र, सार्वजनिक सभा और थैली ५०००), गुजरातियों की थैली १५४), चमोली तहसील की थैली २१७), संध्या की प्रार्थना के समय ५२॥) १॥, रायबरेली की थैली ४६०), दिन भर का कुल धन संग्रह ६५२८॥=)।

१ अगस्त

काशी : हिन्दू विश्वविद्यालय के विद्यार्थियों का मानपत्र और थैली १७६॥।=)८ फैजाबाद की थैली २०३), हरिजन कार्यकर्त्ताओं की बैठक, हरिजनों की सभा, अछूतोद्धार-समिति नगरभर और रैदास सभा के मानपत्र, धनसंग्रह ३७॥=) ४, कार्यकर्ताओं की बैठक, संध्या की प्रार्थना के समय ५५-)।

२ अगस्त

काशी : हरिजन बस्तियों तथा कबीर मठ का निरीक्षण, कबीर मठ की थैली [illegible] संग्रह १२६=)।।।, काशी की पण्डित मण्डली का मानपत्र, महिलाओं की सभा तथा थैली इत्यादि [illegible]), हरिजन-प्रवास समाप्त।

— डायरी, २८।७।१९३४ से २।८।१९३४ तक। ह० से०, १०।८।१९३४।]

३०. स्वागत : काशी की सार्वजनिक सभा में

[काशी की सार्वजनिक सभा में ३१ जुलाई १९३४ को गांधीजी का स्वागत करते हुए डा० भगवानदास ने निम्नाकित भाषण दिया था।—सम्पा०।]

जिस स्थान पर आज हम लोग मिले है, और जहा आज ३५ वरस से आप लोगो को विविध प्रकार की सार्वजनिक सेवा हो रही है उस स्थान का नाम आप लोग जानते हैं कि हिन्दू स्कूल, हिन्दू कालेज है। इस पवित्र काशीपुरी के दक्षिण भाग मे जो विशाल विद्यालय आज २० वरस से आपके बच्चो को शिक्षा दे रहा है उसका नाम आप लोग जानते हैं कि हिन्दू यूनिवर्सिटी है। इन स्थानो के ईंटा ढोने और जोडनेवाले, इनको बनानेवाले लोग आपकी समक्ष से हिन्दू धर्म के द्वेषी हैं या सेवक है? मेरा हृदय कहता है कि आप लोगो मे से प्रायः सभी सज्जन इनको अपना और हिन्दू धर्म का सेवक ही जानते हैं और दुश्मन नही मानते हैं। कदाचित् कुछ सज्जन ऐसे है, जिनका ऐसा भाव हो गया है कि ये लोग उनके और हिन्दू धर्म के सेवक नही हैं। इस शका के भाव का परिमार्जन हम लोगो का कर्त्तव्य है। अधिक जतन से उनको समझाना चाहिए। "वक्तुरेव हि दोप स्याद् यत्र श्रोता न बुध्यते।" यदि सुननेवाला न समझे, तो कहनेवाले का ही दोप होगा। इस कारण से हम लोग इन शकित भाइयो से पुन पुन विनीत प्राथना करते हैं कि आप हमको अपना सेवक और शुभचिन्तक ही जानें।

ये नाम केचिदिह नः प्रथयंत्यवज्ञां
तेषा हिताय सकलोऽयमस्ति यत्नः।
युष्माकमेव खलु सेवक एष वर्गः
स्वार्थेषु मा कुरुतमत्सरमार्य मिश्राः

यह तो सेवको की सेवा का, कर्त्तव्य का एक अग ही है कि ऐसी शकाओ को शान्त करें।

हिन्दू धर्म और हिन्दू जनता का ह्रास आज कई सौ वर्ष से होता जा रहा है, यह तो प्रत्यक्ष है। इसके दु ख से दु खी कुछ भाइयो-बहिनो को यह विचार उत्पन्न हुआ कि नई अवस्था मे, नये काल मे, इस धर्म की, इस जनता की रक्षा का नया उपाय खोज निकालना चाहिए। इस रोग के निदान-कारण को निश्चय करना चाहिए और उसकी दवा का पता लगाना चाहिए, तो ऐसा जान पड़ा कि अति पुराना उपाय ही अति नया उपाय है।

इस धर्म का प्राचीन नाम सनातन धर्म भी है, वैदिक धर्म भी, आर्य धर्म भी, मानव धर्म भी, बुद्धियुक्त बौद्धधर्म भी। सभी नाम बडे अर्थसम्पूर्ण हैं। पर व्यवहार

की दृष्टि से सब से अधिक अर्थगर्भ नाम वर्णाश्रम धर्म है। वर्ण-धर्म, आश्रम-धर्म, यह दोनों ऐसे परस्पर गुंथे हुए है, जैसे एक ही कपड़े के तानाबाना। विना एक के दूसरा ठीक-ठीक सिद्ध नहीं हो सकता। यह वात प्रायः सभी हिन्दू सज्जन मानेंगे। आजकल इन दोनों धर्मों में सर्वथा संकर होगया है। आश्रमसंकर भी और वर्णसंक भी। इसका शोधन ही मूल सिंचन, मूल शोधन है। अन्य सब कार्य पत्ता धोना है। इस पर गहरा विचार करना चाहिए कि यह शोधन कैसे हो सकता है। शान्त मन से, प्रसन्न चित्त से ही यह विचार किया जायगा, तो सफल होगा; क्रोध से, क्षोभ से नही।

दीर्घं पश्यत मा ह्रस्वं, परं पश्यत माऽपरम्।
तत्वं पश्यत माऽतत्वं, अर्थं पश्यत मा पदम्॥

० ० ०

प्रसन्नचेतसो ह्याशुबुद्धिः पर्यवतिष्ठते॥

सत्व को पकड़िए, विकारों को मत पकड़िए। दूरदर्शिता कीजिए, अल्पदर्शिता नहीं। अर्थ को अधिक देखिए, पद को कम। कारण की चिकित्सा कीजिए, कार्य की चिकित्सा अपने आप हो जायगी।

जब रोगी के प्रत्येक अंग में फोड़े हो जायं तब चतुर वैद्य एक-एक फोड़े पर भी मरहमपट्टी लगाता है, पर उससे अधिक यत्न रक्त-शोधन का करता है। हिन्दू समाज का हृदय कहिए, मर्म कहिए, प्राण कहिए, रक्त कहिए, सार कहिए, विशेप कहिए, वर्ण धर्म है। इसके शोधन से सब फोड़े आपसे आप अच्छे हो जायंगे। वर्ण-धर्म का तत्व क्या है, सच्चा स्वरूप क्या है, इसकी खूब गहरे विचार से जांच करनी चाहिए। आज कल उसका प्रचलित रूप यह है कि पिछली मनुष्य-गणना में २३४८ परस्पर अस्पृश्य जातियां इस देश में गिनी गईं। आदि स्मृति, मूल स्मृति मनु-संहिता में चार ही वर्ण कहे है और वे परस्पर अस्पृश्य उस स्मृति में कहीं नहीं कहे गये हैं:—

ब्राह्मणः क्षत्रियो वैश्यः त्रयो वर्णा द्विजातयः।
चतुर्थस्त्वेक जातिस्तु शूद्रो, नास्ति तु पंचमः॥

यह भेद-बुद्धि ही इस धर्म और इस जनता के ह्रास का हेतु हो रही है, यद्यपि इस देश के प्राचीन ज्ञान की जो पराकाष्ठा है, जहां वेद का अन्त है, जिसको वेदान्त कहते हैं, उसका डिण्डिम अभेदबुद्धि ही है।

वर्ण-धर्म के विपय में, महाभारत में, रामायण में, पुराणों में, बहुत बेर, आज हजारों वर्ष से, यह वाद उठाकर कि वर्णा जन्मना है अथवा कर्मणा है, यही निश्चय किया है कि अन्ततोगत्वा कर्मणा ही है। 'कर्मभिर्वर्णतां गतम्।' कर्म से ही इस जन्म

मे और अन्य में भी जीव का उत्कर्ष अपकर्ष होता रहता है। सिद्धान्त का सग्रह यों है कि,

उत्तमं जन्मकर्मभ्यां, कर्मणैव तु मध्यमम्।
मिथ्यैव केवलं जात्या, वर्णवत्वं स्मृतं बुधैः॥

इस दृष्टि से जन्मना अस्पृश्यता नही सिद्ध होती। कर्मणा अवश्य है। और इस अस्पृश्यता का घोरतम फोडा, हिन्दू समाज के उस वडे अग पर देख पड रहा है जिसको पाच या सात कोटि सख्यात्मक हरिजन के नाम से अब महात्माजी के नामकरण के अनुसार पुकारने लगे हैं। महात्माजी ने दूरदर्शी वैद्य की दृष्टि से इस सबसे वड़े फोडे की चिकित्सा आरम्भ की है। इस चिकित्सा का यह अर्थ कभी नही है कि खाहमखाह सहभोज या सहविवाह किया ही जाय या मलदिग्घ व्यक्ति का अवश्य स्पर्श किया ही जाय। ऐसा नही है, केवल इतना ही है कि स्वच्छ मनुष्य दूसरे स्वच्छ मनुष्य का अपने को ऊंची और दूसरे को भी नीची जाति का मानकर तिरस्कार न करे। ऐसे अन्योन्य तिरस्कार का निवारण वर्णधर्म के परिशोधन का आवश्यक पूर्णांग है। पर मैंने जहां तक मनुजी और वाल्मीकिजी, व्यासजी और शुक्रजी की चरण-सेवा से अपनी अल्पवुद्धि से समझा है वह यह है कि हरिजनो का उद्धार, जिसमे स्वयं परस्पर-अस्पृश्य सैकडों-हजारो जातिया हैं, हिन्दू समाज के उद्धार का केवल आरम्भिक अश है; इतने से सब कार्य समाप्त नही हो जायगा। इसका पूर्ण जीर्णोद्धार तभी होगा, जब समग्र मनुजनो का, मनुष्यो का, मानवो का उद्धार वर्णव्यवस्था के मूल सिद्धान्त के अनुसार किया जायगा और जब ऐसा होगा तब और तभी हिन्दू धर्म और हिन्दू समाज के दिन लौटेंगे, इसका शुद्ध प्राचीन नाम मानव धर्म और मानव समाज हो जायगा और सब मानव आपसे आप इसमे दौड़े हुए चले आयेंगे।

वर्ण-धर्म तो एक ऐसा साचा, समग्र मानववश के आदि प्रजापति मनु जी ने बना दिया है कि उनके वंशज अर्थात् सभी मानव, सभी देश और सभी जातियों के लोग, उसमे ढाले जा सकते हैं और आज से हजार डेढ हजार वर्ष पहिले तक इस देश मे ढाले जाते थे। जब से इस साचे के उद्देश्य और तत्व को भारतवर्ष ने भुला दिया, तब से इसका ह्रास आरम्भ हुआ। शरीर की, प्राण की, मूल सिद्धान्तो की रक्षा कीजिए। ऊपर से फटे-पुराने कपडो मे प्राण मत अटकाइए। सार की रक्षा कीजिए, विकार को जाने दीजिए।

वेद के अर्थ को तो स्यात् सौ दो सौ महाविद्वान् पण्डित जन समग्र भारतवर्ष मे जानते हो या न जानते हो पर इस सारे विषय का निचोड़ थोड़े मे आ जाता है—

जात पांत पूछो नहिं कोई
हरि को भजै सो हरि का होई।

मन और शरीर को निर्मल बनाओ। अपने और दूसरों में निर्मलता बढ़ाओ, एक दूसरे की जात-पांत मत पूछते रहो।

भक्त्या पूतं मनो येषां, देहः स्नानादिभिस्तथा।
ते सर्वे स्वागताः संतु, देवदर्शनकांक्षिणाः॥

इतनी प्रस्तावना के साथ मैं काशी-वासियों की ओर से महात्माजी के कार्य में श्रद्धा को दिखलाने वाली और उस कार्य में सहायता देनेवाली, हरिजनों पर स्नेह करने वाली, हरिपत्नी लक्ष्मीरूपिणी, हरिपत्नीजनों के घरों से उनकी प्रीति-समेत संग्रह की हुई थैली भेंट करता हूं।

शुभं भूयात्

सर्वं तरतु दुर्गाणि, सर्वो भद्राणि पश्यतु।
सर्वः सद्बुद्धिमाप्नोतु, सर्वः सर्वत्र नन्दतु॥

—हिन्दी। काशी, ३१।७।१९३४। ह० से०, १०।८।१९३४।]

३१. स्वागत-पत्र : काशी के पण्डितों की ओर से

[३१।७।१९३४ को हिन्दू स्कूल, काशी की सार्वजनिक सभा में विद्वान् पण्डितों की ओर से जो स्वागत पत्र गांधीजी को दिया गया था, वह इस प्रकार है।—सम्पा०]

श्रद्धेय अतिथि!

यह हमारा परम सौभाग्य है, कि भगवान् ने हमें आज आप जैसे त्यागी, महान् पुरुष का काशी-जैसे पवित्र तीर्थ में स्वागत करने का अवसर दिया है। हम हृदय से आपका स्वागत करते है।

वृद्ध तपस्वी!

इतनी अवस्था होने पर भी आपका हृदय युवा है, आपकी शक्ति अक्षुण्ण है और आपकी देश-सेवा का भाव अविचलित है। आप भारत के हृदय है। भारत आज दरिद्र होने पर भी आपके सहारे संसार में सिर ऊपर किये खड़ा है। तपस्वी! हम आपका स्वागत करते हैं। विरक्त महापुरुष! आपने देश-सेवा के व्रत में अपने सुख, स्वार्थ और ऐश्वर्य को भुला दिया है। आपने देश के कोने-कोने में स्वार्थ-त्याग, सादा जीवन और अहिंसा का पाठ पढ़ाया है। आज दरिद्र-की -। ड़ी। में

और राजा के महलो मे लोग आदर के साथ आपका नाम ले-लेकर आनन्द पाते है। आपने आज अपने कर्म से संसार को समानता का पाठ पढाया है। सारा संसार एकस्वर से आपको एक महान पुरुष मानता है। हम आपका स्वागत करते हैं।

महात्मन् !

आपके हृदय मे किसी के प्रति द्वेषभाव नही है। जो आपसे सहमत नही हैं उन्हें भी आपके हाथो सदा प्रेम, सद्भाव और सन्तोष ही मिला है। आपने सदा दुखियो के दु ख मे आसू बहाये, पीडितो के कष्ट मे हाथ बटाया तथा निर्भय और नि शक होकर अपने मतानुसार सत्य का प्रचार किया। महात्मन्, यहा की पण्डित-मण्डली की ओर से हम आपका स्वागत करते हैं।

भवदीय

प्रमथनाथ तर्कभूषण, वीरमणि उपाध्याय शास्त्री, केदारनाथ शास्त्री, हीरा-वल्लभ शास्त्री, सत्यनारायण कविराज, यज्ञनारायण उपाध्याय, जगन्नाथ शर्मा वाजपेयी, राजेश्वरीदत्त मिश्र, महेन्द्र उपाध्याय पाराशर, अम्बिकादत्त उपाध्याय, आनन्दशंकर वापूभाई ध्रुव, विन्ध्येश्वरीप्रसाद पाण्डेय, विन्ध्येश्वरीप्रसाद शास्त्री, रामव्यास पाण्डेय, राजनारायण शर्मा, सीताराम जयराम जोशी, विश्वनाथ शास्त्री भारद्वाज, पी० पट्टाभिराम शर्मा, विश्वनाथ शर्मा, रामानन्द मिश्र, वामदेव मिश्र, रामनिरजन शर्मा व्यास, राजाराम शुक्ल, भीमसेन वेदपाठी, माहेश्वरी पाठक शास्त्री, गोपाल शास्त्री दर्शनकेसरी, श्री नीलकमल भट्टाचार्य, बलदेव उपाध्याय, वटुकनाथ उपाध्याय, केशवप्रसाद मिश्र।

—काशी, ३१।७।१९३४। ह० से० १०।८।१९३४।]

३२. गांधीजी का पत्र : अगाथा हरिसन को

[क्वेकर ईसाई सम्प्रदाय की अनुयायिनी अगाथा हैरिसन गांधीजी और भारत देश से अत्यधिक प्रेम रखती थीं और प्रायः गांधीजी के साथ उनकी चिट्ठी-पत्री होती रहती थी। जब जवाहरलाल और गांधीजी मे विचार-भेद बहुत बढ़ गया तो अगाथा ने बड़ी हैरानी के साथ गांधीजी से उसके विषय मे पूछा था। यह पत्र गांधीजी ने इसी सन्दर्भ मे लिखा है।—सम्पा०।]

वर्धा

३० अप्रैल १९३६

प्रिय अगाथा,

तुम्हारा १७ तारीख का पत्र मिला। जवाहरलाल मे यही आशा रखी जा

सकती थी। उनका अभिभाषण उनके ईमान की स्वीकृति है। उनके "मन्त्रिमण्डल" की रचना से तुम देखती हो कि उन्होंने अधिकांश वे लोग चुने हैं, जो परम्परागत विचार अर्थात् १६२० से आरम्भ हुए विचारों का प्रतिनिधित्व करते हैं। अलवत्ता बहुमत मेरे विचारों का है। सम्भव हो तो मैं नये संविधान को आज नष्ट कर दूं। उसमें है ही क्या जिसे मै पसन्द करूं? मगर जवाहरलाल का रास्ता मेरा रास्ता नही। भूमि आदि के बारे में मैं उनका आदर्श स्वीकार करता हूं। किन्तु अपने तरीकों को उपस्थित करने में उग्र होते हुए भी जवाहरलाल क्रिया में गम्भीर हैं। जहां तक मैं उन्हें जानता हूं वह संघर्ष को जल्दी नहीं ले आयेंगे। उन पर आ ही पड़े तो वह उससे बचने की कोशिश भी नही करेंगे। परन्तु शायद इस मामले में सारी कांग्रेस एक विचार की नहीं है। कुछ-न-कुछ मतभेद जरूर है। मेरे उपाय में संघर्ष को टालने की योजना रहती है। उनके उपाय में यह योजना नहीं है। मेरा अपना खयाल है कि जवाहरलाल अपने साथियों के बहुमत के निर्णय को मान लेंगे। उनके-जैसे स्वभाववाले आदमी के लिए यह अत्यन्त कठिन है। अभी से उन्हें ऐसा लग रहा है। वह जो कुछ करेंगे, शराफत के साथ करेंगे। यद्यपि जीवन के दृष्टिकोण के विषय में हमारे बीच की खाई निश्चय ही चौड़ी हुई है, फिर भी दिलों में हम जितने नजदीक एक दूसरे के शायद आज हैं उतने पहिले कभी नही थे। यह पत्र सार्वजनिक उपयोग के लिए नही है। किन्तु तुम्हें स्वतन्त्रता है कि तुम इसे अपने मित्रों को दिखा सकती हो।

मैं नही समझता कि अपने प्रश्न के उत्तर में तुम इससे अधिक कुछ चाहती होगी।

सस्नेह

कुमारी अगाथा हैरिसन बापू

—अंग्रेजी। वर्धा, ३०।४।१९३५। 'ए बंच आफ ओल्ड लेटर्स' से।]
सौजन्य : श्रीमती इन्दिरा गांधी।

३३. काशी भारतमाता-मन्दिर में गांधीजी का स्वागत

[दशहरा १९३६ को काशी में भारत मन्दिर के उद्घाटन समारोह पर दिया गया डा० भगवानदास का भाषण यहां दिया जा रहा है।—सम्पा]

भारत माता के सबसे श्रेष्ठ, सब गुणों से जेष्ठ सुपुत्र महात्मा गांधी आज यहां

भारत माता का मन्दिर खोलने के लिए पधारे हैं और उनके साथ और भी मुल्क के अजीज और मुअज्जिज पेशवा लोग इस नेक काम मे शरीक होने को आये हैं, जिनके बीच मे खान अब्दुल गफ्फार खा को देखकर, कि जो काशी मे पहली बार आये है, हम काशी-वासियो को विशेष आनन्द है। भाई शिवप्रसादजी ने, जिन्होंने इस प्रेम मन्दिर, इस बेतुल मुहब्बत, इस 'हौस आफ मेटर्नल एण्ड फ्रेटर्नल लव' को बनवाया है, स्नेह और विनय के वश होकर, इस देश के पुराने दस्तूर के मुताबिक कि गौरव के काम मे किसी बूढे आदमी को आगे रखना चाहिए, स्वागत का प्यारा काम मेरे सुपुर्द किया है। इसलिए काशीवासियो की तरफ से और खासकर उन सब स्वयसेवको और रजाकारो की तरफ से जिन्होने इस उत्सव के समारोह मे इन्तिजाम मे बडी हिम्मत से बडी मदद की है, महात्माजी का तथा देश के नेताओ और बुजुर्गो का तथा दूसरे नगरो से आये हुए सब बन्धु-बान्धवो का स्वागत और खैरमकदम, खुशआमद, वेलकम करता हू। ये शब्द कई जबानो और कई मजहबो के माननेवालो के है, लेकिन मानी सबका, लफज-ब-लफ्ज, एक ही है, जो इस बात का सुबूत है कि इन्सान का दिल सब देशो मे, सब जमानो मे एक ही है। और दोस्तो के मिलने पर मुहब्बत एक ही तरह से जाहिर करता है। जो कुछ फर्क है वह बाहरी रूपो मे है, फुरू मे है, भीतर तत्व मे, अस्ल मे बिल्कुल एका है।

सज्जनो, इस प्रेम-मन्दिर, इस बेतुल मुहब्बत के बनाने का खयाल जिस तरह पैदा हुआ और भाई शिवप्रसाद जी की दरियादिली और उदारता ने, भाई दुर्गाप्रसाद जी की इल्मियत और हुनरे-सनअत, शिल्प कौशल की मदद से इस बडे कारे खैरोफैज को, इस पुण्य कार्य को किया, उसका बेरूनी हाल, तफसील से आप लोग उस छोटी किताब मे पावेंगे, जो आज आपकी नजर की जा रही है, लेकिन अन्दरूनी हाल मैंने समझ रक्खा है—परमेश्वर, अल्लाह अकबर की सृष्टि, सरिश्त, जिदगैन—जो जैन से, द्वन्द्व से बनी है। इसमे दु ख भी है सुख भी है, पाप भी है पुण्य भी है, झगड़ा भी है, मेल-मुहब्बत भी है। एक ओर आसुरी प्रकृति है, दूसरी ओर दैवी प्रकृति है, एक तरफ शैतान, फसाद और जंग बरपा करते हैं; दूसरी तरफ फरिश्ते सल्म और शान्ति और परस्पर प्रीति और इश्के हकीकी बढ़ाते हैं। दोनो ही विश्वात्मा, परमात्मा, रूहुल्-कुल्, रूहुल-रूह की ही मर्जी से अपना अपना काम करते है। सब कामो, सब जमानो, सब धर्मो-मजहबो के, उसी एक सिरजनहार, कर्त्ता-धर्त्ता-भर्त्ता, अल्खालिक, अलमालिक, अर्रज्जाक ने अपने बनाये सभी मजहबो और कौमो के आदमियो को इस भारत माता की गोद मे यक जा किया है। यहा मुसलमान भी हैं, पारसी भी हैं, यहूदी भी हैं, ईसाई भी हैं, हिन्दू बौद्ध, जैन सिख भी हैं। जरूर ही उस जगत-पिता की इच्छा यही होगी कि यह सब मेरी औलाद,

सकती थी। उनका अभिभाषण उनके ईमान की स्वीकृति है। उनके "मन्त्रिमण्डल" की रचना से तुम देखती हो कि उन्होंने अधिकांश वे लोग चुने है, जो परम्परागत विचार अर्थात् १६२० से आरम्भ हुए विचारों का प्रतिनिधित्व करते हैं। अलबत्ता बहुमत मेरे विचारों का है। सम्भव हो तो मैं नये संविधान को आज नष्ट कर दूं। उसमें है ही क्या जिसे मैं पसन्द करूं? मगर जवाहरलाल का रास्ता मेरा रास्ता नहीं। भूमि आदि के बारे में मैं उनका आदर्श स्वीकार करता हूं। किन्तु अपने तरीकों को उपस्थित करने में उग्र होते हुए भी जवाहरलाल क्रिया में गम्भीर हैं। जहां तक मै उन्हें जानता हूं वह संघर्ष को जल्दी नही ले आयेगे। उन पर आ ही पड़े तो वह उससे बचने की कोशिश भी नहीं करेंगे। परन्तु शायद इस मामले में सारी कांग्रेस एक विचार की नही है। कुछ-न-कुछ मतभेद जरूर है। मेरे उपाय में संघर्ष को टालने की योजना रहती है। उनके उपाय में यह योजना नही है। मेरा अपना खयाल है कि जवाहरलाल अपने साथियों के बहुमत के निर्णय को मान लेंगे। उनके-जैसे स्वभाववाले आदमी के लिए यह अत्यन्त कठिन है। अभी से उन्हें ऐसा लग रहा है। वह जो कुछ करेंगे, शराफत के साथ करेंगे। यद्यपि जीवन के दृष्टिकोण के विषय में हमारे बीच की खाई निश्चय ही चौड़ी हुई है, फिर भी दिलों में हम जितने नजदीक एक दूसरे के शायद आज है उतने पहिले कभी नहीं थे। यह पत्र सार्वजनिक उपयोग के लिए नहीं है। किन्तु तुम्हें स्वतन्त्रता है कि तुम इसे अपने मित्रों को दिखा सकती हो।

मैं नही समझता कि अपने प्रश्न के उत्तर में तुम इससे अधिक कुछ चाहती होगी।

सस्नेह
बापू

कुमारी अगाथा हैरिसन

—अंग्रेजी। वर्धा, ३०।४।१९३५। 'ए बंच आफ ओल्ड लेटर्स' से।]
सौजन्य : श्रीमती इन्दिरा गांधी।

३३. काशी भारतमाता-मन्दिर में गांधीजी का स्वागत

[दशहरा १९३६ को काशी में भारत मन्दिर के उद्घाटन समारोह पर दिया गया डा० भगवानदास का भाषण यहां दिया जा रहा है।—सम्पा]

भारत माता के सबसे श्रेष्ठ, सब गुणों से जेष्ठ सुपुत्र महात्मा गांधी आज यहां

भारत माता का मन्दिर खोलने के लिए पधारे हैं और उनके साथ और भी मुल्क के अजीज और मुअज्जिज पेशवा लोग इस नेक काम मे शरीक होने को आये हैं, जिनके बीच मे खान अब्दुल गफ्फार खा को देखकर, कि जो काशी मे पहली बार आये हैं, हम काशी-वासियो को विशेष आनन्द है। भाई शिवप्रसादजी ने, जिन्होने इस प्रेम मन्दिर, इस बेतुल मुहब्बत, इस 'हौस आफ मेटर्नल एण्ड फ्रेटर्नल लव' को बनवाया है, स्नेह और विनय के वश होकर, इस देश के पुराने दस्तूर के मुताबिक कि गौरव के काम मे किसी बूढे आदमी को आगे रखना चाहिए, स्वागत का प्यारा काम मेरे सुपुर्द किया है। इसलिए काशीवासियो की तरफ से और खासकर उन सब स्वयसेवको और रजाकारो की तरफ से जिन्होंने इस उत्सव के समारोह मे इन्तिजाम मे बडी हिम्मत से बडी मदद की है, महात्माजी का तथा देश के नेताओ और बुजुर्गों का तथा दूसरे नगरो से आये हुए सब बन्धु-बान्धवो का स्वागत और खैरमकदम, खुशआमद, वेलकम करता हू। ये शब्द कई जबानो और कई मजहबो के माननेवालो के है, लेकिन मानी सबका, लफज-ब-लफ्ज, एक ही है, जो इस बात का सुबूत है कि इन्सान का दिल सब देशो मे, सब जमानो मे एक ही है। और दोस्तो के मिलने पर मुहब्बत एक ही तरह से जाहिर करता है। जो कुछ फर्क है वह बाहरी रूपो मे है, फुरू मे है, भीतर तत्व मे, अस्ल मे बिलकुल एका है।

सज्जनो, इस प्रेम-मन्दिर, इस बेतुल मुहब्बत के बनाने का खयाल जिस तरह पैदा हुआ और भाई शिवप्रसाद जी की दरियादिली और उदारता ने, भाई दुर्गाप्रसाद जी की इल्मियत और हुनरे-सनअत, शिल्प कौशल की मदद से इस बडे कारे खैरोफैज को, इस पुण्य कार्य को किया, उसका बेरूनी हाल, तफसील से आप लोग उस छोटी किताब मे पावेंगे, जो आज आपकी नजर की जा रही है, लेकिन अन्दरूनी हाल मैंने समझ रक्खा है—परमेश्वर, अल्लाह अकबर की सृष्टि, सरिश्त, जिदगैन——जो जैन से, द्वन्द्व से बनी है। इसमे दुख भी है सुख भी है, पाप भी है पुण्य भी है, झगडा भी है, मेल-मुहब्बत भी है। एक ओर आसुरी प्रकृति है, दूसरी ओर दैवी प्रकृति है, एक तरफ शैतान, फसाद और जग बरपा करते हैं; दूसरी तरफ फरिश्ते सल्म और शान्ति और परस्पर प्रीति और इश्के हकीकी बढाते है। दोनो ही विश्वात्मा, परमात्मा, रूहुल्-कुल्, रूहुल-रूह की ही मर्जी से अपना अपना काम करते है। सब कामो, सब जमानो, सब धर्मों-मजहबो के, उसी एक सिरजनहार, कर्त्ता-धर्त्ता-भर्त्ता, अल्खालिक, अलमालिक, अर्रज्जाक ने अपने बनाये सभी मजहबो और कौमो के आदमियो को इस भारत माता की गोद मे यक जा किया है। यहा मुसलमान भी है, पारसी भी हैं, यहूदी भी हैं, ईसाई भी हैं, हिन्दू बौद्ध, जैन सिख भी हैं। जरूर ही उस जगत-पिता की इच्छा यही होगी कि यह सब मेरी औलाद,

मेरे बन्दे आपस में मेल-मुहब्बत के साथ, इस बड़े देश में, सुख से जिन्दगी वसर करें, मुझको पहिचानें और मेरी याद करें:—

राम कहो या रहीम कहो, दोनों की गरज अल्लाह से है।
दीन कहो या धर्म कहो, मतलब तो उसी की राह से है।
इश्क कहो या प्रेम कहो, मकसद तो उसी की चाह से है।
योगी हो या सालिक हो, मंशा तो दिले आगाह से है।
फिर क्यों लड़ता मूरख बन्दे, यह तेरी खाम-खयाली है।
है पेड़ की जड़ तो एक वही, हर मजहब यक-यक डाली है।।

लेकिन जब अल्लाहताला, खुदाएपाक, परमपवित्र परमात्मा, जगत पिता ने देखा कि पिता के भय और प्रीति से मूरख लड़के आपस में लड़ना नही छोड़ते तब उसने खयाल किया कि मां की मुहब्वत के आगे इन सबकी लड़ाइयां जरूर बन्द हो जायंगी। और इसलिए अपने एक सच्चे बन्दे शिवप्रसाद को महज जरिया, निमित्त मात्र बनाकर, उसी कुल राज, माया के मालिक ने जो सूरज-चांद को भी चलाता है और हरेक जर्रा, प्रत्येक परमाणु की भी फिक्र करता है, यह बैतुल-मुहब्बत तामीर करवाया, ताकि सब मजहबों की यह इबादतगाह, पूजास्थान हो और भारत माता की सब सन्तानें, सब धर्मो की, यहां आवें और हुब्बल वतनी, स्वदेश-भक्ति, जननी जन्मभूमि के प्रेम के जरिये से, इश्के हकीकी, खुदा की मुहब्बत और इन्सान की मुहब्वत, भगवत्‌भक्ति और विश्व-जननी-भक्ति भी सीखें। हर आदमी के दिल में छिपे हुए उसी एक परमेश्वर, अल्लाहे अकबर को देखें और तमाम मजहबों के उस सत्यसार को पहिचानें और अमल में लावें, जिसको उसी परमात्मा ने ईसा और मुहम्मद और वेदव्यास, सबके मुंह से इंजील और कुरान और वेदों में कहलवाया है। ईसामसीह ने इंजील में कहा है:—

"डू अंटू अदर्स ऐज यू वुड दैट दे शुड डू अंटू यू, दिस इज होल आव द ला ऐण्ड द प्राफेट्स" यानी दूसरों के साथ वैसा ही वर्ताव करो, जैसा तुम चाहते हो कि वे तुम्हारे साथ करे। सब धर्म और सब नबियों की तालीम इतनी ही है। कुरान मजीद में मुहम्मद पैगम्वर ने कहा है:—

अफजलुल ईमानि उत् तोहिब्बो लिन्न से मा तोहिब्बो ले नफसका; व तक्रहो लहुम् मा तक्रहो लेनफ्स का" अर्थात् "सबसे अफजल, सबसे बड़ा, सबसे उम्दा मजहब यही है कि जो अपने लिए चाहते हो वही दूसरों के लिए चाहो और जो अपने लिए करीह, तकलीफदेह, समझते हो, उसे दूसरे के लिए भी दुःखदायी जानो। महाभारत में महर्षि वेदव्यास नारायणावतार ने कहा है:—

श्रूयतां धर्मसर्वस्वं श्रुत्वा चैवावधार्यताम्।
आत्मनः प्रतिकूलानि परेषां न समाचरेत्।।
यद्यदात्मनि चेच्छेत तत्परस्यापि चिन्तयेत्।।

यानी धर्म का सर्वस्व-सार सुनो और सुनकर उसके अनुसार आचरण करो। जो काम अपने लिए दुखदायी जानते हो वह काम दूसरे के लिए न करो, और जो-जो अपने लिए चाहते हो वही दूसरे के लिए चाहो।" 'द होल आव द ला एण्ड द प्राफेट' के धर्म-सर्वस्व के, 'अफ़जलुल ईमान' के यह सब शब्द भारत माता के मन्दिर के दीवारो पर लिख दिये जायँगे, ताकि भारतमाता की सब सन्तानें इनको पढ़ें और इन पर अमल करें और माता की गोद मे बैठ कर एक दूसरे से मुहब्बत करे।

कुरान शरीफ मे कहा है—"अलजन्नतो तहताकदम् इल उम्म" अर्थात् मा के पैर के नीचे वहिश्त, स्वर्ग फैला हुआ है। जहा मुहब्बत है वही वहिश्त है, जहा दुश्मनी है वही नरक है, जहन्नुम है, मा के पास मुहब्बत और स्वर्ग ही है। भगवान मनु ने कहा है, 'सहस्रं तु पितृन् माता गौरवेणातिरिच्यते" यानी गुरुता में मा का दर्जा वालिद से हजार गुना ऊंचा है।

सज्जनो, मैं आप सबकी ओर से और विशेषकर स्वयसेवको की ओर से महात्मा-जी से प्रार्थना करता हू कि इस भारतमाता के मन्दिररूपी स्वर्ग का दरवाजा खोलें और आशीर्वाद दें और दुआ करें और उस दुआ मे आप सब लोग तहे दिल मे शरीक हो कि यहा से सत्य, शान्ति, प्रेम, मुहब्बत की नदी जारी होकर सारे देश मे फैले, और उसे हरा-भरा, शादाव बनावे।

—हिन्दी, ह० से०, ३१।१०।१९३६।]

३४. श्री भारतमाता का मन्दिर, काशी

काशी के तीर्थक्षेत्र में मन्दिरो का क्या कुछ घाटा है, जो नये मन्दिर की प्राण-प्रतिष्ठा करने गाधीजी वहा गये, ऐसा बहुतो को लगता होगा। हा, नये मन्दिर की आवश्यकता तो है ही, क्योकि काशी विश्वनाथ का द्वार तो हरिजनो के लिए खुला ही नही। लेकिन यह मन्दिर तो सचमुच नये प्रकार का था। इस मन्दिर का स्वप्न श्री शिवप्रसाद गुप्त कितने ही वरसो से देख रहे थे। बाबू शिवप्रसाद गुप्त की देशभक्ति का क्या कुछ पार है? स्वदेशी धर्म का पालन करने वाले इनके समान कट्टर व्यक्ति बहुत कम होंगे। मुझे लगता है कि हिन्दुस्तान मे वह अकेले ही

ऐसे सज्जन है जो अपने तार भी हिन्दी भाषा में लिखकर भेजते हैं—खास कर प्रेम से भरे तार, धन्यवाद के तार या राष्ट्रीय महासभा-सम्बन्धी तार।

इनके घर में आर्य-संस्कृति की प्रतिष्ठा है और उसकी रक्षा बहुत आग्रहपूर्वक होती है। अंग्रेज, मुसलमान, और चाहे जिस जाति और धर्म के लोग हों इनका आतिथ्य प्राप्त करते हैं। लेकिन उन्हें भी इनके घर के अन्दर जूते उतार कर जाना पड़ता है। आज तो वह करीब-करीब अपंग है, लेकिन जब वह अखिल भा० कांग्रेस कमेटी में आते थे, उन दिनों सिद्धान्तपूर्वक हिन्दी में बोलनेवाले वह अकेले ही थे। इनकी देशभक्ति इतनी तीव्र है कि इनके मन में विचार आया कि धर्म-मजहब और मन्दिर-मस्जिद के नाम पर इतना झगड़ा हुआ है तो हमें एक नई निष्ठा, नये प्रकार की पूजा-अर्चा करनी चाहिए कि जिसमें हिन्दू, मुसलमान, पारसी, ईसाई, यहूदी, जैन, बौद्ध सभी प्रार्थना कर सके; सब उससे प्रेरणा प्राप्त कर सकें और सब सत्य और बलिदान का व्रत ले सकें। २२ वर्ष की बात है। वह कराची कांग्रेस से लौट रहे थे। लौटते हुए पूना में कर्वे के विधवाश्रम में गये। वहां मिट्टी का बना भारत का उठावदार मानचित्र देखा। उसे देखकर इन्हें अपने स्वप्न को मूर्तिमान करने का विचार आया। फिर तो यह सपना अच्छा फला-फूला क्योंकि इसे पिछले दस वर्षो में भारत के स्वातन्त्र्य-युद्ध में लोगों के दिये बलिदान का सिंचन मिला। शिवप्रसाद-जी जब विदेश गये तो वहां ऐसे मानचित्र उन्होंने देखे और निश्चय किया कि वह अपने देश के लिए एक ऐसा मन्दिर बनायेंगे कि जिसमें कोई मूर्ति नही होगी; केवल भारतमाता का संगमरमर का सुन्दर उठावदार मानचित्र होगा। इस मनोहर मूर्ति के आगे झुकते हुए किस भारत सन्तान को संकोच होगा ? बस, विचार करते ही इस पर अमल करने का निश्चय कर लिया। २४ लाख गायत्री मन्त्रों के पुरश्चरण के साथ डा० भगवानदास-जैसे धर्मप्राण देशभक्त के कर-कमलों से इसकी नीव रखवाई गई। सारे मन्दिर की तह में शुद्ध-से-शुद्ध धर्म-भावना रही है। २४ लाख गायत्री मन्त्र के जप से जिसकी नींव डाली गई, उसके खोलने के पूर्व चारों वेदों का चार बार पाठ और मंगल अनुष्ठान हुआ और पूर्णआहुति गांधीजी के हाथों से हुई। शिवप्रसाद जी ने एक वर्ष पहले गांधीजी से आग्रह किया था कि मन्दिर का उद्-घाटन-संस्कार वही आकर करें। गांधीजी के पास समय तो नही था, मगर शिवप्रसादजी का आग्रह इतना अधिक था कि उसे टालना अशक्य हो गया। उन्होंने लिखा:—"इस मन्दिर का उद्‌घाटन-संस्कार करनेवाला आपके समान पवित्र व्यक्ति मुझे कोई नज़र नही आता। इसे आप न खोलेंगे तो मुझे ऐसा मानना पड़ेगा कि मुझसे ईश्वर रुष्ट हो गया।" इस तरह इस मन्दिर के पीछे यह गहरी धर्म-भावना मौजूद है, तो भी उसके पीछे धर्मान्धता का लेश भी नहीं। खोलने से पहिले

भारत के प्रत्येक धर्म के अनुयायी ने वहा ईश्वर-स्तवन किया और भारत के प्रिय पुत्रो ने उपस्थित होकर मातृसेवा की प्रतिज्ञाए ली।

लेकिन अब मन्दिर-निर्माण की बात करें। इनकी मन्दिर की कल्पना को रसपूर्वक उठाने वाले स्थापत्यकला के विशेषज्ञ श्री दुर्गाप्रसाद जी इन्हें मिल गये। इन्होने काशी के ही उत्तमोत्तम पत्थर गढ़नेवाले जमा किये, उन्हे यह नई मूर्ति गढ़ने का विचार वतलाया, अनेक चित्रो द्वारा उन्हें समझाया कि मूर्ति किस प्रकार की वनानी है। ये कारीगर पाच वर्ष तक वरावर इस काम को करते रहे और परिणामस्वरूप ७६२ सगमरमर के टुकड़े सावधानी एव शुद्धता से काटकर प्रस्तुत किये गये। इस मानचित्र मे तिव्वत से लेकर लका तक, चीन की प्राचीन दीवार से हेरात तक का प्रदेश दिखाया गया है। इस धरातल भूमि के एक इच मे छः मील ७०४ गज का प्रमाण माना गया है, अर्थात् नकशा ३१ फु० २ इ० लम्वा और ३० फु० २ इच चौडा वना है। ऊचाई मे, एक इच मे दो हजार फुट की माप रखी गई है। गौरीशकर का शिखर पौने पन्द्रह इच ऊचे सगमरमर के एक ही टुकड़े का वनाया गया है और इसी अनुपात से भारत के पहाडो के चार सौ से ऊपर शिखर वनाये गये हैं। इतना ही नही वल्कि समुद्र के विभिन्न भागो की गहराई और समुद्र-पृष्ठ से पाचसौ फुट की ऊचाई से लेकर तीस हजार तक की ऊचाई दिखाई गई है और जगह-जगह अक तथा नाम भी दिये गये हैं। पर्वतो के शिखर ही नही, वल्कि पर्वत की घाटिया, दर्रे, नदियाँ व उनकी शाखाए और उनकी गहराई और चौडाई-लम्वाई तथा उनके टेढे-मेढ़े मार्गों को भी ठीक-ठीक वताया गया है। भव्य शिखरो के साथ हिमाच्छादित कैलास की ३०० मील लम्बी तथा १५० मील चौडी विशाल पर्वत श्रेणी सभी को आकर्षित करती है। इस मानचित्र मे प्रसिद्ध नगर, ऐतिहासिक स्थान, तीर्थ, नदी-पर्वत आदि यथास्थान दिखाये गये है। मन्दिर की दीवारो पर भारतीय इतिहास के प्राचीन काल से लेकर आज तक के अनेक नकशे पक्के रगो मे चित्रित किये गये हैं और भूगोल का ज्ञान करानेवाले भी कई नकशे दिये गये हैं।

इस प्रकार समस्त मन्दिर कला का ही नही, वल्कि ज्ञान और शिक्षण का भी अनुपम मन्दिर वन गया है। मानचित्र मानो सगमरमर का वना हुआ एक काव्य है और उसमे निर्माता की प्रगाढ देशभक्ति मूर्तिमान हुई है।

उद्घाटन

उद्घाटन के पूर्व प्रत्येक धर्म के अनुयायी ने अपनी-अपनी प्रार्थना से मन्दिर को गुजायमान कर दिया, यह तो मैं कह ही चुका हू। मन्दिर की भावना समझाने के

लिए डा० भगवानदास ने एक सुन्दर भाषण किया जो अन्यत्र दिया जाता है। उदार भावना से भरे उनके उद्‌गार अब तक स्मृति-गुहा में गूंज रहे हैं। उन्होंने शुद्ध धर्म का तत्व बताया। धर्म का बाह्य स्वरुप झगड़े का मूल है, यह बताया और कहा कि परमकृपालु पिता ने सबको समान बनाया, सबके लिए खाने-पीने की सामग्री प्रस्तुत की, सबको अपना-अपना स्थान दिया है, लेकिन हम बालक अक्सर आपस में झगड़ते रहते हैं। माता की गोद, माता के चरण ही एक ऐसा स्थान है, जहां यह झगड़ा भूल जाता है, इसलिए यह माता का मन्दिर बनाया गया है। इस मन्दिर में आकर हम सब अपने-अपने झगड़े भूल जायं।

डा० भगवानदास का अनुमोदन करते हुए खां साहब ने कहा—"आज इस मन्दिर को देखकर मुझे पुराने जमाने का मजहब याद आता है। आज का मजहब तो ऐसा बन गया है कि इसके खिलाफ हमारे नवजवानों ने बगावत खड़ी कर दी है। सच्चा मजहब तो हमारे धर्मग्रन्थों में है, लेकिन धर्मग्रन्थों को ठीक-ठीक आज पढ़ता ही कौन है? इस्लाम के प्राचीन समय में मस्जिद केवल मुसलमानों की ही इबादतगाह नही थी, वहां तो सब अपनी-अपनी रीति के मुताबिक इबादत करते थे। आज डा० भगवानदास ने हमें यह समझाया है कि हिन्दू मुसलमानों का सच्चा धर्म कैसा होना चाहिए, इसके लिए मैं उनका आभार मानता हूं।"

इसके बाद हिन्दी के प्रसिद्ध कवि मैथिलीशरण जी गुप्त ने मातृ-मन्दिर का स्व-रचित गीत गाया। इस मधुर गीत को तो मैं ज्यों-का-त्यों दे रहा हूं:—

भारत माता का यह मन्दिर, समता का संवाद यहां।
सबका शिव-कल्याण यहां है, पावें सभी प्रसाद यहां।
नहीं चाहिए बुद्धि बैर की, भला प्रेम-उन्माद यहां।
कोटि-कोटि कण्ठों से मिलकर, उठे एक जयनाद यहां।
जाति धर्म या सम्प्रदाय का, नहीं भेद-व्यवधान यहां।
सबका स्वागत सबका आदर, सबका सम-सम्मान यहां।
राम-रहीम बुद्ध ईसा का, सुलभ एकसा ध्यान यहां।
भिन्न-भिन्न भव-संस्कृतियों के, गुण-गौरव का ज्ञान यहां।
सब तीर्थों का एक तीर्थ यह, हृदय पवित्र बनालें हम।
आओ, यहां अजातशत्रु बन, सबको मित्र बनालें हम।
रेखाएं प्रस्तुत हैं अपने मन के चित्र बना लें हम।
सौ सौ आदर्शों को लेकर एक चरित्र बनालें हम।
मिला सत्य का हमें पुजारी, सफल काम उस न्यायी का।
भक्ति-लाभ कर्त्तव्य यहां है, एक-एक अनुयायी का।

बैठो माता के आंगन में, नाता भाई-भाई का।
समझे उसकी प्रसव-वेदना, वही लाल है माई का।

इसके वाद गाधी जी का प्रवचन हुआ—

"इस मन्दिर का उद्घाटन करते हुए मैं अपने मन के भावो को किस तरह व्यक्त करू? सेगाव छोडकर कही न जानेवाला व्यक्ति, यहा दौडा आया, क्योकि प्रेम एक अजीब वस्तु है। यह मनुष्य को कहा से कहा उडा ले जाता है। मीरावाई का कहा जानेवाला एक भजन गुजराती मे है, जिसमे प्रेम की उपमा सूत के कच्चे धागे से दी गई है, किन्तु इस धागे के कच्चे होने पर भी इसका वल इतना जवरदस्त है कि अपने परिचित प्रेमी को वह चाहे जहा खीच ले जाता है। इस पर कृष्ण सरीखे भी प्रहार करें तो भी यह टूटता नही, क्योकि कृष्ण की तो यह प्रतिज्ञा ही है कि जहां सच्चा प्रेम है वहा मैं हू। सो यह प्रेम का धागा ही मुझे यहा खीच लाया है।

शिवप्रसाद जी का प्रेम मुझे खीच न लाता, तो मैं यहा आता नही, क्योकि इस पवित्र भावना पर रचे हुए इस मन्दिर का उद्घाटन करने के लिए मैं अपने को योग्य नही समझता। शिवप्रसाद को जव से मैं जानता हू तव से मैं देखता हू कि गंगा-तट को इन्होंने अपना निवास-स्थान वनाया हैं और गगाजल से अपनी देह को पवित्र रखते हैं, तिस पर भी इन्होने अपने हृदय मे एक दूसरी ही गगा को धारण कर रक्खा है। यह भावना और कल्पना की गगा इनके हृदय मे हमेशा वहती रहती है और इसमे यह नित्य ही अवगाहन करते रहते हैं। वह भावना के घोडे भी वनाते और पृथिवी की प्रदक्षिणा करते हैं। भावना का ऐसा वल है कि वह यदि शुद्ध हो तो स्वर्ग मे भी उडा ले जा सकता है और अशुद्ध हो तो नरक मे भी ले जा सकता है। इनकी भारत-भक्ति की भावना पूना के कर्वे विधवाश्रम मे खुदे हुए एक उठावदार नकशे को देखकर मूर्तिमन्त हुई, और इस पर अपनी समुचित धनराशि खर्च कर डालने का इन्होने विचार किया। जैसी इनकी भावना थी वैसे ही इन्हे कलाकार भी मिल गये, शिल्पी और इजीनियर भी वैसे ही मिल गये। एक वार तो इन्हें अपने जीवन की भी आशा नही रही थी, किन्तु भगवान ने जीवित रक्खा और इनका स्वप्न, इनकी भावना की प्रतिमा आज हम अपने सामने खड़ी देखते हैं।

सवेरे जव मैं पूर्णाहुति देने आया, तो उस समय वेदमन्त्र सुनते-सुनते मुझे २० वर्ष से हम जो श्लोक अपनी प्रभात की प्रार्थना मे वोलते हैं, उसका स्मरण हो आया —

समुद्र वसने देवि पर्वतस्तन मण्डले,
विष्णुपत्नि नमस्तुभ्यं पादस्पर्शं क्षमस्व मे।

यह विष्णुपत्नी ही हमारे पास है। हमारा पोषण करती है। रक्षण करती है, जिसके हम सब ऋणी हैं और जिनसे हमें सदा क्षमा मांगनी चाहिए। उनका चित्र मेरे सामने खड़ा हो गया। जिस माता ने हमें जन्म दिया, वह तो थोड़े ही वर्ष जीवित रहेगी, किन्तु यह माता तो सदैव ही है और यदि यह नहीं है तो हम भी नहीं हैं। जिस दिन इसका नाश होगा उस दिन यह हमें अपनी गोद में लेकर चली जायगी। भारत-माता इसी माता का अंग है और उसका मानचित्र आज वेदमन्त्रों से पुनीत हुआ है। शिवप्रसादजी ने सबको बिना किसी प्रकार की शर्त के इस माता की आराधना के लिए निमन्त्रित किया है। जिन्हें माता के प्रति प्रेम है, वे यहां चले आवें। मैं तो प्रेम का दावा करता ही हूं तब फिर मैं इस मन्दिर का उद्घाटन क्यों न करूं?

इस मन्दिर को शिवप्रसाद जी का आशीर्वाद तो मिला ही है। यहां हम सब अपने दिल का द्वेष और मैल भूल कर, अपने तमाम संकुचित भेद-भाव भूल कर एकत्र हों और भारतमाता की सेवा की प्रतिज्ञा करें। शिवप्रसाद जी की शुभ-कामनाएं सब सफल हों और जबतक वे सफल हों, तबतक की भगवान उन्हें आयु प्रदान करें।

—हिन्दी। काशी, दशहरा १९३६। ह० से०, ३१।१०।१९३६।]

३५. मैथिलीशरण जी

कविवर मैथिलीशरण की कविता तो हम ऊपर पढ़ ही चुके हैं। इनकी आयु ५० वर्ष की होने पर इनके अनेक मित्रों ने इन्हें एक अभिनन्दन ग्रन्थ भेंट करने का शुभअवसर ढूंढ़ा और काशी में गांधीजी की उपस्थिति का लाभ उठाया। कवि को यह ग्रन्थ अर्पित करते हुए गांधीजी ने जो संक्षिप्त भाषण दिया उसका एक-एक अक्षर नोट करने लायक था :—

"मैं तो बड़े या छोटे लोगों की सुवर्ण अथवा हीरक जयन्ती मनाने में विश्वास नहीं रखता और खास कर महापुरुषों को अपने प्रमाणपत्र लिखकर एक ग्रन्थ भेंट करने की यह पद्धति तो मुझे सर्वथा ही अनुचित लगती है। मैं तो अपना प्रमाणपत्र देने की धृष्टता कदापि न करूंगा, यह बात मैं लोगों को सुना चुका हूं।

"मैंने पहले आग्रह के वश होकर मालवीयजी और कविवर रवीन्द्रनाथ के लिए अपनी अञ्जलि दी थी, किन्तु क्या एक बार भूल की, इसलिए दूसरी बार भी करनी चाहिए?

"मेरा चित्त तो आज सेगाव मे है। फिर मैं न तो कवि हू, न हिन्दी का विद्वान। तव फिर मुझे यहा यह 'अभिनन्दन-ग्रन्थ' देने के लिए धृष्टता क्यो करनी चाहिए थी? लेकिन मैं तो ठहरा महात्मा और महात्मा से चाहे जो करने के लिए कहा जा सकता है। इसलिए मैं यहा आगया हू।

"लेकिन सच बात तो यह है कि मनुष्य जवतक जीवित है, तवतक न तो वह महात्मा है, न कवि है, न अवतार। राम और कृष्ण को उनकी जीवितावस्था मे किसी ने अवतार नही कहा। उन्हे अवतार तो उनके पीछे आनेवाले लोगो ने वनाया। तब कवि और महात्मा की तो बात ही क्या की जाय? आज तो वहुत से नामधारी कवि और महात्मा पडे है। 'कर्मण्येवाऽधिकारस्ते" वाला महासूत्र कवि और महात्मा के लिए तो खासतौर से है। इसलिए मैथिलीशरण अगर यह समझते हो कि वह भारत के महाकवि है, तो मुझे उनके साथ झगडना होगा। ईश्वर जव उन्हें सहजस्फूर्ति देता है, तभी उनकी लेखनी से 'साकेत' और 'द्वापर' जैसे प्रसाद उत्पन्न होते हैं। मैं और आप उनकी स्तुति करे, इससे इन्हे स्फूर्ति नही मिलेगी। सच्चा कवि स्तुति-निन्दा से परे है। वह तो, प्रभु स्फूर्ति दे तो, उसका उत्तर देता है।"

कलाभवन

काशी मे गाधीजी ने कलाभवन भी देखा। इस कलाभवन का वर्णन तो काकासाहव जैसे कलाकार ही किसी समय करें तो हो। इसमे पुरातत्व की अनेक सामग्रिया, अनेक प्राचीन मूर्तिया, चित्र और हस्तलिखित ग्रन्थो का सुन्दर मूल्यवान् सग्रह है। और यह सग्रह राय श्रीकृष्णदास ने स्वय प्रेमपूर्वक तय्यार करके सरस्वती देवी को, नागरी प्रचारिणी सभा को, अर्पित किया। ऐसी समर्पण-बुद्धि हम सव मे उत्पन्न हो, यही प्रार्थना है।

—म० ह० देसाई

—अंग्रेजी। ह० ज०। ह० से०, ३१।१०।१९३६।]

[३६. इलाहाबाद की बैठक में स्वीकृत रचनात्मक कार्यक्रम

काग्रेस की कार्यकारिणी समिति ने इलाहावाद की वैठक मे स्वीकृत अपने एक प्रस्ताव मे इस वात पर जोर दिया है कि धारासभाओ के सदस्यो और काग्रेस के दूसरे कार्यकर्त्ताओ के लिए यह वहुत जरूरी है कि जिन तीन करोड़ ग्रामवासियो

और उनके प्रतिनिधियों के बीच सीधा सम्पर्क स्थापित हो गया है उनके झोपड़ों तक वे कांग्रेस का रचनात्मक कार्यक्रम पहुंचावें। धारासभाओं में जो प्रतिनिधि चुने गये हैं अगर वे चाहें तो ग्रामवासियों की तरफ़ उपेक्षा कर सकते है, या उन्हें आर्थिक बोझों से थोड़ा सा या शायद यथोचित छुटकारा भी दिला सकते है, पर वे जबतक चतुर्विध रचनात्मक कार्यक्रम में ग्रामवासियों को दिलचस्पी नही दिलायेंगे अर्थात् सार्वजनिक हाथकताई द्वारा खादी का सार्वत्रिक उत्पादन और उपयोग, हिन्दू-मुस्लिम एकता या यों कहिए कि कौमी इत्तफ़ाक, शराब पीने की जिन्हें लत लगी हुई है उनमें प्रचार कार्य करने एकदम शराब वन्द कर देने के लिए उत्तेजन, और हिन्दुओं की तरफ़ से अस्पृश्यता का पूर्ण निवारण, इस कार्यक्रम में जबतक वे ग्रामवासियों को दिलचस्पी लेने वाला नहीं बनायेंगे, तबतक उनमें आत्मविश्वास, स्वाभिमान और अपनी स्थिति में सतत् सुधार करने की शक्ति नही आ सकती।

१९२० और १९२१ में हजारों सभाओं में यह बतलाया गया था कि इन चार चीजो के बगैर अहिंसा के मार्ग से स्वराज्य हासिल होना असम्भव है। मैं मानता हू कि आज भी मेरी इस बात में उतनी ही सचाई है। सरकारी व्यवस्था द्वारा टैक्सो का नियमन करके आम जनता की आर्थिक स्थिति को सुधारना यह एक चीज है, और उनके मन में यह भावना पैदा करना कि उन्होने केवल अपने ही पुरुषार्थ से अपनी स्थिति को सुधारा है, यह बिल्कुल दूसरी ही चीज है। यह तो वे खुद अपने हाथ से सूत कात कर तथा गांवों की दूसरी दस्तकारियों के ज़रिये ही कर सकते हैं।

इसी तरह विभिन्न सम्प्रदायों या कौमों के पारस्परिक वर्ताव का नियम नेताओं की अपनी राजी से या राज्यद्वारा जबर्दस्ती लादे हुए समझौतों द्वारा करना, यह एक चीज है, और आम लोग एक दूसरे के धर्मो और बाहरी व्यवहारों के प्रति आदर-भाव रखने लगें, यह बिल्कुल जुदी ही चीज है। धारासभाओं के सदस्य और कांग्रेस के कार्यकर्त्ता गांवों के लोगो में पहुंचकर जबतक उन्हें परस्पर सहिष्णुता रखना नही सिखायेंगे तबतक यह चीज मुमकिन नही।

फिर कानून के वल पर शराब बन्द कराना, और यह तो करना ही पड़ेगा, एक चीज है और मद्यनिषेध का स्वेच्छा से पालन करके उसे कायम रखना यह दूसरी चीज है। खर्चीली और भारी जासूसी पद्धति के बगैर मद्यनिषेध का काम चल नही सकता, यह हताश और बैठे-ठाले मनुष्य ही कहते हैं। अगर कार्यकर्त्ता गांवों के लोगो के पास जावें और शराब जहां-जहां लोग पीते हों, वहां उसके बुरे परिणामों को अच्छी तरह समझावें तथा शोध करनेवाले विद्वान शराब पीने की लत के

कारणो को खोज निकाले और लोगो को उचित ज्ञान दिया जाय तो मद्यनिषेध का काम वगैर किसी खर्च के चल सकता है। इतना ही नही वल्कि उससे मुनाफा हो सकता है। यह काम खास कर स्त्रिया कर सकती है।

यही वात अस्पृश्यता के वारे मे है। अस्पृश्यता के दुष्परिणामो को कानून-द्वारा नष्ट हम भले कर दें और यह करना ही है पर जवतक लोग अपने दिल से छुआछूत की भावना को नही निकालेंगे तवतक हमे सच्ची स्वतन्त्रता मिल नही सकती। आम जनता के हृदय से जवतक अस्पृश्यता की भावना दूर नही होगी, तवतक वे एकता के भाव से और एक हृदय से कदापि काम नही कर सकते।

इस प्रकार यह, और इस कार्यक्रम के अन्य तीनों अग लोक-शिक्षा से भरे हुए हैं और अव तो तीन करोड स्त्री-पुरुषो के हाथ मे ,सही या गलत रीति से सत्ता सौप दी गई है अत यह काम तात्कालिक महत्व का हो गया है। यह सत्ता चाहे जितनी अल्प और सीमित हो, तो भी काग्रेसवादियो और दूसरो के हाथ मे जिन्हे कि इन मतदाताओ से वोट लेने हो, इन तीन करोड मनुष्यो को सही या गलत रास्ते से शिक्षा देने की शक्ति है। जो वस्तुए उनके जीवन के साथ अत्यन्त निकट सम्वन्ध रखती है, उनमे उनकी विल्कुल ही उपेक्षा करना, यह गलत रास्ता है। —अंग्रेजी। ह० ज०। ह० से०, २२।५।१९३७।]

३७. काशी-यात्रा के संस्मरण

तीर्थयात्रा

आज काशी-यात्रा दुगनी पवित्र हो उठी है। काशी का नाम लेते ही हर एक हिन्दुस्तानी के दिल मे अपने पूर्वपुरुषो के आध्यात्मिक उत्तराधिकार की स्मृति ताजा हो उठती है। उसी काशी मे आज भारतभूषण पण्डित मालवीयजी और गाधीजी, दोनो के दिल मे देश की उत्कट भक्ति भरी हुई है, और उसी का वन्धन दोनो को एक दूसरे के साथ अटूट रूप से वाँधे हुए हैं।

मालवीयजी ने अपने स्वप्नो को जिस हद तक सफल होते देखा है, उस हद तक विरला ही कोई देख पाता है। जहा-जहा उन्होने लोगो मे हिन्दुस्तान की प्राचीन सस्कृति या प्रेम पाया, वहा-वहा वे अपने इस स्वप्न की सिद्धि के लिए जा पहुचे, और वहावालो को अपने अनुकूल वना लिया। हिन्दुस्तान के अनेक हिन्दू राजा-महाराजा और घनी-मानी उनके मन्त्र से प्रभावित हुए। कहा जाता है कि एक दिन गगाजी मे स्नान करने के वाद जव वह उपासना मे वैठे तो विश्व-

विद्यालय की सारी कल्पना उनके सामने मूर्त्त हो उठी। उन्होंने अपने पूज्य पिता-जी से उसकी चर्चा की। पिता ने अपने श्रम से कमाये हुए १०१, एक सौ एक रुपये पुत्र को देते हुए आशीर्वादपूर्वक कहा कि यह रक़म एक करोड़ एक की हो जाय। आशीर्वाद सफल हुआ। पिछले पच्चीस वर्षों में मालवीयजी ने अपने विश्वविद्यालय के आंगन में एक के बाद एक अनेक भव्य भवन खड़े होते देखे हैं। देश के हजारों नवयुयक हर साल वहां पहुंचते है और मालवीयजी महाराज की शीतल छाया में अपना विकास करते हैं। बदले में इन शत-शत युवकों से उनका यौवन और उत्साह पा-पा कर मालवीयजी इस बुढ़ापे में भी सबके गर्व और गौरव की वस्तु बने हुए हैं।

अतएव कोई आश्चर्य नहीं, यदि विश्वविद्यालय का रजत-जयन्ती उत्सव आभार और अभिनन्दन का एक अद्वितीय उत्सव बन गया हो। इस महोत्सव में दूर और पास के हजारों नर-नारी एकत्र हुए थे। जब सर राधाकृष्णन् ने, जो अब पण्डितजी के सुयोग्य उत्तराधिकारी भी हैं, जीवेम शरदः शतम् की कामना के साथ अपने लाक्षणिक ढंग से मालवीयजी महाराज की प्रशंसा करते हुए यह कहा कि उनके समान ऋषियों के कारण तीर्थ वास्तविक तीर्थ बनते हैं, वह तीर्थो को भी सच्चे तीर्थ बनाने का सामर्थ्य रखते हैं—"तीर्थंकुर्वन्ति तीर्थाणि"—तो मानो उन्होंने लोक-हृदय की भावना को ही प्रतिध्वनित किया।

अधूरा स्वप्न

तिस पर भी मालवीयजी महाराज के विचार में उनके स्वप्नों की सिद्धि अभी वहुत दूर है। हाल ही पण्डित रामनरेश जी त्रिपाठी की 'तीस दिन मालवीय जी के साथ' नामक एक पुस्तक सस्ता साहित्य-मण्डल, नई दिल्ली से प्रकाशित हुई है, जिसमें उन्होने मालवीय जी की दिनचर्या की और उनके मनोरथों की थोड़ी झलक दिखाई है। आज भी मालवीय जी अपने डाक्टर से कहते है—"डाक्टर साहव मुझे जल्द अच्छा कीजिए, मैं एक वार फिर अपने प्यारे देश में घूमना चाहता हूं, अभी वहुत काम वाकी रहा है। "मेरी बड़ी लालसा थी कि विश्व-विद्यालय में एक म्यूजिक कालेज (संगीत विद्यालय) भी होता, जहां विद्यार्थी संगीत सीखते और भक्तिमय संगीत से अनुप्राणिन होकर अपने जीवन-कार्य में लगे रहते। विश्व-विद्यालय में नालन्दा की तरह दस हजार विद्यार्थियों की शिक्षा का प्रबन्ध हो जाय, तव अहक वुताय। क्या ही अच्छा हो, यदि ये विद्यार्थी यहां रहकर अपनी भव्य प्राचीन संस्कृति को सजीवन करते हुए विद्याव्ययन करें।" एक दिन सुन्दर चांदनी को देखकर कह उठे—"कैसा सुहावना दृश्य है! विश्व-विद्यालय मे इतनी

जगह है कि इसमे त्यागी विद्वान् अलग-अलग आश्रम बनाकर रहे और अपने-अपने ज्ञान का उपदेश करें तो कितना अच्छा हो। कही वशिष्ठ, कही अत्रि, कही गौतम और कही अंगिरा हो, तब विश्व-विद्यालय का उद्देश्य सफल हो।" कभी कहते हैं—"मेरी इच्छा है कि युनिवर्सिटी मे कुछ विद्वानो को नियुक्त करके तुलसीदास के ग्रन्थो के शुद्ध पाठ तैयार कराऊ और उन पाठो को सर्वमान्य बनवाऊ। इसी तरह अन्य प्राचीन सन्तों, महात्माओ और लोक-हितैषी कवियो के ग्रन्थो के शुद्ध पाठ तैयार कराके जनता तक पहुचाऊ।" कभी कहते हैं—"मैंने विश्व-विद्यालय की सड़को के कुछ नाम सोच रक्खे हैं, जैसे—सत्य हरिश्चन्द्र सडक, युधिष्ठिर सडक, हनुमान सड़क, अशोक सडक, राणाप्रताप सडक।" कभी कहते हैं—"नही, नही, गरीब छात्रो को जितनी दे सकें, छात्रवृत्तिया दीजिए। कौन कह सकता है कि इन गरीबो मे कितने ध्रुव, कितने शिवाजी, और कितने राणाप्रताप छिपे हैं।" एक दिन बोले—"मैंने जान-बूझकर गीता का यह साप्ताहिक वर्ग शुरू करवाया है, जिससे हमारे इस ग्रन्थरत्न का नियमित पारायण हो सके और विद्या-र्थियो को उससे प्रेरणा मिल सके।"

पहरेदार की चेतावनी

औरो की तरह गाधीजी भी वहा एक यात्री ही थे। किन्तु उन्हे पहरेदार का काम भी करना था। उपाधि-वितरण के अवसर पर दीक्षान्त भाषण करना गाधीजी का काम नही। उनका वह रास्ता नही। उन्होने देखा कि जिन लोगो को मालवीयजी के समान महर्षि का उत्तराधिकार सँभालना है, और सभालकर उनके स्वप्नों को सफल बनाने के लिए जुट कर काम करना है, वे कही उत्सव के आनन्द मे अपने उस कर्त्तव्य को भूल न जाय। यही सोचकर उन्होने चेतावनी देने का काम अपने ज़िम्मे ले लिया।

पच्चीस साल पहले भी उन्होंने इसी जगह यही काम किया था। उस समय दरभगा के स्वर्गीय महाराजा ने गाधीजी का स्वागत करते हुए कहा था:—"यद्यपि वह (गाधीजी) धन और वैभव के बीच पले हैं, तथापि उन्होंने अपनी इच्छा से गरीबो के साथ रहने व गरीब बनने का मार्ग स्वीकार किया है।" उस समय महाराजा को यह खयाल नही था कि गाधीजी अपने इस वर्णन को सच्चा साबित कर दिखायेंगे। किन्तु मालवीयजी जानते थे। उन्होंने गाधीजी को अपने दिल की सब बातें कह रक्खी थी। गाधीजी भी जानते थे कि मालवीयजी को विश्वविद्यालय के लिए सरकारी चार्टर प्राप्त करने मे कितनी कठिनाइयो का सामना करना पडा था। वह मालवीयजी के अधूरे मनोरथों मे भी परिचित थे।

मालवीयजी उन दिनों सर हारकोर्ट बटलर से, जो वाइसराय की कार्यकारिणी समिति के शिक्षा-सदस्य थे, मिले थे और उनसे कहा था कि युनिवर्सिटी में शिक्षा हिन्दी द्वारा दी जायगी। सर हारकोर्ट अपने काम में पक्के थे। उन्होंने कहा :— "सो नही होगा। अगर आप यही करना चाहते हैं, तो अपने पैरों खड़े रहिए, और सरकारी सहायता या स्वीकृति की अपेक्षा न रखिए। जबतक आप अपना काम अंग्रेजी में करते है, हम अपने को सलामत समझते हैं, क्योंकि हम जान सकते हैं कि आप कहां हैं और क्या करना चाहते हैं। लेकिन अगर आप अपनी भाषा में काम करने लगेंगे तो हमें कुछ भी पता न चलेगा।" मालवीयजी का स्वभाव है कि वह अपने विरोधी के साथ झट समझौता कर लेते है, और अक्सर उन्होंने समझौता करने में ज़रूरत से ज्यादा जल्दी की है, इसलिए वह वचनबद्ध हो गये कि इसका आग्रह न रक्खेंगे। लेकिन गांधीजी इस तरह माननेवाले न थे। मालवीय-जी जानते थे कि उस अवसर पर गांधीजी क्या कहेगे। गांधीजी ने उन्हें पहले से सचेत भी कर दिया था, लेकिन उन्होंने गांधीजी की एक न सुनी। कहा—" "आपको भाषण तो करना ही होगा, शर्त यह है कि अंग्रेजी में कीजिए।" और कहा :—"आप जो कहना चाहें, खुशी से कहिए।" फलतः गांधीजी ने सभा के सामने अपना हृदय खोलकर रख दिया। आज भी उनके उस भाषण की ताजगी क़ायम है। इस बार की तरह उस बार भी वह बिना किसी तैयारी के, जो समय पर सूझा, बोल गये थे। उस समय के ठीक शब्द शायद आज उन्हें याद भी न हों, लेकिन उसमें भी वही झलक मौजूद है और भाषा भी क़रीब-क़रीब वही है। उस दिन भाषण शुरु करते हुए उन्होंने कहा था : "आज इस महान् कालेज की छाया में, इस तीर्थभूमि में, मुझे अपने देशवासियों के सामने विदेशी भाषा में बोलना पड़ रहा है, यह मेरे लिए बहुत ही दुःख और लज्जा का विषय है।" और यह आशा व्यक्त की थी कि—"इस विश्व-विद्यालय में पढ़ने आनेवाले विद्यार्थियों को देशी भाषाओं-द्वारा पढ़ाने का प्रयत्न किया जायगा. . .यदि आज हमें अपनी देशी भाषाओं द्वारा पढ़ाया जाता, तो हमारी स्थिति कितनी अच्छी होती ? आज हम स्वतन्त्र भारतवर्ष में रहते होते, हमारे पढ़े-लिखे लोग अपने ही देश में परदेशी जैसे न बन गये होते, बल्कि उनकी आवाज़ देश की जनता के हृदय तक पहुंची होती, वे ग़रीब-से-ग़रीब लोगों के बीच काम करते होते, और पिछले पचास वर्षों मे उन्होंने जो कुछ पाया है, उसका लाभ आम जनता को भी मिला होता।" उन्होने इस बात पर खेद प्रकट किया कि यह हमारे नौजवानों के मार्ग की बड़ी-से-बड़ी बाधा है; इसके कारण जनता के हजारों वर्ष व्यर्थ ही नष्ट हुए हैं। फिर उन्होंने श्रोताओं को अपने दिल की बात सुनाई। उन्होने अपने चारों ओर आंख उठा कर

जो देखा तो तडक-भडक का पार न था और रत्नाभूषणो का आखो मे चकाचौंध पैदा करनेवाला प्रदर्शन था। यह देख गाधीजी रत्नाभूषणो से अलंकृत उन राजा-महाराजाओ को लक्ष्य करके यह कहे बिना न रह सके कि जबतक आप इन जवाहरात को उतार नही देते और इन्हे अपने देशवासियो की धरोहर समझ कर इनके ट्रस्टी नही बनते, हिन्दुस्तान का उद्धार नही हो सकेगा।

यहा मैं उस सारे भाषण का सार नही दूगा। जिज्ञासु पाठक आज भी उसे पढकर उससे लाभ उठा सकते हैं। इसके बाद, सचमुच तो गाधीजी ने बमगोलो की नीति मे विश्वास करनेवाले लोगो की आलोचना करते हुए जो चन्द बातें कही, वे उस समय उनकी बात को न सूझ सकनेवाले सभाजनो को अच्छी न लगी, इसलिए सभा मे उपस्थित बहुत से बडे-बडे लोग एक साथ उठ कर चले गये। आज समय बदल गया है। २५ बरस पहले जो बातें कही थी, उनसे कही कडुई बातें वह इस दरम्यान सुना चुके हैं, फलत. जब गत २१ जनवरी की शाम को उन्होने हिन्दुस्तानी मे अपना भाषण शुरू किया, तो किसी ने यह अनुभव नही किया कि कोई अनहोनी बात हो रही है। लेकिन अभी तो विश्व-विद्यालय को मालवीयजी और गाधीजी के स्वप्न सिद्ध करके दिखाने हैं। जब अस्सी बरस के मालवीयजी ने गाधीजी की एक-एक बात का समर्थन करते हुए उस विशाल जन-समूह के सामने अपनी शुद्ध और अस्खलित हिन्दी मे गगा के प्रवाह-सा अपना वाणी-प्रवाह बहाना शुरू किया, तो सुनकर मन प्रसन्न हो उठा। जैसा कि गाधीजी ने कहा है—"सूरज तो सदा ही प्रकाश और गरमी पहुचाता रहता है, लेकिन जो लोग उससे दूर भागकर ठण्ड मे ठिठुरते और अंधेरे में छिप जाते हैं, उनके लिए सूरज भी क्या करे?" विद्यार्थियो को तो मालवीयजी के आशीर्वाद उनके अपने रचे इस सस्कृत श्लोक के रूप मे सदा ही प्राप्त हैं.

सत्येन ब्रह्मचर्येण व्यायामेन विद्यया।
देशभक्त्याऽऽत्मत्यागेन सम्मानार्हः सदा भव॥

(अर्थात् सत्य, ब्रह्मचर्य, व्यायाम, विद्या, देशभक्ति और त्याग द्वारा सदा सम्माननीय बनो।)

—अंग्रेजी। सेवाग्राम, १।२।१९४२। ह० ज०। ह० से०, २२।२।१९४२। श्री महादेव देसाई लिखित विवरण से।]

३८. साप्ताहिक पत्र : मसूरी में गांधीजी

उन लोगो के सिवा जो गाधीजी के बिल्कुल पास रहते हैं, बहुत कम ऐसे हैं,

जो यह जानते हों कि गांधीजी अपने पाखाने को लायब्रेरी कहते हैं। यह सिर्फ नाम की ही बात नहीं, असल में भी ऐसा ही है। उन्होंने अपनी इस लायब्रेरी में इतना पढ़ा है, जितना एक आम आदमी सारी उम्र में नहीं पढ़ता। सबसे गहरा सोच-विचार भी उन्होंने इसी जगह किया है। मुझे याद है कि कम-से-कम तीन ऐसे मौके थे, जब उन्होंने बड़े ही महत्वपूर्ण फैसले इस स्थान की तनहाई में किये, और यही एक स्थान है, जहां उन्हें तनहाई मिल भी सकती है। लायब्रेरी का शब्द गांधीजी ने अपने एक दोस्त से लिया था, जिनकी वह बड़ी इज़्ज़त करते हैं। गांधीजी हमेशा बहुत रसपूर्वक बयान किया करते है कि उनके उन दोस्त का पाखाना इतना साफ़ रहता था कि आदमी बहुत आराम से उसमें बैठकर पढ़ सकता था। उन्होंने अपने पाट के पास किताबों की एक आलमारी भी लगा रक्खी थी। पिछले इतवार की प्रार्थना में गांधीजी ने मसूरी के लोगों से ग़रीबों के लिए एक धर्मशाला या मुसाफिरखाना बनवाने की ज़रूरत का जिक्र करते हुए कहा—"ग़रीबों के पाखाने भी लायब्रेरी या रसोई की तरह साफ़-सुथरे होने चाहिए। उसमें गन्दगी और बू तो नाम को भी न हो। आप शायद समझें कि मै मज़ाक कर रहा हूं, लेकिन असल में बात यह है कि ज़ाती सफाई का और अपने इर्दगिर्द हद दरजे की सफ़ाई का ख़याल समाजी जीवन की सबसे पहली मंज़िल है। हिन्दुस्तान में हमने सफाई को नित्य धर्म में जगह दी है। लेकिन यह दावा अभी हमें साबित करना है कि हममें सफ़ाई का वह तत्त्व है। मैंने अपनी आंखों देखा है कि हम अपनी पवित्र नदियों के किनारों को किस बुरी तरह गन्दा करते है। गंगा के पानी को हम पवित्र मानते हैं और समझते है कि वह हमारे पाप धो सकता है। इसका मतलब दर असल यह है कि जिस तरह पानी हमारे शरीर धो देता है, भक्त प्रार्थना करता है और आशा रखता है कि, उसी तरह दिव्य पानी उसके दिल को शुद्ध कर देगा। लेकिन अगर आज की तरह हम अपनी पवित्र नदियों को ही गन्दा करते रहेंगे, तो उनका पानी हमारी आत्मा को कैसे शुद्ध कर सकेगा?

गाधीजी ने सुना था कि मसूरी में मजदूरों के रहने-सहने की हालत बहुत बुरी है। वे छोटे-छोटे, गन्दे और बदबूदार कमरों में ठुंसे रहते है। वे बोले: इस पर हम किसी को ध्यान देना चाहिए। हम सब एक है। अगर हमने अपने घर साफ़ कर लिये और पड़ोसियों के घरों की परवाह न की, तो हमें बीमारी वगैरा के रूप में इसकी सज़ा भुगतनी पड़ेगी। पच्छिमवालों ने अपने मुल्कों को प्लेग के पंजे से छुड़ा लिया है। मैंने खुद देखा है कि जोहान्सबर्ग की म्युनिसिपल कमेटी ने इस तेजी और मेहनत से काम किया कि फैला हुआ प्लेग फौरन क़ाबू में आ गया और ऐसा गया कि दुबारा नही आया। लेकिन हिन्दुस्तान में वह बार-बार आया करता

है। यहां तक कि वह बारहो महीने रहने लगा है। इसका इलाज हमारे अपने हाथ मे है। हम अपने जीवन मे तो सफाई और सेहत के उसूल पालें ही, लेकिन साथ-साथ यह भी देखें कि हमारे पडोसी भी वैसा ही करें। इस बारे मे गफलत करना पाप है, जिसकी सज़ा हमे भुगतनी ही पडती है। धनी लोग भले अपना धन रक्खें, लेकिन शर्त यह है कि वे गरीबो को न भूलें। वे उनको अपने पैसो मे से हिस्सा दें, और दूसरो का खून चूसकर पैसा न कमायें।

गौ-मक्खी

सुकरात अपने-आपको गौमक्खी कहता था। उसके जीवन का ध्येय था—अमीरो और ताकतवर लोगो के विश्वास को हिलाना और उनकी आत्मा को जाग्रत करना। गाधीजी ने भी मसूरी के अमीर और शौकीन लोगो की आत्मा को गफलत की नीद सोने न दिया। मगर हा, इसके साथ-साथ राम-नाम का चैन देनेवाला सन्देश भी वह देते रहते थे। दूसरे दिन उन्होंने कहा—"राम-नाम सिर्फ चन्द खास आदमियो के लिए नही है, वह सबके लिए है। जो उसका नाम लेता है, वह अपने लिए एक भारी खज़ाना जमा करता जाता है। और यह तो एक ऐसा खज़ाना है, जो कभी खुटता नही। जितना इसमे से निकालो, उतना बढता ही जाता है। इसका अन्त ही नही। और जैसा कि उपनिषद् कहता है: पूर्ण मे से पूर्ण निकालो, तो पूर्ण ही बाकी रह जाता है, वैसे ही राम-नाम तमाम बीमारियो का एक शर्तिया इलाज है, फिर चाहे वे शारीरिक हो, मानसिक हो, या आध्यात्मिक। राम-नाम ईश्वर के कई नामो मे से एक है। सच्ची बात तो यह है कि दुनिया मे जितने इनसान है, उतने ही ईश्वर के नाम। आप राम की जगह कृष्ण कहे या ईश्वर के अनगिनत नामो में से कोई और नाम लें, तो उससे कोई फर्क न पडेगा। गांधीजी को बचपन ही मे राम-नाम का मन्त्र उनकी आया से मिला था। उसका जिक्र करते हुए उन्होंने कहा—

"अंधेरे मे मुझे भूत-प्रेत का डर लगा करता था। मेरी आया ने मुझसे कहा था—अगर तुम राम-नाम लोगे, तो तमाम भूत-प्रेत भाग जायगे। मैं तो बच्चा ही था, लेकिन आया की बात पर मेरी श्रद्धा थी। मैंने उसकी सलाह पर पूरा-पूरा अमल किया। इससे मेरा डर भाग गया। अगर एक बच्चे का यह तजुरबा है, तो सोचिए कि बडे आदमियो के बुद्धि और श्रद्धा के साथ राम-नाम लेने से उन्हे कितना फायदा हो सकता है?

"लेकिन शर्त यह है कि राम-नाम दिल से निकले। क्या बुरे विचार आपके मन मे आते है? क्या काम या लोभ आपको सताते हैं? अगर ऐसा है, तो राम-

नाम-जैसा कोई जादू नहीं। और उन्होंने अपना मतलव एक मिसाल देकर समझाया : फ़र्ज कीजिए कि आपके मन में यह लालच पैदा होता है कि वगैर मेहनत किये, वेईमानी के तरीके से, आप लाखों कमा लें। लेकिन अगर आपको राम-नाम पर श्रद्धा है, तो आप सोचेंगे कि अपने वीवी-वच्चों के लिए आप ऐसी दौलत क्यों इकट्ठा करें, जिसे वे शायद उड़ा दें ? अच्छे चाल-चलन और अच्छी शिक्षा एवं संस्कृति के रूप में उनके लिए ऐसी विरासत क्यों न छोड़ जायें, जिससे वे ईमानदारी और मेहनत के साथ अपनी रोटी कमा सकें ? आप यह सव सोचते तो है, लेकिन कर नहीं पाते। मगर राम-नाम का निरन्तर जप चलता रहे, तो एक दिन वह आपके कण्ठ से हृदय तक उतर आयगा, और वह रामवाण चीज़ सावित होगा। वह आपके सव भ्रम मिटा देगा, आपके झूठे मोह और अज्ञान को छुड़ा देगा। तव आप समझ जायंगे कि आप कितने पागल थे, जो अपने वाल-वच्चों के लिए करोड़ों की इच्छा करते थे, वजाय इसके कि उन्हें राम-नाम का वह खजाना देते, जिसकी कीमत कोई पा नहीं सकता, जो हमें भटकने नहीं देता, जो मुक्तिदाता है। आप खुशी से फूले नहीं समायेंगे। अपने वाल-वच्चों से और अपनी पत्नी से कहेंगे : मैं करोड़ों कमाने गया था, मगर वह कमाना तो भूल गया। दूसरे करोड़ लाया हूं। आपकी पत्नी पूछेगी : कहां है वह हीरा, जरा देखूं तो। जवाव में आपकी आंखें हंसेंगी, मुंह हंसेगा, आहिस्ता से आप जवाव देंगे : जो करोड़ों का पति है, उसे हृदय में रखकर आया हूं। तुम भी चैन से रहोगी, मैं भी चैन से रहूंगा।'

पाप की गठरी

शिमले की तरह मसूरी में भी गांधीजी ने कई दफ़ा लोगों के पाप की गठरी को झटका दिया। रिक्शा खींचनेवालों और वोझ उठानेवालों के वारे में कहा—"सवको उनकी फिक्र होनी चाहिए।' वे अमीरों की अमीराना ज़िन्दगी सम्भव वनाते हैं। लेकिन लोग उनके कन्धों पर वैठते हैं। कभी कोई उनसे यह भी पूछता है कि कहां रहते हो ? क्या खाते हो ? तुम्हारे पास रहने को घर है ?" गांधी जी ने सुना था कि ये वेचारे कवूतरखानों जैसे छोटे-छोटे कमरों में रहते हैं, जिनमें पूरी रोशनी नहीं आती, खुली हवा नहीं आती। एक कमरे में कितने आदमी रहते हैं, सो कहते भी इसलिए डरते हैं कि कहीं कोई उन्हें वहां से निकाल न दे, सज़ा न हो जाय। उनके कपड़े गन्दे होते हैं। शायद उनके पास वदलने के लिए कपड़े ही नहीं होते। शायद उनकी हालत भी विहार की उस औरत की-सी है, जिसे कस्तूरवा ने पूछा था कि वह अपने कपड़े क्यों नहीं धोती ? और उसने कहा था : आप जाकर गांधीजी

से कह दें कि वह मुझे बदलने के लिए कपडे दें, ताकि मैं उन्हे घो सकू। मेरे पास यह एक ही साडी है। विश्वास न हो, तो चलकर सन्दूक देख लें। यह साडी जवतक बिलकुल फट नही जायगी, मैं इसे उतार न सकूगी। धोऊ तो नंगी रहूं न?' जिनको खुदा ने जरूरत से ज्यादा दिया है, उनका फर्ज हो जाता है कि वे बाकी रकम गरीबो पर खर्च करें। गाधीजी को बताया गया था कि अब सूबे मे कांग्रेसी मन्त्रिमण्डल है। वह मजदूरो के लिए हर जगह मकान बनवायेगा। गाधीजी ने कहा—अगर वह ऐसा करे, तो अच्छा ही है। लेकिन इसका यह मतलब नही कि रिक्शा पर चढनेवाला अपना फर्ज भूल जाय। डाक्टरो ने गाधीजी को बताया था कि रिक्शावाले बेचारे ४-५ साल तक रिक्शा खीचने के बाद जल्द ही दिल या फेफड़ों की बीमारी से मर जाते हैं। रहने को कोई अच्छी जगह उन्हें नहीं दी जाती, मजदूरी भी काफी नही मिलती, पहनने को काफ़ी कपडे नही, शक्ति से ज्यादा काम करना पडता है। लोग यह सब कुछ कैसे बरदाश्त करते हैं।

—नई दिल्ली, १०।६।१९४६। ह० ज०। ह० से०, १६।६।१९४६। प्यारेलाल जी के साप्ताहिक पत्र से।]

३९. मसूरी की कुछ यादें

गाधीजी मसूरी मे दस दिन की छुट्टी बिताने गये थे। इस छुट्टी से उनका मतलब सिर्फ पब्लिक जलसो और मुलाकातो मे बचना ही था। लेकिन इसमे वह पूरे-पूरे कामयाब नही हुए। कुछ विदेशी अखबारनवीसो ने उन्हें उनके एकान्त मे भी जा ढूढा और उनके साथ ऐसे मामलो पर बातचीत की, जिनमे उन्हे भी और गाधीजी को भी खास दिलचस्पी थी। हा, राजनीति की मनाही थी। गाधीजी उनसे सुबह टहलते वक्त मिला करते थे।

तरक्की के रास्ते मे रोड़ा

एक ने कहा : आपका खादी का ग्राम-उद्योग और देहात का आर्थिक प्रोग्राम खेती-बारी करनेवाले मुल्को को बहुत पसन्द आयेगा। मसलन्, बाल्कन के मुल्क। लेकिन हममे से बहुतो को, और आपके मुल्क के बहुतेरे लोगो को भी ऐसा लगता है कि यह तरक्की के रास्ते मे एक रोडा है। बहुत से लोगो का खयाल है कि बहुत बडे पैमानो पर योजनाओ के नक्शे बनने और कारखाने खुलने जरूरी हैं।

गाधीजी ने जवाब मे पूछा : मेरी समझ मे नही आता कि मेरा कार्यक्रम (प्रोग्राम) कैसे हिन्दुस्तान की तरक्की मे रुकावट डाल सकता है? हिन्दुस्तान तो खासकर देहाती मुल्क है, जिसकी ज्यादातर आबादी उसके सात लाख गावो में बसी हुई है।

मुलाक़ाती ने बहस बदलते हुए यह दलील पेश की कि यह शहरों के साथ बेइन्साफी होगी। भला, कलकत्ता और बम्बई–जैसे बड़े शहरों का क्या होगा?

गांधीजी ने जवाब दिया हकीकत इससे उलटी है। मेरी निगाह में शहरों का बढ़ना एक बुरी चीज़ है। यह मनुष्य-जाति की और दुनिया की एक बदकिस्मती है, इंग्लैण्ड की बदकिस्मती है, और हिन्दुस्तान की बदक़िस्मती तो है ही, क्योंकि अंग्रेजों ने हिन्दुस्तान को उसके शहरों की मार्फत ही चूसा है। शहरों ने गांवों को चूसा है। देहात का खून वह सिमेण्ट है, जिससे शहरों की बड़ी-बड़ी इमारतें बनी हैं। मैं चाहता हूं कि जिस खून ने आज शहरों की नाड़ियों को फुला रक्खा है, वह फिर से देहात की नाड़ियों में बहने लगे।

लेकिन उन भाई को तसल्ली न हुई। उन्होंने दलील की: माना कि एक बार गलती हो चुकी। पर मेरे ख़याल में अब आपका यह मतलब तो नहीं है कि जहां से चले थे, ठीक वहीं वापस लौट जाया जाय, चाहे इसमें आज तक का बना-बनाया सब काम चौपट ही क्यों न हो जाय।

गांधीजी ने जवाब दिया : क्यों नहीं? एक बार ग़लती का पता लगने पर हमारे पास एक ही रास्ता रहता है कि अपनी ग़लती को मान लें, अपने क़दम वापस लौटा लें, और फिर से काम शुरू करें।

लेकिन वह भाई अपनी बात पर डटे रहे। बोले : सो कुछ भी हो। मगर आज के ज़माने में ख़याल यह किया जाता है कि इस मामले में पीछे क़दम हटाना तरक्की का रास्ता नहीं।

गांधीजी ने जवाब में पूछा : अगर कोई जहाज़ समन्दर में अपना रास्ता खो बैठता है, तो आप क्या करते हैं? वह ग़लत रास्ते पर बढ़ता तो नहीं जाता, बल्कि जिस रास्ते से आया था, उसी रास्ते फौरन लौट पड़ता है, और फिर सही रास्ते चलना शुरू करता है। कोलम्बस ने ऐसा कितनी ही दफ़ा किया होगा। नही तो वह हमेशा के लिए अपना रास्ता खो बैठता।

वह भाई पूछने लगे : क्या इसका मतलब यह है कि आप शहरों को उजाड़कर वहां की तमाम बस्ती को देहात में वापस भेज देंगे?

नही, ऐसा तो मैं नही करूंगा। मैं तो सिर्फ यही चाहता हूं कि वे अपनी ज़िन्दगी को इस तरह बदलें, जिससे देहातियों को चूसते न रहें, और अब भी पुरानी बेइन्साफी का जितना बदला उन्हें दे सकते है, दे दें और उनके बरबाद हुए आर्थिक जीवन को फिर से आबाद करने में मदद दें।

इसके बाद मुलाक़ाती ने बातचीत का मजमून बदलते हुए पूछा :

अगर आपको एक दिन के लिए हिन्दुस्तान का डिक्टेटर बना दिया जाय, तो आप क्या करेंगे?

गाधीजी ने जवाव दिया: पहले तो मैं डिक्टेटर वनूगा ही नही, और अगर एक दिन के लिए वना भी, तो उसे वाइसराय के अस्तवल साफ करने मे लगाऊंगा, क्योकि हरिजनो के इन तग और अन्धेरे झोपड़ो को दूसरा और क्या नाम दिया जा सकता है? यह वड़ी शर्म की वात है कि वाइसराय के साये मे ही हरिजनो के इन झोपडो मे इतनी गरीवी और गन्दगी मौजूद है। वाइसराय को इतने वडे घर की जरूरत ही क्या है? अगर मेरा वस चले, तो मैं उसको अस्पताल वना दू। और उन्होंने प्रेसीडेण्ट क्रूगर की मिसाल दी, जिनके घर से तो विडला जी का वगला भी, जिसमे गाधी ठहरे हुए थे, ज्यादा अच्छा था।

वात को जारी रखते हुए वह भाई कहने लगे· अच्छा जनाव, फर्ज कीजिए कि आपको दूसरे दिन भी डिक्टेटर रक्खा जाय, तो आप क्या करेंगे?

गाधीजी ने हँसते हुए जवाव दिया: दूसरा दिन भी पहले दिन की तरह ही खर्च होगा। इसके वाद वहुत सी दूसरी चीजो पर वातचीत चली, हिन्दुस्तान की राष्ट्र-भाषा, अग्रेजी की जगह, आजाद हिन्दुस्तान के सामने आनेवाली शासन-प्रवन्ध की कठिनाइया, और हिन्दुस्तान व इंग्लैण्ड के भावी व्यापारिक सम्वन्ध तथा हिन्दुस्तान की गरीवी की वात करते हुए वन्दरो की चर्चा भी आ गई।

मुलाकाती एकाएक पूछने लगे: क्या हिन्दुस्तानियो की ग़रीवी वन्दरो की वजह से नही है?

गाधीजी खिलखिलाकर हँस पड़े और कहने लगे. हा। इसके वाद भी वह कुछ देर हँसते रहे। वेचारे मुलाकाती घवरा-से गये और कहने लगे: श्रीमती नायडू ने मुझे आपके विनोदी स्वभाव से आगाह कर दिया था।

मैं अभी उसी की एक वानगी आपको चखानेवाला था, लेकिन मैंने अपने को रोक लिया। थोडी देर और हँसने के वाद कहने लगे, अच्छा, आपको असल कहानी ही सुना दू। हमारे मुल्क मे अंग्रेजो को वन्दर कहते हैं। रावण की लडाई मे वन्दरो ने रामचन्द्र जी की मदद की थी। उसके वदले मे उन्हें आशीर्वाद मिला था कि उन्हे चक्रवर्ती राज मिलेगा।' सव हंस पडे और मुलाकाती भी इस हसी मे शामिल हो गये।

इसके वाद अहिंसा पर वात चली।

मुलाकाती पूछने लगे: मसलन, रूस के साथ हिन्दुस्तान का क्या सम्वन्ध होगा? अगर वह हिन्दुस्तान पर हमला करे, तो आप क्या करेंगे?

अगर मैं डिक्टेटर रहा, तो रूस के लिए यहा कोई काम ही न होगा। और अगर रूस आ ही गया, तो देखेगा कि यहा रहने मे उसे कोई फायदा नही। लेकिन जाहिर है कि यह सपना इतना सच्चा है कि एक दिन मे हम इस तक नही पहुच सकते।

फिर वह भाई पूछने लगे : पुरानी पीढ़ी के तमाम लायक़ हिन्दुस्तानियों ने तो विलायत में ही ऊंची तालीम पाई, जैसे, आपने। क्या हिन्दुस्तान के आजाद हो जाने पर भी आप चाहेगे कि वह अपने नौजवानों को तालीम के लिए पहले की तरह इंग्लैण्ड भेजता रहे?

गांधीजी ने जवाव दिया : नहीं, अभी नहीं। मैं ४० साल के वाद उन्हें वाहर भेजने की सलाह दूंगा।

वह भाई कहने लगे : इसका मतलब यह है कि हिन्दुस्तान की दो पीढ़ियां पच्छिम से कोई फ़ायदा नही उठा सकेंगी।

इस पर गांधीजी ने फिर वही अपने १२५ साल तक जिन्दा रहने की वात छेड़ी।

गांधीजी ने पूछा : दो पीढ़ियां क्यों? एक आदमी की जिन्दगी में ४० साल तो ठीक, ६० साल भी बहुत ज्यादा नही होते। अगर हम ठीक किस्म का जीवन बितायें, तो हम ६० बरस में बूढ़े नहीं हो जायेंगे। बदकिस्मती से इस मुल्क में हम इस उम्र में बूढ़े हो जाते हैं। मैं फिर कहूंगा कि उन्हें (विद्यार्थियों को) तभी विलायत जाना चाहिए, जब वे पक्की उम्र को पहुंच जायं। क्योंकि जव वे अपनी सभ्यता की अच्छाई को समझ लेंगे, तभी वे अमेरिका और इंग्लैण्ड की अच्छाई को ठीक तरह से समझ कर अपना सकेंगे। जरा खयाल कीजिए कि एक १७ साल का लड़का विलायत जाता है, जैसे मैं गया था, तो क्या होगा? यह तो वहां पहुंचकर बिल्कुल घबरा जायगा।

एक और दोस्त ने गांधीजी से एक शाम को कहा : गांधीजी, आप हमें आज़ादी की ड्योढ़ी तक ले आये हैं, और इसके लिए हम आपको जितना धन्यवाद दें, कम है। मुझे पक्का विश्वास है, कि आप इसका सारा जस अहिंसा को ही देंगे। क्योंकि वह आपकी सबसे प्यारी चीज़ है। लेकिन हमें ऐसा लगता है कि हमको अहिंसा के बजाय सचाई से ज्यादा ताक़त मिली है।

गांधीजी ने जवाद दिया : आपका यह ख़याल है कि मैंने अहिंसा की तरफ़दारी करके सचाई को दूसरी जगह दी है। आपका यह समझना भी उतना ही ग़लत है कि हमें सचाई ने अहिंसा से ज्यादा शक्ति दी है। इसके बरखिलाफ मुझे तो पूरा विश्वास है कि जो कुछ तरक्की देश ने की वे, वह इसी वजह से की है कि उसने अहिंसा को अपनी लड़ाई का हथियार वना लिया है।

उन दोस्त ने जवाव दिया : मेरा मतलब यह है कि मुल्क ने आपकी अहिंसा को नही समझा, लेकिन सचाई को समझ लिया है और उसने मुल्क की ताक़त वढ़ाई है।

गांधीजी ने जवाव दिया : वात तो विल्कुल इससे उलटी है। मुल्क में इतना

असत्य भरा है कि कई दफा मेरा तो दम घुटने लगता है। मेरा विश्वास है कि अहिंसा का पालन ही हमे यहा तक ले आया है, चाहे उसने कितने ही दोष क्यो न रहे हो।

और फिर, जैसा कि आपका खयाल है, मैंने सचाई को दूसरा स्थान नही दिया। गांधीजी ने बताया कि जिस तरह जिनेवा के एक जलसे मे उन्होंने लोगों को यह कहकर चक्कर मे डाल दिया था कि पहले तो वह यह कहा करते थे कि परमेश्वर सत्य है, मगर जब वह इस नतीजे पर पहुचे हैं कि सत्य ही परमेश्वर है।

लेकिन दोस्त हार मानने को तैयार नही थे। इसलिए दलील करते गये: फिर भी आपका ज़ोर हमेशा अहिंसा पर रहा है। आपने अहिंसा को फैलाना अपना ध्येय बना लिया है।

गाधीजी ने जवाब दिया: आप यहा भी गलती पर हैं। अहिंसा साध्य नही है। साध्य सत्य है। लेकिन हम सचाई का दर्शन सिर्फ अहिंसा का पालन करते हुए ही कर सकते हैं। मगर हिंसा का यह ज़रूरी नतीजा नही। अगर हम एकदिल होकर अहिंसा के पीछे चलें, तो वह लाज़िमी तौर पर हमे सत्य के पास ले जायगी। इसीलिए मैं अहिंसा की हिमायत करता हू। सचाई मेरे स्वभाव मे थी। मगर अहिंसा मुझे बडे कष्ट और मेहनत से मिली है। लेकिन चूकि अहिंसा साधन या ज़रिया है, इसलिए रोज़मर्रा की ज़िन्दगी मे इसी से हमारा वास्ता पडता है। इसलिए हमे जनता को अहिसा की तालीम देनी है। सत्य की तालीम इससे अपने-आप मिल जाती है, क्योंकि वह उसका कुदरती नतीजा है।

—नई दिल्ली, १७।६।१९४६। ह० ज०। ह० से०, २३।६।१९४६। प्यारेलालजी-लिखित विवरण से।]

४०. हरद्वार के निराश्रितों के बीच : २१ जून १९४७

सरहदी सूबे के कई और पजाब के कुछ निराश्रित गाधीजी से भगी-बस्ती में मिले और उन्हे अपने दु:ख-दर्द की कहानी सुनाई। उन्होंने गांधीजी से अनुरोध किया कि वे हरद्वार आकर निराश्रितो की छावनियो को देखें। इसलिए २१ जून को गाधीजी पण्डित जवाहरलाल नेहरू के साथ मोटर मे हरद्वार गये। वह मुझे डाक्टरी मुआइने के लिए अपने साथ ले गये।

हरद्वार के निराश्रित पाच या छ छावनियो में बंटे हुए हैं। गाधीजी ने जिस दिन उस जगह का मुआइना किया, उस दिन निराश्रितो की सख्या ३२००० थी। मैंने सब छावनियो का मुआइना किया। मारवाडी राहत सोसायटी और बिरला बन्धुओ द्वारा चलाई जानेवाली छावनियो को, जहा बहुत थोडे लोगो के रहने और खाने-पीने की सुविधाएं दी जाती हैं, छोडकर दूसरी सब छावनियो की हालत

सन्तोष के लायक़ नहीं थी। गन्दगी और कूड़े-करकट के बीच मर्द, औरत और बच्चों को एक साथ ठूंस दिया गया है। सब जगह मक्खियां ही मक्खियां दिखाई दे रही थीं। सफाई और डाक्टरी मदद नाममात्र की थी। मुझे बताया गया कि ३२००० निराश्रितों के बीच ४०० से ५०० तक औरतें गर्भवती हैं। लेकिन वहां तक मेरी नज़र गई, वहां उनकी देखभाल के लिए कोई बन्दोबस्त नहीं था।

हैजे से बचने के लिए छावनियों में डी० टी० नाम की कीड़े मारनेवाली दवाई बराबर छिड़की जानी चाहिए और मेहतरों द्वारा सफाई का ज्यादा अच्छा बन्दोबस्त किया जाना चाहिए। निराश्रितों को अपने में से ही सफाई करनेवाली टुकड़ियां बना लेनी चाहिए। निराश्रित खुद ही इस तरह क्यों न संगठित हो जायं कि छावनियों का सारा ज़रूरी काम वे कर सकें?

—अंग्रेजी। ह० से० २९।६।१९४७। २२।६।१९४७ को लिखे सुशीला नय्यर के विवरण से।]

४१. अलीगढ़ उर्दू मैगजीन

सुलतान महमूद गजनवी की बाबत एक लेख में हम अलीगढ़ से निकलनेवाले एक उर्दू "रिसाले" के एक शेर[1] की बात कर चुके हैं। गांधीजी की आज्ञा से हमने अलीगढ़ युनिवर्सिटी के वाइस-चान्सलर नवाब मुहम्मद इस्माइल खां का ध्यान उस शेर की तरफ दिलाया। जवाब में नवाब साहब का यह खत आया है।

"मुझे अफसोस है कि ऐसा शेर 'रिसाले' में निकल गया, जिसकी वजह से महात्माजी और आप जैसे देशभक्तों को रंज पहुंचा। अल्लाह ने चाहा, तो आगे अहतियात रखी जावेगी। मेरी तरफ से महात्माजी को मेरा दुःख बता दीजिए, और उनको यकीन दिला दीजिए कि हम लोगों को ऐसे ख्यालों से हर्गिज हमदर्दी नहीं है, और न इनको हम किसी तरह से भी ठीक समझते हैं। मालूम होता है कि कोई भूलचूक हो गई है।"

नवाब साहब का ख़त सुनकर गांधीजी को खुशी हुई। भूलचूक खासकर आज की हवा में सबसे हो सकती है। हमें यक़ीन है कि अलीगढ़ उर्दू मैगज़ीन ज़रा अहतियात से चलकर देश की अच्छी सेवा कर सकेगा।

—हिन्दी। ह० से० ११।१।१९४८। श्री सुन्दरलाल जी द्वारा प्रकाशित कराई गई टिप्पणी से।]

---

१. "फरजन्दाने कौम से" शीर्षक कविता का वह शेर इस प्रकार था—
गूंजती है फिर फिजाओं में सदाए सोभनाथ,
फिर किसी गजनी से कोई गजनवी पैदा करो।

: दस :

अञ्जलि

१. हिमालय मे बापू

पर्वतीय प्रदेश कुमायूं मे वापू के पर्यटन के पावन संस्मरण

[श्री शान्तिलाल त्रिवेदी, सर्वोदय कुटीर, अल्मोड़ा]

श्रीकृष्ण भगवान ने गीता मे गाया है—'स्थावराणाम् हिमालय.', भारतीय सस्कृति का पवित्र प्रतीक हिमालय विश्व मे सर्वश्रेष्ठ है। वैसे ही विश्व-मानवता के प्रतीक युगावतार, महामानव, महात्मा गाधी वापू है। महात्मा होते हुए भी वह छोटी-छोटी बातो व घटनाओ को, उसी दिलचस्पी और लगन के साथ, महत्व देते थे, जितना स्वराज्य और स्वतन्त्रता-सग्राम को।

वापू का साध्य पवित्र तो था ही किन्तु सावन की पवित्रता के लिए वह सतत् जागृत साधक रहे। कभी प्रमाद न हो, ऐसी सावधानी रखते थे। सूक्ष्म आत्म-निरीक्षण करते रहने पर ही विश्ववन्द्य, राष्ट्रपिता, वापू वने, जिनकी जन्मशताब्दी यूरोप, अमेरिका, अफ्रीका, एशिया आदि महाद्वीपो मे मनाई जा रही है। अपने प्रिय भजन 'वैष्णव जन तो तेने कहिए' मे वर्णित लक्षणो को आत्मसात करने की सतत् साधना उनकी रही।

वापू अखिल भारतीय दरिद्रनारायण (खादी कार्य) के दौरे के सिलसिले मे जून सन् २९ मे पर्वतीय प्रदेश कुमायू मे नैनीताल-अल्मोडा आये। वापू के महत्व के सस्मरण देने की हिम्मत कर रहा हू। क्योकि ये भी वापू की महानता पर प्रकाश डालते है। उस समय नैनीताल, ताकुला, भवानी, रानीखेत, ताड़ीखेत, अल्मोडा, कौसानी, वागेश्वर आदि स्थानो मे वापू के साथ रहने का सौभाग्य मुझे प्राप्त हुआ था।

वापू के आदेश मे सत्याग्रहाश्रम से अगस्त १९२८ मे अल्मोडा मे राष्ट्रीय तथा रचनात्मक कार्य के लिए आया था। हिमालय मे आने के वाद पूज्य वापू तथा माता-कस्तूरवा के प्रथम वार पहाड मे दर्शन हुए। जैसा देश वैसा भेष के अनुसार पर्वतीय पैदल पर्यटन मे धोती के वदले पायजामा पहनता रहा। अत पूज्य कस्तूरवा सहसा पहचान न सकी। यह कौन? पर वापू की स्मरण-शक्ति अद्भुत थी। उन्होने याद दिलाया कि "लम्बे पत्र लिखनेवाला. .यही है।"

बापू को उस समय लम्बे पत्र लिखता रहा क्योंकि दिल की भावना प्रकट करने का वही सहारा था, पर ब्रिटिश सरकार को परेशानी में डालनेवाले महात्मा मुझ-जैसे अल्पात्मा से क्यों परेशान होते? वह तो पिता के पवित्र और मधुर प्रेम से जवाब देते थे। नौजवान के जोशीले कटुवचन को भी उदारता से सहन कर लेते थे। तुम्हारे प्रति हिंसा हुई इतना लिखकर मुझ-जैसे साधारण मानव को विजय तथा शान्ति दिलाकर खुद हार मानकर भी सन्त-महात्मा बने। यह है महामानव की दिव्यता।

बापू ने सन् २९ में में एक पर्वतीय भाई को, जिसने किण्डर गार्टन का बक्स स्वयं बनाया था, कुछ संशोधन बतलाये थे। दो वर्ष बाद मई सन् ३१ में शिमले में वायसराय के कहे अनुसार उत्तर प्रदेश के जमींदार तथा किसानों की समस्या हल करने के लिए तत्कालीन गवर्नर श्रीमालकम हेली से मिलने नैनीताल आये थे। तब बापू उसी स्थान ताकुला गांधी मन्दिर में ठहरे थे। कार्यव्यस्त तो थे ही, बीच में बाथरूम जाने लगे तो भीड़ में से आगे बढ़कर उसी भाई ने प्रणाम किया। बापू ने फौरन पूछा—"वह बना लिया।" हम सब उस वक्त तो कुछ नही समझ सके पर बाद में ज्ञात हुआ कि उनका प्रश्न था कि जो संशोधन बताये गये थे वे ठीक कर लिये या नहीं? जवाब—"हां" में मिला। यह बापू की अद्‌भुत स्मरण-शक्ति का श्रेष्ठ उदाहरण है।

बापू ने सन् २९ में जो संशोधन बतलाये, उस विषय पर सन् ३१ में इस तरह पूछना अद्‌भुत बात थी क्योंकि दो वर्षों में हजारों मील की यात्रा करके हजारों व्यक्तियों से मिले होंगे। सम् ३० का स्वतन्त्रता का ऐतिहासिक आन्दोलन चला; सैकड़ों स्थानों पर लाखों मनुष्यों की सभा में उपस्थित हुए। फिर भी यह बात उनके स्मरण-पट पर रही, यह एक चमत्कार ही है।

बापू के साथ यात्रा में खूब आनन्द आता है। अनुभव प्राप्त होता है; कितने ही महान् व्यक्तियों के दर्शन तथा सेवा का सौभाग्य मिलता है। पर वह सेनापति स्वयं ऐसा सख्त काम करनेवाला होने के कारण साथियों से भी सख्त काम लेता था।। स्वयं न सोयें, न अन्य को सोने दें। स्वयं अपने पर जुल्म ढायें पर दूसरों को भी न बख्शें। यह सब पवित्र आदर्श के लिए ही होने से अन्त में प्रेम-सहित कल्याण-मय ही बने। कभी तो रात में दो तीन घण्टा मुश्किल से सोते। यानी बारह बजे बाद, फिर तीन बजे चट्टी चरचराते हुए बाथरूम में जाने लगते तो आंख न खुलते हुए भी उठ जाना पड़ता था।

बापू को नैनीताल (ताकुला) में एक बार आवश्यक पत्र लिखने थे। आधी रात के लगभग सोये थे। और जल्दी लगभग तीन बजे उठ गये। मीरा बहिन

को प्रार्थना के समय चार वजे सवको उठाने का काम सौंपा गया था। उन्होंने वापू की चट्टी की आवाज सुनकर दातून दे दे कर सवको उठा दिया। वापू आसन पर वैठकर लिखने मे व्यस्त थे। उतने मे आख मलते हुए श्री महादेव भाई, श्री देवदास भाई तथा हम सव प्रार्थना के लिए आने लगे। वापू ने आश्चर्य प्रकट किया, तव भेद खुला कि अभी चार नही वजे।

वापू को राधेश्याम तर्ज की रामायण सुनाने रात आठ वजे के वाद एक मण्डली ताकुला मे आई। हारमोनियम, तवला वगैरह साथ-साथ था। वापू चर्खा कातते हुए मन से कथा सून रहे थे। लगभग डेढ घण्टे साज-वाज के साथ तवले के ताल पर रामायण-कथा होती रही। श्री जमनालाल वजाज, श्री देवदास भाई, श्री महादेव भाई आदि हम सव वैठे थे। समाप्ति के वाद देवदास भाई ने श्री जमनालाल जी से पूछा—"कहिये सेठ जी! रामायण कैसी रही?" उत्तर मिला—"वह, अच्छी रही पर जव तवला जोर से ठोका जाता था तव वीच-वीच मे नीद खुल जाती थी।" वापू-सहित हम सव हंस पडे पर जमनालाल जी का क्या दोष? वापू के साथ सव सुविधा, आनन्द होते हुए नीद लेने का पूरा समय नहीं मिल पाता था।

वापू को भीड़ से वचाने के लिए श्री जमनालाल जी तथा आचार्य कृपालानी जी ने एक मौलिक तदवीर सोची। प्रेम विद्यालय, ताडीखेत मे वापू के निवास के लिए विद्यालय के छात्रों तथा अध्यापकों ने गाधी-कुटी का निर्माण किया था। निश्चय हुआ कि "मंच तक सीधे अकेले वापू को जाने देना चाहिए। कोई भी साथ न जाय।" हुआ भी ऐसा ही। अकेले वापू, लंगोटीधारी एक देहाती-जैसा व्यक्ति मंच की तरफ जाने लगा। लगभग तीन चौथाई रास्ता तय करने पर एक परिचित मुस्लिम भाई जोर जोर से चिल्ला उठे—"महात्मा गांधी की जय।" तव जनता का ध्यान आकर्पित हुआ और भीड खडी होकर दर्शन करने के लिए आगे वढने लगी। उस भाई पर श्री जवाहरलाल जी तथा दादा कृपालानी जी का गुस्सा उतर आया।

वापू दिनाक १८ जून २९ को अल्मोडा आये। तव म्यूनिसिपल वोर्ड अलमोडा की तरफ से चौघान पाटा मे स्वागतार्थ मच वनाया गया था। जहा मानपत्र देने का कार्यक्रम था वहा वापू को ले जाने के लिए स्वयसेवको ने घेरा वनाया था। वापू जा रहे थे तव एक वृद्ध भाई ने तावे का एक पैसा वापू के हाथ मे दे ही दिया—दरिद्रनारायण के चन्दे मे। परन्तु भीड का एक धक्का लगते ही घेरा टूट गया। वापू के हाथ का पैसा नीचे गिर गया। वापू वही खडे हो गये। कहने लगे—"पैसा लाओ।" चूकि हमारे ही पैरो से वह धूल मे मिल गया था, मैंने कहा—

"कृपया आप मंच पर जावें। पैसा खोज कर ले आऊंगा।" बापू ने कहा—"नही, पैसा मिलने पर ही जाऊंगा।" बापू वहीं खड़े रहे। धक्के लगने लगे। इधर से उधर धक्के खाते डोलने लगे। अन्त में पैसा ढूंढ़ ही निकाला और दिखाया कि यह रहा तांबे का पैसा।

बापू आनन्द से आगे बढ़ने लगे। भारतवर्ष के महात्मा, विश्ववन्द्य, महान-विभूति, एक भाई के दिये हुए तांबे के पैसे की कितनी महत्ता समझते थे। दरिद्र-नारायण के लिए, उनका आशीर्वाद लेकर भारत-माता की सेवा करने का उनका सदा ही पवित्र प्रयत्न रहा।

बापू रानीधारा में श्री हरिश्चन्द्र जोशी वकील के कैसल बंगले में ठहराये गये थे। एक दिन प्रातःकाल घूमने निकल पड़े और मेरे रहने की कुटिया में (नारायण, तेवाड़ी देवालय) पहुंचे। बाहर बरामदे में कुछ देर तख्त पर बैठे। कमरे पर ताला लगा था क्योंकि मै उनकी सेवा में कई दिनों से साथ-साथ था। सौराष्ट्र से एक वर्ष हुए अकेला ही आया था। पड़ोस में एक माता अपने नौजवान पुत्र को लेकर रहती थी। वह पुत्र कई दिनों से बीमार था। वहां पर बापू गये। बीमार का हाल पूछा तथा अन्य कई आवश्यक सूचनाएं दीं—यथा खिड़की खुली रखना, कपड़े साफ रखना, कूड़ा दूर गड्ढे में दबाना वगैरह। माता-पुत्र ने समझा कि मेरे घर पर कोई मेहमान आये होंगे और कमरे पर ताला देखकर वापस लौट गये। उन्हें क्या मालूम कि दुखियों का साथी, परपीड़ा देखकर दुखी होनेवाला, भारत का सच्चा सुपुत्र उनकी कुटिया में पहुँच कर आशीर्वाद दे गया।

बापू ने घूमकर लौटते ही कहा—"मैं तो तेरे घर हो आया। वहां से दृश्य बड़ा सुन्दर है। तुम्हारे पड़ोस में उस बीमार का इलाज करनेवाले डाक्टर कौन है? उन्हें मेरे पास बुला लाना।"

"महात्मा गांधी आपको बुला रहे हैं"—मैंने डाक्टर साहब से कहा। सुनकर डाक्टर साहब को आश्चर्य हुआ। साथ-साथ आनन्द भी हुआ और उसी समय खादी खरीदकर डबल सिलाई देकर कोट-पैण्ट बनवा लिये और शाम को पहुंचे बापू के पास। मैंने परिचय दिया—"यही हैं वह डाक्टर साहब—।" बापू ने कहा—"अच्छा। मैं मेडिकल इन्चार्ज होता तो आपका सर्टिफिकेट छीन लेता। उस बीमार नौजवान का इलाज तो कर रहे हैं पर प्राथमिक जरूरी सूचना उनके स्वास्थ्य के विषय में देनी चाहिए वह तो दी ही नही। जैसे शुद्ध वायु के आने-जाने के लिए खिड़की खुली रखना, सफाई वगैरह। वह सब तो आवश्यक कर्त्तव्य हैं। आशा है आप बीमार की भलाई में अपनी भलाई समझेंगे।"

बापू के दर्शन की अभिलाषा अंग्रेज साधु श्री श्रीकृष्णप्रेम (पहिले के प्रो०

निक्सन) तथा उनकी गुरु मा यशोदा माई ने प्रकट की तो मैंने उनसे वापू के लिए पत्र मागा हालाकि आवश्यकता तो नही थी। जव लिखने लगे तव कहा हिन्दी मे कृपया लिखें। श्री श्रीकृष्ण प्रेम ने निम्न प्रकार लिखा—"गुरु मा तथा मैं आपके दर्शन के अभिलाषी हैं। कृपया लिखें कौन सा समय उपयुक्त होगा?" एक युवक अग्रेज साधु का शुद्ध हिन्दी भाषा मे लिखा पत्र पढकर वापू को वडा आनन्द हुआ। दूसरे दिन प्रात ६ वजे का समय दिया। ता० २१ जून २६ शुक्रवार को ठीक समय पर श्रीकृष्ण प्रेम गुरु यशोदा मा के साथ रानीवारा कैम्प मे वापू के पास पहुचे।

वापू ने प्रेम से स्वागत किया। पूछा—"क्या करते थे?" उत्तर मिला—"लडाई मे था।" "तव तो हिंसा की होगी?" श्री कृष्णप्रेम ने कहा—"मैं तो हवाई जहाज (एरोप्लेन) मे था।" "ओह! तव तो वहुत हिंसा हुई होगी।" आदि विनोद करते हुए वापू ने उनकी जीवन-कथा जान ली।

श्रीश्रीकृष्ण प्रेम कैम्ब्रिज यूनिवर्सिटी के ग्रेजुएट थे। प्रथम विश्वयुद्ध मे हवाई जहाज मे योद्धा का काम किया पर सस्कार पवित्र थे। धार्मिक आध्यात्मिक मनोवृत्ति शुरू से रही। कहा जाता है कि वशीधारी मुकुटधारी श्रीकृष्ण की मूर्ति का साक्षात् हुआ। लन्दन मे लखनऊ यूनिवर्सिटी के वाइस-चान्सलर श्री ज्ञानेन्द्रनाथ चक्रवर्ती तथा पत्नी श्रीमती मानिका देवी का सत्सग इस जिज्ञासु अग्रेज को हुआ। उनके साथ सन् २१ मे भारत आ गये। लखनऊ यूनिवर्सिटी मे अग्रेजी के प्रोफेसर नियुक्त हुए। शिक्षक वने सही पर स्वय तो विद्यार्थी रहे। भारतीय सस्कृति के धार्मिक, आध्यात्मिक विद्यार्थी की तरह कर्मठ अभ्यासी हुए। वेद-वेदान्त, उपनिषद, तन्त्रशास्त्र, वौद्धशास्त्र आदि का गहरा अभ्यास किया। अग्रेजी तो मातृभाषा थी ही। सस्कृत, हिन्दी, वगला, भाषा अच्छी तरह सीख ली। सस्कृत के अच्छे विद्वान थे। हिन्दी-वगला भजन, मृदग के साथ गाते थे। जव वाइस-चान्सलर महोदय ने सेवा-निवृत्त होकर काशी-निवास किया तो उनके साथ श्री निक्सन भी काशी आ गये। यहा पण्डित मदनमोहन मालवीय जी ने उन्हे हिन्दू-यूनिवर्सिटी मे आग्रहपूर्वक नियुक्त किया। श्रीमती मानिका देवी सन् २७ मे अलमोडा आई और वैष्णवधर्मी श्री गौराग महाप्रभु चैतन्य के सम्प्रदाय मे दीक्षित होकर वैरागिनी यशोदा मा वन गई। तव उन्ही से दीक्षा लेकर श्री निक्सन भी श्री कृष्ण-प्रेमी वैरागी साधु वन गये। सात्विक साधना, जप, तप, व्रत, तितिक्षा करने लगे। सभी धर्मो का गहरा अध्ययन होते हुए भी शरणागत भाव-भक्ति की विनम्रता ही स्वीकार की। अल्मोडे से १५ मील पर वागेश्वर के पास सन् ३१ मे राधा-कृष्ण मन्दिर स्थापित करके वहा 'उत्तर वृन्दावन' आश्रम स्थापित किया।

श्री श्रीकृष्णप्रेम ने कठिन साधना करते हुए भी कई मननीय पुस्तकें लिखी हैं। गुरु मां की बीमारी में निष्ठापूर्वक सतत सेवा करते हुए आध्यात्मिक लेखन चल रहा था। शिष्या अर्पिता देवी ने उन्ही से दीक्षा ली थी। वह यशोदा मां की पुत्री थी। श्री अरविन्द घोष इन्हें उच्च कोटि का योगी मानते थे। श्री दिलीपराय ने सन् ६८ में 'योगी श्रीकृष्ण-प्रेम' पुस्तक प्रकाशित की है।

श्री श्रीकृष्णप्रेम का तिरोभाव १४-११-१९६५ को हुआ और जागेश्वर के पास दण्डेश्वर महादेव के स्रोत के तट पर ही उनका अग्निसंस्कार उसी स्थान पर हुआ जहां यशोदा मां को अग्निदान दिया गया था। गुरु-शिष्य का पवित्र योग! उनका साधना-मन्त्र है—

सर्वधर्मान् परित्यज्य मामेकं शरणं व्रज।
अहं त्वां सर्व पापेभ्यो मोक्षयिष्यामि मा शुचः॥ शान्तिः

हां, तो मैं बापू के संस्मरण लिखते-लिखते कहां चला गया। बापू के विश्राम के लिए अलमोड़ा जिले में कौसानी नामक स्थान में कुछ दिन रहने का कार्यक्रम बनाया गया था। अलमोड़ा से कौसानी ३५ मील दूर स्थित है। जिला बोर्ड के डाक बंगले में प्रबन्ध किया गया था। उससे बड़ा वहां पर जो सरकारी स्टेट बंगला था, वह मांगने पर नही मिला क्योंकि एक विद्रोही क्रान्तिकारी के लिए ब्रिटिश सरकार उसे कैसे देती? श्री गोविन्दवल्लभ पन्त जी को इस बात का बड़ा दुःख हुआ। तब से वह कौसानी नही आये। भारत स्वतन्त्र हुआ; इसके बाद सन् ५२ के चुनाव के समय मुख्य मन्त्री की हैसियत से उसी स्टेट बंगले में शान से ठहरे। तब उस बात का उन्होंने स्मरण दिलाया था। जिला बोर्ड के स्वराज्य-वादी सदस्यों ने बापू को डाक बंगले में ठहराकर अपने को गौरवान्वित किया।

बापू कौसानी डाक बंगले में दिनांक २१ जून १९२९ से २ जुलाई १९२९ तक यानी बारह दिन ठहरे। यह डाक-बंगला विश्व में ऐतिहासिक स्मारक बन गया है। क्योंकि गीता की अनासक्ति योग टीका की भूमिका यहीं लिखी गई थी। इस पवित्र कार्य की पूर्णाहुति हिमालय के सामने हुई।

बापू दिनांक ३० जनवरी १९४८ को 'हे राम!' कहते हुए शहीद हो गये। भारतवर्ष में गांधी स्मारक का चन्दा एकत्र होने लगा। तब हिमालय पर्वतीय प्रदेश पीछे क्यों रहें? पत्रं पुष्पं की तरह प्रयत्न किया गया और जिले की जनता ने एक लाख दस हजार रुपये चन्दा किया। उस समय मुख्य मन्त्री गोविन्दवल्लभ पन्त जी ने अलमोड़ा सर्किट हाउस में श्री सरला देवी तथा मुझसे कहा—"पत्थर के पहाड़ से पानी बहा दिया।" इतनी रकम जिले से एकत्र होने पर उन्होंने आनन्द व्यक्त किया। उसी सुअवसर का लाभ उठाते हुए मैने तुरन्त कहा—"गीता की

अनासक्ति योग-भूमिका जिस कमरे मे बैठकर बापू ने लिखी है, उसे गाधी स्मारक को समर्पित करने की कृपा करें।" श्रीमान् पन्त जी दीर्घदृष्टि वाले थे। सुनकर आनन्दित हुए और कहा—"एक कमरा क्यो ? पूरा डाक बंगला ही गाधी स्मारक को समर्पित किया जायगा।" और उन्होंने वचन के अनुसार नया डाक बंगला बनाने हेतु १४ हजार रुपये सुरक्षित करा भी दिये थे, पर वर्षों बाद गाधी-स्मारक निधि ने उक्त बगले को हाथ मे लेकर दिनाक ६ अक्तूबर ६४ को मुख्य मन्त्री श्रीमती सुचेता कृपलानी जी द्वारा उसका 'अनासक्ति-आश्रम' नाम से उद्घाटन कराया। और सन् ६८ में पास का पी० डबल्यू० डी० का बगला भी गाधी-निधि को राज्य सरकार ने अर्पित कर दिया। इसके उपरान्त एक विशाल दो मंजिला भवन निधि ने तैयार कराया है।

बापू ने बीस वर्ष पहले कौसानी मे ही अनासक्ति योग गीता की प्रस्तावना लिखी। वह स्थान अब राष्ट्रीय तीर्थ बन गया है—एक तरह से सारे ससार का। सारे विश्व मे गाधी जन्म-शताब्दी मनाई जा रही है। तो यह स्थान भविष्य में —गांधी दर्शन—का अभ्यासस्थान, शोधस्थान बने और बापू के पवित्र आदर्श सत्य, अहिंसा की प्रेरणा विश्व की जनता को हिमालय की तरह सतत् प्राप्त होती रहे, यही परमात्मा से प्रार्थना है।

बापू ने कौसानी से हिमालय तथा पहाड़ो का सुहावना और सात्विक दृश्य देखकर 'यग इण्डिया' दिनाक ११ जुलाई २९ के अक मे लिखा है:

"हिमालय का स्वास्थ्य-वर्द्धक जलवायु, उसके मनोहर दृश्य, चारो तरफ फैली हुई सुहावनी हरियाली यहां आपकी किसी भी अभिलाषा को अपूर्ण नहीं रखती।

"मैं सोचता हूँ कि इन पर्वतों के दृश्यों तथा जलवायु से बढ़ कर होना दूर रहा, इनकी बराबरी भी संसार का कोई अन्य स्थान नहीं कर सकता।

"अलमोड़ा के इन पर्वतों मे तीन सप्ताह रह कर मुझे अब तो पहले से भी अधिक आश्चर्य होता है कि हमारे देशवासी स्वास्थ्य-लाभ के लिए क्यों यूरोप की यात्रा करते होंगे ?"

कौसानी से हिमालय का दृश्य अद्भुत और अपूर्व है। हिमालय की लम्बी गिरिमाला लगभग तीन सौ मील की है। बदरीनाथ, चौखम्भा, केदारनाथ, भारत का सर्वोच्च हिमगिरि शृंग, परशुराम, पूच चूली के अलावा नेपाल के अपी, नप्पा आदि के दिव्य दर्शन होते हैं।

बापू के साथ हम लोग अल्मोड़े से कौसानी पहुंचे। उसी शाम प्रार्थना के समय बापू ने प्रार्थना कराने का आदेश मुझे दिया। एक बार तो दिल दहल गया क्योंकि सत्याग्रहाश्रम साबरमती या स्वराज्य आश्रम बारडोली में श्री सुरेन्द्र जी को प्रातः प्रार्थना कराने का आदेश दिया था। तब एक श्लोक में कुछ गलती हो गई। बापू का पुण्य प्रकोप भड़क उठा—"इतने समय मेरे साथ आश्रम में रहने पर भी अभी ठीक से प्रार्थना नही करा सकते ?" इस बात से श्री सुरेन्द्र के दिल में इतनी गहरी चोट लगी कि पूरे वर्ष भर एकान्त सेवन हिमालय में करके सिर्फ श्लोक ही नहीं, श्लोक के भावार्थ की अनुभूति करके वापस आये और सच्चे आश्रमवासी की तरह रहते रहे तथा पवित्र भावनाशील, उच्च आध्यात्मिक ज्ञान के ज्ञाता तथा पवित्र साधक की गिनती में अग्रगण्य माने जाते हैं। सन्त विनोबा उन्हें पवित्र साधक मानते है।

बापू के आदेश से प्रार्थना शुरू करते समय मुझे वह बात याद आ गई।—कही प्रार्थना में भूल हुई तो पर ईश्वर ने लाज रक्खी। 'स्थितप्रज्ञस्य का भाषा' श्लोक के बाद 'निर्बल के बल राम' भजन गाया। मुझे याद है कि भजन में एक बार कुछ रुक-सा गया तब बापू ने उसे दोहरा दिया यानी स्मरण करा दिया। बाद में रामधुन के साथ प्रार्थना पूर्ण हुई। तब दिल का बोझ हल्का हुआ।

बापू से कौसानी में एक बार उत्साह से दौड़कर मैंने कहा—"बापू हिमालय खुल गया।" वह फौरन दौड़कर बरामदे में पहुंचे। हमने पूछा—"बापू आप दौड़े क्यों ?" बापू ने कहा—"एक बार दार्जिलिंग में इस तरह हिमालय खुल गया था पर कमरे से बाहर आते ही हिमालय को बादलने ढक दिया। मैंने सोचा कि कही यहां भी ऐसा न हो।" बात भी सही थी। जून माह में बर्फानी पहाड़ कभी किस्मत से ही दर्शन दे देते हैं। बादल फट जाने से हिमालय का आज का दृश्य भी अद्भुत और दिव्यदर्शनीय था।

० ० ०

बापू के साथ कौसानी में माता कस्तूरबा, मीरा बहन (मिस स्लेड), खुरशीद बहिन, श्री देवदास भाई, आचार्य कृपालानी जी, श्री प्यारेलाल जी, श्री प्रभुदास गांधी आदि थे। वहां से बागेश्वर जाने का कार्यक्रम था। गरूड़ तक बापू को कार में ले गये। वहां से बारह मील पैदल मार्ग से सरयू-गोमती तट पर बागेश्वर स्थित है। डांडी डोली में बैठना बापू को पसन्द नही था पर विवशता थी। उसी समय कच्चे गेहूं को भिगोकर पीस कर खाने का प्रयोग चल रहा था। बापू बहुत ही कमजोर हो गये थे। पैदल चलना कठिन था अतः डांडी का उपयोग करना पड़ा। श्री मोहन जोशी जी तथा अन्य दो गुजराती युवक साथियों के साथ डोली में बैठे

हुए वापू को कन्धे पर उठाने का आनन्द लिया। हसकर वापू पूछने लगे—"कितना वोझ है?"

"वापू! आप मे तो वोझ नही है पर डाडी मे गद्दे विछाने की वजह से वोझ वढ गया। अन्तिम समय शायद हम न पहुच पावें।"

"इसीलिए आज कन्धे पर उठा रहे है।" वापू हँसने लगे। रास्ते मे डाडी से उतर कर लाठी लिये हुए थोडा-थोडा पैदल भी चलते रहे। उस समय वह सौराष्ट्र के कार्यकर्ताओ की पुरानी वातो, पहाड की परिस्थिति तथा श्री श्रीकृष्ण प्रेम अग्रेज साधु के विषय मे विस्तार से पूछने लगे। इस तरह गोमती-गगा के किनारे वापू के साथ वार्तालाप करते हुए चलना भी जीवन का अविस्मरणीय प्रसग है। वह पैदल चलने मे थकावट महसूस होने पर ही डाडी मे वैठते थे। पर अधिकतर पैदल चलना ही पसन्द करते थे।

वापू वागेश्वर डाक वगले मे दिनाक २२ जून, २९ शनिवार को लगभग ग्यारह वजे पहुचे। वागेश्वर पर्वतीय प्रदेश मे धार्मिक तीर्थ-स्थान तो है ही। पर यही सन् १९२१ मे कुली-वेगार का कलक मिटाकर क्रान्तिकारी कार्यक्रम सफल हुआ। वापू के सत्याग्रह का विगुल आसेतु हिमालय फैल गया। वापू की प्रेरणा से कूर्माचल-केसरी श्री वदरीदत्त पाण्डेय जी, देशभक्त श्री मोहन जोशी जी, जनप्रिय श्री हरगोविन्द पन्त जी तथा महान नेता श्री गोविन्दवल्लभ जी आदि तपस्वी, त्यागी, राष्ट्रीय कार्यकर्त्ता समय-समय पर स्वतन्त्रता का आन्दोलन पर्वतीय प्रदेश मे, कुमायू मे तथा अन्यत्र चलाते रहे।

अलमोडा जिला सन् २१ के आन्दोलन मे, सन् १९३०-३२ तथा १९४२ के ऐतिहासिक स्वतन्त्रता-आन्दोलनो मे सदा अग्रणी रहा है। कुली वेगार के सफल आन्दोलन के कारण श्रीवदरीदत्त पाण्डे जी कूर्माचल-केसरी कहे जाते थे। उनका पहाड का सा भरा-पूरा शरीर, शेर की दहाड-जैसी वुलन्द आवाज, जनता के दिल को स्पर्श करनेवाले भाषण तथा विनोदपूर्ण चुटकिया आज भी जनता याद करती है। देशभक्त श्री मोहन जोशी का साधारण शरीर था पर दिल मे देश-सेवा की आग भरी हुई थी। उनका ओजस्वी भाषण सच्चे निष्ठावान हृदय से भभकता था। वह जनता के दिल मे भी देश-सेवा की आग लगा देता था।

वापू के साथ वागेश्वर मे ये दोनो—श्री वदरीदत्त जी तथा श्री मोहन जोशी जी—साथ थे। इनका तो निश्चित स्मरण है। श्री देवदास भाई गाधी भी थे ही। कस्तूरवा कौसानी ही रही। वापू का वागेश्वर पहुचना ईश्वरीय सकेत ही समझा जाय, जहा उनकी प्रेरणा से सत्याग्रह सफल हुआ और श्री जोशीजी ने महात्मा गाधीजी के हाथो स्वराज्य-मन्दिर का शिलान्यास कराया।

पर दुःख के साथ कहना पड़ता है कि चालीस वर्ष के वाद भी वह कार्य पूरा नहीं हो पाया।

गांधी जन्म-शताब्दी के वर्ष में स्वराज्य-मन्दिर छोटा सा भी वन जाता तो दोनों 'मोहन' (मोहनदास करमचन्द गांधी व स्व० मोहन जोशी) का स्मारक स्थायी हो जाता और वहां से जन-कल्याण कार्य होता रहता।

स्वराज्य-मन्दिर का शिलान्यास ता० २२ जून १९२९ शनिवार को महात्मा जी के कर-कमलों के द्वारा हुआ। देशभक्त जोशी जी ने वापू का स्वागत करते हुए भावभीना भाषण दिया। कूर्मांचल-केसरी श्री वदरीदत्त जी ने कहा—"इस डाक वंगले से नौकरशाही प्रजा के ऊपर अन्याय करती थी। आज अन्याय की जगह न्याय के देवता यहां पधारे हैं। इस पर आज स्वराज्य की मुहर लग गई है।" महात्माजी यह वचन सुनकर मुस्कराये।

वापू से मैंने वागेश्वर के डाक-वंगले से स्वराज्य-मन्दिर के स्थान पर पांच वजे सभा में आने के लिए कहा। वह उठे और वरामदे में आकर कहने लगे—"लाठी ले आओ।" कमरे में लेने गया पर मिली नही। फिर दुवारा भेजा। चारपाई के नीचे इधर-उधर कोने मे सव जगह लोग खड़े थे। जुलूस भी तैयार था। सव सोचने लगे कि कौन-सा महत्व का काम आ गया है कि इतनी देर से महात्माजी वहां खड़े रह गये। अव वापू के पास खाली जाने की हिम्मत नही हुई। एक छाता लिया और वापू से कहा—"जरा धूप है अतः इससे काम चल जायगा।"

सभा का कार्य पूरा हुआ। भोजन वगैरह कर चुके। सायंकाल को डाक वंगले के वरामदे में वड़ी गम्भीरतापूर्वक प्रार्थना हुई। पवित्र सर्यू-सरिता के सामने जनता-जनार्दन की उपस्थिति में वापू की वह प्रार्थना का दिव्य दृश्य हृदय-पट पर अभी ताजा है। स्थितप्रज्ञस्य श्लोक के वाद भजन, रामधुन से प्रार्थना की पूर्णाहुति हुई। एक भावुक भाई ने वापू की आरती उतारी। वापू उसकी भावपूर्ण भक्ति-भावना देखकर द्रवित-से हो गये।

वापू मुलाकातियों से निपटने तथा अन्य कार्य करने के वाद सोने गये, तव रात को मैं मालिश कर रहा था। मुझे मालिश आती भी नही थी। वापू ने समझाया कि ऊपर से नीचे नही पर नीचे से ऊपर की ओर मालिश करने से खून का दौरा शीघ्र होता है। तव मालिश का लाभ होता है। इस तरह वह वताते गये। रात लगभग वारह वजे का समय था। मुझे नींद-सी आने लगी थी, उस समय वापू कहने लगे—"देखो वह लाठी नहीं मिली! कहां खो दी? डोली से उतरते समय तो मेरे हाथ में थी। फिर कहां रक्खी? तुमने ख्याल नही किया'?" मैं भी, हां—ना कुछ जवाव देना था, इसलिए देता रहा पर मन में सोचने लगा कि इतने

वडे महात्मा गाधीजी, जिनका नाम सारे विश्व मे विख्यात है, एक छोटी सी वास की लाठी के लिए इस समय आधीरात को इतनी गम्भीरता से विचार करते हैं, जैसे कोई वडी भारी कीमती चीज खो गई हो या राष्ट्र को वडा नुकसान हो गया हो।

"वापू के पास एक वास की लाठी थी, जिसे लेकर पहाडो मे चलते थे, वह खो गई है। कृपया दूसरी लाठी का प्रवन्ध करें।" यह निवेदन दूसरे दिन एक मित्र से किया। वडे प्रेम से वह सज्जन सुन्दर वास ही की लाठी लाये जिसमे मीनाकारी तथा ऊपर चादी की मूठ और नीचे लोहे की खोली थी। उसे लेकर वडे हर्ष व उल्लास के साथ मैं वापू के पास गया। उन्होंने देखकर कहा--"हा, ठीक है, पर जैसी वह थी वैसी यह नही है। हा, इससे काम चल जायगा। पर ऊपर की चादी वाला हिस्सा कटवा देना। दरिद्र-नारायण की सेवा करनेवाले को चादी की मूठवाली नही चाहिए।" तो यह हुई लकुटी की कहानी।

दूसरी कहानी सुनिए।

वापू के लिए सुवह स्नान के लिए वागेश्वर डाक वगले के स्नानागार मे गरम पानी रक्खा। सावुन आदि रखकर वापू से कहा—"पानी तैयार है।" वह स्नानागार मे गये। दरवाजा वन्द किया, पर फौरन खोल कर आवाज दी। सामने गया तो कहा—"कलवाला सावुन कहा रक्खा है?" मैंने जवाव दिया—"वापू! वह तो घिस कर छोटा टुकडा रह गया था अत नया सावुन रख दिया।" तव वापू वडे दु ख से कहने लगे—"जवतक चीज का पूरा-पूरा इस्तेमाल नही हुआ तो कैसे नया रक्खा? यह भी राष्ट्रीय सम्पत्ति है। भविष्य मे तुम लोगो के हाथ मे वडे-वडे काम आयेंगे। और सम्भव है कि स्वराज्य भी आवेगा। तव इस तरह की लापरवाही की मनोवृत्ति रही तो राष्ट्र का कितना भारी नुकसान होगा। मैं आशा रखता हू कि हमारे कार्यकर्त्ता वडे ही सजग तथा जाग्रत रहेगे।" यह वात वडे दर्द के साथ कहते गये। स्नानगृह की चौखट पर खडे हुए वापू की कही वातें आज चालीस वर्ष के वाद भी राष्ट्रीय हित के लिए सत्य सिद्ध हैं। वापू के से सूक्ष्म निरीक्षण के अभाव से ही आज राष्ट्रीय योजनाओं मे करोडो रुपयो का अपव्यय दिखाई देता है। तभी तो आज जनता को स्वराज्य का सच्चा आनन्द नही है।

वापू वागेश्वर डाक-वगले मे सुवह नाश्ता कर रहे हैं। अकेले मे वापू व्यक्तिगत वातें पूछने लगे—"कितना खर्च आता है? भोजन मे क्या लेते हो? कोई कमी तो नही है? राष्ट्रसेवा के लिए पत्नी का सहयोग तो है न?" वगैरह। इसके वाद पहाडो मे पैदल यात्रा के विषय मे हिमालय-कैलाश आदि पर भी वातें होने लगी। तव वापू कहने लगे—"मुझे कैलाश ले चलो न?" "क्यो वापू?" वोले—

"वहीं एकान्त मिलेगा।" जवाव दिया—"कैलास या हिमालय की कन्दरा में कही भी आप जावें तो भी जनता वहां पहुंच जायगी।" वापू ने कहा—"हां, वात तो ऐसी ही है।"

० ० ०

यह वापू की महानता है। वह छोटी-से-छोटी वस्तु पर, साधारण जन को नगण्य लगनेवाली वातों पर भी वड़ी सावधानी, गम्भीरता से, आत्मनिरीक्षण करके इतने वड़े महात्मा बन गये। हम लोग छोटी चीज या वात को तुच्छ मानते हैं। यह आदत हमें अल्पात्मा ही रखती है। प्रमाद न रखकर सतत् जागृति रखने वाले महात्मा विरले ही होते हैं। इस तरह वापू के विषय में अनेक सुमधुर संस्मरण हैं जिनकी वापू के साथ वर्षो तक साथ रहते हुए अव तो याद मात्र रह गई है। मुझे उनकी महानता के सम्बन्ध में कई अनुभव हुए हैं। मै उनके सामने वैठकर उनकी मानवीय प्रवृत्ति का एक तरह से अध्ययन करता रहता था, पर जव वह परोक्ष हो जाते थे तव उनके दिव्य गुणों की याद आती थी। सामने होने पर तो ऐसा सोचता था कि यह वही व्यक्ति है जिसके एक-एक शब्द को ब्रिटिश सरकार गम्भीरतापूर्वक महत्व देती है। तथा ब्रिटिश सरकार थर्रा जाती है। साथ-साथ यह भी प्रत्यक्ष था कि उनका जनता पर अद्भुत जादू चलता था। वापू के कण्ठ से 'भारत छोड़ो' निकला कि सारे भारतवर्ष की जनता के कोटि-कोटि कण्ठों से निकल पड़ा—'भारत छोड़ो।' वापू के कदम जहां चल पड़े, तो जनता के लाखों लोगों के कदम भी उधर ही चल पड़े। यह है विश्वविभूति।

'वापू' के निर्वाण के वाद तो उनकी महानता तथा दिव्यता और निखर आई। कहा जाता है कि राम के दर्शन के वजाय राम के स्मरण में ज्यादा महत्व है। राम ने तो मर्यादित संख्या में अहिल्या, शवरी, जटायु आदि का उद्धार किया पर राम नाम के जप से तो अनेक पवित्रात्मा वनकर विश्वकल्याण करते रहते हैं।

२. कालाकाँकर में बापूजी

[श्री सुरेशसिंह जी, कालाकांकर]

१९२९ का वर्ष मेरे जीवन का सवसे प्रिय वर्ष रहा क्योंकि इसी साल मुझे जीवन में अनेक राजनीतिक एवं साहित्यिक विभूतियों के दर्शनों का सौभाग्य प्राप्त हुआ। सन् १९२९ ही में मैंने प्रथम वार पूज्य वापू के दर्शन सावरमती आश्रम में किये। मैं अपने पूज्य भ्राता स्व० राजा अवधेश सिंह के साथ वम्वई गया था।

वहा से हमलोग ट्रेन से अहमदावाद गये। वहा जाने का एक मात्र आकर्षण था पूज्य वापू के दर्शन करना।

अहमदावाद स्टेशन पर ज्ञात हुआ कि शाम के एक वस सावरमती जाती है अत उसी पर वहा जाने का तय हुआ। वस मे अचानक श्री महादेव जी देसाई से मुलाकात हो गई जिनके कारण पूज्य वापू से मिलने मे काफी सुविधा हुई। चलते समय भाई साहव ने वापू से प्रार्थना की कि वह जव कभी उत्तर प्रदेश आवें तो लखनऊ मे उन्ही की कोठी मे ठहरें। पूज्य वापू ने उनकी यह प्रार्थना स्वीकार कर ली और लाहौर काग्रेस के पहले जव वह हमारे प्रदेश पधारे तो लखनऊ मे कालाकाकर हाउस मे ही ठहरे।

लखनऊ मे एक साधारण-सी घटना घटी लेकिन वापू ने उसको काफी महत्व दिया। उनकी पैनी दृष्टि ने इस मामूली-सी घटना को नजरअन्दाज नही किया और वह उससे भाई साहव के वास्तविक रूप को पहचान गये।

वात यह हुई कि एक आश्रम के भाई, देर से आने के कारण अकेले ही खाना खा रहे थे। खाने के वाद उन्होने भाई साहव को साधारण नौकर समझा और उनसे हाथ धुलाने को कहा। भाई साहव ने फौरन उनका हाथ धुला दिया और उनकी ओर तौलिया वढ़ा दी। खाने के वाद वह अपने कमरे मे आराम करने चले गये। शाम को प्रार्थना के समय जव पूज्य वापू ने भाई साहव को अपने वगल मे वैठने को कहा तव उन भाई को वहुत आश्चर्य हुआ। उन्होंने अपने साथियो से भाई साहव का परिचय पूछा और उन्हें जव यह ज्ञात हुआ कि वही कालाकाकर के राजा साहव हैं जिनके पूज्य वापू अतिथि हैं तो उनको वहुत ग्लानि हुई। प्रार्थना के वाद उन्होंने अपनी गलती पूज्य वापू से वताई। पूज्य वापू ने उनसे पूछा—"तो राजा साहव ने क्या किया?"

"राजा साहव ने वडी खुशी से मेरा हाथ धुलाया" उन्होंने उत्तर दिया।

"मुझे यह सुन कर प्रसन्नता हुई।" पूज्य वापू ने कहा—"अगर राजा साहव किसी नौकर को वुलाते तो मुझे दुख होता। जो अपनी इच्छा से जनता का सेवक वना है वही सच्चा स्वयसेवक है। इससे हमे राजा साहव के वास्तविक स्वरूप का पता चल गया।"

लेकिन पूज्य वापू इतने से सन्तुष्ट होने वाले व्यक्ति नही थे। वह यह देखना चाहते थे कि राजा साहव का यह स्वदेश-प्रेम उनकी रिआया के साथ भी है या यह केवल लखनऊ मे ही है। इसी से उन्होंने भाई साहव का कालाकाकर आने का निमन्त्रण सहर्ष स्वीकार कर लिया। भाई साहव ने उन्हें विदेशी वस्त्रो की होली जलाने के लिए यहा आमन्त्रित किया था।

अंग्रेजों की अमलदारी में महात्मा गांधी को अपने यहां किसी ताल्लुकेदार का बुलाना बहुत हिम्मत का काम था। फिर उन्हें बुलाकर विदेशी वस्त्रों की होली जलवाना तो अंग्रेजों को और भी चिढ़ाना था। लेकिन राजा साहब बहुत ही निडर और निर्भीक व्यक्ति थे। उन्हें ऐसी कोई बात उनके निश्चय से विचलित नही कर सकती थी।

पूज्य बापू १३ नवम्बर १६२६ ई० को रायबरेली से प्रयाग जाते समय कालाकांकर में रुके। शाम को थोड़ी देर तक विश्राम करने के बाद वह गंगा-तट पर टहलने गये। हमलोग २०-२५ आदमी उनके साथ थे। वह आगे आगे चल रहे थे। एक जगह गंगा के किनारे किसी ने विष्टा कर दिया था। बापू ने वहां रुक कर कहा—"इतना सुन्दर गंगा का तट है। लोग इसको भी गन्दा कर देते हैं।" रियासत के मैनेजर साहब तथा अन्य कर्मचारियों ने एक दूसरे से वहां की सफ़ाई का आदेश दिया। लेकिन पूज्य बापू ने अपने हाथों से दो तीन मुट्ठी बालू विष्टा पर डाल कर पानी से हाथ धो लिया और बिना कुछ कहे आगे बढ़ गये। हमलोगों के मुंह पर एक करारा तमाचा पड़ा। एक नेता किसी दूसरे की प्रतीक्षा किये बिना ही स्वयं कार्य को कर डालता है। मैने उस दिन पूज्य बापू से यही बड़ी बात सीखी।

रात को हमलोग प्रार्थना के बाद काफ़ी देर तक पूज्य बापू के निकट रहे। वह यहां के लोगों के बारे में सभी बाते जान लेना चाहते थे। दूसरे दिन १४ नवम्बर को उन्होने दोपहर को ग्राम की स्त्रियों की एक सभा की। हमलोगों के यहां बहुत ज़बरदस्त पर्दा, एक युग से चला आ रहा था। हम लोग आधुनिक विचार के होने के कारण इसके बहुत खिलाफ़ थे और हमलोगों की बीबियां पर्दा नही करती थीं पर घर की बड़ी-बूढ़ी महिलाएं पर्दे के पक्ष में थी लेकिन पूज्य बापू की उस मीटिंग में सबने पर्दा तोड़ कर उसमें भाग लिया और उस दिन से घर का पर्दा सदा के लिए समाप्त हो गया।

शाम को पूज्य बापू उस स्थान पर गये जहां विदेशी वस्त्रों की होलिका जलाने का आयोजन था। पूज्य बापू ने प्रातः ही मेरी धर्मपत्नी प्रकाशवती से कहा था—"बेटी, सुना है तुम्हारा विवाह अभी आठ दिन पहले ही हुआ है और तुम्हारे साथ बहुत सारे विदेशी वस्त्र आये है। यदि तुम उनको आज की होली में दे दो तो हमारी होली सज जावे।"

प्रकाश ने कहा—"बापू, विदेशी वस्त्र तो हमारे यहां भी कोई नही पहनता। हां, सब लोग मिल का वस्त्र पहनते है। वे ही हमारे साथ आये है। आपकी आज्ञा है तो मैं उन सब को आपके चरणों में रख दूंगी।" इतना कह कर उन्होंने अपने साथ आये हुए सारे क़ीमती वस्त्र और साड़ियां पूज्य बापू के सामने लाकर रख दीं।

वापू वोले—"वेटी, मैं मिल के कपडो मे और विदेशी कपडो मे ज्यादा अन्तर नही मानता। लेकिन यदि तुमको इन्हे देने मे मोह हो रहा हो तो रहने दो।"

"यह तो मेरा सौभाग्य है वापू कि आपने मुझे इतना सम्मान दिया", प्रकाश ने कहा—"इन तुच्छ कपडो का आपकी आज्ञा के सम्मुख भला क्या मूल्य हो सकता है ?"

पूज्य वापू प्रकाश के इस उत्तर से प्रसन्न हो गये।

शाम को जव पूज्य वापू सभास्थल पर पहुचे तो वहा लाखो रुपयो के वस्त्रों का अम्वार लगा था। भाई साहव के कुछ मित्र ताल्लुकदारो ने भी अपने यहा के विदेशी वस्त्र यही पहुचा दिये थे। वापू उस अपूर्व होलिका-दहन को देख कर प्रसन्न हो गये। भाई साहव ने उनके हाथ मे चादी की मूठ वाली एक जलती मशाल दी जिससे उन्होने वस्त्रो के उस पहाड मे आग लगा दी। आग लगते ही लोगो ने 'महात्मा गाधी की जय' का घोप किया और इस प्रकार सभा समाप्त हुई।

पूज्य वापू उसी दिन इलाहावाद जाने वाले थे लेकिन कालाकाकर के शान्त वातावरण और प्राकृतिक सौन्दर्य ने उनको यहा एक दिन रहने के लिए मजवूर कर दिया और वे यहा उस रात रह गये। दूसरे दिन सवेरे उन्होंने राजमहल पर तिरगा झण्डा फहरा कर यहा से प्रस्थान किया।

पूज्य वापू कालाकाकर मे गगा-तट पर वने हुए राज भवन मे ऊपर के दालान मे ठहरे थे, जहा से तीन ओर गगा का फैला हुआ पाट दृष्टिगोचर होता है। उनके साथ आचार्य कृपालानी, श्री देवदास गाधी, श्री प्यारेलाल जी तथा अन्य कई सज्जन थे। मुझे एक दिन श्री लाल वहादुर शास्त्री ने वताया कि वह भी पूज्य वापू के साथ यहा आये थे लेकिन हमलोगो को इसका पता भी न चलता यदि वह न वताते। महिलाओ मे श्रीमती मीरा वेन, कुसुम वेन, तथा श्री जयप्रकाशनारायण जी की धर्मपत्नी श्रीमती प्रभावती जी थी।

पूज्य वापू के कालाकाकर आने की कथा तो समाप्त होती है लेकिन उनके विपय में दो प्रकरणो का वर्णन करना आवश्यक-सा लगता है। अपने स्नेही जनो को वह किस अनोखे ढग से सलाह देते थे इसका मुझे दो वार अनुभव हुआ। मैंने उनके वारे मे यह कथा अवश्य सुन रक्खी थी कि एक वार उन्होंने अपने एक स्नेही भक्त के वारे मे पत्रो मे छपवा दिया कि उनकी मृत्यु से उनको वहुत दुःख पहुचा है।

उन सज्जन ने यह समाचार पढते ही वापू को लिखा कि वापू मैं तो जिन्दा हू आपको किसी ने गलत खवर दी है।

पूज्य वापू ने उन्हें लिखा—"इधर तुमने देश-सेवा का कार्य एक दम छोड

दिया था। इसको मैं तुम्हारी राजनीतिक मृत्यु ही समझता हूं।" इस पर वह वहुत लज्जित हुए।

मुझे भी पूज्य वापू ने दो वार इसी तरह की स्नेहपूर्ण ताड़ना दी थी।

जव नमक आन्दोलन का एलान पूज्य वापू ने किया तो मैं काशी विश्वविद्यालय में पढ़ता था। मैंने उनको लिखा कि मैं इस आन्दोलन में भाग लेना चाहता हूं, कृपया मुझे अपने जत्थे में शामिल करने का अनुग्रह करें।"

वापू ने लिखा, "तुमने ठीक ही फैसला लिया है लेकिन यह आन्दोलन तो सारे देश में फैलेगा। तुम अपना जत्था लेकर पैदल रायवरेली जाओ जिसे उत्तर प्रदेश का केन्द्र वनाया गया है।"

मैंने उनकी आज्ञा शिरोधार्य कर ली लेकिन जी में एक उदासी सी छाई रही कि वापू ने मुझे अपने जत्थे में शामिल नही किया। अपना जत्था लेकर रायवरेली जाने से पहले मैं श्री जवाहरलालजी से मिला और उनसे वहां के लिए आदेश लिये। उन्होने आदेश देते हुए कहा—"यह आन्दोलन काफ़ी दिनों तक चलने वाला है। पता नहीं कव एक दूसरे से भेट हो। हिम्मत न हारना। तुम्हारे ऊपर पूज्य वापू ने बहुत वड़ी जिम्मेदारी रक्खी है। सैकड़ों नेताओं के रहते हुए भी उन्होंने तुमको रायवरेली का, जो हमारे प्रदेश का केन्द्र वनाया गया है, सारा भार सौंपा है। यह तुम्हारे लिए वहुत गौरव की वात है। वापू कभी आदमी छांटने मे धोखा नही खाते। ऐसी कोई वात न होने पावे जिससे हमारे प्रदेश का सिर नीचा हो।"

पूज्य वापू का अपने प्रति इतना स्नेह देखकर मेरे आँसू रोके नही रुकते थे। इतना विश्वास किया उन्होने मेरे ऊपर इससे अधिक मुझे क्या चाहिए था। अपने जत्थे में सम्मिलित करने से कही अधिक सम्मान उन्होने मुझे दिया, मेरे ऊपर सारे प्रदेश का भार देकर। मैंने अपने को धन्य माना और उन्होने मुझसे जैसी आशा की थी उसको पूरा किया।

दूसरा स्नेह-प्रतारण मुझे तव मिला जव मेरे एक मित्र ने पूज्य वापू को अपनी ओर से लिखा कि वह श्री गोविन्द वल्लभ पंत जी को मेरे लिए एसेम्वली की एक सीट देने के लिए लिख दें।

पूज्य वापू ने उनको जो उत्तर दिया वह इस प्रकार है :—

"सुरेश मुझको अच्छी तरह याद है। सुरेश जैसे व्यक्ति को भी असेम्वली में जाने की इच्छा होती है, यह जानकर आश्चर्य हुआ।"

मैं यह पत्र पढ़कर मारे शर्म के ज़मीन में गड़ गया। यह कहना असत्य होगा कि उन्होने विना मेरी इच्छा के ही पूज्य वापू को ऐसा पत्र लिखा था। मेरी सचमुच

ही इच्छा असेम्वली मे जाने की थी लेकिन वापू के इस पत्र ने मेरी आखें खोल दी। मैंने उन्हें लिखा—"पूज्य वापू ! आपने मेरे प्रति इतना ऊचा विचार वना रक्खा था। मैं उसके योग्य साबित नही हुआ। मैं इसके लिए वहुत लज्जित हू। अपने प्रति आपके ऐसे विचार मेरे लिए असेम्वली के सौ टिकटो से भी कही महान है। मैं असेम्वली मे नही जाना चाहता।" और मैंने अपना नाम वापस ले लिया। ऐसा था पूज्य वापू का अपने स्नेही जनो को सही रास्ता दिखाने का ढग। अव ऐसा नेता कहा मिलेगा ?

३. ताकुला में गांधीजी

[श्री राजीव लोचन शाह, नैनीताल]

१६२६ और १६३१ मे गाधीजी ताकुला मे मेरे नाना स्व० गोविन्दलाल शाह के अतिथि के रूप मे रहे थे। गोविन्दलाल जी कभी काग्रेस के सदस्य नही रहे किन्तु गाधीजी मे उनकी परम भक्ति थी। गाधीजी वरावर उनकी खोज-खवर लेते रहते थे।

ताकुला गाव पहिले नवाव रामपुर के पास था। उन्होंने वाद मे ताकुला के वदले घोडाखाल नामक स्थान, जहा आजकल एक सैनिक स्कूल है, ले लिया और सन् १६२६ या २७ में ताकुला सरकार-द्वारा लाल गोविन्दलाल शाह जी को दे दिया गया। गोविन्दलाल जी उस समय उत्तराखण्ड के प्रमुख व्यवसायियो मे माने जाते थे और कूर्माचल क्षेत्र मे 'कम्पनी साहव' के नाम से विख्यात थे।

ताकुला गाव के दो भाग हैं। एक भाग मे, जो कुछ निचले स्तर पर है, खेती-वारी होती है। इस भाग को 'तल्ला ताकुला' कहा जाता है। दूसरा भाग अपेक्षाकृत कुछ ऊचे स्थान पर है। इसे 'मल्ला ताकुला' कहा जाता है। गाधीजी के आगमन का सम्वन्ध इसी भाग से है। उस समय यह गाव वाग-वगीचो से भरा हुआ वड़ा सुन्दर जान पडता था। जिन लोगो ने इसे उस समय देखा है, आज भी याद करते हैं। गाधीजी इन उपवनो की हरीतिमा देखकर मुग्ध हो उठे थे। यहा गोपालन का कार्य भी होता था।

जिन लोगो ने नैनीताल देखा होगा, वे जानते होंगे कि नैनीताल-काठगोदाम मार्ग पर नैनीताल से दो मील दूर तक विकट मोड है, जिसे 'चीलचक्कर मोड' कहा जाता है। इस मोड से एक मील और आगे चलकर ताकुला की इमारतें साफ दिखाई देने लगती हैं। यही से एक पगडण्डी ताकुला की ओर जाती है और वहा तक पहुँचने के लिए लगभग एक फर्लांग पैदल चलना पड़ता है।

गांधीजी १९२९ और १९३१ में दो बार नाना जी (स्व० श्री गोविन्दलाल साह) के अतिथि रहे। १९२९ में गांधीजी यहां चार दिन रहे थे। उस समय वह मोतीभवन मे ठहरे थे। लालाजी ने उन्हें एक थैली भरकर चांदी के रुपये चन्दे में दिये थे। उनके अनुरोध पर गांधीजी ने एक भवन का शिलान्यास किया जिसे बाद में गांधी-मन्दिर का नाम दिया गया। उस समय गांधीजी के साथ पं० जवाहरलाल नेहरू, पं० गोविन्दवल्लभ पन्त (बाद में उत्तर प्रदेश के मुख्य मन्त्री तथा भारत सरकार के स्वराष्ट्र मन्त्री) इत्यादि भी थे।

दूसरी बार गांधीजी यहां के तत्कालीन गवर्नर सर माल्कमहेली से वार्त्ता करने के लिए १९३१ में आये थे। उस समय भी गवर्नर महोदय का निमन्त्रण नम्रतापूर्वक अस्वीकार कर उन्होंने नानाजी का आतिथ्य ग्रहण करना ही उचित समझा। उस समय तक वह गांधी-मन्दिर, जिसकी गांधीजी ने १९२९ में नींव डाली थी, बनकर तैयार हो चुका था और गांधीजी, दल-सहित उसी मे ठहरे थे। इस बार उनके साथ सर्वश्री जमनालाल बजाज, देवदास गांधी, मीरा बहिन, कस्तूरबा, मदालसा बजाज और सेठ दामोदरस्वरूप आदि थे। १९३१ में गांधीजी १८ मई को ताकुला पहुंचे थे और प्रायः एक सप्ताह निवास किया था। मल्लीताल फ्लैट्स में उन्होंने नैनीताल जिला कांग्रेस कमेटी-द्वारा आयोजित एक सभा में भाषण भी किया था। उस दिन वह तल्लीताल से मल्लीताल नाव-द्वारा गये।

अपने ताकुला-प्रवास के दौरान बापू प्रातः लगभग चार बजे उठ जाया करते थे। नित्यकर्म से निवृत्त होकर प्रार्थना में भाग लेते थे। प्रार्थना के बाद वह घूमने निकल जाया करते थे। लौटने पर बकरी के दूध और कुछ फल से नाश्ता करते थे। फिर चर्खा कातने का तथा स्वाध्याय का कार्य चलता था। दोपहर को बा बापू के तलवों में गाय के घी की मालिश किया करती थी। एक चादर जिसमें इसी चिकनाई के कारण पड़े हुए गांधी जी के पदचिह्न है, हमारे पास सहेजकर रक्खी हुई है। इस मालिश के बाद गांधीजी विश्राम करते थे। सायं चार बजे के लगभग फिर प्रार्थना होती थी। शाम का भोजन लगभग सात बजे किया जाता था। श्रीमती देवकी देवी (स्व० लाला गोविन्दलाल साह की पत्नी, जो अभी जीवित हैं) बतलाती हैं कि वह फलाहार और दूध लिया करते थे।

नानाजी की बड़ी इच्छा थी कि गांधी-मन्दिर मे गांधीजी की एक प्रतिमा स्थापित की जाय तथा एक पुस्तकालय बनाया जाय परन्तु १९५४ में उनकी मृत्यु हो जाने के कारण वह इच्छा अधूरी रह गई। आज तो यह गांधी-मन्दिर उपेक्षित दशा में पड़ा हुआ है।

४. बिन्दकी (फतेहपुर) में गांधीजी

[श्री वृजकिशोर अग्रवाल]

फतेहपुर जिले मे विंदकी नगर मे पूज्य महात्मा गाधी व माता कस्तूरवा गाधी का आगमन दिसम्बर १९२९ मे हुआ।

उस समय पूज्य वापू का हार्दिक स्वागत पचास हज़ार जन-पमूह ने किया। प्रात.काल से ही नर-नारी, वालक-वृद्ध, ग्राम तथा नगर से झुण्ड के झुण्ड उमड पड़े और बापू का दर्शन करने और उनका सन्देश सुनने लिए घण्टो खडे रहे। माता कस्तूरवा भी साथ थी। उन्होने भी महिलाओ के बीच सन्देश दिया, महिलाओ ने देश-कार्य के लिए अपने आभूषण उतारकर माता जी को दे दिये। वापू के सिहनाद से विन्दकी नगर और पूरी तहसील की जनता आज़ादी के लिए उतावली हो गई। उसके फलस्वरूप ३०, ३२, ४०, ४१, ४२ के आन्दोलनो मे विन्दकी नगर और पूरी तहसील ने अभूतपूर्व साहस व वालदान का परिचय दिया। यह वापू की ही देन थी कि यहां नशावन्दी ,विदेशी वहिष्कार, शराव एव अन्य नशीले पदार्थों तथा विदेशी वस्त्र की दुकानो पर धरना देते हुए, पुलिस की लाठी का प्रहार सहन करते हुए, लोग जेल गये। स्वदेशी, खादी और चर्खा का भी काफी प्रचार-प्रसार हुआ। विन्दकी नगर व तहसील की ओर से पच्चीस सौ रुपये की धनराशि हरिजन-कार्य एव हिन्दुस्तानी सेवादल के लिए वापू के चरणो मे अर्पित की गई।

हमारे जिले के उस समय के नेता और जिला काग्रेस कमेटी के अध्यक्ष वावू वशगोपाल जी एडवोकेट भी साथ थे। जव वापू जी मच पर आये उसी समय अचानक एक ७-८ वर्ष की वालिका वहा पहुच गई और वापू से पैसा मागने लगी। वापू ने हसकर कहा—"वेटी, हम पैसा लेते हैं, देते नही हैं।" लोग हंस पडे।

विन्दकी मे शुरू से ही गाधीजी के सन्देश के अनुसार कार्य होता रहा है। रौलट ऐक्ट के विरोध मे ६ अप्रैल १९१९ को देशभर मे हडताल का सन्देश मिलते ही विन्दकी नगर मे पूर्ण हडताल हुई थी और सायकाल की सार्वजनिक सभा मे उपर्युक्त अन्याय-पूर्ण कानूनो के खिलाफ प्रस्ताव पास हुआ था। इस कार्य मे उस समय के नेता प० आशाराम शर्मा मेरे सहयोगी थे और आज भी जीवित हैं। ३० के सत्याग्रह मे ६ मास की जेल भी हुई थी। लगानवन्दी आन्दोलन भी इस जिले मे चला जिसके फल-स्वरूप प० शिवनारायण जी जहानावाद के निकट पुलिस की गोली के शिकार हुए।

मैं वापू के चरणो मे अपनी हार्दिक श्रद्धाञ्जलि अर्पित करता हू और ईश्वर से प्रार्थना करता हू कि वापू की शताब्दी हमे वल व साहस दे कि हम उनके वताये मार्ग पर चलकर देश की सेवा करते रहें।

सांकेतिका

[आ]

[इ]

[ई]

[उ]

[घ]

[च]

[छ]

[ज]

[झ]

[ट : ठ]

[ड]

[त]

[द : ध]

[प]

[य]